श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक १

वर्ष ३

सम्पादक--

पं० [illegible] न्यायतीर्थ, [illegible]पुर।

[illegible] शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री [illegible]

वार्षिक ३) एकप्रति ≥)

आषाढ़ सुदी १५ मंगलवार
१६ जौलाई-१९३५ ई०

फीरोजपुर छावनी उत्सव

फीरोजपुर छावनी में बड़े मन्दिर से कुछ दूर पर ला० मनोहरलाल जी ने एक मंदिर बनवाया था उसकी वेदी प्रतिष्ठा श्रीमान पं० दुर्गाप्रसाद जी कानपुर ने अभी कराई है जिसका उत्सव ५-६-७-८ जुलाई को हुआ उत्सव की आज्ञा २-४ दिन पहले ही मिली थी इस कारण उत्सव की सूचना पत्रों द्वारा सर्वत्र न भेजी जा सकी।

जुलूस ५ ता० को मन्दिरसे चलकर दि० जैन इन्डस्ट्रीयल स्कूल में पहुचा वहांसे ८ जुलाई को वापिसी रथयात्रा सरेआम बाजार होती हुई मंदिर जी में आ पहुंचा।

उत्सवकी शोभा श्रीमान पं० अजितकुमार जी शास्त्री मुलतान, पं० सूर्यपाल जी डेरा-गाजीखान, ला० जिनदास जी ला० सुखा-नन्द जी, राजेन्द्रकुमार जी मुलतान के उपयोगी व्याख्यानों से तथा श्रीमान मास्टर खुशीराम जी मुलतान की अध्यक्षता में कार्य करने वाली भजन मंडली के गायन, नृत्य आदि से अच्छी हुई। श्रीमान राय-साहिब ला० तुलसीराम जी ने भजनमंडली को एक सुवर्ण पदक दिया। पं० अजित कुमार जी ला० जिनदास जी तथा लाला सुखानन्द जी मुलतान के अनवरत परिश्रम से फीरोजपुर छावनी का आपसी वैमनस्य मिट गया। उत्सव का प्रबन्ध रायसाहिब ला० तुलसीदास जी ने बड़े परिश्रम से किया।

एक दर्शक

जैन समाचार

जयपुरमें धर्म प्रभावना

श्री १०८ आचार्य सूर्यसागर जी महाराज के अपने संघ सहित यहां पधारने से अच्छी धार्मिक प्रभावना होरही है। आपके साथमें आपके अतिरिक्त एक मुनि महाराज, एक क्षुल्लक जी और तीन उदासीन श्रावक हैं। उस दिन आपके उपदेशामृत से जो दो तीन वर्ष से जयपुर जैन समाज में वैमनष्य ... था वह शान्त होकर आपस में एकता होगई ... स्वरूप स्थानीय शुक्रवार की सहेली ... मनाई गई जिसमें सब

आचार्य ... जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। ... तात्विक व धार्मिक होते हैं। यहां के सभी विद्वान आपके पास आकर तत्वचर्चा करते हैं। आपका अधिकांश समय धर्मचर्चा में ही व्यतीत होता है।

भंवरलाल जैन न्यायतीर्थ जयपुर।

भूकम्प पीड़ित सेवा-श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ के वर्तमान सभापति श्रीमान रायसाहिब ला० नेमिदासजी ने क्वेटा भूकम्प पीड़ितों की सेवाके लिये अम्बाला छावनी स्टेशन पर अच्छा आयोजन किया था आपके सुपुत्र श्रीयुत शान्तिप्रसाद जी २० स्वयं सेवक तथा डा० भाटिया को साथ लेकर पीड़ित मनुष्यों को भोजन, दूध, लस्सी, चाय, पानी देते थे घायलों की मरहम पट्टी कराते थे रोगियों को औषध देते थे। आपकी ओर से यह सेवा कार्य ३ जून से २४ जून तक होता रहा इस तरह २२ दिन तक हजारों रुपये व्यय करके हजारों पीड़ितोंकी श्रीमान रा० सा० ला० नेमिदास जी की ओर से जो आदर्श सेवा हुई वह प्रशंसनीय है।

अयोध्याप्रसाद, मंत्री जैन सेवक मंडल शिमला

—आवश्यकता श्री पार्श्वनाथ दि० जैन विद्यालय उदयपुर में कलकत्ता युनिवर्सिटी की दि० जैन न्याय मध्यमा, व्याकरणमध्यमा तथा सर्वार्थसिद्धि की पढ़ाई प्रारम्भ हो गई है जिन ८-१० छात्रों को प्रविष्ट होना हो वे जुलाईके अंत तक भर्ती हो सकते हैं।

गुलाबचन्द्र छाया मन्त्री

लाभ लिया जून मास में पा० दि० जैन विद्यालय उदयपुर में ३० छात्रों ने, बोर्डिङ्ग हाऊस में २० छात्रों ने कन्या पाठशाला में ३० कन्याओं ने और औषधालय से जैन अजैन १०० रोगियों ने एवं धर्मशाला से २०० यात्रियों ने लाभ उठाया।

पृथ्वीराज चितोड़ा स० मन्त्री उदयपुर

दि० जैनविद्या० उदयपुरमें २७-६-२४ को छगनलाल जी मेहता के सभापतित्व में श्रीमती चिरोंजी बाई जी के स्वर्गवास होने के शोक में सभा हुई।

अहंगाबाद निवासी स्व० सेठ छोगमल जी सेठी के सुपुत्र श्रीयुत हरकचन्द्र जी की धर्मपत्नी का असमय में स्वर्गवास हो गया है। आपके आत्मा को शांति लाभ हो।

गुलाबचन्द्र जैन किशनगढ़

आवश्यकता—दि० जैन महावीर स्कूल मोती कटरा आगराके लिये एक प्रधान अध्यापक, सहायक तथा ड्राइंग अध्यापक की आवश्यकता है। प्रधानअध्यापक एक ए० सी० टी० या बी० ए० होना चाहिये।

उत्तमचन्द्र के अंतिम दर्शन

(अनंतनिद्रा में आनन्द से सोते हुए उत्तमचन्द्र जैन शास्त्री न्यायतीर्थ का अंतिम फोटो जो श्मशानभूमि मुलतानमें लिया गया था।)
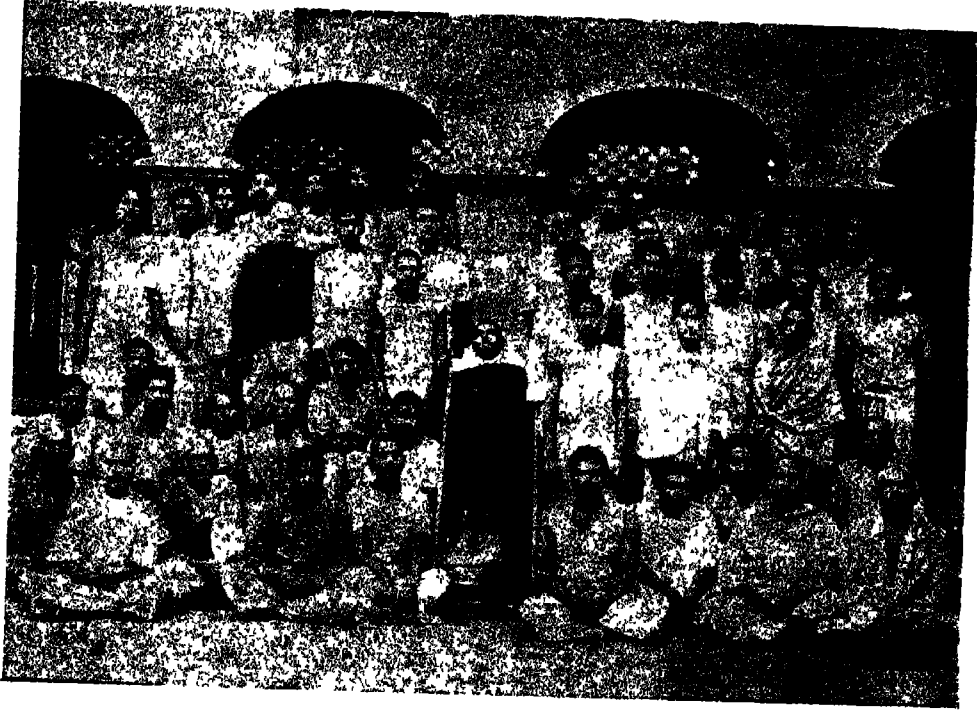
(चिन्हित व्यक्ति)- १- अजितकुमार जैन शास्त्री, (मृतक के चाचा) २- ला० भोलाराम जी ३-ला० जिनदास जी (सबसे पीछे दाहिनी ओरसे तीसरे) ला० बिहारीलाल जी, (चचेरे भ्राता) ४-मास्टर खुशी राम जी, ५-ला० चन्द्रभान जी, ६-ला० माधवराम जी ७ ला० ताराचन्द जी, ८-ला० हीरालाल जी, (मामा) ९ ला० श्यामतराय जी, १०-ला० सुखानन्दजी। (पीछे दाहिनी ओर खड़े हुये दूसरी पंक्ति में पहले व्यक्ति मृतक के मौसा) ला० नेमीचन्द्र जी हैं।

जन्म—पूष सुदी ११ गुरुवार
वि० सं० १९७०

स्वर्गारोहण आषाढ़ वदी १४
शनिवार वि० सं० १९९२

Printed at the Akl nk Press Churi Sarai Multan City.

अकलंकदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भूष्णीभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री आषाढ़ सुदी १५—मंगलवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क १

स्वागत
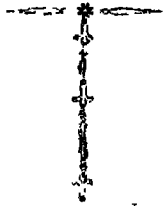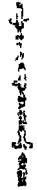
रचयिता—
श्रीमान पं० चान्दमल जी जैन "शशि" बी० ए० (विशारद)

पधारो प्यारे नूतन वर्ष ।
करें स्वागत हम लोग सहर्ष ॥

किया हम से अतीत ने व्याज ।
सजाया आशा का सब साज ॥
दिये हम को विश्वास अनेक ।
पूर्ण पर, किया न उन में एक ॥
अतः अब हमरा भावि-विमर्श ।
तुम्हीं पर अवलम्बित, नववर्ष !

शान्ति के पलटे बढ़ा विरोध ।
पड़ा सत्कार्य्यों में अवरोध ॥
प्रतिज्ञा — भंग हुई बहुबार ।
विजय पाते, पर, खाई हार ॥
अतः तुम पर आश्रित नव वर्ष ।
हमारा सर्व भांति उत्कर्ष ॥

पधारो प्यारे, तुम सुख-कन्द ।
मिटाओ सारे जग के द्वन्द ।
परस्पर-प्रेम बढ़े चहुं कोद ।
प्रवाहित हो आमोद-प्रमोद ।
मिटा सब आपस का संघर्ष ।
मनो-मालिन्य हरो, नववर्ष ।

बढ़े बल-विक्रम साहस-शक्ति ।
रहे नित सद्गुण में आसक्ति ॥
भावना उच्च, हृदय समुदार ।
समुद्भव हों शुचि विमल विचार ॥
बनें सच्चे, तज मिथ्यामर्ष ।
दूसरों के हम हों आदर्श ॥

हमारा ज्ञान - सूर्य्य अवलोक ।
बने आलोकित मानव लोक ॥
विनय तुम से अन्तिम यह एक ।
"सदाचारी हो जन प्रत्येक" ॥
"फले-फूले यह भारतवर्ष" ।
पधारो प्यारे नूतन वर्ष ॥

नूतन वर्ष

"जैनदर्शन" का द्वितीय वर्ष पूर्ण होगया है। इस अंक से यह तृतीय वर्ष में पदार्पण कर रहा है। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि जैनदर्शन का जन्म जिस उद्देश्य को लेकर हुआ था उसीके अनुसार कार्य करता हुआ यह समाज सेवा कर रहा है। पाठकों को अनुभव हुआ होगा कि प्रथम वर्ष की अपेक्षा द्वितीय वर्ष में यह कई विषयों में आगे बढ़ा है। अन्य विषयोंके अतिरिक्त दार्शनिक और आध्यात्मिक साहित्य के द्वारा जो इसने पाठकों की सेवा की है, वह जैन समाज के इतर पत्रों में न मिलेगा। इन विषयों पर जो गम्भीर लेख और कविताएं प्रकाशित हुई हैं उनसे "जैनदर्शन" संग्रहणीय पत्र बन गया है। स्याद्वाद जैसे दुरूह विषय पर एक सर्वाङ्ग सुन्दर विशेषांक निकाल देना भी इस वर्ष की एक खास विशेषता है। यह सब कुछ होने पर भी हमें यह कह देने में कुछ भी संकोच नहीं होता कि "जैनदर्शन" में अभी एक उच्च पत्र होने योग्य बहुत सी बातों की कमी है। पत्र को उन्नत बनाने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि उन कमियों को पूरा करने की चेष्टा कीजाय; पर उन कमियों को पूरा करना भी कोई सरल काम नहीं है।

बात यह है कि पत्रों को सर्वाङ्ग सुन्दर बनानेके लिये लेख कला कुशल विद्वानों की आवश्यकता है पर यह लिखते हुये हमें दुःख होता है कि जैन समाज में विद्वानों की कमी नहीं होने पर भी लेखकों की कमी है यह सब कोई जानते हैं। कि कोई भी पत्र बिना सुयोग्य लेखकों की सहायता के नहीं चल सकता। आर्थिक प्रलोभन के बिना जैनेतर विद्वान जैन पत्रों में लेख दें यह भी नहीं हो सकता। और जैन पत्रों की आर्थिक स्थिति कैसी रहती है यहतो सर्व विदित है ही। यदि जैन विद्वान जैनदर्शन पर थोड़ी सी कृपा करें और किसी तरह इसकी आर्थिक स्थिति भी ठीक होजाय तो जैनसमाज का यह एक उच्च कोटि का पत्र बन सकता है। यद्यपि "दर्शन" की कमियां और त्रुटियां बहुत हैं फिर भी हमें यह लिखते हुये प्रसन्नता होती है कि इतर जैन पत्रों की अपेक्षा "जैनदर्शन" का स्थान बहुत ऊंचा है। यही प्रमाण काफी है कि जैनदर्शन में प्रकाशित कई लेख माधुरी जैसी उच्च पत्रिकाओं में भी निकले हैं। पाठकों ने अनुभव किया होगा कि इसमें भर्ती के लेखों को कभी स्थान नहीं मिलता। कई लेखक तो हमसे इसी लिये नाराज हो रहे हैं कि हम उनके लेखों को दर्शन में स्थान नहीं देते पर हम क्या करें भाषा और भावों की दृष्टिसे जो रचनाएं सुन्दर नहीं होतीं उनको "दर्शन" में प्रकाशित करने में हम सर्वथा असमर्थ हैं। "जैन दर्शन" एक साहित्यिक पत्र है उसमें भाव और भाषा-हीन लेखों को स्थान देने से यह अपने स्टैंडर्ड से गिरजाता है। इसलिये उन लेखक महोदयों से हमारी प्रार्थना है कि वे हम पर नाराज न हों और "दर्शन" के योग्य ही लेख भेजने की कृपा करें। हमारे पास ऐसे बहुत से लेख पड़े हुये हैं जिन्हें हमने अयोग्य होने के कारण अस्वीकृत कर दिया और इसी लिये जो दर्शन में प्रकाशित नहीं किये जा सके। जिन महाशयोंको अपना लेख वापिस मंगाना हो वे कृपया पोस्टेज भेजदें ताकि उनके लेख भेज दिये जांय।

बिना पोस्टेज भेजे "दर्शन" किसी भी लेख को वापिस करने में सर्वथा असमर्थ है। आशा है इस स्पष्ट वादिता पर वे हमें क्षमा करेंगे ।

जिन लेखक और कवियों ने गतवर्ष अपनी अपनी सुयोग्य रचनाएं भेज कर "दर्शन" पर महान अनुग्रह किया है उनके हम सदैव आभारी रहेंगे । हमारी सविनय प्रार्थना है कि दर्शन को समुन्नत बनाने के लिये भविष्य में भी इसी तरह अपनी रचनाएं भेजकर अनुगृहीत करेंगे । आप ही जैसे विद्वानों के सहयोग से "दर्शन" अपने पैरों पर खड़ा रह सका है। अगर आप अपने थोड़े से बहुमूल्य समय को निकाल कर महीने में एक बार भी कोई छोटी मोटी रचना दर्शन के लिये भेज देंगे तो इससे भी "दर्शन" को अपने जीवन को कायम रखने के लिये बहुत कुछ सहायता प्राप्त होगी।

हमें यह लिखते हुये बहुत दुःख होता है कि गत वर्ष दर्शन में सर्वसाधारण पाठकों के लिये पठनीय सामग्री की कमी रही है। आध्यात्मिक और साहित्यिक विषयों का आनन्द तो केवल विद्वान ही ले सकते हैं सर्व साधारण को इससे विशेष लाभ नहीं पहुँच सकता। हम इस कमीका अनुभव करते आरहे हैं और कई पाठकों ने इस सम्बन्ध में हमसे शिकायतें भी की हैं। अतः "दर्शन" को समुन्नत बनाने के लिये इस कमी को दूर करने की आवश्यकता समझ कर आगामी वर्षके लिये हमने इस तरह प्रबंध किया है:-

१ प्रत्येक अंक में एक शिक्षाप्रद रोचक कहानी रहेगी।

२ कम से कम दो पेज का एक स्वास्थ्य संबंधी लेख रहेगा।

३ कुछ स्त्रियोपयोगी साहित्य रहेगा।

४ देश विदेश और जैन समाज के सम्बन्ध में जानने योग्य समाचार रहेंगे।

५ प्राचीन और अर्वाचीन जैन सहित्य के सम्बंध में कुछ तुलनात्मक या समालोचनात्मक लेख रहेंगे।

६ जैन व जैनेतर दर्शन पर कम से कम एक गवेषणा पूर्ण लेख रहेगा

७ कम से कम दो कविताएं रहेंगी।

पर हमारे इस विचार को क्रियात्मक रूप का होना भी लेखकों और ग्राहकों की कृपा परही अवलम्बित है। यदि लेखक उत्तमोत्तम लेख प्रदान कर और ग्राहक अपने सिवा दूसरों को ग्राहक बना कर और किसी अन्य प्रकार से आर्थिक सहायता प्रदान करने का कृपा बनाये रक्खेंगे तो हम अपने उल्लिखित विचार के अनुसार दर्शन को कुछ सुन्दर बना सकेंगे। यदि 'दर्शन' के कार्य कर्ता 'दर्शन' की आर्थिक चिन्ता से उन्मुक्त हो जांय तो वे इसके लिये बहुत कुछ प्रयत्न कर सकते हैं। प्रत्येक पुराने ग्राहक महोदय से हमारी प्रार्थना है कि कम से कम एक नया ग्राहक बना कर 'दर्शन' के समुत्थान में सहयोग प्रदान करें और किसी भी दान के अवसर पर वे जैन 'दर्शन' और शास्त्रार्थ संघ जैसी उपयोगी संस्था को न भूलें। आशा है हमारी इस विनय पूर्ण प्रार्थना पर अवश्य ध्यान दिया जायगा।

संपादक जैन दर्शन

शिक्षोपयोगी—मनो विज्ञान

विकार या क्षोभ (Feelig or affection) प्राकृतिक शक्ति (Instivet)

पूर्व प्रकाशित से आगे

हमारे जितने भी कार्य होते हैं उन सब का मार्ग हमारे मन की प्रवृत्तियां हैं। इन मन की प्रवृत्तियों के द्वारा ही हमारे दिन भर के कार्य सम्पादन होते हैं। हमारे मन की जैसी २ प्रवृत्तियां हैं वैसे २ ही कार्य हम सम्पादन करते रहते हैं। जैसा मार्ग हमारे मन की प्रवृत्तियां हमको बतलाती हैं, उसी मार्ग पर हम चलते हैं। और कार्य सम्पादन करते रहते हैं।

यह मन की प्रवृत्तियां दो शक्तियों पर निर्भर हैं। (१) प्राकृतिक-शक्ति (Instivet) (२ अर्जित-शक्ति (Sentiment) मनुष्य का चरित्र इन्हीं दो प्रकार की प्रवृत्तियों से बना हुआ होता है। प्राकृतिक शक्तियों वे होती हैं, जो हमारे में जन्म से ही मौजूद रहती हैं।

अर्जित वे होती है जिनको हम इन प्राकृतिक शक्तियों के आधार पर बाद में प्राप्त करते हैं। इन प्राकृतिक शक्तियां (Instivets) के कारण ही मनुष्य समाज इतनी तरक्की कर सकता है। यह शक्तियां (Instivets मनुष्य व पशुओं को कार्य करने के लिये उत्तेजित करती रहती हैं। और इन्हीं प्राकृतिक शक्तियों के कारण मनुष्य अजीब से अजीब और कठोर से कठोर कार्य को भी करने में हमेशा दत्तचित्त रहता है। अगर यह प्राकृतिक शक्तियां न हों तो वह न कुछ कर सकता है और न कुछ सोच सकता है। वह सर्वदा मिट्टी के ढेले के समान सुस्त पड़ा रहता है।

स्कूल, हॉस्पिटल, कारखानों आदि में मनुष्य सिर्फ इन्हीं प्राकृतिक शक्तियों के कारण कार्य सम्पादन करते रहते हैं। बालक जब पहले पहल भयङ्कर जानवर को देखता है, या किसी धमाके की आवाज़ को सुनता है, तो उसे भय लगता है, और वह इस भय के कारण भागने या छिपने का प्रयत्न करता है। ऐसा करना सिर्फ उसके मन की उत्तेजना पर निर्भर है। और इस प्रकार की उत्तेजना का होना उसकी प्राकृतिक शक्ति पर निर्भर है। वह अपने आप को ऐसा करने से रोक नहीं सकता। उसको इस इस प्रकार भागने, दुबकने की शिक्षा कोई नहीं देता—यह सब प्राकृतिक ही होता है। अगर हम इस विषय पर विचार करें तो हमें मालूम होगा कि हमारे कार्य और शक्तियां दो प्रकार की भावनाओं पर निर्भर हैं। पहली भावना का काम अपने आपकी रक्षा करने की आन्तरिक भावना है (Desire for self preservation) और दूसरी आन्तरिक भावना का नाम स्वजाति-हितकारिणी भावना (Desire for propogation of Species)

बिल्ली का बच्चा कुत्ते को देख कर दुबकने की कोशिश करता है, क्योंकि उसको अपने आप की रक्षा करनेकी चिंता है। हाथी, घोड़े, ऊँट, गाय, भैंस, मनुष्य आदि के बच्चे पैदा होते ही माता के स्तनों से दूध पीना सीख जाते हैं। अगर चूसने की क्रिया को ध्यान से देखा जाय तो यह पता चलेगा कि यह

बहुत सरल नहीं है। लेकिन फिर भी बच्चे अपने आप की रक्षा करने की प्रेरणा से स्तनों को चूसा करते हैं। बच्चों को दूध पिलाने, पालने व परवरिश करने में माता - पिता को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। लेकिन फिर भी अपनी जाति की संख्या बढ़ाने की प्रेरणा उनको सर्वदा बच्चों का परवरिश करने के लिये उत्तेजित करती रहती है। हम कठिनाईयों से पैदा किये हुये द्रव्य को बच्चों की परवरिश में इस जाति के बढ़ाने की भावना से ही व्यय कर देते हैं। हमारा बच्चा बीमार हो जाता है तो हम व्याकुल हो जाते हैं, घबरा जाते हैं, और उसको हर प्रकार से ठीक करने का प्रयत्न करते है। प्रेम आदि का होना भी सिर्फ जाति को बढ़ाने की आन्तरिक प्रेरणा पर ही निर्भर है।

किसी नगर में मोहिनी नाम की एक स्त्री रहती थी। उसके दस वर्ष का एक पुत्र था। वह बीमार हो गया। बीमारी से बच्चे को मुक्त कराने के लिये उसने भरसक प्रयत्न किया; लेकिन बच्चा बीमारी से मुक्त न हुआ और कुछ समय बाद ही मर गया। मोहिनी को बच्चे के मरने का बहुत दुःख हुआ। उसे जीवित करने के लिये बहुत से उपाय किये परन्तु वह किसी से जीवित न हुआ। किसी ने ठीक कहा है "अन होनी होनी नहीं कोटिक करो उपाय" अंत में उनको एक महात्मा मिले और बोले "हम तेरे पुत्र को जीवित कर देंगे।"

मोहिनी—महाराज! आपकी बड़ी कृपा होगी, मैं जन्म भर आपका गुण नहीं भूलूंगी। मैं अनेक वैद्य, हकीम, डाक्टर मंत्र-तंत्र जानने वालों के पास होकर आई हूँ, परन्तु किसी ने भी मेरे पुत्र को जीवित नहीं किया।

साधु—अब ज़रा तू धीरज धर और मैं बताऊं उस उपाय को कर? जिस घर में कभी कोई न मरा हो उसके घर का पानी लाकर तू अपने लड़के को पिला, यह अभी जीवित हो जायेगा।

मोहिनी—जो आज्ञा, अभी लाती हूँ। मोहिनी घर २ फिरी परन्तु उसको कोई घर ऐसा न मिला जिसमें कभी कोई न मरा हो। लाचार होकर साधु महाराज से बोली "महाराज, ऐसा कोई घर नहीं है, जिसमें कोई न मरा हो"।

साधु—तो तेरा पुत्र कैसे जिंदा हो सकता है। मौत जब सबही के साथ लगी है, तब इसकी चिंता क्या? हम तुम सब ही एक दिन मरेंगे। इस उपदेश को सुन कर मोहिनी की बुद्धि ठिकाने आई और पुत्र का अग्नि संस्कार कराया। मोहिनी का डाक्टरों, वैद्यों आदि के पास भटकना, साधु के कहने पर घर २ पानी के लिये जाना—उसको अपनी जाति के बढ़ाने की प्राकृतिक भावना के ही कारण था। अगर यह भावना उसमें न होती, तो वह कदापि अपने बच्चे के लिये इतना कष्ट न सहती।

चिड़ियां के बच्चे स्वयं ही उड़ना सीख जाते हैं चिड़ियां घोंसला बनाने में अपने आप ही दक्ष हो जाती है। मछलियां पानी में पैदा होते ही तैरना सीख जाती हैं। ये प्राणी अपने शरीर की रक्षा करने के हेतु ऐसा करते हैं। अगर प्रकृति उनको ऐसा करने की शक्ति न देती तो जीव को अपनी रक्षा करने व अपनी जाति को बढ़ाने की चिंता कभी नहीं होती।

विचारने की बात है कि नन्हा सा बच्चा क्या यह समझ कर दूध पीता है कि मेरा शरीर ऐसा न करने से नष्ट हो जायगा। बच्चों को ऐसा ज्ञान नहीं होता। उनको प्रकृति ने ऐसी शक्ति दी है कि प्राणी बिना सोचे समझे ही अपने शरीर की रक्षा के अनुकूल ही कार्य करने लगते हैं। प्राकृतिक शक्ति ही सब शक्तियों का बीज है इसी का विकास होने पर अन्य शक्तियां भी धीरे २ आती रहती हैं। जिस प्रकार पत्थर और ईंटों से मकान खड़ा किया जाता है। उसी प्रकार इन प्राकृतिक शक्ति रूपी ईंटों और पत्थरों के आधार से मनुष्य का चारित्र रूपी मकान बनाया जाता है। जिस प्रकार गृहनिर्माणकी अच्छाई और बुराई कारीगरपर निर्भर है उसी प्रकार बच्चे का चारित्र बनाना या बिगाड़ना अध्यापक पर निर्भर है, जिसने उसे शिक्षा दी है।

बच्चे को जैसी तालीम दी जाती है बच्चा भविष्य में वैसे ही कार्य करता है। अध्यापक बच्चे के दिमागपर जैसाभी झुकाव डालना चाहे डाल सकता है। शिवा जी में वीरता के भावों का होना उनके गुरु रामदास की वजह से था जिनके पास उन्हों ने बचपन में शिक्षा ग्रहण की थी।

अतः अध्यापकके लिये उन २ नियमोंका जानना आवश्यक है जिन के कारण वह अपने शिष्यों के चारित्र को सुदृढ़ बना सकता है। चरित्र का बनना ठीक प्रकारसे प्राकृतिक शक्तियों के विकास पर निर्भर है। अतः अध्यापक को प्राकृतिक शक्तियों का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। इसके अतिरिक्त यह भी जानना आवश्यक होगा कि कौन सी प्राकृतिक शक्ति का प्रादुर्भाव कब और किस अवस्था में होता है तथा उस प्रकार की प्राकृतिक शक्ति से किस प्रकार लाभ उठा कर बच्चे के चरित्र को कैसे सुदृढ़ बनाया जा सकता है।

यथा जिज्ञासा (Curiosity) की प्राकृतिक शक्ति का बच्चे में ६ या ७ वर्ष की अवस्था में प्रादुर्भाव होना प्रारम्भ होता है। इस समय अध्यापक का कर्तव्य है कि वह बच्चे को नई २ वस्तुओं के आधार पर शिक्षा दे। अध्यापक बच्चे को इन्हीं प्राकृतिक शक्तियों के आधार पर कार्य करने से ही वश में ला सकता है।

बिना बच्चे को वश में किये अध्यापक जैसी चाहिये वैसी शिक्षा देने में सफल नहीं होता। अगर हम बैल को पानी के पास ले आवें और उसका मुंह पानी में डुबोदें जब तक वह स्वयं न चाहे हम उसे पानी नहीं पिला सकते इसी प्रकार हम बच्चे को पाठशाला में ले जा सकते हैं, किताबें कापियां आदि उसके सामने रख सकते हैं किन्तु हम उस को जब तक वह स्वयं कोशिश न करे कुछ भी शिक्षा नहीं दे सकते। कामका प्रारंभ स्वयं बच्चेको करना आवश्यक है कुछ भी प्रारंभ न करने से बुरा प्रारंभ ही अच्छा है।' क्योंकि इस दशा में हम विद्यार्थी को प्रारंभ की बुराइयां दिखा कर उसके बदले उस से अच्छा काम करा सकते हैं। मौन रहने वाला बच्चा इतना अच्छा नहीं होता जितना कि अशुद्ध उच्चारण करने वाला बच्चा अच्छा होता है। मौन रहने वाले बच्चे को हम कुछ नहीं सिखा सकते लेकिन गलत उच्चारण करने वाले बच्चे का उच्चारण हम ठीक करके शिक्षा दे सकते हैं।

एक बार एक बच्चा मेरे पास शिक्षा ग्रहण करने आया। बच्चा बाहरी आकृति से बहुत ही बुद्धि मान

मालूम होता था किन्तु वह बहुत कम बोलता था। घंटे भर में वह कुछ ही शब्दोंका उच्चारण करता था। मैं ने उसे शिक्षा देने का बहुत ही प्रयास किया लेकिन मेरा प्रयास निष्फल सिद्ध हुआ। अन्तमें मैं ने उसे पढ़ाने को कोशिश न करके उससे वार्तालाप करने के लिये उसके पास उस ही उम्र के बच्चों को छोड़ दिया। और कई प्रकार के खिलौने आदि का संग्रह किया। मैं उस बच्चे से खिलौने आदि पर वार्तालाप किया करता था कुछ ही महीनोंमें अभ्यास के कारण बच्चे ने बोलना प्रारंभ किया और अब वह उसी प्रकार से वर्तालाप करता है जैसे एक साधारण बच्चा करता है। इस समय मैं ने उसकी कायदेवार पढ़ाई का सिलसिला जारी कर दिया बच्चे ने कुछ ही समय में आश्चर्य जनक तरक्की कर दिखाई ।

यह अक्सर देखा गया है कि बच्चों का प्रारम्भ में जैसा व्यवहार चाहिये वैसा नहीं होता। अगर हम उसे कोई खिलौना या वस्तु देते हैं तो वह छीनना चाहता है। छीन कर वस्तु को लेना हम ठीक नहीं समझते। लेकिन बच्चे में ऐसी ही प्राकृतिक शक्ति है।

अब हम उसकी इस प्राकृतिक शक्ति को ठीक करना चाहते हैं। हमने बच्चे को कोई वस्तु न देकर बच्चे को समझा दिया कि अगर तुम इस वस्तु को छीन कर लेवोगे तो नहीं दिया जावेगा। अगर तुम सभ्यता पूर्वक हाथ जोड़ कर वस्तु को मांगोगे तो तुम्हें वस्तु मिल सकती है। बच्चे ने वैसा ही किया हमने उसको वस्तु दे दी। कुछ समय पश्चात् हम फिर एक वस्तु लाते हैं और बच्चा पूर्ववत् ही छीन कर वस्तु को लेने की कोशिश करता है। हम फिर उसे समझाते हैं। और बच्चा भी जैसा हम कहते हैं वैसा ही व्यवहार करता है। हम प्रसन्न होकर वस्तु फिर दे देते हैं। इस प्रकार कई बार क्रिया करने से हमने बच्चे के मनमें यह बात दृढ़ कर दी कि किसीकी कोई वस्तु देख कर छीनना बुरा है। उससे विनय पूर्वक माँगना चाहिये।

बच्चा अगर वस्तु को छीनने की कोशिश नहीं करता तो हम उसमें यह आदत नहीं डाल सकते थे बच्चे ने बुरी रीति से अपनी प्राकृतिक शक्ति का प्रादुर्भाव किया हमने इसी प्राकृतिक शक्ति को अच्छी प्रकार से कार्य रूप में लाना सिखा दिया।

अतः अध्यापक का भी यही कर्तव्य है कि जिन बातों को बच्चा खराब रीति से कर रहा है—उन बातों को ठीक कराता रहे। कोई भी बच्चा या किसी भी प्रकार का खराब कार्य कर रहा है तो उसको उस समय से ठीक दशा में लाना अध्यापक व माता पिता का कर्तव्य है।

बहुत से बच्चे खराब तरह से व्यवहार करते हैं। लेकिन उनके अध्यापक व माता पिता उनके बुरी तरह से किये गये व्यवहार की कुछ भी परवा नहीं करते। बच्चे उसी प्रकारके व्यवहारको बार २ करने से उस प्रकार के व्यवहार में सिद्धहस्त हो जाते हैं। फिर अध्यापक या माता पिता के भरसक प्रयत्न करने पर भी उनका वह व्यवहार ठीक नहीं होता।

एक बच्चे में लड़ने झगड़ने की खूब आदत है। अध्यापक को चाहिये कि ऐसे बच्चे को अखाडे आदि में भेजे जहाँ पर वह अपनी इस प्राकृतिक शक्ति का प्रादुर्भाव ठीक तौर से करने में समर्थ हो।

एक बच्चा चीजों को खूब तोड़ा फोड़ा करता है

ऐसे बच्चे को मिट्टी कागज, आदि की वस्तुओं का बनाना सिखाना चाहिये जिसके वह अपनी प्राकृतिक शक्ति को ठीक प्रकार से लगा सके।

इसी प्राकृतिक शक्ति से लाभ उठाने के लिये बड़े २ स्कूलों में मिट्टी के खिलौने बनवाए जाते हैं। लकड़ी का काम सिखाया जाता है। कागज काटकर उससे अनेक चीज़ों के नमूने तैयार कराये जाते हैं। ऐसा देखा गया है कि छोटे २ बच्चे वर्षा के बाद भूरी मिट्टी के मैदानों या चौक आदि में चले जाते है और मिट्टी के किले, जानवर, लड्डू आदि कई वस्तुओं को बना कर खेला करते हैं।

एक दफा की बात है। कुछ बच्चों ने एक भूरी मिट्टी के किले का निर्माण किया। इस किले में उन्होंने करीब २ वे सभी बातें दिखलाई जोकि किसी किले में आवश्यक होती हैं। यह बच्चे अपने अध्यापक से अकबर के चित्तौर के किले के हमले का हाल सुन चुके थे। बस इसी आधार पर उन्होंने भी दो फौजों का निर्माण किया और उसी प्रकार लड़ने लगे जैसे कि अकबर बादशाह की लड़ाई चित्तौर के किले के लिये हुई थी। इस प्रकार के खेलों से बच्चों की तबीयत बहुत प्रसन्न होती है। और इसके अतिरिक्त बच्चों की बुद्धि भी शीघ्रता से बढ़ती है।

किंडर गार्टन विधि से शिक्षा इसी प्रकार से दी जाती है। तभी इस विधि से शिक्षा पाये हुये विद्यार्थी किताबी कीड़े नहीं होते। यह बच्चे अपने बुद्धि बल से बड़े २ कार्य आसानी से सम्पादन करने में समर्थ होते हैं। इस विधि से पढ़ने वाला बच्चा किताबों पर ज्यादा निर्भर नहीं रहता। छोटे २ बच्चे कमरे, मैदान आदि को नापने में इतने ही दत्तचित्त होते हैं जितना कि एक बड़ा इंजिनियर होता है। भूगोल और इतिहास की शिक्षा के लिये छोटे २ किले नकशे आदि बच्चों से ही बनाये जाते हैं। स्कूलों में बड़े २ अजायबघर होते हैं जिनमें बच्चों को हर प्रकार की इतिहास या भूगोल संबंधी वस्तुएं देखने को मिलती हैं। माण्टेस्वरी (Montessori) स्कूलों में छोटे २ बच्चे लाल पीले कागज के टुकड़ों को काट कर पृथ्वीराज या संयुक्ता के भगाने आदि के दृश्य बड़ी रोचकता से बनाते हैं। ये कागज के बहुत अच्छे २ खिलौने वर्ण (Letters) आदि बनाने में बहुत दक्ष होते हैं। ५ या ६ वर्ष के बच्चे लकड़ी या कागज की वस्तुओं को मजा २ कर भिन्न २ प्रकार की वस्तुओं को तैयार करने में बहुत ही चतुर होते है इस शिक्षा पद्धति पर फिर कभी प्रकाश डाला जायगा।

(अपूर्ण)

—बाबू विद्याप्रकाश जी काला एम० ए० बी टी०

मृत्यु भोज

(गल्प)

(ले० श्रीमान बाबू सूरजमल जी पाटणी)

उपचार करते महीनों व्यतीत हो गये। कोई नतीजा नहीं। ज्यों २ दवा की मर्ज बढ़ता ही गया। डाक्टर ने कहा, अब आप किसी दूसरे वैद्य, हकीम, अथवा डाक्टर से चिकित्सा करावें तो उचित होगा। मैं शक्ति भर प्रयत्न कर चुका, अब अधिक औषधियों में आपके पैसे खर्च करवाना ठीक प्रतीत नहीं होता। एक बात यह भी है कि इस तरह के रोगों का इलाज औषधियों से नहीं होता। अब तो आपको केवल प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना चाहिये।

राजेश्वर ने कहा, साहब! आप क्या कह रहे हो। आपकी इस सम्मति का तो यह अर्थ होता है कि अब मैं न बचूँगा। क्या मेरा रोग असाध्य है। यदि ऐसा था तो आपने पहले ही क्यों न कह दिया। पानी के समान हजारों रुपये बहा देने के बाद अब ठीक प्रवाह के बीच मुझे इस असहाय अवस्था में आप छोड़ रहे हैं, यह तो किसी भी तरह उचित नहीं है। आपकी जो फीस बाकी है वह सब मेरी मैना के ज़ेवर बेच कर दे दी जायगी। अब इस अवस्था में कोई चिकित्सक मेरा इलाज करना कैसे स्वीकार करेगा। क्योंकि फीस देने के लिये तो एक भी पाई नहीं है। आपके गत मास तक के दो हजार रुपये तो दे ही दिये हैं, मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं आपकी पाई २ अदा कर दूंगा। डाक्टर शर्मा ने इन बातों का कोई जवाब नहीं दिया। यह कह कर चल दिया कि बातें करते २ बहुत देर हो गई, तुम थक गये होगे और मुझे भी कई रोगियों को देखना अभी बाकी है।

डाक्टर साहब के चले जाने के बाद राजेश्वर विक्षिप्त सा हो गया। मृत्यु का भय प्राणी के लिये सबसे अधिक भयंकरतामय है। चाहे जीवन कितना ही यातनामय क्यों न हो कभी कोई मरना पसंद न करेगा। यद्यपि प्रत्येक जीवन धारण करने वाला अवश्य मरता है, यह बात सूर्य के प्रकाश के समान स्पष्ट है फिर भी इसका नाम सुनते ही मनुष्य भय से कांपने लगता है। राजेश्वर की भी यही अवस्था हुई। उसका क्षीण शरीर मृत्यु और अपनी असहाय पत्नी का विचार कर कांपने लगा। जब वह कालेज में पढ़ता था तब यद्यपि उसने वर्षों तक फिलासफी का अध्ययन किया था। पर उस समय के अध्ययन ने इस दुःखावस्था में उस को कुछ भी सहायता न पहुँचाई। शेखचिल्ली के समान कई तरह के सार-हीन विचार करते २ करीब १० बज गये।

मैना ने आ कर कहा १० बज गये हैं, अब दवा ले लेना चाहिये। पर इस प्रश्न का राजेश्वर ने कुछ भी जवाब नहीं दिया। मानो ऐसा मालूम होता था जैसे उसने सुना ही न हो।

आपका किधर ध्यान है। मैंने क्या कहा? क्या आपने सुना है' मैना बोली। तब राजेश्वर ने जवाब दिया तुम थोड़ी देर मेरे पास बैठ जाओ। मैं तुम्हें कुछ कहना चाहता हूँ। यदि तुम धैर्य रख कर सुनना चाहो तो कह दूं। नहीं तो कुछ नहीं कहना है।

कहिये क्या कहते हैं ? मैं सुनने को तैयार हूँ। मैना बोली।

राजेश्वर ने कहा, अब तुम समझ लो कि मैं मृत्यु शय्या पर पड़ा हुआ हूँ। अब मेरे जीने की आशा नहीं है। जीवन के कटोरे में जो कुछ पानी के कण बचे हुये हैं वे सब धीरे २ निकलते आ रहे हैं, और कटोरे का छेद इतना अधिक बड़ा हो गया है कि उसके निकलने में अब बहुत समय न लगेगा। कल जब तुम भोजन बनाने चली गई थीं डाक्टर शर्मा ने कहा था कि वह अब मेरा इलाज न करेगा क्योंकि मेरा रोग असाध्य है।

यह बातें सुनते २ ही मैना की आँखों से अश्रु-धार बह निकली। राजेश्वर ने कहा अहा ! यह तुम क्या कर रही हो। क्या तुम भूल गई कि मैंने तुम्हें धैर्यपूर्वक सुननेके लिये कहा था। मैं तुम से सविनय प्रार्थना करता हूँ कि जीवन के अंतिमक्षण में कहेगए मेरे थोड़े से शब्दों को तुम सावधान पूर्वक सुन लो। इसके बाद तो मेरा और तुम्हारा ऐसा अनन्त वियोग होगा जिसकी कभी समाप्ति नहीं हो सकती। मुझे केवल तुम से यह कहना है कि मेरी मृत्यु के बाद तुम्हारा क्या कर्तव्य होगा।

मेरे पूजनीय देवता। आप क्या कहना चाहते हैं। जो आपकी आज्ञा होगी वही मैं करने के लिये तैयार हूँ मैना ने कहा।

रोगी कांपते हुए ओठों से फिर कहने लगा, पिता जी जो कुछ सम्पत्ति छोड़ गये थे वह मेरे पढ़ने और इस कमबख्त रोग के इलाज करने में समाप्त होगई अब मैं तुम्हें बिलकुल असहाय और दीनावस्था में छोड़ कर जा रहा हूँ, तुम अपने उदरपोषण के लिये क्या उपाय करोगी, यह मेरी समझ में नहीं आ सकता। दुःख तो इस बात का है कि तुम्हारे पास तो मुझ अभागे प्रभुवर ने मर जाने के बाद मेरा मृत्यु संस्कार करने के लिये भी कुछ नहीं छोड़ा। कुछ उपार्जन कर तुम्हें सौंपना तो दूर रहा जो कुछ घर में मौजूद था उसको भी खर्च कर तुम्हें कंगाल कर चला।

बातें काट कर बीच में ही मैना ने कहा, इस समय आधी रात को ऐसी बातें करने से क्या लाभ है। मैं दवा के लिये बैठी हूँ, आप ऐसी बातें कर रहे हैं। दवा क्यों नहीं ले लेते जो कुछ मेरे भाग्य में होगा, हो जायगा। पहले से हा ऐसी चिंता करने की क्या आवश्यकता है। जब आप चङ्गे हो जायेंगे तो बहुत धन कमा लेंगे। पढ़ने और इलाज में जो व्यय हुवा है उसकी चिंता करना समझदारी नहीं है। 'जीवन्नरो भद्रशतानि पश्येत्' क्या आपने यह नहीं पढ़ा।

इसके बाद दवा लेकर राजेश्वर सो गये।

× × × × ×

आज मैना के घर बहुत से स्त्री पुरुष एकत्रित हो रहे हैं और उसके घर से ऐसे शोकमय करुणा क्रन्दन की आवाज आ रही है जिसको सुनकर पत्थर का हृदय भी पिघले बिना न रहे। दाह संस्कार में शामिल होने के लिये लोगों में से एक आदमी ने आ कर मैनासे कहा लावो कुछ रुपये दो जो क्रिया-कर्म के लिये सामान लाया जाय। उसने कहा मेरे पास तो कुछ नहीं है। यह एक जेवर और बचा है इसे ले आइये और जो कुछ आपको लाना हो सो ले आइये। सब काम विधिसे निबट गया। आस पासके रिश्तेदारों और पड़ोसियोंने कुछ वाचनिक सहानुभूति

भी दिखलाई । पर मैना के हृदय को कितना आघात पहुँचा है यह तो केवल भगवान ही जान सकते हैं ।

जब सारा संसार निद्रादेवी के मंगलमय शासन में अव्यक्त आनंदानुभव कर रहा है उस समय यह विह्वला मैना अकेले ही अपने बिछौनों पर पड़ी हुई अनन्त चिन्ताओं को पिशाचों द्वारा मानों डराई जा रही है । वह मन ही मन कह रही है कि हे करुणालय पूज्य परमात्मन् ! क्या तुम्हारा दिव्य प्रकाश मुझे बल प्रदान कर सच्चा मार्ग बतलायेगा ? हे ईश्वर ! ये समाज कितना निर्दय और हृदय हीन है कि जिस अबला के लिये कोई खाने और पीने का निश्चित अवलम्बन नहीं इसको भी इस तरह मृत्यु-भोज के लिये सामाजिक विभीषिका द्वारा डराया जाकर तंग किया जा रहा है । हे परमात्मन् ! तुम्हीं बतलावो कि कल मैं उन क्रूर पंचों को क्या जवाब दूंगा ? इस तरह विचार करते २ मैना को नींद आ गई ।

आज मैना के घर पर लोगों का जमघट दिखाई दे रहा है । उसका एक रिश्तेदार उसको बिना पूछे ही बिरादरी के लोगों को यह कह कर बुला लाया है कि मोसर की चिट्ठी फाड़ने के लिये आप लोगोंका आना जरूरी है । लड्डू जीमनेके कामके लिये तो लोग बिना बुलाये ही आ सकते हैं, फिर बुलावा मिलजाने पर तो कहना ही क्या । जिनकी विवेक बुद्धि नष्ट हो गई है वे बिना सोचे समझे ऐसे निन्द्य कार्यों में सहयोग देकर गिरती हुई समाज को एक और भी धक्का देते हैं । ऐसे आदमी इस बात का विचार नहीं करते कि समाज के किस व्यक्ति के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है । जो समाज में बड़े हैं और बड़े कहलाना चाहते हैं उनका कर्तव्य है कि द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव की परिस्थिति का विचार कर व्यक्ति की उन्नति में सहायता प्रदान करें, क्योंकि व्यक्ति समाज का एक अङ्ग है । व्यक्तिकी उन्नतिके बिना समाजका उन्नत होना असंभव है । जो स्वार्थी हैं वे इन बातों का विचार क्यों करेंगे, अस्तु ।

मैना के घर पर एक एक करके बरसाती कीड़ों के समान सब लोग इकट्ठे होगये, और मैना का वह रिश्तेदार बोला कि आप लोगों से मेरी यही प्रार्थना है कि हमें नुकता करने की इजाजत मिलनी चाहिये । इतनी बात सुनते ही उपस्थित लोगों में से एक दो को छोड़ कर सब ही बड़े बूढ़े महाशय बोले कि यह तो बहुत खुशी की बात है, न्यात गङ्गा को जिमानेके सिवाय और क्या धर्म हो सकता है । सुख दुःख पाकर यह तो करना ही पड़ेगा, नहीं तो बेचारे छोकरे पर सदा के लिये कलङ्क का टीका बना रहेगा एक बूढ़े चौधरी जी बोले, आप का कहना बिलकुल दुरुस्त है, जो रुक गया सो रुक ही गया । श्री जी की कृपा से हम तो इस तरह के कलङ्कों से सदा ही मुक्त रहते हैं ।

फिर सब लोगों ने एक स्वर से कहा, तो फिर देर करने की क्या जरूरत है । इजाजत दे दी जाय । जोसी जी अभी नहीं आये मालूम होते हैं । इसी के बीच में एक बीस वर्ष के नवयुवक ने साहस करके पूछा कि मृत व्यक्ति की क्या अवस्था होगी ? जहां तक मुझे ज्ञात है वे अठाईस वर्ष से ज्यादा न होंगे । मैं कालेजमें उनका सहपाठी (Classfellow) रहा हूं । मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि उनकी

अवस्था अठाईस से अधिक किसी तरह नहीं हो सकती। इस अवस्था वाले व्यक्ति का मृत्यु भोज करना अपनी पंचायती नियम को भी तोड़ डालने वाला है। क्या आपको याद नहीं है उस दिन अपनी पंचायती बही में यह नियम लिखा गया था कि तीस वर्षसे कम अवस्था वालेका मृत्यु भोज नहीं किया जा सकता इसके अतिरिक्त एक बात यह भी है कि मेरे मित्र राजेश्वर की यह एकान्त इच्छा थी कि उसका नुकता बिलकुल न किया जाय। तीसरी बात यह भी है कि जिस व्यक्ति की मृत्युभोज की इजाजत देनेके लिये आप लोग एकत्रित हुये हैं, उसकी असहाय पत्नी और दो तीन बच्चों के भरण पोषणके लिये भी आपने कुछ सोचा है या नहीं? उस दिन उसके पास तो दाह संस्करण के लिये भी एक पैसा नहीं था। उस बिचारी ने हाथ का अपना एक कंगन खोल कर उस रीति को अदा करने के लिये दिया था बहुत अधिक शर्म की बात है कि हम लोग बिना विचार किये ही उस अबलाके सर्वनाशके लिये तैयार होगये बस, उस साहसी नवयुवक के इतना कहने हो तीन चार बुड्ढे उस पर एकायक टूट पड़े, और बोले तुम को बोलने का कोई हक़ नहीं है, तुम पंच नहीं हो। जब कि तुम्हारा पिता भी यहाँ मौजूद है। हम इस तरह की बातें पंचायती के बीच बैठ कर नहीं सुनना चाहते। इस पर एक दूसरे नवयुवक ने कहा कि बड़े आश्चर्य की बात है कि कही गई बातों पर कुछ भी विचार न कर इस तरह एक आदमी पर एकायक टूट पड़े। बस इतना कहते ही पंच नाम-धारियों में आपस में मैं, मैं, तू, तू होने लगी, और थोड़ी देर के लिये ऐसा ज्ञात हुआ कि मानों मैना का घर युद्ध का क्रीड़ा स्थल बन गया है। बात इतनी अधिक बढ़ गई थी कि आखिर पुलिस को आकर मामला शांत करना पड़ा। और इस तरह वह संकट का दिन भी यूँ ही निकल गया।

मैना यह सोच कर बड़ी प्रसन्न हुई कि दयालु परमात्मा ने मुझे संकटके इस अथाह सागर से पार चले जाने के लिये कैसा अच्छा सहारा दिया है यदि इनके आपस में ही सिर फुडोल न होती तो मैं किसी तरह न बच सकती। पर यह तो केवल एक तिनके का सहारा था। लड्डू खोर लोगों को कब चैन पड़ने वाली थी।

दूसरे दिन फिर पंचों को बुलाने की योजना की गई। उस दिन के बुलावे की योजना में यह विशेष-ता थी कि प्रत्येक घर के बूढ़े २ आदमियों को बुलाया गया था और यह भी निश्चित किया गया था कि एक घर के दो आदमी नहीं आ सकते। जिसके घर से इस नियम का पालन नहीं होगा उस को जाति बहिष्कृत कर दिया जायगा। बहिष्कार की विभीषिका से बिचारे नवयुवक डर गये, और इस तरह मिष्ठान्न के अनन्य उपासकों के सारे मनोरथ सफल हो गए।

जब मैना को यह मालूम हुआ कि आज नुकते के प्रतिकूल विचार वाले नवयुवकों का पंचायती में आना रोक दिया गया है तो उसे बहुत दुःख हुआ। क्योंकि उनके सिवाय उसकी पक्ष में बोलने वाला और कौन है। इस लिये एक वृद्धा के द्वारा उसने कहलाया कि मैं मोसेर करना नहीं चाहती मेरे पास तो खाने को भी नहीं है, और आप लोगों को ऐसी ज्यौनारों की मौजें उड़ाना सूझ रही है। क्या

लाडुओं के नाम पर इकट्ठे होने वालों में से किसी ने मुझे यह भी पूछा कि मेरा और मेरे बच्चों के भरण पोषण का क्या प्रबंध होगा। मैं मृत्यु भोज को युक्ति और आगम विरुद्ध समझती हूँ। इस लिये आप मिहरबानी कर अपने अपने घर पधारें। बस इतना कहते ही चौधरी ख्यालीराम ने कहा कि इस तरह पुरुषों में आज स्त्रियों को बात करने की आवश्यकता नहीं है। क्या पंचों को अपमान करने के लिये बुलाया गया है? अब तो चिट्ठी फाड़ कर के ही जायेंगे। आज तक ऐसा कभी नहीं हुवा कि पंचों का इस तरह अपमान किया गया हो। जिस प्रकार अन्यायी आपस में अन्याय के धन को बांटने के लिए एक मत हो जाते हैं वैसे ही मैना की ओर से खूब विरोध होने पर भी इन लोगों ने एक मत हो कर मृत्यु भोज की तिथि निश्चित कर ही ली।

पंचोंके चले जाने पर मैनाका वह दूर का रिश्तेदार जा कर कहने लगा। पंचों को बुला कर इस तरह उनका अपमान करना उचित नहीं था। मैं ने तो तुम्हारा भरोसा जान कर ही तुम्हें बिना पूछे पंचों को बुला लिया था। मैं ने कोई बुरा काम तो किया हो नहीं। जिमाना तो एक पुण्य बंध का काम है। उस दिन सुधर्मा पंडित जी ने क्या नहीं कहा था कि इसको समदत्ति कहते हैं। आदि पुराण में भी समदत्ति दान देने के लिये लिखा है। यदि इस में धर्म न होता तो हमारे बुजुर्ग इन कामों को क्यों करते। आज कल के नवयुवकों की बात जाने दो, वे तो बहुत सी बातों को ढकोसला बताते हैं। और क्या वे मौसर का विरोध करने वाले मौसर में नहीं जीमते मैं ने ऐसे बहुत से आदमियों को देखा है।

मैना ने इन सब बातों के उत्तर में यह ही एक जवाब दिया कि आप समदत्ति का अर्थ नहीं जानते मृत्यु भोज समदत्ति नहीं यह तो उसका दुरुपयोग है। इसका लक्षण इसमें नहीं रहता। इसको समदत्ति बतला कर शास्त्रों और युक्तियों से इसके सिद्ध करने की चेष्टा करना तो एक पागलों का प्रलाप है। मेरे सामने आप इसका औचित्य सिद्ध नहीं कर सकते। यह तो एक तरह की रूढ़ि है। लोक मूढ़ता है। हमारे अविवेक का फल है। इस प्रथा ने हजारों स्त्री पुरुषों को गृह विहीन बनाकर दुखित कर दिया है। क्या आप इस बातको नहीं जानते? वह दिन आपको मालूम है—रामनाथ सरावगीका मकान केवल मौसरों के कारण ही नीलाम हुआ था। एक दिन की वाह वाह के लिये जीवन के संचित धन को स्वाहा कर देना कोई समझदारी नहीं है। उस आदमी ने बात काटकर बीच में ही कहा इन सब बातों को अभी जाने दो। मान लो मेरी गलती हुई। अब तो रकमका इंतजाम अवश्य ही करना पड़ेगा। पर तुम्हारे पास गहना तो कुछ नहीं दीखता। थोड़े दिन की बात है मकान गिरवी क्यों नहीं रख देतीं? जब लड़का बड़ा होगा कमाकर छुड़ालेगा अब इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। अगर तुम इस बात को न मानोगी और मौसर न करोगी तो पंचों ने निश्चय कर लिया है कि तुम जातिबहिष्कृत कर दी जावोगी।

मैना ने कहा मैंने ऐसा क्या अपराध किया है?

घर पर बुलाकर पंचों का अपमान करना क्या कम अपराध है, वह मूर्ख बोला।

मैना ने कहा अरे भले आदमी? क्या पंचों को मैंने बुलाया था। गढ़ा तो तुमने खोदा और उसमें

धका मुझ को देना चाहते हो। बस यह कहकर मैंना चुप हो गई।

वह आदमी यह कहकर कि इसका फल तो तुम को कल ही मिल जायगा, वहाँ से चला गया।

× × × × ×

आज मंदिर लोगों से ठसाठस भरा हुआ है। अपने घर पर बुलाकर मैंना ने पंचों का अपमान किया है इस लिये उसी पर विचार करने के लिये यह पंचायत हुई है। मंदिर में इतना कोलाहल हो रहा है मानो वीतराग देव का स्थान कोलाहल के देवता ने ले लिया हो। जिसके जो मन में आती है बोलता है, कोई किसी की नहीं सुनता। बहुत से शिक्षित लोगों ने कहा कि हम ऐसी पंचायती सभा नहीं मानते। धर्म के नाम पर पाखण्ड की उपासना करने वाले इन पंचों की अब जरूरत नहीं है। सच्चा पंच तो वह है जो व्यक्ति के हित की चिंता करता हो उससे सहानुभूति रखता हो। जिनलोगों ने उस अबला के भरण पोषण का कुछ भी खयाल न कर उसके सर्वनाश करने का विचार कर लिया है ऐसे लोगों को पंचों के महान आसन पर नहीं बिठलाया जा सकता। इस तरह वाकयुद्ध होते २ मल्लयुद्ध होने की नौबत आगई और भगवान जिनेन्द्र का शान्ति स्थल मंदिर शैतान का युद्ध स्थल बन गया। थोड़ी देर पीछे पुलिस ने आकर कुछ लोगों को गिरफ्तार किया और ले गई।

इसके बाद लोगों ने सोमवार के दैनिक पत्रों में लोगों ने यह समाचार पढ़ा कि स्टेट ने मृत्यु भोज को अपने राज्य में सदा के लिये बन्द कर दिया है। किसी नवयुवक के मुंह से (यह समाचार पढ़ते हुये) यह शब्द निकल पड़े कि शिक्षितों के नीति पूर्ण साहसकी जय हो, पर इसी पत्रमें आगे यह समाचार पढ़कर प्रत्येक जैनी को दुःख हुआ कि सरकार ने मंदिर पर अपना अधिकार जमा लिया है।

सुखानन्दकुमार की दृढ़ता

हंस द्वीप में प्रबल वेगसे आये प्रवहण,
करके बहु व्यापार जमा हर्षित सबका मन।
गया राज दरबार भेंट निज कर में लेकर,
करके अर्पण शीघ्र नम्र बैठा आसन पर ॥१॥

सुखानन्द का किया भूपने आदर भारी,
विस्मय करने लगी खूब नृप परिषद् सारी,
जग भरमें सर्वत्र सुगुण ही पूजे जाते,
तन आडम्बर कभी लेश भी काम न आते ॥२॥

दासी लख यह दृश्य हुई विस्मित निज उरमें,
जाके कहने लगी बात यों अन्तःपुर में।
आया सेठ कुमार एक परदेशी सुन्दर,
विस्मित मैं होगई रूप मृदु उसका लख कर ॥३॥

करके रानी श्रवण वणिक-सुत रूप प्रशंसा,
बढ़ी हृदय में प्रबल शीघ्र दर्शन आशंसा।
दासी को तत्काल भेज निज महल बुलाया,
सुखानन्द ने हार भेंट में उसे चढ़ाया ॥४॥

द्रुतविलम्बित

मदन सो लख मूर्ति सुहावनी,
हृदय मुग्ध हुई नृप-कामिनी।
नयन से यह मूर्ति निहार के,
रह गई करमे मन हार के ॥४॥

नहिं लखी अबलों यह चारुता,
मदन क्यों शर तीक्ष्ण- प्रहारता।
कमल तुल्य सुकोमल गात्र है,
सतत धन्य अहो! प्रिय पात्र है ॥५॥

हृदय आतुर है इसके लिये
विविध भाँति विचार किये हिये।
सरल लज्ज स्वभाव सुत्याग के,
वचन यों उचरे बड़ भाग से ॥६॥

वणिक पुत्र सदा तुम धन्य हो,
जगत मध्य स्वरूप अनन्य हो।
यह अलौकिक रूप कहाँ मिला?
अहह यौवन पुष्प कहां खिला? ॥७॥

विशद चंचल नेत्र सुहावने,
व्यथित हा करते शर से बने।
मर रही मकरध्वज मार से,
मिलन हो मुझसे अब प्यारसे ॥८॥

विफल जीवन सर्व मिले विना ?
हृदय पंकज मंजु खिले विना
दयित पूर्ण करो मम कामना
विनय से करती अब प्रार्थना ॥९॥

दुखित का दुख भी सब दूर हो,
हृदय वल्लभ आज न क्रूर हो।
अघमयी सुनके उसकी गिरा,
वणिक् पुत्र हृदय दुखसे भरा ॥१०॥

पुरुष होकर भी पुरुषार्थ क्या ?
हृदय ध्यान नहीं परमार्थ का।
अधिक खेद अहो करता हुआ,
वचन यों उससे कहता हुआ ॥११॥

शार्दूल विक्रीड़ित

रानी तो जग में समस्त जनकी माता कहाती सदा,
राजा को तज प्राणि मात्र उसको हैं पुत्रवत् सर्वदा।
है आश्चर्य महान आप मुझसे बातें करो पापकी,
है तैयार सुकृत्य नित्य करने सन्तान ये आपकी ॥१२

त्यागो ये कुविचार मात मनका, पापी न होते सुखी
मैं हूँ हा ! किस योग्य देख मुझको होती वृथा ही दुखी
पृथ्वीनाथ सदैव आप प्रिय हैं, हैं रम्य वे ही तथा,
वे ही हैं इस कार्य योग्य जननी मैं त्याज्य हूँ सर्वथा ॥१३॥

पाके उत्तर हाय रूक्ष उसका, सोचे खड़ी कामिनी.
हा हा क्यों पुरुषत्वहीन अपनी करता नहीं स्वामिनी
आंखों से लख रम्य रूप जिसका सारे करें चाहना,
पृथ्वीनाथ-प्रिया वही विनय से देखो करे प्रार्थना॥१४॥

सारा अन्तर भाव जान उसका, सुखनंद जाता रहा
सूना देख समस्त गेह अपना, तब नीर आंखों बहा।
कांटों बीच पड़ी अरण्य कुररी, होती दुखी है यथा,
हा ! कामातुर क्षोणिनाथ रमणी होती दुखी थी तथा १५

होगा सिद्ध न इष्ट आज अपना, ज्यों ही विचारा हिये.
फैलेगा अपवाद घोर जग में, सर्वाङ्ग मैले किये।
चीरे सुन्दर सर्व वस्त्र तनके फैंके सभी हार भी.
धूली में लपटी कुभाव वश यों, नोंचे अहो गाल भी १६

आई भूपति पास शीघ्र महिषी, धिक्कार देती हुई.
क्या भूपाल न ज्ञात सम्प्रति तुम्हें मेरी दशा जो हुई.
पापी नैगम पुत्र देख मुझ को आसक्त भारी हुआ,
प्यारा यौवन लूटने अधम हा, तैयार ज्यों ही हुआ १७

भागी मैं भयभीत नाथ ! झट ही आई यहां सम्प्रति,
आंखों का यह नीर बन्द तब हो, देखूं यदा दुर्गति।
राजा ने निज वल्लभा वचन में विश्वास पूरा किया,
लाने को उसको समीप अपने, आदेश यों दे दिया १८

आया सत्वर पुत्र वह नृपति का आदेश पा आप ही,
कैसा भी दुष्काम हो जगत में छिपता छिपाये नहीं।
रानी का दुष्कृत्य जान मनमें, सोचे बड़ा भूपति,
ये तो है निष्कलंक शुद्ध हृदयी, रानी बड़ा पातकी ॥१९॥

—❋—

—गुणभद्र जैन अगास

जिनेन्द्र

समाज के तत्कालीन हवन की प्रचंड हुताशन तो नर मेध के वास्ते भी तैयार थी। यज्ञ के अनर्थकारी टीकाकारों ने गीता की ओर आँख उठा कर देखने की आवश्यकता तक नहीं समझी। मूक जीवों के कलेवर से संतुष्ट होने की भावना अपनी चरम सीमा पर थी। वैशाली, मल्ल, शाक्य, कौशल मगध और मिथिला जैसे गण राज्यों तथा प्रजा तंत्र शासनों के होते हुए भी समाज का वैषम्य सामने था। मनुष्यको हृदय लगानेमें बाधक अपनेको ही श्रेयस्कर समझने वाले प्राणियों की अनृत भावना उद्दंडता से सिर उठाये हुए थी। सत्यता के ऊपर आवश्यकता से अधिक आवरण था जो उसे प्रकाशित ही नहीं होने देता था। सत्यता और मोक्ष की ओर दौड़ लगाने वाले अपनी धुनमें मस्त थे। केवल तपस्या भलेही मोक्ष साधन न करासके, निराज्ञान भी भले ही उस अनन्त के साथ सम्बन्ध जोड़नेको पर्याप्त न हो, केवल दृश्यमान खोखली भक्ति और चन्दनचर्चन भी अक्षर सत्य के साथ साक्षात् करने कराने में समर्थ न हो, जीवों के प्राणपर पैर रख उनके अस्थि मांस से पुष्ट तथा समृद्धिशाली होने की वासना भले ही अमोक्षकर हो पर अपनी दौड़ कम कर खड़े हो पीछे देखने का इन धावकों को अवकाश नहीं। यदि ऐसे समय में प्रकृति ने स्वयं त्रस्त हो अवतार के लिये आवाज उठाई तो स्वाभाविक ही था। यदि प्रकृति की पुकार पर त्रिशलानन्दन और शुद्धोधन-कुमार के दर्शनों ने कुंडग्राम और कपिलवस्तु की त्रासोन्मुखी प्रजा को पुनीत किया तो क्या आश्चर्य?

आत्मान्वेषण तथा सत्यान्वेषण के दुर्गमपथ के उभय पथिक विघ्नबाधाओं के बीच भी अपने को भूले नहीं यद्यपि मार्ग में अन्तर भले ही रहा। एक ने यदि तत्कालीन मात्रा द्वारा चिकित्सा की तो दूसरेने शाश्वतिक प्रयोगका उपयोग किया। एक यदि "अतिवर्ज्य" पथानुगामी हुए तो दूसरे "क्षुरस्यधारा निशिता दुरत्यया" पर चल कर वहाँ जन समूह को ले जाने में प्रयत्न शील हुए। विश्व को दुःखों से छुड़ाने का दोनों ने निष्कपट प्रयास किया। एक ने यदि अचेल ब्रह्मचर्यव्रत धारण द्वारा विश्व को मानव जीवन की अन्तिम दुर्बलता की तिलांजलि दे दी और उस पर विजयी हुए तो दूसरे ने उसके शरीर पर होते हुए भी उसमें सम्मोह को स्थान नहीं दिया। एकने व्यवहारको भी अप्रधान बनाते हुए मनसा-कृत कर्म में ही हिंसा देखी तो दूसरे ने कार्यफल मात्र में, मंशा के पैमाने को तिरस्कृत करते हुए, हिन्सा देखी।

निविड़ आकुलित तिमिर युग के अवसान के बाद "प्रभात" पत्नी उषा ने जगद्वन्द्य सिद्धार्थसूनु के अवतरित होने पर अपने मुखारविंद पर प्रसन्नता प्राप्त लालिमा प्रदर्शित की तो क्या आश्चर्य? यदि इन विभूतियों के सिद्धान्तों और कृतियों ने विश्व विजय का तो क्या आश्चर्य?

भगवान सिद्धार्थ-कुलभानु न केवल अहिंसा के प्रकाश को ले कर अवतीर्ण हुए थे किन्तु जीव मात्र की समानता को प्रत्यक्षीभूत करने आये थे। विचार वैषम्य द्वारा होने वाले विरोध के शमन को स्याद्वाद जैसी विभूति के साथ भगवान ने दर्शन

दिया था। वर्द्धमान का अहिंसा और विश्वशांति का पाठ अज्ञान और कायरता के छिपाने का विधान मात्र नहीं था। उसका जन्म नाथवंशी युद्धवीर क्षत्रिय कुल-पुँगवके परीक्षित और विक्रान्त हृदयमें हुआ था।

जिनेन्द्र की तपपूत आत्मा ने वास्तव में इन्द्रवायु अग्निभूत जैसे गणधर, श्रेणिक बिम्बसार और अंगेश कुणिक अजातशत्रु, कौशल प्रसेनजित आदि ही नहीं किन्तु जेष्ठा, चेलना, चन्दना इत्यादि जैसी धर्मांगनाओं के हृदयों को भी आलोड़ित किया तथा विश्वशांति और भ्रातृत्व फैलाने को दीक्षित किया।

"न गच्छेऽजैनमन्दिरम्" के शमन करने की शक्ति सौम्य-मूर्ति जिनराज, तुम्हारे ही हाथ में है। अर्थ-वाद की ओर क्षिप्रगति से दौड़ने वाले संसार को रुकाये बगैर विश्वकल्याण हो ही नहीं सकता। पर इसका सेहरा तुम्हारे जैसों के सिर पर ही बांधा जा सकता है। भारतवर्ष का अहो-भाग्य हो या दुर्भाग्य पर इस धर्म के अनुयायियों में व्यापार ही व्यापार की गंध आ रही है। सिद्धान्तों के दिग्विजय की वाञ्छा जिनके हृदय में उद्वेलित रहती है, उनका शौर्य आजकल की जैन समाज के हृदयों में प्राप्त कराना तुम्हारी ही कृपा पर अवलम्बित है।

भगवान! तुम्हारे द्वारा प्रचारित धर्म में भगवान बुद्ध को प्रश्न अवहेलना या अपलाप को स्थान नहीं। हज़रत ईसाकी दया तुम्हारे जैसी तपस्या-निष्णात नहीं वस्तु निरूपण में बात बात में युद्ध होने की आवश्यकता को तुम्हारे सापेक्षवाद ने सदा को दूर कर दिया। प्राणी मात्र से जहाँ भ्रातृत्व हो सकता है वहां राष्ट्रकी स्वातंत्र्यलिप्सा और एक उद्देश्याधिकृत बन्धुत्व का प्रश्न उठाने की आवश्यकता ही नहीं वह तो स्वभाव से ही उसमें गर्भित है। किंतु वहाँ राजनीति की ग्रन्थियां खोलने वाला कर्म योगी गाँधीत्व नहीं।

असिधारी हाथ कृपाणरिक्त होते हुये भी विश्व-नायकत्व सफलता पूर्वक कर सकते हैं इसके तुमसे बढ़ कर और कौन जीवित उदाहरण हो सकते हैं। निरतिशय क्रांति के युवराज का हृदय इतनी अगाध शांति से शासित हो यह भारतवर्ष के ही भाग्य और जल-वायु की विचित्रता है।

क्षत्रिय के नृशंस, दयाविहीन और कर्कश हृदय से विश्व शांति की कल्लोल, प्राणी दया का अविरल श्रोत, राज्यलिप्सा से ओत प्रोत, वक्षस्थल से मानव समता की आवाज अपञ्चेन्द्रिय जीवों के भी उद्धार का संदेश, कैसा विचित्र विरोध है।

तुम्हारे सुन्दर शरीर—संपत्तियुत नवहृदय में रूक्ष तथा भयंकर तपनिगृहीत किंतु स्वभाव सरल आत्म संयम है। देवांगनाओं के मधुरहास्य तथा प्रलोभनों में भी मदन पर रुष्ट हो उसे दहन करनेको शिवशक्ति की आवश्यकता नहीं। विलास भोग तथा बार बार के मदन विजय ही नहीं विश्वविजय करने वाले अतिवीरको क्यों न बोधिसत्व आदर की दृष्टिसे देखते? कुलीन रा के निर्वाणपथगामी समवयस्क तथा गण ऋषि ने यदि तुम्हें सर्वज्ञ और सर्वदर्शी कहकर विभूषित किया तो इससे अधिक बुद्ध भगवान जैसे यति और क्या कह सकते थे।

हृदयों को द्रवित करने तथा बरबस आंसू बहा देने वाले उपसर्गों के बीच में भी शांति और क्षमा के अविचल अवतार यदि तुम्हारी तपस्या पूर्ववत् बनी रही तो क्या आश्चर्य? यदि विश्व के सब से बड़े

शांति के अवतार कह कर तुम्हारा आवाहन किया जाय तो क्या अत्युक्ति ?

तुम्हारे अखंड ब्रह्मचर्य ने देवांगनाओं को लज्जित किया तो तुम्हारे चरित्र की पवित्रताकी और कौनसी साक्षी की आवश्यकता ? समकालीन दो महर्षियों में केवल दुर्द्धर्ष तथा निष्कलंक तपस्याही तुमको समव-शरण में आकाश — आसन दिलाने को अलं थी। तुम्हारे पंच कल्याणकों में यदि दैवी हर्ष न हो तो और किन आत्माओं के आगमन में आनन्ददुन्दुभि निनादित की जावेगी।

तुम्हारे अहिंसा और त्यागव्रत ने यदि शेर बकरी को एक घाट पानी पिला दिया और समवशरण में खिरने वाली वाणीका लाभ देकर उन्हें मोक्षोन्मुख बनाया तो इसमें क्या आश्चर्य ? बालसुलभ लीलामें ही मदमत्तकरिको निर्मद कर दिया और तत्वज्ञान के सिंहनाद द्वारा यदि अभयता का संदेश प्राणिमात्रको तुमने भेजा तब मृगराज के चिन्ह द्वारा तुम्हारे संकेतित होने में क्या अनौचित्य ? तुम्हारे सिंह गर्जन में मांस भोजी जीवकी भक्षण प्राप्त आनन्द लिप्सा का दम्भ नहीं वहां प्राणियों को भयभीत करने का घोर निनाद नहीं। तुमने वास्तव में सिंहके नादमें पवित्रता ला दी जिसके बिना सिंहके रूप में मोहकता नहीं उसके सन्मुख हंसते २ अपनेको मिटा देनेकी इच्छा नहीं होसकती।

आप भले ही धर्मके आदि संस्थापक न हों पर जिस आत्मस्फूर्ति के तुम पिता हो वह अमर स्फूर्ति तुम्हें आदि तीर्थङ्कर भगवान ऋषभदेव के पास तक पहुँचा देती है।

तुम्हारी तपस्या द्वारा दिलाये गये अधिकार छिनाए जाने लगे। तुम्हारे द्वारा खोलेगये मोक्ष द्वार अब पुनः मुद्रित होने लगे। मनुष्यों के हृदयमें फिर वही संकुचितचित्तता वास करने लगी। प्रकाश और विकाश का धर्म फिर रत्न रञ्जित मन्दिरों के बाहर आने में शंकित होने लगा। नारी जातिके प्रति तुम्हारी पवित्र और सन्मान भावनाका दुरुपयोग, कामलिप्सा तृप्ति के रूप में पुरुष और स्त्री समाज को न जाने किस बीहड़ पथकी ओर लेजारही है। मनुष्य को मनुष्य मानने की रसायन तुम्हीं तक परि-मित थी। आत्मवादकी फिर अनावश्यकता प्रतीत होने लगी और द्रव्यवादका सिंहासन पुनः दृढ़ होने लगा जबकि अमूल्यवान सतृष्ण नेत्रों से केवल जीवन धारणार्थ भोजनों के लिये हाथ फैलाये सामने खड़े हुए हैं। अहिंसा का असली रूप फिर अनुकरणीय कहा जाने लगा। बुद्धभगवान की मृतमांस भक्षण मीमांसा में फिर मोहकता आने लगी।

महानिर्वाण के समय में पावापुरी से छोड़ी हुई तुम्हारी प्रतिनिधि ज्योति यदि इस युगको आलोकित न कर सकी, तुम्हारे उपसर्गों पर आँसू बहादेने वाले यदि साधारण परिषहों से भागने लगे तो तुम्हें आमं-त्रित करनेका और कौनसा सुअवसर प्राप्त होसकता है। अतएव हे वीतराग ! हे विश्व शांति अहिंसा, भ्रातृत्व सत्यशोध में अग्रणी ! तथा सामाजिक क्रांति के जनक–मुक्तदेवदूत ! हे गरीबों और पतितों की सम्पत्ति। हे त्रिशला आसन्नाता ! इस पुण्य भूमिको अपने पुनीत पदरज चूमने का फिर अवसर दो।

प्यारा उत्तमचन्द्र

जिसके माता पिता कई वर्ष पहले स्वर्गयात्रा कर चुके थे किन्तु मुलतान डेरागाजीखान का प्रत्येक बड़ा दि० जैन नर नारी उसको अपना प्रिय पुत्र मानता था, उसके यद्यपि कोई सगा दूसरा भाई न था किन्तु उक्त दोनों नगरों के प्रत्येक नवयुवक उस को अपना प्रियभ्राता मानते थे। यद्यपि उसका निजी घर बंद था किन्तु मुलतान डेरागाजीखान के दि० जैनों का प्रत्येक घर उसके सप्रेम आह्वान के लिये सतत खुला हुआ था वह मुलतान डेरागाजीखान की दि० जैन समाज का अमूल्य रत्न था, आकर्षक दीपक था नाम भी उसका 'उत्तमचन्द्र' था।

आज से लगभग २३ वर्ष पहले उसने स्व० श्रीमान ला० बोसाराम जी संघी (दि० जैन ओसवाल) के घर डेरागाजीखान में जन्म लेकर अंधेरे घर में उज्वल प्रकाश किया वह अपनी माता का सुख केवल पांच वर्ष ही प्राप्त कर सका तदनन्तर उस का पालन पोषण ला० बोसाराम जी ने संभाला। बोसाराम जी यद्यपि उच्च शिक्षित नहीं थे किन्तु अशिक्षित भी नहीं थे उन्होंने "वर्द्धमान समिति जयपुर" में कुछ शिक्षा ग्रहण की थी अतएव वे शिक्षा का मूल्य खूब समझते थे। इसी लिये उन्होंने कठिनाइयों का सामना करते हुए भी पढ़ाने से उसे वंचित नहीं रक्खा। उत्तमचन्द्र बचपन में अच्छे क्षयोपशम के कारण पढ़ने लिखने में होशियार था किन्तु साथ ही नटखट भी पहली श्रेणी का था खेल कूद में खाना पीना भूल जाता था किसी भी खेल में अपने साथियों से हारता न था। एक बार घर से निकल कर डेरागाजीखान से १५-१६ मील दूर सीमाप्रान्त में घूम घाम कर घर आया था। बचपन की समस्त चंचलताएं उसकी नस नस में भरी हुई थीं किन्तु दुराचार पास भी न फटकने पाया था।

बारह वर्ष की अवस्था में बोसाराम जी भी चल बसे उस समय वह 'अनाथ' हो गया यद्यपि लाला भोलाराम जी, ला० गेलाराम जी संघी उसके सगे चाचा तथा ला० जिनदास जी, ला० बिहारीलाल जी एक पग आगे के चाचा थे किन्तु उसका नटखटी स्वाभाव उसको 'नाथ' बनने से रोक रहा था अंत में वह मेरे सुपुर्द किया गया मुझे कारणवश उसी समय स्वदेश (आगरा) जाना था उसको साथ लेता गया और उत्तमचन्द्र को दि० जैन महाविद्यालय ब्यावर में भर्ती करआया। मार्गमें उसने मुझे अपनी नटखटी आदत से ३-४ बार बहुत तंग किया।

ब्यावर पहुंच कर विद्यालय के सभ्य शान्त रहन सहनने उसकी काया पलट कर डाली वह दिनों दिन सभ्यता की मूर्ति, शान्ति का आदर्श, सदाचार का निवास बनता चला गया। उसने विद्यालय में प्रवेशिका प्रथम खंड से पढ़ना प्रारम्भ किया प्रत्येक कक्षा में प्रत्येक विषय में अपने सहपाठियों से प्रायः उत्तम ही रहा परीक्षा में अनेक बार पारितोषक प्राप्त किया। संस्कृत भाषा के पठनक्रम में समस्त विषय पढ़ते हुए इंगलिश भाषा का अध्ययन भी करता रहा इस तरह ब्यावर में उसने १० वर्ष अध्ययन किया। इस वर्ष कलकत्ता यूनिवर्सिटी की न्यायतीर्थ परीक्षा और बंबई परीक्षालयमें राजवार्तिक प्रमेयकमलमार्तण्ड की परीक्षा दी थी।

विद्यालय में विद्यार्थियों की पार्टीबन्दी से सदा

दूर रहता था प्रत्येक अध्यापक का विनीतशिष्यभाव उसमें बना रहता था कोई भी बुरी आदत उसमें न थी विद्यालय के समस्त विद्यार्थियों मे उसका आचरण उत्तम था। अखंड ब्रह्मचर्य के कारण उसका शरीर सुडौल, संगठित, बलवान, फुर्तीला था नेत्रों में तेज ज्योति थी और शरीर में चमक, वार्तालाप में मधुरता, व्यवहार में विनय अच्छी तरह विद्यमान थी।

वह अभी इंग्लिश, संस्कृत भाषाका और अधिक अध्ययन करना चाहता था तथा ब्रह्मचारी जीवन से अकलंकदेव का अनुगमन करनेकी उसको अभिलाषा थी परन्तु पारिवारिक स्त्री, पुरुषों की आज्ञा मान कर उसने अपना विचार बदल दिया था कुछ दिनों बाद एक अच्छे घराने में उसका विवाह होने वाला था। ४०) रुपये मासिक की अध्यापकी पर बाहर जाने वाला था जब कि स्थानीय भाई उसे व्यापार में डालना चाहते थे।

परीक्षा देकर वह अभी ब्यावरसे मुलतान आयाथा यहां मौसमी ज्वरने उसे घर दबाया जिससे १८ दिन तक साधारण दशा रही किन्तु फिर खून के दस्त आने लगे जिसके लिये अच्छे २ वैद्य, डाक्टरों, सिविल सर्जन की यथासंभव अच्छी तरह चिकित्सा कराई एक दिन रात सिविल अस्पताल भी रक्खा। प्रति समय उसकी परिचर्या में ३०-४० आदमी बिना बुलाए खड़े रहते थे क्योंकि वह सब का प्यारा चमकीला चेतन रत्न था उसका मुख स्वयं सबको आकर्षित करता था। वह स्वयं भी धीर वीर गंभीर था। असह्य वेदना में कभी उसने दुखभरी आह न भरी मस्तानी चालसे हंस मुख बना रहा अपने परीक्षा फल देखने का तथा पूजन करने का इच्छुक रहा। मुख से 'अर्हन्त महावीर सीमन्धर, णमोकार मन्त्र, का उच्चारण करता रहा व्याधि से कायर न हुआ। मरने से एक दिन पहले मुझ से उसने कहा कि "मुझे रोना नहीं आता रोना मूर्ख और कायरों का काम है"। इस तरह वीरता से मौत के साथ लड़ता रहा अंत समय तक उसके शरीरमें ऐसा बल रहा कि उठने का प्रयत्न करते समय उसको बलवान दो आदमी झेल सकते थे। इस व्याधि का यदि कोई अन्य साधारण मनुष्य शिकार हुआ होता तो तीनदिन पहले ही खेल समाप्त कर चुका होता। अंत में असाध्य व्याधि ने २ जुलाई की रात्रि के साढ़े नौ बजे उसे सदा के लिये सुला दिया। इस अनंत निद्रा में उसकी मुखाकृति आराम से लेटे हुए जाग्रत दशा की सी थी। स्वर्गारोहण की पहली रात्रि को वह अपना सर्वस्व (चल, अचल संपत्ति) धर्मार्थ दान कर गया

मुझे वह अपना प्यारा पिता समझता था उसकी असाधारण कृतज्ञता को मेरा हृदय कदापि न भूलेगा। उसकी मृत्यु ने मुलतान, डेरागाजीखान का प्रत्येक घर रुदनघर बना दिया है क्योंकि उत्तमचन्द्र प्रत्येक घर का प्रिय वैभव था उस पर मुलतान डेरागाजीखान के दि० जैन ओसवालों को अभिमान था वे समझते थे कि स्व० पं० भोगचन्द्र जी के बाद अब यह एक दि० ओसवाल जाति में आदर्श विद्वान हुआ है, मुलतान डेरागाजीखान को उससे बहुत आशाएं थीं और जैन समाज के लिये उत्तमचन्द्र ने बहुत कुछ कार्यक्रम सोच रक्खा था। डेरागाजीखान के उगे हुए जिस अंकुर को ब्यावर विद्यालय ने जलसिंचन

(शेषांश अगले पृष्ठ पर देखें)

कुरुम्ब और जैनधर्म !

(ले० —श्री० बाबू कामताप्रसाद जी जैन एम० आर० ए० एस०)

आधुनिक विद्वानों ने भारत के मूल निवासियों को द्राविड़ और गौड नामक दो विभागों में विभक्त किया है। भार, मल्ल, शिविर, पुलिन्द, कुरुम्ब आदि प्रभेद इन दोनों विभागों के अंतर्गत ही समझे गये हैं। कुरुम्ब लोग गौड़ विभागमेंसे हैं और वह द्राविड़ों से भी प्राचीन प्रतीत होते हैं १। जैन शास्त्रों में इन शिविर, पुलिन्द आदि को म्लेच्छ बतलाया गया है २ इस अपेक्षा आधुनिक विद्वानों की उक्त मान्यता से भारत के मूल निवासी म्लेच्छ प्रगट होते हैं और यह बात जैन इतिहास किंवा वैदिक साहित्य से प्रतिकूल पड़ती है। किन्तु बात वास्तवमें यूँ नहीं है। आधुनिक विद्वानों के कथन भी यथार्थता के विपरीत नहीं है। उन्होंने भारतीय सभ्यता का प्राचीनतम समय चार पांच हजार वर्ष प्राचीन माना है और उससे पहले वह मुख्यतः इन द्राविड़ आदि लोगों को यहां के मूल निवासी समझते हैं। यद्यपि अब इस मान्यता का प्रत्यक्ष खंडन हारप्पा और मोहनजोदारो नामक स्थानों से प्राप्त हुये पुरातत्व से हो चुका है; जो ईसवी सन् से भी चार पांच हजार वर्ष पहले का अनुमान किया गया है। इधर जैन शास्त्रों में श्री मुनिसुव्रतनाथ जी के तीर्थ में श्री रामचंद्र जी के समय में अर्द्धबर्बर नामक देश के राजा के आधीन म्लेच्छों का भारत पर आक्रमण करने का उल्लेख मिलता है। रामचंद्र जी ने उनको परास्त कर दिया था; तब वह अपने प्राण लेकर विंध्याचल आदि पर्वतों में रहने लग गये थे ३। हमारे विचार से इन्हीं लोगों की सन्तान को आधुनिक विद्वान भारत के मूल निवासी समझ रहे हैं। खैर जो हो, इससे यह तो स्पष्ट ही है कि भारत में एक बहुत प्राचीन काल से असभ्य लोगोंका आवास पहाड़ों के मध्य हो गया था। कुरुम्ब लोग भी इन्हीं में से एक थे। यह आज भी एक बड़ी संख्यामें दक्षिण भारत की ओर अपने पुरातन रूप में मिलते हैं। मद्रास के चिंगल पुट जिले में इनके अतीव प्राचीन पाषाण के स्मारक भी उपलब्ध होते हैं। ४

१ आराजनल इन्हैबीटेन्ट्स आफ भारतवर्ष पृ० २२०

२ त्रिलोक प्रज्ञप्ति

३ पद्मपुराण

४ मद्रास व मैसूर के प्राचीन जैन स्मारक पृ० ५९

कर वृक्ष रूपमें तैयार किया उसके मधुर फल दोनों में से कोई भी न चख पाया। उसका चन्द्रमाकार ऊंचा ललाट इस बातकी साक्षी देता था कि वह कोई उन्नत व्यक्ति बनने वाला है, पता नहीं यह नर रत्न जैन समाज की क्या कुछ आदर्श सेवा करता।

रुग्ण दशा में वह अपने मित्र 'महादेव' का भी नाम लेता था, ड्रायवर की नशियाँ याद करता था और अपने अनेक सहपाठी मित्रों को पत्रोत्तर देने के लिये कार्ड, लिफाफों पर उनका पता लिख चुका था जो कि अब तक वैसे ही पड़े हुए हैं।

उसके कुटुम्बी उसका अमरस्मारक कायम करने का विचार कर रहे हैं। उत्तमचन्द्र का आत्मा अपने आदर्श संस्कारों से उन्नतपद प्राप्त करे ऐसी हार्दिक भावना है।

वियोगार्त—अजितकुमार जैन

इन कुरुम्ब लोगों की एक बृहत् जाति थी और उसमें अनेक शाखायें--बेडः कुम्बैल, जैनू इत्यादि उनके खास स्थानों अथवा आजीविका वृत्ति के कारण हुई मिलती थीं। मूल में यह लोग पहाड़ों और जंगलों में बसते थे। पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिये यह लोग शिकार भी खेलते थे। इन का मुख्य धन भेड़ें ही थीं। उनमें अधिकाँश उनके झुण्ड के झुण्ड पालते थे। इस लिये इनको एक प्रकार के 'गडरिया' कहना अनुचित न होगा। प्रारंभ में उन्हें किसी देवी देवता और धम का श्रद्धान नहीं था। किन्तु बुचानन सा० उनके देव का नाम 'कुरि-बेट्ट--राय' अर्थात् 'गडरियों के पर्वत को देव' बतलाते हैं १। इस वर्णन से उनका अर्द्धसभ्य होना स्पष्ट है जिस प्रकार आज भी पर्वतों और बनों में रहने वाले असभ्य लोगों के दर्शन यदा कदा हो जाते हैं, वैसे ही इन कुरुम्ब लोगों को समझना चाहिये। भारतीय सेसन्स रिपोर्ट में अब भी इन लोगों की बहु संख्या देखी जा सकती है।

धीरे २ यह कुरुम्ब लोग चारों ओर फैलने लगे और सभ्य जातियों के संसर्ग में रहकर वे विशेष प्रभावित हुये थे। कर्नाटक प्रदेश में उनने अपनी अच्छी सत्ता भी जमा ली थी। यहाँ तक कि थोड़े ही समय में वह लोग अन्य जातियों को दबा कर स्वयं राज्याधिकारी हो गये और अपने राज्य को तोंडमण्डलम् तक बढ़ाने में सफल हुये थे। किन्तु इस बढ़वारी के साथ ही इन में पारस्परिक ईर्षा और मात्सर्य की भी वृद्धि हुई थी। इस प्रकार नये अधिकार को पाकर वे आपस में लड़ने झगड़ने लगे थे। कुरुम्बों की इस भयानक दशा का अन्त शीघ्रही होगया था। उनमें के एक कमन्द नामक व्यक्ति ने आपसमें मैत्री करा दी थी। कुरुम्बोंने इसे अपना नेता चुन लिया और यह द्राविड़ देशका अधिपति एवं पुलल का राजा कहलाने लगा था २। इसका नाम "कमन्द कुरुम्ब प्रभू" हुआ और इसका राज्य कुरुम्ब भूमि के नामसे विख्यात हुआ।

इस समय इन लोगों में धर्म प्रचार के लिये एक जैनाचार्य का शुभागमन हुआ था। उनने इन कुरुम्ब लोगों को धर्मका वास्तविक स्वरूप समझाया था। उनमें से अधिकांश लोग जैनधर्मानुयायी होगये थे। कमन्द प्रभू ने इन जैनाचार्य को अपना गुरू माना था इनकी मान्यता में उनने पुलल में एक सुन्दर जैन मन्दिर निर्मापित कराया था। सचमुच जैनधर्म की शरण में आकर उनकी समृद्धि विशेष हुई थी। वे पर्वतों में रहे हुये अपने पुरातन भाइयों से कहीं अधिक सभ्य होगये थे। उनमेंसे अनेकों अपने शौर्य के बल राजा होगये और कितनों ही ने वणिक वृत्ति को स्वीकार किया। यद्यपि अधिकांश कुरुम्ब अबभी भेड़ोंको पालनेका व्यवसाय करते रहे थे। सामुद्रिक व्यापार में भी उनने विशेष भाग लिया था। कावेरी पट्टन के चेट्टी व्यापारियों के साथ यह लोग खूब व्यापार करते थे। इनके मुख्य बन्दरगाह पट्टीपुलम, सालकुप्यम्, मरक्कानम् आदि थे। ३

कमन्द कुरुम्ब प्रभू द्वारा बनाया गया जैनमन्दिर आजभी जीर्ण शीर्ण दशा में मद्रास से उत्तर पश्चिम की ओर आठ मील तुलल गांव में अवस्थित है। डा० आपर्ट साहिब के समय में उसमें पूजा भी होती थी

१ आरीजनल इनहैबीटेन्टस आफ भारतवर्ष पृ० २३५-३६
२ पूर्व प्रमाण पृ० २४३-४४
३ आरीजनल इनहैबीटेन्टस आव भारतवर्ष पृ० २४५

किन्तु कमन्द प्रभू का किला नष्टभ्रष्ट होचुका था। यह किला बड़ा सुदृढ़ बनाया गया था और उसका परकोट धातुमयी था। उसकी विशालता और दृढ़ता वर्णनातीत समझी जाती थी १। उपरोक्त जैन मंदिर के अतिरिक्त कुरुम्ब लोगों ने और भी कई जैन मंदिर विविध स्थानों में अच्छे सुन्दर बनाये थे। उत्तर अर्काट जिले का पोडवेडु स्थान भी कुरुम्बों का मुख्य नगर था। यहां कुरुम्बोंने सैकड़ों वर्ष राज्य किया था उनके समय में यह नगर १६ मीलमें विस्तृत और जैन मन्दिरों से भरपूर था२ इसी तरह महावलीपुर (ता० बिंगुलपुट) के मनोरम और शांत राजबलि पर्वत पर जैन कारीगरी की मूर्तियों की गुफायें हैं, यहां भी कुरुम्बों का ही राज्य था३। सारांश यह कि कुरुम्ब लोग जैनधर्म के अटल श्रद्धानी थे और उनने उसकी प्रभावना के लिये अनेक कार्य किये थे। उनके विवाह सम्बन्धी नियम जैनों के अनुसार थे।

पाठकगण! इस वर्णनको पढ़कर शायद जैनाचार्य के उपरोक्त कृत्यको अचरज भरे नेत्रों से देखें। किन्तु विस्मय करने को यहाँ कोई स्थान नहीं है। जैनधर्म पतितपावन है। उसकी शरण में हर कोई आ सकता है। इसी अनुरूप जैनाचार्य ने असभ्य कुरुम्बों को जैन बना कर पूर्ण सभ्य बना दिया था। वे अपने गुणों से राजा और बडे २ श्रेष्ठी हुये थे। सम्पूर्ण धार्मिक अधिकार उनको प्राप्त हुये थे। सचमुच जैनधर्म मनुष्य को रंकसे राव बनाने वाला मत है उसके इस अनोखे स्वरूप में आश्चर्य करना वृथा है।

कमन्द कुरुम्ब प्रभू ने कुरुम्ब राज्य को खूब विस्तृत किया था और प्रजा को निष्कण्टक अपने आधीन बनाये रखने के लिये उसने उसे चौबीस जिलों में विभक्त कर दिया था। प्रत्येक जिला एक कुरुम्ब सरदार के आधीन था और वहाँ प्रत्येक में एक एक सुदृढ किला बना हुआ था। इनमें से मुख्य यह थे: पुललकोट्टै, आमूरकोट्टै, कलसूरकोट्टै, पुलियूरकोट्टै, वेङ्गुणाकोट्टै इत्यादि। कमन्द के आधीन कितनी ही कौमें हुई थीं और उसके राज्यमें हर कोई शान्तिपूर्वक आनन्द से जीवन व्यतीत करता था। किन्तु उसके पड़ोसी विशेष सभ्य राजा लोग उनसे हमेशा कुढ़ा करते थे और इसी लिये कुरुम्बों पर उनके आक्रमण विशेष हुआ करते थे। परन्तु इन में विजयलक्ष्मी प्रायः कुरुम्बों के ही पक्ष में रहती थी। चोल और पाण्ड्य राजाओं ने अनेक बार उनपर आक्रमण किये, परन्तु वे अपने मनोरथ में असफल रहे। कई बार कुरुम्बों ने इन राजाओं को अपना बन्दी तक बनाया था। किन्तु इस प्रकार की लगातार विजय ने ही कुरुम्बों के पतन का दिन ला उपस्थित कर दिया। कुरुम्ब लोग अभिमान और अत्याचार के वशीभूत हो चले और उसके साथ ही उनका विक्रम सूर्यभी नीचे ढलने लगा। कहते हैं कि उनने विजातीय और विधर्मी प्रजा के साथ अब बुरा व्यवहार करना प्रारंभ कर दिया था। जैनधर्म का प्रचार करने के लिये बेतरह तुल पड़े थे४। इस दमन का दुष्परिणाम हुआ। जैनधर्म का प्रचार हृदय के प्रति होना चाहिये था। लोगों के हृदयों को लुभा लेना था। किन्तु कुरुम्बों ने अपने राजसी ठाठ में इस बात की परवा

१ पूर्व प्रमाण पृ० २४५-४६
२ मद्रास और मैसूर प्राचीन जैन स्मारक पृ० ७७
३ पूर्व० पृ० ६५
४ आरीजनल इनहैबीटेन्ट्स आफ भारतवर्ष पृ० २४५-४६

न की—धर्म प्रभावना के लिये वे अंधे हो गये। परिणामतः उनका पतन हुआ डा० ऑपर्ट सा० यही लिखते हैं—

"At an early age a considerable fraction of the Kurumbas adopted the Jaina faith and became eventually bigoted adherents of this sect. It seems in fact that their fanatical efforts to spread and to ensure the general adoption of this religion (i. e. Jainism) have been among the chief causes of the collapse their power in the central districts of the Madras Presidency, i. e in the cuontry round Kanchipuram The compaign of Adonda Chola was especially undertaken to crush the threatening supermacy of Jainism, and the religious element played in it as important a part as political. The ascendency of Saivism was the most important result of the war, but Jainism is by no means extinct among the Kurumbas.' (The Original Inhabitants of Bhratvarsha. p 236.)

जैनधर्म को येनकेन प्रकारेण अपने राजबल से सर्व व्यापी बनाने के कारण ही कुरुम्बों का ह्रास हुआ। अडोण्ड चोल ने उनके विरोध में घोर आक्रमण किया पहले तो उसकी हार हुई और वह तंजोर को पीछे भाग गया; किन्तु दूसरी बार के आक्रमण में वह सफल हुआ। अब की कुरुम्ब राजा हार गये। अडोन्ड चोल ने उनको स्वर्गधाम भेज दिया। जहां कुरुम्ब राजा अपने बंदी राजाओं को केवल कारावास में रखते थे; वहां इस चोल राजा ने उनको प्राणान्त कर देना ही श्रेष्ठ समझा। कुरुम्ब राजा प्राणान्त क्या हुये, सच पूछिये तो उनके राज्य से जैनधर्म का अन्त हो गया। अडोन्ड चोल ने कांची पुर के चहुं ओर के प्रदेश पर अपना शासन जमा लिया। अवशेष २३ ज़िलों के कुरुम्ब सरदारों को तलवार घाट उतारा और उसके स्थान पर बल्लाल सरदारों को नियुक्त किया। पुलल के किले में जो पीतल के किवाड़ थे, वह वहाँ से ले जाकर तंजोर के शैव मंदिर में लगाये गये। शैव धर्म को प्रमुख स्थान प्राप्त हो गया। कुरुम्बों में से जैन धर्म यद्यपि सर्वथा लुप्त नहीं हुआ; परन्तु उसका अस्तित्व उनमें नहीं के बराबर ही रहा। कुरुम्ब भूमि अब टोन्डमण्डलम् कहलाने लगी इस प्रकार कई सौ वर्ष तक जैनधर्म की आराधना करते हुए कुरुम्बों ने दक्षिण भारतमें राज्य किया। अपनी इस बड़ी हारके बादभी उन्होंने किन्हीं स्थानों पर स्वाधीनता प्राप्त कर ली थी और विजय नगर के कृष्णराज के समय में "मरुतमकोट्टै" नामक क़िले पर उनका अधिकार हो गया था। *

अन्त में क्या हम आशा करें कि हमारे साधु महाराज और विद्वान पंडित जैनधर्म प्रचार के लिये समुचित उत्साह इस ऐतिहासिक उदाहरणसे ग्रहण करेंगे? एवमस्तु!

* ओरीजनल इनहैबीटेन्टस आफ भारतवर्ष पृ० २४७ ४८
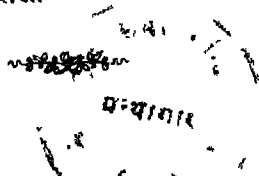
स्त्री–शिक्षा

(ले०—पं० अजितकुमार जैन)

स्त्री जाति संसारकी जननी है। बड़ेसे बड़े पुरुष का जन्म महिलाओंके उदरसे ही हुआ है। दिग्विजेता चक्रवर्ती तथा तरनतारन, जगद्वन्द्य तीर्थङ्कर भी अपनी माताओं से उत्पन्न हो कर विश्वचक्र को उलट देते हैं अतः महिलासमाज का महत्व अनुपम है, अमिट है, और माननीय है। जिन्हों ने स्त्री जातिको केवल निन्दा का पात्र या पैरोंकी जूती समझ रक्खा है वे लोग अपने गौरव से भी अपरिचित हैं उनको याद नहीं कि यदि वे अपनी माता का दुग्धपान न करते, उनकी माता यदि उन्हें जन्म न देती तो वे इस मानव जीवन का सुख किस प्रकार प्राप्त करते।

किन्तु यह बात भी नितान्त असत्य नहीं कही जा सकती कि सामाजिक अधःपतनका कारण बहुधा महिला समाज ही है। परिवारों में कलह, अनेक तरह के मिथ्यात्व का सेवन, अयोग्य सन्तान का जन्म लेना आदि अवनति के साधन स्त्रियां ही एकत्र करती हैं। आर्थिक संकट (दरिद्रता) प्रायः स्त्रियां के अपव्यय के कारण ही उपस्थित होता है। भविष्य में माता बनने वाली लड़कियां मूर्ख, अवगुणी बन कर जो अच्छे परिवारों की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला देती हैं वह भी माता का ही कृपाभाव है।

लेकिन महिला जाति की इस दुर्दशा का उत्तर-दायित्व भी अधिकतर पुरुष जाति पर है। पुरुषों ने अभी तक अधःपतन के मूल कारण पर गहरा विचार नहीं किया है इसी कारण छोटे से काम के लिये भारी शक्ति खर्च हो रही है किन्तु फल उतना नहीं मिल रहा। पुरुष यदि इस बात को अपने हृदय पर अंकित करलें कि समाज का उत्थान तब तक कदापि न होगा जब तक कि स्त्रियां सुयोग्य नहीं बन जांयगी गृहस्थाश्रमका रथ स्त्री, पुरुष नामधारी दो पहियों के सहारे चलता है जब तक वे दोनों पहिये समान शक्ति शाली नहीं होंगे तब तक गृहस्थाश्रम का रथ ठीक तरह नहीं चलेगा।

स्त्री जाति को सुयोग्य बनाने के लिये शिक्षित बनाने की आवश्यकता है। हम जिस प्रकार अपने लड़कों को पढ़ा लिखा कर सभ्य, शिक्षित बनाते हैं वही कर्तव्य हमको अपनी लड़कियोंके साथ निबाहना चाहिये लड़कियों को दूसरे घर का कूड़ा समझ कर उन्हें आवश्यक शिक्षा देने से भी वंचित रखना मूर्खता है। एक तो इस तरह समाज का भविष्य बिगड़ता है क्योंकि मूर्ख माता अयोग्य सन्तान को उत्पन्न करेगी दूसरे मूर्ख लड़कियोंका उनके ससुराल में समुचित आदर नहीं होता। इस कारण लड़कों की तरह लड़कियों को शिक्षित बनाने का भी ध्यान रखना चाहिये।

यह जान कर हर्ष होता है कि मनुष्य अपनी इस भूल को समझकर स्त्री शिक्षा की ओर प्रयत्न शील हो रहे हैं तदनुसार दिनों दिन स्थान स्थान पर लड़कियों के लिये शिक्षा संस्थाएं स्थापित होती जा रही हैं आर्यसमाज इस काममें अग्रसर है। हमारा जैन समाज भी इस काम में कुछ हाथ पैर चलाने लगा है। स्व० श्रीमान सेठ माणिकचन्द्र जी ने बंबई

में 'श्राविकाश्रम' कायम करके मार्ग दिखला दिया तदनुसार आज अनेक स्त्री शिक्षालय स्थापित होकर थोड़ा बहुत कार्य कर रहे हैं । यद्यपि उनमें अनेक सुधारणीय त्रुटियां हैं किन्तु यह जान कर हृदय में अपार हर्ष होता है कि जिन स्त्रियों के लिये काला अक्षर भैंस बराबर था वे स्त्रियां इन शिक्षा मंदिरों की बदौलत सिद्धान्त साहित्य आदि विषयों की ऊंची परीक्षाएं देकर समाज का भविष्य उज्वल कर रही हैं ।

पराधीन भारतवर्ष इस समय अपनी आदर्श सभ्यता भूलता जारहा है उसको उन्नति की ज्योति आज विदेशी सभ्यता के भीतर ही दीख पड़ती है इसी कारण आंख मींच कर शिरसे पैर तक विदेशी सभ्यता को अपनाता जारहा है । इस अनुकरण का प्रभाव स्त्रीशिक्षा पर भी पड़ा है यही कारण है कि आज लड़कियां भी विदेशी शिक्षा सभ्यता में पैर पसारती जारही हैं । इस अनुकरणका क्या कटुक या मधुर फल होगा? स्त्री शिक्षा के हामी महानुभावों ने संभवतः उस पर गहरा विचार नहीं किया है ।

भारतीय गृहस्थ जीवन और विदेशी गृहस्थ जीवन में महान अन्तर है । भारतवर्ष में सदाचारको उच्च आदर्श माना गया है । किन्तु विदेशोंमें सदाचार का उतना मूल्य नहीं । व्यभिचार निर्लज्जता वहां निन्दनीय नहीं मानी जाती इसी कारण वहांकी स्त्रियां वर्ष भरमें अनेक विवाह तलाक करते हुये भी आदर्श से गिरी हुई नहीं मानी जातीं । अन्य पुरुषोंकी छाती से छाती मिलाकर सभाओंमें नाचना वहां सभ्यताका अंग माना जाता है । ऐसे ही वायु मण्डल के कारण उनको पुरुषों के समान दफ्तरों में नौकरी करना आदि उपायों द्वारा धन संचित करना आवश्यक हो जाता है । इधर भारतमें स्त्री जातिको घरकी स्वामिनी माना जाता है । संतान का पालन पोषण, घरके भोजन पान, रहन सहन का प्रबन्ध उसका मुख्य कार्य है सदाचार उसका आदर्श है । धन संचय करना गृहस्वामी पुरुष का कार्य है । घर में रहकर हस्तकौशल (सीना, बुनना, कातना, आदि) द्वारा धन उपार्जन करना स्त्री के लिये बतलाया गया है ।

तदनुसार भारतीय सभ्यता, संस्कृति और शिक्षा में स्त्रियों के लिये विदेशी शिक्षा सभ्यता, संस्कृति से महान अन्तर होना अनिवार्य है जो मनुष्य भारतीय होकर यूरोपीय सभ्यता का गुलाम बनता है। उसकी जो दशा होती है उससे भी अधिक बुरी दशा उन स्त्रियों की होसकती है तथा होती है जो भारतीय परिवार की महिला बनकर अंग्रेजी सभ्यता से अपने आपको रंग चुकी हैं । क्योंकि वे न इधर की रहती हैं और न उधर की ।

देश, समाज को उन्नत बनाने के लिये यह आवश्यक है कि लड़कियों को केवल हिन्दी, संस्कृत भाषाका अध्ययन कराया जावे, भूगोल, इतिहास गणित, आदि विषय इन्हें हिन्दी भाषा में ही पढ़ाये जावें । भोजन बनाना, सीना, पिरोना, रंगना, सन्तान पालन आदि बातों की क्रियात्मक (अमली रूप में) शिक्षा दीजावे, धर्मशास्त्र उन्हें पढ़ाया जावे, यदि उचित प्रबन्ध हो तो स्त्री अध्यापिकों द्वारा उन्हें भाषा विज्ञान के रूप में इंगलिश भाषा का भी शिक्षण दिया जावे अन्यथा कोई खास आवश्यकता नहीं ।

जो लड़कियाँ इस ढंग से शिक्षा प्राप्त करेंगी वे भविष्य में आदर्शपत्नी तथा आदर्शमाता के रूपमें

समाज में अभ्युदय का मार्ग सुलभ बनायेंगी । ऐसी शिक्षित माताओं की संतान आदर्श सन्तान होंगी। इसके विपरीत जिन लड़कियोंकी शिक्षा कोरी कालेजी शिक्षा के रूपमें होती है वह सामाजिक अभ्युदय के बजाय बहुधा सामाजिक पतनका कारण रूप होती है अंग्रेजी शिक्षा के कारण जो निन्द्य दुर्गण स्त्री समाज को घेर लेते हैं उसके जीते जागते उदाहरण प्रायः सर्वत्र मिलते हैं जिनसे बुद्धिमान पुरुष पर्याप्त शिक्षा ले सकते हैं।

इंगलिश शिक्षा के कारण एक तो लड़कियों में इंगलिश लेडियों की तरह निर्लज्ज फैशन परस्ती घर कर लेती है। बारीक, भड़कीले, चमकीले कपड़े, बूट, हेयरक्लिप, जुर्राब, पाऊडर स्नो आदि व्यर्थ व्ययका तथा निर्लज्जता का सामान उन्हें अवश्य चाहिये, खान पान में चाय बिस्कुट, सोडावाटर आदि पदार्थों का उपयोग भी उनको आवश्यक हो जाता है, अंग्रेजी शिक्षिता लड़कियों को प्रायः भोजन बनाना तो एक कठिन समस्या है, धार्मिक शिक्षा न मिलनेके कारण उन्हें ईसाई मुसलमान धर्मोंसे भी परहेज नहीं रहता। स्वच्छन्दता, उद्दंडता, फिजूल खर्ची उन में घर कर जाती है जिस घर की वे पत्नी हों उस घर में घर काम काज के लिये नौकर नौकरानी रखना अनिवार्य हो जाता है। मतलब यह है कि कालेज की शिक्षा प्राप्त लड़कियों के आचार, विचार, व्यवहार, रहन, सहन में अंग्रेजीपन घुस जाता है वे यदि साधारण परिस्थिति वाले पुरुष की अथवा साधारण तनखा पाने वाले मनुष्य की पत्नी बनती हैं तब तो उस घर में दरिद्रता घर कर लेती है यदि किसी धनिक प्रतिष्ठित घराने की बहू बनती हैं तो उस घराने को अपनी प्रतिष्ठा कायम रखना कठिन हो जाता है।

इसलिये लड़कियों को शिक्षा तो अवश्य मिलनी चाहिये। किन्तु वह भारतीय पद्धति से आदर्श पत्नी तथा आदर्श माता बनाने के उद्देश्य से दीजानी चाहिये। भारतवासियों के लिये इंगलिश भाषा हानिकारक नहीं किन्तु इंगलिश सभ्यता नाशकारक है। इंगलिश सभ्यता में रंग देने के बजाय लड़की यदि साधारणपढ़ी लिखी हो तो अच्छी। लड़कियों को बी० ए०, एम० ए० पास कराने का अच्छा लाभ न अबतक कुछ सामने आया है और न आनेकी कुछ सम्भावना है।

ये कुछ बातें हैं जिन पर उन महानुभावों को अवश्य विचार करना चाहिये जो स्त्री शिक्षाको सामाजिक उन्नतिका मूल समझते हैं।

शोक ! शोक !! महाशोक !!

ता० ७-७-३५ को जैनदर्शन द्वारा भा० व० दि० जैन महा विद्यालय के छात्र भाई उत्तमचन्द जैन शास्त्री न्यायतीर्थ का टाईफाइड फीवर के द्वारा मरण समाचार जानकर विद्यालय के समस्त अध्यापक वर्ग तथा छात्रमंडल में एक विचित्र बेचैनी छा गई। उत्तमचन्द पर जितनी आशाएं बांधी गई थीं उनको इस प्रकार धूल में मिलते देख सब को बड़ा दुःख हुआ। उसी समय एक शोक सभा की गई जिस में समस्त अध्यापक तथा छात्र उपस्थित थे। सब ही ने उसकी असामयिक मृत्यु पर खेद प्रकट किया तथा उसकी मृतात्मा को सद्गति एवं शांतिलाभ प्राप्त होने के लिये श्री जिनेन्द्रदेव से प्रार्थना की।

दुःखार्त—रमानाथ न्यायतीर्थ प्रधानाध्यापक—तथा मंत्री वाकलावर्द्धिनी सभा जैन महाविद्यालय ब्यावर

धार्मिक रक्षा का आदर्श नमूना

भारत वर्ष वीरभूमि थी और आंशिक रूप में अब भी है किन्तु गत ७००—८०० वर्ष की गुलामी ने भारत के मूल निवासी हिन्दुओं की वीरता को खोखला बना दिया है। हिन्दुओं में अब लक्ष्मी की उपासना समाई हुई है उन में यह भाव यहां तक समाया हुआ है कि वे अपनी कठिनता से संचित लक्ष्मी की, अपने परिवार की तथा अपने धर्मायतनों की भी रक्षा नहीं कर सकते। अल्पसंख्यक मुसल्मान जो कि कुछ समय पहले प्रायः हिन्दू ही थे उन्हें जहाँ जैसा मौका देखते हैं दबोच देते हैं, लूट लेते हैं, अपमानित कर देते हैं, मंदिरों को नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं कायर हिन्दू रो पीट कर या अदालत का द्वार खट-खटा कर रह जाते है। उनमें स्वयं अपनी रक्षा करने का भाव उत्पन्न नहीं होता।

किन्तु हिन्दू समाज में गोरखा, राजपूत, मरहटे आदि जाति के लोग अब भी वीर होते हैं उन सबसे बढ़ कर वीर पंजाब के सिक्ख होते हैं। सिक्खों ने अनेक बार रण क्षेत्रों में वीरता दिखलाई है। यूरोप के महायुद्ध में भी सिक्ख सिपाही जर्मनी के साथ युद्ध करते समय अपनी वीरता का परिचय संसार को दे चुके हैं। जर्मन सम्राट कैसर ने कहा था कि यदि मैं तलवार से लड़ने वाले अपने वीर जर्मन सिपाहियों को युद्ध भूमि में उतारने से डरता हूँ तो केवल सिक्ख फौज के सामने उतारने से डरता हूँ।

सिक्ख जहां युद्ध वीर हैं वहीं धर्म वीर भी हैं धर्म रक्षा के लिये सहर्ष बलिदान हो जाना सिक्ख जाति का सदाकालीन काम रहा है यही कारण है कि मुसलमानी बादशाहत के अत्याचारी समय में भी पंजाब प्रान्त में हिन्दू धर्म जीवित रहा आया रणजीत-सिंह के वीर सरदार हरिसिंह नलवा की तलवार से सीमाप्रान्त के पठान तथा काबुल के पठान थर्राते थे। अस्तु।

लाहोर नगर में सिक्खों का एक शहीद-गंज गुरुद्वारा है उसके आस पास काफी जमीन है वह जमीन हाईकोर्ट के निर्णय के अनुसार गुरुद्वारे की ही मानी गई। इसी जमीन में गुरुद्वारे के साथ मुसलमानों का एक मसजिद भी थी इस मसजिद पर अधिकार पाने के लिये मुसल्मानों ने कोर्ट में दावा किया था किन्तु वह रद्द हो गया।

सिक्खोंने उस मसजिदको गिराकर साफ मैदान कर देने का विचार किया इस बात से मुसल्मानों में बहुत जोश फैला और उन्होंने यह चाहा कि मस-जिद की ईंट भी न हिलने पावे। इसके लिये वे दस दस पांच पांच हजार के झुंडों में एकत्र होकर सड़कों पर प्रदर्शन करने लगे। लाहोर के सरकारी अफसरोंने दंगे की आशंका से पुलिस फौज का काफी प्रबंध किया उधर सिक्खों को भी गुरुद्वारे की रक्षा का खयाल हुआ तदनुसार इधर उधर से हजारों की संख्या में सिक्ख जत्थे बना बना कर लाहोर आ पहुँचे एक जत्था सिक्ख स्त्रियों का भी गुरुद्वारा शहीदगंज में आ गया। सिक्खों ने निर्णय किया कि यदि मुसल्मान मसजिद पर जबर्दस्ती कब्जा करना चाहेंगे तो हम कदापि न होने देंगे। इस निश्चय के अनुसार ५००० सिक्ख हर समय गुरुद्वारे में मौजूद रहते थे। अनेक बार मुसलमानों के प्रदर्शन के समय

सिक्ख स्त्रियां नंगी कृपाण लेकर गुरुद्वारे के पहरे पर देखी गईं जिससे प्रतीत होता था कि सिक्ख पुरुष ही नहीं किन्तु सिक्ख स्त्रियां भी मैदान में आने को तैयार हैं।

गवर्नर कमिश्नर आदिने सिक्ख मुसलमानोंमें समझौता करानेका प्रयत्न किया किन्तु सफलता न मिली ८ जुलाई को सिक्खों ने मसजिद को गिरा कर साफ मैदान कर दिया। अकेले रूप में ३-४ सिक्खों का नगर के भिन्न २ स्थानों में मुसलमानों ने कत्ल किया जिनके कातिल पकड़े गये हैं। इस अवसर पर भारी दंगा होने की पूरी आशंका थी किन्तु अधिकारियों की सावधानी से शान्ति रही। लाहोर में अभी तक फौजी पहरा है। गुरुद्वारा के लिये आवश्यकता होने पर सरदार बहादुर मेहताबसिंह जी ने एक लाख रुपया एक हजार स्वयंसेवक और एक हजार बोरी आटा देना स्वीकार किया था।

यहां पर सिक्खों के उचित अनुचित कार्य की समालोचना नहीं करनी है यहां तो केवल इस बात पर प्रकाश डालना है कि धार्मिक रक्षा कोरी बातों या कागजी घुड़दौड़ से नहीं हुआ करती उसके लिये वीरता तथा बलिदान की आवश्यकता है। मुसल्मान लोग यदि गुरुद्वारे पर आक्रमण करते तो सिक्ख वीर डट कर उनका सामना करते, चाहे इस कार्य के लिये उन्हें अपना सर्वस्व बलिदान ही क्यों न करना पड़ता। सिक्ख अपनी इसी भावना के बल पर अपने कार्य क्रम से रंचमात्र न डिगे। मुसल्मान यदि भयानक रूप न बतला कर शांति से काम लेते तो संभवतः सिक्ख भी कुछ झुक जाते। अस्तु।

इस उदाहरण से हमारे जैन भ्राताओं को शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये क्योंकि जहां वे नवीन २ मंदिर बनवाते जाते हैं एक ही मुहल्ले में अनेक मंदिर विद्यमान रहते हुए भी और नवीन मंदिरनिर्माण की तीव्रलालसा बनी रहती है वहां वे उन मन्दिरों की रक्षा के लिये पर्याप्त प्रबन्ध नहीं रखते हमारे भाइयों ने अपने आपको तो शक्ति सम्पन्न होते हुए भी गीदड़ बनिया समझ रक्खा है उनके खयाल में हमला करने वाला शेर होता है और वे स्वयं घिघियाने वाले गीदड़। इसी कारण अवसर आने पर वे अपनी रक्षा नहीं कर पाते। जैन भाइयों की इस निर्बलता के कारण जैन मंदिर आज सरकारी प्रबन्ध की कृपा पर खड़े हुए हैं। फिर भी चोर लोग उनके मंदिरों को लक्ष्मी निकाल ही ले जाते हैं हमारे भाई रो पीट कर रह जाते हैं किन्तु इससे कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं करते।

समयानुसार हमको दो बातें ग्रहण करनी चाहिये एक तो स्वयं वीर बनना चाहिये "धार्मिक रक्षा में बलिदान शुभगति, पुण्यबन्ध का देने वाला है आत्मा अजर अमर अविनाशी है" यह बात अपने हृदय पर अंकित करलेनी चाहिये अपनी संतान को वीर बनावें उनको अखाडे में भेजें, अस्त्र, शस्त्र चलाने की शिक्षा दिलावें जिस प्रकार भगवान ऋषभदेव ने भरत बाहुबली को दी थी। दूसरे जहां आप पूर्णतया रक्षा का स्थायी प्रबंध न कर सकते हों वहां मन्दिर निर्माण कराने की अभिलाषा का दमन करें तथा मन्दिर में सुवर्ण, चांदी के मूल्यवान उपकरणों की रक्षा के लिये संतोष जनक प्रबन्ध करें।

यह बात आपके चित्त में जम जानी चाहिये कि आप जब तक स्वयं अपनी रक्षा के लिये अपने पैरोंपर नहीं खड़े हो सकते तबतक दूसरी सहायताएं आप की रक्षा कदापि नहीं कर सकतीं। —अजितकुमारजैन

साहित्य समालोचना

विद्यार्थी जैनधर्मशिक्षा—ले०—श्रीमान शीतलप्रसाद जी। इस पुस्तक में लेखक महानुभावने प्रश्न उत्तर के रूपमें सरलता से जैन सिद्धान्त प्रतिपादन किया है। मुनिधर्म, गृहस्थधर्म तत्व, द्रव्य गुणस्थान, मार्गणा, ध्यान, कर्म, नय, निक्षेप आदि प्रायः सभी ज्ञातव्य विषयों का संक्षिप्त रूप से इस पुस्तक में संकलन किया गया है। अन्त में अजैन दर्शनों का संक्षिप्त स्वरूप लिख दिया है। इस प्रकार २९६ पृष्ठों में पुस्तक को समाप्त किया है। पुस्तक सरल रूप से जैनधर्म समझाने के लिये उपयोगी है बोर्डिङ्ग हाऊस के विद्यार्थी तथा जैन सिद्धान्त के जिज्ञासु इस पुस्तक से अच्छा लाभ उठा सकते हैं। छपाई, कागज़ अच्छा है। यह पुस्तक श्रीमान दानवीर सेठ लखमीचन्द जी भेलसा ने अपने द्रव्य से छपाकर जैनमित्र के ग्राहकों को भेंटकी है। फिर भी न मालूम पुस्तक का मूल्य १॥) डेढ़ रुपया क्यों रक्खा गया है? क्या यह पुस्तक बिक्री लिये भी छपाई है और यदि पुस्तक बिके तो उसका मुनाफा किस खाते में जमा किये जावेगा? सेठ जी खुलासा करदें तो अच्छा है।

वीरपाठावली—लेखक श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी, प्रकाशक श्रीमान मूलचन्द्र जी किशनदास कापड़िया सूरत हैं। यह पुस्तक जैन जनतामें वीर रस फैलाने के उद्देश से १२७ पृष्ठों में लिखी तथा प्रकाशित हुई है। इसमें भ० ऋषभदेव भरत, राम लक्ष्मण, कृष्ण-नेमिनाथ, भ०पार्श्वनाथ, भ० महावीर, चन्द्रगुप्त, खारवेल, कुन्दकुन्दाचार्य, उमास्वाति नेमिचन्द्राचार्य, चामुण्डराय और अकलंक देव तथा चेलना, चंदना की संक्षिप्त कथाओं के अतिरिक्त धर्म और वीरता, धैर्य, धर्म और पंथ ये चार पाठ और लिखे गये हैं। पुस्तक साधारणतया अच्छी है। कामताप्रसाद जी ने इस पुस्तक के लिखने में मालूम पड़ता है कुछ अधिक परिश्रम नहीं किया अथवा किसी उद्विग्नचित्त के समय लिखी है इसी कारण पुस्तकमें जहां रोचकता की कमी है वहीं वीररस भी बहुत कम सूक्ष्म रूपमें टपकता है। उदाहरण के लिये भगवान ऋषभदेवकी जीवनचर्या ही लेलीजिए उसमें कहीं वीरताका प्रकाश नहीं। लेखक महोदय वहां नोकीली लेखनी से ओजस्वी शब्दों में भगवान के वार्षिक उपवास का उल्लेख कर देते तो वे अपने उद्देश में बहुत कुछ सफल होजाते।

पुस्तकों में जहाँ युद्ध का वर्णन आया है वहाँ भी वीररस का तालाब सूखा दिखाई देता है। धर्मवीर, दानवीर, युद्धवीर आदि भेद करके पृथक पृथक श्रेणी में पृथक पृथक जीवनचर्याएं उन ओजपूर्ण शब्दों में लिखनी थीं जिनको पढ़ते ही पढ़ने वाले का हृदय फड़क उठता। तथा—जयकुमार, हनुमान, रावण, भीम अर्जुन, सुकुमाल, अंजना, सुदर्शन, पन्ना, भामाशाह आदि अपने अपने विषय के वीरों की कथाएं भी इस पुस्तक में आनी चाहिये। पुस्तक यदि कुछ बड़ी हो जाय तो कुछ हर्ज नहीं। या तो पुस्तक लिखना न चाहिये यदि लिखना हो तो उसे सर्वाङ्गपूर्ण जीवित लेखनी से आकर्षक शब्दों में लिखना चाहिये।

आशा है द्वितीय संस्करण में ये त्रुटियाँ न रहेंगी। प्रकाशक महानुभावको भी अपनी स्व० सौ० धर्मपत्नी की स्मारक ग्रन्थ माला की पुस्तकें माणिकचन्द्र ग्रन्थ-माला की पुस्तकों के समान लागतमूल्य में या स्वल्प मूल्य में प्रकाशित करनी चाहिये। प्रस्तुत पुस्तक का मूल्य १२ आने अधिक है।

शक्तिरहस्य—ले० पं० यशपाल विद्यालंकार हैं। यह पुस्तक मांसभक्षण को अनुपयोगी सिद्ध करने के लिये तथा निरामिष भोजन में शारीरिक पोषक अंश मांसकी अपेक्षा अधिक हैं यह बात बतलाने के लिये लिखी गई है। इसमें ६ अध्याय रक्खे गये हैं। प्रारम्भके आठ अध्यायोंमें भोजन, स्वास्थ्य, शारीरिक रचना, शाक भोजन, मांस भोजन, किन २ पदार्थों में शक्ति के कितने २ अंश हैं, किस किस देश के मनुष्य निरामिष भोजी होने पर भी कितने बलवान हैं आदि विषय बतलाये हैं। अन्तिम अध्याय में वेदों में मांस विधान नहीं है इस बातको सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। लेखक अपने उद्देश्य में अच्छे सफल हुये हैं। मांस भक्षण प्रचारको रोकने के लिये ऐसी पुस्तकों की बहुत आवश्यकता है। पुस्तक की पृष्ठ संख्या १४० है मूल्य ८ आना है। भक्त धनपति जी, प्रोप्राईटर आर्यमिशन मुलतान सिटी से पुस्तक प्राप्त होसकती है।

वैद्य—श्रीमान स्व० पं० शंकरलाल जी वैद्यने मुरादाबादमे वैद्य नामक मासिक पत्र निकालना प्रारम्भ किया था जिसको अनेक वर्ष होगये इसमें वैद्यक सम्बन्धी अच्छे अनुभवी विद्वानों के लेख रहते हैं जिनमे रोगों के निदान चिकित्सा आदिका सरलता से जनसाधारणको परिज्ञान होजाता है। वैद्यजी के स्वर्गवास होजाने पर उनके सुयोग्य सुपुत्र श्रीमान विष्णुकांत जी इस पत्र का सम्पादन करते हैं। पत्र अबभी उसी ढंगसे वैद्य आफिस मुरादाबाद से प्रकाशित होरहा है।

विनोद

१— किसी जुलाहेको रास्तेमें एक आइना पड़ा पाया। उठाकर देखा, तो उसकी सूरत नजर आई। भट बोल उठा—

"अहा यह आपका है! माफ कीजियेगा।"

यह कहकर आइना वहीं रक्खा और चलता बना

२— "डाक्टर साहब मेरा कमीशन दिलवाइये।"

"कैसा कमीशन?"

"आपके पास अभी एक मरीज आया था, जिस की एक टाँग टूटी हुई थी।"

"हाँ!"

"मैंने उसके आगे केले का छिलका डाल दिया जिससे वह फिसल गया और गिर पड़ा बस, लाइये कमीशन?"

३— माँ—"बेटा! कुत्ते की पूँछ को पकड कर न खेलो वह काट खायगा।"

बेटा—"नहीं माँ पूंछ पर दाँत थोड़े ही हैं।

४— पति—"कैस-बक्स को किसने चुराया है?

पत्नी—"आप घबरावें नहीं, चाबी मेरे पास हैं।

५— तुम्हारा भाई मरगया? क्या हुवाथा उसे?

"मैंने अभी उसे पूछा नहीं।"

देश-विदेश समाचार

—एबटाबाद (सीमाप्रान्त) में ४ जुलाई को भयंकर आग लगी जिससे २००० घर तथा १००० फौजी घोड़े स्वाहा हो गये लगभग ५ करोड़ रुपये की हानि हुई है।

—मद्रास के निकट आश्रम (कोलन) में साथू पिल्ले के घर खून की तरह लाल जल की ५ मिनट तक वर्षा हुई।

—गुड़ीवाड़ा (मद्रास) में एक ब्राह्मण स्त्री के एक साथ ३ बच्चे उत्पन्न हुये जो कि जीवित हैं।

—पहली अगस्तसे बंबईमें सेरका वजन २८ तोले के बजाय ८० तोला हो जायगा।

—बंबई नगर में एक वर्ष में मोटर से ४०१२ दुर्घटनाएं हुई है।

—नैनीताल में ज्वालामुखी पर्वत से धुआं और चिनगारियां निकलने लगी है।

भारतवर्ष में इस समय ३ करोड़ आदमी बेकार हैं।

—पंजाब सरकारने भूतपूर्व शाह चराग मसजिद जो कि सरकार ने सन १८६० में एक मुसलमान से खरीदी थी और जिसमें इस समय तक सेशनकोर्ट था मुसलमानों को लौटा दी गई।

—बौद्ध मंदिर गयाके प्रबन्धके लिये ४ सनातनी हिन्दू और ४ बौद्धों की कमेटी हुई है

—होशंगाबाद हाई स्कूल का एक अध्यापक रेलवे लाइन पार कर रहा था कि खड़ी हुई मालगाड़ी चल पड़ी वह तुरंत लाइन के बीच में लेट गया और कटने से बच गया।

—ब्रह्मपुत्र नदी के सम्बे पर हिमालय पर्वत में एक ५२ मील लंबी, चार मील चौड़ी, ३ मील गहरी बर्फ की चट्टान धीरे धीरे सरक रही है और पिघल रही है जिससे बहुत भारी बाढ़ आने की आशंका है।

—पंजाबके द्वितीय षड्यंत्र केसका बयान पलटने वाला सरकारी गवाह इंद्रपाल फांसी से बच कर आजन्म कालापानी का दंड पा गया।

—लायलपुर (पंजाब) में १०८ डिग्री के बुखार के कई केस हुये हैं।

—बंबई में ५० लाख रुपये की लागत से एक रबड़ का कारखाना खुलेगा।

—ब्राझील के एक मोटर ड्राइवर की लड़की २५ वें दिन ही बोलने लग गई।

—चीन यॉग्त्सी नदी में बाढ़ आजाने से ३००० मनुष्य मरे है ५०००० बे घरबार हो गये हैं।

—अमेरिका में भीषण तूफान और बाढ़के कारण करोड़ों रुपयों की हानि हुई है सैकड़ों आदमी मरे हैं।

—यूरोप में एक ३१ वर्ष की महिला के पोता हुआ है।

—जर्मनी और भी बहुत बडे हवाई जहाज बना रहा है।

—संसार के सबसे बड़े धनी एक फेलर ने अपनी ९६ वीं वर्ष गांठ मनाई है।

भूल—'प्यारा उत्तमचन्द्र' शीर्षक लेख में मृत्यु दिन २६ जून के बजाय २ जुलाई छप गया है पाठक सुधार कर पढ़ें।

शोक—सिंघई कुंवरसेन जी के बडे भाई श्री सुगरामदास जी का अषाढ़ वदी १३ को स्वर्गवास हो गया है।
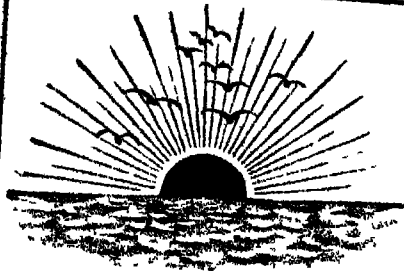
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक २

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≈)

श्रावण सुदी १ बुधवार
२१ जोलाई-१९३५ ई०

एक नररत्न और खो गया—

श्रीमान पं० पन्नालाल जी गोधा अधिष्ठाता श्री उदासीनाश्रम इंदौर से कौन अपरिचित होगा। आप जैन सिद्धान्त के अनुभवी विद्वान, घर कुटुम्ब से विरक्त, शुद्धाचरणी और शुद्ध तेरहपंथ के स्तम्भ थे उदासीनाश्रम इन्दौर की स्थापना मुख्यतया आप के ही निमित्त से हुई थी। श्रीमान रायसाहिब खेमरचन्द्र जी गोधा, आपके सुपुत्र हैं इस सम्पन्न परिवार से गोधा जी २० वर्ष से सम्बन्ध छोड़ कर उदासीनाश्रम इन्दौर में निवास कर रहे थे।

आप अभी ३ मास से अस्वस्थ थे आपने जब अपना स्वास्थ्य सुधरते न देखा तब क्रम से परिग्रह, आहार पान का त्याग करते हुए स्वर्गारोहण से २६ घंटे पहले अपना नाम 'धर्मकीर्ति' रख कर दिगम्बर मुनि व्रत ग्रहण कर लिया और पद्मासन से ध्यान में बैठ गये एवं उसी रूप में १६ जुलाई मंगलवार की रात्रि को आपका उन्नत आत्मा इस जीर्ण शीर्ण शरीरको छोड़ नवीन, सुन्दर देह ग्रहण करनेके लिये विदेश यात्रा कर गया। आपकी शवयात्रा इन्दौर में विमान के रूप में बहुत धूमधाम से ५—६ हजार पुरुषों की भीड़ ने निकाली तथा (मल्हारगंज) मोदी जी की नशियां में दाह संस्कार हुआ।

आपका आत्मा उन्नतपद प्राप्त कर सुखा-लीन हो ऐसी भावना है।—अजितकुमार जैन

जैन समाचार

इस वर्ष निम्नलिखित त्यागी महानुभावों ने नीचे लिखे स्थानों पर चातुर्मास किया है—

१—आचार्य शांतिसागर संघ ईडर
२— ,, शांतिसागर जी (छाणी) उदयपुर
३—मुनि नमिसागर जी देहली
४—मुनि चन्द्रसागर जी सुजान गढ़
५—मुनि सूर्यसागर जी लाडनूं
६—मुनि पद्मसागर, मल्लिसागर जी इंदौर
७—मुनि धर्मसागर अजितसागर जी कोलारस
८—क्षुल्लिका-शांतमती, अनंतमती, कुंथुमती गोहाना
९—ब्र० गणेशप्रसाद जी वर्णी ईसरी

आवश्यकता—यदि किसी शास्त्रभंडारमें सागार धर्मामृत की 'ज्ञानदीपिका' नामक पंजिका टीका हो तो कृपा कर सूचना दें।

—कैलाशचन्द्र शास्त्री, स्या० विद्यालय भदैनी घाट बनारस

—दि० जैन विद्यालय टोंक के लिये एक हिन्दी, संस्कृत, इंग्लिश, धर्मशास्त्र के ज्ञाता सुयोग्य अध्यापक की आवश्यकता है।

—मंत्री हितैषी मंडल मानक चौक टोंक स्टेट

—दि० जैन समाज के होनहार नवयुवक श्री पं० उत्तमचन्द जी शास्त्री न्यायतीर्थके असमय स्वर्गवास हो जाने पर शोक सभा हुई और १० मिनट तक मृतात्मा को श्रद्धांजलि अर्पण करने के हेतु शांति प्राप्ति के लिये प्रार्थना की गई।

—मोतीलाल जैन मंत्री दि० जैन महावीर मंडल उदयपुर

- श्रीमान सेठ छगनलाल जी भोजावतके सभापतित्व में श्री पा० दि० जैन विद्यालय में श्रीमान ९० मुनिराज पन्नालाल जी गोधा, तथा श्रीमान साहु जुगमंदरदास जी के स्वर्गवास के शोक में शोकसभा की गई जिसमें श्रीमान पं० सुंदरलाल जी न्यायतीर्थ का भाषण हुआ और एक प्रस्ताव पास हुआ।

—पृथ्वीराज चितोड़ा, मंत्री-पा० दि० जैन विद्यालय उदयपुर

—जैन वनिताश्रम आगरा के संचालक फूलचन्द जैन की अपील हाईकोर्ट मे रद्द हो गई।

—श्रीमान ब्र० नेमचन्द जी परभणी (निजाम) में इस वर्ष चातुर्मास कर रहे हैं। वहां आप कासार लोगों को जैनधर्म में दीक्षित करने का उद्योग कर रहे हैं। गत ८ वर्ष में आप ५०० कासार घरों को जैन बना चुके हैं। आपका पता—ब्र० नेमिचन्द्र महाराज कासार गली परभणी (निजाम)

—शोक—श्रीमान पंचमलाल जी रिटायर्ड तहसीलदार का १४ जुलाई को स्वर्गवास हो गया।

—श्रीमान वैद्य भरमप्पा जी उपाध्याय को सम्मानित पद 'वैद्य आचार्य' प्राप्त हुआ है। बधाई।

—श्रीमान पूज्य, सप्तम प्रतिमा धारी श्री गणेशप्रसादजी वर्णी न्यायाचार्य का चातुर्मास पार्श्वनाथ रोड़ (ईसरी) होना निश्चित हो गया है अत: दि० जैन समाज से सादर निवेदन है तथा खासकर बंगाल बिहारस्थ धार्मिक सज्जनों से निवेदन है कि अवश्य ईसरी पधार कर धर्म एवं तत्व चर्चा का लाभ लेवें।

प्रबन्धादि के लिये श्री पं० पन्नालाल जी काव्यतीर्थ जी से पत्र व्यवहार करें।

लक्ष्मूमल जैन—चौक गया।

अकलंकदेवाय नमः
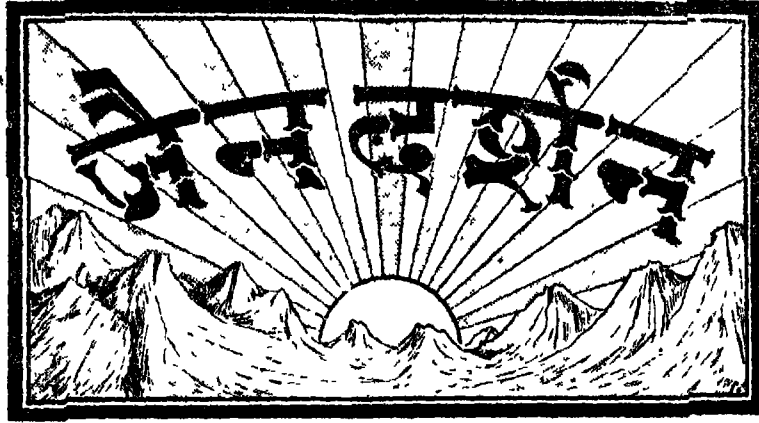
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽमरश्मिर्मर्म भवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्॥

वर्ष ३ | श्री श्रावण सुदी २—गुरुवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क २

बादल

ले० श्री० पं० चान्दमल जी जैन 'शशि' बी० ए० विशारद

निकल पड़े तुम तज घर-द्वार ।
अब दुख पाते मेघ ! अपार ॥
बादल-दल में बिछुड़ बलाहक व्यर्थ आपदा लीनो मोल
सत्य, कष्ट सहते हैं वे नर, जो करते नहीं काम सतोल

सीख बड़ों की सुनी न एक ।
तुमने रक्खी अपनी टेक ॥
यौवन के मद में उद्धत हो, कीनी तुमने भूल अनेक ।
सत्य, विचार बिना नरको नहीं होता उद्भव आत्म-विवेक

पाकर अल्प अरे ! तुम वित्त
फूले नहीं समाये चित्त ।
सपने सरिस न समझ किसीको, तुम इतराते हो नादान
सत्य, नीच पद उच्च प्राप्त कर दिखलाता है अपनी शान

धर कर शठ ! मिथ्या अभिमान-
तुमने किया स्वजन-अपमान ॥
पर, समवाय बिना बल कैसा ? जबहो बन्धुवर्ग प्रतिकूल
सत्य, संहती ही सुख-साधन, और समुन्नति का है मूल

हृदय तुम्हारा पाकर कष्ट ।
अब होता है विकल विशिष्ट ॥
शरण ढूँढते तुम फिरते हो, पाकर स्वल्प अरे ! सन्ताप
सत्य, भूलता सुखमें दुख जो, करता है वह पश्चाताप

अब, जब चाली प्रबल समीर ।
सह न सके होगये अधीर ॥
किञ्चित झोंका खा न टिके तुम, भाग गये तज अपना नीर
सत्य, अटल एकाकी करना, सरल काम नहीं टेढ़ी खीर

मिट्टी में सब मिली उमंग ।
कहां तुम्हारा है वह रंग ?
क्षणमें जीवन सकल गंवा कर, जलद ! होगये शक्ति-विहीन
सत्य, शिखर पर चढ़ अभिमानी, अध पतित हो बनते दीन

रहा न जगमें किसका मान !
होता है सबका अवसान ॥
सदा किसीके दिवस जगतमें, रहते नहिं हैं एक समान
सत्य, पतन निश्चय है उसका, जिसका होता है उत्थान

शकुन-विचार

(ले०—श्री पं० भंवरलाल जी जैन न्यायतीर्थ)

आज कल के पढ़े लिखे हुये लोग शकुन पर बहुत कम विश्वास करते हैं। उनका कहना है कि यह एक तरह का अन्ध विश्वास (Blind blief) है। जब पुराने ख्याल के आदमी इस विषय पर कुछ कहते हैं तो वे उनको कुछ युक्तियां देकर चुप कर देते हैं। वे पुराने लोग उनके इस प्रश्न का जवाब नहीं दे सकते कि शकुनों के साथ हमारे भविष्य का क्या सम्बन्ध है ? वास्तव में यह एक बहुत जटिल और गम्भीर प्रश्न है। इसका उत्तर देना हर एक के लिये सम्भव नहीं है। हमारे इस लेख का भी ध्येय शकुनों का वैज्ञानिक विवेचन करना नहीं है। इसके लिये तो बहुत गम्भीर अध्ययन की आवश्यकता होगी। हम तो इस लेख द्वारा केवल पाठकों को शकुनों के सम्बन्ध में कुछ ज्ञातव्य बातें बतलाना चाहते हैं।

पुराणों को देखने से यह बात अच्छी तरह ज्ञात हो जाती है कि प्राचीन काल में शकुनों का बहुत अधिक उपयोग होता था। छोटे से छोटे आदमी से लेकर राजा महाराजा तक खासकर यात्रा के समय इनका अवश्य उपयोग करते थे। पद्मपुराण में लिखा है कि जब रावण महाराज रामचन्द्र जी के साथ युद्ध करने के लिये निकला तो उसको बहुत से अपशकुन हुये थे। लोगों ने इस ओर उसका ध्यान भी आकर्षित किया था; पर उसके मस्तक पर तो काल का चक्र फिर रहा था वह उनकी बात को क्यों मानता ? अन्त में जो नतीजा निकला वह जग जाहिर है। यह एक उदाहरण है। इस तरह के हजारों दृष्टान्त पुराणों में मिल सकते हैं। जब हम इन पुराणों में ऐसी बातें पढ़ते हैं तब शकुनों के सम्बन्ध में हमारे हृदय पर कुछ प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। इसके अतिरिक्त लोक परम्परा भी इस सम्बन्ध में हमारे विचारों को बहुत कुछ दृढ़ बना देती है। अगर शकुनोंमें कुछ भी सत्यता का अंश न होता तो लोग इस तरह उनके पीछे न पड़ते। आजकल भी देहातों में इन पर विश्वास करने वाले लोग बहुत मिलेंगे। अशिक्षित जनता तो प्रायः सब काम शकुन देखकर ही करती है। कई देहाती आदमियों से इस सम्बन्ध में मेरी बातें हुई हैं और उन्होंने कहा है कि शकुन कभी झूठे नहीं होते। अपनी इस धारणाका समर्थन करनेके लिये वे अपने अनेक अनुभूत उदाहरण पेश करते हैं। चाहे कितना ही जरूरी काम क्यों न होवे अच्छा शकुन न मिलने पर कभी बाहर नहीं निकलते, क्योंकि अनेक बार उन्होंने ऐसा तजुर्बा किया है कि अच्छा शकुन नहीं मिलने पर उनका काम बिगड़ गया। मेरी सम्मति से तो उनका दृढ़ विश्वास ही इस सम्बन्ध में अधिक काम करता है। अनुकूल शकुन नहीं मिलने पर उन्हें सुतरां ही यह विश्वास हो जाता है कि हमारा काम नहीं बनेगा बस यह श्रद्धा ही उनका काम बिगाड़ देती है। ऐसे ही भले शकुनों को देखने से उन्हें यह विश्वास हो जाता है कि हमारा कार्य अवश्य सिद्ध होगा। केवल यह विश्वास ही उनकी कार्य सिद्ध का कारण है। क्योंकि जो लोग इन पर विश्वास नहीं करते वे प्रतिकूल शकुन हो जाने पर भी अपना कार्य

परवाह नहीं करते और अन्त में सफल होते भी देखे गये हैं। ऐसे आदमियों का कहना है और हमारा भी अनुभव है कि अच्छे शकुन हो जानेपर भी अनेक बार कार्य सिद्ध नहीं होता इस लिये हमें इन शकुनों का अधिक उपयोग न करना चाहिये, क्योंकि इन से हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ भी नहीं है।

बृहस्पति नामक आचार्य ने केवल यात्रा के समय ही शकुनों का उपयोग करने की आज्ञा दी है। ऐसे शकुन अधिक बार सच्चे निकलते देखे गये हैं। एक बार एक आदमी आजीविका के लिये विदेश जा रहा था। जब वह तिलक लगा देने के बाद चौके पर से उठा तो यकायक उसकी सिर की पगड़ी नीचे गिर पड़ी। उसको विश्वास हो गया कि शकुन अच्छा नहीं हुआ इसका यह फल हुआ कि वह कलकत्ता जाकर थोड़े ही दिनों में मर गया। एक बार एक आदमी अपने गाँव से किसी दूसरे गांव रहने के लिये जा रहा था। रास्ते में सुनार मिल गया। उस ने समझा कि शकुन अच्छा नहीं हुआ है। इस विश्वास का यह फल हुआ कि वह वहाँ जाकर बीमार पड़ गया और बहुत दिन बीमार रहने के बाद उसकी मृत्यु हो गई। चाहे इन दिनों की मृत्यु घटना वश ही क्यों न हुई हो फिर भी शकुन जानने वाले तो यही कहते हैं कि अगर यह उस समय रवाना न होते तो उनकी मृत्यु न होती। अस्तु।

वैसे तो शकुन कई तरह से लिये जाते हैं जैसे:—

रमल द्वारा, पासा फेंककर, पशु पक्षियों के दर्शन मात्र से अथवा: उनकी आवाज से, पदार्थों के दर्शन आदि से किन्तु रमल और पासा फेंक कर शकुन जानने को विशेष प्रथा नहीं है। और यह भी बात है कि इनके द्वारा कई बातें सत्य निकलती हैं। और कई असत्य। हमने भी कई दफा पासा फेंक कर शकुन जानने की कोशिश की किन्तु प्रायः फल शकुन के विपरीत निकला। इस लिये इन पर विशेष प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं है। इस सम्बन्ध में यदि किसी को जानने की जरूरत है तो वह अर्हन्त पासा केवली, सत्य पासा केवली, पासा शकुनावली आदि ग्रन्थ देखें।

मंगलकारी पदार्थों के देखने से, पशु पक्षियों की आवाज व उनके दर्शन से जो शकुन लिये जाते हैं। वे सब सच्चे ही हों यह हम नहीं कह सकते फिर भी यह हमारा अनुभव है कि ज्यादातर सत्यही होते हैं। इस लिये हम पाठकों के सामने कुछ इस सम्बन्ध में ज्ञातव्य बातें रख देना उचित समझते हैं:—

यदि हम केवल कौवे की आवाज द्वारा ही शुभाशुभ शकुन का विचार करने लगें तो हमें इससे कई बातें मिलेंगी। दिन के प्रति समय में कौवे की आवाज द्वारा शुभाशुभ फल जाना जाता है ऐसा विद्वानों का मत है। इसके लिये ऐसा सुना जाता है कि जिस समय कौवा बोले उस समय सात अंगुल के तिनके के द्वारा उस समय तिनके से गिरने वाली छाया को नापे और उस छाया की लम्बाई को दो से गुणा करके सात का भाग देवे। ऐसा करने से शेष यदि एक बचे तो जानना चाहिये कि भोजन अच्छा मिलेगा। यदि शेष दो हो तो उस गांव में कोई सन्तान उत्पन्न होगी। तीन का अवशेष रहना उस जगह होने वाली मृत्यु का सूचक है। यदि चार बाकी बचे तो उस गांव में या तो आग लगेगी अथवा

कोई उपद्रव होगा ऐसा लोगों का कहना है। पांच का बाकी बचना किसी अच्छे सन्देश का द्योतक है। और छह तथा शून्य यदि अवशिष्ट रहे तो समझना चाहिये कि कौआ अपनी भाषा बोलता है। इसी प्रकार कई जानवरों से शुभाशुभ फल जाना जाता है।

जिस समय मनुष्य किसी काम के लिये अथवा परदेश जानेके लिये गमन करे तो उस समय पानी से भरे हुये कलश, हाथी, घोड़ा, बैल गाय रथ, धुले हुये वस्त्रों सहित धोबी, कुमारी कन्या, सधवा स्त्री, पुत्र सहित स्त्री, माला, बाजा, फल, दही चँवर चांवल, चिकडोल, बछड़े सहित गाय, कूड़े के टोकड़ों व झाड़ू सहित भंगी, हथियार, वेश्या, मांस, भोजन से भरा थाल आदि आदि यदि सामने आ जावे तो समझना चाहिये कि कार्य होगा। किन्तु यदि उस समय बिल्ली का दर्शन होजाय अथवा वह रास्ता काट जाय, सामने अथवा दाहिने भाग में छींक हो जाय, कोई कराहता हुआ सुनाई पड़े अथवा कोई रोती हुई या खुले केशों वाली स्त्री सामने आजाय, नंगे सिर कोई मिल जाय, खाली कलश दीख पड़े, सुनार सम्मुख आ जाय, और भेड़िया, जरख, सांप आदि यदि सामने आवे तो जानना चाहिये कि कार्य सिद्ध नहीं होगा।

यों तो बिल्ली का दर्शन अशुभ ही समझा जाता है किन्तु यदि वह भक्ष्य पदार्थ को लिये हुये सामने मिल जाय तो शुभ समझा जाता है। इसी प्रकार भक्ष्य पदार्थ को लिये हुये कुत्ते का दर्शन और आहार सहित वृक्ष पर बैठी हुई "समली" का दर्शन होजाय तो ये शुभ समझने चाहियें।

हाथी किसी भी दशा में क्यों न मिले उसका शकुन खराब नहीं होता। हां कई अवस्थाओं में उत्तम न हो कर सामान्य फल जरूर हो जाता है।

घोड़ा यदि बांये पैर को फैलाये हुये नजर आ जाय तो अशुभ होता है किन्तु यों ही सामने मिल जाय अथवा दाहिने पैर से पृथिवी को खोदता हुआ या दांतों से दाहिने अंग को खुजलाता हुआ दीख पड़े तो शुभ होता है।

गधा यदि बांई तरफ मिल जाय अथवा उसी तरफ बोले तो शकुन अच्छा होता है किन्तु गधे का पीछे अथवा दाहिने भाग में दर्शन होना या धूल में लोटता हुआ शिर हिलाता हुआ या लड़ता हुआ दीखना क्लेश और आपत्ति का द्योतक है।

बैल यदि बांये अंग से जमीन को खोदे तो शुभ और दाहिने अंग से खोदे तो शकुन अशुभ समझा जाता है। बैल का डकारते (शब्द करते) हुये मिलना शुभ शकुन का सूचक है किन्तु यदि बैल भैंसा साथ साथ खड़े हुये नजर आ जांय तो शकुन खराब है।

गज दर्शन के समान गो दर्शन भी हमेशा अच्छा ही होता है।

यदि कुत्ता अनाज पर, दरवाजे की ईंट पर, फले हुये दरख्त के नीचे पेशाब करता हुआ नजर आ जावे तो शुभ है किन्तु पत्थर पर, श्मशान में पेशाब करते हुये दीखना हानि कारक है इसी प्रकार ऊंचे स्थान पर बैठे हुये अंग को खुजलाते हुये अथवा चाटते हुये कुत्ते के दर्शन उत्तम हैं जब कि लेटे हुये अथवा प्यार किये जाते हुये कुत्ते के दर्शन अनिष्ट कारक हैं।

जिस प्रकार पशुओं के दर्शन में शुभ या अशुभ

इष्ट या अनिष्ट और अच्छा या बुरा फल जाना जाता है उसी प्रकार पक्षियों से भी यह जान लिया जाता है कि हम यदि इस समय रवाना हो जायगे तो भविष्यमें हमारे साथ क्या घटना होगी अथवा हमारा कार्य सफल होगा या नहीं। इतना ही नहीं किन्तु इन शकुनों द्वारा मृत्यु का भी पता चल जाता है ऐसी कई विद्वानों की धारणा है। जैसे कि उल्लू, कौआ आदि कोई भी मांसाहारी पक्षी यदि किसी मनुष्य के शरीर पर अचानक आकर बैठ जाय तो ऐसा सुना जाता है कि उसकी दो मास में मृत्यु हो जायगी। इसी प्रकार यदि कोई बन्दर किसी मनुष्य पर धूल उछाले अथवा कई कौवे एक व्यक्ति पर हमला करें तो जान लेना चाहिये कि उस व्यक्ति की आयु केवल चार मास बाकी है। ऐसे ही यदि कोई आदमी कौवे को मैथुन करता हुआ देखले तो उसकी मृत्यु बारह माह के भीतर हो जाती है। यदि मृत्यु न हो तो मृत्यु जैसा कष्ट जरूर मिलेगा। कई दफा ऐसा भी अनुभव में आया है कि ऐसी मृत्यु सूचक कई बातें होने पर भी मनुष्य जीवित रह जाते हैं। अस्तु

यदि मुर्गा बांई तरफ स्थिरता से बोलता हुआ मिले तो शुभ है।

वैसे तो मोर का दर्शन उत्तम ही है किन्तु यदि वह नाचता हुआ मिले हो तो विशेष लाभ दायक तथा मंगल कारी है। यह भी सुना गया है कि कहीं जाते हुए मोर का एक दफा बोलना लाभ का, दो दफा बोलना स्त्री प्राप्ति का' तीन दफा बोलना द्रव्य प्राप्तिका एवं चार और पाँच दफा बोलना कल्याण और सुख का द्योतक है।

इस लेख में हमने संक्षेप से शकुनों के सम्बन्ध में कुछ ज्ञातव्य बातें लिखी हैं। यदि पाठक इस शकुन विद्या पर विश्वास करते हो तो यथावसर इन का उपयोग कर सकते हैं। यदि पाठकों ने इस लेख को पसन्द किया तो भविष्य में हम विशेष अध्ययन करके इस विषय में और भी कुछ लिखने का प्रयत्न करेंगे।

स्याद्वाद

कल्याण कुमार जैन शशि

तू उन्नोन्नत-मस्तक विशाल
जैनत्व-तत्वका स्फटिक भाल
छिन्नित मिथ्या तम तोम जाल
तू जैनधर्मका शंखनाद !
जय स्याद्वाद जय स्याद्वाद !

तू तीर्थंकर की निधि ललाम
तत्वातत्वों का मद्दु, विराम,
प्राकृत संस्कृति का पुण्य धाम
संसृति का अति निरुपम प्रसाद
जय स्याद्वाद जय स्याद्वाद

तू युक्तायुक्त विचार सार
तू अनेकान्तका सिंह द्वार
करने आये तेरा प्रसार
गत गत तीर्थंकर पूज्यपाद
जय स्याद्वाद जय स्याद्वाद

तू पक्षापक्ष विरूप रूपः
नय-विनिमय का सर्वांगरूप,
भजने तुझको पण्डित अनूप
गौतम, गणधर, जैमिन, कणाद
जय स्याद्वाद जय स्याद्वाद

शिक्षोपयोगी मनोविज्ञान

(ले० श्री० बाबू विद्याप्रकाशजी काला बी० ए० बी० टी)

अच्छा या बुरा मस्तिष्क

* मनुष्य के मस्तिष्क को देखते ही अनुभवी पुरुष तत्काल मालूम कर लेता है कि वह किस प्रकार की खोपड़ी है। उत्तम दिमाग वाले का सर बड़ा, ठोस स्वाकृति का होता है। डाक्टरी अन्वेषण से पता चलता है कि जो ज्ञान तंतु की नहीं उत्तम दिमाग में हों तो वह ठोस और सुदृढ़ होंगी। उनमें कार्य सम्पादन की अनुकूलता को लिये हुये मुख्य २ गुण होंगे। इसी लिये डाक्टर लोग अपना अनुभव बढ़ाने के लिये महत्व शाली महापुरुषों के दिमागों की कीमत लगाते हैं उनकी मृत्यु के बाद खरीद कर परीक्षा करते हैं। स्टीफन साहब का कहना है कि जिस कदर भारी और बड़ा दिमाग होगा उसी अपेक्षा में शक्ति होगी। सभ्य पुरुष का दिमाग अनुमान ४६ आउन्स होता है। असभ्य गंवार जंगली पुरुष का इस से ५ या ६ आउन्स कम होता है। परन्तु महत्वशाली महापुरुष का दिमाग ६४ आउन्स तक पहुँच जाता है निर्बुद्धि कूढ़ मगज के दिमाग का वजन ३० आउन्स से कम होता है मिलने को तो १० आउन्स तक दिमाग के भी मनुष्य मिलते हैं। तीस आउन्स के दिमाग साधारणतया मामूली लोगों के होते हैं। तोल और विस्तार के विचार से ही दिमाग में भिन्नता नहीं होती। किन्तु बनावट पर भी दिमाग का अच्छा या बुरापन निर्भर है। जिस प्रकार जाल का बन्धान होता है। उसमें कोई तंतु ठोस और कोई कमजोर होता है। यही दिमाग का हाल है। जिस दिमाग की नहीं अधिक बलिष्ठ और दृढ़ पेंचको लिये हुये होती हैं। वह दिमाग उतना ही बलिष्ठ होता है।

उत्तम दिमाग वाला अवसरानुसार जिस कार्य में तत्पर होगा उसको यथावत् शीघ्र उत्तमता के साथ सम्पादन करेगा। वह नये २ और अपरिचित कार्यों में भी सफलता को प्राप्त कर लेगा। संसार में जितने योग्य पुरुष हुए हैं उन्होंने आश्चर्यजनक कार्य किये हैं। जिनके द्वारा छोटे २ कामों में भी बिगाड़ हुआ है—समझ लो वे उत्तम दिमाग के न थे। जो पुरुष किसी भी स्थिति में पड़ कर अनेक बाधाओं में भी आकर कार्य को सम्पादन कर देता है उसका दिमाग उत्तम है।

लेकिन जो स्थितियोंका रोना रोता है, समयको अनुकूल नहीं समझता—परिस्थिति से भय खाता है, परिस्थति को अपने अनुकूल होने की प्रतीक्षा करता है: लोगों की निगाहों पर नजर रखता है, छोटे २ आदमियों से राय लेता है और उनकी रायों से बह जाता है, स्वतन्त्र विचारों से दूर भागता है, दूसरे की फूंक से कार्य करता है, किसी बात को घंटों विचार करभी नतीजे को पाने में असमर्थ होता है, सभा सोसाइटी में अपनी राय देने में हिचकिचाहट दिखलाता है ऐसे आदमियों का दिमाग फूला हुआ हलका होता है, रुई के मुआफिक नर्म होता है, तोल और विस्तारमें कम होता है, उसमें डरकी मात्रा अधिक है क्योंकि वह समझता है कि ऐसा

* भूल से यह लेख पहिले छपनेसे रह गया था। इसलिये दर्शन के द्वितीय वर्ष के २२ वे अंक के आगे और २३ वे अंकके पहिले इस लेखको समझें।

न हो कि फेल हो जाऊं। इस प्रकार के मनुष्य का दिमाग अनेक विचारों के उपस्थित होने पर अन्तिम फलको निकालनेमें असमर्थ होता है।

संसार के प्रत्येक कार्यमें बाधायें होती हैं। उन बाधाओं के कारणों को सोचकर उनके निवारण करने की शक्ति उत्तम दिमाग में ही होती है। उदाहरणार्थ—किसी राजा को किसी दुश्मन पर विजय प्राप्त करना है और यह बगैर जङ्ग मचाये हो नहीं सकता। इसमें असंख्य बाधायें आती हैं। ऐसी स्थिति में बाधाओं के निवारण के रास्ते निकालना उत्तम दिमाग की खूबी है। अगर बाधाओं का विचार कर जङ्ग करना बंद करदे तो समझलो उसमे लुटिया ही डुबा दी, लक्ष्य ही खो दिया (क्योंकि ऐसा करना कमजोर दिमाग की निशानी है)। इस समय अगर राजा अनुभवी वीर राजा महाराजाओं के लड़ाई संबन्धी घटनाओं को मिलाकर अपना अनुभव कार्यमें लाये तो कोई कारण नहीं कि राजा को सफलता प्राप्त न हो। क्या नैपोलियन ने अपनी छोटी २ फौजों से अन्य राजाओं की बड़ी बड़ी फौजों को नहीं हराया शिवा जी के दिमाग की खूबी को देखो कि औरङ्गजेब जैसे प्रतापशाली बादशाह के भी दाँत खट्टे कर दिये।

एक विद्यार्थी परीक्षा में उत्तीर्ण होना चाहता है तो वह उत्तीर्ण होने के समस्त साधनों पर विचार करे। बाधाओं को दूर करता जावे और एक ही लक्ष्य में दिमाग की सुई टकरादे तो वह अवश्य ही सफलीभूत होगा।

हमने देखा है और सुना है कि कोई २ मारवाड़ी लोटा डोर लेकर विदेश को निकल जाते हैं और बहुत जल्द करोड़पति बन जाते हैं। यद्यपि वे विद्वान नहीं होते परन्तु व्यापार की धुन में, पैसे की प्राप्ति में पक्के होते हैं। हर दम उनका लक्ष्य एक ही तरफ होता है।

जिनका दिमाग खराब है प्रथम तो उनके हाथ में लक्ष्य ही नहीं आता। या ऐसा लक्ष्य बांध लेते हैं जैसे कि शेखचिल्ली बांधा करते हैं। वे हवा में किले बनाते हैं। बगैर मेहनत करोड़पति बनना चाहते हैं। दूसरे बड़े बड़े पुरुषों के समान होना चाहते हैं। लेकिन उनमें कार्यकुशलता नहीं होने के कारण जगह २ ठोकरें खाते हैं। और इन ठोकरों से जल्दी घबरा जाते हैं, लक्ष्य को छोड़ बैठते हैं। एवं फिर कोई नया लक्ष्य बांधते हैं और इसमें भी टक्करें खाने पर डांवाडोल हो जाते हैं। ऐसे मनुष्य संसार में एक कार्य नहीं करते। अनेक कार्यों में अपना हाथ बटाते हैं लेकिन सफलता एक कार्य में भी नहीं प्राप्त करते। कभी २ ऐसा भी देखा गया है कि ऐसे पुरुष कोई लक्ष्य ही नहीं रखते और कार्य सम्पादन के मैदान में उतर पड़ते हैं। और उनकी वही हालत होती है जो एक बेतैराक की गहरे पानी में। वे तो डूबेंगे ही। कहावत मशहूर है "Jack of all trades master of none"— डांवाडोल सदा ख्वार रहता है। वह बेपेंदी का लोटा होता है। कभी इधर ढुलक जाता है और कभी उधर। ऐसा मनुष्य स्थिर चित्त नहीं होता। वह विचार के आते ही कार्य प्रारम्भ कर देता है। उस कार्य के सम्पादन में अनेक पहलुओं पर विचार नहीं करता। लोभ, लाभ बड़ाई आदि के वशीभूत होकर कार्य प्रारम्भ कर देता है। परन्तु कठिनाइयों के उपस्थित होने पर अधर झूल छोड़ देता है। मुहम्मद तुगलक दिल्ली सम्राट के दिल में अनेक प्रकार की तरंगें उठा करती थीं। उस के कार्यों को देख कर लोग कहते हैं कि या तो वह

पागल था—या पागलों जैसे कार्य करता था इतिहास जानने वाले जानते हैं कि उसने अनेक कार्य किये—किन्तु सफलता किसी में भी न मिली। क्योंकि उसकी विचारशैली कार्य सम्पादन के अनेक पहलुओं पर गहराई को नहीं पहुँचती थी।

अच्छे, बुरे दिमाग का बही खाता

एक फहरिस्त बनाओ। उसमें दो खाने रक्खो जैसे कि बही खाते में जमा खर्च के होते हैं। दाहिनी तरफ का खाता उत्तम दिमाग वालों का। बाईं तरफ का खाता बद दिमाग वालों का है अब इतिहास की पुस्तकों को सामने लेकर बैठो और अपने केन्द्र के मौजूदा व्यक्तियों के कार्यों को सन्मुख लाओ तथा उनके कार्यों के अनुसार दोनों खातों को खतौनी कर डालो एक अच्छे और बुरे दिमाग का बही खाता बन जायगा। और इस खाते में अपने विचारों को दौड़ाओ। बहुत कुछ सम्भव है कि उनके दिमाग के बहुत से उत्तम गुण तुम्हारे दिमाग में खिंच आवेंगे और आपको दिमाग का अनुभव बढ़ जायगा। क्योंकि कोई भी संसार-कार्य ऐसा नहीं है जो बाधाओं से घिरा हुआ न हो। अतः उस खाते में ऐसे भी पुरुष मिलेंगे जिनको ये ही बाधायें आई थीं जैसी कि इस वक्त आपको आ रही हैं। जिस ढङ्ग से उन्होंने अपनी परिस्थिति की बाधाओं को दूर किया उसही प्रकार आप भी कर सकते हैं। अपूर्ण

अतिचार और उसका कारण

(ले० श्री० पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री बनारस)

'जैन बोधक' के जुबली अंकमें उक्त शीर्षक से श्रीयुत कोठारी जी का एक लेख प्रकाशित हुआ है। स्वर्गीय पं० जयचन्द्रजी और श्री० ब्र० शीतल प्रसाद जी से अपना मत भेद प्रदर्शित करते हुए आपने उस में अतिचार के कारणों पर अपना मत प्रदर्शित किया है। इस लेख में उसी विषय पर कुछ विवेचन किया जावेगा।

स्वामिकार्त्तिकेयानुप्रेक्षा, की भाषाटीका में पं० जयचन्द्र जी ने लिखा है "प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता ही देशसंयम का निरतिचार पालन करने में सहायक है"। इसका विरोध करते हुए कोठारी जी ने निरतिचार देशसंयम के पालन करने का कुछ भी कारण नहीं बतलाया, जो कि अवश्य बतलाना चाहिये था। उन्होंने अपने लेख में केवल चार प्रश्नों पर प्रकाश डाला है।

१ प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता का क्या कार्य है।

२ प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता कहाँ पर कब होती है।

संपूर्ण देशसंयम का पालन करने में क्या कारण है?

४ अतिचारों का क्या कारण है।

प्रथम प्रश्न पर प्रकाश डालते हुए आपने लिखा है—'हम प्रत्याख्यानावरण कषाय की मंदता को देश संयम के अतिचारों के परिहार का कारण नहीं मानते - प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता जीव

को सकल संयमोन्मुख बनाती है अर्थात् देशसंयम की पूर्णता के बाद उत्पन्न होने वाली अवस्था का ही यह मन्दता कारण है न कि पूर्वावस्था का 'प्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय की मन्दता महाव्रत का कारण है न कि अणुव्रतों के निरतिचार पालन का, इस अपने मत का समर्थन करने में लेखक ने रत्न करंडश्रावकाचार का निम्न लिखित श्लोक उद्धृत किया है।

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामा ।
सत्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते

इस श्लोक का अर्थ आपने इस प्रकार लिखा है- 'प्रत्याख्यानावरण कषाय का जब मन्दोदय हो जाते हैं तब चारित्र मोहनीय के परिणाम मंदतर हो जाने से जीव महाव्रत धारण करने को समर्थ हो जाता है'।

हमें आपके इस अर्थ पर आश्चर्य होता है और जब हम इसके नीचे संस्कृत टीका भी उद्धृत देखते हैं तब हमारा आश्चर्य और भी बढ़ जाता है। जो श्लोक पं० जयचन्द्र जी के मत का समर्थन करता है उसे आप बलात् अपनी ओर खींच कर ले गये हैं। बलिहारी है, इस खींचातानी की।

श्लोकके अर्थपर विचार करनेसे पहिले हमें यह देखना आवश्यक है कि यह श्लोक किस प्रकरण में कहा गया है ? दिग्व्रत नामक गुणव्रत का वर्णन करते हुये आचार्यने दिग्व्रतके लाभ बतलाये हैं। उन्हों ने बतलाया है कि-'दिग्व्रत धारण करनेसे अणुव्रत पंच महाव्रतरूप में परिणत होजाते हैं'। क्यों होजाते है ? इसका उत्तर देते हुये वे कहते हैं- 'क्योंकि मर्यादा के बाहिर दिग्व्रती सूक्ष्म सा भी पाप नहीं करता' आचार्य का वह श्लोक निम्न प्रकार से है—

अवधेर्बहिरणुपापप्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
पंच महाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥२४॥

इसके बाद कोठारी जी के द्वारा उद्धृत उक्त श्लोकका नम्बर आता है। उस श्लोकका शीर्षक संस्कृत टीकाकार ने यह दिया है— "तथा तेषां तत्परिणतावपरमपि हेतुमाह ॥ अर्थात- "अणुव्रतों के पंचमहाव्रत रूप परिणत होनेमें दूसरा कारण बतलाते हैं। आशय यह है कि एक कारण तो नम्बर २४ के श्लोक में बतलाया गया है और दूसरा कारण नं० २५ के श्लोक में।

इस प्राक्कथन के बाद हम कोठारी जी के उक्त अर्थ को देखते हैं तो हमें बड़ी निराशा होती है। ऊपर के श्लोक तथा न० २५ के श्लोक के शीर्षक के साथ उनके अर्थ की कुछभी संगति नहीं बैठती। वे अणुव्रतों के पंचमहाव्रत रूप परिणत होने में कुछभी कारण न बतलाकर, जीव महाव्रत धारण करने में कब समर्थ होता है ? इस प्रश्नका उत्तर देते हैं। 'प्रकल्प्यन्ते'का अर्थ कोठारीजी ने 'समर्थ होजाता है'। किया है, जबकि टीकाकार 'उपचर्यन्ते' लिखते हैं। यदि प्रकरण और टीकाकार के अनुसार अर्थ किया जाय तो निम्न प्रकार होगा— "प्रत्याख्यानावरण कषाय के मन्द होजानेसे चारित्र मोहनीयके परिणाम इतने मन्द होजाते हैं कि उनका अस्तित्वभी कठिनता से जान पड़ता है। वे परिणाम ही औपचारिक महाव्रत रूपसे कहे जाते हैं"। अर्थात दिग्व्रतधारियों के प्रत्याख्यानावरण कषाय का मन्द उदय होजाता है। और उससे चारित्रमोहनीयके परिणाम भी अतिमन्द होजाते हैं अतः उनके अणुव्रत भी औपचारिक महाव्रत रूप से कहे जाते हैं।

इसकेबाद २६ वें श्लोक की व्याख्या करने से

पहले उस श्लोकका शीर्षक देते हुये टीकाकार शंका करते हैं–'ननु कुतस्ते महाव्रताय कल्प्यन्ते न पुनः साक्षान्महाव्रतरूपा भवन्तीत्याह। अर्थात वे परिणाम औपचारिक महाव्रत क्यों कहे जाते हैं–साक्षात महाव्रत क्यों नहीं कहे जाते। इसका उत्तर देते हुये आचार्य कहते हैं—

पंचानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः।
कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महताम् ॥२९॥

'हिंसादिक पांचों पापों का मन वचन काय और कृत कारित अनुमोदना से त्याग करने को महाव्रत कहते हैं'। अर्थात् दिग्व्रतधारी के प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय मौजूद है और उसने पांचों पापों का एक देश से त्याग किया है अतः उसके वे परिणाम साक्षात् महाव्रत नहीं कहे जा सकते।

जिन आचार्योंने दिग्व्रतका वर्णन किया है उन्होंने मर्यादाके बाहर दिग्व्रतीको महाव्रती माना है। आचार्य समन्तभद्र ने उसका स्पष्टीकरण करते हुये दिग्व्रतीके प्रत्याख्यानावरण कषायकी मन्दताको स्वीकार किया है पंडित आशाधर जी ने भी स्वामी जी की बात को दुहराते हुये उनके मत को स्वीकार किया है। जैसा कि इस श्लोक से प्रगट है—

दिग्व्रतोद्रिक्तवृत्तघ्नकषायोदयमान्द्यतः।
महाव्रतायतेऽलक्ष्यमोहे गेहिन्यणुव्रतम् ॥४॥

'दिग्व्रत की वजह से वृत्तघ्न—प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय मन्द हो जाता है अतः अलक्ष्य मोह गृहस्थ के अणुव्रत महाव्रत के तुल्य जान पड़ते हैं'। अतः श्रावकाचारों के आधार पर यह बात प्रमाणित होती है कि अणुव्रती श्रावक के द्वितीय प्रतिमा में प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता रहती है। ऐसी दशा में कोठारी जीका लिखना—"प्रत्याख्यानावरण की मन्दोदयता पांचवें गुणस्थान वाले जीव के परिणाम छठे गुणस्थान जब उन्मुख होते हैं तब संभवनीय है, अर्थात् संक्रमण अवस्था में होते हैं। यह अवस्था पंचम गुणस्थान की नहीं है क्योंकि उसके संयतासंयत भाव छूट जाते हैं और सकल संयम के ओर दौड़ते हैं। इसी तरह यह अवस्था छठे गुणस्थान की भी नहीं है क्योंकि यहाँ पर प्रत्याख्यानावरण कषाय का क्षय, उपशम या क्षयोपशम नहीं है अपितु उदयमें मंदता है अर्थात् उदय मौजूद है ऐसी अवस्था की उत्पादक ही प्रत्याख्यानावरण कषाय की मन्दता है"—बिलकुल असमंजस जान पड़ता है। कोठारी जी प्रत्याख्यानावरण कषायकी मन्दताको न तो पाँचवें गुणस्थान में रखना चाहते हैं और न छठे गुणस्थानमें, किन्तु रखना अवश्य चाहते हैं इस लिये आपने उसे 'त्रिशंकु' बना डाला है।

प्रत्याख्यानावरणकषाय महाव्रतको रोकती है एतावता पंचम गुणस्थान में उसका मन्दोदय भी न हो सके, यह कथन युक्तिसंगत नहीं जान पड़ा। शास्त्र विरुद्ध तो है ही।

अतः जब पंचमगुणस्थान में प्रत्याख्यानावरण कषाय का मन्दोदय रह सकता है तब पं० जयचन्द्र जी का लिखना–'प्रत्याख्यानावरण कषाय की मंदता ही देशसंयम का निरतिचार पालन करने में सहायक है—कभी भी असंगत नहीं कहा जा सकता। कोठारी जी को अपने निर्णय पर पुनः एकबार विचार करना चाहिये।

तीसरे प्रश्न का उत्तर

तीसरे प्रश्न का उत्तर देते हुए कोठारी जी ने दो स्थानों पर परस्पर विरुद्ध बातें लिखी हैं। एक स्थान पर आप लिखते हैं। "जब अप्रत्याख्यानावरण कषाय

का संपूर्ण अभाव होता है तब देशसंयम का संपूर्णतया पालन हो सकता है अन्यथा नहीं, क्योंकि इस का उदय ही देशसंयम का घातक है"। दूसरे स्थान पर लिखते हैं—"ग्यारह प्रतिमा धारीमें अप्रत्याख्यानावरण कषाय का कुछ अंश जरूर रहता है इसका संपूर्ण अभाव और प्रत्याख्यानावरण की मन्दता हो उसको मुनि बनाता है"। मालूम होता है ग्यारहवीं प्रतिमा में कोठारी जी पूर्ण देशसंयम नहीं मानते हैं अतः वे बतलाने की कृपा करें कि उनके मत मे पूर्ण देशसंयम कहां पर होता है? किन्तु उनसे हमारा एक नम्र निवेदन है वह यह कि, प्रत्याख्यानावरण की मन्दता की तरह पूर्ण- देश संयमको भी 'त्रिशंकु' बना डालने की कृपा न करें तो बेहतर है। आशा है निष्पक्ष तत्व चर्चा के प्रेमी श्री कोठारी जी पं० जयचन्द्रजी के प्रति वीतरागता का ही परिचय देंगे—विजिगीषुता का नहीं। चतुर्थ प्रश्न के उत्तर में मुझे कुछ भी नहीं कहना है।

अंधेरे घर का दीपक

(ले०—श्रीयुत वीरेन्द्रकुमार जी जैन)

अब मनोहर की अवस्था लगभग १२ वर्ष की थी। माता के प्रेम से बचपन ही में वञ्चित हो चुका था पिता को भी रुग्ण शय्या पर पड़े २ बहुत दिन हो गये थे—उनकी रोगशय्या मृत्युशय्यामें परिवर्तित होने वाली थी। आसपास घरके और बाहर के कुछ मनुष्य बैठे हुये थे।

व्रजलाल की आंखें डबडबा आईं उनके सिराहने से उठकर सामने आ खड़ा हुआ और दोनों हाथ जोड़ कर बोलना चाहता था मगर दुखके बोझ से उसका गला दबा जा रहा था—किन्तु जैसे तैसे यह दो शब्द उनके मुँह से निकल पड़े—"मेरे लिये क्या आज्ञा है"

रोगी ने आंखें खोल कर उसकी तरफ देखा और कहा "मनोहर"

मनोहर एक तरफ उनकी बगल में कुछ दूर चुपचाप बैठा था—व्रजलाल ने हाथ पकड़ कर उन के सामने ला खड़ा किया। मनोहर फूट फूट कर रोने लगा और आंखें मलता हुआ उनके समीप बैठ गया।

पिता ने हाथ फेरते हुये कहा—"बेटा मनोहर तू"—और व्रजलाल की तरफ एक अन्तिम दृष्टि डाली और सदा के लिये इस असार संसार से आंखें मींच लीं।

× × ×

व्रजलाल एक सीधे साधे ग्रामीण मनुष्य थे बड़े भाई की मौजूदगी में किसी दूसरे शहरका धनोपार्जन करने के लिये, दर्शन भी नहीं किया था—आर्थिक अवस्था खराब हो चुकी थी—इतने पढ़े लिखे भी नहीं थे जो विदेश में आकर कोई काम धंधा करते अस्तु। परिवार का निर्वाह करनेके लिये इन्होंने अपने ही गांव में छोटी सी दुकान करना ही निश्चित किया

छोटी लड़की रजनी ही एक मात्र इनकी सन्तान थी इस कारण मनोहर को वे खूब प्यार करते थे यही उनके भविष्य का सहारा था।

ब्रजलाल की स्त्री भी मनोहर को खूब लाड़ प्यार करती थी। उसकी मां के मरने के बाद इसी ने उसे पाल पोस कर बड़ा किया था। मनोहर भी उसको अपनी मां समझता था। वह भी मनोहर के लिये सर्वस्व निछावर करने को तैयार थी।

मनोहरने अपने गुणोंसे चाचा को तो प्रसन्न कर ही रक्खा था किन्तु आस पास के पड़ोसी तथा मुहल्ले वाले भी इसके गुणों पर मुग्ध थे। सबने उसके चाचा को इसे पढ़ाने को सलाह दी।

निदान मनोहर अपने गाँव की एक पाठशाला में पढ़ता रहा और थोड़े ही दिनों में उस पाठशाला की सम्पूर्ण पढ़ाई समाप्त कर चुका। पढ़ने लिखने में इसकी विशेष इच्छा थी। यह देख कर ब्रजलाल ने आर्थिक अवस्था खराब होते हुये भी उसको आगे शिक्षा देना ही उचित समझा और पास ही किसी शहर के बड़े स्कूल में दाखिल कर दिया।

× + ×

कुछ वर्ष के बाद मनोहर दसवीं क्लास पास कर चुका था। क्लास में फर्स्ट रहने के कारण सभी मास्टर उससे प्रसन्न थे। थोड़े ही दिनों में इसको वज़ीफे की मंजूरी आगई। मनोहर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे कालेज ज्वाइन करने की धुन सवार हो गई।

मनोहर बड़ा समझदार लड़का था। घर की दशा से खूब परिचित था अपने दिल में बड़ी २ आशाओं के पुल बाँध रक्खे थे वज़ीफे की मंजूरी भी हो गई थी मगर कालेज का खर्चा इतने ही से किस प्रकार चल सकता था। घर की सहायताने उसे बिलकुल निराश कर दिया था। फिर भी उसने साहस न छोड़ा और एक पत्र द्वारा अपने विचार चाचाको प्रकट ही कर दिये।

ब्रजलाल को पत्र मिला किसी से पढ़ा कर उन्होंने जेब में रख लिया और सोच विचार में डूब गये। घर आये और चारपाई पर लेट गये ख्याल किया मगर कुछ निर्णय न कर सके।

"क्यों पड़े २ क्या सोच रहे हो? उनकी स्त्री ने पूछा।

ब्रजलाल ने उत्तर दिया —"मनोहर की चिट्ठी आई है"।

स्त्री बड़ी प्रसन्न हुई और बोली— "कब आयेगा, क्या कुछ लिखा है"?

ब्रजलाल—आने जाने की तो कुछ नहीं लिखी। राजी खुशी है, दसवीं में पास हो गया है और आगे अभी पढ़ना ही चाहता है।

इन्हीं दो शब्दों पर वह कैसे विश्वास कर लेती जबकि पत्रको पढ़ कर खुद न सुन लेती। झटपट किसी लड़के को बुलाया और उसको पढ़ने के लिये दे दिया। पत्र में लिखा था—

पूज्य चाचा जी सादर प्रणाम!

आपकी कृपा से कुशलपूर्वक हूँ और इम्तिहान में पास हो गया हूँ इससे मेरे वज़ीफे की भी मंजूरी हो गई है जो १०) रु० प्रतिमास मुझे मिला करेगा। मेरा अगाड़ी पढ़ने का विचार है किन्तु बिना आप की २-४ रुपये की सहायता के इतने में पढ़ाई का खर्च चलना कठिन है इससे कृपा करके लिखिये कि मेरा विचार ठीक है या नहीं, बिना आपकी आज्ञा के मैं

ऐसा करना अनुचित समझता हूं। आशा है शीघ्र उत्तर देंगे चाची को मेरा प्रणाम तथा रजनीको प्यार

आपका प्रिय पुत्र
मनोहरलाल

आपने क्या सोचा? उनकी स्त्री ने पूछा
ब्रजलाल- मैं ने क्या सोचा घर की हालत तू जानती ही है? साथ ही मनोहर की अवस्था भी काफी हो चुकी है?

इसकी शादी की मुझे सबसे ज्यादा चिन्ता है-दो चार सौ रुपये इस काम में लगा दूँगा तो निश्चिन्त हो जाऊंगा अगर पढ़ाई में लगाता हूं तो फिर विवाह के लिये मुझे न मालूम किस २ के सामने हाथ पसारना पड़ेगा, कर्ज़ करना होगा?

स्त्री—आप इसकी चिन्ता न करें, मनोहर के लिये कर्ज़ तो क्या अगर मुझे अपने जेवर भी बेचने पड़ें तो कोई आपत्ति नहीं परन्तु मनोहर का दिल दुखाना मुझे नहीं अच्छा लगता—ईश्वर उनको बनाये रक्खे जेवर आदि सब हो जायगा। यही हमारे बुढ़ापे का सुख है, भविष्य का सहारा है, मेरी आँखों का तारा है और अंधेरे घर का दीपक है।

× × ×

मनोहर ने कालेज ज्वाइन करली है और बड़ी प्रसन्नता से अपनी पढ़ाई में तत्पर है इसी समय के अन्दर उसका विवाह एक ग्रामीण कन्या से हो गया है। युवती की अवस्था लगभग १६ साल की है और इसका पिता खेतीबाड़ी का काम करता है, छोटे गाँव जमीन्दारा परिवार में पर्दे की इतनी कड़ाई नहीं है जिससे गुलाब को थोड़ा बहुत खेती के काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है इसी से गुलाब को न तो कपड़े पहिनने की तमीज़ है न शाही चाल ढाल, न वह नाज़ नखरे उसे छूतक गये हैं। इस कारण मनोहर उससे बातचीत करते घृणा करते हैं किन्तु गुलाब के गुलाब से खिले हुए चेहरे को देख २ कर उस पर भौंरे की भांति मंडराते रहते हैं।

कुछ ही दिनों में मनोहर का हृष्टपुष्ट शरीर क्षीण होगया है पीत मुख पर वह यौवन की लालिमा लात मार चुकी है पढ़ाई से सिर चक्कर खाता है उनकी फुर्ती विदा हो चुकी है' आँखें गढ़े में जा गिरी हैं। आंखों पर पत्थर की लालटैन लादे हुये कुछ दिनों तक पढ़ते रहे अन्त में कोर्स को तिलाञ्जलि दे घर आ बैठे हैं।

कालेज में रहने के कारण उनका जीवन परिवर्तन हो चुका था। ग्राम्य जीवन से घृणा करते थे आखिर यों हाथ पर हाथ रक्खे कब तक बैठे रह सकते थे। इधर उधर बहुत से हाथ पाँव फैलाये मगर कहीं से सन्तोषजनक आशा न हुई कुछ दिन तक और बैठे रहे अन्त में रेलवे डिपार्टमेन्ट की किसी मामूली सी पोस्ट पर नियुक्त हो गये और उनको किसी शहर में जाना पड़ा मनोहर अभी अकेले ही हैं। शहर के किसी मुहल्ले में एक बड़ा सा मकान है। सामने एक सीधी सड़क दूर तक चली जा रही है। आस पास अच्छे २ धनिकों के मकान हैं। इस मकान में तीन मंजिलें हैं। नीचे की दो मंजिलों में दूसरे बाबू लोग रहते हैं ऊपर की मंजिल में एक रसोई है, सामने सहन है, एक कमरा है, जिसमें बाबू मनोहर लाल निवास करते हैं। मकानका किराया करीब ५ रु० है, पांच सात रुपये भोजन में खर्च हो जाते हैं दो चार

रुपये हाथ खर्च के उड़ जाते हैं बाकी जो ५ —१० बचते हैं वे अपने चाचा के पास भेज देते हैं।

मनोहर लाल को यहां रहते दो महीने के करीब हो चले थे काफी जान पहचान हो गई थी। दो चार निमूछे लड़के इन से घनिष्ठ प्रेम रखते थे।

एक दिन संध्या का समय था। मनोहर चार बजे तक काम भुगता कर आगये थे कपड़े उतार रहे थे गर्मी का मौसम था। इतने में आंधी ने आसमान आ घेरा। दो चार बूंदे पड़ीं फिर एका एक बन्द हो गईं किन्तु बादल आसमान पर उमड़े हुए थे। नीचे से आवाज आई "मि० मनोहर" मनोहर ने खिड़की में से झांक कर देखा–उसके मित्र थे, उसके सिनेमा साथी थे। फालतू टाइम को हंसी मजाक में गुजारने वाले थे—'कम आन' मनोहर ने कहा

दो चार में से एकने झट पट पतलून में से हाथ निकाला और घड़ी को देख कर बोला "मास्टर ओह हाफ पास्ट सेवन'।

मनोहर नीचे आया और सब को ऊपर ले गया कमरे से चारपाई निकाल कर ला बिछाई और बैठने का इशारा किया।

चारपाई देख कर एक ने नाक सिकोड़ते हुए कहा–"यू डेसी मैन डोन्ट नो हाऊ टू सर्व सिविलाइजड" दूसरे ने कहा—कोई टेबुल और चेयर तो कम से कम जरूर ही रहनी चाहिये ?

मनोहर ने कहा अभी दो महीने तो आये हुये हैं धीरे २ तीसरे ने फर्माया नो लाइफ, विदाउट वाइफ कितना गन्दा कमरा है दो चार सिनेमा पिक्चर तो तो लटका दो ?

चौथेने चारपाई पर चित लेटे २ बादलों की तरफ देख कर एक की सी कही "काली घटा को देखकर तबियत मचल गई" "महफिल में शराब न हो तो चाय ही सही" दूसरे ने तुक मिलाई।

अभी लीजिये जनाब चाय हुई आती है। सिनेमा का तो टाईम गुजर ही चुका—यह कहकर मनोहर ने झट पट चाय तैयार की और सब को एक २ प्याला भर दिया आप भी उनके साथ बैठ कर पीने लगे—चाय के नशे में खूब दूर दूर की सूझी और यह तय हो कर मीटिंग बर्खास्त हुई कि अब की बार तुम्हारे हाथ की चाय नहीं पीयेंगे। तुम्हें अपनी · · ·····

× × ×

मनोहरलाल अब तक इस बात के खिलाफ थे। उन्हों ने अपनी स्त्री को चाची की सेवा के लिये घर पर ही छोड़ रक्खा था और जो कुछ अपने खर्च से बचा पाते थे उससे चाचा की सहायता करते थे मगर अब यार दोस्तों की महफल में चाय का रंग ही बदल गया था अब उनको दूसरी दुनियां के हवा के झोंके लग चुके थे। चाचा और चाची के पालन पोषण का बदला अधिक दिनों तक चुकाना वे अच्छा नहीं समझते थे क्योंकि उनको अपने मित्रों की भी तो बात मानना जरूरी था।

मौका पाकर कोई बहाना बनाया और गुलाब को अपने पास बुला भेजा।

शहर में आकर गुलाब ने विचित्र २ चीजें देखीं जो उसको अपने गांव में पहले स्वप्न में भी देखनेकी आशा न थी। तरह तरह की साड़ियां रंगबिरंगे क्रिप फैन्सी जूते—रेशमी रूमाल तो उसके नित्य प्रति नये फैशन थे। अब वह शहर की पतली दुबली रंगबिरंगी किसी भी तितली से कम न थी।

दिनों दिन यह पेन्टिंग बढ़ती गई। मनोहरलाल ने भी अपने कमरे को सजाने में कोई कसर नहीं रख छोड़ी। कसर रहती भी कैसे? चाय का ज़माना था लिप्टन टी की भरमार थी नित नये डब्बे चायके लाते थे और इसके लिये फिर कमरे में पांच सात सिनेमा स्टार की तस्वीरें तो अत्यन्त ही आवश्यक हैं। एक टेबुल दो चार कुरसियां कमरे की अलहदा ही शोभा बढ़ा रही थीं। एक कोने में शीशे का पलंग उस पर गद्दे गद्देपर दुलाई दुलाईपर एक महीन सी चादर बिछी हुई थी जिस पर पूर्ण रूप से खिले हुये गुलाबके फूल पड़े हुये तो और भी गज़ब ढा रहे थे—मनोहर की इस छोटी सी मन रूपी वाटिका में गुलाब ही गुलाब खिले हुये थे।

कहाँ तो चाचाका ग्राम्य जीवन और कहां मनोहर का यह आराम—आखिर कब तक याद रखता कब तक खर्च देता। चाची का बदला वह कबतक चुकाता—भूलना पड़ता और भूल ही गया यहां तक कि पत्र का जवाब देना भी उसके लिये व्यर्थ का झंझट हो गया।

मनोहर ने अपने खर्च में कमी न करके पिता की सहायता देना बन्द कर दिया और उसके बदले अपनी वाटिका की रखवाली के लिये एक ५ रुपये माहवारी का लड़का नौकर रख लिया जो इधर उधर भाग कर बाजार का काम कर दिया करता, लड़की को खिला लिया करता, तथा शाम को जब दोनों सैर के लिये जाते तो लड़की को अपनी गोदी में लिये उनके साथ २ रहता।

× × ×

बहू के आने के बाद मनोहर का कोई पत्र नहीं आया—उनकी स्त्री ने ब्रजलाल से पूछा।

ब्रजलाल ने कहा—मैं कई दफा पत्र डाल चुका हूँ मगर एक का भी जवाब नहीं आया पता नहीं क्या कारण है, राजी खुशी तो है? कहीं कोई तकलीफ तो नहीं हो गई है?

स्त्री—शहर का रहना है बहू नई २ गई है पता नहीं मन लगा होगा या नहीं? तुम खुद जा कर ही देख आवो कुछ दिनों तक ब्रजलाल ने और प्रतीक्षा की मगर कोई पत्र नहीं मिला पितृप्रेम ने उन्हें व्याकुल कर दिया। मनोहर को देखने की बार २ उत्कंठा होने लगी। अन्त में एक दिन बिस्तर बाँध कर चल ही तो पड़े। रात के १० बजे गाड़ी ने स्टेशन पर उतारा। ब्रजलाल कुली को साथ लेकर शहर में गया बिजली की सड़कों पर रोशनी देख कर बहुत चकरा गया। मकान की पूछताछ की और ढूंढता २ ठीक जगह जा पहुँचा। बाहर से आवाज दी मगर कोई उत्तर न मिला। थोड़ी देर के बाद एक लड़का आया और कहने लगा—तुम कौन हो? ब्रजलाल ने अपना परिचय दिया। लड़का उनको ऊपर लेगया और कमरे का दरवाजा खोल कर बिठला दिया।

कमरे को देख कर ब्रजलाल की आंखें चकाचौंध हो गईं। भीतरको नजर डाली तस्वीरों की भरमार देख कर दंग रह गये। एक तरफ कोने में नजर दौड़ाई तो पलंग पर लड़की को अकेली सोते देखा दिल में आया इसको उठालूं मगर रोने लगी तो फिर मुश्किल है। जगाऊं तो कैसे जगाऊं मैं इसका नाम तक तो जानता भी नहीं? क्या कह कर पुकारूं।

चुप रहना ही अच्छा समझा। कमरे से बाहर निकले और नौकर से पूछा—मनोहर कहां गया है? नौकर बड़ा खिलाड़ी था—उसने हंस कर जवाब

दिया—"बाबू जी पैसेन्जर ट्रेन को लेकर गये हैं ?

ब्रजलाल उसकी बात न समझ सका। मगर दिल में ख्याल किया कि रेलपर तो जरूर नौकर है, ट्रेन गाड़ी को कहते हैं कहीं गाड़ी लेकर ही गया होगा। फिर उसने पूछा कि क्या रातकी ड्यूटी है ? नौकर—जी नहीं रात की तो ड्यूटी नहीं वैसे तो हर रोज शाम को जब ठंड हो जाती है ६ बजे आया करते हैं किन्तु आज कुछ लेट हो गये थे इस लिये ट्रेन नाराज हुई आखिर ६॥ बजे उसको लेकर आना ही पड़ा।

पहिले तो ब्रजलाल ने विश्वास किया किन्तु "ट्रेन नाराज हुई" यह कुछ गड़बड़ समझ कर चुप होकर ही लेट रहे।

करीब डेढ बजे का समय था, सिनेमा खतम हो चुका था। आगे २ मनोहरलाल बैट्री जलाये हुये सामने से आरहे थे। घड़ी ने अलार्म दिया, नौकर उठ खड़ा हुआ और कहने लगा—"बाबू जी खड़े होजाइये ट्रेन आरही है"।

ब्रजलाल ने खड़े होकर सामने सड़क पर नजर डाली तो रोशनी नजर आई। पहिले तो विस्मित हुये मगर ज्यों २ समीप आये तो मनोहर को पहचाना और प्रेमसे यकदम बोल उठे—यही तो मेरे अंधेरे घरका दीपक मनोहर है।

दीपक ? दीपक तो अपने नीचे अंधेरा रखता है और आसपास के अन्धकार को दूर करता है। किन्तु यह पैसेन्जर ट्रेनका इन्जिन है जिसकी लाइट मे देखिये चौतरफा अंधेरा है किन्तु अपना रास्ता साफ है—यह कह कर नौकर हंसता हुआ दरवाजा खोलने नीचे चला गया।

अपूर्ण

आर्यसमाज की डबलगप्पाष्टक और श्रीराम जी

(ले०—श्रीयुत पं० सुरेशचन्द्र जैन न्यायतीर्थ)

तीसरी गप्प गप्प लेखक के शब्दों में निम्न प्रकार है—

पृथ्वी के बीच विद्वानों के यज्ञस्थल में वेगवान घोड़े की लीद से तुम को पृथिव्यादि के ज्ञान के लिये तुम को तत्वबोध के उत्तम अवयव के लिये तुम को यज्ञ के उत्तम अवयव की सिद्धि के लिये तुम को सम्यक तपाता हूँ" यजुर्वेद दयानन्द भाष्य अ० ३७ मं० ६

"यह गप्प बड़ी फायदेमन्द रही, जिस ज्ञान प्राप्ति के लिये लोग अपना जीवन और धन दौलत बर्बाद कर देते हैं वह ज्ञान नाचीज घोड़े की लीद से सब किसी को मिल जावेगा। हमारी समझ से सबसे पहले इस अमूल्य नुसखे से आर्य समाज को फायदा उठाना चाहिये। उसको अपने सारे गुरुकुल, कालेज स्कूल आदि बन्द करके पढ़ने वाले विद्यार्थियों को घोड़े की लीद से तपा देना चाहिये जिससे कि लाखों रुपये मासिक खर्च की बचत होजावे। शायद हमारे

आर्यसमाजी भाई इस अमृतबूटी को हर एक आर्य मन्दिर में जमा रखने होंगे। स्वामी जी ने अपने भाष्य में ईश्वरीय ज्ञान का अपूर्व नमूना रख दिया है एक लीद से ही सारा बेड़ा पार।

श्री राम जी आर्य ने आर्य मित्र अंक ४१ वर्ष ३७ में इसकी समालोचना की है। आपका कहना है कि यजुर्वेद का उपर्युक्त वक्तव्य एक वैज्ञानिक कथन है इसको गप्प बतलाना ठीक नहीं। अपनी इस बात के समर्थन में आपने कुछ उद्धरण उपस्थित किये हैं जिन के द्वारा इस बात के प्रमाणित करने की चेष्टा की है कि घोड़े की लीद भी कई रोगों को निवारणार्थ उपयोग में लाई जा सकती है।

विचार शील पाठक आपके उद्धरणों की यथार्थता एवं यजुर्वेद के उपर्युक्त वक्तव्य के साथ उसके सम्बन्ध को भली भांति विचार सकें अतः यहां हम उनको आर्य महाशय के ही शब्दों में उपस्थित करदेना उपयुक्त समझते हैं—

"(१) चरक संहिता अर्शरोग प्रकरण पढ़ें। चिकित्सा स्थान अध्याय १४ श्लोक ४२ व ४८ में घोडे की लीद से तपाने से अर्शरोग का निवारण होना लिखा है।

(२) प्रोफेसर कविराज पं० धर्मानन्दजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य लिखित तथा चांद कार्यालय इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित "उपयोगी चिकित्सा" नामी पुस्तक के मूत्ररोग प्रकरण में पृष्ठ १४६ पर मूत्राघात व मूत्रकृच्छ्र रोग की औषधि नं० ४ में लिखा है कि "घोड़े की लीद को खूब पका कर रोगी के पेडू और बस्ति स्थान में सेक करने से पेशाब खुल आता है"।

(३) सुप्रसिद्ध वैद्यवर बा० हरिदास जी ने अपने चिकित्सा चन्द्रोदय नामी ग्रन्थ के भाग ५ पृष्ठ ५७६ पर स्त्री रोगों की औषधियों के प्रकरण में लिखा है कि "घोड़े की लीद और कबूतर की बीट पानी में घोल कर स्त्री को पिलाने से बालक हो जाता है"।

(४) रस तंत्र बसिद्धप्रयोगसंग्रह नामी पुस्तक में पृष्ठ ५७६ पर डब्बा रोग की दवा में लिखते हैं" घोड़े की लीद के रस को गुन गुना करके पिला देने से डब्बा रोग दूर हो जाता है।

(५) इसी पुस्तक में पृष्ठ ४६६ पर घोड़े की सूखी लीद २० तोला सरसों का तेल और एक तोला सज्जी खार मिला कर गर्म करके आधे घन्टे तक सेक करके वही औषधि बांध देने से लचक की सूजन एवं उसकी असह्य पीड़ा शान्त होती है। अब एक दो अपना अनुभव लिखता हूँ आप परीक्षा कर सकते हैं।

(६) यदि किसी के प्लेग की गांठ निकली हो तो उस पर घोड़े की लीद को गर्म करके सेक दो तथा उसे ही बांध देने से गांठ बैठ जाती है।

(७) घोड़े की लीद की धूनी स्त्री की योनि में देने से प्रसव तुरन्त होता है।

(८) सन्निपात के रोगियों को घोड़े की लीद की धूनी देने से शीघ्र लाभ होता हुआ देखागया है।

(९) इसी प्रकार बायगोले के दर्द वाले रोगी की नाभि पर घोड़े की लीद का सेक बड़ा लाभ कारी है।

विज्ञ पाठक गप्प के समालोचक के भाव एवं उसकी सत्यता को भली भाँति परीक्षा कर सकें अतः हमने आपके आवश्यक वक्तव्य को ज्यों का त्यों उद्धृत कर दिया है?

अब विचारणीय यह है कि क्या समालोचक का कथन ठीक है? यदि हां तो उसका प्रस्तुत गप्प पर

क्या प्रभाव है ? यहां पर इस बात का निर्णय नहीं करना कि घोड़े की लीद से कोई भी रोग दूर किया जा सकता है या नहीं किन्तु यहाँ तो इस बात को देखना है कि क्या उसके और वह भी लीद मात्र के नहीं किन्तु वेगवान घोड़े की लीद को तपाने से पृथिव्यादिक का ज्ञान या तत्वबोध के उत्तम अवयव अथवा यज्ञ सिद्धि के उत्तम अवयवों की भी सिद्धि हो सकती है या नहीं ?

गप्प समालोचक ने इस बात के समर्थन में जितनी भी बातें उपस्थित की है उनमें से एक भी ऐसी नहीं है जिसको विवादस्थ विषय से सम्बन्धित भी स्वीकार किया जा सके। समालोचक के वक्तव्य में तो यही बतलाया गया है कि लीद के सेकने से बवासीर, पेडू पर बांधने से पेशाब का खुलना, पानी में घोल कर पिलाने से बालक का होना, गुनगुना कर के पिलाने से डब्बा रोग का दूर होना, बांधने और सेकने से लक्वक का नाश, सेकने से प्लेग को आराम, स्त्र का योनिमे धूनी से शीघ्र प्रसव, और धूनी से सन्निपात और वायगोले को आराम हो जाता है। इन में कोई भी ऐसी बात नहीं जिसके आधार से उपर्युक्त विवादस्थ विषयों पर प्रकाश डाला जासके। अतः समालोचक का यह कथन ठीक है या नहीं इस का निर्णय किये बिना यह बात स्पष्ट है कि समालोचक का प्रस्तुत कथन गप्प को अगप्प प्रमाणित करने में बिलकुल असमर्थ है। प्रस्तुत कथन के आधार से यजुर्वेद अ० ३७ मंत्र ६ की बात विवादस्थ बात को किसी भी प्रकार वैज्ञानिक स्वीकार नहीं किया जा जा सकता।

यजुर्वेद अ० ३७ मंत्र ६ की विवादस्थ बात गप्प है इसको आर्यसमाज के प्रसिद्ध सन्यासी स्वामी कर्मानन्द जी भी स्वीकार कर चुके हैं। इसही गप्प का जवाब देते हुवे स्वामी जी लिखते हैं १—

"श्रीमान् जी लीद से ज्ञान के लिये तपाना न तो वेद में लिखा है और न श्री स्वामीजी ने अपने भाष्यमें लिखा है यह आर्य समाज की परोपकारिणी के स्वयं सिद्ध ठेकेदारों की कृपा का फल है। इन ही की लापरवाही से आज लोगों को वेदों को बदनाम करने का अवसर मिलता है और आर्यसमाज को उत्तर देना पड़ता है। यदि इन आर्यसभ्यों के हृदयों में जरा भी वेदों का प्रेम होता अथवा जरा भी महर्षि के प्रति श्रद्धा होती तो आज वेद और महर्षि का स्थान कहीं ऊंचा होता। इस प्रकार की और भी भारी भूलें श्री स्वामी जी के ग्रन्थोंमें यह लोग नित्य ही करते जाते हैं ······इस से भी बढ़ कर दुःख इस बात का है कि यह प्रन्न एक संस्कृतज्ञ करते हैं। ··· पंडित जी को उचित था कि वे मूल संस्कृत भाष्य देख लेते पुनः आपको स्वयं ज्ञान हो जाता कि यह छापे की भूल है"

स्वामी जी के इन वाक्यों से पाठक समझ गये होंगे कि विवादस्थ बात को आप भी असंभव मानते हैं। अतः यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि श्रीराम जी का कथन निराधार एवं मिथ्या है।

यहां हम स्वामी कर्मानन्द जी के वक्तव्य के सम्बन्ध में भी दो शब्द लिख देना अनुपयोगी नहीं समझते आपने अपनी दो ही बातें बतलाई हैं। एक यह कि यह छापे की भूल है और दूसरी यह कि संस्कृत भाष्य में यह बात नहीं मिलती। पहिली बात के सम्बन्ध में

१ आर्यसमाजियों को गप्पाष्टक का उत्तर पेज १६

हम स्वामी जी से सहमत नहीं है। प्रेस में मात्रा आदि की अशुद्धि होती है या वाक्य के किसी शब्द को एक स्थान की अपेक्षा दूसरे स्थान पर रक्खा जा सकता है। यजुर्वेद के विवादस्थ भाष्य में इन दोनों ही बातों का अभाव है। यह तो शुद्ध एवं क्रमबद्ध वाक्य है। प्रेस के कार्यकर्ता वैसा ही छापते हैं। इनका कार्य स्वतंत्र भाष्यका निर्माण करना या वाक्य बनाना नहीं है अतः वाक्य परिवर्तन की तो प्रेस में संभावना ही नहीं है अतः विवादस्थ वाक्यों का प्रेस की असावधानी का फल नहीं कहा जा सकता।

मूल वेद मंत्र में "शकना" शब्द है। स्वामी दयानन्द जी ने अपने वाक्यों में इसका "लीद" अर्थ किया है। 'अश्वशकृत' शब्द का अर्थ 'लीद' ही है इस में विवाद को रंचमात्र भी स्थान नहीं है। स्वामी दयानन्द जी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पठन पाठन विषय नाम के अध्याय में इस बात को स्वयं भी स्पष्ट किया है १। स्वामी जी लिखते हैं कि उच्चारण के परिवर्तन से अर्थ परिवर्तन हो जाया करता है इसके समर्थन में उन्होंने शब्दों के दो युगल उपस्थित किये हैं। पहले युगल में "सकल और शकल" है। इसही प्रकार दूसरे युगल में सकृत और शकृत है। शकृत के अर्थ को लिखते हुए स्वामी जी ने लिखा है "मंत्रार्थ वाची" इसके भावाभावान्तरमें तो यह बातें बिलकुल स्पष्ट हैं। ऐसी परिस्थिति में यह भी कहना मिथ्या है कि विवादस्थ हिन्दी वाक्य स्वामी दयानन्द के संस्कृत भाष्य के अनुसार नहीं है। या यह किसी की निजी कल्पना है। उपर्युक्त वाक्यों के आधार से यही कहना होगा कि विवादस्थ गप्प के सम्बन्ध में स्वामी कर्मानन्द जी का समाधान भी मिथ्या है। अतः यह बात निसन्देह है कि विवादस्थ वाक्य गप्प ही है उसको वैज्ञानिक बात ख्याल करना एक कल्पना मात्र है।

१ ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका पेज ३१४—५

अकलंकदेव

ले० श्रीयुत पं० गुणभद्रजी जैन

बीत गये हैं दिवस अनेकों तो भी चरित तुम्हारा,
बरसा देता है कानों में अमृत की शुभ धारा।
है सार्थक 'अकलंकदेव' यह नाम तुम्हारा जैसा,
कर दिखलाया सकल विश्व को तुमने वैसा वैसा ॥१॥
असिधारासम कठिन शील को निज जीवन भर पाला,
फहरा दी जिन धर्म पताका कर सद्धर्म उजाला।
हुआ और बलिदान धर्म—हित बन्धु प्राणसम प्यारा,
तो भी पथसे हुआ न विचलित अचलित चित्त तुम्हारा॥२॥
प्रलय काल की प्रबल पवन से भूधर उड़ जाता है,
अचल मेरु का नाम मात्र भी हिल पाता है।
जब अधर्म के प्रबलताप से तापित थी यह धरिणी
पीड़ित थी ज्यों ग्रीष्म काल में तृषा व्यथित हो हरिणी।३।
सत्य मार्ग से अधिक दूर थे जब जग भर के प्राणी,
स्वार्थ हित धार्मिक व्याख्या भी करते थे मनमानी।
तब तुमने निज प्रबल शक्ति से सत्यमार्ग दिखलाया,
अपने उत्तम सुख निधान को तब जगभर ने पाया।४।
करके करुणा दृष्टि दयानिधि अब तो यहाँ पधारो,
डूब रहे हैं दुःख सिन्धु में उससे हमें उतारो।
एक बार तुमको लख कर जग फिर पावन हो जावे,
माया, मत्सर, मोह, द्रोह, भी अंतर से खो जावे।५।

विरोध परिहार

(ले० श्रीयुत पं० राजेन्द्रकुमारजी जैन न्यायतीर्थ)

आक्षेप १६—"ज्ञान में न्यूनाधिकता किस बात की है? लंबाई चौड़ाई आदि की क्या? ज्ञान का कुछ स्वरूप है या नहीं? आखिर ज्ञान का कार्य या उसका स्वरूप क्या है? **यह बात निर्विवाद है कि पदार्थ का जानना उसका स्वरूप और कार्य है।** इस लिये उसमें जो अंश कल्पना होगी वह पदार्थ को जानने की दृष्टि से नहीं तो कि दृष्टि से होगी? जब आप अंशों को ज्ञानस्वरूप मानते हैं और ज्ञान का स्वरूप पदार्थों को जानना ही है तब पदार्थों को जानने की दृष्टि से ही वह कल्पना कहलाई। नहीं तो ज्ञान में न्यूनाधिकता किस बात की और उसको सिद्ध करने का हेतु क्या है?

मान लो कि ज्ञान की तरतमता का पदार्थ के जानने के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है तो इस तरतमता से या सर्वोत्कृष्टता से फायदा क्या है? क्योंकि उसकी सर्वोत्कृष्टता पदार्थों को जानने की दृष्टि से तो है नहीं तब सर्वोत्कृष्टता सिद्ध हो जाने पर भी यह कैसे सिद्ध होगा कि वह सब को जानता है। आपके मतानुसार तो वह किसी को भी न जान कर सर्वोत्कृष्ट ज्ञानी हो जायगा। इस प्रकार तो आप मेरा पूरा समर्थन कर रहे हैं।"

समाधान १६—आक्षेपक ने ज्ञान के कार्य और उसके स्वभाव के समझने में भूल की है। उनका लिखना कि "पदार्थ का जानना उसका (ज्ञान का) स्वरूप और कार्य है" ठीक नहीं। अब आप इसके साथ यह भी लिख देते हैं कि ऐसी मान्यता एक निर्विवाद बात है तब तो फिर यह एक आश्चर्य की बात हो जाती है। क्या ही अच्छा हो कि आक्षेपक उन प्रमाणों को जिन के बल पर आप ऐसा समझ रहे हैं लिख देते? ऐसी परिस्थिति में आपके इस कथन पर और भी विशेष विचार किया जा सकता था।

किसी का स्वरूप और उसका कार्य प्रायः ये भिन्न २ ही बातें हैं। अग्नि को ही लीजियेगा। यह जलाती है फिर भी यह उसका स्वभाव नहीं किन्तु कार्य है। इसका स्वभाव तो वह है जिसके बलपर यह ऐसा करती है। यही बात ज्ञान के सम्बन्ध में है। पदार्थ को जानना ज्ञान का कार्य है तथा वह जिसके बलपर ऐसा करता है वह उसका स्वभाव है। पदार्थ के जानने को ही यदि ज्ञान का स्वभाव माना जायगा तब तो यह कहना पड़ेगा कि क्षायोपशमिक ज्ञान उस की लब्धि अवस्था में स्वभाव विहीन रहता है क्योंकि इस समय वह पदार्थ को नहीं जानता। किसी को स्वभाव विहीन कहना या उसकी सत्ता का निषेध करना इन में केवल शब्द भेद है। अर्थ की दृष्टि से तो ये दोनों ही बातें एक रूप हैं। पहिले किसीका अभाव मानकर फिर उसहीका भाव मानना क्या असदुत्पाद को स्वीकार करना नहीं है और यह बात बिलकुल तर्क विरुद्ध है।

इससे प्रगट है कि ज्ञान का कार्य और उसके स्वभाव में अन्तर है। जहां कि पदार्थ को जानना उसका कार्य है वहीं उस ही को जान सकना उसका स्वभाव है। यह वही चीज है जिसके द्वारा कि वह पदार्थों को जानता है।

अग्नि जलाती है या ऐसा करना उसका कार्य है सब ही अग्नियां जलाती हैं या ऐसा करना उनका कार्य है फिर भी इस में विभिन्नता है। इससे यहां स्वीकार करना पड़ता है कि जिससे अग्नि जलाती है इन सब अग्नियों की उस बात में विभिन्नता है यदि ऐसा न होता तो जलाने में विभिन्नता न होती। इस ही को अग्नि का स्वभाव भेद कह सकते हैं क्योंकि अग्नि की वह बात ही तो जिससे यह जलाती है उस का स्वभाव है। इससे प्रगट है कि स्वभाव की अवस्था की विभिन्नता स्वभाववान के कार्य भेद में कारक है न कि कार्य विभिन्नता स्वभाव विभिन्नता की। साधन ज्ञापक होता है अतः कार्य विभिन्नता से तो केवल स्वभाव भेद का पता ही लगाया जा सकता है।

यही बात ज्ञान के सम्बन्ध में है। पदार्थों को जानना उसका कार्य है अतः इससे तो केवल उसके स्वभाव भेद को जाना जा सकता है न कि यह कि उसका कारक है। अतः पदार्थों को ज्ञान जानता है किन्तु फिर भी उस में अंशकल्पना उसके ही अविभागी अंशों से की जायगी। तथा इसही से उसमें न्यूनाधिकता है। इस ही को यदि दूसरे शब्दों में कहना चाहें तो यों कह सकते हैं कि ज्ञान की अवस्था भेद से उसके पदार्थों के जानने में भेद है न कि पदार्थों के जानने के भेद से उसके स्वभाव या उस की अवस्था में भेद है या यहां उसका स्वभाव भेद है आक्षेपक ने ज्ञान के कार्य को और उसके स्वभाव के समझने का प्रयत्न किया होता तो उनसे ऐसी त्रुटि न हुई होती।

यहां तो उन्होंने ज्ञापक को कारक बना दिया है या ज्ञापक और कारक के पारस्परिक भेद को ही भुला दिया है। इससे प्रगट है कि ज्ञान में अंशकल्पना पदार्थों को जानने की दृष्टि से नहीं है। किन्तु गुणांशों की दृष्टि से है। यदि ज्ञान में अंशकल्पना पदार्थों के जानने की ही दृष्टि से होती तब तो इसको पदार्थों के जानने के साथ ही समाप्त हो जाना चाहिये था किन्तु ऐसा है नहीं। केवल ज्ञान में त्रैकालिक ज्ञेयों से भी अविभागी अंशों को अधिक माना है इससे यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। ज्ञान की सर्वोत्कृष्टता पदार्थों के जानने की दृष्टि से नहीं है किन्तु उसके स्वभाव की दृष्टि से है फिर पदार्थों के जानने से उसका अनुमान तो किया ही जाता है। पदार्थों के जानने रूप क्रिया को हम ज्ञान का स्वरूप नहीं मानते किन्तु कार्य मानते हैं इसका यह तात्पर्य नहीं है कि प्रस्तुत विषय में हम उसको बिलकुल अनुपयोगी मानते हैं।

पर्वतीय अग्नि और धूम परस्पर भिन्न हैं अग्नि धूम का कारक है न कि धूम अग्नि का, फिरभी धूम बिलकुल अनुपयोगी नहीं है। अपने जनक अग्नि का तो बोध वह भी कराता ही है अतः उसको अग्नि का ज्ञापक स्वीकार करने में आपत्ति की बात हो नहीं है यही बात ज्ञान के स्वभाव और उसके कार्य के सम्बन्ध में है।

आक्षेपक के मन्तव्य का समर्थन हमारी मान्यता से हो रहा है या वह प्रकारान्तर से हमारी मान्यता का समर्थन कर रहे है इसका स्पष्टीकरण हम अपने मूल लेख में कर चुके है। इससे प्रगट है कि आक्षेपक के आक्षेप का उत्तरार्ध भी निःसार है।

—आक्षेप १७–ज्ञान प्रकाशक हो या कारक परन्तु

एक समय में वह एक जगह संलग्न होकर दूसरी जगह संलग्न नहीं हो सकता। यह बात न प्रकाश में है न आकाश के प्रदेश में। एक परमाणु के स्थान पर दूसरा परमाणु एक ही समय में नहीं रह सकता यह विज्ञान का मुख्य सिद्धान्त है इसलिये आकाश प्रदेश का दृष्टान्त तो बिलकुल व्यर्थ है। प्रकाश का दृष्टान्त भी व्यर्थ है क्योंकि जो प्रकाश इस समय सौ घन गज को प्रकाशित कर रहा है वही उस समय दूसरे सौ गज घनको प्रकाशित नहीं कर सकता। जिस समय वह दूसरे सौ घन गज को घेरेगा उस समय पहले सौ घन गज को छोड़ देगा। यदि ऐसा न होता तो सौ घनगजको प्रकाशित करने वाले दीपक से ही सैकड़ों योजनों प्रकाश कर लिया जाता। इस लिये प्रकाश का दृष्टान्त भी व्यर्थ है। इससे लड्डुओं का दृष्टान्त भी खंडित हो जाता है, क्योंकि दस दस नम्बर के लड्डू जितने क्षेत्र को प्रकाशित कर सकते हैं उतने क्षेत्र को सौ नम्बर का एक लड्डू प्रकाशित नहीं कर सकता।

समाधान १७—हमारे निम्नलिखित वाक्यों के सम्बन्ध में उपर्युक्त वाक्य लिखे गये हैं—"ज्ञान प्रकाशक है न कि कारक। यदि ज्ञान बाह्य पदार्थों का कारक होता तो तब तो जिस शक्ति के द्वारा किन्हीं विशेष कार्यों को किया जाता उसही शक्ति के द्वारा अन्य कार्य नहीं हो सकते थे। दृष्टान्त में कुम्भकार को लिया जा सकता है। कुम्भकार जिस समय जिस शक्तिसे घट का निर्माण करता है उससमय उसकी वह शक्ति उसही कार्य में संलग्न रहती। उस समय उसके द्वारा अन्य वैसे कार्यों का होना संभव नहीं है किन्तु प्रकाशक के सम्बन्ध में यह बात घटित नहीं होती। प्रकाशक जिस पदार्थ का प्रकाश करता है उस में ही उसकी शक्ति संलग्न नहीं रहती। अतः वह उसही समय वैसे ही अन्य कार्यों का भी प्रकाश कर सकता है प्रकाशक के लिये तो योग्य स्थान में प्रकाश योग्य पदार्थों का आना ही आवश्यक है। जब वह वहाँ आ जाता है प्रकाश उसको प्रकाशित कर देता है। यदि कोई दो पदार्थ अपनी स्थूलता के कारण एक स्थानमें नहीं आ सकते तो यह प्रकाश का दोष नहीं यह तो उनकी स्थूलता का दोष है। इससे यह नहीं कहा जा सकता कि प्रकाश में उनको प्रकाशित करने की योग्यता नहीं है। जिस प्रकार आकाश का एक प्रदेश एक परमाणु की स्थिति में भी अन्य परमाणुओं को भी स्थान दे सकता है उस ही प्रकार आकाश का एक क्षेत्र एक स्कंध की उपस्थिति में अन्यों को भी .... इससे स्पष्ट है कि एक ज्ञान जिस पदार्थ का प्रकाश करता है वह वैसे ही अन्य पदार्थों का भी कर सकता है उसको इस कार्य के लिये किसी अन्य शक्ति की आवश्यकता नहीं है।

हमारे इस वक्तव्य से पाठक समझ गये होंगे कि विचारणीय बात यह नहीं थी कि एक प्रकाश एक ही समय में दो स्थानों को भी प्रकाशित कर सकता है किन्तु यह थी कि जिस शक्ति से वह एक चीज को प्रकाशित करता है वैसे ही अन्य वस्तु के प्रकाशन के लिये भी उसको किसी भिन्न योग्यता की जरूरत नहीं है। इसके विपक्ष में दरबारीलाल जी को यह सिद्ध करना था कि कारक की भांति प्रकाशक को भी भिन्न २ योग्यता की आवश्यकता है। इसके सम्बन्ध में आप मौन रहे हैं। अब रह जाती है एक प्रदेश में अनेक परमाणुओं के ठहरने की बात। इसके

प्रतिकूल आपने वैज्ञानिक मान्यता का उल्लेख किया है। वर्तमान विज्ञान अभी तक परमाणु के सम्बन्ध में साक्षात अन्वेषण नहीं कर सका है। उसने अब तक इसके सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा है वह केवल कल्पना के आधार पर। ऐसी परिस्थिति में प्रथम तो उसके कथन को किसी भी तरह प्रमाण कोटि में ही उपस्थित नहीं किया जा सकता। दूसरे परमाणु के स्थान आदि के सम्बन्ध में तो वह भी मौन है क्या ही अच्छा होता कि आक्षेपक उस वैज्ञानिक मान्यता के आधार को भी उपस्थित कर देते जिस से उसकी मान्यता की भी परीक्षा की जा सकती। अत: वैज्ञानिक मान्यता का सहारा लेकर एक स्थान में दो परमाणुओं की सत्ताका निराकरण तो बिलकुल नि:सार है। हम ही आक्षेपक से पूछते हैं कि आप आत्मा को मानते हैं अब आप ही बतलावें आकाश के एक ही स्थान पर आपकी आत्मा के साथ ही पुद्गल स्कन्ध भी कैसे ठहर जाते हैं? यदि आत्मा आकाश और पुद्गलस्कधों की एक स्थान पर स्थिति संभव है और यह उनकी सूक्ष्मता के कारण: तो फिर अनेक परमाणुओं में यह बात क्यों संभव नहीं है? समानता और एकता के अन्तर को हम इस ही लेख माला के पहिले लेखों में स्पष्ट कर चुके हैं। हम समानता में एकता वाली बात घटित नहीं करते किन्तु समानता वाली ही रखकर विचार कर रहे हैं। आक्षेपक के कथन में और हमारे कथन में इतना अन्तर है कि आक्षेपक का कहना तो यह है कि हमने माना है कि हम उन सब पदार्थों को जान सकते हैं जिनको कोई न कोई आत्मा जानता या जान सकता है किन्तु भिन्न २ काल में। एक समय में तो एक ही आत्मा के द्वारा जाने गये या जाने जा सकने वाले को जान सकेंगे यहां पर हमारा यह कहना है कि हम इन सब को एक ही समय जान सकते हैं अपनी इस मान्यता का समर्थन हम अपने लेखों में पहले कर चुके हैं उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि आक्षेपक इस बात के समर्थन में असफल रहे हैं कि कारक की तरह प्रकाशक को भी वैसे ही अनेक पदार्थों के प्रकाश के लिये भिन्न २ योग्यता की जरूरत है अत: कहना ही पड़ता है कि आक्षेपक का प्रस्तुत आक्षेपक भी मिथ्या है।

—※—

'तन्दुरुस्ती हज़ार न्यामत है'

अगर शरीर तन्दुरुस्त रहे, तो मन भी चंगा रहता है। बीमारी आ जाने पर उसे दूर करने की तरकीबें करने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि बीमारी के पास फटकने की नौबत ही न आने दे। स्वास्थ्य-सम्बन्धी कुछ सरल नियम ऐसे हैं, जिनका पालन करके हम लोग बहुत-कुछ बीमारी को दूर रख सकते हैं। यहाँ पर स्वास्थ्य-सम्बन्धी कुछ ऐसे ही नियम दिये जाते हैं।

हवा

हमारा जीवन हवापर निर्भर है। बिना भोजनके आदमी दो-दो महीने तक जीवित रह सकता है, बिना पानी के भी आदमी कई दिन तक ज़िन्दा रहता है, किन्तु बिना हवा के कुछ मिनट भी ज़िन्दा रहना असम्भव है। अतः स्वास्थ्य केलिये सबसे ज़रूरी चीज़ है ताज़ी साफ़ हवा।

खिड़की खुली रखिये,

जिस मकान में आप रहते हों, अथवा जिस कमरे में बैठ कर आप काम करते हों, उसकी सारी खिड़कियां हर वक्त खुली रखनी चाहिये, ताकि उस में ताज़ी और साफ़ हवा बराबर आती रहे। अगर नीचे-ऊपर खिड़कियां हों, तो दोनों ही खिड़कियां को खुला रखिये। अगर बहुत ज़ोर की हवा है, तो खिड़की के आगे एक लकड़ी का तख्ता रख लीजिये, ताकि हवा उसके ऊपर से होकर गुज़रे, सीधी न लगे; लेकिन खिड़की मत बन्द कीजिये। जाड़ों में तो इस तरहका तख्ता सदा इस्तेमाल करना चाहिये।

जो लोग खुली हवा में रहने के आदी हैं उन्हें बन्द हवा में रहने वालों की अपेक्षा सर्दी-जुकाम भी कम होता है। बहती हवा बन्द हवा की अपेक्षा कहीं ज़्यादा अच्छी है। घर की हवा साफ़ रखने के लिये घर में धुआँ अथवा गर्द न जमने दीजिये।

आपके मकान में चाहे कितनी भी हवा आती हो, वह उतनी अच्छी नहीं होगी, जितनी खुले मैदान की हवा। इसलिये जहाँ तक सम्भव हो, दिन का कुछ-न-कुछ भाग घरके बाहर, खुले स्थानमें, बिताना चाहिये और कुछ नहीं, तो कम-से-कम बड़े सबेरे खुले मैदान में टहलने के लिये ही जाना चाहिये। बाहर यदि हवा नम अथवा कोहरे वाली हो तो भी वह घर की बासी हवा से अधिक स्वास्थ्यप्रद होती है।

सोने वाला कमरा भी हवादार होना चाहिये। मनुष्य अपनी ज़िन्दगी का कम-से-कम एकतिहाई भाग चारपाई पर काटता है, इसलिये सोने के कमरे में ताज़ी हवा का आना बहुत ज़रूरी है। शयनालय की तमाम खिड़कियाँ खुली रखिये। यदि आप रात-भर ताज़ी हवा में साँस लेकर सोयेंगे, तो आपकी सारी थकावट दूर हो जायगी और सबेरे उठकर आप अधिक काम कर सकेंगे। सम्भव हो, तो बाहर सोइये। हाँ, रातमें ओढ़ने के लिये काफ़ी कपड़े रख लीजिये। सोनेके लिये कड़ा बिस्तर अच्छा होता है।

हवा के साथ-साथ घरों में धूप का आना भी बहुत ज़रूरी है। धूप में रोग के कीटाणुओं के मारने की भी अद्भुत शक्ति है। खिड़की के काँच से छनकर आनेवाली धूप उतनी लाभदायक नहीं होती, जितनी खुली हवा की धूप।

कपड़े ढीले पहनिये

शरीर में हवा लगती रहे, इसलिये कपड़े ढीले पहनने चाहिये। चुस्त कपड़ोंसे हवा शरीर तक नहीं पहुंचती। ऐसे बुने हुये कपड़े अच्छे हैं, जिनमें हवा प्रवेश कर सके।

भोजन

भोजन तरह-तरहका करना अच्छा है। भोजन हमारे शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है :-

(१) शक्ति-प्रदान—भोजन ही के द्वारा हमें वह शक्ति मिलती है, जिसके सहारे हम परिश्रम करते हैं। भोजन ही हमारे शरीर में गर्मी लाता है। वैसे तो सभी प्रकार का भोजन शक्ति देता है; किंतु अपेक्षाकृत सबसे अधिक शक्ति देनेवाले पदार्थ घी, मक्खन मलाई हैं। शक्ति देनेमें दूसरा नम्बर शक्कर रोटी, चावल आदिका है। कम शक्ति देनेवाली चीजोंमें हरी शाक-भाजियाँ और फल-फलहरी आदि हैं, किंतु कुछ अन्य कारणोंसे शाक-सब्जी तथा फलों का खाना बहुत जरूरी है। विभिन्न पदार्थोंसे मिलनेवाली शक्ति परिमाण में बड़ा अन्तर होता है। उदाहरण के लिये, एक छटांक मक्खन आध सेर तरबूजकी अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति देता है। कठोर शारीरिक परिश्रम करने वालों को शक्ति देने वाले भोजन की अधिक आवश्यकता है, दिमागी काम करने वाले को कम।

(२) शरीर निर्माण—हमारे शरीर के अवयव बराबर छीजते रहते हैं, और उनके स्थान में नये अवयव बनते रहते हैं। शरीर निर्माण करने वाले खाद्यों में दूध, दाल आदि पदार्थ हैं।

(३) रोगों से रक्षा—दूध, हरी शाक सब्जी, पालक, नारंगी आदि हमें रोगों का सामना करने की शक्ति देते हैं।

(४) सफाई—फल फलहरी, कुछ तरकारियाँ, चोकर आदि पदार्थ हमारी अंतड़ियों की सफाई करते हैं।

दूधका हर रूप में व्यवहार कीजिये

बहुत से लोग परिमाण से बहुत काफी खा कर भी भूखों मरते हैं, क्योंकि उनका भोजन ऐसा नहीं होता, जिससे शरीर की सारी आवश्यकतायें पूरी हो सकें। दूध का इस्तेमाल प्रत्येक रूपमें (दूध, दही, मक्खन, घी आदि) काफी करना चाहिये। फलों और तरकारियोंके इस्तेमाल में कभी कंजूसी न करनी चाहिये। तरकारी बनानेमें पानी जितना कम डालिये उतना अच्छा है। कुछ हरी तरकारियाँ—जैसे खीरा ककड़ी, सलाद आदि—कच्ची ही खानी चाहिये। यहाँ कुछ खाद्य पदार्थों की सूची दी जाती है।

(१) शरीर निर्माणकारी तथा रोग निवारक खाद्य दूध, दही, मठा, आदि।

(२) केवल शरीर निर्माणकारी खाद्य–मिंगीवाली चीजें (जैसे मूँगफली, बादाम आदि) दाल आदि

(३) शरीर निर्माणकारी तथा शक्ति प्रदायक खाद्य-जौ, गेहूँ, चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि।

(४) केवल शक्तिदायक खाद्य—शक्कर, मक्खन मलाई आदि।

(५) शक्तिदायक शाक सब्जी—सेम, मटर, शकरकन्द आदि तथा अन्य फसली तरकारियां।

(६) सफाई करने वाले तथा रोग निवारक खाद्य-करमकल्ला, कासनी आदि।

(७) सफाई करने वाले फल—सेब, नारंगी, नीबू तथा फसल के अन्य फल।

खाना बहुत ज्यादा न खाना चाहिये। कोई ज्यादा मेहनत का काम करने के पहले अथवा बहुत

थक चुकने के बाद ज़्यादा खाना अच्छा नहीं दोनों जून के भोजन के बीच में कई बार खाना भी ठीक नहीं है। यदि भूख मालूम हो, तो एक गिलास पानी पी लेना अच्छा है। खाने में जल्दी न करनी चाहिये, धीरे धीरे चबा कर खाने में स्वाद भी अधिक मिलता है और पचता भी जल्दी है। कड़े खाद्य, जिन्हें ज़्यादा चबाना पड़े, अच्छे होते हैं। हंसी खुशी प्रसन्न चित्त से भोजन करना केवल रुचिकर ही नहीं वरन लाभदायक भी है। भोजन के बाद पानी एक ही सांस में न पीना चाहिये। पानी हो या दूध, कोई भी पेय पदार्थ, एक ही सांस में न पीकर घूंट २ कर के ही पीना अच्छा है। प्रत्येक व्यक्ति को दिन भर में चार से आठ गिलास तक पानी पीना चाहिये।

स्वास्थ्यपर हमारी आदतों का भी बड़ा असर पड़ता है। यह बहुत ज़रूरी बात है कि हमें प्रति दिन एक या दोबार निश्चित समय पर शौच जाना चाहिये नियमित भोजन और उचित परिश्रम इसके लिये बड़े उपयोगी हैं। कब्ज़ रहना न जाने कितनी बीमारियों की जड़ है। पेट की सफाई अत्यावश्यक है। इसके लिये यदि कोई व्यक्ति एक या दो बार एक निश्चित समय पर शौच जाने की आदत डाले, तो कुछ दिन में शरीर की भीतरी प्रणाली ऐसी नियमित हो जाती है कि ठीक समय आते ही कोठा अपने आप साफ हो जाता है। खाद्य पदार्थों में कुछ फल जैसे नारंगी पपीता आदि—छोकर, तेल मक्खन तरकारियां, मोटे नाज—चना आदि— शर्बत तथा फलोंके रस पेट साफ करने में सहायक होते हैं। बहुतोंको सबेरे उठते ही एक गिलास पानी पी लेनेसे ही साफ पाखाना हो जाता है। पेट साफ करने के लिये किसी तरहकी रेचक औषधियोंका प्रयोग करना हानिकारक है।

अन्य आदतोंमें हमें बैठते चलते वक्त शरीरको सीधा रखना चाहिये। झुककर बैठनेसे शरीर टेढ़ा पड़ता है और कब्ज़की शिकायत पैदा होती है; लेकिन सीधे बैठने अथवा चलनेमें अकड़ना न चाहिये। काम करते समय जिन अंगों से काम न ले रहे हों, उन्हें जहां तक हो, ढीला रखना चाहिये।

किसी तरहकी नशीली या ज़हरीली चीजें-तम्बाकू भांग, शराब गांजा, अफीम आदि—तन्दुरुस्तीको नुकसान पहुंचाती हैं। दवाओंका ज़्यादा इस्तेमाल भी हानिकारक है। हां, किसी भी तरह का तकलीफ होने पर फौरन डाक्टरी सलाह लेनी चाहिये। रोग बढ़ने तक इन्तज़ार न करना चाहिये।

केवल काम करना और किसी तरहके खेल-कूद और मनोरंजनसे दूर रहना दिमागको बुद्धू बनाना है। स्वस्थ रहनेके लिये हमें परिश्रमके साथ-साथ मनोरंजन और आराम भी करना चाहिये। जो कठोर शारीरिक परिश्रम करते हैं, उनके लिये किताब पढ़ना या बैठकर मन-बहलावका कोई खेल खेलना काफी है; लेकिन जो दफ्तर में बैठकर दिमागी काम करते हैं, उन्हें मनोरंजनके लिये बाहर किसी तरहके ऐसे खेल खेलना चाहिये, जिसमें कुछ शारीरिक व्यायाम भी हो। शारीरिक व्यायाम से दिमाग काम की बात भूल जाता है और उसे आराम मिलता है। व्यायाम तभी तक करना चाहिये, जब तक वह वह खेल-कूद ही मालूम हो। जब वह काम की भांति दूभर-सा जान पड़े, तभी बन्द करदेना चाहिये।

(बाकी २८ वें पेज पर)

बोलो मत कार्य करते जाओ

(ले०—श्रीयुत पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ)

प्रकृति के सारे कार्य मूक ही होते हैं, वह अपने किसी भी कार्य की घोषण नहीं करती। कार्य पूर्ण होकर बाहर आने से ही दुनियां को उसका परिचय मिलता है। संसारके अगणित विशाल पदार्थ बिना किसी प्रकार की घोषणा किये ही बन गये हैं। मनुष्य जैसे सर्वश्रेष्ठ प्राणी के निर्माण के पहले भी प्रकृति की ओर से किसी तरह की घोषणा नहीं होती ऐसा जान पड़ता है मानो वह केवल अपना काम करना जानती है कहना नहीं। वह कहां बैठ कर क्या करती है यह कोई नहीं देख सकता। हां उसके कार्यों को देख कर संसार उसकी चेष्टाओं का अनुमान करता है। प्रकृति के इस एकान्त मौन का ही यह फल है कि ऐसा विचित्र अज्ञेय और अपरिचित विश्व उसके द्वारा बना है। मौन की यह महत्ता कुछ कम नहीं है। क्या प्रकृति के कार्य करने का यह प्रकार हमें कुछ शिक्षा नहीं देता क्या इसके द्वारा हमें कुछ इस बात का संकेत प्राप्त नहीं होता कि "बोलो मत, कार्य करते जावो।"

यह सर्व विदित है कि कोई भी ठोस महान और उपयोगी कार्य बिना मौन के नहीं किया जा सकता यही कारण है कि भारतीय धर्मशास्त्रों ने मौन को बहुत महत्व प्रदान किया है। मुक्ति निर्वाण और स्वर्ग भी मौन से ही प्राप्त होते हैं। जैन शास्त्रों के अनुसार पूर्ण मौन के पहले कोई तीर्थंकर नहीं हो सकता। इसी लिये तीर्थंकर देव तप धारण करने के बाद केवल ज्ञान के पहले कुछ भी नहीं बोलते। यह तो सब कोई जानते हैं कि जो बादल अधिक गरजता है वह कभी नहीं बरसता। पर थोड़ा सा भी शब्द न करने वाला मेघ एका एक कहीं से आ कर इतना अधिक बरसता है कि अपनी ठंडी २ जलधाराओं के द्वारा वसुधा तलके संतप्त हृदय को शीतल कर संसार को प्रसन्न कर देता है। इस तरह चारों ओर से विधाता के प्रत्येक निर्माण में हमें इस बात की सूचना प्राप्त होती है कि कार्य करो पर बोलो मत। नहीं तो तुम्हारा कार्य अधूरा रह जायगा वह अस्थायी और अनुपयोगी होगा। अथवा बिलकुल भी न हो सकेगा।

यदि मनुष्य इस संकेत की ओर कुछ भी ध्यान देता तो वह अपने कार्यों को अधिक सफलता के साथ पूरा कर सकता और उसके जीवन से संसार को अकथनीय सहायता प्राप्त होती पर दुःख है कि वह इस अत्यावश्यक सूचना की ओर बहुत कम ध्यान देता है। वह स्वयं जिस ढंग से बना है उस ढंग से वह अपने कार्यों को नहीं करता। उसके निर्माण कर्ता में जितनी अधिक महत्ता और गंभीरता थी उसके निर्मित मनुष्यमें उतनी ही अधिक हीनता और तुच्छता है। यह मनुष्य इतना ओछा तुच्छ और अनुदार है कि कार्य पीछे करता है और उसकी घोषणा पहले, दान देने के पहले ही दान का शोर मचा देता है। वह बिना कुछ दिये ही दातापन का यश लूटना चाहता है। किसी का उपकार करने के पहले ही वह अपने महोपकारीपन की घोषणा

कर देता है। धार्मिक जपतप अनुष्ठान करने के सम्बन्ध में भी वह ऐसा करने में नहीं चूकता। वह करना कुछ नहीं चाहता पर सब ओर से अपनी प्रशंसा के गीत सुनना चाहता है। वह चारों ओर अपने कानों को लगा कर देखता है कि उसके लिये कहां से कैसी आवाजें आती हैं। वह ऐसी आवाजों के पीछे दौड़ता फिरता है जो उसके लिये कर्णप्रिय हो और अपना सारा जीवन अपने चिन्तित अचिन्तित कार्यों की घोषणा करने में व्यतीत कर देता है। यही कारण है कि वह स्वयं सदा अपूर्ण रहता है और कुछ भी नहीं कर सकता। यह मनुष्य की महान निर्बलता है और यह इसके उत्थान में सदा बाधक बनी रहती है। यह एक ऐसी कमजोरी है जो उसको किसी भी काम में सफलता प्राप्त नहीं होने देती।

मनुष्य सृष्टि के इतर प्राणियों की अपेक्षा सब से अधिक उन्नत और परिपूर्ण है। पर साथ ही यह भी कहना पड़ेगा कि उसमें नैतिक निर्बलताओं की भी कमी नहीं है वह सब से अधिक बड़ा तो इस लिये है कि वह चाहे तो अपने भविष्य को अत्यन्त सुन्दर और उज्वल बना सकता है। ऋषियों ने केवल इसी अपेक्षा से सर्व श्रेष्ठ माना है नहीं तो अनेक विषय में वह पशुओं से भी गया बीता है। उसको स्वकल्याण करने के बहुत अधिक साधन प्राप्त हैं। यदि वह उनका उपयोग कर अपना सुधार कर ले तो सच्चा मनुष्य है, नहीं तो वह भी एक तरह का पशु ही है। देवता भी इसीलिये मनुष्य होना चाहते हैं कि वे मनुष्य बन कर निः काम कर्म करते हुए अपने चरमोद्देश्य निर्वाण को प्राप्त हों। इसका मतलब यही है कि मनुष्य की महत्ता कर्तव्य से है न कि मनुष्य शरीर की प्राप्ति से।

इस महत्ता के रहस्य को समझ कर मनुष्य को प्रकृति के समान अपना कार्य गूँगे और बहरे बनकर करना चाहिये। वह अपने कार्यों के लिये किसी तरह की प्रशंसा न चाहे। वह दुनियाँ क्या कहती है इस का कुछ भी विचार न करे। अपने कार्यों को मुँह से कोई कुछ भी कहे इसका विचार करने की क्या आवश्यकता है। ध्यान रखने की बात केवल यह है कि हमारा कार्य सच्चा हो। प्रशंसा के मोलमें हमें अपने कार्यों को न बेच देना चाहिये। वह तो घृणित और अस्थायी वस्तु है। प्रायः उसकी उत्पत्ति चाटुकार चापलूसों के हृदय से होती है। ऐसी प्रशंसा हमें बहुत बार अपने सत्पथ से विचलित करदेती है। इसलिये मनुष्य का कर्तव्य है कि वह इस नानाविध कोलाहल पूर्ण संसार में अपने कानों को मूँद कर बैठे। नहीं तो वह कुछ भी न कर सकेगा। ऐसे ही वह बड़ी२ बातें भी न करे केवल कार्य करनेका ध्यान रखे। सच्चा मनुष्य वह है जो अपने कार्यों को वचनों से प्रकट नहीं करता। जिस समाज और राष्ट्र

(२६ वें पेज का शेषांश)

स्वास्थ्यके लिये पर्याप्त निद्रा बहुत जरूरी है। लेटने के पहले बेहतर है कि पन्द्रह मिनट तक बाहर खुली हवा में रहें। यदि नींद न आती हो, तो धीरे-धीरे गहरी सांस लेनी चाहिये। कुनकुने पानी से नहाने से अथवा एक गिलास गरम दूध पीने से भी अकसर नींद आने में सहायता मिलती है। इतना सोना या आराम करना जरूरी है कि दूसरे दिन उठनेपर आप अपनेको एकदम तरोताजा पायें।

नोट—यह लेख बहुत थोड़ी काट छांट के साथ विशाल भारत से उद्धृत किया है।

में ऐसे मनुष्यों की अधिकता होती है जो मौके बे-मौके बोलते बहुत हैं यानी बोलने में सब के आगे रहते हैं पर कार्य करने में सब के पीछे ऐसा समाज और राष्ट्र कभी आगे नहीं बढ़ सकता। जब हम यह सोचते हैं कि हम आगे क्यों नहीं बढ़ते उन्नतिकी दौड़ में हमारा स्थान सबसे पीछा क्यों है तब इसका एक ही जबाब हमारे ध्यान में आता है और वह यह है कि हम बोलते बहुत हैं पर करते कुछ नहीं। जैन समाज में तो यह रोग और भी अधिक फैला हुआ है। हमारे समाज में अनेकों सभायें समितियें मौजूद हैं। प्रति वर्ष हजारों रुपये खर्च कर उनके अधिवेशन भी किये जाते हैं, फिर भी जो कुरीतियां व रूढ़ियां पहले प्रचलित थीं वे अब भी उसी रूप में समाज का रक्त-शोषण कर उसको निर्जीव बना रही हैं। 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' वाली कहावत हमारे यहाँ पूर्ण रूप से चरितार्थ होती है।

हम जिन बुराइयों की खुले आम खुले दिल से निन्दा और समालोचना करते हैं समय पड़ने पर सबसे पहले हम ही उन के शिकार होते हैं। उस समय हम परिस्थितियों के निर्बल सहारेको पकड़कर बचना चाहते हैं और जनता की आंखों में धूल झोंकना चाहते हैं। पर वास्तविकता प्रकट हुए बिना कभी नहीं रहती। उस समय हमें अनुभव होता है कि कहना सरल है पर करना बहुत कठिन। जो मनुष्य अपने ही घोषित उद्देश्यों और मन्तव्यों का पालन नहीं करता दुनियाँ उस पर कभी विश्वास नहीं कर सकती इस लिये एक दिन ऐसा आता है कि हम व्यर्थ के शोर मचाने वाले लोगों का पतन हुए बिना नहीं रहता इसका खास कारण है और वह यह है कि हमें नेता बनना है लोगों को अपने अनुकूल बना कर उच्चासन पर बैठना है इसका सबसे सरल उपाय यह है कि हम सुधार के सम्बन्ध में बड़े २ भाषण दें और लम्बे २ लेख लिखें। बस इतने ही से काम बन जाता है जब हम किसी बुराई या सुधार के सम्बन्ध में बोलते हैं या लिखते हैं तो साधारण लोग हमारी ओर आकृष्ट हो जाते हैं। हमारी ऐसी स्थिति को देख कर जनता हमको महात्मा समझने लगती है। उसकी दृष्टि में हम एक सच्चे समाज सेवी और आदर्श त्यागी जंचने लगते हैं। हम अपने भाषणों और लेखों द्वारा जन साधारण को इस बात का पूरा प्रमाण दे देते हैं कि हम समाजगत बुराइयों का संहार करने में सब से आगे बढ़े हुए हैं। चाहे हमारी ऐसी स्थिति से हमें कोई ऐहिक लाभ हो जाय पर यह निश्चित है कि एक न एक दिन अन्त में हमारा पतन होता है। तथा हम अपने इस तरह के कार्यों से अपनी और समाज की बहुत बड़ी हानि कर डालते हैं।

वृद्ध विवाह कन्या विक्रय अनमेलविवाह, व्यर्थ-व्यय आदि विनाशकारी बुराइयों को नष्ट कर देने के लिये वर्षों से हमारे यहां प्रयत्न हो रहा है पर नतीजा कुछ नहीं। इसका कारण भी वही है जो हमने ऊपर लिखा है। सब से पहले अपने बढ़ कर बोलने वाले लोग ही समय आने पर सब से पीछे रह जाते हैं। साधारण जनता पर नेता बनने वालों की कमजो-रियों का बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। यह रोग हमारी समाज के धनिकों में भी बहुत फैला हुआ है। ये लोग धनी होने के कारण सभाओं के सभापति बन जाते हैं। वहाँ अनेक प्रस्तावों को अपने सामने सर्व

सम्मति से पास करा देते हैं और जब अपने घर पर कोई काम पड़ता है तो उनके अनुसार नहीं चलते। कुछ न कुछ बहाना बाजी बनाकर अपना काम निकाल लेते हैं। सच बात तो यह है वे समाज में कुछ भी कर सकते हैं उन्हें कहने वाला कोई नहीं, किसी सामाजिक नियम को तोड़ देना उनके लिये एक बहुत साधारण बात है। समालोचनाएं और निंदाएं इनका कुछ नहीं कर सकतीं। इनसे तो गरीब डर सकते हैं हमारे लिखनेका तात्पर्य यही है कि समाज के अगुवा धनी और विद्वान ही हो सकते हैं जब वे भी केवल बातें बनाते हैं करते धरते कुछ नहीं तो समाज का उत्थान कैसे हो सकता है। जो स्वयं सत्य पर नहीं चलता वह दूसरों का नेता कैसे हो सकता है। जब तक हम 'बोलो मत और काम करो' वाले सिद्धान्त पर नहीं चलेंगे तब तक हम उन्नत कभी नहीं हो सकते। बोलना और लिखना तो एक तरहका व्यापार है उस से कर्तव्य का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। हां जहां इनकी आवश्यकता हो इनका उपयोग अवश्य करना चाहिये पर यहीं तक अपने कर्तव्य की समाप्ति नहीं समझ लेनी चाहिये। यह एक नियम है जिसका पालन हमें हमेशा करने की आवश्यकता है।

विशेष समाचार

लाडनू में आदर्श कार्य

प्रातः स्मरणीय आचार्य १०८ श्री सूर्यसागर जी महाराज के सदुपदेश से लाडनू में जैन अजैन सब ही जनता में अपूर्व धर्म प्रभावना हो रही है। श्रावण वदी ४ को महाराज का उपदेश श्रावक धर्म पर बड़ा प्रभावशाली हुआ था। जिसके प्रभाव से अनेक श्रावक श्राविकाओं ने स्वाध्याय संयम और सामायिक आदि के करने का नियम लिया अभक्ष्यभक्षण आदि के त्याग किये। तथा स्त्री शिक्षा की आवश्यकता क्यों है यह बतलाते हुए महाराज श्री ने एककन्या पाठशाला की आवश्यकता बतलाई। इसके लिये श्रीमान राय साहिब जी तोलाराम जी (फार्म तोलाराम मथमल कलकत्ता) और श्रीमान सेठ भैरुदान जी पृथ्वीराज जी ने अपनी तरफ से कन्या पाठशाला संचालन करने की स्वीकारता दे दी। इस उदारता के लिये उक्त सेठ साहिब धन्यवादके पात्र है तथा श्रीमान सेठ रिद्धकरण जी फूलचन्द जी पांड्या ने भी दो वर्ष के लिये अपनी तरफ से संचालन करने के लिये कहा। पाठशाला का उद्घाटन जल्दी हो कर दिया जायगा। तथा आचार्य महाराज का निर्विघ्न आहार हो जाने के उपलक्ष में श्रीमान रायसाहिब सुखदेव जी तोलाराम जी ने रु० ११०१) धर्मार्थ प्रदान किये।

आवश्यकता

लाडनू में दिगम्बर जैन कन्या पाठशाला के लिये एकसुयोग्य अनुभवी और सच्चरित्र वयोवृद्धा दि० जैन अध्यापिका की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार दिया जावेगा ठहरने के लिये मकान मुफ्त में दिया जावेगा पत्र व्यवहार सेठ सुखदेव जी तोलाराम जी गंगवाल पो: लाडनू (मारवाड़) के पते से करें।

निवेदक

—सत्यंधर कुमार सेठी

उपहार

जैन दर्शन के ग्राहकों के लिये इस वर्ष एक अच्छा उपयोगी ग्रन्थ भेंट किया जायगा जिसके नाम की सूचना आगामी अङ्क में प्रकाशित की जावेगी।

इसके सिवाय स्याद्वादांक के समान इस वर्ष एक मनोहर विशेषांक भी प्रकाशित होगा।

स्वागत—श्रीमान पं० चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ जयपुर की संपादकी तथा श्री० सेठ तनसुखलाल जी पांड्या की प्रकाशकी में कलकत्ते से 'जैन बन्धु' नामक पाक्षिक पत्र प्रकाशित हो गया है। हृदय से स्वागत है।

अजितकुमार जैन

—ता० २३-७-३४ को कलकत्ता जैनसमाज की ओर से शोकसभा हुई जिसमें अंतिम समय मुनिपदधारी श्रीमान पं० पन्नालाल जी गोधा इंदौर और श्रीमान साहु जुगमंदरदास जी रईस नजीबाबाद के स्वर्गारोहण पर शोक प्रगट किया गया तथा उस विषय में दो प्रस्ताव पास किये गये।

निवेदक-रत्नलाल-मन्त्री जैन युवक समिति कलकत्ता

जैन दर्शन के लिये लेख 'श्रीमान पं० चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ मणिहारों का रास्ता जयपुर सिटी के पते से भेजने चाहियें।

देश-विदेश समाचार

—पटना के रायबहादुर विनोदबिहारी मजूमदार वकील जब अपनी पौत्री का विवाह संस्कार कर रहे थे उस समय उन्होंने तथा वहाँ पर उपस्थित अन्य लोगों ने उस लड़की के मरे हुये पिता को अपने दो साथियों के साथ सशरीर अपनी माँ को बुलाते हुये देखा।

—सुभाषचन्द्र बोस के बड़े भाई श्री शरतचन्द्र बोस बैरिस्टर जो साढ़े तीन वर्ष से नजरबन्द थे अभी २६ जुलाई को अपनी बीमार माता को देखने आये थे उसी समय उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

—रात्रि भोजन का फल—खेड़ी (सहारनपुर) में एक विवाह के समय दाल में रात को एक सांप गिर गया जो मालुम न हुआ जिससे उस दालको खाने वाले ७० बराती आदमी मर गये।

—२५ जुलाई को गिरीडी की जोकटियाबाद खान में धमाका हो गया जिस से ५३ आदमी मरे और ७६ घायलहुये। आग बुझा दी है।

—सुइयां, ब्लेड, काँच तथा जीवित जहरीला सांप खा जाने वाला एक हठ योगी शिकारपुर में एक सर्प पकड़ते हुये सर्प के काटने से मर गया।

—डा० भगवानदास एसेम्बली में विवर्ण विवाह बिल पेश करने वाले हैं जो कि सन् १९१८ में स्व० वी० जे० पटेल ने पेश किया था।

—एबीसीनिया और इटलीका परस्पर युद्ध निकट भविष्य में होना संभव है। फौज के भोजन के लिये गेहूं को ३-४ मास तक खरीद की पूछ ताछ बंबई से हो रही है। पता नहीं इटली पूछ रहा है या एबीसीनिया।

—तास गांव (सांगली) के श्री थारवोले लगातार १८ घंटे तक लाठी घुमाते रहे। इस तरह उन्होंने लाठी चलाने का रिकार्ड कायम कर दिया है।

—देहरादून एक्सप्रैस के इन्टरक्लास से नजीमाबाद के आगे एक ६-७ वर्ष की लड़की चलती गाड़ी से गिर गई किन्तु उसको कुछ चोट नहीं आई बच गई।

—लाहोरमें जो शहीदगंज गुरुद्वारेकी पासवाली मसजिद सिक्खों ने गिरा दी है सरकार ने दंगे के भय से उस तरफ लोगों का जाना रोक दिया है २०-२१ जुलाई को मुसलमानों की भारी भीड़ ने कोतवाली घेर ली जोकि समझाने बुझाने पर भी जब न हटी तब गोली चलाई गई जिसमें कुछ मुसलमान मरे और कुछ घायल हुये। मरे हुये लोगों की संख्या अखबार १० तक बतलाते हैं मुसलमान इससे बहुत ज्यादा बतलाते हैं। संख्या जांचने के लिये सरकार ने एक कमेटी बनाई है।

—मथुरा जंकशन स्टेशन पर रात के चार बजे सोते हुये एक पठान की नाक कुछ आदमियों ने काट ली और अंधेरे में भाग गये।

—हिन्दू महासभा ने गया के बौद्ध मंदिर के प्रबन्ध करनेके लिये ४ बौद्ध और ४ सनातनी मेम्बरों की एक कमेटी बनाई है।

—खुदाबख्श एक २६ वर्ष के भारतीय युवक ने लन्दनमें अपनी आँखें आटे की लोइयाँ उसके ऊपर रुई के मोटे गोले फिर दो दोहरी कपडे की पट्टियों से उसके ऊपर तीन तौलियों से बंद कराकर पुस्तक पढ़ी, मोटर चलाई तथा गोली से ठीक निशाना लगाकर अंग्रेजों को चकित कर दिया।

देश-विदेश समाचार

—[illegible] के [illegible] [illegible] [illegible] कृतिक जब अपनी [illegible] का विवाह संस्कार कर रहे थे उस समय उन्होंने तथा वहीं पर उपस्थित अन्य लोगों ने उस लड़की के मरे हुये पिता को अपने ६ साथियों के साथ सशरीर अपनी माँ को बुलाते हुये देखा।

—सुभाषचन्द्र बोस के बड़े भाई श्री शरतचन्द्र बोस बैरिस्टर जो साढ़े तीन वर्षसे नजरबन्द थे अभी २६ जुलाई को अपनी बीमार माता को देखने आये थे उसी समय उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

—रात्रि भोजन का फल—कोड़ी (सहारनपुर) में एक विवाह के समय दाल में रात को एक सांप गिर गया जो मालुम न हुआ जिससे उस दालको खाने वाले ७० बराती आदमी मर गये।

—२५ जुलाई को गिरीडो की ओकडियाबाद खान में धमाका हो गया जिस से ५३ आदमी मरे और ७६ घायलहुये। आग बुझा दी है।

—सुरमा, ब्लेड, कांच तथा जीवित जहरीला सांप खा जाने वाला एक हठ योगी शिकारपुर में एक सर्प पकड़ते हुये सर्प के काटने से मर गया।

—डा० भगवानदास पेम्बेलकी में सिवर्ण विवाह बिल पेश करने वाले हैं जो कि सन् १९१८ में स्व० वी० जे० पटेल ने पेश किया था।

—एबीसीनिया और इटलीका परस्पर युद्ध निकट भविष्य में होना संभव है। फौज के भोजन के लिये गेहूं को ३–४ मास तक खरीद की पूछ ताछ कंपनी से हो रही है। पता नहीं इटली पूछ रहा है या एबीसीनिया।

—[illegible] गांव (कांगड़ी) के श्री धारबोले लगातार [illegible] घंटे तक लाठी घुमाते रहे। इस तरह उन्होंने लाठी चलाने का रिकार्ड कायम कर दिया है।

—देहरादून एक्सप्रेस के इन्टरक्लास से नजीबाबाद के आगे एक ६–७ वर्ष की लड़की चलती गाड़ी से गिर गई किन्तु उसको कुछ चोट नहीं आई बच गई।

—लाहोरमें जो शहीदगंज गुरुद्वारेकी पासवाली मसजिद सिक्खों ने गिरा दी है सरकार ने दंगे के भय से उस तरफ लोगों का आना रोक दिया है २०–२१ जुलाई को मुसलमानों की भारी भीड़ ने कोतवाली घेर को जोकि समझाने बुझाने पर भी जब न हटी तब गोली चलाई गई जिसमें कुछ मुसलमान मरे और कुछ घायल हुये। मरे हुये लोगों की संख्या सरकार १० तक बतलाते है मुसलमान इनसे बहुत ज्यादा बतलाते हैं। संख्या जांचने के लिये सरकार ने एक कमेटी बनाई है।

—मथुरा जंक्शन स्टेशन पर रात के चार बजे सोते हुये एक पठान की नाक कुछ आदमियों ने काट ली और अंधेरे में भाग गये।

—हिन्दू महासभा ने गया के बौद्ध मंदिर के प्रबन्ध करनेके लिये ४ बौद्ध और ४ सनातनी मेम्बरों की एक कमेटी बनाई है।

—खुदाबख्श एक २१ वर्ष के भारतीय युवक ने लन्दनमें अपनी आँखें आटे की लोइयों उनके ऊपर रुई के मोटे गोलों फिर दो दोहरी कपड़े की पट्टियां और उसके ऊपर तीन तौलियों से बंद कराकर पुस्तक पढ़ी, मोटर चलाई तथा गोली से ठीक निशाना लगाकर अंग्रेजों को चकित कर दिया।

REGD .N. L. 3459.

श्री चम्पावती जैन पुस्तकमाला की उपयोगी

प्रचार योग्य पुस्तकें

यदि आप जैनधर्म का अध्ययन प्रचार और खंडनात्मक साहित्य का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो कृपया निम्न लिखित पुस्तकों को अवश्य खरीदिये—

१ जैनधर्म परिचय —जैनधर्म क्या है ? सरलतया इसमें समझाया गया है। पृ० सं० ५० मूल्य -)

२ जैनधर्म नास्तिक मत नहीं है ? — जैनधर्म को नास्तिक बतलाने वालों के प्रत्येक आक्षेप का उत्तर मि० हर्बर्ट वारन (लन्दन) ने बड़ी योग्यता पूर्वक इसमें दिया है। पृ० सं० ३० मू० -)

३ क्या आर्य समाजी वेदानुयायी हैं पृ० सं० ४४ मू० -)

४ वेद मीमांसा — पृ० सं० ६४ मू० =)

५ अहिन्सा पृ० सं० ५२ मू० -)॥

६ भगवान ऋषभदेव की उत्पत्ति असम्भव नहीं है। —आर्य समाज के 'ऋषभदेव की उत्पत्ति असम्भव है' ट्रैक्ट का उत्तर बड़ी योग्यता पूर्वक इसमें दिया गया है। पृ० सं० ८४ मू० ।)

७ वेद समालोचना पृ० सं० १२४ मू० ।=)

८ आर्य समाज की गप्पाष्टक मू०)॥

९ सत्यार्थ दर्पण— योग्यता के साथ सत्यार्थप्रकाश के १२ वें समुल्लास का युक्तियुक्त खण्डन इसमें किया गया है। पृ० सं० २५० मू० ॥)

१० आर्यसमाज के १००प्रश्नों का उत्तर। पृ० संख्या ६० मू० ≡)

११ वेद क्या भगवद्वाणी है ? —वेदों पर एक अजैन विद्वान का युक्तिपूर्ण विचार। „ -)

१२ आर्यसमाज की डबल गप्पाष्टक „ -)

१३ दिगम्बरत्व और दिगम्बर मुनि— जैनधर्म और दि० जैनमत का प्राचीन इतिहास प्रामाणिक सरल और ओजस्वि लेखनी के साथ विस्तृत रूप से लिखा गया है जिसमें रंगीन तथा सादे अनेक चित्र हैं। ऐसी पुस्तक जैन समाज में अभीतक प्रकाशित नहीं हुई। प्रत्येक पुस्तकालय और भण्डार में इसका होना अत्यंत उपयोगी है ऐसे अपूर्व सचित्र ऐतिहासिक ग्रन्थ की एक प्रति अवश्य मगावें। पृ० ३५० मू० १)

१४ आर्यसमाज के ५० प्रश्नों का उत्तर „ =)

१५ जैन धर्म सन्देश-मनुष्यमात्र को पठनीय है „ -)

१६ आर्य भ्रमोन्मूलन (जैन भ्रमोन्मूलन का मुंह तोड़ जवाब) „ -)

१७ लोकमान्य तिलकका जैनधर्म पर व्याख्यान। द्वि० एडीशन „)॥

१८ पानीपत शास्त्रार्थ भाग १ जो आर्यसमाज से लिखित रूप में हुआ। इस सदी के सम्पूर्ण शास्त्रार्थों में सर्वोत्तम है। ईश्वर जगत्कर्ता है इस को युक्तियों द्वारा असिद्ध किया है पृ० २०० मू० ॥=)

१९ पानीपत शास्त्रार्थ भाग २ इसमें 'जैन तीर्थङ्कर सर्वज्ञ हैं' यह सिद्ध किया गया है। „ „ ॥=)

सब प्रकार के पत्र व्यवहार का पता:—

मैनेजर—दि० जैन शास्त्रार्थ संघ, अम्बाला-छावनी।

अजितकुमार जैन के प्रबन्धसे" अकलंकप्रिन्टिङ्ग प्रेस, मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

REGD. N. L. 3459.

श्री चम्पावती जैन पुस्तकमाला की उपयोगी

प्रचार योग्य पुस्तकें

यदि आप जैनधर्म का अध्ययन प्रचार और खंडनात्मक साहित्य का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं तो कृपया निम्न लिखित पुस्तकों को अवश्य खरीदिये—

१ जैनधर्म परिचय —जैनधर्म क्या है ? सरलतया इसमें समझाया गया है। पृ० सं० ५० मूल्य -)

२ जैनधर्म नास्तिक मत नहीं है ? — जैनधर्म को नास्तिक बतलाने वालों के प्रत्येक आक्षेप का उत्तर मि० हर्बर्ट वारन (लन्दन) ने बड़ी योग्यता पूर्वक इसमें दिया है। पृ० सं० ३० मू० -)

३ क्या आर्य समाजी वेदानुयायी हैं पृ० सं० ४४ मू० -)

४ वेद मीमांसा — पृ० सं० ६४ मू० =)

५ अहिन्सा पृ० सं० ५२ मू० -)॥

६ भगवान ऋषभदेव की उत्पत्ति असम्भव नहीं है। —आर्य समाज के 'ऋषभदेव की उत्पत्ति असम्भव है' ट्रैक्ट का उत्तर बड़ी योग्यता पूर्वक इसमें दिया गया है। पृ० सं० ८४ मू० ।)

७ वेद समालोचना पृ० सं० १२४ मू० ।=)

८ आर्य समाज की गप्पाष्टक मू०)॥

९ सत्यार्थ दर्पण— योग्यता के साथ सत्यार्थप्रकाश के १२ वें समुल्लास का युक्तियुक्त खण्डन इसमें किया गया है। पृ० सं० २४० मू० ॥)

१० आर्यसमाज के १०० प्रश्नों का उत्तर। पृ० संख्या ६० मू० ≡)

११ वेद क्या भगवद्वाणी हैं ? —वेदों पर एक अजैन विद्वान का युक्तिपूर्ण विचार। ,, -)

१२ आर्यसमाज की डबल गप्पाष्टक ,, -)

१३ दिगम्बरत्व और दिगम्बर मुनि— जैनधर्म और दि० जैनमत का प्राचीन इतिहास प्रामाणिक सरल और जीवित लेखनी के साथ विस्तृत रूप से लिखा गया है जिसमें रंगीन तथा सादे अनेक चित्र हैं। ऐसी पुस्तक जैन समाज में अभीतक प्रकाशित नहीं हुई। प्रत्येक पुस्तकालय और भण्डार में इसका होना अत्यंत उपयोगी है ऐसे अपूर्व सचित्र ऐतिहासिक ग्रन्थ की एक प्रति अवश्य मगावें। पृ० ३५० मू० १)

१४ आर्यसमाज के ५० प्रश्नों का उत्तर ,, =)

१५ जैन धर्म सन्देश-मनुष्यमात्र को पठनीय है ,, -)

१६ आर्य भ्रमोन्मूलन (जैन भ्रमोन्मूलन का मुंह तोड़ जवाब) ,, -)

१७ लोकमान्य तिलकका जैनधर्म पर व्याख्यान। द्वि० एडीशन ,,)॥

१८ पानीपत शास्त्रार्थ भाग १ जो आर्यसमाज से लिखित रूप में हुआ। इस सदी के सम्पूर्ण शास्त्रार्थों में सर्वोत्तम है। ईश्वर जगत्कर्ता है इस को युक्तियों द्वारा असिद्ध किया है पृ० २०० मू० ॥=)

१९ पानीपत शास्त्रार्थ भाग २ इसमें 'जैन तीर्थङ्कर सर्वज्ञ हैं' यह सिद्ध किया गया है। ,, ,, ॥=)

सब प्रकार के पत्र व्यवहार का पताः—

मैनेजर—दि० जैन शास्त्रार्थ संघ, अम्बाला-छावनी।

अजितकुमार जैन के प्रबन्धसे" अकलंकप्रिन्टिङ्ग प्रेस, मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

जैन समाचार

उपहार तथा विशेषांक

इस वर्ष जैन दर्शन के ग्राहकों को एक अपूर्व ग्रंथ उपहार में और एक विशेषांक प्राप्त होगा।

प्राचीन प्रतिमाएं प्राप्त हुईं—अलपुर (निजाम हैदराबाद) में जमीन खोदते समय प्राचीन दि० जैन प्रतिमाएं प्राप्त हुईं उन पर कोई संवत नहीं खुदा है प्राचीन लिपि में जो कुछ लिखा हुआ है वह पढ़ा नहीं जाता, संभवतः यह ब्राह्मी लिपि है। अतः वे इतिहासानुसार कम से कम दो हजार वर्ष पुरानी हैं। एक छोटी प्रतिमा पार्श्वनाथ की बहुत सुंदर है प्रतिमाएं सभी सांगोपांग हैं। कलक्टर महोदय से प्रार्थना करने पर वे प्रतिमाएं हमको दिलवा दी हैं। अतः जैन समाज उनका आभारी होकर धन्यवाद देता है।

हीराचन्द्र रामचन्द्र जैन गुलवर्गा

उत्सव—श्री जैन कन्याशिक्षालय धर्मपुरा देहली का २७ वाँ वार्षिकोत्सव भाद्रपद शु० ३ ता० १ सितम्बर को श्रीमान सेठ ज्वालाप्रसाद जी महेन्द्रगढ़ की अध्यक्षता में मनाया जावेगा जिसमें स्त्री शिक्षा पर भाषण, छात्राओं के संवाद पारितोषिक वितरण आदि कार्य होंगे। आपकी उपस्थिति वांछनीय है।

—पन्नालाल जैन मंत्री

गायन मास्टर—यहां पर एक दि० जैन गायन मास्टर हैं जो नई तर्जों पर गायन सिखला कर गायन मंडली तयार कर सकते हैं मुलतान डेरागाजीखान में उन्होंने अच्छी गायनमंडली तयार कर दी हैं जो कि दूसरे स्थानों से सुवर्णपदक प्राप्त कर चुकी हैं। उन्होंने आधुनिक तर्जों पर सैकड़ों गायन भी बनाये हैं। यदि कहीं के महानुभाव उनसे अपने यहाँ भजनमंडली तयार करने का लाभ उठाना चाहें तो निम्नलिखित पते पर पत्र व्यवहार करें।

खुशीराम जैन C/o
अकलंक प्रेस चूड़ी सराय मुलतान सिटी

आवश्यकता—एक सुशील, सदाचारी, व्युत्पन्न विद्वान की आवश्यकता है जो कि विशारद तक समस्त विषय पढ़ा सके तथा मैट्रिकुलेशन जिसे इंगलिशकी योग्यता हो। उत्तरके लिये पोस्टेज भी आना चाहिये।

अकलंक प्रेस मुलतान सिटी

धन्यवाद—श्रीमान स्व० सेठ दीपचन्द्र जी नागपुर के मृत्यु समय उनके संबंधियों ने जैन दर्शन को ३) रुपये प्रदान किये। एतदर्थ धन्यवाद

लाभ लिया—जुलाई मास में उदयपुर की दि० जैन पारमार्थिक संस्थाओं में से श्री पार्श्व० दि० जैन विद्यालय से ४५ छात्रों ने बोर्डिंग से ३५ विद्यार्थियों ने, कन्याशाला से ३० कन्याओं ने औषधालय में ८०० जैन अजैन रोगियों ने और धर्मशाला में १०० यात्रियों ने लाभ उठाया।

उद्घाटन—श्री सूर्यसागर जी, तथा ऐलक पन्नालाल जी महाराज के उपदेश से वैशाख शु० ३ को नैनवाँ (बूंदी) में एक पाठशाला खुली है जिसमें श्री पं० मिश्रीलाल जी साह उत्साह से पढ़ाते हैं।

मदनलाल मन्त्री

उत्सव—श्री दि० कु० ब्रह्मचर्याश्रम कुँथलगिरि का जन्मदिवस उत्सव जिनेन्द्राभिषेक, ध्वजारोहण आदि उत्सवों के साथ मनाया जावेगा।

—श्रीमान सुआलाल जी कामदार जोबनेरका अचानक स्वर्गवास होगया उसके शोक में जोबनेर की पाठशाला एक दिन बंद रही और शोक सभा हुई।

अ[illegible]शाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्ररश्मिर्भव्याब्जभव्यसिखिलदर्शनपक्षदोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री भाद्रपद वदी २—शुक्रवार श्री वीर सं॰ २४६१ | अङ्क ३

"भगवान वीर"

(ले॰ श्री॰ पं॰ सुमेरचन्द्र जी जैन)

वासना प्रपञ्चों की विपञ्चों का अनूठा राग
　　बन्द कर देना पड़ा शीघ्र एक क्षण में
आशा आसुरी का नृत्य ताण्डव समान हुआ
　　शान्ति का अनन्त रस व्याप्त देख तन में
रंग बदरंग हुआ ढंग प्रकृति का नया
　　सब सूक्ष्म दर्शियों के एक बार मन में
शक्तियाँ समेट के उमेठ विश्व जेता बढ़े
　　वीर भगवान जब मोक्ष की लगन में ॥ १ ॥

तड़प उठा था रोम रोम विश्व हृदय देख
　　अखिल शरीरियों का एक बार तन में
बंधन विहीन हुये प्रतिमा नवीन से वे
　　जग की असारता का सार सोच मन में
दिव्य ललनायें चलीं भर के उछाह चाह
　　चूमन चरन चारु आतुर गगन में
विश्व के विरागी अनुरागी एक त्यागी वीर
　　सहसा बढ़े थे जब मोक्ष की लगन में ॥ २ ॥

शब्दनय पर विचार

(ले० श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी जैन न्यायतीर्थ)

कुछ मास बीते, मेरे एक विद्वान मित्र ने शब्दनय के स्वरूप की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया। मुझ से उन्हों ने कुछ प्रश्न पूछे किन्तु मेरे साधारण उत्तर से उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। मेरे पत्र के उत्तर में उन्होंने जो पत्र भेजा उसे 'भारत सरकार का खरीता' कहें तो अनुचित न होगा। अपने अभिप्राय का समर्थन करने के लिये उन्होंने अच्छा संग्रह किया था, उनका पत्र पढ़ कर मुझे इस दिशा में खोज करने की आवश्यकता जान पड़ी। अनेक ग्रन्थों के देखने से मुझे मालूम हुआ कि शब्दनय के स्वरूप को लेकर कुछ टीकाकारों में मत भेद है। गुरुजनों से पूछा गया तो वे भी इस विषय में एकमत न थे। अतः पूर्वाचार्यों के वाक्यों का आलोडन करके कुछ निष्कर्ष निकालना उचित समझा। प्रश्न कर्ता का मुख्य प्रश्न यह था कि—

शब्दनय व्याकरण सिद्ध प्रयोगों का अनुसरण करता है या नहीं? अनेक दिगम्बर तथा श्वेताम्बर ग्रन्थों के आलोडन के बाद मैं इस निर्णय पर पहुंचा हूँ कि, शब्दनय व्याकरण सिद्ध प्रयोगों का तो अनुसरण करता है किन्तु एकान्तवादी वैयाकरणों का अनुसरण नहीं करता।

इस निर्णय की मीमांसा करने के लिये शब्दशास्त्र के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक है। संसार में दो वस्तुएं मुख्य हैं— अर्थ और शब्द। इन दोनों को क्रमशः वाच्य और वाचक कहते हैं। हम जितने अर्थों को देखते हैं उनके वाचक शब्दों को भी सुनते ही हैं। अर्थ तो हो किन्तु उसका वाचक शब्द न हो, यह आज तक न तो देखा गया और न सुना गया। आज कल जितने आविष्कार होते है उनका नाम पहिले से ही निर्धारित कर लिया जाता है। सारांश यह कि, संसार में कोई चीज बिना नाम की नहीं है, इसी से दार्शनिक क्षेत्रमें प्रत्येक दर्शनके मूलतत्त्व अर्थ न कहे जा कर पदार्थ कहे जातेहैं मध्ययुगके दार्शनिक टीकाकारों में यह एकनियम सा होगया था कि ग्रन्थके प्रारम्भमें उन्हे शब्दार्थ सम्बन्ध की मीमांसा करना आवश्यक था। शब्द और अर्थ के इस पारस्परिक सद्भाव ने 'अद्वैत' का रूप धारण कर लिया जो शब्दाद्वैत के नाम से ख्यात हुआ। पाणिनि व्याकरण रचयिता आचार्य पाणिनि के नाम पर इसे पाणिनि-दर्शन भी कहा जाता है। जैसे अद्वैतवादी वेदान्ती दृश्यमान संसार के भेद को 'मायावाद' कह कर उड़ा देते है उसी प्रकार शब्दाद्वैतवादी वैयाकरणों का मत है कि, 'घट' 'पट' आदि सब शब्द एक अद्वैततत्त्व का ही प्रतिपादन करते हैं दृश्यमान घट पट आदि अर्थ तो उपाधियां हैं असत्य हैं। जैसा कि कहा है—

> सत्यं वस्तु तदाकारैरसत्यैरवधार्यते।
> असत्योपाधिभिः शब्दैः सत्यमेवाभिधीयते॥
>
> सर्वदर्शन संग्रह-पाणिनिदर्शन

यद्यपि सब शब्द एक अद्वैततत्त्व का ही प्रतिपादन करते हैं फिर भी व्यवहार के लिये शब्दों का लौकिक वाच्य मानना ही पड़ता है अतः पाणिनि [१] व्यक्ति और

---

१ किं पुनराकृतिः पदार्थः आहोस्विद् द्रव्यम्? उभयमित्याह। कथं ज्ञायते? उभयथा हि आचार्येण सूत्राणि पठितानि आकृतिं पदार्थं मत्वा 'जात्याख्यायामेकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्याम्' इत्युच्यते। द्रव्यं पदार्थं मत्वा 'सरूपाणाम्' इति एकशेष आरभ्यते। पातञ्जल महाभाष्य पृ० ५२-५३।

जाति को पद का अर्थ–पदार्थ मानते हैं। पाणिनि के मत के अनुसार एक शब्द एक ही व्यक्ति का कथन करता है, अतः यदि हमें बहुत से व्यक्तियों का बोध कराना हो तो बहुत से शब्दों का प्रयोग करके "सरूपाणामेकशेष एक विभक्तौ" १, २–६४ सूत्र के अनुसार एकशेष किया जाता है। जैसे यदि बहुत से वृक्षों का निर्देश करना हो तो वृक्ष वृक्ष वृक्ष में से एक ही शेष रह जाता है और उससे बहुवचन का बोधक प्रत्यय लगा कर 'वृक्षाः' रूप बनता है। किन्तु यदि जाति का निर्देश करना हो तो एक वचन से भी काम चल सकता है। यह एकान्तवादी वैयाकरणों का मत है अब अनेकान्तवादी वैयाकरणों के मत का भी दिग्दर्शन कीजिये।

जैनेन्द्र व्याकरण के रचयिता आचार्य पूज्यपाद अपने व्याकरण का श्रीगणेश 'सिद्धिरनेकान्तात्' सूत्र से करते हैं। हैमशब्दानुशासन के रचयिता श्वेताम्बराचार्य हेमचन्द्र ने भी 'सिद्धिः स्याद्वादात्' सूत्र को प्रथम स्थान देकर पूज्यपाद का अनुसरण किया है जो सर्वथा स्तुत्य है इन आचार्यों का मत है १ कि अनेकान्त के बिना शब्द की सिद्धि नहीं हो सकती एक ही शब्द का कभी विशेषण होना, कभी विशेष्य होना, कभी पुलिंग में व्यपदेश होना, कभी स्त्री लिंग में कहा जाना, कभी करण में प्रयोग करना, कभी कर्ता में प्रयोग होना आदि परिवर्तन एकान्तवाद में नहीं हो सकते। इसी लिये शब्दनय का वर्णन करते हुए अकलंकदेव ने लिखा है कि एकान्तवाद में षट्कारकी नहीं बन सकती २ जैसे प्रमाण अनन्तधर्मात्मक वस्तु का बोधक है अतः उसका विषय सामान्यविशेषात्मक वस्तु कही जाती है, इसी तरह शब्द भी अनन्तधर्मात्मक वस्तु का वाचक है अतः उसका वाच्य न केवल व्यक्ति है और न केवल जाति किन्तु जातिव्यक्त्यात्मक या सामान्य विशेषात्मक वस्तु शब्दका वाच्य है ३ यह अनेकान्तवाद की दृष्टि है। अतः पाणिनि ने व्यक्ति और जाति को स्वतंत्र रूप से पद का अर्थ मान कर जो 'एक शेष' का नियम प्रचलित किया, पूज्यपाद उसकी कोई आवश्यकता नहीं समझते। वे लिखते हैं शब्द स्वभाव से ही एक दो या बहुत व्यक्तियों का कथन करता है अतः एकशेष की कोई आवश्यकता नहीं है। ४

पाणिनि और पूज्यपाद के इस मतभेद से यह न समझ लेना चाहिये कि दोनों के सिद्ध प्रयोगों में भी कुछ अन्तर पड़ता है। शब्दसिद्धि में मतभेद होते हुए भी दोनों के सिद्ध प्रयोगों में कोई अन्तर नहीं है शब्द का जैसा रूप एकान्तवादी वैयाकरण सिद्ध करते हैं वैसा ही अनेकान्तवादी सिद्ध करते हैं केवल दृष्टि का अन्तर है। इस दृष्टि वैषम्य को दूर करने के लिये ही शब्दनय की सृष्टि हुई है।

इतर वैयाकरण वाच्य वाचक सम्बन्ध को मानकर भी दोनों को स्वतंत्र मानते हैं वाचक के रूप में परिवर्तन हो जाने पर भी वाच्य के रूप में कोई परिवर्तन

---

१ एकस्यैव शब्दस्य लिंगादिविषयो नैकान्तसन्निपाते सामान्यविशेषात्मनि विशेषणविशेष्यभावादयश्च स्याद्वादमन्तरेण नोपपद्यन्ते। सि० हेम०

२ [illegible] एकान्तेन [illegible]। राजवा० [illegible] पृ० [illegible]

३ जातिव्यक्त्यात्मकं वस्तु वदन्त्यनुभवोचितम्। प्रसिद्धे [illegible] शब्दव्यवहारनियमात् ॥ ४ ॥ तत्त्वार्थश्लो० भा० पृ० ११०

४ स्वाभाविकत्वादभिधानस्यैकशेषानारम्भः। १। १। ९९। जैनेन्द्र सूत्र।

नहीं मानते। किन्तु जैन शाब्दिकोंका मत * है 'वाचकमें लिंग संख्या आदिका जो परिवर्तन होता है वह स्वतंत्र नहीं है किन्तु अनन्त धर्मात्मक बाह्य वस्तु के ही आधीन है। अर्थात् जिन धर्मों से विशिष्ट वाचक का प्रयोग किया जाता है वे सब धर्म वाच्य में रहते हैं। जैसे यदि गंगा के एक ही किनारे को संस्कृतके 'तटः' 'तटी' और 'तटम्' इन तीन शब्दों से कहा जाये—इन तीनों शब्दोंका मूल एक तट शब्द ही है इन में जो परिवर्तन हम देखते हैं वह लिंगभेद से हो गया है—तो यतः यह तीनों शब्द क्रमशः पुल्लिंग स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग में निर्देश किये गये गये हैं अतः इनके वाच्य में तीनों धर्म वर्तमान है। क्योंकि वस्तु अनन्त धर्मात्मक है अतः उसमें तीनों धर्म रह सकते हैं (यदि कोई व्यक्ति स्त्रीलिंग पुल्लिंग और नपुंसक लिंग इन तीनों धर्मों को परस्पर में विरुद्ध मानकर एक ही वस्तु में तीनों का सद्भाव मानने से हिचकता है तो उसे अनेकान्त की प्रक्रिया का अध्ययन करना चाहिये) इसी तरह एक दो या बहुत व्यक्तियोंके वाचक 'दारा' आदि शब्दों में नित्य बहुवचन का प्रयोग होना और बहुत सी वस्तुओं के वाचक 'वन' 'सेना' आदि शब्दों के साथ एक वचन का प्रयोग करना असंगत नहीं कहा जा सकता। क्योंकि वस्तु के अनन्त धर्मों में से किसी एक धर्म की अपेक्षा से शब्द व्यवहार किया जा सकता है'।

जैन और जैनेतर वैयाकरणों के इस संक्षिप्त मत-भेद प्रदर्शन से विज्ञपाठकों की दृष्टि में मेरे उक्त निर्णय की रूपरेखा का आभास चित्रित हो सकेगा। अतः अब आचार्योंके लक्षणोंपर विचार करना उचित होगा।

ऐतिहासिक परंपरा के अनुसार शब्दनय के स्वरूप का सर्व प्रथम उल्लेख सर्वार्थसिद्धि टीका में पाया जाता है। उसके बाद दूसरा उल्लेख अकलंकदेव के तत्त्वार्थराजवार्तिक में मिलता है जो प्रायः सर्वार्थ-सिद्धि के उल्लेख से अक्षरशः मिलता है। इसे हम 'पूज्यपाद की परंपरा' के नाम से पुकार सकते हैं। पूज्यपाद ने शब्दनय का जो लक्षण लिखा था वह स्पष्ट होते हुये भी अस्पष्ट था—खींचातानी करके उसके शब्दों का विपरीत अर्थ भी किया जा सकता था, जैसा कि आगे चलकर हुआ और जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण मेरे सामने उपस्थित है। अतः इस लक्षण को दार्शनिक क्षेत्र में कोई स्थान न मिल सका। प्रातः स्मरणीय अकलंकदेव ने इस कमी का अनुभव किया। यद्यपि उन्होंने अपने राजवार्तिक में सर्वार्थसिद्धि का ही अनुसरण किया। किन्तु अपने स्वतंत्र प्रकरणों में उसकी शब्द योजना को बिल्कुल बदल दिया। अर्थ पद्धति के अनुकूल इस परिवर्तन का विद्वत्समाज ने आदर किया—अकलंकदेव के बाद में होने वाले प्रायः समस्त दिगम्बर तथा श्वेताम्बर दार्शनिकों ने अपने ग्रन्थों में उसे स्थान दिया। अतः अकलंकदेव की दृष्टि से ही हम इस विषय पर विचार करना उपयुक्त समझते हैं। अकलंकदेव अपने 'लघीयस्त्रय' प्रकरण में लिखते हैं—

कालकारकलिङ्गानां भेदाच्छब्दोऽर्थभेदकृत्।
अभिरूढस्तु पर्यायैरित्थंभूतः क्रियाश्रयः॥

---

* लिंग संख्यादिभेदोऽपि अनन्तधर्मात्मक वाच्यवस्त्वाश्रित एव। न चैकस्य तट तटी तटम् इति त्रीणि लिङ्गानि स्वभावतो विरुद्ध, विरुद्ध-धर्माध्यासस्य भेदप्रतिपादकत्वेन निषिद्धत्वात्। अनन्तधर्माध्यासितस्य च वस्तुनः प्रतिपादितत्वात् अन्यत्र। दारादिष्वपि बहुत्वसंख्या वनसेना-दिषु च एकत्वसंख्याऽविरुद्धा यथाविवक्षमनन्तधर्माध्यासिते वस्तुनि कस्यचिद्धर्मस्य शब्देन प्रतिपादनाविरोधात्। सन्मति० टीका पृ० २६४।

स्वोप० विवृति—कालभेदात् तावद् 'अभूत्' 'भवति' 'भविष्यति' इति । कारक भेदात् 'करोति' 'क्रियते' इत्यादि । लिंग भेदात् 'देवदत्तः' 'देवदत्ता' इति । पर्याय भेदात् इन्द्रः शक्रः पुरंदर इति । तथा एतौ कथितौ । क्रियाश्रय एवंभूतः' ।

"काल कारक और लिंग के भेद से शब्दनय वस्तु को भेदरूप स्वीकार करता है 'हुआ' 'होता है' 'होगा' यह काल भेद है । 'करता है' 'किया जाता है' यह कारक भेद है 'देवदत्त' 'देवदत्ता' यह लिंग भेद है । समभिरूढ़नय शब्द के भेदसे अर्थ को भेद रूप मानना है और एवंभूतनय क्रिया के आश्रित है" ।

जैन दृष्टि से वस्तु अनन्तधर्मात्मक—अनन्तधर्मों का अखण्ड पिण्ड—है । स्याद्वाद श्रुत के द्वारा उन धर्मों का कथन किया जाता है । अतः जैसे ज्ञान का विषय होने से वस्तु ज्ञेय है, शब्द का वाच्य होने से अभिधेय भी है । हम जिन जिन शब्दों से वस्तु को पुकारते हैं वस्तु में उन उन शब्दों के द्वारा कही जाने की शक्तियाँ विद्यमान हैं । यदि ऐसा न होता तो वे वस्तुएं उन शब्दों के द्वारा न कही जातीं और न उन शब्दोंको सुनकर विवक्षित वस्तुओं का बोध ही होता । जैसे 'पानी' भिन्न २ भाषाओं में भिन्न भिन्न नामों से पुकारा जाता है या एक ही भाषा के अनेक शब्दों से कहा जाता है अत: उसमें उन शब्दों के द्वारा कहे जाने की शक्तियाँ विद्यमान है । यह समभिरूढ़नय की दृष्टि है । इस नय का मन्तव्य है कि 'पानी' शब्द पानी के धर्म की अपेक्षा से व्यवहृत होता है जल शब्द उस ही धर्म की अपेक्षा से व्यवहृत नहीं होता है । संस्कृत में पानी को 'अमृत' भी कहते है और 'विष' भी । प्यासे को जिलाता है अत. अमृत है और किसी २ रोग में विष का काम कर जाताहै अतः विष है । इसलिये अमृत और विष यह दो शब्द पानी के एक ही धर्म को लेकर व्यवहृत नहीं होते

भिन्न २ शब्दों के विषय में जो बात ऊपर कही गई है वही बात एक शब्द के परिवर्तित रूपोंके विषय में भी कही जा सकती है । काल भेद से एक ही वस्तु तीन नामों से पुकारी जाती है । जब तक कोई वस्तु नहीं उत्पन्न हुई तब तक उसे 'होगी' कहते हैं । उत्पन्न होने पर 'होती है' कहते हैं । कुछ समय बीतने पर 'हुई' कही जाती है । यह तीनों शब्द 'होना' धातु के रूप हैं और वस्तु के तीन धर्मों की ओर संकेत करते हैं । इसी तरह कारक और लिंगके सम्बन्ध में भी समझना चाहिये । भिन्न २ कारकों की विवक्षा से एक ही वृक्ष, 'वृक्ष को' 'वृक्ष से' 'वृक्ष के लिये' 'वृक्ष में' । आदि अनेक रूपों से कहा जाता है अतः यह शब्द वस्तु के भिन्न धर्मों की ओर संकेत करते हैं । एक बच्चा पुरुष होने के कारण 'देवदत्त' कहा जाता है वह यदि लड़कियों का सा वेश करले तो कुटुम्बी जन उसे 'देवदत्त' न कहकर 'देवदत्ता' कह उठते हैं अत' लिंग भेद से भी अर्थ भेदका सम्बन्ध है । यह सब शब्दनय की दृष्टि है । यहाँ इतना विशेष जानना चाहिये, यदि एक ही अर्थ के वाचक भिन्न २ शब्दों में भी लिंग भेद या वचन भेद हो तो यह नय उनके वाच्य को भिन्न २ दृष्टिकोणों से ही स्वीकार करेगा ।

शब्दनय के उक्त लक्षण के समर्थन में अब हम कुछ ग्रंथकारों का मत देते है † अनन्तवीर्य लिखते हैं

† भेदे विशेषः शब्दस्यार्थे—व्यञ्जन पर्यायः तस्य भेदः नानात्वं नय प्रतिपत्तरभिप्राय वाच्य कथनाय । लिङ्गभेदेऽपि आह- 'कारक' इत्यादि । [सिद्धि विनिश्चय टीका ।

'कारक आदि के भेद से अर्थ को भेद रूप समझने वाला शब्दनय है"।

‡ विद्यानन्दि खुलासा करते हुए लिखते हैं—"जो वैयाकरण व्यवहारनय के अनुरोध से काल, कारक व्यक्ति, संख्या, साधन, उपग्रह आदि का भेद होनेपर भी पदार्थमें भेद नहीं मानते हैं परीक्षा करनेपर उनका मत ठीक नहीं जंचता, यह शब्दनय का अभिप्राय है, क्योंकि काल आदि का भेद होने पर भी अर्थ में भेद न मानने से अनेक दोष पैदा होते हैं।

आचार्य श्री देवनंदि * प्रभाचन्द्र ⁂ वादिराज ÷ अभयदेव× और अनन्तवीर्य – द्वितीय भी उक्त मतका अनुसरण करते हैं।

श्वेताम्बर आचार्य भी शब्दनय के उक्त स्वरूप के विषय में एकमत हैं। वादिदेव कहते हैं—

"काल आदि के भेद से जो पदार्थभेद को स्वीकार करता है वह शब्दनय है। जैसे—सुमेरु 'था' 'है' और रहेगा। जो काल आदिके भेद से सर्वथा अर्थभेद को ही स्वीकार करता है वह शब्दाभास है।+

(।) मल्लिषेण लिखते हैं—शब्दनय एक अर्थ के वाचक अनेक शब्दों का एक ही अर्थ मानता है। जैसे इन्द्र शक्र और पुरंदर शब्द एक 'देवराज' अर्थ का ही कथन करते हैं। यहां इतना विशेष जानना चाहिये कि, जिस प्रकार यह नय पर्याय शब्दों का एक ही अर्थ मानता है उसी प्रकार लिंगादि के भेद से वस्तु भेद को भी स्वीकार करता है। भिन्न २ धर्मोंके द्वारा कही जाने वाली वस्तु में धर्मभेद न हो, यह नहीं हो सकता"।

‡ कालादिभेदतोऽर्थस्य भेदं यः प्रतिपादयेत्। सोऽत्र शब्दनयः शब्दप्रधानत्वादुदाहृतः ॥६८॥
विश्वदृश्वास्य जनिता सूनुरित्येकमादृताः। पदार्थं कालभेदेऽपि व्यवहारानुरोधतः ॥६९॥
करोति क्रियते पुष्यस्तारकाऽऽपोऽम्भ इत्यपि। कारकव्यक्तिसंख्यानां भेदेऽपि च परे जनाः ॥७०॥
एहि मन्ये रथेनेत्यादिकसाधनभिद्यपि। संतिष्ठेतावतिष्ठेतेत्याद्युपग्रहभेदने ॥७१॥
तन्न श्रेयः परीक्षायामिति शब्दः प्रकाशयेत्। कालादिभेदनेऽर्थस्य भेदनेऽतिप्रसंगतः ॥७२॥

श्लोकवार्तिक, पृ० २७२

* [illegible] ॥२२॥ नयचक्र पृ० ७३

⁂ कालकारकलिङ्गसंख्यासाधनोपग्रहभेदाद्भिन्नमर्थं शपतीति शब्दो नयः। तत्रोऽपास्तं वैयाकरणानां मतम्। ते हि [illegible] काल भेदेऽप्येकं पदार्थं मादृता, इत्यादि। प्रमेयक० पृ० २०६ पर्वा०

÷ कालादिभेदादर्थभेदकारी शब्दः। कालभेदात् अभूत् भवति भविष्यति। कारकभेदात् 'करं पश्य', 'अन्नाय जल दहति'। न्यायविनिश्चय टीका पृ० ४९७ उत्त०।

× तत्र लिङ्गकारककालादिभेदादर्थभेदकृत् शब्दनयः। [illegible] पृ० ७२

– कालकारकलिङ्गानां भेदाच्छब्दस्य कथञ्चिदर्थभेदकथनं शब्दनयः। 'प्रमेयरत्न०' पृ० ३०७।

\+ कालादिभेदेन ध्वनेरर्थभेदं प्रतिपद्यमानः शब्दः ॥३२॥ यथा बभूव भवति भविष्यति सुमेरुरित्यादिः ॥३३॥ तद्भेदेन तस्य तमेव समर्थयमानस्तदाभासः ॥३४॥

'प्रमाणनयतत्त्वालोक' परि० ७।

(।) शब्दस्तु रूढितो यावन्तो ध्वनयः कस्मिंश्चिदर्थे प्रवर्तन्ते यथा इन्द्र शक्र पुरन्दरादयः सुरपतौ—तेषां सर्वेषामप्येकमर्थमभिप्रैति किल प्रतीतिवशाद् । .. यथा चायं पर्यायशब्दानामेकमर्थमभिप्रैति तथा 'तटः' 'तटी' 'तटम्' इति विरुद्धलिङ्गलक्षणधर्माभिसम्बन्धाद् वस्तुनो भेदं चाभिधत्ते। न हि विरुद्धधर्मकृतं भेदमनुभवतो वस्तुनो विरुद्धधर्मायोगो युक्तः।

'स्याद्वादमञ्जरी' पृ० २१२

सिद्धर्षिगणि और उपाध्याय यशोविजय (.) जी का भी यही मत है।

सर्वार्थसिद्धि के लक्षण पर विचार

शब्दनयके विषयमें अकलंकदेवकी परम्परा का अनुशीलन करनेके बाद अब हम पूज्यपादकी परंपरा का विश्लेषण करेंगे। इस परम्परा में हमें तीन ही विद्वान दृष्टिगोचर होते हैं—एक स्वयं पूज्यपाद, दूसरे राजवार्तिक के रचयिता भट्टाकलंक और तीसरे तत्त्वार्थ सारके कर्ता अमृतचंद्रसूरि श्वेताम्बर विद्वानोंमें संमति की टीका के रचयिता श्री अभयदेव सूरि पर भी पूज्यपाद की परंपरा की कुछ छाप लगी सी जान पड़ती है।

सर्वार्थसिद्धि में लिखा है*—"लिंग संख्या साधन आदि के व्यभिचार को जो दूर करता है उसे शब्दनय कहते हैं"। राजवार्तिक में मामूली से हेर फेर के साथ यही लक्षण किया गया है (॥)। इस लक्षण में 'व्यभिचार निवृत्तिपरः' पद स्पष्ट होते हुए भी अस्पष्ट है। लक्षणकार और उसके अनुयायियों ने व्यभिचार की परिभाषा तो स्पष्ट कर दी किन्तु निवृत्तिपरः को अस्पष्ट सा ही छोड़ दिया। एक वचन के स्थान में बहुवचन और पुलिंग के स्थान में स्त्री लिंग शब्द का प्रयोग करना आदि व्यभिचार कहा जाता है। शब्दनय उस व्यभिचार की निवृत्ति करता है। कैसे करता है? इस प्रश्नको लेकर विद्वानोंमें दो मत होगये एक मत कहता है कि शब्दनय व्याकरण द्वारा किये जाने वाले परिवर्तन को उचित समझता है। (एवं प्रकारं व्यवहारनयं न्याय्यं? मन्यते। सर्वार्थ० पृ० ८०) दूसरा मत इसके विपरीत है।

प्रथम मत पर विचार

हम प्रथम मत से किसी अंश में सहमत हैं किन्तु सर्वार्थसिद्धि तथा राजवार्तिक के जिन वाक्यों के आधार पर उक्त मत की सृष्टि हुई है उनकी समीक्षा करना आवश्यक जान पड़ता है। कल्लापा भरमाप्पा निटवे के जैनेन्द्र प्रेस से प्रकाशित सर्वार्थ सिद्धि में उक्त पाठ मुद्रित है। तथा शब्दनय के एक दो स्थलों पर कुछ टिप्पणी भी दी गई हैं। पहिली टिप्पणी 'निवृत्तिपरः' पद पर है। उसका आशय है कि लिंग आदि का व्यभिचार दोष नहीं माना जाता, यह शब्दनय का अभिप्राय है †। संभवतः 'न्याय्य' पद को शुद्ध मान कर ही उक्त टिप्पणी दी गई है किन्तु, यह पद अशुद्ध है इस के स्थान पर 'अन्याय्य' होना चाहिये। सर्वार्थसिद्धिके प्रथम संस्करण बा० जगरूप सहाय जी वाली प्रति तथा काशी विद्यालय के भवन की लिखित प्रति में 'अन्याय्य' पाठ ही दिया हुआ है।

\+ न्यायावतारटीका पृ० ८० ।

( ) कालादिभेदेन ध्वनेरर्थभेदं प्रतिपद्यमानः शब्दः । तत्स्वार्थ—संकेतादिव्याकरणात् प्रकृतिप्रत्ययसमुदायेन सिद्ध कालकारकलिंगसंख्यापुरुषोपसर्गभेदेनार्थ पर्यायमात्र प्रत्याययते स शब्दनयः । कालभेद उदाहरणम्—यथा बभूव भवति भविष्यति सुमेरुरिति अत्र कालत्रयवि-भेदात् सुमेरोरपि भेदः शब्दनयेन प्रतिपाद्यते ।

नयप्रदीप पृ० १०३

* लिंगसंख्यासाधनादिव्यभिचारनिवृत्तिपरः शब्दनयः । सर्वा० पृ० ७९

(॥) शपति—अर्थमाह्वयति प्रत्यायपति इति शब्दः, स च लिंगसंख्यासाधनादिव्यभिचारनिवृत्तिपरः । रा० वा० पृ० ६०

† लिंगादिना व्यभिचारो दोषो नास्ति इत्यभिप्रायपरः ।

पं० जयचन्द्र जी कृत वचनिका में भी 'अन्याय्य' ही है यदि 'न्याय्य' पद को शुद्ध मान कर उक्त वाक्य का अर्थ किया जाय तो इस प्रकार होगा—इस प्रकार के व्यवहारनय को शब्दनय उचित मानता है। अर्थात् व्याकरण द्वारा शब्दों में जो परिवर्तन किया जाता है और जिसे आचार्य 'व्यभिचार' के नाम से पुकारते हैं वह व्यवहारनय का विषय है। उस व्यवहारनय को शब्दनय उचित माने यह एक आश्चर्य की बात है क्योंकि नयों का विषय उत्तरोत्तर सूक्ष्म होता जाता है। व्यवहारनय से ऋजुसूत्र का विषय सूक्ष्म है और ऋजुसूत्र से शब्दनय का विषय सूक्ष्म है। यदि शब्द-नय व्यवहारनय के विषय का ही समर्थक होजाय तो नयों के क्रम में तो गड़बड़ी उपस्थित होगी ही, उनकी संख्या में भी फेरफार करना पड़ेगा।

आचार्य विद्यानन्दि ने अपने श्लोकवार्तिक में व्यवहारनय पद का अच्छा स्पष्टीकरण किया है। वे कहते हैं + 'जो वैयाकरण व्यवहारनय के अनुरोध से काल भेद, कारक भेद, वचनभेद, लिंगभेद आदि के होने पर भी अर्थ भेद को स्वीकार नहीं करते, परीक्षा करने पर उनका मत ठीक नहीं जान पड़ता यह शब्दनय का अभिप्राय है'।

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वैयाकरणों को उक्त व्यवहार उक्त शब्दनय की दृष्टि में अन्याय्य ही है 'न्याय्य' नहीं है। अतः मुद्रित सर्वार्थसिद्धि का पाठ अशुद्ध है। तथा यदि 'न्याय्य' पाठको ही शुद्ध माना जाय तो आगे का वाक्य 'अन्यार्थस्य अन्यार्थेन सम्बन्धाभावात्' बिल्कुल असंगत हो जाता है। अगर 'न्याय्य' पाठ के अनुसार एक वचनान्त और बहुवचनान्त शब्दों का एक ही अर्थ माना जाय तो अन्य अर्थ का अन्य अर्थ के साथ सम्बन्ध हो ही गया क्योंकि 'जलम्' शब्द और 'आपः' शब्द दोनों का एक ही अर्थ मान लिया गया अतः 'अभावात्' शब्द व्यर्थ ही पड़ जाता है किन्तु जब उक्त व्यभिचारों को शब्दनय 'अन्याय्य' कहता है तब इस हेतुपरक वाक्य की संगति ठीक बैठ जाती है। "इस प्रकार का व्यवहार अनुचित है क्योंकि अन्य अर्थ का अन्य अर्थ के साथ सम्बन्ध नहीं हो सकता। राजवार्तिक के शब्द स्पष्ट होते हुए भी कोई २ उनका अनर्थ करके 'न्याय्य' पद का समर्थन करते हैं। वे शब्द इस प्रकार हैं—"लिंगादीनां व्यभिचारो न न्याय्यः" इति तन्निवृत्तिपरोऽयं नयः। + + + एवमादयो व्यभिचारा अयुक्ताः, अन्यार्थस्यान्यार्थेन सम्बन्धाभावात्'। सर्वार्थसिद्धि की तरह यहां पर भी 'तन्निवृत्तिपर.' शब्द को लेकर मत भेद होगया है। किन्तु इतना स्पष्ट है कि यह नय व्यभिचार को उचित नहीं मानता। जो महानुभाव 'व्यभिचारो न न्याय्यः' या 'व्यभिचारा अयुक्ताः' का यह अर्थ करते हैं कि, शब्दनय लिंगादिक के परिवर्तन को व्यभिचार नहीं मानता तो उनसे हमारा नम्र प्रश्न है कि फिर लिंगादिक का परिवर्तन किस की दृष्टि में व्यभिचार समझा जाता है जिसे दूर करने के लिये शब्दनय की सृष्टि करनी पड़ी? व्याकरण शास्त्र की दृष्टि में तो वह व्यभिचार है ही नहीं क्योंकि व्याकरण ने ही इस प्रकार के परिवर्तन और प्रयोग की सृष्टि की है। लौकिक दृष्टि से भी दोष नहीं है। क्योंकि लोक तो स्थूलव्यवहार से ही प्रसन्न रहता है। इसी बात को दृष्टि में रख कर उक्त दोनों ग्रन्थों में

+श्लो॰ वार्तिक पृ॰ २७२ ।

व्यवहारनयावलम्बीने तर्क किया है कि, यदि आप इन्हें व्यभिचार समझ कर अयुक्त ठहराते हैं तो लोक और शास्त्र (व्याकरण) दोनों का विरोध उपस्थित होगा इस तर्क का समाधान दोनों आचार्यों ने एकसा ही किया है। सर्वार्थसिद्धिकार + कहते हैं—विरोध होता है तो हो यहां तत्त्व की मीमांसा की जाती है (तत्त्वमीमांसा के समय लौकिक विरोधों की पर्वाह नहीं की जाती) कहावत प्रसिद्ध है कि, औषधी की व्यवस्था रोगी की रुचि के अनुसार नहीं की जाती रोगी को यदि दवा कड़वी लगती है तो लगने दो। राजवार्तिककार × कहते है--यहां तत्त्वकी मीमांसा की जा रही है दोस्तों को दावत नहीं दी जा रही।संमति तर्क के टीकाकार अभयदेव सूरि ने भी * प्रकारान्तर से इस आपत्ति का निराकरण किया है। वे कहते है व्यवहारके लोपका भय तो सभी नयोंमें वर्तमान है।

विज्ञ पाठकों को मालूम होगा कि ऋजुसूत्र नय का विवेचन करते हुए भी व्यवहार लोप का भय दिखाया गया है और उसका उत्तर यह दिया गया है कि लोकव्यवहार सर्वनयों के आधीन है। अभयदेव के उत्तर से भी यही प्रतिध्वनि निकलती है। अतः यदि शब्दनयः एकान्त का समर्थक व्याकरण शास्त्र और लौकिक व्यवहार का समर्थक होता तो इस भय की आशंका न रहती इसलिये यहीनिष्कर्ष निकलता है कि मुद्रित सर्वार्थ सिद्धि में 'न्याय्यं' केस्थानपर अन्याय्यं पाठ होना चाहिये।

मुद्रित सर्वार्थसिद्धि में 'न्याय्यं' पद पर एक टिप्पणी दी हुई है। न्याय्यं पद का समर्थक मान कर ही उस टिप्पणी को वहां मुद्रित किया गया है ऐसा मैं समझता हूँ। टिप्पणी का आशय इस प्रकार है—'जलं पतति'के स्थान पर 'आपः पतन्ति' यह व्यवहार होता है। यहां अप् शब्द के आगे बहुवचन का वाचक प्रत्यय का लगाना वास्तव में व्यर्थ ही है . . फिर भी शब्दानुशासन शास्त्र (व्याकरणशास्त्र) के प्रभाव से ऐसा करना पडता ही है। इस आशय को यदि दो भागों में विभाजित कर दिया जाय तो हम देखेंगे कि पहिली दृष्टि शब्दनय की है वह एक वचन के स्थान में बहुवचन का प्रयोग नहीं स्वीकार करता किन्तु दूसरे हिस्से को पढ़ने से हमें मालूम होता है व्याकरण के नियम के अनुसार ऐसा प्रयोग करना पड़ता है अर्थात् इस प्रकार का व्यवहार शब्दानुशासन शास्त्र की दृष्टि में न्याय्य है शब्दनय की दृष्टि में नहीं शब्दानुशासन शास्त्र शब्दनय का विषय नहीं है व्यवहार नय का विषय है। अतः यह टिप्पण भी न्याय्य पद का समर्थन नहीं करती

इस विस्तृत विवेचन से हम इसी निर्णय पर पहुँचते है कि व्याकरण सम्मत व्यवहार या वैया-करणों का मत शब्दनय की दृष्टि में दूषित है और इस लिये वह उचित नहीं माना जा सकता।

दोनों परम्पराओं का समन्वय और शब्दानुशासन शास्त्र को शब्दनय के अनुकूल करने का उपाय

—शब्दनयके सम्बन्धमें जिन दो परम्पराओं

+ लोकसमयविरोध इति चेत् विरुध्यताम् तत्त्वमिह मीमांस्यते, न भैषज्यमातुरेच्छानुवर्ति। सर्वा० पृ० [illegible]

× लोकसमयविरोध इति चेद् विरुध्यताम् [illegible] (न) [illegible] पृ० [illegible] मुद्रित [illegible] में (न) नहीं है, किन्तु होना चाहिये।

* [illegible] लोकशास्त्र व्यवहारविलोप इति [illegible] सर्वनयेषु [illegible]

का दिग्दर्शन ऊपर कराया गया है उनमें आचार्य पूज्यपाद शब्दनय का विषय न बता कर कार्य बतलाते हैं। जब कि अकलंक देव शब्दनय का विषय प्रदर्शित करते हैं। पूज्यपाद कहते हैं कि शब्दनय व्याकरण सम्बन्धी दोषों को दूर करता है। कैसे करता है? इस प्रश्न का उत्तर अकलंक देव के 'लघीयस्त्रय' में मिलता है। वैयाकरणों के मत के अनुसार एक वचन के स्थानमें बहुवचन का, स्त्रीलिंग शब्द के बदले में पुल्लिंग शब्द का, उत्तम पुरुषके स्थान में मध्यम पुरुष का प्रयोग किया जाता है।

ये महानुभाव शब्दों में परिवर्तन मान कर भी उनके वाच्य में कोई परिवर्तन नहीं मानते हैं। जैसे कूटस्थनित्यवादी काल भेद होने पर भी वस्तु में कोई परिवर्तन नहीं मानता। इसी लिये वैयाकरणों का यह परिवर्तन व्यभिचार कहा जाता है। यदि वाचक के साथ साथ वाच्य में भी परिवर्तन मान लिया जाय तो व्यभिचार का प्रसंग ही उठ जाय। अत यदि वैयाकरण शब्द भेद के साथ साथ अर्थ भेद को भी स्वीकार करलें तो शब्दनय शब्दानुशासन शास्त्र का समर्थक बन सकता है। ऐसी दशा में पूज्यपाद का यह कहना कि शब्दनय व्यभिचारों को दूर करता है और अकलंक देव का व्यभिचारों को दूर करने के लिये काल कारक आदि के भेद से अर्थ भेद का स्वीकार करना, दोनों कथन परस्पर में घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। अतः पूज्यपाद ने जिस शब्दनय के कार्य का उल्लेख करके उसके विषय को अस्पष्ट ही छोड़ दिया था उसके विषय का स्पष्टीकरण करके अकलंक देव ने अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया। इसके लिये जैन दर्शन उनका सर्वदा ऋणी रहेगा।

आलापपद्धतिकार का समन्वय

दो परम्पराओं का समन्वय करने के बाद एक तीसरे आचार्य का मत अवशिष्ट रह जाता है जिसकी शब्द योजना उक्त दोनों मतों से बिलक्षण है आलापपद्धति के कर्ता लिखते हैं— 'शब्दात् व्याकरणात् प्रकृतिप्रत्ययद्वारेण सिद्धः शब्दनयः'। यह शब्दनय की लक्षण परक व्युत्पत्ति है। इसका आशय है कि जो व्याकरण से सिद्ध हो उसे शब्दनय कहते हैं अर्थात् शब्दनय व्याकरणसिद्ध प्रयोगों को अपनाता है। शब्दनय और व्याकरण के पारस्परिक सम्बन्ध का स्पष्टीकरण हम ऊपर कर चुके हैं अतः हमारे आशय में इस मत का भी अन्तर्भाव हो जाता है।

आधुनिक हिन्दी ग्रंथों में शब्दनय

जैन दर्शन के मान्य ग्रन्थों के आधार पर शब्दनय का स्पष्टीकरण करने के बाद आधुनिक हिन्दी ग्रंथों में वर्णित शब्दनय के स्वरूप के सम्बन्ध में दो शब्द कहना अनुचित न होगा। एक ख्यात नामा टीकाकार लिखते हैं व्याकरणादि मत से शब्दों में जो परिवर्तन हो जाता है उसका यदि उस परिवर्तन की आकृति के अनुसार अर्थ किया जावे तो अशुद्ध सा मालूम होगा। अत एव व्याकरण की रीति से उस परिवर्तन को केवल शब्दाकृति का परिवर्तन एवं अर्थका अपरिवर्तक मानने वाला शब्दनय है। मालूम होता है टीकाकार महोदय एकान्तवादी वैयाकरणों की तरह शब्दनय का सम्बन्ध केवल शब्दों तक ही सीमित करना चाहते हैं। शायद उन्होंने अर्थनय और शब्दनय को सर्वथा स्वतंत्र मान लिया है। शब्दनय का यह आशय नहीं है कि उसकी सीमा शब्द तक ही परिमित रहे किन्तु शब्द की प्रधानता से अर्थ का निर्णय करने के कारण ही उसके तीनों नय शब्दनय

"दृढ़ मन की महत्ता"

(ले०—श्रीमान् पं० केशरलाल जी शास्त्री जयपुर)

मन हमारे शरीर का राजा है। वह सारे शरीर और इन्द्रियों पर शासन करता है। मन की प्रेरणा के बिना हमारे शरीर में कोई भी क्रिया नहीं होती। मनकी सबलता और निर्बलता का असर शरीर पर पड़े बिना नहीं रहता। जिसका मन सबल और दृढ़ है वह अपने प्रत्येक काममें सफल होता है पर निर्बल और चंचल मन वाला मनुष्य किसी भी काममें सफल नहीं होता। जब उसको एक काम में सफलता प्राप्त नहीं होती है तब वह हताश होकर दूसरा काम प्रारंभ करता है। पर मन चंचल होने के कारण यह दूसरा काम भी अधूरा ही रह जाता है तब वह तीसरे काम का श्री गणेश करता है इस तरह जीवन के अन्त तक न मालूम कितने कामों को वह प्रारंभ करता है फिर भी किसी एक भी कार्य की समाप्ति तक वह नहीं पहुँचता। ऐसा मनुष्य स्वयं भी दुखी और उत्साहहीन होता है और दूसरों को भी उसके उदाहरण से अच्छी शिक्षा नहीं मिलती।

एक अव्यवस्थित मनुष्य अनेकों की हानि का कारण होजाता है। जब मन की चंचलता के कारण मनुष्य के कोई भी काम व्यवस्था से नहीं होते, तब उसका जीवन भार स्वरूप हो जाता है। कार्य सिद्धि के सारे कारणों के मौजूद रहने पर भी अगर मन अव्यवस्थित है तो हम कुछ न कर सकेंगे। अपने ध्येय की सिद्धि में मन की दृढ़ता जितनी आवश्यक और उपयोगी है उतना और कोई दूसरा पदार्थ नहीं है (दृढ़ विचार वाला मनुष्य स्वयं साधनों को जुटा कर कार्य सिद्धि के उसपार पहुँच जाता है, पर जिस के मन में स्थिरता नहीं है वह साधनों के मिल जाने पर भी कुछ नहीं कर सकता।

उदाहरणार्थ—एक मनुष्य के पास कलम कागज और स्याही आदि सब लिखने के सामान मौजूद हैं। पर यदि उसका मन एकाग्र नहीं है तो वह प्रयत्न करने पर भी कुछ नहीं लिख सकेगा क्योंकि उसका मन तो न मालूम कहां २ चक्कर लगा रहा है। यदि ऐसे मनुष्य को पत्र लिखने के लिये मजबूर भी किया जाय तो वह उसे बिल्कुल बिगाड़ डालेगा।

जिस आदमी का मन एकाग्र है वह संसार में बड़े से बड़ा काम कर सकता है। सफलता की लक्ष्मी केवल उसी के गले में प्रसन्न होकर स्वयं वरमाला डालती है। जो अपने मनका राजा है। शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिये कष्टों की चट्टानों को चीरने के लिये और वासनाओं पर विजय प्राप्त करने के लिये निश्चल मन के समान और कोई आवश्यक वस्तु

(१० वें पेज का शेषांश)

कहे जाते हैं। यदि शब्दनय को केवलशब्दाकृति का ही परिवर्तक मान लिया जाय तो ऋजुसूत्र सम भिरूढ़ तथा एवंभूतनय से उसकी संगति कैसे बैठाई जा सकती है पता नहीं किस शास्त्र के आधार से इस लक्षण की कल्पना की गई है?

लेख बहुत बढ़ गया है इस लिये इस विचार को यहीं समाप्त किया जाता है। आशा है मेरे विद्वान मित्र को इस उत्तर से संतोष होगा।

नहीं है। जिसका मन चंचल होता है वह पताकाके उस कपड़े के समान है जो हवा के झोंकों से प्रति क्षण हिलता रहता है। जिसका मन पानी की लहरों के समान बहुत चंचल है उससे कुछ भी काम होने की आशा मत करो अव्यवस्थित चित्त मनुष्य एक भयंकर बला है वह अपना और दूसरों का भी अकल्याण करताहैइस सम्बन्ध मेंएक कविकायह श्लोक हमें याद आ गया है कि " क्षणे रुष्टाः क्षणे तुष्टाः रुष्टाः तुष्टाः क्षणे क्षणे। अव्यवस्थितचित्तानां प्रसादो ऽपि भयंकरः।" अर्थात् जो कभी नाराज होते हैं कभी खुश होते हैं कभी हंसते और कभी रोते है ऐसे मनुष्यों की प्रसन्नता भी एक भयंकर वस्तु है।

जिन्हें अपने जीवन में कुछ भी काम करना है। किसी भी दिशा में आगे बढ़ना है और जिन की यह अभिलाषा है कि हमें अपने जीवन में असफलताओंसे दूर रहकर अभीप्सित मनोरथ को पूरा करना है उनका सर्व प्रथम कर्तव्य यह है कि वे अपने मनको स्थिर रखनेकी शिक्षा दें। इस बातको कभी न भूलना चाहिये कि हमारी सारी उन्नतियों का मूल केवल स्थिर मन ही है। निराशा भय और द्विविधा उन लोगों के मन में पैदा होती है जिनका मन मजबूत नहीं। जो आरंभ में शूर होते हैं पर समाप्ति में पहले दर्जे के कायरःउनका मन सबसे निर्बल होता है। अस्थिर मन वाले मनुष्य के विचारों को बदलना एक साधारण सी बात है। वह अपने विचारों के विरुद्ध थोड़ी सी दलील पाता है उन्हें तत्काल बदल डालता है लेकिन उन बदले हुये विचारों को भी स्थिर नहीं रखता। यदि उनके विरुद्ध भी कोई युक्तियां देने वाला मिल जायगा तो उन्हें भी बदल डालेगा। ऐसे मनुष्य के स्वयं कोई निजी विचार नहीं होते।

इस युग में भी जो हमें आश्चर्य में डालने वाला अनेक नये २ यंत्रों का आविष्कार हुआ है या हो रहा है इसका कारण भी दृढ़ मन ही है। चंचल प्रकृति वाले मनुष्य किसी तरह का कोई आविष्कार नहीं कर सकते। किसी नई बात के पैदा या प्रगट करनेमें सतत चिंतवन करने की आवश्यकता है और यह दृढ़ मन के बिना हो नहीं सकता। योरप के प्रसिद्ध विद्वान सर आइजक न्यूटन ने जो गुरुत्वाकर्षण का आश्चर्यकारी आविष्कार किया था उसका कारण केवल दृढ़ मन था। वह इस सम्बन्ध में लगातार वर्षों तक सोचता रहा। जब उसके बगीचे में सेव वृक्ष से एक फल गिर पड़ा तो इसपर उसने घटों विचार किया किन्तु और इस विषय की चिंतना सतत चलती रही। शायद उसकी चाची ने एक दिन उसको कहा था कि तुम इस बगीचे में बैठे बैठे क्या सोचा करते हो उस बिचारी को क्या मालूम था कि वहएक महान आविष्कार की भूमिका की धुन में लगा हुआ है। यही बात जिसने रेल के एंजन का आविष्कार किया है उसके सम्बन्ध में कही जा सकती है। लिखने का तात्पर्य यही है कि संसारमें ऐसा कोई भी आविष्कार नहीं है जो चंचल चित्त के द्वारा किया जा सके। आविष्कारों की बात को जाने दीजिये अव्यवस्थित चित्त मनुष्य तो अच्छी तरह एक साधारणसे साधारण काम भी नहीं कर सकता। सर जगदीशचन्द्र वसु और सर चन्द्रशेखर वेंकटरमन आदि भारत का मुख उज्ज्वल करने वाले प्रसिद्ध विद्वानोंने जो आविष्कार किये है वे भी उनकी निरंतर चिन्तचिन्तना व गम्भीर मनन का ही फल है। जब हम इन महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ते है तो उनसे हमें यही शिक्षा मिलती

है कि सब से पहले मनको एकाग्र करो, वरना दुनिया में कुछ भी न कर सकोगे। जिनमें हृदय की एकाग्रता का गुण है उनमें अन्य दूसरे गुण अपने आप ही आ जाते हैं।

दृढ़ मन की महत्ता के सम्बन्ध में जितना लिखा जाय उतना ही थोड़ा है। चाहें तो एक पुस्तक भरी जा सकती है। इस लेख द्वारा तो हमें केवल कुछ ऐसे उपाय बतलाने हैं जो हमारे मन को दृढ़ और निश्चल बनाने में सहायक हों। हम उन्हीं उपायोंको संक्षेप में यहाँ लिख देते हैं—

१ ऐसे मनुष्यों के साथ हमें अधिक सम्पर्क नहीं रखना चाहिये जिनकी प्रकृति अत्यन्त चंचल है और जो किसी भी कार्य को भली भांति पूरा नहीं कर सकते। ऐसे सत्पुरुषों की संगति में रहने की हमें आवश्यकता है जिन्हों ने अपने मन के घोड़े को अपने अभ्यासों द्वारा वश में कर लिया है, और इस मन की साधना से जो अपने प्रत्येक स्वीकृत कार्य में सफलता प्राप्त करते है। गणितज्ञ जज, वकील, कवि और दर्शानिक विद्वानों कासम्पर्क और संगति मन को दृढ़ बनाने में बहुत कुछ सहायता दे सकती है।

२—इच्छाएं हमारे हृदय में आकुलताएं उत्पन्न करती है और आकुलता से चंचलता पैदा होती है। अत चंचलता को रोकने के लिये अनावश्यक इच्छाओं को रोकना भी बहुत जरूरी है। इच्छाओं की जितनी अधिक वृद्धि होगी हमारे मन में उतने ही अधिक संकल्प विकल्प उत्पन्न होते जायेंगे। हमने शेखचिल्ली की कथा में सुना है उनकी इच्छाओं की कोई सीमा नहीं होती इसका कारण उनके मन की चंचलता है। मन की चांचलता से इच्छा पैदा होती है और इच्छा से मन की चांचलता। इनमें अनादि कालीन कार्य कारण भाव है। एक इच्छा को लेकर जो कार्य क्षेत्र में उतरता है उसको अवश्य सफलता प्राप्त होती है लेकिन अनेक इच्छा वालों की सफलता के खंड २ हो जाते है।

३—मनकी दृढ़ता मानसिकबल है और मानसिक शक्ति का शरीर के साथ में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। जिनकी शारीरिक शक्ति प्रबल होती है उनकी प्राय मानसिक शक्ति भी प्रबल देखी जाती है यद्यपि इस नियम का अपवाद भी मिल सकता है फिर भी राजमार्ग इसे ही कहना पड़ेगा। यह तो सर्व सम्मत बात है कि शरीर का अधिष्ठाता ब्रह्मचर्य है अतः जो अपने मन को दृढ़ बलवान् एवं महान् बनाना चाहे उसको ब्रह्मचर्य का अधिकाधिक रूप से पालन करना चाहिये। वर्तमान युग के अधिकांश अविष्कारकों ने अपने सारे जीवन को अविवाहितही व्यतीत किया किया था।

४—अधिक बोलने से हमारी शक्तिका ह्रास होता है इस ह्रास का असर मन पर पड़े बिना नहीं रहता इस लिये अनावश्यक अधिक बोलना बहुत हानि कारक है। हमारे शास्त्रों में ही नहीं हिन्दु धर्म के शास्त्रों में भी अधिक न बोलने को अच्छा बतलाया है। बिल्कुल ही न बोलना मौन रखना तोएक तरह का व्रत है। मन को स्थिर बनाने के लिये इस व्रत का अभ्यास करना भी बहुत आवश्यक है इस के लिये जहां तक हो एकान्त जीवन व्यतीत करना चाहिये। मैंने एक दो ऐसे आदमियों को देखा है जो वर्ष भरमें केवल ६ माह बोलते है उनकी मानसिक दृढ़ता को देखकर मैं तो दंग रह गया पर मन साधारण के

लिये इतना आगे बढ़ना सम्भव नहीं, तो भी हमें एक माह में कम से कम एक बार अवश्य मौन धारण करना चाहिये। महात्मा गांधी जी तो सप्ताह में एक मौन व्रत धारण करते हैं। हमें हमारे कोई भी व्रत जप तप उपवास बिना मौन के नहीं करना चाहिये इससे मन की दृढ़ता बढ़ने में बहुत कुछ सहायता मिलेगी।

५—बाहरी परिस्थितियों का भी हमारे मन पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है इन से हम व्याकुल हो उठते हैं और मन की निश्चलता को खो बैठते हैं। हमें ऐसा प्रसंग उपस्थित होने पर अधीर न होकर मन को काबू में रखना चाहिये। परिस्थितियों का प्रवाह इतना जोरदार और बलवान् नहीं माना जा सकता जो हमारे मनके सुमेरुको डिगा सके इसलिये हमें अपने मन को सुमेरु के समान निश्चल बनानेकी आवश्यकता है। परिस्थितियां और मन की चंचलता में भी कार्य कारण भाव है।

६—मन को दृढ़ बनाने के लिये अध्ययन सब से अधिक उपयोगी है पर पुस्तकों के चुनाव में विवेक से काम लेना चाहिये। असत्साहित्य के अध्ययन करने से निश्चल मन भी चंचल होने लगता है तो चंचल का निश्चलहोनाकैसेसम्भवहो सकताहै।फिर भी यह कहना होगा कि पुस्तकों का चुनाव अपनी अभिरुचि के अनुसार ही करना चाहिये। सबके लिए एक से ही विषय नहीं बतलाये जा सकते हाँ गणित आदि कुछ खास विषय मन की दृढ़ता में औरों की अपेक्षा कुछ अधिक सहायक होते हैं। पाठकों ने पढ़ा होगा कि एक बार स्वर्गीय स्वामी रामतीर्थ के पास जर्मनी से हल होने के लिये पांच प्रश्न आये थे। वे उन प्रश्नों को हल करने के लिये संध्या के समय यह दृढ़ संकल्प करके बैठ गये कि या तो सूर्योदय तक मैं इन्हें हल कर लूँगा नहीं तो अपनी इस लौकिक लीला को समाप्त कर डालूँगा। उन्हों ने अपने सुनिश्चल मनोयोग से ठीक सूर्योदय के समय तक पांचों प्रश्नों को हल कर डाला। वे रात भर अपने इस कार्य में दृढ़ता पूर्वक लगे रहे, यह निश्चल मन का ही प्रभाव है। प्रसिद्ध गणितज्ञ डाक्टर गणेशचन्द्र के निश्चलमन के सम्बन्ध में भी एक ऐसी ही बात सुनी जाती है एक बार उनके अंगूठ होगया था उनके मित्र डाक्टरों ने कहा आपरेशन कराये बिना काम न चलेगा। गणेशचन्द्र जी तैयार हो गये पर जब उन्हें इसके लिये क्लोरो फारम सुँघाने लगे तो बोले यह क्या करते हो मैं इसकी जरूरत नहीं समझता। जाओ मेरे पुस्तकालय से अमुक किताब उठा लाओ मैं उसके पढ़ने में लवलीन हो जाऊं तब आप आपरेशन करलें ऐसा ही किया गया निरापद रूप से आपरेशन हो गया। यह सब मन की दृढ़ता के आश्चर्य पूर्ण चमत्कार है। ये तो वर्तमान युग की बातें है। भारत के प्राचीन ऋषियों की मानसिक दृढ़ता के चमत्कार तो इनसे भी अधिक आश्चर्य प्रद हैं।

७—किसी कठिन समस्या के उपस्थित होजाने पर हम लोग घबरा जाते हैं। बहुत से कठिन कार्यों को हम स्वयं न कर उन्हें दूसरों के शिर पर डाल देते हैं, यह बात ठीक नहीं। इससे हमारा मन कमजोर होजाता है। उचित बात तो यह है कि कार्य कितना ही कठिन क्यों न हो हमें स्वयं ही उसके करने का प्रयत्न करना चाहिये। मैं ऐसे आदमी को जानता हूं जो खाता बहियों को जोड़ देने से घबराता था इसका कारण वही है जो मैं ने ऊपर लिखा है।

८—हमें हमेशा ऐसा विचार करते रहना चाहिये कि मेरा हृदय सुमेरु के समान दृढ़ है। मैं बिल्कुल स्वस्थ हूँ। जिस कार्य को मैं ने अपने हाथ में लिया है चाहे कुछ भी हो वह अवश्य सिद्ध होगा इस सम्बन्ध में प्रतिकूलतायें नष्ट हो कर अनुकूलतायें मेरा साथ देंगी।

इस तरह मन की दृढ़ता के कुछ साधनों का दिग्दर्शन कराया है। पाठक उनका अवश्य उपयोग करें। हां मैं एक बात लिखना भूल गया वह यह है कि मानसिक दृढ़ताको प्राप्त करनेके लिये सबसे पहले मनुष्यको सदाचारी, परोपकारी, दयालु और सत्य का पुजारी बनना चाहिये। हृदय में विश्व कल्याण की भावना को उत्पन्न करना चाहिये क्योंकि जो सदाचारी नहीं होते, जिनका जीवन पवित्र नहीं होता उन को ठीक अर्थ में मानसिक दृढ़ता प्राप्त नहीं होती। पापियों के मन तो बहुत अधिक चंचल होते हैं। हमारे प्राचीन ऋषियों ने भी दयालुता, परोपकारिता, सदाचारता आदि गुणों के प्राप्त कर लेने पर ही मन पर विजय प्राप्त किया है। जो मनुष्य परोपकारिता आदि गुणों से अपने हृदय की भूमि को स्वच्छ बना लेगा उसी के मन में दृढ़ता का सुंदर बीज सफलता के मनोरमफलको उत्पन्न करेगा।

पातंजलि योगदर्शन को योग विद्या का रहस्य भी मन की दृढ़ता ही है क्योंकि उसके बिना संप्रज्ञात और असंप्रज्ञात योग अथवा सबीजसमाधि और निर्बीज समाधि नहीं हो सकती। जैन शास्त्रों का धर्म्य ध्यान और शुक्ल ध्यान अथवा पिंडस्थ, पदस्थ रूपस्थ और रूपातीत नामक ध्यान भी मन की दृढ़ता के ही फल हैं। मनकी दृढ़ता के बिना कोई क्षपक श्रेणी नहीं चढ़ सकता और क्षपक श्रेणी बिना कोई कर्मों का नाश नहीं कर सकता इस लिये निश्चल मनो योग ही इह लौकिक और पारलौकिक अथवा सांसारिक और आध्यात्मिक सारे सुखों की मूल भित्ति है।

इस कारण सफल, शूरवीर, विद्वान, विचारशील और प्रख्यात यशस्वी बनने के लिये अपनामन स्थिर करना चाहिये।

अभिलाषा

(ले०—श्रीमान पं० गुणभद्रजी जैन)

मन मध्य सदा भगवान रहे,
पद पंकज का बस ध्यान रहे।
गतराग जिनेश्वर जो जग में,
उसका दृढ़ ही श्रद्धान रहे ॥१॥

निज-धर्म न भूलूँ कदापि कहीं,
गुरुओं प्रति भी सम्मान रहे।
उनके वचनामृत का मुझको,
चलते फिरते शुभ ज्ञान रहे ॥२॥

प्रभु ! ऐहिक भोग न चाहूँ कभी
उनसे यह चित्त उदास रहे।
नहिं दीन बनूं जग में रहते,
दिन रात भले तन त्रास रहे ॥३॥

निज आत्म विकाशन हेतु यहां,
सत्संगति में मम वास रहे
मन साधन में अनुरक्त बने,
परवाह न हो नर पास रहे ॥४॥

यह दृष्टि न हो पर दोषों पर
गुण वर्द्धन में उत्साह रहे।
करके शुभ कार्य कभी परका,
उसके फलकी नहीं चाह रहे ॥५॥

यह कार्य न क्यों बनता मुझसे,
इसकी मन में बहु दाह रहे।
सुख, शान्ति, दया समता रसका
निशि वासर शुद्ध प्रवाह रहे ॥६॥

जननी, भगिनी सम नित्य यहां,
निष्पाप हृदय, परदार लखे।
पर को दुख हो जिस कारणसे,
नहिं कोई कभी कुविचार रखे ॥७॥

पर द्रव्य सदा रज के सम है,
इस भांति सभी मनको निरखें,
सब छोड़ विभाव अशुद्ध दशा,
अपनी अनुभूति अबाध चखें ॥८॥

शिक्षोपयोगी मनोविज्ञान

गताङ्क से आगे

कामुकता की प्राकृतिक शक्ति (Sexual Instenct)

प्रत्येक प्राणी में कामुकता की मात्रा थोड़ी या बहुत पाई जाती है । कामुकता की प्राकृतिक शक्ति मनुष्य में किस अवस्था में जाग्रत होती है इसमें मनोविज्ञान वेत्ताओं में मतभेद है। एक महान मनोविज्ञान वेत्ता फ्रूड (Freud) का कहना है कि

Sexual impulse is strong in earlier childhood. It becomes dorment in later childhood. In adolescence, the repressed impulse is raised again. But now it, rewakenes on a different plane. The child impulse is directed towards parents and self The adolescent's is projected on members of the opposite sex, who are strangers "

अर्थात् "कामुकता के भाव बहुत छोटे बच्चे में ही तीव्रता से जाग्रत हो जाते हैं। लेकिन तीन चार साल के बच्चे में साधन न मिलने पर यह भाव दब जाते हैं किन्तु यौवनावस्था आने पर यह भाव दूसरे ही प्रकार से जाग्रत होते हैं। बच्चे के कामुकता के भाव अपने जान पहिचान व माता पिताओं के साथ ही होते हैं। लेकिन यौवनावस्था प्राप्त होते ही वह अपने भावों को अपने से विपरीत (Sex) लिङ्ग के प्राणीके सन्मुख प्रकट करता है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि बच्चों में प्रारम्भ से ही ऐसे भाव मौजूद रहते हैं। लेकिन वे जब तक यौवनावस्था को प्राप्त नहीं होते तब तक वे अपने आप को प्रकट रूप में लाने के लिए सफल नहीं होते। लेकिन अगर उनको साधन मिले तो वे इन भावों को काम में लाने के लिये कुछ भी न घबरायेंगे। और प्रारम्भ में खेल के रूप में ही इन भावों को प्रयोग में लावेंगे होस्टल या बोर्डिंगहाउस की छोटी बालिकाओं के सम्बन्ध में लिंडसे साहिब का कहना कि अमेरिका की साधारण बालिका अपने मस्तिष्क के संभालने या नियन्त्रण करने के योग्य परिपक्व होने से वर्षों पहले कामोत्तेजना का अनुभव करने लगती है। हाई स्कूल के छात्र और छात्राओं का जहां कहीं भी समागम होता है उनमें ९० प्रतिशत ऐसी होती हैं जो आलिङ्गन और चुम्बन में आनन्द लेती हैं। जो बालक बालिकायें चुम्बन और आलिङ्गन आरम्भ कर देते हैं। उनमें कम से कम ५० प्रतिशत बालक यहीं तक नहीं रुके रह सकते। वे और आगे बढ़ते हैं और विषय भोग सम्बन्धी दूसरे प्रकार की ऐसी स्वतंत्रता भी लेने लगते हैं जो समस्त सभ्य समाजों में घोर अनुचित समझी जाती है। लिंडसे साहब के इस कथन से पता चलता है कि छोटी २ बालिकाओं और बालकों में कामुकता के भाव मौजूद रहते हैं। अगर वायु मण्डल इन भावों के जाग्रत करने वाला है तो इस घटाटोप पाप में प्रवृत्त होने में तत्पर हो जाते हैं और अपने जीवन को सदा के लिये कलङ्कमय कर डालते हैं। जैन दर्शन के अनुसार जीव मात्र में चार संज्ञायें सदैव विद्यमान रहती हैं। आहार, भय, मैथुन, और परिग्रह। इन संज्ञाओं के कारण जीव मौका मुनासिब प्रवृत्ति करता रहता है। बच्चा पैदा होते ही

आहार की प्रवृत्ति करता है। और भय की मात्रा भी उसमें विद्यमान रहती है। परन्तु मैथुन और परिग्रह यह दोनों शक्तियां गुप्त रहती हैं। परन्तु समय पाकर परिग्रह और मैथुन की भावनायें कार्य रूप होने में अनुकूल हो जाती हैं। अगर वातावरण दूषित है तो मैथुन के भाव शीघ्र ही जाग्रत हो जाते हैं और वे बालक या बालिकाओं को अधःपतन की तरफ ले जाते हैं। ऐसे भावों का समय के पूर्व पैदा हो जाना हानिकर होता है। योरप और अमेरिका में यह भाव Co education सहशिक्षाके कारण व दूषित वातावरण के कारण बच्चों में पैदा हो जाते हैं। लेकिन भारतमें Co education की प्रथा कुछही स्कूलों को छोड़ कर प्रचलित नहीं है। यहां का तो वातावरण रहन सहन व आबो हवा ऐसी है जिनसे बच्चे बिगड़े बिना रह नहीं सकते। बालकों के चरित्रहीन होने के कुछ निम्न लिखित कारण हैं।

(१) पशु, पक्षी अपनी भोग वासना खुले तौर पर करते है। यह बातें बच्चों की दृष्टि में आती ही रहती हैं। बाजार में तथा खुले आम पशुओं की गर्भधारण क्रिया का भी प्रभाव दूषित कामवासना के भावों को उत्पन्न करने में सहायक होता है।

(२) घर में पति पत्नियां एक कमरे में सहवास करते हैं। बालक भी उनके साथ ही रहते है ऐसा होना बालकों के हृदय में विकारोत्पत्ति का कारण होता है।

(३) महफिलों में तथा नाचगान में हाव भाव के दृश्य प्रकट होते रहते हैं। क्या बच्चों के हृदय में ये बातें दूषित बनाने के साधन नहीं हैं?

(४) नावेल (Novel) और दूषित किस्से कहानियां अधिकतर विषैले होते हैं।

(५) थियेटर और सिनेमा भी बालकों के बिगाड़ने में कम साधन नहीं हैं।

(६) होलीके भण्ड वचन और स्त्रियोंकी विवाह की गालियाँ भी बच्चोंके हृदय पर दूषित विचार पैदा कर देती है।

(७) अड़ोस पड़ोस में बाल्य विवाह का होना समाजमें अन्य छात्रोंके लिये विष फैलाने का कार्य है। विवाहित बच्चे अन्य बच्चों को दूषित कर ही देते हैं।

(८) विकारोत्पन्न करने वाली तस्वीरें तथा लेख व वार्तालाप भी बच्चों के लिये उत्तेजना पैदा करने के लिये काफी मसाला है।

(९) घर के बड़े बूढ़े विषय भोग या तत्संबंधी झगड़ों की चर्चा करते रहते हैं। उनके मध्यमें बालक रहकर दूषित भावों को ग्रहण करता ही रहता है।

(१०) जब कोई पुरुष या स्त्री खुले आम घर में किसी को डाल कर अनुचित सम्बन्ध कर लेते हैं तब उसका प्रभाव कोमल बालकों के चित्त पर खराब ही पड़ता है।

(११) छोटी २ उम्र में कुछ वर्ष तक बालक बालिकाओं का नङ्गा रहना भी हानिकर होता है।

(१२) कभी कभी एक ही दुष्ट बालक अनेक भोले बालकों को अपनी सङ्गति में लेकर नष्ट कर देता है।

(१३) दास दासियों की प्रथा जिन घरों में होती है। वहां ऐसी खराबियों का होना अधिकतर सम्भव है।

(१४) कोई २ स्त्री खराब आदत की होती है उसको "बच्चा कश" कहते हैं। यह स्त्रियां बालकों के लिये भयङ्कर होती है। इन में बूढ़ी स्त्रियां अधिक देखने में आई हैं।

(१४) बालक बालिकाओं का एकांत में रहना, खेलना तथा पढ़ना हानिकर होता है।

"बच्चोंको कामवासना के भाव पैदा होने से कैसे बचाया जाय"

बालकों को Sex Instruction कामशास्त्र की शिक्षा देने के सम्बन्ध में मनोविज्ञान वेत्ताओं में मत भेद है। कुछ मनोविज्ञान वेत्ता ऐसी शिक्षा देना सर्वथा अनुचित समझते है। इन विज्ञानवेत्ताओं का कहना है कि बालकों में Contra Suggestion विरुद्ध प्रवृत्ति की प्राकृतिक प्रवृत्ति अधिक होती है। जिस बात के लिये बालकों को इन्कार किया जाता है उसी के करने के लिये वे दौड़ पड़ते है। जिज्ञासा (Curiosity) की प्राकृतिक शक्ति के प्रबल होने के कारण यह प्रत्येक विषय की जानकारी की इच्छा सदैव रखते हैं। इन में चीज को तोड़ने फोड़ने—उलट फेर करने व हर पहलू से उसकी जाँच करने की चेष्टा सदैव बनी रहती है। बहुधा देखा गया है कि अध्यापक के इन्कार करने पर भी बच्चे मना किया हुआ काय अधिक करने में उत्साह दिखाते है।

Miss Jane Addaws का कहना है कि बालकों के कोमल हृदय पर कामवासना को रोकनेके उपायों को कहना या समझाना ही उनमें कामवासना को पैदा करना है। मिस जेन के इस कहने में तथ्य अवश्य है। लेकिन फिर भी अध्यापक का कर्तव्य बालकों को स्वतः उपस्थित पतन के गढ़ों से युक्तियों द्वारा बचाना आवश्यक है। अन्यथा बालक दूषित वातावरण में पड़ कर अपने जीवन को नष्ट करने में जरा भी नहीं घबरायेगा। अध्यापक को समय २ पर कोमल बालकों के हृदय में कामवासनाओं के न उत्पन्न होने की युक्तियें सर्वदा सोचते रहना व उनको कार्यरूप में लाना अत्यंत आवश्यक है। कुछ युक्तियाँ निम्नलिखित प्रकार से हैं।

१—बच्चों को ऐसे दूषित भावों से बचाने के लिये शिक्षा का उत्तम ढंग यह हो सकता है कि शरीर की बनावट और किन २ पदार्थों के रक्षण से मनुष्य स्वस्थ रह सकता है बतलाया जाय। और इस ही सिलसिले में रुधिर वीर्य आदि शरीरको पुष्ट रखने वाली बातों की पुष्टि की जाय।

२—बच्चों को शारीरिक खेल कूद में तथा अनेक प्रकार के व्यायामों में लगाया जाय। ताकि उनमें स्वतः शरीर निर्माण के भाव तथा आकांक्षाये पैदा हों।

३—बालकों को प्रति मास नियत तिथिपर शारीरिक परीक्षा के लिये उपस्थित किया जाय। प्रत्येक मास उनका तोल देखा जाय। छाती आदि भागों की नाप ली जाय समानअवस्था वाले बालकों की कुश्ती तथा दौड़ वा अन्य खेलों से तुलना की और उनके कमती बढ़ती होने के कारणों पर विचार किया जाय।

४—बालक एक सोसाइटी बनावें। जिस में तन्दुरुस्ती पर विचार हो—खेल हो—व्याख्यान हो-बालक स्वयं व्याख्यान दें तथा सुनें।

५—वीर और तन्दुरुस्त बालकों की तस्वीर का एक अजायब घर हो। जिन में बालक अपने हाथ से बनाये हुये ड्राइंग की हुई तस्वीरें बनाकर लावें। वे तस्वीरें अजायब घर में रक्खी जाय।

६—Health Comparison स्वास्थ्य तुलना

की आयोजना की जाय। तन्दुरुस्त बच्चों को इनाम दी जाय।

७—तन्दुरुस्त (Healthy) बालकों की एक प्रदर्शनी (Exhibition) हो जिसमें उन बालकोंकी तन्दुरुस्ती के बढ़ाने का कारण—अन्य बालकों को बतलाया—जाय और उन में भी तन्दुरुस्त होने के भाव कूट कूट कर भर दिये जांय।

८—बालक, बालिकाओं को नग्न न रहने दिया जाय। जननेन्द्रिय से हाथ न लगाने दिया जाय। और बताया जाय कि ऐसा करने से बीमारी आती है।

९—बालक बालिकाऐं साथ न रहें यदि रहना ही पड़े तो प्रबन्ध उचित हो।

१०—बालक बालिकायें दूषित वातावरण से जहाँ तक सम्भव हो सर्वदा दूर रक्खे जावें।

११—नावेल या इसी प्रकार के लेखादि के अध्ययन में बच्चों को सर्वदा बचाया जाय।

१२—विवाह सम्बन्धी चर्चाएं इनके सन्मुख न की जावें।

१३—चारित्रहीन जन की में सङ्गति बच्चों को न ले जाया जाय। कुत्सित चारित्र वाले पुरुष का बच्चों पर बुरा असर होता है।

१४—अमुक लड़का क्यों मर गया? बताया जाय कि बाल्यावस्थामें उसका विवाह होगया था या एक बालिकाके साथ खेला करता था गर्म पदार्थ बहुत खाया करता था। वह खराब नावेल पढ़ा करता था सिनेमा थियेटर देखने को वह बहुत पसंद करता था उसकी आदतें खराब हो गई थीं। इत्यादि ऐसी बातें कहनी चाहिये जिससे उसकी मृत्यु का कारण उसके हृदय पर खराब आदतों से घृणा तथा भय पैदा करदे।

कामुकता की प्राकृतिक शक्ति और भारतीय विद्यार्थी

भारत विषुवत रेखा के पास आजाने के कारण गर्म देश है। यहां की जलवायु अन्य योरुपीय देशों के मुकाबले में ज्यादा गर्म है। गर्म देशों में कामुकता की शक्ति का जल्दी प्रादुर्भाव होता है। यहाँ के मनुष्यों का अल्पायु में कामी होना सम्भव है। अर्थात् इन लोगों में काम वासनायें शीघ्र ही उत्पन्न हो जाती हैं। यहां का विद्यार्थी समाज भी अन्य योरुपीयों देशों के मुकाबले में कामवासना के लिये ज्यादा बद-नाम है। विदेशों में भारतका विद्यार्थी इसी कामवा-सनाकी प्राकृतिक शक्तिके कारण पूरा बदनाम होगया है। जर्मनी की सरकार भारतीय विद्यार्थियों का इसी लिये विरोध कर रही है कि इन विद्यार्थियों ने अपने आप की नैतिक कमजोरियों के कारण विदेशों में अपने समाज को अप्रिय बना लिया है और सम्पूर्ण भारत को कलंकित कर दिया है। भारत के किसी भी प्रांत से अध्ययन करने गया हुआ विद्यार्थी अपने जीवन को किसी साथ पढ़ने वाली या अन्य युवती के साथ व्यतीत करने में ज्यादा गौरव समझता है। भारत में उनके मां बाप को इसकी खबर नहीं लगती जब उनके अध्ययन को नियत समय बीत जाता है। और रुपया मिलना बन्द हो जाता है तब वे अनुचित रूप से सम्बन्ध किये गये अपनी विदेशी पत्नी और उसके बच्चों को उनके भाग्य पर छोड़ कर भारत भाग आने का प्रयास करते हैं। उनकी स्त्री उन पर

भरण पोषण के खर्च का मुकद्दमा दायर करती है और वे संकट में फंस जाते हैं। यहां ही तक इन भारतीय विद्यार्थियों की इतिश्री नहीं होती बल्कि यह लोग जहाँ कहीं भी जाते हैं अपने को बदनाम किये बिना नहीं रहते। भारतीय विद्यार्थी जिस किसी सुन्दरी को बाजार, बाग, सिनेमा, क्लब आदि स्थानों में देखते हैं घूरे बिना नहीं रहते। और उससे अनुचित सम्बन्ध की बात को विचारा करते हैं। यह ऐसा समझते हैं कि यूरोपीय देशों की सुन्दरियों को चंगुल में फसाना एक मामूली सी बात है। इस अनुचित कार्यवाही के कारण सारे हिंदवासियों पर से विदेशियों का विश्वास उठ गया है। वे भारतीयों को संशकित दृष्टि से देखते हैं। भारतीय डाक्टरों को स्त्रियों के अस्पताल में जाने की इजाजत नहीं मिलती। सामाजिक उत्सवों में भारतीय लोग भाग नहीं ले सकते। गृहस्थ इनके लिये कामी विचारों के कारण ही इनको शरण देने में घबराते हैं। स्त्रियों के नाचघर व क्लबोंमें यह बहुत कम निमंत्रित किये जाते हैं। स्त्रियां भी इनको काले जंगलीके नाम से पुकारती है। स्वामी सत्यदेव, गोखले, महात्मा गाँधी आदि महात्माओं का कहना है कि गौरांग देशों में स्त्रियों का मायाजाल भारतीय विद्यार्थियों के लिये एक जबर्दस्त लोभ होता है जिसमें पड़कर वे अपना भविष्य नष्ट कर देते हैं। परदेशमें इस प्रकार अपनी संयम की लगाम ढीली कर देने का परिणाम बहुत बुरा होता है। भारतीय इतिहास के पढ़ने से ज्ञात होता है कि यहांका समाज अपने संयमके लिये सारे संसार का आदर्श बना हुआ था। भारतीय रमणियां व मनुष्य ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने में पक्के होते थे। इनकी शिक्षा, रहन सहनके तरीके व अन्य वातावरण इनको पूरा संयमी बनाने में लाभप्रद होता था। क्या मजाल थी कि यहां के तपस्वियों को इन्द्र की अप्सरायें भी डिगा सकें। आज उसी भारत का विद्यार्थी अपने आप को विदेशी असंयमी होने के कारण गौरांग छोकरियों के चंगुल में फंसकर अपनी शर्म लज्जा व पूर्व संचित गौरव को नाश में मिला रहा है।

इस पतन के लिये हम भारतीय विद्यार्थी को किसी भी प्रकार से दोषी नहीं ठहरा सकते। यह दोष समाज व बिगड़े हुये वातावरणका है जिसका कारण यहाँ की शिक्षा व अध्यापक ही है। स्त्री सम्बन्धी बुरी और भद्दी गालियों से हिन्दुस्तानी बच्चे की शिक्षा प्रारम्भ होती है। उनके माता पिता बड़े बूढ़े स्त्री जाति का अनादर करना उन्हें बचपन से सिखाते हैं। स्कूलों में उन्हें स्त्री जाति का आदर करना नहीं सिखाया जाता। स्त्रियों के प्रति उनके मन में उचित भाव नहीं भरे जाते। सांसारिक जीवन में स्त्री संबंध कैसे निबाहना होगा इसकी शिक्षा उन्हें नहीं दी जाती। भारत का पर्दा सिस्टम भी इस पतन के लिये एक विशेष कारण उपस्थित करता है। लड़कियां, लड़कों से परदे के कारण दूर रहती हैं। लड़कों को वे सशंकित हृदय से देखती है। तथा लड़के भी दूसरों के सामने इनसे वार्तालाप करते घबराते है। सभा सोसाइटी, नाटक, थियेटर, क्लब, सिनेमा आदि पब्लिक स्थानों पर यह आपसमें नहीं मिल सकते, तथा अपने विचारों को एक दूसरे के सन्मुख प्रकट करने में यह लज्जा प्रतीत करते हैं। स्कूलों की श्रेणियों में भी यह अलग २ ही पढ़ाये जाते हैं। इन सब बातों का नतीजा

यह होता है कि यहाँ के लड़के और लड़कियों में एक दूसरे के प्रति भाई बहिन के भाव पनपने ही नहीं पाते। लड़के स्त्री जाति के प्रति अनुचित कल्पनायें करते रहते हैं। तथा जब इनको अन्य व्यक्तियों के सम्मुख बातचीत करनेका अवसर नहीं मिलता है तो ये एकांत में मिलने का अवसर ढूँढा करते हैं। और अपने आप को सर्वनाश में मिलाने का पूरा प्रयास कर डालते हैं। इस घोर असंयमी वातावरण को दूर करने के लिये निम्नलिखित उपायों को शीघ्र काम में लाना आवश्यक है।

भारतीय माता पिताओं को चाहिये कि वे अपनी रसना को कच्ची उम्र के बच्चों के सामने सावधानी से काम में लावें तथा आपसी कुव्यवहारों को करीब २ कतई बदल दें, स्त्री संबंधी गाली देना त्याग दें। हर बात के पीछे गाली का एक शब्द रखने की आदत छोड दें। जब बच्चा जरा बढ़े तो उसे स्त्रीजाति के प्रति उचित व्यवहार की शिक्षा देना सर्व। इस काम में माता पिता की सहायता स्कूलों के मास्टरों को करना आवश्यक है लड़के लड़कियाँ गंदी गालियां न बकें आपस में कुव्यवहार न करें इसकी निगरानी माता, पिता, मास्टर, पडोसी, गांव वाले और मुहल्ले वाले सभी को करनी होगी। इस बीस लड़के-लड़कियां खुलेआम (Out door games) मैदानी खेलों में हिस्सा लें तथा किस्से कहानी कहें। चुने हुये विषयों पर वार्तालाप तथा Debate करें। यह आपस में एक दूसरे को भाई बहिन करके पुकारें तथा अपने हृदय में भी ऐसे भाव भरते जाँय। हर एक आदमी का कर्तव्य है कि वे जब किसी को कुछ बदचलन करते देखें उसे रोकें। उसकी बुराई की तरफ से आंख मूँद लेना और यह सोचना कि यह दूसरे का लड़का है बड़ी गलती है। उस लड़के के माँ बाप को भी चाहिये कि रोकने वाले को धन्यवाद दें यह न कहें कि तुझे क्या करना था लड़का हमारा है। लड़का जैसे आपका है वैसे सब का है। अगर एक लड़का (मुहल्ले या गली का) खराब या बदचलन हो जाता है तो वह उस मुहल्ले या गली के सब लड़कों को खराब कर देने की चिंता में रहता है—और नासमझ, भोले भाले बच्चों को खराब कर डालता है। और इसी प्रकार समाज का पतन होता रहता है। समाज का प्रत्येक लड़का हमारा है। और हमारा अपना लड़का समस्त समाज का लड़का है यही भाव प्रत्येक मनुष्य के हृदय में होने चाहिये। अगर समाज का एक भी लड़का बिगड़ रहा है तो समझ लो तमाम समाज ही बिगड रहा है। जापान में भारत के कुछ विद्यार्थियों ने पुस्तकालय से पुस्तकों के चित्र आदि चुराये थे लेकिन उन चन्द विद्यार्थियों के कारण ही तमाम भारतीय विद्यार्थी समाज बदनाम है। अतः प्रत्येक मनुष्य की जुम्मेवारी है कि वह प्रत्येक लड़के व लड़की की बुराई को रोके तथा जहां तक हो सके अपनी समाज में (Nationality) जातीयता के भाव भरते रहें यह भाव हम लोगों को उन्नत दशा पर आरूढ़ करने में सहायक होंगे।

विद्याप्रकाश काला एम० ए० बी० टी० जयपुर

आवश्यक निवेदन

— जिन महानुभावों का मूल्य समाप्त हो चुका है वे ३) तीन रुपये मनीआर्डर से भेज कर चार आने की बचत करें क्योंकि वी० पी० खर्च ४ आने लगता है।

स्वर्गीय महामना पं० पन्नालाल जी गोधा के संस्मरण

(ले०—श्री० पं० आनन्दीलाल जी जैन न्यायतीर्थ जयपुर)

संसार में जिस प्रकार वैभव-सम्पन्न होना उतना कठिन नहीं माना जाता जितना कि वैभव पाकर उस का सदुपयोग करना सीखना माना जाता है ठीक उसी प्रकार विद्वान बन जाना उतना कठिन नहीं है जितना कि कठिनः विद्वान बनकर तदनुकूल सदाचरण करना है। स्वर्गीय गोधा जी के जीवन में हम उस कठिनता का अनुभव नहीं करते। वहां पर तो हमें ज्ञान और चारित्र की सहयोगिता प्रधानरूप से नजर आती है जो कि जीवन में एक विशेष महत्ता की द्योतक है। हम आज उसी पवित्रात्मा की पुण्यस्मृति में दो शब्द लिखने जा रहे हैं।

समाज का ऐसा कौनसा व्यक्ति होगा जो कि पूज्यवर गोधा जी के नाम से परिचित न हो। आपके आदर्श-जीवन की कीर्ति गाथाएं अब भी समाज के गणमान्य-लब्धप्रतिष्ठ श्रीमानों धीमानों द्वारा गाई जारही हैं और भविष्य में भी जब तक जैन समाज जीवित रहेगा तब तक सम्मानके साथ गाई जांयगी। आप समाज के उन महानुभावों में से एक थे जो कि विशेष सम्यग्ज्ञान प्राप्त करते हुये चारित्र की प्रकर्ष उन्नति द्वारा आत्मोत्थान करना चाहते हैं। आप में असाधारण रूप से धार्मिक-श्रद्धा, निर्भयता, गम्भीरता, दूरदर्शिता आदि सभी अलौकिक गुण विद्यमान थे। वस्तुतः आपको धार्मिक-समाज का प्रधान नेता कहा जाय तो कोई विशेष अत्युक्ति न होगी।

सामाजिक जीवन और धार्मिक-जीवन में केवल नाम मात्र का अन्तर है। आधुनिक युग में धार्मिक जीवन वही है जो सामाजिक जीवन है। स्वर्गीय महात्मा का जीवन भी ऐसा ही था। आप धार्मिक प्रचार के साथ २ समाजोत्थान को कदापि न भूलते थे। सहवासी सज्जनों द्वारा मालूम होता है कि आप सामाजिक परिस्थिति को देख कर कभी २ आंसू बहा दिया करते थे। आपका जीवन सादगी पूर्ण था और यह सादगी केवल मात्र वेषभूषा में ही न थी। बल्कि आपके स्वभाव और गुणज्ञता में भी हमें उसकी गन्ध मिलती थी आपका पांडित्य अभिमान रहित था किन्तु गौरव पूर्ण अवश्य था। आपकी दैनिक-चर्या देखने से ज्ञात होता है कि आप समयके बड़े पक्षपाती थे। प्रति समय सामाजिक और धार्मिक कार्यों से आपको जरा भी फुरसत न मिलती थी। आप वास्तवमें जैन समाजके धार्मिक शिरोमणि थे। सचमुच आपका जीवन एक साधुजीवन था।

इन्दौर के धार्मिक-वायुमंडल में बहुत समय से आपका जीवन व्यतीत हो रहा था. यहाँ आप उदासी-आश्रम तुकोगंज में विराजते थे। यह वही संस्था रूपी बेल है जिसे आपने अपने करकमलों से जल सिंचन कर पाला था। व्यवहार में आप इसके अधिष्ठातृत्व पद पर नियुक्त थे। उदासीनाश्रम की तमाम देख रेख आप ही के हस्तगत थी। ऊंचे दर्जे का त्यागमय जीवन पालन करते हुए भी आप अपने आप को सामान्य दर्जे का उदासीन ही प्रगट करते थे।

आप केवल १ चद्दर और १ लंगोटी आदि आवश्यक वेशभूषा से ही अपने जीवन का समय व्यतीत करते थे। यही आपके जीवन की असाधारण विशेषताएं थीं। आप महत्ता धारण करते हुए भी अहम्मन्यता से कोसों दूर रहते थे। सामान्यतः आप का जीवन समाज के परोपकार और धार्मिक प्रचार के लिए ही था।

जैन समाज में अब तक एक ऐसी संस्था का अभाव था जिसमें भिन्न २ प्रान्तों के त्यागी, व्रती, ब्रह्मचारी, श्रावक आदि सम्मिलित रूप से धर्मसाधन में भाग ले सकें। आपने इन्दौर आकर इस महान त्रुटि के निवारणार्थ प्रयत्न किया और उसमें आप सफल भी हुए। आश्रम जैसी संस्था उनके भगीरथ प्रयत्नों का ही फल है। यहां रहने वाले त्यागियोंके जीवन का निरीक्षण भी आपको ही करना पड़ता था उदासीनाश्रम के भविष्य का भी आपको बड़ा ख्याल था। आप प्रत्येक कार्य में सद्विवेक का मूल मन्त्र न भूलते थे। भिन्न २ प्रान्तों के त्यागियों का एक लाइन में रखना बड़ा मुश्किल होता है लेकिन आपकी वस्तुतः धार्मिक श्रद्धा ने इस कार्य को खेल सा बना दिया था। आपके व्यवहार शान्तिवर्द्धक एवं भविष्य में उन्नति की तरफ संकेत करने वाले होते थे अब हम आप के ज्ञानोपयोग पर भी कुछ प्रकाश डालना उपयोगी समझते है।

जैन मतानुसार आधुनिक पंचमकाल में स्वाध्याय को ही उत्कृष्ट तप माना गया है। आप इस कठिन तपस्या में किसी से पीछे न रहते थे। घंटों तक सिद्धान्त ग्रंथों का अवलोकन किया करते थे। प्रारंभिक बाल्य जीवन से ही कहते है कि आप स्वाध्याय के अनन्य उपासक थे इसी के फल से आप सिद्धान्त चर्चा में भी आदर्शपटु हो गये थे। तत्व चर्चा में आपको एक अलौकिक आनन्द का अनुभव होता था आपके उदासीनाश्रम से कल्याण भवन कुछ पास ही विद्यमान है यहीं श्रीमती सिद्धान्तचन्द्रिका भूरीबाई रहती है कहते हैं कि समय २ पर आप यहीं तत्वचर्चा में भाग लेने के लिये पधार जाया करते थे तथा कभी २ भूरीबाईभी तत्वचर्चा के निमित्त आश्रम में आ जाया करती थीं और दोनों ही की ज्ञानचर्चा में आनन्द आता था। भूरीबाई जी सिद्धान्त की अच्छी जान कर विदुषी है पूजनीय गोधा जी सा० चारित्र ग्रंथों के प्रगाढ पंडित थे प्रश्न कर्ता के समाधान को आप बड़ी ही शान्ति के साथ कहा करते। बहुत से विद्वान जब कि उनको किसी प्रश्न का उत्तर नहीं आता तब वे या तो प्रश्नकर्त्ता पर कुपित हो जाया करते हैं या किसी भी तरह से उसको चुप कर देना चाहते हैं परन्तु आपका ऐसा स्वभाव बिलकुल न था आप जिस किसी चर्चा के सम्बंध में अनभिज्ञ होते उसके लिये अपने आपको छद्मस्थ बतलाते हुए विद्वानों से समय २ पर उचित परामर्श किया करते थे। आधुनिक विद्वानों में चारित्र का विशेष कमीका अनुभव भी आपके हृदय में चुभता था। कभी २ तत्वचर्चा करते समय त्यागियों में बड़ा मतभेद हो जाया करता था लेकिन उसे आप अपनी तीक्ष्ण बुद्धि द्वारा क्षण भर में मिटा दिया करते थे। आपका शास्त्रीय प्रमाणों पर अगाध श्रद्धान था वस्तुतः आप जिस समय कुछ व्याख्यान के तौर पर कहा करते थे तब ऐसे मालूम होते थे मानो मूर्तिमान चारित्र ही जनता को सुपथ पर लाने की कोशिश कर रहा है

आपकी तत्वचर्चा में विशेष रूप से भाग लेने वाले श्रीमती भूरीबाई, उदासीनाश्रम के त्यागीगण; पं० मनरूपमल जी श्रीमती इचरजकुंवरबाई, श्रीमती गुलाबबाई प्यारकुंवरबाई, भैयासाहब सौ० विनोदकुंवर बाई आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। आध्यात्मिक भजन गायन में श्री इचरजकुंवरबाई विशेष प्रशंसनीय है। स्वर्गीय पवित्रात्मा को अंत समय तक आपने ही वैराग्योत्पादक अनेक भजन सुनाये थे जिनसे प्रत्येक व्यक्ति को संसार की असारता का परिज्ञान होता था। तत्वचर्चा के समय यहां और भी पारंगत विद्वानों का जमघट रहता था। जिनसे हमारा समाज काफी परिचय रखता है।

आपने यहीं उदासीनाश्रम में एक सरस्वती भवन की भी स्थापना की है। जिसमें जैन धर्म के हस्त-लिखित उच्चतम विशाल ग्रन्थों को बड़ी ही सावधानी से रक्खा जाता है। श्रुतपंचमी के दिन यहां का दृश्य बड़ा ही दर्शनीय होता है। सरस्वती भवन की स्थापना के लिये आपने कई एक प्रान्तों के शास्त्र भंडारों का अवलोकन भी भले प्रकार किया था। आप "ये यजन्ते श्रुतं भक्त्या ते यजन्तेऽञ्जसा जिनम्" इस सिद्धान्त के बड़े पक्षपाती थे संस्कृत और प्राकृत के विशेष विद्वान न होते हुए भी आप सिद्धान्त के अच्छे मर्मज्ञ थे। यह सतत होनेवाली तत्वचर्चा का ही साक्षात्फल है। सम्यग्ज्ञान को प्राप्त करने के लिये आप आश्रम के त्यागियों को विशेष रूप से आदेश दिया करते थे। सचमुच आपके अकस्मात् स्वर्गप्रयाण से समाज की बड़ी भारी क्षति हुई है। अब हम आपकी अन्तिम समाधि के सम्बन्धमें भी कुछ कह देते है।

अन्तिम—समाधि

यों तो आपका स्वास्थ्य कुछ अर्से से बिगड़ रहा था, पहले भी एक बार आपने मर्यादित सन्यास व्रत लिया था लेकिन अबकी बार तो आपका स्वास्थ्य बिगड़ता ही चला गया। आषाढ़ के अन्तिम पर्वदिनों में अष्टाह्निका विधान हो रहा था। चारों तरफ धर्म-प्रभावकी भावनाएं लहलहा रही थीं। आपने सहसा आषाढ सुदी द्वादशी को क्षुल्लक तथा ऐलक के व्रत लिये और उसी के आगे आने वाली चतुर्दशी को मुनिपद धारण करके आप 'वज्रकीर्ति' नाम से अलंकृत हुए। मुनिपद अंगीकार करते समय आपने अपने हाथों से केशलोंच किया था। मेरे एक धर्मबन्धु ने अपने पत्र में लिखा है कि आप अंत में पौर्णमासी के दिन चार बजे अनन्त समाधि सुख में तल्लीन हुए। आप २६ घंटे से पद्मासन लगाए हुये थे आपका अंत स्वर्गारोहण भी पद्मासन से ही हुआ। प्रतिपदा के दिन सुबह ८॥ बजे आपकी भौतिक-देह बड़े समारोह के साथ निकाली गई जिसके साथ जाने वाले स्त्री मनुष्यों की संख्या करीब ५ हजार के होगी। धन्य है वह दिवस तथा वहां के सौभाग्यशाली स्त्री मनुष्य, जिन्हों ने इस दृश्य को अपने नेत्रों से देखकर ज्ञान एवं चारित्र का वास्तविक महत्व समझा। लेखक तो केवलमात्र अपनी लेखनी से लिख कर *शान्ति प्राप्त* कर रहा है।

आपकी अन्तिम समाधि के साथ हजारों का दान धनिकों की तरफ से हुआ है जिसकी नामावली जैनमित्र में प्रकाशित हो चुकी है। इन्दौर के धार्मिक समाज ने आपकी पुण्यस्मृति में उदासीनाश्रम में ही स्मारक बनवाना निश्चित किया है। आपने अपने

हाथों से सन् १९९२ तक अपना जीवन चरित्र लिखा है, जिसके प्रकाशन करने का आयोजन हो रहा है। आपके सुपुत्र रायसाहब प्रेमचन्द जी हैं जो कि हाल में जयपुर रहते हैं। आपका व्यक्तित्व बड़ा चढ़ा है। आप बड़े ही धैर्यवान—धर्मात्मा और सज्जन हैं। महामान्य गोधा जी (मुनिश्री चन्द्रकीर्ति जी) के स्वर्गप्रयाण से उदासीनाश्रम के पैर जरूर ढीले हो गये हैं क्योंकि वहां पर अभी तक कोई भी ऐसा त्यागी नहीं है जो उदासीनाश्रम के अधिष्ठातृत्व को सुचारुरूप से चला सके। केवलमात्र पट्ट पर नियुक्त हो जाने से हम गोधा जी के उपासक नहीं कहला सकते। आशा है इन्दौर का धार्मिक समाज उदासीनाश्रम के भविष्य को उज्वल बनाने का भगीरथ प्रयत्न करेगा।

विरोध परिहार

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी जैन न्यायतीर्थ)

आक्षेपक १८—आक्षेपक का वक्तव्य कितना विरुद्ध है इसके स्पष्टीकरण के लिये एक छोटा सा उदाहरण और दिया जाता है। इस समय भारत के पैंतीसकरोड़ मनुष्यों में कोई सब से बड़ा श्रुतज्ञानी अवश्य है क्योंकि जहां न्यूनता है वहां सर्वोत्कृष्टता अवश्य होती है। क्या वह सर्वोत्कृष्ट ज्ञानी बाकी ३४९९९९९९९ आदमियों के द्वारा जाने गये सब पदार्थों को जानता है। क्या इन पैंतीस करोड़ में ऐसा कोई मनुष्य है जिसके ज्ञान के बाहर बाकी मनुष्योंको कुछ भी ज्ञान न हो (?) कहना न होगा कि ऐसा मनुष्य कोई हो ही नहीं सकता।

अनादि काल से आज तक अनन्त श्रुतज्ञानी हो चुके हैं उनमें कोई सर्वोत्कृष्ट अवश्य था। वह अगर अपने से हीन सभी ज्ञानियों के विषय को जानता तो वह अनन्त द्रव्य क्षेत्र काल भाव का ज्ञाता बन जाता. जबकि श्रुतज्ञान अनन्तको विषय कर ही नहीं सकता।

समाधान १८—दरबारीलाल जी के मतानुसार ज्ञान असंख्यपदार्थों को जान सकता है या यों कहिये कि उसका ऐसा स्वभाव है। अतः इनके इस आक्षेप को कुछ शब्द बदल कर इनकी इस मान्यता के ही सम्बन्ध में उपस्थित किया जा सकता है पैंतीस करोड़ मनुष्य या समय विशेषके उनके ज्ञानोंके विषयों की संख्या असंख्यात की मर्यादा के बाहर नहीं। असंख्यात तो इससे कहीं बड़ी संख्या है। अतः दरबारीलाल जी से यह पूछा जा सकता है कि इन मनुष्यों में से छोटे से छोटे ज्ञान वाला या बड़े से बड़े ज्ञान वाला शेष मनुष्यों के ज्ञानों के विषयोंको जान सकता है तो वह क्या ऐसा करता है? यदि बात ऐसी है तब तो एक कम पैंतीस करोड़ मनुष्यों के द्वारा जाने गये पदार्थों का एक के द्वारा जानना आपकी ही मान्यता के अनुसार सिद्ध हो जाता है। यदि आप इस बात को स्वीकार नहीं करते तो एक

मनुष्य के ऐसा न करने से उसके ज्ञानके स्वभाव में बाधा नहीं आती ? दरबारीलाल जी द्वारा इस बात का समाधान और उनके उपर्युक्त आक्षेप का हमारा समाधान एक ही है।

वास्तव में बात यह है कि दरबारीलाल जी ने 'जानता है और जान सकता है'। इनके अन्तर पर ध्यान नहीं दिया अत 'जान सकता' की बात को 'जानता है' में घटित करके प्रस्तुत आक्षेप उपस्थित कर दिया है। यदि उन्होंने "जान सकता है" की बात को इस ही तक रक्खा होता तो आपको इस आक्षेप के उपस्थित करने का कष्ट न उठाना पड़ता।

जिस प्रकार आपकी मान्यता के अनुसार असंख्य पदार्थ के जानने का स्वभाव होने पर भी कोई भी मनुष्य प्रति समय ऐसा नहीं करता इसही प्रकार हमारी मान्यता के अनुसार असंख्यके स्थानमें अनन्त पदार्थों की। आक्षेपक की और हमारी मान्यताओं में इतना अन्तर है कि आपके अनुसार ज्ञान अपने स्वभाव के अनुसार भी एक समय में ऐसा नहीं कर सकता किंतु हमारी मान्यता ऐसा स्वीकार करती है। आप किसी भी समय ज्ञानको असंख्य पदार्थों का जानने वाला नहीं मानते हैं।

किन्तु हम ऐसा स्वीकार करते हैं। ज्ञान ऐसा उस ही समय करता है जब ज्ञान आवरणोंको हटा देता है और उसको सहायक सामग्री की आवश्यकता नहीं रहती। श्रुत ज्ञानी के ज्ञान में न तो आवरणों का ही बिलकुल अभाव हुआ है और न वह सहायक सामग्री ही निरपेक्ष है अत स्वभाव वाला होनेपर भी श्रुतज्ञान अपने योग्य समस्त पदार्थों को एक ही समय नहीं जानता।

आक्षेपक ने हमारी जिन पंक्तियों के सम्बन्ध में प्रस्तुत आक्षेप उपस्थित किया है वे ज्ञान के स्वभावसिद्ध करने के समर्थन में थीं न कि कार्य। अतः प्रगट है कि आक्षेपक के प्रस्तुत आक्षेप का हमारे वक्तव्य पर कुछ भी प्रभाव नहीं है तथा उनका ऐसा विवेचन उनके प्रतिकूल जाता है।

आक्षेप १९—ज्ञान और धन में अन्तर है परन्तु ऐसा अन्तर तो किसी भी उपमान और उपमेय में हो सकता है। प्रस्तुत प्रश्न यह है कि सर्वोत्कृष्ट पदार्थ अपने से न्यून सब पदार्थों से भी बड़ा रहता है या नहीं इस प्रकार के निर्णय के लिये करोड़पति का दृष्टांत बहुत ही उपयुक्त है, धनका माप रुपयेसे होता है तो ज्ञान का माप अविभाग प्रतिच्छेदों या अंशों से होता है जब हम ज्ञान में अविभाग प्रतिच्छेदों की कोई न कोई संख्या मानते हैं तब जो बात रुपयों की तुलना के विषय में कही गई है वही ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदों की तुलना में भी कही जा सकती है। यदि धन के समान ज्ञान में तुलना न होती तो जैन शास्त्रों में यह विवेचन क्यों आता कि अमुक ज्ञान से अमुक ज्ञान का अनन्त भाग वृद्धिरूप है, संख्यात-भाग वृद्धिरूप है आदि ?

मैंने एक और उदाहरण दिया था कि एक काव्य न्याय, इतिहास आदि अनेक शास्त्रों का पंडित है किंतु वह मराठी भाषा नहीं जानता और एक साधारण स्त्री किसी विषय की पंडिता तो नहीं है परन्तु मराठी भाषा जानती है इन दोनों में कोई उत्कृष्ट अवश्य है किन्तु एक दूसरे के विषय को नहीं जानते।

समाधान १९— शक्ति की अपेक्षा सब ज्ञान समान है किन्तु व्यक्ति की अपेक्षा इनमें अन्तर है।

व्यक्ति की अपेक्षा ज्ञानों का यह अन्तर अवश्य उन के अविभागी प्रतिच्छेदों की ही दृष्टि से है। हमने ज्ञानमें न अविभागी प्रतिच्छेदों का ही अभाव किया है और न व्यक्ति की अपेक्षा उनकी न्यूनाधिकता का ही। इस विषय को लेखमाला में हम अनेक जगह स्पष्ट कर चुके हैं ऐसी अवस्था में आक्षेपक को इस विषय में आपत्ति उठाने की आवश्यकता ही नहीं थी और यदि उठाई भी थी तो इससे कुछ परिणाम भी निकालना था। जहां तक परिणाम का सम्बन्ध है आक्षेपक का कथन इससे कोरा ही है अतः आक्षेपकके प्रस्तुत आक्षेप का पूर्वार्थ निःसार ही कहना पड़ता है।

तुलना समानता की दृष्टि से होती है। संस्कृत में इसके लिये तर और तम प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार अंग्रेजी में भी जुदे २ प्रत्यय प्रयोग में लाये जाते हैं। तुलना की यह सब क्रिया समानता के आधार पर ही काममें लाई जाती है।

उन पदार्थों का तुलना नहीं होती जिनमें समानता नहीं है। कोई भी वस्तु क्यों न हो उसकी तुलना के समय इस बात को अवश्य ध्यान में रखना होगा। ज्ञान में अविभागी प्रतिच्छेद हैं तथा इन ही के आधार से उनमें न्यूनाधिकता है किन्तु फिर भी सब अविभागी प्रतिच्छेदों का स्वभाव एवं कार्य एक नहीं है। अविभागी प्रतिच्छेदों का स्वभाव एवं कार्य भिन्न भिन्न है। अतः इनमें अविभागी प्रतिच्छेद होने की दृष्टि से तो समानता है किन्तु इन के कार्य की दृष्टि से इनमें समानता नहीं है। अतः संख्या दृष्टि से इनकी तुलना की जा सकती है: न कि इन के कार्य की दृष्टि से।

एक तरफ काव्य, न्याय और इतिहास का विद्वान है और दूसरी तरफ इनका न जानने वाला मराठी भाषाभाषी। दोनों ही तरफ के ज्ञानों में अविभागी प्रतिच्छेदों में न्यूनाधिकता है। एक तरफ यदि अधिक है तो दूसरी तरफ न्यून;अतः अविभागी प्रतिच्छेदों की संख्या की दृष्टि से तो इनकी तुलना की जा सकती है और यह कहा जा सकता है कि अनेक विषयों का ज्ञाता अधिक ज्ञानवान है अर्थात उसके ज्ञान के अनेक अविभागी प्रतिच्छेदों की व्यक्ति हो चुकी है। *दूसरी तरफ ऐसा नहीं है अतः वह अल्प*-ज्ञानी कहा जाता है।

अनेक विषयज्ञाता पंडित के ज्ञानके अधिक अविभागी प्रतिच्छेदों की व्यक्ति स्वीकार कर लेने पर भी यह जरूरी नहीं कि उसके उन अविभागी प्रतिच्छेदों का भी व्यक्ति हो जिसकी कि अभिव्यक्ति मराठीभाषा भाषी केहोचुकी है।स्वभाव की दृष्टिसेसब ज्ञान समान है। अतः सब में ही समान ही अविभागी प्रतिच्छेद हैं किन्तु फिर भी समस्त जीवों में इनका विकाश एक ढंग से नहीं होता यह जरूरी नहीं है कि जिन अविभागी प्रतिच्छेदों की एक जीव में व्यक्ति हो रही है उन ही की दूसरे भी समस्त जीवों में हो। साथ ही यह भी नहीं कहा जा सकताकि समस्त जीवों में नितान्त भिन्न २ ही अविभागी प्रतिच्छेदों की व्यक्ति हुआ करती है। अनेक जीवों में एक साथ किन्हीं समान अविभागी प्रतिच्छेदों की व्यक्ति होती है तो किन्हीं असमानों की भी। अतः कोई कारण प्रतीत नहीं होता जिसके बलपर अनेक विषयों के पंडित में मराठीभाषाभाषी के अपेक्षित अविभागी प्रतिच्छेदों की भी अभिव्यक्ति स्वीकार की जा सके। ऐसी

स्थिति में जब कि अनेक विषयों के पंडित में मराठी-भाषाभाषी के अपेक्षित अविभागी प्रतिच्छेदों की ही व्यक्ति नहीं है यदि वह मराठी नहीं जानता तो यह एक स्वाभाविक बात है।

दरबारीलाल जी ने इस दृष्टान्त में ऐसी कौन सी बात देखी है जिससे वे इसको अपने पक्ष का समर्थन समझ बैठे हैं। यह तो एक साधारण दृष्टान्त है तथा दूर जा कर हमारे ही पक्ष का समर्थक प्रमाणित होता है अतः आक्षेपक के प्रस्तुत आक्षेप का उत्तरार्ध भी निःसार है।

आक्षेप २०— सम्पत्ति शास्त्र के इस प्रारम्भिक सूत्र के उल्लेख से आक्षेप के पक्ष की कोई सिद्धि तो दूर किन्तु उसका विरोध ही होता है। किसको कब सम्पत्ति कहते है इस विवेचन का कुछ उपयोग नहीं। जिसको भी जहां पर सम्पत्ति मान लिया जाय उसकी दृष्टि से लखपति करोड़पति के विषयमें यह उदाहरण लेना चाहिये। यदि अम्बाले में लखपति लाख रुपये की बालू एकत्रित करे तो वह लखपति तो कहलायगा किन्तु दस रुपये की पूँजी वाले एक तरकारी बेचने वाले के बराबर उसके पास तरकारी न निकलेगी। इससे मेरे पक्ष की ही सिद्धि होती है कि लखपति के पास वे सब चीजें होना आवश्यक नहीं कि जितनी उसकी अपेक्षा गरीबों के पास है। दूसरा लखपति लाख रुपये का दूसरा माल रख सकता है परन्तु उस के हाथ में बालू न होगी इस प्रकार सम्पत्ति शास्त्र का विवेचन भी व्यर्थ है अथवा उसका इतना ही अर्थ है कि वह मेरा पक्ष सिद्ध करे।

समाधान २० —किसी से किसी का समर्थन होना और उससे उसका समर्थन मान लेना इन में महान अन्तर है। जहाँ कि पहिली बात हितकारी एवं वास्तविक है वहीं दूसरी केवल कल्पना मात्र है। दरबारीलाल जी का प्रस्तुत वक्तव्य भी दूसरे ही प्रकार का है "अथवा उसका इतना ही अर्थ है कि वह मेरा ही पक्ष सिद्ध करे" लिखने मात्र से ही आक्षेपक का पक्ष सिद्ध नहीं हो सकता। इसके लिये तो उनको यह आवश्यक था कि वे इस बात को प्रगट करते कि उनके प्रस्तुत वक्तव्य में ऐसी कौन सी बात है जिस से वे उसको अपने अभिमत का समर्थक समझ रहे हैं। आक्षेपक ने अपने इस वक्तव्य में यही बतलाया है कि अमुक बात का उल्लेख अनुपयोगी है तथा अमुक का अमुक स्थान पर ऐसा उपयोग होता है वास्तवमें यह सब बिलकुल निरुपयोग है।

लखपति और करोड़पति वाली बात के सम्बन्ध में हम लेखमाला में पूर्व ही प्रकाश डाल चुके हैं। आक्षेपक ने अपने प्रस्तुत वक्तव्य में इसके सम्बन्धमें कोई विशेष बात नहींलिखी है। अतः इसके सम्बन्धमें यहाँ कुछ भी लिखने की जरूरत नहीं है। इन सब बातों के आधार पर यह प्रगट है कि आक्षेपकका प्रस्तुत आक्षेप भी निःसार है।

इस प्रकार अब तक पं० दरबारीलाल जी की "विरोधी मित्रों से" शीर्षक लेखमाला के २६ वें लेख की समालोचना हुई है। अभी दो लेख शेष हैं। इनकी समालोचना के बाद हम आपकी मूल लेखमाला के ज्ञान प्रकरण की समालोचना प्रारम्भ करेंगे। विज्ञ पाठक हमारी मूल लेखमाला के सम्बन्ध में तब तक धैर्य रक्खें।

लोहड़ साजन आन्दोलन के सम्बन्ध में मेरे दो शब्द

लोहड़साजन भाइयों को लेकर आज खंडेलवाल दि० जैन समाज में अशान्ति मच रही है। फिर भी समाज के नेताओं का इधर जरा भी ध्यान आकर्षित नहीं होता। समाज के मान्य पुरुषों का कर्तव्य था कि वे इस विषय का पूर्णतः अन्वेषण करके समाज के सामने योग्य मार्ग उपस्थित करते। करीब ४ वर्ष से इस विषय ने समाज में काफी जोर पकड़ लिया है बहुत से भाई तो इनके साथ खान पान करना धर्म विरुद्ध न मान कर बराबर रोटी व्यवहार कर रहे हैं और कुछ लोग इन भाइयों को धर्म से भी बहिर्भूत करने की पूर्णतः चेष्टा कर रहे हैं। जबकि ऐतिहासिक प्रमाण और प्रचलित व्यवहार इनके बीसा होने को सिद्ध कररहे हैं ऐसी अवस्थामें हम बिना सोचेसमझे, बिना किसी आधार और प्रमाण के इनको धर्म से गिराने की चेष्टा करें व इनके साथ खान पान को भी त्याग कर दें ऐसा समाज हितैषी पुरुषों का कर्तव्य नहीं होता। प्रातः स्मरणीय भगवान महावीर भी हम को यह आदेश देते हैं कि प्रत्येक प्राणी को तन मन धन से अपना करके सत्यार्थ मार्ग पर लगाओ उसको धर्म से पतित मत होने दो। यही जैनियों के स्थितिकरण अंग का भी तात्पर्य होता है किन्तु इस सत्य सिद्धान्त के असली तत्व को आज हम कषाय की भयंकर ज्वाला में फंस कर जलाने की चेष्टा कर रहे है यह कितने दुःख की बात है। समाज को इस वक्त अपने भाइयों के पतन और उत्थान के विषयमें सोच समझ कर आगे बढ़ना चाहिये। केवल अपने अहंकार की रक्षा के लिये अन्यायपूर्वक अपनी जाति को गिरादें यह धर्मात्मा और अहिंसा के उपासक पुरुषों का कर्तव्य नहीं होता। यहां हमको निष्पक्ष भाव से बढ़ने की जरूरत है। पक्षपात से समाज में अशान्ति को छोड़ कर कुछ भी तथ्य हासिल नहीं होगा। इस हठग्राहितासे ही जो जैन जातिकी दुःखद दशा हो रही है यह किसीसे छिपी हुई नहीं है। एक भगवान महावीर की संतान आज हम अनेक टुकड़ों में विभक्त होकर उल्टेमार्ग में क्यों जा रहे हैं। अगर इसका कोई उत्तर है तो हम लोगों की हठग्राहिता के अतरिक्त और कुछ नहीं।

हमारा कर्तव्य है कि हम धर्म की रक्षा करते हुए जिस तरह से हो सके उस तरह इस जाति की रक्षा के लिये उचित उपायों को काम में लें।

लोहड़ साजन भाइयों का विषय बहुत साफ है यह बात हम खंडेलवाल महासभा के चुनेहुये ६ महानुभावों के फैसले से भले प्रकार जान सकते हैं। उक्त कमेटी ने अपने फैसले में साफ तौर से लिखा है कि "लोहड़ साजन दस्सा नहीं हैइनके साथ बीसों की कच्चा पक्का दोनों रोटी का व्यवहार शामिल है। पूजन प्रक्षाल मुनि आहारदानादि में भी कुछ रुकावट नहीं है परन्तु बेटी व्यवहार शामिल नहीं है अतः

यह कमेटी निर्णय करती है कि लोहड़ साजनों के साथ बेटी व्यवहार के सिवाय बाकी के किसी भी काममें रुकावट नहीं होनी चाहिये।" समाज विचार करे कि महासभा के द्वारा नियुक्त ६ महानुभावों का उक्त फैसला निष्पक्षभाव से यह स्वीकार करता है कि उक्त भाई दस्से नहीं हैं। इससे साफ होता है कि उनका खान पान या धार्मिक कृत्यों में समाज किसी भी तरह से बाधा उपस्थित नहीं कर सकती किन्तु कुछ अहम्मन्य लोगों ने जब उनकी इच्छानुसार फैसला नहीं हुआ तब इन ६ महानुभावों की उचित राय को भी पैरों से ठुकराने की चेष्टा करदी और समाज में एक गहरी अशान्ति की ज्वाला पैदा करके अपने कर्तव्य की इति श्री समझ ली। इस जगह महासभा का कर्तव्य था कि वह उक्त फैसले को मान्य करके जनता में आदेश करती कि उक्त फैसला न्यायानुकूल है। जिससे उक्त कमेटी का भी कुछ मूल्य रहता।

अगर समाज अपने नेताओं पर भी विश्वास नहीं करेगी और इच्छानुसार फैसला नहीं होने पर बार बार इसी तरह ठुकराती रहेगी तो मैं तो यह कहूंगा कि इस समाज का नेतृत्व करने के लिये भविष्य में कोई भी तैयार नहीं होगा। उक्त नेताओं का भी यह कर्तव्य था कि वे अपनी बात की मौलिकता के लिये कटिबद्ध रहते।

मैं तो समाज से प्रार्थना करूंगा कि वह अब इस विषय में मौन न रखकर उचित मार्ग का अवलम्बन करे। लोहड़ साजन भाइयों के दस्सा नहीं होने पर भी कई नासमझ लोगों द्वारा यह ऊधम मचाया जाय, बिना सोचे समझे यह प्रतिज्ञा लेते रहें कि हम उनके साथ खान पान का त्याग करते हैं, क्या यह अविचारितरम्य नहीं है। अगर हम उनके साथ खान पान न करने की प्रतिज्ञा लेते हैं तो हमको यह तो सोचना चाहिये कि लोहड़ साजन भाई क्यों पतित हैं। कब इनकी उत्पत्ति हुई। इनका पिण्ड शुद्ध है या अशुद्ध। इतने पर्चे बाजी और आन्दोलन होने पर भी आज तक कोई प्रमाण समाज के सामने उपस्थित नहीं किया गया जिससे यह जातिपतित समझे जांय। मनगढ़ंत बातें प्रामाणिक नहीं होसकतीं। कुछ लोग यह कहते है कि इनके पीछे 'लोहड़' शब्द लगा हुआ है इसमें नीच है—तब तो छोटा बड़ा व्यवहार भी दुनियां में नहीं रहेगा। अब भी लौकिक में छोटी और बड़ी बहुओं के लिये बड़ और लोहड़ शब्दों के का उपयोग किया जाता है। 'साजन' शब्द दोनों के लगा ही हुआ है। जहाँ दो पार्टी होती हैं वहाँ कमी बेशी का झगड़ा तो रहता ही है। अतः समाज हितैषी इन तुच्छ प्रमाणाभासों को प्रमाण न मानकर अपने भाइयों के प्रति सच्ची सहानुभूति दिखलाने की चेष्टा करें।

अगर हमको कोई ऐसा प्रमाण मिल जाय जिससे यह जातिपतित प्रमाणित हों तो हम को भी इसमें कोई विरोध नहीं होगा। अब समाज का कर्तव्य है कि इन भाइयों का विषय विचार शीघ्र समझ कर आगे बढ़ें इस जीवन को समाज सेवा में व उसके उत्थान में ले जाना महापुरुषों का खास विषय रहता है।

खंडेलवाल समाज का दिनों दिन ह्रास होता हुआ दिखलाई दे रहा है फिर हम नये नये झगड़े उपस्थित करके चुप बैठ जाते है और उनका कुछ भी

देश समाचार

श्रीमान रायबहादुर सेठ भागचन्द्र जी सोनी अजमेर के पैसेम्बली चुनाव में सफल हो जाने पर असफल विरोधी मैम्बर ने जो आपत्ति उठाई थी वह उसने वापिस ले ली।

स्थानकवासी साधु फूलचन्द्र जी ने अपने प्रभावशाली उपदेशोंद्वारा हजारों मनुष्यों से मांस त्याग कराया है सुना है २०० अजैनों ने जैन धर्म स्वीकार किया है। कराची में आपका चातुर्मास है।

समाचार पत्रों को पता लगा है कि जवाहरलाल नेहरू अक्टूबर में जेल से मुक्त हो जांयगे।

खुरई के इलाहबाद टेलरिंग हाऊस को ६० प्रकार के कपड़े सीने, काटने आदि का काम सीखने के इच्छुक ५ जैन विद्यार्थियों की आवश्यकता है। लिखो इलाहाबाद टेलरिंग हाऊस खुरई (सागर)

—जयपुर की सीमा पर छोटी रियासत लोहारू में वहां के जाटों पर पुलिस ने गोली चलाई जिसमे १८ आदमी मरे और ७५ घायल हुये।

—लिम्यापुर (हैदराबाद) में स्त्री ने गढ़ा हुआ धन प्राप्त करने के लिये ६ ६ वर्ष की दो लड़कियों का बलिदान किया।

—बड़ौदा राज्य ने इस वर्ष अपने राज्य में शिक्षा प्रचारके लिये ३८ लाख रुपये स्वीकार किये हैं।

फेवरावा (पटना) गांव में एक हिन्दू भीड़ पर पुलिस ने गोली चलाई जिसमे ५ आदमी मरे।

—अभी कुछ दिन पहले हैदराबाद दक्षन में एक सनातनी उपदेशक और आर्यसमाज के स्नातक विद्वान पं० बुद्ध देव जी का मूर्तिपूजा विषय पर शास्त्रार्थ हुआ अपने आपको मूर्तिपूजक न बतलानेको उस समय पं०बुद्धदेव जी ने स्वा० दयानन्द सरस्वती के चित्रपर जूता मार दिया। इस बातपर आर्यसमाज में बहुत हलचल मची हुई है।

लाहोर के अभी अशान्ति के दिनों में फौजी प्रबन्ध पर सरकार का दो लाख रुपया अतिरिक्त खर्च हुआ।

—काश्मीर नरेशने गिलगितका इलाका सरकार के सुपुर्द कर दिया है।

फगवाड़ा की एक नवयुवती ने ४ डाकुओं का लाठी से सामना किया जिन में से एक को मार गिराया।

कलकत्ता के मारवाड़ी मंडल ने विलायतों की सैर करने के लिये एक जहाज का प्रबन्ध किया है जिसमें हिन्दूधर्मानुसार ५ मास के लिये खान, पान, पूजा पाठ की व्यवस्था रहेगी।

गुजरात से थोड़े फासले पर एक गांव में एक बच्चा पैदा हुआ है, जिस के दो सिर हैं और एक आंख है। आंख माथे के बीच में है।

—इंग्लैंड में एक १६ वर्षीय युवती के दाढ़ी निकल आई और वह पुरुष बनने लगी २२ वर्ष की उम्र में उसने आपरेशन करा के एक गाँठ निकलवा दी और पुनः पूर्ववत स्त्री बन गई। उसकी दाढ़ी भी आप ही आप गायब हो गई।

—इंग्लेंड मे ३३ फी-सदी आदमी बहरे हैं।

देश समाचार

श्रीमान रायबहादुर सेठ भागचन्द जी सोनी अजमेर के मेंबेम्बली चुनाव में सफल हो जाने पर आपके विरोधी मेम्बर ने जो आपत्ति उठाई थी वह उसने वापिस ले ली।

स्थानकवासी साधु फूलचन्द जी ने अपने प्रभाव-शाली उपदेशोंद्वारा हजारों मनुष्यों से मांस त्याग कराया है सुना है २०० मनुष्यों ने जैन धर्म स्वीकार किया है। करांची में आपका चातुर्मास है।

समाचार पत्रों को पता लगा है कि जवाहरलाल नेहरू अक्तूबर में जेल से मुक्त हो जांयगे।

खुरई के इलाहबाद टेलरिंग हाऊस को ६० प्रकार के कपड़े सीने, काटने आदि का काम सीखने के इच्छुक ५ जैन विद्यार्थियों की आवश्यकता है। लिखो इलाहाबाद टेलरिंग हाऊस खुरई (सागर)

—जयपुर की सीमा पर छोटी रियासत लोहारू में वहां के जाटों पर पुलिस ने गोली चलाई जिससे १८ आदमी मरे और ७५ घायल हुये।

—सिध्यापुर (हैदराबाद) में लोगों ने गड़ा हुआ धन प्राप्त करने के लिये ६, ६ वर्ष की दो लड़कियों का बलिदान किया।

—बड़ौदा राज्य ने इस वर्ष अपने राज्य में शिक्षा प्रचारके लिये ३८ लाख रुपये स्वीकार किये हैं।

फैजाबाद (पटना) गांव में एक हिन्दू भीड़ पर पुलिस ने गोली चलाई जिसमें ५ आदमी मरे।

—अभी कुछ दिन पहले हैदराबाद दक्खन में एक सनातनी उपदेशक और आर्यसमाज के स्नातक विद्वान पं० बुद्धदेव जी का मूर्तिपूजा विषय पर शास्त्रार्थ हुआ अपनी आपको मूर्तिपूजक न बतलानेको उस समय पं० बुद्धदेव जी ने स्वा० दयानन्द सरस्वती के खिलाफ सुना मार दिया। इस बातपर आर्यसमाज में बहुत हलचल मची हुई है।

लाहौर के अभी अशान्ति के दिनों में फौजी प्रबन्ध पर सरकार का दो लाख रुपया अतिरिक्त खर्च हुआ।

—काश्मीर नरेशने गिलगितका इलाका सरकार के सुपुर्द कर दिया है।

फलवाड़ा की एक नवयुवती ने ४ डाकुओं का लाठी से सामना किया जिन में से एक को मार गिराया।

कलकत्ता के मारवाड़ी मंडल ने विलायतों की सैर करने के लिये एक जहाज का प्रबन्ध किया है जिसमें हिन्दूधर्मानुसार ५ मास के लिये खान, पान, पूजा पाठ की व्यवस्था रहेगी।

गुजरात मे थोड़े फासले पर एक गांव में एक बच्चा पैदा हुआ है, जिस के दो सिर हैं और एक आंख है। आंख माथे के बाच में है।

—इंग्लैंड में एक १६ वर्षीय युवती के दाढ़ी निकल आई और वह पुरुष बनने लगी २२ वर्ष की उम्र में उसने आपरेशन करा के एक गांठ निकलवा दी और पुनः पूर्ववत स्त्री बन गई। उसकी दाढ़ी भी आप ही आप गायब हो गई।

— इंग्लैंड मे ३३ फी-सदी आदमी बहरे हैं।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक ४

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ,
जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति =)

भाद्रपद सुदी ३ रविवार
१ सितम्बर-१९३५ ई०

अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ केसका फैसला

पाठक महानुभावों को अच्छी तरह मालूम है कि श्री अन्तरीक्ष पार्श्वनाथ शिवपुर (बरार) क्षेत्र के विषय में दिगम्बर, श्वेताम्बर समाजमें परस्पर बहुत समय तक दीवानी केस चला। अन्त में प्रिवी कौंसिल के फैसले के अनुसार इस क्षेत्र के प्रबन्ध करने का अधिकार श्वेताम्बर समाज को दिया गया था जिससे श्वेताम्बर समाज ने इस क्षेत्र पर अपना एकाधिकार मान कर मंदिर का एक दरवाजा गिराने का निश्चय किया जिसका कि दिगम्बरी भाइयों ने प्रतिरोध किया इस पर झगड़ा हो गया कुछ आदमी संभवतः घायल भी हुये। और फिर कोर्ट में दीवानी केस दायर हो गया। उस केस का निर्णय अभी मि० आर० ई० पोलक स्पेशल जुडीशल कमिश्नर नागपुर ने दिगम्बर समाज के पक्ष में दिया है कि प्रबन्ध करने का अधिकार मिल जाने पर श्वेताम्बर समाज को मंदिर के किसी भाग को गिरा कर नई रद्दोबदल करने का कुछ अधिकार नहीं है।

विदेश-समाचार

—सम्राट पञ्चम जार्ज ने इण्डिया बिल पर स्वीकृति के हस्ताक्षर कर दिये हैं।

—लार्ड लिन लिथगो भारतके भावी वायसराय होंगे।

—जर्मनीमें राज्यच्युत कैसर को पुनः सम्राट बनाने की चर्चा चल रही है।

—लड़ाई के लिये इटली के पास ६ लाख तथा एबीसीनिया के पास ७॥ लाख सिपाही तैयार हैं।

—अफगानिस्तान लड़ाई के अस्त्र-शस्त्र खरीद रहा है।

—अफगानिस्तान भारतवर्ष से व्यापार संकुचित करके जापान के साथ व्यापार बढ़ा रहा है। भारत सरकार अफगानिस्तान का भारत की ओर करनेका प्रयत्न कर रही है।

—पश्चिमी वैज्ञानिकों ने बहुत परिश्रम के साथ एक ऐसी मशीन तैयार की है जिसके द्वारा अन्धे अच्छी तरह पढ़ सकते हैं उस मशीन की मदद से अन्धों के कान आंखका काम देने लगते हैं।

—हाल ही में एक ऐसी मशीन बनी है जो सोने के पलंग के साथ लगा देने से इस बातकी खबर रखती है कि हम उस कमरे में कब आते जाते हैं और शान्तिसे सोते हैं या नहीं।

—कैप्टन सी० बी० मायो ने समुद्र के नीचे एक महाद्वीपका खोज की है जिसका क्षेत्रफल अमेरिका से दुगना बतलाया जाता है।

—खबर है कि संयुक्त अमेरिका में आजकल २८ हजार डाक्टर बेकार हैं।

जैन समाचार

—सासनी (अलीगढ़) में आर्यसमाज ने वहांकी जैन समाज को शास्त्रार्थके लिये ललकारा था जिस को जैन जनता ने स्वीकार कर लिया। सासनी जैन पञ्चायत का तार पाते ही शास्त्रार्थ करने के लिये श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ अम्बाले से सासनी पहुँच गये। विशेष आगामी अंक है।

—श्रीमान सेठ लखमीचन्द्र जी भेलसा ने अभी भा० दि० जैन परिषद् को स्कालरशिप फन्ड में दश हजार रुपये प्रदान किये हैं।

—शोक-श्रीमान राय बहादुर ला० हुलासराय जी रईस की धर्मपत्नी का स्वर्गवास होगया।

—कमलदह क्षेत्र (सुदर्शन सेठ निर्वाण भूमि) पटना को जो गतवर्ष बिहार भूकम्प से हानि हुई थी उसकी मरम्मत के लिये कलकत्ते से ६९७) की सहायता प्राप्त हुई है। अभी ११००) की और आवश्यकता है।

—श्रीमान प० कस्तूरचन्द्र जी उपदेशक धर्मप्रचार को दश लक्षण पर्वमें डेरागाजीखान पधारे हैं।

—आवश्यकता--एक ऐसे विद्वानकी आवश्यकता है जो पूजन करना, स्वाध्याय करना सिखला सके। आयु ३० वर्ष से कम न हो। वेतन योग्यतानुसार ३०) मासिक तक दिया जायगा। निवेदन पत्र उत्तर के लिये कार्ड सहित भेजना चाहिये।

अकलंक प्रेस—मुलतान सिटी

—नियुक्ति होगई जैन दर्शनके गत अंकमें जो एक विद्वानकी आवश्यकता प्रकाशित हुई थी उस स्थानको पूर्ति होचुकी है अतः अब कोई पत्र न भेजें।

—अजितकुमार

—अतिशय क्षेत्र बड़ागांव-में श्रीमान ला० हुकमचन्द्र जी उदासीन देहली ठहरे हुये हैं। यहांकि मन्दिरका शिखर बनवाने के लिये आपके सुपुत्र श्री० पं० महबूबसिंह जी, जगाधरमल जी. ला० उल्फतराय जी ने स्वीकारता देदी है। शिखर निर्माण की लागत लगभग ढाई हजार रुपया होगी।

—धन्यवाद- श्रीमान सेठ कस्तूरचन्द्र जी बड़जात्या नवादा तथा श्री इन्द्रचन्द्र जी बुगड़ा जैनदर्शन के नवीन ग्राहक बनाकर दर्शन के साथ हार्दिक प्रेम प्रगट करते हैं। अतएव आपको धन्यवाद है।

—समाचार गलत है-चंद्रप्रकाश वर्ष १ अंक १५ १६ में वह चिट्ठी जोकि मैंने चन्द्रसागर महाराजके नाम प्राईवेट भेजी थी, संपादक ने भंवरलाल सेठी लाडनूं के नामसे छपादी है। उसका शीर्षक 'आचार्य महाराजको लोहड़ साजनों के आहार लेनेकी मनाई है' यह है तथा यह भी लिख दिया है कि 'न लोहड़ साजनों के अब कोई आहार ले सकता है'। यह जो समाचार अपनी तरफ से छपा दिया है, गलत है। क्योंकि मैंने वह चिट्ठी प्राईवेट तौर पर भेजी थी। आचार्य महाराज से पूछ कर नहीं।

क्षुल्लक अजितकीर्ति हाल मु० ईडर

(जैनगजट से)

—श्रीमान पं० राजेन्द्र कुमार जी न्यायतीर्थ अम्बाला अनिवार्य कारणवश पूर्व निश्चय के अनुसार दशलक्षण पर्व में पञ्जाब न जासकेंगे इन दिनों में मुलतान नगर में रहकर धर्म प्रभावना करेंगे।

—सम्हालें-- इस अंकके साथ दि० जैन शा० संघकी अपील तथा रिपोर्ट, स्याद्वाद विद्यालय बनारस की अपील तथा दि० जैन विद्यालय किशनगढ़ की अपील भेजी जारही है। पाठक महानुभाव सम्हाल लेवें।

-मैनेजर जैनदर्शन

अकलंकदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्रगामिर्मर्माभवन्निखिलदर्शनपक्षरोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री भाद्रपद सुदी ३—रविवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क ४

श्रुत देवते

(ले०—श्रीमान् पं० राजकुमार जी जैन, बनारस)

(१)

जननि तव लीला अपरम्पार.
निखिल विश्वको शिव सुखकारी ।
सुखद मोह संशय तम हारी,
शांति सुधा रस की तू क्यारी ।
मंगल मय उपदेश वेश से,
सजग किया संसार ॥

(२)

शान्ति क्षान्ति औ क्रान्ति अगारिणि.
शिव पथ पथिक पथ्य विस्तारिणि ।
आत्म निलय संचर संचारिणि,
बन्धुर मधुर स्वात्मवीणा का ।
करदे कुछ झंकार.
जननि तव लीला अपरम्पार ॥

(३)

जननि जननि मम शिक्षा दायिनि.
सतत स्वसुत संकट संहारिणि ।
अगम भवोदधि से निस्तारिणि.
मम हिय वसी सज्ञान दान कर ।
भर दे दिव्य विचार.
जननि तव लीला अपरम्पार ॥

ब्रह्मचर्याणुव्रत और उसके अतीचार

(श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी जैन न्यायतीर्थ)

जैन-दर्शन के वर्ष २ अंक १४ में उक्त शीर्षक से मेरा एक लेख प्रकाशित हुआ था जैनबोधक के वर्ष ५१ अंक १२ तथा १३-१४ में श्रीयुत कोठारी जी ने उसका विस्तृत उत्तर प्रकाशित किया है। कोठारी जी के लेख के आवश्यक अंशों का उत्तर दिया जाता है।

ब्रह्माणुव्रत

ऐतिहासिक परम्परा के अनुसार अनेक प्रमाणों के आधार पर अपने लेख में मैं ने दिखाया था कि पं० सोमदेवजी ने ब्रह्माणुव्रत का लक्षण × किस आर्ष वाक्य के आधार पर बनाया है यह आज तक भी नहीं ज्ञात हो सका। आचार्य समन्तभद्र ने रत्नकरंड श्रावकाचार में परदारनिवृत्ति व्रत का ही दूसरा नाम 'स्वदारसन्तोष' बतलाया है जब तक उक्त लक्षण के समर्थनमें किसी प्रामाणिक आर्ष वाक्य का आधार न मिल सके तब तक हमें यही मानने के लिये बाध्य होना पड़ता है कि शिथिलाचार के युग में सोमदेव के समान किसी पंडित ने ही एक व्रत के दो टुकड़े करके खुले आम वेश्या सेवन करने वालों को भी ब्रह्माणुव्रती होने का 'फतवा' दे दिया है। इस पर कोठारी जी लिखते हैं—"भले ही पं० आशाधर जी पंडित जी होंगे किन्तु सोमदेव जी तो मुनीश्वर ही थे तो उनका कहना क्यों नहीं मानते? यदि यह कहा जाये कि अन्य आचार्य उनसे सहमत नहीं हैं इसलिये उनका कहना भी मान्य नहीं हो सकता। इस पर स्त्रियों के ब्रह्माणुव्रत का कहींपर भी स्पष्टतया विवेचन नहीं पाया जाता इस लिये ब्रह्माणुव्रत पालन हमें मान्य नहीं हो सकता, यह कहना भी अयोग्य नहीं कहा जा सकेगा"

आशाधर जी ने 'सोमदेव पण्डित' के नाम से सोमदेव जी का स्मरण किया है किन्तु कोठारी जी ने उन्हें 'मुनि' ही नहीं 'मुनीश्वर' के उत्कृष्ट पद से विभूषित कर डाला है। हमें तो यह पद दान भी वैसा ही मालूम होता है जैसा कि चर्चा-सागर के रचयिता पण्डित को उनके भक्तों ने आचार्य पद प्रदान कर डाला था। यदि सोमदेव जी के मुनि होने में कोई तथ्य हो तो कोठारी जी उसे प्रगट कर सकते हैं। किन्तु मैं इतना लिख देना आवश्यक समझता हूँ कि मुनि वेष धारण कर लेने मात्र से किसी के वचनों को आगम वाक्य नहीं माना जा सकता अन्य आचार्यों के साथ पं० सोमदेव जी का मत नहीं मिलता, इस बात को कोठारी जी भी स्वीकार करते हैं किन्तु उनके समर्थन में वे जो दृष्टान्त उपस्थित करते हैं वह विषम है। क्योंकि स्त्रियों के ब्रह्माणुव्रत के सम्बन्ध में दो मत नहीं हैं, उसके विषय में तो पुरातन और नवीन सभी आचार्य मूक हैं।

जब कोठारी जी को सोमदेव जी के मत के समर्थन में कोई प्रमाण न मिल सका तब 'गत्यन्तरा-भावात्' उन्होंने रत्नकरंड के प्रसिद्ध श्लोक

× वधूवित्तस्त्रियौ मुक्त्वा सर्वत्रान्यत्र तज्जने।
माता स्वसा तनूजेति मति ब्रह्मगृहाश्रमे॥ यशस्तिलक

न तु परदारान् गच्छति आदिका अर्थही बदल डाला। आप का कहना है कि 'परदारान्' शब्द का अर्थ 'पर की स्त्रियां' करने से उनमें वेश्याओंका अन्तर्भाव नहीं हो सकता क्योंकि वेश्या किसी की स्त्री नहीं है। अन्यथा व्यसनों में वेश्या सेवन व्यसन और परस्त्री व्यसन पृथक्तया गिनाये जाने की क्या जरूरत थी? कोठारी जी की इस युक्ति से यह हम स्वीकार करते हैं कि वेश्या और गृहस्थ औरत में कुछ अन्तर है किन्तु केवल परस्त्री के त्यागी को हम ब्रह्माणुव्रती मानने के लिये तैयार नहीं हैं जैन धर्म में त्याग की अनेक कोटियां हैं जिसमें जो बन सके त्याग किया जा सकता है किन्तु ब्रह्माणुव्रत की कोटि में वही गृहस्थ सम्मिलित समझा जाता है जो परस्त्री और वेश्या दोनों का त्याग करता है। अन्यथा जैसे ब्रह्माणुव्रत के दो विभाग कर लिये गये उसी तरह शेष चारों अणुव्रतों के भी दो विभाग करने चाहिये, तब अणुव्रत नं० १ और अणुव्रत नं० २ का सौदा ठीक बैठ सकेगा।

स्वामी समन्तभद्र के ब्रह्माणुव्रत के लक्षण का अर्थ बदल कर पं० सोमदेव जी के मत को समर्थन करने का जो दुष्प्रयत्न आपने किया है उससे पं० सोमदेव जी की आत्मा अपने सुयोग्य अनुयायी के कृत्य से अवश्य प्रसन्न हुई होगी किन्तु स्वामी जी अपने युक्त्यनुशासन के "कालः कलिर्वा कलुषाशयो वा श्रोतुः प्रवक्तुर्वचनानयो वा" आदि श्लोक पढ़कर अवश्य सिर धुनते होंगे। 'परदारान्' करके कोठारी जी ने जिस युक्ति से वेश्याओं को 'परदारा' से पृथक कर दिया है उसी तरह की युक्तियों के बल पर बहुत सी कुलांगनाओं को भी 'परदारा' की सीमा से बाहिर लाया जा सकता है। पं० आशाधर जी ने सागार धर्मामृत की टीका में उन युक्तियों की ओर थोड़ा संकेत कर भी दिया है। आज जब संसार में यूरोपीय सभ्यताने स्त्रियोंको स्वच्छन्दता दे रखी है। अनेक अविवाहित कुमारिकाएं 'कोर्ट शिप' की तलाश में घूमती है तब कोई भी सुन्दर युवक यदि उसे वे पसन्द कर लें तो उन्हें अपनी अंकशायिनी बना कर ब्रह्माणुव्रती रह सकता है। क्या कोठारी जी इस जमाने के लिये ऐसे ही ब्रह्माणुव्रत की आवश्यकता का अनुभव करते हैं?

मैं ने लिखा था—"कोठारी जी का कहना है कि पं० आशाधर जी ने अपने सागार धर्मामृत की टीका में वेश्या सेवन को जो अतिचारों में गिनाया है वह नैष्ठिक श्रावक की दृष्टि से नहीं, किन्तु पाक्षिक श्रावक की दृष्टि से गिनाया है। हम कोठारी जी के मत से सहमत होते किन्तु हमें दुःख है कि आशाधर जी के शब्द उनके मत का समर्थन नहीं करते। इस पर कोठारी जी लिखते हैं—"पंडित जी से मेरा नम्र प्रश्न यह है कि जब आप पं० आशाधर जी के द्वितीय ब्रह्माणुव्रत को और सोमदेव सूरि के ब्रह्मव्रतके लक्षण को मानने के लिये प्रामाणिक आर्ष वाक्य के अभाव में तैयार नहींहै तब आप मेरे मत से कौनसे प्रामाणिक आर्ष वाक्य के आधार पर सहमत होने के लिये तैयार हो रहे हैं" सागारधर्मामृत के कर्ता पं० आशाधर जी ने किस दृष्टि से वेश्या सेवन को अतिचार लिखा है? यह कोठारी जी ने बतलाया था। यदि कोठारी जी का लिखना ठीक होता तो मैं उनके लिखने से सहमत होता, न कि आशाधर जी की दृष्टि के औचित्य से। कोठारी जी मेरे शब्दों पर पुनः विचार करें।

'दार' शब्द का अर्थ न तो धर्मपत्नी ही है और न

पत्नी। किन्तु टीकाकार ने उसका अर्थ धर्मपत्नी किया है अतः ज्ञात पड़ता है कि ग्रन्थकार को यही अर्थ अभीष्ट था, मेरे लिखने का यह अभिप्राय है।

ब्रह्मचर्याणुव्रत के अतिचार

ब्रह्मचर्याणुव्रत के प्रथम अतिचार 'इत्वरिकागमन' की व्याख्या करते हुए पं० आशाधर जी ने जो 'गड़बड़घोटाला' किया है और जिस पर समाज में अनेक बार 'बावेला' मचा है उसका उद्गमस्थान कहां है? मैं यह जानने के लिये खोज बीन कर रहा था अचानक उसके उद्गम स्थान का पता चल ही गया। पं० आशाधर जी ने इस 'गड़बड़घोटाले' को श्वेताम्बराचार्य हेमचन्द्र के योगशास्त्र से लिया है यदि सागारधर्मामृत और योगशास्त्र के श्लोकों की तुलना की जाय तो सागारधर्मामृत के बहुत से श्लोक योगशास्त्र के समान पाये जायंगे। आचार्य हेमचन्द्र का स्वर्गवास विक्रम सं० १२२९ में हुआ था और सागारधर्मामृत की रचना वि० सं० १२९६ में की गई है। अतः सागारधर्मामृत का लेख ही उद्धृत है। अब हम 'गड़बड़घोटाले' की जड़ उद्धृत भाव को योगशास्त्र की स्वोपज्ञ टीका से उद्धृत करते हैं पाठकगण शांतचित्त से पढ़ें।

> इत्वरात्तागमोऽनात्तागतिरन्यविवाहनम्।
> मदनात्याग्रहोऽनंगक्रीड़ा च ब्रह्मणि स्मृता॥९४॥
>
> यो० शा० ३ प्रकाश।

ब्रह्मणि ब्रह्मचर्यव्रते, पञ्चातिचाराः स्मृताः। इत्वरी प्रतिपुरुषं गमनशीला, वेश्या इत्यर्थः; सा चासावात्ता च कञ्चित्कालं भाटीप्रदानादिना संगृहीता, पुंवद्भावे इत्वरात्ता। अथवा इत्वरं स्तोकमप्युच्यते, इत्वरं स्तोकमल्पमात्ता इत्वरात्ता, विभक्तिपरत्वात् समासः। अथवाऽऽत्वरकालमात्ता इत्वरात्ता, मयूरव्यंसकादित्वात् समासः, कालशब्दलोपश्च। तस्यां गमः आसेवनम्। इदं चात्र भावना—भाटिप्रदानादित्वरकालस्वीकारेण स्वकलत्रीकृत्य वेश्यां सेवमानस्य स्वबुद्धिकल्पनया स्वदारत्वेन व्रतसापेक्षचित्तत्वान्न भंगः, अल्पकालपरिग्रहाच्च वस्तुतोऽन्यकलत्रत्वाद्भङ्ग, इतिभंगाभंगरूपत्वादित्वरात्तागमोऽतिचारः। इति प्रथमः १।

तथा अनात्ता अपरिगृहीता वेश्या स्वैरिणी, प्रोषितभर्तृका कुलांगना वाऽनाथा तस्यां गतिरासेवनम्। इयं चानाभोगादिना अतिक्रमादिना वाऽतिचारः। इमौ चातिचारौ स्वदारसंतोषिण एव, न तु परदारवर्जकस्य; इत्वरात्ताया वेश्यात्वेन अनात्तायाः स्वनाथतयैवाऽपरदारत्वात्, शेषास्त्वतिचारा द्वयोरपि।

अन्ये त्वाहुः—इत्वरात्तागमः स्वदारसन्तोषवतोऽतिचारः, तत्र भावना कृतैव, अनात्तागतिस्तु परदारवर्जिन। अनात्ता हि वेश्या तां गृहीतान्यसत्कभाटकामभिगच्छति तदा परदारगमनजन्यदोषसम्भवात् कथंचित् परदारत्वाच्चासम्भवात्वेन भंगाभंगरूपोऽतिचारः। × × × × × × × × ×
अन्ये तु अन्यथा अतिचारद्वयमपि भावयन्ति—स हि स्वदारसन्तोषी मैथुनमेव मया प्रत्याख्यातमिति स्वकल्पनया वेश्यादौ तत्परिहरति, नालिंगनादि, परदारविवर्जकोऽपि परदारेषु मैथुनं परिहरति नालिङ्गनादि, इति कथञ्चिद्व्रतसापेक्षत्वादतिचारौ। एवं स्वदारसन्तोषिणः पञ्चातिचाराः परदारवर्जकस्य तु त्रय एव इति स्थितम्।

अन्ये तु अन्यथाऽतिचारान् विचारयन्ति। यथा

परदारवज्जिणो पञ्च हुंति तिण्णि उ सदारसंतुट्ठे।

इत्थीउ निग्गिा पञ्च व भंगविगप्पेहिं अइयारा ॥

इत्वरकालं या परेण भाड्यादिना परिगृहीता वेश्या तां गच्छतः परदारवर्जिनो भंगः कथंचित् परदारत्वात्तस्याः लोके तु परदारत्वारूढे न भंग इति भंगाभंगरूपो ऽतिचारः। अपरिगृहीतायामनाथकुलांगनायां या गतिः परदारवर्जिन सोऽप्यतिचारः, तत्कल्पनया ऽपरस्य भर्तुरभावेनापरदारत्वादभंग, लोके च परदारतया रूढे भंग इति पूर्ववदतिचारः। शेषास्तु त्रयो द्वयोरपि भवेयुः, स्त्रियास्तु स्वपुरुषसन्तोषपरपुरुषवर्जनयो न भेदः, स्वपुरुषः प्रतिरिक्तेणा-ऽन्येषां परपुरुषत्वात् । अन्यविवाहनादयस्तु त्रयः स्वदारसंतोषिण इव स्वपुरुषविषयाः स्युरिति पंच वा। कथं ? इत्यादि ।

इस श्लोक की पूर्ण टीका थोड़े से हेर फेर के साथ सागारधर्मामृत में उद्धृत है हेमचन्द्र ने विटत्व को अतिचारों में नहीं गिनाया है किन्तु आशाधर ने गिनाया है अतः सागारधर्मामृत में 'विटत्व' अतीचार की व्याख्या करते हुए 'विटत्वं भण्डिमा तत्प्रधान वाक्प्रयोग' केवल कुछ शब्द ही लिखे गये हैं। इससे भी इस टीका के उद्धृत होने की बात पुष्ट होती है। अस्तु

आचार्य हेमचन्द्र ने तत्वार्थ सूत्र का अनुसरण करते हुए अतिचारों को गिनाया है और प० आशाधर ने स्वामी समन्तभद्र का अनुसरण किया है किन्तु संसार भर के मतों का समन्वय करने के इच्छुक पंडित जी ने अपनी टीका में तत्वार्थसूत्र की भी बात रखने का प्रयत्न किया है इस लिये योगशास्त्र के स्पष्ट उल्लेखों को उद्धृत करने में कुछ गड़बड़ी उपस्थित होगई है या संभव है सागारधर्मामृत में कुछ पाठ छूट गया हो। हेमचन्द्राचार्य ने ब्रह्माणुव्रत के दोनों भेदों में अतीचारों को बहुत स्पष्ट रूप से पृथक २ बताया है आशाधर जी ने उन सब का संकलन करके उसे संक्षिप्त रूप दे दिया है इससे भी उसके भाव में कुछ गड़बड़ी होगई है। पाठक इत्वरिकागमन की भावना को ध्यान से पढ़ें। इयं चात्र भावना

वेश्यां वेत्वरिकां सेवमानस्य . . .

इति भंगाभंगरूपत्वात् इत्वरिकायाः वेश्यात्वेनान्यस्याः स्वनाथतयैव परदारत्वात् सागा०। यहां भाड़ा देकर इत्वरिका या वेश्या के सेवन करने को अतीचार बतलाया है। किन्तु भंगाभंगरूपत्वात् के आगे इत्वरिकायाः आदि पाठ की संगति ही ठीक नहीं बैठती भंगाभंग रूपत्वात् के आगे अतिचार पाठ होना चाहिये जैसा कि योगशास्त्र में है। तथा इत्वरिकाया वेश्यात्वेन आदि में जब इत्वरिका को वेश्या में सम्मिलित कर दिया तब 'अन्यस्या.' पद से किसका ग्रहण किया जायेगा, क्योंकि पहिले वाक्यमें इत्वरिका और वेश्या दो का ही ग्रहण किया गया है। यहां पर भी योगशास्त्र का ही पाठ ठीक जान पड़ता है उसमें इत्वरागमन और अनात्तागम दोनों को अलग २ बतला कर लिखा है 'इत्वरात्ताया वेश्यात्वेन अनात्तायाःस्वनाथतयैवापरदारत्वात्'। यह अतिचार स्वदारसन्तोषी की दृष्टि से बतलाये गये हैं अतः परदारत्वात् पाठ अशुद्ध है। यहां तक स्वदारसन्तोष व्रत में इत्वरिकागमन को घटा कर बाद में परदारनिवृत्ति व्रत में घटित किया गया है। यथा किंचास्य भाड्यादिना परदारत्वात्तस्या' इत्यादि । सागा०। यहां पर भी योग शास्त्र के इत्वरकालं या परेण परदारवर्जिनो भंगः इत्यादि पढ़ लेना चाहिये। यदि इस वाक्य

घटित अतिचार को परदारनिवृत्ति व्रत में नहीं घटाया जायेगा तो आगेका वाक्य 'अन्येत्वपरिगृहीतकुलांगना-गमनस्वदारवर्जिनो ऽतिचारमाहु', असंबद्धही जायेगा। अतः अपने लेख में सागारधर्मामृत की टीका का अर्थ करते हुए मैं ने ब्रह्माणुव्रत के दोनों भेदों में जो इत्वरिका गमन को घटित किया था वह आशाधर जी के अभिप्राय को लेकर ही किया था। और उसके बाद जो तीन प्रश्न किये थे वह भी उसी की पुष्टि के लिये थे अतः अब उन प्रश्नों को उठाने की आवश्यकता नहीं है।

कोठारी जी लिखते हैं—"स्वामी जी ने तो 'न तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्' इत्यादि ब्रह्माणुव्रत के लक्षण में दूसरों से परदारगमन करवाने का निषेध भी करवाया है। ऐसी दशा में परविवाहकरण अतिचार कैसे कहा जायेगा क्योंकि विवाहकरण का अर्थ है मैथुनकरण जो कि साक्षात् व्रतभंग ही है।" विवाहकरण मैथुनमें कारण है। मैथुन विवाहके बाद ही किया जाता है विवाहसे पहिले नहीं किया जाता, और विवाहिता पत्नी परदारा नहीं रहती स्वदारा होजाती है। तथा उसके साथ सहवास स्वदारगमन ही कहा जाता है अतः कारित परदारगमनका त्यागी यदि परविवाह में योग दे तो वह अतिचार ही होगा अनाचार नहीं कहा जायेगा। परस्त्री सेवनके त्यागी के परस्त्री सेवनको अतिचार सिद्ध करने वाले महानुभाव परविवाहकरण को अनाचार बतलाते हैं, किमाश्चर्यमतःपरम्।

आगे लिखते हैं—"वास्तविकतया देखा जाये तो ब्रह्माणुव्रत का अर्थ है मैथुन संज्ञा को मर्यादित करना यह लक्षण जब माना जायेगा तब अनंगक्रीड़ा भी मैथुन होने से उसको भी व्रतभंग कहने की आपत्ति आजायेगी। मैथुन संज्ञा को मर्यादित करने का अर्थ मैथुन मात्र का त्याग नहीं है। ब्रह्माणुव्रती परस्त्री मात्र का त्याग करके मैथुन संज्ञा को मर्यादित करता है और मर्यादित क्षेत्र में जब कभी वह अनंग क्रीड़ा कर बैठता है तब वह अतिचार कहा जाता है। अतः परविवाहकरण और अनंग क्रीडा को अनाचार सिद्ध करने का प्रयत्न करना समय बिताना है।

आगे कोठारी जी लिखते हैं—"अतिचारों की गणना में सूत्रकार ने विटत्व अतिचार नहीं गिनाया तो स्वामीजी ने एक इत्वरिका गमनको नहीं गिनाया (इत्वरिकागमन को तो गिनाया है किन्तु उसके परिगृहीत, अपरिगृहीत भेद नहीं किये हैं। ले०) ऐसी अवस्था में कौन सा अभिप्राय ठीक माना जाये?

× × × × × ×

अन्यथा जब गमन शब्द का अर्थ विटत्व ही होता तो विटत्व का पृथक्तया परिगणन करनेकी क्या जरूरत थी"। हमारी दृष्टि से तो दोनों ही अभिप्राय ठीक है स्वामी समन्तभद्र के मत को ठीक बतला कर उमास्वामी महाराज के मत को गिराने का दुस्साहस मुझ से तो नहीं हो सकता। उमास्वामी जीने गमन में विटत्व को भी सम्मिलित कर लिया है क्योंकि इत्वरिका के घर आने जाने से विटत्व होने की संभावना है किन्तु स्वामी समन्तभद्र ने उसे अलग गिनाया है—कारण, किसी भी पर स्त्री को देखकर विटत्व यानी अश्लील वाक्य-प्रयोग किया जासकता है अतः विटत्व की ओट में 'गमन' का मन माना अर्थ नहीं किया जा सकता।

इसके बाद कोठारी जी ने अनेक प्रश्न उठाये हैं

आप लिखते हैं—"एक आदमी ने स्वदारसन्तोषव्रत लिया किन्तु उसको अपनी पत्नी से संतान न हुई तो वह द्वितीय विवाह कर सकता है, नहीं" ? "स्वदार-सन्तोष" का अर्थ "स्वपत्नी संतोष" है और विवाहिता स्त्री को ही पत्नी कहते हैं अत स्वदारसन्तोषव्रत का धारी अन्य विवाह कर सकता है। किन्तु यदि किसी ने अपनी एक विवाहित पत्नी को ही लक्ष्य करके स्वदारसन्तोष धारण किया हो तो वह दूसरा विवाह नहीं कर सकता।

आगे आप लिखते है—"जिस प्रकार द्वितीय-विवाह परविवाहकरण या अनंगक्रीड़ा मैथुनकरण होते हुये भी अतिचार कहलाते है उसी प्रकार सातिचार स्वदारसन्तोषव्रत का पालन करने वाले की धर्मपत्नी मरगई और द्वितीय विवाह करने की उसकी शक्ति न रही या यूँ कहो कि धर्मपत्नी के जीवित होते हुये भी वह व्रती कार्यवश परदेश चला गया और वहां पर चारित्र मोहनीय उदय में आगया, तब उसने यदि वेश्या सेवन कर लिया तो वह मैथुनकरण होते हुये भी उसको अतिचार कहने में क्या हर्ज है" ? मैथुन-करण मात्रको अतिचार नहीं कहा जा सकता, अन्यथा स्वपत्नी से मैथुन करना भी अतिचार कहा जायेगा। मर्यादित क्षेत्र के अन्दर की या बाहर की जो बातें मैथुन संज्ञा को उत्तेजित करने में सहायक होती हैं वे अनाचार कही जाती हैं। द्वितीय विवाह और अनंगक्रीड़ा मर्यादित क्षेत्र के अन्दर ही सम्मिलित हैं। यद्यपि परविवाहकरण मर्यादित क्षेत्र से बाहर है किन्तु स्वदारसन्तोषी वहाँ दूसरे मनुष्य के लिये उचित मैथुन के साधन जुटाता है और केवल इतनी बात पर ही उसे अतिचार संज्ञा दी जाती है। किन्तु आप तो वेश्या सेवन को इनकी कोटि में ला कर रख रहे हैं। दूसरों का विवाह करा देना और स्वयं वेश्या को भोगना यह दोनों कार्य क्या सम-कोटि में सम्मिलत करने के योग्य हैं ? कामातुर हो कर अपनी स्त्री से अनंगक्रीडा करना और वेश्या को भोगना यह दोनों कार्य क्या एक कोटिके हैं ?

इन्दौरके सरसेठ हुकमचन्द जीने अपनी पत्नीके जीवनमें निराश होकर दूसरी शादीकी थी यदि सेठजी विवाह न करके पैसेके द्वारा किसी वेश्या को रखेली बना लेते या आवश्यकता पड़ने पर प्रतिबार नये २ स्मरमन्दिरों की सैर करते तो क्या वह एक ही कोटि के कार्य कहलाते ? धर्मपत्नी के जीवित होते हुये भी यदि किसी व्रती का मन, परदेश में जाकर किसी 'रूपसी' को देख कर, मचल जाता है और वह उसे भोग लेता है तो क्या स्वदेश में ऐसा करना अना-चार कहा जायेगा। स्वदेश में रहते हुये यदि पत्नी अपनी मांके घर चली जाये और उसके जाते ही व्रती को काम सताने लगे और वह कहीं पर मुँह काला करले तो कोठारी जी के मत से क्या वह अतिचार नहीं कहा जायेगा ? इसी तरह के और भी बहुत से उदाहरण पेश किये जा सकते है। जिन्हे अतिचारों में सम्मिलित कर देने पर स्वदारसन्तोषव्रत एक खिल-वाड़ रह जाता है।

ब्रह्माणुव्रती के वधू और वित्तस्त्री के सिवा अन्य स्त्रियों का त्याग कराकर सोमदेव जी ने परस्त्री के साथ सहवास करने को अतिचारों में गिनाया है। अर्थात् वधू और वित्तस्त्री का छूट ही है, रह गई पर नारी, वह अतिचारों में शामिल है, अनाचार का कुछ काम ही नहीं है। मैं इस लेख को पढ कर

कोठारी जी को भी सोमदेव की भूल खटक गई है किन्तु बेचारे सब कुछ जान कर भी सोमदेव का पिंड छोड़ने को तैयार नहीं होते। पाठक उनके शब्दों को जरा ध्यान से पढ़ें। वे लिखते हैं—"जब बधू और वित्तस्त्री को छोड़ कर अन्य अंगनाओंका त्याग किया जाता है तब अतिचारों में कौन से शब्द का प्रयोग करना ऐसी जबर्दस्त शंका खड़ी हो जाती है। 'इत्वरिकागमन' को अतिचार कहा गया तो जिस का त्याग किया, नहीं ऐसे इत्वरिका के सेवन को भी अतिचार कहने का प्रसंग आता है। यदि 'परस्त्री-गमन' का प्रयोग किया तो (जैसा कि सोमदेव जी ने किया है, ले०) साक्षात व्रत भंग को ही अतिचार कहने का प्रसंग आता है। ऐसी दशा में परस्त्रीसंगम या परस्त्रीगमन को ही अतिचारोंमें गिनाना पड़ता है"

साक्षात व्रतभंगका प्रसंग भी देते जाते हैं और उस शब्द को अतिचारों में भी गिनाते जाते हैं वीतराग-चर्चा का क्या यही नमूना है? अपूर्ण

प्यारे यति की धूर्तता

(ले० श्रीमान श्यामलसिंह जी जैन ठाकुर)

'वाममार्ग और दिगम्बर समाज' नाम की एक पुस्तक जैसलमेर से प्रकाशित हुई है। इसके लेखक यति 'प्यारे' और इसके प्रकाशक पं० लक्ष्मीचंद जी यति हैं। पुस्तक में टाइटिल के अतिरिक्त १६ पेज हैं। लेखक ने प्रस्तुत पुस्तक में इस बात के बतलाने का प्रयत्न किया है कि दिगम्बर समाज में या उसके मान्य शास्त्रों में वाममार्ग का शिक्षा का अस्तित्व मिलता है। आपने अपनी सुमान्यता के समर्थन में केवल त्रिवर्णाचार के कुछ श्लोक उपस्थित किये हैं। साथ ही त्रिवर्णाचारके भाषा टीकाकार पं० पन्नालाल जी सोनी की त्रिवर्णाचार की भूमिका के कुछ अंश उद्धृत किये हैं। विज्ञ पाठक यति जी के हृदय का वास्तविक पता लगा सकें अतः हम यहां पर उनके द्वारा उद्धृत त्रिवर्णाचारके श्लोकों और उसकी हिन्दी भूमिका के वाक्यों को उन्हीं की पुस्तक से ज्यों का त्यों उद्धृत किये देते हैं।

१—गर्भाधानादयो भव्यस्त्रिशन्त्कृ्रिया मता।
वक्ष्ये ऽधुना पुराणे तु याः प्रोक्ता गणिभिः पुरा

अनुवाद—गर्भाधान आदि जिन **उत्तम तैंतीस सुक्रियाओं का** प्राचीन महर्षियों ने शास्त्रों में कथन किया है, उनको अब मैं यहां पर कहता हूँ—

२—मूत्रादिकं ततः कृत्वा, क्षालयेत् त्रिफलाजलैः।
योनिं रात्रौ गते यामे, संगच्छेद्रतिमन्दिरम् ॥

अनुवाद—एक पहर रात्रि बीत चुकने पर, स्त्रियां पेशाब आदि करके हरड़ा, बहेड़ा और आंवला—इस

त्रिफला के जल से योनि—जननेन्द्रिय को धोलें। पश्चात् वे शयनागार में जावें।

३—स्वपेत् स्त्री प्राक् शिरः कृत्वा प्रत्यक्पादौ प्रमारयेत्
ताम्बूलचर्वणं कृत्वा सकामो भार्यया सह ॥

अनुवाद—पति पत्नी दोनों पान खाकर पूर्व दिशा की ओर शिर और पश्चिम की ओर पैर करके सोवे।

४—चन्दनं चार्चुलिप्यांगैः धृत्वा पुष्पाणि दम्पती।
परस्परं समालिंग्य, प्रदीपे मैथुनं चरेत् ॥

अनुवाद—पति पत्नी दोनों ही अपने शरीर में चन्दन का लेप करें और गले में पुष्पमाला पहरें। दोनों परस्पर आलिंगन करें और कामोत्तेजना होने पर मैथुन करें।

५—दीपे नष्टे तु यः सङ्गं करोति मनुजो यदि।
यावज्जन्म दरिद्रत्वं लभते नात्र संशयः ॥

अनुवाद—जो मनुष्य दीपक बुझाकर सम्भोग करते हैं वे यावज्जीवन दरिद्री रहते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

६—पादलग्नं तनुश्चैवेत्युच्छिष्टं ताडनं तथा।
कोपो रोषश्च निर्भर्त्सः संयोगे न च दोषभाक् ॥

अनुवाद—सम्भोग के समय परस्पर एक दूसरे के पैरों का लग जाना, परस्पर जूठे का सम्बन्ध हो जाना, ताडना करना, कोप करना रोष करना, तिरस्कार करना, दोष नहीं है। दूसरे समय में इनका होना सदोष है।

७—भुक्त्वानुपविष्टस्तु, शय्यायामभिसम्मुखः।
संस्मृत्य परमात्मानं, पत्न्या जंघे प्रसारयेत् ॥

भावार्थ—भोजन करके शय्या पर आरूढ़ पति, परमात्मा का स्मरण करता हुआ, पत्नी की जंघायें फैला दे।

८—अलोमशां च सद्वृत्तामनार्द्रां सुमनोहराम्
योनिं स्पृष्ट्वा जपेन्मंत्रं पवित्रं पुत्र दायकं ॥

भावार्थ—जिस पर रोम नहीं हैं, जो सद्रुचि से युक्त है जिसमें गीलापन नहीं है, जो सुमनोहर है, ऐसी योनि का स्पर्श करके पवित्र पुत्रदायक निम्न मन्त्र का जप करे।

९—इति मंत्रेण गोमय गोमूत्र क्षीरदधिसर्पि कुशोदकैर्योनिं सम्प्रक्षाल्य श्रीगंधकुंकुमकस्तूरिकाद्यनुलेपनं कुर्यात

अनुवाद—यह मंत्र पढ़ कर गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, घी, डाभ और जल से जननेन्द्रिय का प्रक्षालन कर, उस पर गंधः केशर, कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्यों का लेप करे।

१०—योनिं पश्यन् जपेन्मंत्रानर्हदादिसमुद्भवान्।
मादृशस्तु भवेत्पुत्र, इतिमत्वा स्मरोज्जितम् ॥

अर्थात्—फिर योनि का दर्शन करके, अर्हन्त आदि का निम्न मंत्र अपने ही जैसा पुत्र होने के लिये जपे।

११—ओष्ठावाकर्षयेदोष्ठैरन्योन्यमवलोकयेत्।
स्तनौ धृत्वा तु पाणिभ्यामन्योन्यं चुम्बयेन्मुखम् ॥

भावार्थ—ओठ से एक दूसरे के ओठ खींचे और एक दूसरे का अवलोकन करें। स्तनों को हाथ से पकड कर एक दूसरे के मुख का चुम्बन करें।

१२—बल देहीतिमंत्रेण योन्यां शिश्नं प्रवेशयेत्।
योनेस्तु किंचिदधिकं भवेल्लिंग बलान्वितम् ॥

भावार्थ—"मुझे बल दो" इस प्रकार के मन्त्र का जाप करते हुए स्त्री की योनि में का प्रवेश करावे। योनि की अपेक्षा लिंग कुछ अधिक बलवान होना चाहिये।

१३—ऋतुकालोपगामी तु प्राप्नोति परमांगतिम् ।

अर्थात्—जो पुरुष ऋतुकाल में स्त्री संगम करता है, वह उत्तम गति को प्राप्त होता है ।

१४—ऋतुस्नातां तु यो भार्यां सन्निधौ नोपयच्छति।
घोरायां भ्रूणहत्यायां पितृभिः सह मज्जति ॥

अनुवाद—स्त्री के ऋतुस्नान होने पर, जो पुरुष उस स्त्रीके पास नहीं जाता है, वह अपने माता पिता के साथ भ्रूणहत्या के घोर पाप में डूबता है । भावार्थ—कितने ही लोग ऐसी बातों में आपत्ति करते हैं इसका कारण यही है कि वे आजकल स्वराज्य के नशे में चूर हो रहे हैं ।

१५—ऋतु स्नाता तु या नारी पतिं नैवोपविन्दति ।
शुनी वृकी शृगाली स्याच्छूकरी गर्दभी च सा॥

अर्थात्—जो स्त्री ऋतु स्नान करके, पति के पास नहीं जाती है, वह मर कर कुत्ती भेड या हिरनी, शृगाली, शूकरी या गदही होती है ।

"ग्रन्थ की प्रामाणिकता में भी हमें कुछ संदेह नहीं होता प्रतिपादित विषय जैन मत के न हों और उनमें विपरीत शिक्षा मिलती हो, तो प्रमाणता में सन्देह हो सकता है । ग्रन्थकी मूल भित्ति आदिपुराण पर से खड़ी हुई है । जिनका आधार उन्हीं ने लिया है, उनके ग्रन्थोंमें भी वे विषय पाये जाते हैं। कि बहुना **इस ग्रन्थके विषय ऋषि प्रणीत—आगम में कहीं संक्षेप और कहीं विस्तार से पाये जाते हैं। अतएव हमें तो इस ग्रन्थ में न अप्रमाणिकता ही प्रतीत होती है और न आगम विरुद्धता ही"।**

आगे चलकर लिखा है—

"मुझे तो इस ग्रन्थ का प्रायः कोई भी विषय शास्त्र विरुद्ध नहीं जान पड़ा । इस ग्रन्थ में जो जो विषय बताये हैं, उनका बीज ऋषि प्रणीत शास्त्रों में मिलता है ।"(भाषाकार)

त्रिवर्णाचार के श्लोकों के आधार से प्रस्तुत पुस्तक के लेखक ने निम्नलिखित परिणाम निकाला है ।

"इस प्रकार से विधिवत व्यभिचारोसेवन, केवल वाममार्ग में सुना जाता था । किन्तु अब तो दिगम्बर बन्धुओं के यहां भी ऐसी ही आवाज सुनने को मिली है" ।

अब विचारणीय यह है कि पुस्तक लेखक का कथन कहां तक सत्य है । सोमसेन त्रिवर्णाचार की अप्रामाणिकता एक असंदिग्ध बात है किन्तु यदि इसको थोड़ी देर के लिये छोड़ भी दिया जाय और यतिजीकी बातको ही विचारकोटि में ले लिया जाये तब भी उससे पुस्तक लेखक के अभिप्राय की पुष्टि नहीं होती । त्रिवर्णाचार के कथन और पुस्तक लेखक के वक्तव्य में दिन और रात का सा अन्तर है । जहां कि वाममार्ग "मातृयोनिं परित्यज्य विहरेत् सर्वयोनिषु" अर्थात् "माता की योनि को छोड़ कर सब योनियों का भोग करना चाहिये" का विधान करता है वहीं त्रिवर्णाचार में इसकी गंध भी नहीं मिलती है। त्रिवर्णाचार में जो कुछ भी बतलाया गया है वह केवल स्वस्त्री के ही सम्बन्ध में है। व्यभिचार या वाममार्ग और स्वस्त्री-सम्बन्ध का परस्पर विरोध है । जहां केवल

स्वको सम्बन्ध या उसका विधान है वहां व्यभिचार या वाममार्ग की बात कथमपि स्वीकार नहीं की जा सकती। लेखक का अभिप्राय दिगम्बर समाज में यदि वाममार्ग की ही शिक्षा के बतलाने का था तो कम से कम उनको इस प्रकार के प्रमाण तो उपस्थित करने चाहिये थे जिनसे विवादस्थ विषयों पर प्रकाश डाला जा सकता था। लेखक दिगम्बर शास्त्रों के सम्बन्ध में जानकारी नहीं रखते यह बात तो उनके ही लिखने से स्पष्ट है किन्तु साथ ही साथ यह भी स्पष्ट है कि आपको व्यभिचार की परिभाषा और वाममार्ग की मान्यता का भी पता नहीं है। यदि ऐसा न होता तो त्रिवर्णाचार के आधार से आपने दि० समाज में व्यभिचार या वाममार्ग की शिक्षा के बतलाने की चेष्टा न की होती।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि यति प्यारे ने त्रिवर्णाचार के जिन श्लोकों के आधारसे दि० समाज में व्यभिचार या वाममार्ग की शिक्षा के बतलाने की चेष्टा की है यह नितान्त मिथ्या है। इसके सम्बन्ध में दूसरी बात यह है कि दि० समाज की मान्यता का निर्णय उसके माननीय शास्त्रों के ही आधार से हो सकता है। त्रिवर्णाचार उक्त समाज के माननीय शास्त्रों की सूची में नहीं है। दि० समाज के अनेक प्रतिष्ठित विद्वान इसकी मान्यता के प्रतिकूल घोषणा कर चुके हैं। यति प्यारे का कर्तव्य था कि वह दि० समाजकेसम्बन्धमेंकिसी भी बात के लिखने से पूर्व उसके सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी हासिल करलेते

आपका लिखना है कि "हम जैन शास्त्रों के ज्ञाता नहीं है" ऐसी अवस्था में आपका कर्तव्य था कि पहिले आप दि० शास्त्रों के ज्ञाता बनते और फिर उनके सम्बन्ध लेखनी उठाते। यदि आपको त्रिवर्णाचार या उसके विवादस्थ श्लोकों के सम्बन्ध में ही जानकारी हासिल करनीथी तो आपको उक्तसमाजके प्रतिष्ठितविद्वानोंसे उक्तविषयपर परामर्श करनाचाहिये था तभी आपके भाव को एक जिज्ञासु का भाव माना जा सकता था। जो स्वयं अपने को जिस विषय का अज्ञानी स्वीकार करता है वही उसके सम्बन्ध में लेखनी चला दे इससे बढ़ कर और क्या धृष्टता हो सकती है। यति प्यारे की कृति भी इसी श्रेणी की है। इन सब बातों के आधार से कहना पड़ता है कि विवादस्थ पुस्तक का दिगम्बर समाज के सम्बन्ध में व्यभिचार का वर्णन मिथ्या है। साथ ही साथ यह भी स्पष्ट है कि यति प्यारे ने उक्त समाज को व्यर्थ बदनाम करने के लिये एक निराधार चेष्टा की है। यहां थोड़ा सा इस विषय पर भी विचार कर लेना अनुचित न होगा कि यति प्यारे जी से वाममार्ग कितनी दूर है या यों कहिये कि आपके सम्प्रदाय की मूल पुस्तकों के कथन और वाममार्ग की शिक्षा में कितना अन्तर है। दोनों सम्प्रदायों के शास्त्रों को तुलनात्मक ढंग से देखने के बाद एक भद्र से भद्र मनुष्य भी इस बात को स्वीकार किये बिना न रहेगा कि यति प्यारे जी की "सम्प्रदाय के मूल पुस्तकों" में वाममार्ग का कथन मिलता है। वाममार्ग की मान्यता को यदि एक ही श्लोक में पाठकों के समक्ष उपस्थित करना चाहें तो उसके लिये निम्न लिखित श्लोक पर्याप्त है।

"मद्यं मांसं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
एते पञ्च मकाराः स्युर्मोक्षदा हि युगे युगे"।

अर्थात्—प्रतियुग में मद्य, मांस, मछली, मुद्रा और मैथुन ये पांच बातें मोक्ष की देने वाली हैं। इनही बातों का उल्लेख या विधान यति जी के शास्त्रों में ही मिलता है जैसा निम्न लिखित उल्लेखों से स्पष्ट है।

"से भिक्खू वा (२) जाव समाणे सेउजं पुण जाणेज्जा आमडागं वा, पूत पिण्णागं वा, महुंवा मज्जंवा, सप्पिंवा, खोलं वा, पुराणं इत्थ पाणा, अणुप्पसूता, इत्थ पाणा जाया, इत्थ पाणा संवुड्डा, इत्थ पाणा अवुक्कंता, इत्थ पाणा अपरिणता, इत्थ पाणा अविद्धत्था, णो पडिगाहेज्जा" आचारांग (प्रकाशित सेठ ज्वालाप्रसाद जी) पेज ३०६। अर्थात् मुनिको गोचरी जाते आधीपकीहुई शाक भाजी नहीं लेना वैसे ही सड़ा हुआ खल पुराणा 'मधु' तथा 'मदिरा' पुराणाघृत और पुराणा 'मदिरा' के नीचे बैठा हुआ कचरा मुनि को नहीं लेना।

इससे स्पष्ट है कि आचारांग का यह उल्लेख गृहस्थों की तो बात ही क्या है मुनियों के लिये भी शराब और शहद का विधान करता है। चाहे ये ताजे ही क्यों न हो किन्तु आखिर तो शहद और शराब ही हैं। इसमें यह बात कैसे स्वीकार की जा सकती है कि आचारांग के इस उल्लेख में शहद और शराब का विधान साबित नहीं होता?

"पुव्वामेव भिक्खा परियाए अणुपविस्सामि, अविय इत्थ लभिस्सामि पिंडंवा, लोयं वा, खीरं वा, दधि वा, नवणियं वा, घयं वा, गुलं वा, तेल्लं वा, महुं वा, मज्जं वा, मांसं वा, संकुलिं वा, फणणयं वा, पूयं वा," आचारांगसूत्र (प्रकाशक. सेठ ज्वालाप्रसाद जी) पेज २७०" अर्थात्- मैं प्रथम मैरेस्वजन सम्बन्धियोंमें भिक्षार्थ जाऊंगा और वहाँ अन्न, पान, दूध, माखण घी, गुड़, तेल, "मधु, मद्य मांस," तिलपापड़ी, गुड़का पानी, बूंदी के श्रीखंड मिलेगा उनको मैं पहिले खा कर पात्रों को साफ कर । आचारांग सूत्र का यह दूसरा उल्लेख साधुओं के लिये जहां शहद और शराब का विधान करता है वहीं मांस का भी। इसमें स्पष्ट है उक्त शास्त्रके अनुसार साधु मांस भोजन भी कर सकता है तथा संभव है ऐसा होता रहा होगा।

"से भिक्खूवा सेज्जं पुण जाणेज्जा बहुअट्ठियं मंसं वा, मच्छं वा, बहुकंटगं अस्सिं खलु पडिगाहिंतासि अप्पे सिया भोयणजाए बहु उज्झियधम्मिए तहप्पगारं बहुअट्ठियं मंसं मच्छं वा बहु कंटगं लाभे संते जाव णो पडिगाहेज्जा॥"

आचारांग सूत्र (प्रकाशक सेठ ज्वालाप्रसादजी पेज) ३२३

आचारांग का यह उल्लेख साधु और साध्वी के लिये मांस और मछली का विधान करता है। मांस और मच्छ शब्द प्रस्तुत उल्लेख में दो स्थानों पर आया है। तथा इसका अर्थ भी मांस और मछली है। फिर भी स्थानक वासी साधु श्री अमोलक जी ने 'मच्छ' शब्द का अर्थ 'मत्स्य' नामक वनस्पति किया है जो कि बिलकुल निराधार है। आचारांगसूत्र साधु के लिये मांसभक्षण का विधान करता है इसमें श्री अमोलक जी को भी ऐतराज नहीं होना चाहिये क्यों कि आचारांग के आपके ही हिन्दी भाष्य मे ऐसा प्रमाणित होता है। आचारांगके पहिले दोनों उल्लेखों का हिन्दी अर्थ जिसको कि हमने उसके मूल पाठ के बाद अर्थात् करके लिखा है आप ही का है तथा इससे शहद, शराब और मांस का विधान स्पष्ट

प्रमाणित होता है। ऐसी अवस्था में जब कि आचारांग के दूसरे स्थानोंमें मांस भक्षणका स्पष्ट उल्लेख मिलता है तब कोई कारण प्रतीत नहीं होता जिससे 'मच्छ' शब्द का प्रचलित अर्थ मछली न किया जाय। दूसरी बात यह है कि किसी बात को कह कर उसको घटित भी करना चाहिये। अमोलकऋषि जी जब तक 'मत्स्यनामक' वनस्पति को नहीं बतला देते तब तक विवादस्थ शब्द का अर्थ भी विचारकोटि में नहीं लाया जा सकता। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उक्त सूत्र में मांस आदिक की तरह 'मछली' के भक्षण का विधान भी निःसन्देह मानने योग्य है।

मैथुन के वर्णन से भी यति प्यारे जी के माननीय ग्रंथ खाली नहीं हैं। एक स्त्री के अनेक पतियों का विधान करना आप× ही के सम्प्रदायों के शास्त्रों का काम है आपके ज्ञाता धर्म कथांग के द्रौपदी वर्णन को इसके समर्थन में उपस्थित किया जा सकता है। द्रौपदी को सती स्वीकार करके भी उसके पांच पतियों का विधान करना व्यभिचार की शिक्षा नहीं तो क्या है? आखिर वाममार्ग भी तो यही बतलाता है कि एक स्त्री भी अनेक मनुष्यों से विषय भोग कर के भी कर्तव्यच्युत नहीं होती यह ऐसा करना उसके अधिकार की बात है। यति प्यारे जी के शास्त्रों का द्रौपदी चरित्र वर्णन बिलकुल इसके अनुरूप ही है। इससे प्रगट है कि जहां आपके शास्त्रों में मद्य, मांस और मीन आदि वाममार्ग की बातों का उल्लेख मिलता है वहीं वे मैथुन के वर्णन से भी खाली नहीं है। इससे स्पष्ट है कि तुलनात्मक ढंग से देखा जाय तो यह अवश्य स्वीकार करना पडेगा कि यति प्यारे जी के माननीय शास्त्रों में वाममार्ग की शिक्षा का अस्तित्व मिलता है। अब यति जी को ही सोचना चाहिये कि "बुरा जो देखन मैं चला बुरा न दीखा कोय। जो दिल खोजा आपना मुझ सा बुरा कोय" वाली कहावत क्या आपके चरितार्थ नहीं होती। श्री वीर भगवानके मंडित मौर्यपुत्र नामक दो गणधरों की माता एक तथा पिता दो बतलाना वाममार्ग है या नहीं? आशा है अपने शास्त्रों के उल्लेखोंसे आप अपने हृदय और दृष्टि को शुद्ध करने की चेष्टा करेंगे।

अब हम त्रिवर्णाचार के भाषाकार एवं भूमिका लेखक से भी कुछ शब्द कह देना चाहते हैं। आपका लिखना कि "मुझे तो इस ग्रन्थ का प्रायः कोई भी विषय शास्त्र विरुद्ध नहीं जान पड़ता। इस ग्रंथ में जो २ विषय बताये हैं उनका बीज ऋषि प्रणीत शास्त्रों में मिलता है" नितान्त मिथ्या है।

सच पूछिये तो आप ही जैसे विद्वानों की कृपा का फल है जो दिगम्बर समाज को ऐसी बेहूदी बातें सुननी पड़ रही हैं। हमारा तो भाषाकार जी को सादर निमंत्रण है कि आप अन्य बातों को तो छोड़ दें कृपया इस पुस्तक की बातों के सम्बन्ध में ही ऋषि प्रणीत शास्त्रों के आधार उपस्थित करदें। क्या आप बतला सकते हैं कि किसी भी ऋषि ने अपने लेख में ऋतु काल में भी स्त्री के साथ भोग करने का विधान किया है। हमारी तो दृढ़ धारणा है कि यह सब ब्राह्मणत्व है। ब्राह्मणों में जब जैनधर्म के प्रतिकूल बोलने का बल नहीं रहा तब उन्होंने जैनधर्म के

× सेठ ज्वालाप्रसादजी द्वारा प्रकाशित पेज ४६१, ६६०

ही नाम पर साहित्य का निर्माण किया है और उसमें उन्होंने अपनी मान्यताओं को बतलाया है। त्रिवर्णाचार के प्रकरण के प्रकरण ब्राह्मण साहित्य से मिलते हैं फिर भी भाषाकार जी यही कहते चले जाते हैं कि मुझे इसमें कुछ भी बात जैनधर्म के प्रतिकूल नहीं मालूम पड़ती है।

हमारा आपसे यही नम्र निवेदन है कि जैन साहित्य और जैनधर्म की पवित्रता सुरक्षित रखने के लिये आप निष्पक्ष हृदय से उन बातों का समर्थन करने की कृपा कदापि न करें जो मिथ्यात्व की पोषक हों और जिनका विधान आर्ष ग्रन्थोंमें नहीं पाया जाता अपने घरका कूड़ा करकट भी बाहर फेंकदेना चाहिये।

अंत में 'यति प्यारे' और उनके सहायक महानुभावों को सप्रेम निमन्त्रण है वे 'दिगम्बर ग्रंथों की पोपलीला, स्त्री मोक्ष, दिगम्बर जैन भिक्षु और उपदेशक' आदि पुस्तकें सहर्ष प्रकाश में लावें हम उन पर यति जी का तथा दिगम्बरीय सिद्धान्तों का परीक्षण करके जनता को खुलासा निचोड़ बतलावेंगे साथ ही यति जी को भी दिखावेंगे कि आपके घर में क्या कुछ रक्खा है।

तब——और——अब

(ले० श्रीमान पं० चांदमल जी शशि बी० ए० विशारद)

मुनि

जिनका होता था तब जगमें, पूर्ण स्वतंत्र विहार।
कर कल्याण स्वयं जो फिरते, करते जग उद्धार॥
होता जिनकी सौम्य-मूर्तिको लखि था आत्म प्रबोध।
पशु-पक्षी भी तज देते थे, सन्मुख सहज विरोध॥

कुछ, ऋषिराज हुए अब ऐसे, जिनके थिर न विचार।
कहते क्या, करते क्या, जिनका शंकास्पद आचार॥
शान्ति-धर्म के बने हुये हैं, जग में जो अवतार।
फूट-कलह का ये ही करते प्रतिदिन हैं विस्तार॥

पंडित

सीधे-साधे भोले-भाले, व्याज-छिद्र से दूर।
शास्त्र-निपुण, सद्धर्म-परायण; नीति-नेह-परिपूर॥
ऐसे थे पंडित तब, जिनको था निज-पर का ज्ञान।
वे ही सदुपदेश दे, जग का करते थे कल्याण॥

किन्तु आधुनिक पंडितगण हैं, रखते अपनी टेक।
धर्म-शास्त्र-मर्यादा का नहिं, जिनको पूर्ण विवेक॥
कठिन परिश्रम से वे करते, पास परीक्षा एक।
शास्त्री बन कौशल प्रकटाते, रच छल-छन्द अनेक॥

सुधारक

धर्म न्याय के उन्नायक थे, था सच्चा व्यवहार।
वे ही बन निःशंक वस्तुतः, कर गये विश्व-सुधार॥
सत्य सुधारक वे थे जिनको, छू न गया था मान।
जात्युन्नति-हित जो करते थे, निज जीवन बलिदान॥

जात्युन्नति की लगन लगी हो, जिसको अब भरपूर।
ऐसा कोइ न, अब के रहते मद-मदिरा में चूर॥
अति स्वच्छन्दता फैला करके, किया जाति-अवसान।
सर्व सुधारक बने बिगाड़क, अब कैसा उत्थान?

गृहस्थ

पूर्व समय में जो गृहस्थ थे, रहते थे वे शुद्ध।
द्रोह मोह का मैल नहीं था, थे वे आत्म-प्रबुद्ध॥
भ्रातृभाव-वात्सल्य प्रेम ही, था जीवन का सार।
सरल भाव से तत्पर थे वे करने पर उपकार॥

परिग्रह से परिपूर्ण जीविका, लदा गृहस्थी भार।
सतत समाकुल रहते हैं ये, बने दीन लाचार।
सुता बेचते, रिशवत लेते; रखते कपट अपार।
अब इनकी स्थिति है ऐसी, तब कैसा निस्तार?

युवक

रहते थे तब संयम पूर्वक, ब्रह्मचर्य्य में लीन।
गुरु-समीप कानन में बस कर, थे वे पठन प्रवीन॥
देश-धर्म की रक्षा ही था, जिनका जीवन-ध्येय।
विनय शील-आज्ञा-पालनहित करते कार्य्य विधेय॥

पर, इस समय पतन युवकों का, करने योग्य विचार।
है उद्धतता, उच्छृङ्खलता, सभ्य न है व्यवहार॥
निरुत्साह-सम्पन्न निठल्ले, हैं उद्देश्य विहीन।
दशा हो रही है अब इनकी, देखो तेरह तीन॥

विरोध परिहार

(ले० श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

विरोध २१—"इस आक्षेप के उत्तर में मुझे तीन बातें कहनी है। पहिली तो यह कि जैन शास्त्रकारों ने ज्ञेय की अपेक्षा ज्ञान में अधिक अविभागी प्रतिच्छेद माने हैं। इस हिसाबसे एककेवल ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदों को अगर कोई जानना चाहे तो उसे उससे अनन्तानन्त गुणा होना चाहिये। इस दृष्टि से केवल ज्ञानों में भी न्यूनाधिकता सिद्ध हो जायगी। इस प्रकार एक केवली के लिये दूसरे केवली के अविभाग प्रतिच्छेद तो अज्ञेय ही रहेंगे।

दूसरी यह कि एक ज्ञान से जब अनेक पदार्थ जाने जाते हैं तब उनकी विशेषतायें उसमें प्रतिविम्बित नहीं होतीं। एक दर्पण के भीतर एक पहाड़ का भी प्रतिविम्ब पड़ सकता है परन्तु पहाड़ का सामान्य आकार ही प्रतिविम्बित होगा उसका प्रत्येक परमाणु नहीं। अगर पूर्ण रूप में प्रतिविम्बित करना चाहें तो अपनेसे बड़ेका प्रतिविम्ब नहीं आ सकता। एक केवल ज्ञान में जब दूसरे केवलज्ञानका प्रतिविम्ब पड़ेगा और अन्य पूरे केवल ज्ञानों तथा दूसरे पदार्थों का भी प्रतिविम्ब पड़ेगा तब केवलज्ञान पूरेरूपमें प्रतिविम्बित न हो सकेगा। इसका सामान्याकार ही प्रतिविम्बित होगा विशेषाकार रह जायगा और यही बात सर्वज्ञता के अभाव केलिये काफी है।

तीसरी बात ऐंजिन के दृष्टान्त के विषय में है। एक ऐंजिन दूसरे को खींच सकता है परन्तु यह तभी जब कि दूसरा ऐंजिन वास्तव में ऐंजिन न रहे अर्थात् वह ऐंजिन की तरह काम न करे। इसी प्रकार अगर केवलज्ञानकी शक्ति निश्चेष्ट पड़ी हो तो उस साधारण ज्ञान के समान केवल ज्ञान को दूसरे केवलज्ञान जानलें परन्तु जब वह अपनी पूरी शक्ति से काम कर रहा हो तब उसे दूसरे ज्ञान पूरे रूप में कैसे जान सकते हैं? यह कहना हास्यास्पद है कि "दो केवल ज्ञान एक दूसरे को आपस में जान लेंगे इस लिये उनका लेन देन बराबर हो जायगा।" जिस प्रकार समान सम्पत्ति वाले दो व्यक्ति एक दूसरे को एक २ रुपया दें तो दे लेकर सब ज्यों के त्यों बने रहते हैं" इस उदाहरण में देने की कमी लेने से पूर्ण हो जाती है किन्तु यह बात नहीं है आदि।

परिहार २१—जहां तक ज्ञेयों की अपेक्षा ज्ञान में अधिक अविभागी प्रतिच्छेदों के वर्णन की बात है वहां तक इसमें हम को भी विरोध नहीं है किन्तु जब आक्षेपक दूसरे केवल ज्ञानी के ज्ञान के प्रत्येक अविभाग परिच्छेद को जानने के लिये ज्ञान में भी उतने ही अविभाग प्रतिच्छेद बतलाते हैं तथा फिर इसके आधार से ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदों में बतलाये गये उसके अविभाग प्रतिच्छेदों से अधिकता कहते हैं तब हम आपकी बात को स्वीकार करने को तय्यार नहीं हैं। यह बात हम अनेक बार स्पष्ट कर चुके हैं कि ज्ञान में अविभाग प्रतिच्छेदों का होना उसके निजी शक्ति अशोंसे है न कि उसके द्वारा जाने जाने वाले ज्ञेयों की संख्या से। यदि ज्ञानके अविभाग प्रतिच्छेदों का संख्या उसके ज्ञेयों की संख्या पर ही अवलम्बित होती या यों कहिये

कि ज्ञान अपने भिन्न २ अविभाग प्रतिच्छेदों से ही भिन्न २ ज्ञेयों का ज्ञाता होता तब तो ऐसी कल्पना को स्थान हो सकता था। दरबारीलाल जी अपने इसही आक्षेप में स्वीकार कर चुके हैं कि ज्ञेयों की संख्या से ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदों की संख्या अधिक है या ऐसा जैन शास्त्र बतलाते हैं तब फिर आपको यह भी तो विचारना चाहिये था कि अब मैं ज्ञेयों के आधार से ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदों को किस प्रकार बतला सकता हूँ।

यदि अभ्युपगम सिद्धान्त से थोड़ी देर के लिये आपके ही कथन को मान लिया जाय तो यह तो देखना ही होगा कि यदि भिन्न २ ज्ञेय के जानने को ज्ञान में भिन्न २ अविभाग प्रतिच्छेद की आवश्यकता है तो क्या ज्ञेय के भिन्न २ अंश को भी जानने के लिये ज्ञान में भिन्न २ अविभागप्रतिच्छेद चाहिये। अंशों और अंशी पदार्थ में तादात्म्य सम्बन्ध है। न अंश ही अंशी से भिन्न है और न अंशी ही उनसे भिन्न। जब भी जिस को जाना जाता है उसके अंशों के सहित ही जाना जाता है। जब अंशों से भिन्न अंशी कोई चीज ही नहीं तब उनसे भिन्न अंशी का ज्ञान भी किस प्रकार माना जा सकता है अंशों से युक्त अंशी के प्रतिभास में ही कोई ज्ञाता उसके जानते हुए भी उसको थोड़े अंश सहित जानता है और कोई अधिक। किन्तु ये सब एक अंशी के ज्ञान हैं। इसही प्रकार दूसरे केवल ज्ञानी के ज्ञान को केवली जानता है किन्तु यह उसके एकही केवल ज्ञान को जानता है। उसके इस ज्ञान को अनन्त ज्ञेयों का ज्ञान नहीं माना जा सकता जिससे इस ही के आधार से जानने वाले केवली के ज्ञान में अविभाग प्रतिच्छेदों की न्यूनाधिकता के वर्णन को स्थान मिल सके।

अनन्तप्रदेशी आकाश और स्कन्ध आदि के सम्बन्ध में प्रश्न उठा कर स्वयं दरबारीलाल जी भी एक स्थान पर ऐसा ही स्वीकार कर चुके हैं ‡ जिसने एक स्थान में स्वयं जिस बात को स्वीकार किया है अवसर पड़ने पर वही उसका प्रतिवाद करे इससे बढ़ कर और क्या हास्य की बात है। उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि एक केवली के द्वारा दूसरे केवली के ज्ञान को जानने के सम्बन्ध में पं० दरबारीलाल जी की पहिली आपत्ति मिथ्या है।

ज्ञान साकार है और दर्पण भी साकार है किन्तु दर्पण और ज्ञान की साकारतामें जमीन और आसमान का सा अन्तर है। दर्पण यदि जड़ है तो ज्ञान

‡ प्रश्न - तब तो हमें यह ज्ञान कभी न होगा कि काल अनन्त है, क्षेत्र अनन्त है और न अनन्त परमाणुओं के स्कंध को हम जान सकेंगे।

उत्तर — काल की अनन्तता को हम जान सकते हैं क्योंकि काल की अनन्तता एक ही पदार्थ है। अनन्तत्व एक धर्म है और अनन्त-धर्मयुक्त काल को जानना एक पदार्थ को जानना है। इसी प्रकार क्षेत्र की अनन्तता को जानना भी एक पदार्थ को जानना है। स्कन्धों में आप अनन्त परमाणु मानते हैं परन्तु मैं असंख्य मानता हूं (इसका कारण आगे किसी अध्याय में बतलाया जायेगा) और अनन्त हों या असंख्य, यहां उससे कुछ बाधा नहीं है, क्योंकि अनन्त या असंख्य परमाणुओं का स्कंध एक ही है, और हम एक स्कंध को जानते हैं, उसके प्रत्येक परमाणु को अलग अलग नहीं जानते। यह स्कंध अनन्त प्रदेशी है इस प्रकार के ज्ञान में स्कंध का अनन्त प्रदेशीपन जाना। एक अंश जाना गया है। जैनजगत वर्ष ८ अं. २३

चेतन है। दर्पण की साकारतामें पदार्थ का प्रतिबिम्ब पड़ताहै या उसके (पदार्थ के) निमित्त से उसका (दर्पण का) पदार्थाकार परिणमन है। ज्ञान में इन दोनों ही बातों का अभाव है ज्ञान की साकारता से तात्पर्य तो उसकी सविषयता से है। साकार शब्द का सीधा और सरल अर्थ आकार सहित है। प्रस्तुत "आकार" शब्द का अर्थ "अर्थ विकल्प" है अर्थ का तात्पर्य "स्व और पर से" है। "स्व" शब्द से ज्ञाता ज्ञानको समझना चाहिये तथा "पर" से ज्ञेय पदार्थ को। इसही प्रकार "विकल्प" का अर्थ सोपयोगता है। * इससे प्रगट है कि ज्ञान की साकारता और दर्पण की साकारता भिन्न २ है अतः ज्ञान की साकारता के निर्णय के सम्बन्ध में दर्पण की साकारता को उदाहरण के रूप में उपस्थित नहीं किया जा सकता

दूसरे पं० दरबारीलालजीकी प्रस्तुत आपत्ति तो दर्पण के सम्बन्ध में भी समुचित नहीं है। आपका लिखना कि "जब अनेक पदार्थ आते जाते हैं तब उन की विशेषतायें उसमें प्रतिबिम्बित नहीं होतीं" एक तर्क एवं अनुभव शून्य बात है। दर्पण में एक ही समय अनेक पदार्थों के आकार झलकते हैं। किन्तु फिर भी उसमें उनकी विशेषतायें नष्ट नहीं हो जातीं। अनेक रंग की अनेक वस्तुओं को दर्पण के सामने रखकर इसकी परीक्षा की जा सकती है अनेक सभाओं के चित्र लिये जाते हैं। इनमें अनेक व्यक्तियों के आकार आते हैं तथा इनको अलग २ पहिचाना जाता है। इस प्रकार के चित्र एक ही समय तथा एक ही शीशे पर लिये जाते हैं। एक साथ अनेक पदार्थों का आकार पड़ने से यदि उनकी विशेषतायें न झलकतीं और उनकी समानता ही झलकती होती तब तो एक ही चित्र या एक ही दर्पण में एक साथ अनेक मनुष्यों के आकार नहीं दीखने चाहिये थे। अतः दरबारीलाल जी के इस कथन की अनुभवशून्यता तो बिलकुल स्पष्ट ही है।

यहांपर इतना लिख देना भी अनुपयोगी न होगा कि हम आपके निम्नलिखित वाक्य से भी सहमत नहीं हैं।

"एक दर्पण के भीतर एक पहाड़ का भी प्रतिबिम्ब पड़ सकता है. परन्तु पहाड़का सामान्य आकार ही प्रतिबिम्बित होगा उसका प्रत्येक परमाणु नहीं"।

पदार्थ में समानता दूसरे की दृष्टि से है। या यों कहिये कि एक पदार्थ का वह स्वरूप जो कि दूसरे पदार्थों में भी पाया जाता है उसका सामान्य धर्म कहलाता है। यही बात पहाड़ के आकार के सम्बन्ध में है। पहाड़ का भी वही आकार उसका सामान्याकार स्वीकार किया जा सकता है जो दूसरे पहाड़ों से भी मिलता है। किसी पहाड़ का चित्र लेते समय या दर्पण में उसका प्रतिबिम्ब लेते समय उसका ऐसा आकार नहीं आया करता प्रत्युत उस का विशेषाकार ही आया करता है। यदि यह बात ऐसी न होती और वही होती जैसी दरबारीलाल जी बतला रहे हैं तब तो कभी भी पहाड़ के चित्र से उसको पहिचाना नहीं जा सकता था। ऐसी बातें प्रति दिन होती हैं। शिखर जी के चित्र से शिखर जी का बोध होता है। इसही प्रकार दूसरे पहाड़ों के चित्रों से उन को पहचाना जाता है अतः इसके सम्बन्ध में विशेष लिखने की जरूरत नहीं है।

---

* आकारोऽर्थ विकल्पः स्यादर्थः स्वपरगोचरः।
सोपयोगो विकल्पो वा ज्ञानस्यैतद्धि लक्षणम्॥ पंचाध्यायी उत्तरार्द्ध ३९१

दूसरे यदि किसी भी दर्पण में अपने से छोटे पदार्थ का ही आकार आता तो पदार्थों के छोटे बड़े दर्पणों में आने वाले आकारों में अन्तर होना चाहिये था। दरबारीलाल जी की मान्यता के अनुसार जो पदार्थ अपने बराबर के दर्पण में प्रतिबिंबित होगा उस में तो उसका आकार पूरा २ आयेगा किन्तु यदि वही पदार्थ अपने से छोटे दर्पण में प्रतिबिम्बित होगा तब उसका वैसा आकार नहीं आवेगा। ऐसी अवस्था में इन छोटे बड़े दर्पणों के प्रतिबिम्बों में अन्तर होना चाहिये। यह सब बातें अनुभव के प्रतिकूल हैं। दरबारीलाल जी को मालूम करना चाहिये कि दर्पणों के आकारों में अन्तर दर्पणों की आकार विभिन्नता से नहीं है किन्तु उनकी दूसरी विशेषताओं से ऐसा हुआ करता है। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि पूर्ण आकार के लिये उसमें छोटापन भी अनिवार्य नहीं है। छोटी सी पुतली में बड़े २ पदार्थ तक अपना प्रतिबिम्ब देते हैं तथा फिर उनका बिलकुल ठीक इन्द्रिय ज्ञान भी होता है। इन सब बातों के आधार से प्रगट है कि विवादस्थ प्रश्न के सम्बन्ध में दरबारीलाल जी की दूसरी आपत्ति भी मिथ्या है।

इंजिन के दृष्टान्त के सम्बन्ध में हमने निम्न लिखित शब्द लिखे थे "दोनों इन्जिनों में जहां खींचने की शक्ति है वहीं खिचने की भी। खींचते समय उसको खींचने की शक्ति प्रयोग में आती है और खिचते समय खिचने की ...... यदि खिचते समय भी खींचने की ही शक्ति उपयोग- में आती होती तब तो एक इन्जिन का दूसरे के द्वारा खिचना असंभव हो जाता या एक के बल को दूसरे के बल से कम मानना पड़ता। ठीक ऐसी ही बात सर्वज्ञों के ज्ञानों के सम्बन्ध में है। जब एक सर्वज्ञ दूसरे सर्वज्ञ के ज्ञान को जानता है उस समय दोनों की भिन्न २ शक्तियां उपयोग में आती हैं। पहिले की जानने की तो दूसरे की जाने जाने की। जहां कि इन में अन- न्त पदार्थों को जानने की शक्ति है वहीं केवल स्वयं के जाने जाने की। अतः जब एक सर्वज्ञ दूसरे सर्वज्ञको जानता है तब उसकी उतनी ही शक्ति प्रयो- ग में आती हैं न एक सम्पूर्ण अतः वह उसही समय अन्य पदार्थों को भी जान सकता है"।

विज्ञपाठक समझ गये होंगे कि अब दरबा- रीलाल जी जिस आपत्ति को उठा रहे हैं हम उसका पूर्व ही समाधान कर चुके हैं। आक्षेपक का यह कहना कि जब इन्जिन खिचेगा उसको वास्तविक इन्जिन नहीं कहना चाहिये बिलकुल निरर्थक है। ऐसी अवस्था में भी इन्जिन की सब बातें उस में हैं अतः उसको इन्जिन न मानने की तो कोई बात ही नहीं रह जाती। पदार्थ में अनेक धर्म हैं। किसी समय कोई गुण बहिरङ्ग कार्य कर रहा है तो किसी समय दूसरा किन्तु फिर भी सब ही समय उसको पदार्थ ही स्वीकार करना पड़ता है यही बात इन्जिन के सम्बंध में है।

समान सम्पत्ति वाले दो व्यक्ति जब दूसरों को धन देते हैं तब उनकी सम्पत्ति न्यूनाधिक हो जाती है तथा जब वे दूसरों से उतना ही धन ले लेते हैं तब उनकी वह न्यूनाधिकता जाती रहती है यदि धन दिया ही जाता होता तो फिर यह न्यूनाधिकता भी बनी ही रहती ठीक यही बात केवलज्ञानियों के

सम्बन्ध में है। यदि अनेक केवल ज्ञानी किसी खास केवलज्ञानीको जानते रहें और साथही जगत के संपूर्ण पदार्थों को भी जानते रहें किन्तु वह केवल ज्ञानी उन को न जाने तो क्या इन केवलज्ञानियों के ज्ञेयों की संख्या में न्यूनाधिकता नष्ट हो जायगी। जब कि दूसरे केवल ज्ञानी जगत के सम्पूण पदार्थों के साथ उस केवल ज्ञानी के ज्ञान को भी जान रहे हैं तथा उनके ज्ञेयों की संख्या जगत के सम्पूर्ण पदार्थ धन वह केवल ज्ञानी हो जाती है। यह केवल ज्ञानी जगत के पदार्थों को तो जानता है किन्तु अपने जानने वाले केवल ज्ञानियों को नहीं जानता तो इसके ज्ञेयों की संख्या सिर्फ जगत के पदार्थ ही रहेंगे न कि जगतके पदार्थ धन केवल ज्ञानी। इससे. प्रगट है कि हमारा लिखना सिद्धान्त और युक्ति के अनकूल है। जिस प्रकार धनवान लोग जितना दिया था उतना ही ले कर अपने धन को दूसरे धनवानों के समान बनालेता है उस ही प्रकार केवलज्ञानी भी दूसरे केवलज्ञानियों के द्वारा अपने ज्ञेयों की संख्या की कमी को नष्ट कर के समान करता है।

अतः हमारा वक्तव्य कि "दो केवल ज्ञान एक दूसरे को आपस में जान लेंगे इस लिये उनका लेन देन बराबर हो जायगा। जिस प्रकार समान सम्पत्ति वाले सौ व्यक्ति एक दूसरे को एक २ रुपया दें तो दे ले कर सब ज्यों के त्यों रहते हैं" बिलकुल युक्तिपूर्ण है। इसको हास्यास्पद बताना स्वयं हास्यास्पद बनना है।

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि विचारणीय विषय के सम्बन्ध में दरबारीलाल की तीसरी आपत्ति भी मिथ्या है।

बेकारी का शत्रु

लाभदायक—नुसखे

(ले०—वि० उत्तमचन्द जैन, पं० विशारद लखनादोन)

सुगंधित दंत मंजन—खड़िया कपड़ छान की हुई १० तो०, समुद्रफेन पिसा हुआ १० तो० कार्बोनेट ऑफ सोडा २॥ तो० उक्त सब को खरलकर ३० बूंद इत्र गुलाब का मिलाकर काम में लावें।

अर्क कपूर—देशी कपूर १ तोला रक्टीफाइड स्प्रिट एक ड्राम में डालकर शीशी में काग बंद करदें बस थोड़े ही देर में कपूर गल जायगा। हैजा व कै दस्तवगैरह के काम आता है।

शिरदर्द नाशक बाम—उत्तम वैसलीन ५ तोले, मोम १ तोला, कपूर ६ मासे पिपरमेंट १ तोला, सत अजवाइन ६ मासे लवंग का तेल ६ मासा इलायची का अर्क सन्दल १० बूंद।

विधि—वैसलीन और मोम दोनों को अलग २ गला कर बाकी सब दवाइयों को एकत्र करके सब का अर्क बनाये, बाद में सब को मिलाकर ढक्कन दार शीशियों में भर कर काम में लावे।

जो भाई बना कर बेचना चाहें वो अपने नामके लेबिल लगा कर बेच सकते हैं। विशेष पूछने के लिये पत्र लिखें।

अंधेरे घर का दीपक

(ले०—श्रीमान् पं० वीरेन्द्रकुमार जैन हिन्दी रत्न)
[दूसरे अंक से आगे]

थोड़ी देर के बाद कलियुग के दूत की तरह सीढ़ियों में खट पट करते हुये बाबू जी ऊपर आये। झट पट कमरे के अंदर जा कर एक खूंटी पर हैट लटका दिया दूसरी पर कोट और सिर पर हाथ फेरते हुये बाहर आये। व्रजलाल ने कहा बेटा मनोहर इतना रात बीते कहां गये थे मनोहर एक दम चौंक उठा और खयाल किया कि यह बेटा कहने वाला कौन आ टपका। समीप में जाकर देखा कि उसके चाचा व्रजलाल बैठे हुये हैं, मनोहर एक दम सन्न रह गया और भर्राई हुई आवाज से बोला-यहीं जरा सिनेमा तक चला गया था, आप क्या १० बजे की गाड़ी से आये हैं।

हां, जब तुम्हारे पत्र की कई दिन तक प्रतीक्षा करता रहा अन्त में कोई आशा न देख तेरी चाची ने हठ किया कि "अगर पत्र नहीं देता तो तुम्हीं जाकर उससे मिल आवो" किराये के लिये एक पैसा भी नहीं था, किसी न किसी से १५) रुपये कर्ज लेकर चल ही पड़ा।

मनोहर—भला क्या जरूरत थी जो कर्ज ले कर मुझ से मिलने के लिये आये। मैं जैसा पहिले था वैसा ही अब भी हूं मुझे कोई तकलीफ नहीं है? समय न मिलने के कारण आप को पत्र न दे सका।

व्रजलाल—तुम्हें तो समय नहीं मिलता मगर तुम्हारे कुशल क्षेम के समाचार बिना हमें चैन नहीं था, माता पिता का प्रेम है तुम्हें पाला है, पोषा है अब तू भूल गया है मगर हम नहीं भूले तू ने घर छोड़ दिया है, किन्तु हम तुझे नहीं छोड़ सकते।

मनोहर—अच्छा अब तीन बजे का वक्त हो गया है अब आप आराम करें। जो कुछ कहो कल कह सुन लेना। व्यर्थ की बातों से क्या मतलब?

व्रजलाल—बेटा मैं ने तुझे क्या कहना है तुझे खुद सोच समझ कर चलना चाहिये। तुम बच्चे नहीं हो घरकी तरफ देख कर चलो। हमारे घर की यह मर्यादा नहीं है। संसार में पग २ पर मनुष्य के लिये बाधायें आती हैं। आज तुम्हारा दो पैसे का रोजगार है। दो पैसे बचाओगे तो तुम्हारे काम आवेंगे। हमारी और तुम्हारी दोनों की ही इज्जत है आपत्ति के वक्त कोई किसी का साथी नहीं है। तुम्हें सब काम करने हैं। तुम्हारे प्यारे मित्र तुमको इस वक्त याद करते हैं किन्तु फिर उन्होंने बात भी नहीं सुननी।

मनोहर—कोई सुने न सुने हमें किसी से क्या लेना है हम तुम्हारी तरह चिथड़ों में लिपटे रहना नहीं चाहते अच्छी तरह खाना और पहनना भी क्या किसी के लिये मना है? जब तक मिलता है अच्छी तरह खावेंगे उड़ावेंगे फिर देखा जायगा? प्रेम से भरे व्रजलाल के हृदय में उस के ये अपशब्द तीर की तरह चुभ गये। उसकी ऊट पटांग

बातें उनके हृदय में घर कर गईं। क्रोध के मारे उनसे बोला नहीं जाता था। एक लम्बी सांस ली और चारपाई पर लेट गये। दो चार मिनट के बाद उन्होंने फिर कहा हमारी थोड़े बहुत दिनकी जिन्दगी है, हमें तुम से क्या लेना है। भली बातें इस वक्त तुमको बुरी लगती हैं किन्तु ध्यान रखना यह संसार परिवर्तनशील है और मनुष्य इसके चक्कर में आये बिना नहीं रहता। कोई आज दुखी है तो कल सुखी होगा। आज किसीको रुलाता है तो कल तू अवश्य रोयेगा। संसारमें मनुष्य का खान पान रहन सहन, सदैव ही समभाव से होना चाहिये। प्रत्येक कार्य परिमित हो तो अच्छा है जो चाल ढाल मर्यादा से बाहर हो जाती है उसके लिये अन्त में पश्चाताप करना पड़ता है।

मनोहर इसे वृथा बकवास समझ कर कान दबाये पड़ा था फैशन की आंधी और सिनेमा के बगूलों को ब्रजलाल के शिक्षारूप वर्षा की दो बूंदें विच्छिन्न नहीं कर सकती थीं वह आराम से सोया किन्तु ब्रजलाल की रात करवटें बदलते बीती।

× × × ×

दूसरे दिन प्रातः काल ८ बजे की ड्यूटी थी मनोहर स्नान करके थोड़ा सा खा पी कर जाने को कपड़े बदलने लगे। नौकर ने उनके सामने जूते ला रक्खे। जूतों पर पालिस न हुई देख बाबू जी का टेम्प्रेचर एकदम गर्म होगया और कहने लगे—बदमाश कहीं के; हररोज तुझे जूतोंपर पालिश करने के लिये ही कहा करूं। गधा कहीं का, बाज नहीं आता. बड़बड़ाते हुए नीचे चले गये।

रात के समय ब्रजलाल अच्छी तरह से उसको देख न सके थे अब उन्होंने मनोहर को पांव से लेकर सर तक अच्छी तरह ध्यान पूर्वक देखा था। धीरे २ कहने लगे—क्या शक्ल है ? आँखें पातालपुरी में जा बैठी हैं, सिर पर एक बलिस्त लम्बा ऊन ठहरा हुआ है, गर्दन आगे निकली हुई है, पीठ पीछे झुकी हुई है मूँछें बिलकुल सफा हैं। इतने पर फैसन की झांकी और भी शान को निराली बना रही है।

बीच ही में नौकर बोल उठा—आपने अभी क्या देखा है जरा शाम को देखना कैसी २ सूरतें एकत्रित होती हैं, कलियुग की चौकड़ी यहां ही लगती है। दूसरी दुनियां का आनंद यहां ही टपकता है।

ब्रजलाल—तुम्हारा इन में किस तरह निर्वाह होता है ?

नौकर—क्या करें, कहां जांय पेट के लिये तो कुछ ना कुछ करना ही पड़ेगा। ठोकरें खाते हैं, फिर गालियों की बौछार तो रोजाना हुआ ही करती है।

ब्रजलाल—इससे अच्छा कहीं दूसरी जगह जाकर किसी के पास रह जावो।

नौकर—दूसरी जगह ? कहीं चले जावो यहां भी इन बाबू लोगों का यही हाल है हर जगह इस फैशन की यही फटकार है। परमात्मा जाने क्या बात है, मैं ने कई जगह ऐसे २ आदमी देखे जो जब तक मामूली कुर्ता और धोती पहने रहते हैं तब तक उनका दिमाग बड़ा सीधा साधा रहता है और जहाँ जरा जूते पाँव

में आये, पेट को अकड़ा और बाल संभाले बस फिर क्या—दूसरी दुनियाँ के बाशिन्दे होगये। मिजाज कुछ का कुछ हो गया। हम तुम जैसे मामूली लोग उनकी नजरों में चींटी की तरह दिखाई देने लगे।

ब्रजलाल—बिलकुल ठीक है—सारा जमाना ही ऐसा हुआ जा रहा है किसको क्या कहें एक को देख कर दूसरा उसके पीछे हो लेता है।

अच्छा छोड़िये इन बातों को आपने रात को भी कुछ नहीं खाया: खाना भी तैयार हो गया, आप कुछ खा पी कर आराम करें। नौकर ने रसोई की तरफ जाते हुये कहा।

× × × ×

शाम के चार बजे थे—मनोहरलाल थोड़ा देर बाद घर पर आये और कपडे उतार कर एक कुर्सी पर जा बैठे इतने में इनके मित्र भी आ पहुंचे। चाय तैयार की गई। सबके सब एक टेबुल रखकर उसके चौतरफा एक कमरे में बैठ गये जिसमें ब्रजलाल भी एक चारपाई पर लेटे हुए थे। मनोहर ने नौकर को चाय लाने को कहा। इतने में एक मित्र बोल उठे—क्या अजीब आदमी हो—नहीं? डाक्टर लोगों की राय है कि खाने पीने की चीजों के गंदे हाथ लगाने से जर्म्स पैदा हो जाते हैं तुम्हारा नौकर कितना गंदा रहता है बेवकूफ को कपड़े पहनने की भी तमीज नहीं।

दूसरे ने कहा—बैठा रहने दो इसे जहां का तहां। यहां बुलाने की कोई जरूरत नहीं। हर रोज भी तो चाय पीने ऐ जब क्या यही लाकर देता था।

इस बोलचाल से ब्रजलाल की आँखें खुल गईं किन्तु लेटे रहे। देखा तीन चार आदमी बैठे हैं सबने अपनी २ नाक पर पत्थर की लालटैन लाद रक्खी हैं। लेटे २ देख रहे ही थे-मित्रों के हठ करने पर चाय लेकर गुलाब को आना पड़ा। केवल चाय ही देख कर तीसरे ने कहा—यह कोरा पानी पिलाने से ही क्या फायदा है, न सुफेद आलू हैं न माल मलीदा।

चौथे मित्रने गुलाब की ओर आंख उठाकर देखा गुलाब एक सुंदर युवती है, गुलाब के गुलाब से मुँह और भोली भाली चितवनने उसकी आँखोंको वशमें कर लिया, वह होठोंसे चायको और नेत्रोंसे गुलाबकी रूप सुधा को पीने लगा।

गुलाब इस नये आदमी को देख कर पहिले झिझकी, मनोहर को भी कुछ सन्देह हुआ—यह देखकर एक मित्र ने कहा—शर्माने की कोई बात नहीं यह भी अपने ही आदमी हैं।

दूसरे ने इनका परिचय देते हुए कहा—आप किसी सिनेमा के गेट पर कुर्सी डाले बैठे रहते हैं और हजारों मुफ्तखोरे रात दिन आपकी खुशामद करते रहते हैं। और आप (मनोहर की तरफ इशारा करते हुये) जिस वक्त स्टेशन के प्लेटफार्म पर अकड़ कर खड़े होते हैं उस वक्त हजारों मुसाफिर आपकी तरफ देखते हुये चलते हैं।

"क्यों" मनोहर ने बीच ही में बात काटते हुये पूछा—

"शकल ही" ऐसी है दूसरे ने हंस कर कहा और विदाउट टिकट आने वालों पर तो आपको देख कर पाला सा पड़ जाता है।

सब खिल खिला कर हंसने लगे ब्रजलाल ने भी करवट बदली और दूसरी तरफ मुंह कर लिया इनकी हंसी मजाक से बहुत तंग आगये किन्तु क्या कर सकते थे पड़े पड़े सोचते रहे।

आज केवल चाय में कुछ मजा नहीं आया मालूम पड़ता है कुछ पैसे जमा करने की धुन सवार हो गई है एक ने कुछ मुस्कराते हुये मनोहर से पूछा।

मनोहर ने कहा—

दिलकी खुशी की खातिर चख डाल माल धनको।
गर मर्द है तो आशिक कौड़ी न रख कफन को॥

अभी तक तो हमारा यही ध्येय रहा है सब ने सिर हिलाते हुए स्वीकार किया।

मीटिंग बरखास्त होने को थी कि बहुत सी मक्खियां मेज पर फिरती हुई देख कर दूसरों ने कहा क्या बात है आज इतनी मक्खियां क्यों जमा हो रही हैं?

तीसरे ने—पीछे मुँह करके देखा कि एक मैले से कपड़े पहने एक आदमी पलंग पर लेटा हुआ है झट मनोहर से पूछा यह कौन है?

मनोहर ने कहा—"ही इज माई अन्किल'ज सरवेन्ट" दूसरे ने कुर्सी पर से उठते हुए कहा अगर यह भला आदमी दो चार दिन यहां ठहर गया तो याद रखना सबसे पहले हैजा आप के ही घर से शुरू होगा। देखो न कितनी मक्खियां लिपटी हुई हैं।

ब्रजलाल बहुत कुछ सुन चुका था अब उस से न रहा गया नौकर भी इनकी रोजाना की आफतों से तंग आगया था वह भी मौका ढूंढ रहा था बस ब्रजलाल खाट पर से उठे और नौकर की सहायता से चारों पांवों की खूब मरम्मत की और मनोहर को बहुत कुछ भला बुरा कह कर अपने बिस्तर बांध कर स्टेशन की तरफ चल पड़े।

एक तरफ दरिद्रता दूसरी तरफ क्रोध के कारण उनका हृदय धैर्यहीन हो गया था वे पागल की भांति रास्ते भर बड़बड़ाते हुये घर पहुंचे—"पाला-पोषा, बड़ा किया, हम भूखे रहे, कष्ट उठाया, मेहनत की। किन्तु उसको कोई कष्ट न होने दिया, घर की यह अवस्था था—जेवर बेचे किन्तु उसे पढ़ाया, लड़की एक एक पैसे को रोती रहती थी किन्तु इसे महीने की महीने रकम अदा करनी पड़ती थी उसके पास पहनने को कपड़ा तक न था—इसे अच्छे २ कपड़े पहिनाए—इसी लिये कि बुढ़ापे में हमें सहारा देगा माता पिता की सेवा करेगा—घर की इज्जत बनायेगा किन्तु हुआ कुछ और ही, न घर का रहा न घाट का। हमें भी डुबाया और आप भी डूबा, क्या करूं—कुछ समझ में नहीं आता, चारों तरफ अन्धकार ही अन्धकार है प्रकाश का नाम तक नहीं—यह मेरा ही कसूर है, नहीं २ पड़ोसियों ने भी सलाह दी थी, उनका क्या बिगड़ा वे तो हंसेंगे।" इस प्रकार कई एक ऊंचे नीचे विचार उनके मस्तिक में चक्कर लगा रहे थे। उनके हृदय पर गहरी चोट लग चुकी थी जिसका सहन करना उनके काबू से बाहर था—इस विकट परिस्थिति को सुलझाने का खूब विचार किया किन्तु सफलता मिलने की लेशमात्र भी आशा न थी।

"बाबू जी, बाबूजी"—पीछे से किसी ने पुकारा मनोहर ने ठहर कर देखा—लाला बसन्तीलाल हैं, उनके पास आकर कहने लगे—ज़रा अगले महीने तक माफ कीजियेगा। दो चार रिश्तेदार आगये थे वे कल ही गये हैं। इस लिये मैं न दे सका, नहीं तो ......।

बसन्तीलाल बीच ही में बोल उठे—तुम्हारे रोज रिश्तेदार आते रहते हैं। कहां तक सब्र करें, छै छै महीने हो जाते हैं मगर आपके कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। दूकान के पैसों को खैर दो चार दिन की देर हो जाय तो कुछ नहीं मगर मकान का किराया तो महीने के महीने दे दिया करो—

मनोहरलाल "अच्छा" कहकर चलदिये। ख्याल किया कि किधर भूल से आ निकले, काम में फंसे रहने के कारण यह घर पर तो आ नहीं सकता। न हम इधर आते और न यह देखता—

स्टेशनपर पहुंचे तो देखा कि उनके मित्र प्लेटफार्म पर खड़े हैं। नीची नजरों से जा कर हाथ मिलाया एक ने झिड़क कर कहा—क्या हम अपनी बेइज्ज़ती करवाने के लिये तुम्हारे पास आया करते थे? आप ने यह सोचा होगा कि नौकरों से पिटवा कर इनका चारपाई पर डेरा लगवा दूं जिसमें रकम न देनी पड़े

मनोहर ने कहा—आज तुम कैसी उल्टी सीधी बातें कर रहे हो? इसमें मेरा क्या कसूर है मुझे भी तो अपनी बेइज्ज़ती बर्दाश्त नहीं होती आप परवा ......।

खाक में मिले तुम्हारी इज्ज़त और कुये में पड़ी तुम्हारी परवा, कुछ तुम समझे और कुछ हम। रहने दो इन चिकनी चुपड़ी बातों को। मैं नहीं तुम्हारे जाल में फंसने वाला एक ने कहा।

अच्छा अच्छा इतने गरम क्यों हो रहे हो। दो दो चार २ करके तुम्हारे पैसे भी दे दिये जायगे मनोहर ने ज़रा मुस्कराते हुये कहा।

यह कोई मकान का किराया तो नहीं है जो किस्तबंदी करके दोगे। ३०-३० रुपये की एक एक साड़ी थी। समझे न। दूसरे ने उनकी पीठ को थपथपाते हुये कहा? × × × ×

आबोहवा तब्दील करने के लिये कुछ दिन मेरा बाहर जाने का विचार है। तुम्हें यहां तकलीफ होगी इस लिये अच्छा है यदि तुम महीने भर के लिये कहीं इधर उधर चली जावो। मनोहर गुलाब से कुछ रुष्ट होकर कहने लगे।

गुलाब—इधर उधर कहां जाऊं तुम्हारी चाची के पास जाने के लिये तो मुझे आशा भी न करनी चाहिये और मेरी मां मुझे स्वप्न में भी याद नहीं करती। जाऊं तो कहां जाऊं। जहां आप जायेंगे क्या मुझे न ले चलोगे? मैं तुम्हारे साथ ही जाऊंगी, क्योंकि एक तो आपकी तबियत पहले से ही खराब है दूसरे ईश्वर जाने कल को क्या हो।

मनोहर—चूल्हे में पड़ा तुम्हारा पतिव्रत धर्म एक दफा कह चुका कि तुम्हें जाना पडेगा मां यदि तुम्हें नहीं बुलाती है तो स्वयं चले जाने से धक्के भी नहीं देगी।

गुलाब ने अधिक हठ करना अनुचित समझा और अपनी लड़की को लेकर मां के पास चली गई। इधर मनोहर हर रोज के सख्त तकाज़ों से तंग आगये। उनकी इन्द्रपुरी के सामान फीके

नजर आने लगे। कमरे की सजावट उनको नीरस प्रतीत होने लगी सिनेमा स्टार की तस्वीरें भ-ंकर दिखाई देने लगीं। उनका जीवन रूपी बसन्त पतझड़ में परिणत हो गया। आज होटल का बिल आया तो कल ड्राई फ्रूट ड्रिंक वाटर फैक्टरी का। इससे मनोहरलाल गहरे विचारों में निमग्न होने के कारण अस्वस्थ हो गये।

आर्थिक संकट के कारण रेल्वे में डिडेकशन शुरू हुई और बाबू जी भी इस चक्कर में आ फंसे। इस घटनासे उनको बहुत ही बुरा धक्का लगा। उनकी रही सही आशा पर भी पानी फिर गया। वे सोचने लगे कि अब क्या किया जाय। किससे सहा-यता माँगूं। अपने ही कर्मों के कारण चाचा को भी मुँह दिखलाने से रहा। क्या मुँह लेकर उनके पास जाऊं दूसरा इस वक्त कौन है, दूर दूर नजर दौड़ाता हूँ मगर कोई दिखाई नहीं देता। इस प्रकार मनोहर पागल की भाँति कपड़े पहन करके भी बाजार की तरफ आता था किंतु रास्ते में से ही फिर वापिस आ जाता था, यहां भी उसका दिल न लगता था। नींद हराम हो चुकी थी, सोचते २ सुबहसे शाम और शाम से सुबह हो आया करती थी।

मनोहर के कमरे में इस समय एक चारपाई थी और उसपर एक फटी सी चद्दर। बाकी सब चीजें एक २ करके फजूल खर्ची के प्रतिस्वरूप कर्जदारोंकी भेंट चढ़ा दीगई थीं। स्वास्थ्य इतना खराब हो गया था कि चारपाई पर से बड़ी मुश्किल से उठते बैठते थे। मकान मालिक ने उनकी यह हालत देखकर खैराती हस्पतालमें दाखिल करवा दिया था। हस्पताल पड़े २ एक हफ्ता व्यतीत हो गया किंतु स्वास्थ्य में कोई अंतर न आया। अन्त में मृत्यु निकट देखकर मनोहर ने एक दिन डाक्टर से हाथ जोड़ कर कहा—"डाक्टर साहब मुझे कृपा करके दो कार्ड दिलवा दीजिये और मेरी मृत्यु के बाद इन्हें डलवा देना"।

× × × ×

गुलाब को अपनी मांके यहाँ आये करीब डेढ़ महीना हो गया था। इसे न कोई पत्र मिला, न अपने पति की प्रसन्नता का समाचार। हर वक्त उदास बैठी रही करती थी। न यहां वैसा खाने पीने को मिलता था और न इधर उधर आने जाने को। लड़की की भी अच्छी दशा नहीं थी जो रोज शाम को गाड़ी में बैठी २ बागों में घूमा करती थी वही आज मैले कपड़े पहिने धूल में लेटी हुई थी। इस दशा के चक्कर को देख गुलाब की आंखों में आंसू भर आये। इतने में किसी ने एक कार्ड लाकर दिया। गुलाब फूली न समाई और आंसू पोंछकर इसे पढ़ने लगी-कार्डके अन्त मेंलिखा था-प्रिय आज मुझे तुमसे, सदाके लिये विदा हुये, तीसरा दिन है"।

गुलाब यह पढ़ कर मूर्छित हो गई।

उधर ब्रजलाल को भी उसी दिन पत्र मिला मेंजिस लिखा था—मैं दुराचारी हूँ, पापी हूँ और आप की अवज्ञा करने वाला हूं। इसका बदला मुझे मिल चुका, गुलाब अपने बाप के यहां है। आप ही उसके रक्षक हैं। यह आपके 'अंधेरे घर का दीपक' संसारी पतंगों के परोंकी हवा लगने कारण सदाके लिये इस संसार में बुझता है। आप मुझे क्षमा करें ताकि मेरी इस नीच आत्मा को दूसरे लोक में शांति मिले।

आपका—मनोहर।

पत्र पढ़ते ही ब्रजलालकी आँखों में आँसू भर आये और वे फूट फूट कर रोने लगे।

समाज सुधार और कानून

क्या कानून से समाज सुधार हो सकता है? इस प्रश्न को लेकर समाज में बहुत संघर्ष और विमर्श होता है। काशी के 'आज' में इस विषय पर एक मार्मिक अग्र लेख प्रकाशित हुआ है। पाठकों की जानकारी के लिये उसे नीचे दिया जाता है।

समाज-सुधार और कानून का क्या सम्बन्ध है? यह प्रश्न इसके पहले मन्दिर प्रवेश आंदोलन के सम्बन्ध में जनता के सम्मुख उपस्थित हुआ था और इसके बाद पुनः भिन्न भिन्न रूपों में उपस्थित हो सकता है। अतः यह प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या कानून से समाज सुधार हो सकता है? साधारण अवस्था में इस का स्पष्ट और एक मात्र उत्तर 'नहीं' है। असाधारण अवस्था की बात दूसरी है और इसके सम्बन्ध में हम आगे चल कर अपना विचार प्रकट करेंगे। साधारण अवस्था में कानून बना कर कोई सुधार करने का यत्न सफल नहीं हो सकता। इसका प्रसिद्ध उदाहरण शारदा ऐक्ट अथवा बाल-विवाह-निषेध कानून है। इसमें संदेह नहीं कि इसका उद्देश्य बहुत अच्छा है। बाल-विवाह धीरे धीरे उठता चला जा रहा है और समय पाकर अवश्य उठ जायगा। शारदा ऐक्ट बनने के पहले, और तो और, काशी के कई प्रसिद्ध पण्डितों के यहाँ १६-१८ वर्ष की लडकियों की शादियां हुई हैं और किसी ने कुछ नहीं कहा पर कानून के आन्दोलन ने ही पुराने विचारों के लोगों को जागृत किया और जो आगे बढ़ जा रहे थे वे भी संभल गये। इसका कारण यह है कि यह सुधार समय करा रहा था। समाज का मत बदला नहीं था। लोग बालविवाह को बुरा नहीं समझने लगे थे। हां प्रौढ़ विवाह से जो विरोध था वह निर्बल हो रहा था और ऊपर की श्रेणियां आगे बढ़ रही थीं। कानून ने विरोध को जागृत किया। जो प्रवाह के साथ बहते चले जा रहे थे वे भी संभल गये। फलतः शारदा ऐक्ट के बाद और उसके कारण ऊपर के वर्गों में अधिक बाल-विवाह हुए और हो रहे हैं।

हम यह मानते हैं कि यह उल्टा प्रवाह अधिक दिन न टिकेगा। समय ही इसके विरुद्ध है। कानून के कारण जो विरोध उपस्थित हो गया था वह घटते घटते बिलकुल घट जायगा और समय का चक्र अधिकतर वेग से चलने लग जायेगा। अनभिज्ञ दुराग्रहियों-को रोकने में कानून भी कुछ सहायक होगा—पर इस रूप में नहीं, उसमें संशोधन की आवश्यकता होगी। यह सब होगा पर इससे हमारे इस कथनकी पुष्टि ही होती है कि कानून से समाज-सुधार में सहायता नहीं मिलती। समय की गति से—आर्थिक राजनीतिक, सामाजिक अवस्थाओं में परिवर्तन से तथा लोक मत के बदल जाने से आप ही समाज सुधार होते हैं। इसका अच्छा उदाहरण बहु विवाह है। इसके विरुद्ध कोई कानून नहीं। पर बहुविवाह उठ गया है—बहुत ही कम रह गया है। आश्चर्य नहीं कि कुछ और दशकों के बाद समाज ही इसे 'पाप' समझने लग जाय। बाल-विवाह की भी यही गति होने वाली है और होगी। शारदा ऐक्ट ने उस

गति को मन्द कर दिया है तीव्र नहीं किया है। यह बात अनुभवसिद्ध है। इससे भी यही साबित होता है कि कानून बना कर लोगोंके मत बदलने का यत्न करना विफलता का आवाहन करना है। तो क्या समाज-सुधार में कानून को कोई स्थान ही नहीं है? अवश्य है। नरबलि, बालहत्या और पति की चिता पर स्त्रियों को जलाने की जैसी क्रूर प्रथाओं को रोकना कानून का ही काम है। इसके सिवा सुधार के मार्ग में आने वाले विघ्नों को दूर करके सुधार करने न करने की पूर्ण स्वतंत्रता समाज को देना भी कानून का ही काम है।

यह साधारण अवस्था की बात हुई। असाधारण अवस्था के सम्बन्ध में इतना ही कहना अलम् होगा कि वह असाधारण होती है, साधारण नियम उसे लागू नहीं होते। इसी को क्रान्ति भी कहते हैं क्रान्ति का अर्थ हठात् परिवर्तन है। यह बलप्रयोग से होती है। पर क्रान्ति तब होती है जब समाज वर्तमान से ऊब जाताहै और परिवर्तन की प्रकट या अप्रकट इच्छा प्रबल हो जाती है। ऐसी क्रान्तियां वर्तमान पीढ़ी के सामने रूस, इटली, जर्मनी और तुर्की में हुई हैं और हो रही हैं। भारत के विचारों में महात्मा गांधी ने भी ऐसी क्रान्ति कर दी है जिसका गहरा असर भावी इतिहास पर पड़े बिना न रहेगा। रूस की बात जाने दीजिये। मुसोलिनी, हिटलर और मुस्तफा कमाल क्रान्ति के अधिनायक हैं और इनकी आज्ञाओं से एक दिन में ऐसी ऐसी बातें हो रही हैं जैसी साधारण अवस्था में दस वर्ष के आन्दोलन से भी न हो पातीं। इन अधिनायकों का बल क्रान्ति है। उन देशों के अधिवासियोंके विचारों में भयंकर परिवर्तन हो गये हैं, वे वर्तमान अवस्था से सर्वथा असंतुष्ट हैं और उन्हें अपने अपने अधिनायकों पर पूरा विश्वास है, वे उनकी वैसी ही पूजा करने लग गये हैं जैसी असहयोग के जमानेमें प्रकाश्य रूप से भारत महात्मा गांधी की करता था। यह जो कुछ करते हैं अच्छा करते हैं और इनका आदेश मानना ही हमारा कर्तव्य है इस प्रकार की दृढ़ धारणा उन देशोंके अधिवासियों की हो गई है। यही उनका बल है और इसीसे उन के आदेशों से उन देशोंमें आमूल सामाजिक परिवर्तन हो रहे हैं। पर यह असाधारण अवस्था है साधारण अवस्था में कानून केवल दो ही काम कर सकता है। एक तो सुधार के मार्ग का विघ्न दूर करना और, दूसरे, जो परिवर्तन हो जांय उसे 'जायज' बनाना। इसके आगे बढ़ कर कानून स्वयं सुधार नहीं कर सकता।
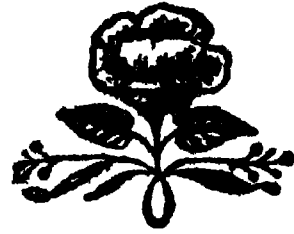
सम्पादकीय

बंबई परीक्षालय का परीक्षाफल—यद्यि बंबई प्रान्तिक दि० जैन सभा सोई हुई है जिसके कि निकट भविष्य में जाग्रत होने की कुछ आशा भी नहीं किन्तु उसके जैनमित्र तथा परीक्षालय ये दो विभाग जाग्रत हैं। सोलापुर निवासी श्रीमान सेठ रावजी सखाराम दोशी के मंत्रित्व में परीक्षालय ने प्रशंसनीय कार्य किया है दिगम्बर जैन समाज में संस्कृत भाषा एवं जैन सिद्धान्त विद्या के प्रसार में इस परीक्षालय ने बहुत कुछ उद्योग किया है।

इस वर्ष परीक्षालय ने ९ फार्म की पुस्तक में परीक्षाफल प्रकाशित किया है। इस वर्ष ३५०१ विद्यार्थियों ने परीक्षा दी जिनमें २६६८ पास हुए विद्यावृद्धि और परीक्षालय को उन्नत बनाने के लिये परीक्षालय ने, नई नियमावली बनाई है जो कि परीक्षाफल के साथ विद्यमान है। नियमावली के कुछ नवीन नियम बहुत हितकर हैं। भविष्य में परीक्षालय उपाधि परीक्षा लेकर छात्रों को न्यायालंकार आदि 'अलंकार' की उपाधि दिया करेगा।

दश धर्म

आत्मा को उन्नत बनाने के लिये जो दश धर्म बतलाये गये है उनका विशेष रूपमे धारण, पालन, मनन करने का उपयुक्त समय पवित्र दशलक्षण पर्व आगया है। पाठक महानुभावों के समक्ष उन धर्मों का संक्षिप्त रूप रक्खा जाता है—

क्षमा

अग्नि के समान आत्मा में संताप उत्पन्न करने वाला क्रोध भाव है जो कि निर्बल जीवों को जरा जरा सी बात पर प्रगट होता रहता है उस क्रोध पर विजय प्राप्त करना 'क्षमा' है। अतः क्षमा आत्मा में शान्ति उत्पन्न करने वाला एक पवित्र भाव है।

किन्तु इस क्षमा भाव का अधिकारी बलवान पुरुष है। बलवान पुरुष किसी निर्बल प्राणी के अपराध को मुआफ कर दे उस पर क्रोध न करे तब ही क्षमा भाव है और वही क्षमा धर्म आत्मा का भूषण है। निर्बलता के कारण किसी से चुपचाप मार खा लेना क्षमा नहीं है वह निन्दनीय कायरता है। अतः जैन युवक यदि क्षमा धर्म के उपासक बनना चाहते हैं तो उन्हें बलवान वीर बनने की आवश्यकता है। अखाड़ा, कुश्ती, व्यायाम, लाठी, तलवार आदि अस्त्र शस्त्र संचालन का उन्हें अभ्यास करना चाहिये वे महावीर के उपासक हैं 'जैन' (जीतने वाले के पुजारी) नाम से अपने आपको भूषित करते है तब उन्हें 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' का पाठ मनन करते हुए वीर बनना आवश्यक है। तभी वे अपनी अपने परिवार, समाज, धर्म की रक्षा करते हुए सन्मान का जीवन बिता सकते हैं।

साथ ही यह बात भी उन्हें ध्यान में रखनी चाहिये कि "जिस समय अपना, स्त्रीवर्ग का या धर्म का अपमान होता हो उस समय क्षमा पालन दूषण है उस समय तो आत्मा के अन्दर

अमर भाव का स्मरण करके दुष्ट आक्रमणकारी का पूर्ण शक्ति से सामना करना चाहिये"।

दो बातें सदा याद रखनी चाहिये १--बलवान पुरुष जीवन में एक बार सम्मान की मौत से मरता है किन्तु निर्बल अपने जीवन में कायरता के कारण अनेक बार अपमान की मौत मरता रहता है। २—अत्याचार करना पाप है किन्तु अत्याचार का सहना 'महापाप' है। अतः आधुनिक परिस्थिति के अनुसार जैन समाज को उपर्युक्त ढंग से क्षमा का पाठ पढ़ना होगा तभी वह जीवित रह सकता है।

मार्दव

अभिमान पर विजय प्राप्त करके नम्र बनना 'मार्दव' धर्म है। बल, विद्या, वैभव, अधिकार आदि बातों में संसार के भीतर परिपूर्ण कोई भी नहीं है एक से बढ़ कर एक संसार में विद्यमान है चक्रवर्ती भी अपना अभिमान स्थिर न रख सके फिर हम सर्दासे प्राणी तो किस खेत की मूली हैं। इस कारण अपने धन, विद्या, बल आदि का मद करना मूर्खता और अपने पतन का साधन जुटाना है अत स्वाभिमान को सुरक्षित रखते हुए अभिमान से अपने आत्मा को पतित न बनाना चाहिये। विशेष कर धनिक वर्ग को इसपर ध्यान देना आवश्यक है

आर्जव—धर्म

छल कपट फरेब को छोड़ कर सीधी सरल वृत्ति बनाना 'आर्जव' है। छली पुरुष वह नीचे जन्तु है जो अपने जरासे स्वार्थ के पीछे दूसरेके साथ विश्वासघात करने, धोखा देने तनक नहीं चूकता। वह अपनी बकभक्ति से अपनी रसना द्वारा विषैला मीठापन प्रगट कर जाल फैलाता है। किन्तु सच बात यह है कि उसके जाल में अन्य जन्तु फंसे या न फंसे किन्तु उसका आत्मा तो अवश्य फंस कर दुख सामग्री एकत्र करता है। सरल पुरुष अपनी प्रामाणिकता से जहां संसार का भला करता है वहां उसका निजी हित स्वयमेव सिद्ध होता रहता है। व्यापार की दृष्टि से इस बात को भली भाँति जाँचा जा सकता है मनुष्य यदि मायाचार का अधिक त्याग न कर सके तो कम से कम परमार्थ साधन (धार्मिक कार्य-व्रत पूजन, दान, तप संयम आदि) में तो उसे अवश्य त्याग देना चाहिये। मायाचारी धर्मात्मा के बराबर पतित आत्मा अन्य किसी का नहीं होता।

सत्य

जो वचन अप्रामाणिक तथा दूसरे को हानि पहुँचाने वाले होते हैं वे झूठ वचन हैं। झूठका त्याग 'सत्य धर्म' है। यह मांस से बनी हुई जीभ दो कौड़ी की मानी जाती है यदि वह झूठ बोलनेकी अभ्यासी है चाहे वह किसी धनकुबेर के मुख में ही विराजमान क्यों न हो। एवं वह रसना करोड़ों रुपये की है जो सत्यभाषण करती है चाहे उसका घर एक धनहीन व्यक्ति का मुख ही हो। अपने अभिमान में चूर रह कर दूसरे निर्बल जीव के अपमान कारक, मर्मछेदी, निन्दाजनक बात मुखमें निकालना भी 'झूठ पाप' है। सत्यवादी पुरुष संसार में प्रामाणिक माना जाकर अनेक अचिन्त्य लाभ प्राप्त करता है। अतः व्यवहार और परमार्थ साधन के लिये सत्यवादी अवश्य होना चाहिये। सत्य बोलने वालों का आत्मा बलवान और असत्य बोलने वाले का आत्मा निर्बल होता है।

शौच

गंदगी को धोकर आत्मा को पवित्र करना 'शौच धर्म है'। लोभ जाल में फंसा हुआ जीव कार्य, अकार्य करता हुआ अपने आत्मा को अपवित्र बना डालता है लोभी मनुष्य नीच से नीच निन्द्य काम को करते नहीं चूकता। जरा से आर्थिक लाभ के सन्मुख लोभी मनुष्य अपने गौरव का पदद्लन कर अपना सन्मान मिट्टी में मिला देता है। जो मनुष्य लोभ का दास है संसार का साधारण, नीच पुरुष भी उसको धन का टुकड़ा देकर अपना दास बना सकता है। जिन पुरुषों के मन पर धन का लालची भूत अपना प्रभाव नहीं जमा पाता सारा संसार उस महान पुरुष के चरणों में लोटता फिरता है। अतः उन्नत बनने के लिये लोभ कषाय पर विजय प्राप्त करना आवश्यक है।

संयम

सारा संसार इन्द्रियों का दास बना हुआ विषय वासना की खाई में गिरता चला आ रहा है वह मनुष्य वास्तव में वीर है जो इन इन्द्रियों को लगाम लगा कर अपने वश में रखता है। आज कल आत्मा के बलहीन होनेका तथा आर्थिक कष्ट आनेका मुख्य कारण यह है कि लोगों को संयम भाव की शिक्षा नहीं दी जाती। अशिक्षित लोगों की अपेक्षा शिक्षित लोग इन्द्रियों के गुलाम अधिक होते हैं। उनका ऊटपटांग खान पान, भड़कीला फैशन, वाहियात रहन सहन उनकी इन्द्रिय गुलामी का चिन्ह है इसी कारण शिक्षित समुदाय दुखी भी अधिक है। अत एव इन्द्रियों का दमन करके अपना रहन सहन, खान पान सादा शुद्ध बनाना ही सुख की सीढ़ी पर चढ़ना है।

तप

तप वह धर्म है जिससे तपाया हुआ आत्मा अग्नि में तपाये हुए सोने के समान शुद्ध निर्मल हो जाता है। तप धर्म १२ तरह का है और उसका सारांश भी बहुत स्थान मांगता है अतः हम पाठकों के समक्ष अन्य तपों का ज़िक न करते हुए स्वाध्याय तपके ऊपरही उनका चित्त आकर्षित करेंगे। स्वाध्याय (शास्त्रों का पढ़ना, पढ़ाना, सुनना आदि) मूर्ख मनुष्य को भी विद्वान बना देता है। जो मनुष्य बिना किसीको गुरु बनाये शास्त्रोंके, जैन सिद्धान्तके जानकार बनना चाहते हैं उन्हें स्वाध्याय की प्रतिज्ञा लेनी चाहिये। श्रीमती सिद्धान्तचन्द्रिका भूरीबाई जी जो जैन सिद्धान्त की गणनीय विदुषी हैं वह केवल स्वाध्याय का चमत्कार है। जो लोग नवीन वायुमंडल के कारण धर्म शिथिल दृष्टिगोचर होते हैं उस बीमारी की चिकित्सा स्वाध्याय है। इसका व्यापक प्रचार होना चाहिये।

त्याग

अपने और दूसरेके उपकार के लिये-द्रव्य का त्याग देना 'त्याग धर्म' है। बुद्धिमान धनिक वह है जो धनसंपत्तिको पूर्व जन्ममें किये गये दान उपकार आदि शुभकर्मों का फल मान कर आगामी जीवन में सम्पन्न बनने के लिये न्याय पूर्वक एकत्र किये गये इस इस धन को धर्म प्रचार तथा समाजसेवा एवं दान रक्षा में सदैव खर्च कर देता है अवसर देख कर

सर्वस्व दान कर देता है। जो मनुष्य रुपये पैसे को अपनी निजी वस्तु समझ कर उसको मजबूत तिजोड़ी में बंद कर देते हैं लोक उपकार और धर्म प्रचार में उस धन को हवा नहीं लगाते वे इस जीवन में अपयश के पात्र और पर जन्म में भीख मांगने वाले दरिद्र पुरुष होते हैं। बिहार और क्वेटा के भूकम्प को देख सुन कर भी जिस धनिक ने अपने धनका दान द्वारा सदुपयोग करना नहीं सीखा, समझना चाहिये उसका भविष्य खराब है दानी पुरुष कभी गरीब नहीं होते। इस समय संसार के अधिकांश प्राणी दरिद्रता का शिकार हो रहे हैं अथवा अधर्म का काला अंधेरा फैलता जा रहा है। अतः धनाढ्य पुरुषों को दीन रक्षा और धर्म प्रचार द्वारा अपना धन सफल करना चाहिये।

आकिंचन्य

संसार का कोई भी पदार्थ अपना नहीं है इस प्रकार का भाव 'आकिंचन' धर्म है यद्यपि इस धर्म का धारणा पालन मुनिमार्ग से होता है किन्तु गृहस्थ को भी इस का यथाशक्ति अभ्यास करना आवश्यक है। उसको आत्मिक सुधार का लक्ष्य रखते हुए संसारी ठाठ बाट से सदा सावधान रहना चाहिये। जैनसमाज को सर्वस्व त्यागी निष्काम सेवकोंकी भारी आवश्यकता है। बाल ब्रह्मचारी, परिग्रहजाल से मुक्त त्यागशील ही इस जर्जरित जैन नौका को पार लगा सकते हैं। कमाने खाने के चिंता भार से दबे हुए पुरुष क्या कुछ स्वपर कल्याण करेंगे।

ब्रह्मचर्य

आत्मा को पवित्र एवं शरीर को बलवान बनाने वाला ब्रह्मचर्य धर्म है। वीर्य शरीर का राजा है शारीरिक धातुओं में सब से उत्तम है उसकी एक एक बूँद में जीवनका एक एक अंश है। उस अमूल्य वस्तु को सुरक्षित रखना अपने शरीर, मस्तिष्क, आयु को सुरक्षित रखना है। पूर्ण ब्रह्मचारी होना उत्तम है। अखंड ब्रह्मचारी एक पवित्र जीव है। किन्तु यदि आप गृहस्थ हैं तो आपको भी अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य का अभ्यास करना चाहिये। जिस कुत्ते को आपनीच जानवर समझते हैं वह भी वर्ष में ११ मास ब्रह्मचारी रहता है। आजकल जो यौवन दशा में स्त्री पुरुषों के शरीर निर्बलता, प्रमेह, क्षय, आदि रोगों से रोगी पाये जाते हैं उसका मुख्य कारण ब्रह्मचर्य का अनादर है। उत्तम, आदर्श सन्तान उत्पन्न करने के लिये ही ऋतु समयमें पति पत्नी दोनोंकी स्वस्थ दशामें ही ब्रह्मचर्य का भंग होना चाहिये उसके सिवाय अन्य समय में पृथक पृथक शयन करते हुए ब्रह्मचर्य से रहना आवश्यक है। लड़कों का कम से कम १८ वर्ष से पहले और लड़कियों का १४ वर्ष से पहले विवाह सम्बन्ध नहीं करना चाहिये। इस आयु में भी यदि उनका शरीर बलवान न हो तो उस समयभी विवाह अनुचित है। ब्रह्मचारी मनुष्य रोगों का शिकार और असमय मृत्यु का ग्रास नहीं बन पाता उसके मन, वचन, शरीर और आत्मा में अनुपम तेज और शक्ति होती है।

सारांश

इन धर्मों का सार उपदेश आप प्रति वर्ष सुना करते हैं किन्तु उस लंबे चौड़े सुनने कहने से कुछ भी प्रयोजन सिद्ध नहीं होता इसका तो यथासंभव आचरण होना ही लाभकारी है।

शोक प्रकाश

श्रीमान सेठ जमनालाल जी ठोल्या—आप जयपुर के प्रसिद्ध जौहरी श्रीमान सेठ गोपीचंद जी साहब ठोलिया के चाचा थे। दो तीन माह से आप बीमार थे। कई दिनों से हिचकी का रोग था। सेठ गोपीचंद जी साहब ने आपके इलाज, उपचार और परिचर्या में किसी तरह की कमी न रक्खी। आप अपने अत्यन्त आवश्यक कार्यों का भी कोई ख्याल न कर अन्त समय तक तन्मय हो कर इनकी सेवा में लगे रहे। वैद्य हकीम व डाक्टरोंसे यथायोग्य इलाज कराया गया पर कोई फल न हुआ, और अन्त में मिती श्रावण सुदी १२ बुधवार सं० १९९२ को ६८ वर्ष की अवस्था में आपकी इहलौकिक लीला समाप्त हो गई।

आप बहुत सरल स्वभावी और मिलनसार थे। हम भगवान महावीर से प्रार्थना करते हैं कि मृतात्मा को सद्गति लाभ हो। इस वियोगजनित दुःख में सेठ गोपीचंद जी साहब आदि उनके कुटुम्बियों के साथ हमारी हार्दिक समवेदना है।

आपके अन्त समय में जो दान की रकम निकाली गई है उसकी सूची फिर प्रकाशित होगी।

श्रीमान मुंशी मनोहरीलाल जी सोनी—आप एक कर्तव्य निष्ठ और वीर पुरुष थे। वर्षों से योगीका सा जीवन व्यतीतकर रहे थे। ऐसी वृद्धावस्थामें भी आप के उत्साह और उमंगकी लहरें उत्साहहीन नवयुवकों को कभी २ कर्तव्य की ओर प्रेरित करती थीं। आप प्रतिदिन बड़े दिवान जी के मंदिर में शास्त्र सभा में उपस्थित होते थे। स्वर्गासीन होने से पहले दिन रात को १० बजे तक मंदिर में ही थे। दूसरे दिन मिती भाद्वा बदी २ को ८ बजे आप स्नान आदि शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो कर श्री जिनेंद्रदेवके दर्शनार्थ जानेको तैयार ही थे कि एकाएक बेहोश हो गये बस उसी समय आपका आत्महंस इस देह पिंजर से उड कर परलोकके लिये प्रस्थान कर गया।

इस शोक में हम आपके सुपुत्र श्रीमान मुँशी हजारीलाल जी साहब (रि० नाजिम) और मुँशी फूलचंद जी साहब से समवेदना प्रकट करते हैं। मृतात्मा को शांति लाभ और सद्गति के लिये हमारी जिनेन्द्र देव से प्रार्थना है—अंत समय में आपकी ओर से दर्शन की सहायतार्थ २) प्राप्त हुये हैं इसके लिये धन्यवाद।

—सम्पादक

श्री दि० जैन महा पाठशाला [जयपुर] को विवाह आदि अवसरों पर इकमुश्त दान करने वाले दातारों का सूची

(१ जून सन् ३४ से ३१ मई सन् १९६५ तक)

१६६) श्रीमान् मुँशी चांदूलाल जी सूर्य्यनारायण जी सेठी वकील जयपुर

१२५) ,, सेठ गोपीचन्द्र जी साहब ठोलिया जौहरी जयपुर

१०१) ,, मा० नानूलाल जी भांवसा व केशरलाल जी गोधा ,,

१२३) ,, सेठ लक्ष्मणलाल जी साह ,,

१११) ,, सेठ केशरलाल जी भांवसा चौधरी पंसारी ,,

७६) ,, सेठ कल्लूलाल जी कस्तूरचन्द्र जी बूचरा जयपुर

५०) ,, सेठ मगनलाल जी कन्हैयालाल जी पत्रा- ल्या वाले ,,

५१) ,, मुंशी चिरञ्जीलाल जी केशरलाल जी बख्शी ,,

५१) ,, ,, गणेशलाल जी अजमेरा ,,

५०) ,, नायब सूरजमल जी गोधा ,,

३१) ,, मुँशी मालीलालजी कासलीवाल नाजिम जयपुर

२५) ,, नानूलाल जी वैद ,,

२५) ,, मुंशी उमरावमल जी सोगाणी ,,

२५) ,, गुमनाम के जमा ,,

२५) ,, मुँशी लाधूराम जी अजमेरा वकील ,,

२) ,, सेठ चांदमल जी बाकलीवाल लश्करवाले जयपुर

२१) ,, मुँशी चिरंजीलाल जी बालमुकंद जी बज जयपुर

१५) ,, ,, प्रवीणचन्द्र जी कासलीवाल ,,

१५) ,, पं० झूपालाल जी पाटणी जौहरी ,,

१५) ,, मुँशी सुजानमल जी छाबड़ा ,,

१६) ,, ,, चिमनलाल जी हरिश्चन्द्र जी तोतू- का दीवाण ,,

१५) ,, ,, जवाहरलाल जी जमनालाल जी दीवाण ,,

२६) ,, सेठ मगनलाल जी लक्ष्मीचन्द्र जी पापड़ीवाल ,,

१८) मुंशी केसरचन्द जी चिन्दायक्या ,,

३०) ,, मास्टर भूरामल जी बाकानेर वाले ,,

११) ,, डा० इन्द्रलाल कस्तूरचन्दजी हम रतवाले

१५) ,, मुंशी चिरंजीलाल जी मोठ्या वकील ,,

११) ,, मा० पांचूलाल जी काला ,,

११ ,, संघी रतनलाल जी ,,

११) ,, मुंशी चांदूलाल जी बगड़ा ,,

११) ,, ईसरलाल जी छाबड़ा कमेटी वाले ,,

११) ,, मुंशी कन्हैयालाल जी चांदवाड़ ,,

११) ,, सेठ नेमीचन्द्र जी गोधा ताणीवाला ,,

११) ,, सेठ नाथूलाल जी खिलाला हनुमान का रास्ता ,,

११) ,, ,, लक्ष्मीचन्द जी सोगाणी ,,

११) ,, ,, गेंदीलाल जी ठोलिया ,,

११) „ „ गुलाबचन्द जी साह „
१५) „ „ नेमीचन्द जी संघी „
१०) „ „ दिलसुख जी पिरोईदार वाले „
१०) „ मुँशी कन्हैयालाल जी छाबड़ा तेरापंथी „ की औजाई के „
१३) „ „ गंगाबक्स जी बगड़ा „
११) „ सेठ उमरावमल जी जोवणलाल जी „
११) „ मुँशी गैंदीलाल जी गंगवाल „
८) „ „ फूलचन्द जी कलकत्ता वाले „
८) „ „ अमनालाल जी वकील हिण्डी वाले „
७) „ „ मोतीलाल जी सोगाणी „
७) „ हीरालाल जी केशरलाल जी बगड़ा „
७॥) „ „ सुगनचन्द जी बज बगवाड़ा „
८) „ सेठ छोटेलाल जी छाबड़ा „
६) „ मुंशी फूलचन्द जी वाकलीवाल „
११) „ „ चांदूलाल जी बज बगीचे वाले „
६) „ „ केसरलाल जी साह „
५) „ सेठ कुंदनमल जी भरतपुर वाले „
५) „ „ तेजमल जी पहाड्या हरमाड़ावाले „
५) „ म्होरीलाल चांदवाड़ हाथरसवाले „
५) „ मनमोहनलाल जी कासलीवाल „
५) „ दारोगा फूलचन्द जी पाटणी „
५) „ संघी गुलाबचन्द जी मालावत „
५) „ सेठ फूलचन्द जी चाँदकीका „
५) „ „ छगनलाल जी भंवरलाल जी माधोराज पुरा वाले „
५) „ मुंशी कपूरचन्द जी भाँवसा „
५) „ „ कपूरचन्द जी पांड्या „
५) „ सेठ गुलजी भूरजी गोदो का सराफ „
५) „ मुंशी गोरीलाल जी बिन्दायक्या „
५) „ „ मिलापचन्द जी दिल्ली वाले „
५) „ फूलचन्द जी खिन्दूका पाटणी „
५) „ सेठ रामजीवण जी बिरधीचन्द जी „
५) „ कुंथालाल जी सुवालाल जी घीवाले „
५) „ सेठ मुन्नालाल जी फूलचन्द जी बगड़ा „
५) „ मुंशी फूलचन्द जी कासलीवाल वाकानवीस „
४) „ „ नेमीचन्द जी गंगवाल सिरणी वाले „
४) „ „ मोतीलाल जी सोगाणी „
२) „ „ गुलाबचन्द जी मुशरफ रथखाना वाले „
३) „ „ गुलाबचन्द जी पाटणी मुशरफ „
४) „ „ शंकरलाल जी जैन अग्रवाल „
२) „ „ फूलचन्द जी गंगवाल „
२) „ सेठ बिजेलाल जी कसेरा „
२) „ मुंशी गैंदीलाल जी वाकलीवाल „
२) „ „ लखमीचन्द जी गंगवाल „
२) „ सेठ नानगराम जी छाबड़ा „
२) „ मुंशी केशरलाल जी कालाकोट वाली दुकान „
२) „ „ मंगल जी वाकलीवाल „
४) „ भूरामल जी वैद्य फौजदारी वाले „
२) „ दौलतचन्द जी बज „
२) „ मुंशी गैंदीलाल जी छाबड़ा „
२) „ „ मोतीलाल जी गोधा „
२) „ „ सूरजमल जी बागा हाला „
२) „ „ सेठ ईसरलाल जी पांड्या „
२) „ श्रीमती उमरावबाई सुपुत्री गोपीचन्दजी सोगाणी „

देश समाचार

—बंगाल में बाढ़— पद्मा नदी में बाढ़ आजाने से बहारगांव, तेलिरबाग के एक हजार मकान बह गये। १६३० पशु डूब गये तथा हजारों आदमी बेघर-बार होगये हैं।

—श्रीमती कमला नेहरू का स्वास्थ्य बराबर गिरता चला आ रहा है।

—१७ अगस्तको २ करोड़ २० लाख ४० हजार १ सौ तेरह का सोना भारत से बाहर गया।

बर्माके छात्रों ने विदेशी कपड़े और जूते सिगरेट का त्याग कर दिया है।

—नाबालिक लड़की पर बलात व्यभिचार करने के कारण हैदराबाद (दक्षिन) के एक मुसलमान वकील को २ वर्ष का कड़ा दंड मिला है।

—बंगालके नजरबन्दों पर सन् १६३४–३५ में २१४६४२७ रुपये खर्च हुए हैं।

मुंगेर में एक ग्रेजुएट पुलिस कान्स्टेबल बना है।

– कपीवार (गोरखपुर) में एक चमारके घर आम की गुठलियोंकी रोटी बनाकर घरवालोंने खाई जिससे एकके सिवाय बाकी सब मरगए। शायद गुठलियों पर कोई सांप विष डाल गया होगा।

—सामा प्रान्त, विहार बंगाल में अधिक वर्षाके कारण नदियों में भारी बाढ़ आई है जिससे हजारों घर नष्ट होगये हैं।

—सम्भवतः शांतिके श्रेष्ठ प्रचारक होनेके पुरस्कार रूप इस वर्ष महात्मा गांधी को नोबल प्राइस मिले।

– गोटू बंदर (कराची) में एक साधुने आश्रम खोला है। आश्रम के झोपड़ों में बिजली तथा रेडियो लगाया गया है।

—पूर्व जन्म की याद– बहराइचमें एक ४ वर्ष की छोटी लड़की अपने पूर्वजन्मकी बातें बतलाती है। यह लड़की लखनऊ विश्व विद्यालय के एक प्रोफेसर की पुत्री है। उसको अपने पहिले जन्मके बहुतसे सम्बन्धियोंके नाम भी याद हैं। उसका कहना है कि उस जन्ममें उसका विवाह बनारसके एक ब्राह्मण के साथ हुआ था। उसके तीन पुत्र थे जिनके नाम मोतीलाल, पुतालाल तथा बिल्लूर थे। उसे बनारसकी सड़कें भी याद हैं।

– बरमाके घाटोम जिलेमें डाकुओं ने मुर्दाका स्वांग बनाकर एक मन्दिर के पुजारी को लूट लिया। मामला यों बताया जाता है कि छै डाकू उस पुजारी के पास आये और कहा कि "हम एक मुर्दा लाये हैं आप उसकी आखिरी रस्म अदा कर दीजिएगा"। पुजारीने कहा कि मैं अकेला हूँ मन्दिरको सूना नहीं छोड़ सकता। इस पर डाकू अपने दो साथियों को वहाँ छोड़कर पुजारी को साथ लेगये। श्मशान में पहुँचते ही मुर्दा कफन फाड़कर खड़ा होगया। इसके साथी भाग गये। पुजारी ने लौटकर देखा कि मन्दिर का कुल कीमती सामान नदारद है।

दंगा—सिकंदराबाद (निजाम स्टेट में जन्माष्टमी के दिन हिन्दू मुस्लिम तनातनी के कारण दंगा हो गया। जिसमें १७ ईसाई, ६३ हिन्दू २८ मुसलमान घायल हुए १ मुसलमान मर गया। वहां पर अब शान्ति है।

बंगाल में क्रान्तिकारी घटनाओं को निर्मूल करने के लिये सरकार ने बंगाली नजर बंदों को खेती बाड़ी सिखाने का निश्चय किया है।

विदेश-समाचार

REGD. L. NO. 3459

—एबीसीनियामें इटली के आक्रमण स्वरूप युद्ध होने की संभावना है तदनुसार वहां की भारतीय प्रजा की रक्षा के लिये ब्रिटिश राजदूत ने भारतीयों को आज्ञा दी है कि वह अपने ३ मास के खाने पीने का सामान लेकर राजदूत महल में आ जावें।

—फ्रांकफर्ट (जर्मनी) युनिवर्सिटी के भाषा अध्यापक डा० हेरल्ड श्यूरस २०० भाषायें जानते हैं। ६० भाषाओं में अच्छी तरह बात चीत कर सकते हैं।

इंगलैंड में नग्नवाद (नंगे रहने) के प्रचार करने वाले १२० क्लब हैं इन क्लबोंमें आने वाले पादरी डाक्टर आदि अनेक उच्च शिक्षित व्यक्ति हैं।

—एबीसीनिया की भारतीय प्रजा की रक्षा के लिये बंबई से पंजाब रजमेंट की एक पल्टन भेजी गई है।

—लंदन में विक्टोरिया स्टेशन पर एक मशीन लगी हुई है जो भिन्न २ स्टेशनों पर रेलगाड़ी के पहुंचने का समय बतलाती है।

—बरूलेम (अमेरिका) में एक लड़का ऐसा है जिसके बांये भागका आधा शरीर गोरा और दाहिनी तरफ़ओर का आधा शरीर काला है।

—टर्की में सैकड़ों वर्ष से गुरुवार (जुम्मा) को सरकारी छुट्टियां हुआ करती थीं किन्तु अब रवि वार के दिन छुट्टी हुआ करेगी।

—शिकागो (अमेरिका) की मिस मैग्विर नाम [illegible] ३० वर्ष की युवती १७ मास तक बराबर सोती रही।

—न्यूयार्क (अमेरिका) हार्स्ट न्यूज फोटो सर्विस ने टेलीफोन द्वारा फोटो लेने का [illegible] शुरू किया है।

—अमेरिका में टाकी सिनेमा की इतनी छोटी मशीन भी बन गई है जो सूटकेस में रक्खी जा कर आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा सकती है।

—अफ़गानिस्तान में सय्यद महम्मद नामका एक व्यक्ति है जो दो वर्ष की उम्र में बूढ़ा हो गया है।

—अफगानिस्तान के भूतपूर्व शाह अमानुल्लाखां इस समय इटली में मुसोलिनी के प्रधान सलाहकार बने हुये हैं उन्होंने इटली सेनाको छापे मारकर लड़ने का ढंग सिखलाया है।

—सितम्बर मास में एबीसीनिया में युद्ध छिड़ जाने की आशंका से यूरोपियन एबीसीनिया छोड़कर भाग रहे हैं।

पटियाला में एक मुसलमान ने अपनी बहिनके साथ व्यभिचार करके उसको गर्भवती बना दिया।

अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक ५-६

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।
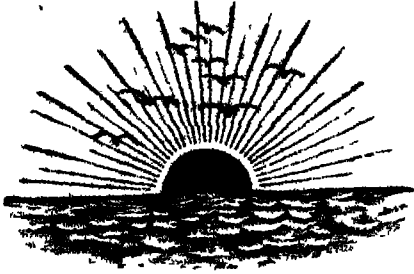
पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≡)
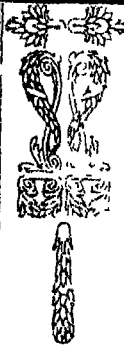
आसोज सुदी ४ मंगलवार

१ अक्टूबर-१९३५ ई०

बधाई

श्रीमान दानवीर, तीर्थभक्तशिरोमणि, राज्यभूषण रावराजा रायबहादुर सरसेठ हुकमचन्दजी नाइट इन्दौर इस समय जैनसमाज के सौभाग्यशाली आदर्श नेता हैं आप प्रमुख धनकुबेर हैं। इस समृद्ध दशा में जो आप आदर्श सच्चरित्र, समाज हितैषी हैं यह बात धनिक पुरुषों को अनुकरणीय है। जहां आपका रहन सहन, ठाट बाट राजघरानों सा है वहीं आप उपयुक्त क्षेत्र में आवश्यकतानुसार दान देकर चंचला लक्ष्मी को अचला भी बना रहे हैं अभी तक आप प्रायः ४५ लाख रुपया दान कर चुके हैं। आपके इन ही अनुपम गुणों ने जहां आपको जैनसमाज में सर्वोच्च नेता बनाया है वहीं इन्दौर राज्य ने भी आदर्श पदवियों से सम्मानित किया है। अभी ६ सितम्बर को हिज हाईनेस महाराजाधिराज श्रीमन्त यशवन्तराव होलकर (वर्तमान इन्दौर नरेश) ने अपनी जन्मगांठ के दिन सेठ जी को 'राज्यरत्न' पदवी प्रदान की है। इसके लिये आपको बधाई है आप इससे भी अधिक सम्मान प्राप्त करें।

धन्यवाद—श्रीमान सेठ तोलाराम जी लाडनूं ने जैनदर्शन की सहायतार्थ २५) रुपये प्रदान किये हैं। एतदर्थ आपको धन्यवाद है। आप जैन समाज में प्रसिद्ध दानी हैं।

जैन समाचार

मेरा प्रतिवाद—खंडेलवाल जैन हितेच्छु अंक २० भादवा सुदी २ में जो मेरा मुनि निदंक, धर्म निदंक के प्रति हित कामना शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ है उसमें दुर्मुनि चरित्र नामक पर्चा के विषय में जो दिगम्बर जैनियोंके प्रति इशारा करके जो कुछ लिखा है वह सब भूल और ना समझी से लिखा है। वास्तव में वह पर्चा किसी भी दिगंबर जैन भाई द्वारा निकाला हुआ नहीं है। अब एवं मैंने यह प्रतिवाद इस लिये प्रकाशित कराया है कि मेरे लिखने से समाज में व्यर्थ का भ्रम पैदा न हो जाय।

रामप्रसाद शास्त्री

महावीर मिडिल स्कूल लाडनूं

लाभ लिया—श्री दि० जैन महावीर पुस्तकालय उदयपुर से ६ मास में २४०० व्यक्तियों ने लाभ उठाया।

मंत्री—मोतीलाल जैन

—विद्वान लेखकों से निवेदन है कि जैन धर्मकी समस्त बातों को सरल संक्षिप्त रूप में बतलाने वाली पुस्तक जो कि १० फार्म से कम की न हो लिखने की कृपा करें और १५ दिसम्बर तक हमारे पास भेज दें। जैनमित्र मंडल की ओर से उत्तम लेखक को को ३१) रुपये पारितोषक दिया जावेगा।

मंत्री—जैनमित्रमंडल धर्मपुरा देहली

—जैन युवक मंडल धामपुर के उद्योग से धामपुर में इस वर्ष दशलक्षण पर्व बड़े आनन्द से व्यतीत हुआ ट्रैक्ट आदि वितीर्ण करके जैनधर्म का प्रचार किया। मंडलके कुछ सदस्य सिवहारा, नजीबाबाद नहटौर प्रचारार्थ गये। नहटौर में जल यात्रा उत्सव में एक खराब प्रथा पाई उसको उद्योग करके आगामी के लिये बन्द कराया।

भाषण—आश्विन बदी ६ को नवादामें महासभा के उपदेशक श्रीमान पं० महेन्द्रसिंह जी का अजैन शास्त्रों के प्रमाणों से पूर्ण 'अहिंसा' विषय पर प्रभाव शाली भाषण हुआ।

कस्तूरचन्द्र बड़जात्या-नवादा

अमूल्य भेंट—श्रीमान राय साहिब ला० नेमीदास जी शिमला सभापति—दि० जैन शास्त्रार्थ संघ ने बढ़िया आर्ट पेपर पर दुरंगी श्याही में णमोकार मंत्र और उसका माहात्म्य सुन्दर टाईप में छपाया है। जिन जैनमंदिरों और धर्मात्मा भाइयों को आवश्यकता हो वे बिना मूल्य मंगा लें।

जैनमित्र मंडल देहली

आवश्यकता—फीरोजपुर छावनी के लिये एक ऐसे कम से कम ३० वर्षीय विद्वान की आवश्यकता है जो पूजन सिखला सके स्वाध्याय करा सके तथा वक्ता हो। वेतन ३०) मासिक तक दिया जावेगा। पत्रव्यवहार "अकलंक प्रेस मुल्तान सिटी" से करें।

सेवा आश्रम—श्रीमान बा० जुगलकिशोर जी मुख्तार ने अपने द्रव्य से सरसावा में विशाल भवन बनवाया है जिसमें धार्मिक, लौकिक शिक्षा देनेकेलिये "सेवा आश्रम" का उद्घाटन होगा।

—लखनादौन-में इस वर्ष दशलक्षणपर्व शान्ति और अनेक उत्सवों के साथ समाप्त हुआ। बाहरसे श्रीमान पं० बालकृष्ण जी पधारे थे।

उपमंत्री— नवयुवक मंडल

पिकेटिंग—जबलपुर में पशुहत्या रोकने के लिये काली मंदिर के सामने जैन युवकों ने पिकेटिंग करने का निश्चय किया है।

मिर्जापुर—दशलक्षण पर्व में यहां स्या० वि० बनारससे पं० राजकुमार जी शास्त्री, पं० अमृतलाल पधारे थे। तरणतारण समैया समाज ने उक्त वि० से श्री० पं० सुरेशचन्द्र जी को बुलाया था। उक्त विद्वानों से अच्छा आनंद रहा।
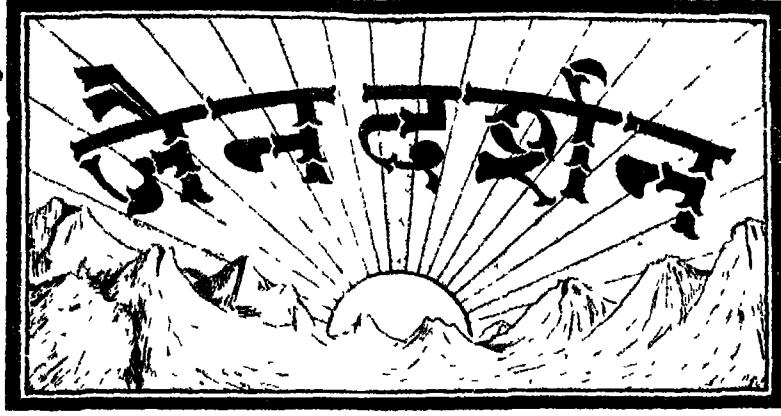
अकलङ्कदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितांशुरश्मिमंडलीभवदशिखिलदर्शनपक्षदोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री आसोज सुदी ४—मंगलवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क ५-६

वीर-विनय

श्रीमान पं० चांदमल जी जैन 'शशि' बी० ए०, विशारद

स्वामी वीर ! कृपा आगार ।
करो यह नम्र-विनय स्वीकार ॥ टेक ॥

सन्तति तेरी बैर-फूट तज करे परस्पर प्रेम ।
हृदय कालिमा अपसारित हो, रहे सदा शुभ क्षेम ॥
होय जिससे वात्सल्य-प्रसार । करो० ॥१॥

करे दलन दलबन्दी का, तज मत्सर मानामर्ष ।
बांध सु संहति गुणमें निज को करे जाति उत्कर्ष ।
शीघ्र जिससे हो जाति-सुधार । करो० ॥२॥

कर तव कृति-रवि दर्शन-दुस्तर दूर तिमिर अज्ञान ।
पक्षपात तज रोग नशे कर नय-वचनामृत-पान ॥
परस्पर हो सच्चा व्यवहार । करो० ॥३॥

सत्सिद्धान्त प्रचार-अर्थ सब दूर करे व्यवधान ।
धर्म मर्म अवगत कर हृत् से करे आत्म-उत्थान ॥
धर्म का हो सर्वत्र प्रचार । करो० ॥४॥

जाग्रत जीवन-ज्योति रहे नित, दूर भगे भय-भ्रान्ति ।
धर्माभ्युदय-जात्युन्नति हित सतत रहे शिव क्रान्ति ।
शीघ्र हो नव जीवन-सञ्चार । करो० ॥५॥

ब्रह्मचर्याणुव्रत और उसके अतिचार

(गतांक से आगे)

मैंने अपने लेख में एक प्रश्न किया था कि इत्वरिकागमन को ही क्यों अतिचार गिनाया, यदि उसके स्थान में 'परस्त्री गमन' शब्द रखा जाता तो क्या हानि थी? आगे मैंने स्वयं ही उसका समाधान भी किया था—पाठक उसे पढ़ लें।

उसपर कोठारी जी लिखते हैं—"स्वदारसंतोष व्रत में परस्त्रियों का त्याग किया जाता है। परन्तु परस्त्री में इत्वरिका का सर्वथा अन्तर्भाव न होने से और इत्वरिका में कुछ काल तक स्वत्व का स्थापन किया जाना सम्भव होने से और ऐसा स्वदारसंतोष अर्थात् जिसमें प्रकटस्त्री का नियम पूर्वक त्याग नहीं पाक्षिक का भी व्रत हो सकने से अतिचारों में इत्व-रिका-गमन इस शब्द का ही प्रयोग करना इष्ट है"।

यदि स्वदार सन्तोष में केवल उन परस्त्रियों का त्याग किया जाता है जिन में इत्वरिका यानी वेश्या और अन्य दुराचारिणी औरतों का अन्तर्भाव नहीं होता तो कोठारी जी बतलावें कि परदारनिवृत्ति व्रत में किन का त्याग किया जाता है? पं० सोमदेव जी ने अपने यशस्तिलक चम्पू में परदारनिवृत्ति नामक ब्रह्माणुव्रत का लक्षण लिखा है और आशाधर जी ने सागार धर्मामृत के चतुर्थ अध्याय में स्वदारसंतोष नामक ब्रह्माणुव्रत का लक्षण लिखा है।

एक व्रतके दो भेद करके भी क्या उनके समर्थकों का पेट नहीं भरा? जो 'ऐसा स्वदारसन्तोष' आदि लिखकर स्वदार सन्तोष के भी भेद प्रभेद करने का बीजारोपण किया जा रहा है।

आगे आप लिखते हैं—'यदि परस्त्रीगमन' यह पद अतिचारों में रखना आपको अभीष्ट है। इत्यादि। मुझे तो 'इत्वरिकागमन' शब्द रखना ही अभीष्ट है और मैंने अपने लेखमें इसकी पुष्टि की है—कृपया मेरे लेख को ध्यान से पढ़ें।

सोमदेव जी के जिस 'परस्त्रीसंगम' शब्द को आप साक्षात व्रतभंग का प्रसाधक स्वीकार कर चुके हैं उसे पारिशेष्य न्याय की दुहाई देकर उचित बत लाने की कोशिश तो आपने कई बार की किन्तु अपने उस पारिशेष्यका कुछ खुलासा न किया। मैंने लिखा था—"परस्त्रीगमन" यानी समस्त परस्त्रियों के यहां आने जाने से स्वदारसन्तोषव्रत के भंग होने की संभावना नहीं है क्योंकि उन परस्त्रियों में माता बहिन पुत्री तथा अन्य पतिव्रता स्त्रियां भी सम्मिलित हैं जिनसे सम्बन्ध रखना नैतिक तथा धार्मिक दृष्टि से हानि कारक नहीं है किन्तु इत्वरिकामात्र यानी समस्त दुराचारिणी स्त्रियों से सम्बन्ध रखना उनके यहां आना जाना—परिणाम में भयावह है"। इसपर कोठारी जी लिखते हैं—"इस आपके वक्तव्य से स्पष्ट है कि इत्वरिका को परस्त्री में अन्तर्भाव होना आप भी नहीं मानते क्योंकि परस्त्री का अर्थ आपने माता, बहिन, पुत्री और अन्य पतिव्रता स्त्रियां किया है। यदि परस्त्री में इत्वरिका का भी अन्तर्भाव किया तो उस के यहां आना जाना भी आपके मतानुसार नैतिक और धार्मिक दृष्टि से हानिकारक नहीं होगा"। इसमें

स्पष्ट लेख का विपरीत अर्थ समझ बैठने के लिये कोठारी जी को क्या कहूँ? यदि वे थोड़ा सा भी उपयोग उधर लगाते तो इतनी जबरदस्त भूल न करते। 'समस्त परस्त्रियों में माता बहिन वगैरह भी सम्मिलित हैं' इसका अर्थ यह कैसे होगया कि पर स्त्री शब्द का अर्थ माता बहिन है यदि कोई कहे कि, 'भारत के ५६ लाख साधुओं में जैन साधु भी सम्मिलित हैं'। तो क्या कोठारी जी इसका यह अर्थ लगावेंगे कि 'समस्त ५६ लाख साधु जैन साधु हैं'? हम तो अपनी विवाहिता पत्नी के अलावा समस्त स्त्रियों को परस्त्री ही समझते हैं। वेश्या और अन्य अस्वामिका स्त्रियों को समय पर 'स्वदार' बनानेकी इच्छा रखने वाले ब्रह्माणुव्रती ? ही कोठारी जी के अर्थ का समर्थन कर सकते हैं। कोठारी जी की दूसरी भूल तो पहली भूल से भी लम्बी चौड़ी है। सुनिये----परस्त्रियों में माता बहिन भी सम्मिलित हैं और इत्वरिका भी सम्मिलित है अतः यदि माता बहिन के यहां जाना उचित है तो इत्वरिका के भी यहां जाना उचित है कैसा गजब का तर्क है? मनुष्यों में सज्जन भी सम्मिलित हैं और दुर्जन भी। अतः यदि सज्जनों की संगति करना उचित है तो दुर्जनों की भी करना उचित ही है? असलमें बात यह है कि इत्वरिकाओं को 'परस्त्री' कहना हमारे मित्र कोठारी जी को सह्य नहीं है। उन्हें तो कोठारी जी ने स्वदार सन्तोष वालों के लिये 'स्वदारों' का 'रिजर्वबैंक' बना दिया है 'शेयरहोल्डरों' की 'पोबारह' है।

कोठारी जी लिखते है "परस्त्री और इत्वरिका के सम्बन्ध में आपका जो वक्तव्य है मैं उससे सहमत नहीं हूं क्योंकि मेरा वक्तव्य है कि जहां कहीं मनोमालिन्य का हेतु मिलता हो—अर्थात् जहां कहींपर भी राग भाव पैदा होते हैं वहां पर आना जाना ही अतिचार है"। कोठारी जी के इस वक्तव्य से मैं पूर्ण सहमत हूँ। माता बहिन के साथ उठने बैठने से राग भाव की उत्पत्ति की संभावना नहीं के बराबर है और इत्वरिका के साथ उठने बैठने से राग भाव उत्पन्न होने की संभावना नहीं के बराबर है अतः दूरदर्शी आचार्यों ने व्रती के लिये इत्वरिकागमन का निषेध किया।

सत्यप्रिय कोठारी जी जहाँ कहीं पर भी राग-भाव पैदा होता हो वहां पर आना जाना ही अतिचार मानते हैं। किन्तु यदि कोई मनचला व्रती इस अतिचार से भी आगे बढ़ जाय और रागभाव पैदा करने वाली इत्वरिका को भोग कर स्वदार संतोषव्रत रूपी प्रासाद के ऊपर कलशारोहण करदे, तबभी क्या आप उसके कृत्य को अतिचार ही कहे जांयगे? दुहाई वीतराग चर्चा की अन्यथा न कहना।

'गमन' शब्द का अर्थ

गमन शब्द का अर्थ 'आसेवन' ही है इस बातको पुष्ट करने के लिये कोठारी जीने ६ हेतु दिये हैं यहां संक्षेप में उनका उत्तर दिया जाता है।

१-- जब २ गमन शब्द केवल स्त्री वाचक शब्दों से समस्त होता है तब उसका अर्थ रूढ़ि से 'आसेवन' होता है जैसे=परदारगमन

उ०— यह कोई ऐकान्तिक नियम नहीं है आगे देखिये।

२- प्रसिद्धार्थ शब्दों का अर्थ सर्वदा नहीं दिया जाता।

उ०- गमन शब्द का प्रसिद्ध अर्थ जाना ही है सेवन नहीं

३- गम् धातु का 'सेवन' अर्थभी होसकता है। इसमें मुझे आपत्ति नहीं है।

४-'न तु परदारान्' में वही अर्थ अभीष्ट है किन्तु उससे सब जगह नियम नहीं बनाया जा सकता।

५-आचार्य अमितगति को 'आत्तानुपात्तेत्वरिकांगसंग' से सम्बन्ध अर्थ ही अभीष्ट है—भोग नहीं। क्योंकि उन्होंने अपने 'सुभाषित रत्न संदोह' १ में स्पष्ट लिखा है कि. वेश्यासेवी के चतुर्थ अणुव्रत नहीं हो सकता।

'अनंगसंग' शब्द 'अनंगक्रीडा' के स्थान में प्रयुक्त हुआ है अतः अनंगसंग का अंगसंग के साथ कोई खास सम्बन्ध नहीं है। 'अनुप्रास' के लिये भी एक से शब्दों का प्रयोग किया गया है।

६-इत्वरिकागमन और विटत्व का अन्तर पहिले बतलाया जा चुका है।

७-व्याकरण शास्त्र के अनुसार गम्धातु के कर्म की द्वितीया विभक्ति होती है यह ठीक है किन्तु गम धातु से कृदन्त में निष्पन्न 'गमन' शब्द के साथ जब इत्वरिका का समास किया जायेगा, क्या तब भी द्वितीया ही होगी ?

'इत्वरिकां गमनम्' प्रयोग तो बन ही नहीं सकता। अत' सप्तमी का ही प्रयोग करना उचित हुआ।

"परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीता—गमन" इत्यादि सूत्र की व्याख्या करते हुये अकलंक देव ने राजवार्तिक में एक शंका उठाकर उसका समाधान किया है। वे लिखते हैं-"दीक्षितातिबाला-तिर्यग्योन्यादीनामनुपसंग्रह इति चेन्न कामतीव्राभिनिवेशग्रहणात्सिद्धेः" । अर्थात् कोई शंका करता है कि इन अतिचारों में दीक्षिता स्त्री, अतिबाला और तिर्यञ्चिणी गधी, घोड़ी आदि का समावेश तो किया ही नहीं। उत्तर देते हुये ग्रन्थकार कहते है कि काम-तीव्राभिनिवेश नामक अतिचार में उनका अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि दीक्षिता वगैरह में काम का तीव्र उदय होने से ही प्रवृत्ति होती है। इस राजवार्तिक की शंका के ऊपर तर्क उठाते हुये कोठारी जी लिखते हैं—

८-' इस गद्यांश का क्या अर्थ है ? इनके यहाँ 'आना जाना' 'रागित्वेन दुश्चेष्टित' या इनसे 'विषय सेवन' ? यदि आना जाना मान लिया तो तिरश्ची के यहाँ आने जाने से अतिचार किस तरह से कहा जायगा ? 'रागित्वेन दुश्चेष्टित' मान लिया तो तिरश्ची के जघन स्तन दन्तादि निरीक्षण, उनके साथ संभाषण हस्त-भ्रू-कटाक्षादि से संज्ञाविधान आदि बातें कैसे संभवनीय है ? इस लिये यहाँ 'विषयसेवन' यही अर्थ योग्य है"।

१ ना वेश्यां सेव्यमानस्य [illegible] ।
[illegible]
ततोऽस्माभिः [illegible] पालिता ।
[illegible] मानसा । ९८८ ।

कोठारी जी की लेखनी से इतनी बड़ी भूल होने की संभावना हमें न थी। जिस कृत्य को अकलंकदेव 'कामतीव्राभिनिवेश' नामके अतिचार में सम्मिलित कर रहे हैं कोठारी जी उसे 'इत्वरिकागमन' में घसीट कर ले जाते हैं अन्यथा यहां 'गमन' शब्द का सम्बन्ध ही क्या था? रागित्वेन दुश्चेष्टित की संख्या तथा प्रकार नियत नहीं है—भिन्न २ स्थलोंमें उसके भिन्न २ रूप देखे जाते हैं। तिर्यञ्चिणी की योनि देखकर क्या कामोद्रेक नहीं हो सकता? चेतन की बात जाने दीजिये, कामी जनों को अचेतन तस्वीरें तक कामान्ध बना डालती हैं। अतः कामोन्मत्त मनुष्य ही अनुपसेव्य दीक्षिता आदिको देखकर अन्धा हो जाता है अतः काम की तीव्रता भी स्वदारसंतोष व्रत का अतिचार है। यह आचार्य का अभिप्राय है। कोठारी जी स्वदारसन्तोषी श्रावक से दीक्षिता स्त्री और चार २ पांच २ वर्ष की अबोध कन्यायें तथा गधी घोड़ी तक के साथ व्यभिचार कराकर भी उसे 'व्रती' का पद प्रदान करते है जैसे इत्वरिकाओं को कोठारी जी परस्त्री नहीं मानते, उसी तरह दीक्षिताओं तथा गधी घोड़ी आदि पशुस्त्रियों को भी 'परस्त्री' की सीमा से बाहिर समझा जाता है। और बात भी सच है—कारण, दीक्षिता तो अस्वामिका होती ही है क्योंकि दीक्षा लेने के बाद उस पर किसीका हक नहीं रहता, और गधी घोड़ी तो स्वच्छन्दचारिणी होती ही है उनके साथ आज तक किसी भी पुरुष ने विवाह नहीं किया। अतः स्वदार सन्तोष व्रत के धारी को इत्वरिका, दीक्षिता, बाला, गधी, घोड़ी आदि सबके साथ विषय सेवन करने से अनाचार का दूषण नहीं लगता—केवल अतिचार होता है। व्रतियों के नैतिक पतन की चरम सीमा हो गई। ऐसे कामुक व्रती से परदारलम्पट लाख दर्जे बेहतर है।

६—'समासान्तर्वर्ती गमन शब्द का पूर्वपद के अनुसार अर्थ होता है। इस बात को मैं भी स्वीकार करता हूँ। किन्तु स्त्री वाची शब्द के साथ यदि गमन शब्द समस्यन्त हो तो उसका अर्थ सेवन ही होता है यह बात मानने के लिये मैं तैयार नहीं हूँ। यदि ऐसा एकान्त स्वीकार किया जावेगा तो 'सीतागमन' 'शकुन्तलागमने' आदि शब्दों का सब जगह सहवास अर्थ ही करना पड़ेगा जो कोठारी जी को भी इष्ट नहीं होगा।

एक स्थान पर 'इत्वरिका गमन' नामक अतिचार को स्त्रियों में घटाते हुये कोठारी जी ने 'गमन' शब्द का अर्थ आना जाना ही किया है।

वे लिखते हैं—"अब रहा 'इत्वरिकागमन' यहां पर 'गमन'का अर्थ 'अभिरमन' नहीं हो सकता क्योंकि इसकी व्यावृत्ति 'परदार गमन विवर्जन' से ही हो गई है। 'इत्वरिकं आ समन्तात् ईषद्वा गमनम्' अर्थात् व्यभिचारासक्त पुरुष के यहाँ थोडा या बहुत आना जाना"। जिस सद्भाव से प्रेरित होकर कोठारी जी ने स्त्रियों के सम्बन्ध में इत्वरिकागमन का अर्थ किया है, क्या उसी सद्भाव से वे पुरुषों के सम्बन्ध में नहीं कर सकते? स्त्री जाति व्रत की आत्मा का आलिंगन करे और पुरुष जाति व्रत की आत्मा का बध करके उसके शव से चिपटी रहे, क्या कोठारी जी को यह अभीष्ट है? पण्डित गण अंग्रेजी शिक्षितों के ऊपर जो 'स्त्रीपक्षपाती' होने का दोषारोपण करते हैं वह सत्य मालूम होता है कोठारी जी में भी उसकी उत्कट गंध है। अन्यथा एक ही शब्द का दोनों के प्रति इतना विपरीत अर्थ न किया जाता। अर्थात् 'परदारगमनविवर्जन' व्रत से स्त्रियों

के लिये तो पर पुरुष सेवनका निषेध होता है। किन्तु उसी नामके व्रतसे पुरुषों के परस्त्रियों के सेवनकी गुंजायश बनी ही रहती है।

अतिचार किसकी दृष्टिसे गिनाये गये हैं ?

स्वामी समन्तभद्र वगैरह ने अपने श्रावकाचारों में ब्रह्माणुव्रत के दो भेद नहीं किये, अतः उनका पाक्षिक श्रावक सातिचार ब्रह्माणुव्रत का पालन करता है और नैष्ठिक निरतिचार का। किन्तु आशाधर जी ने ब्रह्माणुव्रत के दो भेद कर दिये और लिख दिया कि स्वदार सन्तोष नामक ब्रह्माणुव्रत को अभ्यस्त देशसंयमी नैष्ठिक पालता है और अभ्यासोन्मुख पाक्षिक परदारनिवृत्ति व्रत को सातिचार पालता है। आशाधर जी के इस लेख पर आपत्ति करते हुये मैंने लिखा था कि जैसे पाक्षिक श्रावक परदार-निवृत्ति व्रतको सातिचार पालता है उसी तरह नैष्ठिक स्वदार संतोष का सातिचार पालन करेगा। अन्यथा स्वदारसंतोषका सातिचार पालन कहाँ पर होगा? यह बतलाना चाहिये। पं० आशाधर जी ने तो इस प्रश्न का कोई समाधान नहीं किया किन्तु कोठारी जी ने समाधान करने का प्रयत्न किया है। वे लिखते हैं—"अभ्यासोन्मुख श्रावक और प्रथम प्रतिमा वाले अभ्यस्त देश संयम श्रावक (इस प्रतिमा में अप्रत्या-ख्यानावरण कषाय का अभाव रहता है।) इन दोनों के बीच में एक ईषदभ्यस्त देश संयम या अनभ्यस्त देश संयम पाक्षिक श्रावक होता है उसके लिये यह सातिचार व्रतका पालन विधेय होसकता है। इस श्रावक को घटमान देश संयम कहते हैं और अभ्या-सोन्मुखको प्रारब्ध देशसंयम कह सकते हैं। और तीसरे को निष्पन्न देश संयम कह सकते हैं"।

अभ्यासोन्मुख और अभ्यस्त के बीचमें एक नवीन दर्जा कायम करना कोठारी जी का अपना मत है—न कि शास्त्रीय। कोठारी जीने इस अशास्त्रीय दर्जे को स्थापित करने में ही भूल नहीं की, किन्तु उसके नामकरण संस्कार में भी भूल कर डाली है। घटमान देशसंयम प्रथम प्रतिमावालेको कहते हैं, न कि उसके पूर्ववर्ती कल्पित श्रावक को। आशाधर जीने सागार धर्मामृत की टीका १में यही बात लिखी है। इस भूल ने एक तीसरी भूल भी कर डाली है। यह भूल प्रथम प्रतिमा वालेको निष्पन्न देश संयमी कहने में कीगई है। यदि पहिली प्रतिमामें ही देशसंयम निष्पन्न -पूर्ण होजाय तो आगे की प्रतिमा तो बेकार ही हो जांय। इन भूलों के अलावा ब्रेकिट में लिखा हुआ वाक्य भी बिना सोचे समझे लिख दिया है। यह वाक्य कोठारी जी के ही अन्यत्र लिखे हुये वाक्यसे खण्डित होजाता है। कोठारी जी ने जैन बोधक के जुबिली अंक में "अतिचार और उसका कारण" शीर्षक से एक निबन्ध लिखा था उस पर मेरा एक स्वतन्त्र लेख जैनदर्शन वर्ष ३: अंक २ में प्रकाशित हुआ है। उस लेख में कोठारी जीलिखते हैं—"ग्यारह प्रतिमाधारी के अप्रत्याख्यानावरण कषाय का कुछ अंश जरूर रहता है"। कोठारी जी बतलावें-इन दोनों परस्पर विरोधी मतों में से आपका कौनसा मत सत्य है? अधिक क्या लिखें-कोठारी जी के भ्रम पूर्ण समाधान ने उनसे अनेक भूलें करा डालीं।

---

१ दर्शनिक आदि र्यासां प्रतिकार्दीनां ता दर्शनिकाद्य एकादशदशाः श्रावकसंयमस्थानानि, तासां वशः पारतंत्र्यं यस्य स घटमान देशसंयम इत्यर्थः। ३-१

अतः तृतीय स्थान की कल्पना उचित नहीं है इसलिये मेरी आपत्ति बराबर खड़ी रहजाती है।

द्वितीय प्रतिमाधारी नैष्ठिकके लक्षण में "धारयन्नुत्तरगुणान् नूणात् व्रतिको भवेत्" लिख कर आशाधर जी ने यद्यपि व्रत प्रतिमा मे अतिचारों की कल्पना को दूर कर दिया, किन्तु प्रथम प्रतिमाधारी के लिये निरतिचार अणुव्रत पालन का विधान उन्हों ने किसी स्थलपर भी नहीं किया "तदेतत् ब्रह्माणुव्रत निरतिचारं मद्यामिषक्षौद्रपंचोदुम्बरविरतिलक्षणाष्टमूल" इत्यादि वाक्य में 'निरतिचार' पद का सम्बन्ध अष्टमूल गुण के साथ है न कि ब्रह्माणुव्रत के। जैसा कि दर्शनिक प्रतिमा के लक्षण में भी बतलाया गया है। दर्शन प्रतिमा में दो ही तो विशेषताएं हैं एक विशुद्ध सम्यग्दर्शन और दूसरी निरतिचार अष्टमूल गुण परिपालन। आशाधर जी ने अष्टमूलगुणों में पांच अणुव्रतों के स्थान पर पांच उदुम्बरों के त्याग को ही स्थान दिया है। यद्यपि पाक्षिक के आचार में पांच अणुव्रतों का अभ्यास करने की भी प्रेरणा की गई है किन्तु प्रेरणा तो प्रेरणा ही होती है। अभ्यास की प्रेरणा आवश्यक व्रतों का स्थान नहीं लेसकती। अतः जैसे पाक्षिक दशा में मूलगुणों का सातिचार पालन करके दर्शनिक दशा में उनका निरतिचार पालन व्यवहार्य हो जाता है वैसे मूलगुणों से बाह्य अणुव्रतों के सम्बन्ध में नहीं हो सकता। हां, यदि मूलगुणों में अणुव्रतों का विधान होता तो स्थान मामला बदल जाता।

स्वदारसन्तोषव्रत वाले श्लोक की व्याख्या में आशाधर जी ने जो भिन्न २ मत दिये हैं उनकी सूक्ष्म दृष्टि से छानबीन करने पर भी दर्शन प्रतिमा में निरतिचार स्वदार संतोष व्रत पालन करने के विधान की पुष्टि नहीं होती। ब्रह्माणुव्रत के दो भेदों की पुष्टि में सोमदेव जी के मत का उल्लेख करने के बाद वे लिखते हैं १—"जो 'पंचुंबरसहियाइं' ... इत्यादि वसुनन्दि सैद्धान्तिक के मतानुसार दर्शन-प्रतिमा का पालन करता है उसके लिये स्वदारसंतोष व्रत है। वसुनन्दि जी के मत से व्रतप्रतिमाधारी के ब्रह्माणुव्रत का जुदा ही लक्षण है—यथा—जो पर्वों में स्त्री सेवन और अनंगक्रीडा का सदा त्याग करता है वह स्थूल ब्रह्मचारी कहा जाता है। जो 'सम्यग्दर्शनशुद्धः' ... इत्यादि स्वामी समन्तभद्र के मत से दर्शनिक है उसके इस ब्रह्माणुव्रत को अतिचार छुड़ाने के लिये ही व्रत प्रतिमा में दुहराया गया है"।

क्या आशाधर जी के अन्तिम शब्दों से यह बात साबित नहीं होती कि दर्शन प्रतिमा में ब्रह्माणुव्रतका सातिचार पालन उन्हें अभीष्ट है। यहां यह कहा जा सकता है कि सम्भावना ही नहीं रहती। किसी अंश में इस बात को मैं भी मानता हूं। वसुनन्दि सैद्धान्तिक ने दर्शनिक प्रतिमा मेंसात व्यसनों का त्याग कराया अतः उन्हें व्रतप्रतिमा के ब्रह्माणुव्रत का लक्षण

१ यस्तु — 'पंचुंबर सहियाइं सत्त वि ...' इति वसुनन्दिसैद्धान्तिमतेन दर्शनप्रतिमायाँ प्रतिपन्नस्तस्येदं। (इसके आगे कुछ पाठ छूटासा जान पड़ता है ले०) तन्मतेनैव व्रतप्रतिमां बिभ्रतो ब्रह्माणु व्रतं स्यात् तद्यथा— पव्वेसु इत्थिसेवा .... इत्यादि। यस्तु सम्यग्दर्शनशुद्धः · स्वामिमतेन दर्शनिको भवेत्तस्येदं ब्रह्माणुव्रतमतिचारवर्जनार्थमेवात्रानूद्यते ॥५२॥

भी कुछ परिवर्तन के साथ लिखना पडा। किन्तु यदि सात व्यसन के त्याग का नियम न रक्खा जाय तब तो अतिचारों की सम्भावना है ही। और इसी का उल्लेख आशाधर जीने ऊपर किया है उन्हों ने तीसरे अध्याय में सप्तव्यसनों का उल्लेख करने से पहले लिख दिया है १ कि वसुनन्दि सैद्धान्तिक के मत से दर्शनिक के लिये व्यसनों का त्याग बतलाया जाता है। यदि आशाधर जी उनका अनुसरण करते तो सैद्धान्तिक की तरह दर्शन प्रतिमा के लक्षण में सप्तव्यसन त्याग का भी निर्देश करते, किन्तु उन्हों ने ऐसा नहीं किया। अतः इस विस्तृत विवेचन से मैं इसी निर्णय पर पहुंचता हूं कि आशाधर जी ने स्वदारसन्तोषव्रत केजो अतिचार बतलाये हैं प्रथमप्रतिमा में उनका प्रसंग आता है और इस लिये मैं यह कह सकता हूँ कि स्वदारसंतोषव्रत के अतिचार नैष्ठिक की दृष्टि से बतलाये गये हैं।

उपसंहार

लेख बहुत अधिक लम्बा होगयाहै किन्तु कोठारी जी के मन्तव्यों की आलोचना तथा पाठकों की सरलता के लिये ऐसा करना आवश्यक समझा गया। अन्त में कोठारी जी से अनुरोध है कि वह आशाधर जी के जिन अतीचारों को साधू बतलाने के लिये इतना परिश्रम कर रहे हैं वे अतिचार दिगम्बर आर्षोक्त नहीं है किन्तु श्वेताम्बराचार्य की पुस्तक से नकल किये गये हैं अतः उनकी पुष्टि में अपना समय और परिश्रम बर्बाद न करें।

शिक्षोपयोगी–मनोविज्ञान

(गतांक से आगे)

कामुकता की प्राकृतिक शक्ति को प्रादुर्भाव करने के सम्बन्ध में एजन्सियां

Agencies in relation to Sexual Instinct

गरीबी भी नाक में दम कर देती है। जिधर देखो उधर दरिद्र मनुष्य ठुकराया जाता है पैसे की कमी कठोर से कठोर पाप में प्रवृत्ति करा देती है। दरिद्रता के कारण सदाचार की इच्छा करने वाला मनुष्य व्यभिचारी बन जाता है। इस गरीबी ने ही बहुत से मनुष्यों को अपने ध्येय से गिरा दिया है। दरिद्रता के कारण ही बहुत से मनुष्य अविवाहित रह जाते हैं। यह दरिद्र नरायण के पुजारी कोरे युवक भी यौवनावस्था आने पर काम देवके प्राकृतिक बाणों से बुरी तरह सताये जाने पर इधर उधर किसी की ताक में चक्कर लगाते हैं। कहावत मशहूर है

"Necessity is mother of invention"

"जरूरत अपना रास्ता निकाल ही लेती है" कामवासना की जलती हुई भट्टी को शान्त करने के लिये

---

१ अथ—पंचुंबर सहियाइं " .. इत्यादि वसुनन्दि सैद्धान्तिमते दर्शनिकस्य द्यूतादि-व्यसन निवृत्तिमुपदेष्टुं .... आह—

एक ऐसे स्त्री समुदाय का निर्माण हुआ जो कि इन विचारों को संतुष्ट कर सकती थी। इस श्रेणी में वे कन्यायें आती हैं जो कि कौमार अवस्था में दूषित वातावरण के कारण अज्ञान वश अपने सतीत्व को खो बैठने की वजह से विवाह के लिये अयोग्य करार दे दी जाती हैं।

इस के अतिरिक्त वे विधवायें जो कि समाज में घोर पाप करने के कारण बहिष्कृत किये जाने पर अपनी कामुकता की प्राकृतिक शक्ति का प्रादुर्भाव करने के कारण ऐसी वृत्ति का अनुसरण करती है।

रीड नामक एक अंग्रेज़ लेखक ने लिखा है "कि अफ्रिका के बहुत से भागों में कोई भी विवाह तबतक पक्का नहीं समझा जाता जब तक कि प्रौढ़ागृहिणियों का एक निर्णयदल कन्या की पवित्रता के सम्बंध में अपना निर्णय नहीं देता। लड़की अगर कौमार भ्रष्ट साबित हो जाती है तो पति उस लड़की को उस के पिता को लौटा देता है और यह बेचारी लड़की उम्र-पर्यंत क्वांरी ही रहती है। इन में से ज्यादा तर लड़कियाँ कामुकता के भावों के तीव्रता से जाग्रत होने पर वेश्या वृत्ति को धारण कर लेती है"। इस प्रकार अफ्रिका में वेश्याओं का सम्प्रदाय दिन बदिन बढ़ता जाता है।

जापानी माता पिता दीनावस्थामें होनेपर अक्सर अपनी कन्या को कुछ वर्षों के लिये किसी वेश्या को बेच देते है। इस में उन की किसी प्रकार की बदनामी नहीं समझी जाती। इतना ही नहीं बल्कि इस आत्मत्याग के लिये कन्या का सम्मान किया जाता है।

जापान की कथाओं में इस तरह के कई दृष्टांत मौजूद हैं, जिन में ऐसी कन्याओं का गुण गान किया गया है जो अपने पिता को ऋण से मुक्त करने अथवा अपने विवाह का मूल्य चुकाने में अपने सतीत्व को बेचने के लिये चुपचाप राज़ी हो जाती हैं।

भारत की देवदासी की प्रथा इसमें कुछ कम कलुषित नहीं है। मद्रास उड़ीसा आदि प्रांतोंमें माता पिता अपने किसी उद्देश्य की सिद्धि में देवताओं से सहायता प्राप्त करने के लिये यह प्रतिज्ञा करते है कि यदि उनका कार्य सिद्ध हो जायगा तो वे अपनी प्रथम पैदा हुई लड़की को देवताओं के भेंट कर देंगे। संयोगवश अगर उनको अपने कार्य में सफलता पैदा हो गई तो वे अपनी कन्या को देवताओं के भेंट चढ़ा देते है। यह बालिका ७ या ८ वर्ष की आयु में पुजारी की वेश्या बन जाती है।

चीन की अधिकांश चाय की दुकानों पर काम करने वाली स्त्रियां वेश्यावृत्ति का ही पेशा करती हैं।

पाश्चात्य देशों में जिस प्रकार और २ बातों में तरक्की हुई है—इस बात में भी उन लोगों ने काफी तरक्की की है। वहां पर विषय भोग तक वैज्ञानिक रूप से संगठित और अत्यन्त उन्नतिशील व्यवसाय हो गया है।

पैरिस में एक क्लब है। इसका उद्देश्य यह है कि प्रत्येक स्त्री वह चाहे जिस दशा या परिस्थिति में हो उसकी आर्थिक आय चाहे जो हो, उसका स्वभाव और धर्माचरण चाहे जैसा हो 'नवीन सम्भोग' का अनुभव करने के लिये बुलाई जा सकती है। और कोई भी पुरुष जो किसी अन्य स्त्री से सम्भोग

करना चाहे उसे इस एजेन्सी से पत्र व्यवहार करने के अतिरिक्त और कुछ करने की आवश्यकता नहीं। हां उसे व्यय के लिये २५ फ्रैंक भेज देना चाहिये और लिखना चाहिये कि वह जिस स्त्री के साथ सम्भोग करना चाहता है उसको क्या दे सकेगा। एजेन्सी तब उस कामी पुरुष की प्रार्थना उस स्त्री के पास पहुंचाती है। और उत्तर मिलने पर उसे सूचना देती है कि आपको अपना विचार कमसेकम इस समय के लिये छोड़ देना चाहिये। या इसके विरुद्ध प्रार्थना स्वीकृत हो जाती है तो उस व्यक्ति को यह सूचना मिलती है कि आपकी प्रार्थना धन्यवाद के साथ स्वीकार करली गई है।

इन देशों में लाटरी सिस्टम से व्यभिचार करने की प्रथा भी जारी है। बड़े दिन (X—masday) सार्वजनिक (Public नृत्यशाला में नर्तकियों पर चिट्ठी छोड़ीजाती है वे स्वयं अपने आपको इस कार्य के लिये उपस्थित करती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को उसमें फीस जमा करनी पड़ती है। चिट्ठियाँ किसी सदूक या बाक्स जैसी चीज में डाल दी जाती हैं। जिस के नाम चिट्ठी निकलती है वह उस रात को उस नर्तकी और उस कमरे पर अधिकार रख सकता है। एक दूसरे त्योहार के अवसरपर सङ्गीत भवनकी सुन्दरियोंकी प्रदर्शनी कीजाती है। सञ्चालक दर्शकोंकी भीड़ के सम्मुख प्रत्येक का मूल्य उपस्थित करता है। यह सौदा महीने भर के लिये, रात भर के लिये या दिन भर केलिये होता है।

यहां पर इस व्यभिचाररूपी व्यापार को तरक्की दिये जाने के लिये युवतियों को नशीली चीजें खिला कर बेहोश किया जाता है। और उनको बहका कर इस पाप पथ में प्रवृत्त किया जाता है।

इन देशों में लड़के और लड़कियों में विवाह न करने की प्रथा दिन बदिन जोर पकड़ती जाती है। लड़के अपनी पत्नियों के भरण पोषण के खर्चे के भय से विवाह करने को एक आफत मोल लेना समझते हैं। लड़कियां अपनी स्वतन्त्रता खोने के भय से विवाह करना नापसंद करती हैं। नतीजा यह होता है कि व्यभिचार का बाजार दिन ब दिन गरम होता जा रहा है।

खुले आम व्यभिचार सम्बन्धी विज्ञापन देने की प्रथा भी इन्हीं देशों में जारी है। पाठकों के मनोरंजनार्थ दुर्खी भारत से उद्धृत कुछ विज्ञापन दिये जाते हैं

(१)"—सप्लाईस वर्ग की एक युवती विधवा किसी ऐसे पदाधिकारी से दोस्ती करना चाहती है जो अपने कर्म और वचन से उसे संतुष्ट करसके।"

(२) " एक विदेशी युवती किसी ऐसे व्यक्ति का परिचय प्राप्तकरना चाहती है जो एक क्षणिक कठिनाई से उसे बचा सके।"

(३)" एक अधेड़ व्यापारी दोस्ताना बर्ताव के किसी ऐसी स्त्री का परिचय प्राप्त करना चाहता है जो देखने में सुन्दर हो। पतले शरीर की हो तो अच्छा।"

(४)" एक दुकानदार युवती जिसकी आयु २० और ३० वर्ष के बीच में है किसी अच्छे कुल के युवक के साथ प्रेमालाप करना चाहतीहै।"

५ " एक प्रशंसा पत्र प्राप्त २४ वर्ष का चरित्रवान स्विस युवक किसी ऐसी सुन्दरीके यहां नौकरी करना चाहता है जो अकेली रहती हो।"

(६) एक बुद्धिमान्, धनी और सुन्दर युवक एक कुलीन धनी और सुन्दरी की संरक्षकता में रहना चाहता है।

व्यभिचार रूपी दूषित पापकी प्रथा यों तो सब ही युगों में थी। लेकिन इस २०वीं सदी में यह पाप भीषण अवस्था को प्राप्त होता जा रहा है। इसका कारण यह है कि बहुत से देशों में इस प्रवृत्ति को पाप प्रवृत्ति नहीं समझा जाता। इसके अतिरिक्त आधुनिक काल में Aesthitic Science में लोग दिन बदिन तरक्की करते जाते हैं। स्त्रियों को अपने बनाव व सुन्दर बनने की शिक्षा प्रारम्भ से ही देना शुरू हो जाता है। पुरुष और स्त्रियोंका आजन्म क्वांरा रहना भी इस प्रवृत्ति को तरक्की देने का साधन है। यह क्वांरे जितना व्यभिचार फैलाते हैं शायद अन्य व्यक्ति नहीं फैलाते होंगे। लेकिन भारत में तो व्यभिचार रूपी पाप की प्रवृत्ति के प्रादुर्भाव न होने के कारण उपरोक्त कारणों से भिन्न ही हैं उन पर किसी वक्त प्रकाश डाला जायगा।

सहानुभूति (Sympathy) की प्राकृतिक शक्ति

सहानुभूति भी मनुष्य की मुख्य प्राकृतिक प्रवृत्तियों में से एक प्रवृत्ति है। इस प्रवृत्ति को प्रकट करने के लिये कमसेकम दो व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। एक सहानुभूति प्रकट करने वाला होता है और दूसरा वह जिस पर सहानुभूति प्रकट की जाती है। जब हम किसी दूसरे प्राणी को दुख या तकलीफ में देखते हैं तो हम उस पर सहानुभूति प्रकट करने लगते हैं।

मनो विज्ञानवेत्ता ड्रेवर (Drever) साहब सहानुभूति की नीचे लिखे प्रकार परिभाषा देते हैं। "Sympathy is the tendency to experience the feelings and emotions of others immediatly on perceiving the natural expressive signs of these feelings or emotions" सहानुभूति मनुष्य की एक प्रवृत्ति है जिससे मनुष्य दूसरों के अंत:क्षोभ और तज्जनित प्रवृत्तियों का अनुभवकराता है और अपने हावभावके जरिये उसके अंत: क्षोभों का अनुभव करता हुआ बतलाता है। राम कांपता है और डर से चिल्लाता है। श्याम उसके चिल्लाहट और डरका अनुभव करता है और वह खुद भी वैसे ही करने लग जाता है। किस्सा मशहूर है कि एक गांव में एक कुम्हार के यहाँ एक गधा था जिसको कुम्हार गर्दभसेन कहा करता था। वह गधा अचानक ही एक दिन मर गया कुम्हार फूट २ कर रोने लगा। "हाय गर्दभसेन हाय गर्दभसेन" इस रोने की ध्वनि सुनकर पड़ोस के लोग सहानुभूति जताने आये और वे भी रोने में शरीक हो गये। इस प्रकार गांवके प्राय: सभी लोगों ने रोना प्रारंभ किया-परन्तु किसीने यह न पूछा कि कौन मर गया है। वे समझे कि गर्दभसेन इसका कोई आत्मीय होगा। यह सब कुछ सहानुभूति के कारण ही होता है।

मनोविज्ञानवेत्ताओं का मत है कि सहानुभूतिका वेग सब मनुष्यों में एकसा नहीं होता। कोई २ व्यक्ति दूसरे को दुख में देखकर बहुत दुखी होजाते हैं। रोने और चिल्लाने लगते हैं। आंखों में आंसुओं की धारा बहाने लगते है। मेरे एक आत्मीय है जो किसी के भी दुख को देख कर आँसुओं की धारा बहा देते हैं।

ये सच्चे होते हैं या झूठे इसका अनुभव मैंने अपने मनोविज्ञान के आधार पर करना चाहा। परीक्षा करने से विदित हुआ कि यह महाशय अपने को दूसरों की दृष्टि में अच्छा, दयालु पुरुष जताने के लिये ऐसा किया करते हैं। दरअसल यह सच्चे हृदय से आँसुओं की धारा बहानेमें असमर्थ हैं। इन आंसुओं को तो मैंने झूठा ही पाया। सिनेमा में कई ऐक्टर्स (Actors) ऐसा करने में बड़े प्रवीण होते हैं। इससे यह समझ लेना कि सच्चे हृदय से सहानुभूति प्रकट ही नहीं होती है यह गलत धारणा है। कई मनुष्य ऐसे भी पाये जाते है जो औरों पर आये हुये दुःखको भी अपने ही ऊपर आया हुआ समझते है। संकट हानि तथा मृत्यु के समाचारों पर ऐसे मनुष्य विह्वल होजाते है और अपनी वेदना को प्रकट करने के लिये उस दुखी मनुष्य के यहां दौड़ पड़ते है ऐसे मनुष्यों को भी देखा है जो इतने कठोर हृदय होते है कि जिन्हे देखकर ऐसा मालुम होता है कि उनके ऊपर दूसरे के दुखों का बिलकुल ही प्रभाव नहीं पडता है। कसाई लोग पशुओं को बड़ी निर्दयता से मार देते हैं। लेकिन एक जैनी का बच्चा एक चींटी को भी मारते हुये घबराता है।

किन्तु यह अवश्य कहना पड़ेगा कि मनुष्यमात्र में थोड़ी या बहुत सहानुभूतिकी मात्रा अवश्य होती है इस प्रवृत्ति के प्रकट करने के लिये कोई सोच विचार की जरूरत नहीं होती। किसी मनुष्य के दुःखको देख कर हम उसकी वृत्ति से उत्तेजित होजाते है और हम उसके अंत क्षोभ का अनुभव करने लगते है।

मैकडूगल (Macdougall) ने सहानुभूति की दो जातियां बतलाई हैं। निष्क्रिय (Passive) और दूसरी क्रियावान (Active)।

जिस सहानुभूति का अनुभव हम दूसरों के अंतः क्षोभों का पता लगाने पर करने लगते हैं उसे हम Passive निष्क्रिय सहानुभूति कहते हैं। क्रियावान Active सहानुभूति में हम ऐसे भाव अंतः क्षोभ अथवा ऐसे बाह्य शारीरिक लक्षण प्रकट करते है जिनसे हमारे लिये दूसरे अन्य व्यक्तियों में सहानुभूति उत्पन्न हो। प्राय भीख मांगने वाले इसका प्रयोग करते है। भिख मांगने वाली महिलायें दूसरों की सहानुभूति को जाग्रत करने के लिये फटे पुराने कपडे पहन लेती है। वह अपनी गोद में एक रुग्ण बच्चा लेकर भीख माँगने निकल पडती हैं और कहती है कि ऐसे ही रोगी ३ बच्चे अभी मेरे पास और है। मेरे पति का देहांत यक्ष्मा से हो गया है। और इस प्रकार का प्रपञ्च रच कर वे क्रियावान सहानुभूति के जरिये लोगों को धोखा देकर मालदार बन जाती है।

इङ्गलेन्ड में एक भिखमङ्गा है जो दूसरों की सहानुभूति अपनी गर्दन में एक तख्ती लटका कर जाग्रत करता है। इस तख्ती पर लिखा हुआ होता है "Cant get work willing to do any thing wife and there childich athome" काम नहीं मिलता, कोई भी काम करने के लिये तय्यार हूं घर पर बीबी और तीन बच्चे हैं लेकिन यह सब झूठ होता है उसके पास न तो बीबी है और न बच्चे। वह कोई कार्य करना नहीं चाहता। यह प्रपञ्ची भीखमङ्गा इस क्रियावान सहानुभूति के जरिये सैकड़ों रुपये माहवार पैदा करता है। इसके पास एक मोटर है, जिसे वह सवेरे ही अपने मकान के पास की एक गैरेज में छोड़ जाता है। और भीख मांग कर लौटते समय पुनः मोटर में चढ़कर घर पहुंचता है।

इङ्गलैंड के एक भिखमंगे का कहना है कि हम लोग भीख मांग कर इतना कमाते हैं कि एक भवन खड़ा कर सकें। यह सब मेरी पत्नी के आंसुओं की बलिहारी है। यह अच्छा स्वांग रच लेती है इसके आंसू बड़े प्रभावशाली होते हैं। यह क्रियावान महानुभूति को जागृत करने में बहुत सिद्ध हस्त है।

लन्दन में एक भिखमंगों का राजा है वह दूसरों की क्रियावान महानुभूति, प्रतिदिन सैकड़ों पैकिट लोगों के पास भेजकर जागृत करता है। इन पैकिटों में एक आध कविता, गीत, अथवा अत्यंत कारुणिक चिट्ठी रहती है। चिट्ठी में जो बातें लिखी होती है वे प्रायः मिथ्या होती है किन्तु उनका असर खूब होता है चिट्ठियों के मजमून भिन्न २ होते है परन्तु उनका लक्ष्य एक ही रहता है। चिट्ठियों में प्रायः लिखा हुआ होता है "इस समय बड़ी बुरी तरह दिन कट रहे है। घर पर स्त्री और तीन बच्चे है और सभी भूखसे तड़प रहे है। इसके साथ ही एक गीत बेचने के लिये भेजा जारहा है, लेकिन अगर इसकी आवश्यकता न हो तो जो कुछ भी सहायता आप देंगे वही हमलोगों की जीवनरक्षा में सहायक होगी" इस प्रकार की क्रियावान महानुभूति के जरिये से यह भिखमंगोंका राजा इतना बड़ा आदमी बन गया है और इन्हीं ढोंगों से इसने लाखों रुपये कमाये है।

हमने देखा है और सुना है कि कई वक्तालोग ऐसा मार्मिक व्याख्यान देते है कि लोगों के हृदय महानुभूति से विह्वल होजाते है। और मनमाना कार्य करा लेते है।

एक समय की बात है कि जयपुर में एक वक्ताने ऐसा हृदय विदारक व्याख्यान विदेशी खांड पर दिया कि बहुतसे व्यापारियों ने विदेशी खांड की बोरियों को नालियों में फिकवा दिया। कई मनुष्य विदेशी खांड के इस्तैमाल करने का आजन्म त्याग कर गये।

जब किसी पाठशाला या अन्य संस्था का उद्घाटन किया जाता है तो वक्ता लोग अपनी स्पीच मे लोगों के हृदय में महानुभूति के अंगारे भरना प्रारंभ करते है और संस्था के लिये लाखों रुपया व अन्य आवश्यकीय वस्तुएं इकट्ठी कर लेते हैं।

मनोविज्ञान के आधार पर यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति में महानुभूति का होना एक प्रकार की मनुष्य की कमजोरी है। यह एक प्रकार से साधन होता है। जिसके जरिये मनुष्य पर गलत जोशों का प्रादुर्भाव किया जा सकता है। इसके जरिये उनसे समाज के विरुद्ध भी कार्य कराया जा सकता है। ढोंगी मार्मिक वक्ता जन समुदाय में जैसा चाहते हैं वैसा करा डालते है।

महानुभूति का बालकों में होना वातावरण पर निर्भर है। अगर बच्चा कसाई मोहल्ले में रहता है, तो वह अवश्य ही कठोर हृदय होगा। जानवर या परिंदों को मारते हुये इसके हृदय में जरा भी महानुभूति का अंश नहीं पैदा होगा। अतः बालकों को अगर कठोर हृदयी नहीं बनाना है तो उनको ऐसे वातावरण में रखना हानिकर है जहां पर कि पशुओं आदि पर कुठाराघात किया जाता है। Heredity भी महानुभूति के लिये एक बहुत बड़ा जरिया है। जैनी बच्चों के हृदय प्रारम्भ से ही कोमल होते हैं। वे किसी भी मनुष्य के दुःख को नहीं देख सकते। इसके विपरीत यवन बच्चे कठोर हृदय होते हैं।

बालकों में क्रियावान सहानुभूति की प्रवृत्ति सुगमता से जागृत की जा सकती है। अध्यापकों को चाहिये कि सहानुभूति की आदत बच्चों में डालें। उनको इतिहास आदि की बातें कहकर ऐतिहासिक मनुष्यों के प्रति जैसी सहानुभूति के जाग्रत करने की आवश्यकता हो उसी प्रकार की सहानुभूति जाग्रत करे। यथा-अलाउद्दीन और पद्मिनीका किस्सा बयान किया जा रहा है तो अध्यापक को चाहिये कि पद्मिनी की तरफ सहानुभूति को जागृत करके अलाउद्दीन से घृणा पैदा करदें ताकि बच्चों को मालुम हो कि दूसरों की स्त्रियों से इस प्रकार व्यवहार करना अनुचित है। तथा ऐसा करना महा पाप है।

अकबर और औरंगजेब का मुकाबला कराते समय औरंगजेब से घृणा तथा अकबर से प्रेम पैदा करना अध्यापक का ही कर्तव्य है जिससे बच्चोंको मालूम हो कि प्रजा के साथ कठोर व्यवहार करना कितना पापमय कार्य होता है। औरंगजेबके आखिरी समयको विवेचन करते समय उसके पश्चाताप तथा दुःखी हालात का चित्र भली प्रकार खींचने से बच्चों के हृदय में ऐसे पापी मनुष्योंके प्रति घृणाके भाव ही पैदा होंगे। इसी प्रकार अन्य ऐतिहासिक पुरुषों का विवेचन करते समय सहानुभूति का ठीक २ उपयोग करना अध्यापक का कर्तव्य है। अध्यापक को अपने दरजे की चाल ढाल बनाने में सहानुभूति का सहारा लेना चाहिये। अगर अध्यापक किसी विचार या व्यवहार के बारे में अधिकांश बालकों की सहानुभूति जागृत करा देता है तो दूसरे बचे हुये लड़के भी उनके साथ चलने लगते हैं और एक प्रथा बंध जाती है इस कार्यको करने के लिये जोर जबर्दस्ती की आवश्यकता नहीं होती। यथायोग्य सहानुभूति जागृत करनेके लिये अध्यापकों को बालकों की मनोवृत्ति का जानना आवश्यक है।

सम्बोधन

लेखक (*)

बालकपन की निर्मल शिक्षा, हुई सकल बेकार।
हृदयस्थल पर ज्यों २ आई, यौवन विषकी धार॥
छोड़ दिया जीवन यात्रा का-उज्वल पथ संचार।
भोलेपन की जगह हुआ अब मिन्य नया शृङ्गार॥
मन मन्दिर में 'मान' सिंहने, किया प्रबल हुंकार।
लगने लगे मनोहर मनको, अपने ही अविचार॥
क्या करना, क्या नहिं करना है कौना तत्व विचार।
मानो नौका पार लगेगी, बिन खेये पतवार॥
कोमल निर्मल सरल भावमय, अन्तस्तल उद्‌गार।
विषयवासना में लय होकर, छोड़ गये सुख द्वार॥
रूप सुरा से मतवाले मन, यह असार संसार।
जग का सुख दुख है विडम्बना, मृगतृष्णा है प्यार॥
सत्यपंथके पथिक बनो तुम, निश्चल अरु अविकार।
चाहे जग पग, पग पै तुम पर, करले अत्याचार॥

अभिमान

(ले०—श्रीमान पं० भंवरलाल जी न्यायतीर्थ)

श्यामाचरण और दिवाकर एक ही स्कूल में पढ़ते थे। श्यामाचरण एक धनी साहुकार का लड़का था और दिवाकर था एक दीन हीन माता का असहाय बालक। बहुधा ये दोनों साथ रहते, साथ लिखते पढ़ते और साथ ही खाते पीते थे। दिवाकर की दरिद्र माता के लिये यह अधिक प्रसन्नता की बात थी कि उसके गरीब दिवाकर पर एक धनी सेठ के इकलौते पुत्र का अनुपम प्रेम है। जब वह अपने पुत्र को श्यामा बाबू के साथ मोटरों में घूमता देखती तो उसकी प्रसन्नता का पार न रहता, वह इस दरिद्र अवस्था में भी अपने को धन्य समझती। ऐसी बातों को वह अपने मोहल्ले की औरतों को गर्व के साथ कहती और थोड़ी देर के लिये अपने दुःख को भूल जाती। जब श्यामा बाबू दिवाकर के घर आता तो उसकी मां राजा के समान उसका स्वागत करती एक दरिद्र बुढ़िया के घर इस तरह श्यामाचरण का आना लोगों को बहुत अखरता। कई स्त्रियें श्यामा बाबू को यहां न आने के लिये बहुत सी बातें कहतीं पर वह इनकी ईर्षा भरी दलीलों का कभी विश्वास न करता।

एक दिन श्यामाचरण के पिता रायबहादुर बाबू रामधन चौधरी ने अपने पुत्र को एकांत में ले जाकर कहा।—आजकल तुम घर में बहुत कम रहते हो। जान पड़ता है दिनभर दिवाकर के साथ घूमने के सिवाय और कोई काम नहीं है। मैं ने यह भी सुना कि कभी २ तुम स्कूल में भी गैर हाजिर रहते हो। तुम्हारी और भी कई आदतें खराब हो गई हैं। यह सब अच्छा नहीं है। मैं इन सबका कारण केवल दिवाकर की संगति समझता हूं। वह अच्छा लड़का नहीं है। इसलिये तुम उसके साथ अपना बिलकुल संसर्ग मत रक्खो। बोलो तुम इसके जवाब में क्या कहते हो?

रामधन बाबू इतना कहकर चुप हो गये। थोड़ी देर तक कमरे में सन्नाटा छा गया। कोई भी कुछ न बोला। श्यामाचरण को पिता की ऐसी अर्थहीन असत्य बातों को सुन कर जो आश्चर्य हुआ और विषाद हुआ वह अपनी अंतिम सीमाको भी उल्लंघन कर गया था। वह मन ही मन दुःखित हो रहा था। बार २ विचारने पर भी उसकी समझ में यह बात न आई कि पिता जी ऐसा क्यों कह रहे हैं। उस दुग्ध के समान स्वच्छ अन्तःकरण वाले बालक को मनुष्य की नैतिक दुर्बलताओं का क्या पता था।

जब श्यामा बाबू कुछ भी न बोले तो उसके पिता ने फिर कहा—क्या सोचते हो जवाब क्यों नहीं देते।

श्यामाचरण बोला—ऐसी निराधार बातों का क्या जवाब दिया जाय। आपतो ऐसी बातें कहते हो जिन पर कभी विश्वास नहीं किया जासकता। आपने जो भी कुछ कहा है उसमें एक भी बात सत्य नहीं है। मैं स्कूल में कभी अनुपस्थित नहीं रहा। जान पड़ता है यह आपका कल्पित दोषारोपण है। यातो आपने स्वयं इसकी कल्पना की है; नहीं तो

यह उन लोगों के दिमाग की सूझ है जो दिवाकरसे अकारण ही ईर्ष्या रखते हैं। आप जानते हैं आजकल मेरे इम्तिहान के दिन है। मेरा अधिकांश समय यहां ही व्यतीत होता है। करीब दस दिनसे तो मैं घूमने भी नहीं गया। फिरभी आपका यह कहना मेरेलिये बहुत आश्चर्य की बात है कि 'तुम घरमें बहुत कम रहते हो'। दिवाकरके साथ में दिन भर कहीं नहीं घूमता। हां वह मेरे साथ यहां अवश्य रहा है। आप के मुखसे यह सुन कर मेरे हृदयको बहुत अधिक आघात पहुंचा है कि दिवाकर अच्छा लड़का नहीं है। मैंने तो आपके इस सारे वक्तव्य का यही रहस्य समझा है कि आपने गरीब दिवाकरके अकारण दुश्मनों के कल्पित अभियोगों पर बिना कुछ विचार किये ही विश्वास कर लिया। आपको सहसा किसी के कह देने पर ही ऐसा निश्चय न कर लेना चाहिये दिवाकर एक सच्चरित्र और होनहार लड़का है। मैं अपना अहोभाग्य समझता हूं कि ऐसे सहाध्यायी की संगतिका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं उसके साथ रहने में अपना गौरव समझता हूँ। यह कह देने में मुझे कुछ भी अत्युक्ति का अनुभव नहीं होता कि दिवाकर के समान धीर, वीर, साहसी और निष्कलंक छात्र हमारे इस सारे नगर में दूसरा नहीं है। हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक श्रीमान टी० के० स्वामीने तो अनेक बार कहा है कि दिवाकर हमारे स्कूलकी शोभा है। आपको याद रखना चाहिये कि एक दिन उसका नाम संसार के महान पुरुषों की श्रेणी में लिखा जायगा। जिन लोगों के हृदय में उसे देखकर अभी डाह होता है और जो इसी कारण उसके निन्दक बने हुये है वे एक दिन अपने किये पर पछतायेंगे।

पिता ने पुत्र का युक्तिपूर्ण जवाब सुन कर कहा—चाहे तुम्हारा कहना सच हो फिरभी मेरी यही आज्ञा है कि तुम दिवाकर की संगति छोड़ दो। उसके साथ रहना तुम्हारे लिये शोभा की बात नहीं है। तुम्हें अपनी और उसकी स्थिति का मुकाबला करने से मालुम होगा कि दोनों में कितना अन्तर है। राज महल के राजा और राह के भिखारी की मैत्री शोभा की चीज नहीं है। जिसके पास खाने को रोटी नहीं पहनने को कपड़ा नहीं वह रईस के समान मोटरों में घूमे यह बात बहुत अनुचित है। झोंपड़ी में रहने वाला रङ्क तुम्हारे साथ महलों में शयन करे और टेबिलों पर खाना खावे उसको कौन समझदार पसन्द करेगा। तुम्हारे और उसके मार्ग में बहुत अन्तर है। भविष्य में अगर मैंने तुम्हारे साथ उसको देख लिया तो अच्छा न होगा। बस:रामधन बाबू इतना कहकर चुप हो गये और उत्तर की प्रतीक्षा करने लगे।

श्यामाचरण ने कुछ सोच कर साहस के साथ कहा—आपने यह जो भी कुछ कहा है यद्यपि उसमें कुछ भी तथ्य नहीं है और न मैं इसबात से सहमत ही हूँ। फिर भी हमारा घर अशांति और आकुलताकाघर न बन जाय केवल इसी बातका खयाल कर आपकी आज्ञाको मान लेता हूं। पर साथ ही आपको यह कह देना भी अपना कर्तव्य समझता हूँ कि आज से अपने अभ्युदय का मार्ग क्षितिज की ओर जानेका प्रारम्भ कर रहा हूँ।

पिता जी के चले जाने के बाद श्यामा बाबू मन ही मन विचारने लगे। इस प्रकार कई एक बातें विचारते हुये शाम होगई। नौकरने आकर कहा—

'बाबू रात होरही है खाना नहीं खाओगे क्या ? चलो बहुजी बुला रही हैं।

'आज मेरी तबियत खराब है। भोजन खाने का विचार नहीं है। जाओ, कहदो श्यामा बाबू ने कहा। इतना कहते ही दिवाकर आ गया और उस ने कहा; 'आज घूमने नहीं चलोगे क्या। शाम होगई है। आज गर्मी भी अधिक पड़ रही है मैं तो आज बहुत थक गया हूँ। अधिक परिश्रम करना भी काम का नहीं। इस से शरीर और दिमाग दोनों ही खराब हो जाते हैं जान पड़ता है आज तुम ने भी अधिक काम किया है क्या सचमुच तबियत खराब हो गई है। भई: मैं तो अब आगे गणित न लूंगा। इस में बहुत अधिक समय देना पड़ता है. और सफलता का भी पूरा निश्चय नहीं। क्यों जी ! जिन विषयों को तुम स्कूल और कालेजों में पढ़ते हो. क्या तुम्हारे जीवन में उन सब का कोई उपयोग भी होता है। आधुनिक शिक्षा के सम्बन्ध मे लोगों की समालोचनाएं मुझे तो सच जान पड़ती है। हमें इन अंगरेजी विद्यालयों में बहुत से ऐसे विषय पढने पड़ते है, जिन का हमारे जीवन में कोई सच्चा उपयोग नहीं होता। हम इस शिक्षा में अपने मन और शरीर का बहुत कुछ बलिदान कर देने परभी शिक्षाके वास्तविक फलको प्राप्त नहीं कर सकते। सचमुच ही यह शिक्षा हमें गुलाम बना देती है इस में सब से बड़ा दोष तो यह है, कि इस में हमारी आर्य संस्कृति नहीं पनपने पाती।

दिवाकर के इन विचारों को सुनकर श्यामा चरण बोला— 'अभी ऐसा व्याख्यान देने के लिये तुम को किस ने कहा था इस असम्बद्ध प्रलाप की आवश्यकता मेरी समझ में नहीं आई। मालुम होता है आज तुम को भी किसी ने बहका दिया है आधुनिक शिक्षा पद्धति को मैं अपने देश के लिए बहुत लाभदायक समझता हूँ। इस विषय में अगर तुम बहस करो तो तुम्हें हारना पड़ेगा। जनाब ! आपको यहभी मालुम है कि इस शिक्षा से हम कितने आगे बढ़े हैं। महामना मालवीय जी और महात्मा गांधी इसी शिक्षा के फल हैं। इसी शिक्षा के बदौलत हम धीरे २ स्वराज्य की ओर बढ़ सकते हैं, जो कि भारत का अन्तिम ध्येय है संसार के राष्ट्रों के बीच क्या केवल संस्कृत पढ़ कर भारत उन्नतमस्तक होसकता है। तुमको मालुमनहीं आज से पचास वर्ष पहले तो लोग स्वराज्य का नाम भी न जानते थे। अब भी वे ही लोग स्वराज्य का विरोध कर रहे हैं जो अंगरेजी पढे लिखे नहीं हैं। कवि सम्राट रवीन्द्र नाथ टागोर, विश्वविख्यात वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र वसु और भारत के मुख को उज्वल करने वाले श्री सी० वी० रमन जैसे विद्वानों का जन्म क्या ऐसी शिक्षा के विना हो सकता था ?

बीच में ही बात काट कर दिवाकरने कहा—आप की इन दलीलों से तो मुझे कुछ भी लाभ नहीं मालुम होता। चलिए घूमने चलें। आप की इन युक्तियों का जवाब रास्तेमें देता चलूंगा। मेरी दलीलों को सुनकर आप को ज्ञात हो जायगा कि आप कितने अंधेरे में है मुझे यह जान कर आश्चर्य हुआ कि आप को यह भी मालुम नहीं कि कवीन्द्र रवीन्द्र अंगरेजी स्कूल में कितने दिन पढ़े हैं। उनका जीवन स्मृति पढ़िए। ज्ञात हो जायगा कि उन्हों ने स्कूली शिक्षा कहाँ तक प्राप्त की है। कविता शक्ति अथवा प्रतिभा तो भाग्य की देन है शिक्षालयों से इस का क्या सम्बन्ध है। वहीं तो रवीन्द्र जैसे कवीन्द्र एक ही क्यों हैं। कम से कम

ऐसे हजारों तो होने चाहिए। यही बात महात्मा मालवीय जी आदि के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है

इतने ही में रामधन बाबू आगये। उन्हें देखकर दिवाकर ने प्रणाम किया पर बाबू जीने इस ओर कुछ भी ध्यान न दिया। दिवाकर को ऐसा मालूम हुआ-बाबू साहब अन्यमनस्क होरहे हैं; इसीलिये मेरे प्रणाम को स्वीकृत नहीं किया। वे आकर चुप-चाप एक कुर्सी पर बैठ गये। थोड़ी देर के लिये उस विश्राम भवन में सन्नाटा सा छागया। इस समय श्यामाचरण के हृदय में अनेक विचार उठते थे। पिता जी के निषेध कर देने पर भी वह दिवाकर के साथ पहले के समान ही प्रेम से बातें कर रहा है। इससे वे अवश्य नाराज होंगे। यही विचार उसके मस्तिष्क में चक्कर लगा रहे थे। इस एकान्त मौनका का कारण क्या है इसको पिता और पुत्र दोनों ही जानते थे। पर बिचारे दिवाकरको इस रहस्य का पता न था। नहीं तो वह यहां आता ही नहीं अथवा आकर भी फौरन चला जाता।

इस अखण्ड मौन को भङ्ग करते हुये दिवाकरने फिर कहा—'क्या आज घूमने नहीं चलोगे? चलने का विचार है तो उठो, नहीं तो दीपक मंगाओ, काम करना शुरू करें।

बस इतना सुनते ही बाबू साहब ने दिवाकर को तड़क कर कहा— आज यह घूमने नहीं जायगा। तुम अपने घर जाओ। तुम्हारा और इसका क्या साथ है? बराबरी वालों के साथ मित्रता अच्छी लगती है। तुम्हें हमारे इन राज प्रासादों से क्या लेना देना। तुम्हारा यहां अधिक आना मुझे पसंद नहीं है। मैंने तुम्हारे सम्बन्ध में कई बातें सुनी हैं।

दिवाकर इस धन के गर्व से उन्मत्त रामधन सेठ की बातें सुनकर अवाक् रह गया। उसको ऐसा ज्ञान पड़ा मानों स्वप्न आरहा है। आज तक किसी के मुँहसे अपने सम्बन्ध में ऐसी बातें न सुनी थीं। वह इस भर्त्सना का कुछ भी रहस्य न समझा अपने सम्बन्ध में यह ऐसी बातें सुन कर क्रोधसे तिलमिला उठा। उसकी आँखोंसे मानों रक्त की धारा बहने लगी। ओठ सूख गये। शरीर काँपने लगा। उसको मालूम होगया कि इनके माथे पर लक्ष्मी का शैतान सवार होगया है। वह उन को कुछ भी जवाब न देकर उठ खड़ा हुआ और अपने घर चल दिया।

जब रायबहादुर रामधन बाबू ने अपने आपेसे बाहर होकर बिना कुछ सोच विचार किये दिवाकर से उक्त बातें करना प्रारंभ किया था तभी श्यामा बाबू वहांसे तत्काल उठकर बाहर चला गया था। अपने पिता की मूर्खता पूर्ण प्रवृत्ति को देख कर उस से वहां बैठा न रहा गया। वह लज्जा से नत मस्तक होरहा था। वह चाहता था कि कहीं भाग कर चला जाय। उसको यह विश्वास कभी नहीं था कि स्वयं पिता जी ही दिवाकर को इस सम्बन्ध में ऐसी बातें कहेंगे। पिताजी की इस आज्ञा का कैसे पालन किया जाय। इस सम्बन्ध में वह स्वयं भी एक सुन्दर उपाय सोच रहा था। दिवाकर के साथ हमारे घर में आज जैसा बर्ताव हुआ है उसको तो ईश्वर भी बर्दाश्त न करेगा। वह इस तरह विचार करता २ दिवाकर के चले जाने के बाद अपने विश्राम भवन में पहुंचा और अपने पिता को इस प्रकार कहने लगा।

आज आपने मेरे अनन्य मित्र और बन्धु दिवाकर को जो कठोर वाक्य कहे हैं, उन्हें सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। मुझे ऐसी आशा न थी कि आप इतने आगे बढ़ जायेंगे। बड़े दुःख की बात है कि जिस काम को हम सुन्दर और सरल तरीके से कर सकते हैं, उसके लिये आप कठोर और भद्दे उपायों का अवलम्बन कर रहे हैं। यह तो कोई बुद्धिमानी की बात नहीं हुई। वह क्या आपके मकान में जबर्दस्ती आता है। जान बूझ कर ऐसी गल्ती करना भविष्य में बहुत दुःख का कारण हो जाता है।

पिता ने पुत्र की बातों का कुछ भी जवाब नहीं दिया। बाहर से किसी की आवाज आने पर वे उठ कर चल दिये श्यामा बाबू अपने नौकर को लालटेन लाने के लिये कहकर एक आराम कुर्सी पर लेट गया। सोचने लगा, दिवाकर तो बहुत नाराज हो गया होगा। क्या अपना क्षमापन के लिये एक बार उसके घर पर जाना आवश्यक है। वह तो पहले यहां अब कभी न आवेगा। पर यह बात पिता जी से छिपी हुई कैसे रहेगी। इससे तो यही अच्छा है कि मैं पत्र लिखकर उससे क्षमा मांग लूं। हे परमात्मन! यह कैसी समस्या तुमने मेरे सामने ला कर खड़ी कर दी। दोनोंही तरफ अथाह समुद्र है। ठीक परीक्षा के दिनों में यह कैसी मुसीबत आई है। यह बात बहुत कुछ अंशों में सही है कि जरा मनुष्य का बुद्धि का अपहरण कर लेती है। मनुष्य की शारीरिक निर्बलता का असर बुद्धि पर भी अवश्य पड़ता है। जो आदमी दूसरोंकी सलाहोंको कोई मूल्य नहीं समझते उनको पद पद पर विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। अगर पिता जी चाहते तो इस सम्बन्ध में मेरी सम्मति लेकर फिर अन्तिम निर्णय करते। कैसे आश्चर्य की बात है कि उन्होंने मेरे कहने का कुछ भी विश्वास नहीं किया। सच है धन वालों के कान होते हैं आखें नहीं। क्या अभी दिवाकर यदि नौकर भेज कर बुलाया जाय तो न आवेगा? वह तो बहुत सरल प्रकृति का मनुष्य है। क्या वह इस बात का विचार करेगा कि यह अपराध मेरे पिता जी का है मेरा नहीं। मैं ने स्वयं तो अपने मुँह से उसको कुछ भी नहीं कहा। यदि मेरे बुलाने पर भी वह यहां न आवे तो यह उसकी गलती होगी। इस तरह वह अपने मन में अनेक प्रकार के विचार बांध रहा था। इतने में ही नौकर हाथ में दूध का गिलास लेकर आया और बोला—बाबू लो दूध पी लो।

बाबू ने कहा—जाओ तुम दिवाकर को अभी यहाँ बुला कर लाओ। मैं पीछे दूध पीऊंगा। दूध टेबल पर रख दो।

'मैंने तो सुना है बड़े बाबू जी ने दिवाकर को अपने यहां आने के लिये रोक दिया है, नौकरने कहा

श्यामाचरण ने कहा—'तुम को इन बातों से क्या मतलब है। जान पड़ता है तुम्हारा भी दिमाग आसमान पर चढ़ा जा रहा है। क्या रोटियां बुरी लगती हैं। जो कहते है वह काम तो नहीं करता और अपनी 'अपरंच' लगाता है। आइंदा ऐसे जवाब मत दिया करो बस इसी में तुम्हारा भला है। क्या बड़े बाबू जी नेभी इस बाबत तुम को कुछ कह दिया है।

'नहीं साहब! उन्हीं ने तो मुझे कुछ भी नहीं कहा। मेरे मुंह से तो यह बात बिना विचारेही निकल गई। आप माफ करें। फिर कभी ऐसीभूल न होगी।

क्षत्र चूड़ामणि की सूक्तियां

(ले० श्रीमान पं० श्रीप्रकाश जी न्यायतीर्थ)

संस्कृत साहित्य में जैन कवियों की कृतियां अपना स्वतन्त्र स्थान रखती हैं। उन में अलौकिक चमत्कार के साथ गम्भीर भावों की विशेषता है। आज जैन समाज के दुर्भाग्य से या जैनों की अकर्मण्यता के कारण जैनाचार्यों की कृतियों का अन्य समाजों में प्रचार न होने से वे यथेष्ट समादृत न हो सकीं, यह खेद की बात है, पर इतने से उन का महत्व क्षीण नहीं हो सकता। रत्न छिपाने से भी नहीं छिपता, पर होना चाहिए वह रत्न। निस्सन्देह एक दिन वह उपस्थित होगा, जिस दिन जैनों की कृतियां भी विश्व में मान्य और गौरव पूर्ण समझी जायेंगी। अस्तु,

जैन विद्वानों में श्री वादीभसिंहसूरि एक अच्छे विद्वान हुए हैं, जिन का रचा हुआ 'क्षत्र चूडामणि' काव्य है। यह काव्य महत्त्व पूर्ण है। इस में जीवन्धर स्वामी का चरित्र वर्णन किया गया है। इसको ध्यान पूर्वक पढ़ने से विदित होगा कि वादीभसिंहसूरि केवल काव्य प्रणयन में ही कुशल नहीं थे, अपितु उन का ज्ञान बहुत विस्तृत था। क्षत्रचूडामणि में प्रत्येक प्रसंग में कथानक के साथ साथ अर्थान्तरन्यास से उस के समर्थन के लिए उन्होंने जो स्वतन्त्र सूक्तियां लिखी हैं। वे बहुमूल्य हैं। इन्हें आप नीति कहिए या उपदेश। ये प्रसंगोपात्त कथानक के समर्थन के लिए ग्रन्थकर्ता के हृद्गत भाव ही शिक्षा के रूप में अवतरित हुए हैं। मानव प्रकृति का विश्लेषण कर जिस तात्विक सत्य को ग्रन्थकार ने पाया है उसी मर्म-स्पर्शी अनुभव को उस ने इन वाक्यों में कूट २ कर भर दिया है। इन वाक्यों का मनन करने से मनुष्य बहुत उन्नत बन सकता है। पाठकों के लाभ के लिए यहां हम उन्हीं सूक्तियों के संग्रह का प्रयास करेंगे।

१-- पीयूषं न हि निःशेषं पिबन्नेव सुखायते ॥२॥

अनिष्टवस्तु यदि बहुत भी मिल जाय, तो भी उस से कुछ लाभ नहीं और यदि इष्ट वस्तु थोड़ी भी प्राप्त हो जाय तो वह सुख पहुंचा देता है। विष यदि बहुत सा भी मिले तो वह सुख नहीं पहुंचा सकता, किन्तु अमृत का थोड़ा सा भी अंश सुखी बना देता है। कोई भी वस्तु क्यों न हो, यदि वह प्रिय है और उपकार कर सकता है तो वह चाहे पूर्ण प्राप्त न हो,

---

१६ वें पेज का शेषांश

दिवाकर बाबू को अभी बुला कर लाता हूं। नौकर ने जवाब दिया।

रात के नौ बज गये थे। नौकर सीधे पैरों दिवाकर के यहां पहुचा और जाकर बोला आपको छोटे बाबू अभी दश मिनट के लिये बुला रहे हैं आप मिहरबानी कर पधारें नहीं तो वह मुझपर नाराज होंगे।

'अभी मेरी तबियत खराब है। मैं नहीं चल सकता। तुम्हारा काम तो तुम्हें आकर कह देने का था। मेरे नहीं जाने से वे तुम पर नाराज क्यों होंगे। तुम्हारा काम तो हो चुका' दिवाकर ने कहा।

अपूर्ण

किञ्चिन्मात्र भी प्राप्त हो जाय, तो आनन्दित कर देती है। भलाई थोड़ी सी भी शान्ति पहुँचा देती है, बुराई बहुत सी भी दुःख का कारण है।

२- सौभाग्यं हि सुदुर्लभम् ॥ ६ ॥

जिस से अन्य लोग अकारण ही प्रेम करने लगें वह सौभाग्य है। सौभाग्यका मिलना बड़ा मुश्किल है। बहुत सी समान वस्तुओं के रहते हुए उनमें से किसी एक को यदि अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त हो जाय, किसी सुदुर्लभ वस्तु का समागम हो जाय तो यह उसका सौभाग्य समझना चाहिए और यह सर्व साधारण के लिए सुदुर्लभ है बहुत से बराबर पढ़े लिखोंमें से यदि किसी को कोई सम्माननीय पद मिल गया तो यह उस का सौभाग्य है, राजा के अन्तः पुर की बहुत सी स्त्रियों में यदि कोई पटरानी बन गई तो यह उस का सौभाग्य है। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझ लेना चाहिए। कि सौभाग्य से ही सुदुर्लभ वस्तु का समागम होता है।

विषयासक्तचित्तानां गुणः को वा न नश्यति

न वैदुष्यं न मानुष्यं नाभिजात्यं न सत्यवाक ॥१०॥

विषय भोगों में मन लगाने वाले मनुष्यों का कौनसा गुण नष्ट नहीं हो जाता? उनमें न पाण्डित्य रहता है, न मनुष्यता रहती है, न कुलीनता रहती है और न सच्चाई ही रहती है। अर्थात् उनके सब गुण नष्ट हो जाते हैं।

अविचारितरम्यं हि रागान्धानां विचेष्टितम् ॥ १३ ॥

जो राग (मोह) से अन्धे बने हुए हैं ऐसे पुरुषों की चेष्टाएं-क्रियाएं तब तक ही अच्छी लगती हैं, जब तक उन पर विचार नहीं किया जाता। अच्छे और बुरे का विचार किये बिना ही वे बहुत से काम कर डालते हैं, अनर्थों का खयाल नहीं करते।

५- नटायन्ते हि भूभुजः ॥ १५ ॥

अपने राज्य की रंगभूमि पर प्रजा रूपी दर्शकों को प्रसन्न करने और अपने राज्य की शासन-व्यवस्था को निरापद रखने के लिए राजाओं को नटों के समान आचरण करना पड़ता है। उन का असली रूप दूसरा होता है और जनता के समक्ष वे दूसरे स्वांग में उपस्थित होते हैं। जिस प्रकार नट लोग प्रेक्षकों को मोहित करने के लिए अपनी विचित्र लीलाएं किया करते हैं, वैसे ही प्रजा को अपने अनुकूल बनाने के लिए राजा लोग भी अनेक विचित्र चालें चला करते हैं। वे कभी किसी से प्रेम करते हैं और कभी रुष्ट हो जाते हैं। उन्हें अपने हृदयका भी विश्वास नहीं होता दूसरे पर तो वे विश्वास करेंगे ही क्या? उनका आचरण सर्वथा विचित्र होता है।

६- अमूलस्य कुतः सुखम् ॥ १७ ॥

कारण के बिना कोई कार्य नहीं होता, बीज के बिना वृक्षकी उत्पत्ति असम्भव है। ऐसे ही सुख भी कारण के बिना नहीं होता। इसलिए जो सुख चाहते हैं, उन्हें उसके कारणों का संग्रह करना चाहिए।

७- बुद्धिः कर्मानुसारिणी ॥ ६ ॥

जो कार्य जिस रूप में सम्पन्न होना होता है मनुष्यों की बुद्धि भी वैसी ही होजाती है। अर्थात जैसा होनहार होता है, मनुष्यों की बुद्धि भी उसीके अनुकूल होजाती है।

८- अस्वप्नपूर्वं हि जीवानां न हि जातु शुभाशुभम्।

मनुष्यों को बहुधा स्वप्न आया करते है। वे उस के भविष्य में होने वाले शुभ और अशुभ के सूचक हैं

प्राणियों के कोई भी अच्छा और बुरा कार्य पहले स्वप्न आये बिना नहीं होता। अर्थात आगे होनेवाले कार्यों की स्वप्न पहले ही सूचना दे देते हैं।

९— वक्त्रं वक्ति हि मानसम् ॥२७॥

हृद्गत भावोंको मुख सूचित कर देता है यदि किसी के हृदयमें हर्ष, विषाद, प्रेम, क्रोध आदि किसी भी प्रकार के भाव हैं तो उसके मनके भावोंको उसका मुख ही प्रकट कर देता है।

१०— सत्यामत्यभिषङ्गार्तौ जागर्त्येव हि पौरुषम् ॥२६

पराभवसे पीड़ित होने पर भी पुरुषार्थ जागृत ही रहता है। अर्थात पुरुषार्थी मनुष्य शोक से पीड़ित रहने पर भी हिम्मत नहीं हारते, प्रत्युत शोक के समय वे सावधान रहते हैं।

११— न हि रक्षितुमिच्छन्तो निर्दहन्ति फलद्रुमम् ।२६।

फल देने वाले वृक्षको रक्षा चाहने वाले उसे जला नहीं डालते। अर्थात् यदि तुम किसी को प्रसन्न देखना चाहते हो तो उसके शोक का बीज मत बोओ जिसकी रक्षा चाहते हैं उसको नष्ट नहीं किया जाता।

१२— पावके न हि पातः स्यादातपक्लेशशान्तये ।३ ।

अग्नि में पड़ने से गर्मी का क्लेश नहीं मिटता। प्रतिकूल उपचार करने से कभी भी कोई रोग शांत नहीं होता। किसी पीड़ा को मिटाने के लिये यदि शोक किया जाय तो शोक करने से वह पीड़ा मिट नहीं जाती प्रत्युत अधिक बढ़ जाती है। इसलिये एक शोक की पीड़ा को नष्ट करने के लिये शोक करना अनुचित है।

१३— दुःखःचिन्ता हि तत्क्षणे ॥३२॥

जिस समय दुःख होता है, दुःखकी चिन्ता भी उसी समय होती है। दुःखके नष्ट होजाने पर उस की चिन्ता भी नहीं रहती।

१४ - विपाके हि सतां वाक्यं विश्वसन्त्यविवेकिनः।

अविवेकी पुरुष परिणाम के उपस्थित होजाने पर सत्पुरुषों के वाक्यों पर विश्वास करते हैं। कार्य प्रारंभ करने से पहले मूर्ख पुरुषों को यदि सज्जन बहुत भी समझाते हैं तो भी वे नहीं मानते, पर जब अपने कार्यों का फल विपरीत मिलता है तब अविवेकी लोग सज्जनों की सीख पर श्रद्धान करने लगते हैं।

१५—आस्था सतां यशः काये न ह्यस्थायिशरीरके ।३७।

सज्जनों की बुद्धि यशरूपी शरीर में होती है, नश्वर में नहीं। अर्थात् सज्जन लोग अपने शरीर को यश संचय में लगा देते हैं। वे समझते हैं यदि इस संसार में स्थायी यश प्राप्त किया जा सके तो वह बहुत उत्तम है, यह नश्वर शरीर तो एक दिन अवश्य नष्ट होगा ही।

१६ - मनस्यन्यद्वचस्यन्यत्कर्मण्यन्यद्धि पापिनाम् ।४३।

पापी पुरुषों के मन में कुछ और होता है, वचन में कुछ और होता है और कर्म में कुछ और होता है। वे कहते कुछ हैं, करते कुछ हैं और मन में कुछ और ही रखते हैं।

१७—गाढा हि स्वामिभक्तिः स्यात्स्वप्राणानपेक्षिणी ४५

जो दृढ़ स्वामिभक्त हैं, उन्हें अपने जीवन की परवाह नहीं होती। अपने मालिक की हानि उनसे नहीं देखी जाती, चाहे उनके प्राण ही क्यों न चले जांय।

१८ - पित्तज्वरवतः क्षीरं तिक्तमेव हि भासते ॥५०॥

पित्तज्वर वाले को दूध भी कडुआ मालूम देता है। दुष्ट मनुष्य को यदि अच्छी बात कही जाती है तो

वह भी उसे बुरी प्रतीत होती है। दुष्टों का कुछ स्वभाव ही ऐसा होता है, जिससे उन्हें अच्छी बातें भी बुरी लगती हैं।

१९- दोषं नार्थी हि पश्यति ॥५२॥

स्वार्थी मनुष्य दोषों का विचार नहीं करता। अपना प्रयोजन सिद्ध करने के लिये यदि उसे कृतघ्न होना पड़े या और कोई महान पाप भी करना पड़े तो वह उससे भय नहीं खाता। अपने मतलब के लिये स्वार्थी सब कुछ कर डालता है।

२०- पयो ह्यास्यगतं शक्यं पाननिष्ठीवनद्वये ॥५४॥

मुख में गया हुआ दूध पीने या थूकने रूप दो ही काम आता है। ऐसे ही दुर्जनों के हाथ लगी हुई सामग्री भी दो ही काम में आती है या तो वे उसके मालिक बन बैठते हैं या उसे नष्ट कर डालते हैं। अर्थात् पी नहीं सकते तो डुला अवश्य देते हैं।

२१- न हि तिष्ठति राजसम ॥५५॥

राजसी भाव अप्रकट नहीं रहता. अवसर पाने पर जाहिर हो ही जाता है। मनस्वी अपना पराभव नहीं देख सकते। अपमान का मौका आने पर उनका पौरुष प्रकट हो जाता है।

२२- स्त्रीपराभवो हि दुःसहः

पुरुष अपना अपमान तो किसी प्रकार सहन कर भी लेते हैं. पर स्त्रियों के सम्बन्ध में किया गया अपमान उनसे सहन नहीं होता। इसके लिये वे मरने और मारने को तयार रहते हैं। चाहिये भी ऐसा ही।

२३- तत्त्वज्ञानं हि जागर्ति विदुषामार्तिसंभवे ॥५७॥

पीड़ा होने पर या आपत्ति काल में विद्वानों के तत्त्वज्ञान जागृत ही रहता है। आपत्तिकालमें वे अविवेकी नहीं बनते। अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिये वे सर्वदा सावधान रहते हैं। अन्यथा ज्ञान का फल ही क्या है।

२४- दग्धभूम्युप्तबीजस्य न ह्यङ्कुरसमर्थता ॥६२॥

जली हुई भूमि में बोया हुआ बीज नहीं उगता। ठगाये हुये आदमी को सच्ची बात पर भी विश्वास नहीं होता। जो पहले एक बार धोका खा जाता है, वह बहुत शंकित रहता है, ठीक बात को भी सहसा मानने के लिये तयार नहीं होता।

२५- हन्त क्रूरतमो विधिः

खेद है कि विधाता अत्यन्त क्रूर होता है। अपने पूर्वोपार्जित कर्मों का फल देते समय वह राजा, रंक आदि का कुछ भी खयाल नहीं करता, सब को एक सा फल देता है।

२६- नह्यङ्गुलिरसाहाय्या स्वयं शब्दायतेतराम् ॥६४॥

अन्य किसी आश्रयको पाये बिना अकेली अंगुली अपने आप शब्द नहीं कर सकती। एक हाथसे ताली नहीं बजा करती। दूसरा निमित्त मिलनेपर ही कार्य हुआ करता है।

२७- गत्यधीनं हि मानसम् ॥६५॥

जैसी गति होनहार होती है मन भी वैसा ही होजाता है। मनकी प्रवृत्ति भविष्य के अनुकूल ही हुआ करती है।

२८- अनन्ता ह्यसुभृद्भवाः ॥५७॥

शरीरधारियोंके जन्म अनन्त हुआ करते हैं। जीव एक शरीर को छोड़कर दूसरा-तीसरा ग्रहण करता रहता है। यह, ग्रहण करते रहनेकी शृङ्खला भवों की अनन्तता है। इन भवों में यह जीव सांसारिक भोग विलासकी सम्पूर्ण वस्तुओं को अनेक बार प्राप्त कर चुका, अब यहां कोई नवीन सामग्री नहीं है। अर्थात

नवीन समागमका अभाव जानकर मनुष्यको इस भोग सामग्री व शरीरके नाशका चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

२६- पीडा ह्यभिनवो नृणां प्रायो वैराग्यकारणम्।

नया दुःख मनुष्यों को प्रायः वैराग्य उत्पन्न कर देता है। किसी भी नवीन बड़े दुःखसे सन्तप्त होकर मनुष्य प्रायः संसारसे विरक्त होजाते हैं। नाना प्रकार के दुःखों का अनुभव करते हुए उन्हें इस संसार में कुछ सार नहीं दिखाई देता।

३०- दृष्टान्ते हि स्फुटा मतिः ॥६६॥

दृष्टान्त मिलने पर बुद्धि विशद होजाती है। किसी भी बात का जब तक उदाहरण नहीं मिलता, तब तक वह अच्छी तरह समझ में नहीं आती। किन्तु उदाहरण पाते ही विषय स्पष्ट होजाता है।

३१- पापाद्बिभ्यतु पण्डिताः ॥६७॥

विचारशीलों को पापसे डरना चाहिये। अपने किये हुये खोटे कर्मों का फल मिले बिना नहीं रहता, इसलिये बुद्धिमानों का कर्तव्य है कि वे पापसे डरते रहें, कभी भी कोई दुष्कर्म न करें।

३२ पुण्ये किं वा दुरासदम् ॥६६॥

पुण्यके रहनेपर क्या नहीं मिलता? पुण्यात्माओं को दुर्लभ से भी दुर्लभ वस्तुका समागम होजाता है उनके लिये कोई भी वस्तु दुष्प्राप्य नहीं रहती।

३३- सन्निधौ हि स्वबन्धूनां दुःखमुन्मस्तकं भवेत् ६०

अपने बन्धुओंके पास दुःख उन्मस्तक होजाता है अर्थात पीड़ा के समय यदि कोई अपना रक्षक उपस्थित होता है तो दुःखी मनुष्य का सन्ताप और भी बढ़ जाता है। आर्त मनुष्य विलाप करने लगता है, छटपटाता है और उस आपत्ति से बचाने के लिये रक्षक के समक्ष दीन बन जाता है।

३४- निश्चलाद्विसंवादाद्वस्तुनो हि विनिश्चयः ॥६४॥

अटल और विसंवाद रहित वचनों से वस्तु की सत्ता में कोई सन्देह नहीं रहता। जब वक्ता प्रामाणिक होता है तो उसके वाक्य अवश्य सत्य होते हैं।

३५- यधोन्वेषिजनैर्दृष्टः किं वा न प्रीतये मणिः ६६॥

लकड़ियां ढूँढने वाले मनुष्य को यदि रत्न मिल जाय तो क्या वह प्रसन्न नहीं होता? उत्तम वस्तु को देखकर सभी प्रसन्न होजाते हैं और प्रेम करने लगते हैं।

३६- प्राणवत्प्रीतये पुत्रा मृतोत्पन्नास्तु किं पुनः ॥६६

यदि कोई खोई हुई वस्तु ही मनुष्यों को पुन मिल जाती है तो वे उसे पाकर बहुत प्रसन्न होते हैं। और यदि पुत्र सरीखी वस्तु जो प्राणों से भी प्यारी होती है, वह भी मर जाने पर, यदि पुनः जीवित मिल जाय तो फिर उसकी प्रसन्नता का क्या ठिकाना है।

३७- समीहितार्थसिद्धौ मनः कस्य न तुष्यति ।१०१।

इच्छित पदार्थ के मिल जाने पर किसका मन सन्तुष्ट नहीं होता। अभिलषित वस्तु को पाकर सभी तृप्त होजाते हैं और कृतकृत्यता का अनुभव करने लगते हैं।

३८- अवश्यं ह्यनुभोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।१०४।

किये हुये शुभ और अशुभ कर्म अवश्य भोगने पड़ते हैं। यदि पहले पुण्य किया है तो शुभ फल भोगना पड़ेगा और यदि पाप किया है तो अशुभ का अनुभव करना पड़ेगा। एक बार कर्म बन्ध कर लेने पर यदि वह अशुभ है तो हटाया नहीं जा सकता और शुभ है तो बढ़ाया या विपरीत नहीं किया जा सकता। (शेष अगले पेज पर)

मुलतान में सच्ची धर्मप्रभावना

प्रभावजनक शास्त्रार्थ

(ले०—श्रीयुत ला० सुखानन्द जी मन्त्री)

अम्बाला निवासी श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ महा मंत्री श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ यद्यपि इस वर्ष दशलक्षणपर्व पञ्जाब में व्यतीत करने का निर्णय कर चुके थे किन्तु कारणवश पर्यूषण पर्वसे ३-४ दिन पहले आप मुलतान में पधारे आपके प्रभाव शाली भाषणों ने अजैन जनता का ध्यान आकृष्ट किया तदनुसार दशलक्षण पर्व में आपका मुलतान रहना धार्मिक प्रभावना के लिये आवश्यक होगया। पञ्जाबके उदार, सज्जन महानुभावों की स्वीकारता प्राप्त कर लेने पर पंडित जी ने मुलतानमें पर्यूषणपर्व मनाने का निश्चय किया।

धार्मिक प्रभावना के लिये छपे हुए विज्ञापनों द्वारा मुलतान की जनता को विशेष कर विद्वत्समाज को सूचना दी गई कि श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ "१ ईश्वर जगत कर्ता नहीं है, २ मुक्ति में पुनरागमन नहीं होता, ३ मूर्तिपूजा उपयोगी है, ४ ईश्वर कर्मफलदाता नहीं है, ५ अल्पज्ञ सर्वज्ञ हो सकता है, ६ वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं हैं, ७ अद्वैतवाद प्रमाण विरुद्ध है" विषयों पर क्रमशः रात्रि को प्रति दिन व्याख्यान होंगे और अंतमें उस विषय पर जिन महानुभावों को शंका हो उनको पर्याप्त समय देकर समाधान किया जायगा।

तदनुसार पंडित जीके चार विषयोंपर प्रभावशाली भाषण हुए सूचना के अनुसार व्याख्यानों के अंत में आये हुए अजैन विद्वानों द्वारा उपस्थित की गई शंकाओंका समाधान भी किया गया जिसका अच्छा प्रभाव पड़ा। ९-१० अक्टूबर को "ईश्वर जगत कर्ता है या नहीं" विषय पर जैन समाज तथा अजैन समाजों के बीच नियमपूर्वक ५-५ मिनट का समय रखकर शंका समाधान (Debate) हुआ जिसमें स्थानीय संस्कृत, अंग्रेजी भाषा के विद्वानों ने भाग लिया। परिणाम बहुत सन्तोष जनक रहा।

(२४वें पेज का शेष)

३९- सौभ्रात्रं हि दुरासदम् ॥१०७॥

अच्छे भाई का मिलना दुर्लभ है। पुण्यवानोंको ही अच्छे भाई प्राप्त होते हैं।

४०- भाग्ये जाग्रति का व्यथा ॥१०८॥

भाग्य जागृत रहने पर, पुण्य उदय होने पर, कौनसी पीड़ा होसकती है? पुण्यात्माओं को कोई आपत्ति नहीं सताती। पुण्यात्मा के चाहे सब प्रतिकूल होजांय, यदि उसका भाग्य जागृत है तो उसके कोई भी पीड़ा नहीं होसकती।

४१- स्वयं वृण्वन्ति हि स्त्रियः।

स्त्रियां अपने पति को अपने आप वर लेती हैं अर्थात जो वस्तु जिसे प्राप्त होती है वह अपने आप उसके पास चली जाती है।

४२- गुरुरेव हि देवता ॥११०॥

गुरु ही देवता है। क्योंकि वह देवता से बढ़ कर उपकार करता है।

क्रमशः

इस प्रभाव को हटाने के लिये स्थानीय बोहर दरवाजा की आर्यसमाज ने श्रीमान स्वामी कर्मानन्द जी सरस्वती को मुलतान बुलाया। स्वा० कर्मानन्द जी के आते ही आर्यसमाज ने दि० जैन समाज के पास शास्त्रार्थ का निमंत्रण भेजा जिसको दि० जैन सभा ने सहर्ष स्वीकार किया और " क्या ईश्वर जगत कर्ता है " इस विषय पर शास्त्रार्थ होना निश्चित हुआ किन्तु जिस समय शास्त्रार्थ के लिये नियम निश्चित हो रहे थे उन दिनोंमें स्वामी कर्मानन्द जी ने *आर्यसमाज में जैन सिद्धान्त के विरुद्ध व्याख्यान देने* और अंतमें उस विषयका शंका समाधान करने का ढिंढोरा पिटवाया।

तदनुसार कुछ दि० जैन नवयुवक आर्यसमाजमंदिर में स्वामी जी का व्याख्यान सुनने गये व्याख्यान के अंतमें उन नवयुवकों ने स्वामी कर्मानन्द जी के साथ शंकासमाधान किया जिसमें वे पग पग पर कर्मानन्द जी को निरुत्तर करते गये अंतमें कर्मानन्द जीने बहाना किया कि मैं जैनियों के साथ " क्या जैन तीर्थंकर सर्वज्ञ थे? और जैन ग्रंथ अप्रामाणिक हैं " इन दो विषयों पर शास्त्रार्थ करना चाहता हूँ। उपस्थित दि० जैन नवयुवकों ने कर्मानन्द जी का चैलेंज स्वीकार कर लिया।

तदनुसार शास्त्रार्थके विषय "१ क्या ईश्वर जगत कर्ता है? २ क्या जैन तीर्थंकर सर्वज्ञ थे? ३ क्या वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं? ४ क्या जैन ग्रंथ प्रामाणिक हैं? ५ सत्यार्थप्रकाश में जैन धर्मके विषय में असत्य उल्लेख? " यह पांच नियत किये गये। प्रत्येक विषय के लिये एक२ दिन नियत हुआ। स्थान- स्थानीय सेवासमिति आश्रम तय हुआ। समय रातके ८ बजेसे ११ बजे तक निश्चित हुआ। सभापति दोनों के पृथक२ रहें। आदि.

तदनुसार १७ सितम्बर से शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। जैन समाज की ओर से श्रीमान पं० अजितकुमार जी शास्त्री सभापति थे और आर्यसमाज की ओर से श्रीमान पं० रामदयालु जी सभापति थे। जनता लगभग डेढ़ हजार की संख्या में उपस्थित थी जैन समाज की ओर से वक्ता श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ और आर्यसमाज की ओर से श्रीमान स्वा० कर्मानन्द जी थे. मुलतान का शास्त्रिमंडल तथा इतर जिज्ञासु बुद्धिमान पुरुष पर्याप्त संख्या में शास्त्रार्थ देखने आये।

क्या ईश्वर जगत कर्ता है?

इस विषयपर पूर्व पक्ष जैनसमाज का और उत्तर पक्ष आर्यसमाजका था। जैनसमाजकी ओरसे "ईश्वर जगत कर्तृत्व के खंडन में निम्न लिखित युक्तियां दी गईं।

(१) ऋग्वेद का एक मंत्र बतलाता है कि यह जगत किसी ने बनाया है इस को कोई नहीं जानता शायद परमात्मा जानता होगा?

(२) सत्यार्थप्रकाश के लिखे अनुसार जंगल में अनेक वृक्ष आदि स्वतः भी उत्पन्न होते हैं।

(३) जगत रचना से पहले ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष तक की प्रलय असिद्ध है उसके बिना सृष्टिरचना सिद्ध नहीं हो सकती।

(४) सर्वव्यापक परमात्मा सृष्टि रचना के लिये परमाणुओं में क्रिया नहीं कर सकता।

(५) बिना माता पिता या गर्भाशय के गर्भज. अंडज, मनुष्य, पशु आदि उत्पन्न नहीं हो सकते।

(६) जगत रचना और जगत प्रलय करने का परस्पर विरुद्ध स्वभाव परमात्मा में एक ही समय है तब परमात्मा न तो जगत बना सकता है और न उसकी प्रलय ही कर सकता है।

(७) कार्य की व्याप्ति कारण के साथ है, कर्ता के साथ नहीं है अनेक प्राकृतिक कार्य जलवर्षा आदि विना बुद्धिमान कर्ता के होते हुए भी दीख पड़ते हैं। इस कारण बीज वृक्ष, पितापुत्र आदि परम्परा से यह जगत अनादि सिद्ध होता है निराकार, सर्वव्यापक, निर्विकार परमात्मा इस को किसी तरह नहीं बना सकता।

उत्तरपक्ष

इसके उत्तर में आर्यसमाज की ओर से निम्नलिखित युक्तियां रक्खी गईं—

१- परमाणुओं से यह जगत बना है अतः पहले परमाणु थे यह साबित होता है।

२- प्रत्येक कार्य बुद्धिमान कर्ता के बिना बनाये नहीं बनता जैसे घट पट आदि। जगत भी एक बड़ा भारी कार्य है इसको परमात्मा ही बना सकता है।

३ परमात्मा सर्वशक्तिमान है वह बिना क्रिया किये भी परमाणुओं को मिला कर जगत रचना कर देता है।

४- सृष्टि-प्रलय दिन रात के समान होते हैं।

५- स्वा० दयानंद जी ने पूर्ण ऋग्वेद का भाष्य नहीं किया अतः उस बतलाये गये ऋग्वेद मंत्र के भाष्य को हम प्रामाणिक नहीं मानते।

इसके उत्तर में पं० राजेन्द्रकुमार जी ने प्रलय की असिद्धि, ईश्वर की सर्वशक्तिमत्ता का खंडन बहुत ज़ोरदार युक्तियों से किया तथा उस वेद मंत्र का भावार्थ आर्यसमाजी विद्वान श्रीमान पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ का उपस्थित किया।

इस प्रकार प्रथम दिन का शास्त्रार्थ बहुत सफलता के साथ समाप्त हुआ।

क्या जैन तीर्थङ्कर सर्वज्ञ थे ?

इस विषय पर दूसरे दिन पूर्वपक्ष आर्यसमाज का और उत्तरपक्ष जैनसमाजका था। आर्यसमाज की ओर से निम्नलिखित युक्तियां रक्खी गईं—

१-ऋषभनाथ महावीर आदि तीर्थङ्कर हुये हैं प्रथम तो यह बात ही इतिहास से सिद्ध नहीं होती उनकी सर्वज्ञता की बात तो दूर की है।

२-जैन ग्रन्थों में तीर्थङ्करों के जन्मकल्याणक, लाख योजन का ऐरावत हाथी, मायामयी बालक बनाने आदि की बातें निराधार एवं असंभव हैं।

३- एक साधारण मनुष्य पढ़ लिख कर योग्यता हासिल करना चाहे तो कुछ सीमा तक ही ज्ञान प्राप्त कर सकता है अनंत, असीम ज्ञान उसको नहीं हो सकता अतः माता के उदर से जन्म लेने वाले तीर्थङ्कर सर्वज्ञ नहीं हो सकते।

४- जैन ग्रंथ सर्वज्ञ प्रणीत कहे जाते हैं उनमें कहीं कहीं परस्पर विरोधी कथन मिलता है सर्वज्ञों के कथन में परस्पर विरोध नहीं हो सकता।

५-भगवान महावीर महात्मा बुद्ध के समकालीन थे फिर इतिहास में उनकी सर्वज्ञता का पोषक प्रमाण क्यों नहीं पाया जाता ?

उत्तरपक्ष

उत्तर में श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी ने कहा

१— भगवान ऋषभदेव का अस्तित्व मुहुन-जोदारोकी ५ हजार वर्ष पुरानी सीलों से, भागवत, सत्यार्थप्रकाश, वेद आदि ग्रंथों से तथा भगवान महावीर का अस्तित्व प्राचीन बौद्ध ग्रंथों से एवं आधुनिक इतिहास से सिद्ध होता है।

२— ऐरावत हाथी एक देव का विक्रिया रूप है ऐसी विक्रियाशक्तिका समर्थन वेद, योग दर्शन भी करते हैं स्वर्ग से चलते समय वह हाथी लाख योजन का होता है यहां मध्य लोक में आकर भी वह लाख योजनका ही था यह बात नहीं है। माया मयी बालक चिरस्थायी असल बच्चा नहीं होता बल्कि विक्रिया रूपमें बालक के समान खिलौना सा होता है।

३— जीव के ज्ञान की कोई सीमा नहीं है कोई साधारण विद्वान है कोई १०-२० भाषाओंका जानकार विशेष विद्वान है कोई उस से भी बढ़कर विद्वान हो सकता है। मणिमोहन कुमारी १० वर्ष की आयु में एम० ए० की गणित पढ गयी थी। इसी तरह अगर ठीक उपाय के अवलंबन से कोई मनुष्य ज्ञान के आवरण कर्म को दूर कर दे तो वह पूर्ण ज्ञानी सर्वज्ञ हो सकता है उस में कोई बाधा नहीं क्योंकि सर्वज्ञता जीव का स्वभाव है जो कि आवरण से छिपी हुई है आवरण नष्ट हो जाने पर प्रगट हो जाती है।

४— जैनग्रंथों में असंभव अप्रामाणिक बातें नहीं है यह बात परसों सिद्ध कर दी जायगी। जैनग्रन्थ जैनाचार्यों के लिखे हुये हैं स्मृतिदोष से उनमें कहीं त्रुटि हो सकती है इससे तीर्थङ्करों की सर्वज्ञता पर कुछ लांछन नहीं आता।

५— "भगवान महावीर सर्वज्ञ थे" यह बात बौद्ध ग्रंथ (बुद्धचर्या आदि) महात्मा बुद्ध के मुखसे प्रगट करते हैं जो कि उन्हों ने जैन साधुओं के कथनानुसार कही थी। महात्मा बुद्ध ने उसका कहीं भी खंडन नहीं किया। न्याय बिन्दु आदि ग्रंथ, डा० विमलचरण जी आदि विद्वान भी भगवान महावीरकी सर्वज्ञता को प्रमाणित करते हैं।

स्वामी कर्मानन्द जी ने अल्पज्ञ के सर्वज्ञ न हो सकने के लिये बहुत जोर लगाया किन्तु वे न तो मनुष्य के ज्ञान की सीमा बतला सके और न मुक्त जीवों के पूर्ण ज्ञान (सर्वज्ञता) का ही निराकरण कर सके।

इस तरह दूसरे दिन का शास्त्रार्थ भी सफल रहा।

क्या वेद ईश्वरीय ज्ञान है?

इस विषय पर तीसरे दिन पूर्वपक्ष जैन समाज का और उत्तरपक्ष आर्यसमाज का था। आज अंबाला से शास्त्रार्थ देखने के लिये श्रीमान ला० शिब्बामल जी भी आ गये थे।

पूर्वपक्ष में पंडित जी ने कहा कि—

१ - शब्द मूर्तिमान पदार्थ के संयोग या वियोग से तथा कंठ तालु आदि से उत्पन्न होता है। अतः निराकार अमूर्तिक परमात्मा शब्दसमूह रूप वेद का देने वाला होना असंभव है।

२— वेदों में वामदेव, देवापि आदि का इतिहास विद्यमान है जिसका समर्थन निरुक्त करता है अतः वेद ऋषियों के बनाये मंत्रों का समूह है।

३— स्वामी दयानंद जी के भाष्यानुसार वेदों में असंभव बातें (जैसे बकरे का दूध, घोडे की लीद से

तत्वज्ञान की प्राप्ति आदि) लिखी हुई है अतः वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं हो सकता।

४- वेद मंत्रों पर मंत्र रचयिता ऋषियों के नाम विद्यमान हैं तथा उनमें ऋषियों के रहन, सहन उनके गाय, भेड़, बकड़े आदि पदार्थोंका उल्लेख विद्यमान है अत वेद ऋषि कृत हैं।

५- वेदों में वनगाय आदि के मारने का उपदेश है अत वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं हो सकते।

उत्तरपक्ष—

में स्वामी कर्मानन्द जी ने प्रायः स्वामी दयानन्द जी के भाषा भाष्यकी गलती या प्रेस की अशुद्धि ही बतलाई। तथा वेद मंत्रों में उल्लिखित इतिहास को गलत बतलाया इस बात के लिये आप महर्षि यास्क को भी प्रमाण रूप न मान सके।

पं० राजेन्द्रकुमार जी ने अपना प्रतिपादित विषय पुन जमाया कि १०० वर्ष बीतने पर भी स्वा० दयानन्द भाष्य शुद्ध नहीं हो पाया और आशा है कि जब तक वह शुरूसे अंत तक न बदला जाय आक्षेपोंसे बच नहीं सकता।

स्वा० कर्मानन्द जी वेद की ईश्वरीयता सिद्ध नहीं कर सके। आजके शास्त्रार्थ का प्रभाव आर्यसमाज पर भी अच्छा पड़ा।

क्या जैन ग्रन्थ प्रामाणिक हैं?

इस विषय पर चौथे दिन शास्त्रार्थ हुआ आज पूर्वपक्ष आर्यसमाज का और उत्तरपक्ष जैन समाज का था पूर्व पक्ष में स्वा० कर्मानन्द जी ने निम्नलिखित युक्तियां उपस्थित की।

१- निराकार ईश्वर से जैसे शब्दरूप वेद न होने की कल आपने दलील दी थी वही युक्ति जैन ग्रंथों के विषय में लागू होती है वीतरागी निराकार तीर्थङ्कर से जैन शास्त्रों की रचना नहीं हो सकती अत जैन ग्रंथ सर्वज्ञ प्रणीत न होने से प्रामाणिक नहीं हैं।

२ जैन ग्रथोंमें भिल कौवे का मांस न खाकर अन्य मांस खाते हुए भील को स्वर्ग जाना लिखा है इस प्रकार वे मांस भक्षण का समर्थन करते हैं।

३ जैन ग्रथोंमें तीर्थंकरोंका महाविशाल ऊंचा शरीर, लाखों वर्षोंकी आयु लिखी है जो कि अनुमानसे असंभव ठहरती है इस लिये जैनग्रंथ प्रामाणिक नहीं।

४- हनुमान तथा विष्णुकुमार के बहुत विशाल शरीर बनाने की असंभव बात जैनग्रंथमें लिखी है इस लिये वे अप्रामाणिक हैं।

उत्तरपक्ष—

में पं० राजेन्द्रकुमार जी ने कहा कि तीर्थकर सशरीर होते हैं आपके परमात्माके समान अशरीर नहीं होते जिससे कि उन के द्वारा उपदेश होना असंभव हो। गुरु शिष्य परम्परा से स्मृति रूपमें चला आया वह तीर्थंकरों का उपदेश जैन आचार्यों ने शास्त्र रूप में निर्माण किया। जैन ग्रंथ चाहे जिसने लिखे आप उनमें दोष बतलाइये।

भीलने अपनी असाध्य बीमारी के समय भी औषध रूपमें काकमांस को न खाया क्योंकि वह उस का त्याग कर चुका था उस त्याग के कारण स्वर्ग गया, न कि मांस खानेके कारण। जैनग्रंथों में सर्वत्र अहिंसा का उपदेश है।

शरीर का प्रमाण पहले के मनुष्यों का बहुत बड़ा होता था वह बड़े बलवान और बड़े आयुष्मान होतेथे

यह बात स्वा० दयानन्दजीकी मान्य बाल्मीकि रामायण में भी लिखी है। तथा योगदर्शन और आर्यसमाज के मान्य विद्वान की लिखित 'योगरहस्य' में भी लिखा है कि योग के कारण मनुष्यको अणिमा महिमा आदि ऋद्धियां प्राप्त हो जाती हैं जिससे वे जमीन पर बैठे हुए उंगली से चन्द्रमा को छू सकते हैं। हनुमान विद्याधर थे और विष्णुकुमार ऋषि ऋद्धिधारक थे अतः उन्हों ने शरीर बड़ा कर लिया इसमें असंभवता की क्या बात है। इत्यादि।

आज स्वा० कर्मानन्द जी योगदर्शन को हिचकिचाहट के साथ प्रमाणरूप मानते हुए दर्बी जुबान दीर्घकाय, दीर्घआयु की बात स्वीकार कर गये।

सत्यार्थ प्रकाशमें जैनधर्म विषयक असत्य उल्लेख है ?

पाँचवें दिन इस विषय पर शास्त्रार्थ हुआ आज पूर्वपक्ष जैनसमाज का और उत्तर पक्ष आर्यसमाजका था। पूर्वपक्ष में पं० राजेन्द्रकुमार जी ने निम्नलिखित बातें रक्खीं।

१— सत्यार्थ प्रकाश में जैनधर्म को बौद्धधर्म की शाखा लिखा है जो कि युक्ति, इतिहास से गलत है। पंडित जी ने इसके अनेक ऐतिहासिक प्रमाण दिये।

२— सत्यार्थप्रकाश में जो कपट जैन मुनियों द्वारा विष खिलाने से शंकराचार्य की मृत्यु होना लिखा है जो कि शंकरदिग्विजय आदि से असत्य सिद्ध होती है।

३— "सर्वज्ञो दृश्यते तावत्" इत्यादि ३ श्लोक मीमांसकों के हैं किन्तु उनको जैनग्रन्थों का समझकर सत्यार्थप्रकाश में लिखा गया है।

४— सत्यार्थप्रकाश में १० हजार कोस का योजन जैनग्रन्थानुसार बतलाया है सो निराधार है।

५— सत्यार्थप्रकाश में 'प्र..रत्नसार' जैनग्रन्थानुसार जो आस्तिक नास्तिक [illegible] लि[illegible] है [illegible] ग्रन्थ में वहां नहीं मिलता है। इस कारण सत्यार्थप्रकाश का जैनधर्म विषयक उल्लेख गलत है।

उत्तरपक्ष

स्वा० कर्मानंद जी ने कहा कि ५-५ मिनट का समय रखकर केवल क्रमशः एक एक विषय पर विचार करना चाहिये। तदनुसार ही किया गया।

स्वामी कर्मानंद जी को पूर्वपक्ष की ओर झुकना पड़ा और आपने जैन पक्ष स्वीकार करते हुये कहा कि आपको सार्वदेशिक आर्यसमाज, वैदिक यन्त्रालय अजमेर तथा अन्य मुख्य आर्यसमाजी संस्थाओं के साथ पत्र व्यवहार करके सत्यार्थ प्रकाश में ये त्रुटियां सुधरवानी चाहिये।

आज भीड़ सबसे अधिक थी तथा शान्ति भी पिछले दिनों से अधिक थी एवं आज जैन समाजकी विजय भी इतर शास्त्रार्थों की अपेक्षा सबसे अधिक थी।

अन्तमें सेवासमिति आश्रमके संचालकोंको, उपस्थित जनता एवं आर्यसमाज को धन्यवाद देते हुए शास्त्रार्थ का काम समाप्त होगया।

इस प्रकार श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी के कारण मुलतान में जैनधर्म की अभूतपूर्व प्रभावना हुई जिसके लिये मुलतान का जैन समाज पंडित जी का और शास्त्रार्थ संघका बहुत आभारी है।

शास्त्रार्थ संघको मुलतान से करीब सौसौ रुपये सहायता होगई जिसमें लगभग ६०० रुपये उपदेशक विद्यालय के लिये हैं।

एक श्रद्धालु मुस्लिम

[श्रीमान अब्दुल रज्जाक नामक एक मुसलमान सज्जन हैं। जिनको जैनधर्म से प्रेम है। इस धार्मिक प्रेमके कारण आप अपने मूढ मुसलमानों के कोपभाजन बने हुए हैं। किन्तु आप अपनी मान्यता पर दृढ है। णमोकार मंत्र की श्रद्धा ने आपको किन आपत्तियों से बचाया। पाठकों के अवलोकनार्थ आपका वह पत्र जैनमित्र से उद्धृत कर यहां प्रकाशित करते हैं।]

मैं ज्यादातर देखता और सुनता हूँ। कि हमारे बहुतसे जैन भाई धर्म की ओर ध्यान भी नहीं देते। और जो थोड़ा बहुत कहने सुनने से देते भी हैं तो वे सामायिक और णमोकार मंत्र के प्रकाश से महरूम हैं। यानी अभीतक वे इसके महत्व को नहीं समझे रात दिन शास्त्रोंका स्वाध्याय करते हुये भी अन्धकार की ओर बढते जा रहे हैं। अगर उनसे कहा जाय कि भाई सामायिक और णमोकार मंत्र आत्माको शांति पैदा करनेवाला और आये हुये दुःखोंको टालने वाला है. तो वे इस तरह से जवाब देते है कि वाह णमोकार मंत्र तो हमारे छोटे २ बच्चे जानते हैं। इसको आप क्या बताते हैं लेकिन मुझे अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि उन्होंने सिर्फ दिखाने की गरज से मंत्र को रट लिया है। उस पर दृढ विश्वास नहीं हुआ न उसके महत्व ही को समझे। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि इस मंत्र पर श्रद्धा रखने वाला हर मुसीबत से बच सकता है। क्योंकि मेरे ऊपर ये बातें बीत चुकी हैं।

मेरा नियम है कि मैं जब रातको सोता हूँ तो णमोकार मंत्र पढता हुआ सो जाता हूं। एक मरतबा जाडेकी रातका जिक्र है कि मेरे साथ चारपाई पर एक बडा सांप लेटा रहा, किन्तु मुझे खबर ही नहीं स्वप्न में जरूर ऐसा मालूम हुआ जैसे कोई कह रहा है कि उठ सांप है. तो मैं दो चार मर्तबा उठा और उठकर लालटेन जलाकर नीचे ऊपर देखकर फिर लेट रहा। लेकिन मंत्रके प्रताप से जिस ओर सांप लेटा था उधर से एक मर्तबा भी नहीं उठा। जब सुबह हुआ मैं उठा और चाहा कि बिस्तरे लपेट लूं। तो क्या देखता हुं कि एक बड़ा मोटा सांप लेटा हुआ है। मैंने जो पल्ला खींचा तो वह झट उठ बैठा और पल्लाके सहारे नीचे उतर कर अपने रास्ते चला गया।

दूसरे अभी दो तीन माहका जिकर है कि जब मेरी बिरादरी वालों को मालूम हुआ कि यह जैनमत पालने लगे हैं तो उन्होंने एक सभा की उसमें मुझे बुलवाया गया। मैं जखोरा से झांसी जाकर सभा में शामिल हुआ। हरएक ने अपनी २ राय के अनुसार बहुत कुछ कहा सुना और बहुत से सवाल पैदा किये जिसका कि मैं जवाब भी देता गया। बहुतसे महाशयों ने यह भी कहा कि ऐसे आदमी को मार

डालना ठीक है लेकिन अपने धर्ममें दूसरे धर्म में न जाने पावे। इस तरह जिसके दिल में जो बात आई कही। अंतमें लोग सब अपने २ घर चले गये। मैं भी अपने कमरे में चला आया, क्योंकि मैं जब अपने मातापिताके घर आता हूँ तो एक दूसरे कमरेमें ठहरता हूँ। और अपने हाथसे भोजन पकाकर खाता हूं उनके हाथका बनाया हुआ भोजन नहीं खाता। जब शामका समय हुआ यानी सूर्य अस्त होने लगा तो मैंने सामायिक करना आरंभ किया और सामायिक से निश्चिन्त होकर जब मैंने आंख खोली तो देखता हूँ कि एक बड़ा काला सांप मेरे आसपास चक्कर लगा रहा है और दरवाजे पर एक बर्तन रखा हुआ मिला जिससे मालूम हुआ कि कोई इसमें बन्द कर के यहां छोड़ गया है।

लेकिन उस सांपने मुझे कोई नुकसान नहीं पहुंचाया। मैं वहां से डरकर आया और लोगों से पूछा कि ये काम किसने किया, परन्तु कोई पता न लगा। दूसरे दिन सामायिक के समय जब सांपने पास वाले पड़ोसी के बच्चे को डस लिया तब वह रोया और कहने लगा कि हाय मैंने बुरा किया कि दूसरे के वास्ते चार आने पैसे देकर वह सांप लाया था, उसने मेरे ही बच्चे को काट लिया। तब मुझे पता चला, बच्चेका इलाज हुआ, मैं भी इलाज कराने में लगा रहा परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। वह बच्चा मर गया। उसके १५ दिन बाद वह आदमी भी मर गया उसके वही एक बच्चा था।

देखिये सामायिक और णमोकार मंत्र कितना जबरदस्त स्तम्भ है कि आगे आया हुआ काल प्रेमका बर्ताव करता हुआ अपने रास्ते चलागया।

कोई महाशय इन लिखी हुई बातों को झूठा न समझे। क्योंकि झूठ बोलना महापाप है। दूसरे मुझे किसी से लेन देन या व्यापार करने की आवश्यकता नहीं है जो मैं झूठ बोलूं। जो बात सच है आपके सामने रखदी है, मानो या न मानो आपको अख्त्यार है। मैं अपने विद्वान जैन भाइयों से प्रार्थना करता हूँ कि वे अपने जैन भाइयों को उन्नति के रास्ते पर लगाते हुये दूसरी जाति वालों से प्रेमका बर्ताव रख उनके पास उठें बैठें और उनको अपने धर्म की बातें बतावें ताकि उनको कुछ ज्ञान प्राप्त हो। साथ ही साथ जैनधर्म की उन्नति हो। मेरे पास इस मास में ला० बल्देवसिंह जैन चाँदनी चौक देहली वालों ने जैनधर्म की किताबें भेजी हैं। मैं उनको हार्दिक धन्यवाद देता हूं और आशा है कि और महाशय भी कृपादृष्टि करेंगे।

मास्टर अब्दुल रज्जाक-जखौरा (झांसी)

सं० अभिमत— जिस अमूल्य रत्न को आपने एक साधारण वस्तु समझ रक्खा है, तुम्हारे घरके उस अमूल्य रत्न का जौहरी एक भाग्यवान मुसलमान भाई बना है। तुम्हारे रत्नका मूल्य उसने अनुभव से आंका है। अब आपको उस अनुभव का सन्मान करके णमोकार मंत्रके महत्व को हृदयंगम करना चाहिये।

सासनी में धर्म प्रभावना

यहां पर आर्यसमाज ने अपना उत्सव ता० २५-२६-२७ अगस्त में करने का विज्ञापन देते हुये प्रत्येक को शास्त्रार्थ करने का चैलेंज दिया था जिस पर जैन समाज ने स्वीकृति देकर समय स्थान नियत,

आदि निश्चित कर अपनी ओर से शास्त्रार्थ का प्रबन्ध करने की अनुमति ता० १८-८-३५ को ही मांगी थी परन्तु मन्त्री आर्यसमाज ने कोई उत्तर न देकर मौन धारण कर लिया। किन्तु जब उत्सव में संयुक्त प्रांतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक पं० शिवशर्मा जी ने स्टेज पर खुले रूप से जैनियों को नास्तिक और विद्वेषी कहा तथा श्रीरामचन्द्र जी जैसे महापुरुष पर पद्मपुराण द्वारा भोग विलास संबन्धी घृणित लांछन लगाया जिससे सामनी के जैनी क्षोभित हुये तो जैन समाज ने भी सचेष्ट हो कर इस का उत्तर देने के लिये तुरंत पंडित राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ अम्बाला को आमंत्रित किया जिसको स्वीकार कर पंडित जी तुरंत ही सासनी पधार आये ता० ३० ८-३५ को आपने नास्तिक और विद्वेषी शब्दों का शास्त्रोक्त अर्थ बतलाते हुये जैनियों को आस्तिक सिद्ध किया तथा सत्यार्थप्रकाश में साबित करके बतलाया कि स्वामी दयानन्द जी ने दूसरे धर्म वालों के मान्य गुरुओं पर कितने विद्वेष भरे कटाक्ष किये हैं जिससे आप ही विद्वेषी सिद्ध होते हैं जैन नहीं। तत् पश्चात् ईश्वर को जगत रचियता मानने का खंडन करते हुये सच्चे ईश्वर का स्वरूप बतला कर मूर्तिपूजा की उपयोगिता पर प्रभावशाली भाषण दिया और बतलाया कि पंडित शिवशर्मा जी ने श्री रामचन्द्र जी जैसे महापुरुष पर शास्त्र द्वारा ऐसे घृणित लांछन लगाकर अपने हृदय की कलुषता ही प्रगट की है। आपकी भाषणशैली से क्षोभित होकर आर्यसमाज ने अपनी ओर से डाक्टर बालकृष्ण शास्त्री को खड़ा किया जिन्होंने उदाहरण द्वारा ईश्वरको जगतकर्ता सिद्ध करनेकी चेष्टा की। श्रीमान पंडित जी ने शांति पूर्वक उसको श्रवण करके उनके ही शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा उनके विषय का खण्डन किया पुनः जीवात्मा के ईश्वर होने का प्रभावशाली महत्व जन साधारणपर प्रकाशित किया तब डाक्टर बालकृष्ण जी को चुप होकर बैठ जाना पड़ा। अंतमें जैनधर्मके जयकारके साथ सभा विसर्जित हुई और सभापति राय साहिब हकीम कल्याणराय जी अलीगढ़ निवासी ने आगंतुक सज्जनों तथा जन साधारण को धन्यवाद देते हुये सभी समाजोंसे परस्पर प्रेम भाव बनाये रखने का मार्मिक अनुरोध किया जैन समाज ने पं० राजेन्द्रकुमार जी की भाषण शैली से प्रसन्न होकर शास्त्रार्थ संघ अम्बाला को २१) भेंट दिये।

भवदीयः
नेमिचन्द्र जैन
सभापति जैनसमाज सासनी

स्याद्वाद महाविद्यालय बनारस

गत चार वर्ष से श्री दशलक्षण पर्व में उक्त विद्यालय से तीन विद्यार्थी प्रतिवर्ष शास्त्र पढ़ने व अन्य धार्मिक कार्य करने के लिये मिर्जापुर बुलाये जा रहे हैं प्रतिवर्ष जुदे जुदे विद्यार्थी यहां आते है यानी जो विद्यार्थी पहले वर्ष आते है दूसरे वर्ष दूसरे आते हैं इस तरह से चार वर्षोंमें कुल बारह विद्यार्थी यहां आये हैं इन १२ विद्यार्थियों के आचरण व धार्मिक ज्ञान की जितनी प्रशंसा की जाय वह सब थोड़ी है किसी किसी विद्यार्थी के अन्दर तो ऐसे ऊंचे विचार पाये जाते हैं जो कि भविष्यमें सिर्फ जैन समाज के ही नहीं बल्कि पूरे भारतवर्ष के मस्तक को ऊंचा करेंगे। अब विचारने की बात है कि जिस

संस्था से ऐसे योग्य विद्यार्थी तयार हों और फिर भी समाज में उसके खिलाफ जहर उगला जाय तो यह कितनी घृणास्पद बात है हमेशा से और आजकल भी बनारस भारतवर्ष में विद्या का केन्द्र माना जाता है। ऐसी जगह में जैनियों का कोई बड़ा भारी विद्यालय होना चाहिये था। इसके अभाव को हर एक कर्तव्यशील पुरुष अनुभव करेगा। इस लिये हमको चाहिये कि इस छोटे से विद्यालय को एक बड़ा भारी विद्यालय बनाने की कोशिश करते रहें। किन्तु हम इसके प्रतिकूल ही चल रहे हैं। जैनगजट में इसके खिलाफ लेख निकलते हैं। खिलाफ लेख लिखना बुरा नहीं बलिक अच्छा है यदि वह सुधार की दृष्टि से लिखे जांय मगर मैं तो देखता हूँ कि न तो लेखक महाशय ही और न जैनगजट के संचालक महाशय ही इसका कोई प्रबन्ध करने का कष्ट उठाने की कृपा करते हैं। केवल अपने दग्ध हृदय को शान्त करने के लिये पत्र में जो दिल में आया लिख मारते हैं। यदि बाबू हरिश्चन्द्र जी तथा बाबू सुमतिलाल जी अपना स्वार्थ पूर्ण करने के लिये इसका प्रबन्ध ठीक नहीं करते हैं तो समाज को चाहिये कि उनको विद्यालयसे पृथक करदे। जैन समाज से मेरी नम्र प्रार्थना है और समाज का यह पवित्र कर्तव्य भी है कि यदि विद्यालय के मौजूदा संचालक गण ठीक प्रबन्ध नहीं करते हैं तो उनको पृथक करके विद्यालय के खिलाफ विद्वान लेखक को या जैन गजट के संचालक गण को या किसी तीसरे योग्य व्यक्ति को इस विद्यालय का सुप्रबन्ध करने के लिये नियुक्त करदे मगर यह तो नहीं होना चाहिये कि बाबू हर्षचन्द्र जी व बाबू सुमतिलाल जी की अयोग्यता से विद्यालय रसातल को चला जाय। अब अन्त में मेरी यही विनम्र प्रार्थना है कि या तो विद्यालय का सुप्रबन्ध करने का कष्ट उठाइये और नहीं तो वृथा ही ऐसी उपयोगी संस्था को नष्ट करने का कष्ट न उठाइये। मैं ने यह लेख किसी द्वेष भाव से नहीं लिखा है मैंने तो सिर्फ इस लिये लिखा है कि जैनसमाज में वैसे ही संस्थाओं की कमी है और फिर जो इनी गिनी धार्मिक संस्थाएं हैं उनको भी हम नष्ट करते जांयगे तो इसका फल बहुत कडुआ होगा। जैनी मात्र का कर्तव्य है कि वह हर संस्था के उन्नति करने की कोशिश करे न कि उसे नष्ट करने की।

यदि किसी को यह चन्द शब्द बुरे मालुम हों तो क्षमा प्रार्थी हूँ।

हरिश्चन्द्र जैन ओवरसियर
मिरजापुर

सम्पादकीय टिप्पणियां

शोक

अग्रवाल जाति में रानीवालों का परिवार एक प्रख्यात प्रमुख परिवार है। रानीवाले परिवार में भी ब्यावर वाले स्व० सेठ चम्पालाल जी का परिवार अग्रगण्य है। श्रीमान स्व० सेठ चम्पालाल जी ने अपना जीवन जो धर्म साधन तथा धन जन वैभव-वृद्धि के साथ बिताया अब तक जिन्हें प्रायः इष्टवियोग. अनिष्ट संयोग का अप्रिय प्रसंग प्राप्त नहीं हुआ ऐसा सौभाग्य भी किसी विरले व्यक्ति को प्राप्त होता है आपके सातों सुपुत्र धार्मिक, विनयी, निरभिमानी एवं प्रसन्नचित्त रूप लेकर प्रकाश में आये। इस आदर्श परिवार के बीजभूत श्रीमान सेठ चम्पालाल जी को स्वर्गयात्रा किये अभी अधिक दिन नहीं हुये थे कि इस घर का एक और भी प्रकाशमान दीपक बुझ गया।

श्रीयुत कुंवर पन्नालाल जी एक होनहार सहृदय नवयुवक थे "पन्ना बाबू" के नाम से आपको पुकारा जाता था गत दशलक्षण पर्व में ६ सितम्बर को दिन के ६ बजे आप भी इस मानव शरीर को छोड़ कर दिव्य शरीर प्राप्त करने चल दिये। आपके इस असमय वियोग पर जितना शोक प्रकाशित किया जाय थोड़ा है।

श्रीमान राय साहिब सेठ मोतीलाल जी एवं कुंवर तोलाराम जी आदि महानुभावों को सांसारिक दशा पर दृष्टिपात करते हुये शोक छोड़ देना चाहिये।

वीर पं० रामचन्द्र जी शर्मा

भारतवर्षमें इस समय भी उन क्रूर हृदय हिंदुओं की सत्ता समाप्त नहीं हुई है जो देव आराधना या धर्म के नाम पर मूक, निरपराध बकरे आदि जानवरों का बलिदान करके अपने आपको धर्मात्मा समझते हैं। दक्षिण प्रान्त में कुछ दिन पहिले ब्राह्मण जातिको लज्जित करने वाले ऐसे कुछ लोगों ने अजमेध यज्ञ किया था जिसमें अन्य लोगों के बहुत रोकने पर भी उन ब्राह्मण पंडितों ने अनेक बकरों को काट कर अपना यज्ञ समाप्त किया। काली देवी या दुर्गादेवी को प्रसन्न करने के लिये उनके भक्त जन अनेक स्थानों पर अब भी अगणित बकरों को तलवार के घाट उतारा करते हैं। काली कलकत्ते वाली का भी यही हाल है। अंध श्रद्धालु बंगाली कालिका मंदिरमें बकरों को काट काट कर मंदिर के आंगन को खून से रंग देते हैं। यदि सचमुच बलिदान पवित्र धार्मिक कार्य है तो उन मूढ़ भक्तों को अपने सर्वप्रिय पदार्थ पुत्र आदि का बलिदानकर पुण्य संचय करना चाहिये किन्तु इस काम को वे मूर्ख, स्वार्थी पापकार्य मानेंगे।

साथ ही उन मान्य पुरुषों की भी नास्ति नहीं है जो कि अपना सर्वस्व समर्पण कर ऐसी निन्द्य धर्म क्रिया का नाम निशान मिटा देना चाहते हैं। उन विरले पुरुषों में से एक श्रीमान **"पं० रामचन्द्र जी शर्मा"** भी हैं। पंडित जी गौड़ जातीय ब्राह्मण हैं आपकी जन्मभूमि जयपुर है। आप अपने पिता के इकलौते पुत्र हैं। आप सुंदर सुडौल २६ वर्षीय नवयुवक हैं। आपने अपने सर्वप्रिय प्राणों की बाजी लगाकर मांगरोल स्टेट, जबलपुर, कल्याण आदि अनेक स्थानों पर धर्म के नाम पर होने वाले पशुवध को रुकवा दिया है। अब आपने कलकत्ते के काली मंदिर में होने वाले बकरों के कत्ल को रुकवाने के लिये भीष्म प्रतिज्ञा की है। आपने कलकत्ते पहुंच कर अपने प्रभावशाली भाषणों द्वारा हिन्दू जनता को

घरेलू चिकित्सा—

१—स्वप्नदोष पर-सतगुइलेल, बबूल की गोंद शुद्धपाक, मिश्री इन ३ चीजों से मिश्री दूनी लेवें। और पावभर गायके दूध में)॥ भर दवा डालकर दोनों समय पीवें।

२—पेशाब की जलन पर—फिटकरी का फूला १ तो० इलायचीदाना आधा तोला, शीतल चीनी १ तो० सबको पीसकर एक आनेभर दवाई २॥ तो० चांवल के धोवन से पिये।

३—सुजाकका चूर्ण— आमी हलदी, आँवला, शंख फूली, थोल्कार का गूदा, कलमी शोरा सम भाग और मिश्री सबके बराबर लेकर कपड़ छानकर पाव भर खुराक दूध या पानी से खावे।

४—पेशाब रुकने पर—कलमी शोरा, ककड़ी के बीज और श्वेत दूब, इनको पीसकर १ तो० मिश्री और पाव भर दूध में पैसेभर दवा डाल कर पीवे।

५—धातुस्राव पर - बबूल की गोंद कुल्लकी गोंद, सेमर की गोंद, शालिम मिश्री बड़ी गोखरू, बिदारी कंद, सत मुलहटी इन सबके बराबर मिश्री लेवें। और पाव भर धारोष्ण गाय के दूध में १ तो० दवाई पीवें। —उत्तमचंद जैन लखनादौन

देश समाचार—

धनिक भिखारिन—अभी पटियाला की 'गणेशी' नामक भिखारिन मरी है। मृत्यु के बाद उसके घर से ५० हजार रुपये का माल प्राप्त हुआ है। निःसन्तान होने से सब माल खजाने में चला गया।

—काठियावाड़ में एक लड़की लड़का होगई है।

तदकारा (जयपुर) गाँव में एक ऐसा बच्चा उत्पन्न हुआ जिसका मुख आदमीका सा था शेष सारा शरीर (धड़) काले सांपका था। कुछ दिन बाद वह मर गया।

श्रीमती कमला नेहरू का स्वास्थ्य सुधर रहा है। एक ज्योतिषी के कथनानुसार उनके जीवन को कोई खतरा नहीं है।

—कनकपली (दक्षिणभारत) के किसान को खेत जोतते समय ६ हजार रुपये की कीमत का एक हीरा मिला है।

—अंग्रेजी फैशन के गुलाम भारतीय स्त्री पुरुष पाउडर सेण्ट, क्रीम, स्नो, साबुन, तेल, आदि शृङ्गार की चीजों के लिये १६ करोड़ रुपया वार्षिक विदेशों को भेजने लगे हैं।

—पंजाब प्रान्तके कुछ जिलों में सिक्खों के सिवाय अन्य लोगों को तलवार रखने की मनाही थी। किन्तु अब वह रोक हटाली है। अब सब कोई अपने पास तलवार रख सकता है!

शहीदगंज (लाहौर) की मस्जिद गिराकर गुरुद्वारा बनाने के क्रोध में मुसलमानों ने पंजाब में हिन्दुओं का बायकाट हुआ है तदनुसार हिन्दु भी मुसलमानों का हिन्दू भी बायकाट कर रहे हैं। लाहौर में हिन्दुओं ने अपनी अलग एक सब्जीमंडी खोली है।

—बिहार में बहुत भारी पानीकी बाढ़ आई है।

विदेश-समाचार

REGD. L. NO. 3459

—जर्मनी, इटली, आष्ट्रिया ने अपने यहाँ के नवयुवकों के लिये फौजी शिक्षा अनिवार्य कर दी है।

—रूस के क्रान्तिकारी नेता मोशियो लेनिन को मरे १० वर्ष तो हो गये हैं उनकी लाश वहाँ पर शीशे के बक्स में अभी तक ज्यों की त्यों ताजी रक्खी हुई है। यह विज्ञान की महिमा है।

—अमेरिका में चोर पकड़ने के लिये रेडियो की मशीन बनाई गई है जो कि चोर के तिजोड़ी के पास आते ही पुलिस बैरिक में अपने आप खबर पहुंचा देती है।

—रूस में हवाई जहाजों से कूद कर हवाई छतरी (पैराच्यूट) के सहारे कुत्तों को जमीन पर उतर आने की शिक्षा दी जा रही है।

—इटलीकी सेना सीमा पार करके एबीसीनिया में घुस गई है अब युद्ध प्रारम्भ हो जायगा। भारतीय सेना को तैयार रहने की सूचना मिल गई है बंबई में उन्हें जहाजों पर चढ़ाने की तयारी हो रही है। १०० जापानी अफसर भारी मात्रा में गोला बारूदके साथ एबीसीनिया चले गये हैं। जापान और अमेरिकासे गोला, बारूद, तोप आदि युद्ध सामग्री एबीसीनिया को जा रहा है। इटली के १६ पनडुब्बी जहाज लालसागर में उस माल के पहुँचनेमें रुकावट डालने के लिये खड़े हुये हैं।

—बर्मा में एक स्त्री के एक बार ही ४ पुत्र एक पुत्री १५-१४ मिनट पीछे हुए जो कि बादमें मर गये।

साइबेरिया (रूस) के दक्षिण में जो बस्तियां हैं। वहां के निवासी स्त्री पुरुष प्रतिवर्ष नया विवाह कर डालते हैं। एक चीनी यात्री वहां १० वर्ष रहा वह १० युवतियों का पति बना।

अमेरिका में मोटरोंमें रेडियो लगाने का आविष्कार हुआ है जिससे मोटर में सैर करते हुये अपने घर वालों से बातें होसकती हैं। और उनकी बातें सुनी जा सकती हैं।

इटाली देश में जो अरब लोग रहते हैं उनको सरकारी आज्ञा हुई है कि २० वर्ष से ६० वर्ष की आयु वाले प्रत्येक पुरुष फौज में भर्ती हों, जो ऐसा न करेगा उसको फांसी का दंड मिलेगा।

—टोकियो और क्यास्लाऊ जापान में तूफान के कारण ५३००० घर पानी में घिर गये हैं ३० आदमी मर गये हैं।

लड़का-पत्थर बनता जा रहा है।

अमेरीका के शहर मोन्टरीयलमें एक सात साल का लड़का एक ऐसी बीमारी में फंस गया है जिसके कारण वह लड़का टांगों और बाजुओंसे पत्थर बनता जा रहा है। बड़े २ सायंसदां इसे देखकर हैरान हैं

× × × ×

विनोद—

"तुम्हारी उम्र क्या है?"

"११ वर्ष"

"गत वर्ष तो तुम्हारी उम्र ५ वर्ष की थी!"

"हां ठीक है। इस साल ६ वर्ष का हूँ और पिछले साल के ५ वर्ष मिला कर ग्यारह हुए।"

अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक ७

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० [illegible] जैन न्यायतीर्थ,
[illegible]

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३)   एकप्रति ≈)
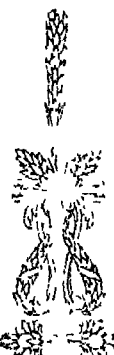
कार्तिक बदी ५ बुधवार
१६ अक्टूबर–१९३५ ई०

ईसरी में उदासीनाश्रम

ईसरी (पारसनाथ) स्टेशन पर धर्मशाला में इस वर्ष श्रीमान न्यायाचार्य ब्र० गणेशप्रसाद जी वर्णी का चातुर्मास हुआ है। दशहराके दिन इस जगह श्रीमान सेठ सूर्यमल जी बांकेपुर (पटना) के कर कमलों द्वारा 'श्री दि० जैन पारसनाथ शान्तिनिकेतन' नामसे एक उदासीनाश्रम का उद्घाटन हुआ है जिस का इमारत अलग तयार होगी। इसके शासक श्रीमान पं० गणेशप्रसाद जी वर्णी होंगे। आश्रमके एक वर्षका खर्च उक्त सेठजी देंगे। जो महानुभाव धर्मसाधन के लिये यहाँ रहना चाहेंगे वे ६) मासिक देकर यहां निवास कर सकेंगे। यहां का जल वायु अच्छा है तथा सम्मेदशिखर तीर्थ निकट है। अतः आश्रम से लाभ उठाना चाहिये।

कस्तूरचन्द्र जैन—नवादा

एक नये आई० सी० एस०

श्रीमान ला० खूबराम जी प्रोफेसर के सुपुत्र श्रीमान बा० चन्दोमल जी जैन अभी विलायत से इंडियन सिविल सर्विस परीक्षा पास करके आये हैं आपने अपने परिश्रम से सफलता प्राप्त की इस के लिये आपको बधाई है। तथा आगरेमें एक योग्य पद पर प्रतिष्ठित हुए हैं यह दूसरा आपको बधाई है।

विलायत से आने वाले अधिकांश सज्जन विशेष करके वे महानुभाव जो कि सरकारी नौकरी के सफल उम्मेदवार होते हैं धार्मिक प्रेम से अपना आत्मा कोरा बना लिया करते हैं। आशा है आप उनमें अपवाद सिद्ध होंगे।

जैन समाचार

शास्त्रार्थ संघ के अध्यक्ष तथा दि० जैन सभा शिमलाके संरक्षक श्रीमान रायसाहिब ला० नेमिदास जी ने चार्ट रूप में तथा छोटी पुस्तक के रूप में सुंदर छपा कर जैन आरती प्रकाशित की है। जो सामूहिक रूप से बोलने में बड़ी सरल है। चार्ट और पुस्तक बिना मूल्य दि० जैन सभा शिमला तथा ला० मनोहर लाल जम्बूप्रसाद जैन सर्राफ दरीबा देहली से प्राप्त हो सकती है।

पावागिरि क्षेत्र (ऊन) के जीर्णोद्धार का कार्य उत्सव के साथ दो अक्टूबर का प्रारम्भ होगया। इस अवसरपर ऊनमें अनेक श्रीमान धीमान उपस्थित थे। श्रीमान रावराजा सरसेठ हुकमचन्द्र जी ने जीर्णोद्धार के लिये १००१) रुपये प्रदान किये।

सहारन पुर में जैन सेवक मंडल की ओर से श्री महावीर निर्वाण उत्सव २७-२८ अक्टूबरको धूमधाम से मनाया जावेगा। जिनेश्वरदास जैन

जैनवीर सेवक मंडल सीकर के ३० स्वयं सेवकों ने जीनमाता के मेले पर जाकर आसोज सु० ८ को हजारों पेम्फलेट बांट कर अहिंसा का प्रचार किया यहां प्रतिवर्ष हजारों बकरे काटजाते हैं अनेक मनुष्यों ने पशुबध न करने का नियम लिया। अनेक जीवित बकरों को स्वयं सेवक छुड़ाकर अपने साथ ले आये जिनके रखने के लिये दयालु सीकर नरेश ने मंडल को मुफ्त जमीन दे दी है। —अमरसेन जैन मंत्री

फीरोज पुर छावनी-यहां पर परस्पर वैमनस्य से कई वर्षों से पचायती मंदिर का कार्य ढीला पड़ा हुआ था। अभी जब मनोहरलाल जी के जिनालय की प्रतिष्ठा के समय यहां मुलतान के सज्जन पधारे थे उन के सहयोग से यहां पारस्परिक प्रेम होकर श्रीमान ला० तुलसी राम जी की संरक्षकता और श्री बा० चान्दू लाल जी की अध्यक्षता में एक कमेटी बनी जिस के २१ सदस्य चुने गये। नवीन कमेटी के उद्योगसे मंदिर का प्रबन्ध ठीक हो गया है। लगभग १० हजार रुपये का चोरी गया माल चोर से निकलवाया गया। पर्यूषण पर्व बड़े आनंद से मनाया गया। — रूपसदास जैन मंत्री

मैत्रीभावना-उदयपुर में ज्ञानानन्द दि० जैन ट्रेक्ट माला स्थापित हुई है जिस का पहला ट्रेक्ट श्रीमान भंवरलाल जी रचित 'मैत्री भावना' शिखरणी छन्दोबद्ध प्रकाशित हुआ है कविता साधारणतया अच्छी है। मूल्य एक आना अधिक है।

महावीर जी क्षेत्रको स्टेशनसे मंदिर तक [illegible] मील लम्बी पक्की सड़क बनवानेके लिये सरकारने जैनों से आधा खर्च [illegible] रुपये मांगे थे जिसके लिये श्रीमान सेठ गोपीचन्द जी ठोलिया जयपुर ने [illegible]) रुपये प्रदान किये हैं।

धन्यवाद श्रीमान बा० प्रकाश चन्द जी इन्दौर ने जैन दर्शन के सहायतार्थ चार रुपये मनीआर्डर से भेजे हैं आप जैन दर्शन के ग्राहक हैं। आप को धन्यवाद है। —अजित कुमार जैन

अनेक लाभ जैन दर्शन के ग्राहकों को इस वर्ष 'सत्यास्वरूप' नामक अपूर्व ग्रन्थ उपहार में भेंट किया जायगा तथा स्याद्वाद अंक मू० १)रु० पर शास्त्रार्थ संघके ट्रेक्ट पाव पन शास्त्रार्थ प्र० द्वितीय भाग ॥=) दिगम्बरत्व और दिगम्बरमुनि १) ये चार पुस्तकें आधे मूल्य में मिलेंगी।

अकलङ्कदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोप्रशिमर्भव्यांभवन्निखिलदर्शनपक्षदोष:,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात

वर्ष ३ | श्री कार्तिक वदी ५—बुधवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क ७

सिद्धि !

(रचयिता—पं० चांदमल जैन "शशि" विशारद बी० ए०)

(१)

लाऊंगा न क्षोभ भय ग्लानि उर मैं कभी,
बन कर्म-वीर मैं विजयवर पाऊंगा।
पाऊंगा तुझे मैं सिद्धि ! साहस के बल पर,
देख विघ्न-बाधाएं कभी न घबराऊंगा॥
घबराऊंगा न कभी लखि विकराल काल,
कालका मैं काल तब स्वयं बन जाऊंगा।
जाऊंगा झपट एक दौर में धरा को सोध,
गगन विचुम्बि गिरीको भी नाप लाऊंगा॥

(२)

लूँगा मैं विराम तब तक नहीं जगती में,
जब तक लक्ष्य पर जा नहीं मैं डटूँगा।
डटूँगा, न छोड़ूँगा 'असम्भव' समझ कुछ,
कभी प्राण पणसे भी मैं न पीछे हटूँगा॥
हटूँगा न पीछे पड़ प्रज्वलित अनल में,
अथाह समुद्रकी भी थाह ले मैं डालूँगा।
डालूँगा प्रलय कर शक्ति-साधना के हित
तीन लोकमें भी यदि तुझे मैं न पालूँगा॥

हमारा यौवन

(ले०—श्रीमान पं० वीरेन्द्रकुमार जैन)

संसार में जितने भी चेतन प्राणी हैं उनको प्रकृति के नियमानुसार तीन अवस्थाओं में विभक्त किया जा सकता है। बालक युवा और वृद्ध। तीनों ही अवस्थाएं समयानुसार अपना रंग जमाती हैं।

किसी भी बड़े से बड़े और छोटे से छोटे पेड़ को ले लीजिए, सबके सब प्रकृति के नियमानुसार काम करते रहते हैं एक छोटे से पेड को जब हम लगाते हैं तो उसकी बाल्यावस्था में हमें कितनी रक्षा करनी पड़ती है। यदि हम सावधानतया उसकी देख भाल करते हैं तो वह इस अवस्था को बिता कर युवावस्था में पदार्पण करता है। उस समय हम उसकी रक्षा के बन्धन ढाले कर देते है क्योंकि इस अवस्था में वह स्वयं अपनी रक्षा करता है। चाहे वह पत्थरों की दीवाल में हो अथवा पहाड़ पर। इस अवस्था के जोश में उसके टुकड़े २ कर देता है। अपने से भी भारी शक्ति से युद्ध करता है और अन्त में विजयी होता है। उसको रोकने वाली कठिनाइयां भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाती और वह अपनी अवस्था का आनन्द लूटता हुआ सर ऊंचा किये बढ़ता चला जाता है तथा भविष्य के लिये अपनी जड़ों को सुदृढ़ बना लेता है।

इसी प्रकार वर्षा ऋतु अपनी यौवनावस्था (सावन के महीने) में अपने प्रबल शत्रु हवा के झोंकों की भी कोई परवा न करके जहां जम जाती है जमी रहती है, टस से मस नहीं होती।

किसी ने कहा है—

इक भीजे चहलेपरे बूडे भये हजार।
किते न औगुन जग करत नै बै चढ़ती बार॥

अर्थात्—जिस प्रकार चढ़ती हुई नदी कितने ही को बहाले जाती है कितने ही डूब जाते है उसी प्रकार संसार में चढ़ती हुई जवानी में मनुष्य क्या २ अन्याचार नहीं करता।

किन्तु नहीं यह सुनहरी समय अन्याचार करने के लिये नहीं है। मनुष्य को चाहिये कि अपने महान् उद्देश की पूर्ति करने के लिये इस अवस्था में संभल २ कर पांव रक्खे और वृद्धावस्था में सुख पाने के लिये इसे और भी सुदृढ़ बनावे ताकि कोई भी रोग पास न फटके।

मूक पशुओं को हम रात दिन देखते रहते है कि किस प्रकार वे प्रकृति के नियमानुकूल चल कर संसार में भिन्न २ अवस्थाओं का आनन्द लूटते रहते हैं। हिंसक पशु जैसे शेर, चीता, रीछ आदि अहिंसक पशु जैसे—सुरागाय, मृग, खरगोश इत्यादि सभी प्रकार के जंगली जानवरों को देखिये—जंगल में सिवाय भाग्य के इनका कोई रक्षक नहीं है। फिर भी ये हमें—मनुष्यों की तरह पग पग पर व्याधियों से पीड़ित नहीं दिखाई देते इसका कारण केवल यही है कि वे प्रकृति के नियमों का कभी उल्लंघन नहीं करते।

अब जरा छोटे पौदों की तरफ दृष्टि डालिये।

बागों में हर जगह छोटी २ क्यारियों में पुष्पों के पौधे लगे हुये होते हैं जो थोड़ी सी दूर में ही काफी संख्यामें उगाये जाते हैं। इनके आसपास दूर्वा घास की लताएं भी फैला रहती हैं। यहां हमें प्रकृति का द्वन्द्व युद्ध होता हुआ दृष्टिगोचर होता है। घास यह चाहती है कि आस पास की खाद और पानी मैं ही ले लूँ और खूब फूलूँ फलूँ। इन पौधों पर अपना प्रभुत्व स्थापित करूं, इनको एक बूँद भी जल का न मिलने पावे। चौतरफा मेरा ही साम्राज्य स्थापित रहे। उधर पौधे आपस में ही लड़ते रहते हैं। तेरा पानी मैं लेलूं, मैं ही बढ़ूं, तुम सब यहीं सूख जावो। मगर इनकी शत्रु घास, (जिसकी जड़ मजबूत है) माली के बार २ काटने पर भी इन को आ दबाती है और यह पौधे यहीं अपनी दो दिन की बहार दिखाकर कुछ खिले कुछ अनखिले बाल्य अवस्था में ही मुर्झा जाते है।

ठीक यही दशा आजकल हमारी सन्तान की है। एक मनुष्य के ढेरके ढेर बच्चे पैदा होजाते है। एक ने अभी माता का दूध छोड़ा भी नहीं है तो दूसरा झट पैदा होजाता है। दो तीन पिता के पीछे रोते रोते फिरते है तो पाँच चार माता के लिपटे हुये हैं। नतीजा यह होता है कि किसी की भी जड़ मजबूत नहीं होती। सबके सब बाग वाले पौदों की तरह बचपन में ही मुर्झा जाते हैं।

मेरे कहने का केवल तात्पर्य यह है कि जब तक हम बाल्यावस्था को सुरक्षित न करलें तब तक यौवनावस्था को प्राप्त नहीं कर सकते और न उसके सुखका अनुभव ही। और युवावस्था में सावधान-तया न चलनेसे वृद्धावस्था सुखसे व्यतीत नहीं होती।

इन तीनों अवस्थाओं में युवावस्था विशेष वर्ण-नीय है। क्योंकि इस समय प्रत्येक जीवधारीकी विचित्र अवस्था होजाती है। शरीरका पूर्ण विकास होजाता है। अंग २ से नवीन ज्योति प्रस्फुटित होती है। कोई कितना ही कुरूप क्यों न हो, किन्तु उसके भी चेहरे की चमक दमक बढ़ जाती है। उस की आँखें अपना और ही रंग धारण करती है। उन में लज्जाका समावेश होता है। प्रत्येक अंग से युवापन टपकता है और मनुष्य को अपने उद्देश्यकी पूर्ति करने के लिये उभारता है, जोश पैदा करता है किन्तु मनुष्य इस जोश को निरर्थक शान्त करते हैं। भविष्यको बनाने के बदले अपने पथमें काँटे बो लेते हैं। वे यह नहीं जानते कि—

सदा न फूले केतकी सदा न सावन होय।
सदा न यौवन स्थिर रहे सदा न जीवे कोय॥

अर्थात— केतकी (जिसके तीखे काँटे होते हैं) सदा नहीं फलती फूलती, साल भर सावन नहीं होता, जिन्दगी भी किसी की स्थिर नहीं रहती। इसी प्रकार यौवन भी बार बार नहीं आता।

और भी लीजिए —

चाम पुरानी, मन वही अरु नयना वही स्वभाव
अरी जवानी बावरी तू एक बार फिर आव॥

अर्थात— शरीरका चमड़ा पुराना पड़गया है, किन्तु मन वही है जो यौवनावस्था में था और आंखें भी वही काम देती हैं (किन्तु बिना उस अवस्था के सब शिथिल हैं) सो हे उन्मत्त जवानी तू एक दफा फिर आ जा।

इस प्रकार यह स्वर्ण समय बीत जाने पर हमें सिर पर हाथ धर कर रोना पड़ता है। क्योंकि इस

अवस्था वाले वे दिन फिर कभी प्राप्त नहीं होते।

बाबू कुंवरसिंह बिहार प्रान्त में एक बड़े जागीरदार थे जो सन् १८५७ में बागी घोषित किये गये। इस समय उनकी अवस्था लगभग ८० वर्ष की थी कठिन परिश्रम के कारण वे अस्वस्थ होगये और अन्त समय तक इस अवस्था तक रोते रहे। उनका कहना था कि, क्या ही अच्छा होता यदि अंग्रेजोंका पाला मुझसे जवानी में पड़ा होता।

पुराने जमाने में हमारे पूर्वजों द्वारा किये गये कार्यों को जब हम किताबों में देखते हैं तो उनको असम्भव कहकर छोड़ देते हैं। परन्तु ध्यान लगा कर यदि विचार किया जाय, तो हमारी समझ में आजायगा कि वे इस अवस्था का नियम पूर्वक × पालन करते थे। यही कारण था कि संसार उनके सामने सिर झुकाये हुये था।

उस समय इसके सदुपयोगका नाम था "यौवन" जिसका आनन्द वीर अभिमन्यु ने कुरुक्षेत्रकी भूमिमें युधिष्ठिरको यह कहते हुये लूटा था कि—

बालक मुझे न समझिये, क्षत्रीका वंश है।
अर्जुन नहीं तो क्या हुआ, अर्जुन का अंश है।

किन्तु वर्तमान में इसके दुरुपयोग का नाम है "जवानी" जिसका आनन्द आजकल के नरकंकाल गलियों में यह कहते हुये लूटते हैं कि—

जरा शाम होवे तो हम रंग लाईं,
अँधेरे में लूटेंगे यौवन किसीका।

वह यौवन धर्म पर प्राण निछावर करना बतलाता था। किन्तु आजकल की जवानी तीरे नजर से घायल होना सिखाती है। उसका निवास-स्थान भुजाओं में था। इसका निवास चर्र-मर्र करने वाले जूतों तथा ऊंची एडी के सलीपरों में है। आजकल के नरकंकालों के जन्म दिनसे लेकर अन्त समय तक यह जवानी उनके सिर पर काली घटाकी तरह छायी रहती है। वर्तमान समय में इसके तीन रूप हैं। अप्राकृतिक, प्राकृतिक और शिथिल।

माता पिता अपने छोटे २ बच्चों को जवानीकी चिता बनाने के लिये स्वयमेव ही अपने हाथों से लकड़ियां एकत्रित करते हैं। अज्ञानावस्था में उनकी गुप्तेन्द्रिय के हाथ लगाकर उससे कई एक प्रश्न करते हैं और सिखलाया हुआ उत्तर पाकर बड़े प्रसन्न होते हैं। उन्हें गाली गलौज करना सिखाया

× एक दफा सिकंदरने अरस्तू से पूछा कि मनुष्यको अपने जीवनमें कितनी बार स्त्री-प्रसंग करना चाहिये। अरस्तू ने कहा कि प्रथम तो एक दफा, यदि न रहा जाय तो दो दफा।
"इतने पर भी यदि न रहा जाय तो" —सिकंदर ने पूछा।
"सालमें दो दफा" अरस्तू ने उत्तर दिया।
सिकन्दर—"यदि फिर भी न रहे।"
अरस्तू—"साल में दो दफा।"
सिकंदर—"यदि इतने पर भी उसका मन चलायमान हो तो—"
उसे हरवक्त अपने साथ कफन बांधे फिरना चाहिये। क्योंकि उसकी मृत्यु न मालूम कब होजाये।"
—अरस्तू ने उत्तर दिया।

जाता है, उनकी कामकलाको भड़काने वाले कपड़े पहनाये जाते हैं और बचपनसे ही बुरी आदतों के खड्ड में ढकेल दिये जाते हैं। शुरू से ही कुसंस्कारों का उनके हृदय में अड्डा जम जाता है। इसीका नाम अप्राकृतिक जवानी है।

थोड़े दिनके बाद ही इस बचपनके जहरीले संस्कारोंको लेकर वे प्राकृतिक जवानीकी छत्रछायामें कई तरीकों से विश्राम करते हैं। कोई ऊँचे पलंगों पर मखमली गद्दों पर लेटते हैं, तो कोई शराब के गहरे नशे में चूर हैं। कोई कमीजकी कालर-कटिंग में मग्न है तो दूसरा बालोंकी शान में। किसीको डाढ़ी मुंडवाने की फिक्र है, तो किसीको मूँछ कटवाने का। एकके हाथमें कंघी है तो दूसरेकी जेबमें शीशा। इस प्रकार अनेक ढगों से प्राकृतिक अवस्थाका आनंद लूटते रहते हैं।

बहुतसे कठिन परिश्रम भी करते हैं। दिन भर स्कूलों या दफ्तरों में किताबों या कागजों पर गृद्ध-दृष्टि रखते हैं। रातको "होम-वर्क" करना पड़ता है। इस प्रकार निरन्तर परिश्रम करनेसे उनकी दृष्टि तो अवश्य कमजोर होजाती है, किन्तु सौभाग्यकी कृपासे सन्तानों की कमी नहीं रहती। जब कभी इस अवस्थाका अधिक जोश आता है, तो सिनेमाकी बैंचें तोड़कर या डाक्टरों के दरवाजे खट-खटाकर दम लेते हैं। कुछ एक अपने माता पिता या भाई बहिन से लड़कर, अथवा अपनी पत्नीको ठोक पीटकर अपने आपको "वीर चन्द्रगुप्त" समझने लगते हैं।

इस प्रकार कुछ दिनतक वृथाही गवर्नमेण्ट की सड़कों को घिसते हुये वृद्धावस्था का हाथ पकड़ते हैं इस समय उनके शरीर में स्फूर्ति और अद्भुत तेज का नामोनिशां भी नहीं रहता। अङ्ग-प्रत्यंग ढीले पड़ जाते हैं, शरीरके अवयव काम नहीं करते, किन्तु शिथिल जवानी अब भी पीठ ठोकती ही रहती है। बूढ़े भी अपनी दूकानों में बैठे हुये आने-जाने वाली औरतोंको तिरछी नजर से झांकने में कसर नहीं छोड़ते। कई एक तो इतनेसे भी सन्तुष्ट नहीं होते। वे थैलियों पर थैली इस शिथिल जवानी की भेंट चढ़ा देते हैं और चकवा-चकवी की तरह एक ही डाली डाली पर रात काटना अधिक श्रेष्ठ समझते हैं तथा इस अत्याचार की गठड़ी का बोझ सिर पर लादे फिरते हैं। इस प्रकार कुछ दिन तक गधे की तरह धूलमें लोटकर अन्त में अपने रंगीले जीवनसे हाथ धो बैठते हैं।

इसलिये हमें चाहिये कि उपरोक्त दुर्व्यसनों को दूरकर, सुख पूर्ण जीवन व्यतीत करें यही मनुष्य-जीवनका आनंद है और इसीमें हमारी भलाई है।

सुधारक

आज से—

(क) अनुन्नत जन साधारण की सेवा करना मेरे जीवन का एक मात्र लक्ष्य होगा।

(ख) उनकी सामाजिक उन्नति करना मेरे जीवन का मूल मंत्र होगा।

(ग) विधवाओं का दुःख दूर करना मेरे जीवन का व्रत होगा।

भगवान मेरे सहाय हों।

दृढ़ता के साथ, गद्गद् कंठ से उल्लिखित वाक्यों का उच्चारण करके श्रीमान् आदिनाथ चतुष्पाठी बी० ए० ने अपने हस्ताक्षर किये पिता स्व० पंडित श्यामाचरण चतुष्पाठी, मु० पदमपुर, जिला मुंगेर।

लम्बी नाक की मोटी नोंक पर चश्मा उतारते हुए समाज-सुधारक-समिति के प्रवीण मंत्री महोदय ने कहा—"जो व्रत आज तुमने लिया है, उस व्रतका यदि तुम उद्यापन कर सके, तभी जीवन सार्थक होगा।—कब जा रहे हो तुम?"

—"आज ही। अब देर न करूंगा। समाज की दुर्दशा देखते हुए धैर्य धारण करना मेरे लिये असंभव हो गया है।

—"जाओ। तुम्हारा जीवन दूसरों के लिये आदर्श हो।"—कहते हुए मंत्री महोदय ने उपस्थित अन्य पांच युवकों की ओर देखा। अनादि नमस्कार करके बाहर निकल गया।

उन दिनों समाज-सुधार के लिये शहरमें वृन्दावन सभा-समितियां हो रही थीं। उन्हीं में से एक सभा के मंत्री और प्रचार का पद श्रीमान् अनादिनाथ ने ग्रहण किया। कल शाम को, श्रद्धानन्द-पार्क में, मंत्री महोदयका भाषण सुनकर उसके हृदयमें समाज-सेवाके लिये जो उत्कट आग्रह पैदा हुआ था, आज उसकी परिणति इस रूप में हुई।

'डेरे' पर आकर अनादिने अपने साथियोंसे कहा—"आज मुझे अपने जीवनका स्वप्न सफल करनेका मौका मिला है, आजसे कार्यक्षेत्रमें पदार्पण करता हूँ। कर्मपथ पर जा रहा हूँ, तुम सब पीछे-पीछे चले आओ।"—कहते हुये अनादि ने आज शाम की सारी घटना कह सुनाई। सबों ने एक स्वर से कहा—"हां, यह है काम, तुम जाओ।" दो-एक ने वचन भी दिया कि 'ला' की परीक्षा खतम होते ही वे भी उसका साथ देंगे।

अनादि ने नौकर रामचरण को बुलाया: और बारह कप चाय लाने का आदेश दिया। रामचरण सीढ़ी उतर चुका, तो अनादि ने फिर उसे बुलाकर आगाह कर दिया—'चौराहे की दूकान से लाना, राम!"

रामचरण ने कहा—"बाबू जी वह तो कुमक धोबी की दूकान है।"

अनादि ने भावुकता-पूर्ण दृढ़तासे कहा—"दुनिया में कोई धोबी-नाई नहीं, राम, सब एक हैं—एक ही जमीन-आसमान के—"

राम ने पूरी बात नहीं सुनी: 'अच्छा' कह कर चल दिया, और नीचे उतर कर अपने ही आप कहने लगा—'रात को तो बाबू जी ने मुझे नहलवाया था।'

जब तक चाय आई, तब तक वहां ग्यारह की जगह सिर्फ तीन ही सज्जन रह गये,—बाकी आठ चाय आते-आते ही खिसक दिये। लिहाजा सुखमक धोबी उर्फ झम्मनलाल की दूकान की चाय, चार कप के सिवा, बाकी सब मोरी में लुढ़का दी गई, भावुकता में मग्न अनादि ने इस तरफ जरा भी ध्यान न दिया।

— २ —

रेल से उतर कर करीब तीन बजे अनादि बेग हाथ में लिये हुए चन्द्रनपुर के घाट पर पहुँचा। सारी रात नावपर ही बितानी पड़ेगी। यह सोचकर उसने एक अच्छी-सी नाव किरायेपर तय की। नाव जब घाट पर आकर लगी, तब लगभग शाम हो चुकी थी। मल्लाह हीरामन ने बाबूसे पूछा—"बाबू जी, रात को फलाहार करेंगे—या दाल-भात?"

अनादि ने बिस्तर पर लेटे हुए ही कहा—"दाल-भात ही ठीक रहेगा।"

—"तो दीजिये चार आने पैसे। बाजार हो आऊं जरा।" पैसे लेकर हीरामन बाजार चल दिया।

हीरामन के जाते ही सुखई मल्लाह को तम्बाकूकी सूझी। बाबू से पूछने लगा—"बाबू जी, आप तमाकू पीते हैं?"

अनादि ने कहा "सिगरेट पीता हूँ मैं। मेरे पास मौजूद है।"

सुखई ने हाथ पसार कर कहा—"बाबू जी, एक सिगरेट मिल जाती—"

अनादि ने चट से एक सिगरेट निकाल कर उस के सामने फेंक दी। सिगरेट सुलगा कर, एक दम लगा कर, सुखई खांसता हुआ बोला—"रेती पर चूल्हा बना दूं बाबू जी?" अनादि ने कहा—"रेती पर क्यों? तुम लोगों के चूल्हा नहीं है?"

सुखई ने कहा—"जी हां, है तो;—मगर हम लोग तो मल्लाह हैं।

जात-पांत के बारे में अपने विचार प्रगट करने का ऐसा बढ़िया मौका अनादि से छोड़ा न गया, बोला—"मल्लाह हो, इससे क्या हुआ? जात में कोई छोटा नहीं है भाई। तुम लोग अपने को छोटा समझते हो, इसीलिये तुम छोटे हो। तुम लोगों का यह भ्रम दूर करने के लिये ही मैं आया हूं। मैं खुद ब्राह्मण हूँ, तुम्हारी ही हंड़िया का भात खाकर मैं दिखा दूंगा कि मल्लाह के हाथ का खाने से ब्राह्मण की जाति नहीं जाती।

बातें सुन कर सुखई दंग रह गया। उसकी बोलती बन्द हो गई। बात सुखई के हृदय तक पहुँच गई, यह जानकर अनादि ने कुछ देर तक नीरव रहकर उसे सोचने का मौका दिया।

कुछ देर बाद हीरामन भी आ पहुंचा। आते ही उसने कहा—"तसला ले आ।"

सुखई ने पूछा—'क्यों'?

हीरामन ने कहा—रात को कौन झंझट पाले? ला तसला, चिउरा ले आया हूँ सेर-भर। पानी में भिगो कर रख दूंगा।"

सुखई ने झांक कर देखा—बाबू जी सो रहे हैं। उसने धीरे से कहा—"नाव मत छू, तसला लाये देता हूँ—अलग से लेकर रेती पर रख।"

हीरामन अचंभे में पड़ गया, बोला—"क्यों क्या हुआ?"

सुखई ने हीरामन की ओर गरदन बढ़ा कर चुपके से कहा "बाबू किस्तान हैं ?"

हीरामन ने आंखें फाड़ कर कहा—"कैसे मालूम हुआ तुझे ? जनेऊ जो पहने हुए हैं।"

—"अरे, ये तो सब दिखाने के लिये है। बाबू तो हमारे चूल्हे पर भात बना कर खाना चाहते हैं।"

इस बात से हीरामन का रहा-सहा सन्देह भी दूर होगया। उसने कहा—"ला, अलग से मेरे हाथ पर छोड़ दे।"

सुखई ने तसला देकर अनादि को जगाया। अनादि को मीठी नींद आ रही थी, बोला—"चूल्हा सुलगा लिया ?"

हीरामन बड़े असमंजस में पड़ गया। किस्तान छूता है तो चूल्हे की जाती है, और ब्राह्मण होकर मल्लाह के चूल्हे पर रसोई बनाता है तो महापातक लगता है। जरा सोच-विचार कर हीरामन ने कहा—"बाबू जी, चूल्हा काम-लायक नहीं है,—हम लोग तो, बाबू जी, रातके लिये चिउड़ा ले आये हैं।"

बना कर खाना तो अनादि की जन्मपत्री में नहीं लिखा था। चिउड़े का नाम सुनते ही वह बोला - "तो फिर मेरे लिये भी चिउड़े ले आ। रात को बनाने-अनाने का झंझट कौन करे ?"

इस तरह, चूल्हे की बात बचा कर हीरामन बाबू जी के लिये फिर से चिउड़ा लाने चल दिया।

— ३ —

दूसरे दिन करीब १०-११ बजे नाव परमपुर पहुंची। बिलकुल बचपनमें गांव छोड़ा था, और उसके बाद बीस वर्ष शहर में बिताये ; लिहाजा गांव में अनादि का परिचित कोई न था।

बहुत सोच-विचार कर, तलाश करने के बाद वह अपने ही मकान में आ कर ठहरा। राह-चलते लोग कौतूहल-दृष्टि से उसे देखने लगे। कानाफूसी भी करने लगे ; पर किसी ने उससे कोई बात पूछी-गछी नहीं। उसका सारा शरीर मोटे कम्बल से ढका हुआ था, और इसी वेश से गांव के लोग डरते थे। वजह यह थी कि थोड़े दिन हुए प्रेसीडेन्ट-पंचायत साहबने इश्तिहार जारी करके सबको इतला दे दी थी कि गान्धी के चेलों से किसी तरह की बात चीत करने या मिलने-जुलने की सरकार बहादुर ने मनाई कर दी है। गान्धी के चेलों के लक्षण भी इश्तिहार के नीचे लिख दिये गये थे :—

(क) वे सिरपर सफेद किश्तीदार टोपी लगाया करते हैं।

(ख) मोटे कपडे पहनते हैं; मोटे कपड़े का कुर्ता या कम्बल ओढ़े रहते हैं।

(ग) हिन्दू चेले 'बन्दे मातरम्' और मुसलमान 'अल्ला हो अकबर' के नारे लगाते हैं।

(घ) गान्धी के चेले सभा इकट्ठी करके लेक्चर देते हैं, और सबसे चार २ आना पैसा वसूल करते हैं।

और सब लक्षण न होने पर भी, एक लक्षण तो उसमें नीचे से ऊपर तक साफ दिखाई देता था। इस के अलावा, इससे पहले जितने भी गान्धी के चेले गांव में चन्दा उगाहने आये हैं, उन सबकी चाल भी हूबहू ऐसी ही थी। खैर, कुछ भी हो किसी तरह पता लगाते-लगाते अनादिनाथ अपने टूटे फूटे घर तक पहुंच गया। आंगन में कमर तक घास खड़ी थी दीवारें टूट-फूटकर इधर उधर गिर पड़ी थीं। टूटी

दीवारों की ईंटें पड़ोसियों के काम आचुकी थीं। रसोई घर की छत चलनी को भी मात कर रही थी। यह सब देख भालकर अनादि ने अपने कुनबे के एक भाईको उसकी मरम्मतके लिये तैनात कर दिया कुछ दिन गांवमें रहकर मकानका जीर्ण संस्कार कर जानेका संकल्प करके उसने जक लगे ताले को किसी तरह खोलकर दक्षिणकी कोठरी में प्रवेश किया। उसके बाद कोठरीमेंसे जैसे तैसे एक चौकी निकाली और बाहर बिछाकर उसपर आध घंटा कम्प्लीट रेस्ट लिया। जब हरारत कुछ हलकी हुई, तो मुँह हाथ धोनेकेलिये कुए पर पहुंचा। लोटा फांसा ही था कि किसीने पीछेसे आकर पूछा—"भाई साहबका कहांसे आना हुआ ?"

अनादिने पीछेकी ओर मुड़कर प्रश्नकर्ताको ऊपरसे नीचे तक देखा, फिर बोला—"कलकत्ते से"

"नाम ?"

— "पंडित अनादिनाथ चतुष्पाठी,—स्वर्गीय पं० श्यामाचरण चतुष्पाठीका सुपुत्र हूँ मैं।"

प्रश्नकर्ताने चबाई हुई दांतौनको फेंकते हुये कहा—"अच्छा, अच्छा, तुम श्यामू भैयाके लड़के हो? बहुत दिन बाद देश आये हो? अच्छी बात है—अच्छी बात है। अभीतो कुछ दिन यहां रहोगे?"

आगन्तुकको अनादि पहचानता न था। कोई अपने ही घराने के होंगे, यह सोचकर उसने बड़े अदबके साथ कहा—"जी हां। अभीतो कुछ दिन यहीं रहने का इरादा है।"

—"अच्छी बात है, हम लोग हैं ही। कोई फिकर नहीं,—पर अब न वे राम ही रहे और न वह अयोध्या गांवके जो कुछ बचे-खुचे खम्भ (मुखिया) थे, वे सब एक एक करके चल बसे। अब रह गये एक हम और नन्दू चाचा भी किसी कदर चल रहे हैं। सो —हम लोगोंके भी अब दिन पूरे होचुके समझो। जबतक चलते हैं, तभी तक हैं। तुमने मुझे पहचाना नहीं? मैं राधेलाल चौधरी हूं, बहुत दिनकी बात है, एक बार मुंगेर गया था, तब तुम्हारे घर पर ठहरा था, तब तुम बहुत छोटे थे।" इतना कहकर राधेलाल चौधरीने अनादि के स्वर्गीय पिताके आतिथ्य-सत्कार के विषय में बहुतसी बातें कह डालीं।

अनादि नहाकर जब कपड़े पहनने लगा, तो वे बोले— "अच्छा तो, शामको घर पर ही रहना, हम आवेंगे। गांवके हालचाल सब बतायेंगे। यहां रहना ही है तो जरा सोच सम्हलकर रहना पड़ेगा।

'अच्छा' कहकर अनादि भीतर चला गया।

(४)

दोपहरको, खा-पीकर आराम करनेके बाद, अनादिने मजदूर लगाकर घरका आंगन साफ करा डाला। किसानों में जा-जाकर इस बातका भी पता लगा लिया कि गांवमें नीच जातोंके घर कितने हैं और विधवाओं की कुल संख्या कितनी है। इस के बाद काम शुरू करनेका नम्बर है। अनादि बैठा बैठा यही सोच रहा था कि कैसे काम शुरू किया जाय, इतनेमें राधेलाल चौधरी आ पहुचे, बोले—"वाह वाह! तुमने तो सब एक ही दिनमें ठीक-ठाक कर लिया। शहरके लड़के होते बड़े फुरतीले हैं।"

अनादिने झुककर नमस्कार करते हुये कहा—"जी हाँ, आइये, बैठिये, आखिर कुछ दिन रहना तो है ही, इसीलिये जरा सफाई करवा दी।"

हां हां, अपना घर है, रहोगे नहीं तो क्या। कुछ दिन बिना रहे सब ठीक ठाक हो कैसे सकता है। देखो भला कैसा जुल्म करते हैं लोग। यह जो आमका पेड़ देख रहे हो सामने, वह तुम्हारी हदमें था, अपनी हदमें मिलाकर मौज कर रहा है बैजू अहीर। कुछ नहीं, बस एक दरखास्त देनेकी देर है—चुटकियोंमें ढीला पड़ेगा।"

अनादि चुप रहा।

चौधरी जी कहते रहे—"और तालाबके उस पार देखो, बगीचे के सभी कोई मालिक हैं, जिसके मनमें आता है सबकोई जामन तोड़ लेजाता है। उधर भी जरा निगाह रखना।"

अनादिने कहा—"जी हां"

चौधरी जी कहने लगे—"दावा करने में कोई दिक्कत नहीं, दो रुपया देकर मैं अपने दामाद सोमनाथ से सब ठीक करा दूंगा—बड़े वकीलका मुहर्रिर ठहरा। उसीके जुम्मे रहेगा सब। और पैरवी की रही सो मैं तैयार हूँ।"

अनादि—"अच्छी बात है"—कह कर खामोश होगया।

इसके बाद चौधरी जी को और भी बहुत कुछ कहना था, मगर इतने में गांवके प्रतिष्ठित लोग आ पहुँचे:—मामला वहीं तक रह गया। स्व० श्यामाचरण चतुष्पाठी काफी जायदाद छोड़ गये थे; 'एफ-ए बी-ए' पास-शुदा उनके अविवाहित पुत्र चि० अनादिनाथ गाँवमें आये हैं, कोई अभिभावक नहीं; लिहाजा इस पदके लिये सभी कोई उम्मीदवार थे। सिर्फ दो युवक दूसरे कामसे आये थे। अर्थात गांवमें जो 'पदमपुर नेशनल ब्रिटिश ड्रैमेटिक क्लब' कायम हुई थी, उस के लिये चन्दा वसूल करना। अनादिने सबको नमस्कार कर यथायोग्य स्थान देते हुये कहा—"आप लोगों से मिलकर बड़ी खुशी हुई। देश छोड़े जमाना बीत गया, परिचय तो किसीसे है नहीं।"

तब सब अपना-अपना परिचय देने लगे। अनादिको मालूम होगया कि स्व० श्यामाचरण जीसे सभी की बहुत गहरी मित्रता थी। थोड़ी ही देरमें अनादि ने देख लिया कि गाँवमें वह बन्धुहीन नहीं है। समागत सभीसे उसका कुछ न कुछ रिश्ता है। मामा, चाचा, ताऊ, भाई, भतीजा,—और तो कहना ही क्या बहनोई तक सभी प्रकार के रिश्तेदारों का अस्तित्व देखकर उसे बहुत ही खुशी हुई। प्राथमिक परिचय होजानेके बाद एकने प्रश्न किया—"भाई साहब गान्धी के चेले तो नहीं हो?

प्रश्न करनेका ढंग, प्रश्नकर्ता की उत्सुक दृष्टि और एक साथ आई हुई आत्मीय-मण्डलीकी कौतूहली अवस्था देखकर सहसा अनादिको खयाल आया कि इस मौके पर सच कहना खतरनाक हो सकता है। क्योंकि हाल ही में वह, प्रचारार्थ गांवमें गये तो किसी कांग्रेस-सेवककी छीछालेदरका समाचार अखबारों में पढ़चुका था: इसलिये खूब समझ सोचकर उसने जवाब दिया—"जी नहीं, मेरा काम और तरह है। मैं एक महान उद्देश्य को लेकर आपके सामने आया हूँ।

एक साथ सभी कोई उस महान उद्देश्यको जानने के लिये उत्सुक हो उठे।

एक वृद्ध सज्जन ने कहा—"वह महान उद्देश्य कौनसा है।"

अनादिने कहा—"पतित जातियोंका उद्धार।—दूर क्यों जाते हैं, यहीं अपने गाँवमें ही देखिये न,—

जुलाहे, मल्लाह, कुरमी, कलवार, काछी, धोबी ये सब जातियां कैसी बुरी हालत में हैं! इनका उद्धार करना ही मेरे जीवनका महान उद्देश्य है। ब्राह्मणों में इनका पानी चलाकर यह सिद्ध कर देना है कि आखिर यह भी आदमी है।"

अन्तिम वाक्य सुनते ही उपस्थित जनता जरा सजग होगई; क्योंकि कुछ दिन पहले वे अखबारमें पढ़ चुके थे कि म्लेच्छ-प्रकृति के कुछ शिक्षित नव-युवक वर्णाश्रम-धर्मका विध्वंस करने के लिये कमर बांधकर पिल पड़े हैं और लेक्चर दे-देकर खूब प्रचार करते फिरते हैं। बात बिलकुल सच निकली परन्तु सामने किसीने कोई प्रतिवाद नहीं किया।

इसके बाद भी अनादि बहुत कुछ कह गया। दिन छिपने के पहले ही लोग धीरे २ खिसकने लगे। रह गये सिर्फ थियेटर के पंडे दो-चार नौजवान। उन्होंने अनादि को इस पुण्य कार्यमें भरपूर सहायता पहुंचानेका वादा किया, और उसके एवजमें एक टेबिल हारमोनियम प्रदान करने का वचन लेकर चलते बने।

दूसरे ही दिनसे अनादिने समाज-सुधारका कार्य प्रारंभ कर दिया। सबेरे ही उठकर वह मल्लाहों के मुहल्ले में पहुँचा, और मुखियोंको बुलाकर उन्हें अपना महान उद्देश्य समझा दिया। 'एफ-ए, -ए' पास शुद्ध दिमाग विद्वान की सभी बातें उन लोगोंने मान लीं। उसके बाद जुलाहों में कुरमी, कलवार और काछियों में सर्वत्र प्रचार-कार्य समाप्त करके अन्तमें यह तय किया गया कि सभी श्रेणियों के अवनत हिन्दुओं की एक विराट सभा की जाय।

जुलाहों और मल्लाहों के मुहल्ले में दो-एक ऐसे नवयुवक भी थे, जो स्कूल में थर्ड क्लास तक पढ़कर माता सरस्वती से विदा लेकर बेकार घर बैठे थे। जातीय पेशा अख्तियार करना उनके लिये कष्टसाध्य और लज्जाजनक था; साथ ही समाजकी उन्नति करने के लिये उनके उत्साह की सीमा नहीं थी। ये लोग बदस्तूर अपने-अपने समाज के मुखपत्रों को गौर से पढ़ा करते हैं, और इस बातको महसूस करने लगे हैं कि उनके प्रति उच्च वर्णों का व्यवहार अत्यन्त अन्याय-पूर्ण और विद्वेष-युक्त होता है,—यहां तक कि इस बात को वे अपनी पंचायती बैठकों में भी बेधड़क कहने लगे हैं। परन्तु इस तरीके से वे अपनी जाति में अब तक जागरण नहीं ला सके हैं। अनादिका अभिप्राय अपने उद्देश्य के अनुकूल जानकर वे उस के अनुयायी बन गये, और इस विराट सभा में विभिन्न गाँवों से अपनी-अपनी जाति के प्रतिनिधि उपस्थित करने का भार उन लोगों ने अपने ऊपर लिया।

सभा होने को अभी १०-१२ दिन की देरी थी इस बीच के दिनों में दूसरा कोई काम करने के विचार से अनादि ने अपने थियेटर-पार्टी के साथियों को बुलवाया। उन लोगों से सलाह-मशविरा करके यह तय कियागया कि आगामी रविवारको 'कीचक-संहार'नामक नाटक खेला जाए। पौराणिक नाटक देखने के लिए अनेक विधवाओं का समागम होगा, और नाटक शुरू होने से पहले अनादि उपस्थित विधवाओं को लक्ष्य करके भाषण देगा। प्रचारका यह तरीका सब को पसन्द आया, और उसकी तैयारियाँ होने लगीं।

(५)

शाम को नाटक शुरू होने की बात थी' मगर पेंठ अभी उठी नहीं थी, इसीलिए दर्शकों का समागम होने में देर होने लगी। रात के ग्यारह बजे जा कर महिलाओं का स्थान खचाखच भर गया। पुरुषों का स्थान पहले से ही भर चुका था।

रंगमंच की यवनिका के अन्तराल में बाजों की झनकार शुरू ही हुई थी कि इतने में बड़े ज़ोर से तालियाँ बज उठीं, जिस से दर्शकमंडली में सनसनी सी पैदा हो गई। अनादि मंच पर आकर खड़ा होगया और भाषण देने लगा। इधर श्रोताओं में कानाफूसी और धीमे स्वर में समालोचना भी होने लगी। पर अनादि ने उस तरफ़ ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। बीच बीच में फकत दोचार ऊधमी लड़कों का आर्डर 'आर्डर' चिल्लाना उसे सुनाई देता था। घंटे भर बाद जब व्याख्यान खतम हुआ, तब अनादि ने देखा कि मंच के भीतर बड़ा ऊधम मच रहा है। एक सज्जन नाटक के उद्योग-कार्य में लगे हुए एक युवक के सामने खड़े होकर कहरहे थे—"सब के सब बदमाश लुच्चे-गुंडों का दल इकट्ठा हुआ है—भले घर की बहू बेटियों को बुला कर बेइज्ज़त करना—"

युवक ने प्रत्युत्तर में उस से भी बढ़कर कड़ी बेहूदी भाषा में जबाब दिया। धीरे-धीरे अपनी जगह छोड़ २ कर और भी लोग आ पहुँचे। दोनों ही पक्षों में गांव की ठेठ राष्ट्र भाषा में उत्तर-प्रत्युत्तर चलने लगा। इतने में भाषण की कापी बगल में दबाये हुए अनादिनाथ भी वहा आ खड़ा हुआ। उसे देखते ही चारों ओर से ऐसे कठोर वाक्यवाणों की वर्षा होने लगी कि उस से किसी भी धीर मनुष्य का धैर्य डिग सकता था, किन्तु समाज-सुधारक अनादिनाथ इस से मस नहीं हुआ। बल्कि उसे आश्चर्य हुआ कि आखिर बात क्या है! उस ने स्वप्न में भी न सोचा था कि उसके भाषण का ऐसा दुष्परिणाम होसकता है। धीरे धीरे इकतरफा गाली-गलोच खतम होगई फिर भी अनादि को जबाब देने-लायक कोई शब्द सुझाई नहीं दिये। इतने में एक कृष्णकाय बालक ने आकर अनादि का हाथ पकड़ कर खींचा, और बोला—"बुलाती है तुम को—"

कौन बुलाती है, बिना कुछ पूछे-ताछे ही अनादि लड़के के साथ चलदिया। मंडप के पिछवाड़ेमें इमली का एक पेड़ था: वहां अनादि की प्रतीक्षा में खड़ी हुई एक स्त्री ने अनादि को प्रणाम करके कहा—"पालागन पंडित जी! मेरा उद्धार कर दो पंडित जी।"

कैसा उद्धार, किसका उद्धार, उसकी कुछ समझ में नहीं आया। बोला—"मेरी सामर्थ्य के बाहर न हुआ तो जरूर।" स्त्री ने कहा "आप सब-कुछ कर सकते हैं पंडित जी। मेरी अभागी लड़की को पार उतार दो। आठ बरस की उमर से रांड होकर उन्नीसवीं साल में पड़ी है। अब मुझसे नहीं चलती-अगर कोई ले तो उसे—"

अनादिने सबबात समझ ली। उसका व्याख्यान बिलकुल व्यर्थ नहीं गया, यह जानकर उसे आनन्द भी हुआ। बोला- "अच्छी बात है। कल किसी वक्त हमारे घर पर आना, सब ठीक हो जायगा। पर एकबात है, यहाँ होना मुश्किल है। आना-हुआ कोई अच्छा लड़का है, जो विधवा से ब्याह करना चाहता हो?

स्त्री ने कहा-" यहाँ ब्याह कौन करेगा, महाराज? पुरोहित जी कहते हैं कि विधवा से ब्याह तो दो ही

कर सकते हैं-या तो मुसलमान या क्रिस्तान। हिन्दुओं में तो यह महापातक है।"

अनादि व्यंग्यात्मक हंसी हंस कर बोला-"आना तुम, देखूँगा।"

स्त्री प्रणाम करके चली गई।

अनादि घर लौटा। उधर समाज-रक्षकों का सारा क्रोध आकर पड़ा अभिनेताओं पर। जो लड़का उत्तरा बनने वाला था, उसे कान पकड़ कर ले गये जोशी जी; अभिमन्यु अपने मामा की लाल आंखें देख कर पहले ही से रफूचक्कर हो गया था। लिहाज़ा रात के दो बजे थियेटर शुरू होकर तीन बजे खतम हो गया।

(६)

दूसरे दिन शामको, अनादिनाथ के समाज-सुधार का पहला फल-पार्वतीको साथ लेकर कलवाली स्त्री आ पहुँची। बातों-बातों में अनादि ने उसका सारा हाल जान लिया। पार्वती ने बचपन में विधवा होकर बड़ी मुश्किल से इतनी उमर काटी है; अब माकी इच्छा है कि वह गृहस्थी करे। अनादि ने सब हाल सुन कर कहा—"जब मैं जाने लगूं, तुम अपनी लड़की को लेकर मेरे साथ चलना। अभी चुपचाप बैठी रहो; यहां के आदमी ठीक नहीं हैं, मालूम हो जाने पर सब गड़बड़ कर देंगे।"

मा और लड़की दोनों चली गईं।

इस बीच में, अनादि के चेले भावी विराट सभा के लिए श्रोता एकत्र करने के काम में जुटे हुए थे। इधर अनादि संहिता-सागर मन्थन करके श्लोक-उद्धार के काममें व्यस्त था। उन्नीसवें संहिता कार के साथ परिचय समाप्त होने से पहिले ही, सहसा एक दिन सबेरे अदालत के चपरासी ने आ कर अनादि को सम्मन नज़र किया। अनादि ने देखा कि गवाही का सम्मन है। उसकी समझमें कुछ न आया कि वह अचानक गवाह कैसे बन गया। सम्मन हाथ में लिये-हुए वह सीधा चौधरी के घर पहुंचा। चौधरी जी ने आद्यन्त पढ़ कर बताया—"इसमें क्या है? कह देना कि यह पोद्दार की हद में नहीं है।"

"यह क्या?"—अनादि ने पूछा। चौधरी ने समझाना शुरू किया—"दीपू पोद्दार ने बिना पूछे जोशी जीके बगीचे में घुस कर कटहर तोड़ा था; जोशी जी को यह बात अखर गई। उसी का यह मामला है। जोशी जी ने तुम्हें गवाह बनाया है।"

अनादि झुंझला उठा, बोला—"मुझे इसकी क्या खबर कि किस ने कहां कटहर तोड़ा था? झूठ मूठ को हैरान करना! मैं तो यहां वालों की भलाई करने आया था, ये लोग उलटे—"

चौधरी ने कहा—"हैरान होने की इस में कौन सी बात है? कचहरी यहां से छह कोस के करीब होगी, सबेरे ही उठ कर टहलते हुए चले जाना। और तुम्हारी अच्छी बात क्या लोग यों ही सुन लेंगे? पहले दो-चार मामले-मुकद्दमों में मदद करो। तब तो गांव के लोग समझेंगे कि तुम भी गाँव के एक मुखिया हो।"

अनादि ने कुछ जवाब नहीं दिया, सीधा अपने घर चला आया। थियेटर पार्टी के मित्रों ने सम्मन देखकर जो सच बात थी, वह कह दी। गांव के मुखियों ने मिल कर अनादि को सिर्फ हैरान करने के लिए ही यह षड्यंत्र रचा था। यह सुन कर

अनादि मारे क्रोध के जल-भुन कर खाक हो गया, बोला—"अच्छा, पहले जुलाहे-मल्लाहों को एक साथ कर दूं, उस के बाद समझ लूंगा।"

अनादि बड़े उत्साह के साथ अपने संकल्प को पूरा करने में लगगया। शरीफ आदमियों के सिवा और सब श्रेणी के लोग अनादि के भक्त हो गये। सभा का मंडप बिलकुल साफ सुथरा कर दिया गया था। कल महासभा शुरू होगी। विभिन्न ग्रामों से विभिन्न प्रकारके प्रतिनिधि और श्रोता आने लगे-दर्शकों का तांता बंध गया। अनादि अपनी सफलता और अपने चेलों की कार्यपटुता देखकर दंग रह गया। इतनी आशा उसे हरगिज न थी। अनादि ने अपने प्रधान शिष्य जुलाहे युवक को बुला कर कहा—"तुम ने खूब काम किया-तुम अच्छा कार्य कर सकते हो। मेरे पीछे तुम्हीं यहां का प्रचारकार्य चलाते रहना; हर महीने में तुम्हें कलकत्ते से रुपये भेज दिया करूंगा।"

बुनकर-तनय ने भर-मुँह हंसकर कहा—"इन आदमियों को कितनी मुश्किलसे लाया हूँ, आपको मालूम नहीं! कोई आना थोड़ा ही चाहता था। कहते थे, उसमें क्या होगा? मैंने कहा, कलकत्ते से एक बड़े भारी पण्डित जी आये हैं, भागवत सुनायेंगे बस, चटसे सब राजी होगये। अब आप जो करना चाहें करलें।" सामाजिक उन्नति के लिये कोई नहीं आना चाहता, और भागवत सुननेके लिये लोगों का तांता बँध गया-यह देख अनादिको बड़ा आश्चर्य हुआ। अवनत जातियों के लिये सामाजिक उन्नति की कितनी भारी आवश्यकता है—इस बातको उजड्ड मूर्ख बिलकुल समझते ही नहीं। इन मूर्ख असहायों को समझा ही देना है कि वे भी मनुष्य हैं।

दूसरे दिन अवनत जातियों की विराट सभाका अधिवेशन शुरू हुआ। गांवके भले घरोंकी स्त्रियां और पुरुष बड़ी उत्सुकता से जलसा देखने आये थे। अनादि पंडिताऊ ढंगके कपड़े पहनने घर गया था। इतने में गांवके बड़े पंडित जी माधव मिश्र आ पहुँचे। उन्हें देखते ही जुलाहोंके सरदार रामलाल ने बड़ी भक्तिके साथ जमीनसे सिर लगाकर प्रणाम किया। पंडित जी ने व्यंगमें हंसते हुये कहा—"कहिये सरदार जी! ब्राह्मन बन रहे हो क्या?"

दाँतों तले जीभ दबाकर कान पकड़ते हुये रामलाल ने कहा—"राम! राम! राम! यह आप क्या कह रहे हैं?

पंडित जीने कहा—"तो फिर इन समाजियों में कैसे मिल गये?"

समाजियों का नाम सुनते ही रामलाल का मुँह सूख गया। बोला जी नहीं, पंडित जी, कसूर माफ हो पंडित जी, इन सब छोकड़ों का घुटाला है सब। मुझे कुछ नहीं मालूम।"

इतना कह कर उसने कृत अपराधके लिये क्षमाकी भीख माँगी, और पंडित जी के चरणों में बैठ गया। आध घंटा बाद अनादि भी आ पहुँचा उसके सिर पर रेशमकी पगडी, बदन पर गेरुआ वसन और छाती पर लालरंगका रेशमी फूल पड़ा हुआ था, जिसपर सफेद रेशमी सूतसे लिखा हुआ था—"यतो धर्मस्ततो जयः।" अनादिको आते देख भक्त शिष्य मंडली एक साथ जयध्वनि कर उठी—"बन्दे मातरम"

इस शब्दसे लोग परिचित न थे, और न उन्हें ऐसे नारे बुलन्द करनेकी आदत ही थी

लिहाजा अधिकांश जनता मौन ही रही। तब उत्साही बन बुनकर-सुतने जोरसे चिल्लाकर कहा—"बोलिये भाइयो"—बात खतम भी न हो पाई कि उपस्थित जनता एक साथ चिल्ला उठा—"बोलो वृन्दावन विहारीलाल की जय"! बोलो श्री राधाकृष्णजी की जय!

अब तो अनादिको आवेश आगया। और दो तीन दस्ता कागज निकालकर श्रोताओं को लगा समझाने। आवेश में आकर न जाने क्या २ कर गया? अवनत जातियों को उन्नत बनाना चाहिये, ब्राह्मणों के कारण ही राष्ट्र की ऐसी अधोगति हुई है। शास्त्रकारों ने बहुत ही पक्षपात से काम लिया है इत्यादि प्रभृति। नतीजा यह हुआ कि जो भागवत की कथा सुनने आये थे—वे धीरज खो बैठे। कितने ही उठकर चल दिये। कितनोंने ऊल जलूल बकना शुरू कर दिया। करीब दो घंटे बाद, व्याख्यान समाप्त करके अनादिने कुरसी पर बैठकर कहा—"मुझे जो कुछ कहना था कह चुका, अब उन्नति करना तुम लोगों के हाथ में है। उन्नति तभी हो सकती है जब छोटे बड़े का भेद बिलकुल मिट जाय। समस्त जातियों में परस्पर रोटी पानीका चलन होना जरूरी है, और यह हमें करना ही पड़ेगा—इस बाधाको मिटाना ही होगा।"

सभामेंसे एक आदमी बोल उठा—"ठीक है, ब्राह्मण, ठाकुर सभी कोई खाँय, हम लोग भी खा सकते हैं।"

अबतो अनादि कुर्सी पर खड़ा होगया; बोला—"सुनो भाइयो, मैं ब्राह्मण हूँ; मैं जो करूंगा, सो तुम लोग करोगे?"

अनादिके चेलों ने मिलकर एक स्वरमें कहा—"हाँ, करेंगे।"

इन्तजाम पहलेसे ही किया हुआ था। अनादिने कहा—"ला रे लोचना, पानी ला।"

लोचन एक दुसाधका लड़का था। हुक्म पाते ही एक गिलास पानी ले आया। अनादिने एक साँसमें उसे समाप्त करके कहा—"जिसने मुझे पानी पिलाया है, वह दुसाधका लड़का है, मैंने रास्ता दिखा दिया, अब तुम लोग आगे बढ़ो।

मिनटों में सभास्थल रणक्षेत्र में परिणत होगया पीछेसे मिश्रजी महाराज बड़े जोरसे चिल्ला उठे—"म्लेच्छ है, किस्तान है।" साथही सभामें बहुतसे लोग एकसाथ चिल्लाने लगे—"धोखेबाज है, धोखा देकर जात लेता है, किस्तान है, समाजी है, फिरंगी है।"

अनादि जनता को समझाने की व्यर्थ चेष्टा करता हुआ बाहर निकल आया। उसकी आंखोंसे आग निकल रही थी। संकल्प भंग होनेसे बेचारा हताश होकर सीधा अपने घर पहुँचा। कुछ देर कम्प्लीट रेस्ट लेनेके बाद, फिर उसे सभाके समाचारसे कोई दिलचस्पी नहीं रहगई। मगर शामको जब खूनसे लथपथ रोता-बिलखता हुआ दुसाधका लड़का लोचन आकर सामने खड़ा होगया, और अनादिको पानी पिलाने के अपराध पर खड़ाऊं जूते और लाठी द्वारा जितनी तरहकी सजाएं मिली थीं, सब दिखा-दिखा कर रोने लगा, तो अनादिने उसे पांच रुपये देकर विदा किया और अपना बोरिया-बसना बांधकर काममें लग गया। उसका इतना कठोर परिश्रम, इतनी तैयारियाँ, इतनी कोशीशें,पैसा

उदार संकल्प, सब कुछ लोचन दुसाधके एक गिलास पानी में बह गया। दूसरे ही दिन अनादि ने ग्राम त्याग दिया।

(७)

अनादिकी नाव जब गौरीपुरा के मुहाने पर पहुंची, तो सहसा किसीका कण्ठस्वर सुनाई दिया। अनादिने मुड़कर देखा—हाथमें गठरी लिये हुये पार्वती और उसकी मा खड़ी है। पार्वतीकी मा ने कहा—"हम लोगोंको छोड़े जाते हैं पण्डित जी!

अनादिने कहा— "अभी फिर आऊंगा, तब ले जाऊंगा।"

—"आपकी बात पर मिट्टी मोल सब बेच-बाच कर—"

माकी बात काटकर पार्वतीने कहा—"तू जानती नहीं मा, ये सब मतलब के साथी हैं, इतनी बीत चुकी, तबभी होश नहीं आया?

अनादि इस कुत्सित व्यंगको सुनकर दंग रह गया। तुरन्त ही नावके भीतर जाकर मल्लाहसे बोला—"चलाओ जल्दी"

किनारे की तीखी बातोंपर उसने कुछ ध्यान नहीं दिया। कुछ दूर निकल आने पर अनादिने मल्लाहसे पूछा—"यह लड़की कौन थी, जानते हो?"

मल्लाहने जरा मुस्कराकर कहा— "आप जानते नहीं उसे? पुरोहित जी की लड़की है।"

अनादिके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। बोला—"सो कैसे?

"—उसकी मा पुरोहितजीके घर काम करती थी। जातकी दुसाध है।"

अनादि चुप मारे बैठा रहा।

× × + ×

अनादि आजकल मास्टरी करता है। लेकिन समाज-सुधारका भूत अभी तक पूरा उतरा नहीं। हर इतवार को लोग उसे लालदिग्घी, कमसेकम कम्पनीबागमें, लेक्चर देते हुये देखते हैं।

प्रचारकोंकी कमीके कारण उसकी समिति करीब करीब टूट ही गई समझिये।

(विशालभारतसे उद्धृत)

विरोध परिहार

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

विरोध २२—जब ज्ञान की अनन्तता का ज्ञेय से कोई सम्बन्ध नहीं तो ज्ञान अनन्त बना रहे परन्तु वह सब पदार्थों को कैसे जानेगा ? विद्युत तेज के उदाहरण से मेरे ही पक्ष की सिद्धि होती है।

परिहार २२—ज्ञान अनन्त है। इस की यह अनन्तता इस के अविभागी प्रतिच्छेदों की दृष्टि से है। इस का यह तात्पर्य नहीं कि ज्ञान का ज्ञेय के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। ज्ञान जानता है तथा ज्ञेय जाने जाते हैं अतः इन का ज्ञानज्ञेय ही सम्बन्ध है। ज्ञाता ज्ञान या उस के अविभागी प्रतिच्छेद भिन्न २ सत्ताधारी नहीं अतः ज्ञेय के साथ अविभागी प्रतिच्छेदों का भी वही संबंध है जो कि ज्ञान का है। ज्ञान के अविभागी प्रतिच्छेदों की संख्या ज्ञेयों की संख्या से भी अधिक है अतः उसके द्वारा सम्पूर्ण पदार्थों के जानने की बात तो स्वयं सिद्ध है।

विद्युत तेज के उदाहरण को स्पष्ट करने के लिए आक्षेपक ने वर्णों से सम्बन्ध रखने वाली तरङ्गों की संख्या गणना की है। यह सब प्रकृत विषय में बिलकुल असम्बद्ध है। विद्युत तेज में हमारा तात्पर्य उस भामंडल से है जो प्रत्येक प्राणी के शरीर के साथ रहता है तथा उस के विचारों के अनुसार ही इस में परिणमन होता रहता है। विचार परिवर्तन और इस के रंगपरिवर्तन का अविनाभावी सम्बन्ध है। इससे प्रगट है कि प्रस्तुत उदाहरण किसी भी प्रकार आक्षेपक के मन्तव्य का समर्थक नहीं अपितु विरोधक ही है।

विरोध २३—निगोदिया के ज्ञान की व्यक्ति भी अनन्त होती है परन्तु इस से वह अनन्तज्ञ नहीं हो जाता। अगर कहा जाय कि अनन्त पदार्थों को जानने का नाम अनन्त शक्ति है तब यह असिद्ध ही है। क्यों कि ज्ञान अनन्तपदार्थों को जान सकता है यह अभी साध्य है।

परिहार २३—निगोदिया के ज्ञान की व्यक्ति भी अनन्त होती है इसका तात्पर्य यदि उसके ज्ञान का लब्धि से है तब यह बात ठीक है किन्तु यदि इस ही को उस के ज्ञान के उपयोग के सम्बन्ध में घटित किया जायगा तब यह बात ठीक नहीं है।

प्रत्येक आत्मा के ज्ञान के अनन्तानन्त अविभागी प्रतिच्छेद हैं। इनमें से निगोदिया के अनन्त अविभागी प्रतिच्छेदों से आवरण का अभाव है अतः लब्धि की दृष्टि से उस का ज्ञान अनन्त है अन्य संसारी प्राणियों की तरह इसको भी अपने मतिज्ञान में इन्द्रिय सहायता अनिवार्य है। अतः यह भी अपना लब्धि को उपयोग रूप इन्द्रिय सहायता से ही करता है। इन्द्रिय की मदद खास समय में किसी खास विषय के सम्बन्ध में ही सहायता करती या कर सकती है अतः उसही के सम्बन्ध में उपयोगात्मक ज्ञान हो जाया करता है। इस से स्पष्ट है कि लब्धि की दृष्टि से निगोदिया के ज्ञान को अनन्त मान कर भी उस का उपयोग की दृष्टि से अनन्त न मानना भी युक्तियुक्त है।

अनन्त पदार्थों को जानने का नाम अनन्त शक्ति नहीं अतः आक्षेपक का यह वक्तव्य तो बिलकुल

निरर्थक है। अनन्त पदार्थों का जानना एक क्रिया है तथा शक्ति इससे भिन्न है। शक्ति तो वह है जिसके द्वारा आत्मा ऐसा किया करता है या कर सकता है। दरबारीलाल जी ज्ञान में असंख्य पदार्थों को जान लेने का स्वभाव मानते हैं। आपको यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि यह ज्ञान की एक शक्ति है, या आत्मा की इस शक्ति का नाम ही ज्ञान है तथा इसही शक्ति से वह पदार्थों को जानता या जाना करता है। इसमें न्यूनाधिकता के निमित्त इसमें अविभागी अंशों को भी मानना ही पड़ेगा, इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी का जानने रूप क्रिया को ज्ञानका अनन्तत्व बतला कर आक्षेप करना ठीक नहीं है।

आत्मा में अनन्त पदार्थों को जानने की शक्ति है तथा आवरण विहीन होने पर वह ऐसा करता है इसका समर्थन हम अनेक स्थानों पर कर चुके हैं। इसही सम्बन्ध में हमने एक प्रश्न उपस्थित किया था कि आप ज्ञान की शक्ति एवं उसकी तदनुसार व्यक्ति की सीमा निश्चित करें तथा साफ २ बतलावें कि कौन से पदार्थ उसकी इस सीमा के बाहर हैं। ऐसा होने पर ही ज्ञान को सान्त कहा जा सकता है अभी तक हमारे विद्वान लेखक इसके सम्बन्ध में मौन हैं। आशा है आप इसके सम्बन्ध में शीघ्र अपना अभिमत स्पष्ट करेंगे।

विरोध २४—अगर भूत पदार्थ अपने समय में थे तो इनका प्रत्यक्ष भी अपने समय में हो सकता था। इस समय तो वह अभाव रूप हैं इस लिये उसमें अर्थ क्रिया नहीं हो सकती, इस लिये वह किसी के विषय भी नहीं हो सकते। प्रत्यक्ष तो दूर के पदार्थ का भी नहीं होता परन्तु वह सत् रूप है इस लिये किरणों के द्वारा वह ज्ञाता पर कुछ प्रभाव डाल सकता है।

परिहार २४—प्रत्यक्ष दो प्रकार का है। एक इन्द्रिय प्रत्यक्ष और दूसरा अनिन्द्रिय प्रत्यक्ष। इन्द्रिय प्रत्यक्ष में इन्द्रियों की सहायता की आवश्यकता है। दूसरे के लिये नहीं। यह तो केवल आत्ममात्र सापेक्ष है।

इन्द्रिय प्रत्यक्ष की बातें इसही की मर्यादा तक रह सकती हैं इसका अनिन्द्रिय प्रत्यक्ष के साथ कोई सम्बन्ध नहीं।

हम इन्द्रियों की सहायता से जानते हैं अतः सर्वज्ञ भी ऐसे ही जानते होंगे यह कल्पना मिथ्या है। अतः प्रथम तो सर्वज्ञों के ज्ञानों के सम्बन्ध में यह बात घटित नहीं होती। दूसरे आधुनिक मनोविज्ञानी भी जिसकी नकल करके आक्षेपक ने ऊपर की बातें लिखी हैं इस विषय में एक मत नहीं हैं। चक्षु इन्द्रिय के सम्बन्ध में उनका कहना है कि बाह्य पदार्थ का जो चित्र हमारी पुतली पर पड़ता है हम उसही को नहीं जानते। यदि ऐसा होता तब तो पदार्थ का उल्टा ज्ञान होना चाहिये था। इस से तो हमारी ज्ञानेन्द्रिय को उत्तेजना मिलती है और फिर वह स्वयं पदार्थ को जानती है। यही बात दूसरी इन्द्रियों के सम्बन्ध में है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि आत्मा को जानने की क्रिया में इन सब बातों की आवश्यकता नहीं। ये सब

मिलकर तो ज्ञानेन्द्रिय की उत्तेजनामात्र करती हैं। *

जिनकी ज्ञानेन्द्रियां उत्तेजित हैं उनको इन सब बातों की जरूरत नहीं। वे तो इन सब बातों के बिना ही उनका ज्ञान कर सकते हैं। अतः यह कहना कि 'बिना अर्थक्रिया के ज्ञान हो ही नहीं सकता' बिल्कुल निराधार है। ज्ञान के होनेमें अर्थ-क्रिया की तो कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं है। ज्ञान में जानने की ताकत है और पदार्थों में जाने जाने की ; चाहे वे किसी भी समय विशेषके क्यों न हों अतः भूतकाल के पदार्थों के जानने में कोई आपत्ति नहीं रह जाती।

आक्षेपकने नन्दीसूत्रके आधारसे अपनी लेखमालामें यह बात लिखी है कि पहले समयमें अनिन्द्रिय प्रत्यक्ष का भी अर्थ मानसिक प्रत्यक्ष ही था किन्तु उनका ऐसा लिखना केवल वंचनामात्र है।

पाठक इसके समन्वय में विशेष अध्ययन करसकें अतः यहां हम प्रथम आक्षेपक के इस प्रकरण सम्बन्धी वाक्य उद्धृत कर देना उचित समझते हैं—

"नन्दीसूत्रमें ज्ञान के जो भेद प्रभेद कहे हैं उसमें केवलज्ञान नोइन्द्रियप्रत्यक्षका भेद बतलाया गया है। ज्ञानके संक्षेपमें दो भेद हैं—प्रत्यक्ष और परोक्ष। प्रत्यक्ष दो प्रकार का है—इन्द्रिय प्रत्यक्ष नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष। इन्द्रिय प्रत्यक्ष पांच प्रकार का है नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष तीन प्रकार का है—अवधिज्ञान प्रत्यक्ष, मनःपर्यय ज्ञान प्रत्यक्ष, केवलज्ञान प्रत्यक्ष। इससे मालूम होता है कि एकसमय अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान मानसिक प्रत्यक्ष माने जाते थे परंतु पीछे से यह मान्यता बदलगई और खींचतान कर नोइन्द्रिय का अर्थ 'आत्मा' कर दिया और प्रसिद्ध अर्थ मन छोड़ दिया गया"। जैन जगत वर्ष ८ अंक १० पेज ६।

* जिस प्रकार फोटो के कैमरे में उसके अन्तरीय प्लेट पर उल्टा चित्र बनता है उसी प्रकार मनुष्य की आंख में अन्तर्वर्ती ज्ञानी परदे पर उल्टा चित्र स्थापित होता है। अब यहां यह प्रश्न उपस्थित होता है कि ज्ञानी परदे पर उल्टा चित्र पड़ने की अवस्था में हमें चीजें सीधी क्यों नजर आती हैं। इस प्रश्न के उत्तर में कई लेखकों का यह कहना है कि ज्ञानी के परदे के चित्र का देखने की क्रिया के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। चित्र का सीधा उल्टा होना एक शारीरिक क्रिया है जो देखने की क्रिया से पूर्व चक्षु की विशेष रचना से फलित होती है। यह ज्ञानी परदे का चित्र मस्तिष्क में नहीं पहुँचता वहां तो केवल चक्षुनाड़ी का प्रोत्साहन ही पहुँचता है। **वास्तव में उस प्रोत्साहन के होने पर जो मानसिक व्यापार होता है वह देखना क्रिया है। देखते समय आत्मा का सम्बन्ध सीधा बाह्य विषय के साथ रहता है न कि चक्षु के अन्तर्वर्ती चित्र के साथ।** कई अन्य लेखक अपना मत इस प्रकार भी प्रकाशित करते हैं कि ज्ञानी परदे से जो प्रोत्साहन मस्तिष्क में पहुँचता है वह उस पर्दे के चित्रका विस्तार सम्बध अपने साथ नहीं लाता अतः पदार्थका सीधा देखना या तो हमारे अन्तरीय स्वभाव का फल है या निरन्तर अभ्यास का।

सुधाकर का मनो विज्ञान पे० १०६-७

नन्दी सूत्र के प्रारम्भ में ही गुरु परम्परा दी है। इसके बाद ज्ञान प्रकरण है ज्ञान प्रकरण में ही प्रथम ज्ञान के पांच भेद किये हैं। बाद को इन ही ज्ञानों का प्रत्यक्ष और परोक्ष के भेद से वर्णन किया है।

प्रत्यक्ष के भी दो भेद किए हैं। एक नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष और दूसरा तो इन्द्रियप्रत्यक्ष। यही नोइन्द्रिय प्रत्यक्ष प्रस्तुत विवाद का विषय है। आक्षेपक का कहना है कि यहां नोइन्द्रिय शब्द का अर्थ मन है तथा इस प्रकार अवधि, मन पर्यय और केवल ये तीनों ही मानसिक प्रत्यक्ष के भेद ठहरते है।

नन्दीसूत्र के मूल में नो इन्द्रिय शब्द की कोई व्याख्या नहीं मिलती टीकाकारों ने इस शब्दका आत्मापरक ही अर्थ किया है और इस प्रकार यह दरबारीलाल जी के प्रतिकूल जाता है। नन्दीसूत्र का स्वयं आगे का वर्णन भी टीकाकार के ही अभिप्राय का समर्थक है। इनही भेदों को गिना कर फिर नन्दी सूत्रकार ने फिर इन में प्रत्येक के भेदों को गिनाया है अवधि के भवप्रत्यय और क्षयोपशमनिमित्त दो भेद किये है तथा इसको भूत भविष्यत का ज्ञाता स्वीकार किया है। इस ही प्रकार मनः पर्यय ज्ञान को भी भूत भविष्यत का ज्ञाता स्वीकार किया है। सूक्ष्मताकी दृष्टि से भी इन के वे ही विषय बतलाये है जो कि दूसरे शास्त्रों में बतलाये गये हैं।

नन्दी सूत्र केवलज्ञान के सम्बन्ध में भी ठीक वैसा ही विवेचन करता है जैसा कि इस के सम्बन्ध में दूसरे शास्त्रों में मिलता है। नन्दीसूत्र इस को द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी दृष्टि से अनन्त स्वीकार करता है।[१]

'नोइन्द्रिय' शब्द का मनकी तरह आत्मा भी अर्थ है। यदि प्रस्तुत नोइन्द्रिय शब्द से सूत्रकारका तात्पर्य मन से होता तो वह इस को प्रचलित मान्यता वाला स्वीकार न करते। अवधि, मनः पर्यय और केवलज्ञानों में मानसिक ज्ञान या प्रत्यक्षमानने पर ये इस प्रकार के नहीं ठहरते जैसा कि इन का वर्णन नन्दी सूत्र में मिलता है केवलज्ञान यदि मानसिक होता तो वह सर्वज्ञ कभी भी नहीं हो सकता था। ऐसी परिस्थिति में यही कहना पड़ेगा कि नन्दीसूत्र के प्रस्तुत नो इन्द्रिय शब्द का अर्थ आत्मा है अतः उस की मान्यताके अनुसारभी अवधि, मनःपर्यय और केवलज्ञान आत्मिक प्रत्यक्ष ही सिद्ध होते है।

ऐसी परिस्थितिमें यह निःसंदेह है कि दरबारीलाल जी का लिखना " इससे मालूम होता है कि एक समय अवधि, मन पर्यय और केवल ज्ञान मानसिक प्रत्यक्ष माने जाते थे परन्तु पीछे से यह मान्यता बदल गई और खींच तानकर नोइन्द्रिय का अर्थ आत्मा कर दिया " निराधार है।

---

१ से तं सिद्ध केवलणाणं। तं समासओ चउव्विहं पण्णत्तं तं जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ।

तत्थ दव्वओणं केवलनाणी सव्वाइं दव्वाइं जाणइ पासइ, खेत्तओणं केवलनाणी सव्वं खेत्तं जाणइ पासइ, कालओणं केवलनाणी सव्वकालं जाणइ पासइ, भावओणं केवलनाणी सव्वे भावे जाणइ पासइ। अह सव्व दव्व परिणाम भाव विण्णत्तिकारण मणंतं सासयं मप्पडिवाई एगविहं केवलनाणं।

नन्दीसूत्र ज्वालाप्रसाद जी वाला ८३ ४

आर्यसमाज की वेदोत्पत्ति

(ले०—पं० सुरेशचन्द्र जैन न्यायतीर्थ)

आर्यसमाज वेदों को ईश्वर कृत मानता है। इसकी मान्यता के अनुसार परमात्मा सृष्टि के प्रारंभ में चार ऋषियोंको चारों वेदोंका प्रकाश करता है। वर्तमान समय के चार ऋषियों के नाम अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा है। परमात्माने इनही के द्वारा क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद,सामवेदऔर अथर्ववेद का प्रकाशकिया था।

आर्यसमाज की इस मान्यता के सम्बन्ध में दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। एक ऐतिहासिक और दूसरी दार्शनिक। अपने इस लेखमें हम आर्यसमाज के इस सिद्धान्तकी ऐतिहासिक दृष्टि से समालोचना करेंगे। आर्यसमाजकी मान्यता के अनुसार वर्तमान सृष्टिको एकअरब छियानवे करोड आठ लाख बावन हजार नौ सौ छियत्तर वर्षका (१९६०८५२९७६) समय हुआ। यही समय वेदों के प्रकाशका है। आज जितने भी ऐतिहासिक साधन उपलब्ध हैं उनमें एक भी ऐसा नहीं है जो इतने समय की बात का वर्णन कर सकता हो। आज तक जितने भी ऐतिहासिक साधन उपलब्ध हुए हैं वे करोड़ों और अरबों वर्षों की तो बात ही क्या है? वे तो लाख दोलाख वर्षकी बातका भी निश्चयात्मक वर्णन नहीं करसके हैं। अतः समाजकी इस मान्यता के सम्बन्ध में ऐतिहासिक प्रमाणों के समर्थनकी बात तो एक स्वप्न जैसी बात है।

इस सम्बन्ध में दूसरा नम्बर भारतीय साहित्य का है। भले ही भारतीय इतिहासके सम्बन्ध में इसको एकान्ततः प्रामाणिक स्वीकार न किया जाता हो किन्तु फिर भी यह निश्चित है कि भारतीय इतिहासके निर्माण में इसको भुलाया नहीं जा सकता। अतः आर्यसमाज की प्रस्तुत मान्यता के सम्बन्धमें इसके आधारसे भी विचार कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है। स्वामी दयानन्द जी ने अपनी इस मान्यता के सम्बन्ध में शतपथ ब्राह्मण और मनुस्मृति के प्रमाण उपस्थित किये हैं। विद्वान पाठक स्वामी जी के अभिप्रायको भले प्रकार समझ सकें अतः यहां हम उनके इस प्रकरणके वाक्यों को ज्योंका त्यों ही उद्धृत किये देते हैं—

प्रश्न— किनके आत्मा में कब वेदोंका प्रकाश किया।

उत्तर— अग्नेऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः। शत० ११-४-२-३। प्रथम सृष्टि की आदिमें परमात्माने अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा इन ऋषियोंके आत्मा में एक-एक वेदका प्रकाश किया।

प्रश्न— यो वै ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै श्वेता श्व० अ० ६ मंत्र १८

यह उपनिषद् का वचन है। इस वचन से ब्रह्मा जी के हृदय में वेदों का उपदेश किया है। फिर अग्न्यादि ऋषियों के आत्मा में क्यों कहा?

(उत्तर) ब्रह्मा के आत्मा में अग्नि आदि के द्वारा स्थापित कराया। देखो मनु ने क्या लिखा है-

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजु सामलक्षणम्॥
मनुस्मृति १—२३

जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों महर्षियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ऋग, यजु, साम और अथर्व वेद का ग्रहण किया।

अब विचारणीय यह है कि उपर्युक्त उल्लेख आर्यसमाज की मान्यता की सत्यता को प्रमाणित करते हैं या नहीं—

स्वामी दयानन्द जी ने अपनी प्रस्तुत मान्यता के सम्बन्ध में उपर्युक्त उल्लेखों को उपस्थित करने में बड़ी चतुरता से काम लिया। यदि उन्हों ने ऐसा न किया होता तो ये इन उल्लेखों को यहां कदापि नहीं लिख सकते थे। इन उल्लेखों से स्वामी जी की मान्यता की सिद्धि नहीं होती प्रत्युत ये तो उनकी मान्यता का खंडन करते हैं। ऐसा होने पर भी स्वामी जी ने पूर्वापर सम्बन्धको छोड़कर इन उल्लेखों का अर्थ बदला किन्तु फिर भी वे सफल मनोरथ न हो सके। किसी साधारण पुरुष की भी ऐसी बातें क्षन्तव्य नहीं हैं फिर स्वामी जी तो एक सम्प्रदाय के संस्थापक हुये हैं।

शतपथ के मौजूदा उल्लेख को यदि उसके पहिले वाक्यों के साथ मिला दिया जाय तो फिर पाठ *निम्न प्रकार हो जाता है—*

प्रजापतिर्वा इदमग्र आसीत्। एक एव। सो-ऽकामयत बहु स्यां प्रजायेयेति। सोऽश्राम्यत्। स तपोऽतप्यत। तस्माच्छ्रान्तात्तेपानात् त्रयो लोका असृज्यन्त पृथिव्यन्तरिक्षं द्यौः। स इमां ल्लोकानभितताप। तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रीणि ज्योतींष्यजायन्ताग्निर्योऽयं पवते, सूर्यः। स इमानि त्रीणि ज्योतींष्यभितताप। तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्त—अग्नेर्ऋग्वेदः वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः"

शतपथ—१७-५-८—१-२ ३

शतपथ के इस उल्लेख से स्पष्ट है कि इसमें ऐसी कोई भी बात नहीं है जिससे आर्यसमाज की मान्यता का समर्थन किया जा सके। न इसमें चार ऋषियों का वर्णन है और न उनको परमात्मा के द्वारा चारों वेदों के मंत्र मिलने का। शतपथ के इस उल्लेख से

(२० वें पेजका शेषांश)

उपर्युक्त विवेचनसे प्रगट है कि जो इन्द्रिय प्रत्यक्ष आत्मप्रत्यक्ष है तथा इस में और इन्द्रिय प्रत्यक्ष में महान अन्तर है। आत्म प्रत्यक्ष में इन्द्रियोंकी सहायता की जरूरत नहीं है अतः इन्द्रियज्ञानकी बातें इस के सम्बन्ध में घटित नहीं की जा सकतीं।

इन्द्रिय प्रत्यक्ष में भी वाह्य पदार्थ आदि केवल ज्ञानेन्द्रिय को उत्तेजित ही करते हैं। जानने का कार्य तो वह फिर भी स्वतंत्रतासे ही करता है। अतः *यह भी संभव है कि जहाँ उत्तेजना की जरूरत न हो* वहाँ बिना पदार्थों की सहायता के भी उन का ज्ञान हो जाय तथा यह बात अनिन्द्रिय ज्ञान के सम्बन्ध में है। जब अनिन्द्रिय प्रत्यक्षके लिए अर्थ क्रिया अनिवार्य नहीं तब इस ही आधार से उस में भूत और *भविष्यत के पदार्थों के ज्ञानका अभाव बतलाना ठीक* नहीं। इन्द्रिय प्रत्यक्ष से भी अर्थ क्रिया की आवश्यक अभ्युपगम सिद्धान्तसे बतलाया है। अतः प्रगट है कि दरबारीलाल जी की प्रस्तुत बाधाभी मिथ्या है।

तो यही प्रगट किया जा सकता है कि तीन ज्योतियों के द्वारा तीन वेदों की उत्पत्ति हुई थी। अग्नि, वायु और आदित्य इन ज्योतियों का नाम है। शतपथ के प्रस्तुत उल्लेख में स्पष्ट रीति से इनको ज्योति स्वीकार किया गया है अतः इनको ऋषि पक्ष में घटित नहीं किया जा सकता।

इससे स्पष्ट है कि परमात्मा का सृष्टि की आदि में चार ऋषियों के द्वारा चार वेदों के प्रकाश का समर्थन शतपथ के इस उल्लेख से कथमपि नहीं होता।

स्वामी दयानन्द जी भी स्वयं इस बात को समझते थे किन्तु फिर भी उनको अपनी इस कल्पना के समर्थन में प्रमाण न मिलने से उन्हों ने शतपथ के प्रस्तुत अंश के अर्थ में गड़बड़ी करके इस को अपनी तरफ खींचनेकी चेष्टा की थी। यही नहीं उन्हों ने शतपथ के प्रस्तुत उल्लेख के अर्थमें निराधार बढ़ोतरी भी की है। प्रस्तुत उल्लेखमें न अंगिरा ऋषि का गंध है और न अथर्ववेद का; फिर भी उन्हों ने इस ही उल्लेख के अर्थ में यह भी लिख दिया है कि परमात्मा ने अंगिरा ऋषि के द्वारा अथर्ववेद प्रकाश किया था। शतपथ के प्रस्तुत उल्लेख में बड़े ही स्पष्ट शब्द हैं। अग्नि से ऋग्वेद की; वायु से यजुर्वेद की और सूर्य से सामवेद की उत्पत्ति का वर्णन है। इन के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा शब्द ही नहीं है जिसका अर्थ अथर्व और अंगिरा ऋषि किया जासके, इस से प्रगट है कि स्वामी जी ने अर्थ परिवर्तन की तरह उस में परिवर्धन भी किया है।

यदि अभ्युपगम सिद्धान्त से अग्नि आदिक तीन ज्योतियों को तीन ऋषि ही स्वीकार कर लिया जाय तब भी यह आर्यसमाज के लिए घातक ही प्रमाणित होगा। आर्यसमाज की मान्यता है कि वेद ईश्वरकृत हैं और उस ने इनका प्रचार अग्नि आदिक ऋषियों के द्वारा किया था किन्तु शतपथ का प्रस्तुत उल्लेख बतलाता है कि ऋग्वेदादिक तीनोंवेदों की अग्नि आदिक से उत्पत्ति हुई था। शतपथ में स्पष्ट "अजायन्त" पद का प्रयोग मिलता है अतः उत्पत्ति की बात को गौण नहीं किया जासकता ऐसा स्वीकार कर लेनेपर तो आर्यसमाज की मूलमान्यता ही समाप्त होती है अतः इस दृष्टि से भी यह उल्लेख उन के प्रतिकूल ही जाता है।

ऐतरेय १ छान्दोग्य २ और गोपथ ३ आदि में इस कथा का उल्लेख मिलता है किन्तु इन सब से भी

---

१ "प्रजापतिरकामयत प्रजायेय भूयान् स्यामिति। स तपोऽतप्यत। स तपस्तप्त्वा इमाँल्लोकानसृजत पृथिवीमन्तरिक्षं दिवम्। तांल्लोकानभ्यतपत् तेभ्योऽभितप्तेभ्यस्त्रीणि ज्योतींष्यजायन्त-अग्निरेव पृथिव्या अजायत, वायुरन्तरिक्षात्, आदित्यो दिवः। तानि ज्योतींष्यभ्यतपत् तेभ्योऽभितप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्त ऋग्वेद एवाग्नेरजायत, यजुर्वेदो वायोः, सामवेद आदित्यात्" ऐ० ब्रा० २५। ७।

२ "प्रजापतिर्लोकानभ्यतपत्। तेषां तप्यमानानां रसान् प्रावृहत्-अग्निं पृथिव्या वायुमन्तरिक्षात्, आदित्यं दिवः। स एतास्तिस्रो देवता अभ्यतपत्, तासां तप्यमानानां रसान् प्रावृहदग्नेः ऋचः वायोः यजूंषि, सामान्यादित्यात्" छा० ४-१७-१२ (नम्बर ३ फुटनोट अगले पृष्ठ पर देख)

यह कथा शतपथ के अनुरूप है केवल किसी २ स्थान पर कुछ शब्द भेद ही हुआ है। ये भी अग्नि आदि को तीन ज्योति स्वीकार करते हैं तथा फिर इनही से वेदत्रयी की उत्पत्ति का वर्णन करते हैं। अथर्व और अंगिरा की इन में भी गंध नहीं मिलती

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि स्वामी जी ने जिस बात के लिये प्रस्तुत अंशको उपस्थितकिया है उस से ऐसा नहीं होता किन्तु यह तो स्वामी जी की मान्यताका ही खंडन करता है।

यही बात उद्धृत मनुस्मृति के श्लोक के सम्बन्ध में है। स्वामी जी ने मनुस्मृति के अर्थ को भी बिगाड़ने की चेष्टा की है। यदि मनुस्मृति के प्रस्तुत श्लोक को उस के पहिले श्लोकों के साथ पढ़ा जाय तो यहभी स्वामीजीकीमान्यताका घातकही सिद्धहोता है मनुस्मृति का इस से पहिला श्लोक निम्न प्रकार है-

कर्मात्मनां च देवानां सोऽसृजत्प्राणिनां प्रभुः।
साध्यानां च गणं सूक्ष्मंयज्ञं चैव सनातनम् ॥ १-२२

इस ही प्रकार स्वामी जी के उल्लिखित श्लोक से बाद का श्लोक निम्न प्रकार है--

कालं कालविभक्तीश्च नक्षत्राणि ग्रहांस्तथा।
सरितः सागरान् शैलान् समानि विषमाणि च ॥ १-२४

इन श्लोकों से स्पष्ट है कि यह जगत रचना का प्रकरण है। यहां स्मृतिकारने सब पदार्थों की उत्पत्ति ब्रह्मा से बतलाई है। यही बात वेदों के सम्बन्ध में है। अतःविवादस्थ श्लोक का अर्थ भी ठीक नहीं है जिसका प्रतिपादन कि शतपथादि ब्राह्मणोंने किया है।

यहां भी अग्नि, वायु और आदित्य नाम की तीन ज्योतियां हैं तथा इन से ब्रह्मा जी ने तीन वेदों को दुहा--उत्पन्न किया" का वर्णन है स्मृतिमें ब्राह्मण के प्रतिकूल कथन हो भी कैसे सकता था, क्योंकि आखिर तो इनकी रचना भी तो उन्हीं के अनुसार हुई है।

इसमें एक यह भी युक्ति है कि शतपथ की तरह यहां भी तीन ही वेदों का उल्लेख मिलता है तथा अन्य बातें भी बिल्कुल उसही के अनुरूप हैं। अथर्ववेद और अंगिरा ऋषि का नाम यहाँ भी नदारत है और स्वयं स्वामी जी ने निराधार इस श्लोक के अर्थ में जोड़ दिया है।

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि मनुस्मृति भी आर्यसमाज की मान्यता का समर्थन नहीं करती प्रत्युत उसके प्रतिकूल ही प्रमाणित करती है।

इससे स्पष्ट है कि यदि इन शास्त्रोंकी प्रामाणिकता के प्रश्नको कभी उठाया जाय तब भी इनसे आर्यसमाज की मान्यता का समर्थन नहीं होता अतः कहना ही पड़ता है कि आर्यसमाज की वेदोत्पत्ति की मान्यता बिलकुल निराधार है।

---

१ "स भूयोऽश्राम्यद् भूयोऽतप्यद् भूय आत्मानं समतपत्। स आत्मन एवत्रीं ल्लोकान् निरमिमत पृथिवीमन्तरिक्षं दिवमिति। स खलु पादाभ्यामेव पृथिवीं निरमिमतोदरादन्तरिक्षं मूर्ध्नो दिवम्। स तांस्त्रीं-ल्लोकानभ्यश्राम्यदभ्यतपत् समतपत्। तेभ्यः श्रान्तेभ्यस्तप्तेभ्यः सन्तप्तेभ्यस्त्रीन् देवान् निरमिमताग्नि-वायुमादित्यमिति। स खलु पृथिव्या एवाग्निं निरमिमतान्तरिक्षाद्वायुं दिव आदित्यम्। स तांस्त्रीन् देवानभ्यश्राम्यदभ्यतपत् समतपत्। तेभ्यः श्रान्तेभ्यस्तप्तेभ्यः सन्तप्तेभ्यस्त्रीन् वेदान् निरमिमत ऋग्वेदं यजुर्वेदं सामवेदमिति। अग्ने ऋग्वेदं वायोर्यजुर्वेदमादित्यात् सामवेदम्।"

ज्ञान का मद

(ले०—श्रीमान पं० श्रीप्रकाश जैन न्यायतीर्थ)

अभिमान के बृद्धिगत रूपको मद कहते हैं। ज्ञान के आश्रयसे जो अभिमान किया जाता है वह ज्ञानका मद कहलाता है। इस मदके उत्पन्न होते ही मनुष्य उन्मत्त होजाता है। और बहुत छोटा होने पर भी अपनेको सबसे बड़ा समझने लगता है। उसकी दृष्टिसे संसार में कोई भी अपने से बड़ा दिखाई नहीं देता। मानो दुनियां की विशिष्ट बुद्धि आकर उसीमें समाई है। अस्तु, मद बहुत बुरी चीज है। वह चाहे जिस का भी क्यों न हो, रूप का हो, चाहे बलका हो, शरीरका हो, चाहे ऐश्वर्यका हो, मनुष्य को मूर्ख बना देता है। और अपने हित तथा अहित को भुला देता है।

संसारमें ज्ञान जितना आदर्श है, पूज्य है और जिसके लिये कहा जाता है कि 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते' अर्थात ज्ञानके सदृश इस जगतमें और कोई वस्तु पवित्र नहीं है। इसके विपरीत ज्ञानका अभिमान उतना ही निकृष्ट और अनादरणीय है। कहना चाहिये कि पढ़े लिखे मनुष्य के लिये ज्ञानके अभिमानसे बढ़कर ऐसी कोई वस्तु नहीं है। जो उसे देवसे दानव और मनुष्यसे पशु बना सके। यह मनुष्यको उत्थान की ओर अग्रसर न होने देकर पतनोन्मुख बना देता है। उसके ज्ञानके विकासको रोक देता है और पूर्वोपार्जित में भी दोष पैदा कर देता है।

विशेषज्ञों और सम्यग्ज्ञानियोंको ज्ञान का मद नहीं होता। वे कभी भी अपने बड़प्पन का अभिमान नहीं करते। 'स्वल्प विद्या महागर्वी' के अनुसार अल्पज्ञानियों को ही अभिमान सताता है। सम्यग्ज्ञानियों का बोध ज्यों २ बढ़ता जाता है, त्यों २ उसके अहम्मन्यता का भाव उत्तरोत्तर कम होता जाता है, किन्तु अल्पज्ञों के अभिमानकी मात्रा दिनो दिन बढ़ती जाती है।

ज्ञानका मद अल्पज्ञों को ही होता है। क्योंकि जो अभिज्ञ है, उसे अपनी अयोग्यता का खयाल रहता है। वह विद्वानों के समक्ष अपनी विद्वत्ता बतानेकी धृष्टता नहीं करता। यदि कभी कुछ कह भी देता है तो उसका उचित उत्तर पाकर सन्तुष्ट होजाता है। उसे अपने ज्ञानका मद नहीं होता। विशेषज्ञोंका भी यही हाल है। साधारण बात पर भी वे बिना सोचे समझे अपनी निश्चित सम्मति देना उचित नहीं समझते। वे किसी भी बातका अन्तिम निर्णय करने के लिये कुछ समय अवश्य चाहते हैं और फिर उसके मर्मको समझकर दूरदर्शिता से उसका परिणाम विचारते हैं तब फिर अपनी स्वतन्त्र सम्मति निश्चित करते हैं। आशय यह है कि जो बहुत बड़े विद्वान गिने जाते हैं और जिन्होंने वास्तव में कुछ ज्ञान प्राप्त किया है। वे कभी भी अपने ज्ञानका घमंड नहीं करते, उन्हें अपनी अयोग्यता का, अपने ज्ञान की कमियों का विचार रहता है। वे

जानते हैं कि अभी हमने क्या जाना है, कितना पढ़ा लिखा है, प्रभुके ज्ञानका भण्डार तो अनन्त है, हमने तो अभी उसका लेश-मात्र भी नहीं पाया। न्यूटन बहुत बड़ा विद्वान था जिसकी कृतियों का पाठकर विद्वान भी उसके अनुभव पर आश्चर्य कर रहे हैं। उसने एक जगह अपना भाव प्रगट किया है कि मैं अभी उस अगाध ज्ञानके समुद्रमें प्रवेश नहीं कर सका उसकी सारभूत वस्तु भी अभी हाथ नहीं आई। केवल उसके किनारे पर लहरों के बल जो सीपियां और टूटे फूटे मोती मेरे हाथ लगे हैं। उन्हींको मैंने संग्रह किया हैं। पाठक विचार सकते हैं कि एक अद्वितीय विद्वान के, अपनी विद्वत्ता के लिये कैसे विचार हैं? हमें उनमें ज्ञान के मद की झलकभी दिखाई नहीं देती। विशेषज्ञों के उत्तरोत्तर बढने वाला ज्ञानका प्रकाश उनके मदके अन्धकारको समूल नष्टकर देता है। ऐसा ही एक विद्वानने लिखा है—

"यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं,
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किञ्चित्किञ्चिद्बुधजनसकाशादवगतं,
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः॥"

अर्थात् जब मैं अल्पज्ञ था, बहुत कम जानता था, तब मद से उन्मत्त हाथी की तरह मेरा मन व्यर्थ के अभिमान से अन्धा हो गया। और विचारने लगा अब मुझ से विशेषज्ञ कौन है, मैं तो सर्वज्ञ बन चुका हूँ। किन्तु ज्यों ही विद्वानों की संगति से मैंने कुछ जाना और विशेषज्ञ कहलाने के योग्य हुआ उसी समय मेरा अज्ञान जन्य अभिमान ज्वर की तरह दूर हो गया।

वास्तव में अल्पज्ञता, अज्ञता और विशेषज्ञता इन दोनों से बुरी अवस्था है। कहना चाहिये यह ज्ञान की प्रौढ़ावस्था है। इस में प्रत्येक मनुष्य को एक प्रकार का नशा चढ़ता है, जिससे वह उन्मत्त बन जाता है। और अपनी अयोग्यता का खयाल नहीं करता। बिना विचारे किसी भी बात का निर्णय ठीक नहीं होता और अनेक अनर्थ कर बैठता है। ठीक तो यह है कि अल्पज्ञों की अवस्था कूप मण्डूक की सी रहती है। जैसे कूप-मण्डूक को कूप के बाहर का विस्तृत क्षेत्र दिखाई नहीं देता, वह अपने कूप को ही संसार समझता है, उसी तरह अल्पज्ञ को भी प्रभु के ज्ञान के भण्डार की अनन्तता का कुछ भी खयाल नहीं होता।

मनुष्य जब जन्म लेता है, तब उसे इस संसार का कुछ भी अनुभव नहीं रहता, वह नितान्त अज्ञ रहता है। अपने घर को ही संसार समझता है और अपने घरवालोंके अतिरिक्त उसे यहाँ रहनेवाला दिखाई नहीं देता। इसके बाद जब वह अपने पड़ोसियों के जाने लगता है और रास्तों में चक्कर लगाना प्रारम्भ करता है, तब उसका अनुभव बढ़ता है और पुराने विचार बदलने लगते हैं। फिर जब कभी वह बाजार जाता है और नवीन नवीन वस्तुएं देखता है, तब उसका ज्ञान और भी बढ़ने लगता है, और पुराना संकीर्ण अज्ञान मिथ्या प्रतीत होता है। आशय यह है कि ज्यों ज्यों नवीन अनुभव होता है उसके साथ ही मनुष्य को अपनी अल्पज्ञता, अनुभव की कमी और अपने ज्ञान के मिथ्याभिमान की प्रतीति होने लगती है। यह उसी के लिये सम्भव है, जिसे नवीन बोध होता रहता है किन्तु जो जन्मभर

संकीर्ण क्षेत्र में रहते हैं और कभी आगे नहीं बढ़ते, उन्हें इस विस्तृत भूमण्डल के सम्बन्ध में क्या ज्ञान हो सकता है। उनके समक्ष यदि कहीं का कुछ चर्चा प्रारम्भ की जाय तो वह तत्काल कहने के लिये तयार हो जायगा तुम कहां की बातें करते हो, ऐसा तो कभी हो ही नहीं सकता आदि। उन्हें अपनी अल्पज्ञता पर विचार नहीं होता, अपने संकीर्ण क्षेत्र का भी वे खयाल नहीं करते। अवसर आने पर वे विशेषज्ञों से भी विवाद करने के लिये तयार रहते हैं और किसी की कुछ नहीं मानते। इसी लिये कहा जाता है "कम इल्म बुरा" अथवा "नीम हकीम खतरे जान" एक संस्कृतज्ञ ने भी लिखा है "ज्ञानलव दुर्विदग्धात्वज्ञता प्रवरमता" अर्थात् ज्ञान का लेश-मात्र पाकर फूल जाने की अपेक्षा मूर्ख रह जाना अच्छा है। क्योंकि विशेषज्ञता बुरी नहीं, पर ज्ञान की वृद्धि के साथ अभिमान का बढ़ना बहुत बुरा है। ज्ञान के मद की निन्दा इसी लिये की जाती है। अभिमानी पुरुष किसी के हित और प्रिय उपदेश को भी कुछ नहीं समझता। पर जिसे अपने ज्ञान का मद नहीं होता, उसे स्वयं पहले विद्वान होने पर भी नये नये शास्त्रों के देखने से मालूम हो जाता है कि मैं जितना जानता हूं वह कुछ भी नहीं है। अभी मेरे सीखने के लिये बहुत पड़ा है। यदि मैं अपने जीवनभर भी नवीन नवीन बातों का संग्रह करता रहूं, तो भी ज्ञान के भण्डार को रिक्त नहीं बना सकता। मनुष्य अपने जीवनभर चाहे जितना भी क्यों न पढ़ले, पर वह थोड़ा बहुत मूर्ख हमेशा ही बना रहता है। विशेषज्ञों की मूर्खता का चाहे साधारण पढ़े लिखों को अनुभव न हो, पर वह स्वयं अपनी अयोग्यता से भली भांति परिचित रहते हैं। 'वाल्टेयर' नामक विद्वान्ने लिखा है कि "जितना ही अधिक हम ने पढ़ा, जितना ही अधिक हम ने सीखा, जितना ही अधिक हमने चिन्तन किया, उतना ही हमारा दृढ़ निश्चय हुआ कि हम तो कुछभी नहीं जानते।" विद्या पढ़ने के पूर्व मनुष्य समझता है कि मैं पढ़ लिख करके विद्वान् बन जाऊंगा और मुझे सब तरह का ज्ञान हो जायगा, पर कुछ विद्या-भ्यास कर लेने पर मनुष्य को अपनी अल्पज्ञता और अयोग्यता का खयाल अपने आपही होने लगता है। फिर वे कहते हैं—

हम जानते थे इल्मसे कुछ जानेंगे।
जाना तो यह जाना कि न जाना कुछ भी॥

ठीकतो यह है कि मूर्ख थोड़ासा पढ़कर भी अपनेको बुद्धिमान समझने लगता है और विद्वान बहुत अधिक अध्ययन कर लेने पर भी कभी अपने ज्ञानका अभिमान नहीं करता, प्रत्युत अपनेको मूर्ख समझता है। वास्तवमें ऐसे मनुष्य ही दिनोदिन उन्नति करते जाते हैं और अन्तमें आदर्श विद्वान बन जाते हैं। किन्तु जो अपनी नाम मात्रकी विद्या-बुद्धि के बल पर अभिमान करने लगते हैं। अपने को सर्वोत्तम समझते हैं और अपने सर्वज्ञ होनेमें सन्देह भी नहीं करते। वे जहांके तहाँ ही रह जाते हैं, कभी आगे नहीं बढ़ते। कहा भी है "मूर्खका अपनी मूर्खता न समझना अपनी ही बातको सर्व-श्रेष्ठ मानना, अपनी निकम्मी अक्ल पर घमंड करना ही उसके मूर्ख रहनेका कारण है।"

जैनों में आज जो विवाद चल रहे हैं और अपने को पंडित मानने वाले विद्वानों ने जो दल बन्दियाँ

बना रक्खी हैं, उनका भी यही प्रधान कारण है। यदि विचार किया जाय तो सारे जैनों में, कुछ एक को छोड़ कर कोई विद्वान कहलाने योग्य ही नहीं है। अल्पज्ञ और अज्ञों की संख्या बढ़ी हुई है। वे अपनी विद्वत्ता के घमण्ड में चूर रहते हैं, अपने को सर्वोत्तम समझते हैं और किसी को कुछ नहीं समझते। अपनी अज्ञता का कुछ भी विचार न करके प्रत्येक विषय में अपना स्वतन्त्र निर्णय देने को प्रस्तुत रहते हैं। समाज को यह बतलाना चाहते हैं कि अब हमसे अधिक विशेषज्ञ है ही कौन? हम तो सर्वतो भद्र हैं। यदि उनके विरुद्ध कोई विद्वान सत्य-तत्व बतलाता है, तो वे उसपर विचार करने की क्षमता न रख कर भोली समाज को अपने चंगुल में फंसाने लगते हैं और अज्ञों की एक टोली बना लेते हैं। बस अब उनकी विद्वत्ता का पार कौन पा सकता है? कोई सोचने और समझने वाला तो रहता ही नहीं; उनके आगे एक बार तो विद्वानों को भी मौनावलम्बन करना पड़ता है। पर वे चाहे जैसा भी क्यों न समझें, अयोग्यता छिपाये नहीं छिपती। जब समाज का सत्य की ओर ध्यान जाता है, तब उनका 'कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया' का मद उतर जाता है और सब पोल खुल जाती है। उनकी योग्यता का भी सब को प्रत्यक्ष हो जाता है और उनका छिपा हुआ स्वार्थ भी नजर आ जाता है। इतना होने पर भी वे अहम्मन्यता के भाव को नहीं छोड़ते, सम्भवतः इसी लिये उनका पतन होता है और अन्त में पछताना पड़ता है। कहा भी है कि—"नाश अभिमान के पीछे पीछे चलता है।"

❊ ❊

गायक !

(ले०—श्रीमान सुरेन सकलेचा)

गायक, गाना ऐसा गीत !

वर्तमान की आंखों में छा जाये मधुर अतीत।
गायक, गाना ऐसा गीत !

गायक, गाना ऐसा गीत !

सोती जगती तंद्रा तज दे,
मृतकों में संजीवन भर दे ;
उन खंडहर के ढेरों में से जगे अतीत पुनीत।
गायक, गाना ऐसा गीत !

गायक, गाना ऐसा गीत !

जग-प्रति प्राणी द्वेषभाव तज,
'मैं मैं तू तू' का विवाद तज,
प्यार उदधि में लय हो जाये यह जग-जीवन मीत।
गायक, गाना ऐसा गीत !

हिस्टेरिया के कारण तथा उपाय

भारतके हरएक प्रांतमें इस रोगका आजकल विशेष प्रकोप दृष्टिगोचर होता है। यह रोग प्रायः सधवा तथा विधवा सभी स्त्रियोंको होता है। इस रोगकी उत्पत्ति ग्राम्यधर्मके आधिक्य, (अति मैथुन रक्तस्राव, गर्भपात, तथा मानसिक ज्ञान तन्तुओंकी विकृति से होती है। स्त्रियोंका हर समय शृंगारग्रस्त रहना, गृहके कार्यों में उदासीनता तथा अधिकतर स्वतन्त्रता भी इसके कारणों में से हैं। क्योंकि स्वतन्त्र रूपसे रहकर वे हर प्रकारकी कुवृत्तियों तथा व्यसनों में संलग्न होजाती हैं। आजकलतो यह रोग १२ वर्षसे २२ वर्षकी कुमारियों में भी पाया जाता है। वास्तवमें जो स्त्रियां अत्यन्त विलासितामें पड़ जाती है तो उनमें यह चिन्ता, काम, शोक, व्यवाय अव्यायाम आदिसे अपानवायु दूषित होकर गर्भाशयकी विकृति करती हुई नीचेसे ऊपरको अर्थात हृदयमें आकर पीड़ा करती है और रोगी को मूर्छित कर देती है। पुनः वह वायु कण्ठमें ठहरकर श्वास-रोध कर देती है। इससे रोगी नितान्त निश्चेष्ट होकर कूजनवत् शब्द करता है और हाथ पैर मारता है, नेत्र स्तब्ध होजाते हैं, श्वास कष्टसे आता है। हृदयमें पीड़ा होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि वातगुल्म की भांति कोई चीज ऊपरको जाती है। रोगी संज्ञाशून्य होकर धनुषकी तरह अथवा दण्डकी तरह स्तम्भित होकर दो-तीन घण्टे तक पड़ा रहता है। यह वेग अधिक तथा न्यून समय तक भी रहता है। अंग शिथिल, दुर्बलता कृशता विस्मृति आदि कई लक्षण होजाते हैं। यह रोग यदि चिरकालिक होजाय तथा ज्वरादि उपद्रव युक्त होजाय तो रोगी मृत्यु मुखमें चला जाता है, पर वास्तवमें यह रोग मारक नहीं है। इस रोगका प्रकोप सोलह वर्षसे ३० वर्षके आदमियों में भी पाया जाता है। इसका कारण शोक, चिन्ता, कामचेष्टा, दुर्व्यसन तथा व्यभिचारकी अधिकता ही देखी जाती है। इस रोगका आयुर्वेद में "आक्षेप का भेद अपतंत्रक" वातव्याधि कहकर वर्णन किया गया है। यदि यह रोग केवल वातके प्रकोप से हो तो इसमें भयंकरता उत्पन्न होजाती है तथा गर्भपातके कारणसे, रक्तके अतिस्राव से या चोट लगनेसे होजाय तो असाध्य रूपधारण कर लेता है।

चिकित्सा:—

इस रोगमें सर्व प्रथम रोगी को चाहे वह स्त्री हो या पुरुष स्नेहपान कराना चाहिये यानी ३ दिनतक स्वच्छ गौ का घृत यथाशक्ति पिलाना या खिलाना चाहिये। तत्पश्चात् एरण्ड तेल से विरेचन करा दें। ऐसा करने पर कोष्ठ शुद्ध हो जायगा। फिर रोगी को हृदय पुष्ट करने वाली तथा वातहर औषधि का प्रयोग कराना चाहिये अर्थात् जिस रोगी को रक्तस्राव होता हो या प्रदर हो तो उसे "बृहद्वात हरचिन्तामणि रस" प्रातः अर्क सौंफ ४ तोलाके साथ एक गोली दें तथा भोजनके बाद "अशोकारिष्ट" की एक मात्रा तोला से दो तोला तक बलाबल देख कर पिला दें। इस से वेग भी कम हो जाता है तथा बल बढ़ने लगता है और रक्त भी बन्द हो जाता

है। इसके सिवाय हृदय औषधी अवश्य देनी चाहिये, उसे मैं सर्व साधारण के लाभार्थ लिखता हूं।

मुक्तादि रसायनः—

मुक्ता भस्म ६ मा०, प्रवाल १ तोला, संगयशम १ तो०, राजावर्तभाल १ तो०, शंखपुष्पी १ तोला, छोटी इलायचीदाना १ तो०, वर्कचांदी १ दफ्तरी बड़ी सब को मिला कर चूर्ण बनावें, इस में से १ रत्ती से ३ रत्ती तक बलाबल देखकर मक्खन ६ मा०, मिश्री ३ मा० के साथ प्रातः दें, पुनः सायं काल गुलकन्द मौतिया ६ मासे के साथ दें ऊपर से अर्क गाजबान ४ तोले दें। यह औषधि रक्तस्राव, हृद्रोग, मूर्छा, कासश्वास आदि रोगों को नष्ट कर बल, मेधा, बुद्धि तथा वीर्य की वृद्धि करती है। यह प्रायः पित्तवात में विशेष लाभ कर सिद्ध हुई है। यह बात ज्ञात होती है कि इसकेलिये डाक्टरोंकी एलोपैथिक चिकित्सामें कोई विशेष प्रयोग नहीं मिलाहै, अतः आयुर्वेद की शरण लेनी पड़ी है। आयुर्वेद में जो इस रोगके लिये अनेक सिद्ध प्रयोग भरे पडे हैं यदि पढ़ने में उत्साह हो तो आयुर्वेद समाचार पत्रों को पढ़ें।

—मिलाप

जैनागम

(ले० श्रीमान पं०—गुणभद्र जैन)

जग भरमें आधार हमारा,
भक्तोंको प्राणों से प्यारा।
अधमों तक को शीघ्र उबारा
गा गौरव तेरा जग हारा।

गणधरादिके विमल ज्ञानका, तू है सुन्दर क्षेत्र,
सत्य रूप साक्षात दिखाता, बनकर अनुपम नेत्र ॥१॥

दिव्य नेत्र उसके खुल जाते,
संशयादि मनके धुल जाते।
वस्तु रूप वेही लख पाते,
जो सादर तुमको अपनाते।

तेरा निर्णय जगती तलमें, है पाषाण लकीर,
कर न सके विपरीत कोई भी, उसको लेखक वीर!

दीर्घ तपस्याके तुम मन्थन,
प्राणिमात्र के जीवित कंचन,
दृष्टिवान के दृगके अंजन,
ज्ञान-विपिनके कोमल खंजन।

लोक-सदृश विस्तीर्ण विषय हैं, सागर से गम्भीर
हुये उपासक यहां तुम्हारे, विश्ववंद्य नर-वीर ॥३॥

स्याद्वादरूप, नय और प्रमाण
पुष्प, पाक है तत्त्व ज्ञान,
स्वाद मधुर समताकी खान,
जैनागम मन्दार समान।

जो अध्यात्म सुधाकी निशि दिन, करता है बरसात,
क्षण भर में जो दीर्घ दुखों का कर देता अवसान ॥४॥

सम्पादकीय टिप्पणियां.

पावापुरी-केस

जैन समाज जहां अनेक कुरीतियों का शिकार बन कर खोखला होता जारहा है वहीं पर दिगम्बर श्वेताम्बर समाज की तीर्थ सम्बन्धी मुकद्दमे बाजी भी जैन समाजके बलहीन शरीरका रक्तशोषणकर रही है पावापुरी केस छोटी कोर्ट और हाई कोर्ट में दोनों सम्प्रदायों का पर्याप्त धननाश करा चुका है किन्तु अभी उसमें प्रिवीकौंसिल पहुंचनेकी और गुंजाइश थी इस कसर को पूरा करने का श्रेय श्वेताम्बर समाज ने उठाया अतः अब यह केस अपील के रूप में प्रिवी-कौंसिल में पेश होगा।

हाई कोर्टने फैसला दिया था कि पावापुरीक्षेत्रका प्रबन्ध कार्य श्वेताम्बर समाज के हाथ में होगा किन्तु क्षेत्रपर धार्मिक अधिकार दोनों सम्प्रदायों का समान रूप में होगा श्वेताम्बर समाज को हाईकोर्ट का यह निर्णय अनुचित प्रतीत हुआ उस के खयाल से इस तीर्थ क्षेत्र पर उसका अपना सब तरह अखंड अधिकार होना चाहिये दिगम्बर समाज को वहां धार्मिक अधिकार समान रूप में क्यों प्राप्त हो? श्वेताम्बर समाज की यह मनोवृत्ति नवीन नहीं है, पुरानी है यही दूषित मनोवृत्ति दोनों सम्प्रदायों के लाखों रु० पानी की तरह व्यर्थ बहा चुकी है किन्तु इतना होने पर भी अब तक उस में कुछ अन्तर नहीं आया है अस्तु।

दिगम्बर जैन समाज का इस परिस्थिति में यह कर्तव्य है कि अपने धार्मिक अधिकार को सुरक्षित रखने के लिये इस अवसर पर प्रमाद न करे इस केस की पैरवी के लिये जो तीर्थक्षेत्र कमेटी ने प्रबन्ध किया है उस को सफल बनाने के लिये कमेटी को पर्याप्त सहायता प्रदान करे। किसी महानुभावको यदि तीर्थक्षेत्र कमेटीमे कुछ शिकायत हो तो इस समय उस पर दुर्लक्ष्य करते हुए इस समय कमेटी को आर्थिक सहायता पहुंचाने में रुकावट न डाले। इस समय का प्रमाद बहुत हानिकर होगा।

शर्मा जी का अनशन समाप्त

कलकत्ता कालीघाट के काली मंदिर का काला पशुवध रोकने के लिये जो श्रीमान पं० रामचन्द्र जी शर्मा ने भोजन त्याग कर रक्खा था वह ३५ दिन पीछे भारतवर्ष के प्रसिद्ध नेता श्रीमान पं० मदन मोहन जी मालवीय की प्रेरणा से आपने छोड़ दिया। निन्द्य पशुवध होनेके कारण यद्यपि मालवीय जी आज से ४० वर्ष पहिले कालीघाट पर जन्म भर न जानेकी प्रतिज्ञा कर चुके थे किन्तु पं० रामचन्द्रजी सरीखे आदर्श युवक का बलिदान मालवीय जी से सह्य नहीं हुआ वे अपनी प्रतिज्ञा का भंग करके कलकत्ता पहुंचे वहां पहुंच कर आपने हिन्दुओं की सभा में व्याख्यान दिये तथा काली मंदिर के पंडों से मिल कर उनको समझाया इस सब प्रयत्न के बाद मालवीय जी ने 'वीर पं रामचन्द्र जी से कहा कि आशा है एकवर्ष के भीतर काली मंदिर में बकरों का कटना बन्द हो जायगा इस कारण आप अभी अनशन छोड़ दें यदि यह कालाकृत्य एक वर्ष तक बन्द न हो पावे तब आपको छूट होगी। इस आश्वासन भरी प्रेरणा पर शर्मा जी ने अनशन छोड़ कर भोजन करना स्वीकार कर लिया।

—※—

दीपावली

भगवान महावीर २५०० वर्ष के इतिहास में एक अद्वितीय महान व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने धर्म के नाम पर भूले भटके संसार को सत्य मार्ग दिखलाया था। जिन्हों ने जीवमात्र के साथ मित्र भाव का उपदेश दिया था, जिन्हों ने धर्मक्रिया में आई हुई पशुहिंसा की गंदगी को दूर किया था. जिन्हों ने राज्य वैभव को ठुकरा कर त्याग, वैराग्य का आदर्श उपस्थित किया था और जिन्हों ने कठिन तपस्या कर के सर्वज्ञ पद प्राप्त किया था जिसको प्राप्त करने के लिये महात्मा बुद्ध आजीवन परिश्रम करते रहे। उन भगवान महावीर को सांसारिक बन्धन से मुक्त हुए आज २४६१ वर्ष बीत गये।

वह कार्तिक वदी अमावस्या की रात्रिका अन्तिम पहर था पावापुरी तालाब का किनारा था, चतुर्थ काल का अंतिमभाग था और तीर्थंकर पदका अंतिम आलोक था अजेय कर्म शत्रु को जीतकर भगवान महावीर ने सच्ची महावीरता प्रगट की थी। देव, मानव समुदाय ने अमावस्या के अन्धकार में उस प्रकाशमान अनुपम दीपक को उपरिगमन करते देख अमावस्या की अंधेरी रात को अगणित दीपक जला कर उस समय अपने आस पास का बाहरी अन्धकार दूर कर दिया था। भगवान महावीर के मुक्ति समय के उत्सव ने 'दीपावली' (दिवाली) का शुभ नाम पाया और भारतवर्षमें स्थायीरूप प्राप्त किया। उसी समय से भारतवर्ष में प्रतिवर्ष ठीक इसी दिन यह उत्सव असाधारण सज धज के साथ मनाया जाता है। आज २४६२ वां उत्सव अब हमारे सामने फिर आ गया है।

हम इस उत्सवको मनानेके लिये अपने घर दुकान आदि की सफाई कर रहे हैं जो मैल कूड़ा करकट वर्ष भर में जमा हुआ था उस को निकाल बाहर फेंक रहे हैं। यह भी अच्छी बात है, बुराईका काम नहीं किन्तु जिस भगवानकी स्मृतिमें हम यह उत्सव मना रहे हैं उसके आदर्शका अनुकरण हमसे दूर है। उसका आदर्शअंतरंगमैलको बाहर निकाल फैंकना था, उसका आदर्श ज्ञान ज्योति से प्रकाश फैलाना था, भगवान महावीर का वह आदर्श आज हम से छूट गया है यही कारण है कि भगवान महावीर के सत्य हितकारी उपदेशसे अन्य देशोंकी बात दूर रही हमारा भारतवर्ष भी अपरिचित है। हमारे पडोसी अजैन भाई हमारे ढाई हजार दीपावली उत्सव मना लेने पर भी नहीं मालूम कर पाये हैं कि भगवान महावीर कौन थे और उनका क्या आदर्श, उपदेश था और वह क्यों सत्य है?

भोले भाले जैन भाइयो! जिसका उत्सव मना रहे हो उसका नाम, उपदेश, आदर्श संसार में फैलाओ तब ही यह आपका उत्सव शोभा देता है।

अमरोहा के झगड़े का अन्त

अमरोहा की जैनमंडली प्रसन्नमुख उत्साही नवयुवकों की मंडली है जिस का नेतृत्व श्रीमान साहु रघुनन्दन प्रसाद जी, साहु मलचन्द्र जी एवं ला० भूषणशरण जी आदि महानुभाव करते हैं। आप सभी सज्जन सौजन्य, गुणग्राहिता एवं प्रेम के पुजारी हैं। किन्तु अभी कुछ दिन पहले कारणवश परस्पर वैमनस्य हो गया था। जो कि श्रीमान बा० रतन लाल जी वकील बिजनौर से दूर हो गया है। आशा है आप लोगों में फिर पहले सरीखा प्रेम स्थापित हो जायगा।

अजित कुमार

देश-समाचार

—डा० बी० एस० मुंजे हिन्दू युवकों को फौजी शिक्षा देने के लिये एक सैनिक विद्यालय स्थापित करना चाहते हैं उसके लिये आपको एक लाख २५ हजार रुपये मिलने के वचन मिल चुके हैं।

—गाजीपुर में शीतला के मंदिर की पशुबलि बन्द कर दी गई है।

—श्रीयुत एल० डी० शर्मा अजमेर लगातार ७२ घंटे तक चलते रहे। इस समय लगातार इतनी देर तक चलने वाला और कोई मनुष्य नहीं है।

—चाइल (प्रयाग) में एक डाके के डालने सम्बन्ध में १६ आदमी गिरफ्तार हुए हैं जिनमें एक ६० वर्ष की स्त्री भी है।

—आरा के अरुणा देवी के मंदिर में होने वाली पशुहत्या बंद कर दी गई है।

—बंगाली युवक श्री सरोजरंजन आचार्य जो कि देवली (अजमेर) में नजरबंद हैं उन्हों ने अभी कलकत्ता यूनीवर्सिटी की एम० ए० की परीक्षा देकर फर्स्ट डिवीजन में द्वितीय नंबर की उत्तीर्णता प्राप्त की है।

—नवाब मालेर कोटला ने अपने राज्यमें हिंदुओं को आरती, कथा करने की स्वतंत्रता देकर १०५ दिन की लंबी हड़ताल का अंत कर दिया है।

—हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में प्रख्यात प्रो० राममूर्ति व्यायाम प्रोफेसर नियुक्त हुए हैं आप वहां विद्यार्थियों को व्यायाम की शिक्षा देंगे आपने १२ अक्टूबर से शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया है।

—भारतवर्ष में इस समय गामा, इमामबख्श गूंगा, हमीदा: छोटा गामा, रहमानी सुलतान, आमूखां, दौलत मुहम्मद, अल्लाहबख्श, शहाबुद्दीन, गंडासिंह और गोबर बाबू ये १२ महानुभाव अखाड़े के बड़े पहलवान हैं।

—इटली अबीसीनिया का युद्ध प्रारम्भ होने से भारतवर्ष में पहले पहल जर्मनी रंग का भाव चढ़ गया किन्तु २०-१२ दिन के युद्ध में जब जर्मनी शामिल न हुआ तो रंग का भाव फिर गिरने लगा है।

—शिमला के सनातनधर्म हाई स्कूल में पढ़ने वाले एक मुसलमान विद्यार्थी ने धर्म के विषय में इनाम प्राप्त किया है।

—कवेटाकी खुदाईसे अब तक १६ लाख रुपये का माल निकल चुका है।

—भारतवर्षसे इस सप्ताह १५ लाख रुपयेका सोना विदेशको गया है।

—१२ अक्टूबरको सिटी आफ रेयफिल्ड जहाज से १000 बन्दर अमेरिका भेजे गये हैं।

—मदरास में श्रीमान बा० राजेन्द्र प्रसाद जी के स्वागत में एक मील लम्बा जुलूस निकाला गया।

—मैसूर राज्य के दीवान ने हाईस्कूल की लड़कियों के सामने व्याख्यान देते हुये कहा कि स्त्री-शिक्षाका सुयोग्य गृहिणी बनना है। जिस लड़कीको भोजन बनाना आदि घरका कार्य करना नहीं आता, वह पूर्ण शिक्षित नहीं कही जा सकती।

—महात्मा जीने अबीसीनिया वालोंको निशस्त्र होकर इटली से लड़नेकी सलाह दी है।

REGD. L. No.
3459.

विदेश-समाचार

रणचंडी का नृत्य-इटली और एबीसीनिया के जिस भयानक युद्धकी आशंका थी वह २ अक्टूबरको प्रारम्भ हो ही गया। इटली की तयारी बहुत जबर्दस्त थी अतः उस ने हवाई जहाजों की बमवर्षा जहरीली गैस आदिसे एबीसीनियाको तहस नहस करके एबीसीनिया के एक प्रान्त, अडोवा मुसाअली और अक्सूम नामक चार नगरों को जीत कर अपने अधिकार में कर लिया है। अडोवा वह नगर है जहां पर आज से ४० वर्ष पहले एबीसीनिया ने इटली को हराया था इस युद्धमें एबीसीनियाकी सेनाएं बड़ी वीरतासे लड़ रही हैं किन्तु उन के पास हवाई जहाज गैस आदि आधुनिक लड़ाई के साधन नहीं हैं इसलिये इटलीके मुकाबले में वे डट नहीं सकतीं। दोनों ओरके दो दो-तीन तीन हजार सैनिक मारे गये हैं। अन्य देशोंके १८ प्रतिनिधियों की दृष्टि में इटली ने एबीसिनिया पर आक्रमण करके अन्याय किया है। इस कारण उन्होंने इटलीका आर्थिक बहिष्कार किया है। कराचीकी अंग्रेजी सेना मिश्रके लिये रवाना होगई है।

—लंदन में त्रिपुरा नरेश ने एक विष्णु मन्दिर बनाने के लिये सब खर्च देना स्वीकार किया है। पास ही ऐसा स्थान भी होगा जहां हिन्दू रह सके। पटियाला नरेश लंदन में गुरुद्वारा बनवा चुके हैं।

—श्रीमती कमला नेहरू की तबियत फिर अधिक खराब होगई है।

—पोलैण्ड के कौण्ट बोल्को नामक एक युवकने अपनी सौतेली मा के साथ विवाह किया है।

जहरीली गैसका पता लगानेके लिये फ्रान्स के एक वैज्ञानिक ने एक मशीन बनाई है।

—कैलीफोर्निया के एक कारीगरने मोटरके ऊपर बिस्तरा बिछाकर आराम से सोजाने के लिये नई मशीन का आविष्कार किया है।

—लंदनमें 'न्यूज क्लियरिंग हाउस' नामक एक ६ खनी विशाल इमारत तैयार होरही है जिसमें समाचार भेजनेवाली समस्त एजेन्सियोंके कार्यालय रहेंगे।

—एक ध्वनि विस्तारक ऐसे यन्त्रका आविष्कार हुआ है जो रुई के भीतर बैठे हुए कीड़ेकी आवाज को बढ़ा देगा जोकि तोपोंकी आवाज सरीखी फैल जायगी।

—लन्दनके बड़े पोस्ट आफिसमें एक मशीन लगाई गई है जो पार्सल, मनी-आर्डर, रजिष्टरी आदिकी दर बतला दिया करेगी।

—डाक्टर राबर्ट जेम्स शरीरके भीतर फोड़े, चोट आदि के घाव पर एक्सरे तथा इन्जैक्शनकी सहायता से दवा लगानेका आविष्कार कर रहे हैं जिसमें अभी कुछ त्रुटि है।

पत्नी— (पति से) नीचे कोई आदमी मालूम होता है, जरा उठकर पता लगाइये।

पति महाशय जो एक मजाकिया आदमी थे, उठ कर नीचे गये आदमीसे कहा यहां क्या कर रहे हो?

'रुपया ढूंढ रहा हूँ' उसने कहा।

'बहुत अच्छा' मैं जाकर सोता हूँ। यदि रुपया मिल जाय तो मुझे आवाज दे लेना।

अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस, मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≡)

अंक ८

वर्ष ३

कार्तिक सुदी ५ शुक्रवार
१ नवम्बर–१९३५ ई०
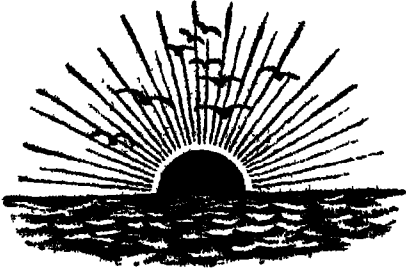
शुभ सम्मति

मैंने पं० सुरेशचन्द्रजी के मार्फत जैनदर्शन का तीसरा अंक आद्योपान्त देखा। इसमें अच्छे २ विद्वानों के लेख देखे, विशेष बात यह देखने में आई कि वर्तमान वातावरण से यह पत्र दूषित न होते हुवे जैनधर्म पर आने वाले आक्षेपोंका मुँह तोड़ उत्तर देने वाला है। मैं इस पत्रकी उन्नति चाहता हूं। और अपना नाम ग्राहक संख्या में लिखा रहा हूं।

कपूरचन्द जैन समैया परवार।

सूचना

श्रीमान रावराजा सेठ हुकमचन्द्र जी की हीरक जयन्ती के समय १५–१६–१७ नवंबर को दि० जैन महासभा का अधिवेशन होगा।

सराहनीय दान

श्रीमान रायबहादुर सेठ भागचन्द्रजी सोनी एम० एल० ए० पंमेम्बली के अधिवेशन से शिमला से लौटते हुये पानीपत उतरे। वहां की स्थानीय हिन्दू जनता तथा जैन हाईस्कूल के सदस्यों ने आपका बड़े समारोह से स्वागत किया। स्कूलके स्काउटों ने खेल दिखलाये। सभाके समय स्कूलका हाल भरा हुआ था। सेठ जीने हाईस्कूल को ५०१) प्रदान किये। इस अवसर पर सेठजी को अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। स्थानीय रईस नेमचन्द्रजी ने सेठ जी का धन्यवाद किया। सेठजी की तरफसे विद्यार्थियों को मिष्ठान्न के लिये २०) दिये गये।

मुनिसुव्रतदास जैन मैनेजर

जैन समाचार

—स्थानीय नवयुवकों तथा समाज को यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि पं० मदनमोहन मालवीय जी के उद्योग से शर्मा जी के पवित्र प्राणों की रक्षा हुई। उनके अनशन व्रत जारी रहनेके अन्तिम दिन तक लोगोंके हृदय में अधिक संताप रहा कई उत्साही नवयुवकोंने कुछ छोटे छोटे नियम उपनियम ले कर सादगी से रहते हुए सहानुभूति प्रगट की और साथ बाबू शिवप्रसाद बजाज तथा नाथूलाल माली ने पन्द्रह पन्द्रह उपवास भी किये थे ऐसे उत्साही युवकों को धन्यवाद है।

कपूरचन्द जैन—नागपुर

गाजियाबाद शास्त्रार्थ

यू० पी० में गाजियाबाद की आर्यसमाज एक प्रसिद्ध समाज है। यह अपने वार्षिकोत्सवों पर इतर धर्मावलम्बियोंको शास्त्रार्थका निमंत्रण देती है। इस वर्ष जैनसमाज को भी निमंत्रण मिला था, आर्य-समाज का यह निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया गया, इसके अनुसार आर्यसमाज के साथ जैनियों का शास्त्रार्थ ता. १३-१०-३४को 'क्या ईश्वर सृष्टि-कर्ता है" विषय पर हुआ था। जैनसमाज की तरफ से सभापति का आसन वाणीभूषण पं० तुलसीराम जी काव्यतीर्थ ने ग्रहण किया और आर्यसमाजकी तरफ पं० रामचन्द्र जी देहलवी सभापति थे, जैन-समाज का प्रतिनिधित्व पं० राजेन्द्रकुमार जी अंबाला और आर्यसमाज का स्वा० कर्मानन्द जी ने लिया था। उपस्थित जनता करीब १५०० के थी। जैनियों में स्थानीय भाइयों के अतिरिक्त सहारनपुर, देहली के बाबु और देहली मित्रमंडल के महामन्त्री भी उपस्थित थे। पूर्वपक्ष आर्यसमाज का था और उत्तरपक्ष जैनसमाज का था। इस शास्त्रार्थ में जैनधर्म के सिद्धान्तों का गाजियाबाद की जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा है इस प्रकार यह शास्त्रार्थ अच्छी प्रभावना के साथ समाप्त हुआ है।

मंजुलाल जैन—गाजियाबाद

हीरकजयन्ती— रायबहादुर आदि अनेक पद विभूषित श्रीमान सर सेठ हुकमचन्द जी इन्दौर अपने सौभाग्यशाली, यशस्वी जीवन के ६१ वर्ष व्यतीत कर चुके हैं इस उपलक्ष्य में मगसिर बदी ३ ता० १३ नवम्बर से १८ नवम्बर तक बड़े समारोह से हीरक जयन्ती महोत्सव होगा। इस अवसर पर मालवा प्रान्तिक सभा, भा० दि० जैन महा सभा आदि संस्थाओं के अधिवेशन होंगे, अनेक संस्थाओं की ओर से सेठ साहिब को अभिनन्दनपत्र भेंट किये जावेंगे।

निमंत्रण—श्री भा० दि० जैन महा सभा का ४० वां वार्षिक अधिवेशन सर सेठ हुकमचन्द जी की हीरक जयन्ती के समय इन्दौर में १५ १६-१७ नवंबर को होगा। इस अधिवेशन का अध्यक्षपद श्रीमान रायबहादुर भागचन्द जी सोनी एम. एल० ए० अजमेर ने स्वीकार कर लिया है। दि० जैन समाज से और विशेष करके समाज हितैषी उत्साही महा-नुभावों से सादर निवेदन है कि वे इस अवसर पर इन्दौर पधार कर महासभाके अधिवेशन को सफल बनावें।

निवेदक—चैनसुख छाबड़ा सिवनी
महामंत्री—दि० जैन महासभा

—जालंधर डिवीजनसे असेम्बली के लिये कांग्रेसी उम्मीदवार रायजादा हंसराज जी सदस्य चुने गये हैं।

अकलंकदेवाय नमः
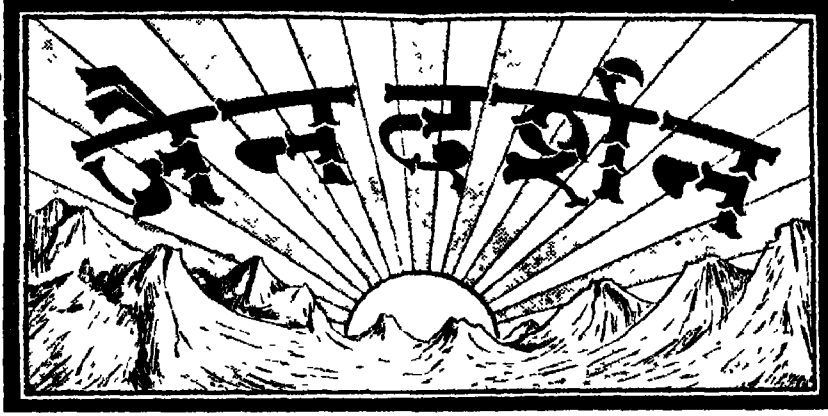
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्ररश्मिर्भव्याम्बुजानि खिलदर्शनपक्षदोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात् ॥

वर्ष ३ | श्री कार्तिक सुदी ५—शुक्रवार श्री वीर सं० २४६१ | अङ्क ८

सम्बोधन !

लेखक— श्रीयुत ?

यौवनकी झंझाका होना, नित प्रति यह झंकार,
खाना, पीना, मौज उड़ाना, है जीवनका सार।

रहा बड़ों के सदुपदेशसे हमें सदा संकोच,
अतः बुढ़ापे में कर लेंगे परभवका सब सोच ॥

उषाकाल की लाली जैसा छोटा यौवन काल,
इसे बिताओ मिल क्रीडामें ठोंक ठोंक कर ताल ॥

इन कुवासनाओं ने करके, हृत्तल पर अधिकार।
तन अरु चेतन के विभेदका, मिटा दिया आकार ॥

प्रातः से सन्ध्या तक करते, तनके ही संस्कार ॥
सीख भुला देते सद्गुरु की, क्षणभंगुर संसार ॥

मज्जाके मतवाले बनकर करते अत्याचार,
खाद्याखाद्य निशा अरु वासर होते एकाकार।

जिस कायाकी सुन्दरताका, करते हो हुंकार।
एक व्याधिका झोंका उसका, प्रकट करेगा सार ॥

निर्धन, धनिक और मुक्ति

(ले०—एक निर्धन)

काल के साथ एकान्तवाद का क्षेत्र भी बदलता रहता है। पुराने समय में दार्शनिक क्षेत्र में इसका दौरदौरा था, किन्तु आज राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्रमें उसकी धूम मची हुई है। राजनीति-विशारदों का कहना है कि राजनैतिक मतों का भी दर्शनशास्त्र है और होना भी चाहिये, क्योंकि जिन विचारों और दलीलों के आधार पर मत की स्थापना की जाती है वे ही उस मत के दर्शन शास्त्र कहे जाते हैं। अतः यह भी कहा जा सकता है कि एकान्त वाद अब भी अपने पुराने रंगमंच पर ही अभिनय कर रहा है किन्तु उस रंगमंच की काया-पलट हो गई है, अस्तु, जो कुछ हो, पर एकान्तवाद का आधुनिक क्षेत्र पहले से भी अधिक भयानक है। नित्य, अनित्य और एक, अनेक का संग्राम शास्त्रार्थसभाओं तक ही सीमित था किन्तु लोकतंत्रवाद, पूंजीवाद और श्रमवाद, साम्यवाद और वर्गवाद, अनियन्त्रितसेनावाद और नियंत्रित सेनावाद, हिटलर और मुसोलिनीवाद आदि इन वादों ने सारी दुनियां में तूफान मचा रक्खा है। अतः हम धनिकवाद और निर्धन वाद के सम्बन्ध में कुछ लिखना जरूरी समझते हैं।

अमीरी और गरीबी की समस्या

हमारे शास्त्र बतलाते हैं कि एक समय ऐसा भी था जब इस प्रदेश में अमीर और गरीब का सवाल ही न था। स्वार्थपरता और असन्तोष की लहर खोजने पर भी कहीं न मिलती थी, इसी लिये सब सुखी थे। जन संख्या सीमित थी—जितने मरते थे उतने ही जन्म लेते थे। न कोई धर्म था न कर्म; आवश्यकता के अनुसार सब को जीवन के लिये आवश्यक वस्तुओं की बिना प्रयत्न प्राप्ति हो जाती थी। सारांश यह कि आजकल समाज-शास्त्रियों के सामने जो जटिल प्रश्न उपस्थित होते हैं, उस समय उनमें से एक भी न था। धीरे २ समय ने पलटा खाया, पैदावार कम होने लगी, जनसंख्या बढ़ने लगी। सन्तान के मोह और भविष्य की चिन्ता ने उस समय की जनता की समस्त स्वाभाविक कोमल प्रवृत्तियों को कुचल डाला। आवश्यकता की अधिकता और आवश्यक वस्तुओं की कमी दोनों ने मिल कर समाजसमुद्र में असन्तोष का ज्वार-भाटा पैदा कर दिया, बलवान निर्बलों को सताने लगे। फलतः अहिंसक हिंसक बन गये, सत्यवादी असत्य भाषण करने लगे, स्वदारसन्तोषी दूसरों की बहू-बेटियों पर कुदृष्टि रखने लगे, अपरिग्रही बहुसंचयी और बहुधन्धी हो गये। गज़ब का परिवर्तन था किन्तु इस परिवर्तन ने ही नरक और मोक्ष का द्वार भी खोल दिया। पुण्य-पाप का बाजार गर्म हो उठा। सच है विषम कार्य का फल भी विषम ही होता है। इस विषमता ने ही अमीरी और गरीबी की समस्या को जन्म दिया।

अमीरी और गरीबी का कारण केवल पैसा है—पैसे के होने से मनुष्य अमीर कहलाता है और न

होनेसे गरीब। तथा इस पैसेकी प्राप्ति अप्राप्तिका अंतरंग कारण मनुष्य के शुभ और अशुभ कर्म कहे जाते हैं। इसी से धनवानों को भाग्यशाली कहते हैं और भिखमंगों को अभागा। इसी तरह यदि किसी देश पर लक्ष्मी की अधिक कृपा होती है तो वह देश भाग्यशाली कहा जाता है और यदि सौभाग्यलक्ष्मी उससे रूठ जाती है तो वह 'दुर्भाग्य' कहलाता है। सौभाग्यशाली इंगलैण्ड और अभागा भारत इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। यद्यपि पैसे की प्राप्ति का अन्तरंग कारण पूर्वोपार्जित शुभा शुभ कर्म कहे जाते हैं फिर भी बा कारणों की किसी भी तरह उपेक्षा नहीं का सकती। बल्कि कहीं २ पर तो बाह्य कारण ही प्रधान होते हैं। व्यक्तिगत घटनाओं में से किसी में तो अन्तरंग कारण 'दैव'ही प्रधान होता है जैसे 'लाटरी'का जीतना, या पूर्वजों की संचित सम्पत्ति उन के उत्तराधिकारी को मिलना आदि, और किसी में 'पौरुष' प्रधान होता है जैसे-अपने बाहुबल या बुद्धिबल से धन कमाना। किन्तु सामाजिक संपत्ति के के बढ़ने का कारण अधिकतर पौरुष ही है। यद्यपि इस नियम के अपवाद में भारत के जमींदार समाज और कृषक समाज का उदाहरण दिया जा सकता है भारत के जमींदार बिना पौरुष के मालामाल रहते हैं और कृषक रात दिन परिश्रम करने पर भी पेट भर अन्न नहीं पाते, किन्तु हमें यह न भूल जाना चाहिये कि सामाजिकनियम या कानून जो पुरुषोंके बनायेहुए होते हैं - एक देश या समाज के कठोर पौरुष को भी व्यर्थ कर सकते हैं और दूसरे देश या समाज के मामूली से भी परिश्रमको सफल। अतः यदि प्रयत्न करने पर भी किसी देश या समाजकी आर्थिक दशा दिन पर दिन खराब होती जाती है तो इस का कारण 'दैव' नहीं है-देश के अर्थ सम्बन्धी कानून हैं अतः देश की अमीरी और गरीबी की समस्या को केवल 'दैव' के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता।

पुराने जमाने में

पुराने जमाने में जब यह समस्या उत्पन्न हुई और लोग धन संचय करने में लग पड़े तब आर्थिक विषमता को दूर करने के लिये अनेक उपायों की सृष्टि की गई थी। उन उपायों में दो प्रधान थे एक न्याय्य तरीकों से धन कमाना और दूसरा परिग्रह परिमाण या अपरिग्रहवाद।

न्याय्य तरीके—पुराने जमाने के लोग अत्यन्त सरल-स्वभावी होते थे अतः उस समय न तो कानून की इतनी लम्बी चौड़ी व्याख्याएं थीं जितनी आज हैं और न बाल की खाल निकाल कर कानून के भण्डार को भरने वाले वकील ही थे। उस समय के न्याय्य उपाय कानूनकी पुस्तकोंके द्वारा निर्धारित नहीं किये गये थे किन्तु मनुष्य-समाज को दृष्टि में रखकर उपायों के औचित्य और अनौचित्यकी सीमा निर्धारित की गई थी। सारांश यह कि कानून मनुष्य के लिये थे और आज के मनुष्य कानून के लिये हैं। आज कानून बनाते समय किसी वर्ग विशेष के हित का ध्यान रक्खा जाता है और पहले जनसाधारण का ध्यान रक्खा जाता था। इसी से आजकल के औचित्य और पुराने जमाने के औचित्य में जमीन आसमान का अन्तर पड़ जाता है उदाहरण के लिये जुआ को ही ले लीजिये, पुराने समय में हार जीत की बाजी लगा कर किया जाने वाला प्रत्येक व्यापार जुआ समझा जाता था किन्तु

आज कानून ने जुआ की परिभाषा ऐसे ढंग से की है कि संसार में सैकड़ों तरह के जुओं की सृष्टि हो गई। लोगों को जुआ खिलाने के लिये अनेक प्रकार के खेल तमाशे चल पड़े हैं-व्यापारी मंडियां खुलती आ रही हैं। सैकड़ों कंगाल बनते जाते हैं और दो चार व्यक्ति जरूरत से ज्यादह पैसा बटोरते हैं। कानून, न्याय और समाजकी दृष्टिसे सर्वथा अन्याय्य और निंदनीय है। पुराने जमानेमें इस तरह न्याय के नाम पर अन्याय का बाजार गर्म न होता था इसी से संपत्ति के विभाजन में इतनी विषमता भी न थी। यदि प्रत्येक मनुष्य उचित उपायों से धन कमाने और उपायों के औचित्य का निर्धारण अपनी आत्मा की आवाज के द्वारा करे तो संसार की गरीबी और अमीरी का सवाल बहुत अंशो में हल हो सकता है। आचार्य गुण भद्र ने लिखा है—

शुद्धैर्धनैर्विवर्द्धन्ते सतामपि न संपदः।
न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः कदाचिदपि सिंधवः ॥४५॥

शुद्ध—न्यायोपार्जित धन से सज्जनों की भी संपत्ति नहीं बढ़ सकती। स्वच्छ जल से परिपूर्ण नदियां कभी भी नहीं देखी जातीं। अर्थात् जैसे वर्षाऋतु में गन्दा पानी पी कर ही नदियों में बाढ़ आती है उसी तरह अन्याय के धन से ही धनकुबेरों के भण्डार भरपूर होते हैं। यद्यपि इस कथन के अपवाद भी हो सकते हैं किन्तु साधारण तौर पर यह बात देखी जाती है।

परिग्रह प्रमाण—संसार की आर्थिक विषमता को दूर करने का दूसरा उपाय है। यदि प्रत्येक मनुष्य अपने परिवार की आवश्यकता को देख कर परिग्रह का परिमाण करले तो उससे समाज का बड़ा भारी कल्याण हो सकता है। हर एक मनुष्य दूसरों के धन को खींच कर ही मालदार बनता है। दूसरों को चूसे बिना न कोई देश मालदार हो सकता है और न कोई व्यक्ति। अतः यदि जीवन निर्वाह के योग्य संपत्ति संचित कर लेने पर समाज का प्रत्येक व्यक्ति दूसरों को चूसना बन्द करदे तो समाज के सब लोग सुख और शान्ति के साथ जीवन यापन कर सकते हैं। यदि कोई मनुष्य अपना पेट भर जाने पर भी दूसरों के हिस्से का अन्न डकारता जाता है तो इसमें दोनों ही कष्ट में रहते हैं पहला अजीर्ण का शिकार बनता है और दूसरे पेट की ज्वाला में भुनते रहते हैं। इसी तरह जरूरत से अधिक परिग्रह का संचय करने से अशान्ति और असन्तोष मनुष्य को पीसते रहते हैं और दूसरे लोग कंगाल बनकर उसके धन को चुराने का उपाय रचा करते हैं। फलस्वरूप दोनों ही सुख की नींद नहीं सो पाते।

आज कल

जैसा कि हम ऊपर बतला आये हैं आज कल अमीरी और गरीबी के प्रश्न को उत्पन्न करने का दोष अधिकांश में कानून के ऊपर आता है। यदि कानून की चक्की इसी रफ्तार से चलती रही तो आशा है कि कुछ समय के बाद भारत में अमीर और गरीब का भेद ही नष्ट हो जायगा किन्तु, वह दिन देखना भारत के भाग्य में न बदा हो, यही हमारी आन्तरिक भावना है। प्रत्येक देश के शासक अपने देश की सांपत्तिक अवस्था को सुधारने के लिये अनेक उपाय करते रहते हैं। भूकम्प के बाद जापान में एक कानून द्वारा बाहर से विलासिता का सामान मंगाना अपराध घोषित कर दिया गया था इससे

जापान का करोड़ों रुपया बच गया और वहां के निवासी इतना बड़ा नुकसान सरलता से बर्दाश्त कर गये। किन्तु हमारे यहां इस ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता। यहां तो 'यथा राजा तथा प्रजा' की उक्ति को अक्षरशः निबाहा जाता है। इससे अमीरों और गरीबों के बीच की खाई दिन पर दिन बढ़ती जाती है। ज़ार के जमाने में रूस की भी यही दशा थी किन्तु वहां के अधिवासियों ने शासन सूत्र हाथ में आते ही थोड़े ही समय के भीतर रूसको कुछ से कुछ बना दिया। यद्यपि उनकी प्रणाली से हम सर्वथा असहमत है किन्तु उन नास्तिकों को भी देश की सांपत्तिक सामग्री का उचित बटवारा करने के लिये परिग्रहपरिमाण का ही आश्रय लेना पड़ा है यह हमें न भूलना चाहिये। उन्होंने अनेक कानूनों के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति के लिये संपत्ति की सीमा निर्धारित कर दी है जिससे वहां के प्रत्येक आदमी को पेट भर अन्न और तन ढाकने को कपड़ा जरूर मिल जाता है। रूस का उदाहरण मेरे कथन को कि देश की गरीबी तथा अमीरी का कारण दैव नहीं पौरुष है—पुष्ट करता है। अतः आज भी यदि समाज के मनुष्य अपने आर्ष मार्ग का अवलम्बन कर आवश्यक परिग्रह का परिमाण करलें तो समाज शास्त्रियों के सामने से बहुत सी कठिनाइयां दूर हो जावें और वर्गयुद्ध का अवसर उपस्थित न हो।

इतना लिखने के बाद अब हम अपने प्रकृत विषय पर आते हैं। जैसे अन्य सामाजिक विषयों को ले कर प्राचीन और नवीन विचार के लोगों में मतभेद है—धनिकों और गरीबों को ले कर भी मतभेद नजर आने लगा है। नवीन कहते हैं—धनिकों से समाज को कुछ भी लाभ नहीं, वे गरीबों का रक्त चूस २ कर मालामाल होते हैं और बदले में उन्हें चार धक्के देते हैं इत्यादि। प्राचीन कहते हैं—धनिकों से समाज की शोभा है, धर्म की शोभा है। पुण्य कर्म के सुफल का जीता जागता उदाहरण धनिक वर्ग ही है, आदि। जिसकी प्रतिक्रिया होती है, फलस्वरूप दोनों पक्ष बुराई और भलाई करने से बेरोक आगे बढ़ते जाते है। दोष किस का है? यह तो हम नहीं कह सकते। किन्तु इस विवाद को बढ़ाने में प्राचीनों का कम हाथ नहीं है। कभी कभी किसी स्वार्थ के वश या अज्ञानवश वे धनिकों की तारीफ में 'पत्रों' के कालम के कालम काले कर डालते हैं और उनकी लेखन शैली का ढंग भाटों को भी मात कर देता है। बड़ाई की सीमा का कोई ख्याल नहीं रखा जाता और तारीफ के बाजारमें सभी धान बाईस पसेरी तोल दिये जाते हैं। उससे न तो धनिक का ही महत्व प्रगट होता है। और न पाठकों के हृदय पर ही उसका अच्छा असर पड़ता है

यहभी देखा जाता है कि जब तक किसी धनिकसे कुछ आशा होती है तब तक उसका खूब गुणगान किया जाता है और जब काम निकल जाता है या आशा निराशा में बदल जाती है तब उसका नाम भी सुनने को नहीं मिलता। बड़ाई के इन प्रकारों से समाज के किसी भी अंगको फायदा नहीं पहुंचता बल्कि उलटी हानि पहुंचती है। बड़ाई करने वाले समझते है कि इससे अमुक धनी प्रसन्न होगा किन्तु समझदार धनिक जानता है कि इस बड़ाई में कितना तथ्य है। शायद कुछ लोग कहें कि धर्मात्माओं की बड़ाई न करने से धार्मिक प्रेम उठ जावेगा। किन्तु

यह बात नहीं है झूठी बड़ाई कभी भी किसी को नहीं बना सकती। बल्कि ऐसी दशा में लोग धर्म के वास्तविक महत्व को न समझकर नकली धर्मात्मा बनना शुरू कर देते हैं। यदि गुणों के अनुसार बड़ाई की जाय तो वह उचित कहलावेगी और पढ़ने वालों पर भी उसका असर पड़ेगा। किन्तु 'सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति' को ध्यान में रख कर सब धनिकों को धर्मात्मा और द्रव्यहीनों को अधर्मात्मा समझ बैठना धर्म और मोक्ष का उपहास उड़ाना है। जैसा कि अभी एक श्रीमान पंडित ने धनिकों को भी मोक्ष गामी होने का फतवा दे डाला है। यद्यपि सांसारिक वैभव की प्राप्ति पुण्य कर्म के विपाक से होती है किन्तु मोक्षमार्ग की प्राप्ति में सहायक सामग्री की प्राप्ति उससे भी विशिष्ट पुण्य-कर्म के उदय से मिलती है। भरत भी चक्रवर्ती थे और ब्रह्मदत्त भी किन्तु पहले ने मोक्ष प्राप्त की और दूसरे ने सातवां नरक, आज भी सब से अधिक धनिक विलायतों में उत्पन्न होते हैं और उन्हें म्लेच्छ कहा जाता है, ऐसी दशा में धनिकता का मोक्षमार्ग से कौन सा सम्बन्ध है और क्यों है, कुछ समझ में नहीं आता।

एक बार मुझे श्रीमती पंडिता चंदाबाई जी से भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। बात चीत के सिलसिले में बाई जी ने कहा—एक बार जैनधर्म की तारीफ करते हुये एक व्यक्ति ने मुझ से कहा कि, आपका धर्म बहुत अच्छा है। मैं ने पूछा, क्यों? उसने उत्तर दिया, उसमें धनिकों की संख्या अधिक है। उसका उत्तर सुनकर मुझे बड़ी हंसी आई और मैं ने उससे कहा, महाशय! तब आपने जैनधर्म का अच्छा मूल्य आंका है। चंदाबाई जी की यह बात आज भी मेरे कानों में गूंज रही है। विचित्र व्यंग के साथ उनका कहना "महाशय तब आपने जैन धर्म का अच्छा मूल्य आंका है" उनकी ऐसी धनिक-वधू और धनिकपुत्री, किन्तु विरक्ता के अनुरूप ही था। उनके स्थान पर यदि कोई धन-प्रेमी पंडित जी होते तो धन से जैनधर्म का मूल्य आंका जाता देख कर फूले न समाते और उन महाशय को भी 'धर्म का पारखी' होने का फतवा दे डालते।

सभा में, पुण्य कर्म के उदय से मिलने वाली विभूति की बड़ाई करने में जमीन आसमान एक कर डालने वाले व्याख्याताओं को और सुन २ कर हर्षित होने वाले ऐश्वर्य प्रेमियों को आचार्य कुन्दकुन्द के निम्नलिखित वचन हृदय में धारण करने चाहिये—

जदि संति हि पुण्णाणि य परिणामसमुब्भवाणि विविहाणि।
जणयंति विसयतण्हं जीवाणं देवदंताणं ॥७४॥
ते पुण उदिण्णतण्हा दुहिदा तण्हाहि विसयसोक्खाणि।
इच्छंति अणुभवंति य आमरणं दुक्खसंतत्ता ॥७५॥
—'प्रवचनसार'

यदि शुभोपयोग से अनेक तरह के पुण्य उत्पन्न होते हैं तो होवो, किन्तु वे पुण्य देवों तक को विषय तृष्णा उत्पन्न कराते है। तृष्णा से पीड़ित हो कर पुण्यात्मा जीव विषयजन्य सुख की कामना करते हैं। पुण्य कर्म के संयोग से जो मिल जाता है उसे भोगते हैं जो नहीं मिलता उसकी कामना करते रहते हैं। इसी तरह मरणपर्यन्त कष्ट भोगते हैं"।

किसी धनिक को देख कर कर्म सिद्धान्त के अनुसार यह अनुमान किया जा सकता है कि उस ने पूर्वजन्म में कुछ शुभ कर्म किये थे जिनकी वजहसे उसे सांसारिक भोग-उपभोग प्राप्त हुए। किन्तु भविष्य में भी धनवान होने की वजह से प्रत्येक धनिक कोई उन्नत स्थान प्राप्त कर सकेगा यह नहीं

कहा जा सकता, क्योंकि उन्नत स्थान की प्राप्ति का सम्बन्ध धन के साथ नहीं, धर्म के साथ है। यदि कोई व्यक्ति धनवान होते हुए भी धर्मात्मा है तो वह अवश्य प्रशंसा का पात्र है। किन्तु उसका धर्मात्मापना "सौ चूहे खाकर तीर्थयात्रा करने वाली बिल्ली" की तरह बनावटी नहीं होना चाहिये। धर्म यह नहीं कहता कि तुम 'येन केन प्रकारेण' धनवान बन कर ख्याति-लाभ-पूजा आदि की चाह से उसका कुछ भाग धार्मिक कार्यों में खर्च कर दो। ऐसा करने से धर्म के पंडों की बहियों में भले ही आपका नाम धर्मात्माओं की श्रेणी में लिखा जा सकता है किन्तु धर्म की आत्मा आपसे कोसों दूर रहेगी।

इस प्रसंगमें मुझे एक मारवाड़ी धनिकका स्मरण आता है। उसने कलकत्ते से कुछ दूरी पर एक चर्बी तैयार करने का एक कारखाना खोला था। और ६ वर्षों के बाद मारवाड़ी समाज में हल चल मचने पर एक लाख रुपया दान देकर दोषमुक्त होने के साथ ही साथ धर्मात्मा भी बन बैठा था। मुझे एक प्रतिष्ठित व्यक्ति ने बतलाया था कि उसने उस कारखाने से चौदह लाख रुपया कमाया था। अतः किसी को धार्मिक या दानी देखकर तब तक धर्मात्मा नहीं कहा जा सकता, जब तक उसके धन कमाने का ढंग भी धर्मयुक्त न हो।

एक पंडित जी लिखते हैं—शास्त्रों में धनवानों के ही मोक्ष जाने का वर्णन मिलता है कहीं पर भी यह नहीं लिखा मिलता कि अमुक भिखारी इतने भवों में मोक्ष गया या जायेगा। पंडित जी की कैसी गजब की सूझ है। इन वाक्यों में आपने समस्त वाङ्मय का सत्व खींच कर रख दिया है। आज तक तो गरीबों को ऐहिक संसार में ही कोई हक न था किन्तु अब मोक्ष में भी उनके लिये स्थान नहीं है। मोक्ष जाने के लिये उत्सुक गरीब भाई नोट कर लें। मोक्ष के राजदूतों की ओर से सूचना प्रकाशित हो गई है। वहां की गवर्नमेंण्ट अब भिखमंगों को पासपोर्ट देकर मोक्ष स्थान को भिखमंगों का देश नहीं बनाना चाहती। अतः ओ भिखारी भाइयो!!! यदि मोक्ष प्राप्त करना चाहते हो तो धन संचय करो।

पुराने जमाने में जब यहां के लोग मोक्ष जाया करते थे भूल से ग्वाला सुदर्शन सेठ बन कर मोक्ष चला गया, दरिद्र बालक धन्यकुमार बन कर दर्बानों की आंख में धूल झोंक गया, अंजन चोर! पर नहीं वह तो मालदार होगा चोर जो था। अस्तु, और भी बहुत से "ऐरे गैरे नत्थू खैरे" भिखारियों की सन्तान मोक्ष में दखल जमा बैठी। किन्तु अब विदेशों की आब हवा वहां पर भी पहुंच गई है। मोक्ष की 'हाउस आव लार्डस' ने प्रस्ताव पास कर दिया है कि अब कोई भी कंगाल वहां नहीं लिया जावेगा। संभवतः इसी लिये यहां से मोक्ष जाने वालों को आज से लग भग २५०० वर्ष पूर्व ही नोटिस दिया गया था क्योंकि वे जानते थे कि भारतवर्ष में कंगाली फैलेगी अतः वहांके इस रोग से मोक्ष स्थान को बचाना चाहिये। पंडितजी के इस आविष्कारने बहुतसे आधुनिक प्रश्नों का समाधान कर दिया और मेरे दिमाग में भी कुछ आविष्कार कर डालने की धुन भरदी। किन्तु कोशिश करने पर भी मैं धनिकों के लायक कोई आविष्कार न कर सका, कारण जब २ मैं कोई ऊंची उड़ान उड़ता था, बचपन के कुसंस्कार

उद्धत हो कर सब गुड़ गोबर कर देते थे। अपने कुछ कुसंस्कारों को तो मैं पहले बतला आया हू, कुछ और सुन लीजिये—

कुसंस्कार नम्बर दो—पुण्य और पाप प्रत्येक के दो भेद होते हैं पुण्यानुबन्धि-पुण्य, पापानुबन्धि पुण्य तथा पापानुबन्धि पाप और पुण्यानुबन्धि पाप। जो पुण्य का फल भोगते हैं और पुण्य का ही बन्ध करते हैं वे महानुभाव पुण्यानुबन्धी पुण्यात्मा कहलाते हैं। जो पुण्य भोगते है और पाप कमाते हैं वे धनिक-शिरोमणि दूसरे दर्जे में दाखिल किये जाते हैं। इसी तरह जो पापी पाप का फल भोगते हैं और करते भी पाप ही हैं वे नम्बर ३ के मुलाजिम हैं और जो अभागे पाप भोगते हैं किन्तु पुण्य उपार्जन करते है वे पुण्यानुबन्धि पापात्मा कहे जाते हैं। इन चार भेदों में से दो ने बड़ा गड़बड़ घोटाला पैदा कर दिया है भला कहीं पुण्य भोगने वाले धनिक भी पापी हो सकते हैं और पाप भोगने वाले भिखारी भी पुण्य कमा सकते हैं? यदि ऐसा हुआ तो पंडित जी का अविष्कार ....अब कुसंस्कार नं० १ सुनिये—

दारा सुत अरु लक्ष्मी तो पापी के भी होय।
सम्यग्दर्शन धर्म चित जग में दुर्लभ होय॥

यह कुसंस्कार मुझे बड़ा परेशान कर रहा है, चौबीसों घंटे जबान पर बैठा रहता है। इसी लिये मैंने इसे नम्बर एक में रक्खा है। जब से मुझे 'जैन गजट' द्वारा पंडित जी के उक्त आविष्कार का पता चला है मैं बराबर इस जबरदस्त कुसंस्कार का मूलोच्छेद करके पंडितजी के अविष्कार से कुछ लाभ उठाना चाहता हूं किन्तु बचपनके संस्कार क्या कभी दूर हो सकते हैं? अतः अब मैंने इस संस्कार की काया पलटकर डालनेका निश्चय किया है। नहीं २, कायापलट कर डाला है। किन्तु उस में कुछ व्याख्या करने की आवश्यकता रह जाती है। सो कोई मुजायका नहीं है ऐसा तो छन्दों में हुआ ही करता है। अच्छा तो सुनिये —

सम्यग्दर्शन धर्म चित तो पापी के भी होय।
प्रिय दारा अरु लक्ष्मी जग में दुर्लभ होय॥

व्याख्या—पापी भिखारी, क्यों कि गरीबी सब पापोंकी जड़ है। पहले छन्दमें से 'सुत' निकाल दिया गया है, क्यों कि बहुत से धनिकों के 'सुत' नहीं होता अतः 'सुत' मोक्ष का कारण नहीं है।

इस कुसंस्कार का शिरच्छेद तो कर डाला किन्तु अब भी डर बना हुआ ही है कारण, हम हैं गरीबों की सन्तान।

अभिमान

—:०:—

(ले०—श्रीमान पं० भवरलाल जी न्यायतीर्थ)
पूर्व प्रकाशित से आगे

उस दिन रामधन बाबूने जो अपने मकान पर दिवाकरके साथ तिरस्कार पूर्ण व्यवहार किया था; वह दिवाकरके लिये कोई साधारण बात न थी। ऐसे अशिष्टता भरे वचन दिवाकरने आज तक किसी के मुँहसे न सुने थे। दरिद्रता एवं गरीबी कितनी भयंकर और घृणाजनक वस्तु है, यह उसे अब मालूम हुआ। श्यामाचरण का पिता अमीरी के नशे में कितना पागल होरहा है। इसका अन्तिम नाटक देखकर उसदिन गरीब दिवाकर आश्चर्य चकित रह गया। उसने अनुभव किया कि पैसेके बिना यह संसार सचमुच ही अपमान और तिरस्कारका केन्द्र है। दुनियां में सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिये लक्ष्मीकी उपासना करने की एकान्त आवश्यकता है उसको संसार भारस्वरूप जान पड़ने लगा। उस दिनके बाद वह कई दिनों तक स्कूल नहीं गया। अस्वस्थता के बहाने होते रहे। दिवाकरने रामधन बाबू के इस निष्ठुरता पूर्ण व्यवहार की बात किसी से न कही।

एक दिन संयोगवश श्यामाचरणको दिवाकर बाजार में मिल गया। लज्जा से दोनों का मस्तक झुक गया। श्यामाचरण ने कहा—उस दिनके बाद आज तुम्हारे दर्शन हुए हैं। कई बार तुम्हें बुलाने भी भेजा। पर तुम न आये। मेरा अपराध तो कोई था ही नहीं। तुम्हें पिता जी की बातों पर इतना ध्यान क्यों देना चाहिये था। वे तो अपढ़ हैं। तुम मुझे क्षमा करो। दिवाकर ने विनम्रता पूर्ण शब्दों में कहा—आपकी कृपा के लिये धन्यवाद है। अब तो जब घर पर आपका अधिकार हो जायगा तभी मेरा आना ठीक है। बार २ अपमान की बातें सुनने का मैं आदी नहीं हूं। एक बात यह भी है कि उस दिन से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है आता भी कैसे।

इतना कह कर दिवाकर वहां से चल दिया। श्यामाचरण को दिवाकर की बातें सुन कर दुःख हुआ।

उस वर्ष दिवाकर हाई स्कूल एक्जामिनेशन में फेल हो गया। रामधन बाबू के मकान पर होने वाली उस घटना के बाद उसका मन पढ़ने में लगा ही नहीं। फेल होने के बाद उसने पढ़नेका विचार छोड़ दिया। श्यामाचरण ने कई बार कहलवाया कि पढ़ना न छोड़ो, बिना पढ़े आगे क्या करोगे? कम से कम बी० ए० तो हो जाना ही चाहिये। उस के अन्य प्रेमी बन्धुओं ने भी यही सलाह दी पर उस ने किसी की भी न सुनी। सुनता भी कैसे रोटी का प्रश्न भी तो हल करना था। उसने अच्छी तरह सोच विचार कर यही निश्चय किया कि किसी जगह तलाश कर नौकरी कर लेना चाहिये इसके लिये उसने कई अङ्गरेजी पत्रों में आवश्यकताएं देखना प्रारम्भ किया। जहां आवश्यकता देखी वहां ही निवेदन पत्र भेज दिया। सैकड़ों एप्लीकेशन भेज देने पर भी उसको कहीं जगह न मिली। वह

दिन दिन निराश होता गया। एक दिन पोस्टमैन ने लाकर एक लिफाफा दिया। उसने खोल कर पढ़ा तो कुछ प्रसन्नता हुई। उसमें लिखा था कि "अगर आप चाहें तो दश रुपये मासिक में आपको रख सकते हैं। आजकल मैट्रिक पास आदमी को इससे अधिक नहीं मिल सकता और आप तो पास नहीं हैं। कुछ बड़े आदमियों की सिफारिश पर ध्यान देकर आपको पसन्द किया गया है : नहीं तो हमारे पास एक हजार अर्जियां आई हैं"। यह पत्र एक मारवाड़ी महाजन की कोठीसे आया था। उस में पारसलों पर अङ्गरेजी में पते करने के लिये एक क्लर्क की जरूरत थी।

अपनी मां की सम्मति लेकर दिवाकर इस कोठी में नौकर हो गया। पर यहां तो वही आफत थी। सुबह नौ बजे से लेकर रात के नौ बजे तक डटकर काम करना पड़ता था। दिवाकर ने ऐसा घोर परिश्रम तो आज तक कभी नहीं किया था। शक्ति से अधिक परिश्रम करने के कारण वह वहां रहने के चार पांच दिन बाद ही बीमार हो गया। लगातार कई दिनों तक बीमार रहने से वह अपने काम पर न जा सका। इस कारण कोठी वालों का पत्र मिला कि आपके स्थान पर दूसरा आदमी रख लिया गया है अब आप आने का कष्ट न उठावें। हमने आपकी एक माह तक प्रतीक्षा की अब लाचार हो कर हमें यह प्रबन्ध करना पड़ा है। अब तो दिवाकर की मुसीबतें और भी अधिक बढ़ गईं। पहले खाने को ही न था अब औषधियों के लिये पैसे कहां से आवें। बुड्ढी माँ के पास भी अब कुछ न रहा। तन पर कपड़ा, पेट के लिये रोटी और रोगीके लिये दवाइयां कहां से आतीं? दातव्य औषधालय तो बहुत हैं पर वहां से दवाएं आ कर लावे कौन? दुःख किसी को पूछ कर नहीं आते। वे जिसको असहाय और गरीब देखते हैं उस पर दल बांध कर टूट पड़ते हैं।

इस मुसीबतमें एक दिन श्यामाचरण दिवाकरसे मिलने के लिये आया उसने कहा—"मुझेतो मालूम ही नहीं कि तुम बीमार हो। किसीसे कहलवा देते तो क्या हो जाता। क्या यह प्रतिज्ञा कभी न टूटेगी? डेढ़ माह से अस्वस्थ हो और समाचार भी न दिया। खैर तुम्हारी मर्जी। किसी का कहना तो मानते नहीं। पढ़ना छोड़ कर क्या फायदा उठाया। सुना था किसी मारवाड़ी की दुकान पर १०) रुपये मासिक में तुम नौकर हो गये हो। अपनी २ रुचि है। ऐसी छोटी २ नौकरियां करते फिरना कोई समझदारों का काम तो है नहीं। पिता जी की बातों पर यदि कुछ भी ध्यान न देते तो क्यों तो पढ़ना छूटता और क्यों यह अवस्था होती। मेरा विचार तो अब चार वर्ष तक और पढ़कर सिविल सर्विस के लिये विलायत जाने का है। अगर पढ़ना न छोड़ते तो शायद तुमभी मेरे साथ चलते। नौकरियों की चिन्ता करना तो मूर्खता है। वह तो योग्य मनुष्य के पीछे २ दौड़ा करती है। मनुष्य को अपना उद्देश्य हमेशह ऊंचा बनाना चाहिये। उस दिन जो तुम्हारी और हमारी बहस हुई थी उस में किस का कहना सच था। इस समय तुम इसका अनुभव कर रहे होगे"।

इस तरह श्यामाचरण न मालूम अपनी झोंक में क्या २ कह गया। उस की बातों में कुछ २ सहानुभूति के साथ अभिमान भी था। दिवाकर ने उस की बातों का कुछ भी जवाब न दिया। इतनी शक्ति

भी कहां थी जो इन का दलीलों के साथ जवाब देता थोड़ी देर और बातें हो जाने के बाद श्यामाचरण उठकर आने लगा। जाते समय उसने किसी डाक्टर का प्रबंध कर देने के लिये दिवाकर को पूछा पर उस ने इनकार कर दिया। वह मोटर में बैठ कर चला गया।

भाग्य की लीला सर्वथा अपरिज्ञेय है। कौन कह सकता है कि जो आज राजा है वह कल भी राजा ही रहेगा। क्षण भर में रंकसे राजा और राजेसे रंक हो जाता है। जो आज महलों का स्वामी है, कल उसे झोंपड़िये भी रहने को नहीं मिलतीं। उस की लीला से जल का स्थल और स्थल का जल होने में कुछ भी देर नहीं लगती। मनुष्य का अभिमान बिलकुल व्यर्थ है। विधाता कर्म तो उसपर प्रति क्षण हंसा करता है। अभिमानी मनुष्य इन सब बातों को जानता हुआ भी अपने आप को भूल जाता है। बाबू रामधन अपने वैभव के गर्व से उन्मत्त हो रहा था। वह निर्धन और गरीबों को तो मनुष्य ही नहीं समझता था। वह दिवाकर के साथ घटित होने वाली उस दिन की घटना इसी उन्माद का ही तो फल था। इसलक्ष्मी के कृपापात्र को इस बात की स्वप्न में भी आशा न थी कि यह वैभव और राजसी ठाठ अब अधिक दिनोंका नहीं है। ठीक ही है, लक्ष्मी भविष्य और भूत को भुला देती है। कल क्या होगा और कल क्या हो रहा था, इस बात का विचार धनी पुरुष क्यों करेगा। रामधन समझता था असंख्य धन राशि मेरे पास है और वह सब तरह से सुरक्षित है। उसके लिये यह आशंका करना एक बिलकुल व्यर्थ बात थी, कि वह भी कभी अनाथ असहाय और दरिद्र हो सकता है पर विधिके विधान को कौन मेट सकता है।

एकाएक कृष्णा नगर में एक ऐसा भूकम्प आया और जमीन इतनी जोर से हिली कि क्षण भरमें सैंकड़ों मकान ढह कर ढेर हो गये। सारे नगर में हा हा कार मच गया। ऐसा मालूम होने लगा जैसे प्रलय हो रहा हो। किंकर्तव्य विमूढ़ हो रहे थे, क्या करना चाहिये क्या नहीं, यह किसी के भी समझ में नहीं आरहा था। सभी के मुंहसे बेबस हाहाकार की आवाज निकल रही थी। जहां जल था वह स्थल होगया और जहां स्थल था वहां जल। कोई दो तीन मिनिट तक यह भूकम्प हुआ पर इतने थोड़े समय में ही जो इस नगर की दुर्दशा हुई उस का वर्णन शब्दों द्वारा नहीं हो सकता। लोग कहते थे कि शास्त्रों में वर्णित प्रलय इससे अधिक भयङ्कर कभी नहीं हो सकता।

इस भूकम्प से नगर के उत्तरीय भाग में बहुत अधिक हानि हुई। यहां शायद ही कोई मकान था, जो गिरने से बचा हो। बड़े २ महल और आलीशान मकान तो प्रायः सभी गिर चुके थे। हां कुछ गरीबों के मिट्टी के मकान अवश्य बच गये थे। बाबू रामधन शहर के इस उत्तरीय हिस्से में ही रहते थे। इस भाग में आप के कई बड़े २ मकान थे। दो तीन मकान तो लाखों रुपये की लागत के थे। अब इन सब मकानों के स्थानपर केवल चूना और पत्थरों के ढेर थे। आप का वह निवास भवन जिस में आप और आपका सारा कुटुम्ब था, जमीनके भीतर ही धंस गया। ऐसी उसपर जमीन फिर गई कि उस मकान के स्थानका भी पता लगाना कठिन था। सौभाग्यसे

उस समय आप और आप का बड़ा लड़का श्यामाचरण वहां न थे; नहीं तो आप के अन्य कुटुम्ब के समान आप भी उस निवास भवन के साथ पाताल में प्रविष्ट हो जाते।

आप की उस असंख्य धनराशि के साथ (जिसका कि आप को सब से बड़ा अभिमान था) आप की स्त्री आप के दो बच्चे और दो बच्चियां इस पापी भूकम्प की भेंट चढ़गये। उन सबका शोक मनाने के लिये अब आप और केवल श्यामाचरण बचे हैं। जो बहुत ऊंची जगह से गिर कर नीचे आ जाता है उसके दुःखों को केवल भगवान ही जान सकते हैं। सम्पत्ति के शिखर से गिर कर विपत्ति के भूतल पर आये हुए रामधन और श्यामाचरण की कष्ट कहानी सच मुच ही करुणोत्पादक है। जिस ने स्वर्ण के पात्रों में दूध पीया है उसके पास अब खाने के लिये मिट्टी का वर्तन भी न रहा। वे दिगम्बरों के समान पाणिपात्र बन गये। पर हा! उस पाणिपात्र में खाने को क्या बचा है। जिन भिखारियों को देख कर ये नाक मुंह सिकोड़ते थे अब उन्हीं के समान इन की भी दयनीय दशा हो गई। अभिमान कितना भयंकर है। यह इन्हें अब मालूम हुआ। इस भूकम्प ने गरीब और अमीरों को बिलकुल एक समान कर दिया। इस समय सब के मुंह से एक ही आवाज निकलती थी और सब के हृदय में करीब २ एक से ही भाव थे।

जो आदमी कभी हंसता है उसे कभी रोने के लिये भी तैयार रहना चाहिये। जो मनुष्य सम्पत्ति में विपत्तियों पर हंस कर अभिमान प्रकट करता है वह कभी न कभी अवश्य रोयेगा और इतना रोयेगा कि जिसको सुनकर पत्थर भी रोने लगे। इस समय रामधन और श्यामाचरण का रोना वैसा ही था। सम्पत्ति के वियोग के साथ साथ जो कुटुम्ब का असह्य वियोग हो गया था उसका पुनः संयोग होना तो अब इस जीवन में असंभव ही था। संसार की असारता और क्षणभंगुरता का ठीक अर्थ अब रामधन के समझ में आया। अब वह बाबू रामधन के स्थान में 'दरिद्र रामधन' हो गया।

उस दिन की रात किसी तरह पिता पुत्र ने रो-रो कर निकाली। पक्ष विहीन पक्षी की तरह ये रात भर छटपटाते रहे। कल प्रातः काल ही भूकम्प आ-जानेसे दिन भर खाना न खाया था। रात भी यों ही गुजरी। पर सुबह उठते ही जोर की भूख लगी। किन्तु खाने को तो कुछ न था। आखिर लज्जाको सदा के लिये विदा कर नगर में जो दो तीन दातव्य भोजनशालाएं खुली हुई थीं वहां ही जा कर पेट की ज्वाला को शांत करने का विचार किया। और कुछ उपाय भी तो न था। वहां जाने के पहले पिता पुत्र ने बहुत कुछ ऊहापोह किया। चलते समय कहने लगे—हे ईश्वर हमने ऐसा क्या पाप किया था जिसका फल ऐसा कठोर मिला है। भूकम्प तो सारे ही नगर में हुआ है पर हमारे जैसी हालत तो किसी की भी न हुई। भूकम्प पीड़ितों के लिये यद्यपि कई दयालु धर्मात्माओं ने सब तरह का प्रबन्ध कर रक्खा था पर उससे क्या हो सकता था। इसी तरह शोक विलाप में कई महीने व्यतीत हो गये। दिन २ इन दोनों के दुःख बढ़ने लगे।

एक दिन पिता ने पुत्र से कहा—अब किसी जगह नौकरी किये बिना काम न चलेगा। दोनोंको ही अगर कहीं अच्छी नौकरी मिल जाय तो ठीक है, इस जिन्दगी को तो जैसे तैसे काटना है, तुमको

किसी आफिस में तलाश करना चाहिये। अगर यहां न मिल सके तो फिर बाहर जाना होगा। तुम तो ग्रेज्यूएट हो तुम्हें तो कहीं अवश्य ही स्थान मिल जायगा।

लगातार कई महीने तक प्रयत्न करने पर भी श्यामाचरण को कोई स्थान नहीं मिला। जो श्यामाचरण दिवाकर की उस साधारण नौकरी पर घृणा प्रकट करता था वही अब नौकरियों की तलाश में दरबदर मारा फिरता है। सैंकड़ों आफिसों में अर्जियें दे देने पर भी उसको कोई जगह न मिली। अन्त में उसने इस नगरको छोड़नेका विचार किया। उसका विचार कलकत्ते जाने का हो रहा था। क्योंकि उसका वह गरीब मित्र दिवाकर वहां चार वर्षों से काम कर रहा था। शायद उसकी सहायता से वहां कोई स्थान मिल जाय। उसके इस विचार को उसके पिता ने भी स्वीकार किया वह तत्काल ही एक अपने मित्र के साथ कलकत्ते के लिये रवाना हो गया।

* * *

क्षत्र चूड़ामणि की सूक्तियां

द्वितीय लम्ब।

(ले०—श्रीमान पं० श्र प्रकाश जैन न्यायतीर्थ)

१—गुरुस्नेहो हि कामसूः ॥२॥

गुरु का स्नेह अभिलाषाओं को पूरा करने वाला होता है। अर्थात् जब किसी पर गुरु का प्रकृष्ट प्रेम हो जाता है तो उसकी गुरु के प्रसाद से सब इच्छाएं पूरी हो जाती हैं।

२—प्रफुल्लंति हि निर्वेगो भव्यानां कालपाकतः ॥६॥

समय आजाने पर भव्य पुरुषों के वैराग्य प्रकट हो ही जाता है। अर्थात् जब काल लब्धिका संयोग मिल जाता है तब किसी कारण विशेष के मिलने ही भव्यात्माओं के वैराग्य उत्पन्न हो जाता है और वे संसार को असार समझने लगते हैं।

३—श्रेयांसि बहुविघ्नानि ॥१३॥

उत्तम कार्यों में बहुत विघ्न हुआ करते हैं। कोई भी अच्छा काम हो, किसी भी विषय का हो उसके सम्पन्न होने में अनेक बाधायें आ जाती हैं, वह निर्विघ्नतया पूर्ण नहीं होता।

४—चित्रं जैनी तपस्या हि स्वैराचारविरोधिनी ॥१५॥

जैनों के तपश्चरण में स्वेच्छाचारका विरोध कियाजाता है। कोई भी साधु हो उसके लिये शास्त्रानुकूल मार्ग का अनुसरण करना आवश्यक है। साधु बन करके वह मनमानी नहीं कर सकता। यही जैनधर्म की विशेषता है।

५—अहो पापस्य घोरत्वमाशाब्धिः केन पूर्यते ॥२०॥

पापों की भयंकरता विचित्र है इसके लिये कितना आश्चर्य किया जाय। यह पाप ही का परिणाम है जिसके कारण आशारूपी समुद्र कभी

भी पूर्ण नहीं होता। आशायें हमेशा बढ़ती ही रहती हैं, कभी पूरी नहीं होतीं।

६—माणिक्यस्य हि लब्धस्य शुद्धेर्मोदो विशेषतः ॥२६॥

प्राप्त हुई उत्तम वस्तु के पवित्र होने पर अधिक हर्ष होता है। अर्थात् कोई अलभ्य चीज़ मिल जाती है और यदि वह फिर निर्दोष साबित होती है तो उसके मिलने से अधिक प्रसन्नता होती है।

७—अमूलस्य कुतः स्थितिः ॥३३॥

जड़ के बिना कोई वस्तु ठहर नहीं सकती। यदि नींव मज़बूत होती है तो उस पर प्रासाद खड़ा किया जा सकता है. मूलकारण के अभाव में कार्य का होना सम्भव नहीं। जड़ के खोखली हो जाने पर वृक्ष नहीं ठहर सकता।

८—हन्तात्मानमपि घ्नन्तः क्रुद्धः किं किं न कुर्वते ॥३६॥

खेद है, क्रोधी मनुष्य अपनी आत्मा का नाश करते हुये भी क्या क्या नहीं कर डालते। अर्थात् जिस समय मनुष्य को क्रोध का आवेग आता है उस समय वह कुछ भी विचार नहीं करता और अनिष्ट कार्य भी करने लग जाता है।

९—कोऽवन्धो लङ्घयेद् गुरुम् ॥३६॥

ऐसा कौन समझदार है जो गुरु की आज्ञा का उल्लंघन करता है? अर्थात् कोई भी ज्ञानवान गुरु की आज्ञा को नहीं टालता। क्योंकि गुरु कहते हैं बड़े को, और बड़ा होता है वह विशेषज्ञ होता है। इस लिये वह जो कुछ आदेश देता है, वह बड़ी दूरदर्शिता से देता है उसके वास्तविक हित का ख्याल करके देता है। इस लिये ज्ञानवान उसके आदेश का कभी उल्लंघन नहीं करते। यदि कोई पुरुष गुरु की आज्ञा को, उसके सोच समझ कर कहे हुये वचनों को यदि नहीं मानता है तो समझना चाहिये कि वह निरा मूर्ख है और ज्ञान-लोचन से विहीन है।

१०—अपथघ्नी हि वाग्गुरोः ॥४०॥

गुरु की वाणी खोटे मार्ग का नाश करने वाली होती है। अर्थात् गुरु जो शिक्षा देते हैं वह उन्मार्ग से हटा कर सन्मार्ग में प्रवृत्त करने वाली होती है।

११—सति हेतौ विकारस्य तदभावो हि धीरता ॥४८॥

विकार के कारणों के रहते हुये भी विचलित न होना ही धीरता है। ऐसे तो सभी अपनी प्रशंसा की डींग मारा करते हैं कि हममें यह गुण है। हममें यह गुण है। पर यदि समय आने पर भी वह गुण उसमें बना रहे तभी समझना चाहिये कि वह सच्चा गुणवान है। यों तो अपनेको धैर्यवान बतलाने वाले बहुत मिल सकते है, किन्तु यदि क्रोध करने का मौका आने पर भी जो क्षमाशील बना रहता है तो समझना चाहिये कि वह वास्तव में धीरज रखने वाला है।

१२—न हि शक्यं पदार्थानां भावनं च विनाशवत्

किसी भी वस्तु का नष्ट कर डालना तो सहज है किन्तु उत्पन्न करना बड़ा मुश्किल है। नष्ट करने में लगता क्या है? उत्तम से उत्तम को आप खराब कर सकते हैं, पर क्या कोई वस्तु सहज ही में उत्तम भी बनाई जा सकती है? एक दुर्जन है. वह अनेक व्यक्तियों को सरलता से बिगाड़ सकता है. उन्हें व्यसनी बना सकता है और उन्हें सदाचरण से दूर कर और कई नवीन खोटी आदतें डाल सकता है. पर क्या एक दुराचारी को सदाचारी बनाना एक पतित को पावन बना लेना भी इतना सरल है? कदापि नहीं। बिगाड़ने में कुछ नहीं लगता और सुधार

करना अपनी सारी शक्ति लगा देने पर भी बड़ा कठिन है।

१३—प्राणप्रयाणवेलायां न हि लोके प्रतिक्रिया

प्राण निकलते समय इस संसार में कोई उपाय नहीं होता। मृत्युका जो समय निश्चित होता है उस समय प्राण नहीं बचाए जा सकते और अपने आत्मा के उत्थान के लिये कोई सफल प्रयत्न भी नहीं किया जा सकता। इस लिए बुद्धिमानों को उचित है कि वे अन्त समय में कुछ करने के भरोसे न रहें और पहले से ही अपने कर्तव्य पालन में संलग्न हो जांय।

१४—निष्प्रत्यूहा हि सामग्री नियतं कार्यकारिणी

प्रत्येक कार्य अपनी उपादान और निमित्त कारणात्मक सामग्री के मिलने पर ही होता है। सामग्री में यदि किसी भी वस्तु की कमी रह जाती है तो वह नहीं होता। इसलिए समझना चाहिए कि निर्विघ्न सामग्री तो कार्यको नियमसे पूरा करती है।

१५—गर्भाधानक्रियामात्रन्यूनौ हि पितरौ गुरु

गुरुजन माता पिता के समान हैं, केवल भेद यह है कि उन के द्वारा अपने गर्भाधान का कार्य नहीं होता। अन्यथा माता और पिता के उपकारों से वे कम कम लाभ पहुँचाते हैं।

१६—असमानकृतावज्ञा पुंसामां हि सुदुःसहा

प्रतिष्ठित पुरुषों का यदि छोटे व्यक्ति तिरस्कार करें तो यह उन से सहन नहीं होता। अपने से अधिक प्रतिष्ठित यदि विरोध करे तो यह तो किसी प्रकार सहन कर भी लिया जाता है, पर अपने से नीचों द्वारा किया हुआ अपमान तो मृत्यु से भी विशेष कष्ट जनक होता है वह कैसे सहन किया जा सकता है।

१७—स्वदेशे हि शशप्रायो बलिष्ठः कुञ्जरादपि॥

अपनी जगह पर खरगोश जैसे कमजोर भी हाथी से भी बलवान बन जाते हैं। अपने सजातीयों में रहते हुए किसे अपनी शक्ति का अभिमान नहीं होता। वहां तो सभी अपने को बलिष्ठ समझने लगते हैं, और किसी को कुछ नहीं समझते।

१८—किंस्वित्किंकृत इत्येवं चिन्तयन्ति हि पीडिताः

पीड़ित मनुष्य अनेक चिन्ताएं किया करता है वह हमेशा सोचता रहता है—अब क्या होगा? अब मैं क्या करूं? सच है, दुःखी मनुष्य क्या २ नहीं करता

१९—उदारानां हि लोकोऽयमखिलो हि कुटुम्बकम्

उदार पुरुषों के लिये यह सारा संसार ही कुटुम्ब है। वे किसी खास व्यक्ति को अपने कुटुम्ब का नहीं समझते, उन के तो इस भूतल के सम्पूर्ण प्राणी ही कुटुम्बियों के समान हैं वे समय आने पर अपने अपकारी का भी साथ देने के लिए तयार हो जाते हैं, और उसके कार्य को अपना ही समझने लगते हैं।

२०—तमो ह्यभेद्यं खद्योतैर्भानुना तु विभिद्यते

जो कार्य असमर्थों से नहीं होता वह योग्यों के द्वारा शीघ्र ही हो जाता है। जिस अन्धकार को जुगनू नहीं हटा सकते उसे सूर्य शीघ्र ही दूर कर देता है।

२१—असुमतामसुभ्योऽपि गरीयो हि भृशं धनम्

प्राणधारियों को अपने प्राणों से भी धन बहुत प्यारा होता है। धन को आता देख कर वे अपने प्राणों की भी चिन्ता नहीं करते। प्रायः ऐसा देखा जाता है, कि चाहे प्राण भले ही चले जांय वे धन को बचाने से पीछे नहीं हटते।

२२—कृत्याकृत्यविमूढा हि गाढस्नेहान्धचक्षुषः

बहुत अधिक स्नेह से बन्धे हुए मनुष्य अपने करने योग्य और न करने योग्य को भी नहीं विचारते अर्थात् प्रेमके बहुत अधिक बढ़ जाने पर मनुष्य इस बात का विचार नहीं करते कि किस कार्य के करने से हमें लाभ है और किस के करने से नुकसान।

२३—न ह्ययोग्ये स्पृहा सताम् ॥७॥

महापुरुषों को अयोग्य कार्य के लिये इच्छा नहीं होती। वे उसी कार्य को करना बहुत पसन्द करते हैं, जो उनके योग्य और अनिन्दित होता है। गर्हित कार्य वे कभी भी नहीं करते।

२४—नाममात्रेण मित्रं हि मित्रत्वं मित्रता भवेत्

मित्र उन्हीं का नाम है जो एक दूसरे के सुख में सुखी और दुःख में दुखी हों। ऐसी अभिन्न मैत्री ही मित्रता कहलाती है जिसमें दो शरीर रहते हुए भी विचार एक रहें, एक दूसरे के किये हुए को न टालें और अपने शरीर की सारी शक्तियां लगा कर भी एक दूसरे का उपकार करने के लिये तयार रहें। क्रमशः

❋ ❋ ❋

हमारी प्राचीन तथा अर्वाचीन अवस्था

अग्रसेन जयन्ती की आम मारवाड़ी सभा में दिये हुये पं० धन्नालाल जी न्यायतीर्थ के व्याख्यान के आधार पर

(ले०—श्री कन्हैयालाल जी पाटणी डिबरूगढ़)

प्रगति शील संसार में न केवल अनुभव आयु तथा शरीरोत्सेध में ही परिवर्तन होता है। किन्तु आत्म परिणाम रुचि में भी परिवर्तन होता प्रतीत होता है। इसी के अनुसार जैसे आज हिन्दू आर्य पारसी सिक्ख क्रिश्चियन मुस्लिम धर्म दृष्टिगोचर होरहे हैं, प्राचीन कालमें षट् दार्शनिक मत प्रचलित थे।

जिनमें नैयायिकने कर्त्तावाद को प्रधान कर ईश्वर को सृष्टि का रचयिता माना है। और इस की सिद्धि में यह युक्ति दी है। कि जैसे घट पट गृह आभूषण आदि अपने २ कर्त्ताओं द्वारा रचे जाते हैं। उसी प्रकार उर्वी तरु तन्वादिक भी सृष्ट हैं, एतावता इन का भी निर्माण करने वाला सर्वशक्तिवान एक ईश्वर है।

दूसरा एक विस्तृत सांख्य दर्शन भी है। जिसमें मुख्यतः प्रधान और प्रकृति ये दो तत्व माने गये हैं। ज्ञातृत्व आदि गुणवान प्रधान है तथा प्रधानसे अन्य प्रकृति है। इन दोनों की विकृत अवस्था से सृष्टि रची जाती है। एवं प्रधान से प्रकृति के पृथक होने को मुक्ति कहते हैं।

इन दोनों विभिन्न दर्शनों में से किसी एक को सम्यक् तथा दूसरे को मिथ्या ठहराना मेरे लिखने का प्रयोजन नहीं है। किन्तु इन दोनों दर्शनों से हमारे रित का विशेष सम्बन्ध है। इसी लिये सामान्यतया

इनका यहां उल्लेख किया है।

इन दोनों दर्शनों पर विचार करने से यह शिक्षा प्राप्त हो सकती है। कि यदि ईश्वर को कर्त्ता माना जाय तो उस की आराधना करने के लिये भक्ति मार्ग का ही अवलम्बन लेना पड़ेगा जिस का फल भविष्य पर निर्भर है।

तथा सांख्य मतानुसार प्रधान आत्मबल द्वारा प्रकृति से पृथक हो कर मुक्तिधाम पा सकता है, यह स्वीकार किया जाय, तो इस से पुरुषार्थ करने की शिक्षा मिलती है। जिस का फल प्रत्यक्ष गोचर है।

वर्तमान वैज्ञानिक उन्नति देखने से विषय स्पष्ट हो जाता है। कि सिर्फ भौतिकवाद का अवलम्बन लेकर जिन २ विषयों का आविष्कार किया जा रहा है वे हम आप को आश्चर्यान्वित बना रहे हैं।

हमारे द्वारा किये गये बड़े २ आयोजन हमारे पुरुषार्थ के ही फल हैं। अन्यथा भक्तिमार्ग का अनुसरण करने पर तो माला लेकर किसी एकान्त स्थान में ही विश्राम करते रहते।

संसार की प्रत्येक वस्तुयें हमें शिक्षाप्रद है। जीवन चरित्र से भी शिक्षा ग्रहण करना चाहिये तथा देखना चाहिये कि हमारा धार्मिक तथा सामाजिक जीवन किस ढांचे में ढल रहा है।

धार्मिकता के लिये धर्म के ज्ञान कराने वाले शास्त्रों के सूक्ष्म रहस्यों को समझने की आवश्यकता है। किन्तु सर्व साधारण जिन कृत्यों द्वारा अपने को धर्मात्मा समझता है, ऐसे जप तप और दान का ही विचार कीजिये।

प्राचीन कालमें जब इन्द्रिय वासनाको वशकर मन का निग्रह करनेको जप समझा जाता था। आजकल मन को बाजार में भटकाते हुये, कर में माला फिरा कर, तथा जिह्वा को मुख में हिलाने मात्र से ही जप समझा जाने लगा है।

पहिले शरीरको कृश और आत्मबल बढ़ाने के हेतु तप किया जाता था। आज मारण उच्चाटन वशीकरण मंत्र तंत्र आदि की सिद्धिमें जो कष्ट उठाना पड़ता है उसे तप कहा जाने लगा है।

हमारे पूर्वज निरीहवृत्ति से गुप्तदान करना श्रेष्ठ समझते थे। किन्तु आज "उस वेश्या के समान जिस ने साधुओं को भोजन कराने से रत्न वृष्टि के लोभ में कपटी भांड को भोजन करा कर आकाश की ओर निहारते हुये यह भी कह दिया था कि कल के साधु को दान देने से रत्न वृष्टि हुई थी पर आज क्यों नहीं होती" हम आप ब्रह्मभोजन पूर्वक ओसर मोसर कराने में दो चार हजार रुपया बहा कर अपने दान का यशोगान सुनने के अभिप्राय से यत्र तत्र भटकते फिरते हैं। क्या यही हमारा सच्चा दान है?

अब सामाजिक जीवन पर दृष्टिपात कीजिये समाज नाम समूहका है। यहाँ मनुष्यका लक्ष्य है। मनुष्य, स्त्री तथा पुरुष के भेद दो प्रकार के होते है। इनके समुदायको मनुष्य समाज कहते हैं और इनकी शारीरिक आर्थिक विद्या सम्बन्धी मानसिक आदि गुणों की वृद्धि को उन्नति तथा ह्रासको अवनति कहते हैं।

अब इनकी भी प्राचीन तथा अर्वाचीन अवस्था से सदृशता कीजिये। प्राचीन कालमें क्षत्रीको सामने कर युद्ध के मैदानमें बाणोंका सामना किया जाताथा आज लुक छिपकर धावे किये जाते हैं। अथवा बिल्ली की तरह चूहेपर छलांग मारी जाती हैं और कुत्तेको देख

और कुम दबाकर भाग जाना पड़ता है। हमारे पूर्वज अहिंसाका लक्ष्य रखते हुये न्यायपूर्वक द्रव्योपार्जन करते थे। हम बिना विचारे यद्वा तद्वा लक्षाधिपति बननेका स्वप्न देखा करते हैं। कदाचित स्वप्न सत्य भी होजाय तो द्रव्यका उपयोग करना नहीं जानते। पहिले जब परोपकार आदि में द्रव्यका सदुपयोगका पुण्य संपादन किया जाता था तो आज गहने तथा रेशमी मखमली विलायती वस्त्रों में अपव्यय करके भोगोपभोग की सामग्री एकत्रित करनेकी चिन्ता द्वारा पापोपार्जन किया जाता है।

विद्या में दूरकी बात तो जाने दीजिये। राजा भोज के समय में जुलाहे भी नीति पूर्ण संस्कृतके श्लोक बनानेकी योग्यता रखते थे। आज उस जमानेके कवियों की कृतियोंको समझने की योग्यता प्राप्त करना तो दूर रहा। नित्य व्यावहारिक कार्योंमें भी जब अंग्रेजी में पत्र व्यवहार करनेका काम पड़ता है तो न केवल अपने किरानी से पत्र लिखाया जाता है किन्तु उसीके हस्ताक्षर कराकर अपनी दूकान के आगे "एफ-ओ-आर" जोड़ दिया जाता है मानसिक शक्ति मनसे सम्बन्ध रखती है। और मनका विषय हिताहितका विचार करना है। इसकी तुलना करना सहज है और इसकी "कु तथा सु" अवस्था का निर्णय करने के लिये शारीरिक आर्थिक तथा विद्या सम्बन्धी तुलनायें दृष्टान्त हैं।

सं० अभिमत—विद्वान वक्ता यदि कुछ जैनदर्शन का अवलोकन कर लेते तो ईश्वरभक्ति, उद्योग संसार, मोक्ष आदि विषयों में वास्तविक तथ्य एवं ग्राह्य सारांश उनको ज्ञात हो जाता। अस्तु। पाठकों को वक्ता के प्रारम्भिक दार्शनिक अंश को छोड़ लेख के अगले अंश पर ध्यान देना चाहिये।

विरोध परिहार

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

आक्षेप २५—शुद्धता में हर तरह समानता होना आवश्यक नहीं है। इस बात के समर्थन में मैंने तीन दृष्टान्त दिये थे जिनसे शुद्धता और समानता के अविनाभाव का खंडन होता था। पहिला दृष्टान्त सुवर्ण का था। सुवर्ण शुद्ध होने पर भी जुदे २ आकार में रहता है। दूसरा मुक्तात्माओं के आकारका था। वे शुद्ध होने पर भी जुदे २ आकार में रहते हैं तीसरा दृष्टान्त दर्पण का था। इनमें से प्रत्येक दृष्टान्त सर्वज्ञसाधक व्याप्ति को व्यभिचरित करने के लिये पर्याप्त हैं। बल्कि दूसरा दृष्टान्त पौद्गलिक न होने से पुद्गल की विषमता का प्रश्न भी यहां उपस्थित नहीं होता था परन्तु आक्षेपक ने इन दोनों दृष्टान्तों का उत्तर देने से साफ किनारा काट लिया।

परिहार २५—द० दरबारीलाल जी ने प्रस्तुत विषय के सम्बन्ध में जैसा ऊपर उन्होंने लिखा है तीन दृष्टान्त उपस्थित किये थे। यह तीनों ही दृष्टान्त

एक विषयसे सम्बन्धित एवं एक जैसीही योग्यताके थे अतः इनमें से एक पर ही विचार किया गया था और शेष दो को अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया था। अब दरबारीलाल की यदि ऐसी धारणा है कि आप के इन दोनों दृष्टान्तों से हमने किनाराकसी की है तो हम यह आवश्यक समझते हैं कि आपके दोनों दृष्टान्तों पर भी विचार कर लिया जाय। ये दोनों ही दृष्टान्त आप के ही शब्दों में निम्न प्रकार हैं।

" अगर किट्टकालिमा को अलग करके सुवर्ण के अनेक पिण्डों को सौटंचका सुवर्ण बनावें तो वे सभी शुद्ध सुवर्ण शुद्धता की दृष्टि से एक से होंगे परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उन सब का आकार एक सरीखा हो। एक दूसरा शास्त्रीय उदाहरण लीजिये। संसारी अवस्थामें आत्माका जो आकार है वह अशुद्ध आकार माना जाता है। इसी लिये उसे विभाव व्यञ्जन पर्याय कहते हैं। निश्चयनय की दृष्टि से सब आत्माओं का आकार एकसा है और वह त्रिलोक व्यापी माना जाता है। जब आत्मा कर्म रहित हो जाता है तब उस का शुद्ध आकार हो जाता है इसी लिये मुक्तात्माओं के आकार को स्वभाव व्यंजन पर्याय कहते हैं। मुक्तात्माओं का आकार यद्यपि शुद्ध है तो भी वह एक सरीखा नहीं होता। "

सुवर्ण का आकार अशुद्ध नहीं हुआ करता किन्तु उस की आभा अशुद्ध होती है। आभा और आकार में महान अन्तर है। अतः सम्पूर्ण शुद्ध सुवर्ण आभा की दृष्टि से समान होने पर भी भिन्न २ आकार के हो सकते हैं। इस से प्रगट है कि जहां तक शुद्ध सुवर्णों की आभा का सम्बन्ध है वहां तक वे एक से हैं। स्वयं पं० दरबारीलाल जी भी अपने वक्तव्य में इस बात को स्वीकार कर चुके हैं अतः यह दृष्टान्त तो शुद्धता के साथ एकता के अविनाभाव का ही समर्थक है।

जिस प्रकार दर्पण के आकार उनकी आभा से भिन्न हैं और वे आभा के एकसी होने पर भी भिन्न २ रूप में रह सकते हैं वैसे ही ज्ञान का ज्ञेय सम्बन्ध और उसकी शुद्धि नहीं। ज्ञान का स्वभाव ही जानना है तथा इस पर आवरण आने का तात्पर्य ही इसके इस स्वभाव का न प्रकट होना है, जितना २ ज्ञानपर आवरण रहता है उसका उतना २ ही स्वभाव अप्रगट रहता है। अतः ज्ञान की इन दोनों बातों में भेद स्वीकार करने की गुंजाइश नहीं। दर्पण के आकार और उसकी आभा के समान ही यदि ज्ञानकी शुद्धि और उसके विषय सम्बन्ध में अन्तर होता तब तो अशुद्धि के समय के समान ही उसका विषय सम्बन्ध उसके शुद्ध अवस्थामें भी होना चाहिये था। दर्पण की ज्यों २ शुद्धि बढ़ती है त्यों २ उसकी आभा में अन्तर होता है न कि उसके आकार में। उसका आकार तो वैसा ही रहता है। ज्ञान में शुद्धि के साथ उसका विषय सम्बन्ध भी बढ़ता है अतः इस को शुद्धि से भिन्न स्वीकार नहीं किया जा सकता। इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी के प्रस्तुत दृष्टान्त से ज्ञान के विषय सम्बन्धमें असमानता नहीं स्वीकार की जा सकती।

यही बात मुक्तात्माओं के आकार के सम्बन्ध में है। इसकी शुद्धि से भी इनके आकारों में भेद है। आत्मा अशुद्ध है या शुद्ध है इसका सम्बन्ध उसके आकार से नहीं अपितु उसके कुछ गुणोंकी वैभाविक और स्वाभाविक अवस्था से है। अतः आकार भेद

होने पर भी शुद्धि की दृष्टि से सभी मुक्तात्मायें समान हैं। संसारी अवस्था में आत्मा का आकार परनिमित्त रहता है, अतः उसका वैभाविक कह दिया गया है। इस ही परनिमित्त के दूर होजाने पर वैसे वही स्वाभाविक कहलाने लगता है। अतः आकारों के साथ स्वभाव और विभाव शब्दों का प्रयोग केवल आपेक्षिक ही है।

यदि आकारों के साथ ही स्वभाव और विभाव का वास्तविक सम्बन्ध होता तब तो इनको भी अपनी शुद्धावस्था में त्रिलोक व्यापी ही होना चाहिये था, किन्तु बात इसके प्रतिकूल है। अतः दरबारी लाल जी का यह दृष्टान्त भी शुद्धज्ञानों के विषय सम्बन्ध की एकता का बाधक नहीं है।

यह तो हुई आपके शेष दोनों दृष्टान्तों की चर्चा अब हम आपके प्रस्तुत कथन पर आते हैं। आपके तीसरे सुवर्ण के दृष्टान्त के सम्बन्ध में हमने अनेक आपत्तियां उपस्थित की थीं तथा आपने भी नम्बरवार ही उनकी समीक्षा की है अतः यहां हम भी आपकी समीक्षा की क्रमशः एक २ बातपर ही विचार करेंगे।

आपके इन तीनों दृष्टान्तोंके सम्बन्धमें पहिली आपत्ति हमने साध्य सिद्धि में दृष्टान्त की अनुपयोगिताकी उठाई थी। इसके सम्बन्धमें अब दरबारी लाल जी का कहना है कि व्यभिचार स्थल के रूप में दृष्टान्तों को उपस्थित किया जा सकता है। दृष्टान्त और व्यभिचारस्थल में अन्तर है अतः आप यदि इन तीनों बातों को व्यभिचारस्थल शब्द के साथ ही उपस्थित करते तब तो यह आपत्ति उपस्थित करने की आवश्यकता ही न पड़ती।

आपकी दूसरी तीसरी और चौथी समीक्षायें निम्नलिखित हैं—

विरोध २६—"(ख) अवयवों की न्यूनाधिकता न होने पर भी आकार में विषमता होती है जैसे सिद्धों के आत्मप्रदेशों में न्यूनाधिकता न होने पर भी आकार भेद होता है। दूसरी बात यह है कि यहां प्रतिबिम्बकी विषमताका विचार करना है ···· इस प्रकार शुद्धता वाले दर्पणों में प्रतिबिम्ब नाना तरह के रह सकते हैं।

(ग) ज्ञान में बाह्य पदार्थों की आवश्यकता है इस बात को मैं विस्तार से कह चुका हूं।

(घ) शक्ति की विषमता मैं भी नहीं कहता परन्तु शक्ति की विषमता न होने पर भी व्यक्ति की विषमता हो सकती है जैसे सिद्धों की आकृति में।

परिहार— २६

दरबारीलालजी के उपर्युक्त विवेचनसे प्रगट है कि सम्पूर्ण शुद्ध ज्ञानों की जहां तक शक्तिका सम्बन्ध है वहां तक तो आप भी इन में एकता मानते हैं विवाद केवल व्यक्ति के सम्बन्ध में है। इस के सम्बन्ध में इतना ही लिख देना पर्याप्त होगा कि दर्पणोंमें भिन्न २ प्रतिबिम्ब पड़ सकते हैं किन्तु ज्ञानों में नहीं। दर्पणों को इस कार्य के लिये बाह्य पदार्थों की सहायता की आवश्यकता होती है, न कि ज्ञानोंको। बाह्य पदार्थों की अपेक्षा होने से जैसी २ सहायता मिलती जावेगी वैसे ही दर्पणों में प्रतिबिम्ब पड़ते जायेंगे। एक किताब दर्पण के सामने आजायगी तो उसमें किताबका प्रतिबिम्ब पड जायगा। इसही प्रकार अन्य पदार्थों के शुद्धज्ञानको ज्ञेयोंको जानने के लिये इन सबकी सहायता की आवश्यकता नहीं है उसका तो स्वभाव ही ऐसा है जिससे वह इन पदार्थों को प्रकाशित कर देता है। शुद्ध ज्ञानकी

तो बात ही निराली है। आधुनिक मनोविज्ञानी तो इन्द्रिय जन्य ज्ञान से भी इन्द्रियादिक को केवल ज्ञानेन्द्रिय की जागृति तक ही कारण मानते हैं न कि विषय सम्बन्ध से। जहांतक विषय के जाननेकी बात है वहां तक तो ये भी स्वतंत्र हैं। संसारी जीवोंका ज्ञान इन्द्रिय जन्य है या सेन्द्रिय है। इसका तात्पर्य केवल इतना ही है कि इन्द्रियां उसको जागृत करती हैं फिर यह स्वयं विषयोन्मुख होकर पदार्थों को जानता है। जो आवरण रहित है। जिनकी आत्मामें ज्ञानके आवरण दूर होचुके हैं, उनको अपनी ज्ञान चेतना को जागृत करने के लिये बाह्य अवलम्बनकी कोई आवश्यकता नहीं। उनकी ज्ञान शक्ति तो स्वयं जागृत रहती है। ज्ञान शक्तिके जागृत रहने पर तो विषयों को जानने की बात स्वय स्पष्ट होजाती है। अतः प्रगट है कि शुद्धज्ञानों में इन्द्रिय सहायता की जरूरत नहीं है। उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि शुद्ध दर्पणों के एक सी शक्ति के धारक होने पर भी उनको अपने स्वभावकी व्यक्ति के लिये बाह्य साधनों की आवश्यकता है। अतः उनमें असमानता होसकती है न कि ज्ञानों में। क्योंकि उनको अपने कार्यों में बाह्य साधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती। यही बात मुक्तात्माओं के आकारों के सम्बन्ध में है। मुक्तात्मा हो या संसारी, वे सब ही निश्चयनयकी दृष्टि से असख्यात प्रदेशी हैं तथा जहां तक उनके आकारका सम्बन्ध है वे सबही पराश्रित हैं। जैसा २ उनको निमित्त मिलता है वैसे २ ही उनके आकार होजाते हैं। अतः पर निमित्तिक होने से शुद्धात्माओं के आकारों में भी अन्तर है किन्तु ज्ञानोंमें इस बातका अभाव है अतः इसके आकार से भी ज्ञानों में यह बात घटित नहीं की जा सकती।

मुक्तात्माओं में आकार भेद होने पर उनमें शुद्धता और एकता मौजूद है। इसका वर्णन हम पूर्व ही कर चुके हैं। अतः दरबारीलालजीका मुक्तात्माओं वाला व्यभिचारस्थल भी कार्यकारी नहीं है।

इन सब बातों के अतिरिक्त दर्पण और मुक्तात्माओं में ज्ञान जैसा स्वभाव भी नहीं है। दर्पण में प्रतिबिम्ब होने का स्वभाव है किन्तु ज्ञान में प्रकाशित करने का स्वभाव है। प्रतिबिम्ब होने के लिये परापेक्षा एक अनिवार्य जैसी बात है जब कि प्रकाशित करने में पूर्ण स्वतन्त्रता है। यही बात मुक्तात्माओं के आकारोंके सम्बन्ध में है। अतः इस दृष्टिसे भी ये दरबारीलालजी के प्रतिकूल ही प्रमाणित करते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि ज्ञानों में व्यक्ति भी शक्ति के ही अनुसार समान ही माननी पड़ेगी। अब यदि सम्पूर्ण ज्ञानों में अनन्त पदार्थों के जाननेका स्वभाव माना जायगा तब तो यह समानता घटित हो सकेगी अन्यथा नहीं। अतः कहना पड़ता है कि दरबारीलाल जी का वक्तव्य जिसको उन्होंने अपनी लेखमाला में पूर्वपक्ष के रूप में लिखा है युक्तिपूर्ण है। पाठक उसको यहां भी पढ़ सकें अत यहां हम उसको ज्यों का त्यों उद्धृत किये देते हैं।

"पूर्ण ज्ञान की सीमा आप अनन्त रक्खो या असंख्य परन्तु यह तो आप मानोगे ही कि पूर्ण ज्ञान तो शुद्ध ज्ञान ही हो सकता है और शुद्धता दो तरह की हो नहीं सकती इस लिये सब का पूर्ण ज्ञान एक तरह का होगा। सब को जानने से तो समता बन सकती है परन्तु असंख्य को जानने से यह समता

नहीं बन सकती, क्योंकि अनन्त पदार्थों में से कौन से असंख्य पदार्थ शुद्ध ज्ञान के विषय बनाये जांयगे। जो असंख्य पदार्थ शुद्ध ज्ञान के विषय होंगे उनके सिवाय जो जगत में अनन्त पदार्थ बाकी रहेंगे उन्हें कौन जानेगा ? अथवा कि वे सदा अज्ञात ही रहेंगे यदि उन्हें कोई जानेगा तो वह पूर्ण ज्ञानी से भी बड़ा ज्ञानी कहलायेगा"।

पाठक समझ गये होंगे कि समानता सम्पूर्ण पदार्थों के जानने के स्वभाव से ही ठीक घटित होती है अतः स्पष्ट है कि यह युक्ति भी ज्ञानमें सम्पूर्ण पदार्थों के जानने का ही स्वभाव प्रमाणित करती है।

हृदयोद्‌गार

("आनन्द" न्यायतीर्थ जयपुर)

१

विपदाओं से सदा क्रान्त हो,
लगता जीवन भार प्रभो !
कभी रहसि में रोलेता हूं,
मन भावन को मार विभो॥

२

लाखों भाव बिगड़ बनते हैं,
क्षण क्षण मेरे मानसमें।
भूल रहा है जीवन मेरा,
असफलता के झूले में॥

३

मन मंदिर में दिव्य मूर्ति बन,
जब चिन्ताएं आजातीं।
आशा ले अपना सा मुखड़ा,
मुझ को मूक बना जाती॥

४

विषम समस्याएं जीवन की,
कर देती हैं शीघ्र हताश।
दे उपहार मृत्यु का मुझ को,
दिखा रही भौतिक संत्रास॥

५

नाथ? उबारो द्रुततर मुझको,
देख रहा सुख का सपना।
अन्तस्तल में शांति प्राप्त कर,
अखिल विश्व समझें अपना॥

सुख कहां है ?

(ले०—श्रीमान लादूलाल जी पहाड्या)

दुनियां में प्रायः देखा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है। उसकी कभी भी इच्छा नहीं रहती कि उसे दुःखों का सामना करना पड़े। पर ठीक इसके विपरीत ही देखने और सुनने में आता है। कारण इसका यह है कि वे चाहते तो अवश्य हैं पर उसकी प्राप्ति के लिये उद्योग नहीं करते। वे सुख के लिये एक वस्तु से दूसरी पर और दूसरी से तीसरी पर दौड़ते हैं पर परम सुख की प्राप्ति नहीं होती। कारण यह है कि सुख सांसारिक वस्तुओं से उपलब्ध नहीं— इस को अपनी आत्मा के अन्दर न ढूंढकर पर वस्तुओं में ढूँढते रहना अपनी गोद में बच्चा रख कर शहर में उसकी खोज का ढिंढोरा पिटवाने के बराबर है।

जब मनुष्य शिशु अवस्था में रहता है तब वह मा की गोद को ही सुख का एक मात्र स्थान समझता है। पर थोड़ा बढ़ जाने पर वह खिलौने में ही सुख का अनुभव करने लगता है। थोड़ा और बड़ा हो जाने पर पढ़ने लिखने में और फिर धनोपार्जन में सुख मानता है। किशोरावस्था में स्त्री सुख ही उसके लिये सुख का स्थान विदित होता है। पर इसके बाद की ढलती अवस्था अर्थात् जरा अवस्था में वह स्वप्नवत भासने लगता है। तब समझ में आने लगता है कि संसार के क्षणभंगुर नाशवान पदार्थों में सुख खोजना कितनी बड़ी भूल है। परन्तु उस समय केवल पछताना छोड़ कर और कुछ नहीं करते बनता।

अब प्रश्न उठता है कि सुख है कहां ? कोई कहता है कि राजाओं के महलों में है, कोई पहाड़ की गुफाओं में और कोई जंगलों में बताता है। लेकिन वास्तव में विचारने से पता चलता है कि सुख का निवास अपने अन्दर है। और अपने ही भीतर ढूंढने से मिल सकता है। जब तक हम उसे बाहर ढूँढते हैं तब तक उसे प्राप्त करने की इच्छा करना शश श्रृंगवत है। जब तक मन अपने वश में नहीं किया जाता तब तक सुख हम से हजारों कोस दूर है। यदि हम चाहते हैं कि हम इन अलौकिक गुणों का रसास्वादन करें तो इसके लिये अविरल परिश्रम की आवश्यकता है। ये हमारे अन्दर मौजूद हैं। आवश्यकता है गोता लगा कर ढूंढ निकालने की। दूध में नवनीत है लेकिन उसको प्रगट करने के लिये मथनीसे मथना पड़ेगा। बिना मथे मक्खन नहीं निकल सकता। अपने पास की वस्तु को अपने ही पास न ढूंढ कर अन्यत्र उसकी खोज करते रहना अपने अमूल्य समय को नष्ट करना है। प्रायः देखा जाता है कि बहुत निकट की वस्तु दिखाई नहीं पड़ती। और उसकी प्राप्ति के लिये बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़ते हैं। कस्तूरी मृग की नाभि में रहती है। लेकिन वह उसकी सुगंध कहीं पास में अनुभव करता है। और इधर उधर दौड़ धूपमें मृग तृष्णा के फेर में पड़ अपना प्राण गवां देता है। पर कस्तूरी जिससे सुगंध आती है उसे वह अपने ही पास नहीं समझता। बस ठीक इसी प्रकार हम सुख को

अपने ही भीतर नहीं ढूँढ इधर उधर खोजते फिरते हैं। और अन्त में प्राप्त न कर अपने भाग्य पर दोषारोपण करते हैं।

मनुष्य जितना स्वार्थपरता छोड़ेगा, उतना ही सुख का अनुभव होगा। जो मनुष्य अपने मन और इन्द्रियों को वश में कर लेता है। उसे ही सुख प्राप्त होता है। अपने क्षणिक सुख की आहुति देदो फिर तुम्हें नित्य और स्थायी सुख प्राप्त होगा। सद्विचार, सच्चरित्र, निःस्वार्थप्रेम, और मधुर वचन, इन गुणों को विकसित करने से अपरिमित सुख प्राप्त होता है। अपने मनोबल को बढ़ाओ। अपने हृदय को दूसरोंके प्रति प्रेम और सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिये उदार बनाओ। इससे तुम्हें असीम आनंद होगा और सुख की प्राप्ति होगी।

❋ ❋ ❋

विपरीत मार्ग

(ले०—श्रीमान प० भंवरलाल जी न्यायतीर्थ)

संसार में सभी देहधारी यह चाहते हैं कि हम सुखी बनें, हमारा जीवन सुखमय व्यतीत हो और हमें लेशमात्र भी दुःखोंका सामना न करना पडे उनका लक्ष्य यही होता है और उनके जितने भी कार्य होते हैं वे भी सब इसी लिये। पढ़ना, लिखना व्यवसाय आदि सभी कामोंका अन्तिम फल सुख हो यही उनकी प्रबल और निरन्तर इच्छा रहती है। किसी भी विषयको लेकर कोई भी प्रश्न क्यों न पूछाजाय उसका अन्तिम उत्तर केवल 'सुख' ही होगा नीतिकारोंने भी बताया है कि संसारमें प्रत्येक कार्य सुख के लिये ही होता है। एक विद्याको ही लीजिए और प्रश्न कीजिये कि विद्या क्यों पढ़ी जाती है? तो उत्तर मिलेगा कि विद्वान बनने के लिये। किन्तु जब हम उत्तरोत्तर प्रश्न करते जांयगे तो अन्तिम उत्तर केवल 'सुख' ये दो अक्षर ही होंगे। कहनेका मतलब यह है कि इस अखिल सृष्टि में जितने भी प्राणधारी हैं उन सबका अन्तिम लक्ष्य सुख प्राप्त करना ही है।

किन्तु बडे आश्चर्य की बात है कि हमारे जीवन का सच्चा लक्ष्य सुख होते हुये भी आज हम दुःख ही भोग रहे हैं। सुखका कहीं स्वप्न भी नहीं दीखता जिधर देखो उधर दुख ही दुख। जिससे पूछो वह यही कहेगा कि मैं दुःखी हूं। किसीको धनका दुःख है तो किसीके रोगका। किसी के बान्धवों का दुख है तो किसीके मित्रों का। गरज यह है कि किसीको सम्पूर्ण सुख नहीं है, प्रायः सभी सांसारिक प्राणी दुःखोंके द्वारा जकड़े हुवे हैं। अतः यह विचारणीय बात आजाती है कि जब सम्पूर्ण संसार में दुःख ही दुख भरा पड़ा है तो फिर 'सुख' आया कहां से। और इसका अनुभव कैसे हुआ। किन्तु बुद्धि पर थोड़ा सा जोर देने से यह विदित होजाता है कि सुख प्राप्त करना हमारा असली स्वभाव है और इसके भाव हमारे आत्मामें सदा

विद्यमान रहते हैं। अनादिकालसे यह आत्मा अपने कर्तव्यों का पालन न करने से ही दुःखोंका अनुभव कर रहा है। अन्यथा आत्माका असली स्वभाव सुख ही है।

अब थोड़ासा इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि हमारे कर्तव्य क्या हैं? हम उनमें किस तरह विपरीत चल रहे हैं इत्यादि। अन्य समाजकी बात जाने दीजिये। हमारी समाज में ही देखिये कि हम लोग अपने कर्तव्य पथमे च्युत होरहे हैं और व्यर्थ के काम करने में आगे बढ़ते हैं। प्रारम्भसे ही जबकि पठन पाठन का काल होता है तो माता पिता विशेष ध्यान नहीं देते। और अपनी सन्तानोंका अनुपयुक्त लाड़-प्यार करते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि वह लड़का बड़ा होने पर कर्तव्य परायण एवं आज्ञा पालक नहीं होता किन्तु स्वेच्छाचारी बन जाता है। द्वितीय उसी अवस्था में जबकि विद्यार्थी जीवन रहता है किन्तु वह कुछ भी शिक्षा प्राप्त नहीं करता तब हमारे माता पिता उसे विवाह आदि संस्कारों द्वारा इस तरह जकड़ देते हैं जिससे वह दिन प्रतिदिन नैतिक एवं शारीरिक पतन की ओर झुकता जाता है। लक्ष्य है "हमारा किसी न किसी प्रकार सुख प्राप्त करना" और उसके लिये सामग्रियां जुटाते हैं ऐसी! यह कैसे होसकता है कि लक्ष्य से विपरीत तो कार्य करें और चाहें नियत वस्तु तक पहुंच जावें? तो खैर, आगे चलिये और देखिये कि हमने येन केन प्रकारेण शिक्षा भी प्राप्त की और पढ़े लिखे होनेका दावा भी किया किन्तु फिर भी उसको उपयोग में किस तरह लाया जाय? यह नहीं जाना। कालेज या विद्यालय से पढ़ कर निकले और कहीं सिफारिश वगैरह पहुंचा कर क्लर्क आदि बन गये, बस, इसीमें हमारे वर्षों से किये गये प्रयास का इतिश्री होगई। कुछ काम करना, अपना एवं परका उपकार करना, समाज में फैले हुये मिथ्या ज्ञान एवं आडम्बर को दूर करना, कुरीतियों को जड़ से उखाड़ कर बाहर कर देना, पराधीनता की बेड़ियों को काट कर फेंक देना आदि कार्य तो दूर रहे वहां तो केवल अपने हाल में मस्त रहना, खूब ठाठ बाठ मजा लेना, औरोंकी तकलीफका कुछ विचार न करना आदि बातें ही अवशिष्ट रह जाती हैं। अहा! जिन नवयुवकों पर सारे समाज की आशा है, जिनसे भविष्य में कुछ होनेकी आशा है—जो इस समाज के स्तम्भ रूप हैं, वे ही इस प्रकार मौज उड़ाते रहें तो कैसे कोई सुखी बन सकता है? सच्चा सुख प्राप्त करने के लिये तो इन बाहरी आडम्बरों को दूर फेंक देने की आवश्यकता है। और आवश्यकता है—सादापन धारण करने की, विलासिता से कोसों दूर रहने की धन का सदुपयोग करने की और अहिंसा के सिद्धान्त को अटल रखने की।

आज हम देखते हैं कि हम अहिंसा के तो जबर्दस्त हिमायती बने फिरते हैं किन्तु रात दिन हिंसा करते हुये नहीं अघाते। जिन विचारों के कारण रात दिन खूब हिंसा होती है उन को हम शान से धारण करते हैं यह नहीं सोचते कि इन विलायती मिलों के द्वारा बने हुये कपड़ों में कितनी गाय, बकरी, बैल आदि की चर्बी लगती है। शायद यह सभी लोगों को मालूम होगा कि इस प्रकार के अशुद्ध कपड़ों में हमारे प्रतिवर्ष करीब १ अरब १५ करोड़ और ५२ लाख रुपये खर्च होते हैं। अब सोचने की बात है कि हम इस प्रकार तो दया

धर्म पालें और धन का उपयोग करें और फिर यह चाहें कि हम सुखी बनें यह हर्गिज नहीं हो सकता इस लिये हमारे सुख में बाधा डालने वाली इन बातों को रोकने की आवश्यकता है। अस्तु

यदि कुछ पढ़े लिखे नवयुवकों ने विशेष वातावरण मिल जाने से इधर सामाजिक जातीय और देशीय कार्यों में भाग लेना प्रारम्भ किया तो उन्हें काम को भली प्रकार प्रारम्भ करना, उसका निर्वाह करना और समाप्त करना नहीं आता। वे काम करते हैं किन्तु देश कालानुसार नहीं। उनमें जोशखून होता है किन्तु साथ में उतावलापन। उनकी वाणी में साहस होता है किन्तु कर्म में नहीं। बातें करते समय आकाश और पाताल को एक कर देना चाहते हैं किन्तु काम करते समय पीछे हटते हैं। दीगरों की रावगोही करते हैं किन्तु खुद के ऐबों की चश्म पोशी। दूसरों को फिजूल खर्ची से मना करते हैं किन्तु खुद खूब विलास प्रिय बन जाते हैं। विद्वान होने का दावा करते हैं किन्तु आध्यात्मिक एवं भौतिक ज्ञानोपार्जन करना नहीं जानते। कहां तक कहा जाय हम तो आलस्य के पुजारी विलासिता का नग्न तांडव कराने वाले, फिजूल खर्ची को बढ़ाने वाले, समय पर दूर भागने वाले, हतोत्साही, कायर, एवं डरपोक बन गये हैं और फिर यह चाहते हैं कि सुखी बनें। सोचने की बात है कि कार्य तो करें दुख के और प्राप्त करना चाहें सुख। कहने का तात्पर्य यह है कि हम को सुख प्राप्त करनेका ही सामान जुटाना चाहिये दुख का नहीं। ऐसी शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये जिससे इहलौकिक और पारलौकिक दोनों सुख प्राप्त हों। आज हम लोगों की यह दूषित शिक्षा का ही प्रतिफल है कि हम अपने आत्मा के असली स्वभाव को भूल से गये हैं, और अपने आपको जान बूझ कर दूसरों के हाथोंमें अर्पण कर दिया है। देश, जाति एवं धर्म की तरफ ध्यान दिलाने वाली शिक्षा तो हमसे कोसों दूर रहती है और हम को दुखी बनाने वाली ही शिक्षा मिलती है। इसके लिए हमारे धनिक वर्ग को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि वह इस प्रकार के शिक्षालयों को प्रारम्भ कर अथवा सहायता देकर चलावें जिस से छात्र तयार हो कर अपना एवं पर का कल्याण करें और उस सच्चे सुख को प्राप्त हों। आज फिजूल खर्च को हटा कर शिक्षा मन्दिरों में द्रव्य लगाने की आवश्यकता है। इस बात की आवश्यकता अब नहीं है कि किसी के मर जाने पर हजारों रुपया उसके मौसर में लुटा दें अथवा किसी के विवाह वगैरह में अन्धाधुन्धी से खर्च कर डालें। इस अन्धाधुन्धी ने ही तो हमारा इतना सर्वनाश कर डाला और इसी की वजह से तो आज हमको आपत्तियों का सामना करना पड़ता है किन्तु फिर भी हमारे विचारशील मनुष्य नहीं जगते और उसी तरह लकीर के फकीर बने हुये हैं। मेरे खयाल में ऐसी रूढ़ियों को जिन से हमको बहुत दुःख एवं हानि पहुँच रही है धराशायी कर देने में कोई पाप एवं नुकसान नहीं है।

अन्त में मैं पाठक महोदयों से यही प्रार्थना करता हूं कि यदि सच्चा सुखी बनना है तो जो दुष्प्रथायें हमारे समाज में चल रही हैं उनका सत्यानाश कर देना चाहिये। इसी में हमारा कल्याण है।

मेरा मौन भंग

मैं दि० जैन समाज का सर्वतः प्रथम उपाधि प्राप्त शास्त्री हूं और ४० वर्ष से सामाजिक कार्यों में योग देता चला आ रहा हूं। जैनगजट और जैन रत्नमाला की सम्पादकी छोड़ने के पश्चात गत २३ वर्षसे धार्मिक व सामाजिक परिस्थितिको ध्यानपूर्वक देखता व जानता हुआ भी मैं कई विशेष कारणों से "विधवा विवाह जैन शास्त्रोक्त नहीं, जैन जगत पर एक नजर" इत्यादि दो चार लेखों के सिवाय पत्रादि में कुछ नहीं लिख सका। मेरे इस मौनावलम्बन को देख कर समाज हितैषी अनेक परिचित सज्जन बहुत दिनों से प्रेरणा कर रहे हैं कि इस समय आप निःसंकोच भाव से अपने विचार प्रकट करियें जिससे कि समाज का उपकार हो अतः मैंने फिर से लेखिनी हाथ में ली है। जैन गजट, जैन बोधक, जैन सिद्धान्त, खंडेलवाल जैन हितेच्छु, चन्द्रप्रकाश आदि पत्र दलबन्दी के दलदल में फंसे हुये अपने २ पक्ष के प्रतिकूल विचारों को स्थान नहीं देंगे यही सोचकर जैनदर्शन द्वारा ही अपने विचारों का दिग्दर्शन कराना उचित समझा है अतः पाठकों से निवेदन है कि वे जैनदर्शन में अनुभवी के नाम से जो कुछ छपे उसका लेखक मुझे ही समझें। लेखों को ध्यान पूर्वक पढ़ें। यदि किसी लेख के विषय में कुछ स्पष्टीकरण करना हो तो उसके लिये समाचार पत्रों के कालम काले न करके पत्र द्वारा मुझ से ही पूछ लें। यदि मेरी भूल होगी तो मैं स्वयं ही उसे सुधार लूँगा।

समाज हितैषी —
जवाहरलाल शास्त्री,
जयपुर।

विचार भेद

पहले दि० समाज में बीस पन्थ और तेरह पन्थ ये दो ही भेद थे। फिर महासभा स्थापित होनेके पश्चात शास्त्र छपाने और न छपाने के विषय में दो पक्ष हुये और सन १९०९ तक यही वाद विवाद चलता रहा। सन १९१० में खतौली के जलसेके पक्षमें स्व० पं० गोपालदास जी के इजहार होने पर स्वर्गीय रायबहादुर सेठ मेवाराम जी, श्रीमन्त सेठ मोहनलाल जी, ला० जम्बू प्रसाद जी आदि के नेतृत्वमें सेठ पार्टी और पं० गोपालदास जी के नेतृत्व में पंडित पार्टीका जन्म हुआ। अप्रैल सन १२ में इतना विरोध बढ़ा कि महासभाकी प्रबन्धकारिणी एक ही समय में दो भिन्न २ स्थानों में एक दूसरे के विरुद्ध हुई, अपने साथी बाबू लोगों के विचार धर्म विरुद्ध मानकर पण्डित गोपालदास जी उस समय की पंडित पार्टी से विमनस्क हुए और सन १५ में श्री सेठ हुकमचन्द जी के सभापतित्वमें जो बम्बई प्रान्तिक सभा का पालीताणा में अधिवेशन हुआ उसमें पं० गोपालदास जी, धन्नालाल जी आदि ने विलायत से आई० सी० एस० बनकर आते हुये एक व्यक्तिको मानपत्र देनेका प्रस्ताव रखनेवाले शीतल प्रसाद जी व मूलचन्दजी कापड़िया आदिका खुल्लमखुल्ला विरोध किया। पं० गोपालदासजी का रुख बदलने पर सेठ पार्टी ने भी अपना आन्दोलन बन्द कर दिया। पंडित पार्टीके जिन मुखियाओं ने महासभा के साथ सहयोग छोड़ दिया था, वे भी धीरे २ महासभा में शामिल होगये। महासभाके गेड़वाल वाले अधिवेशन में महासभाके विषयमें

खैंचतान मची और मुकदमे बाजी हुई। शिखरजी के अधिवेशनमें श्रीमान से० हुकमचन्द जी साहबने विरोध मिटानेके लिये बहुत कुछ प्रयत्न किया पर सफलता नहीं हुई। समाजमें प्रकटरूप से पंडित पार्टी और बाबू पार्टीका जन्म होगया। बात बढ़ते बढ़ते इतनी बढ़ गई कि आज समाज में विधवा विवाह, विजातीय विवाह, वर्ण व्यवस्था, लोहड़साजन बहिष्कार, दस्सा पूजाधिकार, गोमय पवित्रता, शूद्रजलत्याग, यज्ञोपवीतधारण आदि के खंडन मंडनमें कई दल बने हुए हैं। गृहस्थोंको तो जाने दीजिये मुनि भी इस चङ्गुल में फंस कर परस्पर विरोधी बन गये है।

सामाजिक पत्रों के कलेवर एक दूसरे की निन्दा में काले हो रहे हैं। अधिकांश जैन समाज पंचम काल की इस लीला को देख कर मध्यस्थ बना हुआ मन ही मन कुढ़ रहा है इस पोल में धर्मात्माओं की ढीलढाल समझ भलमनसी का साजसज जैन जगत ने तो अपनी आवाज से गाज गाज कर ऐसा गोल माल मचाया है कि समाज के बाज २ व्यक्ति अनमोल जैनधर्म में ढोल की पोल समझ आत्मा का अकाज करने के लिये धर्म से भाज मुखमोड़ लाज-छोड़ नवीन सत्य समाज का ताज सिर पर रखने में भी बाज नहीं आ रहे हैं। कुल बल में भरे हुये दलबन्दी के इस दल में फंस धर्म रथ ने तो अपनी हलचल बन्द कर धर्म धुरंधर और सारथियों के कोमल दिल कमलमें ऐसी उथलपुथल और खलबली मचा रक्खी है कि वे अत्यधिक दुर्बल हो रहे हैं। लाचार हो अपने मानसिक दुःख को प्रकट करने के के लिये वे कुछ विचार करना चाहें तो इस गलबल और कलह की कलकल में कोई सुनने वाला भी नहीं है।

जिस जैनधर्म ने संसार के सब धर्मों पर अपनी विजय का डंका बजाया था उसके मनु ही आज आस्तीन के सांप बन उसकी खाँप खो रहे हैं यह और भी विचारणीय है। छिन्न भिन्न समाज में खेद खिन्न धर्मात्माओं को शान्ति सुधा का पान करानेके लिये भविष्यमें कोई अपने ज्ञानघनसे सुमति जल की वर्षा करेगा या नहीं। इस समय यही पूछना है क्या इसका उत्तर मिलेगा ?

लेखक—
अनुभवी

जैनदर्शन की आर्थिक समस्या

भारतवर्ष में समाचार पत्रोंको पहले पहल आर्थिक संकटसे अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है। कुछ वर्षोंके बाद जब वे लोकप्रिय और प्रसिद्ध हो जाते हैं तब जनता उनको अपनाकर उनके पर्याप्त ग्राहक बना देती है उस समय वे पत्र आर्थिक घाटेसे छूट जाते है। अभी थोड़े दिनोंकी बात है कि श्रीमान रामानन्द जी चटर्जी ने राष्ट्रीय भाषाके प्रेम वश 'विशाल भारत' प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। प्रारम्भ में ६—७ वर्ष तक विशाल भारत को आपने पर्याप्त घाटे के साथ चलाया लगभग ३०-३२ हजार रुपये का घाटा आपने किया किन्तु बंगाली होते हुये भी आपने हिन्दी भाषा का प्रेम कम न होने दिया। अन्त में विशालभारत के अब इतने ग्राहक हो गये हैं जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा हो गया है।

जैन पत्रों की भी यही दशा है इतना ही नहीं बल्कि इससे भी अधिक शोचनीय दशा है। एक तो जैन पत्रों के ग्राहक जैन भाई ही होते हैं। जैनों की संख्या कुल बाल वृद्ध युवक स्त्री पुरुष मिला कर केवल १२ लाख है उसमें फिर दिगम्बर श्वेताम्बर स्थानकवासी तीन भेद हैं उनके भी अगणित अवान्तर भेद और हैं। जैन पत्र का जन्म इन ही किसी अवान्तर भेद की गोद में हुआ करता है अतः दूसरे सम्प्रदाय या दल उस पत्र के प्रायः ग्राहक नहीं बना करते जिससे कि उस पत्र का लालन पालन, रक्षण उस छोटे से जन समुदाय के ऊपर ही निर्भर होता है फल यह होता है कि पर्याप्त खर्च होने पर ग्राहक संख्या की कमी से जैन पत्र असह्य घाटे के भार को पीठ पर लादे हुये जीवन यात्रा करते हैं जिससे कि अधिकांश पत्र स्वल्प आयु भोग कर फिर सदा के लिये सो जाते है।

जैनसमाज में कई पत्र उच्च कोटि के प्रकाशित हुये किन्तु कुछ दिन पीछे बंद हो गये उसका कारण ऊपर लिखे अनुसार ही है। आधुनिक जैनसमाज प्रायः पैसे का पुत्र है अखबारोंमें थोड़ा पैसा भी खर्च करना उसको उपयोगी नहीं जंचता। यही कारण है कि कुछ एक अखबारों के सिवाय प्रायः सभी जैन अखबार ग्राहकों की कमी से घाटे में चल रहे हैं। जैन पत्रों के ग्राहकों की कमी का कारण उनका अयोग्य संपादन भी है किन्तु अधिकांश कारण पैसे की पूजा ही है।

दि० जैनसमाज में एक ऐसे पत्र का अभाव था जो दलबन्दी की दलदल में न फंस कर दि० जैनधर्म पर आये हुये आक्षेपों का निराकरण करता रहे। इस कमी का अनुभव करते हुये भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ ने पाक्षिक रूप में 'जैनदर्शन' पत्र को जन्म दिया। जैनदर्शनको अभी ढाई वर्ष भी नहीं हुआ इस थोड़े समय में उसने समाज की जो सेवा की है वह कुछ छिपी नहीं है। दि० जैन सिद्धान्तों पर जो भी जैन अजैन लोगों की ओर से आक्रमण हुए

उसका उचित सन्तोषजनक समाधान जैनदर्शन ने किया है और कर रहा है तथा करेगा। इसके सिवाय जैनदर्शन के प्रकाशन में कागज, छपाई आदि का अनुचित लोभ नहीं किया गया है तथा जैनदर्शन ने किसी दलबन्दी की आड़ में कोई अग्नि भी नहीं भड़काई और न अयोग्य संपादन द्वारा भाषा, भाव की मिट्टी पलीद की है। जैनदर्शन का स्टैन्डर इस समय प्रायः अन्य सभी जैन पत्रों से ऊंचा है। फिर भी ग्राहकों की कमी से उसे घाटे का भार उठाना पड़ रहा है।

इसके कई कारण हैं एक तो यह कि उसको थोड़ा समय हुआ है दूसरे उसके प्रचारक बहुत कम हैं तीसरे कुछ मनचले मित्रों की आंखों में वह खटकता है और वे अपनी हरकतों से उसे पनपते नहीं देना चाहते। लिखते जरा दुख होता है कि कुछ महानुभाव पंडित दल के और कुछ ऐसे महाशय जिन्होंने अपना नाम बाबूदल के रजिष्टर पर लिखाया हुआ है जैनदर्शन की ग्राहक संख्या वृद्धि में रुकावट डालते है। यह बात हमको जहां जैनदर्शन प्रेमियों से ज्ञात हुई है वहीं २—३ नवीन ग्राहकों के पत्र भी हम को प्राप्त हुये है कि अमुक प्रसिद्ध व्यक्ति ने हमको जैन दर्शन का ग्राहक न बनने की प्रेरणा की। इत्यादि।

शास्त्रार्थ संघ के पास इस विभाग के लिये तथा अपने लिये कोई खास फंड नहीं है जिससे कि इस की घाटा पूर्ति की जा सके। संपादन प्रकाशन में कोई खास पैसा खर्च नहीं जिसको हटाया जा सके छपाई कागज, पोस्टेज के सिवाय प्रायः सारे कार्य मुफ्त किये जाते हैं। इस दशा में जैनदर्शन का दीर्घ जीवन बनाने के लिये हमारे प्रेमी पाठकों को कुछ प्रयत्न करना पड़ेगा वे घाटे पूर्ति के लिये कुछ आर्थिक सहायता दें यह उनकी विशेष कृपा होगी किन्तु उनके योग्य प्रधान कार्य यह है जिसके करने में उन्हें विशेष कष्ट न होगा कि वे अपने समान अन्य सज्जन जैनदर्शन के पढने वाले तयार करें जैनदर्शन की उपयोगिता समझा कर अन्य भाइयोंको जैनदर्शन का ग्राहक बनने की प्रेरणा करें। जैनदर्शन के पर्याप्त ग्राहक बन जाने पर घाटे का प्रश्न अपने आप हल हो जायगा उस दशा में जैनदर्शन धार्मिक प्रचार और समाजसेवा और अधिक रूप में करेगा। इस तरह जैनदर्शन की सहायता करना जैनधर्म और जैन समाज की सेवा करना है।

क्या हमारे प्रेमी महानुभाव इस आवश्यक निवेदन पर ध्यान देंगे?

—अजितकुमार

हीरक जयन्ती—रावराजा, राज्यमान्य, राय-बहादुर दानवीर, तीर्थभक्त शिरोमणि, सर सेठ हुकमचन्द जी इन्दोर की हीरकजयन्ती उत्सव बड़े समारोह के साथ एक सप्ताह तक इन्दौर में होगा। इस अवसर पर सेठ जी को कोई ऐसा कार्य कर देना चाहिये जो कि आपकी इस जयन्तीका अमर स्मारक एवं परम उपयोगी हो। हमारे खयाल में तीन कार्य आवश्यक हैं

१—जैनपुरातत्वान्वेषण—जैन धर्म का प्राचीन गौरव स्थान स्थान पर पृथ्वी के भीतर दबा पड़ा है, अनेक प्राचीन किलों, मंदिरों, और प्रतिमाओं के लेख संग्रह करने योग्य और प्रकाश में लाने योग्य हैं। चन्द्रगुप्त का जैनत्व, जैनधर्मकी प्राचीनता आदि महत्व पूर्ण कार्य इन्हीं पुराने शिला लेखोंसे सम्पन्न हुए हैं। इस महत्व पूर्ण कार्य संचालन के लिये सेठ जी को एक ऐसा फंड कायम करना चाहिये जिसके सूदमात्र से यह कार्य चलता रहे।

२—जीर्णोद्धारफंड—अनेक तीर्थ स्थानों पर जीर्ण शीर्ण मंदिरोंके उद्धारकी बहुत भारी आवश्यकता है। इस कार्य के लिये एक ऐसा फंड स्थापित होना चाहिये जिस के वार्षिक सूद से एक वर्ष एक स्थान का जीर्णोद्धार किया जावे दूसरे वर्ष दूसरे स्थान का।

३—प्रचारकफंड—जैन समाज तथा अन्य समाज में जैनधर्मका प्रचार करनेके लिये ऐसे संस्कृत,अंग्रेजी भाषाके वाग्मी विद्वान उपदेशकों की आवश्यकता है जो कि अच्छे प्रभावशाली व्याख्यानदाता, शास्त्रार्थ कर सकने वाले हों। ऐसे उपदेशक प्रत्येक प्रान्त, नगर ग्राममें सतत भ्रमण करते रहें। कम से कम ४-५ उपदेशकों के खर्च योग्य जितनी रकम से सूद प्राप्त हो उतनी रकमका ध्रौव्यफंड बनाया जाय।

यह तीनों कार्य जहां परम आवश्यक हैं वहीं वे अमरत्व के कारण भी हैं। आशा है सेठ साहिब तथा उनके सम्मतिदाता महानुभाव इसपर विचार करेंगे।

एक नया षड्यंत्र

दिगम्बर श्वेताम्बर समाज के तीर्थों सम्बन्धी पारस्परिक कलह ने जैनसमाज को पर्याप्त धक्का पहुंचाया है सभ्य संसार में जैनसमाज बदनाम हुआ यह तो एक अलग बात रही परन्तु इस कलह ने जो अतुल धनराशि पानी की तरह व्यर्थ बहा दी उसमें जैनसमाज को असीम हानि पहुंची है। इतना सब कुछ होने पर भी अभी तक जैनियों को होश नहीं आया यह और भी अधिक शोचनीय है।

अभी पता लगा है कि श्वेताम्बरसमाज के कुछ गणनीय महानुभाव जिनमें देहली, आगरा, अहमदाबाद के श्रीमान लोग तथा कुछ प्रख्यात श्वेताम्बरीय साधु भी सम्मिलित हैं एक प्राचीन दिगम्बरी जैन तीर्थ पर अधिकार करने का षड्यंत्र रच रहे हैं पूर्ण विवरण प्राप्त हो जाने पर हम इसको उचित अवसर पर पाठकों के समक्ष खुलासा रक्खेंगे। अभी हम यह दिगम्बर श्वेताम्बर समाज को सचेत करने के लिये लिख रहे हैं।

तीर्थक्षेत्रों पर अनुचित हस्तक्षेप तथा षड्यन्त्र रचने वाले कुछ प्रसिद्ध श्रीमान लोग जो दैवी सुफल प्राप्त कर चुके हैं वह दिगम्बर श्वेताम्बर समाज को अच्छी तरह मालूम है फिर भी हमारे भाइयों ने कुछ उपयोगी शिक्षा ग्रहण नहीं की यह एक दुख की बात है।

कहां तो जैनधर्मके अनुयायी आवश्यक सहायता न मिलने के कारण विधर्मी होते जा रहे हैं (जैसे कि अभी २—३ मास पहले ४—५ ओसवाल नवयुवक जोधपुर में जैनसमाज की सहानुभूति से निराश हो कर स्वेच्छा से मुसल्मान बन गये हैं।) और कहां हमारे ये शान्ति प्रिय धर्मात्मा नेता हैं जिन का खयाल सामाजिक पतनकी ओर रंचमात्र भी नहीं उन्होंने जैनधर्म का मर्म यही समझा है कि जैसे तैसे तीर्थों सरीखी शान्ति भूमि को अशान्तिका स्थान बनाया जावे।

दिगम्बर जैन समाज को सावधान रहना चाहिये अपने तीर्थक्षेत्रों की सम्हाल उसे सावधानी और तत्परता से करनी चाहिये। युक्तप्रान्त (यू० पी०) के दिगम्बर जैन भाइयोंको विशेष रूप से सावधान किया जाता है वे अपने तीर्थक्षेत्रों की कड़ी निगरानी रक्खें और किसी अपरिचित आदमी को न अपने यहां नौकर रक्खें तथा न किसी अपरिचित जैनी का विश्वास ही करें। ऐसे झगड़ों के लिये संभवतः

देश विदेश समाचार

—मालूम हुआ है कि नवाब लोहारू अब रियासत के प्रबन्ध में दखल न दे सकेंगे। अब सारा शासन शासन प्रबन्ध पंजाब गवर्नर जनरल की आज्ञा से हुआ करेगा। आप को केवल चार सौ रुपये के करीब वजीफा मिला करेगा।

—श्रीमान महात्मा गांधी हिन्दी प्रचार के लिये आसाम बंगाल और उत्कलका भ्रमण करेंगे।

—ब्रिटिश सरकार २५ करोड़ पौण्ड (लग भग पौने चार अरब रुपये) का नया कर्ज लेने वाली है।

—श्रीयुत प० सितारामैया कांग्रेसका गत ५० वर्ष का इतिहास लिख रहे हैं। यह ग्रन्थ आगामी दिसम्बर में कांग्रेस की रजत जयंती के अवसर पर प्रकाशित होगा। वर्किङ्ग कमिटी ने इस की छपाई आदि के लिये १०००) रुपये मंजूर किये हैं।

—जबलपुर म्युनिसिपैलिटी के चुनाव में २३ निर्वाचित सदस्योंमें १४ कांग्रेसवादी चुने गये हैं।

—गांव नगीना जिला गुड़गांव से समाचार आया है कि वहां एक कुम्हार हुकमी की पत्नी को एक साथ तीन बालक पैदा हुए हैं। १० दिन जीवित रहने के बाद एक लड़के की मृत्यु हो गई शेष २ जीवित और स्वस्थ हैं।

—श्रीमती कमला नेहरू की अवस्था साधारणतः सन्तोषजनक है यद्यपि उन का तापमान फिर बढ़ता हुआ जान पड़ता है। आप स्विट्जरलैंड से अच्छी इलाज करा रही हैं।

—काशी हिंदू विश्वविद्यालय के एक सौ छात्रोंने एबीसीनिया के युद्धक्षेत्र में जाकर घायलों की सेवा करनेका निश्चय किया है। इन छात्रोंको यू० टी० सी० (विश्वविद्यालय की सैनिक शिक्षा) की ट्रेनिंग मिलती है और घायलों की मरहम पट्टी करनेका भी इन्हें अनुभव है।

—तीन उड़िया युवक पैदल ही भारत भ्रमण करने के लिये निकले हैं।

—विजगापट्टम जिला कांग्रेस कमेटी के प्रेसीडेंट ने भारत माता के सर्वोत्तम चित्र पर (१५०) का पुरस्कार देनेकी घोषणा की है।

—कलकत्ते में प्रतिदिन २५० गायें, १६६ भैंसे, १२५ बकरे, १६५ भेड़े, ३ बछड़े प्रतिदिन काटे जाते हैं इतने पशुओं का मांस प्रतिदिन कलकत्तावासी खा जाते हैं। मछली इस हिसाब में शामिल नहीं है।

कलकत्ता निवासी श्रीयुत भिमाणी ने वर्दवान से कलकत्ता तक ७६ मील के मार्गको बराबर १२ घंटे दौड़कर तय किया है। इस समय इतनी देर में इतनी दूरी तय करने वाला और कोई मनुष्य नहीं है।

—भारतवर्ष के नये वाइसराय लार्ड लिनलिथगो ११ अप्रैल १९३६ को बम्बई आजायेंगे और उसी दिन लार्ड विलिंगडन लन्दन रवाना होजायंगे।

—सन १९३३ में भारतवर्ष में ८७ लाख बच्चे उत्पन्न हुये ६१ लाख बच्चे, जवान, बूढ़े स्त्री पुरुष मरे एक वर्ष से कम आयु वाले बच्चे १६ लाख ६० हजार मरे।

—सारनाथ में १०, ११, १२ नवम्बर को बौद्ध लोगों का एक बड़ा भारी मेला होगा जिसमें लंका, बर्मा आदि दूर २ बौद्ध सम्मिलित होने वाले हैं।

—इटली सरकार ने नये जंगी जहाज बनाने के लिये ४० लाख रुपयेका खर्च स्वीकार किया है।

—एबीसीनिया का 'कलाश' नामक प्रसिद्ध नगर एबीसीनिया वालों ने इटली सेना को बिना सामना किये सौंप दिया।

देश विदेश समाचार

—मालूम हुआ है कि नवाब लोहारू अब रियासत के प्रबन्ध में हस्तक्षेप न कर सकेंगे। अब सारा शासन [illegible] आफीसर अफसर की आज्ञा से हुआ करेगा। आप को केवल चार सौ रुपये के करीब मासिक मिला करेगा।

—अगस्त महात्मा गांधी हिन्दी प्रचार के लिये आसाम, बंगाल और उत्कल का भ्रमण करेंगे।

—ब्रिटिश सरकार २५ करोड़ पौण्ड (लगभग पौने चार अरब रुपये) का नया कर्ज लेने वाली है।

—श्रीयुत पट्टाभि सीतारामैया कांग्रेस का गत ५० वर्ष का इतिहास लिख रहे हैं। यह ग्रन्थ आगामी दिसम्बर में कांग्रेस की स्वर्ण जयंती के अवसर पर प्रकाशित होगा। वर्किंग कमिटी ने इस की छपाई आदि के लिये ६०००) रुपये मंजूर किये हैं।

—जबलपुर म्युनिसिपैलिटी के चुनाव में २३ निर्वाचित सदस्यों में १४ कांग्रेसवादी चुने गये हैं।

—गांव नगीना जिला गुड़गांव से समाचार आया है कि वहां एक कुम्हार दुकमा की पत्नी को एक साथ तीन बालक पैदा हुए हैं। १०—दिन जीवित रहने के बाद एक लड़के की मृत्यु हो गई शेष २ जीवित और स्वस्थ हैं।

—श्रीमती कमला नेहरू की अवस्था साधारणतः सन्तोषजनक है यद्यपि उन का तापमान फिर बढ़ता हुआ जान पड़ता है। आप खुराक आगे से अच्छी प्रकार कर रही हैं।

—काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के एक सौ छात्रों ने एबीसीनिया के युद्धक्षेत्र में जाकर घायलों की सेवा करने का निश्चय किया है। इन छात्रों को यू० टी० सी० (विश्वविद्यालय की सैनिक शिक्षा) की ट्रेनिंग मिली है और घायलों की मरहम पट्टी करने का भी इन्हें अनुभव है।

—[illegible] युवक पैदल ही भारत भ्रमण करने के लिये निकले हैं।

—विजगापट्टम जिला कांग्रेस कमेटी के प्रेजीडेंट ने भारत माता के सर्वोत्तम चित्र पर १५०) का पुरस्कार देने की घोषणा की है।

—कलकत्ते में प्रतिदिन २५० गायें, १६६ भैंसे, १२५ बकरे, १६५ भेड़ें, ३ बछड़े प्रतिदिन काटे जाते हैं इतने पशुओं का मांस प्रतिदिन कलकत्तावासी खा जाते हैं। मछली इस हिसाब में शामिल नहीं है।

—कलकत्ता निवासी श्रीयुत निमाई ने बर्दवान से कलकत्ते तक ७६ मील के मार्ग को बराबर १२ घंटे दौड़कर तय किया है। इस समय इतनी देर में इतनी दूरी तय करने वाला और कोई मनुष्य नहीं है।

—भारतवर्ष के नये वाइसराय लार्ड लिनलिथगो ११ अप्रैल १९३६ को बंबई आजावेंगे और उसी दिन लार्ड विलिंगडन लन्दन रवाना होजायंगे।

—सन १९३३ में भारतवर्ष में ८७ लाख बच्चे उत्पन्न हुये ६१ लाख बच्चे, जवान, बूढ़े स्त्री पुरुष मरे एक वर्ष से कम आयु वाले बच्चे १६ लाख ६० हजार मरे।

—सारनाथ में १०, ११, १२ नवम्बर को बौद्ध लोगों का एक बड़ा भारी मेला होगा जिसमें लंका, बर्मा आदि दूर २ बौद्ध सम्मिलित होने वाले हैं।

—इटली सरकार ने नये जंगी जहाज बनाने के लिये ५० लाख रुपये का खर्च स्वीकार किया है।

—एबीसीनिया का '[illegible]' नामक प्रसिद्ध नगर एबीसीनिया वालों ने इटली सेना को बिना सामना किये सौंप दिया।

REGD. L.No.
3459.

—अभी हालमें ही तूफानसे जापान के ३००० मनुष्य मर गये। २०० मनुष्यों का पता नहीं। ८० हज़ार मकान और १६० पुल नष्ट होगये।

—इटली ने स्वेज़ केनाल कंपनी को टैक्स में अब तक साढ़े सात लाख पौण्ड दिये हैं।

—अभी एक ऐसी साइकल का आविष्कार हुआ है जो ज़मीन और पानी दोनों पर चलती है।

—एक अमेरिकन साधु बराबर ३६ वर्ष तक पेड़ों पर रहा अब वह पेड़ से उतर ज़मीन पर चलने फिरने लगा है।

—बंगालकी नज़रबन्द एक ग्रेजुएट अध्यापिकाको तथा धीरेन्द्रनाथ चटर्जी को सरकार ने मुक्त करके विवाह करनेकी आज्ञा देदी है।

—बुद्ध गया मन्दिर में ८४ हज़ार दीपक जलाकर दीपमाला उत्सव मनाया गया यह दिवाली उत्सव सिंहाली महिला श्रीमती भगवती करनेपड़ोने अपने खर्च से किया है।

—२७ अक्टूबर को रातके १० बजे झेलमके बड़े बाज़ार में हाजी फज़ल हक अफज़ल मर्चेन्ट की दुकान में आग लगी जो कि एक दम फैल गई और ४२ दुकानों को भस्म करके शान्त हुई। १५ लाख रुपयेकी हानिका अनुमान किया जाता है।

—मालूम हुआ है कि सीमाप्रान्त में भी बिना लाइसेंस तलवार रखने की आज्ञा हो गई है।

—सरकारी ओरसे पंजाब कौंसिलमें कहा गया है कि शहीदगंजके विषय में यदि सिक्ख, मुसलमान आपसमें समझौता करलें तो सरकार इस मामले के कैदियों तथा नज़रबन्दों को छोड़ देगी।

—छिन्दवाड़ा के केसाव नामक मुसलमान ने इस्लाम धर्म छोड़ कर हिन्दू धर्म स्वीकार किया है।

मुसोलिनी ने घोषणा की है कि यदि युद्ध में जाने वाले इटलीके नौजवान के साथ उसकी प्रेमिका विवाह करना चाहे तो वह उस नौजवान के किसी मित्र के साथ शादी कर सकती है लेकिन उसका पति वह युद्ध पर जानेवाला ही युवक माना जायगा।

—मोटर दुर्घटना से अभी २६ अक्टूबर को काश्मीर नरेश बाल बाल बच गये।

—आस्ट्रिया के पुराने मन्त्रि मण्डल ने इस्तीफ़ा दे दिया। अब नया मंत्री मण्डल कायम होगा।

—कानपुर में गङ्गा जी के जनाने घाट पर एक मुसलमान औरतका भेष बनाकर स्नान कर रहा था। स्वयंसेवकों ने उसे पहिचान लिया। मुसलमान का नाम हज़रतखाँ है। वह गिरफ्तार कर लिया गया है।

—बंबई हिन्दू सभाका एक डेपुटेशन डा० वेलकर की अध्यक्षता में डा० अम्बेडकर से मिला डेपुटेशन से बहुत देर की बात चीत के बाद अम्बेडकर ने कहा कि मैं न तो उतावली से हिन्दू धर्म छोड़ूंगा और न अछूतोंकी भलाई की खातिर देशकी भलाईकी उपेक्षा करूँगा जो कुछ करूँगा उस के पहले हिन्दू नेताओं से सलाह करूँगा।

मुसोलिनी का पुत्र ब्रुनो हवाई जहाज में मेकाले पर उड़ रहा था। अबेसीनिया वालों ने जहाज पर बन्दूकों से गोलियां दागीं किन्तु वह बाल बाल बच गया।

—श्री शंकराचार्य कुर्तकोटिने नासिकमें हिन्दुओं की एक बड़ी सभा में हरिजन उद्धार पर प्रभावशाली भाषण दिया जिसमें उन्होंने कहा कि मैं हरिजनों को कोटा चेक देने के लिये तयार हूं।
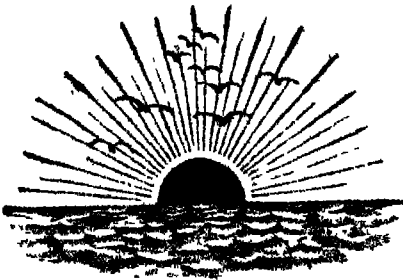
अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस—मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक ६

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≈)

मगसिर बदि ६ शनिवार
१६ नवम्बर-१९३५ ई०

घोर अत्याचार

—ग्वालियर राज्य में भिण्ड के पास महगांव के जैन मन्दिर में ७ नवम्बर को अत्याचार पूर्ण जबर्दस्त चोरी हुई जिसमें समस्त प्रतिमाएं (२७) चुरा ली गईं और शास्त्रों को अग्नि में स्वाहा किया गया तथा मन्दिर को अनेक प्रकार अपवित्र किया गया। इसका कारण यह मालूम होता है कि महगांव के जैनियों ने वहां के तहसीलदार के मांगने पर मन्दिर का विमान तथा माधव जयन्ति के लिये चंदा नहीं दिया था। इस बात से रुष्ट हो कर अजैन लोगों ने रात्रि के समय मन्दिर की यह दुर्दशा की है।

ग्वालियर राज्य में भेलसा, कोलारस के बाद यह तीसरा निन्दनीय अत्याचार है जो कि अजैन हिन्दुओं की ओर से निरपराध जैनियों पर हुआ है। पहले दोनों अत्याचारों का न्याय ग्वालियर दरबार की ओर से आदर्शरूप में उस समय हो चुका है जिससे जैनसमाज को सन्तोष है। अब यह तीसरी दुर्घटना का अवसर है इस समय यद्यपि स्व० महाराज माधवराव सिंधिया नहीं हैं जो कि दृढ़ता से न्याय का पालन करते कराते थे किन्तु उनकी दरबार पार्लिमेंट तथा कानून अब भी विद्यमान है अतः आशा है कि इस अत्याचार का अवश्य सन्तोषजनक न्याय किया जायगा।

विशेष आगामी अंक में।

—अजितकुमार

जैन समाचार

—शूरीपुर बटेश्वर दि० जैन मन्दिर के निकट खुदाई करते समय श्यामवर्ण की दो फीट ऊंची प्रतिमायें तथा ताम्र पत्र प्राप्त हुए हैं जो कि १३ वीं शताब्दी के हैं।

—निज़ाम हैदराबाद राज्य में वरंगल से ३ मील दूर एक पर्वत के ऊपर एक पुराना पद्मावती का मन्दिर बना हुआ है। मन्दिर के भीतर अनेक अखंडित प्राचीन प्रतिमायें हैं मंदिर के बाहर पासमें ६ फीट ऊंचा मानस्तम्भ है जिस पर चतुर्मुखी प्रतिमा है। इसके सिवाय १० फीट ऊंची एक पार्श्वनाथकी खड्गासन प्रतिमा, चार फीट ऊंची महावीर स्वामी की पद्मासन प्रतिमा है। मंदिरके पास पहाड़में सवा सवा फीट ऊंची चार अन्य प्रतिमाएं खुदी हुई हैं। मंदिर लगभग एक हजार वर्ष पुराना है। यह मंदिर इस समय ब्राह्मणोंके अधिकार में है। जैनसमाजको प्रयत्न करके यह क्षेत्र अपने हाथमें लेना चाहिये।

स्थानकवासी सम्प्रदायके पत्र जैनप्रकाशके हिन्दी विभाग में अग्रलेख श्रीमान पं० दरबारीलाल जी के प्रकाशित हुआ करते थे। किन्तु अनेक स्थानकवासी साधुओं तथा नेताओं के विरोध करने पर जैनप्रकाश के संचालकों ने उस पद से दरबारीलाल जी को पृथक् कर दिया है।

—१२ नवम्बर को कलकत्ता टाउन हाल में पूर्वी (कलकत्ता) हल्के से रिजर्व बेङ्क के स्थानीय बोर्ड के ४ सदस्य चुने गये जिनमें एक शाहाबाद के श्रीमान शान्तिप्रसाद जी जैन भी हैं।

जैनतिथिदर्पण—वीर सं० २४६२ का जैनतिथि-दर्पण छपा कर समस्त भाइयों के हितार्थ श्री दि० जैन सभा शिमलाको भेंट किया गया है जिन भाइयों को मंगाना हो वे इस पते से मंगा सकते हैं।

—रायसाहिब नेमीदास जैन
मंत्री श्री दि० जैन सभा शिमला

—सत्यसंदेश के सम्पादक श्रीमान पं० दरबारी-लाल जी की धर्मपत्नी का ३२ वर्ष की आयु में ८ नवम्बर को क्षयरोग से स्वर्गवास हो गया है। शोक। पंडित जी को सांसारिक दशा का विचार कर शोक छोड़ देना चाहिये।

—सिद्ध क्षेत्र पावागिरि (ऊन) के जीर्णोद्धार के लिये विद्वान इंजीनियर बा० जुगलकिशोर जी की सम्मति अनुसार २० हजार रुपये खर्च होंगे।

—कराची में समस्त अंग्रेजी दवाएं यहीं बनाने के लिये एक कम्पनी खुली है।

—हिन्दु विश्वविद्यालय ने एक लाख स्थायी सहायक बनने के लिये अपील की है। बहुत से सहायक बन भी गये हैं।

—नलहटी (बंगाल) गांव में एक १० वर्ष का मुसलमान लड़का है जो कि सांपों के साथ खिलौने की तरह खेलता रहता है सांप के काट लेने पर उस के शरीर में विष नहीं चढ़ता तथा अपना थूक लगाने से अच्छा हो जाता है। उसके सारे शरीर पर सांप के काटने के चिन्ह हैं।

—पता लगा है कि कुछ आदमी कलकत्तामें मोटर बनाने की कम्पनी खोलना चाहते हैं। इन्होंने मोटर का काम विदेश में सीखा है और वहीं अनुभव प्राप्त किया है। भारत सरकार के ला मैंबर सर नृपेन सरकार के भतीजे मि० एस० एन० सरकार इस योजना में प्रमुख कार्यकर्त्ता हैं और धन भी वही लगाएंगे। इस कम्पनी की मोटरों का नाम भारत होगा वे ६ सिलेण्डर १२ होर्स पावर की होंगी। यह कारखाना हर महीने ६० मोटरकारें बना सकेगा।

अकलङ्काय नमः
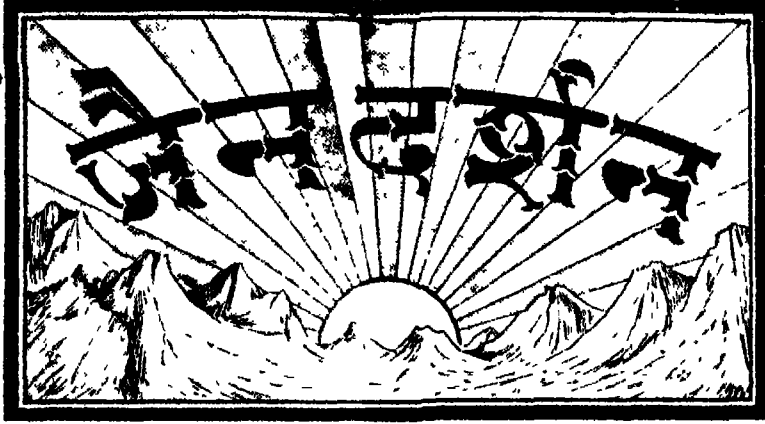
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽप्रतिमर्त्यमाभवत्रिविलक्षणपक्षतोष,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिज विजयाय भूयात

वर्ष ३ | श्री मार्गसिर बदी ६—शनिवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क ६

मनको उपदेश

(१)

अरे मन! कोई न और सगा।
संभल चेत कर! समय न खो अब,
तू विषयों में बहुत रंगा॥

(२)

सकल विश्व स्वारथका साथी,
बिन स्वारथ सब देत दगा।
मात, पिता, सुत, मित, दारागन
इनसे ममता दूर भगा॥

(३)

देख रूप-लावण्य-विभवको,
सार हीन तू रीत न गा।
शूल प्रखरतर बिखरे पथमें,
नयन खोलकर चल सु-मगा॥

(४)

माया के मत विभ्रम में पड़,
इसही ने सब जगत ठगा।
"यह मेरा यह मेरा" भाई!
ऐसी न चित्त में तू उमगा॥

(५)

पूत हृदय से परम पितामें,
सुख चाहे, तू प्रेम लगा।
रे चेतन! यदि योग प्रबल तो-
देवे आत्मिक ज्योति जगा।

चांदमल जैन "शशि"

संस्कृत साहित्य में राजा का स्थान

(ले०—श्रीमान् पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ)

राजा को प्रजा की आवश्यकता है और प्रजा को राजा की। दोनों ओर सद्भावका निष्कपट प्रेम एक दूसरे के शांति और सुख का कारण है। जब तक राजा और प्रजा का मानसिक मेल नहीं होता तब तक दोनों ही का सांसारिक जीवन विपत्ति पूर्ण बना रहता है। चाहे कोई पैतृक अधिकारों से ही राजा क्यों न बना हो, प्रजा के मानसिक अभिषेक बिना उसे ठीक अर्थ में राजा नहीं कहा जा सकता। दशरथ ने कैकेई के दुराग्रह से अयोध्या के राजसिंहासन पर भरत को बिठला दिया, पर वहां की तत्कालीन प्रजा ने अपने अन्तःकरण से उस को राजा नहीं माना। क्यों कि रामचन्द्र की उपस्थिति में वह राजा होने के योग्य नहीं था। यह पौराणिक घटना है। विभिन्न देशों के प्राचीन इतिहास का अवलोकन करने से भी यह बात अभ्रान्त रूप से ज्ञात हो जाती है कि राजा और प्रजा के पारस्परिक हार्दिक सहयोग बिना अधिक समय तक उसी रूपमें दोनों ही की सत्ता नहीं रह सकती। यही कारण है कि राजा अपनी प्रजा का सन्तान के समान पालन करता है, तथा उस को रंजित और प्रसन्न रखना ही अपना कर्तव्य समझता है। प्रजा का अभ्युदय और उन्नति राजा की समृद्धि का कारण है। सच बात तो यह है कि राजा और प्रजा ये दोनों सर्वथा भिन्न पदार्थ नहीं हैं। किन्तु एक ही राष्ट्र पुरुषके दो विभिन्न अंग हैं। अंगोंके आवश्यक मेल बिना अंगी खतरे में गिरकर अन्त में नष्ट होजाता है। शरीर और शरीर के विभिन्न अवयवों पर विचार करने से यह बात भली भांति समझ में आजायगी।

संस्कृत साहित्य में राजा का स्थान बहुत ऊंचा है और यह ऊंचता उसको अपने कर्तव्यों से मिलती है। वह प्रजासुख के लिये बड़ा से बड़ा बलिदान कर सकता है। प्रजा के आचार, शांति, सुख और न्यायानुगामिता का उस को सब से अधिक ध्यान रखना पड़ता है। आदर्श प्रजापालक श्री रामचन्द्र ने केवल प्रजा के हित का खयाल करके ही सीता को वनवास की आज्ञा दी थी। यह एक ऐसा बलिदान है जो उस के राजत्व का अनुपम आदर्श कहा जा सकता है। यदि पुरुषों के लिये रामचन्द्र महान और आदर्श हैं तो नारी जाति के लिये सीता भी देवियों के समान उपासनीय है। ऐसी सती शिरोमणी निर्दोष महिला को गर्भ की अवस्था में वनवास भेज देना कोई साधारण बात नहीं थी। सीता की निर्दोषिता में राम को किसी प्रकार का सन्देह भी नहीं था वह अच्छी तरह जानते थे कि सीता विषयक जनापवाद बिलकुल निराधार है फिर भी प्रजा के आचार और न्यायानुगामित्व पर इस का बुरा प्रभाव न पड़ जाय केवल इसी बात के विचार ने उन्हें सीता को वनवास देने के लिये प्रेरित किया। जब दुर्मुख के मुंह से सीता का सहज अपवाद राम ने सुना तो वह बहुत दुखी हुए। सहसा बेसुध हो धरती पर गिर पड़े। जब सचेत हुए तो मन में विचारने लगे :—

हाहा धिक् परगृहवासदूषणं यद्।
वैदेह्याः प्रशमितमद्भुतैरुपायैः॥

दलनात् कुजर्षाच दैव दुर्विपाका।
बालकं विषमिव सर्व्वतः प्रसृतम् ॥
(उत्तर—रामचरित)

अर्थात बड़े दुःख की बात है कि अत्यन्त अद्भुत उपायों से माता के परगृहवास दूषण को किसी तरह शांत किया तो दैव के दुर्विपाक से पागल कुत्ते के विष के समान यह दूसरा लोकापवाद फैल रहा है।

ऊपर के पद्य से यह बात अच्छी तरह ज्ञात हो जाती है कि ऐसा महान बलिदान भगवान रामचन्द्र ने केवल प्रजा के हित के लिये किया था। नहीं तो ऐसे आधार हीन अपवाद पर ध्यान देने की आवश्यकता ही क्या थी। रामचन्द्र की इस प्रजा हितैषिता के कारण ही लोग रामराज्य को स्वर्ग राज्य से भी उत्कृष्ट समझते थे।

महाकवि कालिदास सच्चे क्षत्रिय और राजा का लक्षण करते हुए अपने सुप्रसिद्ध रघुवंश नामक महाकाव्य में कहते हैं :—

क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः।
क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः ॥
राज्येन किं तद्विपरीत वृत्तेः।
प्राणैरुपक्रोशमलीमसैर्वा ॥

अर्थात सच्चा क्षत्रिय और राजा वह है जो प्रजा को दुःखों से उन्मुक्त करे। अगर कोई ऐसा नहीं करसके तो वह राजा नहीं कहला सकता।

प्रजा के दुःख दूर करने में ही राजा की महत्ता है इसी लिये संस्कृत कवियों ने उसे देवता कहा है। एक कवि कहता है :—

बालोऽपिनावमन्तव्यो मनुष्य इति भूमिपः।
महती देवाता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ॥

अर्थात् राजा चाहे बालक ही क्यों न हो उसको मनुष्य समझ कर अपमान करना उचित नहीं। क्योंकि वह नर शरीर को धारण किए हुए एक बड़ा भारी देवता है।

किन्तु भूमिपति का यह देवत्व प्रजा की सामूहिक शक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। वर्तमान (प्रजा सत्तात्मक राज्य के) युग में इस तत्व को अधिक खोल कर लिखने की कोई आवश्यकता नहीं। जो राजा प्रजा के प्रति अपने कर्त्तव्यों को भूल जाता है उस को देवत्व किस तरह प्राप्त हो सकता है? राजा की महत्ता सेवामय जीवन व्यतीत करनेमें है, उसके महान वैभवका उपयोग राष्ट्रकी भलाईके लिये होता है; क्योंकि वह वैभव उसका नहीं अपितु राष्ट्रका है। जो वस्तु प्रजा से प्राप्त हुई है उसको वह उसी के हित में लगा देना अपना कर्तव्य समझता है। इस तरह के पूजनीय राजा को सम्बोधित करने के लिये 'देवता' शब्द का प्रयोग बिलकुल उचित है। ऐसे ही राजा के लिये एक दूसरा संस्कृत कवि कहता है :—

नरेशे जीवलोकोऽयं निमीलति,
उन्मीलत्युदीयमानेच रवाविव सरोरुहम।
यस्य प्रसादे पद्मास्ते विजयश्च पराक्रमे,
मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्व तेजोमयो हिसः ॥

इन श्लोकों का अर्थ यही है कि राजा और प्रजा का उत्थान और पतन सहभावी है। राजाकी प्रसन्नता में लक्ष्मी, पराक्रम में विजय और क्रोध में मृत्यु रहती है क्योंकि वह सर्व तेजोमय है। राजा के पतन में प्रजा का पतन और राजा के उत्थान में प्रजा का उत्थान है। इन दोनों पद्यों में राजा की अत्यधिक प्रशंसा की गई है किन्तु वह राजा कैसा होता है इस

सम्बन्ध में संस्कृत साहित्यमें जो कुछ कहा गया है उस का सार सुनिये :—

> सत्यं शौर्यं दया त्यागो नृपस्यैते महागुणाः।
> यन्निर्मुक्तो महीपाल आप्नोति खलु वाच्यताम्
> न राज्यं प्राप्त मित्येव वर्तितव्यमसाम्प्रतम्।
> श्रियं ह्यविनयो हन्ति जरा रूप मिवोत्तमम्॥
> पानं स्त्री मृगया द्यूतमर्थ दूषणमेवच।
> वाग्दण्डयोश्च पारुष्यं व्यसनानि महीभुजाम्॥
> कामः क्रोधस्तथालोभो मोहो मानो मदस्तथा।
> षड्वर्गमुत्सृजेदेनं अस्मिन् त्यक्ते सुखी भव॥

अर्थात् प्रजापालक राजा में सत्य, शूरता, दया और त्याग इन गुणोंका होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि इन गुणों में से एककी भी कमी हो तो राजा निन्दा के योग्य होजाता है।

केवल राज्य प्राप्त होगया यही समझकर राजा को प्रजाके साथ असद्व्यवहार नहीं करना चाहिये। क्योंकि उसका यह प्रजाके साथमें किया हुआ अविनय उसके वैभव और शोभा दोनों को नष्ट कर देता है। जैसे बुढापा मनुष्यके रूपको बिगाड़ देता है। वैसे ही राजाकी अनीति उसके राजत्व रूप सौंदर्य को नष्ट कर देती है।

मदिरापान, अत्यधिक कामुकता, शिकार जूआ अन्यायसे अर्थोपार्जन तथा वाणी और दंड की अत्यधिक कठोरता यह राजाओंके व्यसन हैं।

काम, क्रोध, लोभ, मान, मोह, मद इनका समूह षड्वर्ग कहलाता है। राजाका कर्तव्य है कि इस षड्वर्ग पर विजय प्राप्त करे नहीं तो वह सुखी नहीं हो सकता।

प्राचीन भारतीय राजा इन सब विषयों पर ध्यान देते थे। वैभवका उपभोग करना उनके जीवनका लक्ष्य नहीं था। वे अनुभव करते थे कि प्रजाकी रक्षा और अभिवृधि करनेके लिये हम राजा हुये हैं। वे अपार कोष और सम्पत्ति के अधीश्वर होते हुये भी योगियोंकासा जीवन व्यतीत करते थे जो राजा निर्दिष्ट पथ के प्रतिकूल [illegible] [illegible] रूप[illegible]से वञ्चित हो[illegible]के लिये राजत्व च्युत कर दिया जाता था। पुराणों में इसके अनेक उदाहरण मिल सकते हैं। राजाके लिये प्रजाके हितका प्रश्न उपस्थित होने पर पुत्र जैसी प्रिय वस्तुका बलिदान कर देना एक साधारणसी बात होजाती थी। यही कारण है कि प्राचीन भारतने राजाओं की ईश्वरके रूपमें उपासना की है। हर्षकी बात है कि भारतीय प्रजा उसी अपने पुराने आदर्शके अनुसार अबभी राजाको ईश्वर या देवता मानती है।

शिक्षोपयोगी मनोविज्ञान

(ले०—श्रीमान बाबू विद्याप्रकाश जी काला एम० ए० बी टी०)

सम्मतियां (Suggestions) देने की प्राकृतिक शक्ति

प्रत्येक मनुष्य में एक ऐसी शक्ति होती है जिसके द्वारा वह अपने दिमाग से नई २ बातें पैदा करता है, और उनको एक खास आकार में ढाल कर लोगों के सामने रखता है और कहता है। कि यह मेरी Suggestions (सम्मतियां) या सूचनायें हैं। यदि इनके द्वारा अमुक कार्य अमुक प्रकार से किया जाय तो लाभप्रद होगा। जो मनुष्य जिस केंद्र में कार्य करता है वह उस सम्बन्धी ही सूचनायें या सम्मतियां पेश करने में दक्ष होता है। और इस प्रकार की सम्मतियां या सूचनाओं का मूल्य भी होता है। लेकिन कई मनुष्य ऐसे होते हैं जो सम्मतियां या सूचनायें पेश करने के शौकीन होते है, लेकिन उनकी सम्मतियां अनुभव शून्य होती है। ऐसे मनुष्य प्रत्येक विषय में अपनी सम्मतियां पेश करने में तैय्यार रहते है। और अपनी सम्मतियों का मूल्य भी अपने दिमाग से अधिक समझते हैं। किन्तु विषय की अज्ञानता के कारण वे ऊटपटांग सम्मतियां पेश करते है। अनुभव रहित सम्मतियां या सूचनायें अगर कार्यरूप में लाई जावें तो ऐसी सम्मतियां या सूचनाओं से संसार के कार्यों को फायदे के बजाय नुकसान होने की ज्यादा सम्भावना है। अनुभव ही संसारको विजय करता है। जब हम किसी कार्य का सम्पादन करते हैं तो हम तत् सम्बन्धी विद्वानों की सम्मतियां या सूचनाओं पर ज्यादा भरोसा करते हैं बनिस्बत दूसरे अन्य मनुष्यों की सम्मतियों के जो कि उस विषयों की जानकारी नहीं रखते हैं यथा मुझे एक भवन का निर्माण करना है तो मैं भवन के निर्माण करने की सम्मति एक Engineer से लूँगा न कि एक डाक्टर से। इसी प्रकार बीमारी के लिये वैद्य की, पाठक की अध्यापक के लिये, व्यापारी की व्यापार के लिये सम्मतियां मूल्यवान् समझी जाती है। कई व्यक्ति विशेष इस प्रकार के भी होते हैं जो कि प्रत्येक विषय में सम्मति दे सकते है और देते भी हैं। लेकिन ऐसे आदमियों की सम्मतियों में बह जाने से नुकसान की ज्यादा आशा है बनिस्बत फायदे के। क्योंकि माकूल राय उसी की समझी जाती है जो कि उस विषय का पूर्ण अनुभव रखता है। अगर संयोगवश ऐसे व्यक्ति की राय से कार्य का ठीक प्रकार से सम्पादन भी हो जाय तो भी हमें ऐसी राय या सम्मति देने वाले को खतरनाक मनुष्य ही समझना चाहिये— और ऐसे आदमी की रायों में कभी भी नहीं बहना चाहिये।

एक नौकर ने एक अंग्रेजी महिला को किसी बीमारी में दवा बनाई और दवा के लेने से उस अंगरेजी महिला की बीमारी जाती रही। यह बात उस महिला के अंग्रेज पति को मालूम हुई। अंग्रेज पति ने उस नौकर को शीघ्र ही यह कह कर पृथक कर दिया कि तुम एक बहुत भयंकर आदमी हो। जिस विषय का तुम अनुभव नहीं रखते—उसी विषय पर तुम अपनी सम्मति को पेश करते हो। अतः इस समय तो संयोगवश

तुम्हारी सम्मति से मेरी पत्नी को लाभ हो गया लेकिन कभी तुम्हारी सम्मति से नुकसान होने की भी सम्भावना है। अतः मैं ऐसे आदमी को नहीं रखना चाहता जो बिना किसी अनुभव के विषयों पर अपनी सम्मतियां पेश करने में तैय्यार रहता है। अंग्रेज का नौकर को पृथक् कर देनेमें ही लाभ था। अन्यथा इस नौकर से कभी किसी वक्त कोई भयङ्कर नुकसान होने की सम्भावना हो सकती थी।

एक समय का वृत्तान्त है कि किसी शत्रु ने किसी राजा पर आक्रमण किया। राजा के पास एक वैद्य नौकर था। राजा ने "दुश्मन पर किस प्रकार विजय प्राप्त कर सकते हैं"—इस की सम्मति इसी वैद्य से लेना उचित समझा। इस वैद्य की यही सम्मति रही कि प्रत्येक सिपाही को एक २ तोला सनाय देदा जाय तो विजय का होना सम्भव है। राजाने कुछ तर्क न किया और उसके कथनानुसार सब को सनाय औटा कर देदी गई--जब सिपाहियों को बार २ जङ्गल जाने की हाजत हुई तो शत्रु सेना ने समझा कि यहां हैजा या हैजे जैसी कोई बीमारी फैली हुई है। बस शत्रु सेना डर गई और खेत छोड़ भाग गई। इस सम्मति से राजा की सयोगवश विजय तो हो गई—लेकिन यह सम्मति अगर इस से विपरीत कार्य कर जाती तो राजा के हारने में कोई शङ्का न थी। यह वैद्यराज मनुष्यों की बीमारी में सम्मति देने में होशियार थे। लेकिन विचारहीन राजा इन को प्रत्येक कार्य में ही होशियार समझने लगे अतः इन की सम्मति लड़ाई जैसे कठिन विषय में भी ली गई—और इस विषय में वे अपनी वैद्यों जैसी सम्मति को पेश करके विजय प्राप्त करनेकी आशा करने लगे।

एक आदमी बहुत होशियार समझाजा रहा है और अपनी होशियारीके लिये जगत विख्यात है। परन्तु होशियार किसी एक विषय में है प्रत्येकमें नहीं। परन्तु विचार हीन पुरुष उसको प्रत्येक कार्य मेंही होशियार समझते हैं यह उन की भूल है। तलवार एक तेज शस्त्र है परन्तु सूई का काम नहीं दे सकती। एक फौज का कप्तान एक व्योपारी फर्म को इतनी रीति से नहीं चला सकता—जितना कि एक अनुभवी व्योपारी चला सकता है। यथा एक समाज में एक महाविद्यालय की स्थापना की गई है और धनाढ्य मशहूर और प्रभावशाली व्यक्तियों की कमेटी बनाई गई है। परन्तु इस में शिक्षा सम्बंधी कलाकौशल के पुरुष नहीं हैं तो यह विद्यालय कभी भी उन्नतावस्था को नहीं प्राप्त हो सकता—क्योंकि शिक्षानभिज्ञ मनुष्यों की सम्मतियां विद्यालय जैसी संस्थाके लिये कारगर नहीं हो सकती। क्या अच्छा होता इस विद्यालय में कोई भी मेम्बर ऐसा न लिया जाता, जो शिक्षा कला से अनभिज्ञ हो, तो इस विद्यालय की शिघ्र ही तरक्की हो जाती।

भारतवर्ष की संस्थाओंमें इस बात पर बहुत कम लक्ष्य दिया जाता है। यहां तो प्रभावशाली पुरुषों को आगे स्थान दिया जाता है उनका प्रभाव राज्य या द्रव्य अपेक्षा होता है। ये अयोग्य प्रभावशाली पुरुष समाज के कार्यों को सुन्दर रूपसे चलाने में बड़े बाधक होते हैं। ये कार्यकर्ता आडंबर से नाम पाये हुये होने के कारण केवल तारीफके भूखे होते है। वे इसी धुनमें मस्त बने रहते हैं कि "हम अमुक संस्था के प्रधान हैं" यह स्वभाव सिद्ध बात है कि जो मनुष्य जिस विषयका जानकार होता है वही उस कार्य को सहूलियत के साथ चला

सकता है। जिन विचारों ने धन या नाम कमाने की धुन में फुरसत न मिलनेके कारण, कभी किसी बात की जानकारी नहीं की। ऐसे व्यक्तियों से किस प्रकार संस्थायें ठीक रूप से चलने की आशायें की जा सकती हैं? अक्सर ऐसा देखा गया है कि ये प्रभावशाली पुरुष जानकार व्यक्तियों से किसी बातके पूछने में वे उनसे सलाह लेनेमें भी अपनी हानि समझते है इन अयोग्य कार्य कर्ताओं की कृपा से आज अधिकांश सामाजिक कार्य मृत प्रायः हो रहे हैं। कभी २ राय जाहिरा उत्तम मालूम होती है और सब कोई उसको पसंद भी करते है। परन्तु जिस कार्य के सम्पादनके हेतु जो राय दी गई है वह उसी कार्य के लिये नाश का कारण हो जाती है।

पंजाब के राजा पौरु की राय थी कि दोनों फौजों के बीच में एक हाथियों की कतार खड़ी कर दी जाय तो ठीक होगा। और ऐसा किया भी गया। परन्तु जब यूनानियों के तीर भाले और बंदूकोंकी गोलियां उनपर छोड़ी गई तो वे हाथी पौरु की फौज को रौंदते हुये भागे। इस से पौरु की हार हुई।

कुछ मनुष्यों के दिमागों में विलक्षण शक्ति होती है। उन को दूर की सूझती है। ऐसे दिमाग वाले बिरले ही होते हैं। ऐसे मनुष्य अपने (Suggestions) सम्मतियों से आश्चर्यजनक कार्य करजाते हैं इन में दूसरे आदमियों से राय लेने की आदत नहीं होती। यह अपनी ही रायपर अधिक भरोसा रखते हैं। और अन्य पुरुषों को उत्तम रायें दिया भी करते हैं।

पंडित मोतीलाल नेहरू, तिलक महोदय तथा पं० मदन मोहन मालवीय इसी कोटि के पुरुष हैं।

इस से विपरीत कुछ मनुष्य ऐसे भी होते हैं जो जरा २ सी बात पर दूसरों की (Suggestions) राय के लिये दौड़ते फिरते है। और बहुतसी (Suggestions) सम्मतियां इकट्ठी करके बहमजाल में पड़ जाते है और नतीजे को प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं ऐसे मनुष्यों को कोई २ राय देने वाला अपने मतलब को बीच में रखकर राय देता है जिस से उस का उल्लू सीधा हो जाय।

कई मनुष्य राय लेने में इतने दक्ष होते हैं कि वे सब से (Suggestions) सम्मतियां प्राप्त करते है—लेकिन करते अपनी मनमानी है। वे अपने दिमाग की खुराक के लिये विचार का एक ऐसा अच्छा मसाला इकट्ठा कर लेते है। जिसपर मनन कर के—हर पहलू पर बुद्धी को दौड़ाकरके असल बात पर पहुंच जाते हैं।

सम्मतियां (Suggestions) की मान्यता

वही सम्मतियें मान्य होती है-जिन पर सम्मति लेने वाले का भरोसा है। सम्मति कहां से आरही है यानि इसका सोर्स (Source) कहां से है— इस विचार पर सम्मति की मान्यता या अमान्यता निर्भर है—एक बात बड़े महत्व की है और इस बातको एक तुच्छ व्यक्ति (Suggest) कर रहा है—तो वह मान्य न होगा परन्तु अगर वही राय किसी योग्य व्यक्ति द्वारा प्राप्त हुई है तो स्वीकार करने में योग्य समझी जायगी।

PRESTIGE SUGGESTION

(Prestige Suggestion) वह होता है जिस में कि (Suggestions) को मानने वाला (Suggestion) सम्मति को इस आधारपर मानता है कि वह सम्मति

किसी बड़े माननीय आदमी की तरफ से आरही है। यथा अध्यापकों का Suggestion लड़कों के लिये माननीय होता है—माता पिता की सम्मति उन की संतानों के लिये कार्य रूप होती है। वक्ताकी सम्मति-श्रोताओं पर प्रभाव डालती है।

(Mass) सामूहिक Suggestion

यदि एक राय एक मुख से निकल रही है तो वह इतनी माननीय नहीं होती जितनी कि वही राय अगर बहुत से आदमियों के मुख से निकले। ऐसी राय को बहुमत राय (Mass Suggestion) कहते है। स्कूलों में, सभा सोसाइटियों में, क्लबोंमें, व खेल के मैदानों में बहुमत राय ही कार्यरूप होती है। स्कूल में बच्चा एक गलत बात को इस लिये मान लेता है कि वह बहुमत से निकल रही है। ऐसा देखा गया है कि कोई व्यक्ति एक मनुष्य के कहने से किसी संस्था को दान देने में हिचकिचाहट पैदा करता है—लेकिन अगर उसी व्यक्ति से कई पुरुष चंदा देने के लिये कहते है तो वह देने में कुछ भी हिचकिचाहट नहीं दिखलाता।

CONTRA SUGGESTION

राय का विपरीत रूप में परिणाम न होना

यह अक्सर देखा गया है कि कभी २ बच्चों को जैसा कहा जाता है उससे वे विपरीत करते दिखाई देते है। अगर उनसे खड़े होने के लिये कहा जाता है तो वे बैठ जाते है। यदि उनसे कहा जाता है कि अमुक पुस्तक को न देखो तो वे उसी पुस्तक को देखने की इच्छा प्रकट करते हैं। यथा—

पैन्डोरा नामकी एक लड़कीसे कह गया था कि तू अमुक संदूक को न खोलना। लेकिन पैन्डोरा ने उसी संदूक को खोलने की कोशिश की और संसार की तमाम आफतोंको बहार निकाल डाला। एक औरत के विषय में कहा जाता है कि उसको जैसा उसका पति उससे करने के लिये कहता था—उससे वह विपरीत कार्य करती थी। अन्त में उसका पति उससे तङ्ग आ कर जिस कार्य को वह कराना चाहता था उससे उल्टा कार्य उससे करने को कहता था। लेकिन फिर भी यह पत्नी उसको बहुत दुःखदायी हो गई थी। वह इससे छुटकारा पाना चाहता था। अतः एक रोज वह अपनी पत्नी के सन्मुख अपनी समुद्र यात्रा का प्रस्ताव पेश करता हुआ कहने लगा कि समुद्र यात्रा के लिये मैं जाता हूं—लेकिन तुम को इसके लिये न चलना होगा। स्त्री ने इसके विपरीत जाने की उत्कट इच्छा प्रकट की। पति भी उसे ले जाना चाहता था। और निश्चित दिवस पर वे दोनों समुद्र यात्रा के लिये रवाना हो गये। समुद्र यात्रा में एक नदी को पार करना पड़ता था। पति ने नदी को तैर कर पार करने का प्रस्ताव पत्नी के सामने रक्खा। और पत्नी को नाव के द्वारा ही यात्रा करनेके लिये मजबूर किया—लेकिन पत्नी तो जैसा पति कहता था उससे विपरीत करती थी। अतः उसने भी तैरनेकी इच्छा प्रकट की। पति भी यह ही चाहता था। अतः पत्नी नदी में कूद पड़ी। समय पर पतिने पत्नीको पानी में ढकेल दिया और हमेशा के लिये ऐसी पत्नी से छुटकारा पाया।

अध्यापकों को दरजे में लड़कों के सन्मुख किसी विषय पर राय देते समय बहुत ध्यान रखना आवश्यक है। अनुचित राय के देने से बच्चों

का अध्यापकों पर विश्वास उठ जाता है। वे अगर ठीक राय भी देते हैं तो बच्चे उस राय को गलत या अनुचित ही समझते हैं। किसी बात को ठीक तौर पर बताने के लिये—अध्यापक को प्रत्येक विषय की जानकारी होना आवश्यक है। ऊटपटांग लड़कों को बहका देना सर्वथा हानिकर होता है।

शिक्षा देते समय अध्यापकों को लड़कों की राय पूछना आवश्यक है। किसी विषय को समझाने के पूर्व लड़कों से तत् सम्बन्धी राय का संग्रह करने से शिक्षा उत्तम प्रकार से होती है और लड़कों की बुद्धि का विकास तीव्रता से होता है। बच्चों में स्वतन्त्र राय देने की आदत पड़ती है। और वे भविष्य में ठीक प्रकार की राय देनेमें समर्थ होते हैं। बच्चों का व्याख्यान ढङ्ग से पढ़ाना हानिकर होता है। प्रश्नों को करना उत्तरों को ग्रहण करना तथा उत्तर ठीक न आने पर अपनी राय को पेश करने से यहाँ पढ़ाई का ढङ्ग ठीक प्रकार से होता है।

यथा—हम भारतवर्ष का भूगोल लड़कों को पढ़ा रहे हैं। तो पढ़ाते समय लड़कों से यह कहना कि जिस देश में तुम रहते हो उसे भारतवर्ष कहते हैं हानिकर है। हम को लड़कों से पूछना चाहिये कि जिस देश में तुम रहते हो उसे क्या कहते हैं, लड़के अपने कस्बे गाँव व शहर का नाम बतायेंगे। हम को फ़ौरन पूछना चाहिये कि तुम्हारा गांव शहर या कस्बा किस प्रदेश में है?—वे पञ्जाब राजपूताना या गुजरात आदि प्रांत का नाम बतायेंगे—और इसके पश्चात् हम पूछेंगे कि गुजरात, पञ्जाब या राजपूताना कहां है? इसका जवाब वे 'भारतवर्ष' देंगे। इस तरह शिक्षा देने में ज्यादा समय की आवश्यकता होती है—लेकिन शिक्षा ठोस और सुदृढ़ होती है। लड़कों की दिलचस्पी बनी रहती है।

प्रश्नों को सुनते रहने से तथा उनका उत्तर देते रहने से उनका दिमाग़, जब तक वे पढ़ते रहते हैं, सोचने में लगा रहता है। व्याख्यान के ढङ्ग पर पढ़ाने से लड़के का दिमाग़ इधर उधर चलता रहता है—और इसके अतिरिक्त कई बातें हमसे ऐसी निकल जाती है जिनको कि बेचारे बच्चे समझ ही नहीं पाते। इस विषय पर आगे चलकर प्रकाश डाला जायगा।

वृक्ष से रक्त स्नान

शंघाई (डाक द्वारा) फंगटिन के चिनची नामक स्थान में एक चीनी के बाग में देवदारु का एक वृक्ष है। परिवार के अच्छे दिनों में वृक्ष बिलकुल हरा भरा था, पर ज्यों ज्यों मकान मालिक के बुरे दिन आने लगे त्यों २ वह सूखने लगा। यहां तक कि उसमें कुछ शाखायें और पत्तियां हरी रह गई। इतना ही नहीं लोगों ने उससे खून बहते हुये देखा है। यह घटना उस वक्त हुई जब चीनी परिवार के लोग सूखे वृक्ष को काटने लगे। काटने पर जल की जगह रक्त स्नान होने लगा। यह विचित्र घटना देख कर लोग स्तब्ध हो गये और वृक्ष काटना एक-दम बन्द कर दिया।

एक विज्ञानी अन्धा हो गया

टोकियो (डाक द्वारा) एक जापानी वैज्ञानिक सूर्य के काले धब्बों की जाँच कर रहा था। इस प्रयत्न में उसकी दोनों आंखें फूट गई।

दर्शन प्रतिमा में कौन सा गुणस्थान होता है?

(ले०—श्रीमान पं० दरबारीलाल जी जैन "कोठिया" स्या० म० काशी)

जैनमित्र अंक ४८, वर्ष ३६ में उक्त शीर्षक से एक शंका प्रकाशित हुई थी। उसका यहां शास्त्रीय प्रमाणों द्वारा समाधान करने की चेष्टा करेंगे। आशा है उससे जिज्ञासु महानुभाव एवं पाठकों को लाभ होगा।

जैन शास्त्रों में जहां पर प्रतिमाओं का प्रतिपादन है, वहां वे प्रतिमायें श्रावकों के ११ दर्जे रूपसे वर्णित हैं। अतः यह स्पष्ट है कि श्रावक अवस्था पंचम गुणस्थान में होती है, तथा च दर्शन प्रतिमा पंचम गुणस्थानान्तर्गत कही जायगी। अर्थात् व्रतादि प्रतिमाओं की विवक्षा न भी की जाय तो भी दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान जैन शास्त्रों में माना गया है। जैसा कि पंचाध्यायी और लाटी संहिता के प्रसिद्ध कर्ता अध्यात्मरस के बडे अनुभवी कवि राजमल्ल जी लाटी संहिता के सम्यग्दर्शन सामान्याधिकार में श्लोक १२६ से १४८ तक दर्शन प्रतिमा का विशेष व्याख्यान करते हुये कहते हैं—

अथ क्रियां तामेव कुलाचारोचितां वराम्।
व्रतरूपेण गृह्णाति तदा दर्शनिको मतः ॥१३४॥

भाव यह है कि जिस समय कुलाचारोचित क्रिया (सप्तव्यसनत्याग, अष्टमूलगुण, सम्यग्दर्शन) को व्रतरूप से ग्रहण करता है उस समय से दर्शनिक अर्थात् दर्शन प्रतिमा वाला कहा जाता है।

यथा च—

दर्शनप्रतिमा चास्य गुणस्थानं च पंचमम्।
संयता संयताऽप्यथ संयमोऽस्य जिनागमात् ॥

अर्थात् उस दर्शनिक के दर्शन प्रतिमा, पांचवां गुणस्थान, और संयमासंयमाख्यसंयम जिनागम में कहा है। आगे राजमल्ल जी ने बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान ही होता है चतुर्थ नहीं—यथा—

दृगाद्येकादशान्तानां प्रतिमानामनादितः।
पंचमेन गुणेनामा व्याप्तिः साधीयसी स्मृता ॥
ननु या प्रतिमा प्रोक्ता दर्शनाख्या तदादिमा ॥
जैनानां सास्ति सर्वेषामर्थादव्रतिनामपि ॥
मैवं सति तथा तुर्य-गुणस्थानस्य शून्यता।
नूनं दृक्प्रतिमा यस्माद् गुणे पंचमके मता ॥
मैवं (ननु) दृक्प्रतिमामात्रमस्तु तुर्ये गुणे नृणां।
व्रतादि प्रतिमा शेषाः सन्तु पंचमके गुणे ॥
मैवं सति नियमाद्यावव्रतित्वं कुतोऽर्थतः।
व्रतादि प्रतिमासूक्तैरव्रतित्वानुषंगतः ॥

अर्थात् दर्शन प्रतिमा से लगा कर ११ वीं प्रतिमा तक केवल एक पंचम गुणस्थान ही होता है। यहां शंकाकार का कहना है कि "दर्शन प्रतिमा तो सभी अव्रती जैनियोंको मानना ठीक है। पंचम गुणस्थान में नहीं" उत्तर-यह कहना ठीक नहीं क्योंकि चतुर्थ गुणस्थान की शून्यता का प्रसंग आवेगा। शंकाकार फिर कहता है कि "दर्शनप्रतिमा चतुर्थ गुणस्थान में मानिये और व्रतादि प्रतिमायें पंचम गुणस्थान में मानिये, पांचवें गुणस्थान में दर्शनप्रतिमा मानना ठीक नहीं है. (उत्तर) यह कहना भी ठीक नहीं क्योंकि दर्शनप्रतिमा वाला नियमादि का पालन करता है और नियमादि व्रत रूप हैं अतः दर्शनप्रतिमामें चौथा गुणस्थान मानने से नियमादि में अव्रतत्व का अनुषंग आवेगा आगे की

प्रतिमाओं में भी यही दोष होगा।

इस उपयोगी समाधान से यह निर्विवाद सिद्ध हो जाता है कि दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान मानना सयुक्तिक है। आगे राजमल्लजी दर्शन प्रतिमा वाले को अष्टमूल गुणों का परिपालन, तथा सप्तव्यसन का त्याग और सम्यग्दर्शन इन तीनोंका होना अनिवार्य एवं आवश्यक बतलाते हैं। यथाः—

यथा मूलगुणादानं द्यूतादिव्यसनोज्झनम्।
दर्शनं सर्वतश्चैतत्त्रयं स्यात्प्रतिमादिमा॥

अतः राजमल्ल जी के उक्त विवेचनसे दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान अवश्य मानना होगा। अब अन्य आचार्यों के भी अभिमतों को सुनियेः—

आचार्य अमितगति अपने श्रावकाचार में ११ प्रतिमाओं का निर्देश करते हुये दर्शनप्रतिमा में पांचवां गुणस्थान ही बतलाते हैं यथा—

एकादशोक्ता विदिताथतत्त्वैरुपासकाचारविधेर्विभेदाः
पवित्रमारोढुमनल्पलभ्यं सोपानमार्गा इव सिद्धिसौधम

अर्थात् श्रावक के आचार की विधि के ११ भेद कहे हैं वे भेद मोक्ष रूपी महल में चढ़ने के लिये ११ सीढ़ियां हैं। यहां पर दर्शन प्रतिमा को भी उपासक का एक प्रथमदर्जा बतलाया है और उपासकावस्था पंचम गुणस्थान की ही है। आगे इसी प्रतिमा के उपसंहार में टीकाकार पं० भागचन्द्र जी भी यही कहते हैं यथाः—

"बहुरि अप्रत्याख्यानावरणके उदय के अभावतें देशविरतनामा पंचमगुणस्थान होय है ताकें दर्शनप्रतिमा सें लगाय ऊपर ऊपर विशुद्धता की अधिकतातें ११ भेद कहे हैं"।

आचार्य कुन्दकुन्द इस विषय में क्या उपदेश करते हैं इसको भी सुनिये—

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्त रायभुत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह अणुमण उद्दिट्ठ देसविरदोय॥

भाव— दर्शन, व्रत, सामायिक, प्रोषध, सचित्त त्याग, रात्रिभुक्तित्याग, ब्रह्मचर्य, आरंभ त्याग, परिग्रह त्याग, अनुमति त्याग, अनुद्दिष्ट इस प्रकार यह देश-विरती अर्थात् पंचमगुणस्थानवर्ती का चारित्र जानना श्री श्रुतसागर सूरि इस गाथा की व्याख्या में—दर्शन प्रतिमा वालेको भी बहुतकुछ आचार (त्याग) अनिवार्य एवं आवश्यक बतलाते हैं। इस त्याग की हैसियत से दर्शनप्रतिमा में पांचवां गुणस्थान शास्त्रों में कहा है। जिज्ञासु महानुभाव माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला से निकले हुये षट्प्राभृतादि संग्रह के चारित्राधिकार पृष्ठ ४३ पर देख लेने की कृपा करें।

स्वामी समन्तभद्र जी रत्नकरंड श्रावकाचार में दर्शन प्रतिमा को पांचवें गुणस्थान में गर्भित करते हैं यथाः— "श्रावकापदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु" इत्यादि।

आचार्य वसुनन्दि भी अपने श्रावकाचार में दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान बतलाते हैं यथाः—

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्त रायभुत्तीय।
बंभारंभपरिग्गह अणुमदमुद्दिट्ठ देसविरदम्हि॥

स्वामी कार्तिकेय का भी यही अभिमत है यथाः—

बहुतससमण्णिदं जं मज्जं मांसादिणिंदिदं दव्वं।
जो णय सेवदि णियमा सो दंसण सावओ होदि॥

कार्ति० पृ० १७७

इसका अर्थ पं० जयचन्द्र जी के शब्दों में ही सुनियेः—"मदिरा अर मांस अर आदि शब्दतें मधु अर पंच उदम्बर फल ए वस्तु बहुतत्रस जीवनिके घात-करि सहित हैं तातें दार्शनिक श्रावक है सो तिनकूं भक्षण न करै" आगे आप कहते हैं "इहां दर्शन

नाम सम्यक्त्व का है तथा धर्म की मूर्ति सर्व के देखने में आवे ताका भी नाम सम्यग्दर्शन है सो सम्यग्दृष्टी होय जिनमतकूं सेवे अर अभक्ष्य, अन्याय अंगीकार करै तो सम्यक्त्व कूं तथा जिनमतकूं लजावे मलिन करै तातैं इनकौं नियम करि छोड़े ही दर्शन प्रतिमाधारी श्रावक होय है" आगे स्वामी जी ने पहिली प्रतिमा वाले को दृढ़ चित्त, निदानरहित और वैराग्यभावना में अनुरक्त ये तीन गुण और आवश्यक बताये हैं। खुलासा वहीं से देख लें। इस ग्रन्थ में पृष्ठ १५७ पर गृहस्थ धर्म के १२ भेद कहे हैं पूर्वोक्त ११ प्रतिमायें और शुद्ध सम्यक्त्व। गाथा—३०५, ३०६ देखें। इन गाथाओं के भावार्थ में पं० जयचन्द्र जी कहते हैं "पहला भेद तौ पच्चीस मलदोष रहित शुद्ध अविरत सम्यग्दृष्टी है। बहुरि ग्यारह भेद प्रतिमा के व्रतनिकरि सहित होय सो व्रती श्रावक है" अर्थात् जिस प्रकार ग्रन्थान्तरों में दर्शनिकादि रूपनैष्ठिक श्रावक से पहिले पाक्षिक श्रावक का दरजा बताया गया है उसी के स्थान में स्वामी जी कार्तिकेय नैष्ठिक के पहिले पाक्षिक को न कहकर शुद्ध सम्यक्त्व को बतलाते हैं। पं० जयचन्द्र जी को "व्रती" इस शब्द से देशव्रती ग्रहण करना अभीष्ट है। जिससे दर्शन प्रतिमा में पांचवां गुणस्थान होना निकलता है।

पं० आशाधरजी क्या कहते हैं इसको भी सुनिये:-

मूलोत्तर गुण निष्ठामधितिष्ठन् पंचगुरुपदशरण्यः।
दानयजनप्रधानो ज्ञानसुधां श्रावकः पिपासुः स्यात्॥

श्लो० १५ प्र० अ०

यह सूत्रोक्त लक्षण सामान्यश्रावक का बतलाया है। स्वोपज्ञ टीका में श्रावक का अर्थ "शृणोति गुर्वादिभ्यो धर्ममिति श्रावकः देशसंयतः" देशसंयत (पांचवां गुणस्थान वाला) किया है। अतएव इस श्लोक के आगेके श्लोक "रागादिक्षय" इत्यादि के लिये आप इस रूप में भूमिका रचते हैं।—"एवं पंचमगुणस्थानं निर्दिश्य तद्विकल्पानां भावद्रव्यात्मना मेकादशमुपासकपदानां मध्येऽन्यतमं विशुद्धदृष्टि महाव्रतपरिपालनलालसो यथात्मशक्तिः यः प्रतिपद्यते तमभिनन्दति" इस भूमिका में स्पष्टतया पांचवें गुणस्थान के ही भेद दर्शनादि प्रतिमायें बतलाई हैं। तब दर्शन प्रतिमामें पाँचवां गुणस्थान क्यों न माना जावे? आगे इसी भूमिका के श्लोक के तृतीयपाद एवं चतुर्थ पाद को भी सुनिये—

"सद्दर्शनिकादिदेशविरति स्थानेषु चैकादश
स्वेकं यः श्रयते यतिव्रतरतस्तं श्रद्दधे श्रावकं॥

अर्थात् जो मुनिव्रताभिलाषी श्रावक देशविरतनामक पंचमगुणस्थान के दर्शनिक आदि ११ भेदों में से एक भी भेद को आश्रयण करता है, (धारण करता है) उस श्रावक को मैं साधुवाद देता हूं।

शास्त्रों में श्रावक के तीन भेद किये हैं १ पाक्षिक २ नैष्ठिक ३ साधक। पाक्षिक वह है जो संयम में उद्यमी है इसको प्रारब्धदेश संयम भी कहते हैं। नैष्ठिक वह है जो निरतिचार श्रावक धर्म को पालने में लग गया हो इसको घटमान देश संयम भी कहते हैं। और साधक वह है जो समस्त देश संयम को प्राप्त कर चुका हो, समाधिकरण को साधता है इस को निष्पन्नदेश संयम भी कहा है। जैसा कि पं० आशाधर जी ने सागारधर्मामृत में बतलाया है—

पाक्षिकादिभिदा त्रेधा श्रावकस्तत्र पाक्षिकः।
तद्धर्म गृह्यस्तन्निष्ठः नैष्ठिकः साधकः स्वयुक्॥
प्रारब्धो घटमानो निष्पन्नश्चार्हतस्य देशयमः।

योग इव भवति यस्य त्रिधा स योगीव देशयमी ॥
॥इति॥

अब विचारणीय यह है कि जब पाक्षिक को भी पंचम गुणस्थानवर्ती बतलाया है तब दार्शनिक के जो कि नैष्ठिक का भेद है पाँचवाँ गुणस्थान वाला क्यों न माना जावे ? मतलब यह है कि दर्शन प्रतिमा वाला निरतिचार अष्टमूलगुण आदि पालन करता है जब कि पाक्षिक सातिचार अष्टमूल गुण आदि का पालक है। दर्शन प्रतिमा वाले का संयम के विषय में पाक्षिक की अपेक्षा क्षेत्र बढ़ जाता है और उसका पूरा उत्तरदायित्व उसपर रहता है, पाक्षिक में यह बात नहीं है। दर्शन आदि प्रतिमायें नैष्ठिकके भेद है जैसा कि ज्ञानानन्द श्रावकाचारमें कहा है "निर्मल दर्शनकी संजुक्त तीन प्रकारके— जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट संजमी श्रावक जानने सो पाक्षिक विषै अरु साधक विषै ग्यारह भेद नाहीं नैष्ठिक विषै ही है" और नैष्ठिक अवस्था निःसंदेह पंचम गुणस्थानमें वर्णित है। यद्यपि दर्शन प्रतिमा में त्याग की मात्रा आ जाने से क्रिया कांड का पालक कहा जाता है एवं च व्रत प्रतिमा की समानता को भी धारण करता है तथापि इन दोनों में अन्तर है। दर्शन प्रतिमा में सम्यक्त्व की तरफ मुख्य दृष्टि रहती है सम्यक्त्व पूर्णतया निर्दोष नहीं होजाता है। व्रतादि प्रतिमाओं में क्रिया कांड की तरफ मुख्य दृष्टि रहती है, सम्यक्त्व में तो पहिले से ही दृढ़ रहता है यही दोनों में विशेषता है। गुणस्थान दोनों जगह पाँचवाँ है, क्योंकि त्याग उभयत्र है।

आचार्य सकलकीर्ति के धर्म प्रश्नोत्तर वा पं० मेधावीजी के धर्म संग्रहको भी देखनेसे उक्त विवेचन की पुष्टि हो जाती है। विचारशील पाठक इसको वहीं से देखलें विस्तार भावसे यहां नहीं लिखा।

इन थोडेसे प्रमाणोंद्वारा यह सिद्ध होजाता है कि दर्शन प्रतिमा में पांचवाँ गुणस्थान ही होता है। इस में अज्ञान एवं प्रमादवश कोई भूल रह गई हो तो उसे विद्वज्जन क्षमा करते हुये विशेष खुलासा करने की कृपा करें।

जाल

[एक इङ्गलिश कहानीका स्वतन्त्र अनुवाद]

अनुवादक—श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी न्यायतीर्थ

"लज्जा" हिल्दा ने कहा "एक अपराध है। मालूम होता है आज कल के एटीकेट से बिलकुल अनजान हो। ओह ! एक भद्दा और बिलकुल बेहूदा ढंग !"

हिल्दा का चेहरा बहुत प्रभाव शाली था पर इस के विरुद्ध रोनेल्ड एक लज्जालु और छैल छबीला युवक था। वह और भी शर्मिन्दा हो उठा। चांद की चांदनी में उस का मुख लज्जा से लाल दिखाई देने लगा।

हिल्दा फिर तेजी से बोली "बात २ में झेंपना निमोनिया हो जाने से भी बुरा है। आज कल के युवकों को इस भयानक बीमारी का शिकार नहीं होना चाहिए।"

रोनेल्ड अपने टाई के बन्धन से तंग आकर तुतलाते हुए बोला "पर मैंरे तो निमोनिया नहीं।"

"आ ! इतना भोलापन ! मेरा मतलब लज्जा से है पागल !"

रोनेल्ड ने कोई जवाब नहीं दिया। उस के कोने से कमरे के छज्जे पर चांदनी छिटक रही थी। उसने देखा हिल्दा का सुन्दर और अलबेला मुख उस चांदनी में कैसा खिलरहा है। अब उसको मालूम हुआ हिल्दा एक अजीब लड़की है। आज के ६ महिने पहले भी उसने इसका निर्णय कर लिया था पर इस सम्बन्ध में कुछ भी कहने से वह हमेशा डरता रहा।

हिल्दा ने जरा कोमल स्वर से कहा "अहा ! क्या यह अद्भुत चांदनी नहीं है ?"

"पर लोगों का कहना है यह कुछ मनुष्यों को पागल भी बनादेती है।" रोनेल्ड ने जवाब दिया।

हिल्दा निराश होकर देखने लगी। उसने सोचा वह अपने दिल की बातें उसे कैसे खोल कर कहे? कुछ देर तक उसने अपना सुन्दर दिमाग इस समस्या को हल करने के लिये लड़ाया पर इस समय उसने भी धोखा दिया।

वह कुछ ठहर कर फिर कहने लगी "मैं ख्याल करती हूं आज की रात को बम्बई में हजारों युगल इस सुन्दर चन्द्र का आनन्द लूटते होंगे"

"हां, मैं भी ऐसा ही विचारता हूं।"

"और शायद उन में से अधिक एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए मीठी २ बातें बनाते होंगे।" हिल्दा की आवाज और भी धीमी पड़ गई।

रोनेल्ड ने जरा कष्टसे अपना आसन बदला। उस ने बात पलट कर कहा "आजकल तरह २ के मलाई के बरफ चल पड़े हैं। क्या तुम भी मलाई का बरफ खाना पसन्द करती हो ?"

यह कह कर वह अपनी कुर्सी से उठने लगा। हिल्दा भी उस के पीछे २ आने लगी।

"रोनेल्ड ! तुम क्यों मुझे अधिक फिक करते हो हां, तुम ···· रोनेल्ड !" हिल्दा ने कहा। उस का मुंह बिलकुल उदास और खिन्न होगया। रोनेल्ड ने उस की ओर मुड़ कर देखा तक नहीं।

थोड़ी दूर आकर उस ने ज़रा तेजी से पूछा " लेकिन क्यों ? "

" ख़ैर, क्यों तो कोई बात नहीं। पर क्या तुमने आज रात को मलाई के बरफ़ पर तर्क वितर्क करने ही के लिये मुझे बुलाया था ? " वह अत्यन्त दुःखित होकर बोली।

" नहीं, नहीं, मैं ने तो तुम को सपर के लिये निमन्त्रण दिया था। "

हिल्डा ने ताली बजाई।

"क्यों कहीं इतना भोला पुरुष भी हुआ है" उस ने रोते हुए कहा।

वह क्षण भर के लिये चुप रही और तब फिर शुरू करने लगी " क्यों, रोनी ! क्या तुम मुझे प्रेम करते हो ? "

रोनी का दिल ज़ोरों से धड़कने लगा।

" अच्छा " बस, रोनी इस के आगे न बढ़ सका। रोनी को सचमुच आज तक यह कहने का मौका नहीं मिला था कि वह स्वयं उस के लिये पागल हो रहा है और वह उससे सारे संसार से भी अधिक कीमती वस्तु मांगता है। उस का ख़याल था अगर वह उस से इस सम्बन्ध में कुछ कहेगा तो वह उस को केवल झिड़केगी ही।

हिल्डा उस सुन्दर और सुशील लड़के पर पूरी तरह मुग्ध हो चुकी थी। वह अपने सुकोमल हृदय को किसी भी अन्य युवक के लिये समर्पित न करने का बहुत अर्से पहले ही इरादा कर चुकी थी।

उस ने फिर कुछ अटक कर कहा " क्या तुम मुझे प्यार· · · "

रोनी हर्ष से बोल उठा " अच्छा, चलो, अन्दर चलकर थोड़ा सा सपर करें। "

उसी समय दोनों प्रेमी एक कमरे में चले गये। कमरे में एक टेबिल और दो कुर्सियां सजी हुई थीं। टेबिल पर दो व्यक्तियों के सपर का सामान रक्खा हुआ था। शीघ्र ही एक सफेद वस्त्र धारी नौकर सामने आ खड़ा हुआ।

हिल्डा और रोनी दोनों बैठ गये। कुछ देर तक दोनों चुप रहे। आखिर हिल्डा ने ही कुछ ढिठाई से शुरू किया " क्यों रोनी ! तुम कितने बड़े हो ? "

" यह २५वां वर्ष चल रहा है " उस ने कुछ लज्जित हो कर जवाब दिया।

" जय हो परमात्मा की ! तब तो सच मुच तुम्हारे घर की सम्हाल के लिये तुम को एक साथी की ज़रूरत है। देखो, इस कुर्सी पर कितनी गर्द जमी हुई है। "

" मेरे नौकर, हिल्डा ! यद्यपि हमेशा अपने कर्त्तव्य पर रहते हैं, पर तुम जानती हो "

" नहीं, मैं कुछ नहीं जानती हूं। सुनो, मैं फिर कहती हूं—ओफ ! तुम समझे नहीं—तुम्हारा विवाह होना चाहिए। ज़रा सोचो तो सही-गार्हस्थ्य जीवन कितना पवित्र और स्वर्गीय है। "

बस, वह वहीं रुक गई। उसने उसका हाथ अपने हाथ में मज़बूती से दबा लिया। उस ने देखा रोनी के मुख मण्डल पर एक विचित्र लालिमा दौड़ गई है। उस ने अनुभव किया जैसे उस की दोनों भुजाएं रोनी के गले में और रोनी का घुंघर वाले बालों वाला शिर उसके कंधे पर है। उसने कई बार इस पर विचार किया है कि क्या मेरे प्रेमी को अब भी कुछ समझ आई है जिस से वह विवाह के लिये राजी

हुआ हो। पर वह अब कभी उससे विवाह का प्रश्न छेड़ती, उस की जबान तुतला जाती, वह अटक २ कर बोलने लगता और मछली की तरह सिकुड़ जाता

रोनी का हाथ भय और लज्जा से कांप रहा था हिल्डा ने उस रात उसके हाथ—जो परस्पर स्पर्श से गरम हो उठा था—को इसी तरह छोड़ दिया। वह जाने लगी।

रोनी ने हिम्मत करके कहा "अच्छा, कल शाम को फिर सपर के लिये आओगी।"

हिल्डा ने अपने एकांत कमरे में बैठ कर रोनी के साथ उसका विवाह कैसे हो इस पर खूब गंभीर विचार किया। अन्त में उस को एक जाल रचने की सूझी। बहुत सबेरे वह अपने एक अन्य मित्र से मिली। उसने कहा-

"ओहन! क्या तुम मेरा कुछ मदद करोगे?" और तब उस ने अपना सारा हाल थोड़े में ही कह सुनाया

"सुन्दरी! मैं तुम्हारे लिये सब कुछ करने को तैय्यार हूं।" ओहन नम्र होकर बोला। "अच्छा तुम रोनी को जानते हो?"

"हाँ, खूब, हम दोनों स्कूल में कई दिनों तक एक साथ पढ़े हुए हैं।"

"अच्छा, मैं चाहती हूं आज रात को तुम उसके मकान पर चुप चाप चले आओ। एक केमरा भी अपने साथ रखना। कोई पहचान न ले, मुंहपर सफेद पाउडर लगा आओ तो अच्छा है। किसी तरह उसके कमरे तक पहुंच कर छिप जाओ। ईश्वर के लिए रोनी को यह मत जानने देना कि तुम वहां हो। कमरे के छज्जे की दायीं तथा बायीं ओर बहुत सारे खजूर के वृक्ष हैं। किसी के पीछे जा छिपको। जब तक फोटो नहीं खींच लो, वहां से बिलकुल न हटना कोई चिन्ता नहीं, जो होगा सो देखा जायगा।

ओहन ने हंस कर कहा "अच्छा, क्या खूब! मैं समझ गया—तुम दोनों का फोटो चाहती हो।"

"हां, जब तुम मुझे 'प्यारे रोनी!' यह कहते हुए सुनो, झट से हमारा फोटो लेकर रूफ्पत बोलना बहुत संभव तो यह है कि जब रोनी को यह मालूम हो जायगा कि किसी ने हम दोनों का—एक दूसरे का अलिंगन करते समय चित्र खींच लिया है तो मुझे फोटो की जरूरत पड़ेगी ही नहीं। पर यदि कहीं जरूरत हुई तो मैं तुम्हें इशारा कर दूंगी।"

"अच्छा, सब कुछ ठीक हो जायगा" इस के बाद ओहन और हिल्डा दोनों अलग हो गये।

दूसरी शाम फिर वही रोनीका चन्द्रमा की शीतल किरणों से चमकता हुआ कमरा।

आज हिल्डा ने रोनी से एक ही कोच पर अपने पास बैठने का आग्रह किया। यह पहला अवसर था जब रोनी और हिल्डा दोनों एक ही कोच पर बैठे थे। दोनों कमरे के बाहर बरामदे में बैठे हुए थे। जब रोनी कमरे के अन्दर सिगार लेने के लिए गया, ओहन खजूरों में से दाहिनी ओर से झांका और धीरे से हिल्डा को सूचित किया—

"मैं यहां अच्छी तरह हूं।"

रोनी के बाहर निकलते ही ओहन पुनः ज्यों का त्यों हो गया।

जब रोनी उसके पास आकर बैठ गया, हिल्डा ने अधीर हो कर पूछा—

"क्या तुम कह सकते हो कि तुम्हारा मेरे प्रति अटल और अमर प्रेम है?"

"अ ई ई...... ..." रोनी कहते रुक गया। उस के शरीर में सनसनाहट सी होने लगी।

दोनों आपस में लिपट गये। दोनों के होंठ मिले हुए थे। एक दूसरे के श्वास से दोनों के होंठ गरम और वासना-पीड़ित हो उठे। हिल्डा ने आँखें बन्द कर लीं। ज्यों ही उस ने अपनी आँखें खोलीं, रोनी के ज़बान से यकायक निकल पड़ा "प्यारी हिल्डा!"

अकस्मात् बायें खजूरों की ओर से कुछ खट २ और खेंचातानी कीसी आवाज हुई।

हिल्डा जैसे हड़बड़ा गई हो। उसने अनजान होने का बहाना किया। अचरज से बोली "यह क्या हुआ?"

"हिल्डा! प्रिय हिल्डा! शायद किसी बदमाश ने दोनों के आलिंगन करते समय हमारा फोटो खींच लिया है।"

"तो अब!"

"हिल्डा! अब हम को ...."

"हाँ, विवाह कर लेना चाहिये"

वेल, य किस देन"

हिल्डा आल्हादित हो कर बोल उठी—

"प्यारे! मेरे प्यारे रोनी!" बायें खजूरों की तरफ फिर उसी तरह आवाज हुई। जैसे कोई सीढ़ियों से उतर भाग निकला हो। रोनी ने गहरी सांस ली।

"अच्छा यह कौन था? हिल्डा डार्लिंग। आखिर उसने हमारी फोटो खींच लेनेका प्रबन्ध कैसे किया?

हिल्डा रोनी के भोलेपन पर हंस पड़ी।

❋ ❋ ❋

श्री दि० जैन पार्श्वनाथ शान्तिनिकेतन

माननीय आत्मकल्याण के इच्छुक सज्जनों को सादर सूचित किया जाता है कि पार्श्वनाथ स्टेशन (ईसरी) पर श्री दि० जैन पार्श्वनाथ शान्तिनिकेतन की स्थापना मिती आसोज सुदी १० को होगई है। उसके संचालन का १ वर्षका भार १००) मासिक स्वीकृत कर बांकीपुर निवासी श्रीमान सेठ सूरजमल जी जैन ने लिया है। आपकी तरफसे ही निकेतन की जमीन खरीदी गई है। जो सज्जन आत्मकल्याण करना चाहें वे ६) मासिक देकर यहां आहार ग्रहण करें, नहीं देना चाहें तो निकेतन को आहारादि प्रदान करने में जरासा भी संकोच या भेदभाव न होगा।

"जैनदर्शन" में सेठ कस्तूर चन्द जी नवादा वालों ने जो यह विज्ञप्ति प्रकाशित कराई थी कि श्रीमान पं० गणेश प्रसाद जी वर्णी उसके संरक्षक हैं। यह बात ठीक नहीं है। पूज्य वर्णी जी भी जिज्ञासुकी तरह निकेतन में चार मास से रहकर आत्मकल्याण अपनी इच्छानुसार कर रहे हैं और करेंगे। जो भाई वहां स्वाध्यायका लाभ लेना चाहेंगे उसमें किसी प्रकार की बाधा न होगी। पर इसका संचालन भार सेठ सूरजमल जी वालों ने लिया है। इस विषय में जो सज्जन किसी प्रकारकी भी जानकारी करना चाहें वे नीचे लिखे पते पर करें। पत्रका उत्तर यथासमय दिया जायगा।

पन्नालाल काव्यतीर्थ—मंत्री श्री० दि० जैन पार्श्वनाथ शान्तिनिकेतन
पारशनाथ—जिला हजारी बाग।

उद्गार

(रचयिता—चांदमल जैन "शशि" बी० ए० विशारद)

हृदय हमारा उमड़ पड़ा, है-
नयनों में जल बिन्दु।
हृत्तल से हट कपट-तिमिर अब,
प्रकट हुआ प्रणयेन्दु ॥

आवो-आवो, मिलो परस्पर,
तनिक न देर लगाओ।
दलित, पतित, अपराधी को भी—
गले लगा, अपनाओ ॥

(३)

जो भूले-भटके भाई हैं
उन्हें न और भुलाओ।
उनका कर अपराध क्षमा—
तुम अपनी ओर मिलाओ।

(४)

जाति-बहिष्कृत करना-
नूतन विपदा है अपनाना।
कटु-वाक्योंका उच्चारण है,
वैर-विरोध बढ़ाना ॥

(५)

घृणा घृणासे, प्रेम प्रेमसे
जगमें संभव होता।
मधुर वचन कर वपन प्रेमका-
मन का आपा खोता ॥

(६)

सोचो ! क्या उस जाति-मातृ की-
हम न एक ही सन्तान।
जिसने पोषण किया हमारा
देकर जीवन-बलदान।

(७)

एक लता के मीठों के संग,
कड़वे फल भी लगते।
पर, क्या लता उन्हें तज देती ?
नहिं, वे भी हैं फलते।

(८)

फिर हम तुच्छ बात पर करते
क्यों भाई का अपमान ?
और हमारी जड़ता क्या—
होगी इससे भी बलवान ?।

(९)

हृदय हमारा हो न संकुचित,
विस्तृत हो बढ़ जावे।
भाईकी क्या बात ? विश्व भी—
उसमें क्यों न समावे ?

ईश और उसका विश्वकर्तृत्व

(प्रणेता—चन्द्रकान्त शांडिल्यः शास्त्री "मधुर" मुलतान

[लेखक महोदय का परिचय—लेख प्रारम्भ होने से पहले लेखक का पाठक महानुभावों को परिचय करा देना आवश्यक है। श्रीयुत पं० चन्द्रकान्त जी स्थानीय "संस्कृत महाविद्यालय" के प्रधान अध्यापक, मुलतान नगरके गणनीय व्यक्ति श्रीमान पं० चूड़ामणि जी शास्त्री के नवयुवक, सहृदय विद्वान सुपुत्र हैं। आपने ईश्वर जगतकर्तृत्व पर अपने विचार प्रगट किये हैं—आगामी अंक में इस लेख का उत्तर प्रकाशित किया जावेगा।]

—संपादक

प्रमेय का परीक्षक प्रमाण है। प्रमेयों में खरा खोटा की परख रखने के लिए प्रमाण की विद्यमानता है। इस लिये तो कहा है—'नहि प्रमाणमन्तरेण प्रमेयसिद्धिः"। अर्थात् प्रमाणों से प्रमात्व सिद्ध होने पर प्रमेय वस्तुतः प्रमेय है।

प्रमाण एक नहीं। प्रमाणों की सद् विद्यमानता में यद्यपि किसी दार्शनिक विद्वान की मीन मेख नहीं है; फिर भी प्रमाण गणना वैषम्य अवश्य उपस्थित हुआ है। अस्तु

प्रत्यक्षानुमानोपमानागमादि प्रमाणों में अनुमान का स्थान महत्व पर है। प्रत्यक्ष और आगम प्रमाण तो स्वतः सिद्ध होने से किन्तु परन्तु की हवा से अछूते हैं। उपमान का अनुमानान्तर्गत होने से अथवा अनुमान का अवान्तर होने से या अनुमान के समानावस्थान से कोई विशेष महत्व नहीं। अतः ईश के विश्वकर्तृत्व में प्रमेयत्व साधक अनुमान को उपस्थित करते हैं।

"कर्ता" का अर्थ है, करने वाला। कर्ता पदार्थ मय नहीं हो सकता। पदार्थ से भिन्न रह कर ही पदार्थ का संयोग वियोग—कर्तृत्वावच्छिन्न हो सकता है। जो पदार्थ कृत होता है वह प्रागभाव सम्पृक्त अवश्य होता है। जिसका प्रागभाव नहीं वह कृत नहीं। जैन ग्रन्थों में "स्कन्धाश्च स्कन्धदेशाः प्रदेशाश्च भवन्ति परमाणवः"—भी परमाणु पुञ्ज में स्कन्ध का प्रागभाव नियत है। यदि इसमें "न" कार स्थान है तो स्कन्ध नित्य कोटि में आकर परमाणुओं के अत्यन्ताभाव का हेतु हो जायगा।

अर्थात् यदि स्कन्धों का प्रागभाव मानो तो परमाणु सिद्ध हैं। नहीं तो परमाणु अत्यन्ताभाव गिने जावेंगे। अगर अत्यन्ताभाव मान लें तो परमाणु की सत्ता का व्याघात होता है। यदि स्कन्ध भी प्रागभावसे असम्पृक्त है और परमाणु भी विद्यमान हैं तो स्वपक्षविघात दोष का स्थान है। क्योंकि वैधर्म्य सम्बन्ध कभी संयुक्त नहीं रह सकता। अगर आप मानलें कि स्कन्धोंका प्रागभाव है, तो परमाणुओं की कारणता सिद्ध है।

यहां प्रश्न है कि परमाणुओं से स्कन्ध किस सम्बन्धसे मानते हैं। समवायि अथवा असमवायि। यदि जैन ग्रन्थों में सम्बन्ध का स्थान नहीं तो विश्व में असम्बन्धत्वावच्छिन्न कोई पदार्थ ही नहीं। सम्बंध मानना ही पड़ेगा क्योंकि दार्शनिकों का इसपर एक मत है। अगर सम्बन्ध बिलकुल नहीं मानते तो

परमाणु पुञ्ज में 'एकत्व' व्यवहार अनुपयुक्त ठहरता है। अगर आप स्कन्ध की बजाय परमाणु पुञ्ज ही कहें तो ठीक है। परमाणुओं में बहुत्व सम्बन्धावच्छिन्न होनेपर 'एकत्व' व्यवहार दुष्कर होजायगा। यदि आप एकत्व व्यवहार करते हैं तो कितना आश्चर्य है कि अनेकों को एक कहें। दूसरे पक्ष में अगर आप सम्बन्ध मानें तो कौन सा सम्बन्ध मानेंगे। असमवायि सम्बन्ध तो हो ही नहीं सकता। कारण कि परमाणुओं में गुणाभाव होने से। समवायि सम्बन्ध हर हालतमें स्वीकार करना पड़ेगा। पूर्वपक्ष में परमाणुओं में सम्बन्ध न मानने पर और बहुत्वों में एकत्व होने पर आपके मतानुसार कई दोष आते हैं। पहला दोष तो यह है कि निर्गुणों में गुणत्व व्यवहार अनुपयुक्त ठहरता है। निष्क्रियोंमें क्रिया नहीं जँचती। इत्यादि इत्यादि।

अर्थात् परमाणुओं से स्कन्ध बनाकर कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य मानना पड़ेगा। नहीं तो दोषों का आगमन अनिरुद्ध है। सम्बन्ध मानने पर निमित्त कारण अवश्य आता है। क्योंकि परमाणु स्वयं तो निष्क्रिय तथा निर्गुण है। यदि परमाणु निष्क्रिय तथा निर्गुण होता हुआभी क्रिया कर सकता है तो परमाणु लक्षण फिर दोष से नहीं छूट सकता।

अर्थात् परमाणुओं के स्कन्ध संसर्ग में समवायि सम्बन्ध स्वीकार करने पर निमित्त कारण की आवश्यकता अवश्य है। नहीं तो परमाणु स्वयं दुष्ट होते हैं। निमित्त कारण की आवश्यकता होने पर परमात्मा ही निमित्त कारण उपस्थित होता है। क्योंकि मानवीय शक्ति के बहिर्भूत होने से।

जो परमात्मा परमाणु से स्कन्ध बनानेमें निमित्त है, वही परमात्मा स्कन्ध से संसार बनाने में भी निमित्त अवश्य है।

ईश और उसका विश्व कर्तृत्व—

गतशब्दों में परमाणु और स्कन्धके संयोग अन्य सम्बन्ध द्वारा ईश का विश्व कर्तृत्व सिद्ध किया गया। अब एक अनुमान उपस्थित किया जाता है—

"तत्र पदार्थो द्विधा-नित्यानित्यभेदेनेति' पदार्थ दो हैं; एक तो नित्य दूसरे अनित्य। नित्य पदार्थों का निर्माण और प्रलय असम्भव हैं जैसे आकाश। अनित्य पदार्थ कर्ता द्वारा एक समय में निर्मित होते हैं और समयान्तर में प्रलय को भी प्राप्त करते हैं।

"नित्याः खलु निर्माणप्रलयरिक्ता भवन्तिः अकर्तृत्वात्। यथा खम्। ये ये निर्माणप्रलयशून्या भवन्ति ते ते नित्यधर्माणश्च सन्ति॥ विपक्षे घट वत् यथा घटोहि निर्माणप्रलयवानस्ति, नाऽसौ नित्यः, आकाशवत्।" इसी प्रकार "परमाणु नित्यः, कारणाभावात्। निर्माणप्रलयधर्मावच्छिन्नत्वाच्च स्कन्धोऽनित्यः, विद्यमानकारणत्वान्निर्माणप्रलय धर्मावच्छिन्नत्वाच्च।"

जो पदार्थ कृत है उन की श्रेणी अनित्य नाम से है। सदा अनित्य पदार्थ देख कर उस का कर्ता अनुमानगम्य होता है मैं ने अपने घर में क्लाक रखा है। मैं तर्क करता हूं कि इस का कोई न कोई कर्ता अवश्य है। क्यों कि यह अनित्य है और करणीय गुण सम्पृक्त है परन्तु मैं ने इसके निर्माता के दर्शन नहीं किए। मैं अगर इसके कर्ता को न देख कर अनुमान लगा दूँ कि "घटिका नित्या, यथारूपावस्थानत्वात्, अस्य कर्तृत्वा दर्शनाच्च" ... ...तो यह दार्शनिक दृष्टि में अनुमानाभास होगा।

इसी प्रकार संसार में दृष्टिगोचर पदार्थों को देख कर अनुमान लगा सकते हैं कि ये अनित्य हैं, कृत्रिम होने से और करणीय गुण सम्पृक्त होने से। हम इन पदार्थों के कर्ता को न देख कर अनुमान लगा लें कि "इमे पदार्था नित्याः, यथारूपावस्थानत्वात् कर्तृत्वादर्शनाच्च" तो यह असदनुमान होगा। क्यों कि अनित्य पदार्थ कर्तृत्व धर्म वाले अवश्य हैं। "यत्र यत्र अनित्यत्वं तत्र तत्र कर्तृत्वं यथा यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वन्हि रिति अच्छिन्ननियमत्वात्" इस तरह से सिद्ध होता है कि अनित्य पदार्थ हमेशा कर्तृजन्य होते हैं॥

सूर्य चन्द्रादि अनित्य हैं, नाशवान होने से। अतः नाश धर्मवान होकर कर्तृजन्य अवश्य हैं–अगर कर्तृजन्य नहीं तो अनित्य भी नहीं हैं। परन्तु इनकी नित्यता सर्वथा असाध्य है। अतः इनकी कर्तृत्वापेक्षा में किसी न किसी का कर्तृत्व अनुमानगम्य करना ही पड़ेगा। यह कर्तृत्व मनुष्य गत नहीं हो सकता क्योंकि मानव अल्प शक्तिमान है। इन महान पदार्थों के निर्माण में किसी महानकी ही आवश्यकता है। वह महान —परमात्मा है।

कई महानुभाव प्रकृति को कर्तृत्व धर्मावच्छिन्न बतलाते हैं, मेरा उनसे प्रश्न है कि प्रकृति जड़ है कि चेतन। अगर जड़ है तो कर्तृत्व धर्मावच्छिन्न नहीं हो सकती। क्योंकि कर्तृत्वगुण चेतनस्य गुण है। अगर जड़ है और चेतन गुणयुक्त है तो एक पत्थर को भी जड़ हो कर चेतन गुणयुक्त होना चाहिये—क्योंकि जडता समान है। जड़ता में कमी पेशी नहीं चाहिये। अगर चेतन है प्रकृति, तो हम मानते हैं। जिसे आप चेतन प्रकृति समझते हैं तो हम उसे परमात्मा समझते हैं। जैसे घर, भवन, सदन, निकेतन, प्रसाद और हर्म्य एक ही भाव को जतलाते हैं वैसे ईश्वर और चेतन प्रकृति एक ही के नाम होंगे।

अतः अनित्य धर्मावच्छिन्न और मानवीय कर्तृत्व बहिर्भूत पदार्थोंके निर्माणमें ईश्वर अवश्य कारण है।

दूसरी बात— यदि प्रकृति निर्माण में निमित्त कारण है तो समवायि कारण कोई दूसरा उपस्थित करना चाहिये। जैसे शरीर और आत्मसंयोग में रजः और रेतः ही निमित्त कारण है। तो समवायि कारण की आकाङ्क्षा शेष रहती है। नहीं तो निर्माण असाध्य है। शरीर और आत्म संयोग में कारण की अपेक्षा विद्यमान है।

अतः प्रकृति के समवायि कारण के होने से निमित्त कारण की आवश्यकता अवश्य है। वह निमित्त परमात्मा है।

यदि रेतः और रजः के सांमश्र से आत्म संयोग होता है तो आत्म वियोग में वह शरीर, वीर्य और रज के रूप में क्यों नहीं बदलता। जो संयोग दूसरे संयोगका कारण है तो एक वियोगको दूसरेके वियोग का कारण होना चाहिये। वहाँ शरीर नाशक अग्नि की आवश्यकता है। जैसे वियोग में आवश्यकता है वैसे ही संयोग में किसी न किसी की आवश्यकता है। उस आवश्यकता का पूरक परमात्मा है। इस से यह सिद्ध हुआ कि ईश और उसका विश्वकर्तृत्व सर्वथा मान्य है।

रज और वीर्य का संयोग तो आत्म संयोग का कारण है तो आत्म वियोग रज और वीर्य के वियोग का कारण हो अगर वियोग दूसरे वियोग का कारण नहीं तो संयोगको दूसरे संयोगका कारण नहीं होना चाहिये।

विरोध परिहार

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

"जैनधर्म का मर्म" शीर्षक अपनी लेखमाला में पं० दरबारीलाल जी ने पूर्वपक्षस्वरूप सर्वज्ञसिद्धि के सम्बन्ध में अनेक बातें लिखी हैं। इनही में से एक ज्यौतिष ज्ञान सम्बन्धी है।

इसका यह तात्पर्य है कि यदि सर्वज्ञ न होता तो ज्योतिष ज्ञान का होना असंभव था।

दरबारीलाल जी सर्वज्ञ को स्वीकार नहीं करते अतः उन्होंने इसको भी स्वीकार नहीं किया है तथा इसके उत्तर स्वरूप निम्नलिखित बातें लिखी थीं— "आज जो जगत को ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान है वह किसी सर्वज्ञ का बताया हुआ नहीं है किन्तु विद्वानों के हजारों वर्ष के निरीक्षण का फल है। तारा आदि की बातें आंखों से दिखाई देती है उनके ज्ञान के लिये सर्वज्ञ की कोई जरूरत नहीं है। जो लोग जैन शास्त्र, जैनधर्म और जैन भूगोल नहीं मानते वे भी ग्रहण आदि की बातें बता देते हैं और जितनी खोज को हम सर्वज्ञ बिना मानने को तय्यार नहीं हैं उससे कई गुणी खोज आजकल के असर्वज्ञ वैज्ञानिक कर रहे हैं। ज्योतिष आदि की खोज से सर्वज्ञ की कल्पना करना कूप मण्डूकता की सूचना है।"

दरबारीलाल जी के इन वाक्यों के समाधान स्वरूप हमने निम्नलिखित वाक्य लिखे थे—"मौजूदा ज्योतिष ज्ञान विद्वानों के हजारों वर्ष के ज्योतिष सम्बन्धी अनुभव का फल है" अपने इस वक्तव्य के समर्थन में दरबारीलाल जी ने कोई प्रमाण उपस्थित नहीं किया। ऐसी अवस्था में विद्वान पाठक स्वयं सोच सकते हैं कि उनका यह वक्तव्य इस परीक्षा के अवसर पर क्या मूल्य रखता है। जहां कि दरबारीलाल जीने यह लिखा है कि वर्तमान ज्योतिष ज्ञान का आश्रय केवल विद्वानों का हजारों वर्ष का अनुभव है वहीं उनको यह भी लिखना था कि वे कौन २ से विद्वान हैं उनके अनुभव की वृद्धि किस २ प्रकार हुई किस २ ने कहाँ २ तक अनुभव प्राप्त किया और उन्होंने अपने अनुभवों को आगे २ के विद्वानों को किस २ प्रकार से दिया। बगैर इन सब बातों के सामने आये कोई श्रद्धालु तो दरबारीलाल जी के मौजूदा कथन पर विश्वास कर सकता है किन्तु परीक्षक के लिये तो इस कथन में तनिक भी सामग्री नहीं है।

दरबारीलालजीकी दूसरी बातके पहिले अंश के संबंधमें बात यह है कि यहाँ सर्वज्ञ विशेषका प्रकरण नहीं है किन्तु सर्वज्ञ सामान्य का है और उसकी सिद्धि मेंहेतु भी सामान्य ज्योतिष ज्ञान है। सर्वज्ञ सामान्य के स्थान पर यदि हम इस युक्तिसे जैनसर्वज्ञों की की सर्वज्ञता प्रमाणित कर रहे होते तबतो आपका जैन एवं जैनेतर ज्योतिष का प्रश्न उपस्थित करना समुचित हो सकता था किन्तु यहां ऐसा नहीं ···। वर्तमान वैज्ञानिकोंने जो ज्योतिष के सम्बन्धमें अनुसन्धान किये हैं इसके द्वारा उन्होंने इस विषयका स्थापन नहीं किया किन्तु ज्योतिष ज्ञानके साधन सुलभ किये हैं।

पं० दरबारीलाल जी का कर्तव्य था कि वह उन विद्वानों के नाम और उनके ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान के क्रम विकाशका परिचय कराते जिससे उनके कथनकी सत्यताकी परीक्षा की जा सकती, आपने ऐसा नहीं किया है किन्तु पहिलेकी तरह केवल अपनी प्रतिज्ञा की पुनरावृत्ति मात्र की है अतः स्पष्ट है कि दरबारीलाल जीकी प्रस्तुत प्रतिज्ञा का कुछ भी मूल्य नहीं है।

विरोध— २७ भारतीय ज्योतिषियों की ही नहीं किन्तु हर एक शास्त्र लेखक की यही आदत रही है कि वह अपनी बातका सर्वज्ञसे सम्बन्ध जोड़ता रहा है किन्तु इससे सिर्फ इतना ही सिद्ध होता है कि वे सर्वज्ञ मानते थे किन्तु यहां सर्वज्ञ मानने वालोंका सद्भाव सिद्ध नहीं करना है किन्तु सर्वज्ञ सिद्ध करना है।

परिहार— २७ प्राचीन से प्राचीन ज्योतिष शास्त्र रचयिता के ज्योतिष ज्ञानका आधार सर्वज्ञ माननेसे केवल उनकी सर्वज्ञमान्यता की ही पुष्टि नहीं होती किन्तु यह भी सिद्ध होता है कि उन २ शास्त्र लेखकों के समय में भी सर्वज्ञ ही ज्योतिष ज्ञानका आधार माना जाता था। इनका समय हजारों वर्ष पूर्वका समय है और यदि इस समयमें ज्योतिष ज्ञानका क्रमविकाश हुआ होता तो इसका उल्लेख इनके शास्त्रोंमें अवश्य मिलना चाहिये था। किसी भी विषयको एक लेखक भूल या गौण कर सकता है किन्तु यह संभव नहीं कि उस विषयके सब ही लेखक ऐसा कर जांय। अतः कोई कारण प्रतीत नहीं होता जिससे इन लेखकों के कथनों में सन्देह किया जा सके। अतः स्पष्ट है कि ज्योतिष आधार बतलाने वालों का अथवा दरबारीलाल जी के क्रम-विकाशवादका खंडन करता हुआ ज्योतिषज्ञानका आधार सर्वज्ञ है इस मान्यता की पुष्टि में सहायक होता है।

विरोध— २८ जो दार्शनिक सर्वज्ञ मानते हैं वे उससे ज्योतिषका प्रणयन भी मानते हैं। इससे भी सर्वज्ञ मानने वाले का अस्तित्व मालूम होता है न कि सर्वज्ञ का।

परिहार— २८ यह भी क्रम विकाशवादका विरोधी है। जहां कि "ज्योतिष ज्ञानका आधार सर्वज्ञ है" का समर्थन ज्योतिष एवं ज्योतिषेतर विषय के विद्वान भी स्वीकार करते हैं वहाँ क्रमविकाशके उल्लेखका पता भी नहीं मिलता। ऐसी परिस्थिति में दार्शनिक साहित्यभी ज्योतिष साहित्यकी तरह क्रमविकाश का विरोधी और सर्वज्ञाधारका समर्थक ही मानना होगा। यह सोलह आने सर्वज्ञके अस्तित्वका समर्थन भले ही न हो किन्तु इससे उस विषय पर प्रकाश अवश्य पड़ता है।

दरबारीलाल जी ने अपनी दूसरी बात के पहिले अंश के समर्थन में तो कुछ भी नहीं लिखा है हां इस के दूसरे अंश के सम्बन्ध में कुछ लिखा है। इस विषय में सब प्रथम इसही बात का निर्णय होना है कि क्या वर्तमान वैज्ञानिकों को प्राचीन ज्योतिषियों से कई गुणा ज्ञान है और इनका यह ज्ञान उनके स्वतन्त्र अनुसन्धानों का फल है? दरबारीलाल जी ने इस बात के समर्थन में एक शब्द भी नहीं लिखा है। इसके या इनके सरीखी पहिली बात के संबंध में केवल यही लिख कर इस विषय से बचने की चेष्टा की है कि इस विषय के सम्बन्ध में मैं स्वतन्त्र लेख-

मोंको प्रकाशित करने का विचार रखता हूं । यदि दरबारीलाल जी विवादस्थ विषय में एक लेखमाला प्रकाशित करना चाहते हैं तो यहां उनको इसके संक्षिप्त नोट तो देने चाहिये थे । इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी का विवादस्थ विषय का उत्तर बिलकुल अपूर्ण है अतः यह भी ज्योतिष ज्ञान के आधार से सर्वज्ञ सिद्धि का बाधक नहीं है।

विरोध २६—आक्षेपक ने यहां अपने वक्तव्य का अपने आप ही खंडन कर दिया है । जब आप अविरोधी वचन की सर्वज्ञता से व्याप्ति नहीं मानते तब अविरोधी वचन से किसी व्यक्ति विशेषको सर्वज्ञ कैसे सिद्ध करते हैं। जैन तीर्थंकरों के वचन अगर अविरोधी भी हों तो भी आपके कथनानुसार सर्वज्ञ सिद्ध नहीं होते, क्योंकि अविरोधी वचन के साथ सर्वज्ञ की व्याप्ति ही नहीं है ।

परिहार २६—केवल अविरोधी वचनसे सर्वज्ञता सिद्ध नहीं होती किन्तु प्रत्यक्ष और अनुमान के अविरोधी वचनों से अवश्य सर्वज्ञता सिद्ध होती है। यह ध्यान रखना चाहिये कि वचन भी ऐसे हों जिन में पूर्ण कल्याण, जगत व्यवस्था आदि का वर्णन हो ।

मूल युक्ति में केवल परस्पर अविरोधी वचन ही नहीं हैं किन्तु वह है जिसका उल्लेख हमने ऊपर किया है, दरबारीलाल जी को विवादस्थ युक्ति के खंडन में जब कोई मौका नहीं मिला था तब आपने परस्पर अविरोधी वचन का ही समीक्षा करना प्रारम्भ कर दी थी। इसपर हमने लिखा था कि हम इसकी सर्वज्ञता के साथ व्याप्ति नहीं मानते किन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि यह सब विचार विवादस्थ युक्ति के सम्बन्ध में किया जा रहा है । विवादस्थ विषय पर तो विचार तब ही होगा जब कि आक्षेपक उसके सम्बन्ध में आक्षेप उपस्थित करेंगे। मूल युक्ति के सम्बन्ध में हम अपनी लेख-माला में स्पष्ट कर चुके हैं कि प्रस्तुत युक्ति से हम सर्वज्ञ विशेष को सिद्ध करते हैं न कि सर्वज्ञ सामान्य को अतः यह विवाद प्रस्तुत विषय के अवसर पर अनुपयोगी एवं विषयान्तर से भी सम्बन्धित है।

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि दरबारीलाल जी के प्रस्तुत आक्षेप का विवादस्थ विषय से कोई संबंध नहीं है अतः यह बिलकुल अनुपयोगी है ।

विरोध ३०—मेरी लेखमाला में ही जैन शास्त्रों के परस्पर विरुद्ध कथनों का जगह २ उल्लेख है ·· यदि हम विरुद्ध भाग को विकारी समझ कर छोड़ दें तो यह सारी बात हर एक धर्म वाला अपने शास्त्र के विषय में कह सकता है। दूसरे धर्म वाले भी कहेंगे कि हमारे शास्त्रों में जो परस्पर विरुद्ध बात हो उसे विकार समझ कर छोड़ दीजिये और बाकी अंश को प्रमाण मानिये। इस तरह उन शास्त्रोंके मूलप्रणेता को भी सर्वज्ञ मानिये। तब जैन तीर्थंकर ही सर्वज्ञ कैसे होंगे इस प्रकार यह युक्ति न सर्वज्ञ सामान्य को सिद्ध करती है और न सर्वज्ञ विशेष को।

परिहार ३०—हम परिहार नम्बर २६में स्पष्ट कर चुके हैं कि हम केवल परस्पर अविरोधी वचन को सर्वज्ञत्व का नियामक नहीं मानते । सर्वज्ञत्व के लिये इसके साथ अन्य बातों का होना भी अनिवार्य है। जहां परस्पर अविरोधी वचन के साथ इन अन्य बातों का अभाव है वहां सर्वज्ञता को भी कोई स्थान नहीं है। सर्वज्ञता की तो बात ही निराली है हमतो लोक व्यवहारमें भी एकान्ततः ऐसे व्यक्तियों

हमारे त्यागी महात्मा

(ले० अजितकुमार जैन)

धार्मिक प्रचार तथा सामाजिक सुधार का आदर्श कार्य जहाँ गृहस्थों पर अवलंबित है वहीं यह भार गृहजंजाल से छूटे हुए उदासीन या त्यागी लोगों पर भी है। प्राचीन समय में जनता को सत्यमार्ग पर लगाने का विशालकार्य प्रायः उन त्यागी महात्माओं पर ही अवलम्बित था गृहस्थ लोग उस धार्मिक प्रचारसे निश्चिन्त रहते थे। गृहस्थों के बालक उन वननिवासी त्यागी महात्माओं के निकट रह कर विद्याभ्यास तथा सदाचार की उपयोगी शिक्षा ग्रहण किया करते थे। उन वननिवासीसाधु ब्रह्मचारियोंका नगर, ग्राम आदि जहां कहीं भी विहार होता था वहीं पर प्रभावशाली उपदेशों से जनता का चित्त धर्मपथ पर सरलतासे आकर्षित हो जाता था।

किन्तु समय के फेर से आज सब कुछ उलटा हो गया आज धार्मिक प्रचार, समाजसुधार आदि सभी कार्य गृहस्थों के शिरपर आ पडा है। गृहस्थोंको जहां इस मंहगी के जमानेमें अपनी पतित व्यापारिक दशा को जैसे तैसे चलाकर अपने परिवार का खर्च बड़ी कठिनता से चलाना पड़ता है। वहीं उनको समाज सुधार और धर्म प्रचार के कार्यों में भी तन, मन, धन जुटाना पड़ता है इतना ही नहीं किन्तु आज त्यागी महात्माओं के पढ़ाने, लिखाने, शिक्षा, दीक्षाका उचित प्रबन्ध भी गृहस्थों के ऊपर निर्भर है। यहीं तक नहीं परन्तु आधुनिक अनेक त्यागी लोगों को अपने पदानुसार व्रत नियम पालन का निर्णय भी गृहस्थ विद्वानों से कराना पड़ता है।

यद्यपि ज्ञानकी अपेक्षा चारित्र अधिक मान्य होता है किन्तु साथ ही यह भी अवश्य है कि ज्ञानशून्य चारित्र भी भक्त पुरुषों के हृदयपर प्रभाव उत्पन्न नहीं करता। अविद्वान त्यागी जहां अपनी लेखनी और व्याख्यान से धर्म विमुख जनता में धार्मिक प्रेम तथा सदाचार ग्रहण की उत्सुकता उत्पन्न नहीं करा सकता वहीं वह साधारण उपदेश देकर अपने अनभिज्ञ स्त्री पुरुष भक्तों के हृदय में गृहस्थाश्रम के योग्य साधारण कर्तव्य अकर्तव्यका भी बोध उत्पन्न नहीं करा सकता।

एक महाव्रती महात्मा का उपदेश सुनने का अवसर मिला था। जो वर्णमाला सीख रहे थे उनका

को प्रमाणिक स्वीकार नहीं करते। प्रति दिन न्यायालयोंमें हज़ारों मनुष्यों की साक्षियां (Evidence) हुआ करती हैं जिनमें परस्पर में विरोध नहीं रहता किन्तु फिर भी इनको प्रामाणिक नहीं माना जाता हां परस्पर विरोधी वचन से सर्वज्ञता का अवश्य खंडन होता है। अतः जब तक जिन २ के उपदेशों में इसका सद्भाव है तब तक उनको इस ही के आधार से असर्वज्ञ ही माना जायगा।

जैन शास्त्रोंमें परस्पर विरोधी वचनोंका अस्तित्व नहीं है तथा जो मिलते हैं वे विरोधाभास हैं और उनका महावीर की वाणी पर कोई प्रभाव नहीं है अतः इसके आधार से उनको असर्वज्ञ नहीं माना जा सकता। सर्वज्ञता की नियामक अन्य बातों का भी उनके शासन में अभाव नहीं है अतः स्पष्ट है कि आक्षेपक का प्रस्तुत आक्षेप बिलकुल निस्सार है।

उपदेश ४००--५०० जैन स्त्री पुरुषों की सभामें अधिक से अधिक ५ मिनट हुआ होगा उन्हों ने कहा कि "हर एक जैन गृहस्थकी दो दो देव रक्षा करते हैं, ब्रह्मचारी की चार देव रक्षा करते हैं और प्रत्येक मुनिकी आठ आठ देव रक्षा करते हैं, ऋद्धिधारी मुनिकी रक्षा में सदा असंख्यात देव खड़े रहते हैं" यही उनका आदर्श उपदेश था। इस प्रकारके अनेक उदाहरण रक्खे जा सकते हैं।

अब विचारने की बात है कि मुनि पद पर आरूढ पुरुष का जब सात्विक ज्ञान इतना कम हो तब वह क्या तो अपना कल्याण करेगा और क्या उस से भक्त पुरुषों का बेड़ा पार होगा। ऐसा साधारण ज्ञान से भी खाली मुनि अपनी मुनिचर्याका ठीक पालन करता होगा यह विषय विचारणीय एवं शंकास्पद है। यद्यपि किसी दृष्टिसे बाहरी वेष देखकर हम को त्यागी पुरुष का उचित विनय आदर करना चाहिये किन्तु यह बात सर्वथा अनुकरणीय नहीं है। जिस मनुष्यको साधारण भी आध्यात्मिक ज्ञान न हो उस को केवल वस्त्ररहित देखकर 'मुनि' मान लेना भूल है तथा मुनिपद का उपहास करना है। जो कम से कम जड, चेतन, आत्मा, कर्म आदि साधारण सैद्धान्तिक बातों को भी न समझता हो उस के हृदय में क्या तो वैराग्य उत्पन्न हो सकता है और क्या वह समुचित रूपसे अपने पद के योग्य चारित्रका पालन कर सकता है। उसपर भी फिर यह बात कि ऐसे ज्ञानशून्य त्यागी जिनकल्पी साधुओं के समान एक विहारी होकर अकेले घूमते रहते हैं।

यह बात केवल महाव्रती साधुओं के सम्बन्ध में ही नहीं है किन्तु उन प्रतिमाधारी त्यागियों के सम्बन्ध में भी है जिन्हों ने केवल चारित्र ग्रहण किया है आवश्यक ज्ञानाभ्यास नहीं किया है। उन को यह बात अनुभवमें नहीं आती कि यदि चारित्रशून्य ज्ञान उपयोगी नहीं है तो ज्ञानशून्य चारित्र भी अन्धे पुरुष की दौड़ के समान व्यर्थ है। यदि चारित्र से ज्ञानकी शोभा है तो चारित्र की शोभा भी ज्ञान से है। विना ज्ञान के चारित्र कुबड़े बेडौल पुरुष के शृंगार करने के समान बदसूरत दीख पड़ता है अपने पैर पुजाने के लिये विद्यासम्पन्न चारित्र को ग्रहण करना चाहिये। विद्याविहीन त्यागी स्वपर कल्याण नहीं कर सकता स्व० ब्रह्मचारी ज्ञानानंद जी का ब्रह्मचारी पद क्यों प्रशंसनीय और आकर्षक था? इसी लिये कि वे विद्वान भी थे। आजकल भी जो विद्वान त्यागी हैं उनका त्यागभाव आदर्श दीख पड़ता है।

इस कारण गृहत्याग करने से पहले उदासीन महानुभावोंको आवश्यक ज्ञानाभ्यास कर लेना चाहिये यदि उनके परिणाम गृहत्याग के लिये बहुत उतावले हों तो गृहत्याग करके उन्हें कुछ समय किसी उदा-सीनाश्रम या विद्यालय में कुछ समय तक स्थिर ठहर कर आवश्यक ज्ञान प्राप्त करके बाहर निकलना चाहिये ऐसा किये बिना वे न तो स्वपर कल्याणकर सकते हैं और न अपनी पूज्यता ही कायम रखसकते हैं। त्यागि-यों में अपने चारित्र तथा ज्ञान का इतना प्रभाव होना चाहिये जिससे कि भक्ति, श्रद्धा से गृहस्थों का शिर स्वयं उनके चरणों में झुक जावे।

इस के सिवाय हमारे त्यागी महात्माओं में एक और भी बात अवश्य होनी चाहिये वह है 'परोपकार'

यद्यपि त्याग का खास उद्देश आत्मकल्याण है। किन्तु आत्मकल्याण के लिये कठिन संयम और तपस्या

की आवश्यकता है तपस्वीका संयत जीवन आदरणीय एवं प्रशंसनीय है। किन्तु हमारे अधिकांश गृहत्यागी महानुभाव निकम्मे रहना ही अपने त्यागका ध्येय समझ बैठे हैं अतः इस मानवीय जीवन के अमूल्य समय को कठिन तपस्या एवं परोपकार से दूर रख कर बेकार रहनेमें व्यतीत करना अपने लियेभी बहुत हानिकारक है। गृहत्यागी महानुभावों को मनुष्य जीवन का एक एक क्षण अमूल्य समझ कर उसका उपयोग करना चाहिये।

दिगम्बर जैन समाजको आज उन कर्मठ त्यागियों की आवश्यकता है जो अपने अदम्य उत्साह और प्रबल कार्य शक्ति से इस सोते हुए जैन समाज को जागृत करदें उस की मुर्दा नसोंमें जीवन शक्ति भर दें अवनति के खाडेसे निकालकर उसे उन्नतिके पथपर चला दें। एवं अनभिज्ञ जनता को जैनधर्म की सत्यताका पाठ पढ़ावें। जैन समाजको सिद्ध परमेष्ठीके समान लोकहित मे भी मुक्त त्यागियों की आवश्यकता नहीं है उसे तो अर्हन्त भगवान तथा स्वामी समन्तभद्र आदि सरीखे आत्माओं की आवश्यकता है जो कि पथभ्रष्ट जनताको अपने ज्ञानदीपक से सुमार्ग दिखलाकर समाज सुधार और धार्मिकप्रचार का काम दृढता केसाथ कर दिखावें

जो त्यागीमहानुभाव ज्ञानकी कमी से उपर्युक्त कार्य करने में असमर्थ हैं। उनकी बात तो एक ओर रहीं किन्तु जो विद्वान त्यागी ब्रह्मचारी हैं अत एव जो समाजमें अपना अच्छा प्रभाव भी रखते हैं। वे भी धर्मप्रचार और सामाजिक उत्थानमें भाग नहीं लेते यह बात अधिक शोचनीय है। गृहस्थ पुरुषों को जहां अपने परिवार के पालन पोषण विवाह आदि करने की असीम चिन्ताएं लगी रहती हैं अतः रात दिन की चक्की चलाते हुए उन्हें समाज सेवा के लिये कुछ समय न मिले यह बात तो कुछ समझ में भी आ सकती है किन्तु जो त्यागी ब्रह्मचारी महानुभाव गृहजंजाल से छूटे हुए हैं। जिन्हें कुछ कमाने गमाने की चिन्ता फिक्र नहीं वे सामर्थ्य होते हुए भी कुछ उपयोगी कार्य नहीं कर दिखाते उन्होंने अपने त्यागभाव में समाज सुधार और धर्मप्रचार को भी त्याग दिया है। जैनसमाजके अधःपतन और जैनधर्म के प्रचार न होने का मुख्य कारण यही है।

यदि हमारे त्यागी महानुभाव नगर नगर ग्राम ग्राम में घूम कर सतत प्रचार करते रहें तो यह बात कभी हो नहीं सकती कि जैन कुल में जन्म लेकर हमारे जैन भाई जैनधर्म को छोड़ कर अजैन हो जावें यह हमारे त्यागी लोगों की ही अकर्मण्यता या प्रमाद का कटुक फल है कि हजारों जैनधर्मानुयायी आर्य-समाजी, सनातनी, ईसाई और मुसलमान हो गये हैं। जहां भारतीय जनता तीनकरोड़ की संख्या में बढ़ जाती है वहां जैनसमाजमें रंचमात्र भी वृद्धि क्यों न हुई

इस समय जनता सचाई की ओर झुक रही है (यूरोपके एक विद्वानने एकबार लिखाथा कि यदि कोई विद्वान ईसाईधर्म से अधिक सचाई किसी अन्यधर्म में सिद्ध कर दे तो मैं अपनी शक्तिसे यूरोप के ईसाईधर्म को उड़ा कर यूरोप को उस धर्म का अनुयायी बना दूं) पहले जमाने सरीखी कट्टरता और अन्ध श्रद्धा लोगों से बहुत कुछ विदा होती जा रही है इस दशा में हमारे भारतीय लोग भी भगवान महावीर की आदर्श जीवनी तथा जैन सिद्धान्त से अनभिज्ञ हैं इस अपराध का बहुभाग हमारे त्यागी महानुभावों के सिर पर है।

कार्यकारिणी का एक प्रस्ताव

संघकी कार्यकारिणी ने ता० ६ नवम्बरको अपनी हस्तिनागपुर वाली बैठक में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया है—

"कार्यकारिणी की यह बैठक महामंत्रीकी सूचना को जोकि उन्होंने दर्शनके अङ्क १७ वर्ष २ में प्रकाशित की है समुचित स्वीकार करती है तथा समाजसे निवेदन करती है कि वह इस बातका ध्यान रक्खे कि सत्य समाजसे जैन समाजको हानि न होनेपावे तथा जहां भी सत्य समाजके प्रचार कार्यको जैन समाज के प्रतिकूल देखे वहां उससे शास्त्रार्थ कर उसको असफल बनावे।"

प्रस्तावकी भाषा स्पष्ट है किन्तु फिर भी उसके भावको स्पष्ट करने के लिये अपनी पूर्व सूचना को यहां लिखना आवश्यक है अतः मैं यहां उसको दर्शनके उक्त अङ्कसे उद्धृत किये देता हूं—

"जैन मित्र अङ्क १० ता०१६ जनवरीमें श्री शीतल प्रसाद जी ने "सिद्धान्तकी रक्षा आवश्यक है" शीर्षक एक वक्तव्य प्रकाशित किया। इसका तात्पर्य यह है कि जैन विद्वानोंकी एक समिति बुलाई जाय और उसमें पंडित दरबारीलालजी के साथ सर्वज्ञत्व; मुक्तिसे पुनरावृत्ति, आदि विषयों पर वाद विवाद किया जाय। अपने इस वक्तव्यको प्रारम्भ करते —शीतल प्रसाद जी ने लिखा है कि उन्होंने इस प्रस्तावको परिषद् के भेलसा वाले अधिवेशन में भी रक्खा था किन्तु परिषद् की स्थितिके अनुकूल न होने से उनको अपना यह प्रस्ताव वापिस लेना पड़ा। अब आपने इस वक्तव्य में इसके सम्बन्धमें दि० जैन शास्त्रार्थ संघकी तरफ संकेत किया है।

सरांश यह है कि जैनत्यागी ब्रह्मचारी मुनि साधुओं को अपनी शोचनीय दशापर विचार करना चाहिये उन्हें अविद्या और बेकारी का साथ छोड़ कर विद्या और प्रचार को अपनाना चाहिये। उनको अपनी व्याख्यान शक्ति, लेखन शक्ति एवं प्रचारक शक्तिको आदर्श रूप में बढ़ाना चाहिये तथा अपने अमूल्य जीवन के प्रत्येक क्षण में उपयोगी अपूर्व कार्य करते जाना चाहिये, घर घर पहुंच कर सोते हुए जैनियों को उठाना चाहिये। बिना ऐसा किये त्यागियों का अस्तित्व लाभदायक नहीं। त्यागी लोग यदि अपनी प्रतिष्ठा कायम रखना चाहते हैं तो उन्हें इस छोटे निवेदन पर ध्यान देना चाहिये क्यों कि जहां उन्हें अपने पैर पुजवाने का अधिकार है वहीं उन्हें उसके लिये उतनी योग्यता को प्राप्त करना भी आवश्यक है।

यह निवेदन केवल त्यागियों के लिये ही नहीं है किन्तु हमारे गृहस्थ जैन भाइयों को इस पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिये त्यागी ब्रह्मचारियों में जो अयोग्यता घुस गई है उसका बहुत कुछ उत्तरदायित्व गृहस्थों पर भी है।

❋ ❋ ❋

ऐसी परिस्थिति में यह आवश्यक है कि श्री शीतल प्रसाद जी के इस वक्तव्य के सम्बन्ध में मैं संघका अभिमत स्पष्ट करदूं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि शीतलप्रसाद जी ने यह वक्तव्य सरल एवं सिद्धान्त रक्षाके अभिप्रायसे लिखा है अतः इसके लिये हम उनके आभारी हैं किन्तु जब आप यह लिखते हैं कि "केवल लेख लिखनेसे समाधान नहीं होता" तब हम आपकी बात माननेके लिये तैयार नहीं हैं। हमारी तो यह धारणा है कि दरबारी लालजी के कथनका लिखित प्रतिवाद मौखिक प्रतिवादकी अपेक्षा कहीं अधिक लाभदायक है इसके पढ़नेवालोंको अब भी इससे लाभ होगा और भविष्य में भी लाभ होसकेगा।

मौखिक की अपेक्षा लिखितमें विचार करने में भी अधिक सहायता मिलती है इन्हीं सब बातोंके ध्यानसे दरबारीलालजी के विचारोंके प्रतिवाद स्वरूप संघकी तरफसे 'दर्शन' में लेखमाला निकल रही है।

ऐसा होने पर भी हमारा यह एकान्त नहीं है कि दरबारीलालजी के विचारोंका प्रतिवाद लिखित ही हो या मौखिक वादविवाद न किया जाय। हम इसको भी लाभदायक समझते हैं। इसके लिये श्री शीतलप्रसाद जी की आयोजना में थोड़े से संशोधनकी आवश्यकता है और वह यह है कि यह वादविवाद एक उपसमिति के निरीक्षण में हो जिसमें प्रतिष्ठित तीन व्यक्ति हों और जो वादविवाद के पश्चात दोनों तरफ की युक्ति और प्रयुक्तियों का संग्रह करके प्रकाशित कर सकें। ऐसा होनेसे यह वादानुवाद केवल उसी समय के लिये नहीं होगा किन्तु इससे कालान्तरमें भी लाभ होसकेगा।

स्वतंत्र उपसमिति के निरीक्षण एवं उसके द्वारा प्रकाशित कार्यवाही के होनेसे इन सब बातों के सम्बन्धमें अविश्वासकी बात भी नहीं रहेगी। इस उपसमितिका चुनाव दोनों पक्षोंकी स्वीकृति से होना चाहिये। स्थानके सम्बन्धमें केवल इतना ही नोट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है। कि यह शास्त्रार्थ किसी ऐसे स्थान पर होना चाहिये जहां जैनियों की जनसंख्या अधिक हो। ऐसा लिखनेकी आवश्यकता यों पड़ी कि अभी इस प्रकार वादानुवादकी बात बनारसके सम्बन्धमें चल रही है। बनारसमें न तो जैनियोंकी जनसंख्या अधिक है और न इसके आस पास ही जैन समुदाय निवास करते हैं। ऐसे स्थान इस कार्यके लिये किसी भी प्रकार उपयुक्त नहीं हो सकते।

इस सम्बन्धमें जो बातें आवश्यक थीं उनमें से कुछ का हमने यहां निर्देश कर दिया है। भारतवर्षीय दि० जैन परिषद् या अन्य भी कोई स्थानीय पंचायत अथवा सभा जो इसकी आयोजना करेगी शास्त्रार्थ संघ उनको अपना सहयोग प्रदान करने के लिये सदैव तैयार है।"

उद्धृतवाक्य बिलकुल स्पष्ट हैं अतः अब पूर्व सूचना के सम्बन्धमें स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं रह जाती। इस सूचनामें स्थान और निरीक्षक समिति की भी चर्चा है किन्तु कार्यकारिणी के प्रस्ताव का उत्तरार्ध इसको भी स्वीकार नहीं करता। इसका तो यही अभिप्राय है कि सन्य समाजसे किसीभी स्थान पर शास्त्रार्थ किया जा सकता है। जब स्थानके सम्बन्धमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है तो निरीक्षक समिति के सम्बन्धमें भी कैसे हो सकता है ?

निरीक्षकसमिति चुनी जासके तो अच्छा है और यदि इसका चुना जाना संभव न हो तो यह कार्य किसी ऐसे व्यक्ति को मध्यस्थ चुनने से भी होसकता है जिस पर उभय पक्षका विश्वास हो या जिसको उभयपक्ष चुनलें।

अन्तमें पूर्व सूचनाके ही निम्न लिखित वाक्यों को दुहराके हम अपने इस वक्तव्यको समाप्त करेंगे।

भा० दि० जैनपरिषद् या अन्य भी कोई स्थानीय पंचायत अथवा सभा जो इसकी आयोजना करेगी शास्त्रार्थसंघ उनको अपना सहयोग प्रदान करने के लिये सदैव तैयार है।

निवेदक—प्रधान मन्त्री

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अंबाला छावनी

शास्त्रार्थ संघकी बैठक

आज ता० ६ नवम्बर के शाम को ५॥ बजे श्री हस्तिनागपुर क्षेत्र पर संघ की कार्यकारिणी की बैठक हुई। उपस्थिति निम्न प्रकार थी—

१—न्यायाचार्य पं० माणिकचन्द्र जी
२—लाला शिब्बामल जी
३—पं० मंगलसेन जी बजरिये प्राक्सी ला० शिब्बामल जी
४—पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री
५—पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ
६—पं० अजितकुमार जी शास्त्री बजरिये पं० राजेन्द्रकुमार जी

सभापति के आसन पर न्यायाचार्य पं० माणिकचन्द्र जी थे। पास हुये प्रस्तावों में से निम्नलिखित उल्लेख योग्य हैं। ये सर्व ही प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुये हैं।

१—भा० दि० जैन शास्त्रार्थसंघकी कार्यकारिणीकी यह बैठक निम्नलिखित महानुभावों के असामयिक वियोग पर हार्दिक शोक प्रगट करती है तथा उनके कुटुम्बियों से सहानुभूति प्रगट करती है—।

१—श्रीमान् पं० पन्नालाल जी गोधा इंदौर
२—श्रीमान् ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंह जी
३—रा० ब० साहु जुगमंदरदास जी
४—कुंवर पन्नालाल जी ब्यावर

प्रस्तावक सभापति—सर्वसम्मति से पास

२—संघ के चालू वर्ष के लिये अर्थात् जौलाई सन् ३५ से जून सन् ३६ तक की निम्नलिखित बजट पास किया जाय—

१-पुस्तकमाला	१०००) एक हजार
२-पुस्तकालय	५००) पांच सौ
३-जैनदर्शन	१८००) अठारह सौ
४-प्रचार	५००) पांच सौ
५-अनुसंधान	५०) पचास
६-महामन्त्री कार्यालय	८५०) साढ़े आठसौ
	४७००) कुल सैतालीससौ

प्रस्तावक—पं० राजेन्द्रकुमार जी
समर्थक—पं० कैलाशचन्द्र जी
सर्व सम्मति से पास

३—पिछले प्रस्ताव की मौजूदगी में भी अभी तक संघ की रजिष्ट्री नहीं हुई है अतः यह बैठक प्रस्ताव करती है कि यह कार्य शीघ्र से शीघ्र किया जाय।

प्रस्तावक—पं० राजेन्द्रकुमार जी
समर्थक—पं० कैलाशचन्द्र जी
सर्व सम्मति से पास

४—यह बैठक प्रस्ताव करती है कि संघ के धन

की सुव्यवस्था के लिये निम्नलिखित महानुभावों का एक बोर्ड कायम करने का प्रस्ताव बनाया जाय तथा संघ के साथ ही इसकी भी रजिष्ट्री करा ली जाय—

१—ला० शिब्बामल जी अम्बाला छावनी
२—बा० महावीरप्रसाद जी पेडवोकेट अम्बाला
३—पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री बनारस
४—बा० सुमेरचन्द्र जी पेडवोकेट सहारनपुर
५—महामन्त्री शास्त्रार्थ संघ

प्रस्तावक—पं० राजेन्द्रकुमार जी
समर्थक—पं० कैलाशचन्द्र जी
सर्व सम्मति से पास

५—कार्य कारिणी की यह बैठक महामन्त्री की सूचना को जो कि उन्होंने दर्शन अंक १७ वर्ष २ में प्रकाशित की है समुचित स्वीकार करती है तथा समाजसे निवेदन करती है कि वह इस बातका ध्यान रक्खे कि सत्य समाज से जैनसमाज को हानि न होने पावे तथा जहां भी सत्यसमाज के प्रचार कार्य को जैनसमाज के प्रतिकूल देखे वहां उससे शास्त्रार्थ कर उसको असफल बनावे।

प्रस्तावक—लाला शिब्बामल जी
समर्थक—पं० कैलाशचन्द्र जी
सर्व सम्मति से पास

उदासीनाश्रम के विषय में

विद्यार्थियों के लिये जिस तरह दि० जैन समाज ने अनेक विद्यालयोंका उद्घाटन किया, लड़कियों के लिये कन्यापाठशालाएं खोलीं और स्त्रीशिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिये जिस तरह अनेक महिलाश्रमों की नींव डाली उसी प्रकार संसार विरक्त पुरुषों के लिये कई उदासीनाश्रम भी दिगम्बर जैन समाजने खोले। अभी आसोज मास मेंसमेदशिखर तीर्थ के निकट पारसनाथ स्टेशन पर एक और उदासीनाश्रम का उद्घाटन हुआ है यह समाचार हर्षदायक है। किन्तु उदासीनाश्रमों के विषयमें दो शब्द लिखना उपयोगी समझता हूं आशा है आश्रम के संचालक उसपर अवश्य ध्यान देंगे।

जिस तरह विद्यालयों से अध्ययन करके सैकड़ों तयार हुए विद्वान दि० जैन समाजमें दृष्टिगोचर होते हैं अथवा कन्या पाठशालाओं, महिलाश्रमों से पढ़ी हुई कुछ विदुषी महिलाएं दीख पड़ती हैं उसी प्रकार उदासीनाश्रमों से तयार होकर कोई भी विद्वान उदासीन त्यागी आज तक उपलब्ध नहीं हुआ। उदासीनाश्रममें उदासीनोंकी उपस्थिति भी पर्याप्त रही, खर्च भी हजारों रुपया हुआ किन्तु दि० जैन समाजके सामने कोई विद्यासम्पन्न उदासीन नहीं आया जिससे उदासीनाश्रम के स्थापित होने का सुफल देखकर अधिक हर्ष होता। यों स्वाध्याय करने वाले, शुद्ध भोजन पान करने वाले उदासीन महोदय तो उदासीनाश्रमों के बिना भी पाये जा सकते हैं। स्वाध्याय कर लेने मात्रसे उदासीनाश्रम की उपयोगिता सिद्ध नहीं होती।

इस त्रुटि सुधार के लिये उदासीनाश्रमों के संचालक यदि निम्न लिखित बातों को अमलमें लावें तो वे अपने कार्यमें सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

१—उदासीनाश्रम में उदासीन चाहे २५ की बजाय ५ ही रक्खे जावें किन्तु रक्खे वे जावें जो कम से कम वहां पर नियम से ५ वर्ष ठहर कर विद्या अध्ययन करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करें। प्रतिज्ञा भंग

देश विदेश समाचार

श्रीमती कमला नेहरूका स्वास्थ्य अब सुधर रहा है।

बंगाल प्रान्तकी सन १९३४को सरकारी रिपोर्ट में बतलाया गया है कि इतनी कड़ी कार्यवाही करने पर भी बंगाल से आतंकवाद, निर्मूल नहीं हुआ और न वह तब तक निर्मूल हो सकता है जब तक कि जनता के हृदयों में परिवर्तन न होगा।

—बड़ौदा कन्या महाविद्यालय की लड़कियां तलवार, लाठी चलाना, गतका आदि जानती हैं उन में वीरताका भाव भर दिया जाता है। इसी विद्यालय की एक लड़की की साड़ी एक मुसलमान युवकने जरा खींची थी उस लड़कीने तुरंत उस मुसलमान पर हंटरसे हमला किया और उसको मारते २ घायल कर दिया। बड़ी कठिनता से उस लड़कीको रोका गया।

—बड़ागांव (वीरभूम-बंगाल) में हरकारे से डाक लूट ली गई।

— २ नवंबरको देहली में गरगराहटकी आवाज के साथ शामको ३ बजकर ४० मिनट पर हलकासा भूकम्प हुआ।

—डाक तार विभागके इन्चार्ज सर फ्रैंक नायस ने मद्रासमें व्यापार मंडल के सदस्यों के सम्मुख आगामी वर्ष डाक महसूल कम होनेकी आशा दिलाई है कार्ड संभवतः दो पैसेका होजायगा।

—जी० आई० पी रेलवे ने तीसरे दर्जे के यात्रियों के आराम के लिये ६८ फीट लम्बे १० फीट चौड़े नये डब्बे बनवाये हैं जिनमें छोटे २ भाग हैं सामान रखने तथा आने जानेकी सुविधा का भी इन्तजाम है

—एक लाख संथालों ने (जंगली जाति) सन १९१७ से १९३५ तकके समय में हिन्दू धर्म ग्रहण किया है। गतवर्ष इन हिन्दू संथालों की संख्या केवल ३५ हजार थी।

—झालावाड़ नरेशने अपनी राजधानीका नाम झालावाड़के स्थान पर "ब्रजनगर" रक्खा है।

—स्व० डा० रंगाचारी की विधवा पत्नीने अपने पतिकी स्मृतिमें ४० हजार रुपयोंका दान दिया है।

—रांचीमें एक वृद्ध पति-पत्नी एकही दिन मरे अब दोनोंको एक ही चिता पर जलाया गया। ये दोनों उत्पन्न भी एकही दिन हुये थे।

—सीमा प्रांतमें एक सरकारी सरकूलर निकला है कि जिन स्कूलोंमें हिन्दी, गुरुमुखी पढ़ाई जाती है उनकी सरकारी सहायता बन्द करदी जायगी।

—उड़ीसा एक अलग प्रान्त बनेगा उसकी राजधानी कटक नगर में होगी।

—पटनामें दो शराबियों ने खूब शराब पीली और कोचवान को भी पिलादी। शराबका रंग तांगे को ऐसा चढा कि घोड़ा टमटम को लेकर एक तालाब में कूद पड़ा किन्तु शराबियों को कुछ पता नहीं दूसरे दिन होश आने पर पता लगा। घोड़ा मर गया था।

—अपरबर्मा के ग्राम निवासियों ने जंगल में बड़े २ दांतों वाला एक बिना सूंडका सफेद हाथी देखा है।

—भारत सरकार के होम-मेम्बर द्वारा जयपुरमें नये हवाई जहाजके अड्डेका उद्घाटन होगा।

REGD. L.No.
3459.

शहीद सरदार भगतसिंह के भाई कुलबीरसिंह लायलपुर जिला बोर्ड के मेम्बर चुने गये हैं।

—भूमध्यसागर बीच के ऊपरसे अन्य देशोंमें स्वतन्त्र भूमिका प्रतिबन्ध हटा लिया है।

—अपने पतिको विष देकर मार डालने के अपराध में मिर्जापुरकी एक स्त्रीको फांसी दंडमिला है।

—अभी पार्लियामेण्टके मेम्बरोंका चुनाव हुआ है जिसमें ताजे भूतपूर्व प्रधानमन्त्री रेम्जे मेकडानल्ड उनके पुत्र तथा भूतपूर्व भारत मन्त्री वेजवुडबेन हार कर मेम्बरी से रहगये।

—रैपिड नगर में सबसे बड़ा गुब्बारा अभी ७२ हजार फीटकी ऊंचाई पर आकाश में उड़ा है जहांका तापमान केवल ६७ डिग्री था।

—ग्रीसके भूतपूर्व राजा फिर राज गद्दी पर बैठेंगे। उनको राज्यकी बागडोर सौंपने के लिये ग्रीसके ९८ फीसदी मनुष्योंने सम्मति दी है।

—लंदनकी कम्पनीने ऐसे १२ हवाई जहाज तैयार कराये हैं जो [illegible] बोझ लेकर उड़ सकेंगे जिनमें सोने का भी प्रबन्ध होगा। ये लगातार रात दिन उड़कर लंदनसे आस्ट्रेलिया ७ दिनमें और दक्षिण अफ्रीका ४ दिनमें पहुंच जाया करगे।

—लंकामें समुद्रके किनारे पर १६० फीट ऊंचा चाय के विज्ञापनके लिये एक प्रकाशस्तम्भ बनाया जायगा जिसमें 'बढ़िया चाय लंकामें ही है' इसका प्रत्येक अक्षर १५ फीट लंबा होगा।

—एक लड़की के दिमाग ने रीगा (लटविया) के डाक्टरों को चकित कर दिया है। लड़की की उम्र दस साल है और उस का नाम है इल्मा। वह लिख पढ़ नहीं सकती है। परन्तु आप धीरे से किसी भाषा की पुस्तक पढ़ डालिये, वह तुरन्त पूरा पूरा दुहरा देगी। एक डाक्टर ने स्वयं उसकी परीक्षा की है कि लड़की फ्रेंच, अंग्रेजी और जर्मन भाषा नहीं जानती परन्तु इन भाषाओं की पुस्तकों के किसी अंश को यदि कोई धीमी आवाज से पढ़े तो भी उसे तुरन्त दुहरा डालती है। इसकी स्मरण शक्ति ने डाक्टरों को चकित कर दिया।

—रोम सम्राट के अन्त दिवस पर मुसोलिनी ने अपने भाषणमें कहा कि इटली के पास इतनी फौजी शक्ति है कि इटली का कहीं कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

—इंग्लैण्ड को प्रति वर्ष ५० हजार युवती सुन्दर लड़कियां गुप्त एजेण्टों द्वारा भगाकर व्यभिचार के लिये अन्य अन्य देशों में बेची जाती हैं।

—सोवियटरूस में भावी सन्तान को उन्नत बनानेके खयाल से बन्दर और मनुष्य के समागम से [illegible] का उद्योग होरहा है। छिः—

—इटली एबिसीनिया को हवाई बम, तोप, टैंकों आदि से जीतता चला आ रहा है। उस ने इटली के [illegible] आदि अनेक बड़े नगर जीत लिये हैं मोया [illegible] बतलाया जाता है वह भी इटली ने [illegible] से जीत लिया है। आर्थिक बहिष्कार के उत्तर में इटली ने भी फ्रांस, इंगलैण्ड आदि का बहिष्कार प्रारम्भ कर दिया है।

—वायुयानों में ब्रेक लगा कर उसे जमीन पर [illegible] ही रोक देने का एक नया आविष्कार हाल ही में हुआ है। अब तक हवाई जहाज ऐसे ही स्थानों पर उतर सकते थे। जहाँ लम्बा चौड़ा समतल मैदान हो किन्तु अब ब्रेक द्वारा छोटे मैदानों में भी उतारा जा सकता है।
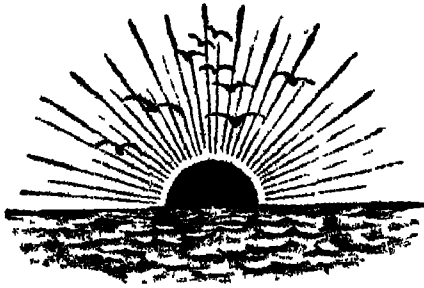
अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक १०

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ,
जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≈)

मगसिर सुदी ६ रविवार
१ दिसम्बर-१९३५ ई०
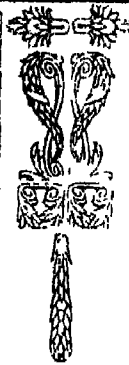
स्वा० कर्मानंदजी का पत्र

सर्व सज्जनों को विदित हो कि मैं ने निरन्तर २५ वर्ष तक आर्यसामाजिक क्षेत्र में कार्य किया है इतने समय में मैंने आर्यसमाज की ओर से सैकड़ों बड़े २ शास्त्रार्थ किये तथा हजारों व्याख्यान दिये परन्तु अब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि आर्यसमाज के सिद्धान्त मिथ्या एवं कपोल कल्पित हैं अतः सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के लिये प्रत्येक मनुष्य को सर्वदा उद्यत रहना चाहिये इस उक्ति के अनुसार अब मैं आर्य समाज के क्षेत्र से पृथक् होता हूं। अब मैं जैनसमाज एवं जैनधर्म की सेवा करूंगा क्योंकि मैंने उसे सत्य समझा है। जिन समाजों के निमंत्रण आये हुये हैं उनसे क्षमा मांगता हूं क्योंकि मैं वहां नहीं आ सकूंगा। अब मेरा स्थायी पता दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी होगा।

निवेदक—कर्मानन्द

जैन समाचार

जैन बैंक-हीरक जयन्ती के समय इन्दौरमें ५० लाख रुपये के मूलधनसे एक दि० जैन कोआपरेटिव बैंक खोलने का प्रस्ताव हुआ जिस पर दो घंटे तक विचार होकर इसके लिये एक कमेटी बनाई गई जो कि ६ मास के भीतर अपनी तजवीज प्रकाशित करेगी।

पावापुरी केसका फैसला-श्वेताम्बर समाज की ओरसे हाईकोर्ट के फैसले के विरुद्ध प्रिवी कौंसिल में पावापुरी केसकी अपील दायर की थी उसका फैसला गत ८ नवम्बरको होगया। फैसलेके अनुसार श्वेताम्बर भाई जिस समय दिगम्बरी लोग जल मंदिर में पूजन करेंगे उस समय वहां वे अपनी कोई प्रतिमा नहीं रख सकते। दि० भाइयों के पूजन समय के बाद श्वेताम्बर लोग प्रतिमा रखकर पूजन कर सकते हैं। आशा है श्वेताम्बरी लोग इस फैसलेका दुरुपयोग न कर सदुपयोग करेंगे।

दि० जैन परिषद्का अधिवेशन बड़े दिनों में २६ से ३० दिसम्बर तक झाँसीमें होगा।

दि० जैन खंडेलवाल महासभा का अधिवेशन चैत्र मासमें अजमेर में होगा।

तीर्थयात्रा-कारियों द्वारा गिरनार, जैनबद्री, मूडबद्री आदि समस्त दक्षिणी तीर्थक्षेत्रों की वंदना करने के लिये देहली, ललितपुरका सम्मिलित यात्रा संघ क्रमशः मगसिर सुदी ११-१४ को रवाना होगा।

—बुन्देलखंड दि० जैन प्रान्तिक सभाका मुख पत्र प्रभात अब मासिक रूपमें प्रकाशित होगा।

—गरीब लंगड़ों के लिये श्रीमान सेठ आनन्दराजजी सुराना कृत्रिम लकड़ी की टाँगें मुफ्त दान करते हैं। प्रार्थना पत्र "इन्डो यूरोपियन ट्रेडिंग क० चाँदनी चौक देहली" के पते पर भेजना चाहिये।

—मेलेका सुप्रबन्ध- हस्तिनापुर क्षेत्रके उपमंत्री ला० लक्खूमल जी ने इस वर्ष मेलेका अच्छा प्रबन्ध किया। शुद्ध भोजन, प्याऊ, औषधालय सेवक वर्ग आदिका उत्तम प्रबन्ध रहा। ६ नवम्बर श्रीमान ला० कृष्णकुमार जी रईस देहरादून सेवक दलको सुवर्ण पदक, मेरठ सेवकदलको रजत पदक प्रदान किया गया। मेलेमें जिस किसी भाईका सामान रह गया हो वे ला० प्रद्युम्न कुमार जी रईस सहारनपुर से पूछें।

—श्रीनिवास जैन मेरठ

देहली तथा मुलतान निवासी स्व० ला० गिरधारीलाल जी जैनका जोधपुर में फुटपाथ पर चलते हुये भी जसवन्त कालेज जोधपुर के प्रिन्सिपल की बेकाबू मोटर से दब जाने पर स्वर्गवास होगया था। उनके सुपुत्र ने उक्त प्रिन्सिपल पर ६० हजार रुपये की हानिका दावा किया है।

—पं० कस्तूरचन्द्रजी को इंदौरमें "व्याख्यान वाचस्पति" की उपाधि मिली है।

—पाटन के कोठावाला परिवार ने, महाराजा की हीरक जयन्ती के अवसर पर पाटन में एक शिल्प स्कूल खोलने के लिये ५००००) रु० दिये हैं। स्कूल खोलने का कार्य जारी है।

अकलंकदेवाय नमः
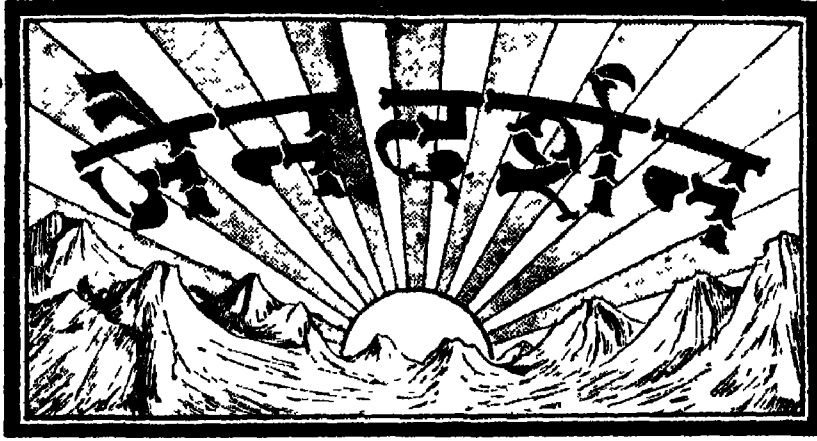
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भर्व्याभवग्निखिलदर्शनपक्षदोष.
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री मगसिर सुदी ६—रविवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क ६

मैं और तू

—ले०—मास्टर कपूरचन्द सा० भू० नागपुर

(१)

तू मुक्त और सब विधि अनूप,
मैं विश्व विपिनका भ्रान्त पथिक ।
गिर पडा जहाँ था अन्ध कूप,
तन में पीडा दुख द्वन्द अधिक ॥

(२)

तू अविनाशी तू निर्विकार,
मैं दरियो नद का कर्दम-मय ।
घुल घुल बहता हूं बार बार,
अति कुत्सित क्रीडामें तन्मय ॥

(३)

तू केवल ज्ञान प्रकाश भानु,
मैं कर्म-कालिमा में विलीन ।
जल रही कहाँ आशा कृशानु,
जा रहा वहाँ अति दीन-हीन ॥

(४)

तू है अजेय तू निराकार,
मैं सुख दुखकी प्रतिमा स्वरूप ।
विषयादिक रिपु करते प्रहार,
दे रहा यातना मोह भूप ॥

(५)

तू शांति निकेतन सुख-प्रदेश,
मैं हूँ अघज्वाला मुखी शैल ।
विभत्स काव्य अति रुद्र भेष,
इस अधःपतन की विषमगैल

(६)

मैं हूँ तेरा जिन शरणागत,
तू मुझे बचा हे शुद्ध बुद्ध ।
कर सके विरोधी मुझे न हत,
लड़ सकूं वीर बनकर विरुद्ध ॥

तम्बाकू

—:(●):—

(ले०—श्रीमान पं० [illegible]लाल जी न्यायतीर्थ)

जब से संसार में तम्बाकू का नाम हुआ आने लगा है तभी से जन साधारण एवं सभ्य समाज में इसका दिनों दिन अधिक आदर होता जाता है। स्त्री, पुरुष, बालक, बालिकाएं आदि सभी शिक्षित अथवा अशिक्षित जन इसको अपनाने में अपना गौरव समझते हैं। आधुनिक जैंटिलमैनों के लिये तो इसका सेवन प्रधान कर्तव्य सा बन गया है। छोटे छोटे बच्चे भी अपने को जैंटिल मैन बनाने की गरज से इसका खुशी खुशी पान करते हैं। इसका रिवाज इतना ज्यादा बढ़ गया है कि वे मनुष्य भी जो स्वयं इसका सेवन नहीं करते अपने मेहमानों की मेहमानी के लिये इसका प्रबन्ध करते हैं। विवाहोत्सवादि मौकों पर तो प्रायः सभी लोगों को इसका इन्तिज़ाम करना पड़ता है। जो लोग अक्सर रेलमें सफर किया करते हैं और स्वयं तम्बाकू का पान नहीं करते वे भी बीड़ी सिगरेट अपने पास रखते हैं और इसी के जरिए लोगों से मेल मुलाकात बढ़ाते हैं। कहनेका मतलब यह है कि इस तम्बाकू का सभी शहरों, कस्बों और देहातों में खूब प्रचार है। हां यह कहा जा सकता है कि कोई बीड़ी सिगरेट द्वारा इसका पान करते हैं तो कोई हुक्के चिलम द्वारा। कोई सूंघनी के बतौर इसको सूंघते हैं तो कोई पान का मसाला बनाकर अथवा कोई यों ही खाते हैं। किन्तु अधिकांश जनता बीड़ी सिगरेट द्वारा और पान में रख कर ही इसका पान करती है।

इस तम्बाकू का जन्म कब और कैसे हुआ इस सम्बन्ध में कोई खास ऐतिहासिक प्रमाण दृष्टिगत नहीं हुआ किन्तु किसी हद तक यह कहा जा सकता है कि विदेशों में इसका प्रचार कोलम्बस के जमाने से हुआ। सिगरेट द्वारा पान करने के तरीके का भी प्रचार शायद सन् १८३२ ई० में जब कि यूरोप में लड़ाइयाँ हो रही थीं हुआ था। भारतवर्ष में इस सत्यानाशी बूंटी ने कब पदार्पण किया इसका भी कोई खास सबूत नहीं मिलता। प्राचीन काल के किसी भी धर्मशास्त्र अथवा पुराणों में इसका जिक्र नहीं आया है। शायद किसी मुगल बादशाह के जमाने में यह भारतवर्ष में आई हो ऐसा कुछ किन्हीं इतिहास नेताओं के मत से ज्ञात होता है। लेकिन ठीक ठीक कौन सा समय है यह नहीं बताया जा सकता।

कुछ भी हो किसी भी तरह और कभी भी यह क्यों न आई हो किन्तु जबसे इसने इस भारत वसुन्धरा पर अपना पैर जमाया है तभीसे इसका अधिकाधिक प्रचार होता जारहा है और जितना २ इसका प्रचार होता जाता है उतना ही हमारा नुकसान और ह्रास होता जारहा है। यह कहना अत्यधिक न होगा कि इसने मनुष्य समाजकी जबर्दस्त हानि की है। और जब तक इसका रिवाज बढ़ता ही जायगा तब तक जनताका नुकसान बढ़ता जावेगा। आजकल ही हम देखते हैं कि छोटे २ बच्चे अपने माता पिता एवं सम्बन्धियों की देखा–

देखी इसका सेवन करना शुरू कर देते हैं और आगे जाकर इतने आदी हो जाते हैं कि उनको तमाखू पान किये बिना चैन नहीं पड़ती। वे इतने इसके प्रेमी बन जाते हैं कि यह जानते हुये भी कि यह बूटी हमारी सबसे ज्यादा आर्थिक, मानसिक एवं शारीरिक हानि करने वाली है और जल्दी ही इससे हमारी जीवन यात्रा समाप्त होजायगी, इसको अपने प्राणों से जुदा नहीं कर सकते। यह उनके गले का हार बन जाती है। एक दफा जो इसके रंगमें रंग जाता है फिर वह इससे अपना प्रेम नहीं हटा सकता यद्यपि यह विषैली है किन्तु साथ ही में इसके पास एक ऐसी सम्मोहन शक्ति भी है जिससे यह लोगोंको अपने वशमें कर लेती है और उनके साथ घनिष्ठ प्रेम जोड़ लेती है।

तम्बाकू सेवन करना एक प्रकार का व्यसन है। कुव्यसन कोई भी क्यों न हों अन्तमें हानिकर ही होते हैं। यद्यपि तम्बाकू पान करने के साथ ही शायद कुछ लुत्फ आता होगा। किन्तु परिणाम में घातक ही सिद्ध होती है। यह एक भयंकर विषके समान है। इस नागिनी का डसा हुआ मनुष्य विभिन्न रोगों से आक्रान्त हो शीघ्र ही कराल काल का ग्रास बन जाता है। इसके पत्तोंसे एक प्रकार का तरल पदार्थ जिसको कि हम तम्बाकूका तेल कह सकते हैं निकलता है। अंग्रेजी में इस तरल पदार्थको 'निकोटाइन' कहते हैं। संसारमें जबर्दस्त घातक विषों में सबसे पहला नम्बर प्रोसिक एसिड का है और द्वितीय नम्बर इस निकोटाइन का। अखिल विश्व में और कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है। जो मनुष्यको शीघ्रातिशीघ्र मारने में इस निकोटाइन का मुकाबला कर सके। एक पौण्ड तम्बाकू के पत्तों द्वारा ३८० ग्रेन निकोटाइन प्राप्त किया जा सकता है और इसके इसवें भागसे एक हृष्ट पुष्ट कुत्ता तीन मिनिट में मारा जा सकता है। मनुष्य तो औरभी शीघ्र इस विष द्वारा यमलोक भेजा जा सकता है। कैसा भी भयंकर और खूंखार सर्प क्यों न हो इस निकोटाइन के प्रयोग करने पर जीवित नहीं रह सकता। ठीक ही है जब मनुष्य जैसे प्राणी के लिये ही यह इतना खतरनाक समझा जाता है तो बेचारे पशुओं का क्या ठिकाना?

प्रत्येक प्राणी के शरीर में एक प्रकार के रोग नाशक कीटाणु होते हैं जो कि समय समय पर आने वाले रोगोत्पादक कीटाणुओं से संग्राम करते हैं और उनको परास्त कर दिया करते हैं। किन्तु शक्ति सभी की सीमित होती है। जिसकी जितनी ताकत होती है वह उतना ही काम कर सकता है। हमारे शरीर के भीतर रहने वाले रोगनाशक कीटाणुओं में जब तक सामर्थ्य रहता है तब तक दुश्मन को अपने द्वार पर भी नहीं फटकने देते। लेकिन जब शक्ति शाली दुश्मन आकर उनके सीने पर खड़ा हो जाता है तो वे बेचारे क्या करें। शक्ति शाली के सामने किसी का वश नहीं चलता। उनके दम रहने तक वे उसे अपने घरमें नहीं घुसने देते और परास्त करने में अपनी सारी शक्ति खर्च कर डालते हैं। जब उनका वश नहीं चलता दुश्मन घर में घुस आता है और चारों तरफ अपना साम्राज्य जमा लेता है। इसी लिये जो लोग तम्बाकू का पान करते हैं उनको तत्काल फल नहीं मिलता। शरीर के रक्षक उनकी रक्षा करते हैं।

तम्बाकू सेवन से आर्थिक हानि तो होती ही है किन्तु जितनी मानसिक एवं शारीरिक हानि होती है उतनी नहीं। संसारमें जितने भी थाइसिस (क्षय)आदि को लेकर विशेष खतरनाक रोग समझे जाते हैं उनको उत्पन्न करने के लिये तम्बाकू भी एक कारण है हमारे शरीर में जब तक शुद्ध रक्त का संचार होता रहता है तभी तक हम स्वस्थ और नीरोग बने रहते हैं। तम्बाकू चाहे किसी भी तरह सेवन की जाय वह रक्त में विकार अवश्य उत्पन्न कर देती है और जब रक्त पतला पड़ जाता है। उस दशा में शरीर का रंग कुछ पीला और कुछ श्वेत सा दिखाई देने लग जाता है। जब रक्त अपनी असली अवस्था को छोड कर विकृत हो जाता है अथवा जब रक्त कण निर्बल पड़ जाते हैं तो शरीर का संगठन कैसे हो सकता है। उन्नति होने के बजाय वहाँ तो अवनति होती जाती है।

शरीर को स्थिर रखने के लिये शुद्ध वायु की भी आवश्यकता है। प्राणवायु जिसको कि आक्सीजन कहते हैं शरीर को तन्दुरुस्त बनाये रखने का एक उचित साधन है। प्रत्येक प्राणी आक्सीजन के सहारे ही जीवित है। आक्सीजन गैस को शरीर में ग्रहण किया जाता है और कार्बोनिक एसिड गैस यानी दूषित वायु को बाहर निकाला जाता है। जहां आक्सीजन बहुत कम मिलता है या बिलकुल ही नहीं मिलता वहाँ शरीर का क्षय निश्चित है। तम्बाकू द्वारा वायु दूषित हो जाती है और यह दूषित वायु ही शरीर में प्रवेश करती है। फेफड़े तभी उचित रूप से काम करते रहते हैं जब कि उन को शुद्ध वायु मिलती जावे। जब उन्हें दूषित वायु मिलती है तो वे कमजोर पड़ जाते हैं और फलस्वरूप Pthysis (क्षय) हो जाता है इसी प्रकार इस दूषित वायु का ज्ञानतन्तुओं पर भी असर पड़ता है। और उनके कमजोर हो जाने पर मनुष्य की बुद्धि में विकार उत्पन्न हो जाते हैं। विशेष क्या कहा जाय इसी से सब कुछ जाना जा सकता है कि जब शरीर में स्थित खून पर इसका इतना प्रभाव पड़ता है तो यदि इसके द्वारा भयंकर से भयंकर रोग भी उत्पन्न हो जांय तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? चाहे कोई भी क्यों न हो जो इसका सेवन करते हैं उन सभी की यही हालत होती है। मुझे याद है कि एक दफा मैं ने किसी पत्र में पढ़ा था कि अमेरिका में पांच हजार जवाओं का परीक्षण किया गया। जो जो महिलाएँ सिगरेट आदि द्वारा तम्बाकू का सेवन करती थीं वे सभी शिशु पालन में ठीक तौर से सफल न हो सकीं।

क्षय, हृदयरोग, गलक्षत, अजीर्ण, स्नायुदौर्बल्य नपुन्सकता, नेत्ररोग कैंसर, पक्षाघात, पायोरिया, मन्दाग्नि, पागलपन, कब्ज, दमा, खांसी आदि सभी रोग इस तम्बाकू द्वारा उत्पन्न होते देखे गये हैं। सभी डाक्टर, वैद्य और हकीम इसको खतरनाक पदार्थ समझते हैं। इस सम्बन्ध में कुछ डाक्टर वगैरह की सम्मतियां यहां संग्रह कर देना उचित समझते हैं।

डाक्टर फूट कहते हैं— "मैंने देखा है कि तंबाकू नपुन्सकता के कारणों में से एक मुख्य है।"

डाक्टर सी० आर डाईसडेल ने लिखा है कि बाल्यकाल से या पूर्ण अवस्था के पहले से तम्बाकू का सेवन क्षयका मुख्य कारण है।

वाममार्ग और दिगम्बर जैन समाज

(ले०—श्रीमान् पं० नाथूराम जी डोंगरीय न्यायतीर्थ)

हमारे अंतिम तीर्थंकर परम पूज्य भगवान महावीर स्वामी के इस वर्तमान शासन को चलते हुए आज करीब ढाई हजार वर्ष हो चुके। भगवान के द्वारा दिये गये दिव्य उपदेश तथा तत्त्व ज्ञान का प्रसार कुछ दिनों तक अनवच्छिन्न प्रवाहरूपेण मौखिक ही रहा और जब केवली तथा श्रुतकेवली का अभाव होते २ नौबत यहां तक आ पहुंची कि एक अंग का भी किसी जैनाचार्य को पूर्ण ज्ञान न रहा तो उन में से दो महर्षियों को दिन प्रति दिन कम होने वाले जैन वाङ्मय के ज्ञान की चिंता हुई और सोचा कि यदि ज्ञान के ह्रास का यही क्रम रहा तब तो एक दिन जैन तत्त्व ज्ञान का सर्वथा अभाव ही हो जायगा तब भविष्य में होने वाली संतान को सच्चे सुख का मार्ग कौन दिखावेगा। अतः इन्होंने, जिनके नाम श्री पुष्पदंत और भूतबली थे, अपने बचे हुए जैन वाङ्मय के सत्य ज्ञान को ग्रन्थों के रूप में ग्रथित करके जैन सिद्धान्त की रक्षा कर जो हम लोगों का उपकार किया है उसका कौन कायल नहीं है?

इन आचार्यों के पश्चात् भगवान की दिव्य वाणी और उनके पवित्र सदुपदेश के प्रचारक वा पालक अनेक ऋषि महर्षि हुये, जिन्होंने कि अज्ञानांधकार से ग्रस्त असंख्य भारतीय नर नारियों का अपने बहुमूल्य उपदेशों से असीम उपकार किया तथा उक्त आचार्यों के द्वारा लिख कर लगाये गये जैन वाङ्मय के पौधे को समयानुकूल हजारों लाखों ग्रन्थों की रचना से सींच कर पुष्पित और पल्लवित किया; जिसका सुफल हम आज भी भोग रहे हैं। भगवान के मुख से साक्षात दिव्य वाणी न सुनने तथा स्वयं पूर्ण ज्ञानी न होने के साथ साथ स्मृति की शिथिलता एवं परोक्ष ज्ञान के धुंधलेपन के कारण संभव है भगवत्प्रणीत वचनों में इन ग्रन्थ प्रणेताओं के ज्ञान में कुछ विकृति उत्पन्न हो गई हो, जैसा कि समाज के अन्य विद्वानों का भी अभिमत है। फिर भी इन वीतरागता की मूर्तियों ने जो कुछ भी लिखा वह सब वही था जो कुछ कि उन्होंने गुरु परंपरा से भगवान की दिव्य वाणी को पढ़ा सुना और समझा

(चौथे पेज का शेषांश)

डाक्टर हामेकका कहना है कि तम्बाकू मन्दाग्नि का मुख्य कारण है।

डाक्टर केलन लिखते हैं— जितने भी हमने अजीर्ण के रोगी देखे वे सब तम्बाकू का सेवन करने वाले थे।

महात्मा गांधी लिखते हैं— मैं सदा इस टेवको जंगली, हानिकारक और गन्दी मानता आया हूं।

भगवानदास केला लिखते हैं— याद रक्खो कि तम्बाकू भी बड़ा विषेला पदार्थ है। इससे भी शरीर को बहुत हानि पहुंचती है। दुःखकी बात है कि नवयुवकों में सिगरेट और बीड़ी पीने का शौक बढ़ता जारहा है।

था। ग्रन्थ को प्रारंभ करने के पूर्व प्रायः प्रत्येक आचार्य ने स्पष्ट लिखा है कि जो कुछ भी हम यहाँ इस ग्रन्थ में लिखते जा रहे हैं वह सब गुरु परम्परा से प्रवाह रूप में चला आया भगवान महावीर की वाणी का दिव्य स्रोत ही है, हम अपनी ओर से निजी कल्पना करके या किसी अन्य मत से खींच-तान कर कुछ भी नहीं लिखेंगे। आदि २।

इन महर्षियों के निःस्वार्थ एवं लोकोपकारक वीतरागता पूर्ण जीवन व्यतीत करने के कारण हमें आज भी उनके द्वारा निर्मित ग्रन्थ रत्नों पर भगवान की ही साक्षात् पवित्र वाणी के समान श्रद्धा और भक्ति बनी हुई है, क्योंकि आचार्यों की ग्रंथ रचना का मुख्य उद्देश्य लोकोपकार के साथ २ जैनतत्व-ज्ञान की परम्परा को अक्षुण्ण बनाये रखने के सिवाय अपनी प्रख्याति आदि का कोई निजी स्वार्थ न था, जिससे कि वे धर्म के नाम पर पाखंडवर्द्धक ऊटपटांग बातें लिखने या गप्पों पर धर्म का रंग चढ़ाने की कोशिश कर जैन वाङ्मय को बदनाम करते। आगम प्रमाण भी तो तभी माना गया है जब कि वह सच्चे आप्तके ही समान तत्वों का सत्य ज्ञान करा दे। हमें अपने वीतरागी महर्षियों के द्वारा ऐसे ही आगम की रचना होनेका पूर्ण विश्वास है। अस्तु।

इतिहास साक्षी है कि भारत वर्ष सदियों तक जैन सम्राटों के द्वारा शासित हुआ है और उनके राज्यकाल में हजारों लाखों दि० महर्षियों की लीला भूमि भी रहा है जिन्हों ने कि उक्त प्रकार ग्रन्थरचना कर अपनी परोपकार वृत्ति का परिचय दिया। खेद है कि जब से भारत पर विदेशियों के आक्रमण हुये तभी से उक्त प्रकार के तपस्वियों का प्रायः अभाव सा हो गया और सांप्रदायिक मनोवृत्तियों के घृणा-त्मक हमलों से परिस्थिति को प्रतिकूल पा कर बहुत कम लोग दिगम्बरी दीक्षा को धारण करने का साहस कर सके। यही वह समय था जब जैनियों और हिंदुओं के धर्मायतनों में आग लगाई गई वे तोप के गोलों से उड़ाये गये, शास्त्रों को नदियों में डुबाया गया मंदिरों और मूर्तियों को ध्वंस कर अपनी धर्मांधनीचता का परिचय दिया गया। ऐसे कठिन समय में, जब कि देश का शासन विदेशियों के हाथ चला गया था, कुछ धर्म परायण गृहस्थों को अपना सर्वस्व बलिदान करके भी अपनी प्राण प्रिय जिन वाणी के रक्षा की चिंता हुई। इन्होंने बड़ी २ कठिनाइयों का सामना करके जैन शास्त्र भंडारों की यथा शक्ति रक्षा करने में कोई कसर न रक्खी। यद्यपि ये महाशय मुनि न थे तो भी गृहस्थों में इन का पद ऊंचा था—ये त्यागी थे, ब्रह्मचारी थे और जैनधर्म के पक्के श्रद्धानी होने के साथ चारित्र की अन्य क्रियाओं में वा ज्ञान ध्यान में भी काफी बढ़े चढ़े थे।

उस समय मुनियों की कमी से लोगों की श्रद्धा उन भट्टारकों की धर्मप्रियता, चारित्र की पवित्रता और त्यागवृत्ति को देख कर बढ़ने लगी, ऐसा होना स्वाभाविक भी था। कुछ समय तक इन भट्टारकों ने धर्म की अपूर्व सेवा की, किंतु ज्यों २ इनकी मान मर्यादा बढ़ने लगी त्यों २ इनकी प्रवृत्ति भी बदलने लगी—त्याग का स्थान आडम्बर ने और धर्म का स्थान पाखंड ने एवं धार्मिक नेतृत्व की जगह ठेके-दारी ने ले ली। तात्कालिक जैन जनता जो कि

भोली और अज्ञानांधकार से प्रसित थी, उक्त महानुभावों को इससे ज्यादा—हिंदुओंमें ब्राह्मण देवताओं की भ्रान्ति मान्यता करने लगी। अच्छा होता यदि बात यहीं तक खत्म हो जाती, किंतु दुर्भाग्य से ऐसा न हुआ और भट्टारक महानुभावों को अपना नाम करने की धुन सवार हुई। इसी प्रलोभन से उन्हों ने कई जैन शास्त्रों की रचना कर डाली। और उनपर प्रसिद्ध पूर्वाचार्य के नामों की मोहर लगाकर जाली सिक्कों की तरह इन स्वरचित पाखंडवर्द्धक ऊटपटांग बातों से भरे हुये ग्रंथों को प्रचलित करना शुरू कर दिया। रचनाओं के संस्कृत में होने से लोगों की श्रद्धा बिना समझे ही वेद वाक्यों की भांति बढ़ती गई। किंतु जब पिछले दिनों में त्रिवर्णाचार, चर्चासागर, सूर्यप्रकाशादि ग्रन्थों की असलियत मालूम हुई तब आवश्यकता से अधिक विवाद के पश्चात् दो चार विद्वानों को छोड़ प्रायः सभी दि० जैन विद्वानों ने उक्त ग्रन्थों को एक स्वर से अप्रामाणिक घोषित कर दिया।

अफसोस है कि इतने पर भी उपरोक्त अप्रामाणिक ग्रन्थोंमें से ही भट्टारक सोमसेन जी कृत त्रिवर्णाचार उर्फ धर्मरसिक ग्रन्थ के योनि पूजा विषयक प्रकरण को ले कर श्री 'यति प्यारे" नामक किसी श्वेताम्बर जैन महोदय ने "वाममार्ग और दि० समाज" नामक एक ट्रेक्ट प्रकाशित कर दि० समाज के सम्पूर्ण ग्रन्थ रत्नों को कलंकित करने का विफल प्रयास किया है। यद्यपि "यति प्यारे" महोदय जैसे सैंकड़ों व्यक्तियों के आक्षेप करने से भी हमारे आचार्यों की कृतियों पर रंचमात्र भी बट्टा लगने का गुंजायश नहीं है, क्योंकि चन्द्रमा की तरफ मुंह कर थूकने में अपने मुंह पर छींटे पड़ने के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है? फिर भी "यति प्यारे" महोदय के कष्ट पर तरस खा कर इस विषय में मजबूरन कलम उठानी पड़ती है।

श्वेताम्बर मत समीक्षा से चिढ़ कर या अन्य किसी कारण से लेखक महोदय ने इतना कष्ट उठाया है? यह हमें नहीं मालूम, पर आपके ट्रेक्ट के अन्त में, जहां कि आपने "शीघ्र ही प्रकाशित होंगी" शीर्षक देकर "यति प्यारे" की वज्र लेखनी से लिखित दिगम्बरों के ऋषि प्रणीत ग्रंथों की पोप लीला तथा दिगम्बर जैन के भिक्षु और उपदेशक, आदि २ लिख कर अपने भविष्य में ग्रंथ प्रकाशन विषयक विचारों को प्रगट किया है, उसे देखकर आपकी मनोवृत्ति का पता अवश्य चल जाता है। अस्तु, अच्छा हो यदि ये महाशय ऐसे ही अप्रामाणिक ग्रन्थों के ऊटपटांग विषयों की ओट लेकर अपनी "वज्र लेखनी" से दि० समाज और उसके मान्य ग्रन्थों को झूठमूठ ही बदनाम करके दि० और श्वेताम्बरसमाज में व्यर्थ ही विद्वेषाग्नि भड़काने की चेष्टा न करें; क्योंकि ऐसे ग्रन्थ अव्वल तो आचार्यों के बनाये हुये नहीं हैं, दूसरे इन ग्रन्थों में जो ऊटपटांग अश्लील और पाखंड वर्द्धक बातें की गई हैं वे सब या तो भट्टारकों की निजी कल्पनाएं हैं या नहीं तो उन्हों ने मतान्तरों से संग्रह कर लिख मारी हैं।

अलबत्ता श्री सोमसेन भट्टारक ने त्रिवर्णाचार के प्रारंभ में यह प्रतिज्ञा करते हुये भी कि मैं समंतभद्र आदि आचार्यों के द्वारा बनाये गये ग्रन्थों को देखकर ही इस ग्रन्थ की रचना करता हूं, अपनी प्रतिज्ञा का आगे ग्रन्थ में ध्यान न रखकर ऊटपटांग बातें लिख

असम्य अपराध किया है; क्योंकि उसे पढ़ने वाला प्रत्येक व्यक्ति धोखा खा सकता है और उसे जैनधर्म समझकर कुपथ पर अग्रसर हो सकता है। तो भी भट्टारक जी ने अंतिम श्लोक में इस बात को स्पष्ट कर के कि मैं ने इस ग्रन्थ में मतान्तरों से भी संग्रह करके कुछ बातें लिखी हैं, अपनी स्थिति स्पष्ट करके अपने को उक्त दोष से छुटकारा पाने की चेष्टा कर अच्छा ही किया। खेद है कि श्रीमान पं० पन्नालाल जी सोनी ने भट्टारक जी के उस अंतिम श्लोक पर ध्यान न देकर उक्त त्रिवर्णाचार की प्रस्तावना में निम्नलिखित भ्रमपूर्ण शब्द लिख कर योनि पूजादि विषयों को ऋषि प्रणीत शास्त्रों के आधार पर लिखा गया बता दिया। आप लिखते हैं "कि बहुना इस ग्रन्थ के विषय ऋषि प्रणीत आगम में कहीं संक्षेप से और कहीं विस्तार से पाये जाते हैं। अतएव हमें तो इस ग्रन्थ में न अप्रामाणिकता ही प्रतीत होती है और न आगम विरुद्धता ही।

आगे चलकर फिर लिखते हैं—

"मुझे तो इस ग्रंथ का प्रायः (?) कोई भी विषय शास्त्र विरुद्ध नहीं जान पड़ा। इस ग्रन्थ में जो २ विषय बताये हैं उनका बीज ऋषि प्रणीत शास्त्रों में मिलता है।" आदि

क्या सोनी जी महोदय कृपा कर यह लिखने का कष्ट करेंगे कि उन्होंने त्रिवर्णाचार में वर्णित योनि पूजादि सत्कर्मों का बीज किस दि० ऋषि प्रणीत शास्त्र में देखा है? यदि किसी दि० आचार्य की कृति में उक्त बातों का विधान वे दिखा सकें तब तो उक्त ट्रैक्ट के लेखक महोदय के आक्षेप विचार-णीय" समझे जाने चाहिये। और यदि योनि पूजा आदि का बीज वपन केवल त्रिवर्णाचार में ही भट्टारक जी ने किया है तब सोनी जी का परम कर्तव्य है कि वे निष्पक्ष हो कर अपनी भूल स्वीकार और त्रिवर्णाचार जैसे ग्रन्थों को अप्रामाणिक घोषित कर दि० जैन ऋषियों एवं शास्त्रों और समाज को ऐसे झूठे कलंकों से बचावें। यह तो निश्चित ही है कि आगे ॐ ह्रीं तथा पीछे असिआउसा लगा कर योनिस्थ देवता ! की पूजा करने के लिये जो स्वाहा पूर्वक जो मंत्र रचा गया है और गोबर, गोमूत्र, दूध आदि से पूजा करने का तरकीब बताई गई है यह सब श्रीमान सोमसेन जी के उर्वर मस्तिष्क का अद्भुत पूर्व आविष्कार के सिवाय कुछ नहीं है। एक तो योनि जैसी पवित्र जगह को देवता लोग निवास स्थान चुन कर वहां आराम करना पसंद करेंगे यह बात ही बेढब मालूम होती है; और यदि इसे मान भी लिया जाय तो जैनधर्म ऐसे देवताओं की पूजा करना भी पाखंड समझता है। फिर समझ में नहीं आता कि भट्टारक जी ने ऐसी पाखंडवर्द्धक बातें लिखने का धर्म के नाम पर दुःसाहस क्यों किया? अस्तु

अब हम भट्टारक जी के उन शब्दों को सोनी जी के अनुवाद सहित लिख कर इस लेख को समाप्त कर देना चाहते हैं जिसके द्वारा उन्हों ने इस बात को स्पष्ट किया है कि त्रिवर्णाचार की कुछ बातें दूसरे मत मतान्तरोंसे भी ली गई हैं और जिसपर अनुवाद कर चुकने पर भी स्वयं सोनी जी ने व दि० जैन ग्रन्थों पर आक्षेप करने वाले यति प्यारे जी ने गौर ही नहीं किया। भट्टारक जी के शब्द ये हैं—

श्लोका येऽत्र पुरातना विलिखिता अस्माभिरन्वर्थत-
स्तेदीपा इव सत्सु काव्य रचन मुद्दीपयन्ते परम्।

नानाशास्त्रमतान्तरं यदि नवं प्रायोऽकरिष्यं त्वहम्।
काऽपाऽस्यास्य महोतदेति सुधियः केचित् प्रयोगं यद्धा:
॥२१८॥ त्रिवर्णाचार अ० १२ का अंतिम श्लोक

सोनी जी का अनुवाद—

"इस शास्त्र में हमने प्रकरणानुसार ग्रंथों के ज्यों प्राचीन प्रसिद्ध श्लोक लिखे हैं। वे श्लोक सज्जन पुरुषों के समक्ष दीपक के समान स्वयं प्रकाशमान हैं जो काव्य रचना को उत्कृष्टता के साथ उद्दीपन करते हैं। यद्यपि मैं ने अनेक शास्त्र और मतों का सार लेकर इस नवीन शास्त्र की रचना की है, उनके सामने इसका प्रकाश पड़ेगा, यह आशा नहीं तो भी कितने ही बुद्धिमान नवीन २ प्रयोगों को पसंद करते हैं अतः उनका चित्त इससे अवश्य अनुरंजित होगा ॥२१८॥

उपरोक्त श्लोक और अनुवाद को देखकर पाठक समझ गये होंगे कि भट्टारक सोमसेन जीने त्रिवर्णाचार की रचना केवल आदिपुराण या दि० ऋषि प्रणीत अन्य शास्त्रों के ही आधार पर नहीं की है, जैसा कि सोनी जी भ्रम से अपनी प्रस्तावना में लिख गये हैं, बल्कि जैनाजैन शास्त्रों और अनेक मतों का एक नवीन संग्रह ग्रन्थ बुद्धिमानों का चित्त रंजन करने के लिये तैयार किया है जिससे कि वर्तमान में बुद्धिमानों के अतिरिक्त अबुद्धिमानों का भी योनि पूजादि को पढ़कर मनोरंजन हुये बिना नहीं रहता। अस्तु।

कई वर्ष पूर्व उक्त शास्त्र एवं उसके छोटे बड़े भाइयों का दि० समाज डटकर बहिष्कार कर चुकी है तो भी ट्रैक्ट के लेखक महोदय ने गड़े मुर्दों को उखाड़ कर टट्टी की ओट में शिकार खेल ही डाली जिससे कि हमें विवश होकर अनिच्छा पूर्वक ये थोड़ी सी बातें लिखनी पड़ीं। आशा है कि सोनी जी एवं ट्रैक्ट के सुलेखक अपने २ विषय पर सोच विचार कर क्रमशः प्रतिवाद और प्रायश्चित्त करने का कष्ट उठावेंगे तथा भविष्य में भी यति प्यारे जी अपनी "वज्र लेखनी" सोच विचार कर ही अनुसंधान पूर्वक चलाने का कष्ट उठावेंगे।

सं० अभिमत—अनेक भट्टारकों ने मुसल्मानी शासन के समय जो जैनधर्म की अपूर्व अनुपम सेवा की है दिगम्बर जैन समाज यदि उसे भुला दे तो कृतज्ञता का नाश होगा उस समय का इतिहास भट्टारकों का अमूल्य सेवाओं को जैनधर्म और जैन समाज का सरक्षक रूप स्वीकार करता है। अनेक उद्भट विद्वान भट्टारकों ने निर्दोष ग्रन्थरत्नों की भी रचना की है जिनका हमको आदर करना चाहिये। किन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ सोमसेन त्रिवर्णाचार सरीखे कुछ भट्टारकी ग्रंथों के अप्रमाण कहने में भी संकोच न करना चाहिये।

—अजितकुमार

स्वामीजी का वेद-भाष्य

(ले०— श्रीमान स्वामी कर्मानन्द जी)

स्वामी दयानन्द जी महाराज भारतवर्षके वर्तमान समय में प्रसिद्ध सुधारक थे। इसमें किसीको संदेह नहीं है। परन्तु एक सुधारक हृदय में वेदों के प्रति इतना पक्षपात होना कुछ अनुचित सा ही प्रतीत होता है। यदि स्वामी जी वेदों के विषय में पक्षपात न करके इनका भी सुधार करते तो आज भारतकी तथा हिन्दू जाति की अवस्थाको इससे अधिक लाभ होता। श्री स्वामी जी ने वेदों के प्रति इतना पक्षपात किया है यह उनके ग्रन्थों के देखने से भली भाँति विदित होजाता है।

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं
त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शंकवोऽ
र्पिता षष्ठिर्न चला चलासः।

ऋग्वेद मं० १ सू० १६४। ४८

भाष्य— यानों के बाहर भी थंभे रखने चाहिये जिसमें सब कलायन्त्र लगाये जायें, उनमें एक चक्र बनाना चाहिये, जिसके घुमाने से सब कला घूमें। फिर उसके बीचमें तीन चक्र रखने चाहिये जो एक के चलानेसे सब रुक जांय और उनके निकाल लेने से सब अलग होजायें, उनमें ६० कलायन्त्र रखने चाहिये। उनमें कई एक चलते रहें तथा कई बन्द रहें, अर्थात जब विमान को ऊपर चढ़ाना हो तब भाप के घरके ऊपरके मुख बन्द रखने चाहिये और जब ऊपरसे नीचे उतारना हो तो ऊपरके मुख अनुमानसे खोल देने चाहियें ऐसे ही जब पूर्व को चलाना हो तब पूर्वके बन्द करके पश्चिमके खोलने चाहिये इसी प्रकार उत्तर दक्षिण के भी जान लेना।

ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका पृ० १९९

इस मन्त्रमें तो क्या सम्पूर्ण सूक्त तथा मण्डल अथवा सम्पूर्ण वेदमें भी स्वामी जी के उपरोक्त अर्थ का पोषक एक भी शब्द हमको तो प्राप्त नहीं हुआ अनेक आर्य विद्वानों से भी इस विषय में वार्तालाप हुआ परन्तु इस भाष्यका मूल कोई भी न बता सका राईसे पर्वत होनेकी बात तो हम सुनते थे किन्तु यहाँ बिना ही राई के पर्वत बन गया। यह प्रत्यक्ष देखने में आया। मगर अफसोस है कि पर्वत अभीतक मनमोदक ही बना रहा, इसको कार्यरूपमें न तो गुरुकुल का साइन्स विभाग कर सका और न प्रतिनिधि सभायें।

सम्भव है उनके ध्यानमें यह मन्त्र और यह यान बनानेकी अपूर्व विधि न आई हो, अन्यथा न तो उनको चन्दा माँगने की आवश्यकता थी और न गुरुकुल में फीसकी मुसीबत आती। उपरोक्त वैदिक विधि से अपूर्व यान बना लेते और यश तथा धन दोनोंकी कमी न रहती। आशा है प्रतिनिधि पञ्जाब की इस शताब्दी पर इस यानका आविष्कार किया जायगा परन्तु दुःख तो इस बातका है कि श्री स्वा० जी महाराज ने ही इस ऋग्वेदके भाष्य में ही इस मन्त्रका देवता सम्वत्सरात्मक काल लिख दिया। सम्भव है अनुक्रमणिकाकार महर्षि शौनकसे तथा महर्षि स्वामी दयानन्द जी से यहाँ भूल होगई है

अन्यथा इस मन्त्रका देवता "विचित्र यान" लिखना चाहिये था जिससे विद्वानों को कुछ तो सन्तोष हो जाता। आशा है अगले संस्करण में यह सुधार कर दिया जावेगा।

हमें तो आश्चर्य इस बातका है कि इतने बड़े सुधारक की महानात्माने ऐसा लेख लिखने की आज्ञा किस प्रकार दी। इस प्रकार के कल्पित भाष्यों से वेदों के गौरवकी आशा करना बन्ध्यापुत्र के विवाहकी आशा मात्र है। वास्तवमें तो यहां सम्वत्सर (वर्ष) का जिकर है। जैसाकि इसके देवतासे प्रकट है, उसी कालको चक्र कहा गया है। यही बात निरुक्तकारने भी स्वीकार की है। स्वामी जी ने निरुक्तकी भी यहां अवहेलना कैसे की, यह भी विचारणीय है। अस्तु। इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि—

द्वादश परिधियों वाला सम्वत्सरात्मक चक्र कालचक्र है उसमें नाभिरूप तीन ऋतुएं हैं तथा ३६० दिन रूपी आरे हैं। इस सुगम, सुबोध स्पष्ट मूलार्थको छोडकर निराधार असंभव क्लिष्ट कल्पना करने से क्या लाभ होसकता है? आनन्द तो यह है कि लोकमें भी कालचक्र प्रसिद्ध है।

तथाच

नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत्।
आनन्दनन्दावाण्डौमे भगः सौभाग्यं पसः।
जङ्घाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽस्मि विशि राजा प्रतिष्ठितः ६
यजु० अ० २०, मं० ६

भाष्य०—हे मनुष्यो! मेरी स्मरण करने हारी वृत्ति मध्य प्रदेश, विशेष वा अनेक ज्ञान मूलेन्द्रिय, (गुदेन्द्रिय) प्रजा जनक योनि अण्ड के आकार वृषणावयव संभोग के सुख से आनन्द कारक, मेरा ऐश्वर्य, लिङ्ग, पुत्र पौत्रादि युक्त होवे. इसी प्रकार मैं जंघा और पदों के साथ प्रजा में प्रतिष्ठा को प्राप्त पक्षपात रहित न्याय धर्म्म के समान राजा हूँ जिस से तुम लोग मेरे अनुकूल रहो।

इसकी समीक्षा करना उचित नहीं प्रतीत होता और न सभ्यता इस की आज्ञा देती है, तथा च— विशेष आवश्यकता भी प्रतीत नहीं होती क्योंकि ईश्वरीय ज्ञान की बातें हैं हम जैसे साधारण व्यक्ति न तो उसको समझ सकते है और न ही उसपर कुछ लिखने का अधिकार रखते हैं, यहां प्रजाजनक योनि वाला राजा का होना भी ईश्वरीयज्ञान की एक विशेष महिमा है, यदि रानी होती तब तो हमारे ज्ञान में और इसमें अन्तर ही क्या रहता? महीधर और उवट ने यजमान की पत्नी लिखकर जो भूल की थी उसको स्वामी जी ने शुद्ध करके वेदोंकी मान मर्यादा रखली, यही सन्तोष की बात है

तथा च—

आसी नासोऽअरुणी नामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्रयच्छततऽहोर्जं दधात
यजु० अ० १९ मंत्र ६३

भाष्य०—हे पितृ लोगो! तुम इस गृहस्थाश्रम में गौर वर्ण युक्त स्त्रियों के समीप बैठे हुये पुत्रों के और दाता मनुष्य के लिये धन को धरो, उस धन के भागों को दिया करो जिससे वे स्त्री आदि सब लोग पराक्रम को धारण करें।

सुनते थे कि वेद भगवान किसी का पक्षपात नहीं करते परन्तु यहां वह मिथ्या प्रतीत होता है, क्योंकि इस मन्त्र में स्पष्ट "गौर वर्ण" वाली स्त्रियों के पास बैठे हुओं को धन देने की आज्ञा है, मालूम

नहीं जिनकी स्त्रियां काली हैं तथा सुन्दर नहीं हैं, उन के पतियों को क्यों इस धन से वंचित रक्खा है, जब वेद भगवान ही इनके साथ इस प्रकार का अन्याय करे तब यदि वेदानुयायी इनके साथ अन्याय करें और उनके साथ पक्षपात करें तो आश्चर्य ही क्या है, प्रतीत होता है ये वेद मद्रास प्रान्त वालों के लिये नहीं बने हैं, इसी लिये उस प्रान्त की चीजों का भी वर्णन वेदों ने करने का कष्ट नहीं किया है ।

तथा च

प्रतूर्तं वाजिन्ना द्रव वरिष्ठा मनु सम्वतम् ।
दिविते जन्म परमन्तरिक्षे तव नाभिः प्रथिव्यमधियोनिरित्
यजुर्वेद अ० ११, १२

(हे वाजिन्)! प्रशंसित ज्ञान से युक्त विद्वान जिस (ते) आपका शिल्प विद्या से (दिवि) सूर्य के प्रकाश में उत्तम प्रसिद्धि, आपका आकाश में बन्धन और इस पृथ्वी में (योनिः) निमित्त प्रयोजन है सो आप विमान आदि यानों के अधिष्ठाता होकर अत्यन्त उत्तम अच्छे प्रकार विभाग की हुई गति को शीघ्र ही पश्चात अच्छे प्रकार चलाइये ।

यद्यपि इस भाष्य का उपरोक्त मन्त्र के शब्दों से कोई सम्बन्ध नहीं है फिर भी इस भाष्य को समझने के लिये एक विद्वानों की सभा बुलानी चाहिये, जब भाष्य अपनी कल्पना मात्र से ही लिखना था तो इतना अवश्य उचित था कि भाषा सरल सुबोध होती ।

॥ और भी ॥

अजो ह्यग्नेरजनिष्ट शोकात् सो अपश्यज्जनितारमग्रे ।
.. .. ·यजुर्वेद अ० १३, ५१

भाष्य०—हे राजन्! तू जो निश्चित बकरा पैदा होता है वह उत्पादक को प्रथम देखता है, जिससे पवित्र हुये विद्वान उत्तम सुख और दिव्य गुणों के उपाय को प्राप्त होते हैं, और जिससे बुद्धि युक्त प्रसिद्धि को प्राप्त होवें उससे उत्तम गुणों उत्तम सुख तथा उससे वृद्धि को प्राप्त हों, जो बनैली शेही तेरी प्रजा को हानि देने वाली है। उसको बतलाता हूं उससे बनाये हुये पदार्थ से बढ़ता हुआ शरीर में निवास कर और उस शल्यकी को तेरा शोक प्राप्त हो और तेरे जिस शत्रु से हम लोग द्वेष करें उसको शोकरूप अग्नि से शोक अर्थात शोक से बढ़ कर शोक अत्यन्त शोक प्राप्त हो ।

कहां तक लिखें भाष्य का अधिकतर भाग इसी प्रकार की बातों से सुशोभित है जिसको पढ़ते ही मनुष्य की श्रद्धा वेदों पर दृढ़ हो जाती है, इसी लिये यूरुप वाले भी इस भाष्य पर मुग्ध हो कर आर्य-समाजी बनने लगे हैं, भारत के ही विद्वानों में ज्ञान की न्यूनता है जो इस प्रकार की सूक्ष्म बातोंको नहीं समझ सकते, यदि कुछ समझते भी हैं तो उनको पक्षपात सत्य को स्वीकार नहीं करने देता, बाकी के लोभ के वशीभूत होकर नहीं मानते । भला राजा बकरा उत्पन्न होता है और वह पैदा करने वाले को पहले देखता है, आदि विज्ञान की बातें इन कलियुगी मनुष्य की समझ में कैसे आ सकती हैं. नहीं मालूम ऐसे अपूर्व विज्ञान इस भाष्य में कितने भरे पडे हैं यदि सार्वदेशिक सभा अथवा प्रतिनिधि सभायें कुछ प्रयत्न करके उनको प्रकाशित करदें तो आज संसार का कितना उपकार हो, आशा है समाज की उत्तरदायी सभायें ऐसा करने की कृपा करेंगी ।

-:(*):—

(ले०—श्रीमान पं० भंवरलाल जी न्यायतीर्थ)

उस दिन मेरे मित्र रमण कह रहे थे कि " कल मैं अपने कमरे में बैठा २ कुछ पढ़ रहा था। करीब शाम के सात बजे का समय था ज्योंही मैं ने पीक थूकने के लिये खिड़की के बाहर मुंह निकाला तो मेरी नजर एक पुरुष और एक औरत पर पड़ी जो कि रास्ते में पास २ खड़े कुछ बातें कर रहे थे। मेरी आहट सुनते ही वे अलग होगए किन्तु कुछ ही सेकिन्ड बाद फिर वहीं खड़े होकर बात करने लगे। मुझे उन की यह बात देखकर शक हो गया कि ये कौन है? इस तरह छुपे तौर से शाम के समय इस गली में चुपके २ बातें करने का क्या मतलब है? आदि! चट से मैं अपने नीचे वाले कमरे में आगया और सुनने लगा उन की बातें। उन की बातें कुछ ऐसे मतलब की थीं कि मेरे कान सिवाय उन की बातों के और कुछ नहीं सुनना चाहते थे। उस समय मेरे मकान में यदि कोई बच्चा रोता या कोई आहट होती तो मुझे अखरती थी। उन में से जो स्त्री थी वह कह रही थी :— 'मुझे और कोई दुख नहीं है, केवल एक यही दुःख है'

इस पर वह पुरुष बोला :— " क्या यह कम आफत है। रात दिन तुझे लोग तकलीफ देते रहते हैं। कभी तेरी सास तुझको मारती है तो कभी जेठ। तेरा खाविन्द भी तुझे रात दिन मारता रहता है। तेरे साथ कोई अच्छा सुलूक नहीं करते। तुझे प्रतिदिन तंग किया करते हैं। ऐसी तकलीफों से खुदा बचावे। ऐसी हालत में तू यहाँ रह कर क्या करेगी चल हमारे साथ वहां सब तरह की मौज है। तुझे सर आंखों पर रक्खेंगे। जरा भी तकलीफ नहीं होगी। कहीं बुलबुल भी कौवों में रहती है। देख! तुझे याद होगा उस दिन कैसा आराम मिला था, अच्छा खाना अच्छा पीना

यह इतना ही कह पाया था कि सामने से एक आदमी आता हुआ उन को दिखाई दिया। वे फौरन चुप हो गये और झट से लगे इधर उधर खिसकने। मैंने यह समझा कि इस आदमी को चले जाने पर वे फिर यहां आजायेंगे। किन्तु मेरा खयाल गलत था। वे जल्दी २ एक गली में होकर चल दिये।

उसी समय मैं भी जल्दी से कमीज पहन उनके पीछे लपका। इस समय वे बाजार में होकर जारहे थे। पर प्रकाश से साफ मालूम हो रहा था कि वे एक दूसरे से कुछ दूर पर थे किन्तु फिर भी उन की कभी २ चौ नजरें हो जाया करती थी। थोड़ी ही दूर गए होंगे कि वे दोनों एक गली में घुस गये और एक जगह खड़े होकर कुछ बात चीत करने लगे। मैं भी झट से एक मकान की दीवार की आड में खड़ा होगया और उधर कान लगाये। वह औरत कहने लगी :— " अच्छा अब मैं जाती हूं। मन्दिर का नाम लेकर आई थी, आरती हो चुकी। अब देर ठीक नहीं है।"

यह औरत तो यह कह रही थी कि उस पुरुष ने इस का हाथ पकड़ा और कहने लगा " बता अब कब चलेगी? छोड़ इन घर वालों को। मैं तुझे ऐसी

जगह रक्खूँगा जहाँ से हौवा भी खबर नहीं पासकता। देख वहां तुझे कितना आराम मिलता है

इस पुरुष की चिकनी चुपड़ी बातों में वह पहले से ही फँस चुकी थी। किसी दुखिया को फँसालेना कोई कठिन काम नहीं। पहले तो वह कुछ झिझकी किन्तु उसने कह दिया कि शनिवार को मेले के रोज शाम को तुम से मिलूँगी और शायद उसी समय से तुम्हारे साथ हो लूँगी। तुम वहां ही मिलना।

यह कह कर वे चले गए।"

"तो इसका तुमने क्या मतलब निकाला? भाई! केशव की इन बातों को सुनकर विजयकान्त बोला :-

"मतलब क्या? वह फौरन घर छोड़ कर भगने वाली है।" केशवदास ने जवाब दिया,

"तो इसका क्या किया जाय?" विजयकान्त ने पूछा।

"क्या किया जाय?" कोई ऐसी तदबीर होनी चाहिए जिस से वह विधर्मी न बने और अपने घर-वालों के पास ही रहे।

"भाई इस में तुम्हारी कोई तदबीर काम नहीं कर सकती। जब मियां बीबी राजी तो क्या करेगा काजी"

"तो वह किसी प्रकार भी रह नहीं सकती?"

"हर्गिज नहीं। जब उसके घरवालों के यह हालात हैं। उस को रात दिन तंग करते हैं। उस बेचारी का घर में कोई स्थान नहीं समझा जाता। उसे कुत्ते की तरह सब दुतकारते हैं। उसे जब सभी लोगों की असह्ययातनाएँ सहनी पड़ती हैं तो इलाज ही क्या है। तुम क्या कह रहे हो उस दिन तुम्हारे ही संबन्धियों में से एक विधवा स्त्री अमुक पुरुष के साथ जा रही थी। क्या याद नहीं कि उस दिन तुम और हमने कितनी कोशिश की थी किन्तु नतीजा क्या निकला। जब उस बेचारी को घर में पशु का सा जीवन व्यतीत करने के लिए बन्धन किया जाय, रात दिन जिसपर गालियों और जूतों तक की बौछार हो, जिसको सभी छोटे बड़े बुरी तरह पेश आयें, जो इन दुष्टों की यातनाओं से घबरा जाय, जिस को घर में कोई सान्त्वना देने वाला न मिले वह क्या करे उस के लिये इलाज ही क्या बचजाता है। झट से वह विधर्मी बनजाती है। उधर विधर्मी हाथ फैलाए बैठे हैं और आने वाले का खूब स्वागत करते हैं। दुःखी मनुष्य को यदि कोई जरा भी सहायता दे देता है तो वह उसके लिये राम परमेश्वर बन जाता है। जो कुछ वह कहे दुःखी उसको मानना अपना कर्तव्य समझता है।"

यह सुन कर केशवदास बोला :- भाई! तुम्हारी इन बातों को मैं खूब जानता हूं। इस में उन बेचारी निर्दोष स्त्रियों का कोई दोष नहीं जो कुछ है पुरुष समाज का। इन सब घटनाओं का कारण पुरुष है। यही अन्याय और अत्याचार करता है। किन्तु कलंकित होना पड़ता है उन मूक स्त्रियों को। खैर।

जो कुछ है सो है अभी तो उस के लिये कोई इलाज ढूंढना चाहिये।

विजयकान्त बोला:— इलाज यही है कि येनकेन प्रकारेण कल मेले के समय के पहले पहले उसको एवं उसके घरवालों को समझाना चाहिये। इसके बाद उसका यथेष्ट प्रबन्ध कर देने की आवश्यकता है। अगर इतना न हो तो उसे अबलाश्रम में भिजवा देना चाहिये। ऐसे मरीजों का इलाज वहां ही होता

है। इस रोग की सब से बढ़िया दवा वही हो।

विजयकान्त अपनी बात पूरी भी न कर पाये थे कि सामने से रमण आते हुए दिखाई दिए। उन्हें देखकर केशवदास बोले :— लो भाई! रमण भी आगये। इनसे भी पूछें।

क्यों मि० रमण! उस दिन वाली उस औरत की घटना के सम्बन्ध में क्या समाचार हैं?

रमण ने जवाब दिया :— भाई! मैं ने उस के घर का पता लगाकर उसके घरवालों को सचेत कर आया हूं और उसे भी खूब समझा आया। उम्मीद तो ऐसी ही है कि वह न भग सकेगी।

केशवदास ने कहा :— "अच्छा हुआ हमने भी यही सोचा था। किन्तु फिर भी इस काम का ढीला डालने की आवश्यकता नहीं। न मालूम दुश्मन कब अपना काम बनाले"

* * * *

आज उस शनिवार वाले मेले को गए करीब दो तीन सप्ताह हो चुके। उस दिन रमण केशवदास और विजयकान्त के अथक परिश्रम से वह घटना होते होते बच गई थी किन्तु कौन जानता है कि दुखी मनुष्य कब क्या कर बैठता है। उस समय उसकी बुद्धि ठिकाने नहीं रहती। धर्म अधर्म का, पाप पुण्य का, भले बुरे का, कर्तव्य अकर्तव्य का विचार उसके हृदय से जाता रहता है। उस दिन तो वह घटना न हुई किन्तु न जाने कल से वह औरत कहां गायब है। घर वालों में तहलका मचा हुआ है। पुलिस भी मौजूद है और तहकीकात में मशगूल है। घर वालों की दौड़ धूप मची हुई है किन्तु नतीजा अभी तक कुछ नहीं। एक छोटी सी बच्ची कह रही है:—'कल भाभी तो शाम को एक आदमी के साथ बातें कर रही थी और उसके थोड़ी देर बाद मन्दिर दर्शन करनेके लिये गई थी'।

उस दिन रमण वगैरह यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए थे कि हमने एक स्त्री को विधर्मी होने से बचा लिया किन्तु जब से उसके भाग जाने की घटना को सुना है तब से वे बहुत दुखी हो रहे हैं। आज तीनों मित्र विजयकान्त के घर बैठे अफसोस कर रहे हैं। तीनों ही शिर पर हाथ रख कर हिन्दूजाति की इस दशा पर रो रहे हैं।

कुछ देर बाद विजयकान्त मौन भंग करते हुए बोले:—भाई इसमें अफसोस करने की क्या बात है। मैंने उसी दिन कह दिया था कि इस का इलाज कुछ नहीं। उसके घर वालों की प्रकृति कठोर है। उसे बहुत दुःख देते थे। जब दुःखी मनुष्य आपत्तियों से अधीर हो उठता है तो संसार में उसे बुरे से बुरा कार्य करने में भी लज्जा का अनुभव नहीं होता। उसको हेयाहेय का विचार तनिक भी छू नहीं पाता। ऐसी अवस्था में उसको दूषण देना व्यर्थ है। इस विषय को लेकर स्त्री समाज को बदनाम करना सत्य की हत्या करना है व्यर्थ में ही लोग उन भोली भाली निरपराध स्त्रियों को दोष देते हैं। किन्तु यह नहीं सोचते कि जब हम उन पर इतने अत्याचार करते है तो वे कहां जाय। आगे होकर ऐसे कार्य तो हम करते है जिससे न गिरने वाली भी गिरे। रात दिन होने वाली सामाजिक कुरीतियों की तरफ और खुद के अत्याचारों की तरफ तो हम जरा भी ध्यान नहीं देते और कहीं सधवा या विशेष कर विधवा कोई अपराध करले तो चट से जमीन और आसमान को

एक कर डालते हैं तथा उसको कुत्ते की तरह दुत-कारने और घृणा करने में भी संकोच नहीं करते। जो हमारी मातृ जाति है। जिसकी कोखसे असंख्य वीररत्न उत्पन्न हो चुके हैं उस पवित्र जाति के लिये इतने घृणित भाव। धिक्कार है। संसार स्वार्थी है। न मालूम मनुष्य अपने स्वार्थ की खातिर धर्म तक की ओट में रात दिन कितने अत्याचार एवं पाप करता रहता है। किन्तु तनिक भी संकोच नहीं करता। इतना ही नहीं उस खुद के किये हुए अपराध की सजा उस दया की मूर्ति स्त्री जाति के प्रति मढना चाहता है। कैसी विडम्बना है? कितना छल है? अपराधी कौन है और पाप का भागी कौन बनता है? 'उलटा चोर कोतवाल को डाँटे' वाली कहावत ठीक यहाँ चरितार्थ होती है। अहा! प्रभो यह पुरुष जाति कितनी स्वार्थ लोलुपी है। उन मूकों की तो कुछ भी सुनने को तैयार नहीं है, उन्हें आगे बढ़ने को शिक्षित होने को और कुछ कहने को जरा भी मौका नहीं देती। उस को पापिनी, दुराचारणी आदि बताकर दूर से ही फटकार दिया जाता है। अस्तु

इस समय आप लोगों को चुप रहने की आवश्यकता नहीं है आवश्यकता है उनको शिक्षित एवं शक्ति शाली बनाने की, पुरुष समाज के अवगुणों की समालोचना करने की, कुरीतियों को जड़ से उखाड़ कर फेंक देने की और वीर बनने की। अन्यथा एक दिन वह आयगा जब कि हमको रसातल की ओर ही जाना पड़ेगा। आदि

विजयकान्त के इस लम्बे चौड़ व्याख्यान से दो मित्रों पर बहुत असर हुआ और उसी दिन सायं काल व्याख्यान मन्दिर में एक सभा की गई जिस में 'कुरीतिध्वंसक' नामक एक मंडल की स्थापना हुई और उस सभा के सैक्रेटरी बाबू विजयकान्त बनाये गये।

विरोध परिहार

(ले० श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

विरोध ३०— आपने जो गाथा उद्धृत की है। उसमें "आगमलिहिओ" का अर्थ ही आपने बदल दिया। आपने 'लिखा गया' के बदले में 'रचा गया' अर्थ किया है। जिससे संस्कृत न जानने वाले पाठक धोखे में पड़ जाँय। वीर सम्वत ९८० के पहले होने वाले सिद्धसेन दिवाकरने आगमकी इन्हीं बातों का अपने सम्मतितर्क में उल्लेख किया है। और आगम के नाम पर उल्लेख किया है। इस से मालूम होता है कि ये आगम ९८० के पहले भी थे। इस विषय में 'विरोधी मित्रों से' शीर्षक लेखमाला में बहुत कुछ लिखा गया है। देखिये जैनजगत वर्ष ७ अंक २३ पृ० ११ और ७-२४-१३। ८-२ ११ और ९-१०-१२ आदि।

परिहार ३०— "लिहिओ" शब्दका रचागया की तरह 'लिखा गया' भी अर्थ होता है। आजकल "मैं एक पुस्तक लिख रहा हूं या मुझे आज एक लेख लिखना है"। इन वाक्योंमें 'लिखना शब्द' रचनार्थ में ही प्रयुक्त होता है। लिखने का अर्थ नकल करना है यह कथमपि स्वीकार नहीं किया जा सकता। पं० दरबारीलाल जी ने स्वयं भी लिखने शब्दको रचनार्थ में प्रयोग किया है *। आजकल तो पुस्तक या लेखों के रचयिताओं के लिये 'लेखक' शब्द ही प्रयुक्त होता है। अतः यह स्पष्ट है कि "लिहिओ" का एकान्ततः लिखना ही अर्थ नहीं है किन्तु 'रचना करना' भी है। इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी का हम पर अर्थ बदलने का आरोप मिथ्या है।

जहांतक सिद्धसेन दिवाकरके ग्रन्थों में सूत्र साहित्य के उल्लेखों का सम्बन्ध है वहां तक तो आक्षेपक के साथ हमारा कोई मतभेद नहीं है। हम स्वीकार करते हैं कि सिद्धसेन दिवाकर ने अपने लेखों में सूत्र साहित्य के उल्लेखोंका उल्लेख किया है किन्तु जब आप यह कहते है कि सिद्धसेन दिवाकरका समय वीर सं० ९८० से पूर्व का है। तब हम आपकी बात मानने को तैयार नहीं हैं। सिद्धसेन दिवाकर वीर स० ९८० से पूर्वके महापुरुष हैं इस के समर्थन में विद्वान लेखकने एक भी युक्ति उपस्थित नहीं की है। आपका कर्तव्य था कि अपनी इस प्रतिज्ञा के साथ कमसे कम एक दो तो प्रमाण उपस्थित करते जिससे आपकी प्रतिज्ञा की सत्यता की परीक्षा की जा सकती।

सिद्धसेन दिवाकर के सम्बन्ध में यही कहा जाता है कि यह विक्रमादित्य की सभा के नवरत्नों में से एक थे। विक्रम के नव रत्नों में सिद्धसेनका नाम नहीं है किन्तु फिरभी कतिपय विद्वानों की धारणा है कि इनमें जिस क्षपणक का उल्लेख है वह सिद्धसेन ही है। अभ्युपगम

---

* मैं ने अपने न्याय प्रदीप में सप्तभंगी पर एक अध्याय ही लिखा है ....
उसका सत्य स्वरूप बतलाने के लिये मैं लेख माला में लिखने वाला हूं।
जैनजगत वर्ष ६ अङ्क २० पेज १४

सिद्धान्त से यदि इस प्रश्न को न भी उठाया जाय और यही स्वीकार कर लिया जाय कि सिद्धसेन दिवाकर इन्हीं नौरत्नों में से एक है तब भी उनका अस्तित्व वीर सं० ६८० से प्राचीन सिद्ध नहीं होता इनही नौ रत्नों में वराहमिहर का भी नाम है। यह ईसाकी छठी शताब्दी के ज्योतिषी हैं। इनके सम्बन्धमें इनके लेख ही पर्याप्त हैं जबकि वराहमिहर का समय छठी शताब्दी से आगे नहीं जाता। तब सिद्धसेन दिवाकरके समयको ही आगे कैसे लेजाया जा सकता है। सिद्धसेन दिवाकर रचित न्यायावतार की भूमिका और मध्ययुगके न्यायके इतिहास से डाक्टर सतीशचन्द्र जी भी इसही परिणाम पर पहुंचे हैं। ‡

डा० जे कोबी की दृष्टि से तो दिवाकर महोदय इससे भी बाद के हैं *। आपका कहना है कि जिस समय दिवाकर महोदय ने न्यायावतार की रचना की थी उस समय धर्मकीर्ति बौद्धों के प्रत्यक्ष लक्षण में संशोधन कर चुके थे। धर्मकीर्ति से प्राचीन बौद्धाचार्यों के प्रत्यक्ष के लक्षण में अभ्रान्त विशेषण नहीं मिलता। यह विशेषण धर्मकीर्ति के प्रत्यक्ष लक्षण में मिलता है। दिवाकर महोदय ने अपनी प्रत्यक्ष की परिभाषा में धर्मकीर्ति के इस विशेषण का खंडन किया है अतः सिद्धसेन दिवाकर का समय धर्मकीर्ति के बाद का ही होना चाहिये। धर्मकीर्ति का समय ईसाकी सातवीं शताब्दी है अतः दिवाकर महानुभाव को इससे पूर्व का कथमपि स्वीकार नहीं किया जा सकता।

उपर्युक्त बातों की मौजूदगी में भी यह यह कह देना कि सिद्धसेन दिवाकर वीर सं० ६८० से पूर्व के महापुरुष हैं यह एक आश्चर्य की बात है। जब कि सिद्धसेन दिवाकर का समय वी० सं० ६८० से पूर्व का निश्चित नहीं है तब इनही के आधार से वर्तमान सूत्र साहित्य को वीर० सं० ६८० से पूर्वका स्वीकार नहीं किया जा सकता।

इसके सम्बन्ध में लेखक महाशय ने अपने पूर्व लेखों की तरफ भी संकेत किया है अतः यहां उनपर

---

‡ Siddhsena was the well known Ksapanaka who Adorned the court of Vikramaditya and was one of the nine gems. (Nava Ratan) Varahamihara, the famous astronomer who was another of the nine Gems of the Court of Vikramaditya lived A D 505 and A, D. 587 We are told that Ksapanaka alias Sidhasena was a contempiary of Varahamihara so he must have flourished about the middle of the 6th century. न्यायावतार की भूमिका by डा० सतीशचन्द्र जी

* The first Svetamber Author of Sanskrit works which have come down to us was Siddhasena Divakara who must be assigned to the 7th century A D. Since he was acquainted with the logices of the Buddhist philospher Dharam Kirti.

स्वामी समन्तभद्र० पेज २५०

भी प्रकाश डाल देना अनुचित एवं अनावश्यक न होगा।

पं० दरबारीलाल जी ने अपने उल्लिखित लेखों में निम्नलिखित बातें लिखी हैं।

१—"श्वेताम्बरों का आगम देवर्द्धिगणी के समय में संकलित हुआ है यह ठीक है परन्तु फिर भी दिगम्बर साहित्य की अपेक्षा अधिक प्रामाणिक है क्योंकि दिगम्बरों के पास संकलित साहित्य ही नहीं है मनकी पुस्तकें बना ली हैं" जैनजगत वर्ष ७ अंक २३ पे० ११।

२—वास्तव में देवर्द्धिगणी ने श्वेताम्बर साहित्य बनाया नहीं था किन्तु संकलित किया था। इससे पहिले मथुरा और पाटलिपुत्र में दो वाचनायें और भी हो चुकी थीं। मथुरा और बल्लभीकी वाचनाओं में जो साधारण पाठभेद है वह भी आज उपलब्ध है वर्तमान के सूत्र वास्तव में माथुरी वाचना के है जो स्कंदिलाचार्य के अधिष्ठातृत्व में हुई थी। नन्दीसूत्र की निम्नलिखित गाथा इस बात का प्रमाण है—
जेसिं इमो अणुओगो पयरह अज्जावि अड्ढ भरहम्मि बहुनयर निग्गय जसे ते वंदे स्खंदिलायरिए।

अर्थात जिन का अनुयोग अभी अर्द्धभरत में प्रचलित है उन स्कंदिलाचाय की वन्दना करता हूं। इससे स्पष्ट है कि सूत्र ग्रन्थ किसी आचार्य ने मनमाने ढंग से एक समय में बना नहीं लिये है किन्तु श्रमण संघ द्वारा चले आरहे है। जैनजगत वर्ष ७, अंक २४ पेज १३

४—दिगम्बर जैन ग्रन्थों में उत्तराध्ययन का का नाम आता है और उनके अनुसार ही वह श्रुत-केवलियों के समय का है फिर उसे भगवान महावीर के ६०० वर्ष बाद का कहना ठीक नहीं। उस समय वे व्यवस्थित रूप से लिपि बद्ध किये गये थे। सिद्ध-सेन दिवाकर आदि आचार्य इस सूत्र संकलन से पहले हो गये हैं और उनके ग्रन्थों में इनही सूत्रों के आधार से खूब चर्चायें हैं इससे सिद्ध होता है कि इन आचार्यों के समय में भी ये सूत्र उपलब्ध थे। अगर कहा जाय कि संकलन के समय नई २ बातें मिला दी तो इस आरोप से दिगम्बर भी कैसे बच सकते हैं— जैनजगत वर्ष ६ अंक १० पेज १२

दरबारीलाल जी के संकेतित तीसरे लेख में कोई उल्लेखयोग्य बात नहीं है अतः हमने उसको यहां लिखना उचित नहीं समझा श्वेताम्बरियों का साहित्य संकलित है और दिगम्बरियों का आचार्यों की निजी रचना है इस बात का निर्णय शेष बातों के निर्णय पर अवलम्बित है अतः हम इसपर अन्त में प्रकाश डालेंगे।

अपने इन लेखों में श्वेताम्बर साहित्य को वी० सं० ६८० से पूर्व का प्रमाणित करनेके लिये दरबारी लाल जी ने तीन बातें लिखी है। एक दिगम्बर ग्रन्थों के अनुसार उत्तराध्ययन का श्रुत केवली के समय का होना, दूसरी नन्दी सूत्र की गाथा और तीसरी सिद्धसेन दिवाकर का वी० सं० ६८० से पूर्व का होना। इनमें से तीसरी पर तो हम अपने इस ही लेख में विचार कर चुके हैं तथा यह सिद्ध कर चुके हैं कि सिद्धसेन दिवाकर को वी० सं० ६८० से पूर्व का कथमपि नहीं माना जा सकता। अतः इस के आधार से श्वेताम्बर साहित्य को वी० सं० ६८० से प्राचीन नहीं माना जा सकता।

किस दिगम्बर शास्त्र के आधार से वर्तमान श्वेताम्बरीय उत्तराध्ययन का अस्तित्व श्रुतकेवलियों के समकालीन प्रमाणित होता है दरबारीलाल जी ने यह नहीं लिखा। जब तक दिगम्बर शास्त्रों के अपेक्षित उल्लेख सामने न आ जाँय तब तक इसके सम्बन्धमें क्या कहा जा सकता है। यही बात दरबारीलाल जी के सम्बन्ध में है। जब तक आप अपनी कल्पना के आधार स्वरूप दिगम्बर ग्रंथों के उल्लेखों को उपस्थित करके विचार नहीं करते तब तक जो कुछ भी आप लिखेंगे वह केवल प्रतिज्ञा ही समझी जावेगी और इसका विचारकों की दृष्टि में कुछ भी मूल्य न होगा। दरबारीलाल जी ने प्रस्तुत उल्लेखों को उपस्थित करना तो दूर रहा उनके सम्बन्ध में संकेत भी नहीं किये हैं अतः स्पष्ट है कि प्रस्तुत विषय के समर्थन में दरबारीलाल जी की पहिली बात भी निरर्थक है। अब रह जाती है नन्दी-सूत्र के प्रमाण की बात।

श्वेताम्बरीय साहित्य संकलित साहित्य है और इस का संकलन भिन्न २ ऋषियों के स्मरणाधार से स्कंदिलाचार्य ने किया था इन सब बातों के निराकरण के लिये नन्दीसूत्र पर्याप्त है—। नन्दी सूत्र का जो प्रमाण दरबारीलाल जी ने उपस्थित किया है वह उसके स्थविरावलि प्रकरण का है। इसमें नन्दीसूत्रकार ने भगवान ऋषभ से लेकर अपने से पूर्व तीर्थंकरों और आचार्यों को नमस्कार किया है। यह नमस्कार श्रेणी देवर्द्धि-गणि से पूर्व ही समाप्त होती है अतः यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इसके रचयिता स्वयं देवर्द्धिगणि या उनके समय के कोई दूसरे आचार्य हैं। देवर्द्धि-गणि से पूर्व जितने भी आचार्य हुये हैं उन सबको इसमें नमस्कार किया गया है अतः इस नमस्कारमाला का समय गणि महोदय से पूर्व का किसी भी प्रकार स्वीकार नहीं किया जा सकता।

इसही स्थविरावली के अन्त में निम्नलिखित उल्लेख मिलता है।

जे अन्ने भगवंते कालिय सुय आणु ओगिए धीरे।
तं वंदिऊण सिरसा नाणस्स परूवणं वोच्छं॥

अर्थात—इन सबके अतिरिक्त अन्य भी जो आचार्य हैं उनको नमस्कार करके ज्ञानकी प्ररूपणा करूंगा।

"परूवणं वोच्छं" अर्थात प्ररूपणा करूंगा, इससे प्रगट है कि प्रस्तुत नन्दीसूत्र संकलन स्वरूप नहीं है किन्तु किसी एक मस्तिष्क की रचना है। इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी जिस नन्दीसूत्र से श्वेताम्बरीय आगमों को संकलनात्मक तथा स्कन्दिलाचार्य के समयका प्रमाणित करना चाहते हैं उस ही से उनकी मान्यता का खंडन होता है। इसके अतिरिक्त दरबारीलाल जी द्वारा उद्धृत नन्दीसूत्र के प्रमाणों में भी ऐसी कोई बात नहीं है जिससे श्वेताम्बरीय आगम ग्रन्थोंको स्कंदिलाचार्य के समयका संकलन माना जा सके। इसमें तो केवल यही बतलाया गया है कि जिस का अनुयोग अभी भी अर्द्ध भारत में प्रचलित है उनको नमस्कार होवे। इसमें ऐसी कौनसी बात है जिससे दरबारीलाल जी अपने अभिमतका समर्थन करना चाहते हैं। ऐसा मालूम होता है कि स्कंदिला-चार्य ने अपने समय में ख्याति विशेष प्राप्तकी होगी तथा उनकी वह ख्याति नन्दी सूत्रके समय में भी होगी अतः नन्दीसूत्रकारने उनकी इस बातको लेकर उन को नमस्कार किया है।

भूलभरी समालोचना

मूर्ति पूजा

—:(*):—

नगीना निवासी, आर्यसमाजी स्वामी शांतानन्द जी सन्यासी ने अपनी "जैनसिद्धान्तसमालोचना" नामक छोटे से ट्रैक्ट में जैन सिद्धान्त की साधारण जानकारी से भी दूर रहते हुए समालोचना करने का साहस किया उस समालोचना का खोखलापन जैन दर्शन के द्वितीय वर्ष के कुछ अंकों में प्रकाशित हुआ था। समालोचना के उस अंश के आगे आपने जैन धर्म की मूर्ति पूजा विषय पर कुछ निःसार आक्षेप किये हैं यहां उन पर प्रकाश डाला जाता है।

आत्मा पर बाहरी जड़ तथा चेतन पदार्थों का प्रभाव प्रति समय पड़ता रहता है जैसा अच्छा बुरा पदार्थ आत्मा के सामने आता है यह सांसारिक आत्मा उसके अनुसार अपने अच्छे बुरे विचार बना लिया करता है यह कार्य अन्य इन्द्रियों की अपेक्षा आंख के द्वारा अधिकतर होता है आंखों के सामने यदि सुन्दर चीज आ जाती है तो आत्मा प्रसन्न हो जाता है और यदि अनिष्ट वस्तु दिखाई दी तो चित्त के विचार खराब हो जाते हैं। महायोद्धा भीम, भीष्म, प्रताप, शिवा जी आदि के जड़ चित्र वे चाहे कागज पर बने हुए हों अथवा पत्थर, लकडी या मिट्टी के हों देखने वालों के हृदय पर बिना किसी उपदेशक के वीरता के भाव उत्पन्न कर दिया करते हैं। और रूपवती, युवती कामनियों के चित्र या मूर्तियाँ देखने वाले लोगों के हृदय पर कामवासना स्वयमेव जागृत कर दिया करता हैं। मूर्ति पूजा का रहस्य इन दृष्टान्तों से स्पष्ट हो जाता है।

सांसारिक मोह ममता में फंसे हुए इस जीवन के सुधार के लिये जहाँ तात्त्विक उपदेश की आवश्यकता है वहीं ऐसी आदर्श मूर्ति की भी बहुत भारी जरूरत है जो कि अपनी ओर देखने वाले विचार शील व्यक्ति के हृदय पर सांसारिक विषय वासनाओं से नफरत उत्पन्न कराके शान्ति का चित्र अंकित कर दे। इस आवश्यकता की पूर्ति जैन मन्दिरों में विराजमान अर्हन्त भगवान की प्रतिमा से होती है। अर्हन्त भगवान की मूर्ति लोभ, क्रोध, अभिमान, काम, दैन्य आदि दुर्भावों से शून्य शान्ति वीतरागता एवं कृतकृत्यता का चित्र होती है उस मूर्ति का दर्शन एवं मनन आत्मा पर काम, क्रोध आदि दुर्भावों को हटा कर शांति तथा वीतरागता का भाव उत्पन्न करता है। इसी आध्यात्मिक दृष्टि से जैनधर्म में मूर्ति पूजा का सिद्धान्त गृहस्थ पुरुष के लिये आवश्यक ढंग पर रक्खा गया है क्योंकि रात दिन गृहस्थाश्रम की मोह ममतामयी चक्की को चलाने में लगे हुए मनुष्य को अपने आत्मसुधार के लिये ऐसी वीतराग प्रतिमा का दर्शन पूजन बहुत आवश्यक है।

यहां इतना और बतला देना भी जरूरी है कि जैन सिद्धान्त अनुसार 'जड़ मूर्ति की पूजा' नहीं किन्तु उस पवित्र जीवनमुक्त, कृतकृत्य, वीतराग योगी की पूजा है जोकि आत्मा की उन्नति के लिये आदर्श है। अर्थात् जैन लोग मूर्ति के आधार से उस जीवन्मुक्त परमात्मा की पूजा, स्तुति करते हैं जो कि वास्तव में

पूज्य था और इस समय भी है। इसी उद्देश से जैनियों की मूर्ति पूजा में उस जीवन्मुक्त परमात्मा के आदर्श गुणों की ही भक्ति तथा स्तुति भरी हुई है।

जैनधर्म का यह मूर्ति पूजा वाला सिद्धान्त जहां निर्दोष है वहीं आत्मसुधार के लिये प्रत्येक विवेकशील प्राणी को ग्रहण करने योग्य भी है। जो पुरुष जैनियों की मूर्ति पूजा पर आक्षेप करने का साहस करता है वह असल बात को बिना समझे ही अपनी बुद्धि का उपयोग करता है यह बात निःसन्देह है।

स्वामी शान्तानन्द जी ने मूर्ति पूजा विषय पर निम्नलिखित आक्षेप किये हैं—

१—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जीने जो "जैनधर्म का सिद्धान्त" नामक पर्चा छपाया है उसमें उन्होंने मूर्ति पूजा का कोई उल्लेख नहीं किया संभवतः उन्हों ने उसे निःसार समझ कर ही नहीं लिखा है।

२—भगवान ऋषभदेव ने मूर्ति पूजा नहीं की थी और न उन्हों ने मनुष्यों को मूर्ति पूजा करने का उपदेश ही दिया था।

३—मूर्ति जड़ है स्वयं उसे अपना ही ज्ञान नहीं फिर वह अपने भक्त को क्या कुछ दे सकता है।

४—जैनियों के कहे अनुसार मूर्ति से वीतरागता प्राप्त होती है किन्तु प्रतिदिन मूर्ति पूजा करते हुये कोई जैनी वीतराग नहीं हुआ फिर मूर्ति पूजा से क्या लाभ है?

५—जड मूर्ति में वीतरागता नहीं हो सकती फिर उसकी उपासना से वीतरागभाव कैसे प्राप्त हो सकता है।

६—भगवान ऋषभदेव आदि की असली प्रतिमा इस समय कहीं नहीं है जैन मन्दिरों में विराजमान पत्थर एवं धातु की मूर्तियाँ काल्पनिक हैं जो कि कारीगर ने अपने दिमाग से बनाई हैं। ऐसी काल्पनिक मूर्ति से वास्तविक वीतरागता प्राप्त नहीं नहीं हो सकती।

इन आक्षेपों का समाधान इस तरह है—

१—पं० राजेन्द्रकुमार जी के पैम्फलेट में जैन सिद्धान्त की समस्त बातें नहीं लिखी हुई हैं उसमें कुछ एक बातें ही लिखी हुई हैं। गुणस्थान, जीव स्थान, मार्गणा, कर्मसिद्धान्त, अस्तिकाय आदि मोटी बातें भी उस पैम्फलेट में नहीं आ पाई हैं। मूर्ति पूजा एक आचरण का विषय है आचरण विषयक तो कोई भी बात उस पैम्फलेट में विद्यमान नहीं है। शराब, मांस, शहद, बिना छना पानी, रात्रि भोजन आदि ग्रहण नहीं करना चाहिये जैनसिद्धान्तकी आचरण विषयक इन मूल बातों में से कोई बात भी वहां नहीं लिखी हुई इसका मतलब स्वामी शान्तानन्द जी यह समझ लें कि 'राजेन्द्रकुमार जी ने इन बातों को निःसार समझ कर छोड़ दिया है' तो उनको यह समझ उनका उपहास करावेगी। राजेन्द्रकुमार जी ने अपने पैम्फलेट में जैनसिद्धान्त की ही कुछ एक बातें प्रकाशित की हैं जिनका परिचय अजैन जनता को देना उन्होंने अधिक आवश्यक समझा। इस कारण उनके पैम्फलेट से मूर्ति पूजा की निःसारता का विधान समझना मोटी भूल है।

२—भगवान ऋषभदेव ने सांसारिक मनुष्योंको

आत्मकल्याण के लिये मूर्ति पूजन का उपदेश नहीं दिया था यह शान्तानन्द जी ने किस दिव्य ज्ञान से जाना। इस अवसर्पिणी काल में जिस जैनसिद्धान्त की नींव भगवान ऋषभदेव ने डाली उसमें गृहस्थ जैन के लिये दैनिक ६ आवश्यक कार्यों में मूर्ति पूजा को सबमें प्रथम रक्खा गया है फिर भी स्वामी जी का यह कहना कि 'भगवान ऋषभदेव ने मूर्ति पूजा का उपदेश नहीं दिया' निराधार है तथा स्वामी जी की जैनधर्म विषयक अनभिज्ञता को प्रगट करता है भगवान ऋषभदेव तीर्थंकर थे असाधारण महान आत्मा थे जो बात सर्वसाधारण मूर्ति के आधार से प्राप्त कर सकते है वह बात बिना मूर्ति का निमित्त पाये भी प्राप्त करने की उनमें शक्ति थी अतः वे इस कार्य में अपवाद रूप हैं। उनकी समता साधारण जनता नहीं कर सकती।

३—मूर्ति जड़ है और वह अपने भक्त पुरुषों को कुछ नहीं दे सकती। यह बात कुछ अंश में सत्य है और जैनधर्म भी यह नहीं कहता कि देव मूर्ति अपने भक्त पुरुषों को अपने पास से कुछ बरफी, पेड़ा, धन दौलत दे देती है किन्तु जिन शुभ कर्मों से सांसारिक वैभव मिला करता है वे शुभ कर्म वीतराग देवमूर्ति के निमित्त से उपासक उत्पन्न करता है इस अपेक्षा यह कहना या मानना भी अयुक्त नहीं कि "देव मूर्ति इष्ट पदार्थ देती है"। प्रकाश एक जड़ पदार्थ है किन्तु उसके निमित्त से संसार के प्रायः सभी कार्य होते हैं इस निमित्त कारण की दृष्टि से यह कहा जाता है कि प्रकाश के कारण समस्त कारोबार होता है बिना प्रकाश के कुछ नहीं हो सकता। शान्तानन्द जी अगर महाभारत में आई हुई एकलव्य भील की धनुषविद्या की कथा पढ़ें तो उनका भ्रम दूर हो जायगा। एकलव्य ने मिट्टी का पुतला बना कर उस को गुरु द्रोणाचार्य मान कर उस जड़ मूर्ति से धनुष बाण चलाना सीखा था और अर्जुनके समान धनुर्धर हो गया था। स्वामी जी महाराज ! उस कथा को पढ़िये और अपने भ्रम को विचार पूर्वक दूर कीजिये फिर आप कभी न कहेंगे कि जड़ मूर्ति अपने उपासकों को कुछ नहीं दे सकती।

४—वीतराग मूर्ति की भक्ति वीतरागता का कारण है क्योंकि जिस रूप की मूर्ति होती है विचार शील व्यक्ति के हृदय पर उस मूर्ति का वैसा ही प्रभाव पड़ा करता है जैसे रूपवती वेश्या की मूर्ति का दर्शन कामवासना तथा वीर पुरुष की मूर्ति का दर्शन हृदय पर वीरता का भाव स्वयं बिना किसी प्रेरणा के उत्पन्न कराता है हालांकि वह कामवासना या वीरता उस जड़ मूर्ति का निजी गुण नहीं और न उसमें भरा हुआ है। इसी प्रकार, शान्त, निर्विकार निर्भय, वीतराग प्रतिमा का प्रभाव भी विचारशील हृदय पर शान्त, वीतरागता का भाव अंकित कर सकता है तथा करता है। यदि कोई पुरुष वीतराग मूर्ति के सामने खड़ा रह कर अपना चित्त घर, दुकान में घुमाता रहे और अपना उपयोग उस मूर्ति की ओर न लगावे तो इसमें उस मूर्ति का प्रभाव नष्ट नहीं होसकता जब तक वह मूर्ति उस रूपमें विद्यमान है वह प्रभाव उससे दूर नहीं हो सकता। वीतराग मूर्ति के उपासक जैनियों में अन्य लोगों की अपेक्षा वीतरागता का भाव प्रायः अधिक होता है जैसा कि उनके चाल चलन, खान पान व्यवहार आदि से प्रसिद्ध है। यह वीतराग प्रतिमा की भक्ति का

प्रभाव है। वीतराग प्रतिमा के निमित्त से अनेक मनुष्य वीतराग हो चुके हैं जरा जैन इतिहास देखिये।

५—यह यद्यपि सच है कि वीतरागता एक चैतन्य गुण है इस कारण वीतराग गुण जड मूर्ति में विद्यमान नहीं है किन्तु यह बात भी असत्य नहीं कि वीतराग गुण शून्य होते हुए भी वीतराग पुरुष का आकार धारण करने के कारण वह मूर्ति अपनी ओर देखने वाले विचारशील मनुष्य को वीतरागता उत्पन्न करा सकती है जिस तरह सुंदर, युवती वेश्या का जड़ चित्र अपनी ओर देखने वाले पुरुष के हृदय में काम वासना प्रगट कर देता है।

६—यह बात निःसन्देह सत्य है कि भगवान ऋषभदेव आदि तीर्थंकरों की असली मूर्ति विद्यमान नहीं है किन्तु यह भी तो असत्य नहीं कि जिस रूपमें उन्होंने जीवन्मुक्त अवस्था प्राप्त की थी उस अवस्था वाली ये मूर्तियां हैं। संसार में अधिकतर ही क्या ९९ प्रतिशत (फीसदी) कार्य नकल से ही होते हैं। सम्राट पंचम जौर्ज एक हैं किन्तु स्टाम्प, टिकिट, रुपये आदि लाखों चीजोंपर उनकी नकलरूप मूर्ति अगणित कार्य चला रही है। जिन वेदोंको स्वामी शान्तानन्द जी ईश्वरीय ज्ञान कहते हैं वे वेद भी तो असल नहीं है ऋषियों की कविता की नकल रूप ग्रन्थ हैं। इसी नकल से चार वेद हजारों लाखों की संख्या में दीख पड़ते हैं। स्वामी जी स्वयं विचारें कि वेद ज्ञान से शून्य कम्पोजीटर, प्रेसमैन के हाथ के छपे हुये नकल रूप वेद मंत्र ज्ञान उत्पन्न कराते हैं या नहीं। फिर मूर्ति में आपको अड़चन आती है।

अभी दो ढाई मास पहले आर्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान उपदेशक श्रीमान पं० बुद्धदेव विद्यालंकार का हैदराबाद (दक्षिण) में एक सनातनधर्मी विद्वान से 'मूर्ति पूजा' विषय पर शास्त्रार्थ हुआ था। शास्त्रार्थ के समय विपक्षी विद्वान ने पं० बुद्धदेव जी को कहा कि आप यदि मूर्ति पूजक नहीं हैं तो स्वामी दयानन्द जी के चित्र को जूतों तो मार दीजिये पं० बुद्धदेव जी ने अपने आप को मूर्तिपूजक न बतलाने के खयाल से "स्वामी दयानन्द जी के फोटो को जूते लगा दिये"। इस बात को लेकर आर्यसमाज में पं० बुद्धदेव जी के विरुद्ध बहुत भारी आन्दोलन हुआ पं० बुद्धदेव जी को अनेक आर्यसमाजी पत्रों ने बड़ी जली भुनी सुनाई। अनेक आर्यसमाजी विद्वानों, नेताओं ने कहा कि 'स्वामी दयानन्द जी के चित्र को जूते लगा कर बुद्धदेव जी ने आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द जीका भारी अपमान किया है बुद्धदेव जी को क्षमा माँग कर प्रायश्चित्त लेना चाहिये' आदि आदि।

जो आर्यसमाज आज भी स्वामी दयानन्द जी के चित्र को स्वामी दयानन्द जी समझ कर उसका सन्मान करता है उस जड चित्र का अपमान करने वालेको अक्षम्य अपराधी समझता है वह आर्यसमाज अपने आप को मूर्ति पूजक न होने का किस तरह समर्थन कर सकता है। स्वामी दयानन्द जी के बुत के अपमान से हृदयका दुखना ही आर्यसमाज की मूर्ति का स्पष्ट प्रमाण है। इसी तरह वेद रूप जड़ पुस्तकों को ईश्वरीय ज्ञान मान कर उन को शिर झुकाना आर्यसमाज की दूसरी मूर्ति पूजा है। इतना सब कुछ होने पर भी स्वामी शान्तानन्द जी मूर्ति पूजा पर आक्षेप करने चले हैं वह भी जैन जनता की मूर्ति पूजा पर!

क्षत्रचूड़ामणि की सूक्तियां

तृतीयलम्ब ।

धनाशा कस्य नो भवेत् ॥२॥

भा०—धन की अभिलाषा किसके नहीं होती ? अर्थात् सभी के होती है। चाहे कोई धनिक हो या निर्धन, सब यही चाहते हैं कि मुझे कहीं से धन मिले।

निरंकुशं हि जीवानामैहिकोपायचिन्तनम् ॥३॥

प्राणियों के अपने जीवन-निर्वाह के उपायों का विचार अपने आप ही होने लगता है। चाहे कोई प्राणी परलोक के लिये कुछ करे या न करे, पर इस शरीर के निर्वाहके लिये वह बिना किसीके समझाये बुझाये ही अनेक उपाय करने लगता है।

रोचते न हि शौण्डाय परपिण्डादिदीनता ॥४॥

उद्योगी को दूसरे के पीछे निर्वाह करना पसन्द नहीं होता। वह अपनी शक्ति से अपना काम चलाता है, किसी दूसरे की सम्पत्ति को अपने काम में नहीं लेता।

सर्वदा भुज्यमानो हि पर्वतोऽपि परिक्षयी ॥५॥

निरन्तर काम में लेने से पर्वत का भी अन्त हो सकता है। कोई भी वस्तु चाहे जितने भी महा-परिमाणवाली क्यों न हो, यदि उसमें आय न हो कर निरन्तर व्यय ही होता रहे तो एक दिन उसका अन्त अवश्य ही सम्भव है।

अन्यक्तं मरणं प्राणैः प्राणिनां हि दरिद्रता ॥६॥

दरिद्र रहना और मर जाना एक सा ही है। विशेषता केवल यही है कि मरने वाले का इस शरीर से सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है और दरिद्रका शरीर से सम्बन्ध रहते हुये भी उसके लिये संसार सूना सा हो जाता है। सच पूछा जाय तो बेचारे दरिद्री का संसार में कोई भी अपना नहीं होता। भाई, बन्धु, मित्र आदि सब उसके लिये पराये हो जाते हैं।

लोकद्वयहितं चापि सुकरं वस्तु नासताम् ॥१०॥

इस लोक और परलोक दोनों जगह लाभ पहुंचाने वाली वस्तु भी असज्जनों के पास पहुंच कर विपरीत फल देती है—अच्छी भी बुरी हो जाती है और सज्जनों के पास की बुरी वस्तु भी उत्तम फल दिखाती है। नदियों का स्वादिष्ट जल भी समुद्र में मिलकर खारा हो जाता है और वैद्य का दिया हुआ जहर भी रोगी के लिये अमृत जैसा लाभकारी हो जाता है।

वार्धिमेव धनार्थी किं गाहते पार्थिवानपि ॥११॥

धन चाहने वाला समुद्रको ही क्या, इस विस्तृत भूमण्डल को भी मथ डालता है। वह धन के लिये समुद्र की यात्राकरके ही सन्तुष्ट नहीं हो जाता, अपितु भूमण्डल पर सर्वत्र विचरण करता है। बड़े बड़े राजा महाराजाओं से मिलता है और पर्वतों तक का भी अन्त ले डालता है।

अतर्क्यं खलु जीवानामर्थसंचयकारणम् ॥१२॥

जो आगे धनी बनते हैं उनके लिये द्रव्य प्राप्ति का कारण पहले से ही निश्चित नहीं होता। यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक व्यक्ति को ऐसा

करने से धन मिलेगा। मनुष्य पहले विचार क्या करता है और फिर हो क्या जाता है।

न हि वेद्यो विपत्क्षणः ॥१३॥

विपत्ति आने का समय मालूम नहीं होता। ऐसे यकायक कारण उपस्थित हो जाते हैं, जो मनुष्य के बहुत कुछ किये कराये को नष्ट कर देते हैं, जिन का कि पहले निश्चय नहीं होता। भूकम्प का किसे पता रहता है जो अचानक उत्पन्न हो कर मनुष्य जीवन में एक विचित्र परिवर्तन कर देता है।

अज्ञात्याज्ञस्य को भेदो हेतौ चेद्विकृतिर्द्वयोः ॥१४

यदि कारण के उपस्थित होने पर विद्वान भी शोक करने लगें तो फिर मूर्खोंसे उनमें क्या विशेषता है? कुछ नहीं। जो आपत्ति कालमें घबराते नहीं वे ही विद्वान कहलाते हैं और जब विद्वान कहलाने वाले भी घबराने लग जांय तबतो वे भी मूर्ख ही हैं।

तत्वज्ञानं ही जीवानां लोकद्वयसुखावहम्।

तत्वज्ञान इस लोक और परलोक दोनों में ही सुख देने वाला है। इस भवमें यदि तत्वज्ञान जागृत रहता है तो विपत्तियां नहीं सतातीं और विपत्तियां से न घबराने के कारण परलोक में भी कष्ट नहीं सहने पड़ते।

सत्यायुषि ही जायेत प्राणिनां प्राणरक्षणम ।१६।

आयुके बाकी रहने पर प्राणियों की प्राणरक्षा होजाती है। यदि आयु पूर्ण होजाती है तो प्राणी मर जाता है और यदि उसमें कुछ बाकी रहता है तो मरता मरता भी जी जाता है।

राज्यभ्रष्टोऽपि तुष्टः स्याल्लब्धप्राणो हि जन्तुकः ।२०

राज्य चले जाने पर भी यदि विपत्ति में प्राण बच जांय तो मनुष्य प्रसन्न होजाता है। किसी बड़े संकट में पड़े हुये धनी से पूछा जाय कि तू अपने प्राण बचाना चाहता है या धनकी रक्षा करना? तो वह यही कहेगा कि चाहे मेरा सर्वस्व नष्ट होजाय किन्तु मेरे प्राण बचने चाहिये। क्योंकि धनका मिलना तो फिर भी संभव है पर जब मनुष्य स्वयं ही न रहे तो फिर वह सुरक्षित धन भी किस काम आसकता है।

दुःखार्थोऽपि सुखार्थोहि तत्वज्ञानधने सति ।२१।

तत्व ज्ञानरूपी धनके रहने पर दुःख देने वाले पदार्थ भी सुख देते हैं। तत्वज्ञानी पुरुष अपने तत्वज्ञान के बलसे दुःख जनक पदार्थों का संयोग होने पर भी सुखका अनुभव करने लगता है। उसे कोई भी पदार्थ दुख देने वाला प्रतीत नहीं होता।

मध्ये मध्ये हि चापल्यमामोहादपि योगिनाम् ॥२६॥

योगिजनों के भी जबतक मोहका सद्भाव रहता है तब तक कभी २ चपलता होजाती है। यद्यपि उदासीन लोग विकृत होना नहीं चाहते, तथापि मोहका उदय उन्हें कुछ विचलित कर देता है ऐसी अवस्था में कर्मोदयको ही प्रधान मानना चाहिये।

संसृतौ व्यवहारस्तु न हि मायाविवर्जितः ॥२७॥

संसार में व्यवहार मायासे शून्य नहीं होता। अर्थात संसारी पुरुष अपने व्यवहारों में बहुत कुछ छल कपट किया करते हैं।

दुःखस्यानन्तरं सौख्यमतिमात्रं हि देहिनाम् ।३४

शरीरधारियों के दुःखके बाद ही बहुधा सुख हुआ करता है। पहले दुख पाये विना सुखका मिलना बहुत कठिन है।

मित्रं धात्रीपतिं लोके कोऽपरः पश्यतः सुखी ।३६।

प्रथम तो मित्र सामान्य का समागम ही सुखका कारण हुआ करता है और उसमें यदि राजा सरीखा महापुरुष मित्र मिल जाय तबतो कहना ही क्या ? उसके समान और सुखी ही कौन हो सकता है । मनुष्य को अपने मित्रको राज्यासन पर आरूढ देख कर निःसीम हर्ष होता है ।

प्राणेष्वपि प्रमाणं यत्तद्धि मित्रमितीष्यते ॥३७

जो अपने मित्रके लिये प्राणों जैसी प्रिय वस्तु भी देने के लिये तैयार रहे वही मित्र कहा जाता है । अर्थात जो अपने मित्र के लिये प्राणों जैसी प्रिय वस्तु भी दे दे वही सच्चा मित्र है ।

अङ्गजायां हि सुत्यायामयोग्यं कालयापनम्

पुत्री के विवाह योग्य होजाने पर समय खोना उचित नहीं । अर्थात लड़की यदि युवती हो चुकी हो और यदि योग्य वर मिल गया हो तो फिर उनका सम्बन्ध करने में व्यर्थ विलम्ब न करना चाहिये, जहां तक होसके शीघ्र ही उनका विवाह कर देना चाहिये ।

स्त्रीणामेव हि दुर्मतिः ॥४०॥

स्त्रियों के खोटी बुद्धि होती है । वे किसी बात का आगा पीछा सोचे बिना ही हट कर बैठती हैं । और किसी बातको पूरी जाने बिना ही अनेक सन्देह किया करती है जिससे परिणाममें अनिष्ट होनेकी संभावना रहती हैं । इसलिये किसी भी सन्देह करने योग्य मामले को स्त्रियोंको पहिले ही अच्छी तरह समझा देना चाहिये ।

स्त्रीरागेण के नाम जगत्यां न प्रतारिताः ।४३॥

इस संसारमें स्त्रियोंके अनुरागसे कौन नहीं ठगे गये अर्थात् सभी पुरुष स्त्रियों के प्रेमके वशीभूत होते हैं । और उत्तम स्त्रीके समागमके लिये हमेशा लाला-यित रहते हैं ।

अपुष्कला हि विद्या स्यात्त्वच्छकफला क्वचित् ।

अपूर्ण विद्या तिरस्कार ही का कारण होती है । अर्थात पूर्ण विद्यासे सम्मान होता है । कीर्ति बढ़ती है, अभीष्ट प्राप्ति होती हैं, पर अधूरी विद्यासे जगह २ ठुकराना पड़ता है और अवसर पर निरादर होता है कहा भी है—"कम इल्म बुरा"

अनविद्या हि विद्या स्याल्लोकद्वयफलावहा ॥४५॥

निर्दोष विद्या इस लोक और परलोक दोनों जगह अपना फल दिखाती है । उत्तम विद्यावाला इस संसार में तो उस कलाके जानने वालों में आदर्श होता ही है तथा उसे परलोक में अपनी उत्तम विद्या का फल मिलता है ।

अन्तिकं कृत पुण्यानां श्रीरन्विष्य हि गच्छति ॥

लक्ष्मी स्वयं ही ढूंढकर पुण्यात्मा पुरुषों के निकट चली जाती है । अर्थात पुण्य करने वालोंको इस विषयकी चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं कि हमको लक्ष्मी मिले, क्योंकि लक्ष्मी तो स्वयं ही ऐसे बड़ भागियों के समागम के लिये उत्सुक रहती है । जहां कहीं पुण्यात्मा मिले और वह उनके पास अपने आप चली जाती है ।

अन्याभ्युदयखिन्नत्वं तद्धि दौर्जन्यलक्षणम् ।४६।

'दूसरोंकी बढ़ती देखकर खिन्न होना' यही दुर्जनताका लक्षण है । दुर्जन पुरुषोंको दूसरेकी उन्नति बहुत बुरी लगती है । किसीको कुछ अच्छी वस्तु

पाते देख वे बहुत खिन्न होते हैं। और जिस प्रकार बने वैसे ही उसे हानि पहुँचानेकी चेष्टा करते हैं।

शस्तं वस्तु हि भूभुजाम् ॥४६॥

प्रशंसनीय वस्तु राजाओं की होती है अर्थात राज्यमें जो भी कोई उत्तम वस्तु हो उस पर सर्व प्रथम राजाका अधिकार है।

प्रकृत्या स्यादकृत्ये धीर्दु शिक्षायाँ तु किं पुनः ॥५०॥

स्वभावसे ही बुद्धि बुरे कार्यों का ओर जाती है उस पर यदि खोटी शिक्षा मिल जाय तबतो कहना ही क्या ?

अलं काकसहस्रेभ्य एकैव हि दृषद्भवेत् ॥५१॥

हजार कौओं को उड़ाने के लिये पत्थर एक ही पर्याप्त होता है। इतने से ही उनकी कांव २ मिट जाती है। ऐसे ही हजारों साधारण मनुष्योंको दबाने के लिये वीर एक ही पर्याप्त है। (क्रमशः)

—श्रीप्रकाश

(२७ वें पेज का शेषांश)

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि दिगम्बरीय साहित्य की तरह श्वेताम्बरीय साहित्यभी आचार्य रचना ही है तथा उसका काल वीर सं० ६८० है अतः इसके आधारसे ज्ञानदर्शनवाली दरबारीलालजी की मान्यता को प्राचीन स्वीकार नहीं किया जा सकता

पथिक से

लें०—
श्री ज्ञानचन्द्र जी जैन
बी० ए० नागपुर

(१)

दुर्गम पथ जनशून्य देखकर नहीं जरा तुम घबराना।
विपदाओंकी कठिन छटासे बिलकुल मत तुम घबराना,
यदि निज पथपर थकित हो गये पैर नहीं पीछे लाना,
यही सोचते रहना निशिदिन बाकी है थोड़ा जाना।

(२)

विकट कटंकापूर्ण मार्ग पर अब तुमको चलना होगा,
तमोग्रस्त बन की कुंजों में भी पग को धरना होगा,
कल कलनादित सरिताओं के पार उतरते जाना,
यही सोचते रहना निशिदिन बाकी है थोड़ा जाना।

(३)

जब काली निस्तब्ध निशामें होओ यदि सहसा भयभीत
रख साहस इस हृदय गगन में गाओ जीवन का संगीत,
इस ढंग पर उद्यम करके विजय मार्ग पर आजाना,
यही सोचते रहना निशिदिन बाकी है थोड़ा जाना।

विद्वानों से आवश्यक नम्र निवेदन

सौभाग्य की बात है कि हमारी जैन समाज में विद्वानों की संख्या कम नहीं है। तथा विद्यालयों के परिश्रमों पर दृष्टिपात करनेसे यह भी विदित होता है कि यह संख्या उत्तरोत्तर वृद्धिगत होती जाती है। यदि इसी प्रकार प्रयत्न चालू रहे तो कुछ ही दिनों में हमारा समाजकी एक बड़ी भारी क्षति की पूर्ति होजायगी।

यद्यपि विद्वानगण धर्म तथा समाजकी सेवा करने में किसी प्रकार पीछे नहीं है। अध्ययन, अध्यापन शास्त्र प्रकाशन, पत्र संपादन, शास्त्रार्थ, व्याख्यानादि द्वारा अच्छी प्रभावना कर रहे है। विचार कर देखा जाय तो आज जैन समाज में जो ज्ञानका प्रसार मिथ्यात्वका अभाव तथा धार्मिक जागृति हुई है वह इन विद्वानों के परिश्रमका ही फल है। तथापि इतना सब कुछ करने पर भी विद्वानों को सन्तुष्ट नहीं होजाना चाहिये। अब तक जो कुछ भी किया गया है उसका विशेष प्रभाव जैन समाज पर ही पड़ा प्रतीत होता है। यही कारण है कि अन्य धर्मानुयायी कतिपय विद्वानों की दृष्टिमें जैनधर्मके विषयमें अब भी वैसा ही भ्रम है जैसा कि जैन ग्रन्थों के मुद्रित होनेसे कुछ दिन पहिले था। इसका प्रमाण इसी वर्षके आश्विन मास के 'कल्याण' के योगांक का योग शास्त्रके कुछ दार्शनिक सिद्धान्त' शीर्षक लेख है जिसके लेखक स्वामी श्री नित्यानंद जी भारती हैं।

यद्यपि कल्याणकी नीति किसी व्यक्ति विशेष पर आक्षेप करने की नहीं है, जैसाकि इसके लेख सम्बन्धी नियम से प्रगट होता है कि "भगवद्भक्ति, भक्ति चरत, ज्ञान वैराग्यादि .... व्यक्तिगत आक्षेप रहित लेखों के अतिरिक्त अन्य विषयों के लेख भेजनेका कोई सज्जन कष्ट न करें।" तथा इसी नियमके कारण 'कल्याण आज लोक प्रिय भी बनता जाता है। किन्तु इसी नियम के नीचे यह भी लिखा हुआ है कि "लेखों में प्रकाशित मत के लिये सम्पादक उत्तर दाता नहीं है।" शायद इसी शिथिल नियम के बल पर स्वामी नित्यानन्द जी ने अपने लेखकी इन पंक्तियों द्वारा "यह योग शास्त्र ही है जिसका अक्षरशः अनुकरण करके जैन और बौद्ध सम्प्रदायों में अभ्यास तथा वैराग्य के स्तम्भ खड़े कर लिये गये हैं और आस्तिक दर्शनोंका सामना किया गया है। यह योग शास्त्र ही है जिसके यम नियमादि अष्टांग योग नास्तिकों को भी ऐसे ही मूल्यवान प्रतीत होते है जैसे आस्तिकों को" जैनियों को नास्तिकों की गणनामें सम्मिलित किया है।

यदि स्वामी जी नास्तिक के लक्षण पर लक्ष्य रखते हुये जैनधर्ममें माने हुये इह परलोक, भगवद्भक्ति तथा जैनियों के आचरण आदिसे मिलान कर किञ्चित भी विचार करते तो इतनी बड़ी भूल करने का अवसर न मिलता। इस विषय पर पं० अजित कुमार जी शास्त्री ने अपने सत्यार्थ दर्पण में पर्याप्त

प्रकाश डाला है। तथा उसमें अच्छी तरह सिद्ध कर दिखाया है कि जैनधर्मको नास्तिक कहना बड़ी भूल है। किन्तु सत्यार्थदर्पण जैनेतर सभी विद्वानों के हाथमें नहीं पहुंच सका। इसी लिये कतिपय लेखक आज भी ऐसी भ्रमपूर्ण गल्तियां कर रहे हैं।

इसी प्रकार आगे चलकर इसी लेखमें मोक्षका स्वरूप वर्णन करने में शून्यवादी माध्यमिक के माने हुये मोक्ष तत्वका खण्डन करते समय जैनियों के विषयमें यह लिखा गया है कि जैन लोग आत्माको *शरीर प्रमाण* (हस्तीका आत्मा-हस्ती शरीर जितना लम्बा चौड़ा, घोड़ेका आत्मा घोड़ेके शरीर जितना और पिपीलिका का आत्मा उसके अपने शरीर जितना) मानते हैं। शरीर प्रमाण माननेसे संकोच विकाश वाला मानना होगा और जो पदार्थ संकोच विकाशवाला होता है वह खुरके समान सावयव होता है। सावयव के लिये घटके समान परिणामी होना आवश्यक है। अतः जैनदर्शन में भी आत्मोच्छेद दोष उपस्थित है।" यह लिखकर भी स्वामी जी ने अपने मन्तव्यकी भूल पर ध्यान न देकर जैनियों पर मिथ्यादोषारोपण करनेका प्रयास किया है।

अब जैनियों के मुख्य मान्य ग्रन्थ 'मोक्षशास्त्र' में 'सत् द्रव्यलक्षणम्' इस सूत्र द्वारा नित्य द्रव्यका अस्तित्व स्वीकार किया है। तब द्रव्योंकी संख्यामें गर्भित आत्म द्रव्यमें आत्मोच्छेद दोष कैसे युक्ति-युक्त होसकता है। परिणमनसे आत्मोच्छेद दोष देना बुद्धिकी विचित्रता ही है।

जैन विद्वानों से निवेदन है कि वे उक्त आक्षेपों का युक्तियुक्त निराकरण 'कल्याण' पत्र द्वारा अवश्य करें। यदि कल्याण उनको प्रकाशित न करना चाहे तो माधुरी, सरस्वती, जैनदर्शन आदिमें अपने लेख भेजकर जनता का भ्रम दूर करें। श्रीमान पं० राजेन्द्र कुमार जी को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

—पन्नालाल न्यायतीर्थ डिबरूगढ़

मेरा पत्र

माननीय सम्पादक जी महोदय जैनदर्शन अंक ८ में मेरे व्याख्यान के आधार पर कन्हैयालाल जी पाटणी द्वारा लिखित "हमारी प्राचीन तथा अर्वाचीन अवस्था" शीर्षक लेख पर जो संपादकीय अभिमत (विद्वानवक्ता यदि कुछ जैनदर्शनका अवलोकन कर लेते तो ईश्वर भक्ति, उद्योग, संसार, मोक्ष आदि विषयों में वास्तविक तथ्य एवं ग्राह्य भागांश उनको ज्ञात होजाता। अस्तु पाठकों को वक्ता के प्रारम्भिक दार्शनिक अंश को छोड़कर लेखके अगले अंश पर ध्यान देना चाहिये) दिया गया है। इसके विषयमें मैं इतना खुलासा जैनदर्शनमें ही प्रगट करा देनेके लिये आपसे सादर निवेदन करता हूं कि जिस सभा में मेरा यह व्याख्यान हुआ था वह जैनियों की तरफ से नहीं थी। उसमें मैं तो दर्शक के रूपमें गया था। किसीमहाशय ने मुझे देखकर अध्यक्ष महोदय को मेरी उपस्थिति जाहिर करदी। सभापति जीने मुझे सूचित किये बिना ही व्याख्यान देने को पुकारा। मैं बिना कुछ सोचे विचारे व्याख्यान देने लगा।

इस व्याख्यान से मैं यह बतलाना चाहता था कि ईश्वर जगत का रचयिता, कर्मफलदाता, और प्रलयकर्ता नहीं है। किन्तु संसार अनादि निधन स्वतः सिद्ध है, जीव अपने परिणामानुसार पुण्य पापका फल भोगता है, अपने पुरुषार्थ से ही मोक्ष प्राप्त करता है। और इन्हीं विषयोंकी पुष्टिमें जैनदर्शन

का नाम न लेकर नैयायिक तथा सांख्य दर्शनका सामान्य वर्णन ही कर पाया था कि सभापति जी ने धार्मिक विसम्वाद न होजाय इसलिये प्रस्तुत विषय छोड़कर अन्य विषय पर बोलने की आज्ञा दी

जब मैं लेखमें लिखे गये दार्शनिक विषयको छोड़कर दान, जप, तप, पूजा का वर्णन करने लगा तो मेरे व्याख्यानमें कोई व्यक्तिगत आक्षेप न समझ ले इस भयसे समय की कमी दर्शाकर सभापति जी ने व्याख्यान समाप्त करनेकी आज्ञा देदी। ऐसा क्यों किया गया? इसका प्रधान कारण यह है कि यहां प्रायः सभी मारवाड़ी जातियां मेलसे रहती हैं। इसलिये ऐसी सभाओं में ऐसे विषयों पर विवेचन नहीं करने दिया जाता जिससे जनता के उत्तेजित होनेका भय हो।

यह बात मुझे अभी डिबरूगढ़ में हुये 'आसाम्स मारवाड़ी चेम्बर्स आफ कामर्स' के अधिवेशन से ज्ञात हुई। इसकी प्रथम बैठकमें जब मैंने देखाकि सात आठ हजार मारवाड़ी प्रतिनिधियों, दर्शकों, तथा निमन्त्रित आसामियों और बंगालियों से सभा मण्डप का फर्श, कुर्सियाँ तथा गैलरियाँ खचाखच भरी हुई हैं तो मुझे यहां अच्छा अवसर मिलेगा कि मैं इस सभामें 'कल्याण' में किये गये जैनधर्म के आक्षेपोंका प्रतिवाद करूं। इसी उद्देशसे विषय निर्वाचिनी समिति में इस विषयके लिये बार २ प्रयत्न करने पर कि मेरा नाम किसी ऐसे प्रस्तावके प्रस्तावक या समर्थक में दिया जाय जो धार्मिक हो लेकिन मुझे यही उत्तर मिला कि इस सभामें धार्मिक तथा सामाजिक विषयों को स्थान ही नहीं दिया गया और न यहां शान्तवातावरण बनाये रखने के लिये ऐसी सभाओं में इन विषयोंको स्थान दिया जाना ही उचित है। इसलिये मेरा नाम मारवाड़ी शिक्षालयों में हिन्दी शिक्षा को अनिवार्यरूप देनेके विषय में समर्थन करने के लिये रक्खा गया था। जैनदर्शन में जो लेख दिया गया वह मेरा अधूरा व्याख्यान है। —धन्नालाल, डिबरूगढ़

हीरक जयन्ती उत्सव

जैन धन कुबेरों के प्रसिद्ध नगर इन्दौर में १३ नवम्बरसे १६ नवम्बर तक श्रीमान रा० रा० सरसेठ हुकमचन्द्र जी की हीरक जयन्तीका उत्सव बड़े समारोहसे मनाया गया। प्रथम दिन दिनके एक बजे बड़ी धूमधामसे जलूस निकाला गया। रात्रिके समय पंडालमें सभा हुई। इस सभामें सेठजी ने हिन्दू विश्वविद्यालय बनारसको ५००००) पचास हजार रुपया देनेकी घोषणा की। इस रकम से विश्व विद्यालय में एक दि० जैन मन्दिर तथा एक दि० जैन बोर्डिङ्ग हाउस बनाया जायगा। उत्सव के दिनों में प्रतिदिन सेठजी को अनेक जैन अजैन संस्थाओं की ओरसे अभिनन्दन पत्र भेंट होते रहे।

श्रीमान राय बहादुर सेठ भागचन्द्र जी सोनी के सभापतित्वमें महासभा का अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशनमें महासभा के कोषमें १० हजार रुपये आये। इस रकम में ६ हजार रुपये की लागत से जैन गजट के लिये सिवनी में एक प्रेस खोला जावेगा। १६ नवम्बरको महासभामें श्रीमान सरसेठ हुकमचन्द्रजी को "जैन दिवाकर" आपके ज्येष्ठ सुपुत्र श्रीमान राय बहादुर सेठ हीरालाल जी को जैनरत्न एवं श्रीमान सेठ भागचन्द्रजी सोनीको धर्मवीर की पदवी प्रदान कीगई और उत्सव आनन्द के साथ समाप्त हुआ।

देश विदेश समाचार

पूर्व भव का स्मरण—चावखाना देहली मिश्रामी कटपोस के व्यापारी श्रीयुत जंगबहादुर की ८ वर्ष की लड़की शान्ता अपने पहले तीसरे भव का सारा सत्य हाल बतलाती है। वह दूसरे भव में किसी दूसरी जगह पैदा हुई थी वहाँ ढाई वर्ष की हो कर मर गई थी। उससे पहले उसका आत्मा मथुरा में पं० केदारनाथ चौबे की पत्नी रूप में था। तदनुसार उसने केदारनाथ जी को उनके छोटे भाई को पहचान लिया उस ने अपने घरमें अपने पुत्र के लिये १००) सौ रुपये गाढ़ दिये थे वे रुपये वहाँ से गड़े हुए मिले हैं। उसने अपने पूर्व की अनेक गुप्त बातें बतलाई जो कि उसके सिवाय किसी और को मालूम न थीं। पं० नेकीराम जी शर्मा, देशबन्धु गुप्ता आदि महानुभाव उसको अपने साथ मथुरा ले आ कर सत्य जाँच कर आये हैं।

—पोष्टआफिसों से एक नये प्रकार के कार्ड लिफाफे चलेंगे जिन पर पहले पोष्ट आफिस की मोहर न होगी।

—महाराज अलवर को पहले २५ हजार रुपये मासिक अलाउंस मिलता था, मगर अब भारत सरकार ने उसे आधा कर दिया है। अब उन्हें साढ़े १२ हजार रुपये मासिक मिला करेगा।

—सब्जी मण्डी दिल्ली में सरकार की ओर से एक रुई का कतानघर खोला है। इस में लोगों को कातने बुनने, गोटा बनाने रङ्गने और कपड़े पर बेल काढ़ने, मिट्टी के खिलौने बनाने, बर्तन पर चिकनाहट करने, दरी बुनने तथा अन्य चीजें बनाने की भी शिक्षा दी जायगी।

—एक स्त्री ननकाना साहब मेले को देखने के लिये गई थी। वहां किसी ने उस के ६ मास के लड़के के स्थान पर लगभग उसी आयु की लड़की रख दी और लड़के को उड़ा लिया।

—शेखुपुरा में एक कंवारी सिख लड़की से छेड़खानी करने के कारण एक ५० साल बुड्ढे सिख को, जो इस गुरुद्वारा का सेवादार था, काला मुंह कर, एक लंगड़े गधे पर बैठा सखा सोदा के बाजारों में उसकी सवारी निकाली गई। गधे पर सवार उसके बिखरे बाल समस्त चेहरे पर लहरा रहे थे।

कन्याओं के लिये हवाई ट्रेनिंग के

वजीफे मिले

—मिस अशोक रयकट बी० ए०. कलकत्ता, ने दम दम में हवाई ट्रेनिंग लेने का १०० रु० का वजीफा जीता है। ५०० रु० का दूसरा वजीफा बेथून कालेज कलकत्ता की मिस अखलीदास एम० ए० ने जीता है। यदि उसे डाक्टरों ने यह कोर्स लेने से रोका तो इस वजीफे की उम्मीदवार मिस अरिनलिनी बैनर्जी एम० ए० कलकत्ता तथा लाहौर की मिस इन्दु मौलिक होंगी।

बड़ौदा में प्राचीन सिक्के मिले

परीक्षा हो रही है

—हाल ही में एक भंगी को नवसारी जिले के एक पुराने कुंए में से प्राचीन समय के कुछ सिक्के मिले हैं।

देश विदेश समाचार

पूर्व भव का स्मरण—बादामनगर देहली निवासी कस्टोम्स के क्लार्क श्रीयुत जंगबहादुर की ८ वर्ष की लड़की शान्ता अपने पहले तीसरे भव का सारा सत्य हाल बतलाती है। वह दूसरे भव में किसी दूसरी जगह पैदा हुई थी वहाँ ढाई वर्ष की हो कर मर गई थी। उससे पहले उसका आत्मा मथुरा में पं० केदारनाथ चौबे की पत्नी रूप में था। तदनुसार उसने केदारनाथ जी को उनके छोटे भाई को पहचान लिया उस ने अपने घर में अपने पुत्र के लिये १००) सौ रुपये गाड़ दिये थे वे रुपये वहाँ से गड़े हुए मिले हैं। उसने अपने पूर्व की अनेक गुप्त बातें बतलाईं जो कि उसके सिवाय किसी और को मालूम न थीं। पं० नेकीराम जी शर्मा, देशबन्धु गुप्ता आदि महानुभाव उसको अपने साथ मथुरा ले जा कर सत्य जाँच कर आये हैं।

—पोस्टआफिसों से एक नये प्रकार के कार्ड लिफाफे चलेंगे जिन पर पहले पोस्ट आफिस की मोहर न होगी।

—महाराज अलवर को पहले २५ हजार रुपये मासिक अलाऊंस मिलता था, मगर अब भारत सरकार ने उसे आधा कर दिया है। अब उन्हें साढ़े १२ हजार रुपये मासिक मिला करेगा।

—सब्जी मण्डी दिल्ली में सरकार की ओर से एक रुई का कारखाना खोला है। इस में लोगों को कातने बुनने, गोटा बनाने रंगने और कपड़े पर बेल काढ़ने, मिट्टी के खिलौने बनाने, बर्तन पर चिकनाहट करने, दरी बुनने तथा अन्य चीजें बनाने की भी शिक्षा दी जायगी।

—एक स्त्री ख्वाजा साहब मेले को देखने के लिये गई थी। वहां किसी ने उस के ६ मास के लड़के के स्थान पर लगभग उसी आयु की लड़की रख दी और लड़के को उड़ा लिया।

—गोरक्षपुरा में एक कंवारी सिख लड़की से छेड़खानी करने के कारण एक ५० साल बुड्ढे सिख को, जो इस गुरुद्वारा का सेवादार था, काला मुंह कर, एक लंगड़े गधे पर बैठा सब्जी सौदा के बाजारों में उसकी सवारी निकाली गई। गधे पर सवार उसके बिखरे बाल समस्त चेहरे पर लहरा रहे थे।

कन्याओं के लिये हवाई ट्रेनिंग के

वजीफे मिले

—मिस अशोक रत्नकट बी० ए०, कलकत्ता, ने दम दम में हवाई ट्रेनिंग लेने का १०० रु० का वजीफा जीता है। ५०० रु० का दूसरा वजीफा बेथून कालेज कलकत्ता की मिस अरुलीदास एम० ए० ने जीता है। यदि उसे डाक्टरों ने यह कोर्स लेने से रोका तो इस वजीफे की उम्मीदवार मिस चारुलिनी बैनर्जी एम० ए० कलकत्ता तथा लाहौर की मिस इन्दु मौलिक होंगी।

बड़ौदा में प्राचीन सिक्के मिले

परीक्षा हो रही है

—हाल ही में एक मंगा को नवसारी जिले के एक पुराने कुंए में से प्राचीन समय के कुछ सिक्के मिले हैं।

REGD. No. L.
3459.

—गत वर्ष रूस का स्वर्ण उत्पादन संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और कनाडा के उत्पादन से भी अधिक बढ़ गया और १६४० ई० में ८ करोड़ पौण्ड (लगभग सवा अरब रुपये) का सोना निकलने की आशा है।

—डेढ़ सौ वर्ष हुए अमेरिका में मनुष्य की औसत आयु २८ वर्ष होती थी जो कि अब ५८ हो गई है। तपेदिक के केस एक चौथाई कम हो गये हैं, बड़े नगरों में टायफाइड कभी २ ही होता है, और चेचक तो होती ही नहीं। परन्तु अमेरिका अभी वर्तमान अवस्था में सन्तुष्ट नहीं है।

—जहाज द्वारा लगभग ४०००००० पौंड का सोना फ्रांस से अमेरिका भेजा गया है। यह मात्रा अब तक भेजे गए समस्त सोने से अधिक है।

—जर्मनी और फ्रांस आपस में मित्रता दृढ़ करने का उद्योग कर रहे हैं।

—१२ नवम्बर स्मरना बन्दरगाह के मुख पर आधी रात के समय टर्किश नेशनल शिप वालों का "इनेबोलू" जहाज तूफान में फंस गया और बड़ा सेग्रा से डूब गया। परिणाम रूप १० आदमी मारे गये। सख्त अन्धेरा होने पर भी माल का एक जहाज उस की सहायता को पहुंचाया और १०० यात्रियों तथा नाविकों को डूबने से बचा लिया।

—लण्डन चिड़ियाघर में हाल ही में यह प्रयोग किया गया कि क्या रेडियो ग्रामोफोन के गान पर सर्प मस्त हो सकते हैं। आस्ट्रेलिया का एक सर्प गाना सुनकर प्रसन्न प्रतीत पड़ा। दक्षिणी अमेरिका के सर्प ने गाने के प्रति बिलकुल लापरवाही जाहिर की। जो भारतीय नाग क्रोधित हो उठे।

—इटली ने अपने बहिष्कार के उत्तर में, विदेशी कंपनियों से नकद कीमत पर माल बेचना प्रारम्भ किया है तथा विदेशी दवाओं का इस्तेमाल बंद कर दिया है।

एबीसीनिया के सम्राट हवाई जहाज द्वारा युद्ध के मैदान में अपनी सेना को उत्साहित करने गये थे लौटते समय इटली के जहाजों ने उनका पीछा किया बड़ा कठिनता से उनके प्राण बचे।

—इटली द्वारा जीते गये ३—४ नगर एबीसी-निया ने फिर छीन लिये हैं।

—हवाई जहाजों को दिशा का ज्ञान कराने वाले एक यंत्र का आविष्कार हुआ है।

ओरबिया के शाह इब्नसऊद के १०६ स्त्रियां हैं आप इस समय ५५ वर्ष के हैं।

—सबसे अधिक सभ्य माने जाने वाले अमेरिका में दर्द की सैंकड़ों लड़कियां विवाह से पहले अनेक बार अपना सतीत्व बेच चुकती हैं एक कुंवारी लड़की ने सात वर्ष में ८ बच्चे उत्पन्न किये।

इटली के एक कारीगर ने एक नये ढंग की साइकिल का आविष्कार किया है जिसके हैंडिलको छोटा बड़ा किया जासकता है।

—बंबई और पटना से हिन्दी के नये दो दैनिक पत्र प्रकाशित होने वाले हैं।
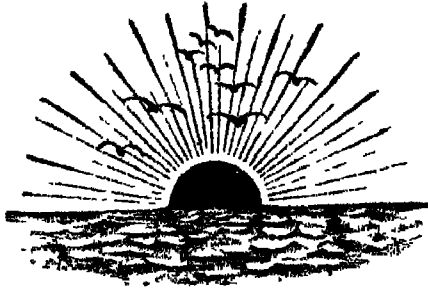
अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस मुलतान" में छापकर प्रकाशित किया

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर
जैनशास्त्रार्थ संघ का
पाक्षिक मुख-पत्र

अंक ११

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ,
जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति =)
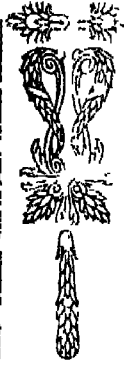
जैनदर्शनपर एकअनुभवी विद्वान की सम्मति

केकड़ी निवासी श्रीमान पं० मिलापचन्दजी कटारिया जैनदर्शन पर अपना अभिमत प्रगट करते हुए लिखते हैं—

"जैनदर्शन" आधुनिक जैनपत्रों में एक प्रमुख स्थान रखता है उस के लेखों की उपयोगिता ऐसी नहीं जो केवल एक बार के पढ़ने से पूर्ण हो जावे। उस में माननीय और संग्रह करने योग्य लेख रहते हैं। छपाई, सफाई, आकार, प्रकार भी सुन्दर है समय पर प्रकाशित करने का भी ध्यान रक्खा जाता है। पृष्ठ संख्या भी पर्याप्त रहती है मेरे हृदय में जैनदर्शन के लिये सम्मान है मैं उसे उच्च कोटिका पत्र समझता हूं। कि उस में वे सब बातें हैं जो गौरवास्पद पत्र में हुआ करती हैं। तदर्थ मैं उसके संचालक महानुभावों को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता।

शोक—श्रीमान प० बनारसीदासजी शास्त्री अजमेर का स्वर्गवास हो गया। आप से जलोदर से पीड़ित थे। आप धर्मशास्त्र, मंत्रशास्त्र सापिक आदि विषयों के अच्छे विद्वान थे मिलनसार थे। आप का आत्मा शान्ति लाभ करे। —अजितकुमार

जैन समाचार

—वेदी प्रतिष्ठा-सीकर (राजपूताना) में माघ बदी एकम से सप्तमी तक वेदी प्रतिष्ठा उत्सव होगा। उस समय आचार्य सुधेमागर जी महाराज के पधारने की भी आशा है। प्रतिष्ठाचार्य श्रीमान पं० रामप्रसाद जी न्यायतीर्थ फतेपुर होंगे। समस्त भाइयों को निमन्त्रण है। —मन्त्री वीर सेवा मंडल सीकर

प्रस्ताव—महगांव दि० जैन मन्दिर पर जो वहां अजैन लोगों ने निन्द्य अत्याचार किया है उसके लिये चौ० जम्मीमल जी की अध्यक्षता में जैनमित्र मंडल देहली की एक सभा हुई जिसमें स्टेट से न्याय प्राप्ति के लिये प्रस्ताव पास किया गया।

परिषद्—भा० दि० जैनसभा का अधिवेशन अब झांसी के बजाय देहली में होगा।

शोक—जसवन्त नगर निवासी श्रीमान बा० शिवचरणलाल जी जैन रईस का ८ दिसम्बर को स्वर्गवास होगया आप उत्साही, धार्मिक व्यक्ति थे श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी के, सम्बन्धी थे आपके वियोग से जैनसमाज की बहुत क्षति हुई है। आपकी आत्मा शान्तिलाभ करे ऐसी भावना है।

—अजितकुमार

प्रभावना- हमारे यहाँ मगसिर सुदी १० को रथयात्रा के उत्सव पर अम्बाला से श्रीमान स्वा० कर्मानन्द जी, प० राजेन्द्रकुमार जी, भजनीक भैयालाल जी, देहलीसे अनाथालयके विद्यार्थी तथा पं० मक्खन लाल, बा० ज्योति प्रसाद जी तथा जौहरीमल जी सर्राफ पधारे थे। ४ दिसम्बर की रात्रिको सभा हुई जिसमें स्वा० कर्मानन्द जी ने ईश्वर कर्तृत्व खंडन पर व्याख्यान दिया तथा यह बतलाया कि मैंने जैन धर्म क्यों स्वीकार किया। पं० राजेन्द्रकुमार जी का भी व्याख्यान हुआ। दूसरे दिन रथयात्राके बाद सभा हुई जिसमें स्वामी जी, पं० राजेन्द्रकुमारजी तथा पं० मक्खनलाल जी के व्याख्यान हुये। पं० राजेन्द्रकुमार जी ने जैन धर्मके विरुद्ध शंका करने के लिये अजैन जनता को निमंत्रण भी दिया था। इस प्रकार इस वर्ष अच्छी प्रभावना हुई।

—शिखरचन्द्र जैन, फर्रुख नगर।

—पुरातत्व प्रेमी जैन भाइयों से मेरी नम्र प्रार्थना है कि जैन शिला लेख, ताम्र पत्र, मूर्ति लेख आदि पुरातत्व सम्बन्धी जो कोई भी सामग्री उन्हें प्राप्त हो उन सामग्रियों को मेरे पास भेज दें। मैं उन सामग्रियों को यथाशक्ति छानबीन के साथ जैन सिद्धान्त भास्कर अथवा जैनदर्शन में सधन्यवाद प्रकाशित कर दूंगा। इससे मौलिक एवं प्रामाणिक जैन इतिहास के निर्माण में पर्याप्त सहायता मिलेगी। इस महत्व पूर्ण कार्य में सब कोई अवश्य मदद करेंगे।

के० भुजबली शास्त्री आरा
मन्त्री पुरातत्व विभाग भा० दि० जैन
शास्त्रार्थ संघ अम्बाला

—खंडेलवाल महासभाका अधिवेशन अजमेर में नहीं होगा।

भूलसुधार - दर्शनका यह ११ वां अङ्क है भूलसे पहले पृष्ठ पर १० छप गया है।

—चीनके नगरमें बड़ा आतङ्क छा रहा है। जापानी हवाई जहाज नगर के ऊपर शोर मचाते घूम रहे हैं। इससे लोगों को भय हो गया है कि जापान के फौजी अधिकारी शीघ्र ही युद्ध छेड़ने को तैयार बैठे हैं।

श्रीमान स्वामी कर्मानन्दजी

आर्यसमाजमें रहकर मैं ने उसकी २५ वर्ष तक शास्त्रार्थों, व्याख्यानों द्वारा सेवा की । किन्तु सत्य ग्रहण के खयाल से मैं ने अब आर्यसमाज को त्याग कर जैनधर्म स्वीकार किया है ।

—कर्मानन्द
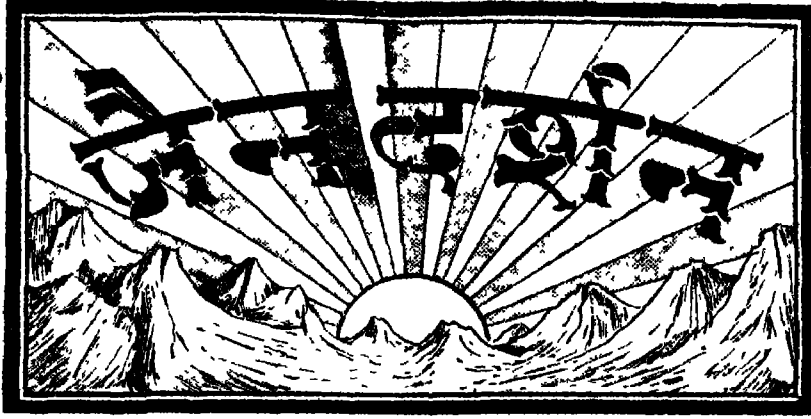
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽत्रसिमर्भूतोभवत्वखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यत्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री पौष वदी ६—सोमवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क १०

बढ़ो

ले०—
श्रीमान पं०
गुणभद्र जी जैन

मिलती उन्हें सफलता, जो जन अपने सुकार्य में दृढ़ हैं,
आगे बढ़ते वे ही, निरभय निःशंक हो कर के ।
कायर कार्य न करते, डरते लोकापवाद से भारी,
बन कर भूत निराशा, सदा डराती रहे उन्हें जग में ।
करके कठिन कलेजा बढ़ते जाओ न धैर्य को हारो,
जय—लक्ष्मी आतुर हो डालेगी कण्ठ में माला ।
शत शत विपदाओं की करो न चिन्ता सदा महा श्रम है,
कर्मठ नर ही जग में, होते भयभीत नहि लेश ।
जो विघ्नों के भय से, करते नाहि तुच्छ वे जन हैं,
हो कर प्रबल प्रमादी, करते हैं व्यतीत निज जीवन ।
करके कुछ दिखलाओ करो न कोरी मिजाज की बातें,
विश्व तुम्हें सराहें, गुणी प्रिय लोक यह सारा ।
करके नाम न अपना, मर जाते अकाल में यों ही,
उनके मरने पर भी, आते आँसू न लेश परिजन को ।
खाना, मौज उड़ाना, पर दुख लखना न नेक निज दृग से,
वे जीते भी मृत बन, माने जाते सदैव ही जग में ।

—जल—

—:(*):—

(ले०—श्रीमान पं० कपूरचन्द्र जी जैन बनारस)

मनुष्य जीवन के लिये जल उतनी ही प्रधान चीज है, जितनी कि वायु। जलको यद्यपि सब मनुष्य वायु के नीचे ही स्थान देते हैं, परन्तु जल की उपयोगिता जीवन में वायु से किसी प्रकार भी कम नहीं है। विज्ञान से यह भी साबित हो चुका है कि हमारे शरीर में ⅔ भाग जल का है। यह जल रक्त में, पेशियों तथा अस्थियों तक में पाया जाता है।

वैज्ञानिक लोगों ने जल का विश्लेषण करके यह बात निकाली है कि जल मुख्य दो गैसों के संयोगसे बना है। उनका नाम हाईड्रोजन तथा आक्सीजन है। जल में हाईड्रोजन का २ तथा आक्सीजन का १ भाग है। इस लिये जल का संकेतिक नाम H 2O भी है। पानी सैन्टीग्रेड के 0° डिगरी पर जमता तथा 100° C पर खौलने लगता है।

जल सर्व स्थानों में तीन या किसी एक रूप से पाया जाता है। उनके तीन रूप १—बर्फ २—तरल ३—वाष्प हैं। बर्फ अधिकतर ऊंचे ऊंचे पहाड़ों की चोटियों पर पायी जाती है। तरल रूप में जल समुद्र, नदी, नद, तालाब आदि स्थानों में पाया जाता है। गैस के रूप में जल तब पाया जाता है, जब कि सूर्य की गर्मी से जल उबल कर वाष्प के रूप में हो जाता है। हम लोग सांस के द्वारा भी वाष्प रूप से जल निकालते हैं।

जल का प्रयोग हम लोग प्रति दिन न केवल भोजन में, पीने में ही करते हैं, बल्कि शरीर की स्वच्छता, वस्त्र धोने, स्थान साफ करने में भी करते हैं। अगर कहा जाय तो यह मानना पड़ेगा कि जल के न रहने से मनुष्य न तो जीवित रह सकता है, और न कोई काम ही कर सकता है। जल से उत्तम सफाई करने वाला, पवित्र सस्ता अभी तक संसार में न तो कोई पदार्थ पाया गया है और न पाया जायगा।

जिस जल से हम लोगों को इतने फायदे हैं उस के स्वच्छ और आवश्यकतानुसार प्राप्त करने के लिये हम लोगों को ज़रूर कोशिश करनी चाहिये। हम लोगों को प्रति दिन कम से कम २० सेर पानी की आवश्यकता पड़ती है, लेकिन यह आवश्यकता सर्दी, गर्मी के मौसमों में कम वेशी हो सकती है। अब रही स्वच्छ जल प्राप्त करने की आवश्यकता। सो जल अनेक स्थानों से मिलता है, जैसा कि ऊपर लिखा गया है, लेकिन हम लोग—भारत वासी—अधिकतर कुवे, नदी, तालाब का ही जल व्यवहार में लाते हैं। कहीं कहीं वर्षा का जल भी काम में लाया जाता है।

१—कुवे का जल—हमारे यहां साधारणतया शहरों को छोड़ कर, कुयें का पानी पीते हैं। कुयें दो प्रकार के खोदे जाते हैं—उथले तथा-गहरे। ३० फुट तक के कुयें उथले और १०० फुट तक गहरे कहे जाते हैं। जो कुयें उथले होते हैं, उनके जलमें सदा बिगड़ने कीआशंका बनी रहती है।

उथले कुवों में जिस जलराशी से जल आता है, उसके ऊपर की पृथ्वी में अप्रवेश्यता नहीं होती है, इसलिये उसमें नालियों का दूषित जल पहुंच जाता है, और सारे पानी को दूषित कर देता है,

ख-इन कुवों में पास से तो गंदा पानी आता ही है, परन्तु दूर से भी दूषित जल आ जाता है।

ग-वर्षा के दिनों में जब कि आस-पास गढ़ों में जल भर जाता है तब धीरे धीरे वही जल कई दूषित चीजों को साथ लेते हुये, कुवे के जल में आ कर मिल जाता है, क्योंकि गढ़े अधिक से अधिक १० फुट के और उथला कुवां २५ फुट तक का होता है।

इन सब कारणों से कुवे का गहरा होना उत्तम है। कुवे के गहरे रहने से उसके ऊपर पृथ्वी का एक अप्रवेश्य स्तर होता है, जिससे ऊपर लिखित दूषित जल आकर कुवे के जल को खराब नहीं कर सकता है। हम लोगों को कुवें के चारों तरफ ईंट लगवा देना चाहिये, जिससे कि कुवें में जो भी जल आवे वह चारों तरफ से न आकर सिर्फ नीचे से ही आवे। कुवें के मुंह पर भी पक्का सिमेंट का घेरा बनवा देना चाहिये, जिससे कि उसका किनारा ऊंचा हो जाय और बाहर का पानी बह कर उसमें न चला जाय।

२—तालाब—बगाल में प्रायः मनुष्य तालाब का ही पानी पीते है। तालाब का पानी अगर अशुद्धियों से बचाकर रक्खा जाय तो उसका जल उत्तम हो सकता है।

३—नदी—जो नदियां बड़ी होती हैं, जिनमें कि पानी अधिक परिमाण में बहता है, उनका पानी तो पीने योग्य हो सकता है, परन्तु छोटी २ नदियों का पानी पीना तो अपने घर में रोगों को बुलाने के सिवा और कुछ नहीं है। हम लोग यदि नदी का पानी पीते हैं, तो उस जल की परीक्षा करवा लेना अच्छा है, कि उसमें रोगोत्पादक कीटाणु तथा जीवाणु तो नहीं हैं।

जल में अधिकतर तीन प्रकार के जीवाणु पाये जाते हैं—

१—जल के जीवाणु—ये शुद्ध जल में भी पाये जाते हैं, इनकी उपस्थिति से जल में किसी प्रकार का दोष नहीं होता।

२—पृथ्वी के जीवाणु—पृथ्वी से जो जल बह कर नदियों में पहुंचता है, उसमें ये कीटाणु पाये जाते हैं।

३—मल के जीवाणु—ये सब से भयंकर होते हैं। पृथ्वी का जल प्रायः मल के जीवाणुओं से दूषित होता है। ये दो प्रकार के होते हैं १-मोती-झरा इत्यादि के। २-वह जीवाणु जो साधरणतया अन्त्रियों में होते हैं।

अशुद्ध जल सदा से स्वास्थ्य नाशक और रोगोत्पादक माना जाता है। विसूचिका, मोती झरा आदि रोगों के फैलने का कारण यही है जल की मुख्य अशुद्धियां तीन प्रकार की है—

१-वानस्पतिक-जल में वानस्पतिक (पेड़ोंकेपत्ते आदि) पदार्थ के सड़ने से।

२-धातवीय-धातु लोहे आदि के नलों में से हो कर पानी बहने के कारण

३-पाशविक-रोगों के जीवाणु मिलने से।

इस अशुद्ध पानी को शुद्ध करने की आजकल बहुत सी पश्चिमी तथा पूर्वीय विधियाँ प्रचलित हैं, जिनमें मुख्य तीन हैं—

१ भौतिक क्रियाओं द्वारा जैसे जलको उबालकर

२ रासायनिक „ „ -अवशोषक तथा जीवाणु नाशक वस्तुओं के योग से।

३ यांत्रिक साधनों द्वारा जैसा कि वाटर वर्क्स में किया जाता है।

इसके सिवाय प्रकृति स्वयं ही जल को साफ करती है। सूर्य के प्रकाश पड़ने से जल के अनन्त जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। उसके अलावा जल आक्सीजन और अरोगोत्पादक जीवाणुओं से भी स्वच्छ होता है। सबसे अच्छी बात तो यह है कि जो चीज जल में डाली जाती है उसे जल मार में खोल देता है, जिससे उसकी भयंकरता नष्ट होजाती है। यद्यपि प्रकृति से जल साफ रहता है, परन्तु हम लोगों को जल सारा देखभाल कर शुद्ध, स्वच्छ ही पीना चाहिये।

जल सम्बन्धी कुछ नियम—

१ पानी स्वच्छ, निर्गन्ध, जिस पर सूर्य का प्रकाश पड़ता हो, ऐसा ताजा, ठण्डा, बहता हुआ पीना चाहिये।

२ दिन में कम से कम तीन सेर जल तो अवश्य ही पीना चाहिये। ऋतु के अनुसार इसमें कम वेशी भी हो सकती है।

३ पानी सर्वदा छान कर पीना चाहिये।

४ जल सर्वदा धीरे धीरे, और बैठकर पीना उत्तम है, इससे Nerves systems पर धक्का नहीं पहुंचता है।

५ भोजन के समय, अगर भोजन शुष्क हो तो थोड़ा जल पीना आवश्यक है।

---*---

कभी २ महाराजा भी खाली जेब होते हैं।

विदेशी शाहजादा पुलिसकी हिरासतमें

एक विदेशी शाहजादा किसी कार्यवश लण्डन गया था। जब वह एक टैक्सी किराये करके अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच गया, तो उस ने किराया देने के लिये अपनी जेबें टटोलीं—मगर, जेबें एकदम खाली मिलीं। उद्दण्ड टैक्सी ड्राइवर ने शाहजादे को पुलिस के सिपाही के हवाले कर दिया। पुलिस उस शाहजादे के विरुद्ध फर्द जुर्म लगाने ही वाली था, कि पुलिस में टैक्सी-ड्राइवर का किराया अदा हो जाने की खबर पहुंच गई। फल स्वरूप शाहजादे को रिहा किया गया। शाहजादे के पास पैसे न मिले यह एक अनोखी बात है।

सप्तम एडवर्ड चक्कर में

एक बार का जिक्र है कि सम्राट एडवर्ड सप्तम अपने एक मित्रके साथ वेस्टएण्डमें घूम रहे थे। वहां उन्होंने एक तम्बाकू बेचने वाले की दुकान पर एक बड़ा सुन्दर पाइप देखा। वह उस पर मोहित होगये मगर यह देखकर कि जेबें खाली हैं, दुकानदार की आंख बचाकर दुकानसे बाहर आगये। थोड़ी देर बाद उनके मित्रने वही पाइप लाकर उन्हें देदिया।

वरदान

[ले०—कलानिधि]

कृष्णागढ़ से हट कर एक छोटासा गांव बसा हुआ है। वन्यभूमि में हरियाली की प्रकृति सुन्दरता मनको बिना प्रफुल्लित किये नहीं रह सकती। थोड़ी ही दूर पर एक छोटी सी नदी बहती है। चातुर्मासमें उसकी भी शोभा दर्शनीय है। नदी के पास ही एक फूसकी छोटी सी कुटिया है। जिसकी खिड़की नदी की ओर है। खिड़की में होकर जब दीप-ज्योति नदी में पड़ती है। तो वह दृश्य बड़ा ही मनोरम मालूम होता है किन्तु भयंकर वर्षाके कारण नदीका भयावह शब्द हृदयमें यह भाव पैदा कर देता है कि कहीं यह कुटिया पानी के झोंके में तृणकी तरह न बह जावे।

उस फूसकी झोंपड़ीमें एक मातृ पितृहीना अनाथ सुन्दरी युवति तपस्विनी सी होकर रहती थी। उस के रूप लावण्य का समुचित वर्णन करने में कविकुल गुरुओं का भी मौन ही रहना पड़ेगा। सचमुच वह देवाङ्गना सी असाधारण रूपवाली थी। उसके कपोलों की लाली, नेत्रोंका तेज और मस्तक की कांति सवाकों का हृदय श्रद्धारूपमें परिणित होकर स्वतः आकर्षित होजाता है।

पूर्वोगत पापकर्मों को जलाञ्जलि देनेके लिये जब वह जिनालय में दर्शन करने जाती और वहां वेदनापूर्ण स्तुतिका उच्चस्वर से स्तवन करती तो यही भान होता था कि यह किसीकी अभिलाषिणी है, किसीकी इच्छुक है तथा किसी के अवलम्बन पर रहकर अपने कर्तव्य क्षेत्र को व्यापक रूप देनेकी बलवती इच्छा रखती है। मंदिर में जाकर वह घंटों स्तवन करती। माथा टेक कर भगवानकी आराधना करती और करती वह लम्बे समय तक जाप भी।

वह थी अनपढ़, इसलिये शास्त्र पठन न कर सकती थी। पर शास्त्र श्रवणकी भावना आत्माके प्रत्येक प्रदेश पर विद्यमान थी। जाप करने के पश्चात शास्त्र श्रवण की इच्छासे वहीं एक निश्चित स्थान पर बैठ जाती।

थोड़ी देर उपरांत एक पूर्ण युवक प्रतिदिन दर्शन करने के बाद शास्त्र स्वाध्याय किया करता था। वह शास्त्री विद्वान था और था प्रकाण्ड पंडित। उसके हृदय में समाज सुधारकी प्रबल उत्कण्ठा थी, उसके मुंहसे जब कभी शब्द निकलते तो यही भान होता था कि यह समाज सुधारका प्रबल पक्षपाती है। इसी युवासे वह मातृ पितृहीना शास्त्र श्रवण करती थी। इसके बाद उद्विग्न चित्तसे पगली की तरह वह अपनी झोंपड़ी को चली जाती उसके मुख से कभी २ अटूट साहसके ये शब्द ओठों के बाहर आ जाते कि इनको प्रसन्न करने के लिये कौनसी मनौती मनाऊं। कौनसा अनुष्ठान करूं जो मुझे यह वरें। भगवन्! आपका स्तवन करते २ वर्षों चले गये। इस युवक को पाने की, इच्छा ही बनी रही पर अभी तक मैं इन्हें न पासकी। हृदय सम्राट् न बना सकी। भगवन! मेरी मनोकामना पूर्ण करो। देव! वे कहते

है मैं आजन्म ब्रह्मचारी रहूंगा। देशकी खातर मैं किसी सुन्दरीके प्रेम-जाल में नहीं फंस सकता। प्रणय-प्रेम और गृहस्थी का चक्कर देशके सिपाही के लिये हलाहल है। उफ! पुरुष कितने कठोर हृदय के होते हैं।

मेरे ऊपर तरस खाकर चंद्रमा अपने प्रकाश से पथ प्रदर्शन करता है। तारागण सहानुभूति प्रकट करते हैं। और जंगलके पेड़ तक हिलडुलकर मेरे कष्टको बटाते हैं। जंगलकी प्रत्येक चीज मेरे साथ सहानुभूति दिखलाती है पर धन्यकुमार बाबू को तरस नहीं आता। क्या मैं उनके देश सेवाके व्रतमें बाधक होसकती हूं? कदापि नहीं। उनकी जीवन सरिता में मैं अपनी सारी शक्ति लगाकर सतत प्रोत्साहित करूंगी। आगे बढ़ने में परम सहायिका बनूंगी।

धन्यकुमार भी मातृ पितृ हीन गरीब घरका युवक है। सामाजिक संस्थामें पढ़कर शास्त्री परीक्षा पास की थी। तोते की तरह शास्त्र रटे नहीं थे। मनन पूर्वक अध्ययन कर विद्वान हुआ था। छात्रावस्था में ही देश सेवा का कठिन व्रत मनही मनमें ले चुका था। छात्र जीवनको व्यतीत कर अपने गांव में आया तो अपने व्रतको क्रियात्मक रूप देनेकी कोशिश करने लगा। पर धनाभाव उसके उद्देश्यमें बाधक होरहा था। सर्व प्रकारेण पस्त हिम्मत होकर उद्विग्न चित्तसे एकांत पाकर घंटों इस विचारमें डूब जाता था। आखिर यह निश्चय कर चुका कि धन भी देश सेवाके व्रतमें बाधक है: यह भी मोहक भाव का प्रादुर्भाव करने वाला है। धन और स्त्री देश सेवा के लिये उपादेय नहीं है। देश सेवाके लिये तो त्याग और दृढता की आवश्यकता है। अतः मुझे अब इस मार्गका अवलम्बन शीघ्रातिशीघ्र कर लेना चाहिये। इस प्रकार विचार कर ही रहा था कि पैरकी आहट कर्णगोचर हुई। तत्काल उस अनाथ युवती ने आगे बढ़कर कहा कि—

आज आपसे मैं कुछ स्पष्ट बातें करना चाहती हूं

"कीजिये"

"मैं आपसे प्रेम करती हूं।

युवक—"प्रेम करना प्राणीमात्र का धर्म है। "सत्वेषु मैत्री" करना उदारता है धर्मशास्त्र का प्रत्येक अक्षर हमें यही बतला रहा है कि प्राणीमात्र से दया करनी ही चाहिये।

युवती—"मैं इस दार्शनिक दलदल में नहीं फंसना चाहती। और न विवाद ही करना चाहती हूं। ये आपके शब्द मेरी अन्तरङ्गभूमिमें कोई प्रभाव नहीं कर रहे है—समझे—मैं आपसे प्रेम करती हूं— आपकी सहयोगिनी बनने के लिये।

युवक—(गंभीर मुद्रा से) रूप की खान सुन्दरी! मैं कुंवारा रहकर ही देश की सेवा करना चाहता हूं. वैवाहिक बंधन में फंस कर देश सेवा जैसे व्रत से विमुख होने में अपना धर्म नहीं समझता, मनुष्य जन्म की सार्थकता वैवाहिक दलदल में फसने से नहीं होती। यह अपना पृथक् ही मार्ग रखती है उसी मार्ग का अनुसरण करना मैं अपना परम कर्तव्य समझता हूं।

युवती—क्या आप मुझे केवल कामुकता का पिण्ड ही समझते हैं? कामुकता का पिण्ड समझ कर ही मेरी उपेक्षा कर देना मेरे साथ अन्याय करना है। मैं विश्वास दिलाती हू आपके सेवाव्रत में सर्व

प्रकारेण सहायक बनूँगी। आपके मनोष्ठ ध्येय में मेरे द्वारा ठेस पहुंचनेकी किसी भी प्रकारसे संभावना न होगी। स्त्री का धर्म क्या है और वह किस प्रकार पति सेवा करके उसको उच्चतम मार्ग पर आरोहण करती है या उसे उत्साहित करती रहती है ये सब क्रियात्मक रूप में ला कर दिखा दूंगी।

युवक—कामुकता का पिण्ड समझ कर उपेक्षा नहीं कर रहा हूं सुन्दरी—लेकिन

युवती—लेकिन क्या? स्पष्ट कर दीजिये-

युवक—बात यह है कि पानी का स्वभाव है ढालू की ओर बहना, अग्नि का स्वभाव है जलाना इसी प्रकार स्त्री पुरुष—पति पत्नी के रूप में ब्रह्मचर्य व्रत का भंग करते हैं इसके भंग होने में देशद्रोहित्व छिपा हुआ है। देश सम्बन्धी साधना में किसी तरह नहीं छोड़ सकता।

युवती—हर्गिज न छोड़िये आपको उस पथ पर और अग्रसर करूंगी। आपके प्रत्येक देशोत्थान के कार्य में भाग लूंगी—देश हित के युद्ध में आपकी साथिन होऊंगी इस लिये आपके पुण्य प्रयास की सफलतामें विजय माला पहिनानेका मुझे ही सौभाग्य लूटने का अधिकार दीजिये।

युवक—"कौन जाने यह गले का हार मेरे लिये त्री हो?"

युवती—(कुछ व्यथित होकर) तो क्या आप मुझे पत्नी रूप में ग्रहण किसी भी तरह से नहीं करना चाहते मेरा मन आप को वर चुका है आप मेरे हृदय सम्राट है—वर्षों से भगवान के सामने माथा टेककर इसके लिये प्रार्थना करती थी लेकिन खेद है मेरी आशालता को आप निचोड़ रहे हैं। आपसे सानुनय विनय पूर्ण प्रार्थना है कि मुझे विरहाग्नि में न जलाइये।

युवक—क्या तुम्हारी यही इच्छा है?

युवती—इसमें क्या संदेह है?

युवक—तो फिर तुम्हें वचनबद्ध होना पडेगा—मेरी एक बात स्वीकार करनी होगी।

युवती—"(रोमांचित होकर) सहर्ष कहिये"

युवक—क्या तुम मेरी एक बात मानने को तयार हो?

युवती—हां अवश्य।

युवक—मैं उसे वरदान कहता हूं।

युवती—आप उल्टी बात कहते हैं वरदान तो मुझे मांगना चाहिये, न कि आपको।

युवक—शाब्दिक दाव पेचसे से क्या लाभ? मुझे ही मांग लेने दो। अच्छा तो कल रात्रिके बारह बजे नदी के घाट पर जहांसे नौका बम्बई की ओर जाती है वहां आकर मिलना।

प्रेमोन्मत्त युवती अपनी मनोकामना की तरंगों पर तैरती कल्पना के भावी मनसूबे बांधती सुखसे अपने धार्मिक शरीर में भरती उत्सुकतासे मार्गके रोड़ोंका ख्याल न करती नियत स्थान की ओर बढ़ी जाती थी। पैरों के दबावसे पत्तियां खड़खड़ाने का शब्द करतीं। पेड़ों और झाड़ियों से अठखेलियां करती पवन उसकी साड़ी में गुदगुदी करती और चन्द्रमा उसकी गति के साथ द्रुमदलोंमें झांक झांक कर देखता चलता।

बातकी बातमें वह निर्दिष्ट स्थान पर आगई।

नदीके वक्षस्थल पर चन्द्रमा की रुपहली आभा मनोहारिणी मालूम पड रही थी।

घाटसे चालीस पचास गजकी दूरीपर एक छोटी नौका डगमगा रही थी। घाटके पास घबराई सी वह युवती खड़ी होगई। डाँडों को रखकर धन्य-कुमार ने कहा—

"आगई" ?

युवती (सहमती हुई) "हाँ देव ! आपतो इधर आइये और अपनी भुजाओं के बीचमें मुझे भी ले चलिए। जब आपकी भुजाएं मेरे गले में पड़ेंगी वही स्वर्गीय आनन्द है। उस वक्तका आनन्द स्वर्गीय आनन्द होगा।

युवक— " पर पहले वरदान तो दो !"

युवती— " इतनी दूरसे"

युवक— प्रेम दूरकी सीमाको नहीं मानता।

युवती— तो फिर कहिये।

युवक— तुम मुझे अपने पाससे ही जानेकी इजाजत दो।

धन्यकुमारने गम्भीर मुद्रामे दोनों डांड उठाये और युवती से कहा— 'कहो एवमस्तु'

सजल नेत्रों से भर्राई आवाज में सारी ताकत लगाकर युवती ने कहा— ए व म स्तु ! इस जीवन के आप ही आराध्य देव है। आपके आदर्श झंडेको लेकर आगे बढ़ूंगी और परलोक में भी आकर फिर आपसे मिलूंगी।

नौका भी शीघ्र ही छप छप शब्द करती बम्बई की ओर बढ़ने लगी।

❋ ❋ ❋

ब्रह्मचर्य

"ब्रह्मचर्य परं तपः"

प्रिय बन्धुओ ! ब्रह्मचर्य मानव जीवन का एक प्रधान अङ्ग है, शारीरिक शक्ति की जान, मानसिक विकाश का अवलम्ब और स्वास्थ्य की चाबी ब्रह्मचर्य है।

महात्मा जी के शब्दों में "ब्रह्मचर्य का वास्तविक अर्थ—ब्रह्म से साक्षात्कार करने का प्रयत्न करना है, क्योंकि ब्रह्म हम सब में व्याप्त है सद् ध्यान और साधनों की सहायता से हम अपने भीतर ही उसका अनुभव कर सकते है। बिना इन्द्रियों को पूर्णतया अधिकृत किये हुये साधना असंभव है। अतः ब्रह्मचर्य से तात्पर्य सब इन्द्रियों पर प्रत्येक समय में मनसा, वाचा, कर्मणा पूर्ण रूपेण अधिकार प्राप्त कर लेना है।"

शरीर रक्षा के लिये ब्रह्मचर्य धारण करने की बड़ी आवश्यकता है। छात्रावस्था में बिना ब्रह्मचर्य व्रत-पालन किये किसी प्रकार स्वास्थ्य रक्षा नहीं हो सकती। वीर्य शरीर का राजा है. अतएव वीर्य की रक्षा होने से ही शरीर की रक्षा हो सकती है। वीर्य की रक्षा होने से ही मस्तिष्क शक्तियां बलवती होती हैं, ब्रह्मचर्य के प्रभाव से ही मनुष्य शरीर में अपूर्व तेज और सारे शरीर में सतीत्व की विमल ज्योति दिखलाई देती है। ब्रह्मचर्य सर्व रोग नाशक

और उत्तम स्वास्थ्य प्रदायक औषधि है। नियमपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने से—बल, बुद्धि, वर्ण और कान्ति की वृद्धि होती है, शरीर के सम्पूर्ण अङ्ग प्रत्यङ्ग और संधिस्थान दृढ़ होते हैं। मनमें अपूर्व आनन्द उत्पन्न होता है. मानसिक और शारीरिक शक्ति की विशेष रूप से वृद्धि होती है। जो ब्रह्मचर्य को भंग कर नाना प्रकार के कुकर्मों में लिप्त होते हैं और अस्वाभाविक उपायों से वीर्य का क्षय करते हैं, वे शीघ्र सब प्रकार की दुर्दशाओंके पात्र बन जाते हैं। अतिशय शुक्र को व्यय करनेसे महा भयङ्कर दौर्बल्यादि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। धातुदौर्बल्य के होने पर जीवनी शक्ति एक दम क्षीण हो जाती है। वीर्य के साथ हमारे मस्तिष्क और पाकस्थली का घनिष्ठ संबंध है. धातुदौर्बल्य के होने से मस्तिष्क में एक प्रकार का गोलयोग आ उपस्थित होता है, और साथ साथ पाकस्थली अत्यन्त दुर्बल होकर मन्दाग्नि अजीर्ण आदि अनेक पीड़ायें उत्पन्न हो जाती हैं। ब्रह्मचर्य व्रत को भंग करने वाले, कदाचारी युवक के उत्फुल्ल गण्ड स्थल शीघ्र ही पांडु वर्ण धारण कर लेते हैं. शरीर का बल कम हो जाता है। पाचक शक्ति एक दम क्षीण हो जाती है, मुख की प्रफुल्लता और स्वाभाविक सौन्दर्य नष्ट हो जाता है. जीवन भार स्वरूप प्रतीत होने लगता है। मूत्र सम्बन्धी अनेकों रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कब्जियत सदा के लिये सहचरी बन जाती है। उदर और उसके समीप वर्ती स्थानोंमें विविध व्यथायें उपस्थित हो जाते हैं। दांत कमजोर होकर गिरने लगते हैं. शिर के बाल सफेद हो जाती हैं. शरीर रुधिर की कमी के कारण पीला पड जाता है. नेत्र भीतर को घुस जाते हैं स्फूर्ति-हीनता और विषाद के चिन्ह मुख पर दिखलाई देते हैं। शरीर की सारी शोभा नष्ट हो जाती है।

आजकल शिक्षा के समय ब्रह्मचर्य के बदले भ्रष्टाचार का अभ्यास किया जाता है। आहार, विहार की पवित्रता की ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया जाता। विद्यार्थियों में विलासिता की मात्रा दिनों दिन बड़ी तेज़ी के साथ बढ़ती जा रही है। चारों तरफ नाटक. सिनेमा, बायस्कोप आदि नाना प्रकार के चरित्र नाशक भयङ्कर प्रलोभन दिखलाई दे रहे हैं।

अब भारत वसुन्धरा पर अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत धारी त्रिलोक विजेता वीर क्यों जन्म धारण नहीं करते? इसका मूल कारण यही है कि हम लोग ब्रह्मचर्य से रहित होकर भ्रष्टाचार में रत हो रहे हैं। भारतवासी पुत्रोत्सव के समय बड़े २ आनन्द मनाते हैं, और पानी के समान द्रव्य व्यय करते हैं, समाज को जिमाते हैं, किन्तु वह नहीं करते, —जो वास्तव में करना चाहिये। न तो वे उसकी शारीरिक उन्नति की ओर ही लक्ष्य देते हैं और न मानसिक उन्नति की ओर। ऐसी दशा में प्यार में पाली हुई संतान सदा सर्वदा के लिये अपने अमूल्य जीवन से हाथ धो बैठती है।

बाल्य विवाह, कुशिक्षा. कुसंगत, कुग्रन्थ. कुचरित्र कुविचार: और कुबुद्धि यह ब्रह्मचर्य के नाश करने के प्रधान उपाय है। इनसे रक्षा करके ही हम भले प्रकार ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर सकते हैं।

संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि हमेशा विजय ब्रह्मचर्य की ही हुई है। जिन जिन लोगों ने इस पवित्र महाव्रतसे मुख मोड़ा है,वे विनाशोन्मुख हुये हैं।

भारत की इस गुलामी को जो आज सदियों से निरन्तर चली आ रही है, कौन नहीं जानता कि भारत के प्रतापी सम्राट पृथ्वीराज ने ब्रह्मचर्य गंवाकर ही खरीदी थी। जगद्विजयी नैपोलियन जैसा शूरवीर अपने चढ़ाव की ऊंची सीढ़ी से गिर पड़ता है, और वह विजय श्री भी जो आजतक उसकी चरण चुम्बनमें अपना सौभाग्य मानती थी, मुंह मोड लेती है। इतिहास इस बातको बतलाता है कि वह वीर शिरोमणि युद्ध में जानेसे पहले, अपना खून अपने हाथों कर चुका था।

यदि आप विश्वकी विराट विभूतियों के जीवन का अध्ययन करेंगे तो इसी निर्णय पर पहुचेंगे कि महात्माओं के उत्थान का प्रधान कारण, उनका आदर्श ब्रह्मचर्य ही है। इस ब्रह्मचर्यकी महत्ता को हमारे महर्षियों ने भले प्रकार जान लिया था। इसी लिये उन लोगों ने इसकी महिमा का गान मुक्त कंठ से किया है।

आज भी सत्याग्रह संग्राम के महारथी महात्मा गांधी इस ब्रह्मचर्य के कारण ही संसार के सर्व श्रेष्ठ पुरुष माने जाते हैं। उनको महात्मा किसने बनाया? इस ब्रह्मचर्यने ही।

संसार में ऐसा कौनसा महान कार्य है जो इस व्रतके अनुष्ठान द्वारा स्वायत्त न कर लिया जाय। यह ब्रह्मचर्य ही हमारी ऐहिक और पारलौकिक उन्नतिका परम साधन है। यह ब्रह्मचर्यही इस प्राणीको उच्चासन और परम पद (मोक्ष) में पहुंचानेका सोपान है ब्रह्मचर्य के पालन न करनेसे कोई भी मनुष्य अपनी आत्मोन्नति नहीं कर सकता।

महान ब्रह्मचारी अहिंसाव्रतधारी श्री भगवान महावीर स्वामी संसार में एक आदर्श ब्रह्मचारी थे, उनका निर्वाण हुए आज सहस्रों वर्ष व्यतीत होचुके पर आज भी कौन ऐसा आर्य है जिसने उनका पवित्र नाम न सुना हो।

हिन्दू धर्म के आचार्य स्वा० विवेकानन्द, रामतीर्थ और स्वा० दयानन्द सरस्वती आदि इस व्रतके व्रती होकर संसारमें अपना नाम अजर अमर कर गये हैं।

क्या हमारी आखोंके सामने आधुनिक प्रोफेसर राममूर्ति का ब्रह्मचर्य निदर्शक ज्वलन्त एवं जीता जागता उदाहरण विद्यमान नहीं है? यदि है तो फिर कोई कारण नहीं दिखलाई देता कि हम तदनुसार बनने की चेष्टा क्यों न करें।

विष्णुकान्त जैन वैद्य मुरादाबाद
("जैन युवक मंडल मुरादाबाद" की एक बैठक में लेखक द्वारा पठित।)

ईश और उस का विश्वकर्तृत्व

(ले० श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

इसी शीर्षकका एक लेख पं० चन्द्रकान्तजी शास्त्री मुलतान ने लिखा है। आपका यह लेख दर्शन अङ्क ६ वर्ष ३ में प्रकाशित हुआ है। विद्वान् लेखक ने अपने इस लेख में ईश्वर को विश्वकर्ता प्रमाणित करने की चेष्टा की है। आपके प्रस्तुत लेख का संक्षिप्त सार निम्न प्रकार है—

१—विश्व सकर्तृक है अनित्य होने से। विश्व अनित्य है कृत्रिम होने से और करणीय गुण सम्पृक्त होने से। परमात्मा विश्व का कर्ता है अन्य के इस योग्य न होने से।

२—विश्व कृत है प्रागभाव युक्त होने से। विश्व प्रागभाव युक्त है अन्यथा परमाणु का अत्यन्ताभाव होने से।

परमाणु की सत्ता और पृथक् अवस्था में महान् अन्तर है। परमाणु भिन्न २ रहें या न रहें—स्कन्धावस्था में रहें—किन्तु फिर भी इनकी सत्ताका अभाव नहीं किया जा सकता। इनकी सत्ता का अभाव तो तब ही किया जा सकता था जब कि इनकी वर्तमानता ही न होती, इनकी वर्तमानता जिस प्रकार इनकी भिन्नावस्था में युक्ति संगत है उस ही प्रकार इनकी स्कन्धावस्था में भी। अतः परमाणुकी सत्ता स्वीकार करके भी विश्व का प्रागभाव सिद्ध नहीं होता। यह तो तब ही हो सकता था जब कि समस्त परमाणुओं को किसी भी समय भिन्न २ प्रमाणित कर दिया जाय। इसके समर्थन में लेखक ने कोई युक्ति उपस्थित नहीं की है। लेखक ने पंचास्तिकाय का भी एक श्लोक इसके समर्थन में लिखा है किन्तु उसमें इसकी गंध भी नहीं है। अतः विश्व का प्रागभाव अभी असिद्ध ही है। प्रागभाव के अभाव में इसके कृत होने की बात ही उपस्थित नहीं होती। दूसरी बात यह है कि किसी भी पदार्थ के प्रागभाव के साथ उसके कृत होने की व्याप्ति भी नहीं है। प्रागभाव तो सबही कार्यों का होता है किन्तु फिर भी वे सब ही कृत नहीं होते। इसके समर्थन में भिन्न २ शारीरिक दोषों से भिन्न २ शारीरिक रोगों की उत्पत्ति पर्याप्त है। जितने भी ज्वर या अन्य शारीरिक रोग उत्पन्न होते हैं ये सब ही प्रागभाव युक्त हैं। कौन कह सकता है कि शरीर में उनका अस्तित्व अनादि है—ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं जिसको सदैव से ज्वर आता हो किन्तु फिर भी यह कृत नहीं है। इनकी उत्पत्ति किसी बुद्धिमान कर्ता के द्वारा नहीं हुई है। यह सब तो पित्तादिक के विकार से ही उत्पन्न हुआ करते हैं। वैद्यक शास्त्र इसका साक्षी है।

यही बात उल्कापात, भूकम्प, अति वृष्टि और अनावृष्टि आदि के सम्बन्ध में है। इन सबका भी प्रागभाव है किन्तु फिर भी इनका कोई कर्ता नहीं है। अतः इस दृष्टि से भी यह युक्ति विश्व को सकर्तृक प्रमाणित नहीं करती।

इसही युक्ति का उल्लेख करते हुये लेखक ने निम्नलिखित वाक्य भी लिखे हैं—"परमाणुओं से स्कन्ध किस सम्बन्ध से मानते हैं। समवायि

अथवा असमवायि !—समवायि सम्बन्ध हर हालत में स्वीकार करना पड़ेगा ...... परमाणुओं के स्कन्ध संसर्ग में समवायि सम्बन्ध स्वीकार करने पर निमित्त कारणकी आवश्यकता अवश्य है। निमित्त कारणकी आवश्यकता होनेपर परमात्मा ही निमित्त कारण उपस्थित होता है क्योंकि मानवीय शक्ति के बहिर्भूत होने से"। परमाणुओं से स्कन्ध किस सम्बन्ध से मानते हैं क्या इसका तात्पर्य यह है कि परमाणुओंसे स्कन्धकी उत्पत्ति किस सम्बन्धसे होता है या स्कन्ध और परमाणुओं का क्या सम्बन्ध है?

पहिले पक्ष में क्या यह बात सम्पूर्ण विश्व की दृष्टि से उपस्थित की गई है या किसी स्कन्ध विशेष की। यदि सम्पूर्ण विश्व की दृष्टि से तब तो यह असिद्ध है। सम्पूर्ण विश्व किसी भी समय भिन्न २ परमाणुओं की अवस्था में था यह बात अभी तक भी साध्य कोटि में है जब तक यही बात प्रमाणित न हो जाय कि कोई ऐसा भी समय था जबकि यह सम्पूर्ण विश्व परमाणु रूप में था तब तक परमाणुओं से उसके निर्माण की बात ही नहीं उठता।

यदि यह प्रश्न किसी स्कन्ध विशेष की दृष्टि से उपस्थित किया गया है तब तो इसका प्रस्तुत विषय से कोई सम्बन्ध ही नहीं है। परमाणुओं से किसी स्कन्ध विशेष की उत्पत्ति प्रमाणित हो जाने पर भी यह नहीं स्वीकार किया जा सकता कि इस सम्पूर्ण विश्व की भी उत्पत्ति इसही प्रकार हुई है। इसके लिये तो उस स्कन्ध विशेष की तरह सम्पूर्ण विश्व का भी प्रागभाव प्रमाणित करना होगा तथा यह बात अभी तक भी साध्य कोटि में है।

परमाणु गुण या क्रिया रहित हैं यह बात मिथ्या है। यदि परमाणु में गुण न होते तो फिर उनके समुदायात्मक स्कन्ध में भी यह न मिलने चाहिये थे। स्कन्धों में गुण की प्रतीति निर्बाध है अतः परमाणुओं में भी इनको मानना पड़ेगा।

वैशेषिक का द्रव्य और गुणका तत्वान्तर वाद भ्रमपूर्ण है। द्रव्यसे गुणको यदि तत्वान्तर माना जायगा तो फिर 'गुणीद्रव्य' यह प्रतीति एवं व्यवहार ही असंभव होजायगा। दृष्टान्तके लिये यों समझिये कि परमात्मा को सर्वज्ञ माना गया है। तथा परमात्मा का यह ज्ञान गुण उससे भिन्न है। तब फिर इसका सम्बन्ध परमात्मा से ही क्यों होगा और उसही को ज्ञानवान क्यों कहा जायगा? यदि इस व्यवस्था का कारण समवाय सम्बन्ध को माना जायगा तब भी यह समस्या हल न होसकेगा। समवाय सम्बन्ध भी ज्ञान और परमात्मा से तत्वान्तर है अतः वह भी ज्ञानका सम्बन्ध परमात्मामें ही करेगा। इस 'ही' का क्या नियामक रहेगा?

जिस प्रकार ये सब बातें परमात्माके सम्बन्धमें घटित की जाती हैं उसही तरह आकाशके सम्बन्ध में क्यों नहीं? कुछ भी करें द्रव्य और गुण को तत्वान्तर मानकर यह समस्या हल न हो सकेगी।*

यही बात क्रियाके सम्बन्ध में है। परमाणु यदि स्वतः क्रियाहीन माने जायंगे तो फिर उनमें दूसरों के

* यत्र यत्र च सर्वत्र समवायो यदाप्यते। तदा महेश्वरे ज्ञानं समवेति न खे कथं ॥१॥ इहेति प्रत्ययोऽप्येष शङ्करे न तु खादिषु। इति भेदः कथंसिध्येन्नियामकमपश्यत ॥२ आप्तपरीक्षा ६१—२

द्वारा भी क्रियोत्पत्ति घटित न होसकेगी।

परमाणु में प्रति समय क्रिया होती रहती है। ऐसा कोई भी समय नहीं रहता जबकि परमाणु क्रियाविहीन रहता है। जिन भौतिक विज्ञानियोंने इसका अनुभव किया है वे भी इसही परिणाम पर पहुंचे है।

अगर इन बातों को न भी उठाया जाय और अणुगम सिद्धान्तसे लेखक की ही बातको मान लिया जाय तब भी यह कैसे कहा जा सकेगा कि यह क्रिया परमात्मा ही देता है। एक स्कन्ध दूसरे की गतिमें निमित्त होते हैं यह प्रत्यक्ष बात है। वायु, जल और अग्नि आदि भी एक दूसरे स्कन्धों की क्रिया में कारण होते हैं। अतः लेखक की यह बात इस दृष्टि से भी ठीक प्रतीत नहीं होती। विज्ञान भी इसके प्रतिकूल है।*

लेखक ने निमित्त और कर्ता को एक समझा है। यही कारण है जिससे सब जगह उन्हों ने परमात्मा का सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की है। निमित्त तो वे सब ही पदार्थ है जो उपादान कारण के कार्य रूप होनेसे अपेक्षित हैं। जैसे घटोत्पत्ति में दंड और चाक आदि। कर्ता शब्द बुद्धिमान निमित्त के अर्थमें ही प्रयुक्त होता है जैसे घटोत्पत्तिमें कुम्हार। कार्यकी व्याप्ति कारण के साथ है न कि कर्ता के साथ। अनेक ऐसे भी कार्य हैं जिनके होने में कर्ता की आवश्यकता नहीं पडती। अतः कार्यसे कारण का ही अनुमान किया जा सकता है न कि कर्ता का।

उपर्युक्त विवेचन से प्रकट है कि लेखक का कथन उनके विचारों के अनुसार भी उनकी बात की पुष्टि नहीं करता।

परमाणुओं से स्कन्ध किस सम्बन्धसे मानते हैं यह प्रश्न यदि केवल सम्बन्ध की दृष्टिसे है तो इतना ही लिखदेना पर्याप्त है कि हम इनमें अवयव अवयवी सम्बन्ध मानते है।

अतः स्पष्ट है कि लेखक की इस युक्ति से कर्तावादकी सिद्धि नहीं होती।

इसही प्रकार लेखकने अपनी दूसरी अनुमान माला में भी असिद्ध हेतुओंका ही प्रयोग किया है। आपके अनुमानों का बल सकर्तृत्व और अनित्यत्व की व्याप्ति पर निर्भर है। लेखक ने विश्वको अनित्य प्रमाणित करने के लिये उस ही साध्यको उपस्थित किया है जिसको वह अनित्यसे सिद्ध करना चाहते है। लेखक के पहले अनुमानमें सकर्तृत्व साध्य है। तथा अनित्यत्व साधन है। दूसरे में अनित्यत्व साध्य है और कृत्रिम होने से और करणीयगुण सम्पृक्त होनेसे साधन हैं। सकर्तृत्व और कृत्रिम एवं करणीयगुण सम्पृक्त होनेमें केवल शब्द मात्रका अन्तर है। अर्थ दोनों का एक है। अतः लेखक के इन दोनों अनुमानों में परस्पराश्रय दोष है।

दूसरी बात यह भी है कि यदि विद्वान लेखकके अनुमानों की इन त्रुटियों को सामने न भी रक्खा जाय और विश्व को अनित्य भी स्वीकार कर लिया जाय तब भी इससे लेखक का अभिप्राय सिद्ध नहीं होता। क्योंकि अनित्यत्व के साथ सकर्तृत्व की व्याप्ति ही असिद्ध है।

पदार्थों को दो प्रकार से अनित्य माना जाता है। एक प्रागभाव प्रतियोगित्व से और इसका परिणमन शील

* Inorganic Chemistry by J. W. Mellon Page 861

होनेसे। जगत को प्रागभाव प्रतियोगित्व की दृष्टिसे तो अनित्य स्वीकार किया नहीं जा सकता। यह तो तभी कहा जा सकता था जबकि किसी समय विशेष में इसका अभाव प्रमाणित होजाता। जोकि असिद्ध है

दूसरी बात यह है कि ऐसे अनित्यत्वके साथ भी सकर्तृत्व की व्याप्ति नहीं है इसका स्पष्टीकरण हम पूर्व ही कर चुके हैं। परिणमनशील अनित्यत्व से तो परमात्मा भी बचा हुआ नहीं है। परमात्मा का सर्वज्ञत्व उभय सिद्धान्त मान्य है। पदार्थ परिणमनशील है यह भी विवाद की बात नहीं है। जो अभी कपड़ा है वह उससे पूर्व तागा, रुई थी। यदि इसही को जला दिया जाय तो यही राख हो जाती है। तागे की अवस्था में भी परमात्मा इस को जानता था अभी भी जान रहा है और आगे भी, किन्तु इन तीनों ही समय के जानने में अन्तर है। प्रस्तुत पदार्थ की तागे की अवस्था में परमात्मा इस की तागों की अवस्था को वर्तमान के रूप में जानता था और शेष दो पर्यायों में से कपडे की पर्याय को निकट भविष्य और राख की पर्याय को दूर भविष्य के रूप में जानता था। इसही पदार्थ को जब परमात्मा इसकी कपडे की अवस्था में जानता है तब उसके ज्ञान में अन्तर हो जाता है। जिसको पहिले वर्तमान रूप में जानता था उसको अब भूत रूप में जानता है तथा जिसको पहिले निकट भविष्य के रूप में: उसही को अब वर्तमान के रूप में जान रहा है। यही बात राख की पर्याय के ज्ञान के सम्बन्ध में है। पहिले इसको दूर भविष्यत के रूपमें जानता था किन्तु अब निकट भविष्य के रूप में जान रहा है।

यही व्यवस्था अन्य पदार्थों के ज्ञान के सम्बन्धमें है। इससे स्पष्ट है कि परमात्मा का ज्ञान प्रति पदार्थ की दृष्टि से प्रति समय परिणमनशील है। परमात्मा के ज्ञान में यदि इस प्रकार के परिणमन न माने जायेंगे तो फिर उसको पदार्थों के कालभेद का ज्ञान नहीं हो सकता तथा यदि काल भेद को छोड़ दिया जाय तो फिर पदार्थ का स्वरूप ही ज्ञेय की मर्यादा से बाहर हो जाता है अतः अन्य पदार्थों की तरह ज्ञान में भी परिणमन अनिवार्य है।

इसके सम्बन्ध में एक ही बात कही जा सकती है और वह यह है कि ज्ञेयों में ही परिणमन होता है न कि ज्ञान में। ज्ञान तो सदैव एक सा ही रहता है। दृष्टान्त के रूप में दर्पण को भी उपस्थित किया जा सकता है दर्पण में भिन्न २ समयों में भिन्न २ पदार्थों के प्रतिबिम्ब झलकते हैं इन सब ही प्रतिबिम्बों के समय अन्तर केवल प्रतिबिम्ब में ही रहता है न कि दर्पण में।

ज्ञान और दर्पण दोनों पर अपरिवर्तन-वादियों को विचारना चाहिये कि इन भिन्न ज्ञेय या प्रतिबिम्ब स्वरूप भिन्न २ कार्यों के निमित्त और उपादान कारण कौन २ हैं। यह विभिन्नता ज्ञान या दर्पण में है अत इसकी पूर्व पर्यायों को ही उनकी उत्तर पर्यायों के प्रति उपादान कारण मानना होगा ऐसी अवस्था में यह बात निःसन्देह हो जाती है कि यह विभिन्नता ज्ञान या दर्पणों के ही हो रही है।

यह बात केवल ईश्वर के ज्ञान ही के सम्बन्धमें नहीं है किन्तु जितने भी नित्य पदार्थ हैं वे सब सपरिणमन नित्य हैं अतः यह बात उन सबमें ही घटित हो जावेगी। इन सब को इस प्रकार

इस दृष्टि से अनित्य मानने पर भी ये सकर्तृक नहीं है तब फिर अनित्यत्व के साथ सकर्तृकत्व की व्याप्ति बतलाना किस प्रकार युक्ति संगत स्वीकार किया जा सकता है।

जब अनित्यत्व के साथ कर्तृकत्व की व्याप्ति ही नहीं है तब फिर इनके सम्बन्ध में मानवीय कर्तृकत्व या अकर्तृकत्व का विवाद ही नहीं उठता जिससे कि मनुष्य को इस योग्य न होने से जग को ईश्वर कर्तृक माना जा सके।

उपर्युक्त विवेचन से प्रगट है कि शास्त्री लेखक ने जिन बातों को विश्व कर्ता ईश्वर का समर्थक लिखा है वे इस योग्य नहीं है जिनसे ईश्वर को विश्व कर्ता कहा जा सके।

विरोध परिहार

(ले० श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

विरोध ३१—ज्ञान भी बिना दूसरे साधनों की सहायता के उपयोगात्मक नहीं होता अतः उसको भी सदैव उपयोगात्मक स्वीकार नहीं किया जा सकता।

परिहार ३१—विरोध परिहार शीर्षक लेखमाला में ही हम इस बात को प्रमाणित कर चुके है कि ज्ञान को साधन सापेक्ष कहना युक्ति विरुद्ध है। आक्षेपक ने इस सम्बन्धमें कोई नवीन बात उपस्थित नहीं की है तथा प्रस्तुत विरोध के सम्बन्ध में हम पहिले विशद विवेचन कर चुके है। यहां फिर उस को लिखने से पुनरावृत्ति मात्र होगी अतः इस परिहार को हम इतना ही संकेत करके समाप्त करते हैं कि पाठक महानुभावों को प्रस्तुत विरोधके संबंध में एक बार फिर दर्शन अङ्क ७ वर्ष ३ को देखने का कष्ट उठाना चाहिये।

विरोध ३२—पं० राजेन्द्रकुमार जीने मेरे आक्षेपों से बचने के लिये दर्शनोपयोग की प्रचलित मान्यता में सुधार किया है। उनका यदि ऐसा विश्वास है कि उनका प्रस्तुत कथन शास्त्रानुकूल है तो उनको इसके समर्थन में प्रमाण उपस्थित करने चाहिये। कोई मेरे आक्षेपों से बचने के लिये यदि किसी प्रचलित मान्यता में सुधार करता है तो यह मेरे लिये भी प्रसन्नता की बात है चलो सुधार तो हुआ वह किसी भी निमित्त से क्यों न सही। परिवर्तित परिभाषा के अनुसार भी मेरे आक्षेपों से बचा नहीं जा सकता। ऐसी परिस्थिति में भी केवली में दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग एक ही साथ संभव न हो सकेंगे।

परिहार ३२—आक्षेपक के प्रस्तुत आक्षेप का एक भी ऐसा अंश नहीं है जिसकी समीक्षा मैं ने अपनी मूल लेखमाला में न की हो। नहीं कह

सकता मेरी मूल लेखमाला के प्रस्तुत अंश पर पं० दरबारीलाल जी ने ध्यान क्यों नहीं दिया है अस्तु ! दर्शनोपयोग की मेरी परिभाषा जिसपर कि प्रस्तुत आक्षेप खड़ा किया है निम्न प्रकार है--

"ज्ञान और दर्शन ये दो स्वतन्त्र गुण नहीं किन्तु चेतनागुण की पर्याय हैं जिस समय चेतना गुण स्वातिरिक्त अन्य ज्ञेयों से असम्बन्धित होकर केवल अपना ही प्रकाश करता है उसको दर्शन कहते है । जब यही अपने प्रकाश के साथ अन्य ज्ञेयों का भी प्रकाश करता है उस समय इसी को ज्ञान कहते हैं" ।

दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग की उपर्युक्त परिभाषाएं हमने निम्नलिखित शास्त्रीय उल्लेखों के आधार से लिखी हैं—

"ततः सामान्यविशेषात्मकवाह्यार्थग्रहणं ज्ञानं यदात्मकस्वरूपग्रहणं दर्शनमितिसिद्ध" श्री जयधवल अर्थात सामान्य विशेषात्मक वाह्यपदार्थोका ग्रहण करना ज्ञान है और सामान्य विशेषात्मक स्वरूप का ग्रहण दर्शन है ।

दर्शन और ज्ञानके विवेचन से यही भाव आचार्य अमृतचंद्र† - ब्रह्मदेवने* क्रमशः लघीयस्त्रयका टीका और द्रव्य संग्रह की संस्कृत टीका में प्रगट किया है।

इस विषय पर हम अपनी लेखमालामें स्वतन्त्र रीतिसे १६-१७ पेज लिख चुके हैं अतः बन्धुओं को यह विषय वहींसे मालूम करना चाहिये । यहां फिर उन सब बातोंको दोहराना स्थान और शक्तिका व्यर्थ में व्यय मात्र होगा ।

उपर्युक्त विवेचनसे प्रकट है कि दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोगकी हमारी परिभाषायें शास्त्रीयपरिभाषायें हैं । ये वही परिभाषायें हैं जो लगातार हजारों वर्ष से शास्त्रकार अपने २ शास्त्रों में लिखते आरहे हैं । पं० दरबारीलाल जी का इनके सम्बन्धमें यह कहना कि यह हमारी कल्पना है तथा हमने ऐसा उनके आक्षेपों से बचने के लिये किया है मिथ्या है । इस सम्बन्ध में अब केवल एकही बात रह जाती है। और वह यह है कि यदि दर्शन और ज्ञान दोनोंस्वतंत्र गुण नहीं किन्तु चेतनागुण की पर्याय है तो ये दोनों एक साथ केवली से संभव कैसे मानी जासकेंगी । इसका समाधान भी हम अपनी मूल लेखमाला में ही कर आये है । दरबारीलाल जीका कर्तव्य था कि इस पर विचार करते और इसमें उनको जो जो आपत्तियाँ प्रतीत होतीं उनको अपने लेखमें प्रगट करते । आपने ऐसा नहीं किया है और अपने आक्षेपको ज्यों का त्यों लिख दिया है । यह बात किसी भी प्रकार समुचित ठहराई नहीं जासकती ।

आक्षेपके प्रस्तुत अंशका समाधान हम निम्न प्रकार कर चुके है। इसका यह भाव कदापि नहीं कि जीवन्मुक्त या सिद्धों में दो उपयोग एक साथ होते हैं किन्तु यह है कि दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग में जिन २ बातों की मुख्यता है वे बातें चैतन्य गुणकी उस अवस्थामें होती है। जहां दर्शनमें केवल स्वप्रकाश की बात है वहीं ज्ञानमें

---

† दर्शनमेव ज्ञानावरण वीर्यान्तराय क्षयोपशमविजृम्भितमर्थ विशेष ग्रहण लक्षणाव ग्रह रूपतया परिणमन इति यथा आकाशे इदंबलाकेति - लघीयस्त्रय ।

* एकमपि चैतन्यं भेदनय विवक्षायाम् यदा स्वग्राहकत्वेन प्रवृत्तं तदा तस्य दर्शनमिति संज्ञा पश्चात् यच परद्रव्यग्राहकत्वेन प्रवृत्तं तदा तस्य ज्ञानसंज्ञेति विषय भेदेन द्विधाभिद्यते बृहद्द्रव्यसंग्रह गाथा ४३

परप्रकाशकी मुख्यता है और इस अवस्थामें ये दोनोंही होती हैं। अतः यह कहा जाता है कि केवली या सिद्धोंमें दर्शनोपयोग और ज्ञानोपयोग एक साथ होते हैं।

इस प्रकार की व्यवस्था तो संसारी जीवों के ज्ञानमें भी हैं फिर यही क्यों कहा जाता है कि केवली या मुक्तों में ही दोनों उपयोग एक साथ होते हैं ? संसारी जीवों के ज्ञान में इस प्रकार की व्यवस्था होनेपर भी उनके चेतना गुण की यह पर्याय स्थिर नहीं है कभी यह ज्ञान रूप रहता है तो कभी दर्शन रूप। अतः वहां इस प्रकार की व्यवस्था के सार्वकालिक न होने से ऐसा नहीं कह सकते किन्तु यही कहना पड़ता है कि उनका ज्ञान दर्शन पूर्वक होता है ·······।

इससे पाठक समझ गये होंगे कि दरबारीलालजी के प्रस्तुत आक्षेप में भी ऐसी बातें हैं जिनका समाधान हम पूर्व ही कर चुके हैं अतः स्पष्ट है कि आक्षेपक का प्रस्तुत आक्षेप मिथ्या है—

संसारी जीवों का ज्ञान दर्शनपूर्वक भी होता है और ज्ञान पूर्वक भी। एक समय हमारा ही ज्ञानोपयोग ज्ञानोपयोगान्तर होने में बीच में दर्शनोपयोग रूप परिणमन करता है और दूसरे समय ऐसा नहीं होता। यह सब बात परिस्थिति विशेष पर निर्भर है। जब आत्मा निर्मोही हो जाता है तब इसके ज्ञान को दर्शनरूप करने के कारण नहीं रहते, ध्यान तो छोड़ नहीं सकता तथा ध्यान ज्ञान स्वरूप है। ऐसी ही अवस्था में यह ज्ञानावरण और दर्शनावरण का नाश करके चैतन्य गुण को पूर्ण विकसित कर लेता है अतः फिर इसका चैतन्य भी इसके आकार विशेष की तरह एक तरह से स्थिर ही रहता है।

इस समय के ज्ञान में परिवर्तन नहीं होता इस का तात्पर्य यही है कि यह अपनी ज्ञान स्वरूप पर्याय को छोड़ कर दर्शनपर्याय को धारण नहीं करता, अर्थात् उपयोगान्तर रूप परिणमन नहीं करता। इस का यह तात्पर्य नहीं कि इसके अन्तरङ्ग रूप में भी परिणमन नहीं होते, यदि ऐसा कहा जायगा तब तो फिर यह अवस्तु ही हो जायगा। उपयोगान्तर स्वरूप होने के कारण नहीं हैं अतः यह उपयोगान्तर रूप नहीं होता। ज्ञानावरण के पूर्ण नाश से इसके विकसित होने में तो कारण है अतः यह विकसित होकर केवलज्ञानरूप हो जाता है।

इससे प्रगट है कि दरबारीलाल जी की यह आपत्ति कि यदि यह दर्शनोपयोगरूप नहीं होता तो इसमें भी परिवर्तन नहीं होने चाहिये मिथ्या है।

इस विरोध के परिहारके साथ ही साथ विरोध परिहार शीर्षक हमारी लेखमाला अब कुछ समय के लिये स्थगित रहेगी। इसका कारण यह है हमारी मूल लेखमाला—जैनधर्म का मर्म और पं० दरबारी लाल जी शीर्षक का पं० दरबारीलाल जी ने जहां तक उत्तर दिया था वहां तक ही हम उनके उत्तरों की समीक्षा अपनी प्रस्तुत लेखमाला में कर चुके हैं। अब जब भी पं० दरबारीलाल जी हमारी मूल लेखमाला के आगे के अंश की समीक्षा प्रारम्भ करेंगे हम भी साथ ही साथ उनकी समीक्षा की परीक्षा अपनी प्रस्तुत लेखमाला के शीर्षक से ही करते रहेंगे। जब तक पं० दरबारीलाल जी इस कार्य को बन्द रक्खेंगे तब तक तो यह स्थगित ही रहेगी।

हम अपनी मूल लेखमाला में सर्वज्ञता, प्राचीनता और नग्नता पर पं० दरबारीलाल जी के विचारों की परीक्षा कर चुके हैं। इसके अतिरिक्त भी जैनधर्मका मर्म शीर्षक पं० दरबारीलाल जी का लेखमाला में कई विषय विचारणीय हैं अतः अब हम अपनी मूल लेखमाला से ही इनकी समीक्षा करेंगे। अब सर्वप्रथम

मेरी आत्मकथा

जिला हिसार में भिवानी एक सुप्रसिद्ध नगर है, भिवानी के वैश्य कलकत्ता, बम्बई, करांची, कानपुर, लखनऊ, देहली आदि सम्पूर्ण व्यापारिक केन्द्रों में प्रसिद्ध हैं, इनकी व्यापार कुशलता, मितव्ययता एवं इनके पुरुषार्थ ने इनको प्रत्येक व्यापार में अनुपम सफलता प्रदान की है। यह भिवानी प्रातः स्मरणीय ला० नन्दराम जी के नाम से सुविख्यात है, अर्थात् इस भव्य नगर के निर्माण कर्ता ला० नन्दराम जी थे। ला० नन्दराम जी अपने समय के महापुरुषों में से एक थे। आप धन में कुबेर थे तो दान में आप हरिश्चन्द्र थे, तथा नीतिमत्ता में आप एक अपूर्व नीति मान थे। आप शूरवीरों में भी अग्रणी थे, तो धर्म्म में आपकी युधिष्ठिर से कम श्रद्धा न थी। ला० नन्दराम जी के दो लघु भ्राता और थे एक पूज्य ला० सेवाराम जी तथा दूसरे पूज्य ला० भीमराज जी। इन दोनों में भी उपरोक्त सम्पूर्ण सद्गुणों ने आश्रय पाया था।

मैं इसी वंश का एक बालक हूं, मेरी जाति अग्रवाल है गोत्र गोयल है। मैं आज से अनुमान ३० वर्ष पूर्व देहली में कपड़े की दलाली करवाता था उस समय मुझे आर्यसमाज के व्याख्यान सुनने का अवसर प्राप्त होता था, धीरे २ मुझे उन व्याख्यानों से प्रेम होगया। अतः जिस जगह आर्यसमाज के व्याख्यान होते थे मैं उसी जगह चला जाता।

मैं ने स्वाध्याय भी आरम्भ कर दिया था। मेरे स्वाध्याय में श्री स्वा० दर्शनानन्द जी की ही पुस्तकें होती थीं। इन पुस्तकों से मेरी तर्क शक्ति बढ़ गई तथा मैं समाज के सिद्धान्तों को भी समझने लग गया। उसके पश्चात् क्रमशः मैं ने सत्यार्थ प्र० आदि श्री स्वामी दयानन्द जी महाराज के ग्रन्थों का और दर्शनों का स्वाध्याय आरम्भ किया, इसके बाद दर्शनों पर आर्य विद्वानों के जितने भाष्य उपलब्ध थे उन सब का मैं ने तुलनात्मक दृष्टि से स्वाध्याय आरम्भ कर दिया। उसही समय कम्पनी बाग में शंका समाधान हुआ करता था मैं इसमें भी भाग लिया करता। धीरे २ मैं ने व्याख्यान देना आरम्भ कर दिया। उस समय तक शालिनी सभामें आपस के शास्त्रार्थ भी पर्याप्त होते थे, उन सबमें मेरा मुख्य भाग होता था।

एक समय तर्क शालिनी सभा में "वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं या नहीं" इस विषयपर विवाद होना निश्चित हुआ, उसमें पूर्वपक्ष मैंने लिया था। उसी समयसे मेरा वेदों का स्वाध्याय आरम्भ हुआ वेदों के खंडन एवं मंडन में जितना साहित्य प्राप्त हो सका उसका अनुशीलन मैं ने किया। जो जो प्रश्न मैं करता था उनका उत्तर तर्क शालिनी के प्रधान जो कि आर्य जगत के सर्वमान्य विद्वान हैं नहीं दे सकते थे (सच तो यह है कि उसी समय मनमें यह सन्देह उत्पन्न हो गया क वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं है) मैं ने उन प्रश्नों को अन्य आर्य विद्वानों के सन्मुख रक्खा

हम पं० दरबारीलाल जी के ज्ञान प्रकरण को लेंगे। हमारी यह लेखमाला अब पुनः दर्शन के बारहवें अंक से प्रारम्भ होगी। आशा है पाठक ध्यान से पढ़कर लाभ उठावेंगे।

परन्तु उनसे भी कोई सन्तोषप्रद उत्तर नहीं मिला।

इसही समय श्री स्वामी दर्शनानन्द जी देहली पधारे हुए थे। आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। समय २ पर मैं आपकी परिचर्या के लिये आपके पास आया करता था। एक दिन जब कि आपका स्वास्थ्य अधिक खराब था आप चिन्तित प्रतीत होते थे। मैंने स्वामी जी से पूछा कि महाराज चिन्तित होने का क्या कारण है? कई बार लगातार प्रेरणा करने पर स्वामी जी ने कहा कि "अब मेरे शरीर का तो अन्त हो रहा है और आर्यसमाज में अन्य कोई ऐसा विद्वान नहीं है जो जैनियों से शास्त्रार्थ कर सके अतः मुझे इस बात का ध्यान आ गया है कि जैनियों के साथ शास्त्रार्थ में आर्यसमाज की क्या दशा होगी"।

मैंने कहा स्वामी जी चिन्ता की कोई बात नहीं है आर्यसमाज में बड़े २ विद्वान हैं वे इस कार्य को बड़ी सफलता पूर्वक कर सकेंगे। इसके उत्तर में स्वामी जी ने कहा कि "कुछ समय पहले अजमेर में जैनियों से आर्यसमाज का शास्त्रार्थ हुआ था। जैन पं० गोपालदास जी की युक्तियाँ बड़ी प्रबल थीं। ऐसी युक्तियों का समाधान करने वाला अब आर्य समाज में कोई नहीं है। आर्यसमाज के वर्तमान विद्वानों से यह कार्य न हो सकेगा"।

एक तो वेदों पर मुझे बहुत सी शंकायें थीं उन का निर्णय बिना संस्कृत पढ़कर उनका स्वयं अर्थ किये नहीं हो सकता था दूसरे स्वामी जी के ये वाक्य सुनकर यह खयाल हुआ कि संस्कृत पढ़कर दार्शनिक एवं जैन ग्रन्थों का अध्ययन किया जाय। जिससे मैं जैनियों से शास्त्रार्थ करने के योग्य होसकूँ और मेरे द्वारा आर्यसमाज की यह कमी पूरी की जा सके। इन विचारों के साथ मैंने अपना सब व्यापार बन्द कर दिया और संस्कृत के अध्ययन के लिये बनारस को प्रयाण कर दिया।

बनारसमें आर्य विद्यार्थियों को कितनी आपत्तियां थीं? इसको वहां के आर्य विद्यार्थी ही जान सकते थे उन सब मुसीबतों को धैर्य पूर्वक सहकर अध्ययन करता रहा। अन्तमें मुझे वहांसे जानाही पड़ा क्यों कि अपनेको मैं छिपा नहीं सकता था और प्रत्यक्ष में वहां रहना असंभव था। अतः मैं वहाँसे चलकर बनारस और जौनपुरके बीच एक शिवपुर ग्राम है वहाँ आगया। वहाँ एक संस्कृत पाठशाला थी (संभव है अब भी हो) जिसमें पूज्यपाद पं० पातञ्जलि जी पढ़ाते थे। यह पाठशाला उनकी निजू की थी। यह गुरुवर महान उदार थे। मैंने इनके सन्मुख सम्पूर्ण वृत्तान्त कह दिया। आप बड़े प्रसन्न हुये तथा बड़े प्रेमसे आपने मुझे विद्या दान दिया। उनके प्रेमके लिये तथा उनकी उदारता का हमेशा ऋणी रहूंगा। उसके बाद में अन्य स्थानों पर भी पढ़ता रहा अन्त में सं० १६१६ में पढ़कर मैं घर लौट आया तथा सं० १६२० ई० में मैंने भिवानी में कपड़े की दुकान कर ली। परन्तु उसी समय जैन साधुओं का भिवानीमें चातुर्मास होगया। मैंने उनसे वादविवाद ठान लिया यह विवाद नित्य बढ़ता हीचला गया और अन्तमें बड़ारूप धारण कर लिया।

मैंने दुकानका कार्य सब छोड़ दिया तथा रात दिन जैन पुस्तकों का स्वाध्याय आरम्भ करदिया। जो कुछ मेरे पास पूंजी थी वह भी जैन पुस्तकों के खरीदने में व्यय करदी। इसलिये १०००) रु० का

नुकसान देकर मुझे दुकान उठानी पड़ी।

उस समय कांग्रेस का आन्दोलन चल पड़ा था मैंने उसमें कार्य आरम्भ करदिया तथा सन १९२१ के आरम्भ में ही मैं जेल चला गया। पहले मैं हिसार की जेल में उसके बाद अम्बाले की जेलमें चला गया। जेलसे छूटकर मैं कलकत्ते चला आया और वहां आकर बोरे की दलाली करने लग गया। कलकत्ते में दलाली भी करवाता था तथा आर्यसमाज की सेवा भी करता था। कलकत्ते के तो भिन्न २ स्थानों पर व्याख्यान देता ही था। कभी २ बाहर भी व्याख्यान तथा शास्त्रार्थ करने जाता था। अन्तमें मैं बड़ा बाजार हिन्दूसभा का मन्त्री चुना गया और उस समय जो हबड़े में दंगा हुआ था उसमें मैंने जो सेवा की थी उसका समाचार कलकत्ते के सभी पत्रोंमें प्रकाशित हुआ था। तत्पश्चात मैंने मारवाड़ी अग्रवाल महासभाकी ६०) मासिक और खर्चे पर नौकरी करली। इसके लिये मुझे प्रायः भारतके सभी प्रान्तों का भ्रमण करना पड़ा। जिस समय मैं जाता था आर्यसमाज में अवश्य व्याख्यान देता था। इसकी शिकायत महासभा के मन्त्री जी के पास गई और मुझे उन्होंने पत्र लिखा कि आप कृपया मजहबी मामलोंमें जरा हिस्सा कम लिया करें। अतः मैंने सभा का कार्य छोड़ दिया।

उसके बाद गुरुकुल भटिण्डे में पढ़ाने लगा। अग्रवाल महासभा वालों ने मुझे पुनः बम्बई बुला लिया। इस बीचमें मेरी स्त्रीका देहान्त होचुका था बम्बई के उत्सव के बाद महासभा वालों ने फिर वही आर्यसमाज का प्रश्न उठाया। उस समय मैंने साफ कह दिया कि मैं आर्यसमाज का प्रचार तो अवश्य करूंगा। इस पर भी उन्होंने मुझको जवाब नहीं दिया और मैं कार्य करता रहा। परन्तु मेरे चित्तमें एक दम वैराग्य उत्पन्न होगया और मैंने संन्यास लेलिया। संन्यास लेनेके बाद मैंने पुंछ तथा रियासत काश्मीर में कार्य किया। उसके बाद सिन्धमें शास्त्रार्थ करने चला गया। उस समय सिन्धमें आर्य समाज पर एक मुसीबत आई हुई थी वहां अनेक बड़े २ शास्त्रार्थ किये तथा सम्पूर्ण प्रान्तमें भ्रमण करके आर्यसमाजका प्रचार किया।

उसके बाद राजस्थान में शास्त्रार्थोंकी बाढ़सी आगई। वहांकी गरीब समाज बाहरसे विद्वानों को नहीं बुला सकती थी। यह देखकर मैंने राजस्थान में अपना केन्द्र कर लिया और वहां अनेक बडे २ शास्त्रार्थ किये तथा सम्पूर्ण प्रान्तमें प्रचार किया। उस के बाद मैंने अपना स्थान पानीपत बना लिया और वहीं से सब जगह प्रचारार्थ जाने लगा।

भारत का ऐसा कोई प्रान्त नहीं है जिसमें मैं ने आर्यसमाज का प्रचार कार्य न किया हो। यदि मेरे सम्पूर्ण व्याख्यानोंकी गणना की जाय तो वह हजारों की संख्या में बैठगी। इसही बीच में मुझे भारत के भिन्न २ स्थानों पर शास्त्रार्थ करने का भी अवसर मिला है। हैदराबाद दक्षिण, हैदराबाद सिंध, यू० पी०, मध्यप्रान्त, राजस्थान, और पंजाब आदि प्रान्तों में एक भी ऐसा प्रान्त नहीं है जहां मैं अनेक बार शास्त्रार्थ के लिये न बुलाया गया होऊं केवल देहली के ही मैंने शास्त्रार्थों की संख्या पचास से कम न होगी। प्रान्तों की तरह ऐसा कोई सम्प्रदाय भी नहीं है जिसके साथ आर्यसमाज की तरफ से मैं ने शास्त्रार्थ न किया हो। मुसलमान, ईसाई, लिंगायत

राधास्वामी, सनातनी और जैनी सबसे ही अनेकबार मेरे शास्त्रार्थ हुये हैं। इस युग में जैनियों से तो जितने शास्त्रार्थ हुये हैं उन सबमें ही प्रमुख भाग मेरा रहा है। इस प्रकार मेरे से जितना भी हो सका है मैं ने आर्यसमाज की सेवा में किसी भी प्रकार से कमी नहीं उठाई थी।

विचार परिवर्तन

एक तो मुझे मेरे प्रारम्भिक जीवन से ही वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने में शंका थी, दूसरे जब मैं ने इस विषय पर आर्यसमाज की तरफ से शास्त्रार्थ किये तब और भी आक्षेप मेरे सामने आये, मैं उनका समाधान न कर सका अपने सहयोगियों से परामर्श करने पर वे भी इसमें असफल प्रमाणित हुये वर्तमान सम्पूर्ण सामाजिक वेद भाष्यों ने मेरी इस शंका में और भी वृद्धि कर दी। अनेक सहयोगी तो वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने में मुझ से भी अधिक शंकित निकले। इसही समय मुझे जैनियों की पुस्तकों के भी उत्तर लिखने पड़ते थे। एक समय मैं पं० अजितकुमार जी शास्त्री की आर्यसमाज की गप्पाष्टक का उत्तर लिख रहा था। उत्तर तो मैं लिख गया किन्तु आदि सृष्टि हुई और उसमें जवान मनुष्य तिब्बत पर उत्पन्न हुए इस प्रश्न ने मेरे दिमाग में चक्कर उत्पन्न कर दिया, जहां तक हो सका मैं ने प्रयत्न किया किन्तु फिर भी मैं असफल ही रहा। एक तो उस समय तिब्बत की सत्ता ही सिद्ध नहीं होती क्योंकि इसका जन्म काल हजारों वर्ष का है। दूसरे जवान मनुष्यों की उत्पत्ति भी तर्क विरुद्ध प्रतीत होती है। इसके बाद जब मैं ने भाषा विज्ञान, महा प्रलय आदि पर विचार किया तो यह प्रश्न मेरे मस्तिष्क में बढ़ता ही गया।

परमात्मा में बनाने, रक्षा और प्रलय करने का स्वभाव है तथा यह प्रति समय रहता है फिर यह कैसे संभव है कि चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष तक प्रलय ही बनी रहे। और भी अनेक बातें हैं जिन को मैं अपने किसी स्वतंत्र लेख में लिखूँगा। इन ही बातों ने मेरे विश्वासको ईश्वरके जगतकर्तृत्व से हटा दिया।

जैनियों के शास्त्रार्थ के समय मुझे उनके शास्त्रों के देखने का अवसर मिला। जब मैं ने जैन पुराणों के अध्ययन के बाद उसके दार्शनिक साहित्य का स्वाध्याय किया तब उसके तर्क का मेरे मन पर प्रभाव होने लगा। पहले मुझे जैनदर्शनका स्याद्वाद प्रिय लगा। मैंने इसका ज्यों ज्यों अधिक स्वाध्याय किया यह विषय मेरे हृदय में उतना ही स्थान करता गया और अखीर में आकर मैं इसका एक भक्त बन गया।

मुलतान के शास्त्रार्थ के समय तो आर्यसमाज के प्लेटफार्म से भी मैंने इसकी प्रशंसा की थी स्याद्वादका भक्त होने पर मैं ने सब ही विषयों का इस दृष्टि से स्वधयाय किया और स्याद्वाद के स्थान पर जैनदर्शन ने भी मेरे हृदय में स्थान जमा लिया। इसके बाद मैं ने कर्म और उसके फल के वास्तविक स्वरूप को समझा और फिर मेरा विश्वास निश्चित रूप से आर्यसमाज के स्थान पर जैनदर्शन पर जम गया। मैं जैनदर्शन का भक्त बना फिर भी मैं इसकी घोषणा न कर सका। मैं ने फिर भी अनेक बार इस प्रश्न पर विचार किया और अन्त में मैं इसही परिणाम पर पहुंचा कि अब मुझे अपने विश्वास के अनुसार ही कार्य करना चाहिये। ऐसा करने में मुझे अनेक

झंझट थे। एक तरफ बढ़ी हुई आर्यसमाज से प्रतिष्ठा थी तो दूसरी तरफ अनेक प्रतिष्ठित बन्धुओं का स्नेह। मैं इसको कैसे छोड़ूँ यह बात मनमें बार २ आती थी किन्तु समय २ पर भीतर से यही आवाज उठती थी कि अपने विश्वास के लिये सब कुछ छोड़ो अतः मैं ने इन सब बातों के त्याग का दृढ़ संकल्प किया और अपना बिस्तरा तयार करके अम्बाले को प्रयाण किया। वहां जाकर शास्त्रार्थ संघ के कार्यालय में पहुंचा। वहां अपने चिर परिचित मित्र पं० राजेन्द्रकुमार जी भेंट सेहुई। मैं ने उनसे अपने सब विचार स्पष्ट २ कह दिये उन्हों ने मेरा स्वागत किया। इस प्रकार मैं ने एक धर्म से सम्बन्ध विच्छेद करके दूसरे धर्म को अङ्गीकार किया। मैं ने अपनी जीवन यात्रा के कुछ पृष्ठ लिखे हैं भविष्य में यदि अवसर मिला तो मैं अपने विशद समाचार जनता के समक्ष रख सकूंगा।

लेखक—कर्मानन्द

❋　　❋　　❋

दिगम्बर मत समीक्षा पर प्रकाश

(ले० श्री मान् प० वीरेन्द्र कुमार जी जैन)

स्थानक वासी साधु श्रीमान पं मिश्रीमल्ल जी ने 'दिगम्बर मत समीक्षा' नामक ६८ पृष्ठ की पुस्तक लिखी है। इसमें आपने ६ प्रकरणों द्वारा दिगम्बर जैन सिद्धान्तों पर कुछ असफल आक्षेप किये हैं। हम उन पर क्रमशः प्रकाश डालते हैं।

प्रथम प्रकरण में आपने दि० सम्प्रदायकी अर्वाचीनता सिद्ध करनेका उद्योग किया है। आप लिखते हैं कि "मित्रो! श्वेताम्बर जैन समाज अनादि निधन है इसमें अंशमात्र भी संशय उत्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है"। ठीक है मिश्रीलाल जी के इस अनादिनिधन में श्वेताम्बरी सूत्रों के लिखे अनुसार भी वर्तमान जैनधर्मकी नींव डालने वाले भगवान ऋषभदेव दिगम्बर रूप धारक थे। कुछ हर्ज नहीं, या तो भगवान साधु बनते समय भूलसे दि० रूप धारण कर बैठे अथवा मिश्रीमल जी की अनादिनिधनता ही बेचारी ऐसी है।

अन्तिम श्रुत केवली भद्रबाहु आचार्य के समय में १२ वर्षका अकाल पड़ा था जिसकी भीषणता के कारण कुछ जैन साधुओं ने आपत्ति कालमें वस्त्र पहिन लिये। जिससे कि दि० और श्वेताम्बर दो भेद होगये हैं।" यह कथा ऐतिहासिक है। श्रवण बेलगोला (मद्रास) की चन्द्रगिरी पर्वत जहां कि भद्रबाहु का स्वर्गवास हुआ था, अबतक विद्यमान है। उस में अनेक शिलालेख इस सत्य कथाकी साक्षी देते हैं। मिश्रीमल जी अगर पक्षपातका उतार कर उस पर विचार करें तो उनका भ्रम तुरंत दूर होजावे।

आपने ऐसा न करके वही रथवीरपुर वाली शिव भूतिकी निराधार कथा का उल्लेख करके वीर सं०

६०६ से दि० मत उत्पत्ति बतलानेकी चेष्टा की है। यहांपर मिश्रीमल जी को दो बातों पर दृष्टि डालनी चाहिये।

एकतो भ० ऋषभदेवकी साधुचर्या पर। भ० ऋषभदेवने वस्त्र त्याग कर नग्नवेश में तपस्या की थी इस बातको आपके श्वेताम्बरी ग्रन्थ, भागवत आदि अजैन ग्रन्थ प्रगट करते हैं तथा आपके यहां असंख्य जिनकल्पी मुनि भी दिगम्बर रूप में होते रहे फिर दिगम्बरता भगवान ऋषभदेव के समय से हुई अथवा वीर सं० ६०६ से ?

दूसरी—रथवीरपुर, शिवभूति, कृष्णाचार्य, सहस्रमल्ल आदि का किसी भी इतिहास साधन से पता नहीं चलता। कथा बनाने वाले बिचारे को यह स्वप्न में भी खयाल न था कि मेरी कपोलकल्पित मिथ्या कथा की जांच की जायगी। मिश्रीमल जी तथा अन्य श्वेताम्बरी विद्वानों द्वारा संघभेद के लिये इस कथा की दुहाई देने का तब तक रंचमात्र भी मूल्य नहीं हो सकता जब तक कि वे इस कथा की ऐतिहासिक सत्यता साबित नहीं कर सकते।

आपने श्वेताम्बरीय वेश के पुरातन सिद्ध करने को शिवपुराण के श्लोक लिख दिये हैं देखिये—

हस्ते पात्रं दधानाश्च तुण्डे वस्त्रस्य धारकाः।
मलिनान्येव वासांसि धारयन्तोऽल्पभाषिणः २५
धर्मोलाभ परं तत्वं वदन्तस्ते तथा स्वयम्।
मार्जनीं धार्यमाणास्ते वस्त्रखण्डविनिर्मिताम् ।२६।

इसमें श्वेताम्बर जैन साधु का नाम कहा है सो तो सिर्फ मिश्रीमल जी को पता है अगर आप इस गूढ शब्दको प्रगट करते तब उस पर कुछ विचार भी किया जाता। हां ? यह बात जरूर है कि या तो शिवपुराण बनाने वाला संस्कृतका कोई भारी विद्वान था जिसने ऐसे श्लोक बनाये अथवा मिश्रीमल जी ने किसी नवीन संस्कृत भाषा की नीव डाली है जिसमें ऐसे शुद्ध श्लोक बनाये जा सकते हैं।

तथा—मिश्रीमल जी शिवपुराण को ४००० वर्ष पुराना बतला रहे हैं यह भी श्वेताम्बर जैन समाजकी अनादि निधनता के समान इतिहास की टांग तोड़ती है। अतः इन श्लोकों पर तो कोई महान संस्कृत भाषाका विद्वान एवं इतिहासवेत्ता ही विचार करे।

अन्त में आपने स्थानकवासी सम्प्रदायके संस्थापक लुंकाजी की बात को उठाया है किन्तु वहां यह कुछ नहीं लिखा कि वे कब हुए और उन्हों ने कब ढूंढक मत की नीव डाली ? शायद मिश्रीमल जी का ढूंढक मत भी उनकी समझ के अनुसार अनादि निधन होगा।

मिश्रीमल जी के विचार करने के लिये हम यहां पर कुछ इतिहास सम्मतियां प्रगट करते हैं—

मि० बी० लेविस राइस सी आई० ई० लिखते हैं-

"समय के फेर से दि० जैनियों मेंसे एक विभाग उठ खड़ा हुआ जो कि इस प्रकार के कट्टर साधुपने से विरुद्ध पड़ा इस विभागने अपना नाम "श्वेताम्बर" रक्खा यह बात सत्य मालूम होती है कि अत्यन्त शिथिल श्वेताम्बरियों से कट्टर दिगम्बरी पहले के हैं"

प्रतिभाशाली सब जज श्रीयुत फणीन्द्रलाल सेन लिखते हैं—

"इस बात के बहुत दृढ़ प्रमाण हैं कि श्वेताम्बरी जैनियोंके पहिले दि० जैनी बहुत पहलेसे मौजूद थे।"

इन्साइक्लोपीडिया की २५ वीं जिल्द में (सन् १९११) प्रकाशित हुआ है—

जैनियों में दो बड़े भेद हैं एक दिगम्बर दूसरा श्वेताम्बर। श्वेताम्बर थोड़े काल से शायद बहुत करके ईसा की ५ वीं शताब्दी से प्रगट हुआ है। दि० निश्चय से लगभग वे ही निर्ग्रन्थ हैं जिनका वर्णन बौद्धों की पालीपिटकोंमें आया है इस कारण ये लोग (दिगम्बर) ईसा से ६०० वर्ष पहले के तो होने ही चाहिये।"

इस तरह अनेक सम्मति प्रकाशित हो चुकी हैं विस्तार भय से उनको नहीं लिखा है। इस के सिवाय मुहुनजोदारो से जो पांच हजार वर्ष पुरानी सीलें प्राप्त हुई हैं उन पर नग्न खड्गासन रूप में भगवान ऋषभदेव की मूर्ति अङ्कित है। यदि मिश्री मल जी के कथनानुसार दिगम्बर समाज विक्रम संवत् से पीछे का होता तो उन सीलोंपर दिगम्बरीय मूर्ति ५००० वर्ष पहले कहां से आ गई होतीं।

राजा करिकंडु भगवान पार्श्वनाथ के समय में हुआ है उसकी बनवाई हुई ऐतिहासिक गुफाएं उस्मानाबाद के पास अब तक हैं उनमें सभी प्रतिमायें पार्श्वनाथ की हैं भगवान महावीर की एक भी नहीं है जिससे कि इतिहासवेत्ताओं के मतानुसार ये गुफाएं और प्रतिमाएं भगवान पार्श्वनाथ के समय की निश्चित की गई हैं। वे सभी प्रतिमाएं नग्न दिगम्बर हैं। यह ऐतिहासिक सामग्री इस बातकी साक्षी देती है कि भगवान पार्श्वनाथ के समय दि० रूप में जैन समाज था।

जहां कहीं भी संघ भेद होने से पहले की प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं वे सभी दिगम्बर प्रतिमाएं मिली हैं कोई भी प्रतिमा श्वेताम्बर नहीं मिली।

श्वेताम्बरीय ग्रंथ कल्पसूत्र के कथनानुसार "भद्रबाहु आचार्यके पीछे 'जिनकल्प' यानी वस्त्रत्यागी साधु सम्प्रदाय नष्ट हो गया"। इसका स्पष्ट अभिप्राय यही है कि भद्रबाहु आचार्य के समय तक एक दि० रूप में ही जैन साधु होते थे फिर दुष्काल आदि कारणों से वस्त्र धारी जैन साधु होने लगे।

इस कारण मिश्रीमल जी! अपने हृदय से भ्रम निकाल दीजिये कि श्वेताम्बर समाज अनादि निधन है और दिगम्बर समाज अर्वाचीन है। आपने जो 'मूर्ख, अन्धे' आदि अपशब्द दिगम्बरी विद्वानों के लिये प्रयोग किये हैं यह आपकी नमूनेदार भाषा समिति है यह शोभा आपको मुबारिक हो।

दूसरे प्रकरण में आपने दि० समाज को 'भगवान महावीर स्वामी के मांसाहारी' बतलाने का दोष दिया है सो यह आपकी उल्टी चाल का नमूना है। दिगम्बरी ग्रन्थों में तो भगवान महावीर स्वामीका जो निर्मल जीवन लिखागया है उस पर कोई उंगली भी नहीं उठा सकता और न अबतक किसीने उठाई है। आप भी यह बात आजमा कर देख लीजिए फिर आपका लिखना मिथ्या अथवा उलटा नहीं तो क्या है दिगम्बर समाजको तो आप तब कोसते जब कि भगवान महावीर के लिये उनके ग्रन्थों में कहीं ऐसा लिखा होता।

यह आक्षेप तो आप अपने भगवती सूत्र रचयिता पर उनके टीकाकार अभयदेव सूरि पर तथा अपने श्वेताम्बरी भाई बा० गणपतिराय जी वकील आदि पर करते तो कुछ अच्छा भी दीखता जिन्होंने कि भ० महावीर पर यह गन्दा न सुनने

योग्य असत्य धब्बा लगाया है।

जो बात भगवान महावीर स्वामी के विषय में आपके भगवती सूत्र ने लिखी है उसका समर्थन अन्य किसी ग्रन्थसे नहीं होता। भगवतीसूत्र के 'कपोत' 'कुक्कुट' शब्दोंका मांस परक अर्थ दि० ही करने लगे हैं यह बात मिथ्या है। दिगम्बरियोंने भगवती सूत्र छप जानेपर देखा है किन्तु आजसे सैकड़ों वर्ष पहले जबकि भगवती सूत्र किसी अजैन अथवा दि० विद्वानके हाथों में पहुंचा भी नहोगा। केवल श्वेताम्बरीय साधुओं के पठन पाठन की वस्तु होगा उस समय भी इन शब्दों के अर्थ 'कबूतर, मुर्ग' किया जाता था। इस बातकी साक्षी टीकाकार अभयदेव सूरि के वाक्य देते हैं। अभयदेव सूरिने लिखा है कि—

"दुवेकवोया इत्यादेः श्रूयमाणमेवार्थं केचित् मन्यन्ते" अन्येत्वाहुः इत्यादि।

जरा शान्तचित्त होकर ध्यानसे इसको पढिये और विचारिये कि अभय देवसूरि के समयमें श्वेताम्बर साधु अपने भगवती सूत्र के विवादग्रस्त शब्दों का अर्थ माँसपरक करते थे या नहीं? यही कारण है कि टीका लिखते हुये विद्वान टीकाकार ने उन शब्दों के दोनों अर्थ लिखे। इतना ही नहीं किन्तु उन्होंने मांसपरक अर्थ असत्य बतलाने के लिये एक अक्षर भी नहीं लिखा। यदि लिखा हो तो आप बतलाइये फिर भगवान महावीर को मांसाहारी कहनेका असभ्य निन्द्य अपराध श्वेताम्बर विद्वानों ने नहीं किया" यह आप किस तरह सिद्ध कर सकते हैं।

श्वेताम्बर वकील श्रीमान बा० गणपतिराय जी सरदार नगरने अपनी 'संतपरीक्षा' नामक पुस्तक के ३२ सफेपर भगवती सूत्रके मांसाहार की बात साफ तौरसे हिन्दी भाषामें लिखदी है आप पढ़कर देख सकते हैं। फिर यदि दि० विद्वान इस दूषित कलंक को दूर कराने के लिये कुछ लिखें तो आप कृतज्ञता के स्थान पर उनका विवेकशून्य आदि शुभ शब्दों से आदर करते हैं।

भगवती सूत्रकार को क्या 'कूष्माण्ड' तथा 'बीज पूरक' शब्द मालूम नहीं थे जोकि उन्होंने इन स्पष्ट शब्दों की जगह कपोत, कुक्कुट सरीखे शब्द रख दिये। भगवती सूत्र आखिर तो गद्य ग्रंथ है उसमें कुछ अक्षरों के घटने बढ़ने से कुछ बिगड़ता न था। इसके सिवाय टीकाकार अभयदेवसूरि ने भी मांस परक अर्थका खुले रूपसे निषेध क्यों न किया, उन्हें दोनों अर्थ करनेकी क्या आवश्यकता थी? अभयदेव सूरि आखिर आपसे तथा मुनि श्री रत्नचन्द्र जी से तो बढ़कर ही विद्वान थे। अगर वे अपनी टीकामें भगवती सूत्रके शब्दों का अर्थ कबूतर, मुर्ग रूप भी करते हैं तो जैनधर्मसे दूषित धब्बा हटानेके खयालसे भगवती सूत्रसे इन वाक्यों को प्रक्षिप्त समझ कर हटा देना ही उत्तम है। वरना दिगम्बरी विद्वानों को गाली देते रहिये इससे यह धब्बा कभी साफ न होगा।

अब आप खुद सोचलें कि भगवान पर दूषित लांछन लगानेका असल अपराधी कौन है और कैसी सजा किसको मिलनी चाहिये।

भूतपूर्व वायसराय का पत्र

[भूतपूर्व एम० एल० ए० के नाम]

[पिन्शन प्राप्त एक वायसराय का पत्र जोकि उन्होंने इङ्गलैण्डसे एक अपने परम भक्त ऐसेम्बली के भूतपूर्व मेम्बर के नाम लिखकर भेजा था वह पत्र टाइम्स वीकलीमें प्रकाशित हुआ है उसका हिन्दी अनुवाद पाठकों के मनोरञ्जनार्थ विश्वमित्रसे यहाँ उद्धृत करते है। इस पत्रको पढ़कर पाठक महानुभाव समझ सकेंगे कि भारत में अपनी ड्यूटी पर रहते हुये वाइसराय अथवा गवर्नर आदि अंग्रेज अफसरों की मनोवृत्ति कैसी रहती है और इङ्गलेण्ड वापिस पहुंच जाने पर उनका हृदय कितना बदल जाता है।

प्रिय मि० ....

आखिर में आपको पत्र लिखना ही पड़ा। यदि और किसी बातके लिये नहीं तो कमसेकम इसीलिये कि आपसकी गलत फहमियां दूर होजांय और आप समझलें कि हम लोग कितने गहरे पानी में हैं। आपने लिखा है कि जब मैं भारतका वायसराय था तो आपने हमारी बड़ी मदद की थी। आपका यह उल्लेख सचमुच हंसाने वाला है। निःसन्देह आप यह विश्वास तो नहीं ही करते होंगे कि असेम्बली के राजनीतिक नेताओं के बारे में जो छोटी २ बातें आप मुझ को बतला जाते थे उनके लिये बृटिश राज आपका ऋणी है। अधिकसे अधिक आपने यही तो किया था। मैं यह भी मान लेता हूं कि भारतीय दिमाग के उन कुछ पहलुओं से आपने परिचित कराया जिसके विषय में मैं बिलकुल अनभिज्ञ था। इसके कारण कई बातें समझने में मुझे सहायता मिली। किन्तु होम डिपार्टमेन्टने आपको इसका बदला भी चुका दिया। और जब तक मैं भारतमें रहा आपको मुझसे मिलने का बराबर अवसर मिलता रहा तथा यदि मेरी स्मरण शक्ति ठीक है तो दो-तीन बार जलपान तथा डिनरकी पार्टियों में भी आप मेरे साथ बैठे थे। रुपया पैसा जो आपको मिला वह तो मिला ही यह उपर्युक्त सामाजिक सम्मान ही आपने जो कुछ किया था, उसका काफी इनाम होना चाहिये।

और हाँ, आपने जो यह लिखा है कि आपने मेरे लिये यह किया, वह किया. इसके क्या मानी हैं? आप यदि चाहें तो यह विश्वास कर सकते हैं कि आपने भारतके वायसराय के लिये कुछ किया था। पर मैं तो अब भारतका वायसराय नहीं हूं। अब आपको उन्हींसे आशा रखनी चाहिये। मैंने अपने मित्र लार्ड ···· को लिख दिया है कि वे आपको एक राजभक्त भारतीय तथा देशकी पार्टी-राजनीतिकी विभिन्न विचारधाराओंका ज्ञाता समझें मैं उस पत्रकी एक प्रतिलिपी आपके पास भेज रहा हूं। आप देखेंगे कि जो कुछ भी कर सकता था मैंने किया है।

मेरे दोस्त, आप गलती करते हैं यदि यह सोचते हैं कि भारतका भूतपूर्व वायसराय इङ्गलेण्ड में उतना ही प्रभावशाली है जितना कि वह भारत में वायसराय की हैसियत से था। उदाहरण के लिये मैं आपके पुत्र या दामादको, पता नहीं आपके कौन हैं

शेफिल्डकी इन्डस्ट्रीयल कम्पनी में भर्ती नहीं करा सका यद्यपि जैसा कि उन्होंने आपसे बतलाया भी होगा।

अपने नियम के विरुद्ध मैं कम्पनी के एक डाइरेक्टर के पास सिफारिश करने गया भी था। ईमानदारी के साथ मेरा विचार है कि हमारी इन्डस्ट्रीयल कम्पनियों में भारतीय युवकों को भर्ती कर लेना चाहिये और उन्हें शिक्षा देना चाहिये, किन्तु यह तो केवलमात्र विचार है न। यदि मेरे हाथमें ताकत होती तो मैं ऐसा ही करता। यह विचार तो केवल मेरा ही है। अतः उसकी कीमत क्या है?

हां, मैं आपसे बहुतसे शब्दों में यह कहना नहीं पसन्द करता कि आप मुझे पत्र लिखना बन्द करें तथापि मैं बतला देना चाहता हूं कि आप भ्रम में यदि यह सोचते हैं कि भारतके बाहर मि० गान्धी मि० जवाहर लाल या असेम्बली में सरकार के विरुद्ध वोट देनेवाले सदस्यों से मैं घृणा करता हूं। उनमें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं उनको अपने मित्र एवं उत्तराधिकारी लार्ड ...... की भूख बढ़ाने के लिये छोड़ देता हूं। भारत सम्बन्धी बड़ी तथा मुख्य नीतियों को छोड़कर भारतके प्रमुख व्यक्तियों से एवं वहांकी नीति से मुझे कोई सरोकार नहीं है। क्योंकि वे कितनी ही पुरानी स्मृतियों के दृश्य सामने ला देती हैं। हां, मैं आपके महारानी ...... सम्बन्धी समाचार में दिलचस्पी रखता हूं। वे बड़ी भली मित्र थीं और मेरी पत्नी के केवल एक बार कहने ही पर उन्होंने डफरिन फण्ड के लिये बहुतसा रुपया देदिया था। क्या आप विश्वास करेंगे, कि अबसे मैंने भारत छोड़ा महारानी ने एक भी पत्र मुझे नहीं लिखा है। मैं जानता हूं कि मेरी पत्नी के कहने पर उन्होंने कई लाख रुपये देदिये थे, किन्तु बदले में उन्होंने कभी कुछ नहीं मांगा। यदि उन्होंने कभी कुछ करने को कहा होता तो मैंने खुशी खुशी उनका काम कर दिया होता। इसको मैंने इस लिये लिखा है कि जिस से मैं अपनेको उस दुर्भावना से बचा सकूं जो अ० ब० या स० की सिफारिश करनेके लिये लिखे गये आपके पत्र सभी भारतियों के प्रति मेरे हृदयमें उत्पन्न कर देते हैं।

विश्वास कीजिए बड़ा पत्र लिखनेका मेरा स्वभाव कभी नहीं है। अंग्रेज लोग अत्यधिक पीड़ित होने पर भी मुसकराते रहना लाभप्रद समझते हैं। मैं आपको आगाह कर देना चाहता हूं कि आप यह आशा न करें कि मुझे सारी दुनियाभर में केवल आपहीसे सम्बन्ध रखना है। यह भी आप न समझें कि सारे संसारभरमें अकेला मैं आपकी चापलूसी से बड़ा खुश हूं। आपने जो यह लिखा है कि मेरे जन्म दिवस पर आपकी पत्नीने मेरे फोटो पर माला चढ़ाई और मेरे दीर्घ जीवनके लिये प्रार्थना की। यह निःसन्देह बहुत ही हृदयस्पर्शी है। मैं इसका विश्वास करता हूं।

—भवदीय ......

पंचायत ध्यान दें

प्रत्येक जाति अथवा समाज तभी उन्नति कर सकती है जब वह समयानुकूल जातीय और सामाजिक नियमों में परिवर्तन कर सुधार के नवीन २ उपाय ग्रहण करे। वर्तमान में प्रायः प्रत्येक जाति वैवाहिक नियमों से इस कदर जकड़ी हुई है कि विवाह आनन्द और वैवाहिक सम्बन्ध का सरल साधन न हो कर दुसाध्य और दुःखदायक हो गया है। इसके लिये हमें उदाहरण उपस्थित करने की आवश्यकता नहीं, ऐसे लोग प्रत्येक गांव या शहर में मिलेंगे जिनके घर विवाह के खर्चे के सबब बरबाद हो गये। कितनों को कर्जा लेकर रस्म अदायगी नहीं करनी पड़ी? कितनों को शान और नाक रखने के लिये अन्धा धुन्ध खर्च कर दीवालिये होने तक की नौबत तक नहीं पहुंचे? गरीबोंका तो कुछ ठिकाना नहीं। साधारण से साधारण भी तरीके पर विवाह करने पर भी उन्हें जिन्दगीभर का कर्जदार बन जाना पड़ता है और फिर बिचारे कभी नहीं पनपते।

सामाजिक अनेक सुधारों में विवाह सुधार की परम आवश्यकता है। केवल विवाह सुधार से ही बहुत कुछ सुविधा समाज सञ्चालन में हो जायगी, इस अवसर पर जब कि मन्दी और बेकारी भयङ्कर रूप धारण किये हुये हैं वर्तमान विवाह प्रथा "डूबे पर दो अषाढ़े" का काम कर रही है। आवश्यकता इस बात की है कि जो रीति रिवाज अनावश्यक हों उन्हें बिलकुल बन्द कर दिया जाय और जिनमें अधिक खर्च होता हो उन्हें कम से कम किया जाय जैसे कि पहरावन, जीमनवार पलकाचार आदि २ इससे समय और धन दोनों की बचत होगी।

विकट समस्या यह है कि समाज के धनी मानी लोग कहने को तो कम खर्ची के लिये कहते हैं पर जब उन्हीं के यहां विवाह होता है तब उन्हें सोलह आना नहीं बीस आना कर दिखाने की सूझती है और रीति रिवाज एक २ कर पूरे किये जाते हैं यदि कहीं लड़की वाला गरीब और लड़का वाला धनवान हुआ तो उस गरीब पर तो पहाड़ टूट पड़ता है और उस बिचारे का घराना अधमरा हो जाता है। इन्हीं बडों की देखा देखी छोटी स्थिति के लोग किया करते हैं। जैसे इन बड़ों को अपने बड़प्पन का ध्यान रहता है और वे आंख मूंद कर खर्चा किया करते हैं, उसी तरह "नाक" ऊंची न हो पर नाम धरायी न होने के खयाल से इन बिचारों को भी सब दस्तूर बढ़ चढ़ कर करना पड़ता है। दस्तूर कैसे न करें। विवाह हो तो जीमन वार पंचायती नियम है। अब बिचारा नियम कैसे तोड़े। और यदि दो चार लोगों को ही निमंत्रित करता है तो थू, थू होती है।

बस फिर क्या है कर्जा। घर फूंक तमाशा वाली कहावत पूरी होती है। ऐसी अनेक प्रथाएं हैं जिनसे लड़की वाले के चैथी के बाल उखड़े जाते हैं। पहरावन को ही लीजिये। जितने बराती आंय सबको पहरावन उस पर तुर्रा यह कि कश्मीरी शाल ही हो अथवा ऐसी वैसी पहरावन हो। इस लिये एक ऐसी नियमावली की आवश्यकता है कि जिसे अमीर और गरीब सभी मानें। जो २ दस्तूर बांध दिये जांय उन्हें उसी रूप में करें। उनमें घटा बढ़ी करने की आवश्यकता नहीं।

इस सम्बन्ध में महा सभा, छोटी सभा, बड़ी सभा, अनेक सभाओं ने प्रस्ताव पास किये, पर जहां जिस समाज में जैसा होता चला आ रहा है, वैसा ही होता है। इसका कारण केवल पंचायतियों का इस ओर दृष्टि न देना है। जातीय नियमों का पालन कराना और न कराना पंचायती सत्ता ही के हाथ में है। जब तक पंचायतें इस काम को अपने हाथों नहीं लेतीं तब तक सुदूर भविष्य में इसमें और कुछ सुधार होना असंभव सा है अतएव प्रत्येक पंचायतको इस ओर पूर्ण ध्यान देकर सुधार करनेकी आवश्यकता है।

अभी हाल ही में सिवनी वर्धमान सभा ने एक विवाह योजना की है जिसे वह सिवनी पंचायत में प्रार्थना करने वाली है, कि समय को देखते हुये विवाह इस विधि से किये जांय।

विवाह विधि अच्छी बन गई है। उसमें जिन रिवाजों में अत्यधिक खर्च होता है जैसे पहरावन, ओलमवार, उन्हें तो बन्द करने की सलाह है, और और २ दस्तूरों के खर्च को बहुत निम्न कर दिया है। रीति रिवाज तो वे ही रक्खे गये हैं जिससे पुराने विचारों के लोगों में तहलका न मच जाय, पर खर्च कम से कम हो। इस तरह सांप मरे न लाठी टूटे वाली कहावत चरितार्थ की गई है। आशा है सिवनी पंचायत उसे सप्रेम स्वीकार कर, समाज को लाभान्वित करेगी जिससे और २ स्थानों की समाज भी अनुकरण करें।

वर्धमान सभाको उचित है कि सिवनी समाज चाहे अब उस पर विचार करे उसे वह अभी पत्रों में प्रकाशित करे जिस से अन्य स्थानों की पचायतें उसपर विचार कर अपनी सम्मति दें और अमल कर लाभ उठावें।

अन्त में परवार समाज के पूर्ण मान्य नेता श्रीमान स. सिं. गुलजारीलालजी जग पुर, बाबू सुख लालजी टड़ैया, सिं० भगवानदास जी सराफ, ललितपुर, सिं० डोमासाव पन्नालाल जी नागपुर, सिं० कुंवरसेन जी, श्रीमंत सेठ विरधीचन्द जी, सेठ मूलचन्दजी सराफ, बरुआसागर, सेठ लालचन्द जी दमोह, श्रीमंत सेठ लखमीचन्द भेलशा, देशभक्त सिं० पन्नालाल जी अमरावती, परवार भू० फतेचन्द जी नागपुर आदि से प्रार्थना करता हूं कि समाजहित की दृष्टि से वर्धमान सभा द्वारा प्रणीत विवाह विधि को मान्य कर इस मरती कौम का उत्थान करें।

—सुमेरचन्द कौशल सिवनी

संपादकीय अभिमत—"देव, शास्त्र, गुरु, अग्नि तथा पंचायत के समक्ष योग्य वर कन्या का पाणिग्रहण होना ही विवाह है" जीमनवार दहेज पहरावनी आदि विवाह के लिये अनिवार्य काम नहीं है। जब कि वर्तमान समय में जैनसमाज की आर्थिक दशा शोचनीय हो गई है तथा दिनों दिन होती जाती है तब समाज हितैषी महानुभावों को समाज रक्षा के लिये विवाह का खर्च बहुत कम कर देना चाहिये। यदि कोई धनहीन वर कन्या का पिता अपनी संतान के विवाह पर सिर्फ २५) रुपये खर्च कर सकता है तो समाज हितैषी सच्चा सपूत वह है जो उस निर्धन भाई को पूर्ण सहयोग देकर उसका काम पौने पच्चीस रुपये में हो करा देवे। प्रत्येक पंचायत में कुछ ऐसे स्वार्थी पुरुष होते हैं जिन को दूसरे के बिगाड़ में आनन्द आता है ऐसे लोग रीति रिवाज का पचड़ा लगा कर धनहीन अथवा सफेदपोश भाइयों को भिखमंगा बनाने के लिये जीमनवार आदि करने के लिये अनेक ढंगसे विवश करते हैं दूसरे लोग चुपचाप देखते रहते हैं। इस तरह विवाह के नाम पर असमर्थ लोगों का सत्ता नाश होता जा रहा है।

जो जातियां ऐसी बरबादियों को कठोर उपायों से नहीं रोकतीं उनको नष्ट भ्रष्ट होते देर नहीं लगती। इसी वैवाहिक खर्च को न उठा सकने से अभी ३-४ मास पहले ४ ओसवाल जैन नवयुवक जोधपुर में मुसलमान हो गये हैं। ऐसी तथा इससे मिलती जुलती दशा प्रत्येक जैन जाति में अन्दर अन्दर हो रही है किन्तु स्वार्थी, लड्डूप्रेमी, नालायक लोगों के कानों पर जूं नहीं रेंगती।

ऐसी आफतों का सर्वनाश करने के लिये नैतिक बल की आवश्यकता है प्रत्येक स्थान पर ऐसे उत्साही सज्जनों का सेवादल खड़ा होना चाहिये जो कि असमर्थ तथा सफेद पोशों का विवाह आदि पंचायती कार्य सारे खर्चीले रीति रिवाज को एक ओर फेंककर अल्पव्ययसे करके आदर्श उपस्थित करे। १०-२० विवाह सादा ढंग से हो जाने पर मार्ग अपने आप साफ हो जायगा।

यदि श्रीमान सेठ वृद्धिचन्द्र जी आदि सरीखे महानुभाव हृदय से सहयोग दें तो कौशल महानुभाव की कामना असफल हो सकती है? कदापि नहीं। हम लेखक महोदय के मनोभाव का हृदय से स्वागत तथा समर्थन करते हैं।

—अजितकुमार

आंखों देखा हाल

पत्रोंमें जो महगांव (ग्वालियर) स्टेट में २७ जैन मूर्तियों को चोरी का समाचार छपा है उसको सुनकर मैं खुद वहां पहुंचा। मन्दिरको देखने से यही मालूम पड़ता है कि यह चोरी नहीं किसी धर्मविद्रोही या दुश्मनी की करतूत है क्योंकि अगर चोरी की होती तो चोर पाषाण की मूर्तियां नहीं चुराते। क्योंकि उससे कोई रकम वसूल नहीं होसकती। फिर शास्त्र जलाने या मन्दिर में पाखाना फिरने से क्या मतलब और सबसे खास बात यह है कि तीन ताले तोड़कर जो कोठा खोला गया उसमें से सिवा एक कपड़ेके; जो चाँदी का सामान सामने ही रक्खा हुआ था उसे बिलकुल छुआ ही नहीं।

कहा जाता है कि माधव जयंती के दिन वहांके थानेदार नायब तहसीलदार और सरकारी डिस्पेन्सरी के वैद्यने बड़ी सख्ती के साथ चन्दा वसूल किया। अलावा इसके यहां के जैनियों से भगवानकी सवारी वाला विमान मय सामानके मांगा। जैनियोंके यह कह कर इन्कार करने पर कि यह विमान सिवा भ० की सवारी के किसी काममें नहीं आता, यह लोग बड़े नाराज़ होकर बड़ी भद्दी और फोश गालियां देने लगे और कहा कि अब तुमको मन्दिर और विमानको कभी जरूरत ही नहीं पड़ेगी। इस बातके दूसरे ही दिन चोरी होगई।

वहांके लोगोंने बतलाया कि जिस दिन रातको यह घटना हुई उसी दिन सुबह एक शख्स ने जो अधिकारी ही की पार्टी का आदमी बतलाया जाता है एक जैन साहिब से कहा कि आज मन्दिर नहीं गये। जाओ मन्दिरके दर्शन कर आवो। यह घटना साज़िश का पूरा सबूत देती है।

दूसरे यह कि जिस वक्त हम लोग महगांव पहुंच कर मन्दिर देखने के लिये चले तो तो एक १५-१६ सालका लड़का जो कि नायब तहसीलदारका नौकर कहा जाता था—जबरन हमलोगों के साथ चलनेको आमादा हुआ क्योंकि वह हम लोगों की आपसी बात चीत जानना चाहता था। हम लोगोंने उसको साथ आनेसे मना किया तो झगड़ा करने लगा और सैकड़ों गालियां जैनियों के नामसे दे डालीं और पत्थर फेंकने लगा। सौभाग्यवश चोट किसीके नहीं लगी। साफ साफ मालूम होता था कि वह सिखा कर भेजा हुआ है। क्योंकि इतने बड़े लड़केको २५ आदमियों के साथ शरारत करने की हिम्मत बिना किसी खास साज़िश के नहीं होसकती। वह हर गाली के अन्तमें थाने या तहसील में बंधवा देनेकी धमकी अवश्य देता था। वहांके जैनियोंने जब थाने में रिपोर्ट लिखाई उस वक्त माधव जयंती वाला कोई वाकया न लिखकर सिर्फ चोरी वाली घटना के रूपमें लिखा। फिर जब सूबा जिला मजिस्ट्रेट साहिब के यहां दरख्वास्त दी तो कुल घटनाएं मय नामोंके स्पष्ट रूप में लिखदी।

हम जिस दिन पहुंचे थे उसी दिन रेवेन्यू मेम्बर साहिब के खास आदेश से सूबा साहिब तहकीकात करने गये थे। सूबा साहिबका व्यवहार बड़ी सौजन्यता पूर्ण था। चूंकि वहांके अधिकारी प्राइवेट तौर पर लोगोंको धमका कर सबूत बिगाड़ रहे थे। इस लिये जैनोंने दरख्वास्त दी कि इनको जब तक यहां से हटाया न जायगा तब तक इनके असर से सबूत

समालोचना

जैनधर्म के संस्थापक भगवान ऋषभदेव—यह पुस्तक अंग्रेजी भाषा में श्रीमान बैरिष्टर चम्पतराय जी ने लिखी है और 'जैनमित्र मंडल' देहली ने इसको प्रकाशित किया है। पृष्ठ संख्या ८४ है मूल्य चार आना है। पुस्तक में भगवान ऋषभदेव के पहले के दस भव का संक्षिप्त विवरण लिख कर फिर उन का तीर्थंकर वाले अन्तिम भव की जीवनी आदि पुराण अनुसार लिखा है। अन्तमें श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी की लेखनी से लिखा हुआ भगवान ऋषभदेव के विषय में कुछ ऐतिहासिक विवरण है। ब्रिटिश म्यूजियम में रक्खी हुई भगवान ऋषभदेव की प्राचीन प्रतिमा का तथा समवशरण का चित्र भी है। पुस्तक का कागज छपाई सफाई आदि अच्छा है। अंग्रेजी भाषा के जानकार जिज्ञासु लोगों में धार्मिक प्रचार के लिये अच्छी उपयोगी है। धार्मिक प्रचार के लिये ऐसे ट्रैक्टों की भी बहुत आवश्यकता है।

स्वामी दयानन्द और वेद—लेखक श्रीमान स्वा० कर्मानन्द जी है जिन्हों ने कि अभी हाल में जैनधर्म स्वीकार किया है। पुस्तक का पृ० संख्या ४० है मूल्य एक आना है कागज छपाई आदि अच्छी है। यह ट्रैक्ट "दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी" की चम्पावती पुस्तकमालाका २० वां पुष्प है। स्वा० कर्मानन्द जी ने २५ वर्ष तक लगातार आर्यसमाज का नेतृत्व किया है अतः वेदों के विषय में आपको बहुत अनुभव है उसी अनुभव का सार इस पुस्तकमें आपने अपनी मधुर; जीवित लेखिनी से लिख दिखाया है। पुस्तक सर्व साधारण के लिये उपयोगी एवं पठनीय है और मूल्य भी बहुत थोड़ा है धर्मप्रचार के लिये यह ट्रैक्ट प्रत्येक स्थान पर बांटने चाहिये।

—सम्पादक

स्वामी दयानन्द और वेद

स्वामी कर्मानन्द जी लिखित 'स्वामी दयानन्द और वेद' नामक ट्रैक्ट छप गया है। उसको स्वयं पढ़िये तथा प्रचारके लिये आर्य समाजी भाइयों को पढ़ाइये। पुस्तक ४० पृष्ठकी होने पर भी मूल्य प्रचार करने की दृष्टिसे केवल लागत मात्र रक्खा है। २५ पुस्तकें डेढ़ रुपये को, ५० दो रुपये चौदह आने को और १०० पुस्तकें साढ़े पांच रुपये को मिलेंगी। पुस्तक आर्य समाज पर प्रभाव डालने के लिये बहुत उपयोगी है।

मैनेजर—दि० शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी।

समालोचना

अंग्रेज़ी के तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव—यह पुस्तक अंग्रेज़ी भाषा में श्रीमान चैम्पतराय जी ने लिखी है और "जैनमित्र मंडल" देहली ने इसको प्रकाशित किया है। पृष्ठ संख्या ४० है मूल्य चार आना है। पुस्तक में भगवान ऋषभदेव के पहले के पूर्व भव का संक्षिप्त विवरण लिख कर फिर उन का तीर्थंकर वाले अन्तिम भव की जीवनी आदि पुराण अनुसार लिखी है। अन्तमें श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी की लेखनी से लिखा हुआ भगवान ऋषभदेव के विषय में कुछ ऐतिहासिक विवरण है। पेरिस म्यूजियम में रक्खी हुई भगवान ऋषभदेव की प्राचीन प्रतिमा का तथा समवशरण का चित्र भी है। पुस्तक का कागज छपाई सफाई आदि अच्छी है। अंग्रेज़ी भाषा के जानकार जिज्ञासु लोगों में धार्मिक प्रचार के लिये अच्छी उपयोगी है। धार्मिक प्रचार के लिये ऐसे ट्रैक्टों की भी बहुत आवश्यकता है।

स्वामी दयानन्द और वेद—लेखक श्रीमान स्वा० कर्मानन्द जी हैं जिन्होंने कि अभी हाल में जैनधर्म स्वीकार किया है। पुस्तक की पृ० संख्या ७० है मूल्य एक आना है कागज छपाई आदि अच्छी है। यह ट्रैक्ट "दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी" की प्रकाशित पुस्तकमाला का २० वां पुष्प है। स्वा० कर्मानन्द जी ने २५ वर्ष तक लगातार आर्यसमाज का नेतृत्व किया है अतः वेदों के विषय में आपको बहुत अनुभव है उसी अनुभव का सार इस पुस्तकमें आपने अपनी प्रभुत्व, ओजस्वि लेखिनी से लिख दिखाया है। पुस्तक सर्व साधारण के लिये उप-योगी एवं पठनीय है और मूल्य भी बहुत थोड़ा है धर्मप्रचार के लिये यह ट्रैक्ट प्रत्येक स्थान पर बांटने चाहियें।

—सम्पादक

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक १२

वर्ष ३

सम्पादक—

[illegible]

[illegible]

[illegible]

वार्षिक ३) एकप्रति =)

पूष सुदी ८ बुधवार

जनवरी १९३६ ई०

स्याद्वाद महाविद्यालय को विजय-चिन्ह

मिती पूष बदी १३ को श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशीके सुसज्जित भवन में वार्षिक संस्कृत विवाद उत्सव बड़े समारोहसे संपन्न हुआ। शहर के अनेक गण्यमान्य विद्वान सम्मिलित हुये थे। "अप्रचलित बलिप्रथा साधीयसी न वा" यह विषय था। विवादमें काशी की ११ संस्थाओं के छात्रों ने भाग लिया था डा० मंगलदेव शास्त्री एम. ए. रजिस्ट्रार गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज परीक्षा. श्री० विश्वनाथन आई. सी. एस. ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट और प्रोफेसर विक्रम स्वामी शास्त्री हि० वि० विद्यालय निर्णायक थे। इस विवाद में स्या० म० वि० के दोनों छात्रोंको यानी साधीयसी पक्षमें ताराचन्द न्यायतीर्थ छात्रको और नास्तिपक्षमें राजकुमार न्याय काव्यतीर्थ छात्र को सब प्रथम होने के कारण स्वर्ण पदक मिले और "समन्तभद्र विजयचिन्ह" (ट्राफी) श्री स्या० म० विद्यालय को ही दीगई। —निवेदक

—पन्नालाल चौधरी सुपरिन्टेंडेन्ट

REGD. No. L.
3459.

देश विदेश समाचार

आमदनी का औसत

देश	फी आदमी औसत	सालाना आय रु०
अमेरिका	,,	१०८०)
आस्ट्रेलिया	,,	३१०·
इङ्गलेण्ड	,,	७५०)
कनाडा	,,	६००)
फ्रान्स	,,	४५०)
इटली	,,	३४५)
जापान	,,	६५)
भारत	,,	२७)

बालमृत्यु

देश	फी हजार
लन्दन	८०
पेरिस	६५
न्यूयार्क	७१
वाशिंगटन	८५
शिकागो	१४५
आकलैंड	४८
स्टाक होम	६१
बर्लिन	१३५
कलकत्ता	३३१
मद्रास	२८१
बम्बई	५५६

—भारत में ४॥ करोड़ आदमी किसान किसी मर्जके मरीज रहते हैं। यहां प्रतिदिन २१ हजार औ सौ आदमियों की मृत्यु होती है। हरसाल १८ लाख बालक. बालिकाएं मौतके घाट उतरते हैं। हर रोज बुखारसे १३६६० बहुमूत्रसे ६७३ तथा हैजे से ७८८ व्यक्तियों को स्वर्ग सिधारना पड़ता है।

मथुरामें केशवदास जी के विशाल मन्दिरको तुड़वाकर औरंगजेब ने वहां पर लाल पत्थर की मसजिद बनवाई थी। उसके आसपासकी जमीन बनारस के धनिक राजा पाटनीमलने ईष्ट इण्डिया कम्पनीसे खरीद ली थी। उस जमीन पर मुसलमान मसजिद का कब्जा बताते थे, इलाहाबाद हाईकोर्टने इस जमीन पर राजा पाटनीमलके घरवालोंका कब्जा होनेका निर्णय दिया है।

—एक वैज्ञानिकने अन्धेरी रात में बिना प्रकाशक लिखने की झंझट दूर कर दी। उसने एक पैंसिल बनाई है जो लिखते समय प्रकाश भी करती है।

—हजारों मील दूर के गाने व्याख्यान आदि सुनने के लिये इतने छोटे रेडियो का आविष्कार हुआ है जो कि सिगरेट की डब्बी में रक्खा जा सकता है।

—उड़ते हुये हवाई जहाज मे अन्धेरी रात में सघन जंगल, झाड़ी आदि के फोटो उतारने के लिये एक बम का आविष्कार हुआ है जिसकी सहायता से अन्धेरी रात में भी फोटो उतारे जा सकेंगे।

—इटली के हवाई जहाजों ने एबीसीनिया के सम्राट के महल पर बम बरसाए किन्तु भाग्यवश सम्राट बच गये।

—इङ्गलैण्ड फ्रांस ने इटली तथा एबीसीनियाकी सुलह कराने के लिये इटली को एबीसीनिया के ३—४ नगर देने की योजना बनाई थी उसको एबी-सीनिया ने अस्वीकार कर दिया।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिन्टिङ्ग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

जैन समाचार

—राज्य की ओर से सन्मान—श्रीमान राय बहादुर सेठ भागचन्द्र जी सोनी एम० एल० ए० इन्दौर से लौट कर जब जोधपुर पधारे तब जोधपुर नरेश मातमपुरसी के लिये सेठ जी की कोठी पर आये। जब सेठ जी दरबार की नजर करने गये तब जोधपुर नरेश ने सेठ जी को डबल ताजीम, (आने जाने की) कुटुम्ब सहित पैरों में सुवर्ण भूषण पहनने के लिये तथा शिरोपाव सहित हाथी प्रदान किया। आपके मुख्य मुनीम चौधरी कानमल जी को राज्य से शिरोपाव तथा घोड़ा मिला।

—प्रबन्धक समिति का चुनाव-३१ दिसम्बर को ईसरी मन्दिर के सामने श्री पार्श्वनाथ दि० जैन शान्तिनिकेतन (उदासीनाश्रम) की बैठक हुई जिसमें निम्नलिखित बातें तय हुई—

१- शान्ति निकेतन के संचालन के लिये सेठ सूरजमल जी ने एक वर्ष के लिये ही १००) मासिक स्वीकार किया है अतः आगामी पाँच वर्षों के लिये मासिक चन्दा किया जावे। तदनुसार उपस्थित सज्जनों ने ७०) का चन्दा लिखा।

२- जिज्ञासुओं (उदासीनों) को रहने के लिये अभी ७ कमरे और एक रसोईघर ही बनाया जावे। इसका खर्च दो तिहाई सेठ सूरजमल जी बांकी पुर ने और एक तिहाई सेठ लक्ष्मीनारायण सुगनचन्द्र नवादा तथा सेठ जानकीदास कन्हैयालाल गया ने स्वीकार किया है।

३- प्रबन्ध के लिये ११ महानुभावों की समिति बनी। सभापति सेठ सूरजमल जी, अधिष्ठाता ब्र० प्यारेलाल जी भगत, मंत्री प० पन्नालाल जी काव्य-तीर्थ मधुबन, कोषाध्यक्ष बा० गोबिन्दलाल जी गया नियत हुए।

दो मास बाद इमारत तयार हो जाने पर काम चालू होगा।

मंत्री—पन्नालाल काव्यतीर्थ

—इन्दौर के कुछ जैन नवयुवकोंने "श्री वीर सार्वजनिक वाचनालय" नामक एक जैन वाचनालय की स्थापना लगभग ४ मास पूर्व की है। इस समय वहां जैन व जैनेतर पत्र पत्रिकाएं लगभग ४५ की संख्या में आते हैं। इस लोक प्रिय जैन वाच-नालय से करीबन ३५०० साढ़े तीन हजार पाठकों ने लाभ उठाया है।

तथा प्रथमा, मध्यमा एवं उत्तमा की पाठ्य पुस्तकों का संकलन एवं पढ़ाई का प्रबन्ध निशुल्क किया गया है जिसका कि कार्य बा० शिखरचन्द्र जी जैन साहित्यरत्न की लगन एवं परिश्रम से सुचारुरूप से चल रहा है।

—सुरेन्द्र सकलेचा

तीर्थयात्रा संघ – ललितपुर तथा देहलीका मोटर द्वारा जाने वाला तीर्थयात्रा संघ ललितपुर से बहुत धूमधाम से रवाना हुआ। संघ ने पपौरा, छत्रपुर, खजराहा, द्रोणगिर, नयनागिर, दलपतपुर, सागर, कुंडलपुर, दमोह, जबलपुर, नागपुर, अमरावती आदि स्थानों के मन्दिरों तथा तीर्थों की आनंद और भक्ति भाव से वंदना की कई जगह सभा, शास्त्रसभा हुई। संघ का सिवनी नागपुर आदि में अच्छा स्वागत हुआ। संघ में ७५ स्थानों के गण्य, मान्य श्रीमान धीमान हैं। भजन गायन, व्याख्यान आदि का आनन्द रहता है। पं० सिद्धसेन जी, पं० सिद्ध-सागर जी, पं० गुलाबचन्द्र जी तथा मेरे व्याख्यान हुए हैं। २७ दिसम्बर को संघ मुक्तागिर पहुँचा है।

—ब्र० प्रेमसागर पंचरत्न

अकलंकदेवाय नमः
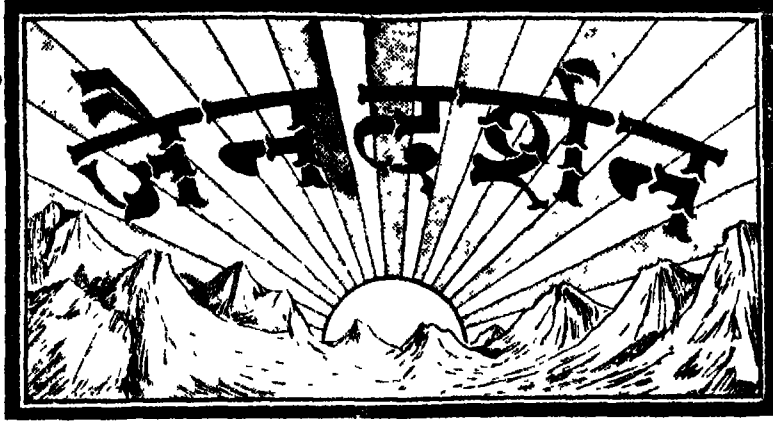
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्ररश्मिर्भर्ष्माभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री पूष सुदी ८—बुधवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क १२

पथिक से—

आये हो हे पथिक कहांसे और कहां अब जाओगे ?
करके कृपया क्या तुम अपना नाम हमें बतलाओगे ?
अथवा इस संसार विपिनमें, तुम सुमार्ग निज भूल गये,
खड़े २ तुमको विचार क्या आते हैं अब नये नये ॥१॥

दीन हीन दिखते हो तुमतो, हुआ तुम्हारा सब ही नाश,
कर सकते किसके बल पर अब यह अपना अवशेष प्रवास,
पथिक सदा यह मार्ग भयंकर, सब ही इसमें लुटते है,
देकरके सर्वस्व और चोरों से उलटे पिटते हैं ।

बनो आज अभ्यागत मेरे करो और कुटिया में वास
शीतल जल पीकर मटकी का, मेटो सारा श्रमका त्रास?
हरे भरे सुन्दर वृक्षों की चलती है यह मन्द समीर,
राम राम मृदु बोल रहा है मेरे इस पजरका कीर ।

कहना मेरा मान रहोगे सेवा सभी उठाऊंगा,
मैं भी क्या तुम भी तो क्या हो ? यह अवश्य बतलाऊंगी,
इस भूले पथ में जो कोई मानेगा मेरा आदेश,
होकर दुखसे तुरत मुक्त वह पावेगा निज इच्छित देश ।

लेखक— गुणभद्र जैन

भोजन

(ले० श्रीमान प० कपूरचन्द्र जी जैन)

भोजन प्राणीमात्र के लिये अनिवार्य है। किन्तु भोजन कैसे तथा किन चीजों का करना चाहिये, इसे हमारे भारतवासी अधिकांश नहीं जानते। दूसरे देशों के मनुष्यों को या खास कर योरोपियन लोगों को तो भोजन के विषय में सारी बातें उनके बचपन में ही बतला दी जाती हैं।

भोजन करने से हमें दो लाभ होते हैं १-शरीर से काम करनेमें जिन चीजों की कमी पड़ जाती है, भोजन के पदार्थ उनको पूरा कर देते हैं २-भोजन शरीर की वृद्धि करता है तथा बल का (Energy) संचार करता है। अतएव भोजन में हमें उन चीजों को अवश्य खाना चाहिये, जिनसे कि हमारी शारीरिक कमी की पूर्ति हो जाय।

भोजन में निम्नलिखित चीजों की कमी-वेशी की मात्रा प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनिवार्य है—

२—प्रोटीन (Proteins)—इसमें क्षय पदार्थों की पूर्ति होती है। यह शाक, सब्जियों में अधिक पाया जाता है। दालों में इसकी मात्रा सबसे अधिक होती है।

३—खनिज पदार्थ (Mineral Salts)—इससे खून शुद्ध रहता, तथा उसमें रोगों के कीटाणु को नष्ट करने की शक्ति रहती है। इसके सोडियम, कार्बन और आक्सीजन संयोजक हैं। नमक में सोडियम, पुटेशियम, कैलशियम, मेंगनेशियम, लोहा, फासफोरस गंधक मुख्य हैं। हमारा रुधिर लोहे के कारण ही लाल तथा चमकीला मालूम पड़ता है। और यह लोहा प्रत्येक ताजे फलों तथा मेवों में मिलता है। इसी लोहे की अधिकता के कारण काबुलियों का शरीर सुर्ख और चमकदार होता है। हमें नमक प्राप्त करने के लिये सब्जियों को बिना उबाले ही खाना चाहिये, और अगर उबाला भी जाय तो कम से कम उसका पानी नहीं फेंकना चाहिये। नमक को हम दूसरा शरीर बनाने लायक पदार्थ कह सकते हैं। इससे हड्डियां तथा दांत मजबूत होते हैं।

चिकनाई (Fats) —यह पदार्थ हमारे शरीरमें माँस-पेशियां बनाने के काममें आता है और उपवास आदि कामों में जबकि हम कुछ भी नहीं खाते हैं, इसीका उपयोग होता है। यह घी, दूध तेल, आदिमें अधिक मात्रा में रहता है।

४- कार्बन (Carbohydrates) —शरीर बनाने का कार्य करने में इससे बढ़कर और कोई चीज नहीं यह चीनी, गेहूं, चावल में अधिक पाया जाता है। शरीरमें इसीके जलनेसे गर्मी पैदा होती है।

५ पानी— इसके बारे में पहले लेख में काफी बतलाया जा चुका है।

६- विटेमिन— शरीरको रोगोंसे बचाना तथा उसकी वृद्धि करने में यह पदार्थ एक दैवी शक्ति की तरह काम करता है और पानीसे लेकर सूर्यकी किरणों तकमें पाया जाता है।

इन छह पदार्थों का भोजन में रहना, क्या मानसिक क्या शारीरिक किसी भी प्रकार के परिश्रम

करने वाले के लिये, आवश्यक है। यह बात जरूर है कि मानसिक परिश्रम करने वालेको कार्बन की अपेक्षा प्रोटीन की ज्यादा आवश्यकता है। इसी तरह अन्य चीजोंका भी नियन्त्रण होता है।

मैं इस लेखमें केवल विटैमिन के बारे में ही अधिक लिखूंगा जिस पर आजकल अनेक वैज्ञानिक अनुसन्धान होरहे हैं। अब तक वैज्ञानिकों का विचार था कि तैल पदार्थ कार्बन ही मनुष्य के जीवन तथा स्वास्थ्यका आधार है परन्तु अब वे इस निश्चय पर पहुंचे हैं कि इन वस्तुओं के सिवाय कुछ अज्ञात पदार्थ भी हैं और वे शरीर के लिये हितकर हैं।

विटैमिन अंग्रेजी के दो शब्दों के योग से बना है —Vital-amine अर्थात विट-अमीन जोकि जीवन को हितकर हो। विटैमिन के अनेक भेद हैं। इसके नाम तथा भेदों के आविष्कारक डा० ड्रमंड हैं। यह सब जानते हुए कि विटैमिन किन चीजों में किस प्रकार का है, अभी तक कोई वैज्ञानिक इसकी रचना (Constitution) याने इसके संयोजक क्या हैं, जानने में समर्थ नहीं हुये हैं। इसका अस्तित्व उसी प्रकार है, जिस प्रकार कि आत्मा का शरीर में।

विटैमिन के मुख्य पांच भेद हैं—

'A'—यह हमारे आंखों, फेफड़ों, पेट, और पेट की नसों में कार्य करता है। इससे हमारे शरीर की वृद्धि होती, तथा इसमें रोगों के कीटाणुओं से विजय प्राप्त करने की शक्ति होती है। इसकी कमी से शरीर फूल जाता है, और रोगों के आक्रमण शीघ्र होते हैं। यह दूध, मक्खन, मलाई तथा हरे सागों, जैसे नीबू, टमाटर, अमरूद, मटर, सेम गेहूं, आदि में अधिक पाया जाता है। इस विटैमिन पर प्रकाश डालने वाले पेकेल्हारिंग (Packel haring) हैं।

'B'—यह मस्तिष्क, आंतों, मांसपेशियों और हृदय की मांस पेशियां पर अधिक कार्य करता है। इसकी कमी के कारण उनमें बदहजमी होती, तथा धीरे धीरे पाचन शक्ति नष्ट हो जाती है। बेरी-बेरी रोग का होना इसी की कमी का कारण है। यह चांवल के ऊपरी भाग में, गेहूं, मक्का में पाया जाता है। डा० फंक (Funk) ने इसपर प्रकाश डाला था।

'C'—इसका मुख्य कार्य खून (Blood) पर होता है। इसके कारण खून खराबी के रोग जैसे खाज, खुजली इत्यादि नहीं होते। अतएव इसका उपनाम एंटि-स्कोर्ब्युटिक (Anti-Scorbutic) भी है। इसकी कमी से जोड़ों में दर्द, मसूड़ों और दांतों में दर्द और उनमें से खून आदि भी निकलता है यह हरे सागों तथा ताजे फलों, नमक, टमाटर कच्चा प्याज, नारंगी, नींबू का रस, केला, सेब, गोभी, गाजर, भीगे चने में अधिक पाया जाता है। दूधमें इसकी मात्रा कम रहती है।

'D'—इसका आविष्कार पहले एडवर्ड मेलनबी ने किया था। इसका प्रभाव हड्डियों तथा दांतों पर होता है। इसकी न्यूनता से सब प्रकारकी अङ्गहीनता जैसे टेढ़ा मेढ़ा सिर, कम चौड़ी छाती, टेढ़े मेढ़े हाथ पैरों का होना। यहां तक कि कुरूपता भी इसी की कमी से होती है। इसकी न्यूनता सूर्य-स्नान करने से भी कम हो जाती है। इसका कारण सूर्य की Altra Violet किरणें हैं। अपने देश में, शरीर में

जो सरसों का तेल मलते हैं, उससे शरीरमें बिटेमिन 'डी' उत्पन्न हो जाता है। मनुष्यों तथा पशुओं की खाल में कोले स्ट्रोल या अन्य इसी प्रकार के तैलीय पदार्थ होते हैं, उनपर धूप लगते ही यह 'डी' विटेमिन बनता है, और सारे शरीर में फैल जाता है। यह दूध, मक्खन, ताजी गोभी, सरसों के तेल, गोले के तेल में अधिक पाया जाता है। आजकल तपेदिक का उपचार सूर्य की किरणों द्वारा किया जाता है, वह शायद शरीर में 'डी' विटेमन के उत्पन्न करने से ही होता है।

'E'--अगर यह बिटैमिन न हो तो स्त्रियां को बन्ध्या रोग हो जाता है, इस बात को डा० एच० ए० ईवन्सने साबित किया है। यह मक्खन, खमीर मैवा तेल, प्याजमें ज्यादा पाया जाता है।

तात्पर्य यह है कि हमें भोजन करने समय यह विचार अवश्य करना चाहिये कि मैं क्या काम करता हूं, तथा हमें किस प्रकार के भोजन की आवश्यकता है। तथा हमारे भोजन में बिटेमिन हैं कि नहीं, इत्यादि।

हम लोगों को ऐसी वस्तुओं को नहीं खाना चाहिये जिससे कि हमारे शरीर की वृद्धि तथा हमारे शरीर की कमियों की पूर्ति न हो।

दिगम्बरमत समीक्षा पर प्रकाश

(ले० श्रीमान पं० वीरेन्द्रकुमार जी जैन)

[गतांक से आगे]

तीसरे प्रकरण में मिश्रीमल्ल जी ने शूद्रमुक्ति का समर्थन किया है। इस केलिये आप ने इस प्रकरण का हैडिंग "शूद्रों की मुक्ति न मानना जैनत्व से हाथ धोना है" दिया है। दुर्भाग्यसे इस समय यहां पर कोई सर्वज्ञ नहीं है जिससे कि मिश्रीमल्ल जी का भ्रम उसके समक्ष दूर कराया जा सके इस कारण मुनि मिश्रीमल्ल जी शूद्रमुक्ति के बजाय तिर्यञ्चमुक्ति का भी बातूनी जमा खर्च कर सकते है। यदि 'शूद्रों को मुक्ति मिल सकती है' इतना कह देना मात्र ही जैनत्व की सीमा में है तो बेचारे तिर्यञ्च इस उदारता से क्यों वंचित कर दिये गये।

शुद्ध कुल में जन्म लेने वाले पुरुषमें ही आत्मिक विशुद्धता प्रगट करने की योग्यता प्रगट हो सकती है वही साधुदीक्षा ले कर शुक्लध्यानके द्वारा कर्मबंधन काट सकता है जिसका शरीर कुलशुद्धि से शून्य है उसमें वह आदर्श योग्यता कदापि प्रगट नहीं हो सकती। इस बात के समर्थन में जैन आचार्यों के ग्रन्थों में अनेक वाक्य उपलब्ध होते हैं जैसे—

दीक्षायोग्यास्त्रयो वर्णाः

यानी—मुनिदीक्षा ग्रहण करने के योग्य ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य ये तीन वर्ण हैं।

विशुद्धकुलजात्यादिः शुक्लध्यानस्य हेतवः।
येषु स्युस्ते त्रयो वर्णाः शेषाः शूद्राः प्रकीर्तिताः॥

विशुद्ध कुल, विशुद्ध जाति आदि शुक्लध्यान के कारण हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्णों में शुक्लध्यान की कारणभूत शुद्धियां पाई जाती हैं। इसके सिवाय शूद्र लोग होते है।

इन आर्ष वाक्यों से शूद्र मुक्ति का स्पष्ट खंडन होता है। शूद्र जातियों में पिंड शुद्धि विधवाओं के धरेजे, अशुद्ध खान पान, नीचकर्म वंशपरम्परा से चली आई हुई रज वीर्य की संकरता आदि कारणों से नहीं हो सकती है। जहां द्विज वर्णों में एक स्त्री अपने विवाहित एक पति के साथ ही विषय सेवन कर गर्भ धारण करती है। अतः उसके उदर से उत्पन्न सन्तान एक ही रज वीर्य से उत्पन्न होने के कारण शुद्ध कहा जाता है किन्तु शूद्रों में ऐसा नहीं है वहाँ पर स्त्रियां एक पति मर जाने पर दूसरे पुरुष को अपना पति बना लेती हैं, दूसरे के मर जाने पर तीसरे को और तीसरे के मर जाने पर चौथे पुरुष को पति बना कर सन्तान उत्पन्न किया करती हैं। यह कार्य शूद्र जातियों में परम्परा से चला आ रहा है। इस कारण शुक्ल ध्यान प्राप्त करने की योग्यता रखने वाली पिंड शुद्धता शूद्र जातियों में नहीं हो सकती यही कारण है कि शूद्र को मुनिदीक्षा देने का निषेध आर्ष ग्रन्थों में किया गया है।

यह बात प्रसिद्ध है कि अच्छा वृक्ष उत्पन्न करने के लिये अच्छा बीज और भूमि होने चाहिये तदनुसार मुक्ति प्राप्त करने केलिये शुद्ध कुल में जन्म लेना

आवश्यक है। शुद्ध कुल द्विजवर्ण में ही हो सकते हैं क्योंकि उनमें वीर्य साङ्कर्य नहीं होने पाता विधवा होने पर स्त्री ब्रह्मचर्य से रहती है पर पुरुष को अपना पति नहीं बनाती।

एवं—शूद्र जातियों में वंश परम्परा से नीचकर्म हुआ करते हैं अत एव शूद्रों के आत्मा नीच संस्कारों से सने रहते हैं। इत्यादि बलवान कारण हैं जो कि उन में मुक्ति प्राप्त करने की योग्यता प्रगट नहीं करा सकते। अतः शूद्रमुक्ति का निषेध युक्तियुक्त है।

'शूद्र स्त्री ईसाई बनकर मैम हो जाती है और शूद्र पुरुष ईसाई बनकर साहिब हो जाता है फिर हम उसको छूते हैं उसके बैठने के लिये कुर्सी देते हैं' इत्यादि बहुत सी बातें मिश्रीमल जी ने अपने मनोरथ को सिद्ध करने के लिये लिखी हैं किन्तु इन बातों से कुछ सिद्ध नहीं होता क्योंकि हम जो उचित अनुचित कार्य व्यवहारमें किसी स्वार्थ वश करते है वह परमार्थ के लिये लागू नहीं हो सकता। अतः हम यदि किसी साहिब मेम को बैठने के लिये कुर्सी देते हैं तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि ईसाई लोग हमारे धर्म गुरू भी हो गये, उनसे साधुदीक्षा श्रावक-व्रत आदि चारित्र भी ग्रहण करना चाहिये। यों तो स्वार्थ वश कभी गृहस्थ को पशुओं का भी आदर करना पड़ता है इतने मात्र से क्या पशु भी मुक्ति प्राप्त कर सकते है?

मश्रीमल जी यह कोई लाम की भर्ती नहीं है जिसमें चाहे जिसको भर्ती करके मैदान को भेज दिया जावे यह तो आत्मशुद्धि का मामला है इसके लिये तो शुद्ध कुल के रज वीर्य से बना हुआ शरीर धारी ही योग्य माना जा सकता है अतः मुक्ति उसे ही प्राप्त हो सकती है। शूद्र को नहीं।

ढूंढिया साधु शूद्र घरोंसे भी भोजन ग्रहण करते हैं इसी कारण उनके मत में शूद्रमुक्तिका मार्ग कल्पित किया गया है क्योंकि जब तक शूद्रों को मुक्त होने की योग्यता का समर्थन न किया जावे तब तक उनके हाथ का भोजन ग्रहण करना उचित न दीखता इस त्रुटि को सुधारने के लिये शूद्र मुक्ति का मत गढ़ा गया है। इसके सिवाय इसमें और कुछ तथ्य मालूम नहीं होता।

यद्यपि रात्रिभोजन करने वाले, बिना छना हुआ जल काम में लेने वाले एवं भक्ष्य, अभक्ष्य भोजन करने वाले शूद्रों के घर का बना हुआ भोजन गृहस्थ जैन को भी अग्राह्य बनता है तो फिर ४६ दोष रहित भोजन करने वाले महाव्रती साधुओं को तो शूद्रभोजन कदापि ग्राह्य हो ही नहीं सकता परन्तु ढूंढिया साधु उसको ग्रहण करते ही है। तब फिर मिश्रीमल जी शूद्र मुक्ति का समर्थन क्यों न करे।

इस प्रकरण को यहीं समाप्त करके अब मैं चौथे प्रकरण पर प्रकाश डालता हूँ।

मिश्रीमल जी ने चौथे प्रकरण का हैडिंग "मुक्ति ममत्व त्याग में है न कि वस्त्र त्याग में" दिया है इस प्रकरण में आपने अपने वेष के अनुसार यह बात सिद्ध की है कि महाव्रती साधु वस्त्रधारी हो सकता है और वह उस वस्त्रधारण की अवस्था में मुक्त भी हो सकता है।

जिस प्रकार कर्मबन्धन सांसारिक पदार्थों में राग द्वेष करने से होता है उसी प्रकार कर्मों से छुटकारा सांसारिक पदार्थों के साथ मोहभाव त्याग

देने से होता है। पदार्थों से मोहभाव छुड़ाने के लिये जहां मानसिक भाव बदलने की आवश्यकता है वहीं उससे भी पहले यह भी आवश्यक है कि उन संसारी पदार्थों का संसर्ग भी छोड़ दिया जावे क्यों कि आत्मा में राग द्वेष उत्पन्न कराने के लिये संसारी चीजें (धन, दौलत, घर, कपड़े, जेवर आदि) निमित्त कारण हैं उन निमित्त कारणों का त्याग किये बिना नैमित्तिक रागद्वेष दूर नहीं हो सकते। इसी कारण मोक्ष अभिलाषी पुरुष को गृहस्थाश्रम को छोड़ कर घर, धन आदि समस्त परिग्रह को त्याग कर महाव्रती साधु बनने का उपदेश दिया गया है।

भद्रबाहु आचार्य के समय तक उक्त विधि अनुसार समस्त परिग्रह त्यागी नग्न वेषधारी जैन साधु होते रहे किन्तु बारहवर्षी दुष्काल के कारण कुछ साधुओं को आपत्तिकाल में कपड़े पहनने पड़े उनमें से कुछ साधु कपड़े पहनने के इतने अभ्यासी हो गये कि फिर दुष्काल बीत जाने पर भी वे कपड़े उनसे न छूटे उनकी परम्परा फिर अर्द्धफालकरूप में खंड वस्त्रधारी वेष में चल पड़ी। मथुरा के कंकाली टीले से खोद कर निकाले हुए एक पाषाणपर 'कान्ह' श्रमण की उसी अर्धफालक वेष में एक मूर्ति बनी हुई है। कालक्रम से उन ही वस्त्रधारी जैन साधुओं में खंड वस्त्रधारी का रूप बढ़ता गया और वह अब इतना बढ़ गया कि अब उसमें ओढ़ने बिछाने के बिस्तर भी शामिल हो गये। फिर तुर्रा यह कि इस वस्त्रभार को महाव्रती के पास रखने के लिये बड़ी युक्तियों से सिद्धि की जाती है।

मिश्रीमल जी तथा उनके अनुयायी महानुभावों को अपने आचारांग सूत्र का निष्पक्ष होकर ध्यान पूर्वक अवलोकन करना चाहिये जिससे भ्रम दूर हो जावे। आचारांग सूत्र के ८ वें अध्यायके पांचवें उद्देश में लिखा है।

"अह पुण एवं जाणेज्जा उवक्कंते हेमंते गिम्हे पडिवन्ने अहा परिजुन्नाइं वत्थाइं परिट्ठवेज्जा अदुवा संतरुत्तरे अदुवा एकसाडे अदुवा अचेले लाघवियं आगममाणे। तवे से अभिसमण्णागए भवति।"

यानी जो साधु ऐसा समझे कि शर्दी के दिन बीत गये गर्मी की मौसम आ गई है उसका जो कपड़ा पुराना हो गया हो उसको रख दे या समया-नुसार पहने या फाड़ कर छोटा कर ले यहां तक कि एक ही कपड़ा रक्खे और ऐसा विचार रक्खे कि अन्त में मैं उस एक कपड़े को भी छोड़ कर यानी नग्न हो कर निश्चिन्त बनूं।

मिश्रीमल जी सोचें कि आचारांग के लिखे अनुसार साधु को निश्चिन्त होने के लिये बिलकुल कपड़ा छोड़ना जरूरी है या नहीं?

इसके आगे आचारांगसूत्र के सातवें उद्देश में लिखा है--

"अदुवा तत्थ परक्कमंतं भुज्जो अचेलं तणफासा फुसंति सीयफासा फुसंति, तेउफासा फुसंति, दंसमसगफासा फुसंति, एगयरे अन्नयरे विरूवरूवे फासे अहियासेति अचेले लाघवियं आगममाणे तवे से अभिसमन्नागए भवति"

अर्थात्--साधु अगर लज्जा जीत सकता हो तो सर्वथा नंगा ही रहे नग्न रह कर तृणस्पर्श, शर्दी, गर्मी, दंशमशक आदि जो परीषह आवें उन्हें सहन करे ऐसा करने से साधु को आकुलता थोड़ी होती है और तप प्राप्त होता है।

मिश्रीमल जी के मान्य आचारांग का यह सूत्र

भी साधु को चिन्तामुक्त करने के लिये नग्न होनेका उपदेश देता है।

आचारांग सूत्र के छठे अध्याय के तीसरे उद्देश में लिखा है—

"जे अचेले परिवुसिये तस्स णं भिक्खुस्स एवं भवइ परिजिन्ने मे वत्थे वत्थे जाइस्सामि, संधिस्सामि, सीविस्सामि, उक्कसिस्सामि वोकसिस्सामि परिहरिस्सामि, पाउणिस्सामि।" ३६०।

यानी—जो साधु वस्त्ररहित (नग्न) होते हैं उनको यह चिन्ता नहीं रहती कि मेरा कपड़ा फट गया है मुझे दूसरा नया कपड़ा चाहिये, कपड़ा सीने के लिये सुई धागा चाहिये। तथा यह भी चिन्ता नहीं रहती मुझे कपड़ा रखना है फटा हुआ कपड़ा सीना, जोड़ना है या मैला कपड़ा धोना है।

आचारांग सूत्र के उक्त उल्लेख महाव्रती साधु को वस्त्र रखना चिन्ता का कारण बतला रहे हैं और उनको आकुलता मुक्त करने के लिये वस्त्र त्याग कर नग्न होने का समर्थन कर रहे हैं। इससे बढ़ कर ढूंढिया साधुओं को वस्त्रत्याग के समर्थन में और कौन सी युक्ति चाहिये?

कपड़ा पहनने ओढने से शरीर को आराम मिलता है क्योंकि उसके कारण शरीरको शर्दी गर्मी आदि कष्ट सहन करने का मौका नहीं आने पाता उससे संयम का कुछ लाभ नहीं होता इस कारण वस्त्रधारण ममत्व का खास कारण है। इसके सिवाय जो चिन्ता गृहस्थ पुरुष को धन के कारण हुआ करती है वैसी ही चिन्ता साधु को अपने वस्त्र के लिये हुआ करती है। ऋतु तथा इच्छा के अनुसार वस्त्र मिल जाने पर मन में प्रसन्नता, इच्छानुसार न मिलने पर चित्तमें खेद होता है। कपड़ा यदि पसीनेसे मैला हो जाय तो बिना धोये उसमें जूं पैदा हो जाती हैं धोने से असंयम होता है। कपड़ा फटकारने से वायुकाय के जीवों का नाश होता है। कपड़ा चोर चुरा ले जावे तो साधु को दुःख होगा फिर दूसरे कपड़े की इच्छा होगी। बरसात में कपड़ा भीग जावे तो उसे निचोड़ कर सुखाना जरूरी है निचोड़ने फटकारने सुखाने में असंयम होता है। ध्यान करते समय हवा से कपड़ा उड़ने लगे तो चित्त में विक्षेप हो सकता है। शर्दीमें गर्म कपड़ा मिलना चाहिये और गर्मी में साधु जी को मलमल आदि ठंडा कपड़ा मिलना चाहिये। इस तरह वस्त्र पहनना साधु के लिये चिन्ता, आकुलता, भय, आराम राग द्वेष आदि भाव उत्पन्न करने का मुख्य कारण है इस कारण वह बहिरङ्ग परिग्रह है।

मिश्रीमल जी कहते हैं 'मुक्ति वस्त्रत्याग से नहीं मिलती ममत्व त्याग से मिलती है' किन्तु वे इस बात को जान बूझ नजर ओझल कर जाते हैं कि बिना शारीरिक ममत्व के वस्त्रधारण हो ही नहीं सकता तथा जब तक वस्त्र में ममत्व न हो तब तक अपने लिये कपड़ा मांगना उसको अच्छी तरह पहनना, सम्हाल कर रखना आदि क्रियाएं नहीं बन सकतीं। और इस तरह के ममत्व के सद्भाव में मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

यदि वस्त्रधारण ममत्व का कारण नहीं तो धन, घर, जेवर मिष्टान्न भोग आदि भी ममत्व के साधन न मानने चाहिये जो बात आप वस्त्र धारण के

पक्ष में बतलावेंगे वे ही बातें उन पदार्थों के लिये कही जा सकती है फिर गृहस्थाश्रम छोड कर साधु बनने की क्या आवश्यकता है। 'हमारे दिलमें ममत्व नहीं' इतने समझ लेने मात्र से सब कुछ करते हुए मुक्ति हो जायगी। जिस प्रकार खामगाँव निवासी यति बालचन्द्र जी दातव्य औषधालय चलाते है उस औषधालय को चलाने योग्य धन अपने पास रखते हुए भी वे अपने आपको परिग्रह त्यागी महाव्रती मानते हैं। इस ढंग से सारा झगडा सरलता से साफ हो जायगा।

अपना—अभिप्राय सिद्ध करने के लिये आपने ज्ञानार्णव तथा तत्वार्थसार के श्लोक उद्धृत किये है और उनसे यह बात प्रगट करने की कोशिश की है कि दिगम्बर आचार्य भी महाव्रती साधु को अपने पास बिस्तर रखने की आज्ञा देते हैं। मिश्रीमल जी को ज्ञानार्णव तथा तत्वार्थसारके श्लोकों का अर्थ करने से पहले उक्त दि० ग्रंथकार श्री शुभचन्द्राचार्य तथा अमृतचन्द्र सूरि का ऐतिहासिक जीवन पढ़ना चाहिये तथा ज्ञानार्णव और तत्वार्थसार का आद्योपान्त अवलोकन करना चाहिये तब उनको अपने भ्रम का बोध स्वयं हो जायगा। दिगम्बर मुनि और कपडे का बिस्तर रखना अग्नि जल सरीखी परस्पर विरोधी बात है।

उन श्लोकोंमें आये हुए शय्या, आसन, उपधान शब्दों का अर्थ महाव्रती साधु के लिये सोने, बैठने, सहारा लगाने के लिये जमीन, लकड़ी का तख्ता, पत्थर की शिला, गुफा, वसतिका की भींत आदि सोने, बैठने, सहारा लगाने की चीजें हैं न कि आप के समान कपड़ों के बिस्तरे, तकिये आदि हैं। बिस्तर रखने का न तो किसी दिगम्बरीय ग्रंथमें विधान है और न दिगम्बर साधु अपने पास बिस्तर तो क्या कोई अन्य छोटा सा भी वस्त्र अपने पास रखते हैं।

मिश्रीमल जी को ख्याल रहना चाहिये कि मुक्ति प्राप्त करना कुछ दूध पीना नहीं है यह तो एक सबसे कठिन वस्तु है इसके लिये वस्त्र ही क्या सर्वस्वत्याग करना पड़ता है। जिनकल्प बिना मुक्ति मिलना असंभव है। जिनकल्प वस्त्रत्याग बिना नहीं हो सकता। जिनकल्प जब जैनसाधु की उत्कृष्ट अवस्था है तब उस उत्कृष्ट अवस्था को पहुंचे बिना मुक्ति भी कैसे मिल सकती है। अतः स्पष्ट है कि 'कपडा' एक परिग्रह है उसको त्यागकर तपस्या करने पर ही मुक्ति हो सकती है।

क्रमशः

अन्तिम सन्देश

(ले० श्रीमान बाबू ज्ञानचन्द्र जी जैन बी० ए० नागपुर)

सरला—पतिहीना, गृहहीना, आश्रयहीना सरला संसारकी यातनाओं से घबड़ाकर परलोक वासिनी होगई। वह निःसहाय थी। उसे यह विश्व विनश्वर मालूम होता था। जब कार्तिक की अर्ध रात्रिमें निर्मल नील गगन में चन्द्रमा अपनी प्रेयसी रजनी के प्रशान्त अञ्चल को चंचल करता था, जब प्रभातकालमें भानुदेव की कोमल मयूखें गुलाब और चमेली के ओसकण पूर्ण मुख मण्डल को चूमती थीं, जब कमल का समूह उत्फुल्ल होकर अलियों का मधुर गुन्जार सुनता था, उसी समय वह अपनी वेदनासे व्याकुल हो अपने भाग्यका निरादर करती थी। जब वह पांच वर्ष की थी तब उसके मातापिता स्वर्गवासी होचुके थे। उसका पालनपोषण उसके काका हरिदास के द्वारा हुआ था

हरिदास नागपुर के एक प्रसिद्ध व्यापारी थे। वे जुआ खेलने तथा भंग पीने में ही अपनी जायदाद बर्बाद करते थे। धीरे २ यह व्यसन और बढ़ता गया। घरके कार्यों में उनका मन न लगता था। संसारमें रहकर माल उडाना ही उनका उद्देश्य था। जब आमदनी कुछ नहीं, और खर्च अधिक होता है तो उसका यही परिणाम होता है कि मनुष्य अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति खो बैठता है और अन्तमें अपने किये हुये दुष्कर्मों के लिये पश्चात्ताप करता है।

हरिदास सेठकी कमाई सब जुए में चली गई। अब उनके पास कुछ न रहा। खाने के लिये भी मोहताज होगये। उन्हें कोई नौकर भी नहीं रखता था क्योंकि वे जुआरी थे। अब उन्हें चिन्ता हुई कि पैसा कहांसे लाया जावे और खर्च किस प्रकार चलाया जाय।

सच है जब मनुष्य की प्रवृत्ति दुष्कर्म की ओर होती है तो उनकी पूर्ति के लिये वह नीचसे नीच कार्य करने को भी तैयार होजाता है।

संध्याका समय था। सेठ हरिदास अपने मकान में बैठे कुछ सोच रहे थे। इतने में उनकी स्त्री आई और कहने लगी कि इस वर्ष सरला का विवाह करना जरूरी है। उसकी उमर १० वर्षकी होचुकी है भला कोई इतनी उम्र वाली लड़की को अपने घरमें अविवाहित रख सकता है। हरिदास सुधारक विचार के थे। उन्होंने कहाकि अभी लड़कीकी उमर बहुत कम है। कम उमर में विवाह करने के कारण ही आज हम भारतवर्ष में लाखोंकी संख्यामें विधवाओं को पाते हैं और उनका जीवन इस संसारमें भारस्वरूप होरहा है।

किन्तु उनकी स्त्री अशिक्षिता थी। वह यह उपदेश कब मानने वाली थी। अपनी बात पर ही दृढ रही कि इस वर्ष विवाह करना ही पड़ेगा। बाल विवाहकी प्रथा तो हमारे बापदादाओं से चली आरही है। परन्तु एक बात फायदेकी यह है कि यदि लड़की किसी धनी बुड्ढे के गले बांध दी जाय तो हमें धन भी बहुत मिलेगा और अपना जीवन भी आनन्द से व्यतीत होगा।

धनका नाम सुनते ही हरिदासके मलीन मुख पर एक हास्यकी मृदु रेखा दिखाई दी। उन्होंने सोचा यह पैसा हाथमें करने की बड़ी अच्छी तरकीब है। जरूर ही अब मैं इसका विवाह किसी वृद्ध के साथ करदूंगा।

निदान हरिदास ने सरला का विवाह कलकत्ता के एक धनिक व्यापारी गोधन सेठ से निश्चित किया और सौदा पांच हजारमें तय होगया। गोधन सेठ की अवस्था पचास वर्ष की थी। उनकी प्रथम दो स्त्रियोंका स्वर्गवास होचुका था, यह उनका तीसरा विवाह था। पैसेके बल पर मनुष्य बुरीसे बुरी कामनायें भी पूर्ण करने की चेष्टा करता है और समाजके अधःपतन में सहायक होता है।

सरला अबोध थी। उसे क्या पता था कि विवाह होनेके थोड़े ही समय बाद उसका सौभाग्य सिंदूर मिट जायेगा और वह अनाथिनी विधवा बनकर संसार में भ्रमण करेगी। वह आर्य कन्या थी उसके चाचाने उसे जिसके पल्ले बांध दिया था वह वहां पर ही चली गई। वह भला यह कब कह सकती थी कि उसका विवाह एक वृद्ध पुरुष के साथ किया गया है जोकि थोड़े ही समय बाद इस संसारसे यात्रा कर जायेगा। इतना कहना ही समाज की दृष्टिमें बेशरम बनना था। सरला गोधन सेठके यहां जैसे तैसे अपने दिन काटने लगी। उसके एक पुत्र भी हुआ जिसका नाम नरेश रक्खा गया।

एक दिन अर्ध रात्रि का समय था। चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी। सारी प्रकृति निद्रा देवी की मधुर गोद में शयन कर रही थी। चन्द्र देव भी काले मेघों की सन्धियों में से विश्व का निरीक्षण कर रहे थे। समय २ पर कुत्तोंका भौंकना तथा मनुष्यों के खांसने की आवाज सुनाई देती थी। गोधन सेठ सख्त बीमार थे। वे पलंग पर पड़े हुए कराह रहे थे। पास में सरला बैठी थी। वह पति सेवा में निमग्न थी। बहुत इलाज किया गया परन्तु परिणाम कुछ न हुआ। डाक्टर साहब बुलाये गये और उन्हों ने दवाई दी। सरला को आश्वासन देकर चले गये। अल्प समय में ही कराहने की आवाज जोर से होने लगी और गोधन सेठ हमेशा के लिये संसार से चले गये।

सरला ने अपने पति को चुप पाकर धीमे करुण स्वर में कहा प्राणनाथ! परन्तु वे अब कहां से बोलते उनकी आत्मा तो शरीर से छुटकारा पा चुकी थी। सरला चिल्ला २ कर रोने लगी। सारी रात रोते २ बीती। अनाथिनी का उस समय कोई सहारा न हुआ। सेठ जी के निकट सम्बन्धियों ने भी अपना स्वार्थ साधन किया और रात को ही बहुत सी जायदाद यहां वहां कर दी। सबेरा होने पर दाह क्रिया समाप्त हुई।

दिन बीतते गये। सरला अब अपने बालकके साथ रहने लगी। जो कुछ धन था वह साहूकारों ने कर्जे में ले लिया और कुछ दूसरों ने हजम कर लिया। वह कमा कर नहीं खा सकती थी। उस का बालक भी बहुत छोटा था भाग्य का चक्र विचित्र है। बाल्य काल में उसके माता पिता की मृत्यु हो जाने से वह मातृ सुख का अनुभव न कर सकी। काका ने पैसा लेकर एक वृद्ध के साथ विवाह कर दिया और वह भी संसार से चल बसा।

सच है विपत्ति का कोई सहायक नहीं होता। उसके कष्ट का पार नहीं था एक दिन उसके पास खाने को कुछ न रहा। कुलीन घर की एक हिन्दू अबला कहां जा सकती थी? मजदूरी करना उसके लिये कठिन कार्य था। वह भूखी रह सकती थी परन्तु अपने बच्चे को किस प्रकार भूखा रख सकती थी। उसके पास दो पैसे थे उससे उसने अपने बालक को दूध पिलाया और रात होते ही वह बनकी ओर चल पड़ी।

नरेश भूख के मारे चिल्लाने लगा सरला ने बच्चे को एक वृक्ष के नीचे बैठाया और आप कुछ बनफल लाने के लिये चली गई। वह गहन वन में पहुंच गई परन्तु खाने को कुछ नहीं मिला। दो दिन की भूखी थी मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़ी। और नरेश की सुध भी न रही।

(२)

प्रातःकाल का समय था। शीतल पवन चल रही थी। बा० शिवदत्त अपने मित्र के साथ घूमने को निकले और बनकी ओर चल पड़े। वे थोड़ी दूर ही गये थे कि किसीके रोनेकी आवाज सुनाई पड़ी। वृक्षके पास जाकर देखा तो मालूम हुआ कि सुन्दर बालक रोरहा है। उन्होंने उसे उठाया और अपने घरको ले आये। उनके कोई पुत्र न था इस कारण उसे पुत्रकी तरह पालने लगे और उसका नाम ईश्वर दत्त रक्खा।

ईश्वरदत्त बहुत चतुर निकला। पढ़ने लिखने में बहुत होशियार था। उसने धीरे २ हिन्दी तथा अंग्रेजी स्कूलमें शिक्षा पाई। वह हमेशा समाज सुधार के विषय में सोचा करता था।

बा० शिवदत्तने ईश्वरदत्त का विवाह निश्चित किया। विवाहकी तैयारियां बहुत धूमधामसे होने होने लगीं। बहुतसे अतिथियोंका आगमन हुआ। चारों ओर चहल पहल थी। खूब खुशी मनाई गई।

ईश्वरदत्त का विवाह समाप्त होचुका था। आज शहरके प्रतिष्ठित सज्जनों को निमंत्रण दिया गया था। चाय-पार्टी थी। सब व्यक्तियोंने भोजन करना शुरू किया। ईश्वरदत्त भी वहीं ही बैठा भोजन कर रहा था। उसने देखा कि जीर्ण वस्त्र पहिने एक गरीब भिखारिणी जूठी पत्तलों के लिये दूसरे भिखारियों से झगड़ा कर रही थी कि एक भिखारी ने उसे धक्का देकर गिरा दिया। वह गिर पड़ी और चिल्लाने लगी। ईश्वरदत्तसे यह दृश्य न देखा गया. वह सोचने लगा कि मनुष्य भले आदमियों को खिलाने में तथा विवाहादि कार्योंमें कितना खर्च करते हैं किन्तु इन बेचारे इन गरीबोंकी कोई खबर भी नहीं लेता। वे बेचारे जूठी पत्तलों के लिये ही तड़प रहे हैं। उसका हृदय दयासे भर गया और उसने भिखारिणी को भरपेट भोजन कराया और उसका पूर्ण वृत्तान्त पूछा।

ईश्वरदत्त ने उसे अपने मकान के कोने में रहने की आज्ञा देदी और उसे प्रतिदिन भोजन मिलने लगा एक दिन वह सख्त बीमार पड़ी और मृत्यु शय्या पर पड़ी हुई जीवनकी अन्तिम घड़ियां गिनने लगी। उसके जीवन का कुछ भरोसा न था। पासमें शिवदत्त और ईश्वरदत्त दोनों बैठे थे। बुढ़िया ने करुण स्वरमें कहा—

"मेरे जीवन का भरोसा नहीं परन्तु अन्तिम बार मैं अपने प्यारे, जीवन के सहारे पुत्रको न देख सकी,

न मालूम उसको क्या हुआ होगा ? कहाँ गया होगा साधुने तो मुझसे कहा था कि तेरा पुत्र तुझे अवश्य मिलेगा परन्तु मालूम क्या कि उसके वचन सत्य ही हैं ?

शिवदत्तने पूछा कि मां वह कौनसा पुत्र था और कहां था ?

सरलाने पूर्ण वृत्तान्त सुना दिया और कहा कि वृक्ष के नीचे पुत्रको छोड़ने के बाद उसे वह वहां न पाकर पागल होगई थी। शिवदत्त समझ गये कि हो न हो, इसका पुत्र यही होना चाहिये जिसे मैं वृक्षके नीचे से उठा लाया था। फिर उन्होंने पूछा कि मां, क्या उसको और भी कुछ पहचान थी ?

बुढ़ियाने कहा कि हाँ, उसकी दाहिनी भुजा पर एक तिलका दाग था। शिवदत्तने देखा तो मालूम हुआ कि वास्तवमें ईश्वरदत्तकी दाहिनी भुजा पर तिलका दाग है।

चारों ओर सन्नाटा छागया और वे आश्चर्य चकित रह गये। ईश्वरदत्त उसके पैरों पर गिर पड़ा और कहने लगा कि माता क्षमा करो मेरे जीवन को धिक्कार है कि मैं तुम्हारी कुछभी सेवा न कर सका अब तू संसार से जारही है—मेरे लिये कुछ कर्तव्य की शिक्षा देती जा।

सरला—मेरे जीवन की कुछ भी चिन्ता न करो और न मेरे कष्टोंकी ओर ध्यान दो। परन्तु मैं चाहती हूं कि भारत ललनाएं इस प्रकार के अत्याचारों से न पीसी जावें। समाजका संगठन करो, बाल विवाह वृद्ध विवाह आदि कुप्रथाओं को रोको और अनाथ विधवाओं की रक्षा करो। जैनसमाज के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में यह मंत्र फूंक दो। यदि तुम इन आज्ञाओंका यथाशक्ति पालन करोगे तो तुम समझ जाओगे कि तुमने मेरी बहुत सेवा की।

ईश्वरदत्त— माँ आपका उपदेश बहुत उत्तम और अनुकरणीय है। क्या संसार के अत्याचारों से पीसी गई बुढ़िया के करुण क्रन्दन का निनाद उस जगत पिता कहलाने वाले ईश्वर के करुणा कुहरों से ठुकरा कर वायु में व्यर्थ ही विलीन होजायगा। क्या धर्म, अधर्म, पाप-पुण्य संसारकी अबलाओं को ठगने के लिये ही दार्शनिकों ने अपने कोशमें रख लिये हैं। मां क्या तेरी आहोंसे, तेरे पापसे सुराधीशका सिंहासन न कांप उठेगा। मैं अवश्य तेरी आज्ञाओंका पालन करूंगा।

सरला— बेटा इस कार्य में आपदाएं बहुतसी आवेंगी परन्तु तुम निर्भयता पूर्वक उनका सामना करना। मुझे तो आनन्द तब ही होगा जबकि जैन समाजका बच्चा २ अपने कर्तव्यको समझ लेगा। और समाजोन्नति की बलिवेदी पर हंसते २ अपने प्राण देदेगा। इतना कहते २ उसकी आत्मा मेघाच्छन्न गगन में विलीन होगई।

दो वर्षबाद ईश्वरदत्त ने कलकत्ता में "जैन सेवा संघ" स्थापित कर लिया जिसका उद्देश्य जैन समाज की सेवा करना है। आजकल उसके कार्यकर्ताओं की और मेम्बरों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जारही है।

जैनधर्म का मर्म और पं० दरबारीलाल जी

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

ज्ञान प्रकरण

पं० दरबारीलाल जी ने अपनी इस लेखमाला में ज्ञान प्रकरण जैन जगत अंक १७ वर्ष ८ से प्रारम्भ किया है। पहिले लेखमें आपने ज्ञानदर्शन सम्बन्धी प्रचलित जैन मान्यता का परिचय कराते हुए उनके सम्बन्ध में मतभेद का प्रदर्शन किया है। इस लेख के कुछ अंश तथा इससे आगे के लेख में आपने दर्शनोपयोग के सम्बन्ध में अपने विचार प्रगट किये हैं। इससे आगे आपने ज्ञान की मीमांसा की है। दरबारीलाल जी के दर्शनोपयोग सम्बन्धी विचारोंकी परीक्षा तो हम अपनी लेखमाला—जैनधर्म का मर्म और प० दरबारीलाल जी में कर चुके हैं। १ अब यहां हमें आपके ज्ञानोपयोग सम्बन्धी विचारों की परीक्षा करनी है।

ज्ञानोपयोग सम्बन्धी विचार प्रगट करते हुए दरबारीलाल जी ने पहिले इसके दो पहलुओं पर विचार किया है। एक ज्ञान के भेद और दूसरे अनिन्द्रिय प्रत्यक्ष का आत्म निमित्त होना। ज्ञानके भेदों पर विचार प्रगट करते हुए आपने लिखा है कि ज्ञानों के पांच भेद ही जैनदर्शन की सम्पत्ति हैं। तथा महावीर भगवान ने ज्ञानके पांच भेद ही बतलाये थे। प्रत्यक्ष और परोक्ष की दृष्टि से ज्ञान के दो भेद तो बाद को आचार्यों की कल्पना का फल है। इसके सम्बन्ध में आपके निम्नलिखित शब्द देखने योग्य हैं—

"भगवान महावीर ने ज्ञान के पांचभेद ही बताये थे इसी लिये ज्ञानावरण कर्म के पांच भेद माने गये हैं। प्रत्यक्षावरण आदि भेदों का शास्त्रों में उल्लेख नहीं है। ज्ञान के प्रत्यक्ष परोक्ष भेद कुछ पीछे शामिल हुए हैं यह दूसरे दर्शनों की विचारधारा का प्रभाव है।······ चार भेद वाली मान्यता अवश्य ही उमास्वाति के पहिले की थी परन्तु दो भेद वाली मान्यता पहिले की थी या नहीं यह कहना जरा कठिन है फिर भी इतना तो कहा जा सकता है कि जैन साहित्य में चार भेदों वाली मान्यता से दो भेद वाली मान्यता पीछे की है। प्रमाण की दो भेद वाली मान्यता चार भेद वाली मान्यता से अधिक पूर्ण है। इस लिये अगर प्रत्यक्ष परोक्ष वाली मान्यता पहिले आ गई होती तो चार भेद वाली मान्यता को ग्रहण करनेकी आवश्यकता ही न होती। इस लिये प्रारम्भ में काम चलाने को नैय्यायिकों की चार भेद वाली मान्यता स्वीकार कर ली गई। पीछे जैन विद्वानों ने स्वयं वर्गीकरण किया और दो भेद माने।" २

प्रमाण की दो भेद वाली मान्यता को नवीन प्रमाणित करने के लिये लेखक ने प्रमाण की चार भेद वाली मान्यता का आश्रय लिया है। आपने अपने इस मन्तव्य के समर्थन में कि "प्रमाण की चार

---

१ दर्शन वर्ष १ अङ्क

२ जैन जगत वर्ष ८ अङ्क १६

भेद वाली मान्यता को जैन लेखक प्रमाण की दो भेद वाली मान्यता से पहिले ही स्वीकार कर चुके थे" तत्वार्थसूत्र के भाष्य का एक उल्लेख उपस्थित किया है। आपका कहना है, कि उमास्वाति से प्राचीन किसी लेखक ने तो दो भेद वाली मान्यता का वर्णन किया नहीं है तभी उमास्वाति अपने भाष्य में स्वयं प्रमाण की चार भेदों वाली मान्यता का उल्लेख करते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रमाण की चार भेद वाली मान्यता उमास्वाति से पूर्व की है।

तत्वार्थसूत्र के भाष्यका यदि सूक्ष्म परीक्षण न भी किया जाय तबभी इससे पंडित जी के अभिप्राय का समर्थन नहीं होता। "तत्वार्थ सूत्रका स्वोपज्ञ भाष्य है। इसके रचयिता स्वयं सूत्रकार उमास्वाति हैं" यह बात अभ तक अनिश्चित है।

तत्वार्थसूत्र के श्वेताम्बर और दि० सूत्र पाठ एवं सूत्रस्थ पदपाठमें भी कहीं २ अन्तर है। प्रस्तुत भाष्य श्वेताम्बरीय तत्वार्थ सूत्र पाठ एवं पदपाठ पर है। अतः यदि प्रस्तुत भाष्य को स्वोपज्ञ स्वीकार कर लिया जाता है तो जबतक अन्य प्रमाण न मिले यही कहना होगा कि उमास्वाति का वास्तविक सूत्रपाठ श्वेताम्बरीय सूत्रपाठ है। और तत्वार्थसूत्रके टीकाकार आचार्य पूज्यपादने इसमें कुछ परिवर्तन करके वर्तमान दिगम्बरीय सूत्रपाठ तैयार किया था। दिगम्बराचार्यने उमास्वाति के सूत्रपाठ में यदि अन्तर-किया होता तो वे उन सूत्रों को जिनको दिगम्बरत्व और श्वेताम्बरत्वके सम्बन्धमें संदिग्ध समझा जाता है अवश्य ऐसी अवस्थामें ला देते जिनसे उनके सूत्र पाठ और भाष्यके अनुसार इस प्रकार के विवाद की उत्पत्ति ही असंभव होजाती। यह कैसे स्वीकार किया जा सकता है कि एक विद्वान किसीमें परिवर्तन तो करे किन्तु वह ऐसी बातों का ही परिवर्तनको करके छोडदे जिससे उसको या उसके सम्प्रदाय को कोई विशेष लाभ न हो।

इसके सिवाय दूसरी बात यह है कि काट छांट करते समय वह इस तरह के आवश्यक परिवर्तनोंको भी छोड़दे जिससे उसके सम्प्रदाय की मान्यता को संदिग्धकोटिमें लाने का प्रयास किया जा सकता हो।

यदि आचार्य पूज्यपादने उमास्वातिके सूत्रपाठमें परिवर्तन किया होता तो वे सर्व प्रथम ऐसे ही सूत्रों में परिवर्तन करते। ऐसी परिस्थितिमें यह नहीं कहा जा सकता कि सर्वार्थसिद्धिका मूलपाठ उमास्वाति का मूलपाठ नहीं है। जबतक सर्वार्थसिद्धिके सूत्र पाठ को परिवर्तित प्रमाणित न कर दिया जाय, यह कैसे कहा जा सकता है कि "तत्वार्थभाष्यका सूत्र पाठ ही उमास्वातिका सूत्रपाठ है और उसपर रचा गया भाष्य स्वोपज्ञ है"। इस विषयमें अन्य भी कारण हैं जिनसे प्रस्तुत भाष्यको स्वोपज्ञ स्वीकार करने में बाधा आती है।

उपर्युक्त विवेचनमें प्रगट है कि यदि तत्वार्थ-भाष्यमें चार भेदवाली मान्यता का उल्लेख मिलता है तो इसहीके आधारसे उसको उमास्वाति से पूर्व का प्रमाणित नहीं किया जा सकता।

दूसरी बात यह है कि भाष्य के प्रस्तुत उल्लेख से यह भी सिद्ध नहीं होता कि उसमें यह विवेचन जैन आचार्यों की दृष्टि से किया गया है। भाष्य में तो यही लिखा है कि कुछ ऐसा मानते हैं। इसके बाद भाष्यकार ने ही स्वयं प्रश्न उठाया है कि यह

"कैसे"। इसका उत्तर देते हुए भाष्यकार ने दो बातें लिखी हैं एक यह कि + इनका अन्तर्भाव मति और श्रुत में होता है दूसरी में इनकी प्रमाणिकता से ही इन्कार है। यही भाष्य का विवेचन है जिससे दरबारीलाल जी अपने अभिप्राय का समर्थन करना चाहते हैं। पाठक समझ गये होंगे कि इस विवेचन से तो कोई भी ऐसी बात नहीं है जिससे दरबारी लाल जी की मान्यता का समर्थन हो सके इसमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे यह बात सिद्ध की जा सके कि यह प्रमाण व्यवस्था जैनाचार्य स्वीकार करते थे।

इसही भाष्य में दूसरे स्थल पर भी "इत्येके" करके ऐसा पाठ मिलता है। "इत्येके" × इस पर टीका करते हुए सिद्धसेन गणी ने "सूरयः" शब्द का प्रयोग किया है अतः ऐसा प्रतीत होता है कि दरबारी लाल जी ने इसका सम्बन्ध जैनाचार्यों के साथ घटित कर लिया है। जहां गणी महोदय ने "सूरयः" शब्द का प्रयोग किया है वहीं साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया है कि इसका वर्णन (१—१२) में स्वयं भाष्यकार करेंगे। ऐसी परिस्थिति में यह तो निश्चित है कि गणी महोदय का इस सम्बन्ध में कोई स्वतन्त्र अभिमत नहीं है तथा भाष्यकार का वर्णन दरबारी लाल जी के समर्थन में बिलकुल नाकाफी है अतः स्पष्ट है कि भाष्य के विवेचन से यह भी प्रमाणित नहीं होता कि उसके समय में प्रमाणों की चार भेद वाली मान्यता को जैनाचार्यों ने अपना लिया था।

+ तत्वार्थ भाष्य १-१२

× तत्वार्थभाष्य १-६

तीसरी बात यह है कि भले ही दरबारीलाल जी की ऐसी धारणा हो कि अभी तक आचार्य भद्रबाहु का उमास्वाति पूर्वत्व साध्य कोटि से है। किन्तु इसके समर्थन में अनेक अकाट्य प्रमाण मौजूद हैं। इसको साध्य कोटि में लाने को कम से कम आपको "स्वामी समन्तभद्र" के ऐतिहासिक प्रमाणों का समाधान तो कर देना चाहिये। अतः इस दृष्टि से भी दरबारीलाल जी की मान्यता का खंडन होता है।

इसके सम्बन्ध में एक विशेष बात विचारणीय है और वह यह है कि क्या न्याय की दार्शनिक प्रमाण व्यवस्था का जैनियों पर प्रभाव पड़ा है या जैनियों की प्रमाण व्यवस्था का न्याय पर।

दरबारीलाल जी का कर्तव्य था कि वह इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने के साथ कुछ तो इसके समर्थन में लिखते। आपने अपनी इस प्रतिज्ञा के समर्थन में एक भी प्रमाण का उल्लेख नहीं किया है। अतः स्पष्ट है कि दरबारीलाल जी की प्रस्तुत प्रतिज्ञा केवल प्रतिज्ञा है और वह प्रस्तुत विषय के निर्णय में कुछ भी उपयोग नहीं रखता।

गौतम के न्यायसूत्रों के गम्भीर अध्ययन से यह बात स्पष्ट है कि जिस समय गौतम की सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का खंडन किया जा रहा था उस समय उसने उनकी रक्षार्थ न्यायसूत्रों की रचना की है गौतम के सूत्रों में स्थान २ पर इसका आभास होता है। जल्प और वितण्डा का प्रयोजन बतलाते हुये गौतम ने लिखा है * कि जिस प्रकार कांटों से खेत की रक्षा की जाती है उसही प्रकार इनसे केवल जीतने

* न्यायदर्शन ४-२-५०

की इच्छा रखने वालों के समाधान किये जाते है। गौतम के इस विवेचन से यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि जिस समय गौतम ने अपने न्याय सूत्रों की रचना की है केवल उसके सिद्धान्तों का सैद्धान्तिक दृष्टि से ही खंडन नहीं किया जाता था किंतु कुछ ऐसे भी प्रतिवादी थे जो केवल विजयार्थ ही विपक्ष की मान्यताओं का खंडन किया करते थे।

तार्किक विश्वाससे श्रद्धालु विश्वास बुरा होता है और वह अपने प्रतिकूल विचारों की यथार्थता का निर्णय नहीं होने देता। यही बात गौतम के सम्बन्ध में प्रतीत होती है। गौतम के समयमें उनकी मान्यताओं का इतना खंडन किया गया है जिसको वह सहन नहीं कर सका अतएव उसके श्रद्धालु हृदयने यही कहा है कि यह तो केवल जय विजय के लिये है। यदि गौतम के श्रद्धालु हृदय की यह बात न होती और न इसके सम्बन्ध में तार्किकता से काम काम लिया होता तो वह ऐसे समाधानों के निमित्त भी प्रमाण का ही प्रयोग करता और फिर उससे जल्प और वितण्डाका कोई वर्णन नहीं होता। अस्तु हमें तो यहां केवल इतना ही बतलाना है कि गौतम का समय खंडन मंडनका युग रहा है।

जिन लोगों ने गौतम के सिद्धान्तोंका खंडन किया है जैन उन्हीं में से हैं। ज्ञानकी पांच भेदवाली मान्यता खंडन मंडन की नहीं है अतः यह कहना ही पड़ेगा कि उस समय जैनोंके पास भी ऐसी प्रमाण व्यवस्था थी जिसको वह दूसरे सम्प्रदायों के खंडन एवं मंडनमें प्रयोग करते थे। इन सब बातों के आधार पर यही कहना पड़ता है कि प्रमाणकी दो भेदवाली मान्यता से नवीन प्रमाणित करने के लिये दरबारीलाल जीने जिन बातोंका उल्लेख किया है वे इस बातके समर्थन में अपर्याप्त हैं। अतः दरबारी लाल जी का यह मन्तव्य बिलकुल निराधार है।

ज्ञानावरणी के भेदोंकी बात तो यह है कि प्रमाण के दो भेद स्वतंत्र भेद नहीं हैं किन्तु उन्हींका रूपान्तर से वर्णन है अतः इनके स्वतंत्र आवरणकी बात तो एक व्यर्थ जैसी बात है।

अनिन्द्रिय ज्ञानका अर्थ पहिले मानसिक ज्ञान होता था इसके समर्थनमें दरबारीलाल जी ने नन्दी सूत्रकी तरफ संकेत किया है। इससे पूर्व भी आप ऐसाही कर चुके हैं। हम आपके पूर्ववर्ती प्रकरण में इसका स्पष्टीकरण कर चुके हैं कि दरबारीलाल जी ने नन्दीसूत्रके समझनेमें गल्ती की है उसही के अनुसार अनिन्द्रिय प्रत्यक्षका अर्थ आत्मप्रत्यक्ष है। अतः दरबारीलाल जी की यह बात भी मिथ्या है।

—अपूर्ण

कांग्रेस की सुवर्ण जयन्ती

(ले०— अजितकुमार जैन शास्त्री)

यह वर्ष जयन्तियों की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। गर्मी के दिनों में सम्राट पंचम जार्ज की रजत जयन्ती मनाई गई क्योंकि आपके राज्याभिषेक को २५ वर्ष हो चुके हैं। अभी मर्गसिर मासमें राव राजा सर सेठ हुकमचन्द जी इन्दौर की हीरकजयन्ती बड़े समारोह से मनाई गई क्योंकि आप अपने ६० वर्ष सानंद बिता चुके हैं। अभी २८ दिसम्बर को राष्ट्रीय महासभा जो कि कांग्रेस के नाम से प्रसिद्ध है की सुवर्णजयन्ती भारतवर्ष में सर्वत्र बड़े उत्साह से मनाई गई है क्योंकि कांग्रेस अपने जीवन के ५० वर्ष समाप्त कर चुकी है।

कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन उमेशचन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता में अबसे ५० वर्ष पहिले बम्बई नगर में २८ दिसम्बर सन १८८५ को दिन के १२ बजे हुआ था। कांग्रेस की स्थापना में मिस्टर ह्यूम नामक एक अंग्रेज का मुख्य हाथ था। यद्यपि जनसाधारण मिस्टर ह्यूम को भारतहितैषी समझता है किन्तु दूरदर्शी नीतिज्ञ एवं इतिहास वेत्ता विद्वान इस बात से सहमत नहीं हैं उनके खयाल से ह्यूम ने ब्रिटिश सरकार और भारतीय प्रजा को मिला रखने के लिये राजनैतिक उद्देश से कांग्रेस की स्थापना कराई थी उनके इस विचार में बहुत कुछ तथ्य है क्योंकि ह्यूम सन १८५७ के गदर के समय में इटावा में एक साधारण सैनिक था उस समय उसने अनेक विद्रोहियों को तलवार के घाट उतार कर खून से अपने हाथ लाल किये थे। पीछे अपनी योग्यता के फल स्वरूप ह्यूम भारत सरकार के मन्त्री पद पर जा पहुँचा था तथा कांग्रेस स्थापना से पहले ह्यूम ने राजभक्ति का प्रस्ताव पास कराया था। कांग्रेस की स्थापना के जमाने में भारतीय जनता में असन्तोष की लहर फैल रही थी उसको मिटाने तथा राजा प्रजा को एक दूसरे के समीप करने के लिये एक ऐसी संस्था की सरकार हितैषियों को आवश्यकता थी। एवं पहले पहल कांग्रेस के अध्यक्ष प्रायः सरकारी अफसर (हाईकोर्ट के जज आदि) अथवा सरकार के समर्थक महानुभाव हुआ करते थे। कुछ भी हो कांग्रेस की स्थापना ह्यूम ने किसी भी दृष्टि से की हो कांग्रेस भारत देश के लिये लाभदायक संस्था साबित हुई।

कांग्रेस ने अपने प्रारम्भिक वर्षों में भारतीय जनता में कुछ विशेष जागृति नहीं की। देश में कांग्रेस द्वारा जागृति वाइसराय कर्जन द्वारा किये गये बंग भंग (बंगाले के टुकड़े) के समय से हुई। लार्ड कर्जन बंगभंग वाले अपने निर्णय को अटल एवं अन्तिम निर्णय समझता था किन्तु उस समय कांग्रेस द्वारा उठाये हुए आन्दोलन ने उस निर्णय को पलटवा दिया। सम्राट पंचम जार्ज का जब देहली दरबार हुआ उस समय उन्हों ने अपनी घोषणा द्वारा लार्ड कर्जन के बंगभंग वाले निर्णय को रद्द करके भारतीय जनता के अनुसार बदल दिया।

उस समय से कांग्रेस में कुछ जान आई जनता ने भी कांग्रेसको कुछ समझा किन्तु फिर भी कांग्रेस

में प्रधानता नर्मदल की थी। इस बात को सूरत वाले कांग्रेस के अधिवेशन ने दूर कर दिया। सूरत के अधिवेशन में गुलगपाड़ा तो बहुत हुआ किन्तु कांग्रेस की बागडोर स्व० लोकमान्य तिलक के गर्मदल के हाथ आ गई। कुछ दिन पीछे गर्मदल नर्मदल भी मिल गये।

कांग्रेस ने क्या कुछ किया यह बतलाना सूर्य को दीपक से ढूँढना है। कांग्रेस ने सरकार के हृदय में तथा भारतीय जनता के दिमागमें इस बात का अंकुर उत्पन्न किया कि भारतीय लोगों को स्वराज्य मिलना उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। जहां पहले वंदे मातरम्, स्वराज्य कहना लिखना अपराध माना जाता था राष्ट्रीय झंडा निकालने का निषेध था। पुलिस आदि सरकारी कर्मचारियों से लोग डरा करते थे इन सब बातों को कांग्रेस की प्रगति ने रोक दिया।

इसके सिवाय भारतवासी फैशन की चक्की में पिसते चले जा रहे थे उन को फैशन की गुलामी से छुड़ाने में कांग्रेस ने बहुत कुछ काम किया है।

भारतवर्ष की दरिद्रता किस तरह से दूर की जा सकती है यह बात कांग्रेसने अच्छे ढंगसे जनता के सन्मुख रक्खी है यदि उस ढंग को जनता पूर्णरूप से अपना लेवे तो भारत की गरीबी बहुत जल्दी दूर हो सकती है। हाथका बना हुआ कपड़ा पहनना कम से कम दो, ढाई करोड़ बेकार, भूखे मनुष्यों को आजीविका पर लगाना है। जो मनुष्य चर्खे और खद्दर की बात सुनकर हंसते है वे अपनी मूर्खता में ६५ करोड़ रुपये वार्षिक विदेशी कपड़े के बहाने विदेशों को भेजने की बात पर जरा भी विचार नहीं करते। कांग्रेस के आदेशानुसार यदि भारतवासी लोग हाथ का बना हुआ कपड़ा, हाथ का पिसा हुआ आटा, हाथ की बनी हुई खांड, हाथ के कुटे हुए चाँवल, तथा अपने व्यवहार का जो सामान देश में तयार होता है उनही सब पदार्थों को काम में लावें तो भारत वर्ष में कोई भूखा, कोई बेरोजगार नहीं रह सकता,

यद्यपि इस प्रगति में कांग्रेस को कुछ सफलता प्राप्त हुई है किन्तु वह न कुछके बराबर है। भारतवर्ष का यदि उद्धार होना है तो वह कांग्रेस के बतलाये हुये मार्ग पर ही चलने से ही होना है।

म्युनिसिपल बोर्ड, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, कौंसिल, ऐसेम्बली आदिमें सरकार की ओरसे जो कुछ भी थोड़े बहुत अधिकार मिले हुये हैं उसमें भी कांग्रेस की प्रगति कारण है।

जनतामें जागृति लाने के लिये तथा सरकारको जनता की मांग समझाने के लिये कांग्रेस को बहुत भारी आन्दोलन करने पड़े। रौलट ऐक्ट रद्द कराने के लिये जो आन्दोलन उठा था उस समय अमृतसर के जलियान वाला बागमें जनरल डायर के द्वारा हत्याकांड हुआ था वह सब किसीको याद होगा।

सन १९२१-२२ में जो विराट असहयोग आन्दोलन कांग्रेस ने उठाया था जिसमें कि ७०-८० हजार मनुष्य जेल गये थे वह समय भी किसीको न भूला होगा। तदनंतर लाहौर अधिवेशन के पीछे सन १९३० में नमक सत्याग्रह को लेकर विशाल क्रियात्मक आन्दोलन उठा था जिसमें कि ९० नब्बे हजार स्त्री-पुरुष जेल भेजे गये, वह ताजी बात है।

कांग्रेसके इन विराट आन्दोलनोंने सरकारको इस बातके लिये तैयार किया कि जल्दी से जल्दी

भारतीय जनता को और भी अधिक अधिकार दिये जायें तदनुसार गोलमेज कांफ्रेन्स हुई जिनमें महात्मा गान्धी और सरीखे पुरुष भी बुलाये गये जिनको अनेक बार राजनैतिक अपराधी समझ कर जेल भेजा गया था। उन कांफ्रेन्सों से जो कुछ सारांश निकला वह आनेवाली नई शासन प्रणाली है। वह शासन पद्धति कितनी त्रुटिपूर्ण है यहां पर इस बातका विचार नहीं किया जाता है। यहां पर तो केवल यही बतलाना है कि वह सब कुछ कांग्रेस की बदौलत हुआ है।

शासन प्रणाली बदलवानेमें अनेक बलिदान करने पड़ते हैं। संसार के इतिहास इस बात की साक्षी देते हैं। तदनुसार कांग्रेस ने भी बहुत बड़े बलिदान किये हैं। लोकमान्य तिलक, मोतीलाल नेहरू, सी० आर० दास, विट्ठल भाई पटेल, गान्धी जी, मालवीय जी, जवाहरलाल नेहरू आदि नेता जोकि अपनी सम्पत्ति के बल पर राजसुख भोग सकते थे देशके नाम पर सर्वस्व त्याग कर साधारण स्वयं सेवकों की तरह अनेक कष्टों को अपना कर जेल गये। मोतीलाल नेहरू, लाजपतराय, विट्ठल भाई पटेल आदि वृद्ध पुरुष यदि जेलों के कष्ट न भोगते तो सम्भव था कि वे भी अभीतक हमारे सामने होते। इनके सिवाय उसके स्वयं सेवकों ने जो बलिदान किया है वह स्मरणीय और आदरणीय है।

इस प्रकार कांग्रेस के द्वारा मद्यनिषेध, सादगी निर्भयता, अहिंसा का महत्व आदि अनेक अनुपम बातें प्रचार तथा अनुभव एवं प्रकाश में आई हैं। जैनसमाज को कांग्रेस की अनुपम सेवाएं कदापि न भूलनी चाहिये। कांग्रेस में या उसके नेताओं में जो बात हमारे सिद्धान्त के विरुद्ध है उनको छोड़ते हुए शेष हितकर बातों का हमको अनुकरण करना चाहिये।

हमारे जैन भाइयोंको यह बात सदा याद रखनी चाहिये कि भारतवर्ष का उद्धार कांग्रेस द्वारा ही हो सकेगा अन्य संस्था उद्धार नहीं कर सकती। और यदि देश अवनति के सागर में डूबा तो जैनी उससे बच नहीं जावेंगे।

अब पाठकों की जानकारी के लिये कांग्रेस के अधिवेशनों की सूची, अध्यक्ष, स्थान, समय के साथ देते हैं—क्योंकि इससे कांग्रेस का संक्षिप्त इतिहास जाता है।

कांग्रेस के पिछले अधिवेशन

सभापति	स्थान	सन
श्री उमेशचन्द्र बनर्जी	बम्बई	१८८५
" दादाभाई नौरोजी	कलकत्ता	१८८६
" बदरुद्दीन तैयब जी	मद्रास	१८८७
" जॉ० यूल	इलाहाबाद	१८८८
सर डब्ल्यू० वेडरबर्न	बम्बई	१८८९
सर फीरोजशाह मेहता	कलकत्ता	१८९०
श्री आनन्द चार्लू	नागपुर	१८९१
श्री उमेशचन्द्र बनर्जी	इलाहाबाद	१८९२
श्री दादाभाई नौरोजी	लाहौर	१८९३
श्री ए० वेब	मद्रास	१८९४
सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	पूना	१८९५
श्री एम० आर० सयानी	कलकत्ता	१८९६
सर शंकरन नायर	अमरावती	८९७
श्री आनन्दमोहन बोस	मद्रास	१८९८
सर रमेशचंद्र दत्त	लखनऊ	१८९९
सर एन०जी०चन्द्रावरकर	लाहौर	१९००
सर दीनशा ई० वाचा	कलकत्ता	१९०१
सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी	अहमदाबाद	१९०२
श्री लालमोहन घोष	मद्रास	१९०३

श्री डब्ल्यू० ई० कॉटन बम्बई	१९०४
श्री गोपालकृष्ण गोखले बनारस	१९०५
श्री दादा भाई नौरोजी कलकत्ता	१९०६
श्री रासबिहारी घोष सूरत	१९०७
श्री रास बिहारी घोष मद्रास	१९०८
श्री पं० मदनमोहन मालवीय, लाहौर	१९०९
सर डब्ल्यू० वेडरबर्न इलाहाबाद	१९१०
श्री पं० विशन नारायण दर, कलकत्ता	१९११
श्री आर० पेन० मधोलकर बाँकीपुर	१९१२
श्री नवाब सैयद महम्मद कराची	१९१३
श्री भूपेन्द्रनाथ बसु मद्रास	१९१४
सर सत्येन्द्रप्रसन्नसिंह बम्बई	१९१५
श्री अम्बिका चरण मजूमदार लखनऊ	१९१६
श्रीमती एनीबीसेन्ट कलकत्ता	१९१७
श्री सैयद हसन इमाम बम्बई	१९१८
श्री पं० मदन मोहन मालवीय दिल्ली	१९१९
श्री पं० मोतीलाल नेहरू अमृतसर	१९१९
श्री ला० लाजपतराय कलकत्ता	१९२०
श्री सी० विजयराघवाचार्य नागपुर	१९२०
श्री हकीम अजमलखाँ अहमदाबाद	१९२१
श्री देशबन्धु सी० आर० दास गया	१९२२
श्री अब्दुल कलाम आजाद देहली	१९२३
श्री मौलाना मुहम्मद अली कोकोनाडा	१९२३
श्री महात्मागांधी बेलगांव	१९२४
श्रीमती सरोजनी नायडू कानपुर	१९२५
श्री श्रीनिवास आयंगर गोहाटी	१९२६
डा० मुख्तार अहमद अंसारी मद्रास	१९२७
श्री पं० मोतीलाल नेहरू कलकत्ता	१९२८
श्री पं० जवाहरलाल नेहरू लाहौर	१९२९
श्री सरदार बल्लभ भाई पटेल कराची	१९३१
श्री रणछोड़दास अमृतलाल दिल्ली	१९३२
श्रीमती नेलीसेन गुप्ता कलकत्ता	१९३३
श्री डा० राजेन्द्रप्रसाद बम्बई	१९३४

सत्य दर्शन और सांप्रदायिकता

(ले०— श्री० नाथूराम जी डोंगरीय जैन न्यायतीर्थ)

टेबल पर जोरसे हाथ पटक कर लम्बी साँस लेते हुये एक आर्यसमाजी सज्जन ने कहा "गजब हो गया। उफ्! स्वामी कर्मानन्द जी जैन होगये !! इसमें (जैनदर्शन में) स्वामी जीका पत्र पढ़ कर जिसमें उन्होंने आर्यसमाज के सिद्धान्तों को कपोलकल्पित एवं मिथ्या बतलाकर जैन सिद्धान्तों को सत्य दिख-लाया है, मेरे आश्चर्यका ठिकाना नहीं रहा। यदि ये सनातनी होजाते तो मुझे इतना दुःख न होता पर ये तो जैन होगये। जिनके विषय में वे बार बार कहा करते थे कि— हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैन मंदिरम्। अब आज आर्यसमाज दुनिया को क्या मुँह दिखलावेगा और उन लोगों के दिल पर क्या असर होगा जिन्होंने जैनियों के विरुद्ध शास्त्रार्थ के मंच पर स्वामीजीको बादल की तरह गरजते देखा है जब नेता कहे जाने वाले व्यक्ति की ही यह दशा हुई तब पिछलगों का क्या हाल होगा?"

आगे चलकर बोले "यद्यपि आर्यसमाज का यह भी एक सिद्धान्त है कि मनुष्यको सर्वदा सत्य ग्रहण

एवं असत्य परिहार के लिये तैयार रहना चाहिये तो भी ये जैन नाहक हुए। जिस व्यक्ति ने जन्मभर तक जैनियोंसे लड़ाई की और आर्यसमाज के सिद्धान्तोंसे टससे मस नहीं हुआ वही अंतमें जैन होजाय और उसे उनके सिद्धान्त सत्य दिखने लगजांय? जरूर दिमाग खराब होगया है"

"सठिया तो नहीं गये" मैं ने कहा। तब वे हंस कर बोले "सठिया क्या" जैनियों ने जान से मार डालने वगैरह की धमकी दी होगी। तब एक सज्जन ने बीच में रोक कर कहा "नहीं, ऐसा क्यों कहते हो? जैनी तो परम अहिंसक होते है। कहो कि हजार दो हजार का लोभ तो नहीं दे दिया।

तब समाजी सज्जन कहने लगे "शायद ऐसा ही हो, अरे यार! हज़ार दो हजार क्या अगर वे कहते तो दस हजार तक का उनको प्रबन्ध करने के लिये तैयार हूं, अब की बार जब वे मिलेंगे तब देखा जायगा। और इधर तो देखिये—स्वामी दयानन्द जी के वेद भाष्य का भी कर्मानन्द जी मखौल उडाने लगे। क्या वेद भाष्य की त्रुटियां जैन होने से पहिले नहीं दिखती थीं?"

तब एक दूसरे सज्जन बोले—"दिखती तो थीं पर अपने दाम को खोटा कोई नहीं कहता—वाली कहावत के अनुसार स्वामी जी भी चुप रहते होंगे क्या आप यह समझते हैं कि स्वामी दयानन्द जी से गल्ती हो ही नहीं सकती? और स्वामी जी का वेद भाष्य अक्षरशः सत्य है? क्या स्वामी जी के सत्यार्थप्रकाश के प्रथम एडीशन के अनन्तर अन्यान्य एडीशनों में इःकर संशोधन नहीं किया गया है। सच तो यह है कि यदि आर्यसमाज वेदों का मोह निष्पक्ष विचार कर छोड दे और असत्य के परित्याग और सत्य के ग्रहण करने के लिये मनुष्य को सर्वदा तैयार रहना चाहिये, वाले सिद्धान्त पर अमल करने लगे तो फौरन ही आर्यसमाजी समस्त समाज जैन होजाय। स्वामी दयानन्द जी ने जो आर्यसमाज के सिद्धान्त कायम किये हैं उनमें ईश्वर जगत्कर्तृत्व वगैरह को छोडकर बाकी सब जैनियों के सिद्धान्त से बाहर नहीं हैं। फिर स्वामी जी कोई सर्वज्ञ या ईश्वर के अवतार भी तो नहीं थे जो उनके वचन प्रमाण ही माने जावें।

तब वे सज्जन कहने लगे-"कुछ भी सही आखिर आर्यसमाज ने हिन्दू धर्म और समाज की जो सेवा की है वह किसी से छिपी नहीं है। वेद भाष्यादि के सम्बन्धमें मैं कुछ नहीं कह सकता। कारण मैं स्वयं इस विषयमें ज्ञान नहीं रखता फिर भी स्वामी कर्मानन्दजीने अच्छा नहीं किया।

इन बातोंके बाद फिर कुछ अन्य बातें शुरू होगईं इससे पता लगता है कि अपने २ सम्प्रदाय से लोग किस तरह पक्षपातान्ध होकर चिपटे रहना पसंद करते है। इसी पक्षपातके वश होकर बड़े २ ज्ञानियों तक ने न जाने कितनी बार सत्यधर्मका खून किया व कर रहे हैं। और असल को नहीं पहुंचने असल में यह पक्षपात ही है जो हमें सत्यके दर्शन नहीं होने देता और संसारमें विद्वेषाग्नि को परस्पर भड़काकर कई विसंवाद उत्पन्न करता है। सत्यकी खोज हल करना एकतो वैसे ही आसान काम नहीं फिर जिसमें

यदि पक्षपात का चश्मा अपने मानसिक नेत्रों पर लगा लिया जाय तब तो पूछना ही क्या है ? ऐसे पक्षपाती लोग ही शास्त्रों के अर्थ का अनर्थ करने में जरा भी संकोच नहीं करते। शायद एक बार एक सभा में गीता के निम्न वाक्य का गलत अर्थ करते हुए एक सज्जन ने कहा था—

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

अर्थात—"भाइयो ! जिस २ धर्म में हम लोग पैदा हुए हैं उसमें मर जाना ही श्रेष्ठ है और कल्याण कारी है क्योंकि पर धर्म अर्थात् जैन धर्मादि हमेशा भयप्रद है।"

उक्त अर्थ समझा कर उन्हों ने बडे जोरों के साथ भोली जनता पर शान जमाते हुए अपने रंग में रंगने की चेष्टा की, किन्तु जब उनके अर्थ को गलत कहते और स्वार्थ पूर्ण बतलाते हुए यह अर्थ किया गया कि "स्व का अर्थ आत्मा है और आत्म धर्म का सेवन करते हुए मृत्यु कल्याण कर है व पर धर्म यानी शरीरादि में आत्म कल्पना और आसक्ति भयावह है।" तब वे सज्जन अपने शब्द वापिस लेने लगे। सच मुच सत्य की खोज करने के लिये मानव हृदय निष्पक्ष होना ही चाहिये। अन्यथा हम जिसकी खोज करने निकले हैं उसकी जगह कुछ का कुछ ही पकड़ कर रह जायगे।

यदि वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो जैन दर्शन में स्याद्वाद एक ऐसा है जो मानव की सांप्रदायिक-संकुचित दृष्टि कोण के द्वारा होने वाले एकांगिक-ज्ञान को ही पूर्ण सत्य समझने की जगह वस्तु की विशाल दृष्टि कोण से निष्पक्ष होकर देखने, एवं वस्तु के अनेक गुणों को खोजने में सर्वथा अनुपमेय है। विश्व में फैली हुई साम्प्रदायिकता या कट्टरता ही एकान्त वाद है जो हमें सत्य से दूर हटाकर अपने दृष्टिकोण को ही चाहे वह असत्य ही क्यों न हो सत्य और दूसरों के सत्य दृष्टिकोण को भी असत्य कहने और अंधविश्वास करने के लिये प्रेरित करती है। यदि विश्व निष्पक्ष होकर सत्य ग्रहण करने के लिये अग्रसर होकर अपने अंध विश्वासों का त्याग कर ज्ञान प्रकाश में अपनी भूलों और भ्रमों का संशोधन करने को तयार हो जाय तो मदांध सांप्रदायिकता का नाश होने में देर न लगे। इसी विशाल और निष्पक्ष दृष्टि कोण का नाम स्याद्वाद या अनेकान्त वाद है जिस के ग्रहण करने के लिये स्वामी कर्मानन्द जी ने संकुचित सांप्रदायिक दृष्टि छोड़ निष्पक्ष हो कर कदम बढ़ाया है। सचमुच स्व० कुँवरदिग्विजय सिंह जी के बाद स्वामीजी का साहस सर्वथा अभिनंदनीय है। आशा है कि "मनुष्यको सत्य ग्रहण और असत्य त्याग करने के लिये सर्वदा उद्यत रहना चाहिये" वाले सिद्धान्त के कायल महाशय गण उक्त स्वामी से सत्य ग्रहण और असत्य त्याग करने की समुचित शिक्षा ग्रहण करेंगे।

मिथ्या संसार

यह पैठ अजब है दुनिया की,
और क्या क्या जिन्स इकट्ठी है।
याँ माल किसी का मीठा है,
और चीज़ किसी की खट्टी है।
कुछ पकता है कुछ भुनता है,
पकवान मिठाई पट्टी है।
जब देखा खूब तो आख़िर को,
नै चूल्हा भाड़ न भट्टी है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनियाँ को,
यह धोके की सी टट्टी है ॥१॥

कोई ताज ख़रीदे हंस-हंस कर,
कोई तख़्त खड़ा बनवाता है।
कोई कपड़े रङ्ग पहिने है,
कोई गुदड़ी ओढ़े जाता है।
कोई भाई, बाप, चचा नाना,
कोई नाती पूत कहाता है।
जब देखा ख़ूब तो आख़िर को,
ना रिश्ता है ना नाता है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को,
यह धोके की सी टट्टी है ॥२॥

कोई सेठ महाजन लाखपती,
बज़्ज़ाज़ कोई पंसारी है।
याँ बोझ किसी का हलका है,
और खेप किसी की भारी है।
क्या जाने कौन ख़रीदेगा,
और किसने जिन्स उतारी है।
जब देखा ख़ूब तो आख़िर को,
दल्लाल न कोई ब्योपारी है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को,
यह धोके की सी टट्टी है ॥३॥

कोई बनिया है कोई तेली है,
कोई बेचे पान तमोली है।
कोई सर पर रख कर खांचे है,
कोई बांधे फिरता झोली है।
कहीं गोन है ढोला नाजों की,
कहीं ठेला-ठेली खोली है।
जब देखा ख़ूब तो आख़िर को,
यकदम की बाला ढोला है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को,
यह धोके की सी टट्टी है ॥४॥

कोई बेचे भङ्ग शराब अफ़ियूं,
कहीं दूध दही की फेरी है।
कोई पल्ला सर पर लाता है,
कोई लादे बैल मुकेरी है।
कोई झगड़े अपने आगह पर,
यह मेरी है यह तेरी है।
जब देखा ख़ूब तो आख़िर को,
नै मेरी है नै तेरी है।
गुल शोर बबूला आग हवा,
और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को,
यह धोके की सी टट्टी है ॥५॥

—महाकवि नज़ीर

कांग्रेस और मुसल्मान

(लेखक—मुहम्मद जैनुल आबदीन एम० एस-सी०, एल० एल-बी०)

भारतवासी मुसलमान भारतवर्ष में रहते हुये भी अरब,, तुर्किस्तान की ओर देखा करते हैं। इसी कारण वे भारतवर्ष की उन्नति के लिये कांग्रेस द्वारा बतलाये गये मार्ग का अनुसरण न करके अपना सांप्रदायिक रोड़ा अटकाते हैं। इस विषय में विद्वान लेखक ने अच्छा प्रकाश डाला है। लेखक मुसलमान हैं इस कारण इस लेख का महत्व और भी अधिक है। पाठकों को वर्तमान नीति से परिचय कराने के लिये उक्त उद्धृत लेख यहां प्रकाशित किया जाता है।

लोग कहते हैं कि कांग्रेसकी पचासवीं सालगिरह मनाओ, वही इस मुल्क की सबसे बड़ी सयासी इन्स-टीट्यूशन है। इसके मुतल्लिक मेरा ख़याल कुछ और ही है। मेरे कहने का मंशा यह नहीं है कि कांग्रेस इस बदकिस्मत मुल्क की सयासी इन्सटी-ट्यूशन नहीं है। क्या ही अच्छा हो अगर इस मुल्क में सिर्फ एक ही इन्सटीट्यूशन हो और वह कांग्रेस हो। कांग्रेस की शुरूआत जिस मुद्दा को सामने रखकर की गई थी, अफसोस है कि आगे चलकर कांग्रेस के लीडरों और रहनुमायों ने उस मुद्दा को भुला दिया। कांग्रेसकी सबसे बड़ी गलती लखनऊ पैक्टपर दस्तखत करना थी। लखनऊ पैक्ट पर दस्तखत करके कांग्रेस ने पहली मर्तबा एक फिर्केवाराना-जमात का वजूद माना और दूसरे मानों में अपने आपको भी महज एक जमात के दर्जे पर गिरा दिया। मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा दोनों ही कांग्रेस के वजूद के लिये नुकसानदेह हैं और जहां एक मर्तबा एक जमात के साथ समझौते की बातचीत की, कि दूसरी जमात की जड़ मजबूत हुई।

कांग्रेस ने दूसरी गलती तब की, जब खिलाफत के नीचे मजहबी और नीम-सयासी मस्ले को अपने प्रोग्राम में जगह दी। कांग्रेस कायम करने का मकसद इस मुल्क के बाशिन्दों की बेहबूदी के लिये खड़ा रहना था, न कि इस मुल्क की किसी खास जमात के बाहरी हममजहब लोगों के लिये खड़ा होना। इसका नतीजा यह हुआ कि कांग्रेस की "माँगें" बिलकुल गैरमुनासिब समझी गयीं और उसने एक और मौके को हाथसे खो दिया।

इसके बाद कांग्रेस ने गांधी जी को विलायत भेजा, वहां उन्होंने मि० जिन्ना को ब्लैंक चेक दे दिया। वह खुद मि० जिन्ना से मिलने उनके होटल में गये और उनके सारे दोस्तों ने ऐसा रुख अख्तियार कर लिया कि बगैर हिन्दू-मुस्लिम समझौते के किसी तरह की इस्लाह की स्कीम अधूरी रहेगी। नतीजा यह हुआ कि हिन्दुस्तानके मालिकों ने समझ लिया कि इन लोगों की कमजोरी कहां है। बस, हमें यह फिर्केवाराना फैसला हासिल हुआ, जिसकी वजह से हम हमेशा के लिये आपस में बांट दिये गये। हमें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि जब तक हम दोनों के बीच में एक तीसरी पार्टी मौजूद है, इसमें न समझौता होगा, न

मेल। मगर कांग्रेस इसपर भी बेदार न हुई और उसने इस फैसले के मुतल्लिक एक ऐसा अजीब रुख अख्तियार कर लिया कि जिसे कोई दानिशमन्द इन्सान ठीक न समझेगा। न सिर्फ इतना ही, बल्कि जब इन सारी ज्यादतियों के जिम्मेदार मि० जिन्ना देहली तशरीफ लाये, तो कांग्रेस के लीडर मि० आसफअली ने मुसलमानों की एक मीटिंग में खुल्लमखुल्ला सलाह दी कि "इन बुजुर्ग का पल्ला पकड़ो, यही तुम्हें फतह दिलवायेंगे।" और दूसरे दिन फिर उन्होंने कौमपरस्ती और मुल्कपरस्ती के तराने गाने शुरू कर दिये।

कांग्रेस ने अब भी आंखें न खोलीं। अपनी पालिसी की गलती मंजूर करने की बजाय आखिरी वक्त तक उसे निबाहा। जब कांग्रेस पार्टीका रेज्योलेशन मुसलमानोंने सरकार के साथ मिलकर गिरा दिया तो कांग्रेस पार्टीने सिर्फ सरकारको हराने को मि० जिन्ना के रेज्यूलेशन की ताईद की। यह उनकी सबसे बड़ी गलती थी और उससे फिर्केवाराना जड़ मजबूत होगई।

दरअसल, कोई भी फिर्केवाराना जमात चाहे वह मुस्लिम लीग हो, चाहे हिन्दू महासभा, मुल्कके मफादके लिये खतरनाक है। जबतक हमलोगों में से कुछ एक बेपढ़े लिखे भाइयों को यह बतलाते रहेंगे कि तुम्हें अपने पड़ोसी से खतरा है, तबतक मेल होना नामुमकिन है। हमें आपसमें जो जुदागाना चुनाव के अख्तियार दिये गये थे, उनका नतीजा यह हुआ कि असेम्बली और कौंसिल में ऐसे लोग पहुंचे जिन्होंने दूसरे के मजहब को जान बूझ कर नुकसान पहुंचानेकी कोशिशकी। नतीजा यह हुआ कि आपसमें कमीदगी घटने की बजाय बढ़ गई। और अब और बढ़ेगी।

"मजहब खतरे में है—" क्या सचमुच मजहब खतरे में है? हम लोग एक हजार सालों से एक साथ रहते चले आरहे हैं और किसीने किसीके मजहबको नेस्तनाबूद नहीं किया और खसूसन इस्लाम को किसका डर है? वह खुद अपनी हिफाजत कर सकता है। हमलोग जब हिन्दुस्तान में आये तो कितने थे?

मुट्ठीभर। क्या हम इतने तीसमारखां थे कि सारे हिन्दुस्तान के आदमी हमसे थर्राते थे? दरअसल बात यह थी कि हम यहां के लोगों के साथ दूधमें बतासेकी तरह घुल मिल गये। फिर हम सभी तो बाहरसे आये भी न थे, हममें ज्यादातर मुसलमान यहीं के बाशिन्दे थे।

कांग्रेसके आगे बहुत बड़ा काम पड़ा है। जब तक वह इसी कोशिशमें रहेगी कि मुसलमानों को खुश करके उन्हें अपने साथ रक्खा जाय तबतक वह उन्हें खुश करने के इरादे में नाकामयाब रहेगी। अगर कांग्रेस एक मर्तबा हिम्मत करके यह ऐलान करदे कि जुदा गाना चुनाव चाहे वह किसी भी शक्ल में क्यों न हो, बुरा है और मिटना चाहिये तो जो सच्चे मुसलमान कांग्रेस के साथ हैं वे तबभी रहेंगे और बाकी मुसलमानों को भी धीरे २ पता लग जायगा कि क्या सचमुच उनका प्यारा मजहब खतरेमें है या कुछ लोग अपने पुलाव और बिरयानी के लिये कौम और मुल्क के मफादकी कुरबानी कर रहे हैं।

मेरे हम-मज़हब भाइयोंमें इन्तहा दर्जेकी गरीबी है और उन्हें अभी मसजिद के आगे बाजा बजाने और गाय-कुशी करने के मस्लों की बनिस्बत कहीं अहम मस्ले हल करने हैं। ऐसे बेफिक्र, ऐसे फिजूलखर्च और कहीं दिखाई न पड़ेंगे। मैं पूछता हूं, ये लोग अपनी मस्जिदों को क्या शहद लगा कर चाटेंगे, जब उन के बदन पर कपड़ा तक न होगा। हिन्दुस्तान का असली मस्ला है उसकी गरीबी। यह मज़हबी मस्ला जानबूझकर इस लिये खड़ा किया गया है कि जिस से हम लोगों की तवज्जो असली मस्ले की तरफ रुजू न हो। हम लोग भी कैसे बेवकूफ हैं, जो शहीदगञ्ज जैसे मामलेपर लड़ते मरते हैं, हालांकि हम जानते हैं कि शहीदगञ्ज जैसी लाखों मस्जिदें जिस मुल्क में है वह मुल्क ही हमारा नहीं है। हम लोग डा० इकबाल साहब के साथ गा गा कर कहते हैं कि चीन भी हमारा है और अरब भी हिन्दुस्तान भी और खुरासान भी, हालांकि हम जानतेहैं कि डा० मुहम्मद इकबाल सिर्फ एक वकील है और शायरी भी किया करते हैं।

मैं अपने ऐसे बहुत से दोस्तों को जानता हूँ जो कहते है कि अगर हिन्दुस्तानपर कोई बाहरी मुसलमानी ताकत हमला आवर होगी तो हम उसका साथ देंगे। देहली के एक नामी फकीर केसतांजे ने, जो अलीगढ़ युनीवर्सिटी का प्रेसिडेण्ट भी है, एक बार मुझसे कहा कि मैं तो इस्लाम की लड़ाई लड़ना चाहता हूं और अरब में जा कर। हम लोग यह नहीं जानते कि हमारे बारे में बाहरी मुसलमानों का क्या ख्याल है। हम लोग शायद १९१८का जमाना भूल गये, जब हमने पागलपन के झोंके में आकर हिजरत की थी। अफगान सरकार ने हमें डंडे मार-मार कर अपनी सरहद के बाहर खदेड़ दिया। हाल ही में ईराक ने कानून पास किया है कि हिन्दुस्तानियों से शहरियत के अख्तियारात छीन लिये जांय। इन हिन्दुस्तानियों में ९५ फी सदी मुसलमान हैं और इतने पर भी हम अरब मे जाकर इस्लाम की लड़ाई लड़ने का ख्वाब देखते है। जरूरत इस बात की है कि हम सब लोग मिल कर हिन्दुस्तान की बहबूदी पर गौर करें। हमारा सच्चा रहनुमा जवाहरलाल है, जो न हिन्दू है न मुसलमान, बल्कि हिन्दुस्तानी है। वह हम लोगों को लड़ते हुए देखता है और कलेजा मसोस कर रह जाता है। वह अच्छी तरह समझता है कि मुसलमानों को जिस चीज की जरूरत है वह शहीदगञ्ज की मसजिद या खानबहादुर अल्ताफ हुसैन के लड़के के लिये इण्डियन सिविल सर्विस की नौकरी नहीं है, बल्कि भूखे किसानों के लिये मुट्ठीभर दाने है।

अगर हम लोग, हिन्दू और मुसलमान दोनों यह चाहते है कि हमारी सयासी जिन्दगी बेहतर हो, हमारी माली हालत ज्यादा अच्छी हो और हम एक खुद्दार कौम की हैसियत से जिन्दगी बसर करें तो हमें एक-न-एक दिन मुस्लिम लीग और हिन्दू महासभा, दोनों को खैरबाद करना होगा, जिन्ना और मुंजे जैसे रहनुमाओं को सलाम करना होगा और जुदागाना इन्तखाब के शैतान के लिये लाहौल पढ़ना होगा। असली मस्ला इस बात का नहीं है कि हमें फलां सूबे में कितनी सीटें मिलें और फलां महकमे में कितनी जगहें हासिल हों। अगर यह फर्ज भी कर लिया जाय कि मुसलमानों को सारे महकमों में उन

की आबादी के लिहाज से जगहें दी जायगी, तो भी इससे उन करोड़ों मुसलमानों का क्या भला होगा जो एक दिन खूब गुलछर्रे उडाते हैं और दूसरे दिन भूखे रहते हैं ? जब तक मुसलमानों की जहनियत में इन्कलाब न किया जायगा, तबतक उनकी हालत न सुधरेगी। इसके लिये कुछ चुने हुए काम करने वालों को आगे बढ़ना चाहिये और अपनी मिहनत में बेदारी का अलम खड़ा करना चाहिये।

कांग्रेस का फर्ज है कि वह मुसलमानों और हिन्दुओंके बीच आपसी झगड़े का भूत भगा देवे असल बात यह है कि हिन्दू-मुसलमान, दोनों एक दूसरे को शक की निगाह से देखते हैं। जब तक हम दोनों एक दूसरे को अलग और नीचा समझते रहेंगे, तबतक हिन्दू-मुस्लिम मस्ला जो है, वही रहेगा।

कांग्रेस ने एक और मस्ले को अपने हाथ में लिया है और वह है जबान और खत का मस्ला। जहां तक जबानका ताल्लुक है, हिन्दी या हिन्दुस्तानी और उर्दू में कोई बहुत बड़ा फर्क नहीं है। मगर खत के सवाल पर हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच बहुत बड़ा तफरका मौजूद है। बहुत से दोस्तों ने रोमन खत को अपनाने की सलाह दी है मगर मेरे खयाल से तो फारसी और हिन्दी खत का मस्ला तब भी हल न होगा। अभी तो हिन्दी और बंगला आदि जबानों के खतों का मस्ला ही हल होने में नहीं आता। मेरी जाती राय यह है कि उर्दू जबान के फारसी खत को जो मुसलमान अपनाये रखना चाहें, अपनाये रहें, हां, हिन्दुस्तान की सारी जबानों के नुमाइन्दे इकट्ठा हो कर यह तय कर डालें कि दरअसल कौनसा खत हिन्दुस्तान की जरूरतों और सहूलियत के लिये मौजूं रहेगा। इस कांफ्रेन्स में उर्दू जबान के नुमाइन्दे भी शामिल रहें। मौजूदा हिन्दी खतमें बहुत कुछ इस्लाह और निखर की जरूरत है, मगर यह जरूर कहना पड़ेगा कि कई लिहाज से यह खत रोमन खत से भी ज्यादा मुकम्मिल है। इस खत की तारीफ यही है कि इसमें जो लिखा जाय, वही पढ़ा जा सकता है। यह रुतबा और किसी खत को हासिल नहीं है।

—विश्वमित्र

विनोद

एक भुलक्कड अपने एक मित्र के साथ किसी भोज में सम्मिलित होने को जा रहा था। मार्ग में उसे कोई बात याद आगई। उसने अपने मित्रसे कहा-

"मैं अपनी घड़ी भूल आया हूं।"

तदुपरान्त उसने अपनी वास्कट की जेब में हाथ डाला और घड़ी निकाल कर कहा—

'अच्छा। अभी तो सवा सात भी नहीं बजे है। मैं घर जाकर घड़ी ला सकता हूं।"

आभार प्रदर्शन

मेरे धर्म परिवर्तन पर मुझे मेरे अनेक परिचित एवं अपरिचित बन्धुओं ने पत्र लिखे हैं। इनमें से किसीमें मुझे धन्यवाद दिया गया है तो किसी में धन्यवाद के साथ मुझसे जैनदर्शन के विशेष स्वाध्याय एवं जैनधर्म प्रचारकी प्रेरणा भी कीगई है। कुछ ऐसे पत्र भी है जिनमें मेरे इस कार्यसे असन्तोष प्रगट किया है। इस प्रकार के पत्र मेरे कुछ परिचित आर्यसमाजी बन्धुओं के हैं।

जहां तक अवसर मिलता है मैंने सभी बन्धुओं के पत्रों के उत्तर दिये हैं किन्तु फिरभी सम्भव है कुछ पत्र ऐसे भी रह गये हों जिनके उत्तर मैं न दे सका होऊं अतः इस नोट द्वारा मैं यह प्रकाशित कर देना आवश्यक समझता हूं कि मैं बिना किसी भेदोपभेद के इन सबही बन्धुओं का आभारी हूं। आशा है वे सब आगे भी मुझसे ऐसाही प्रेमभाव बनाये रक्खेंगे।

मेरे बन्धु जिन्होंने मुझसे विशेष स्वाध्याय और धर्म प्रचार की प्रेरणा की है यह जानकर प्रसन्न होंगे कि मैंने आत्म-सुधार के लिये ही ऐसा किया है। मैं अपने जीवनके समयको अधिकतर स्वाध्यायमें ही व्यतीत कर रहा हूं तथा मैंने अपने विचार परिवर्तन के साथ ही जैनदर्शन का अध्ययन प्रारंभ कर दिया है ये सबही ग्रन्थ जिनका आजकलमैं स्वाध्याय कर रहा हूं मैंने पहले भी देखे थे किन्तु मेरी इन दोनों दृष्टियों में पूर्व और पश्चिमका सा भेद है।

अब मैंने इनका ज्यों २ स्वाध्याय किया है मेरी धारणा उतनी निर्मल होती जारही है।

जैनदर्शन के स्वाध्याय के साथ ही साथ जहां तक सम्भव होगा मैं जैनधर्म प्रचार के कार्य में भी जैन समाजका सहयोग करूंगा। यहां अपने चिर परिचित आर्य बन्धुओं से भी दो शब्द कह देना अनावश्यक न होगा। आप लोगोंसे मुझे यही कहना है कि आपको मुझसे असन्तुष्ट नहीं होना चाहिये। किन्तु मेरे विचार परिवर्तन के कारण पर विचार करना चाहिये।

मैंने आर्यसमाज के सिद्धान्तों में जिन त्रुटियोंको और जैनदर्शन में जिस मौलिकता को देखा है क्या यह सत्य है? यदि यह सत्य है तो मैं आप लोगोंसे प्रार्थना करूंगा कि आप भी मेरे सहयोगी बनें। यदि आपको मेरी इस धारणा में त्रुटि प्रतीत होती होतो उसको मुझे समझानेका प्रयत्न करें। जहां अब मैं हठी नहीं रहा हूं वहां अब अन्ध विश्वास भी मेरेसे दूर होचुका है। जैन समाज तो मेरे लिये अब नवीन समाज है। आपसे और आपकी समाज से तो मुझे पच्चीस वर्ष का मोह है। जब मैंने अपने विश्वासके लिये उस ही की परवा नहीं की है तब यह कैसे हो सकता है कि आपकी युक्तियोंकी सत्यता का मुझ पर प्रभाव न पड़े।

आशा है मेरे इस निवेदन से मेरे चिर सहयोगी आर्य बन्धु अपने क्षोभको शान्त करेंगे और मेरे इस आर्यसमाजको छोड़ने और जैनधर्म धारण के कारण पर विचार कर लाभ उठावेंगे।

अन्तमें एक बार फिर मैं अपने सबही बन्धुओंका आभार स्वीकार करते हुये अपने इस वक्तव्यको समाप्त करता हूं।

—स्वामी कर्मानन्द

महगांव कांड पर हमारे दयालु नेता

दिगम्बर जैन समाज की अवनति का खास कारण यह है कि हमारे यहां कुर्सियों पर बैठने के लिये सब कोई तयार है सेवा के लिये कोई आगे नहीं आता। हमारे यहां के बड़े आदमियों का बड़प्पन केवल इसमें है कि उन्हें सिंहासन पर बैठा कर चापलूसों द्वारा उनका सच्चा झूठा असीम गुण गान किया जावे। इस अनुचित क्रिया से शायद चापलूसों का कुछ स्वार्थ सिद्ध हो जाता हो किन्तु समाज का कुछ भला नहीं होता। उलटी हानि यह होती है कि सिंहासनारूढ़ व्यक्ति अकर्मण्य बनजाता है उसके हृदय में सामाजिक सेवा का भाव उदय नहीं होने पाता क्योंकि बिना कुछ करे धरे ही चापलूस लोग उसका महिमागान कर दिया करते है। इसी कारण दिगम्बर जैन समाज निर्बलताओं का शिकार होता जा रहा है।

हमारे नेताओं को सिक्ख जाति से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। अभी लाहोर में हिन्दू मुसल्मानों के दंगे हुये जिसमें कुछ हिन्दू सिक्ख और कुछ मुसलमान मारे गये। शान्ति रक्षा के लिये जिला मजिष्ट्रेट ने लाहोर की सीमा में कोई भी शस्त्र लेकर चलने का निषेध कर दिया तदनुसार सिक्ख भी लाहोर में अपनी कृपाण लेकर नहीं चल सकते। कृपाण सिक्खों का धार्मिक चिन्ह है जो किसी भी दंगे के समय उनसे नहीं छीना गया था। इस नई रुकावट को दूर करने के लिये पहले तो प्रमुख सिक्खों का डेपुटेशन पंजाब गवर्नर से मिला जब गवर्नर ने उनकी मांग स्वीकार न की तब उन्हों ने इस पहली जनवरी से कृपाण के लिये लाहोर में सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया।

इस पहले सत्याग्रही जत्थे के जत्थेदार पंजाब कौंसिल के वाइस प्रेसीडेन्ट एवं सरकारी उपाधि प्राप्त सरदार बहादुर बूटासिंह जी थे।

यह ताजा दृष्टान्त दि० जैन समाज के सामने आदर्श उपस्थित करता है कि सामाजिक सेवाके लिये साधारण स्वयं सेवक के समान हमारे बड़े नेताओं को सबसे पहले आना चाहिये जिससे समाज में उत्साह उमड़ पड़े। कुर्सी पर बैठने के लिये सब से आगे और समाज सेवा के लिये सब से पीछे रहने वाले लोग जिस समाज का नेतृत्व करें उस समाज का अधःपतन हो जाता है और हो भी जाना चाहिये।

ग्वालियर स्टेट के महगांव नामक ग्राम में मन्दिर लूट कर जो कुछ अजैन दुष्टों ने अत्याचार किया है उसके लिये दो मास हो जाने पर भी राज्य की ओर से कुछ सन्तोषजनक कार्य नहीं हुआ वहां के पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ने इस विषय में जो बयान निकाला है वह कुकृत्य पर पर्दा डालने वाला है। राज्य की ओर से न्याय होने में इतनी ढील होने का कारण

भी हमारे अकर्मण्य कुर्सीनशीन नेता ही हैं। यदि ये बड़े लोग इस आन्दोलन में आगे आते तो स्टेट के उच्च अधिकारी इस दुर्घटना का महत्व अनुभव करते। 'बिना रोये माता भी दूध नहीं पिलाती'।

खेद है जो सर्वस्व त्यागी, शूरवीर क्षत्रियों का धर्म था वह आज पैसे के दास बनियों के हाथ में पड़ कर अपमानित हो रहा है। अब भी समय है कि कुर्सीनशीनों को निद्रा भंग कर इसके लिये तुरंत आगे आना चाहिये। अब कलम को कलमदान में रखकर पैरों में जूते पहन लेने चाहिये जूते दूर पड़े हों तो नंगे पैर ही ग्वालियर चल देना चाहिये। देखें इस समय कौन समाजहितैषी सिद्ध होता है। क्या यहां यह चरितार्थ होता है—

"रंज लीडर को बहुत है लेकिन आराम के साथ"

—अजितकुमार

—आवश्यकताएं—

'सत्तास्वरूप' जिसका दूसरा नाम 'सत्स्वरूप' भी है इस वर्ष जैनदर्शन के ग्राहकों को उपहार में भेट किया जायगा। इस ग्रंथ के रचयिता का निश्चित नाम अभी तक ज्ञात नहीं हुआ है। संभवतः इसके निर्माता स्व० पं० भागचन्द्र जी होंगे। जिन शास्त्र भण्डारों में यह ग्रंथ मौजूद हो उनके प्रबन्धक महानुभाव सूचित करें। साथ ही पं० भागचन्द्र जी का जीवनचरित जिनको ज्ञात हो वे भी कृपा कर सूचित करें। पं० भागचन्द्र जी संभवतः मंदसौर रहे थे अतः मंदसौर के उत्साही भाई इस कार्य में सहयोग देने का अनुग्रह करें।

—अजितकुमार

आवश्यकता—हिन्दी भाषा के कम्पोजीटर हम को जरूरत है जो कम्पोजीटर आना चाहें वे पत्र व्यवहार करें साथ ही यह भी लिखें कि पैका टाइप में आठ घंटे के भीतर वे जैनदर्शन का कितना कम्पोज कर सकते हैं।

अजितकुमार जैन C/o अकलंक प्रेस मुलतान सिटी

—यदि किसी जैन शास्त्र लेखक के पास 'मनमोहन पंचशती', तथा 'पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय' पं० मक्खनलाल जी की टीका वाला लिखा हुआ तयार हो तो सूचित करें अथवा शुद्ध लिख कर दे सकता हो तो पत्र द्वारा सूचित करें। लिखे हुए दोनों ग्रंथों का मूल्य तथा अक्षरों का नमूना लिख भेजे।

—अजितकुमार जैन

अकलंक प्रेस मुलतान सिटी

—निवेदन—

जैनदर्शन यहां पर अच्छी तरह जांच कर रवाना किया जाता है किन्तु फिर भी कुछ महानुभावों को पत्र न पहुँचने की शिकायत आया करती है। हम उनकी आवश्यकता पूर्ण कर देते है किन्तु उनको अपने पोष्ट आफिस से भी तलाश करनी चाहिये।

जिन ग्राहकों का मूल्य समाप्त हो जाता है उन को छपी हुई चिट द्वारा दो बार सूचना दी जाती है तदनुसार ग्राहकों को या तो मनीआर्डर द्वारा अपना मूल्य भेज देना चाहिये जिसमे वी० पी० द्वारा उन्हें चार आने और अधिक न देने पड़ें। यदि वे मनीआर्डर न भेज सकें तो यहां से भेजी गई वी० पी० उन्हें छुडा लेनी चाहिये उसे न लौटाना चाहिये। अथवा वे ग्राहक नहीं रहना चाहते तो उन्हें कार्ड द्वारा इनकार कर देना चाहिये।

देश विदेश समाचार

—ग्रामोद्धार— अपनी हीरक जयन्ती पर बड़ौदा महाराज ने अपने राज्य के ग्रामों की उन्नति के लिये एक करोड़ रुपये निकाले हैं।

—अछूतों के नेता भास्कर ने सिक्खों की प्रधान समितिको तार द्वारा सूचना दी है कि अछूतों के १० नेता सिक्ख धर्म ग्रहण करेंगे। डा० अम्बेडकर भी सिक्ख धर्मको अच्छा समझते हैं।

—चाँदी की मंदी के कारण बम्बई के सराफा बोर्डने विदेश से चाँदी मंगाना बन्द कर दिया है।

—काश्मीरमें एक हत्याके सिलसिले में २८ वर्ष तक एक मुकद्दमा चलता रहा अब उसका फैसला हुआ है। अभियुक्त को ७ वर्ष की सजा हुई है।

—भारतीय युवक फीरोज पी० नाजिरने हवाई जहाज के लिये एक आविष्कार किया है जिससे वह ३०० मील प्रतिघंटा की चालसे बिना किसी ड्राइवर के उड़ सकेगा।

—वर्तमान बड़ौदा महाराज एक किसान के लड़के थे।

—नवीन वर्षकी उपाधि वर्षा में दयाल बाग आगरा के संस्थापक, राधा स्वामी गुरू को 'सर' की उपाधि दीगई है।

—जर्मनी के कून्स नामक गाँवमें एक स्त्री के एक साथ चार लड़कियाँ उत्पन्न हुई हैं।

सिक्खोंने कृपाण के लिये लाहौर में जो सत्याग्रह जारी किया है। उसमें तीसरे दिनके जत्थेदार मस्तानासिंह ऐडवोकेट थे। चौथे दिनके सत्याग्रही जत्थे के नेता अवतारसिंह बैरिष्टर हुए।

—अमेरिकाने अपना सोना निकालनेका निश्चय किया है अतः आशा है सोना सस्ता होजाय?

—हिन्दू महासभा का अधिवेशन पूना में हुआ जिसमें शंकराचार्य ने छूआछूत निषेध का प्रस्ताव रक्खा—जो सर्व सम्मतिसे पास होगया। केवल दो वोट विरुद्ध थे। मालवीय जीने सहभोज और अन्तर-जातीय विवाह का विरोध किया।

नया अजायबघर— अमेरिका ने एक नये ढंगका विचित्रालय बना डाला है। उसमें उन महापुरुषोंकी स्मृति स्वरूपिणी वस्तुएं रक्खी जारही हैं जिन्होंने स्वावलम्बन पूर्वक सफलता प्राप्त की है। कारनेगी नामक धन कुबेरका नाम आपने सुना होगा किन्तु वास्तविकता यह है कि वह एक जुलाहेका लड़का था उपर्युक्त विचित्रालयमें असंख्य द्रव्य राशि प्राप्त इस जुलाहेके लड़केका वह कलम रक्खा गया है जिससे उसने अपने जीवन में पहली बार बैङ्क के चिक पर हस्ताक्षर किये थे। इसी प्रकार अमरीका के (नहीं, संसार भरके) दूसरे धन कुबेर राक फेलरकी स्मृति में वह डालर रक्खा गया है जो उसने अपने जीवनमें पहली बार उपार्जित किया था। ग्रामोफोन इत्यादि अनेक आविष्कारोंका संसारमें छोड़ जानेवाले एडीसनकी यादगार का काम देगा वह हथोड़ा जिससे किसी समय वह रेलकी पटरी पर सिलीपर जोड़ने का काम किया करता था। पाण्डरबिल शुरू में अखबार बेचनेका काम करता था अतः इस विचित्रालय में उसके बेचे हुये एक अखबार की कापी रक्खी गई है।

—लन्दन का समाचार है कि भारत के भावी वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने अपने लिये साठ सूट सिलानेका आर्डर दिया है जिन्हें वे अपने साथ हाल ही में भारत लायंगे।

देश विदेश समाचार

—[illegible]— अपनी हीरक जयन्ती पर बड़ौदा महाराज ने अपने राज्य के ग्रामों की उन्नति के लिये एक करोड़ रुपये निकाले हैं।

—अछूतों के नेता आम्बेडकर ने सिक्खों की प्रधान समितिको तार द्वारा सूचना दी है कि अछूतों के १० नेता सिक्ख धर्म ग्रहण करेंगे। डा० आम्बेडकर भी सिक्ख धर्मको अच्छा समझते हैं।

—चांदी की मंदी के कारण बम्बई के सराफा बोर्डने विदेश से चांदी मंगाना बन्द कर दिया है।

—काश्मीरमें एक हत्याके सिलसिले में २८ वर्ष तक एक मुकद्दमा चलता रहा अब उसका फैसला हुआ है। अभियुक्त को ७ वर्ष की सजा हुई है।

—भारतीय युवक फीरोज पी० माजिरने हवाई जहाज के लिये एक आविष्कार किया है जिससे वह ३०० मील प्रतिघंटा की चालसे बिना किसी ड्राइवर के उड़ सकेगा।

—वर्तमान बड़ौदा महाराज एक किसान के लड़के थे।

—नवीन वर्षकी उपाधि वर्षा में दयाल बाग आगरा के संस्थापक, राधा स्वामी गुरु को 'सर' की उपाधि दीगई है।

—जर्मनी के कूल्स नामक गांवमें एक स्त्री के एक साथ चार लड़कियां उत्पन्न हुई हैं।

सिक्खोंने कृपाण के लिये लाहौर में जो सत्याग्रह जारी किया है। उसमें तीसरे दिनके जत्थेदार मस्तानसिंह मिकौनेकट थे। चौथे दिनके सत्याग्रही जत्थे के नेता अवतारसिंह बैरिस्टर हुए।

—अमेरिकाने अथवा सोना सिक्काओंका निश्चय किया है अतः आशा है सोना सस्ता होजाय?

—हिन्दू महासभा का अधिवेशन पूना में हुआ जिसमें शंकराचार्य ने छूआछूत निषेध का प्रस्ताव रक्खा—जो सर्व सम्मतिसे पास होगया। केवल दो वोट विरुद्ध थे। मालवीय जीने सहभोज और अन्तर-जातीय विवाह का विरोध किया।

नया अजायब घर— अमेरिका ने एक नये ढंगका विचित्रालय बना डाला है। उसमें उन महापुरुषोंकी स्मृति स्वरूपिणी वस्तुएं रक्खी जारही हैं जिन्होंने स्वावलम्बन पूर्वक सफलता प्राप्त की है। कारनेगी नामक धन कुबेरका नाम आपने सुना होगा किन्तु वास्तविकता यह है कि वह एक जुलाहेका लड़का था उपर्युक्त विचित्रालयमें [illegible] जुलाहेके लड़केका वह कलम रक्खा गया है जिससे उसने अपने जीवन में पहली बार बैंक के चिक पर हस्ताक्षर किये थे। इसी प्रकार अमरीका के (नहीं, संसार भरके) दूसरे धन कुबेर राक फैलरकी स्मृति में वह डालर रक्खा गया है जो उसने अपने जीवनमें पहली बार उपार्जित किया था। ग्रामोफोन इत्यादि अनेक आविष्कारोंका संसारमें छोड़ जानेवाले एडीसनकी यादगार का काम देगा वह हथौड़ा जिससे किसी समय वह रेलकी पटरी पर सिलीपर जोड़ने का काम किया करता था। पम्पलबिल शुरू में अखबार बेचनेका काम करता था अतः इस विचित्रालय में उसके बेचे हुये एक अखबार की कापी रक्खी गई है।

—लन्दन का समाचार है कि भारत के भावी वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने अपने लिये साठ सूट सिलाने का आर्डर दिया है जिन्हें वे अपने साथ हाल ही में भारत लायेंगे।

REGD. No. L.
3459.

—शोलापुर का समाचार है कि सिद्धेश्वर तालाब में एक भीषण दुर्घटना हो गई। करीब २५ मुसलमान ईद मनाने के लिये एक देशी नाव में सवार होकर आ रहे थे कि नाव उलट गया और सारा दल पानी में आ गिरा। पुलिस के एक दल ने आधी रात से पूर्व ११ आदमियों को बचाया जिन में से चार मर चुके थे। आज भी खोज जारी रही और लाशें मिलीं। खोज अभी जारी है। मरने वालों की संख्या १८ ख्याल की जाती है।

योगका चमत्कार—अहमदाबाद अमृतपुर भील आश्रम के पं० विवेकानन्द ने जिंदा एक गढ़े में बन्द हो कर अपने योग की परीक्षा दी। पहले पहल डाक्टरों ने उन की परीक्षा की। तब वह गढ़े में घुस गए। गढ़ा तख्तों से बन्द कर मिट्टी से ढांप दिया गया। ठीक १२ घण्टों के बाद मिट्टी हटा कर पण्डित जी को निकाला गया। वह बिलकुल मुर्दा थे। सांस तक न आती थी। परन्तु १० मिनट के बाद वह बिलकुल होश में आ गए।

—भारत के भूतपूर्व वायसराय लार्ड रीडिंग का ७५ वर्ष की आयु में देहांत हो गया है। आप पहली बार भारतवर्ष में सन १८७४ में आये थे उस समय आप जहाज़ पर खलासी का काम करते थे उस छोटी सी नौकरी से उन्नति करके बेरिस्टरी पास की सन १९२३ में लन्दन में आप लार्ड चीफ जस्टिस बनाये गये कुछ वर्ष बाद भारत में वायसराय होकर आये थे।

—स्वर्ण जयन्ती अवसर पर कलकत्ता में कार पोरेशनकी इमारत पर तिरंगे झन्डे लहराये गये।

—कलकत्ते में राष्ट्रीय झन्डा फहराने वालों पर मुस्लिम भीड़ टूट पड़ी। जिसमें आध घण्टा तक खुला लड़ाई हुई। स्त्रियों और बच्चों को कठिनाई से बचाया गया। मुसलमानों ने मकानों में भी पीछा किया किन्तु हिन्दू युवकों के कारण असफल रहे। ५० आदमी घायल हुये जिनमें २० अस्पताल में हैं।

—मौलाना शौकत अली ने जुबली अवसर पर राष्ट्रपतिका भाषण पढ़ने हुये उत्साह पूर्वक घोषणा की है कि मैं बहुतसे मुसलमानोंको लेकर पुनः कांग्रेस में आऊंगा।

—स्पेन की स्त्रियां में सिगरेट पीने का आम रिवाज है।

—इटली में खाद्य पदार्थों का मूल्य ५० प्रतिशत बढ़ा दिया गया है।

—लाहौर में ५ जनवरी को ५ सिक्खों का जत्था कृपाण धारण करके निकला। जत्थेदार पंजाब कौंसिल के वाइसप्रेसिडेन्ट सरदार बहादुर बूटासिंह थे। पुलिस के रोकने पर जत्थे ने कृपाण न देकर अपने आपको गिरफ्तार करा दिया। जेलमें सिटी मजिस्ट्रेट के सामने पेशी हुई। सिटी मजिस्ट्रेट ने जत्थे को अदालत उठने तक की सज़ा दी।

—मालूम हुआ है कि कोटफतह खां के कई हिन्दू परिवार चले आये हैं। उन्हों ने बताया कि वहां उन्हें बहुत तङ्ग किया जाता है। यह भी मालूम हुआ है कि अन्य हिन्दू परिवार भी कोट फतह खां छोड़ रहे हैं।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिन्टिंग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।
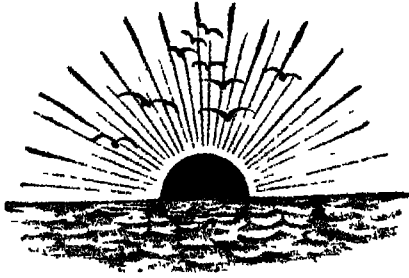
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक १२

वर्ष ३

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≡)

माघ बदी ८ गुरुवार

१६ जनवरी १९३९ ई०

शास्त्रार्थ संघका अधिवेशन

श्री भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघके अधिवेशन के लिये दो स्थानों से निमंत्रण आये थे जिनमें से संघकी कार्यकारिणी कमेटी ने श्री देवगढ़ तीर्थक्षेत्र कमेटी के निमंत्रण को स्वीकार कर लिया है। अतः शास्त्रार्थ संघका वार्षिक अधिवेशन ८-९ फर्वरी को देवगढ़ क्षेत्र पर होगा जिसमें जैनधर्मकी प्रभावना तथा प्रचार के विषय में विचार किया जावेगा। धार्मिक प्रचार में अनुराग रखने वालोंको इस शुभ अवसर पर अवश्य पधारना चाहिये।

निवेदक—
प्रधानमन्त्री, भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ
अम्बाला छावनी।

—धन्यवाद—

श्रीमान लाला नन्दकिशोर जी देहली ने अम्बाला पधारकर शास्त्रार्थसंघ के कार्यालय का निरीक्षण किया। पुस्तकालय तथा कार्यालय को देखकर आप बहुत प्रसन्न हुये। आप संघको १००) सौ रुपये प्रदान करने की स्वीकारता देकर संघके लाइफ मेम्बर बने हैं। एतदर्थ आपको धन्यवाद है।

मैनेजर—भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ
अम्बाला छावनी।

जैन समाचार

—श्रीमती केसरबाई बडवाह ने ब्र० दुलीचन्द जी इन्दौर की प्रेरणा से सुकृत फंड में २५ हजार रुपये दान किये हैं।

—सिवनी का रथोत्सव—इस वर्ष दिसम्बर के अन्तमें सिवनीका रजतअश्व रथोत्सव बड़े समारोह और आनन्द से समाप्त हुआ। इस उत्सव में जबलपुर, सागर, दमोह, ललितपुर आदि ५० स्थानों के महानुभावों ने भाग लिया उपस्थित जनता २००० थी। इस उत्सव में विशेष उल्लेखनीय बात यह हुई कि सिवनी के नवयुवक मंडल ने जो कम खर्ची के ख्याल से वैवाहिक रीति रिवाज परवार जातिके लिये बनाये थे श्रीमान प्रियवर बा० नेमीचन्द्र जी पटोलिया वकील के सभापतित्व में सर्वसम्मति से पास हो गये। इसके लिये 'वर्द्धमान सभा' सिवनी के कार्यकर्ताओं को बधाई है। किन्तु यह उद्योग तब सफल होगा जब कि परवार जाति के श्रीमान लोगों से इनका पालन कराया जावे। क्योंकि बनाने तथा बिगाड़ने वाले बड़े आदमी ही होते हैं। समाचार बहुत विस्तार से छपने आये हैं जो कि स्थानाभाव से नहीं छप सके हैं।

—अजितकुमार

—उदयपुर की श्री पार्श्व दि० जैन विद्यालय आदि धार्मिक संस्थाओं से दिसम्बर मासमें निम्न प्रकार लाभ लिया गया। विद्यालय में ५५ छात्र, बोर्डिंग में ४५ छात्र कन्याशाला में ३० कन्याएं और धर्मशाला में १५० यात्री ठहरे। तथा औषधालय से ११०० जैन अजैन स्त्री पुरुषों एवं बच्चों ने स्वास्थ्य लाभ किया तथा अनुमानतः ५० आर्थिक सहायता प्राप्त हुई।

—श्री अतिशय क्षेत्र पचराई जी का मेला मिती माघ सुदी १ से ५, ता० २५ जनवरी से २९ जनवरी तक होगा जिसमें कई उत्सव होंगे। वाणी भूषण पं० तुलसीराम जी काव्यतीर्थ बड़ौत, पं० राजेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थ, स्वा० कर्मानन्द जी, विदुषीरत्न श्रीमती लेखवती जी देवी एम० एल० सी० अम्बाला विद्यावारिधि पं० देवकीनन्दन जी सिद्धान्त शास्त्री कारंजा आदि उद्भट विद्वानों के भाषण होंगे।

निवेदक— दौलतराम चौधरी उपमंत्री।

—आवश्यकता है—श्री दि० जैन कन्यापाठशाला के लिये एक ट्रेन्ड या हिन्दी मिडिल पास तजुर्बेकार या इन्ट्रेंस पास अध्यापिका की। कम से कम तनख्वाह क्या ले सकती है—पत्र व्यवहार मय सकल सर्टीफिकेट के करें।

—देवीप्रसाद जैन मन्त्री
फीरोजाबाद (आगरा)

—जैनधर्मकी विशेषताएं— हमने प्रचारार्थ छपवाई हैं। जिन महानुभावों को आवश्यकता हो वे)॥। का टिकट भेजकर मुफ्त मंगालें।

—वीरेन्द्रकुमार जैन, सूतकी मंडी, कासगंज।

—आगरे से प्रकाशित होने वाला 'श्वेताम्बर जैन पत्र बन्द हो गया है।

—रावलपिण्डी में श्री सेठ लक्ष्मीचन्द्र जी, फर्म काकू साह एंड सन्ज. का ता० २६ दिसम्बर को स्वर्गवास होगया। आपने १०००० का दान किया है।

अकलङ्कदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भष्मीभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्॥

वर्ष ३ | श्री माघ वदी ७—गुरुवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क १३

"तुम"!

निराकार,

मुक्तिके द्वार, जब तुम इस संसारकी सर्वोत्तम शोभास्वरूप अपनी स्वर्णिम देहको बिखरी हुई छोड असीम में हो चले · ··· ···

मेरा पागल मन तुम्हारे उस स्वरूपकी कल्पना कर रहा है ! · · ··· ·· ··स्वर्णिम उषाकी मनोहारी बखेर; वह मुक्ता-सी सीमाहीन हो अस्तमें होती चली—

एकांत शांति में विहंगों का कलगान ऊर्मियों-सा बलखाता हुआ असीम में मौन होता चला उस गान का जैसे कोई अस्तित्व ही नहीं रहा हो—

और· · · ··निरे निर्जीव पड़े उन कालेशिला खण्डों पर बिलकुल निश्चेष्ट, अडोल, स्थिर शांत-मूर्ति-से तुम।

संसारसे कतई विरक्त।

······ · · ·· ·· ·· · मुक्ति के द्वार—अपनी साकार प्रतिमा के असीम रूपमें परिवर्तन के अन्तिम समय में—

हाँ— उस समय—

—संसार की सर्वोत्तम शोभा स्वरूप अपनी देह को तृणावृत उंह की परिधि में छोड, उसके अस्तित्व के कण कण के लोप होते होते, तुम असीम में हो चले। —निराकार!

सुरेन सकलेचा—इन्दौर
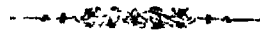
कि शान्ति और क्रान्ति दोनों चक्रके समान चलतीहैं लोग वर्षों तक क्रान्तिकी गोद में रहे पर स्टुअर्ट वंश के प्रारम्भ होते ही फिर लोगों के दिल में क्रान्ति का तूफान उठा और वह बराबर स्टुअर्ट वंश के अन्त होने तक जारी रहा। परिणाम यह हुआ कि स्टु-अर्ट वंश के एक राजा को फाँसी की मौत मरना पडा। और एक को देश निकाले का दारुण दुःख सहना पडा।

कुछ लोगों का भ्रम है "कि क्रान्ति संसार को दुःखी बना देती है। दुनियां के सुख को मटिया मेट कर देती है। लोगों की खैर इसी में है कि हर जगह हर समय और हर बात में शान्ति की ठण्डी लहर दिखाई दे, क्रान्ति की सुलगती हुई चिनगारी मर्त्य लोक से हमेशा परे ही रहे"। पहले इसी बात पर विचार करना ठीक होगा कि क्या संसार के सुख में शान्ति ही शान्ति का हाथ है।

वैदिक शास्त्रके अनुसार सृष्टिकी रचना पर विचार कीजिये। सबसे पहले इस अखिल ब्रह्माण्ड के तीन टुकडे हुये। ब्रह्मा सृष्टिकी रचना करता है। विष्णु उसकी रक्षा करता है और महेश उसका संहार करता है। अगर सृष्टि के इस बनने बिगड़नेका क्रम चालू न रहे तो न तो कोई इस संसार में पैदा हो और न यह नाना प्रकारका रंग ही दिखलाई पडे। अतः वैदिक सृष्टि की रचना क्रान्तिसे हुई है न कि शांति से।

जरा मुक्तिके पहलू पर गौर कीजिए। यह आत्मा निरन्तर मुक्त होनेकी वाञ्छा रखता है। इसलिये कि इसके सब दुनियावी झगडे-झंझटों से छुटकारा होजाय और यह अनंत शांति-समुद्र में गोता लगाने लगे। पर आपने इस पर भी विचार किया कि इस शांति की जड क्या है? इस शांतिका मूलकारण भी क्रान्ति है। मुक्त होनेके पहले इस आत्माको कर्म पटलों से झगडा करना पडता है। विषय वासनाओं से लड़ना पड़ता है। मानसिक विकारों से मुकाबला होता है और न जाने क्या २ द्वन्द्व प्रतिद्वंद्व मचाना पड़ता है तब कहीं जाकर इस आत्माको शांति रस के उत्कृष्ट सुखका आस्वादन करनेका सौभाग्य प्राप्त होता है। और यह भी मत कहिये कि वह शान्ति निरी शान्ति ही है। उसमें भी गुप्त रूपसे क्रान्ति छिपी हुई है। अगर उसमें क्रान्ति की लपेट न हो तो वह शान्ति रस फीका और नीरस लगने लगे। और फिर उससे कहीं आत्मा ऊब न जाय? जैनाचार्यों ने हरएक पदार्थ को परिवर्तनशील बताया है। परिवर्तन की छाप सिद्ध आत्मा पर भी लगी हुई है यदि इसकी छाप सिद्ध आत्मा पर न हो तो वह असत् होजाय अर्थात आत्मा अनात्मा होजाय। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि वह परिवर्तन ही क्रान्ति है। अदल बदल ही को तो आप क्रान्ति कहेंगे।

यह तो अलौकिक क्रान्ति की बात हुई। इस क्रान्ति से हमारा और आपका सम्बन्ध नहीं। अब व्यवहारिक क्रान्ति को लीजिए। इसको हम नाना रूपों में बाँट सकते हैं। सामाजिक क्रान्ति, राष्ट्रीय क्रान्ति, घरेलू क्रान्ति धार्मिक क्रान्ति आदि आदि।

यह एकान्त सत्य है कि समाज और देश की उन्नति क्रान्ति के ऊपर निर्भर है। अगर यूरोप में धार्मिक और सामाजिक उथल-पुथल न होती तो आज हमको यह देश इतना चढ़ा बढ़ा नजर नहीं आता। एक दिन था। भारत के सामने ये देश पानी भरते थे। असभ्य और जंगली थे। पर आज

क्रान्ति और शान्ति

(ले०—श्रीमान् पं० कैलाशचन्द्र जी जैन शास्त्री न्यायतीर्थ)

वैसे क्रान्ति और शान्तिमें उतना ही मनमुटाव है जितना इस समय इटली और एबीसीनिया में है। एक का लक्ष्य दुनिया में उथल पुथल मचाकर सोते हुये प्राणियोंका जगाना है और दूसरेका संसारको क्लोरोफार्म सुंघाना है। फिर भी इनका एक दूसरे से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। बिना क्रान्ति के शान्ति नहीं और बिना शान्तिके क्रान्ति नहीं। यह एक सार्वभौमिक नियम है।

तात्पर्य यह है कि दिनमें काम करने के बाद स्वभावतः मनुष्य को रात में सोने की इच्छा रहती है। दिनमें हाथ पैर हिलाने में रातका सोना भी एक अनिवार्य कारण है। स्वास्थ्य शास्त्रके नियमानुसार श्रम और विश्राम दोनों ही शरीर को स्वस्थ बनाये रखने में समान उपयोगी हैं। लगातार श्रम करने वाले मनुष्यका शरीर सूखे काठकी तरह बिखर जायगा और निरन्तर विश्राम में संलग्न रहने वाले मानवका शरीर ज़ंक लगे लोहे की तरह बेकाम और रद्द होजायगा.

बस, समझ लीजिये क्रान्ति और शान्ति भी इसी तरह विश्व-सुख को कायम रखने में बराबर बराबर कारण हैं। फसल की पैदायश में फूट और मेल दोनों की आवश्यकता है। खेती में मिट्टी पानी और अंकुर का मेल होता है पर स्वयं अंकुर में फूट पैदा होती है तब अनाज पैदा होता है।

सच तो यह है कि प्रकृति का यह एक अटल नियम है कि क्रान्तिके अनन्तर मनुष्य हृदय स्वभावतः शान्ति की खोज में फिरने लगता है। इतिहास इसका साक्षी है। इङ्गलेण्ड का इतिहास खोलकर देखिये। गुलाबों के युद्ध में इङ्गलेण्ड निवासियों ने देश के एक छोर से दूसरे छोर तक तहलका मचा दिया। आपसमें खूब झगड़े हुए। राजा और प्रजा के अनबन रही। प्रजा उस समय थोड़े से भी अत्याचार को बर्दाश्त करने के लिये तैयार न था। हजारों मरे, लाखों के घर उजड़े। सुख छोड़ा, घर का मोह छोड़ा पर लोग अन्ततक क्रान्तिमें संलग्न रहे गुलाबों युद्धके पश्चात इंगलैण्डके सिंहासनपर ट्यूडर वंशीय राजाओंका राज हुआ। अब देखने की बात यह है कि ट्यूडर वंशके अधिकांश राजाओंने प्राचीन इङ्गलेण्ड के राजाओं से भी दो हाथ बढ़कर प्रजापर अत्याचार किये। धार्मिक आन्दोलन में प्रजाको अनेक मुसीबतें झेलनी पड़ीं पर प्रजा उस समय चुप थी। केवल कहीं २ राजाओं के विरुद्ध हलकासा क्रान्तिका दौरा दिखाई पड़ जाता था। क्योंकि प्रजा गुलाबों के युद्ध से खूब उकताई हुई थी। शान्तिके लिये वैसे राजाओंका भी आसरा लेना पड़ा। और तो क्या इतिहासमें मैरी, जो खूनी मैरी के नामसे विख्यात है, ऐसी कठोर शासिका के अत्याचारों को भी लोग खूनकी घूंट पीगये।

और देखिये— ट्यूडर वंशके पश्चात स्टुअर्ट वंशका प्रारम्भ हुआ। जैसा पहले लिखा जाचुका है

वे भारत के ही दांत खट्टे कर रहे हैं। यूरोप में एक साथ धर्म में, समाज में और राष्ट्र में रद्दोबदल हुई। लोग अपने अपने दिमाग का उपयोग करने लगे। अपने सुख और शरीर को तिलाञ्जलि दी। फलतः लोगों में शिक्षा का प्रचार हुआ। नये नये आविष्कार हुए। पुरानी रूढ़ियां पुरानी जूती के समान फेंक दी गई। एक तो वह दिन था जब पोप के विरुद्ध आवाज उठाने वाले को जीते जी दीवाल में चुन दिया जाता था और आज वह दिन है कि पोप लीला का नामो निशान न रहा। पर है यह सब क्रान्ति का ही मीठा फल।

लोग यह भले ही कहें कि शान्ति सुख से बढ़कर कोई सुख नहीं। पर अपनी समझ से तो क्रान्ति का मजा क्रान्ति में ही है। क्रान्ति में ही सुख और आनन्द की वह लहर है। जिसे शान्ति प्रिय आदमी तो समझ भी नहीं सकता। शान्ति शान्ति चिल्लाते रहना बुजदिलों का काम है पर क्रान्ति वीर और साहसी नर-पुङ्गवों का काम है।

रण में हजारों योद्धाओं का कत्ल होने के बाद कोई राज सिंहासन का सुख भोग सकता है। निष्कलंक ने अपनी जान झोंकी और अकलंक ने कष्ट सहे इसी का यह फल है कि हम जैनधर्म के विषय में कुछ जान रहे हैं। सुधार के लिहाज से तो क्रान्ति सुधार की आत्मा है और बिना क्रान्ति के सुधार करना आकाश के फूल लगाना है।

नतीजा यह हुआ कि मनुष्यों को कोरी शान्ति ही शान्ति की जरूरत नहीं क्रान्ति भी सुख की जड़ है। इस लिये जैसा समय देखो क्रान्ति और शान्ति दोनों ही को गले लगाना चाहिये।

जैनतिथि और व्रततिथि

(ले० पं० मिलापचन्द्र जी कटारिया केकड़ी)

बाजारों में मिलने वाले पंचांगों में जो तिथियें लिखी हुई रहती है वे ही क्या जैन तिथियें है? या जैन तिथियें अन्य तरह से होती हैं? और वे कैसे होती है? तथा जैन तिथि और व्रत तिथि में क्या कुछ भेद है? इनही विषयों पर नीचे कुछ प्रकाश डाला जाता है। यद्यपि इस विषय में "जैनगजट वर्ष ३८ अंक १ वें और १६ वें में हमने पहले बहुत कुछ लिखा है तथापि "दर्शन" के संपादक महोदय पं० अजितकुमार जी शास्त्री के अनुरोध से पुन लिखा जाता है। वे लेख खण्डनात्मक थे। यहां हम उसे विधिरूप से लिखते है।

पंचांगों में जो तिथियें लिखी रहती हैं वे मात्र सूर्योदय की अपेक्षा को लेकर होती हैं। यानी सूर्योदय के वक्त जो तिथि होगी वही सारे दिन मानी जायेगी चाहे वह कुछ पलों ही की क्यों न हो। और जो तिथि सूर्योदय के बाद शुरू होकर अगले दिन के सूर्योदय से पहिले ही खतम हो जाती है वह पंचांगों में क्षय कर दी जाती है। तथा जो एक ही तिथि दोनों दिन के सूर्योदय के वक्त पाई जाती है तो वह पचांग में दोनों दिन मानी जाती है। इसे ही वृद्धि तिथि कहते है। ६० घड़ी का अहोरात्र होता है। अगर सब ही तिथियें साठ साठ घड़ियों की होती तो तिथि की क्षय वृद्धि का अवसर ही नहीं आता। पर एक तिथिका प्रमाण ५४ से ६६ घड़ियों के बीच होता है अर्थात कम से कम ५४ घड़ी और कुछ पलों की व अधिक से अधिक ६५ घड़ी और कुछ एक पलों की होती है। इसी से कभी २ तिथि का वृद्धिह्रास हो जाया करता है।

जैनमत में तिथि व्यवस्था उपर्युक्त प्रकार से नहीं मानी जाती है। तिथिकी मान्यता उसमें इस प्रकार है कि—सूर्योदय के बाद छह घड़ी या उससे ऊपर तक जो तिथि रहती है वह जैनमत में उस सारे दिन मानी जाती है। जो तिथि सूर्योदय के बाद ६ घड़ियों से कम रहती हो तो वह जैनमत में कतई नहीं मानी जा सकती। पंचांग में जिस प्रकार सूर्योदय को आधार मानकर ऊपर तिथि का वृद्धि-ह्रास बताया गया है। उसी प्रकार जैनमत में उदय की ६ घड़ी के आधार पर तिथि का वृद्धिह्रास होता है। अर्थात जैसे पंचांग में प्रथम दिन सूर्योदय के बाद से शुरू होकर अगले दिन के सूर्योदय से पहिले ही पूर्ण हो जाने वाली तिथि क्षय तिथि मानी जाती है। उसी तरह जैनमत में जो तिथि प्रथम दिन में सूर्योदय से ६ घड़ी बाद शुरू होकर अगले दिन सूर्योदय के ६ घड़ी बाद से पहिले ही पूर्ण हो जाती है वह क्षय तिथि मानी जाती है। किंतु जैनमत की वृद्धि तिथि समझना जरा कठिन है। कारण कि पंचांग में जो वृद्धि तिथि होती है वह दोनों दिन सूर्योदय के वक्त आ जाने से होती है। इसी तरह जैनमत में भी प्रथम दिन सूर्योदय से लेकर अगले दिन के सूर्योदय से ६ घड़ी या उससे ऊपर तक अगर एक ही तिथि आ सकती होती तो वृद्धि तिथि हो जाती और यह तब हो सकता था जब कि तिथि का

प्रमाण ६६ या उससे ऊपर की घड़ियों का होता। परन्तु किसी भी तिथि का प्रमाण अधिक से अधिक ६५ घड़ियें और कुछ पलों मे अधिक नहीं होता है पूरी ६६ घड़ियों की भी कोई तिथि नहीं होती। इस लिये जैनमत में दो तिथि किसी दूसरे ही ढंग से होती हैं। उसे बतलाने के पहिले मैं यह समझा देना चाहता हूं कि तिथि का अधिक से अधिक प्रमाण जैसे ऊपर बताया गया है उसी तरह हर एक तिथि का कम से कम प्रमाण ५४ घड़ियें और कुछ पलों का होता है। इससे कम तिथि नहीं होती है। मतलब यह है कि तिथि ५४ से ऊपर और ६६ से नीचे बीच में कितनी भी घड़ियों की हो सकती है। किन्तु हर एक तिथि पूरी की पूरी अहोरात्रभर में कभी आ भी सकती है और नहीं भी आ सकती है। कितनी ही बार एक ही अहोरात्रमें कुछ भाग एक तिथि का रहता है और कुछ भाग दूसरी तिथि का। शेष भाग उनके अगले पिछले दिन में भुगतते रहते हैं। जैसे शुक्रवार को अष्टमी १५ घड़ियों की है अर्थात सूर्योदय से लेकर १५ घड़ियों तक अष्टमी रही, ४५ घड़ियों तक इसी शुक्रवारको नवमी रहेगी। अष्टमी का शेष भाग पूर्व दिन बृहस्पति वार को भुगता है और नवमी का शेष भाग अगले दिन शनि-वार को भुगतेगा। इस उदाहरण में अष्टमी उदय तिथि कहलायेगी क्योंकि वह शुक्रवार को सूर्योदय के वक्त थी। तथा नवमी अस्ततिथि कहलायेगी क्योंकि यह शुक्रवार को सूर्यास्त के वक्त रही है। इस तरह कई दिनों तक लगातार प्रत्येक प्रत्येक दिन में दो दो तिथि चला करती हैं। ऐसी हालत में दो तिथि में एक दिन कौनसी तिथि मानी जावे यह समस्या आके खड़ी हो जाती है। इस समस्या को हल करने के लिये पंचांगों में तो यह नियम रक्खा गया कि जो तिथि सूर्योदय के वक्त पाई जावे वही उस अहोरात्रभर में मानी जावे और जैनमत में यह नियम रक्खा कि सूर्योदय वाली तिथि उस हालत में उस दिन मानी जावे जब कि वह कम से कम उस दिन छह घड़ी तक रहती हो। जैसा कि शास्त्र के निम्न पद्यों से प्रकट है—

> सूर्योदयात्षट्घटिकाप्रमा चेत्
> तिथिस्तदा स्यात् सकला व्रतेषु।
> धर्मादिकार्येष्वखिलेषु गण्या
> वदंति तां धर्मविदो यतीन्द्राः।
> मुहूर्तैश्च त्रिभिर्न्यूना तिथिर्यत्र भवेत् खलु
> सा तिथिर्नैव मान्या हि जैनमार्गानुयायिभिः॥

अर्थ—यदि सूर्योदयसे ६ घड़ी प्रमाण तिथि हो तो उसे धर्मज्ञ यतीश्वरों ने व्रत और सभी धर्मादि कार्यों में पूर्ण मानी है।

और जो तीन मुहूर्त कहिये ६ घड़ीसे कम उदय तिथि होतो उसे जैनियों को नहीं मानना चाहिये।

यहां यह विचारणीय है कि जिस दिन ६ घड़ी की उदयतिथि आवेगी उसी दिन ५४ घड़ी की अस्त तिथि भी आवेगी तो उसे नहीं माना जावेगा। किंतु जब किसी दिन ६ घड़ी से कम उदय तिथि आवेगी तो उसी दिन ५४ घड़ी से ऊपर अस्ततिथि आवेगी वह मान ली जावेगी। इसका फलितार्थ यह हुआ कि जैनमतमें दो प्रकारकी तिथि मानी जाती हैं। एक तो छह घड़ी की या इस से ऊपरकी उदयतिथी और दूसरी तरफ ५४ घड़ीसे ऊपरकी अस्ततिथि। यद्यपि ६ घड़ी से कमकी उदयतिथि मानने से ही यह अपने

आप सिद्ध होजाता है कि उस दिनकी अस्ततिथि मानना। फिर भी हम अस्ततिथि माननेका शास्त्र प्रमाण दे देते हैं—

त्रिमुहूर्तेषु यत्रार्क उदेत्यस्तं समेति च।
सा तिथिः सकला ज्ञेया उपवासादिकर्मणि॥
"पद्मदेवकृतव्रतविधाने"

अर्थ— उपवासादिकार्य में वह तिथि पूर्ण मानी जाती है जिसमें तीन मुहूर्त तक सूर्य उदय रहता है। अथवा जिस तिथि में सूर्यास्त रहता है।

इसी अर्थका द्योतक श्लोक पं० आशाधर जी कृत "अनगारधर्मामृत" के ९ वें अध्याय में भी है। वर्तमानके कुछ पंडितोंने इस श्लोकका उदयकी तरह अस्त में भी तीन मुहूर्त होना अर्थ किया है सो गलत है। ऐसे अर्थकी कुछ संगति नहीं बैठती है।

जो तिथि ५४ घड़ियों से ऊपर की होती है वह एक तरह से पूर्ण तिथि ही है क्योंकि तिथिका कमसे कम प्रमाण ५४ घड़ी और कुछ पलोंका होता है जैसा कि ऊपर बताया गया है। ऐसी पूर्ण तिथि जब एक ही अहोरात्र के अन्दर आजाती है तो वह मानी जानी चाहिये ही। इसीके लिये तो ६ घड़ी से कम की उदय तिथि अमान्य ठहराई गई है ताकि इसके स्थानमें उस दिन वह मानी जासके। अगर ६ घड़ी से कम की उदयतिथि भी मान लीजाती तो अस्तकी पूर्ण तिथि जो उसी दिन है छूट जाती। बस यही रहस्य छह घड़ी उदयतिथि माननेका है जो बड़ी ही दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता का सूचक है।

शंका—एक ही दिनमें आनेवाली दो तिथियों में छह घड़ीकी तिथि तो मान लेना और ५४ घड़ी की तिथि छोड देना ऐसा क्यों?

समाधान—लगातार कई दिनों तक प्रतिदिन दो दो तिथि होने पर दोनों में से किसी एकको मानने से ही तिथिका सिलसिला बराबर आगे तक चल सकता है इसलिये दोनों में एकको मानलो चाहे वह थोड़ी ही घड़ियों की हो।

शंका— दोनोंमें जो अधिक घड़ियोंकी हो उसे मान लेने परभी तिथिका सिलसिला तो चल सकता था।

समाधान—जब एकही दिनमें बराबरकी घड़ियों की दो तिथि आती तो किसे मानते। इसलिये किसी एक ही को सदा मानने का नियम तो होना ही चाहिये।

शंका—यदि ऐसा है तो उदय तिथि को ही प्रधानता क्यों दी?

समाधान—इसका कारण यह है कि विशेष कर धार्मिक अनुष्ठान व लौकिक व्यवहार भी दिन ही में हुआ करते हैं रात्रि तो अधिकतया शयन में ही बीतती है। इस लिये उदय तिथि को प्रधानता दी है।

शंका—छह घड़ी से कम की उदय तिथि न मानने का ही नियम क्यों रक्खा गया? सात आठ आदि घड़ियों से कम की उदय तिथि न मानने का रखते तो क्या हर्ज था?

समाधान—किसी एक अधूरी रीति को पूरी माने विना आगेतक तिथियों का सिलसिला बराबर चल नहीं सकता इस लिये ऐसी एक उदय तिथि ६ घड़ी की मानली। बाकी तिथि पूरी ही मानी गई। अगर सात आठ आदि घड़ियों से कम की

उदय तिथि भी न मानी जाती तो उस दिन की अधूरी अस्ततिथि माननी पड़ती। तब उदय और अस्त दोनों ही तिथियें अपूर्ण मानने में आतीं जो ठीक नहीं होता।

शंका—पंचांग की तरह केवल उदय मात्र तिथि मानने में क्या खराबी है ?

समाधान—यह कि उस दिन की पूर्ण अस्ततिथि उसी दिन नहीं मानी जाती। इस लिये तिथि विधान में जैन आम्नाय ही ठीक मालूम होती है।

ऊपर हमने जैन क्षय तिथि कैसी होती है यह बतलाया था। अब हम इस विवेचन के बाद जैन सम्मत वृद्धि तिथि होना बताते हैं—

ऊपर यह बतलाया गया है कि—सूर्योदय से छह घड़ी पहिले जो तिथि लगती है वह अस्ततिथि कहलाती है और वही उसी दिन मानी जाती है। फिर वही तिथि अगर अगले दिन भी सूर्योदय से छह घड़ी या उसके बाद तक चली जाती है तो वह दूसरे दिन भी मानी जाती है। बस यही हिसाब जैनमत में दो तिथि होने का है।

—पंचांग से जैन तिथि निकालने का तरीका—

किसी इच्छित पंचांग को खोलकर देखिये उस में प्रत्येक तिथि के आगे एक खाने में उसकी घड़ियें लिखी मिलेंगी। जिस तिथि के सामने जितनी घड़ियें लिखी हैं उसका मतलब है कि वह तिथि उस दिन सूर्योदय के बाद उतनी घड़ियों तक रही है। बाद में उसी दिन अगली तिथि लग गई है। अगर किसी वार को तिथि के आगे छह या छह से अधिक घड़ियें लिखी हों तो उस वार को वही तिथि समझना चाहिये। और जो किसी वार को तिथि के आगे छह से कम घड़ियें लिखी हों तो उस वार को अगली तिथि माननी चाहिये। मतलब कि जिस तिथि के सामने कम से कम ६ घड़ी भी लिखी हों तो वह पंचांग की तिथि ही जैन तिथि हो जावेगी। किन्तु जिस तिथि के आगे ६ से कम घड़ियें लिखी होंगी तो पंचांग की वह तिथि जैन तिथि न होकर उस दिन उसकी अगली तिथि जैन तिथि होगी। इस दृष्टि को ध्यान में रखने से अपने आप क्षयतिथि और वृद्धि तिथि भी निकल आवेगी। ऊपर भी हमने तिथि के वृद्धिह्रास के बाबत खूब स्पष्ट कर दिया है। उसे भी ध्यान में रख लेना चाहिये। जैन तिथि निकालने की यह ऐसी सरल तरकीब है कि कोई भी सज्जन पंचांग को देख कर बड़ी आसानी से जैन तिथि निकाल सकता है पहिले इसी तरह सब निकालते थे। अब तो लोग सीधे बने तिथि दर्पणों को देख कर ही काम चलाने लगे हैं। जिससे भारी हानि यह हुई कि जैन जनता जैन तिथि निकालने की विधि ही भूल बैठी। जिस का फल यह हुआ कि कतिपय तिथि दर्पणों की गलत तिथियें भी मानी जाने लगी हैं।

जैन तिथियोंके लिये अलग जैन पंचांग निकालने की भी कोई जरूरत मालूम नहीं होती है। प्रचलित पंचांग ज्योतिष शास्त्र के अनुसार ही निकलते हैं और उन्हीं से जैन तिथियें निकाली जा सकती हैं। इसके अलावा सारे जैन समाज में एक ही व्रत तिथि मानना भी नहीं बन सकता है। क्योंकि दूरवर्ती देशभेद के कारण सब पंचांगों की तिथियें समान घड़ियों की नहीं हो सकतीं और अपने अलग २ देशों में अलग २ पंचांग मानने से तिथियों में फर्क भी

अवश्य रहेगा ही। हां पंचांगसे जैनतिथि निकालने की जो विधि है उसमे विद्वानों को एकमत हो जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में जो गल्ती पर है उन्हें युक्त्यागम से निर्णय कर अपनी गल्ती सुधार लेना चाहिये।

कुछ लोग जैन तिथि को ही व्रततिथि समझते है सो भी ठीक नहीं है। जैन तिथि लोक व्यवहार में काम आने के लिये होती है और व्रततिथि व्रतादि धर्म कार्यों के लिये। जैनियों की अल्प संख्या के कारण लोक व्यवहार में खुद जैनियों को भी बहु संख्यक हिंदुओं के देनलेन में अधुना पंचांग का निर्णय ही मानने को बाध्य होना पड़ता है और इसी लिये जैनतिथि अब मात्र व्रतादि धर्मकार्यों हीके काम की रह गई है। जिसे देख लोग जैनतिथि और व्रततिथि को एक ही समझ बैठे हैं। यह मालूम होना चाहिये कि दो तिथियों में कौन सी तिथिव्रत के लिये मानी जावे और क्षयतिथिका व्रत किस तिथि को किया जावे इत्यादि विचार व्रत तिथि में ही किया जाता है, जैनतिथि में नहीं। हां यह बात जरूर है कि व्रततिथि का मूल जैनतिथि ही रहता है।

वृद्धतिथि में व्रतविधान करने की शास्त्राज्ञा निम्न प्रकार है—

तिथिवृद्धिर्यत्र पक्षे तस्यामुक्तं हि यत ।
तत्पूर्वस्यां तिथौ कुर्यादुत्तरस्यां तिथौ नहि ॥
"व्रत निर्णय"

अर्थ—जिस पक्ष में तिथि की वृद्धि हो और उस तिथि में जो व्रत कहा हो उसे पहिली तिथि में करना चाहिये अगली में नहीं।

युक्ति से विचार करने से भी प्रथम तिथि ही ठीक यों बैठती है कि ५४ घड़ियों से अधिक की पूर्ण तिथि प्रथम दिन में ही रहती है। *

क्षय तिथि पूर्व दिनमें शामिलकी जाती है क्योंकि उसका बहु भाग उसी दिन रहता है। इस लिये व्रत भी उस का उसी दिन करना चाहिये यह स्पष्ट है अतः शास्त्र प्रमाण देने की जरूरत नहीं है।

दो मास हों तो कौन सा मानना इस के लिये आगमप्रमाण यों है—

संवत्सरे यदि भवेन्मासो वै चाधिकस्तदा ।
पूर्वस्मिन् न व्रत कार्यमपरस्मिन् कृतं शुभम् ॥
व्रततिथि निर्णय

अर्थ—यदि वर्ष में अधिक मास हो तो पहिले में व्रत न कर के दूसरे मास में करना शुभ है।

अगले वर्ष दो भाद्रपद हैं। अतः दश लक्षणिकादि व्रत दूसरे भादवे में करने चाहिये। तिथि

---

* जैनी जीयालाल जी के पंचांग में एक अलग खाना जैन तिथियों का रहता है। उसकी जैनतिथियां ठीक विधिसे निकली हुई रहतीं है। किंतु दो तिथियोंमें वहां दूसरी तिथि मानी जाती है यह ठीक नहीं है। उसी के आधार पर बना तिथि दर्पण हर वर्ष "दिगंबर जैन" के ग्राहकों को भेंट दिया जाता है। उस में भी दूसरी तिथि ही मानी जाने का उल्लेख रहता है। उस के संपादक जीको चाहिये कि यह गल्ती सुधार लें या अपने मंतव्यकी पुष्टि में आगम प्रमाण पेश करें।

पहिली और मास दूसरा मानना यह जैन आम्नाय है। ढाई वर्ष में एक मास बढ़ा करता है। तिथियों के कारण पैदा हुई कमी मास बढ़ाकर पूर्ण की जाती है। दूसरा मास भी पूर्णता के नजदीक रहता है इसलिये व्रतादि के लिये दूसरा मास मानना युक्ति से भी ठीक है।

व्रत दो प्रकार के होते हैं। तिथि प्रधान और दूसरे दिन प्रधान। जिन व्रतों में आदि अंत की कोई खास तिथि नियत रहती है वे तिथि प्रधान व्रत कहलाते हैं। जैसे दशलक्षणिक, पंचमेरु, लब्धिविधान षोडश कारण, नंदीश्वर आदि। और जिनमें दिन संख्याकी प्रधानता रहती है वे दिन प्रधानव्रत कहलाते हैं। जैसे सिंहनिःक्रीड़ित, सर्वतो भद्र, कनकावली आदि। इन व्रतों में किसी तिथि का बंधन नहीं है-जब कभी भी शुरू किये जासकते हैं। और दिनों की संख्या से धारणें पारणें इन में हुआ करती हैं। तिथि प्रधान व्रतों में किसी व्रत का प्रारंभ खास नियत तिथि में हुआ करता है पर जब व्रत के दिनों में कोई क्षयतिथि आजाती है तो एक दूसरा अपवाद नियम भी है और वह इस प्रकार है।

यावत्तु वासरैरुक्त्वैर्यद् व्रतं च प्ररूपितम्।
तिथिक्षयश्चेद्यास्ति तत्र पूर्वं दिनं भजेत्॥

"व्रतनिर्णये"

अर्थ—जितने दिनों का जो व्रत कहा है इस में यदि तिथि का क्षय हो तो उसे पूर्वदिन ग्रहण करना चाहिये।

उदाहरण के लिये जैसे दशलक्षण व्रत के दिनों में एकादशी आदि कोई तिथि क्षय हो जावे तो उसे पंचमी के पूर्व चतुर्थी से शुरू किया जावे और यही वर्तमान में किया भी जाता है। यह नियम सोलह कारण व्रत के लिये भी लागू होना चाहिये। किंतु कुछ महाशय उसे मासिक व्रत बतलाकर इस नियम से उसे बाहर रखना चाहते हैं। हमारी समझमें यह अनुचित है। जिस प्रकार दशलक्षणिकादि व्रतों की आदि अंत की तिथि नियत है उसी तरह इस की भी नियत है तब वह उक्त अपवाद नियम से कैसे बच सकता है। यह दूसरी बात है कि सोलह कारण व्रत की आदि अंत की तिथि के भीतर मास भर भाद्रपद का आगया है इसमें यह नहीं कहा जा सकता कि तिथिक्षय होने पर भी वह भाद्रपद के पूर्व दिन में प्रारंभ नहीं किया जाता मतलब यह है कि जैसे दूसरे व्रतों की प्रारंभिक तिथि नियत होने पर भी तिथिक्षय होने पर वे पूर्व दिन मे शुरू किये जाते हैं। उसी तरह सोलह कारण व्रत पूरे भाद्रपदमास में नियत रहने पर भी वह तिथिक्षय होने पर श्रावण शुक्ला १५ को शुरू किया जाना चाहिये यही ठीक है।

यहां जैसे क्षयतिथि में पूर्वदिन शुरू करके दिन बढ़ा लिया गया है उसी तरह यह न समझ लेना चाहिये कि इन व्रतोंमें कहीं वृद्धितिथि होजावे तो इन्हें इन की नियत तिथि से अगले दिन शुरू कर दिन घटा लिया जावे। शास्त्रकारों की आज्ञा वृद्धितिथि में दिन घटाने की नहीं है। "अधिकस्याधिकं फलं" कर उन्होंने तिथिवृद्धि में बढ़ता हुआ दिन रखना ही प्रायः प्रतिपादन किया है।

चांदी की दुअन्नी

(ले० - श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी जैन शास्त्री न्यायतीर्थ)

उन दिनों मैं बम्बई की विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पर स्टेशन मास्टर के पद पर था। एक दिन शामके वक्त मैं स्टेशन मास्टर के कमरे में बैठा कुछ आफिसियल कागजों को टटोल रहा था। एकाएक चपरासी ने आकर मुझे एक विजिटिंग कार्ड दिया। मैंने चपरासी से पूछा कौन है?

"कोई सेठ से मालूम होते हैं।"

"क्या काम है?"

"यह नहीं बताया, कहाकि मुझे एक बहुत जरूरी काम है। मैं इसी समय स्टेशन मास्टर से मिलना चाहता हूं।"

"अच्छा, अन्दर लिवा लाओ।

चपरासी एक क्षणबाद लौटकर आया। उसके साथ एक पगड़ी बांधे हुए अधेड़ अवस्था के महाशय थे।

आगन्तुकने आते ही मुझे झुककर सलाम की। और बिना कुछ बोले चाले अपनी जेबमें से एक पांच रुपये का नोट निकालकर मेरे आगे धर दिया। मैं अचरज के साथ बोल उठा—

"हां, कहिये आप क्या चाहते हैं।

"मैं आपसे छोटी सी अर्ज करना चाहता हूं। बात यह है कि अभी मैं प्लेट फार्मके बांई ओर लगे हुये तोल मापक यंत्रसे तुलकर आया हूं। मैंने भूलसे उसमें एक दुअन्नी डाल दी है। कृपाकर मेरी वह दुअन्नी वापस देदी जाय। मैं उसके बदले में दूसरी दुअन्नी उसमें डालदूंगा।

मैं आश्चर्य भरी दृष्टिसे आगन्तुक को देखने लगा। सोचा यह आदमी पागल तो नहीं है? शायद इसका दिमाग फिरा हुआ हो। कैसा मूर्ख है जो एक दुअन्नी के लिये पांच रुपये मेरे लिये हवाले कर रहा है। मैं उस आगन्तुक की इस समस्या को कुछ भी न समझ सका।

आखिर आगन्तुक से ही पूछा—

"क्यों आपका दिमाग तो ठीक है?"

"हाँ बाबू साहब, मेरा दिमाग बहुत ठीक है। मिहरबानी करके आप मुझे मेरी दुअन्नी निकालने दीजिए।" कहकर उसने एक दस रुपयेका नोट और मेरे हाथमें रख दिया।

मेरी उद्विग्नता और भी बढ़ गई। खैर, मैंने चपरासी को आवाज दी वह फौरन आखड़ा हुआ। सारा हाल कहकर आगन्तुकको उसके साथ जानेका संकेत कर दिया।

मैं फिर उसी तरह अपने काममें लग गया। उस आगन्तुक की बात मेरे दिलमें अभी तक उथल पुथल मचा रही थी। मेरा काम करने में दिल न लगा। उठ कर मैं भी तुलने के यन्त्र तक गया। वहां जाकर देखा तो आगन्तुक अपनी दुअन्नी ढूंढ रहा था। उसने सारी चेन्ज छान डाली। करीब दो मिनिट बाद उसमेंसे जंक लगी हुई चान्दी की दुअन्नी उठाकर बदले में एक चमकती हुई दुअन्नी डालदी। दुअन्नी उठाकर अजनबी मेरी ओर कृतज्ञता भरी दृष्टिसे देखने लगा। मैं स्वयं एक गहरी उलझन में पड़ गया।

"महाशय जरा आप मेरे कमरे में तसरीफ लाइये मुझे आपसे कुछ बात करनी है।" कहकर मैं अजनबी को साथ लेकर मेरे आफिसकी ओर मुड़ गया।

× × ×

"महाशय, मैं नहीं समझा आप एक छोटी सी दुअन्नी के लिये इतने व्यग्र क्यों थे? दुअन्नी की बात मेरे हृदय में अभी तक उलझी हुई है। साफ २ कहिए कि क्या आपकी दुअन्नी जादू की है या करिश्मे पैदा कर सकती है?"

आगन्तुक कहने लगा—

"मिहरबान, मैं न कोई जादूगर हूं और न कोई मन्त्र, तन्त्र ही जानता हूं। हां, भारतका एक साधारण दूकानदार हूं। जिस दुअन्नी की खातिर आप पशोपेश में पड़े हुये हैं, उसकी कथा बड़ी करुणा पूर्ण है। आप सुनकर हैरान होंगे।"

मैं बीच ही में बोल उठा—

"मैं इसीलिये तो सुनना चाहता हूं।"

"हां तो सुनिए, कान लगाकर सुनिए।"

एक दिन था जब मैं एक साधारण गृहस्थी था। मेरे घर में मेरी बुढ़िया मां और बापके सिवा अन्य और कोई मनुष्य न था। घरकी आर्थिक परिस्थिति बड़ी नाजुक थी। सवेरे पेटमें रोटियाँ चली जातीं तो सांझको तबेले गुड़ जाते थे। अगर भाग्यसे किसी दिन दोनों वक्त भोजन होजाता तो दूसरे दिन अन्न और जल दोनोंका कड़ाका निकालना पडता था।"

"अच्छा तो आप कौमसे कौन होते है?"

"मैं एक उच्च कुलोत्पन्न महाजन हूं। गरीब रहवर!"

"अच्छा तो फिर क्या हुआ?

"उन दिनों मैं बहुत ही डाँवाडोल था। मेरा बाप दिन २ कमजोर और अशक्त होता जाता था। फिर भी बेचारा जिस किसी तरह मेहनत मजदूरी करके कुछ आजीविका चलाता ही। मेरे वे दिन केवल खेल कूदके थे। चाहता तो बुढ़ापेमें बापको मदद कर सकता था, पर मैं अपनी नादानी पर अब पछताता हूं। जब कभी वे दिन याद आजाते है, सिसक २ कर रोया करता हूं।

मैं ने अजनबी के मुंह को गौर से देखा सचमुच उस समय भी उसकी आंखो में आंसू भर आये थे। दुःख से गला भर गया था। इस दृश्य ने मेरे हृदय सरोवर को भी एक साथ हिला डाला। मेरे पास आफिस के बहुत से कागजात अभी जरूरी पड़े हुए थे। उसको सान्त्वना देते हुए मैंने अपनी कथा आगे बढ़ाने का आग्रह किया।

"बाबू साहब, मेरे बाप ने कभी भी मुझे कमाने व किसी धन्धा में हाथ डालने को नहीं कहा। जब कभी मेरी बात छिड़ जाती—उसके मुंह से ये ही वचन निकलते—बेटा! अभी तुम्हारे खेलने कूदने के दिन हैं। जी भर के खेलो-कूदो। कमानेके लिये सारी जिन्दगी तुम्हारे सामने है। मुझे खूब याद है जब चौके में हम तीनों योग्य रोटियां न होतीं तो मेरी मां मुझे भर पेट खाना देती। जब मैं यह पूछ बैठता कि मां तुमने भी अभी खाना नहीं खाया तो वह झूठ मूठ कह देती नहीं बेटा मैं ने तो पहिले ही अपना यह पापी पेट भर लिया है।"

"एक रोज की बात है मेरे बाप को पहिले दिन किसी तरह अपने पेट भरने योग्य सामान न मिला

बस, अब भोजन कैसे तैयार हो सकता था। दस बजे जब मैं गांव में इधर उधर चक्कर लगा कर आया तो रसोई घर बिलकुल बन्द था। मुझे भूख भी खूब जोर से लग रही थी। आते ही मैं मां के पास गया। वह हाथ पर हाथ दिये बैठी थी। बिना सोचे समझे मैं अम्मा से रोटी मांग बैठा। अम्मा का चेहरा बिलकुल उदास था। मेरे शब्द सुनते ही जैसे उस पर बज्रपात हो गया हो। वह फूट फूट कर रोने लगी। मैं जाकर उसकी गोद में लिपट गया। मुझ से भी न रहा गया। मेरी आंखे डब डबा आईं। रोते रोते मां से पूछा—क्यों अम्मा, आज भोजन नहीं बना? तुम रोती क्यों हो। खैर नहीं सही। इसमें रोने की कौन सी बात है। तुम भूखी रहोगी तो मैं भी खाली पेट रह कर सारा दिन काट लूंगा। अम्मा रोते रोते बोल उठी—नहीं बेटे, आज मेरे और तुम्हारे पिता जी के सोमवार का व्रत है। हम आज खाना नहीं खायेंगे। इसी लिये आज चूल्हा नहीं जलाया है। तब उसने अपने आंचल में से एक चांदी की दुअन्नी निकाली और मेरे हाथ में धर कर कहा—बेटा, लो यह दुअन्नी, बाजारमें जाकर इससे मिठाई खरीद लो।

"बाबू जी, वह दुअन्नी मेरी मां की कड़ी मेहनत का फल था। दिन भर कातने से जो कुछ पैसे आते उन में से वह आप भूखी रह कर भी कुछ न कुछ बचा रखती थी। न जाने, उसने इतना कठोर परिश्रम मेरे एक दिन के मिठाई खाने के लिये ही किया था क्या। मैं उस दुअन्नीको लेकर बाजारमें निकल पड़ा। उस रोज मुझे मालूम हुआ कि मां बाप अपनी संतान को किन मुसीबतों से पालते हैं और उनके लिये कितना कड़ा परिश्रम झेलते हैं।"

"उस वक्त तक मेरी भूख बहुत बढ़ गई थी। पेट पाताल में जारहा था। चलते २ मैं रास्ते में ही जा गिरा। मेरी शक्ति अब बिलकुल न चलने की थी एक नीमके वृक्ष के नीचे आकर लेट गया। मुझे गहरी नींद आई। कोई दो घन्टे बाद उठा। सामने देखा तो एक भिखारी खड़ा था। उसने हाथ पसार कर कहा—एक पैसा? मैंने सोचा उसकी परिस्थिति मुझसे भी दयनीय है। बदन पर फटे-टूटे लत्ते हैं। जाड़े से उसका शरीर कांप रहा है। वैसे हमारी हालत बहुत ही करुणा जनक थी पर मेरा बाप बिरादरी में अपनी इज्जत जाने के डरसे मेरे और अपने कपड़े-लत्ते ठीकठाक रखता था। इतने ही में रास्ते में एक सेठ आ निकले। भिखारी मुझसे हट कर सेठ जी से पैसा माँगने लगा। सेठ जीने दया कर चार पैसे उस की झोली में डाल दिये। भिखारी वहांसे रवाना हुआ। मुझे भिखारी से न जाने क्यों प्रेमसा होगया था। मैं भी उसके पीछे २ चला। बाजार में जाकर भिखारी ने चार पैसे के चने खरीदे मैंने सोचा था चने झोली में आते ही भिखारी उन पर टूट पड़ेगा पर मेरा अन्दाजा बिलकुल गलत था। उस ने झोली छाती से चिपटाली और जल्दी २ अपने पैर बढ़ाने लगा।"

"आखिर गांवके बाहर कई झोंपड़ियां खड़ी थीं। भिखारी एक झोंपड़ी में घुस गया। मैंभी झोंपड़ी के पास एक दरख्तके नीचे बैठ गया। फिर जो मैंने कुछ देखा उससे मेरे अचरजका पारावार नहीं रहा झोंपड़ी में एक बुढ़िया और बूढ़ा उसकी बाट जोरहे थे। उसके आते ही दोनों उठकर उसके गले लिपट

गये और भीखके लिये पूछा। शायद वे उसके माँ-बाप थे। भिखारी ने झोली दोनों के आगे रखदी और आप स्वयं झोंपड़ी के एक कोने में बैठ गया। बुड्ढे ने उस लड़के को भी खाने के लिये कहा, पर उसने साफ इन्कार कर दिया और कहा—अब्बा मैं तो बाजार में ही खाकर आगया हूं।"

"बाबू साहब उस दिनकी वह घटना देखकर मेरे हृदयमें उजाला होगया उसी दम वहांसे किसी अनिश्चित स्थानको ओर चल पड़ा।"

* * *

"फिर क्या हुआ? महाशय जी?"

"हां सुनिये, जनाब! मैंने एक गाँवमें जाकर उस दुअन्नीका थोड़ा खोमचेका सामान खरीदा। बाजारमें बेचनेसे चार आने के पैसे प्राप्त हुये। मैं बेचकर सीधे पैरों उस दूकानदार के यहां पहुंचा और बड़ी आरजू-मिन्नत करके अपनी वही दुअन्नी उससे दूसरी दुअन्नी के बदले लेली। बस, उन पैसों से ही मैं रोज इसी तरह सामान खरीद कर बेच डालता। मुझे इससे दिनोंदिन फायदा रहने लगा।"

"मैं अर्से तक इधर उधर धन्दा करता रहा। मेरे पास काफी रुपये होगये और एक दिन मैंने उन रुपयोंको साथ लेकर अपने गांव जानेका इरादा किया अफसोस! वहां पहुंचकर मालूम हुआ कि कल रात को मेरे बूढ़े मां बाप इस दुनिया से कूच कर गये हैं।"।

मैं दिल थाम कर उस अजनबी की बात सुन रहा था।

वह फिर कहने लगा—

"आज इसी दुअन्नी की बदौलत मैं एक मालदार सौदागर होगया हूं। दुःख यही है कि जिस दुआ ने मुझे यह दुअन्नी दी थी उसकी इकली का चमत्कार मैं उसको नहीं दिखा सका। अब मैं हमेशा उसे अपने पास रखता हूं और इसे देखकर दो बून्द आँसुओं की गिरा देता हूं।

मैंने यह सब सुनकर एक ठंडी सांसली। और उसी तरह अपनेकाममें मसगूल होगया।

मैंने खोजा

रचयिता—
पं० चाँदमल जी जैन
"शशि"
बी० ए० विशारद

आ, आ, तुझको हृदय लगालूं ।
मनकी विद्वेषाग्नि बुझालूं ॥
तू अमित्र मेरा था, पर अब तुझको मित्र बनालूं ।
कर अपराध क्षमा सब तेरे, तुझसे क्षमा करालूं ॥

(२)

तब मुझ में अज्ञान भरा था ।
तेरे में भी क्रोध खरा था ॥
थे लड़-मरते तनिक बात पर, समझ शक्ति सब खोकर ।
इसीलिये तब मिली सफलता नहीं फूट में होकर ॥

(३)

रहा सदा तू मलता हाथ ।
दिया किसी ने तुझे न साथ ॥
प्रत्युत, औरों ने तुझको मुझसे लड़ने को विवश किया ।
मैंने भी तुझ से बाजी लेनेको, खो सर्वस्व दिया ॥

(४)

खेद ! हाथमें आया क्या ?
खोकर फिर पछताये क्या ?
कर अपकार अनेकों तूने, मुझको नीचा दिखलाया ।
मैं ने भी निन्दा की तेरी, कहो, कौनसा फल पाया ॥

(५)

सुन भाई, आपसकी फूट ।
जब तक जाय न बिल्कुल छूट ॥
और हृदयसे हृदय मिले नहीं, तब तक तुम यह जानो सत्य—
भारत-भू पर सदा रहेगा, यही अशिव प्रलयङ्कर नृत्य ॥

(६)

अतः छोड़ अब उन बातों को ।
मैं भी भूला उन बातों को ॥
अबतो, आ, आ, मिला हृदयसे हृदय एक मत होजा ।
यह ही एक उपाय समुन्नति का है, मैंने खोजा ॥

वेद निर्माता

(ले०—श्रीमान स्वामी कर्मानन्द जी)

प्रिय पाठक वृन्द ! वेद कब एवं कहां बने तथा किसने बनाये। यह एक बड़ी भारी समस्या है, अनेक विद्वानों ने अपने २ ढंग पर इसको सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। परन्तु दुःख है कि इन में प्रायः ऐसे विद्वान हैं जिन्होंने अपना एक सिद्धान्त प्रथम ही निर्धारित कर लिया है और पुनः उसको सिद्ध करने के लिये अपनी सम्पूर्ण शक्ति को व्यय किया है। इसका परिणाम यह हुआ कि यह समस्या और भी जटिल बन गई है।

इसी कारण से आज वेदोत्पत्ति विषय में सैकड़ों सिद्धान्त उपलब्ध होते हैं। इन वादों की यदि समालोचना की जावे तो एक वृहद ग्रंथ तय्यार हो जावे। इस लिये हम तो इस समय केवल वेद किस ने तथा कब बनाये इस विषय में वैदिक साहित्य की निष्पक्ष क्या सम्मति है इसी पर विचार कर रहे हैं। इस विषय में जितने प्रमाण उपस्थित कर रहा हूं उनपर विबुधमण्डल विचार करें, तथा इसमें जो त्रुटि प्रतीत हो उसे मेरे पास लिख कर भेजने की कृपा करें। मैं उनका आभारी होऊंगा, तथा अपनी मान्यता पर पुनः विचार करूंगा।

यह लेख किसी खण्डन मण्डन की दृष्टि से नहीं लिखा जा रहा है अपितु ऐतिहासिक ज्ञान तथा सत्य की गवेषणा बुद्धि से लिखा जा रहा है। वैदिक स्वाध्याय से मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि वेद काव्य ग्रन्थ हैं, इनमें अनेक कवियों की रचना का संग्रह है, ये कवितायें तत्कालीन समय के अनुसार ही विविध प्रकार से बनी थीं। उनमें कुछ तो कवि-सम्मेलनों के समय समस्या पूर्ति के रूप में बनी हैं, शिव संकल्प आदि अनेक सूक्त इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। तथा कई स्वतन्त्र रचनायें हैं, जो विद्वान उस विषय पर लिखकर लाते थे। तथा कई इन सम्मेलनों से पूर्व अथवा पश्चात की रचनायें हैं; इस विषय में वैदिक साहित्य में से कुछ प्रमाण विद्वत समाज के सन्मुख उपस्थित करता हूं आशा है विचार शील विद्वान इनपर तटस्थ भाव से विचार करेंगे।

सरस्वान् धीभिर्वरुणो धृत व्रतः। पूषा विष्णुर्महिमा वायुरश्विना। ब्रह्मकृतो अमृता विश्व वेदसः, शर्मनोयंसन् त्रिवरूथं अंहसः॥

ऋ० मं० १० सू० ६ मं० ५

अर्थ— सरस्वान वरुण ने अपनी बुद्धिसे पूषा, विष्णु, वायु, अश्विनौ की महिमा के मन्त्र बनाये। सब देव हमारे लिये कल्याणप्रद हों।

१ ब्रह्मकृणोति वरुणः। मं० १ सु० १०५ मं० १५

२ ऋषेर्मन्त्रकृतांस्तोमैः कश्यपः। ९-११४-२

३ अहं ब्रह्म कृणावं मह्यंवर्धनम। १०-७६-११

४ अग्नये ब्रह्म ऋभवस्ततक्षुः १०-८०-७

५ उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत८-१२-१४

६ मिमीहि श्लोकमास्ये१-३८-१४

भो ऋत्विक्त्वं (आस्ये) मुखेन (श्लोकं) वेदमन्त्रं, (मिमीहि) विरचय निर्मितंकुरु, इति सायनः। अयं

देवाय जन्मनेस्तोमा विप्रेभि रासया अकारि १-२०-१

देवत्व प्राप्तिके लिये, सम्वत्सर के लिये यह स्तोत्र (स्तुतिमन्त्राः) ब्राह्मणों ने मुखसे बनाया। इन सब मन्त्रों में, वरुण, कश्यप, ऋभव, अदिति, विप्र, आदिको स्पष्ट मन्त्र बनाने वाला लिखा है। तथा

गोतमोनव्यमतक्षत् ब्रह्म। १-६२=१३।

अर्थ— गोतम ऋषिने नये मन्त्र बनाये।

अकारि ते इन्द्र गोतमेभिर्ब्रह्माणि॥ १-६३-६

अर्थ— हे इन्द्र तेरे लिये गोतम ने मन्त्र बनाये।

ब्रह्मकुशिकास एरिरे। ३-२९-१५

अर्थ- कुशिकोंने मन्त्र बनाये।

इन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ७-३१-१३

अर्थ- ब्राह्मणों ने इन्द्रके लिये मन्त्र बनाये।

उकथं नवीयो जनयस्व। ६+१८-१५

अर्थ- सामवेद के नये मन्त्र बनाये।

अश्विना कराबासो वं ब्रह्मकृण्वन्ति १-४७-२

अर्थ- अश्विदेवों के लिये काण्वोंने मन्त्र बनाये।

७. ब्रह्मस्तोमं गृत्समदासः अकन। २-३९-८

नोट-१ वरुण मन्त्र करता है।

२ कश्यप, मन्त्रों मे मन्त्र बनाने वालों में श्रेष्ठ ऋषि की स्तुति करता है।

(३), मैंने मन्त्र बनाये मुझे धन और उपाधि हो।

(४) अग्नि के लिये ऋभुव ने मन्त्र रचे।

५ यज्ञमें अदितिने इन्द्रके लिये स्तोम (सूक्त) बनाया है।

६ तुम मन्त्रको मुखसे बनाओ।

७ गृत्समदों ने मन्त्र बनाये।

इमं स्तो मं पुरु भुजा कृतम्॥८-८ -

अर्थ—यह सूक्त पुरु भुज ने बनाया।

ब्रह्म कृता अमृताः॥१०-६१-१३

अर्थ- अनेक विद्वानों ने मन्त्र बनाये।

इत्यादि ऋग्वेद के मन्त्र तथा इसी प्रकार अन्य भी शतशः वैदिक प्रमाण विद्यमान हैं जिनमें वेद रचयिता ऋषियों का वर्णन है।

इस प्रकार के प्रबल प्रमाणों को देख कर श्रद्धालु भक्तों की भक्ति का स्रोत बन्द हो जाता है और वे इधर उधर की कल्पना करने लगते हैं। तथाच कहते हैं कि यहां मन्त्रों के दर्शक होने का भाव है बनाने का नहीं।

ऋषि दर्शनात् (निरुक्त) तथाच ऋषयो मन्त्र द्रष्टारः

आदि अनेक प्रमाणाभास देकर अपने मन सन्तुष्ट करते हैं। यदि इनसे कोई पूछे कि साइन बोर्ड पर लिखे हुये मन्त्रों को देखने वालों का नाम ऋषि है या पुस्तकों में छपे हुये मन्त्रों को देखने वालों का नाम ऋषि है, अथवा आर्यसमाज के किसी मन्दिर के किसी खास स्थान पर मन्त्र रख रक्खे हैं जहां ये ऋषि लोग देखने जाते हैं। तब ये भोले भाई कहते हैं कि मन्त्र द्रष्टाका अर्थ है 'मन्त्रार्थ द्रष्टा,' परन्तु जो प्रश्न पूर्व थे वही अब भी हैं, मन्त्रार्थ क्या चीज है जिसको ऋषि लोग देखते थे. कोई पर्वत था, मनुष्य था, अथवा कोई पशु पक्षी था जिसको देख लेते थे और यह ऋषि बन जाते थे। फिर इन भाइयों की बुद्धि पर जरा ज़ोर पडता है तो कहते हैं कि ऋषि लोग योग समाधि द्वारा मन्त्रों के अर्थों को देखा करते थे। यथा—

ऋषिरतीन्द्रियार्थ द्रष्टा मन्त्र कृत् (सायन)

बस, इन संस्कृतानभिज्ञ स्वाध्याय से विमुख भोले आर्यों को बहकाने के लिये इतना ही पर्याप्त है।

अतीन्द्रिय का अर्थ है जो इन्द्रियों से परे हो जो वस्तु इन्द्रियों से परे है उसका देखना कैसे हो सकता है यह तो आर्य पुरुष ही जान सकते हैं, यदि कहो देखने के अर्थ अनुभव के हैं तो भी नहीं बनता क्यों कि अनुभव किसका? यदि कहो मन्त्र के अर्थ का तो मन्त्र का अर्थ तो है ही नहीं उसका अनुभव कैसा क्या स्वरूप के दर्शन की तरह दर्शन करते थे। यदि कहो अर्थ तो विद्यमान था तब सभी दर्शन कर सकते थे इनकी क्या विशेषता थी, यदि कहो सबको तो वे ऋषि नहीं दिखलाते थे तो बात दूसरी है।

मन्त्र द्रष्टा तथा मन्त्रार्थ द्रष्टा की उपरोक्त सब व्याख्यायें शब्दाडम्बर के सिवा कुछ भी नहीं है। एक बात और भी है श्री स्वामी दयानन्द जी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में लिखा है कि शब्दार्थ सम्बन्ध सहित चार ऋषियों को परमात्मा ने ज्ञान दिया तो फिर बाकी के ऋषियों ने क्या देखा? यदि कहो कि अर्थ लुप्त हो गये थे तो यह भी कल्पना ठीक नहीं क्योंकि जब मन्त्र थे तो उनके अर्थ भी होते। यदि कहो लोग भूल गये थे तो स्मरण हो सकते थे, ऐसी अवस्था में दर्शक नहीं। अपितु स्मरण करने वाला ऋषि होगा, परन्तु स्मरण तो सभी करते हैं वे भी ऋषि हो गये, इस लिये झूठ को सत्य सिद्ध करने का प्रयत्न करने की बजाय उसको त्याग देना ही श्रेयस्कर है।

प्रश्न—मन्त्रकार आदि शब्दों के अर्थ मन्त्र बनाने वाला नहीं करना चाहिये, क्योंकि हम लोक में सुवर्णकार आदि शब्दों को देखते हैं, तो क्या ये लोग सुवर्ण को बनाते हैं, इसी प्रकार यहां मन्त्रकार शब्द हैं। अतः मन्त्रकार का अर्थ यह हुआ।

१—मन्त्र तथा मन्त्रार्थ को अध्यापक,

२—मन्त्रों को लेकर विनियोग करने वाला

३—यज्ञादिक में मन्त्रों के प्रयोजन का निर्देश करने वाला।

४—प्राचीन मन्त्रों को लेकर उनका नया जोड़ तोड़ कर उनका विशेष भाव बतलाने वाला

तथाच—

ऋषिकृत, तनूकृत, ज्योतिषकृत, पुरुकृत, मामकृत, पथिकृत, स्तेयकृत, आदि वैदिक शब्दों का भी कहीं किसी गुण और कहीं किसी द्रव्य को प्रकट करने का भाव मिलता है। अतः यहां भी मन्त्रकार आदि शब्दों से आपके भाव नहीं लिये जा सकते।

ऋग्वेदपर व्याख्यान श्री० पं० भगवद्दत्तजी बी० ए० के आधार पर।

उत्तर—उपर्युक्त कथन आपके मत की पुष्टि नहीं करता, अपितु आपका विरोधी है, क्योंकि सुवर्णकार न तो सोने का अध्यापक और न सुवर्णार्थ का। तथा ना ही सोने का विनियोग बतलाता है, और न उसका प्रयोजन, न उसका विशेष भाव। अपितु वह सुवर्ण में ही परिवर्तन करके उसको नये रूप में कर देता है इस लिये वह सुवर्णकार है, परन्तु आपके ऋषि तो मन्त्रों के एक अक्षर को भी इधर उधर नहीं कर सकते। ग्रन्थ अध्यापक को ग्रन्थकार कहना यह हमारी समझ में तो भूल ही नहीं अपितु बड़ा भारी पाप भी है इसी प्रकार विनियोगकार को

विनियोगकार कहेंगे न कि मन्त्रकार, इसी प्रकार अन्य बातों के विषय में भी है। ऋषिकृत आदि शब्दों से भी आपका स्वार्थ सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि एक मनुष्य को शिक्षा देकर विद्वान बनाने वाले को ऋषिकृत कहना बिलकुल उसी अर्थ में है जिस अर्थ में हम मन्त्रकार का अर्थ ले रहे है। कुम्भकार, अयस्कार, सुवर्णकार, ग्रन्थकार, चित्रकार आदि शब्दों का अर्थ है कारणरूप से वस्तु को कार्य रूप में परिणत करने वाला। बस यहां भी यही अर्थ है, अर्थात अपने भावों को कविता रूपी शब्दों में प्रकट करने वाला। शब्दों के बनाने वाला नहीं अपितु शब्दों को कवितारूप में करने वाला। यही भाव अन्य ग्रन्थकारों के लिये भी है, फिर ये मन्त्र तो ईश्वर कृत माने जावें तथा अन्य ग्रन्थ न माने जावें यह पक्षपात क्यों?

पं० भगवद्दत्त जी की दो बातें यहां विचारनेकी है। एकतो प्राचीन मन्त्रों को लेकर नया जोड़ तोड़ कर उनका विशेष भाव बतलाना। दूसरे आपने चित्रकार, ग्रन्थकार, सूत्रकार आदि शब्दों के भी उदाहरण दिये है। आपका कथन है कि यदि सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जावे तो संसारमें नूतन वस्तु ही कोई उत्पन्न नहीं होती। सब पदार्थों में रूपका परिवर्तन मात्र किया जाता है। अतः उन २ नूतन प्रतीत होने वाले पदार्थों के कर्ता वास्तव में उन २ पदार्थों का जोड़ तोड़ कर रहे होते है।

अब आपका आशय स्पष्ट होगया कि मन्त्रकारका वही अर्थ है जो चित्रकार अथवा ग्रंथकारका है। जिस जिस प्रकार कुशल चित्रकार अनेक रंगों के जोड़से एक चित्र बना देता है अथवा जिस प्रकार अनेक ग्रंथों को तोड़ जोड़ कर पंडित जी ने यह ग्रंथ (ऋग्वेद पर व्याख्यान) बना दिया है। और वे ग्रंथकार कहलाते हैं, इसी प्रकार अनेक मन्त्रों का अथवा शब्दों का जोड़ तोड़ करके जो नये प्रतीत होने वाले मन्त्र बनाते थे उन ऋषियों का नाम मन्त्रकार है। हम भी इसी अर्थ में मन्त्रकार के अर्थ लेते हैं, तथा अन्य सभी विद्वानों ने भी इसी अर्थका आश्रय लिया है। पुनः आपने यह ग्रंथ लिखनेका कष्ट क्यों किया? संभव है नमूना दिखलाने के लिये किया हो!

सच तो यह है कि एक योग्य विद्वान सचाई को कहां तक छिपाता। अन्तमें घट्टकुटी प्रभात न्यायानुसार उन्हें ठीक मार्गपर आना ही पड़ा। अब प्रश्न यह रह जाता है कि वे प्राचीन मंत्र कौनसे थे? जिन को तोड़ फोड कर ये नये मन्त्र बनाये गये इसका सविस्तार वर्णन हम आगे करेंगे।

एक प्रश्न यहां और भी उठता है कि यदि अध्यापक, अथवा प्रचारक, आदि लोग मन्त्रकर्ता, कहलाते हैं तो आजकलके आर्य पण्डित अथवा भजनीक आदि सभी मन्त्रकर्ता कहलाने चाहिये तथा अबसे पूर्व भी असंख्य विद्वान प्रचारक, अध्यापक, भाष्यकारक, लेखक कंठस्थ करने वाले होचुके हैं। उन सबको भी मन्त्रकार की उपाधि क्यों न मिली? दुःख तो यह है कि वेदोंके ज्ञाता अनुपम प्रचारक महर्षि दयानन्द को भी वेदकारकी उपाधि प्रदान न कीगई। इस कन्जूसी का क्या कारण है? यह समझ में नहीं आता।

प्रश्न— जिस ऋषिका नाम जिस मन्त्र पर है उस ऋषिसे पूर्व भी वे मन्त्र थे। यथा अजीगर्त कर्त्ता

थान का उदाहरण है। तथा च एक मन्त्र के अनेक ऋषि भी हैं तो क्या उन सबने मिलकर यह मन्त्र बनाया था। तथा एक ही मन्त्र जो स्थानान्तर में अथवा अन्य संहितामें आता है तो उसका ऋषि भी पृथक् होता है तो वह मन्त्र किस ऋषिका बनाया हुआ मानोगे। देखो ऋग्वेद पर व्याख्यान और आर्य सिद्धान्त विमर्श, सार्वदेशिक सभा द्वारा छपी हुई है

उत्तर— उपरोक्त सब प्रश्न उसी समय हो सकते हैं जब हम ये मानते हों कि जिन मन्त्रों पर जिन ऋषियोंका नाम लिखा है उन मन्त्रों के बनाने वाले वे ही ऋषि थे। हमारे सिद्धान्तानुसार तो जब मन्त्रोंका संग्रह होता था उस समय जिस ऋषि द्वारा जो मन्त्र प्राप्त होता था उसका नाम उस मन्त्र पर लिख दिया जाता था, चाहे वह बनाने वाला हो या रक्षक हो। हमारे सत्य सिद्धान्त के आगे उपरोक्त प्रश्नोंका कुछ भी मूल्य नहीं है।

—रहस्यमय एक प्रमाण—

तान्वासतान्सं पातान् विश्वामित्र प्रथममपश्यत्। तान् विश्वामित्रेण दृष्टान् वामदेवोऽसृजत्।

स हे क्षां चक्रे विश्वामित्रो यान् वाहं सम्पातान् दृर्शस्तान्। वामदेवोऽसृजत् कानिन्वहं हि सूक्तानि सम्पातान् तत्प्रतिमान् सृजेयमिति।

गोपथ० उत्तरार्ध, प्र० ६ कं० ।

अर्थ- ऋग्वेद के सम्पात सूक्त को विश्वामित्रने पहिले देखा (बनाया) परन्तु वामदेवने उनको बनादिया (अर्थात् अपने नामसे प्रकट कर दिया कि यह सूक्त मैंने बनाया है) विश्वामित्र ने विचार किया कि अब मैं कौनसे मन्त्रोंको सम्पात नामसे बनाऊं, तो उसने दूसरे मन्त्रोंको सम्पात नामसे बनाया।

उपरोक्त प्रमाणमें निम्नलिखित बातें स्पष्ट हो जाती हैं।

१- दृश धातु का अर्थ बनाना है क्योंकि अपश्यत् तथा असृजत् शब्दोंका यहां एक ही अर्थ है।

२- एक व्यक्ति के बनाये हुये मन्त्रोंको दूसरा ऋषि अपने नामसे प्रकट कर देता था जैसाकि आजकल भी क्षुद्र लोग करते हैं।

आर्यसमाज के सुयोग्य विद्वान पं० भगवत्दत्त जी बी० ए० ने अपनी पुस्तक ऋग्वेद पर व्याख्यान में (जिसको हम आगे रक्खेंगे) निम्नलिखित आक्षेप भी आये हैं—

१—मन्त्रकार का अर्थ है विचार कर्ता, अर्थात मन्त्र के अर्थ विचार के हैं।

२—यदि मन्त्रकृत शब्द का अर्थ मन्त्र बनाने वाला करोगे तो—

मन्त्र कृतोवृणीते, "यथर्षिमन्त्रकृतोवृणीते" इति विज्ञायते, (दक्षिणस्त उदङ् मुखो मन्त्रकारः) पारस्कर गृह्य सूत्र, इत्यादि सूत्रों में आये हुये मन्त्रकार, मन्त्रकृत आदि शब्दों का क्या अर्थ होगा, यदि यहां भी मन्त्रकृतका अर्थ मन्त्र बनाने वाला ही करोगे तब तो वेद इन सूत्रग्रन्थ कालमें बनते थे ऐसा मानना पड़ेगा, परन्तु यह मत किसी भी ऐतिहासिक विद्वान को स्वीकृत नहीं हो सकता यदि अन्य अर्थ लोगे तो जो अर्थ यहां ग्रहण करते हो वही अर्थ वेदों में तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में आये मन्त्रकृत आदि शब्दों का भी करना उचित है।

समीक्षा—विद्वान लेखक ने पूर्व पक्ष कुछ थोड़े

से मन्त्रों को रख कर बड़ी बुद्धिमानी से उत्तर देने का प्रयत्न किया है इसमें कोई सन्देह नहीं है. वेद विषयक स्वाध्याय भी आपका अपरिमित है यह भी निर्विवाद है, परन्तु हम तो सत्य की गवेषणा के लिये उसपर परीक्षक की दृष्टि से विचार कर रहे हैं।

१—आपका यह कथन कि पूर्वपक्ष में दिये जाने वाले प्रमाणों में मन्त्र शब्द का अर्थ 'विचार' है यह एक प्रकार का वाक् छल प्रतीत होता है जो कि जय पराजय के समय उपयोग में लाया जाता है, मैं इस कार्य को पण्डित जी के योग्य नहीं समझता हूं।

किं बहुना महर्षि दयानन्द जी ने भी—

अयं स्तोमो देवाये जन्मने विप्रेभिः अकारि रत्न धातमः

इस मन्त्र के भाष्य में, स्तोमका अर्थ 'स्तुति' समूह तथा अकारि का अर्थ 'करते हैं', ऐसा ही किया है। तथाच मन्त्र शब्द का अर्थ 'विचार' वैदिक साहित्य में उपलब्ध नहीं होता, अपितु ब्राह्मण ग्रन्थ स्पष्ट लिखते हैं कि—

वाग वै मन्त्रः, शतपथ० ६-४-१-७

ब्रह्म वै मन्त्रः, शतपथ० ७-१-१-५

वाग हि मन्त्रः, शतपथ० १-४-४-११

अर्थात वाक ही मन्त्र है, वेद ही मन्त्र है, यहां वाक शब्दसे भी वेद ही गृहीत है। उपरोक्त प्रमाणों में हि, वै आदि शब्दों का प्रयोग करके ऋषि ने अन्य अर्थ का स्पष्ट खण्डन कर दिया है।

तथाच—ब्रह्मकृत आदि अनेक शब्द हैं जो कि मन्त्र के ही अर्थों में है, उनको आपने पूर्वपक्ष में रखने की कृपा नहीं की। यहां ब्रह्म का अर्थ ईश्वर नहीं हो सकता तथा ना ही विचार हो सकता है, अतः मन्त्रकृत आदि शब्द जो वेदों में आये हैं उनका अर्थ विचार करने वाला कदापि नहीं हो सकता। इन प्रमाणों को हम आगे रक्खेंगे जिससे पाठक स्वयं जान जायेंगे कि पं० जी का अर्थ, अर्थ कहलाने का अधिकारी नहीं है। विशेष कथा मन्त्र शब्द का 'विचार' अर्थ अत्यन्त नवीन है, जो कि वेद मन्त्रों के आधार पर ही निर्माण किया गया है, अभिप्राय यह है कि वैदिक साहित्य में मन्त्रका अर्थ 'वेदमन्त्र' ही है था और है। परन्तु जिस समय इनका ही अधिक विचार होता था उस समय लोगोंने मन्त्रके ही अर्थ 'विचार' कर दिये। अतः वेदोंमें आये हुये मन्त्र के अर्थ 'विचार' कदापि नहीं होसकते।

दूसरा समाधान भी आपके अभिप्रायकी पुष्टि नहीं करता क्योंकि श्रौत सूत्रोंमें जो मन्त्रकार आदि शब्द आये हैं वे रूढिवाद को लेकर आये हैं। अर्थात् पूर्व समयमें उस क्रिया के लिये मन्त्र बनाने वाले ही का वरण होता था इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु बादमें यह रूढि पड़गई कि प्रत्येक यज्ञमें, प्रत्येक कालमें उसका वरण करने लगे। इसलिये इससे तो आपके सिद्धान्तकी हानि ही होती है। पुष्टि किसी भी प्रकार नहीं होती। तथा च आपके कथनानुसार भी मन्त्रकारका अर्थ है— 'मन्त्रद्रष्टा' जैसा कि आपने इसी पुस्तक में लिखा है, तो क्या आप इस समय मन्त्रद्रष्टा ऋषियों का सद्भाव मानते है। यदि हां, तबतो उनका नाम प्रगट करनेकी कृपा करनी चाहिये यदि नहीं, तो इस समय मन्त्रकार कहकर किसका वरण करते हैं ?

शेष २२ पृष्ठ पर

जैन बनाम हिन्दू

(ले०—पं० कैलाशचन्द्र जी जैन न्यायतीर्थ बनारस)

अभी उस दिन मैं अपने एक ब्राह्मण मित्र के घर बैठा था। बात चीतके सिलसिलेमें उन्होंने पूछा—क्या आप लोग हिन्दू हैं? मैं ने उत्तर दिया-हमारा हिन्दू होना या न होना 'हिन्दू' शब्द की व्याख्या के ऊपर निर्भर करता है।

* * *

आजकल बम्बई प्रान्त में बम्बई कौंसिल के एक प्रस्ताव को लेकर "जैन हिन्दू हैं या नहीं" इस विषय पर खूब वाद-विवाद छिड़ा है। शोलापुर की पंचायत ने एक प्रस्ताव द्वारा यह घोषणा कर दी है कि जैन हिन्दू नहीं हैं। शोलापुर के पं० वंशीधर जी शास्त्री पंचायत के निर्णय से कुछ घबराये हुये से ज्ञान पड़ते हैं। आप कहते हैं कि यह सिद्धान्त का प्रश्न है विद्वानों को बहुत सोच समझ कर जवाब निकालना चाहिये, इत्यादि। फलतः शास्त्री जी ने सोच समझ कर जवाब निकालना प्रारम्भ भी कर दिया है। आप महासभा के मुख पत्र 'जैनगजट' के द्वारा यह प्रोपेगण्डा कर रहे हैं कि "जैन हिन्दू हैं और उन्हें वर्णाश्रमस्वराज्य संघ नाम की सनातनी हिन्दू संस्था में सम्मिलित हो जाना चाहिये। इस लेख में हम इसी विषय पर अपना मत व्यक्त करेंगे।

जहां तक मैं जानता हूं 'हिन्दू' नाम इतिहासातीत काल का नहीं है। यह नाम उन विदेशी आक्रमणकारियोंका दिया हुआ है जो 'स'का उच्चारण 'ह' करते थे और इसकी सृष्टि सिन्धप्रदेश की प्रसिद्ध नदी सिन्धु से हुई है। अंग्रेजोंका 'इण्डिया' नाम भी इसी नदी के उच्चारण भेद का फल है। अस्तु, भारतवर्ष में आज यह विदेशीदत्त नाम एक खास सम्प्रदाय के लिये रूढ़ हो गया है और राम कृष्ण आदिक हिन्दू देवता माने जाते हैं। आज तक जितना साहित्य निर्मित हुआ है उसमें 'हिन्दू' शब्द का यही रूप देखने में आता है। कुछ दिनों से संभवतः हिन्दू महासभा के जन्मकाल से—हिन्दू शब्द की परिभाषा को विस्तृत करने की चर्चा सुनाई देने लगी है और एक दो बार किसी उदार हिन्दू नेता के मुख से सुना है कि "जो धर्म या जिन धर्मों के संस्थापक भारतवर्ष में उत्पन्न हुये हैं वे सब हिन्दू हैं"। किन्तु यह सब ज़बानी जमा खर्च है, भारतिक

---

२१ पृष्ठ से आगे

यदि कहो विचारक का, तब तो खण्डन मंडन करने वाले सभी विचारक हैं। पुनः विशेषता क्या रही, तथा मंडन करने वालों के भी अनेक सम्प्रदाय हैं। उनमें किस सम्प्रदाय के व्यक्तिका ग्रहण करोगे? यदि आर्यसमाज का, तो क्यों? तथा च समाज में भी अनेक प्रकारके विचारक हैं। कोई वेदोंमें मिला-वट मानता है, कोई नहीं मानता, कोई एक ऋषि पर प्रकट हुये मानता है, कोई चार पर, कहां तक लिखें? 'मुण्डे २ मतिर्भिन्ना' है। इसलिये यह युक्ति भी आप के पक्षका पोषण नहीं करती। तथा निरुक्तकारने इसको स्पष्ट कर दिया है कि ऋषि मन्त्रों के कर्ता थे उनके अध्यापक आदि नहीं थे।

या ऐतिहासिक क्षेत्र में अभी इस विषय की कोई चर्चा मैंने देखने या सुनने में नहीं आई। और जिन वर्णाश्रमियों में पंडित जी सम्मिलित होने की सम्मति देते हैं वे तो अभी इस व्याख्या से कोसों दूर हैं। पंडित जी को यह स्मरण रखना चाहिये कि वर्णाश्रम संघ के कार्य कर्ता पंडित जी कम उदार नहीं हैं। उनमें निन्यानवे प्रतिशत 'न गच्छेज्जैन मन्दिरम्' का राग अलापने वाले आज भी मौजूद हैं। अभी गया का ताजा उदाहरण है। गया में वर्णाश्रम-स्वराज्यसंघ के अधिवेशन के समय कलकत्ते की काली देवी के सामने पशुवध बन्द कराने के लिये ३२ दिन का अनशन करने वाले पं० रामचन्द्र शर्मा का विरोध करते हुए जैनियों को भी खूब खरी २ सुनाई गई और पब्लिक में यह कहा गया कि यह झगड़ा जैनों ने खड़ा किया है रामचन्द्र जैनों का आदमी है, बलि हिंसा शास्त्रसम्मत है उसे बन्द नहीं करना चाहिये, इत्यादि। ऐसे डिमकों में अहिंसक जैनों को सम्मिलित होने की सम्मति जैनधर्म संरक्षिणी महासभा के कर्णधार विद्वान देते हैं — किमाश्चर्यमतः परम्।

ऐसी दशा में— जब हिन्दू शब्द की व्याख्या अपरिमार्जित है संकुचित है, एक धर्म विशेष में रूढ है और हिन्दुओं की मनोवृत्ति जैनधर्म के बारेमें अभी सदनदय है—जैनोंका हिन्दू बनजाना आत्मघात से भी अधिक भयंकर सिद्ध होगा। एक बार एक लेखकने लिखा था कि "जैन धर्म हिन्दू धर्मकी ही शाखा है कारण, अब वह पुनः उसमें ही समाता जाता है। एक दूसरे लेखक ने लिखा था- "भगवान महावीर ने वेदों का ही अध्ययन किया और उसीसे जैनधर्म चालू किया था" जब स्वतंत्र सत्ता कायम रखते हुए हिन्दू लेखक ऐसी बातें लिखने से नहीं चूकते। तब स्वयं उनमें मिलने का प्रयास करने पर तो उन्हें अपने मतका समर्थन करने में प्रबल प्रमाण मिल जावेगा।

हम हिन्दुओं में क्यों सम्मिलित हों ?

प्रत्येक जैन यह प्रश्न कर सकता है कि हिन्दुओं में (वर्णाश्रमधर्मी सनातनियों में) क्यों सम्मिलित हों ? पंडितजी इसके निम्नलिखित कारण बतलाते हैं

१-हम कमजोर हैं।

२-हिन्दुओं में सम्मिलित होनेसे हमारी संख्या वृद्धि होगी।

३-हिन्दुओं के अनुचित आघातों से बच सकेंगे।

४-राज्य व्यवस्था में अपने विशेष कायदे कबूल कराये जा सकते हैं।

५-हिन्दू और हिन्दुस्थान तो ठीक जम जाता है। किन्तु जैन और हिन्दुस्थान यह कहना देशनिवासित्व अर्थ को नहीं दिखाता। अतः यदि हिन्दुस्थान के मुख्य हकदार बनना चाहते हो तो हिन्दू बनजाओ।

इन कारणों को देखकर कोई भी दूरदर्शी व्यक्ति हंसे बिना न रहेगा। यदि बौद्ध युगमें अकलंक देव भी यह सोच लेते तो आज जैनों को शुद्ध करके हिन्दू बनानेका कष्ट पंडित जी को उठाना ही न पड़ता सब जैन हिंदू होते और इतने बड़े हिन्दुस्थानके भागी दार होते। किसी धर्मके आघातों से बचने के लिये वह धर्म कबूल कर लेना तो सरल उपाय है। बुज दिले और कमजोर लोग ऐसाही करते आये हैं।

यदि जैन भी इतने बुजदिले, कायर और डरपोक बन गये हैं कि अपने धर्मकी रक्षा नहीं कर सकते तो अवश्य उन्हें हिन्दुओं के दामनमें अपना मुँह छिपा लेना चाहिये। कमजोर के लिये आज इस दुनियां में कोई जगह नहीं है। जो अपनी कमजोरी को दूर न करके सबल कहे जाने वालोंका आश्रय लेना चाहते हैं वे एक दिन अवश्य अपने अस्तित्व को खो बैठेंगे, इसमें जरा भी सन्देह नहीं है। हिंदुओं में मिल जाने के बाद राज्य-व्यवस्था में विशेष कायदे कबूल करवा लेनेकी कल्पना देश और राज्य शासन की व्यवस्था को गहरा अध्ययन न करनेका ही प्रतिफल मालूम होता है। नये शासन विधानमें भारतके मुख्य २ सम्प्रदायों का ध्यान रखकर ही कौंसिलों में स्थानों का बंटवारा किया गया है। जब जैन सम्प्रदायके स्वतंत्र अस्तित्वकाल में ही उसके पल्ले कुछ न पड़ा तब हिन्दू बन जाने के बाद तो हम स्वतंत्र स्थानकी मांग भी न कर सकेंगे। जो स्थान हिंदुओं के लिये होंगे, आजकी तरह वे भी वे ही हमारे कहे जायंगे। पता नहीं, इसके अतिरिक्त और कौनसा अधिकार पानेका सुख स्वप्न पंडित जी देख रहे हैं ?

हर्ष है कि संख्यावृद्धि की ओर पंडित जी का भी ध्यान गया है और अपने लेखों में उन्हों ने अनेक स्थलों पर जैनोंकी संख्या न बढ़ने पर दुःख प्रकट किया है। आपके कुछ वाक्य उद्धरण के योग्य हैं, यथा—"धर्मकी बढ़वारी का अपने यहां कोई मिशन नहीं है। प्रथम तो लोग गृहस्थी में ही अपना अन्त कर लेते हैं। यदि त्यागी उदासीन बने तो अपनी चर्या में से उन्हें धर्म प्रसार की फुर्सत नहीं मिलती। वे यदि धर्मका प्रसार करना समझते हैं तो इसी में कि गृहस्थों को मुनि या त्यागी बना देते हैं। परंतु नामतः स्थापनातोऽपि जैन बनाना उन्हें समझता ही नहीं। परन्तु ऐसा जैन समाज कभी विश्वव्यापी नहीं बन सकता। भंगी चमार हिन्दू कहाते हैं उनमें क्या धर्माचरण है। परन्तु उनसे भी संख्यावृद्धि और गौरव तो होता ही है। जब वे हिंदू हैं तो हिंदू का घात तो न करेंगे। इसी आशा से अपने जैन समाजकी वृद्धि करना चाहिये। यदि वे जैन अपनेको मानेंगे तो जैनधर्मका उन्हें भी कुछ न कुछ लाभ होगा ही और जैन धर्म को भी उनसे कुछ न कुछ फायदा अवश्य पहुंचेगा"। इतना सबकुछ कहने के बाद पण्डित जी फिर पुराना राग अलापते हैं—जहां चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का अभाव है वहां जैनधर्म के प्रचारका कुछ लोग स्वप्न देखते हैं परन्तु यह उनकी भूल है।" क्यों पंडित जी यह उनकी भूल क्यों है क्या विलायत के लोग भंगी, चमारों से भी गये बीते हैं ? भंगी, चमारों को तो कोई मन्दिर की सीढ़ी पर भी पैर भी नहीं रखने देते। किन्तु चातुर्वर्ण्य-व्यवस्थाहीन देशके वासियों को तो बड़े २ श्रीमान अपने मन्दिरों में निमंत्रित करके ले जाते हैं और उन श्रीमानों के आश्रित पंडित गण समाचार पत्रों द्वारा उनके इस कामकी बड़ाई करते नहीं थकते। मूल जैन धर्मकी वृद्धि ऐसे लोगों द्वारा न हो, किंतु 'नामतः स्थापनातोऽपि' की बात तो नहीं भुलाई जा सकती। आपके ही शब्दोंमें 'उन्हें भी कुछ न कुछ लाभ होगा ही और जैनधर्म को भी उनसे कुछ न कुछ फायदा अवश्य पहुंचेगा।'

पंडित जी लिखते हैं "जैन समाज अपने पन में इतना दृढ़ है कि अपन हिन्दू जनतामें शामिल रहना कबूल करे तो भी जैनसमाज जैनधर्मकी नीति मे नहीं हठ सकता और हिंदू समाज में इतना भोलापन मिलेगा कि वह अपनी तरफ आसकता है और जैनत्व को स्वीकार कर सकता है।" आगे चलकर पंडित जी फिर कहते हैं— 'हिन्दुओं ने जैनियों में से बहुत से समाज तोड़ लिये हैं किंतु जैनियों में यह दम नहीं कि अपने में से गये हुओं को भी वापिस ले लें "।

अब हम पण्डित जी महोदय से सादर पूछते हैं भोले कौन है? और अपनेपन में दृढ़ कौन है? हिन्दू या जैन। फिर भी आप हिन्दुओं में मिलकर जैन बनाने का स्वप्न देखते है। पण्डित जी ने जैनियों के सेवक, आश्रित तथा धर्मायतनों के सेवकों को जैन बनाने की सम्मति दी है और दुःख प्रकट करते हुये लिखा है—"परन्तु जैनी लोग यह समझते है कि इन्हे जैनी माना कि हमारा भी जैनधर्म इनके साथ डूब जायगा। जैनियों का कोई धार्मिक मिशन नहीं है"। स्यात उन्हें पिण्डशुद्धि के नष्ट हो जाने का भय होगा। धार्मिक मिशन का काम तो धर्म-संरक्षिणी बड़ी अच्छी तरह कर सकती है अन्यथा वह है किस मर्ज का दवा?

पांचवीं बात पर तो हमी आये बिना नहीं रहती, जैनी और हिन्दुस्तान की तुक नहीं मिलती अतः तुक मिलाने के लिये हमें हिन्दू बन जाना चाहिये। पंडित जी महाराज ऐसे बहुत से सम्प्रदाय हिन्दुस्तान में मौजूद है जिनकी तुक हिन्दुस्तान से नहीं मिलती फिर भी उन्हें तुक मिलाने की चिन्ता नहीं है, सब अपने २ धार्मिक नामों से पुकारे जाने में ही अपना गौरव समझते हैं। पता नहीं आप पर ही तुक मिलाने की चिंता क्यों सवार हुई है? स्यात आप हिन्दुस्तान के भागदार बनना चाहते हैं। किन्तु क्या हिन्दू बने बिना भागदार नहीं बन सकते। पारसी सिक्ख अंग्रेज मुसलमान सभी तो भागदार हैं किन्तु इन में से हिन्दू बनने की धुन किसी के सिर पर सवार नहीं हुई। पण्डित जी को यह स्मरण रखना चाहिये कि हिन्दुस्तान के बाहिर के निवासी यहां के प्रत्येक व्यक्ति को हिन्दू कह कर पुकारते हैं उनकी दृष्टि में प्रत्येक हिन्दुस्तानी हिन्दू है अत हिन्दुस्तान के भागदार बनने के लिये हिन्दू बनने की जरूरत नहीं है। फिर आज तो हिन्दुस्तान का भागदार कोई भी हिन्दू नहीं है, सब सरकार के आधीन हैं। स्वराज्य मिलने पर यह समस्या उठेगी किन्तु आप तो स्वराज्य चाहते ही नहीं और फिर आपकी नाम-दार सरकार ने ही जब आपकी बात नहीं बूझी तब स्वराज्य में बूझेगा ही कौन। और फिर अपन तो मुक्ति की कामना करते रहते है अतः अपन को देशमें भागीदार बनके करना भी क्या है।

हिन्दू किस प्रकार बनें?

क्यों के बाद कैसे का प्रश्न खड़ा होता है। पण्डित जी ने यह नुसखा भी बतला दिया है। सुनिये—

१—यहांका मूलधर्म वर्णाश्रम है और वर्णव्यवस्था ही हिन्दुत्व का लक्षण है वह लक्षण जैनों में भी है। अतः हमारी उनकी संस्कृति एक है।

२—हिन्दू और वेद का अधिकतर सम्बन्ध जरूर है परन्तु यही मात्र हिन्दू है ऐसा अर्थ हम क्यों कबूल करें ?

३—वेद को हम स्वतः प्रमाण नहीं मानते तो भी अपने को वेदनिंदक नहीं कहलाना चाहिये यह एक व्यवहार की कुशलता है।

भारत का मूलधर्म वर्णाश्रम है यह बतलाते हुए पण्डित जी लिखते हैं—"बहुत पहिले इस देश में ऋषियों का परस्पर मतभेद चला उसके फल स्वरूप जैन बौद्ध वैदिक ऐसे तीन भेद पड़ गये"। क्यों महाराज यह झगडा कब हुआ था और उसमें कौन २ से ऋषि सम्मिलित हुए थे ? जैन और वैदिक तो वर्णाश्रमधर्म को मानते ही हैं किन्तु बौद्ध नहीं मानते। फिर भी वैदिकों ने नास्तिक बुद्ध को अपने अवतारों में स्थान दे दिया और वर्णाश्रमी महावीर ऐसे ही रह गये। तथा जैन और वैदिक एक संस्कृति वाले होकर भी—पता नहीं—क्यों लड़ पड़े ? किन्तु बुजुर्ग लड़े तो लड़े पर अब उनकी चतुर सन्तान पण्डित जी अपने पूर्वजों की इस बड़ी भूल का परिशोध कर डालना चाहते हैं कुशल बेटों का यही तो काम है। हां, तो भारत का मूल धर्म वर्णाश्रम है किन्तु दुःख इस बात का है कि वर्णाश्रम को मूलधर्म मानने वालों ने आश्रम धर्म की तो स्वयं ही हत्या कर डाली क्योंकि वे तमाम आयु एक ही आश्रम में बिता कर जीवन का अन्त कर डालते हैं। रह गया 'वर्ण' सो राजनतिक महत्वाकांक्षा उसका भी अन्त करने पर उतारू है। सरकारी नौकरियों में अछूत भर्ती होने ही लगे हैं, आफीसर बनते ही उनका अछूतपन अंग्रेजों की तरह दूर हो जायगा और बड़े बड़े वर्णाश्रमी उनको नमस्कार कर अपने को धन्य समझने लगेंगे। बनारस में गंगा के तट पर वायसराय के पधारने के उपलक्ष्य में वर्णाश्रम संघ की ओर से यज्ञ किया गया था और वायसराय सबूट यज्ञवेदिका तक चले गये थे—यह क्या वर्णाश्रम धर्म है ?

वर्णाश्रमियों की इस दशा में वर्णाश्रम धर्म की रक्षा के विचार से उनमें मिलना आत्मवंचना है। मुक्ति के अन्य २ साधनों में से वर्ण भी एक साधन है किन्तु जैनधर्म उसे ही मूलधर्म नहीं मानता। धर्म का मूल साधन सम्यक्त्व है जो वर्णाश्रम हीन जीवों में भी रहता है। वर्णाश्रम हीन पांचवें गुणस्थान तक जाता है किन्तु मिथ्यादृष्टि वर्णाश्रमी पहले ही में रहता है। अतः वर्णाश्रम की रक्षा के लिये मिथ्यादृष्टियों में मिलना जैनत्व का संहार करना ही है।

वर्णाश्रमी होने मात्र से सांस्कृतिक एकता भी नहीं हो सकती। जिनके मन्दिर भिन्न, आचार व्यवहार भिन्न, धार्मिक व्यवहार भिन्न, उनकी संस्कृति एक कैसे हो सकती है ? मैं जहां रहता हूं उसके आस पास सब ब्राह्मण ही हैं उनमें अनेक मेरे मित्र हैं। किन्तु फिर भी मैं और वे पास २ नहीं आ सकते। वे एकादशी को फलाहार करें, मैं अष्टमी चतुर्दशी को एकाशन, वे रात को खायें, मैं दिन को वे अभक्ष्य भक्षण करें, मैं उससे बचूं वे जन्माष्टमी शिवरात्रि का उत्सव करें, मैं महावीरजन्म का। वे आश्विन में दस दिन दुर्गापूजा की खुशी मनायें, मैं

भाई में दशलाक्षणी के व्रत करूं। इस तीन और ६ में मेल कैसे हो सकता है ? दिगम्बर मुनियों की हंसी उडाने वाले नंगी प्रतिमाओं से मुंह सकोड़ने वाले महापुरुषों से हमारी कभी भी पटरी नहीं बैठ सकती।

हिन्दू बनने के लिये हिन्दू शब्द के रूढ़ अर्थ को न मानने की बात भी अजीब है। मत मानिये, इसमें हिन्दुओं का क्या बिगडता है। यदि ६-७ लाख दिगम्बर जैन जबरदस्ती अपने धार्मिक नाम को तिलांजलि देकर २३ करोड हिन्दुओं में शामिल होना चाहते है तो उसमें उनका क्या बिगडता है। यदि अम्बेदकर लाखों साथियों के साथ मुसलमान बनना चाहते है तो मुसलमान क्यों रोकेंगे—वे तो स्वागत करेंगे।

तीसरी बात तो बड़ी गजब की है। वर्णाश्रमी पण्डित कहीं रूठ न जावे इस लिये पण्डित जी की शुभ सम्मति है कि वेद की निन्दा मत करो। हम तो नहीं करेंगे पण्डित जी, किन्तु इन पुराने आचार्यों के शास्त्रों को कहां छिपावें, उन महानुभावों ने अपने शास्त्रों में वेद और ब्राह्मणों की खूब निन्दा कर डाली है। भला हो शास्त्र भन्डारों के अधिकारियों का, जिनकी सत्कृपा से बहुतसे हिन्दू द्रोही शास्त्र-काल के गाल में चले गये, किन्तु कुछ शास्त्र अब भी मौजूद हैं और पण्डित गण अपनी २ पाठशालाओं में उनका प्रतिवर्ष पारायण करते हैं। हमारे यहां तो बहुत से वर्णाश्रमी ब्राह्मणों की तबियत उन्हें देख कर खट्टी हो जाती है। यदि इन वेद निन्दकों का अस्तित्व समाप्त करने का कोई सदुपाय पण्डित जी बतलावें तो हिन्दू बनने में कोई कसर बाकी न रहेगी। फिर तो हम ताल ठोंक कर पण्डित जी के शब्दों में कह सकेंगे—"जो हिन्दू कहाते हैं वे नकली हिन्दू हैं असली हिन्दू हम हैं"। किन्तु फिर भी एक कमी हम में रह जायगी। दूरदर्शी पण्डित जी ने उसे भी भांप लिया और लिख ही तो मारा—"पेशाब या शौच जाकर आते ही आचमन करना चाहिये। परन्तु अपन ने रात्रि का आचमन तो यों छोडा कि रात्रि भोजन व्रत में मलिनता आ जायगी भला दिन का भी क्यों छोड़ दिया"। पता नहीं क्यों छोड दिया ? शायद ब्राह्मणों का जोर कम हो जाने से छोड दिया होगा, किन्तु कोई हानि नहीं है अब पुनः ब्राह्मणत्व का जोर पड़ने पर आचमन ही क्यों और सब भी होने लगेगा। आपका दम सलामत चाहिये—फिर जिनालयों की जगह शिवालयों की ध्वजा फहराने लगेगी।

कहां तक लिखें, जैनगजट के पन्ने के पन्ने ऐसी ही बे सिर पैर की बातों से भरे पड़े हैं। यदि अन्य किसी की लेखनी से ऐसा लेख लिखा जाता और पण्डित जी के मन के विरुद्ध होता तो पण्डित जी समस्त धार्मिक समाज की नींद हराम कर देते किंतु पण्डित जी के तो सत्तर खून माफ हैं वे सब कुछ लिख सकते है और कोई चूं भी नहीं कर सकता। इसी से कहते हैं "जबरदस्त मारे और रोने भी न दे" समय की बलिहारी है।

संगठन करनेके लिये अपने भाइयों को दुतकार कर गैरों से मिला जावे, यह एक अजब पहेली है। एक ही धर्मके मानने वाले महावीर के सच्चे उपासक श्वेताम्बरों से मेल करनेकी तो निन्दा की जावे मेलका प्रयत्न करने वालों को जली-कटी सुनाई

जावे और जैनधर्म के विपक्षियों से मेल करने की तैयारी की जावे, विरोधियों का सहयोगी बनने के लिये अपने नाक-कान कटाये जावें, कैसी उलटी भूल है।

जैन समाजकी रक्षा न तो हिंदू बननेसे होगी और न हिंदूधर्म का अंग बनने से होगी। आपसकी फूट, ईर्ष्या, द्वेष, और पारस्परिक कलह का एक स्वर से विरोध करने पर ही जैनोंका संगठन हो सकेगा। और हमारा संगठन ही हमारी रक्षा कर सकेगा। मोक्ष और पिण्ड शुद्धिके नाम पर जातियोंमें वैमनस्य फैलाना, मिले जुलोंको जबरदस्ती जुदा करार देदेना और पत्रों द्वारा अपने ही भाइयों पर कीचड़ उछालना इत्यादि बातों को जबतक बन्द न किया जायगा तबतक जैनसमाजकी रक्षा नहीं हो सकती। यथार्थमें अभीतक किसी जैन कार्यकर्ता के दिलमें समाज और धर्मकी रक्षाकी सच्ची लगन उत्पन्न ही नहीं हुई है। सबको अपनी २ पार्टियों की रक्षाका खयाल है और खयाल है दूसरी पार्टियों को नीचा दिखलानेका। इस आपसकी कशाकशी में धर्म और समाज रसातल को चला जाये तो उनकी बलासे। धर्म शब्द तो कभी मर नहीं सकता किन्तु जनता को बहकाने के लिये 'धर्म' का नाम लेलेना काफी है। अतः धर्मका कचूमर निकल जाने के बाद भी धर्मरक्षाके नाम पर धर्मका संहार होता ही जायेगा और धर्मकी ओट में अधर्म का प्रचार होता ही रहेगा जबतक यह मिल-मिला जारी रहेगा तबतक धर्म और समाज के शुभ दिन सुदूर हैं।

स्वा० कर्मानन्दजी के ओजस्वी भाषण

देहली में परिषद् के अधिवेशन के समय स्वा० कर्मानन्द जी के २९, ३०, ३१ दिसम्बरको परिषद् के पंडालमें प्रभावशाली व्याख्यान हुये आपके प्रथम भाषणका उल्लेखनीय अंश इस प्रकार है—

"सम्पूर्ण धर्मों के अध्ययन के बाद मैं इस निर्णय पर पहुंचा हूं कि सबसे उच्च और कल्याणकारी धर्म 'जैनधर्म' है। मेरी अनेक शंकाएं हैं जिनका समाधान जैनदर्शन के सिवा और कोई नहीं कर सकता। मेरे जैन होने पर आर्यसमाजी नेताओं ने अनेक प्रकारके प्रलोभन दिये और मुझसे फिर भी आर्य समाज की सेवा करनेको कहा किन्तु मुझ पर इनका कुछ भी प्रभाव न हुआ। मेरी धारणा है कि जगतके बड़े से बड़े प्रलोभन भी जैनधर्म से विचलित न कर सकेंगे। मैं अभीतक भ्रम में था। अब मुझे सच्चा मार्ग मिला है। मैं अपनी भूलका प्रायश्चित्त जैनधर्म की सेवा करके करूंगा तथा मुझ पर जैनधर्मका. जैन तीर्थङ्करों का जो भार है, वह इस भवमें नहीं तो परभवमें अवश्य चुकाउंगा।

आपने अपने अन्य भाषणों में भी अपने जीवनके वृत्तान्तों के भाव तथा जैनधर्मके भिन्न २ विषयों पर प्रकाश डाला। आपके ये सब ही भाषण प्रभावक थे और जनताने इनको बहुत रुचिके साथ सुना। जनता आपके भाषण सुननेकी बड़ी उत्सुक रहती थी। अनेक विदुषी महिलाओं को यह कहते हुये सुना गया कि हमतो स्वामी जी का व्याख्यान सुनने आई हैं किन्तु वह अभीतक नहीं हुआ है। इस अवसर पर देहलीमें बाहर की भी बहुत भारी जैन जनता आई थी। उन सब ही ने स्वामी जी को अपने २ स्थानों पर आमन्त्रित किया है।

परिषद् के उत्सवके अवसर पर एक प्रस्ताव पर भाषण देते हुये बा० जय भगवान जी वकील पानीपत ने यह कह दिया था कि वेदों में जिन असुरोंका वर्णन है वे जैनही हैं। इस प्रकार वेदों में भी जैनधर्मकी प्राचीनता प्रमाणित होती है।

इस समय आर्यसमाजके प्रसिद्ध शास्त्रार्थ कर्ता प्रो० श्यामदेव जी एम० ए० भी उपस्थित थे। यह बात आपसे सहन न होसकी और आपने सभापति से विना पूछे ही उठकर वकील साहबके भाषण पर आपत्ति उपस्थित करदी। इसका यह समाधान कर के कि आप अपने आक्षेपको दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला में लावें आपको इसका समाधान किया जायगा। आपने भाषण को समाप्त किया। इसके बाद फिर पांच मिनिट इसही विषय पर स्वा० जी बोले और आपने अनेक वैदिक प्रमाणों के ही द्वारा वकील साहबकी बातका समर्थन किया और इसपर आक्षेपकर्ता प्रोफेसर को चुपही रहना पड़ा।

इसके बाद एक जनवरी की रात्रिको ७॥ बजेसे आपका एक भाषण नई देहली में हुआ। आजभी जैन जनता के अतिरिक्त अनेक आर्यसमाजी विद्वान उपस्थित थे। यहां भी आपने आर्यसमाज के अनेक सिद्धान्तों की बड़े मीठे शब्दों में समालोचना की। अन्तमें सभापति महोदयकी तरफ से शंका समाधान को भी अवसर दिया गया किन्तु कोई भी न बोला। आज पं० राजेन्द्र कुमारका भी भाषण हुआ था आज के सभापति पं० मक्खनलाल जी देहलवी थे।

—शाहदरा देहली—

आज ता० २ जनवरी को दुपहर के १ बजे स्वा० कर्मानन्द जी, पं० मक्खनलाल जी देहली, और पं० राजेन्द्रकुमारजी यहाँ पधारे। अनाथाश्रम देहलीकी भजन मंडली और शास्त्रार्थसंघ अम्बाला के भजनीक पं० भैयालाल जी आपके साथ थे। आप लोगोंके आनेसे पूर्व ही यहां सर्व प्रकारकी व्यवस्था करदी गई थी। अतः व्याख्यानकी कार्यवाही ठीक १॥ बजे प्रारम्भ करदी गई। पहिले भजन मंडली और पं० भैयालाल जी भजनीक के मनोहर भजन हुये। इसके बाद स्वामी जी का भाषण हुआ। आपने अपने भाषण में जैन सिद्धान्तों के साथ आर्यसमाजकी मान्यताओं की तुलना करके जैन सिद्धान्तों की मौलिकता को प्रमाणित किया।

इसके बाद पं० राजेन्द्रकुमारजी, पं० मक्खनलाल जी के भाषण हुए। अन्त में सभापति महोदय ने शंकासमाधान को अवसर दिया। एक ब्राह्मण विद्वान ने जैनियों के कर्मवाद के सम्बन्ध में अनेक शंकायें कीं किन्तु स्वामी जी ने उनको शंकाओंका बड़े मीठे शब्दों द्वारा उत्तर दिया। अन्त में रात्रि के व्याख्यान की घोषणा के साथ सभा विसर्जन हुई।

दुपहर की सूचना के अनुसार रात्रि को ठीक ७॥ बजे से सभा की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। सब प्रथम भजन मण्डली, पं० भैय्यालाल जी भजनीक और ला० नेमीचन्द जी के मनोहर भजन हुए। इसके बाद स्वामी जी का भाषण हुआ। स्वामी जी ने अपने भाषण में जैनधर्म की प्राचीनता के साथ ईश्वर के कर्तृत्ववाद का खंडन किया। इसके बाद शंका-समाधान को अवसर दिया गया। इस समय आर्यसमाज के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे उन के साथ स्वामी जीका निम्नलिखित शंकासमाधान हुआ।

आर्यसमाज—आज तक आप आर्यसमाज की मान्यताओं को सत्य बतलाते रहे हैं और अब जैन सिद्धान्तों को सत्य बतलाते हैं अब क्या विश्वास है कि आगे भी आप ऐसा ही करेंगे।

स्वामी जी—जब तक मैं ने जैनदर्शन का स्वाध्याय नहीं किया था मैं आर्यसमाज की मान्यताओं सत्य समझता था, किन्तु मैंने जैनदर्शन के स्वाध्याय ने मेरे इस विश्वास को बदल दिया है। अब मैं आर्यसमाज के स्थान पर जैनदर्शन को सत्य समझता हूं, मैं ही क्या आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद जी ने भी अपने जीवन में धर्मपरिवर्तन किया था। पहिले वह शैव थे। इसके बाद उन्हों ने आर्यसमाज की स्थापना की और अन्त में वह इससे भी चलित हो गये थे, यदि स्वामी जी शुद्ध भावों के द्वारा ऐसा कर सकते थे तो मैं क्यों नहीं। उन को अपने जीवन में सत्यधर्म के दर्शन नहीं हुए अतः वह अपने जीवन भर अपने विचारों को बदलते रहे किन्तु मुझे सत्य मिल गया है अतः अब मेरे सम्बन्ध में आगे शंका को स्थान नहीं है।

इसके बाद भी आर्यसमाजियों ने स्वामी जी से अनेक शंकायें की किन्तु स्वामी जी ने उनको अपने मिष्ट भाषण में सन्तोषित कर दिया। अन्तमें सबको धन्यवाद दिया गया। इस प्रकार शाहदरे की ये दोनों ग्राम व्याख्यान सभायें अपूर्व प्रभावना के साथ समाप्त हुईं। इन दोनों सभाओंके सभापति बा० हेमचन्द्रजी जैन वकील थे। इनमें शाहदरे के अतिरिक्त देहली के भी अनेक प्रतिष्ठित महानुभाव पधारे थे।

—जैन उत्सव में महाराणा साहब—

बड़वानी में—प्रति वर्ष मेला होता रहता है। इस वर्ष का उत्सव ता० १ से ६ जनवरी तक हुआ था। इसही बीच में अम्बाला शास्त्रार्थ संघसे स्वा० कर्मानन्द जी, पं० राजेन्द्रकुमार जी और भैय्यालाल जी भजनीक पधारे थे। प्रति दिन रात्रि को आप लोगों के प्रभावशाली भाषण होते थे। आपके भाषणों का जनता पर बहुत प्रभाव हुआ है। इस ही अवसर पर ता० ७ जनवरी को भगवान ऋषभदेव जी की ८४ फीट लम्बी प्रतिमा के स्थान पर नीमाड़ प्रान्तीय वीर जैन युवक मंडल की स्थापना हुई है। इसके ३१ मेम्बर बन चुके हैं। कार्य को ठीक चलाने के निमित्त कार्यकर्ताओं का चुनाव भी हो गया है। सबही सदस्यों ने देवदर्शन और स्वाध्याय की प्रतिज्ञायें की हैं।

तारीख ६ को प्रातःकाल ६ बजे बड़वानी स्टेट के His highness महाराणा, उनके छोटे भाई,

दीवान साहब, असिस्टेन्ट दीवान साहब, शेसनजज और पुलिस आफीसर आदि महानुभाव उत्सव में पधारे थे। सर्वप्रथम बेन्ड के साथ आपका स्वागत किया गया, इसके बाद स्थानीय जैन बोर्डिंग के छात्रों के डाइलोग हुए। फिर पं० राजेन्द्रकुमार जी का जैन तत्वज्ञान पर भाषण हुआ। आपने अनेक प्रमाणों के द्वारा जैनधर्म की प्राचीनता को सिद्ध करते हुए बतलाया कि जैनधर्म का आदर्श महान है। यह प्रत्येक आत्मा को शक्ति स्वरूप से परमात्मा स्वीकार करता है। इसकी दृष्टि से जीवात्मा और परमात्मा में स्थाई भेद नहीं है। जो आज जीवात्मा है वह कर्मबन्धन को नष्ट करके परमात्मा हो सकता है। जैनियों का आचार सिद्धान्त भी असाधारण है इसकी भित्ति "आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्" अर्थात् जो दूसरों की जो बातें तुमको बुरी लगती हैं उनको दूसरों के लिये मत करो। यदि हम दुःख को सहन नहीं कर सकते तो हमें दूसरों को भी दुःख नहीं देना चाहिये। इसका यदि अनुकरण किया जाय तो संसार सुखी हो सकता है। जैनियों का अहिंसावाद भी निर्बलता का चिन्ह नहीं है। यह तो वीरों का अस्त्र है। जैनियों की अहिंसा यह नहीं बतलाती कि हम को अपनी रक्षा नहीं करनी चाहिये या हम अपनी रक्षा के निमित्त हथियार नहीं उठा सकते। जैनियों की अहिंसा और उसके भेदोपभेदों के समझने में लोगों ने गलती की है। जैन गृहस्थों को यदि आत्मरक्षा की आज्ञा न होती तो यह कैसे सम्भव था कि जैन साम्राज्यों की स्थापना हो सकती आदि।

इसके बाद एक भजनके पश्चात स्वामी कर्मानंद जी का भाषण हुआ। आप केवल बीस ही मिनट बोले थे किन्तु फिर भी आपका भाषण बहुत रोचक था। दीवान साहब स्वयं बीच २ में आपके भाषण के समय तालियां बजाते थे। आपने बतलाया कि प्रत्येक व्यक्ति समाज और देशको बलवान बनना चाहिये। जो निर्बल रहा है उसका जीवन ही समाप्त हुआ है, बलवान बननेके लिये हमको आलस्य पारस्परिक कलह और विलासिताको छोड़ना होगा। आपने अपने इस वक्तव्य के समर्थन में अनेक सुन्दर दृष्टांत दिये थे।

आपके भाषण के पश्चात छात्रों के सुन्दर भजन और स्वागत गान हुए सबहीं महानुभावों को फूल मालायें पहनाई गईं। इसके बाद दीवान बहादुर का भाषण हुआ। आपने अपने भाषण में बतलाया कि यदि हम लोग आज इस सम्मेलन में न आते तो हम को अफसोस रहता। यहां आने से हमको बहुत लाभ हुआ है। पं० राजेन्द्रकुमार जी का भाषण बहुत उत्तम हुआ है। आपका कहना कि हमको हर एक के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये जैसा हम दूसरों से अपने पर चाहते हैं। यह एक आदर्श बात है। जैनियों की अहिंसा वीरों की अहिंसा है। यह बुजदिली नहीं सिखाती यह जानकर भी हमको प्रसन्नता है आशा है सब लोग जैनियों की अहिंसा के सम्बन्ध में अपनी २ धारणा को ठीक कर लेंगे।

स्वामी जी का भाषण भी मौलिकता से भरा था उन्नति के लिये ये सब बातें अनिवार्य हैं। मेरी भावना है कि हमारे महाराणा साहब को दोनों ही विद्वानों की बातों को अपने जीवन में घटित करना

प्रस्तावक— पं० परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ

समर्थक— बा० दीपचन्द सं० जैन संसार

बा० बसन्तलाल इटावा

पं० राजेन्द्रकुमार जैन न्या०

महगांवकाण्ड के विषय में तारका मजमून—

Jains assembled in public meeting shocked at sacrilege committed at Mahegaon. Jain Temple desecrated, idol removed, scriptures burnt. Pray enquiry and drastic action.

उक्त तार निम्न तीनों पतों पर सब स्थानोंसे भेजा जाना चाहिये।

1. Resident Gwalior
2. President Council of Regency Gwalior
3. Pol. India Delhi.

—अयोध्याप्रसाद गोयलीय

—*—

देश विदेश समाचार

—पंजाब यूनिवर्सिटी के वायस चांसलर डा० वुलनर का स्वर्गवास हो गया है आप संस्कृत भाषा के अच्छे जानकार थे। आपके स्थान पर लाहोर के लाट पादरी नियुक्त हुए हैं।

—सिन्ध में इस समय बहुत भारी शर्दी पड़ रही है जैकोबाबाद में ३७ डिग्री टॅपरेचर रह गया। इस कारण सिन्ध में शर्दी से कई मौतें हुई हैं।

—काश्मीर में २४ इञ्च वर्फ गिरी है।

बंगाल सरकार ने जो अपनी रिपोर्ट में पं० जवाहरलाल नेहरू पर कुछ आक्षेप किये थे उन्हें रिपोर्ट तैयार करने वालेने व्यर्थ में घुसेड़ दिया था। सरकार ने अब स्वीकार करलिया है कि आक्षेप असत्य हैं। उन्हें रिपोर्ट से निकाल दिया जायगा।

—चमन में भूकम्प के एक सख्त झटके से जो ७ जनवरी को हुआ, कुछ इमारतें गिर गईं लेकिन जान की कोई हानि नहीं हुई। शिकारपुर में भी हल चल मचगई थी लोग खुले मैदानमें पड़े हैं और घबराहट फैली हुई है।

—लखनऊ में कांग्रेस अधिवेशन की तैयारियां और शोरसे होरही हैं।

—सोयुलगुरी (आसाम) की एक झोंपड़ी में एक बाघ घुस आया और उस झोंपड़ीमें लेटे हुए बच्चे की ओर झपटा। बच्चे को उसकी मां ने उठाकर छाती से चिपटा लिया बहुत घायल हो जाने पर भी उसने अपने बच्चे की रक्षा की।

—इटली अब युद्ध में अबीसीनिया से हार खाता जा रहा है। इटली के २००० सैनिक बागी हो कर जर्मनी को चले गये हैं। अबोसीनिया ने इटली का बहुत सा फौजी सामान अपने कब्जे में कर लिया है। जापान ने अबीसीनिया को २००० लड़ाके सैनिक देनेको कहा है। इंगलेण्ड, जर्मनी उसको हथियार भेज रहे हैं।

—यंगमैन्स कुरेशी असोसियेशन के प्रधान श्री० अब्दुल रहमान ने डा० अम्बेद्कर को परामर्श दिया है कि अछूतों को मुसलमान बनाकर कोई लाभ नहीं क्योंकि पंजाब के ६० लाख पेशावर मुसलमान ही अपने सहधर्मियों से पीड़ित हैं। इससे अच्छा होगा कि आप अपनी एक नई जाति बनालें।

खोखर (स्यालकोट)के १००० बटवालोंने हिन्दूधम में प्रवेश किया है। मुसलमानोंका प्रयत्न निष्फल रहा

प्रस्तावक— पं० परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ

समर्थक— बा० दीपचन्द सं० जैन संसार

बा० बसन्तलाल इटावा

पं० राजेन्द्रकुमार जैन न्या०

महगांवकाण्ड के विषय में तारका मजमून—

Jains assembled in public meeting shocked at sacrilege committed at Mahegaon. Jain Temple desecrated, idol removed, scriptures burnt. Pray enquiry and drastic action.

उक्त तार निम्न तीनों पतों पर सब स्थानोंसे भेजा जाना चाहिये।

1. Resident Gwalior
2. President Council of Regency Gwalior
3. Pol. India Delhi.

—अयोध्याप्रसाद गोयलीय

—•—

देश विदेश समाचार

—पंजाब यूनिवर्सिटी के वायस चांसलर डा० वुलनर का स्वर्गवास हो गया है आप संस्कृत भाषा के अच्छे जानकार थे। आपके स्थान पर लाहोर के लाट पादरी नियुक्त हुए हैं।

—सिन्ध में इस समय बहुत भारी शर्दी पड़ रही है जैकोबाबाद में ३७ डिग्री टैंपरेचर रह गया। इस कारण सिन्ध में शर्दी से कई मौतें हुई हैं।

—काश्मीर में २४ इञ्च बर्फ गिरी है।

बंगाल सरकार ने जो अपनी रिपोर्ट में पं० जवाहरलाल नेहरू पर कुछ आक्षेप किये थे उन्हें रिपोर्ट तैयार करने वालेने व्यर्थ में घुसेड़ दिया था। सरकार ने अब स्वीकार करलिया है कि आक्षेप असत्य हैं। उन्हें रिपोर्ट से निकाल दिया जायगा।

—सक्खर में भूकम्प के एक सख्त झटके से जो ७ अक्तूबरो को हुआ, कुछ इमारतें गिर गईं लेकिन जान की कोई हानि नहीं हुई। शिकारपुर में भी हल चल मचगई थी लोग खुले मैदानमें पड़े है और घब-राहट फैली हुई है।

—लखनऊ में कांग्रेस अधिवेशन की तैयारियां और शोरसे होरही हैं।

—सोपुलगुरी (आसाम) की एक झोंपड़ी में एक बाघ घुस आया और उस झोंपड़ीमें लेटे हुए बच्चे की ओर झपटा। बच्चे को उसकी मां ने उठाकर छाती से चिपटा लिया बहुत घायल हो जाने पर भी उसने अपने बच्चे की रक्षा की।

—इटली अब युद्ध में अबीसीनिया से हार खाता आ रहा है। इटली के २००० सैनिक बागी हो कर जर्मनी को चले गये हैं। अबीसीनिया ने इटली का बहुत सा फौजी सामान अपने कब्जे में कर लिया है। जापान ने अबीसीनिया को २०००० लड़ाके सैनिक देनेको कहा है। इंगलैण्ड, जर्मनी उसको हथियार भेज रहे हैं।

—यंगमैन्स कुरेशी एसोसियेशन के प्रधान श्री० अब्दुल रहमान ने डा० अम्बेडकर को परामर्श दिया है कि अछूतों को मुसलमान बनाकर कोई लाभ नहीं क्योंकि पंजाब के ६० लाख पेशावर मुसलमान ही अपने सहधर्मियों से पीड़ित हैं। इससे अच्छा होगा कि आप अपनी एक नई जाति बनालें।

कोटर (स्यालकोट)के १००० बढ़वालोंने हिन्दूधर्म में प्रवेश किया है। मुसलमानोंका प्रयत्न निष्फल रहा

REGD. No. L
3459.

—मद्रास का धार्मिक हिन्दू मिशन मद्रास नगर के बाहर शीघ्र ही एक आश्रम स्थापित करने वाला है। इस में हिन्दू समाज के लिये एक लाख कार्यकर्ता तय्यार किये जायेंगे। इस आश्रम में असहाय हिन्दू अनाथों को आश्रय मिलेगा तथा साधु और प्रचारक भी ठहर सकेंगे। भोजन और रहने का स्थान मुफ्त होगा।

—सिंध और उडीसा के पृथक प्रांत बनाये जाने के सम्बन्ध में भारत सरकार २१ जनवरी को अपनी आज्ञाओं की शर्तों का मसौदा प्रकाशित करेगी।

रेलवे के तीसरे दर्जे के मुसाफिरों के आराम के लिये जो नई तरह के डब्बे बनाने का निश्चय हुआ है उन डब्बों पर आठ हजार रुपया प्रति डब्बा लागत आती है।

—केनिया में नवम्बर मास में ३३८० औंस सोना ज़मीन से निकाला है।

—वर्तमान आर्थिक संकट के कारण हीरे मोती आदि जवाहरातों का व्यापार बहुत मन्दा हो गया है।

—मिश्र पर इटली पश्चिम की ओर से आक्रमण करने की घात में है इस आक्रमण से बचने के लिये मिश्र में ५० मील लम्बी रेलवे लाइन बनाने के लिये निश्चय हुआ है जिसपर १२६४ हजार पौंड खर्च होंगे।

—शेखूपुरा (पंजाब) की पुलिसमें कांस्टेबिलों की भर्ती के लिये सरकार ने विज्ञापन निकाला जिस के लिये ३०० ग्रेजुएट अण्डर ग्रेजुएटों की अर्जियां भी आई हैं मासिक तनखा १७) रुपये होगी।

—क्वेटा की खुदाई से अब तक १३२२ लाशें तथा ३२ लाख रुपये का माल निकाला जा चुका है।

बर्मा तथा भारतवर्ष में हवाई जहाज के स्टेशनों की मरम्मत, सुधार और बनाने के लिये सरकार ने १२ लाख रुपये स्वीकार किये हैं जिनमें से ५ लाख रुपये बमरौली (इलाहाबाद) के हवाई स्टेशन पर खर्च होगा।

—एक विद्वान ने हिसाब लगाकर यह बतलाया है कि मनुष्य यदि अपने डाढ़ी के बाल न कटवावे तो २० वर्ष की आयु से ६५ वर्ष की आयु तक ७1 गज लम्बी डाढ़ी हो सकती है।

—रूस में एक १२ वर्ष के लड़के ने नये ढंग रेल, स्टीमर, एंजिन और पैर से चलने वाले मोटर का आविष्कार किया है। इस लड़के का नाम गिलइलो बबेवेव' है।

—सर आगा खां की सुवर्ण जयन्ती धूम धाम से मनाये जानेका प्रबन्ध उनके भक्त खोजा मुसल्मान कर रहे हैं यह जयन्ती ऐतिहासिक होगी। आगा खां को उनके भक्त सुवर्ण से तोलेंगे इतना सुवर्ण आगाखां को भेंट किया जायगा, जो कि वज़न में २२० पौंड और मूल्य में साढ़े तीन लाख रुपये का होगा। १०० पौंड की चांदी की थाली में उन्हें मानपत्र भेंट किया जावेगा। इस तरह जयन्ती पर पांच लाख रुपया खर्च होगा। साढ़े चार लाख रुपया इकट्ठा हो चुका है।
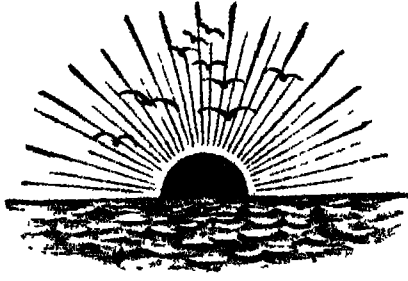
अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख-पत्र

जैन दर्शन

अंक १४

वर्ष ३

माघ सुदी ९ शनीवार

१ फरवरी १९३६ ई०

सम्पादक—

पं० चैनसुखदास जैन न्यायतीर्थ, जयपुर।

पं० अजितकुमार शास्त्री मुलतान।

पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस।

वार्षिक ३) एकप्रति ≈)

संघके कार्यालयमें रायबहादुर साहिब

ता० १७ जनवरी की शामको बिना किसी सूचनाके संघके कार्यालयमें श्रीमान जैन जाति भूषण राय बहादुर ला० हुलासराय जी जैन रईस सहारनपुर पधारे थे। आपने स्वामी कर्मानन्द जी आदि संघके कार्यकर्ताओं से बात चीत की कि संघका एक डेपुटेशन घुमाकर धन एकत्रित करके इसको स्थाई बनाना चाहिये। आपने संघको सहायता देना चाहा किन्तु संघके कार्यकर्ताओं ने आपका आभार स्वीकार करते हुये आपसे निवेदन करदिया कि संघको उपदेशक विद्यालयके निमित्त आप से सहायता लेना है। तथा यह हमलोग डेपुटेशनके रूपमें सहारनपुर आकर ही लिखा-देंगे। अन्तमें आपने डेपुटेशनको चैत्र के बाद आनेको कहा और २५) दर्शनकी सहायतार्थ प्रदान किये। —प्रधान मन्त्री

—धन्यवाद—

श्री सेठ मोतीलालजी बड़वानी उत्साही पुरुष हैं आप १०१) प्रदान कर संघके आजन्म सदस्य बने हैं तथा नीमाड़ प्रान्तमें संघका कार्य करने का वचन दिया है। इसलिये आपको हार्दिक धन्यवाद है।

निवेदक—
प्रधानमन्त्री, भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ
अम्बाला छावनी।

जैन समाचार

—प्रतिमाएं प्राप्त हो गईं—महगाँवके दि० जैन मन्दिर से जो प्रतिमाएं चोरी चली गई थीं उन में से २५ प्रतिमाएं ग्वालियर राज्य के सुपरिन्टेन्डेन्ट सी० आई० डी० श्रीमान मुंशी गोपाल सहाय जी, पं० मनोहरलाल जी इन्सपेक्टर सी० आई डी० तथा जैन युवक रोकड़ीमल जी गोलालारे के अथक शुभ प्रयत्न से कंचनगढ़ गांव से एक मल्लाह के यहां प्राप्त हुई हैं। प्रायः सभी अपराधी पकड़े गये हैं। उक्त तीनों महानुभावों को धन्यवाद है।

—महगांव दिवस-भा० दि० जैन परिषद् के उद्योग से महगांव कांड का महान आन्दोलन करने के लिये १६ जनवरी को महगांव दिवस निश्चित हुआ था उस दिन प्रायः समस्त स्थानों पर जैन भाइयों ने हड़ताल करके सभायें कीं और ग्वालियर रीजेन्सी के प्रैसीडेन्ट, रेजीडेन्ट तथा वायसराय को तार भेजे। महगांव दिवस के विस्तृत समाचार निम्नलिखित स्थानों से आये हैं जोकि स्थानाभाव से नहीं छापे जा सकते। प्रत्येक महानुभाव क्षमा करें, (स्थानों के नाम) शाहदरा, जेवर, फुलेरा, एत्माद-पुर, मुल्तान, डेरा गाजीखान, बनारस, जबलपुर, रमाला आदि।

—मन्दिर निर्माण-रमाला (मेरठ) में दि० जैन मंदिर के निर्माण का कार्य १४ वर्ष से बंद पड़ा था। जो कि पू० ब्र० मूलचन्द्र जी के परिश्रम से तथा चौधरी गिरिवरसिंह जी की सहायता से चालू हो गया है।

—शोकसभा- श्रीमान रायबहादुर सेठ भागचन्द्र जी सोनी एम० एल० ए० की अध्यक्षता में अजमेर में शोक सभा हुई जिसमें सम्राट पंचम जार्ज के स्वर्ग-वास पर शोक प्रगट किया गया।

—कुरावड़ (मेवाड़) में श्री० ब्र० चाँदमल जी के उद्योग से १२००) में जमीन लेकर कुन्दकुन्द विद्या-लय तथा बोर्डिंग हाऊस और चैत्यालय बनाने की आयोजना हुई है। ये संस्थाएं उदयपुर पार्श्वनाथ विद्यालय की शाखायें समझी जावेंगी इसी कारण विद्यालय के फंड से ५०००) रुपये उक्त संस्थाओं के भवन निर्माण के लिये दिये गये हैं।

—कुरावड़ की कुन्दकुन्द दि० जैन कन्याशाला के संचालन के लिये बड़वाह की श्रीमती केसरबाई जी ने १००) रुपये एक वर्ष के लिये प्रदान किये हैं।

पृथ्वीराज—मंत्री

श्री पा० दिगम्बर जैन विद्यालय उदयपुर

—शोक -महेन्द्रगढ़ निवासी श्रीमान सेठ ज्वाला प्रसाद जी का देहली में १६ जनवरी को स्वर्गवास हो गया है। स्थानकवासी सम्प्रदाय में आप अच्छे उदार गणनीय नररत्न थे।

—पुस्तकालय-श्री महावीर दिगम्बर जैन पुस्त-कालय उदयपुर में आकर पांच हजार जैन अजैन भाइयों ने समाचार पत्र पढ़े तथा १५०० व्यक्तियोंने पुस्तकें पढ़कर लाभ उठाया।

—मेला-श्री अतिशय क्षेत्र थूबोनजी पर फागुन बदी ५ ता० १२ फरवरी से १७ फरवरी १९३६ तक धूम धाम से मेला होगा जिसमें अनेक उत्सव होंगे।

—चौधरी रामलाल महामन्त्री

—*—

अर्हत्कदेवाय नमः
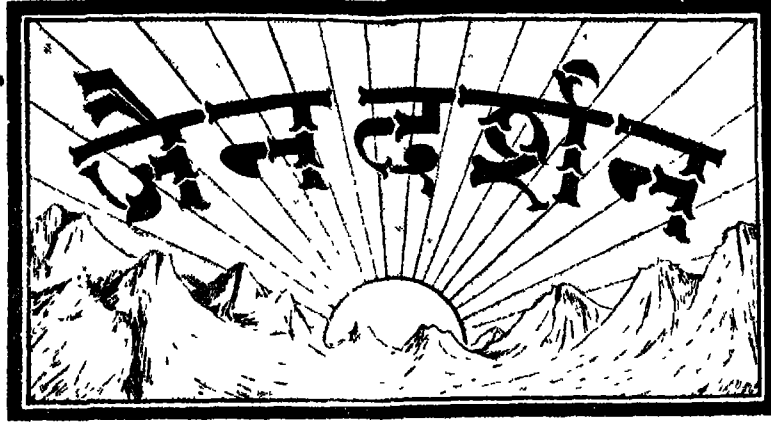
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भव्याब्जखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

वर्ष ३ | श्री माघ सुदी ६—शनिवार श्री वीर सं० २४६२ | अङ्क १४

संसार-तत्व

[रचयिता— विद्यार्थी राजकुमार जैन बनारस]

सज्जनि ! अगमभवसागर की
गाथा क्या तुम्हें सुनाऊं ?
मम अन्तस्तल उदित भावनायें —
क्या तुम्हें बताऊं ॥

चपल चंचला की छाया,
क्या इन्द्र धनुष की माया ?
शुभ्रहास नलिनी दलका क्या
अब तक जान न पाया ?

चरम समय दुखराशि-निचित-
आहोंका कहीं ठिकाना ।
हाय हाय के आर्तनादमय
अविरल अश्रु बहाना ।

उषा कालकी ललित लालिमा
की वह छटा निराली ।
विशदतया उस मूलतत्व को
व्यक्त कर रही आली ।

सरल बाल्य नूतन नूतन-
क्रीडामय सरस बिताना ।
यौवन अन्तर्भू त विषम ज्वाला-
मय सुधा गमाना ॥

कोमल कमल--कमलदल-जलकण-
आभा - मञ्जुलतामय वह ।
सुमुखि ! संसरणशील जगतका
तत्व गूढ़ - गूढ़तम यह ॥

दहेज
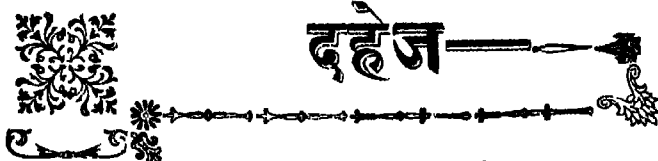
[लेखिका—अनुपम कुमारी जैन]

इस समय सुधार के चढ़ते-बढ़ते जमाने में भी दहेजकी कुप्रथा एक तीखी कतरनीके समान समाजकी टूटी हुई गर्दन पर बड़ी निर्दयता के साथ वार कर रही है। एक भी ऐसा घर न होगा जो इसकी चिन्गारियों से न सुलग रहा हो। कष्ट और दुःखोंकी आह न भरता हो। हिन्दुस्थानमें प्रायः सभी प्रान्तोंमें इस कुप्रथा का दौरदौरा है।

एक बात बड़े मजेकी है। यह युग वैसे सुधारों का शिरोमणि माना जाता है। नित नये नये सुधारक नरसिंहावतार की तरह भारतके पेटमें प्रकट होते हैं और वे सामाजिक कुरीतियों को अपने जहरीले दांतों से चबा जाने का दम भरते हैं। पर इस दहेज की कुप्रथा के सामने 'चौबेजी छब्बे होने गये और दुब्बे जी होकर लौटे' इस कहावत के अनुसार उनकी एक नहीं चलती और स्वयं यह राक्षसी उनको अपने जालमें फंसा लेती है। यह सुधारकी विडम्बना का एक छोटासा उदाहरण है।

दहेजकी कुप्रथा इस समय सचमुच भारत का गला घोंट रही है। उस देश और समाजका पतन बहुत सन्निकट है जहां लड़के और लड़कियां भेड़ बकरियोंकी तरह बेचदी जाती हों। आजकल न जाने कितने घरोंको इस कुप्रथाने उजाड़ डाला है। अभागे कुटुम्बों का खून पिया है, फिर भी इसकी प्यास अभी तक नहीं बुझी है, वरन दिन २ इसका विकराल रूप होता आरहा है।

स्त्रियों की अवस्था भारत में पहले से ही दयनीय थी और इस कुरीति के कारण लड़कियां पुरुषोंकी दृष्टि में औरभी अधिक खटकने लगी हैं। लड़कियों के अनादर में यहभी एक खास कारण समझना चाहिये।

यदि किसी घरमें कन्या उत्पन्न होजाती है तो कन्या के पिता पर वज्रपात सा होजाता है। ज्यों २ कन्या बड़ी होती जाती है उसी तरह कन्याके पिता की चिन्ता भी बढ़ती जाती है। लड़की चाहे स्वभाव और सौन्दर्य में कितना ही बढ़ी चढ़ी हो पर धनके बिना उसको योग्य वर नहीं मिलता है।

आये दिन हमको ऐसी घटनाएं देखने व सुनने को मिलती हैं कि जब कोई पिता अपनी कन्या के लिये अच्छा वर ढूंढने में असमर्थ होकर दुःखित हो उठता है तो पुत्री अपनेको उस दुःखका कारण जान आत्मघात कर बैठती है। बंगाल में तो इस तरह के पैशाचिक काण्ड अधिक देखे जाते हैं।

अभी हाल ही की एक घटना है। बंगालमें किसी एक प्रतिष्ठित घराने की लड़की इसी कारण से अपने बालों को तेलमें भिगोकर जल मरी।

यह बात नहीं है कि इस कुप्रथाके कारण लड़कियों का ही जीवन संकट में हो, किन्तु इसी तरह बहुत से नवयुवकों का जीवन भी बर्बाद होजाता है।

कई बार ऐसा देखा जाता है कि लड़की बहुत

ही अयोग्य होती है और वर शिक्षित एवं सुयोग्य होता है पर लड़केका पिता धनके लोभमें आकर उस लड़की के साथ अपने पुत्रका ब्याह कर देता है। उधर लड़का अपने आपको जन्म भर कोसा करता है और लड़की अपने पति की मुहब्बत को तरसा करती है।

यह बहुत सच है कि इसी कुप्रथाके कारण समाज रूपी बाग बरबाद होरहा है। इसकी सुकुमार बालाएं व्यथित हो होकर जल रही हैं। हजारों परिवार-पादप उजड़ रहे है और यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि इस विष बेलिको वे ही घी दूध से सींचते है जो समाज के कर्णधार एवं अगुआ माने जाते है। उनकी इस कुलीनता व प्रतिष्ठाको हजार बार धिक्कार है जिसकी बदौलत देशका महान अपकार होरहा है।

एक बात यह है कि जो घर अधिक कुलवान एवं सम्पन्न होते हैं उनमें पुत्रवधूकी चिन्ता बिलकुल ही नहीं कीजाती, यदि वह बीमार होजाती है तो उसकी समुचित परिचर्या नहीं होती। क्योंकि वे जानते है कि जब वह मर जायगी तो फौरन कोई माईका लाल उनकी झोला भरने के लिये तैयार होजायगा। भले ही लडकी के पिताको दरदर भीख ही क्यों न मांगनी पडे, पर निर्दयी वर-पिता बिना दस हजारके दहेज के बात ही नहीं करता और उन रुपयों का उपयोग भी वेश्या-नृत्य जलसे और भांडोंके नचाने में होता है।

चाहे कोई कितना ही सम्पन्न क्यों न हो, उसके घरमें कुबेरका खजाना ही क्यों न गढ़ा हो, पर अपने पुत्रकी शादी करते समय सबसे पहले टीके का प्रश्न हल होगा। हाय! हमारा यह लोभ हमको ही मृगतृष्णाके समान ठग रहा है।

भारत के अधिकांश घर धनहीन और चिन्तासे युक्त हैं और कष्टसे अपने पेटको भरते हैं। परन्तु कुप्रथा उनको और भी हैरान कर देती है।

इन सब बुराइयोंके होतेहुये भी न जाने हम क्यों इस कुप्रथासे इतना अनुराग रखते हैं और इसको छोड़ने में हिचकिचाहट करते हैं। हाय! मनुष्य हृदय जैसे दयालु हृदय पर भी इस कुप्रथा ने कैसा जाल बिछाया है जो इससे होने वाले दर्दनाक दृश्यों को देखकर भी नहीं पसीजता।

किसीने खूब कहा है—

कन्या सयानी होगई चिन्ता पिता को है बड़ी
बहु यत्न उसके ब्याहका वह कर रहा है हरघड़ी।
पर योग्य वर धनकी कमीसे हाय! वह पाता नहीं
क्या देखकर यह दृश्य पत्थर भी पिघल जाता नहीं
(-सरस्वती की एक कविता के आधार पर)

युवकों के प्रति

नोट— यह प्रभावक कथा कविता मड़गाँव दिवस की सभा में पढ़ी गई।

रचयिता:—
श्रीमान शीतल प्रसाद जी जैन
वि० स्या० म० बनारस।

गफलत में प्यारे भाई हस्ती मिटा न देना।
मदहोश क्यों पड़े है आपा भुला न देना॥ टेक
बेइन्तहा हमारे बिछुड़े हुये हैं भाई।
अमृत पिला धरमका सीने लगा तो लेना॥ १
आपस में ही झगड़ते आपसके भाई भाई।
इस कशमकश के अन्दर झन्डा झुका न देना॥ २
कौरव व पान्डवोंसा बिलगांव का वो झगड़ा
कुड़ची व कोलारस का वाका भुला न देना॥
श्री पूज्य वीर वार्णी आतिशकी नज़्र होते।
बरदाश्त जुल्म करके ऐसा लजा न देना॥
नापाक होते मन्दिर प्रतिमा चुराई जाती।
रोके हुये रथों को फिरसे चला तो देना॥
रुकते हैं आज मुनि संघ मन्दिर न बनने पाते;
करके विहार मुनिका मन्दिर बना तो देना॥
मालुम न और कितने जुल्मोंके शिकार हम हैं
तूफाने जुल्मका है, नैया डुबो न देना॥
हंसती है आज दुनिया कमज़ोर हमको कह कर॥
औलाद वीरकी हैं साबित भी कर तो देना॥
तीर्थंकरों को कहते क्षत्रीय वीर बांके।
उनका ही खून है यह, ठन्डा बना न देना॥
बरदाश्त हम करेंगे हरगिज न जुल्म को अब।
कर दूर जुल्मको, या खुदको मिटा ही देना॥
कर दूर काहिली को ऐ वीर दिल जवानो।
इक बार फिर जहांमें झन्डा फेरा तो देना॥
जिनधर्म की ही खातिर परवा न मालोज़र की।
इसके लिये ही जीवन कुर्बान कर तो देना॥
दुनिया में फिरसे फैले उस वीरकी अहिंसा।
मुहब्बतके रंगमें फिरसे दुनियाँ रंगा तो देना
स्याद्वाद को सुनाकर सबको बना के जैनी।
फिर वीरकी फतहका नारा लगा तो देना॥
आखिर में वीरसे हैं, यह प्रार्थना हमारी।
हम राहगीर तेरे खुद सा बना तो लेना॥

सम्राट जार्जका संक्षिप्त जीवन

इस समय ब्रिटिश राज्य सबसे अधिक विस्तृत है। किसी भी साम्राज्य में ३५ करोड़ मनुष्यों की आबादी वाला भारतवर्ष सरीखा देश नहीं है। सचमुच भारतवर्ष का शासक होनेके कारण ही ब्रिटेन आज "ग्रेट ब्रिटेन" कहलाता है। ब्रिटिश एम्पायर अंग्रेजी साम्राज्य का आधार अधिकांश में भारतवर्ष ही है। व्यापारके लिये आई हुई अंग्रेजों की ईस्ट इन्डिया कम्पनी के हाथ भारतवर्षकी बागडोर काकतालीय न्यायके अनुसार आगई। फिर १८५७ ई० के गदर के पीछे इङ्गलैण्डकी शासिका विक्टोरिया के हाथ भारतवर्षका शासन सूत्र चला गया। तबसे भारतवर्ष ब्रिटिश साम्राज्यका एक देश माना जाने लगा।

भारतसम्राज्ञी विक्टोरिया का स्वर्गवास होजाने पर भारतवर्ष के द्वितीय अंग्रेज सम्राट सप्तम एडवर्ड हुए। वे थोड़े वर्ष जीवित रहकर ही स्वर्गवास कर गये। तदनन्तर २२ जून १९१० में पंचम जार्ज तीसरे भारत सम्राट के पद पर आरूढ हुए। आपने यह पद २५ वर्ष ७ मास तक सम्हाला। इसी उपलक्ष्य में गत जुलाई मासमें आप के राज्यकी रजत जयन्ती मनाई गई। अभी आप २० जनवरी की रात्रिको ११ बजकर ५५ मिनटपर परलोक यात्रा कर गये है।

आपके शासनकाल में जर्मनीका महायुद्ध, आयर-लैंडका आन्दोलन और कांग्रेसके दो विशाल आन्दोलन आदि अनेक गम्भीर घटनाएं हुई हैं। जर्मन महायुद्धमें इङ्गलैण्ड ... के कारण ही विजयी हुआ। अब आपका उत्तराधिकार आपके बड़े पुत्र (प्रिंस आफ वेल्स) एडवर्ड ने सम्हाला है जो कि अब 'अष्टम एडवर्ड' के नामसे घोषित हुये हैं।

अभी पूष सुदी पूर्णमासीको जो पूर्ण चन्द्रग्रहण हुआ था ज्योतिष के अनुसार वह किसी महाराजा की मृत्युका सूचक था, जो कि ठीक निकला। आप का शव २८ जनवरी को दफनाया गया। उस दिन शोकमें सरकारी दफ्तर स्कूल आदि बन्द रहे तथा शामको चार बजे समस्त रेलगाड़ियां भी ५ मिनट के लिये खड़ी रक्खी गई।

सम्राट पंचम जार्जकी संक्षिप्त जीवनचर्या निम्न प्रकार है।

आप सम्राट एडवर्ड सप्तम के द्वितीय पुत्र थे और ३ जून सन १८६५ ई० को मालबरी भवन पाल-मल में आपका जन्म हुआ था। ८ जुलाईको आपका नाम करण संस्कार प्राईवेट गिरजाघरमें किया गया। इनके बड़े भाईका नाम अलबर्ट विक्टर था और वे लगभग २ वर्ष आपसे बड़े थे।

सम्राटका बचपन लण्डन, सेन्डरिंघम आसबोर्न तथा बाल मोरेल में बीता। सेन्डरिंघम के क्यूरेट पादरी जान नील डालटन आपके ट्यूटर नियुक्त हुये। उस समय सम्राटकी आयु केवल ६॥ वर्ष थी सप्तम एडवर्ड ने अपने दोनों पुत्रों को जहाजी बेड़े

में शिक्षा प्राप्त करने के लिये भेजनेकी आज्ञा दी। उस समय बड़े की आयु १५ और जार्जकी आयु १४ वर्ष की थी। सन १८७७ ई० में उन्हे "ब्रिटेनिया" नामक जहाज पर जहाजी शिक्षा प्राप्त करने भेजा गया सन १८८६ ई० में सम्राट जार्ज को टारपीडो बोट नं० ७६ का इन्चार्ज बनाया गया और सन १८६१ ई० में उन्हे कमाण्डर बनाया जाकर "मैलाम्पस" जहाज का कमान बना दिया गया। उसही समय जबकि वह जहाज संचालनका अभ्यास कर रहे थे उनके बड़े भाई ड्यूक आफ क्लेरन्स (प्रिंस अलवर्ट) की इन्फ्ल्युयेन्जा से मृत्यु होगई। यह एक सत्य है कि सम्राट जार्ज ने कभी एक क्षण भी नहीं सोचा था कि वह राज गद्दी पर आरूढ़ हो सकते हैं। अपने बड़े भाई की मृत्यु के बाद सम्राट जार्ज ने जहाजी जीवन छोड़ दिया।

६ मई सन १८८३ ई० को राजकुमारी और स० जार्ज के विवाहकी घोषणा कर दीगई। ६ जुलाईको दोनोंका विवाह होगया। जून १८६४ में उनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, यही हमारे वर्तमान राजकुमार हैं जो अब सम्राट अष्टम एडवर्डके नामसे गद्दी पर बैठे हैं। सन १६०५ ई० में सम्राट और महारानी भारत की सर्व प्रथम यात्राको रवाना हुये। भारत के देशी नरेशों ने उनका भारी स्वागत किया। यहां उन्होंने शेरों तथा अन्य जंगली जानवरों का शिकार खेला। तथा भारतवर्ष के कई शहरों का दौरा किया। वे रंगून, मांडले भी गये और खैबर दर्रा भी देखा।

राजकुमार की हैसियत से सम्राट को प्रशंसासे घृणा थी। सम्राट एडवर्डने उनकी बुद्धिकी प्रखरता देख घरू तथा विदेशी मामलों के कागजात को देखने भालने का काम उन्हें सौंप दिया।

२६ जून १६१० ई० को राज्याधिकार प्राप्त करने के बाद दिसम्बर १६११ ई० में दिल्ली का प्रसिद्ध कारोनेशन दरबार हुआ जिसमें आप पुनः भारत पधारे और तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिंज ने बम्बई में जहाज द्वारा पधारने पर आपका स्वागत किया। दिल्ली पधारने पर खुले दरबारमें राजा, महाराजाओं, सेठ साहूकारों तथा जन साधारण ने आपके दर्शन किये।

दरबारमें आपने भारत की राजधानी कलकत्ते से बदल कर दिल्ली लाने और बंग भगको रद्द करनेकी घोषणा की। आपने अपने हाथों नई दिल्लीका प्रथम शिलान्यास किया था।

१६१३ ई०में सम्राट सम्राज्ञी मेरीके साथ बर्लिन (जर्मनी) और १६१४ ई० में पेरिस सामाजिक (विवाहादि) कार्यों के सिलसिले में पधारे थे। यार्क शायर लङ्काशायर और मिडलैंड के औद्योगिक क्षेत्रों में भ्रमण करके आपने मजदूरोंके जीवनका भी अनुभव प्राप्त किया था।

१६१४ ई०में आयरलैंड में होमरूलका आन्दोलन जोरों के साथ उठा और पार्लियामेन्ट में इस प्रश्न पर भीषण मतभेद उपस्थित हुआ। अन्ततः सम्राटने सभी दलके प्रतिनिधियों की एक सभा बकिंघम पैलेस में बुलाई। यद्यपि यह सभा पार्लियामेन्ट के अध्यक्ष के सभापतित्व में हुई थी, किन्तु उसका उद्घाटन सम्राट के ही भाषण से हुआ। जिसमें उन्हों ने स्थिति की गम्भीरता का स्पष्ट रूपसे वर्णन किया था।

महायुद्ध — जर्मनीका शासक कैसर (द्वितीय विलियम) पंचम जार्ज की बुआ का सगा पुत्र है। कैसर जर्मनी साम्राज्यको बहुत विस्तृत करना चाहता था इसके लिये उसने बहुत वर्षसे काफी तैयारी की थी। तदनुसार फ्रान्सको हड़प जाने की इच्छासे आस्ट्रिया का पक्ष लेकर सर्विया के बजाय जर्मनी ने फ्रान्स पर आक्रमण करना चाहा, जिसको बेल्जियम ने कुछ दिन बीचमें लड़कर रोक दिया। इसी आक्रमण के फलस्वरूप योरुप का महायुद्ध छिड़ गया। जर्मनी ने विश्व विख्यात अजेय एन्टवर्प का किला तोड़ दिया। रूस और फ्रान्स को तहस नहस कर डाला।

यह महायुद्ध सन १९१४ में प्रारम्भ हुआ जिसमें भाग लेने के लिये सम्राट ने साम्राज्य भर को आमंत्रित किया और भारत के राजाप्रजा ने तन मन धन से उसमें भाग लिया। १९१६ ई० में सम्राट ने गवर्नमेण्ट को १ लाख पौण्ड स्वेच्छानुसार व्यय करने को प्रदान किये जिसका अनुकरण और लोगों ने भी यथाशक्ति किया। सम्राट ने स्वयं मोर्चे पर पधार कर सैनिकों को प्रोत्साहित किया था। इसी समय आपके घोड़े ने चौंक कर उछाल मारी थी और पिछले पैरों पर खड़ा हो गया था जिससे आप नीचे गिरकर जख्मी हो गये थे। इसके फलस्वरूप आप कई सप्ताह बीमार रहे थे। १९१८ ई० में अमेरिका के हस्तक्षेप करने पर यद्यपि लड़ाई शीघ्र समाप्त हो जाने की आशा की जाने लगी थी किन्तु फिर भी युद्ध के खतरे कम नहीं हुये थे-१९१८ ई० के मार्च महीने में जर्मन परास्त हो गये। उस समय सम्राट पुनः पश्चिमी मोर्चे पर पधारे थे और अमेरिकन तथा अन्य स्वपक्षी सेनाओं को आपने प्रोत्साहन दिया था।

जुलाई १९१८ ई० में सम्राट और सम्राज्ञी के विवाह की रजत-जयन्ती मनायी गयी जिसमें प्रजा की ओर से आपको ५३हजार पौण्ड का चेक खैराती कामों के लिये भेंट किया गया।

१९२८ ई० में सम्राट इतने सख्त बीमार हुए कि राजकार्य के लिये सम्राज्ञी, प्रिंस आफ वेल्स, ड्यूक आफ यार्क, आर्क बिशप आफ कण्टरबरी, लार्ड चान्सलर तथा प्राइम मिनिस्टर का एक कमीशन नियुक्त कर दिया गया; किन्तु सौभाग्यवश फरवरी १९२९ ई० में सम्राट स्वस्थ हो गये। इस अवसर पर साम्राज्य के अन्य भागों की तरह भारत में भी "किंग जार्ज थैंक्स गिविङ्ग फण्ड" खोला गया जिसमें भारत के राजा महाराजाओं और सरकारी नौकरों ने लाखों की संख्या में रुपये देकर अपनी राजभक्ति का परिचय दिया।

१९३० ई० में गोलमेज कान्फरेन्स हुई जिसकी कार्यवाही शुरू करते हुये सम्राटने न्याय और प्रगति प्रियता का परिचय दिया।

१९३१ ई० में विश्वव्यापी आर्थिक संकट के समय जब मैकडानल्ड इस्तीफा देने लगे तो सम्राटने अपना प्रभाव डालकर उन्हें रोका तथा परामर्श दिया जिसके कारण नेशनल गवर्नमेन्ट का उद्भव हुआ।

आपका स्वभाव बड़ा ही मधुर था। आप मिलनसार इतने थे कि जो मिलता था वही आपकी प्रशंसा करता था। आपको सम्राट होते हुए भी गर्व छू तक नहीं गया था।

ऐसे शिष्ट शासक का अन्ततः गत २० जनवरी की रातको शरीरान्त होगया।

आदर्श बलिदान

(ले०—श्रीमान विनयकुमार जी सहारनपुर)

मान्यखेट नगरी की शोभा आज अलकापुरी को लज्जित कर रही थी। चारों ओर हर्षके बादल छारहे थे। सड़कों पर बंदन वार और तोरण बंधे हुये थे। कुछ बांके जवान ताम्बूल मुंहमें चबाये घोड़ों पर इधर उधर फिर रहे थे। उनकी जड़ाऊ मूंठकी तलवारें पृथ्वीको छू रही थीं। वाद्योंका मधुर स्वर कर्कश बनकर कानों के पर्देको छेदे डालता था। ठीक आठ बजे का समय था—अकलंक निकलंक देव अपने शयन घरमें बैठे अपनी पुस्तकों पर दृष्टि गड़ाये हुये थे। वे अपने ध्यानमें इतने मस्त थे कि उन्हें कुछ पता न था कि बाहर क्या होरहा है? उनकी आंखें खुली नहीं किंतु बन्द हैं। कभी २ उनकी आंखोंसे निकलते हुए आँसू पुस्तक पर आकर गिर पड़ते हैं परन्तु इतना अवकाश नहीं था कि उसकी ओर कुछ ध्यान देते।

प्रिय पुत्र उठो, चलो, वस्त्राभूषण पहनो! क्या तुम्हें पता नहीं आज तुम्हारे विवाह का दिन है। कहते २ पुरुषोत्तम मन्त्रीने शयनागारमें प्रवेश किया। उनकी रौबीली मूंछें ऊपरको चढ़ी हुई थीं, मुखपर हर्षके चिन्ह प्रकट हो रहे थे। अकलंक देवने सिर उठाया, उनकी आंखें आंसुओं से तर थीं, मुख मण्डल से गम्भीरता टपक रही थी।

तुम्हारी आंखोंमें आंसू क्यों? —व्यग्रता पूर्वक मन्त्री बोले।

अकलंक देव फिर भी मौनस्थ रहे।

प्रिय पुत्र बोलो—इस हर्षके समय तुम्हारी आंखों में आंसू क्यों? पिताजी! यह विवाह किसका? क्या हमारा?

हां, हां, तुम्हारा। कहते २ वृद्ध मन्त्री ने उनको अपने वक्षस्थलमें छिपा लिया।

पिता जी आपसे एक बात पूछता हूं।

अकलंक देव ने मस्तक उठाया और विनय से पूछा।

आप सदा सत्य बोलते हैं?

हां!

आपको याद है कि आपने हमें ब्रह्मचर्य व्रत दिलाया था। क्या भूल गये? हम विवाह नहीं कर सकते।

वृद्धकी आंखों के सामने अन्धेरा सा छागया।

उनके मस्तिष्कमें वे सब बातें जो मुनिराज के सम्मुख हुई थीं, याद आने लगीं। वे अधीर होगये परन्तु फिर भी उन्होंने कहा—

पुत्र! वहतो केवल विनोद था, क्या तुमने उसे सत्य समझ लिया? कहते२ आशाकी एक लहर उन के मुख-मण्डल पर खेल गई परन्तु अधिक देर तक न ठहर सकी।

पिताजी! प्रतिज्ञा हंसी नहीं हुआ करती। यदि आप उसे विनोद समझते हैं तो मैं सत्य। मेरे हृदय पर उसकी अमिट छाप बैठ गई है।

यह कह कर उन्होंने निकलंक देवकी ओर देखा उन्होंने सिर हिलाकर उनकी स्वीकृति प्रकट करदी। वृद्धका दिल बेचैन होगया वह कहने लगा—

बेटा ! मुझे इस बुढ़ापे में तुम किसी योग्य नहीं छोडोगे। पुत्र ! मुझे दुःखी मत करो।

पिताजी ! अभी आपने दुःख देखा ही कहां है ? अभी तो आपको हम दोनोंका चिर वियोग सहना पडेगा।

सो कैसे- पिताने जल्दी में कहा।

सोई हुई समाज को जगानेके लिये अपने सर्वस्व का बलिदान।

मंत्री में इससे अधिक सुनने की शक्ति नहीं थी वे मूर्छित होकर गिर गये।

(२)

पिताजी ! आप विचारिये-आज हमारे समाज पर कितनी भयंकर विपत्ति है। जहां पर कभी 'अहिंसा परमोधर्मः' की पताकाएं गगन में फरफराया करती थीं जहां पर जैन मन्दिरों में भक्त जन मिलकर प्रेम से जयघोष किया करते थे, और प्रभु के ध्यानमें मग्न रहा करते थे आज वहां पर बौद्ध धर्मकी पताकाएं फहरा रही हैं। जहां जैन मन्दिर अपनी उन्नत चोटियों से आकाश मन्डल को छू छू कर अपनी विमल कीर्ति दर्शाया करते थे आज वहां पर बौद्ध मन्दिर बन रहे हैं। हा ! कितना पतन ? पिताजी आप हमें आज्ञा दीजिए जिससे हम अपने प्यारे धर्म के संकटको दूर कर सकें और उसकी खोई हुई कीर्तिको फिरसे संसारमें फैला सकें। पिताजी ! इस से आपका नाम संसारमें फैलेगा; लोग आपके नाम को लेने में अपना गौरव समझेंगे। आपका यह बलिदान भविष्यमें स्वर्णाक्षरोंसे लिखा जायेगा।

मन्त्रीने अपनी आंखें मलीं, मानो निद्रासे जागे हों उनकी आंखसे एक अश्रु की धार निकलकर उनके सिकुडे हुये गाल पर आगई। उन्होंने रुके स्वरसे पुकारा— अकलंक !

पिताजी ! कह कर अकलंक देव खडे होगये।

बेटा ! जावो, अपने प्यारे धर्मके लिये कर्मक्षेत्रमें तल्लीन होजाओ। जब तक अपने प्यारे धर्मकी रक्षा न कर सको तब तक इससे मुँह मत मोड़ना। जावो प्यारे पुत्र जावो।' कहते २ उनका गला भर आया वे और कुछ न कह सके। आंखोंसे आंसुओंकी धारा पूर्ण वेगसे बह चली।

पिताजी, इस मोहको त्यागिये; आप वीर हैं, और वीरों के लिये मोह नहीं है-मोह कायरोंके लिये है। जब हमको जाना है तो फिर हमें अभी आज्ञा दे दीजिए। इन आंसुओं को रोकिये और हमें गले लगाकर आशीर्वाद दीजिये।

मंत्री ने आंखें उठाईं, उनकी आँखोंमें आंसू नहीं थे किन्तु एक अमित तेज था। वे हर्षके साथ बोले— 'पुत्र जावो'।

'जो आज्ञा' कह कर दोनों भाइयों ने अपना अपना सामान उठाया और एक ओर को चल दिये।

(३)

प्रातःकाल का सुहावना समय था। वृक्षों पर बैठे पक्षीगण अपनी सुरीली तानें अलाप रहे थे। सूर्य को निकले अभी थोडी ही देर हुई थी। नगरों में व्यापारिक हलचल शुरू होनेमें अभी देर थी। कुछ

भक्त लोग अपनी मधुर तानें सुनाते हुये इधर उधर घूम रहे थे। पहाड़की तलहटी की एक गुफासे दो युवा पुरुष निकले। उनके शरीर पर साधारण वस्त्र थे परन्तु उनको देखकर यह अनुमान नहीं हो सकता था कि ये निर्धन हैं। क्योंकि उनकी सूरत से प्रकट होता था कि ये कोई राज पुरुष हैं। वे दोनों आपस में वार्तालाप करने लगे।

आजकी रात बिलकुल नींद नहीं आई। पहला पुरुष जो लगभग १४-१५ वर्षका था बोला।

तो क्या अब भी मखमली गद्दों पर ही सोनेका विचार है। दूसरे ने कहा।

नहीं, नहीं, मैंने बात कही है—हां, बतलाइये तो हमें कहाँ जाना होगा?

सामने उस विशाल मठमें जो तुम्हें दीख रहा है।

हाँ, हां।

बस यही वह बौद्ध मठ है जहां पर हमें रहकर विद्या प्राप्त करनी है क्योंकि जब तक हमें उनके सिद्धान्तों का पता न लगेगा तब तक हम कुछ नहीं कर सकते।

तो फिर चलो।

यह कह कर दोनों युवक पहाड़ की कटीली झाड़ियों से निकल कर एक पगडण्डी से चल दिये। परन्तु अभी १० कदम नहीं बढ़े थे कि चुपचाप रुक गये। "एक भारी भूल हुई" दूसरे युवक ने जो उम्रमें कुछ बड़ा था, कहा—

क्यों क्या हुआ? छोटे युवक ने बड़े की ओर देखकर पूछा।

तुम जानते हो बौद्ध लोग जैनोंसे बड़ी शत्रुता रखते हैं, कहीं ऐसा न होवे लोग हमें वहीं मारकर निश्चिन्त हों।

फिर क्या करना चाहिये?

हमें अपना भेष बौद्ध भिक्षुका सा बनाना होगा।

तो फिर क्या किया जाय हमारे पास तो कोई पैसा भी नहीं है जो कुछ खरीद सकें।

उसकी तुम चिन्ता न करो मेरे पास एक मोहर है जाओ लेजाकर कपड़ा लेआवो।

यह कहकर उसने एक मोहर उसके हाथ पर रखदी। वह मोहर लेकर चला गया। दूसरे युवकने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई कुछ सोचा और दो बूंद आंसू भी उसकी आंखोंसे दिखाई दिये। पाठक समझ गये होंगे कि ये भारतके अनुपम रत्न अकलंक और निकलंक देव थे जो बौद्ध धर्मके ज्ञान प्राप्त करने के बौद्ध मठमें जा रहे थे।

(४

उपर्युक्त घटनाको दो साल व्यतीत होगये। समय ने कई बार पल्टा खाया। हजारों को धनी और कई एक को निर्धन बनाया। विपद्ग्रस्तोंकी विपत्ति दूरकी, जो सुख भोगते थे उन्हें अपने पंजे में लिया। यही हमारे चरितनायकों परभी बीती। दो वर्षोंमें वे बौद्धों में इस प्रकार हिल मिल गये थे कि उन्हें कोई जैन नहीं समझ सकता था। उनकी विलक्षण प्रतिभा की राजा भी प्रशंसा किया करते थे और आशा करते थे कि भविष्यमें ये दोनों विद्यार्थी विश्वके कोनेमें बौद्ध धर्म को फैलावेंगे परन्तु उनकी यह आशा निराशामें बदल गई।

ठीक दोपहर का समय-कोई १२ बजे होंगे--शर्दी

के दिन थे। सब छात्र धूपमें बैठे एकाग्र मनसे बौद्ध गुरु के पास पढ़ रहे थे। पढ़ाते २ वे रुक गये—उन के हाथ उनके सिर पर जा पड़े। उनकी उंगलियां बिना खाजके भी उनके घुटे सिर पर नाचने लगीं। वे कभी अपने हाथों को सिर पर कभी मस्तक पर नचा रहे थे परन्तु उनकी समझ में कुछ नहीं आया। विषय स्याद्वाद का था वे उसे समझ न सके। अधिष्ठाता आयें तो इसका अर्थ समझायें—यही विचार कर वे चुप बैठ गये। एकायक बौद्ध गुरु के चुप हो जाने के कारण विद्यार्थी दुविधा में पड़ गये। वे चुप चाप बैठे अपने गुरुका मुंह देख रहे थे।

अब नहीं पढ़ायेंगे? एक विद्यार्थी ने डरते हुये पूछा।

नहीं, अब नहीं, तुम लोग जाओ—इतना कह गुरु चले गये।

एक विद्यार्थी हंसा और पास बैठे युवक से धीरे से बोला—"पढ़ायें तो तब जब कुछ आता हो" दूसरा युवक हंस पड़ा।

सब विद्यार्थी उठ गये परन्तु दो युवक वहां से न उठे। एक युवक उठा और अपनी पुस्तकों को उठा लाया। उसने दो तीन बार पुस्तक को पलटा और कुछ लिख कर एक ओर रख दिया। दूसरा युवक जो पास ही बैठा था आपत्ति पूर्वक बोला। भ्राताजी क्या आपको प्राणों का लोभ नहीं जो इस प्रकारसे अर्थ लिखकर अपने प्राण संकट में डाल रहे हैं।

प्राणों को संकट में डालकर ही तो यहां पढ़ने आये हैं—हंसकर के उत्तर दिया।

अगर बौद्ध गुरू आपकी लिखाईको पहचा न लें!

मैं ऐसा लिखूंगा ही क्यों जो कोई पहिचान ले। कहकर उसने पुस्तक उठाई और देखकर रखदी।

भ्राता जी, आप सचमुच ही आपत्ति के बीज बोना चाहते हैं। यदि बौद्ध गुरुको मालूम होजायगा कि हम जैन हैं तो क्या वह बिना मारे हमें छोड़ देंगे

फिर क्या हुआ प्यारे धर्मके लिये यही सही—उसने हंसकर उत्तर दिया।

यही सही—छोटे युवक ने चकित होकर पूछा। यदि आपने यहां आकर मर ही जाना है तो आप समाजकी क्या सेवाकरेंगे? जबतक हम अपने ज्ञानको संसारमें न फैलायें और अपनी समाजको यह न दिखलायें कि हमारा जैन धर्म भी कोई चीज है तब तक हमारे पढ़नेसे क्या लाभ?

भ्राताजी! अगर आपने ही इस प्रकारके विचारों को मनमें जगह देदी. जिन पर जैन समाज का सारा भार पड़ने वाला है तो आपने खूब समाज सेवा की—कहते २ उसकी आंखोंसे दो बूंद आंसू टपक पड़े।

यह बातें प्रथम युवकके हृदय में तीर जैसा काम कर गयीं। वह बोला—

निकलंक तुम चिन्ता मत करो। देखो—कहकर उसने पुस्तक उसे दिखाई और दोनों हंस पड़े। उस ने सचमुच अपने लेखको यहां तक बिगाड दिया था कि उसे हजार प्रयत्न करने पर भी कोई नहीं कह सकता था कि यह अमुक का लिखा हुआ है।

(४)

जो जो बातें मैं तुमसे पूछूं उन सबका ठीक २ उत्तर देना। बौद्ध गुरु ने क्रोधसे गरजते हुये कहा। परन्तु कोई विद्यार्थी न उठा। परस्पर एक दूसरे का मुंह ताकने लगे। बौद्ध गुरु अधिक देर चुप न रह सके। उनकी आंखें क्रोधसे रक्त वर्ण होरही थीं,

उनके होंठ काँप रहे थे, क्रोध के आवेशमें दान्त पीस कर उन्होंने अपने पास रक्खे डण्डेको उठा लिया। और विद्यार्थियों पर वह दौड़े। शायद पिट कर कोई ठीक पता देवे, यही उनका लक्ष्य था। परन्तु उनका हाथ न उठ सका, वे कुछ सोचकर रुक गये और फिर अपने आसन पर बैठकर किसी बातको सोचने लगे।

क्या हमारे विद्यालय में कोई जैन विद्यार्थी भी है अवश्य है क्योंकि इसका अर्थ लिखने वाला कोई जैन है। बौद्ध विद्यार्थियों में इतनी बुद्धि नहीं है कि वे इसका अर्थ लिख सकें। अवश्य इस विद्यालय में कोई जैन है जो हमारी आँखों में धूल झोंक कर पढ़रहा है।

यही उनकी चिन्ता का कारण था। वे फिर उठे शायद दूसरी नीति ही काम कर जाय, यह सोचकर वे बोले—

विद्यार्थियो! तुम्हारी निर्भीकता आज मुझे मालूम हुई। मैंने खूब समझ लिया कि दुनियां में तुम किसी प्रकार के भय से विचलित नहीं होवोगे। अच्छा अब मैं अन्दर कुटी में जाकर बैठता हूं। हर एक विद्यार्थी वहां आये और जिसने यह अर्थ लिखा है वही महाराजा द्वारा अमूल्य पारितोषिक प्राप्त करे

इतना कह कर उन्होंने एक सेवक को बुलाया और कुछ संकेत करके उसे समझाया। सेवक चला गया। बौद्ध गुरु भी उठ कर अपनी कुटी में जा बैठे और देखने लगे कि कौन आता है? परन्तु कुछ लाभ न हुआ, वहां पर सिवाय लड़ते हुये दो चूहों के और कोई नहीं आया। बौद्ध गुरु निराश थे उन्हें कोई उपाय न सूझता था। उनकी बुद्धि जिस विद्यार्थी की खोज में थी वह न मिल सका। वे फिर पाठशाला में आये और बोले—

अच्छा न बतलाओ, रातको देवी से ये बातें पूछ लूंगा। देखता हूं वह अपने को कहाँ तक छिपाता है

कुछ दूर बैठे विद्यार्थियों ने व्यंगहास्य द्वारा इस का अनुमोदन किया। मानो वे कह रहे हैं कि आप की देवी भी शायद आपकी ही बहिन हो।

(७)

अच्छा जाओ—पढ़ाई समाप्त करके बौद्ध गुरुने पुस्तकें उठाते कहा।

सर्व छात्र चुपचाप सहमे हुए उठे और गुरुके चरणों में इस प्रकार गिरने लगे जैसे पतझड़ की ऋतु में वृक्षों से पत्ते। गुरू उनको आशीर्वाद देने लगे परन्तु उनका मन किसी और ही दुविधा में पड़ा हुआ था। उस विद्यार्थी का पता लगानेका संकल्प अपने हृदयमें पूरा कर चुके थे परन्तु अभी तक उन्हें कोई उपाय न सूझा था। वे पासमें पड़ी एक चटाई पर बैठ गये और गर्दन नीची करके कुछ सोचने लगे। अकस्मात वे चौंके और अपना हाथ पुस्तकों पर पटक कर बोले— बस, बिलकुल ठीक; इससे बढ़ कर कोई उपाय न होगा। खुशी के आवेश में ये वाक्य उनके मुखसे पूरे निकल भी न पाये थे कि उन्होंने एक सेवक को बुलाया और कहा जाओ किसी स्थानसे एक जैन प्रतिमा मंगाने के लिये महाराजसे कहो। सेवक चला गया। बौद्ध गुरु ने अपने घुटे हुये सिर पर उंगलियाँ रक्खीं और उन्हें नचाने लगे। अपनी सफलता पर वे इतने खुश थे कि कि मानो पृथ्वी पर ही चन्द्रमा पा लिया हो।

—अपूर्ण

वेदोंका ईश्वरकर्तत्व और पं० भगवतदत्तजी

(ले० स्वामी कर्मानन्द जी)

श्रीमान पं० भगवतदत्त जी ने अपने ऋग्वेद के व्याख्यान में वेद को ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध करने के लिये वाम देव सूक्त का आश्रय लिया है, इसी के बल पर आपने मोटे अक्षरों में लिखा है—

ऋग्वेद शब्दार्थ सम्बन्ध रूपसे किसी मनुष्य की कृति नहीं।

अर्थात् आपको इस प्रमाण पर बड़ा अभिमान है, हम भी उस पर पूर्ण रूप से विचार करते हैं। ऋग्वेद, मण्डल, ४ सू० १ से ४१ तक तथा सू० ४५ से ५८ तक के सूक्तों का ऋषि वामदेव है, इन्हीं में वे सम्पात सूक्त भी है जिनको विश्वामित्र ने बनाया था और वामदेव ने अपने नाम से प्रकट कर दिया थी, जिसका प्रमाण सहित हम वर्णन कर चुके है *। वामदेव की किस प्रकार की प्रकृति थी यह तो इसी से विदित होता है. यह ऋषि क्षुद्र हृदय तथा अभिमानी था एवं मिथ्या प्रतिष्ठा का लोलुपी था। पं० भगवद्दत्त जी ने ऋग्वेद मं० ४ सू० २६ के ३ मन्त्रों को अपनी पुस्तक में लिखा है, तथा उनपर किये गये पाश्चात्य विद्वानों के भाष्य की एवं सायनाचार्यादि भारतीय विद्वानों के भाष्य की समालोचना की है, तथा श्री स्वामी दयानन्द जी के भाष्य को ही सर्वोत्तम बतलाकर यह सिद्ध किया है कि वेद ईश्वरकृत है।

हम भी पाश्चात्य विद्वानों के भाष्यों को तथा भारतीय विद्वानों के भाष्यों के अनुयायी नहीं हैं अत हमको उस विषय में कुछ नहीं कहना, परन्तु स्वामी जी के भाष्य की विवेचनात्मक दृष्टि से परीक्षा करनी है। स्वामी जी का भाष्य निम्न प्रकार है—

—स्वामी भाष्य—

१—हे मनुष्यो! जो मैं सृष्टि को करने वाला ईश्वर, विचार करने और विद्वान के सदृश सम्पूर्ण विद्याओं का जानने वाला, और सूर्य के सदृश सब का प्रकाशक हूं. और मैं सम्पूर्ण सृष्टि की कक्षा अर्थात् परम्परा में युक्त, मन्त्रों के अर्थ जाननने वाले के सदृश, बुद्धिमान के सदृश सब पदार्थों को जानने वाला हूं, और मैं सरल विद्वान से उत्पन्न किये हुये वज्र को अत्यन्त सिद्ध करता हूं, और मैं सब के हित की कामना करता हुआ सम्पूर्ण शास्त्रों को जानने वाला विद्वान हूं। उस मुझ को तुम देखो!

२—हे मनुष्यो! जो सब का धारण करने और सबका उत्पन्न करने वाला मैं ईश्वर धर्मयुक्त, गुण, कर्म, स्वभाव वाले के लिये पृथ्वी के राज्य को देता हूं, मैं देने वाले मनुष्य के लिये वर्षा को प्राप्त कराउं, मैं प्राणों व पवनों को प्राप्त कराउं, जिस मेरी कामना करते हुये विद्वान लोग बुद्धि या जानने के लिये अनुकूल प्राप्त होते हैं। उस मुझ को तुम देखो!

३—हे मनुष्यो जो मैं आनन्द स्वरूप और आनन्द देने वाला मैं जगदीश्वर प्रथम मेघ के अत्यन्त असंख्यात् उत्तम वेगों वा प्रवेशों उत्पन्न निन्नानवे पदार्थों

* देखो हमारा दर्शन अंक १२ वर्ष ३ का लेख

को साथ प्रेरणा करूं, सब में ही मिलने योग्य जगत में जिस विज्ञान स्वरूप प्रकाश के देने वाले अतिथियों को प्राप्त हो वा प्राप्त करावे उसकी रक्षा करूं। उस मेरी उपासना करो और वह आनन्द युक्त होता है। इति,

इस पर पण्डित जी की सम्मति

"यही एक अर्थ है जो पूर्वोक्त सब आक्षेपों से रहित है। इसपर कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता। इसके अनुसार इन मन्त्रों की रचना किसी ऋषि की नहीं कही जा सकती, प्रत्युत यह रचना तो ऋषि परमर्षि परमात्मा की अपनी है"।

हमारी भी इच्छा नहीं होती कि इसपर कुछ आक्षेप करें, इसके दो कारण हैं—

१—यह भाष्य महर्षि दयानन्द जी का है, जिसमें मेरी अत्यन्त श्रद्धा है।

२—मेरे मित्र पं० भगवतदत्त जी का यह आग्रह है कि इसपर कोई आक्षेप नहीं हो सकता।

भला इसपर आक्षेप करके कौन अपने मित्र का क्रोध भाजन बने, परन्तु क्या करें सत्य की रक्षार्थ इसपर विचार करना ही पडता है, परन्तु करेंगे संक्षेप से ताकि हमारे मित्रों को बुरा न लगे। वह यों है-

१-इस भाष्य से ईश्वर का ईश्वरत्व कुछ भी न रहा, क्योंकि इसमें ईश्वर को विद्वानके सदृश ज्ञाता, विचारक, मन्त्रार्थ जानने वाले के सदृश, बुद्धिमान के सदृश जानने वाला, विज्ञान के यज्ञ को सिद्ध करने वाला, सब शास्त्रों को जानने वाला, आदि कहा है। यदि उपरोक्त गुण वाला ही ईश्वर है तो साधारण पुरुष में और उस ईश्वर में क्या अन्तर है। इसमें एक बात और विचारणीय है कि इसमें ईश्वर की उपमा विद्वानों से दी गई है, जिसमें ईश्वरसे तो विद्वान ही श्रेष्ठ सिद्धहोगये अस्तु जो हो।

२— परन्तु फिर भी यह कैसे सिद्ध हो गया कि ये मन्त्र ईश्वर रचित हैं। क्या इस लिये कि इस भाष्य में ईश्वर अपने आप ही प्रशंसा करता है जो कि स्व-आत्मप्रशंसा के सिवा कुछ गौरव नहीं रखती।

३—यदि इसी प्रकार के भाष्यों से कोई पुस्तक ईश्वरीय ज्ञान होसकती है तो संसारमें एक भी पुस्तक ऐसी नहीं बचेगी जिसको ईश्वरकृत न कहा जा सके यदि सन्देह हो तो परीक्षा करके देख सकते हैं। फिर इन्हीं पुस्तकों में ऐसी क्या विशेषता है जिससे इन को तो ईश्वरकृत माना जावे तथा औरों को न माना जावे।

४- धर्मयुक्त गुणकर्म स्वभाव वालोंको यदि ईश्वर पृथ्वी का राज्य देता है तो आर्यसमाज पर उसकी क्रूर दृष्टि क्यों है?

५- पवनों वा प्राणों को ईश्वर किससे प्राप्त कराता है। तथा किसीको आज्ञा देकर कराता है। अथवा उससे प्रार्थना करके कराता है किंवा लोभ, लालच देकर कराता है।

६- वे निन्यानवे पदार्थ कौनसे हैं जिनके साथ ईश्वर प्रेरणा करता है। तथा च अत्यन्त उत्तम देश या प्रवेश क्या हैं जिनमें ईश्वर प्रेरणा करता है। ये पदार्थ निन्यानवे ही क्यों रक्खे? पूरे १०० तो कर देने चाहिये थे। प्रतीत होता है इन मन्त्रोंका ईश्वर सौ तक गिनती नहीं जानता था। हम कहां तक लिखें

लिखते समय दुःख होता है कि ऐसे २ विद्वानों को भी संस्कार जनित अविद्याने ऐसा जकड़ा है कि बुद्धि की स्वतन्त्रता ही नष्ट करदी है। इसी कारण ये लोग सत्यासत्यका विचार नहीं कर सकते। ये लोग पुस्तक विशेष के तथा व्यक्ति विशेष के गुलाम होकर अपनी स्वतन्त्र प्रज्ञासे हाथ धो बैठे हैं। यही भारतकी गुलामीका मूलकारण है।

यह बात नहीं है कि ये विद्वान कुछ जानते न हों सब कुछ जानते हैं, क्योंकि इनका स्वाध्याय विशाल है, इनका पांडित्य प्रशंसनीय है, अपरिमित इनकी बुद्धि की समता है, परन्तु अत्यन्त दुःख है कि इनको भय है मूर्ख जनता का, तथा खयाल है अपनी प्रतिष्ठा का वह संस्कार भी इनको सत्य कहने तथा लिखने नहीं देते। भला हम इनसे पूछें कि मन्त्रार्थ करनेकी कोई मर्यादा है अथवा 'निरंकुशाः कवयः' वाली कहावत यहां भी लगती है। यदि कोई मर्यादा है तो कौनसी वह पद्धति है जिसके अनुसार उपरोक्त अर्थ को आप मन्त्रार्थ कह सकें। पं० भगवतदत्तजी ने प्रयत्न किया कि उपरोक्त भाष्यकी कमियों को पूरा किया जावे, इसीलिये उन्होंने अपनी इस पुस्तक में भाष्यके सम्पूर्ण शब्द न लिखकर संक्षेप में लिखा है। अब हम मन्त्र तथा उनका स्पष्टार्थ करते हैं—

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवां ऋषिरस्मि विप्रः।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यतामा ॥१॥
अहं भूमिमददामार्य्यायाहं वृष्टिं दाशुषे मर्त्याय।
अहमपो अनयं वावशाना मम देवासो अनुकेतमायन् ॥२॥
अहं पुरो मन्दसानो व्यैरं नव साकं नवतीः शम्बरस्य।
शततमं वेश्यं सर्वताता दिवोदासमितिथिग्वं यदावम ॥३॥
ऋग्वेद, मंत्र ४ सू० २६

अर्थ—मैं पहिले मनु हुआ, सूर्य हुआ, तथाच कक्षीवान् ऋषि हुआ, विद्वान हुआ। मैं आर्जुनेय कुत्स हुआ, मैं उशना कवि हुआ, मैं सब कार्यों को सिद्ध करने वाला हूं। मुझ को देखो।

२—मैं ने खेती करने वालों को भूमि दी, मैं ने दानी पुरुष को अन्न दिया, (वृष्टि नाम अन्न का है। गो० पू० ४-४-५ ।

मैं तेज धारण कराऊं, देवता लोग मेरी इच्छा के अनुकूल चलें।

३—मैं ने सोम के प्रताप से शम्बर (असुर) के निन्यानवे पुरों को एक साथ ही नष्ट किया, मैं ने दिवोदास के सौ नगरों की सब ओर से रक्षा की।

यह है सरल और स्पष्ट अर्थ उपरोक्त मन्त्रों का, अब वाचक वृन्द अपने आप परिणाम निकाल लें कि उपरोक्त वाक्य किसके हैं। इन मन्त्रों में आये हुये प्रत्येक शब्द से ऐतिहासिक पुरुषों के नाम प्रकट होते हैं, परन्तु फिर भी बिलकुल स्पष्ट करने के लिये मन्त्रकार ने कुछ शब्द ऐसे रक्खे हैं जिससे किसी प्रकार का सन्देह ही न रहे। यथा, कक्षीवां ऋषिरस्मि, आर्जुनेय कुत्स, उशना कवि दिवोदास, शम्बर के ६६ किले अथवा नगर।

उपरोक्त सभी नाम प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुषों के हैं, कक्षीवानको तो स्वयं वेद भगवान ने बतलाया है, ऋषि का अर्थ ईश्वर करना वैदिक साहित्य से विपरीत है। तथाच कक्षीवान को ताण्ड्य ब्राह्मण में औशिजः व्यक्ति विशेष लिखा है। इसके पिता का नाम दीर्घतमा था यह प्रसिद्ध ही है, जिसको सायण भाष्य में देखलें। २-कुत्स के लिये निरुक्त में स्पष्ट

ऋषिः कुत्सो भवति, लिखा है जिसका वर्णन हम पहले कर चुके हैं। तथाच उशना कवि भी प्रसिद्ध कवि हो चुके हैं, (कवीनामुशना कविः) गीता में लिखा है। दिवोदास, शम्बर असुर, तथा उसके नगर आदि का नाश, ये सब प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनायें हैं, जो कि दाशराज्ञ युद्ध के समय घटी थी। इन सब का वर्णन तो हम वेद और इतिहास नामक पुस्तक में करेंगे।

प्रकृत विषय में तो इतना ही पर्याप्त है कि यहां इन शब्दों से ईश्वरका ग्रहण नहीं होसकता क्योंकि किसी भी संस्कृत पुस्तक में ईश्वरका वर्णन उपरोक्त नामों से नहीं आया। परन्तु हमारे अर्थकी पुष्टि में सम्पूर्ण वैदिक साहित्य विद्यमान है। अब रहगया यह प्रश्न कि यह बातें इस ऋषिने कहां कहीं और कैसे कही? इसके विषय में सभी भाष्यकारों ने भारी भूल की है। योरोपीय विद्वानों में ग्रीफिथ आदि कई तो विचारे मुक्त कण्ठसे कहते हैं कि हम भावको नहीं समझ सके। बाकी के विद्वानों ने जो भाव समझा है वह नितान्त भ्रम पूर्ण है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। रह गये सायण, उन्होंने तो 'वामदेवको माता के पेट ही में ऐसा ज्ञान हुआ' यह मानलिया। इसमें इनका अपराध नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थोंसे ही उनको यह भ्रम हुआ है। ब्राह्मणकारों ने भी इसी मंडल के १ सूक्त आगे के प्रथम मन्त्र से अपने विचार बनाये हैं। अतः हम सबसे प्रथम भ्रम के उस मूलकारण को आपके सन्मुख रखते हैं।

गर्भेनु सन्न वे षाम वेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा।
शतं मापुर आयसी ररक्षन्नध श्येनो जवसा निरदीयम्॥

अर्थात ऋषि कहता है कि मैंने इन देवोंके सम्पूर्ण जन्मों को गर्भमें जाना। धातु के १०० किलों ने मेरा रक्षा की। अब मैं श्येनकी तरह उपस्थित हूं, मैं जोर से निकल आया।

श्री स्वामी जी महाराज ने तो इन मन्त्रों के अर्थ में बड़ा भारी भूल की है। स्वामी जीका भाष्य हम नोटमें समीक्षा सहित लिखते हैं, वहां देखलें। *

* नोट—मं० ४ सू० २७ मन्त्र १ का स्वामीभाष्य हे मनुष्यो! जैसे मैं विद्वान, गर्भमें वर्तमान इन श्रेष्ठ पृथ्वी आदि पदार्थ वा विद्वानों के सम्पूर्ण जन्मों को अनुकूल जानता हूं, जिस मुझको सुवर्णवाली वा लोहवाली सौ नगरी रक्षा करती हैं इसके अनन्तर सो मैं बाजपक्षी के सदृश इस शरीर से अत्यन्त वेग के साथ शीघ्र निकलूं।

समीक्षा—प्रथम तो स्वामी जी ने ईश्वरको विद्वान बनाकर गर्भमें स्थित कर दिया। यह अच्छा किया। क्योंकि यह स्वतन्त्र रहकर विशेष उद्दण्ड होगया था कभी बिहारमें भूचाल उत्पन्न कर देता था तो कभी कवेटा में, ऐसे उपद्रवीका स्वतन्त्रता छीन कर स्वामी जी ने बुद्धिमानी ही का काम किया है। परंतु इस हजरत को यहां चैन कहां है, इसीलिये बाजकी तरह वेगके साथ अत्यन्त शीघ्र भागना चाहता है। हमारी सम्मति में तो ऐसे खतरनाक व्यक्ति को इस जेलसे निकलने नहीं देना चाहिये। यदि निकल जावे तो जमानत अवश्य लेलेनी चाहिये। ऐसा न हो कि अबकी बार यह हाथ ही न आवे और फरार ही हो जावे।

दूसरे यह विद्वान गर्भ में स्थित ही पृथ्वी आदि

बाकी अगले पेज पर

अब जब वेद ही इस बातको लिख रहा है कि यह ज्ञान गर्भमें हुआ तो पंडित जी को सायण पर इतना क्रोध क्यों आया। असल बात तो यह है कि वेदों के रहस्य को समझना कोई खाला का घर नहीं है। इसमें विशेष प्रयत्न की आवश्यकता है तथा आवश्यकता है पक्षपात शून्यता की। इन मन्त्रों में गर्भ और श्येन ये दो शब्द ऐसे हैं जिनमें सम्पूर्ण गुप्त रहस्य निहित है। मेरी तो धारणा है कि इन शब्दोंमें वेदके बहु भागका रहस्य भरा हुआ है। अतः हम इन शब्दों के भावको एवं अभिप्राय को प्रथम दर्शाते है।

१- स्वामी जी ने, सायण ने तथा अन्य विद्वानों ने भी यहां गर्भके अर्थ माता के गर्भके ही समझ लिये। इसीलिये सम्पूर्ण बातें अस्त व्यस्त और बेशिर पैरकी लिखी गई जिससे वेद बच्चों का मजाकसा बन गया। इसमें वेदको ईश्वरीय ज्ञानके वायुयान पर चढ़ाने वालोंकी ही अधिक कृपा है। स्वामीजीने तो भाष्य करके इस अनर्थको प्रत्यक्ष कर दिया।

गर्भः—वास्तव में यहां गर्भ अर्थ सम्वत्सर के हैं जिसका वर्णन हम विस्तार पूर्वक करेंगे। अब तो संक्षेप से इस विषय में प्रमाण देते हैं। यथा—

सम्वत्सरो वाव गर्भाः पञ्च विंशः, तस्य चतुर्विंशति-र्ध मासाः सम्वत्सर एव गर्भो पञ्च विंशति।

शत० ८-४-१-१६

अर्थात्—सम्वत्सर गर्भ है, २५, पच्चीस जिसके २४ तो अर्धमास हैं, और यह पच्चीसवां विशेष इसी विशेष में यह अश्वमेध यज्ञ होता था तथा उस समय बड़ी २ सभायें होती थीं और कवि सम्मेलन भी होता था, इन सब बातों का वर्णन हम विस्तार पूर्वक सप्रमाण आगे करेंगे, पाठक आगे पृष्ठों में देखें। इसी यज्ञ को देवों का जन्म कहते थे क्योंकि इससे विद्वान उत्पन्न होते थे। बस इसी अश्वमेध यज्ञ में अर्थात् सम्वत्सर में इस मन्त्र कर्ता ऋषि को उपरोक्त ऐतिहासिक घटनाओं का ज्ञान हुआ था,

---

के और विद्वानों के जन्मों को अनुकूल जानता है। यदि ऐसा है तो पं० भगवतदत्तजीने व्यर्थ ही 'सायण पर रोष प्रगट करने के लिये) कई पृष्ठ काले किये। एक आश्चर्य है कि इस विद्वान ने विद्वानों के ही जन्मों को अनुकूल क्यों जाना? क्या मूर्ख लोग इस के अनुकूल नहीं हैं?

एक बात यह और बतलाना भूल गया—इसने यह नहीं बतलाया कि किस देशके विद्वानों के जन्मों को अनुकूल जानता है? और न किसी भाषाका संकेत किया। संभव है गर्भ के दुःखों के कारण सम्पूर्ण बातें न बता सका हो। इन्हीं दुःखोंके कारण तो यह भागना चाहता है।

३- लोहे या सोने के १०० नगर (शहर) रक्षा करते हैं। यह १०० शहर वह भी लोहे या सोने के इस विद्वानको माता के पेटमें बतलाते हुये स्वामी जी को इतना विचार कर लेना चाहिये था कि वह बिचारी किस प्रकार जीवित रहेगी। मालूम नहीं एक एक नगरी में कितने २ आदमी थे तथा कितने २ पशु पक्षी थे। प्रतीत होता है इन नगरियों का राजा कोई नहीं था। लावारिस माल था इसी लिये ये नगरियां उठाकर ऐसे सुरक्षित स्थान में रक्खी गई हैं अथवा डाकुओं के भयसे ऐसा किया गया होगा।

तथा विद्वानों (कक्षीवान आदि) के जीवन चरित्र भी हमने सुने थे। अर्थात गर्भ से अभिप्राय है सम्वत्सर में होने वाली सभायें। ये सभायें युगान्त में अर्थात चौथे वर्ष में होती थीं, इसी चतुर्थ वर्ष का नाम सम्वत्सर है। *

श्येनः—अब रह गया श्येन, जिसके अर्थ हैं चन्द्रवंशियोंमें से निकलकर सूर्यवंशियोंमें आमिलना। यथा—

यदाह श्येनोऽसि इति, सोमं वा एतदाहैषह वा अग्निर्भूत्वा अस्मिल्लोके संश्यायति। गो. पूर्व ५-१२

अर्थात तू श्येन है यह कहता है, तो वह सोम की प्रशंसा करता है, क्योंकि यह सोम ही अग्नि हो कर (श्येन रूप से) इस लोक में घूमता है। अर्थात् जो सोम अग्नि हो कर लोक में चलता है (घूमता है) उसे श्येन कहते है। अभिप्राय यह है कि जो सोम वंशी सूर्यवंश के पक्ष में जा मिलते थे उनकी श्येन संज्ञा थी, उन्हीं में से वामदेव भी एक था। जिसने अपने को कहा कि मैं श्येनरूप से उपस्थित हूं। × लोगों ने इस भाव को न समझकर इस बेचारे वामदेव को ही पक्षी बना दिया। तथा शीघ्र-तासे गर्भ के बाहिर भी कर दिया। इन सबको न तो गरीब वामदेव पर दया आई और न उसकी माता पर। श्री स्वामी जी ने तो विद्वान को बाज पक्षी के समान वेग से अत्यन्त शीघ्र शरीर के बाहिर निकाल दिया। मालूम नहीं स्वामी जी को इस विद्वान से इतना द्वेष क्यों था। एक बात बड़े मजे की है, पहले तो ईश्वर विद्वान के सदृश ही था और यहां उन्नति करके स्वयं विद्वान बन गया, और श्येन पक्षी के समान हो गया। अभी क्या है आगे २ देखिये क्या होता है। अस्तु,

प्रकृत विषय यह है कि यहां गर्भ के अर्थ हैं सम्वत्सर में होने वाली सभा, तथा श्येन के अर्थ हैं चन्द्रवंश से सूर्यवंशमें सम्मिलित होना अथवा क्षत्रिय से ब्राह्मण बनना *। ये क्षत्रिय और ब्राह्मण वैदिक युग में जाति विशेष नहीं थी अपितु सम्प्रदाय थे, तथा इनके सिद्धान्तों में भी भेद था, अतः वामदेव ऋषि अथवा अन्य कोई ऋषि जिसने यह मन्त्र बनाये हों वह ऐसा व्यक्ति है जो ब्राह्मण सम्प्रदायमें दीक्षित हुआ है, विश्वामित्र इस विषय में इतिहास प्रसिद्ध व्यक्ति है जो कि क्षत्रिय से ब्राह्मण हुआ था, गोपथ के प्रमाण से (जिसको हम आगे लिखेंगे) यह सिद्ध है कि इन मन्त्रों का रचयिता विश्वामित्र है, विश्वा-मित्र ने अपनी इस रचना को वामदेव को दिखलाया था तथा उसने (वामदेव ने) इन मन्त्रों को अपने नाम से प्रकट कर दिया था। विश्वामित्र भी एक अभिमानी राजा था यह उसके जीवन से प्रत्यक्ष है, अतः वामदेव ने अथवा विश्वामित्र आदि किसी अन्य ऋषि ने अपने भावों को उपरोक्त कविता में प्रगट किया है, यह वर्णन काव्य शैली से ही किया गया है दार्शनिक ढंग से नहीं। इस प्रकार की कवितायें पहले भी होती थीं तथा अब भी होती हैं। बस यदि इस वर्णन शैली से ही वेद ईश्वरीय ज्ञान है तो बाकी की भी सब कवितायें ईश्वर कृत हो जायेंगी। प्रथम तो पूर्व समय की कविता भी

---

*—इन सब बातों का वर्णन सप्रमाण आगे है।

×—इसका विस्तार पूर्वक वर्णन वेद और इति-हास नामक पुस्तक में करेंगे।

* निरुक्तमें इन्द्र अर्थ भी श्येन का है। अ० ११

भगवद् गीता को ही ले लें, जो वर्णन जिस शैली में इन मन्त्रों में है वही वर्णन उसी शैली में गीता में भी है, × तथा स्वामी रामतीर्थ जी की कविताओं में भी यही शैली है, तथा वर्तमान समय की छायावाद की कवितायें भी इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। हां एक भेद इन कविताओं में और वैदिक कविता में अवश्य है, वह है नवीनता का और प्राचीनता का यही भेद बतलाकर पं० जी ने गीता का समाधान किया है, यदि इसका नाम युक्ति है तो अवश्य वेद ईश्वरीय ज्ञान रूपी पर्वत पर चढ सकते हैं। इसको हम भी स्वीकार कर लेते हैं। परन्तु इस युक्ति से एक बात सिद्ध हो गई है वह यह कि जिस समय वेद बने थे अथवा आर्य पुरुषों की परिभाषा में प्रकट हुये थे उस समय वेद ईश्वरीय ज्ञान नहीं थे क्योंकि उस समय वेद नवीन थे, और पं० भगवतदत्त जी के कथनानुसार जो नवीन होता है वह ईश्वरीय नहीं हो सकता। अतः यह सिद्ध हो गया कि वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानने की भ्रान्ति या कल्पना बिलकुल नवीन है। आज भी प्राचीन पुस्तकें ईश्वरीय ज्ञान समझी जाने लगी है, यथा गीता, गुरु ग्रन्थ साहब तथा कुछ काल बाद सत्यार्थ प्रकाश भी ईश्वरीय ज्ञान होने वाला है। अभी भी आर्यसमाज में वेदों से अधिक मान्यता अथवा इज्जत सत्यार्थ प्रकाश की है। कई भाइयों को तो हमने स्वयं कहते सुना है कि जब इसमें सब बातें वेदानुकूल हैं और वेद ईश्वरीय ज्ञान है तो सत्यार्थ प्रकाश भी ईश्वरीय ज्ञान हुआ, उसके विरुद्ध न होने से।

इसी प्रकार स्वामी जी का भी आसन ईश्वर से एक आसमान ऊपर बिछाये जाने का घोर प्रयत्न हो रहा है, परन्तु क्या करें बिचारे, समय उनका साथ नहीं देता। श्रीमान पं० भगवतदत्त जी ने एक युक्ति और बड़ी सुन्दर दी है, आप कहते हैं कि श्री कृष्ण ने परमात्मा को जानकर अपनेमें परमात्मा की ओर से अहं भाव धारण किया था।

यदि ऐसा है तो क्या अन्य व्यक्ति इस प्रकार का अहं भाव धारण नहीं करसकते। यदि करसकतेहैं तो बस विश्वामित्र अथवा वामदेवने भी ऐसा ही किया।

फिर ये उपरोक्त मन्त्र ईश्वरीय कैसे हो गये। यदि कृष्ण जी के सिवा अन्य कोई ऐसा नहीं कर सकता तो क्यों? बस यह सिद्ध हो गया कि वेद ईश्वरीय ज्ञान अथवा ईश्वरकृत नहीं हैं अपितु गीता आदि की तरह मनुष्य रचित हैं। तथाच—

ऐतरेयारण्यक २-५ में भी 'उक्तं ऋषिणा' कहकर इसी मन्त्र को उपस्थित किया है, तथाच मन्त्र देकर लिखा है कि 'वामदेव एवमुवाच'।

× भगवद्गीता अध्याय १०

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥२१॥
वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥२२॥
रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥२३॥
महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥२५॥
अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥२६॥
उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम्।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम् ॥२७॥
आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कंदर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥२८॥

इसमें भी वामदेव ने ऐसा कहा है अर्थात यह ऊपर का वृत्तान्त वामदेव ऋषि ने कहा यह स्पष्ट है। यदि वेद ईश्वरीय ज्ञान होते, अथवा इन मन्त्रों में ईश्वर का वर्णन होता तब तो ब्राह्मण ग्रन्थ में यह कहा जाता कि 'ईश्वर एवमुवाच'। 'उक्तं ऋषिणा' से परमात्मा का अभिप्राय समझना घोर अन्याय है।

शतपथ का स्पष्ट प्रमाण

ब्रह्म वा इदमग्र आसीत्। तदात्मानमेवा वेदहं ब्रह्मास्मीति तस्मात् तत्सर्वमभवत् तद्यो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत् तथर्षीणां तथा मनुष्याणाम् ॥२१॥ तदेतत् पश्यन्नृषिर्वामदेवःप्रतिपेदे। (अहं मनुरभवं सूर्यश्चेति) तदिदमप्येतर्हि य एवं वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वं भवति ॥२२॥

—शतपथ कां० २४ प्र० ३ ब्रा० १

अर्थ—पहले ब्रह्म ही एक था उसने यह जाना कि मैं ब्रह्म हूं, उससे यह सब हो गया; जो जो देवों में ऐसा जानता है वह भी वैसा ही होता है, ऐसे ही ऋषियों में से तथा मनुष्यों में से भी ॥२१॥ इसी प्रकार वाम देव ने अपने आप को ब्रह्म जाना, और कहा कि मैं मनु हुआ और मैं सूर्य इति। सो अब भी जिसे यह ज्ञान हो जाता कि मैं ब्रह्म हूं, वह भी यह सब कुछ हो जाता है।

श्री भगवद्दत्त जी ने भी इस ब्राह्मणको लिखा है परन्तु अर्थ में खेंचातानी करके अपने भाव इस ब्राह्मण से कहलानेका प्रयत्न किया है। परन्तु बुरी तरह असफल हुये हैं। अब यह स्पष्ट होगया कि शतपथकार ऋषि भी इन मन्त्रोंको ऋषिप्रणीत मानते हैं तथा जो भाव गीतामें है अथवा अन्य किसी अद्वैत वादी की कविता में हो सकता है उसी भावसे ऋषि ने उपरोक्त मन्त्रोंको बनाया है, ईश्वर ने नहीं।

प्रश्न—ब्राह्मणकारों का प्रायः यह नियम है कि प्रतीक रखकर अपने ही वेदकी व्याख्या करते हैं तथा जब कोई दूसरे वेदकी बात कहनी होती है तो ब्राह्मणकार सम्पूर्ण मन्त्र को लिखते हैं सो शतपथ ब्राह्मण तो यजुर्वेद का है और उपरोक्त मन्त्र हैं ऋग्वेद के। पुनः यहां मन्त्रकी प्रतीक ही क्यों रक्खी। संपूर्ण मन्त्र क्यों नहीं लिखा?

उत्तर—प्रथम तो यह कोई मन्त्र नहीं है अगर थोड़ी देरके लिये हम आपकी बात मान भी लें तो इससे आपके पक्षकी पुष्टि कैसे हो सकती है। अपितु इससे तो यही सिद्ध होता है कि ये मन्त्र यजुर्वेद में भी थे। अब किसी कारण से उसमें नहीं रहे, और भी अनेक मन्त्र ऐसे ही निकल गये हैं।

प्रश्न—हम आज भी देखते हैं कि वेदमन्त्रों के पदों को लेकर ऐसे ही कार्य चलाये जाते हैं।

यथा— सत्यं ब्रवीमि' ऋग्वेद १०-१२७-६

'अहमेव स्वयमिदं वदामि' १०-१२५-५

अर्थात मैं सत्य कहता हूं। तथा मैं ही स्वयं यह कहता हूं।

वामदेवने भी इसी प्रकार मन्त्रों द्वारा अपने भाव प्रकट किये थे। नकि उसने मन्त्र बनाये थे।

उत्तर—यह है पक्षपातका प्रत्यक्ष उदाहरण। भला 'मैं सत्य कहता हूं' इस वाक्य में और 'मैं मनु था' 'मैं ही सूर्य था' इस वाक्यमें कुछ भेद है या नहीं? यदि कुछ भेद नहीं है तबतो ठीक है और यदि कुछ भेद है जोकि प्रत्यक्ष ही दीखता है तो इस बोदी

(शेष पृष्ठ २७ पर देखें)

हे सुमन !

(ले०—गुणभद्र जैन)

आज निज सुषमा में बन अन्ध,
ऐंठ कर इतराते हो फूल ।
समझते तुम औरों को तुच्छ,
पड़ेगी क्या नहि मुख पर धूल ? ॥१॥

सभी का जीवन यहां अनित्य,
भूल जाते हो क्यों यह बात ?
नहीं रहता शशि तेज सदैव,
शीघ्र आती अंधियारी रात ॥२॥

पुष्प ! तुम करते जिसका हास्य,
प्रकृति वह बन कर के विकराल ।
हाय ! क्षण भर में हो प्रतिकूल,
और ही कर देगी तब हाल ॥३॥

देख कर तुम को यौवनवान,
मान कर मन में बलि के योग्य ।
तोड़ लेगा वन रक्षक आय,
विश्व में हैं अल्पायु मनोज्ञ ॥४॥

शोक से अतिशय ही उस काल,
सहन करना होगा कर घात ।
रोष से कभी पांखुरी एक,
भूमि पर करती अपना पात ॥५॥

छोड़ता कब माली का हाथ,
टोकरी अपनी में वह डाल ।
सुई से देकर भारी त्रास,
बनाता पुष्प ! तुम्हारी माल ॥६॥

गले में पड़े हुये हे पुष्प !
तुम्हारा म्लान हुआ मृदु आस्य ।
विश्व का करता जो परिहास,
एक दिन उसका होता हास्य ॥७॥

नये सम्राट का संक्षिप्त इतिहास

राजकुमार एडवर्ड जो अब ब्रिटेन की गद्दी पर आरूढ़ होंगे और भारत के सम्राट बनेंगे, का जन्म २३ जून १८६४ में हुआ था। उनकी आयु इस समय लगभग ४२ वर्ष की है। वर्तमान सम्राटका विवाह अभी नहीं हुआ है और वह इङ्गलेण्ड के आधुनिक कालके सर्व प्रथम अविवाहित सम्राट हैं। उनका बचपन निश्चिन्तता और चहल पहल से व्यतीत हुआ है। १६ वर्षकी आयु में (सन १९१० ई० में) उनके पिता स्वर्गीय सम्राट जार्ज पंचम का राज्या भिषेक हुआ। १९११ में आप सार्वजनिक जीवन में आये और कुछ दिनों तक "हिन्दुस्तान" नामक जहाज में काम कर आप सेंडरिंघम में अध्ययन करने लगे। १९१२ में आप कुछ दिनों के लिये फ्रांस गये। तदुपरांत वह आक्सफोर्ड गये और महासमर के आरम्भ होने के कुछ ही समय पूर्व उन्होंने राज्य-कार्यमें भाग लेना प्रारम्भ किया, जब ग्रेनेडियर लार्ड कैलेके लैफटेंट थे तब आपने रणभूमि जानेकी इच्छा प्रकट की। उस समय युद्धसेनापति लार्ड किचनर ने आपको युद्ध के खतरेका डर दिखाया तब आपने उत्तर दिया 'क्या मेरे चार भाई और नहीं हैं'।' तब लार्ड किचनर ने कहा— अगर मुझे यह यकीन हो जाय कि आप गोली से मारे जायेंगे तब तो शायद आपको मैदान में जाने से रोकने में मैं गलती पर होऊंगा। पर यहभी सम्भव है कि शत्रु आपको कैद करले और इसकी मैं इजाजत नहीं देसकता। आपको सैनिक शिक्षाका थोड़ा और अध्ययन करना चाहिये और तब आप फ्रांस चले आ सकते हैं'। परन्तु राजकुमार रोके नहीं जा सके, वह अपने पिताकी प्रजाके सुख दुख में हाथ बटाने के लिये मैदान को भेजे गये

साम्राज्य भरमें दौरा—

युद्ध समाप्त होने पर उन्हें साम्राज्यका राजदूत बनाया गया। वह साम्राज्यके हंसमुख राजदूतके नामसे प्रसिद्ध हुये। उन्होंने इस स्थितिमें पहले कनाडा फिर वेस्ट इन्डीज, आस्ट्रेलिया, भारत और पुनः कनाडा और अफ्रीकाकी यात्रा की। १९२८में अफ्रीका में आपका यह दौरा समाप्त हुआ और यह दौरा आपको इसलिये स्थगित करना पड़ा कि उस समय आपके पिता स्वर्गीय सम्राट सख्त बीमार होगये थे और आपको ६००० मीलसे अपने पिता की रुग्ण शय्या पर के समीप रहने के लिये भागकर आना पड़ा। वर्तमान सम्राट ने निम्नलिखित देशों का परिभ्रमण किया है—कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलेन्ड भारत, लङ्का, माल्टा, दक्षिण अफ्रीका, ब्रिटिश पूर्वी अफ्रीका, केनिया, टङ्गानिका, रोडेसिया, नाइजेरिया, आदि समस्त सुप्रसिद्ध स्थानोंकी यात्रा करने के बाद १९२८ से १९३४ तक उनका जीवन प्रायः हवाई यात्राओं में ही व्यतीत हुआ है।

१९३१ में आपको एक सुप्रसिद्ध खिताब यात्राओं "का राजकुमार" मिला। आप एक पक्के खिलाड़ी और भद्र पुरुष हैं। नित्य वह ठीक १० बजे अपना काम शुरू करते थे और अपने स्टाफ के साथ बराबर काम करते रहते थे। वह स्वयं क्लर्की का बहुत काम करते थे। वह प्रतिदिन नियमसे अपनी डाक देखते और अपने भवनकी सबसे निचली मंजिलमें

बैठकर समाचार पत्र पढ़ते हैं। उनका जीवन शांत सादा और हेल मैल का है। वह समाचार पत्र बहुत पढ़ते हैं और उनमें भरी हुई गप्पोंको पढ़नेकी अपेक्षा वह राष्ट्रकी घटनाओं आर्थिक स्थिति तथा राजनैतिक संकट आदि के ही विषय में अधिक रुचि रखते हैं।

नवीन सम्राटकी विशेषता—

नवीन सम्राट के जीवनकी सबसे महान विशेषता यही है कि उन्होंने साम्राज्य के लगभग समस्त भागों तथा अन्य देशोंका परिभ्रमण किया है। आपकी ३७ वीं वर्ष गांठ पर एक सम्वाद दाता ने लिखा कि बर्लिन की यात्रा करते हुये भूत पूर्व कैसरने राजकुमार के सम्बन्ध में "आकर्षक परन्तु युवक पक्षी" का नाम दिया था। उन्होंने अपनी यात्राओंमें केवल एक देशसे दूसरे देशकी थल मार्गकी ही यात्राएं नहीं कीं किन्तु वह कई बार सागरों को लांघ कर और योरुप का अतिक्रमण कर सुदूरस्थ स्थानों में पहुंचे हैं। योरुप के ही दो देश ऐसे हैं जहां वह नहीं गये एक रूस और दूसरे बलकान प्रदेश।

कनाडा में वह दो बार यात्रा कर चुके हैं। यात्रा में वे बैल गाड़ी पर चढ़े, हाथी पर चढ़े, हवा में सैर की और अनुभव प्राप्त करने के साथ२ इन यात्राओं में खेल सीखे। वे यन्त्रोंकी जानकारी बड़ी जल्दी प्राप्त कर लेते हैं। उनकी स्मृति बड़ी तेज है। एक बारकी देखी चीज या घटना तथा एक बार के देखे लोगों के चेहरे या नाम उन्हें एक बार सुनने से सदा के लिये याद होजाते हैं। जो लोग सेन्ट जेम्स पलेस में निरीक्षक पुस्तक पर हस्ताक्षर करने आते हैं उन्हें वे तत्काल ही पहचान लेते हैं। जब कोई उनका बाहरका मित्र लण्डन आता है और समाचार पत्रों में वे उसके आनेकी सूचना पढ़ते हैं तो फौरन ही उसे महलों में निमन्त्रित किया जाता है। विदेशों की यात्राओं से उन्होंने यह तथ्य निकाला है—

बातोंको ग्रहण करो या समझो और अपने लिये उपयोगी बनाओ। व्यापारिक कामों को स्वयं जाकर देखना चाहिये।

नये सम्राटकी प्रेमकहानी

एक बार पनामा में रहते हुये वर्तमान सम्राटने एक सुन्दरी बालाको जिसका नाच उन्हें बहुत रुचिकर प्रतीत हुआ, नृत्यके लिये अपना साथी निर्वाचित किया। इस बातसे अधिक महत्वपूर्ण महिला-अतिथियोंमें हलचल मचगई और राजकुमारके सहकारियों को सूचना दीगई कि राजकुमारने नाच के लिये जिसे अपना साथी चुना है वहतो दवाईखाने की साधारण नौकरानी है। यह समाचार जब राजकुमारने सुना तो उत्तर दिया कि— "यदि वह दवाई खाने में असिस्टेन्ट है तो दवाखाना अत्यन्त सुन्दर और सौभाग्यशाली होगा।

विनोद

एक ग्राहक—"गत सप्ताह जो लडडू मैं ले गया था वह बिलकुल ताजे थे। क्या आज भी उन्हीं लडडुओं की तरह ताजा है?"

दुकानदार—"जी हां यह उन्हीं से बचे हैं। इन्हें मैं ने आपके लिये ही तो रख छोड़ा है।"

—*—

मां (बड़ी लड़की से)—'छोटा बच्चा क्यों रोता है?"

लड़की—"उसने बाग में एक गढ़ा खोदा है। वह उसे उठा कर घर लाना चाहता है।"

रायचन्द्र जैन शास्त्रमाला का नया प्रकाशन

स्याद्वाद मंजरी

बम्बई की रायचन्द्र जैन शास्त्रमाला में अब तक अनेक महत्वपूर्ण जैन ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। यद्यपि इस शास्त्रमाला के अधिकारी श्वेताम्बर आम्नाय के अनुयायी है फिर भी इस माला की एक विशेषता अत्यन्त श्लाघनीय है—वह यह है कि इस शास्त्रमाला में बिना किसी भेद भाव के दोनों आम्नाय के उच्च कोटि के ग्रन्थ प्रकाशित होते हैं। अब तक इस शास्त्रमाला के अधिकारियों का विशेष लक्ष ग्रन्थों की महत्ता की ओर ही था किन्तु यह देख कर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होती है कि अब उन्होंने ग्रन्थों की महत्ता के साथ ही साथ प्रकाशन की महत्ता की ओर भी लक्ष दिया है अभी हाल ही में इस शास्त्रमाला मे 'स्याद्वाद मंजरी' और 'प्रवचनसार' का द्वितीय संस्करण प्रकाशित हुआ है। दोनों ग्रन्थों के संपादन और प्रकाशन ने ग्रन्थों की महत्ता को विकसित करने में सोने में सुहागे का काम कर दिखाया है। आज हम अपने पाठकों को 'स्याद्वाद मंजरी' के सम्पादन का कुछ परिचय देंगे। यथावकाश 'प्रवचनसार' का भी परिचय कराया जायेगा।

प्रकृत सम्पादन के विषय में कुछ लिखने से आधुनिक ग्रन्थ सम्पादन कला और दिगम्बर जैन ग्रन्थों के सम्पादन के सम्बन्ध में दो शब्द लिख देना अनुचित न होगा। हमारी दिगम्बर समाज में अपने प्राचीन साहित्य के अन्वेषण और प्रकाशन की ओर कोई उल्लेख योग्य प्रयत्न आज तक भी नहीं किया गया। प्रतिवर्ष अनेक जिन मन्दिर स्थापित होते हैं किन्तु जिनवाणी का मन्दिर एक भी स्थापित नहीं किया गया। इसका एक कारण दिगम्बर विद्वानों का विद्या व्यसनी न होना भी है। उन्हें पुस्तकावलोकन और तत्वान्वेषण का कोई शौक नहीं होता। प्राचीन इतिहास से वे कोरे होते हैं, 'किसी तात्विक प्रश्न की मीमांसा करने में इतिहास भी कुछ सहायता कर सकता है' यह बात मानने के लिये भी वे तैयार नहीं होंगे। यही कारण है कि उनके द्वारा आज तक जो साहित्य सम्पादित हुआ है वह आधुनिक सम्पादन कला की दृष्टि से अत्यन्त जघन्य श्रेणी में सम्मिलित करने योग्य है। अवश्य ही इसके एक दो अपवाद भी मिलेंगे किन्तु साधारण दिशा ऐसी ही है। 'स्याद्वाद मंजरी' के सुयोग्य सम्पादक पं० जगदीशचन्द्र जी शास्त्री एम० ए० ने इस दिशा में जो सराहनीय प्रयत्न किया है सचमुच वह एक स्पर्द्धा की वस्तु है। पं० जगदीशचन्द्र जी हिन्दू विश्वविद्यालय के सुयोग्य स्नातक और स्याद्वाद विद्यालय काशी के छात्र हैं। एम० ए० पास करने के बाद उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर के शान्ति निकेतन में रहकर एक वर्ष तक जैन साहित्य में अन्वेषण का कार्य भी किया है। यह व्यक्ति कितना विद्याव्यसनी है यह बतलाने के लिये उसके जीवन की एक घटना का उल्लेख कर देना ही काफ़ी है। साइन्स से एफ० ए० पास करने के बाद 'रुड़की इंजिनयरिंग कालिज' की प्रवेश परीक्षा में जगदीशचन्द्र जी सम्मिलित हुए। मुझे उनके

उत्तीर्ण होने की कतई आशा न थी क्योंकि वे अंग्रेजी बिलकुल न जानते थे। किन्तु परिश्रम से क्या नहीं हो सकता? वे प्रवेश-परीक्षा में सफल हो गये। किन्तु उनके एक पत्र से यह जान कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि वे 'ओवरसियर' न बनकर हिन्दू-विश्वविद्यालय में ही बी० ए० में अध्ययन करेंगे। उत्तरप्रान्त की कामधेनुभूता जिस ओवरसियरी में प्रवेश पाने के लिये अनेक ग्रेजुएट वर्षों प्रयत्न करते हैं उसे प्राप्त करके भी इस व्यक्ति ने विद्योपार्जन की धुन में लतिया दिया। और चार वर्ष तक कठिन परिश्रम करके विद्या देवी की साधना पूर्ण की। हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री आत्रेय जी ने अपने प्राक्कथन में अपने सुयोग्य शिष्य के लिये जो शब्द लिखे हैं वे उपयुक्त ही हैं।

भूमिका—प्राक्कथन के बाद सम्पादक की भूमिका प्रारम्भ होती है। भूमिका के प्रारम्भ में मूलग्रंथकार आचार्य हेमचन्द्र और टीकाकार मल्लिषेण का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इसके बाद 'स्याद्वाद मंजरी के विहंगावलोकन' में प्रत्येक श्लोक के प्रतिपाद्य विषय का बड़ी सरलता से दिग्दर्शन कराया गया है इसके बाद 'जैनदर्शन में स्याद्वाद का स्थान' शीर्षक से एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण निबन्ध है, इसमें जैन जैनेतर तथा पाश्चात्य दार्शनिकों के मन्तव्यों के आधार 'स्याद्वाद का मौलिकरूप' 'उसका गूढ़ रहस्य' 'स्याद्वाद पर ऐतिहासिक दृष्टि' स्याद्वाद का जैनेतर साहित्य में स्थान' आदि अनेक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। प्रो० राधाकृष्णा ने अपनी 'इन्डियन फिलासफी' में 'स्याद्वाद सिद्धान्त पर आलोचन करते हुये एक विचारणीय प्रश्न उपस्थित किया है कि, 'स्याद्वाद हमें अर्ध सत्यों के पास ले जाकर पटक देता है और इन्हीं अर्धसत्यों को पूर्ण सत्य मान लेने की हमें प्रेरणा करता है। परन्तु केवल निश्चित अनिश्चित अर्धसत्यों को मिलाकर एक साथ रख देने से वह पूर्ण सत्य नहीं कहा जा सकता। तथा किसी न किसी रूप में पूर्ण सत्य को माने बिना कोई भी दर्शन पूर्ण कहे जाने का अधिकारी नहीं है। इस शंका का समाधान लेखक ने बड़ी ही बुद्धिमानी से किया है इसे उनके ही शब्दों में सुनिये—'स्याद्वाद पदार्थों के जानने की एक दृष्टि मात्र है, स्याद्वाद स्वयं अन्तिम सत्य नहीं है। यह हमें अन्तिम सत्य तक पहुचाने के लिये केवल मार्ग दर्शक का काम करता है। × × जैनदर्शनकारों ने स्याद्वाद को व्यवहार सत्य माना है। व्यवहार सत्य के आगे भी जैन सिद्धान्त में निरपेक्ष सत्य माना गया है जिसे जैन पारिभाषिक शब्दों में केवल ज्ञान के नाम से कहा जाता है। स्याद्वाद में सम्पूर्ण पदार्थों का क्रम २ से ज्ञान होता है परन्तु केवल ज्ञान सत्य प्राप्ति की वह उत्कृष्ट दशा है जिसमें सम्पूर्ण पदार्थ और उन पदार्थों की अनन्त पर्यायों का एक साथ ज्ञान होता है। *

भूमिका के सम्बन्ध में हमें केवल एक दो बात कहनी है। स्याद्वाद विषयक निबन्ध के प्रारम्भ में अमृतचन्द्र सूरि का जो श्लोक उद्धृत किया गया है उसमें 'मन्थानमिव गोपी' पाठ दिया है, जो अशुद्ध है, उसके स्थानमें 'मन्थाननेत्रमिव गोपी' होना चाहिये। इसी तरह पृष्ठ २५ में 'इन्द्रियजन्य पदार्थ' छप गया है। आजकल 'सर्वदर्शन समभाव' की चर्चा बहुत

* स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने।
भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतमं भवेत्॥१०५॥
'आप्तमीमांसा'

सुनी जाती है और स्याद्वाद का यही रहस्य भी बतलाया जाता है जो एक दृष्टि से उचित ही है। किन्तु जब हम इस समभाव का विकसित रूप— 'वास्तव में सत्य एक है, केवल सत्य की प्राप्ति के मार्ग जुदा जुदा है'—देखते हैं तो हमारी आंख अचकचा कर रह जाती हैं और अन्तरात्मा से प्रश्न करती हैं कि वे जुदे २ मार्ग कौन से है और कैसे है? किन्तु हमें इस प्रश्न का उत्तर आज तक नहीं मिल सका। यदि समभाव के इस विकसित रूप को अंकित करते समय लेखक 'क्या और क्यों' का भी दिग्दर्शन करा दिया करें तो बहुत से 'नाम मुल्लाओं' के हाथों से सत्य के संहार का प्रसंग उपस्थित न हो सकेगा।

ऐतिहासिक दृष्टि से स्याद्वाद का विवेचन करते हुये लेखक ने जैनाचार्यों के समय के सम्बन्ध में व्यापक दृष्टि से काम नहीं लिया जान पड़ता। अन्यथा उमास्वाति को कुन्दकुन्द का पूर्ववर्ती बतलाने में वे निःसंकोच न हो जाते। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पं० जुगल किशोर जी मुख्तार ने अपने 'समन्तभद्र' नामक निबन्ध में समन्तभद्र का समय दूसरी शताब्दी निर्धारित किया है और डा० विद्याभूषण तथा डा० पाठक के मतों को निराधार सिद्ध किया है, किन्तु लेखक ने उन्हें और उनके समसामयिक सिद्धसेन दिवाकर को चौथी शताब्दी का विद्वान लिखा है। इसी तरह प्रभाचन्द्र को दसवीं ग्यारहवीं शताब्दी का विद्वान बतलाना भी भ्रम ही है जिनसेन (द्वितीय) ने अपने हरिवंश पुराण में (श० सं० ७०५) प्रथम जिनसेन का उल्लेख किया है। और प्रथम जिनसेन ने अपने महापुराण के प्रारम्भ में प्रभाचन्द्र का स्मरण किया है। अतः प्रभाचन्द्र ईसा की आठवीं शताब्दी के पूर्वार्ध प्रारम्भ से बाद में नहीं लाये जा सकते।

मूल ग्रन्थ और उसका हिन्दी अनुवाद

भूमिका के बाद में मूलग्रन्थ और उसका हिन्दी अनुवाद प्रारम्भ होता है। आचार्य हेमचन्द्र की अन्ययोगव्यवच्छेदद्वात्रिंशिका का टीका का नाम स्याद्वादमंजरी है, इसके कर्ता है आचार्य मल्लिषेण। मल्लिषेण अपनी इस कृति में कितने अधिक सफल हुये है यह हम इस लेखनी के द्वारा बतलाने में असमर्थ है। उनका रचनासौन्दर्य देखने और अनुभव करने की वस्तु है, उनकी वाक्य रचना बहुत सरल और पदविन्यास बड़ा ललित है। यथार्थ में लेखक के ही शब्दों में स्याद्वादमंजरी को 'विश्राम करने का सर्वांग सुन्दर आधुनिक पार्क' कहा जा सकता है। शास्त्रमाला के अधिकारियों ने इस बार इस पार्क को एक आधुनिक कला विशारद के हाथों में सौंप कर अपनी सुरुचि का परिचय दिया है और नवीन माली ने भी 'पार्क' को सर्वांग सुन्दर बनाने में कुछ उठा नहीं रखा है। इस विस्तृत 'पार्क' के मध्य भाग की सैर मैं अच्छी तरह तो नहीं कर सका, फिर भी इन आंखों ने जो कुछ देखा उससे मुझे सन्तोष हुआ। अनुवाद की भाषा बहुत अच्छी है, पढ़ने वाला लेखक का अभिप्राय सरलता से समझ सकता है, कहीं कहीं भावार्थ में विशेष खुलासा भी कर दिया गया है। मंजरी के अन्त में हेमचन्द्र की द्वितीय रचना अयोग व्यवच्छेद द्वात्रिंशिका भी हिन्दी अनुवाद सहित जोड़ दी गई है। तमाम पुस्तक में बड़े महत्त्व के टिप्पण भी दिये गये हैं।

परिशिष्ट—पुस्तक में जो सब से महत्वपूर्ण वस्तु कही जा सकती है वह है उसके परिशिष्ट, इनकी संख्या ८ है— जैन, बौद्ध, न्याय वैशेषिक, सांख्य योग मीमांसक, वेदान्त चार्वाक और विविध। प्रत्येक परिशिष्ट में तत् तत् दर्शन के मन्तव्योंको बड़ी अच्छी तरह दर्शाया गया है। जैन परिशिष्ट में सृष्टि तथा तीर्थंकर विषयक कुछ बातें बतलाते हुये ब्राह्मण और बौद्ध ग्रन्थों की मान्यताओं का भी उल्लेख कर दिया गया है, इससे प्रतिपाद्य विषय बड़ा रोचक हो गया है और तुलनात्मक अध्ययन के प्रेमियों को भी कुछ सहारा मिल गया है। पृष्ठ ३६४ में लिखा है— "यदि द्रव्य में गुणांश नहीं माने जावें तो द्रव्य में छोटा पन बड़ा पन आदि विभाग नहीं किया जा सकता'। द्रव्य में छोटे पन और बड़ेपन का नियामक देशांश है, गुणांश नहीं, अतः उक्त वाक्य ठीक नहीं है। बौद्ध परिशिष्ट में बौद्धों के सौत्रान्तिक व भाषिक, योगाचार और माध्यमिक सम्प्रदायों का संक्षिप्त परिचय जानने योग्य है। विविध परिशिष्ट में भारत के लुप्त आजीवक सम्प्रदाय का कुछ कुछ परिचय है। मैं प्रत्येक जैन विद्यालय के अधिकारियों से अनुरोध करूंगा कि वे इस पुस्तक की कम से कम एक २ प्रति अवश्य खरीदें और शास्त्र के अभ्यासी विद्यार्थियों को उसके परिशिष्ट पढ़ने के लिये मजबूर करें। छात्रों की प्रतिभा को पाठ्यक्रम के गिने चुने शास्त्रों के अध्ययन अध्यापन की चहार दीवारी के बाहिर निकाल कर विकसित होने दीजिये। अन्यथा शास्त्री और तीर्थ हो जाने पर भी उन्हें अपनी मूल मान्यताओं का भी पता आज की तरह कभी न कभी लग सकेगा, दूसरों की तो बात ही निराली है।

परिशिष्टों के अन्त में अनेक अनुक्रमणिकाएं हैं जो अन्वेषकों के लिये बड़े काम की हैं। अवतरण सूची यदि श्लोकों के क्रम से न होकर अकारादि क्रम से होती तो उसका उद्देश सफल होता, वर्तमान क्रम विशेष लाभदायक नहीं है—एक अवतरण खोजने के लिये प्रारम्भ से पारायण करना पड़ता है। अस्तु

श्री जगदीशचन्द्र जी अपने प्रथम प्रयास में ही बहुत अधिक सफल हुये हैं और उसके लिये वे बधाई के पात्र हैं। साथ ही शास्त्रमाला के व्यवस्थापक भी कम बधाई के पात्र नहीं हैं, जिनकी गुणग्राहकता ने इतने सुन्दर प्रकाशन को अपना कर बुद्धिकौशल दिखाने का सुयोग प्रदान किया।

दिगम्बर विद्वानों और विद्यार्थियों का ध्यान मैं इस पुस्तक की ओर आकर्षित करता हूं। पुस्तक का मूल्य ४॥) है।

—कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस

(२० वें पृष्ठ का शेष)

बल्लीलका आसरा लेकर आपने अपने स्वार्थकी सिद्धि समझी यह बालवत क्रीडा के सिवा और क्या है?

एक मनुष्य कहता है कि मैं वैश्य हूं मैंने पहले बी० ए० पास किया तथा फिर शास्त्री, अब डाक्टरी पढ़ रहा हूं फिर मैं अपना व्यापार करूंगा। आदि वाक्यों से मूर्खसे मूर्ख भी यह समझ लेगा कि यह मनुष्य अपना जीवन सुना रहा है। तथा च एक मनुष्य कहता है 'मैं सत्य कहता हूँ', 'मैं स्वयं कहता हूं, इन वाक्यों से आर्य पुरुषों के सिवा अन्य तो कोई जीवन चरित्र नहीं समझ सकता। फिर इन शब्दों का और उन शब्दों का सामञ्जस्य ही क्या है जो इन का उदाहरण दिया।

समाज के हितैषियों से

"एक समय वह था जब जैनाचार्यों के हुङ्कार से दशों दिशाएँ गुञ्जार रही थीं"। महामहोपाध्याय पं० राममिश्र जी शास्त्री · इसमें ऐतिहासिक मान्यता है। जैन इतिहास ऐसे महापुरुषों के नाम से खाली नहीं है जिन्हों ने भारत में अनेक बार दिग्विजय की हो और अजैनों को जैनधर्म में दीक्षित करना अपना नित्य कर्म समझा हो। भारत में जब तक ऐसे महापुरुषों का सद्भाव रहा जैनधर्म फला फूला और उसके अनुयायी भी लाखों के स्थान पर करोड़ों रहे। आज हममें ऐसे समर्थ महापुरुषों का अभाव है जो जैनधर्म प्रचार को ही अपने जीवन का ध्येय समझते हों। इसकी सफलतामें ही जिन्हों ने अपने जीवनकी सफलता समझी हो अतः जैनधर्म प्रचार का कार्य भी प्रतिदिन ह्रास को प्राप्त हो रहा है। इसका यह परिणाम हुआ है जो आज हमारे लाखों बन्धु जैन इतरों के सहवास से जैनधर्म को प्रायः भुला चुके हैं और कितने ही पवित्र जैनधर्म की शरण को छोड़ कर दूसरे धर्मों की शरण में जा चुके हैं। यदि हमारे धर्मप्रचार की यही दशा रही तो जैन समाज का क्या भविष्य होगा यह आप स्वयं विचार सकते हैं। हमारा कर्तव्य है कि अब हम चेतें और धर्मप्रचार के कार्य को जारी करें। हममें से कुछ ऐसे युवक निकलें जो यदि प्राचीन आचार्योंके समान नहीं बन सकते तो उनके अनुयायी तो अवश्य बनें। जो स्वयं सेवा नहीं कर सकते वे मन से या धन से जिस प्रकार भी संभव हो इस पवित्र कार्य में सहयोग प्रदान करें। सम्पूर्ण जैन समाज की तो बात ही क्या है यदि इस प्रकार इस का थोड़ा सा भाग भी तैयार हो जाय तो फिर हमारी समाजमें प्राचीन दृश्य दृष्टिगोचर होने लगेंगे। आज भी समय है कि अब हम चेतें और जैनधर्म प्रचार के कार्य को विशालता के साथ उठावें। यदि हम प्रयत्न करेंगे तो अब भी अपने भूले हुये लाखों बन्धुओं को गले लगा सकते हैं। यदि हम पुरुषार्थ करें तो यह संभव नहीं लाखों बंगाली जैन सराग एवं मध्य प्रान्तीय जैन कलाल पुन पूर्णरूप से अपने पवित्र धर्म की शरण में न आ सकें। यह कार्य केवल बातों से ही न हो सकेगा इसके लिये हमको सब प्रकार का त्याग करना होगा। यदि हम चाहते हैं कि प्रचार सम्बन्धी कोई निश्चित विधायक कार्यक्रम तय्यार किया जाय तो हमको चाहिये कि हम अधिक से अधिक संख्या में किसी योग्य स्थान में एकत्रित होकर इसके सम्बन्ध में विचार करें। अभी ता० ८-९-१० फरवरी को श्री अतिशय क्षेत्र देवगढ़ जी पर भा० व० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ का वार्षिक अधिवेशन होने वाला है। उस समय संघ ने प्रचार सम्बन्धी अपने विधायक कार्यक्रम का निर्णय करना है। अतः यह समय बहुत उपयुक्त है। और यदि इस अवसर पर हम अधिक से

अधिक संख्या में उपस्थित होकर ऐसे प्रश्नों के हल करने का प्रयत्न करेंगे तो यह अत्युत्तम होगा। अतः समाज के सभी हितैषियों से मेरी प्रार्थना है कि वे देवगढ़ पधार कर प्रचार सम्बन्धी विधायक कार्यक्रम के निर्माण में सहयोग करें और उसको कार्यान्वित करने के लिये यथाशक्ति सहयोग प्रदान करें। मुझे पूर्ण आशा तथा विश्वास है कि समाज के सब ही हितैषी चाहे वे किसी भी दल विशेष से सम्बन्ध रखते हों मेरे इस निवेदन पर अवश्य ध्यान देंगे और देवगढ़ पधार कर प्रचार सम्बन्धी कार्यक्रम के निर्णय एवं उसके कार्यान्वित करने में हर प्रकार का सहयोगग प्रदान करेंगे।

प्रार्थी—
राजेन्द्रकुमार जैन

संघ का मंत्रार्य

शास्त्रार्थ संघ की स्थापना मार्च सन् १६३० में हुई थी। इसको करीब छह वर्ष का समय हुआ। उस समय इसकी स्थापना अस्थाई रूपसे केवल ३ माह के लिये ही हुई थी किन्तु इसही तीन माह के समय में इसने स्थिर रूप धारण कर लिये। इसके करीब दो वर्ष बाद ही यह दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ से 'भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ' हो गया। यह इसका बाल्यकाल है फिर भी इसने अपने इस बाल्यकाल में समाज की जो सेवा की है वह निरादर के योग्य नहीं है। ऐसा नहीं कि इसने अपने इस बाल्यकाल को भारभूत हो कर व्यतीत किया हो और समाज के हितैषियों का ध्यान इसकी तरफ आकर्षित न हुआ हो या उन्होंने इसकी हृदय से मंगल कामना न की हो। इसके कार्य में प्रतिवर्ष प्रगति होती रही है किन्तु फिर भी इसके कार्य को निम्नलिखित विभागों में विभाजित किया जा सकता है।

१—अनुसन्धान विभाग
२—पुस्तकालय विभाग
३—उपदेशक विभाग
४—शास्त्रार्थ विभाग
५—प्रकाशन विभाग
६—पत्र विभाग
७—और अन्य आवश्यक कार्य

१—संघ के इस विभाग द्वारा अनेक आवश्यक विषयों के अनुसन्धान किए गये है। वैदिक साहित्य की गवेषणा में इस विभाग ने उल्लेख योग्य कार्य किया है। वैदिक साहित्य के आधार से अनेक जैन मान्यताओं का सिद्ध होना इसही विभाग के प्रयत्न का फल है।

२—संघ ने अपने जन्मकाल से ही इस विभाग की तरफ विशेष ध्यान दिया है। इस का ही यह फल है कि संघ का पुस्तकालय अभी यदि पुस्तकालय कहलाने का अधिकारी नहीं है तो भी यह उस मार्ग का पथिक तो अवश्य है। इसमें अभी तक केवल १५०० पुस्तकों का ही संग्रह हो पाया है किन्तु मौलिकता की दृष्टि से यही महत्व शाली हैं। चारों वेदों पर संस्कृत एवं हिन्दी में जितने भी भाष्य प्रकाशित हुए है वे सब इसमें मौजूद है। कई ऐसी पुस्तकें भी हैं जिनका मूल्य दो २ सौ या इससे भी अधिक है। इसमें षट् दर्शन सम्बन्धी, श्वेताम्बरीय एवं दिगम्बरीय साहित्य और पुरातत्व की रिपोर्टें आदि का भी संग्रह है। मोहन जो दाड़ो की तीनों जिल्दें भी इसमें मगाई जा चुकी हैं। इनका मूल्य

भी १५०) के लगभग है।

३—संघ ने अपने इस विभाग द्वारा अपने इस अल्प काल में भारत के सब ही प्रान्तों के सैकड़ों स्थानों पर प्रचार कार्य किया है।

४—जब से संघ की स्थापना हुई है तब से जितने भी शास्त्रार्थ हुए हैं वे सब संघ के उत्तरदायित्व पर ही हुए हैं। संघ के इस विभाग से अब तक निम्न लिखित स्थानों पर शास्त्रार्थ हुए हैं।

१— अम्बाला
२— केकड़ी
३— सम्भलगढ़
४— पानीपत
५— खतौली
६— मेरठ
७— झांसी
८— ज्वालापुर
९— देहली
१०— मुलतान
११— गाजियाबाद

इन मौखिक शास्त्रार्थोंके अतिरिक्त इस ही समय में निम्नलिखित शास्त्रार्थ भी हुए हैं।

१— आर्यसमाज अजमेर
२— ,, पानीपत

५—किसी भी सम्प्रदाय ने जैनसिद्धान्तों के प्रतिकूल जो भी पुस्तक प्रकाशित की है संघ के इस विभाग ने उसका उत्तर प्रकाशित किया है। इसके अतिरिक्त संघ के इस विभाग ने जैनधर्म प्रचारार्थ अनेक पुस्तकें एवं जैन तत्वज्ञान के भिन्न २ विषयों पर करीब पचास हजार पोस्टर्स प्रकाशित किये हैं। ये पोस्टर्स भारत में भिन्न २ अवसरों पर बिना मूल्य वितीर्ण किये हैं। संघ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें लिखित हैं—जैनधर्म परिचय, जैनमत नास्तिक मत नहीं है, क्या आर्यसमाजी वेदानुयायी हैं, वेद मीमांसा, अहिंसा, श्री ऋषभदेव जी की उत्पत्ति असंभव नहीं है, वेद समालोचना, आर्यसमाजकी गप्पाष्टक, सत्यार्थ दर्पण, आर्यसमाजके १०० प्रश्नों का उत्तर, आर्य स० की डबल गप्पाष्टक, क्या वेद भगवद्वाणी है, दिगम्बरत्व और दिगम्बर मुनि, आर्यसमाजके सौ प्रश्नों का उत्तर, आर्यभ्रमोन्मूलन, जैनधर्म सन्देश, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक का व्याख्यान, शास्त्रार्थ पानीपत भाग १-२ और स्वामी दयानन्द और वेद। इनमें से कई पुस्तकें तीन २ सौ से अधिक पेज की हैं। सब ही का मूल्य लागत मात्र रक्खा गया है। कई पुस्तकों के अनेक २ एडीशन हो चुके हैं। यदि इन सब ही के प्रकाशन की संख्या की जाय तो वह चालीस हजार के करीब होती है।

६—संघ के उद्देश के प्रचार की दृष्टि से एवं जैनजगत के खंडन के लिये संघ के इस विभाग द्वारा "जैनदर्शन" नामक एक पाक्षिक पत्र चालू किया गया है। इसको अभी दो ही वर्ष का समय हुआ है कि इतने में इस ने जो ख्याति प्राप्त की है वह पत्र संसार से छिपी हुई नहीं है। दर्शन ने अपने पहिले अंक से ही जैनजगत के खडन में लेखमाला प्रकाशित की है। तथा वह अब तक लगातार चल रही है। इससे अनेक बन्धुओं का स्थितिकरण हुआ है। इस प्रकार संघ के इस विभाग ने भी समाज की यथेष्ट सेवा की है।

उपरोक्त विभागीय कार्यों के अतिरिक्त संघ ने निम्नलिखित अन्य कार्य भी किये हैं—

अन्य आवश्यककार्य

१—पंजाब युनिवर्सिटीसे इतिहास संशोधन

२—मुनि उपसर्ग निवारणार्थ प्रयत्न

३—पंडित सम्मेलन

४—कुड़ची अत्याचारकांड का ठीक कराना

५—मनुष्य गणना का सुधार

६—जैन युवक मंडलों की स्थापनायें

७—पंजाब सरकारी इतिहास समिति में जैन प्रतिनिधित्व

८—कॉमर्स कालेज में जैनकोर्स भर्ती कराना

९—भिवानी मन्दिर कांड

१०—खेकड़ी कांड

११—शास्त्र भंडारों की सूची (कार्य चालू है)

१२—मैजिक लेन्टर्न द्वारा जैन तत्वज्ञान पर भाषणों की आयोजना

संघ के अल्प काल के इन कार्यों को यदि विशदता के साथ लिखा जाय तो सैंकड़ों पेज भरे जा सकते है। मैं ने तो यहां इनका केवल संकेत मात्र किया है जिससे अधिक से अधिक जैन समाज संघ के कार्यों के सम्बन्ध में परिचय प्राप्त कर सके। संघ के इन कार्यों में मैं ने उस घटना का उल्लेख नहीं किया है जो कि न केवल संघ के किन्तु जैन समाज के बीसवीं शताब्दी के इतिहास में सुवर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। यह है श्री स्वामी कर्मानन्द जी का जैनधर्म में दीक्षित होना। यह कार्य कितना महत्वशाली है इसका निर्णय तो मैं अपने विचार शील पाठकों पर ही छोड़ता हूं। इस प्रकार इन थोड़ी सी पंक्तियां द्वारा मैंने संघ की सेवाओं को आपके समक्ष उपस्थित किया है।

अब ता० ८-९-१० फरवरी को श्री अतिशयक्षेत्र देवगढ़ जी पर संघ का वार्षिक अधिवेशन होने वाला है। इसमें संघ के विधायक भावि कार्यक्रम का निर्णय किया जायगा। मुझे आशा तथा पूर्ण विश्वास है कि समाज संघ के भावि कार्यक्रम की पूर्ति में तन, मन और धन से उसका सहयोग करेगा।

सेवक—राजेन्द्रकुमार जैन
प्रधान मन्त्री
भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ
अम्बाला।

संघ के अधिवेशन में क्या होगा ?

भारत वर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ का वार्षिक उत्सव ८-९-१० फरवरी को श्री अतिशयक्षेत्र देवगढ़ जी पर होने वाला है। इस समय अब तक निम्नलिखित बातों की आयोजना की जा सकती है।

१—इस युगमें प्रायः सभी जन समुदाय सिनेमा संसार से परिचित है। ऐसे ही चित्र जैसे कि सिनेमा में दिखलाये जाते हैं, मैजिक लेन्टर्न द्वारा भी दिखलाये जाते है। संघ कई वर्ष से इस बातके प्रयत्न में था कि वह मैजिक लेन्टर्न द्वारा जैनसिद्धांत के भिन्न २ विषयों के भाषणों का प्रदर्शन करे। पाठकों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि अब यह तय्यार हो गई है। इसके द्वारा किसी भी चीज का करीब तीन गज का चित्र बिलकुल सिनेमा के चित्र की तरह स्क्रीन पर दिखाया जाता है। अभी तक हम मूर्तिपूजा, जैनधर्म की प्राचीनता और अहिंसा सम्बन्धी भाषणों का इस प्रकार प्रबन्ध कर चुके हैं। जो बात वचन द्वारा बतलाई जाती है इसहीका चित्र

देश विदेश समाचार

—थार्सी टाकली (अकोला) में अपना घर खोदते हुए एक मुसलमान को पाषाण की २१ जैन प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं जिनमें कुछ खंडित और कुछ अखंडित हैं।

—निफाड़ (नासिक) के एग्रीकल्चर फार्म में नम्बर ८०८ नामक एक गेहूं का आविष्कार किया गया है जो दूसरे गेहूं से १५ दिन पहले तयार हो जाता है, चमकीला होता है और शर्दी से नष्ट नहीं होता।

—जापान में कांग्रेस की सुवर्ण जयन्ती बहुत धूमधाम से मनाई गई।

—खोजा मुसलमानों के गुरु सर आगाखां १९ जनवरी को ६५०० तोले सोने के साथ तोले गये।

—मास्को की एक स्त्री पुरुष के वेष में रहकर ६ नवयुवती स्त्रियों के साथ में विवाह करके उनका धन हजम कर चुकी थी इस धोखेबाजी में वह अब पकड़ी गई है।

—जर्मनी जेकोस्लेविया की सीमा पर चूहे पाल रहा है चूहों की संख्या दिनोंदिन बढ़ाई जा रही है। लड़ाई छिड़ने पर वह चूहों के शरीर में प्लेग के कीटाणु फैला कर शत्रु सेना में छोड़ देगा जिससे शत्रु सेना में प्लेग फैल जायगी। छिः

—२० जनवरी को अमेरिका में बहुत भारी तूफान आया जिससे १७ मौतें हुईं ५० आदमी घायल हुये। एक बच्चा आधे मील तक उड़ता गया और अन्तमें एक वृक्षसे टकरा कर मर गया।

—सेण्डरिंघम (लन्दन) के राज महलमें सम्राट पंचम जार्ज २० जनवरी की रात को ११ बजकर ५५ मिनट पर बिना किसी व्याकुलता के शान्तिपूर्वक परलोक यात्रा कर गये। उस समय आप के पास महारानी मेरी तथा प्रिंस आफ वेल्स मौजूद थे।

—रोडेशिया की बेम्बा जाति में जब किसी पुरुष का विवाह होता है तो उस पुरुष को कुछ दिन अपनी सास के साथ पति पत्नी रूप में रहना पड़ता है।

—जैकोस्लेविया की पुलिस ने अपने यहां एक स्त्री को गिरफ्तार किया है उसकी फोटो उतारी जाती है तो प्लेट पर उसका अक्स ही नहीं आता।

—लन्दन में एक बूढ़े के पास एक बन्दर है जो विधि पूर्वक बोतल खोलकर सोडावाटर पीता है सिगरेट पीता है और अपने हस्ताक्षर करता है।

—वेनेज्वेला का ताना शाह गोमेज अभी ७६ वर्ष की आयु में मरा है उसके रखेल स्त्रियोंसे उत्पन्न हुए ११४ लड़के लड़कियाँ है।

—अमेरिकन लेडी मिस मेयो ने भारतवर्ष को बदनाम करने के लिये 'दी फेस आफ मदर इण्डिया' नामक पुस्तक प्रकाशित की है। भारत सरकार ने भारत वर्ष में उस पुस्तक का आना रोक दिया है।

—नवीन सम्राट अष्टम एडवर्ड का राज्याभिषेक ब्रिटिश साम्राज्य के सभी देशों में क्रमशः किया जावेगा।

कृपाण सत्याग्रह में सिक्ख पुरुष तथा स्त्रियां ३१ जनवरी तक लगभग २ हजार गिरफ्तार हो चुके हैं।

देश विदेश समाचार

—बार्सी टाकली (अकोला) में अपना घर खोदते हुए एक मुसलमान को पाषाण की २१ जैन प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं जिनमें कुछ खंडित और कुछ अखंडित हैं।

—निफाड़ (नासिक) के एग्रीकल्चर फार्म में नम्बर ८०८ नामक एक गेहूं का आविष्कार किया गया है जो दूसरे गेहूं से १५ दिन पहले तयार हो जाता है, चमकीला होता है और सर्दी से नष्ट नहीं होता।

—जापान में कांग्रेस की सुवर्ण जयन्ती बहुत धूमधाम से मनाई गई।

—खोजा मुसल्मानों के गुरु सर आगाखां १६ जनवरी को ६५00 तोले सोने के साथ तौले गये।

—मास्को की एक स्त्री पुरुष के वेष में रहकर ६ नवयुवती स्त्रियों के साथ में विवाह करके उनका धन हजम कर चुकी थी इस धोखेबाजी में वह अब पकड़ी गई है।

—जर्मनी जेकोस्लेविया की सीमा पर चूहे पाल रहा है चूहों की संख्या दिनोंदिन बढ़ाई जा रही है। लड़ाई छिड़ने पर वह चूहों के शरीर में प्लेग के कीटाणु फैला कर शत्रु सेना में छोड़ देगा जिससे शत्रु सेना में प्लेग फैल जायगी। छिः

—२० जनवरी को अमेरिका में बहुत भारी तूफान आया जिससे १७ मौतें हुई ४० आदमी घायल हुये। एक बच्चा आधे मील तक उड़ता गया और अन्तमें एक वृक्षसे टकरा कर मर गया।

—सेण्डरिंघम (लन्दन) के राज महलमें सम्राट पंचम जार्ज २० जनवरी की रात को ११ बजकर ५५ मिनट पर बिना किसी व्याकुलता के शान्तिपूर्वक परलोक यात्रा कर गये। उस समय आप के पास महारानी मेरी तथा प्रिंस आफ वेल्स मौजूद थे।

—रोडेशिया की बेम्बा जाति में जब किसी पुरुष का विवाह होता है तो उस पुरुष को कुछ दिन अपनी सास के साथ पति पत्नी रूप में रहना पड़ता है।

—जेकोस्लेविया की पुलिस ने अपने यहां एक कल्ली को गिरफ्तार किया है उसकी फोटो उतारी जाती है तो प्लेट पर उसका अक्स ही नहीं आता।

—लन्दन में एक बूढ़े के पास एक बन्दर है जो विधि पूर्वक बोतल खोलकर सोडावाटर पीता है सिगरेट पीता है और अपने हस्ताक्षर करता है।

—वेनेज्वेला का ताना शाह गोमेज अभी ७६ वर्ष की आयु में मरा है उसके रखेल स्त्रियोंसे उत्पन्न हुए ११४ लड़के लड़कियाँ हैं।

—अमेरिकन लेडी मिस मेयो ने भारतवर्ष को बदनाम करने के लिये 'दी फ़ेस आफ़ मदर इण्डिया' नामक पुस्तक प्रकाशित की है। भारत सरकार ने भारत वर्ष में उस पुस्तक का आना रोक दिया है।

—नवीन सम्राट अष्टम एडवर्ड का राज्याभिषेक ब्रिटिश साम्राज्य के सभी देशों में क्रमशः किया जावेगा।

कृपाण सत्याग्रह में सिक्ख पुरुष तथा स्त्रियाँ ३१ जनवरी तक लगभग २ हजार गिरफ्तार हो चुके हैं।

REGD. No. L
3459.

—कृपाण पर लगाई गई रोक आज्ञा अब आगे नहीं बढ़ाई जायगी। यह घोषणा लाहौरके डी० सी० मि० डेस प्रतापने करदी है तदनुसार कृपाण सत्याग्रह अब समाप्त होने वाला है।

—सुभाषचन्द्र बोस भारतमें आरहे हैं वे लखनऊ कांग्रेसमें शामिल होंगे।

—मिश्रमें इस समय राजनैतिक गड़बड़ होरही है इस कारण फौजोंको हर समय तय्यार रहने का आदेश दिया गया है।

—२८ जनवरी को सम्राट पंचम जार्जका शव दफनाया गया और उसदिन भारतवर्ष में सरकारी दफ्तर, स्कूल आदि बन्द रहे।

—पीर जमीअत अली शाह अपने शहीदगंज आन्दोलन में सफलता न पाकर आन्दोलन छोड़ कर हज करने चल दिये हैं।

—शहीदगंज गुरुद्वारा में नमाज पढ़ने के लिये सत्याग्रह करनेका निश्चय लाहौरके मुसलमानोंने किया है। प्रतिदिन वे पांच २ मुसलमानोंका जत्था भेजा करेंगे। २४ जनवरी को ५ मुसलमान इसी सत्याग्रह में गिरफ्तार हुये हैं।

—पार्लियामेन्टके भूतपूर्व भारतीय मेम्बर श्रीमान सकलत वाला का हृदयगति रुक जानेसे लन्दनमें स्वर्गवास होगया है।

—लखनऊ क्रिश्चियन कालेज के प्रोफेसर मि० इलाहीबख्श वायोलिनपर में सम्राट जार्जकी मृत्युका समाचार पढ़ते ही कुर्सी पर बैठे २ परलोक यात्रा कर गये।

—बहावलपुर रियासत में हिन्दुओं पर बहुत सख्ती की जारही है। हिन्दुओं पर १४४ दफा लगा कर ५ मनुष्यों को एकत्र होने की मनाही कर दी है। अनेक प्रतिष्ठित हिन्दु नेताओं को नजरबन्द किया कुछ को जेल भेज दिया है। दो नेताओं ने जेल के दुर्व्यवहार से भूख हड़ताल कर दी है। हिन्दू महासभा ने हिन्दुओं के नाम विज्ञप्ति निकाली है कि समस्त प्रान्तों के हिन्दुओं को इस विषय में विरोध प्रगट करना चाहिये।

—कांग्रेसका आगामी सालाना अधिवेशन मुलतानमें करने के लिये मुलतान कांग्रेस कमेटी ने निमंत्रण भेजा है।

—कांग्रेस का अधिवेशन अप्रेल मासमें ईस्टरकी छुट्टियोंमें होगा उस वक्त रेलवे किरायेमें भी रियायत हुआ करती है।

—कांग्रेसका सभापतित्व पं० जवाहरलाल नेहरू ने स्वीकार कर लिया है वे फरवरी तक लन्दन रहेंगे। अनेक तामिल युवती लड़कियां जाति बन्धन के कारण कुमारी बैठी हुई हैं।

—अबीसीनिया के बादशाहने इटलीको हटानेके लिये घोषणा की है कि जो पुरुष बन्दूक पकड़ सकता है वह सेनामें भर्ती होजाये।

—ब्रिटिश साम्राज्यका शासनसूत्र प्रिंस आफ वेल्स ने सम्हाल लिया इस की घोषणा बुधवार को विज्ञ होगई राज्याभिषेक पीछे होगा। अब आप "सम्राट अष्टम एडवर्ड" के नाम से विख्यात होंगे।

—सम्राट पंचम जार्जका शव २८ जनवरीको सेण्टजार्ज के गिर्जाघर में दफनाया गया। सम्राट पंचम जार्ज का वैयक्तिक व्यवहार बहुत अच्छा था उनकी मृत्यु पर महात्मा गांधी, भूलाभाई देसाई आदि नेताओं ने शोक प्रकाशित किया है।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

REGD. No. L
3459.

—कृपाण पर लगाई गई रोक आज्ञा अब आगे नहीं बढ़ाई जायगी। यह घोषणा लाहौरके डी० सी० मि० पेस मतायने करदी है तदनुसार कृपाण सत्याग्रह अब समाप्त होने वाला है।

—सुभाषचन्द्र बोस भारतमें आरहे हैं वे लखनऊ कांग्रेसमें शामिल होंगे।

—मिश्रमें इस समय राजनैतिक गड़बड़ होरही है इस कारण फौजोंको हर समय तय्यार रहने का आदेश दिया गया है।

—२८ जनवरी को सम्राट पंचम जार्जका शव दफनाया गया और उसदिन भारतवर्ष में सरकारी दफ्तर, स्कूल आदि बन्द रहे।

—पीर जमीयत अली शाह अपने शहीदगंज आन्दोलन में सफलता न पाकर आन्दोलन छोड़ कर हज्ज करने चल दिये हैं।

—शहीदगंज गुरुद्वारा में नमाज पढ़ने के लिये सत्याग्रह करनेका निश्चय लाहौरके मुसलमानोंने किया है। प्रतिदिन वे पांच २ मुसलमानोंका जत्था भेजा करेंगे। २४ जनवरी को ५ मुसलमान इसी सत्याग्रह में गिरफ्तार हुये हैं।

—पार्लियामेन्टके भूतपूर्व भारतीय मेम्बर श्रीमान सकलत वाला का हृदयगति रुक जानेसे लन्दनमें स्वर्गवास होगया है।

—लखनऊ क्रिश्चियन कालेज के प्रोफेसर मि० इलाहीबख्श वायोलिवर में सम्राट जार्जकी मृत्युका समाचार पढ़ते ही कुर्सी पर बैठे २ परलोक यात्रा कर गये।

—बहावलपुर रियासत में हिन्दुओं पर बहुत सख्ती की जारही है। हिन्दुओं पर १०४ दफा लगा कर ५ मनुष्यों को बकश होने की मनाही कर दी है। अनेक प्रतिष्ठित हिन्दु नेताओं को नजरबन्द किया कुछ को जेल भेज दिया है। दो नेताओं ने जेल के दुर्व्यवहार से भूख हड़ताल कर दी है। हिन्दू महासभा ने हिन्दुओं के नाम विज्ञप्ति निकाली है कि समस्त प्रान्तों के हिन्दुओं को इस विषय में विरोध प्रगट करना चाहिये।

—कांग्रेसका आगामी सालाना अधिवेशन मुलतानमें करने के लिये मुलतान कांग्रेस कमेटी ने निमंत्रण भेजा है।

—कांग्रेस का अधिवेशन अप्रेल मासमें ईस्टरकी छुट्टियोंमें होगा उस वक्त रेलवे कियायेमें भी रियायत हुआ करती है।

—कांग्रेसका सभापतित्व पं० जवाहरलाल नेहरू ने स्वीकार कर लिया है वे फरवरी तक लन्दन रहेंगे। अनेक आमिल युवती लड़कियां जाति बन्धन के कारण कुमारी बैठी हुई हैं।

—अबीसीनिया के बादशाहने इटलीको हरानेके लिये घोषणा की है कि जो पुरुष बन्दूक पकड़ सकता है वह सेनामें भर्ती होजाये।

—ब्रिटिश साम्राज्यका शासनसूत्र प्रिंस आफ वेल्स ने सम्हाल लिया इस की घोषणा बुधवार के दिन होगई राज्याभिषेक पीछे होगा। अब आप "सम्राट अष्टम एडवर्ड" के नाम से विख्यात होंगे।

—सम्राट पंचम जार्जका शव २८ जनवरीको सेण्टजार्ज के गिर्जाघर में दफनाया गया। सम्राट पंचम जार्ज का वैयक्तिक व्यवहार बहुत अच्छा था आपकी मृत्यु पर महात्मा गांधी, भूलाभाई देसाई आदि नेताओं ने शोक प्रकाशित किया है।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

जैन समाचार

धर्मार्थ सर्वस्व दान— जसवन्त नगर निवासी श्रीमान बा० शिवचरणलाल जी जैन रईस परलोक यात्रा करते समय जो वसीयत कर गये थे उसको मैनपुरी के कलक्टर ने प्रकाशित कर दिया है। ला० शिवचरणलाल जी अपनी समस्त चल अचल संपत्ति जैन 'पुरातत्व अन्वेषण, जैन साहित्य प्रकाशन, छात्र वृत्ति दान' आदि के लिये दान कर गये हैं। इस फंड के ट्रस्टी श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी हैं आप उनके सम्बन्धी हैं। इस उपयोगी सर्वस्व त्याग से स्वर्गीय आत्मा अपना शुभ नाम अमर कर गया है। धन्यवाद।

धन्यवाद—श्रीमान सेठ बालूराम जी पाटनी निवासी ने अपने सपुत्र श्री वासुदेव जी के विवाह उत्सव पर १५) शास्त्रार्थ संघ को और ५) जैनदर्शन को प्रदान किये हैं। एतदर्थ आपको धन्यवाद है।

—मैनेजर

धन्यवाद—श्रीमान सेठ दीपचन्द्र जी सेठिया कलकत्ताने जैनदर्शनके सहायतार्थ ११ प्रदान किये हैं तथा पत्र द्वारा दर्शन के लिये सद्भावना एवं प्रेम प्रदर्शित किया है। एतदर्थ आपको धन्यवाद है।

मैनेजर-जैनदर्शन

औषधालय—ऋषभदेव (केसरियानाथ धुलेव) औषधालय के लिये सेठ हीरालाल जी गुलाबचन्द जी मेहता अकलकोट तथा शाह माणिकचन्द जी अमीचन्द जी, चि० जम्बुकुमार जी सोलापुरने रा० श्री प्रतापसिंह जी कार्यदक्षता में इमारत बनवाई है। जिसका उद्घाटन १० फरवरी को उत्सव के साथ व्या० रत्न पं० धर्मेन्द्रनाथ जी शास्त्री ने कराया।

सम्मति—मैं ने आज श्री स्याद्वाद महा विद्यालय का निरीक्षण किया। यहाँ की व्यवस्था देखकर मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हुई। श्रीयुत पं० महेन्द्रकुमार जी और श्री चौ० पन्नालाल जी महा विद्यालय के कार्य में विशेष दिलचस्पीसे कार्य कर रहे हैं। विद्यार्थियों में अनुशासन भी बहुत अच्छा है। मैं इस विद्यालय की उन्नति चाहता हूं।

—सूरजमल जैन भूतपूर्व सम्पादक-"जैन प्रभात"

रथोत्सव—खतौली में चैत वदी ११ से चैत सुदी १ तक उत्सव होगा। उन ही दिनोंमें २२-२३ मार्च को कुन्दकुन्द विद्यालयका भी अधिवेशन होगा

मेला—श्री अतिशय क्षेत्र बड़ा गांव (मेरठ) का वार्षिक उत्सव फागुन सुदी ८-९-१० को होगा।

महर्गांव दिवस—१६ जनवरी को कासगंज में बड़े उत्साह से मनाया गया। ला० वंशीधर जी जैन रईस के सभापतित्व में सभा हुई। जिसमें जैन अजैन भाई शामिल हुए। —वीरेन्द्रकुमार जैन

—श्री पार्श्वनाथ दि० जैन विद्यालय उदयपुर में भी महर्गांव दिवस मनाया गया।

किणी (कोल्हापुर) के २५ यात्रियों की स्पेशल मोटर शिखर जी की यात्रा करके ता० ८ फर्वरी के सुबह ४ बजे पावापुरीके लिये रवाना हुई थी तब १५ माईल आने पर रेलवे फाटक आया जो खुला था (न गेटमैन था न लाल बत्ती थी) वहां एक एन्जिन अकस्मात आ गया व जोर की टक्कर लग जाने से मोटर चूर २ हो गई व ५ आदमी तुरन्त मर गये व अनेक घायल हुये। ड्राईवर व अन्य आदमी बच गये हैं। जो मर गये हैं उनके नाम-आदिगौंडा, मलगौंडा, वीरगौंडा और नेमगौंडा हैं सभी पाटील हैं।
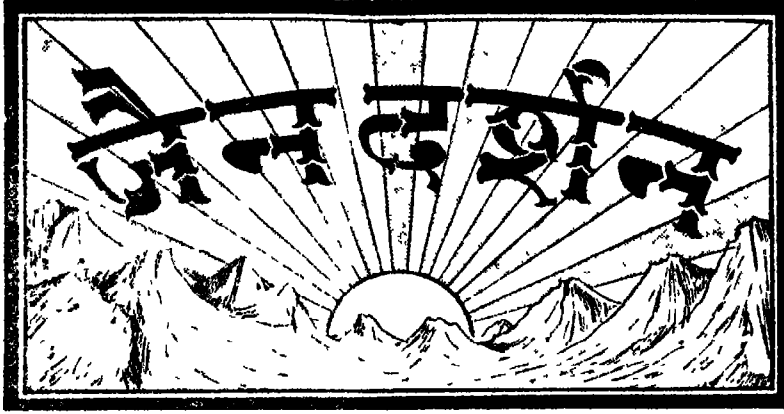
ॐ अकलंकाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्ररश्मिर्भ्भोभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री फाल्गुन वदी ९—रविवार श्री वीर सं० २४६२ | १६ फरवरी १९३६

गीत

वेदना में स्वाद पाया,
लोचनों का अश्रु सागर,
भर रुका कुछ पलक गागर,
प्राण मेरे उजड़े विपिन में क्यों मधुर मधु मास आया।

हो चले निश्वास धावित,
शुष्क-नीरस-अधर प्लावित;
दीप ले सूने सदन में कौन घुस चुप चाप आया।

शान्त क्यों अभिलाष बालक,
रे, प्रगट करते न निज अंक,
क्या? मिला, खोया नवल वह दिव्य आज सुहाग पाया

मन्द हो पुलकित व्यथायें
हंस पड़ीं कहकर कथायें,
हृदय में तूफान किसने है अचानक आ मचाया।

वह उतर आया दृगों में,
मग्न मेरे इन हृदों में,
क्या इसी से मुदित होकर प्रणय का मधु गीत गाया

क्यों अरे? होता दृगोझल
स्वप्न बन हा स्वप्न के बल,
मिलन वेला में सजग हो विश्व से उपहास पाया।

—कुमरेश साहित्य रत्न

भट्ट अकलंकके एक और अलभ्य ग्रंथकी प्राप्ति

(ले०—श्रीमान पं० सुखलाल जी जैन प्रोफेसर हिन्दूविश्वविद्यालय बनारस)

मैं गत गर्मी की छुट्टियों में पाटनमें—जो कि कभी गुजरातकी राजधानी थी और जो जैन पुस्तक भंडारों की भी राजधानी अभीतक है—था। अन्य काम करते हुये एक रोज दिल में आया कि सब पुस्तक सूचियां देखूं; इस दृष्टिसे कि श्वेताम्बरीय भंडारों में दिगम्बरीय ग्रंथ कितने और कौन से हैं? इस दृष्टिसे एक छोटी सी यादी करली जिसमें "प्रमाणसंग्रह" का नाम नम्बरवार मेरे पास रहा।

इधर काशीमें मेरे दो पंडित जैन मित्रोंमें से एक पं० महेन्द्रकुमार जी हैं उन्होंने मुझसे कहा कि 'प्रमाण संग्रह' ग्रंथ अकलंक कर्तृक है और उसका उल्लेख आया है अतएव यह ग्रन्थ खास खोजना चाहिये। मैंने तुरंतही कहा कि मेरे पास की यादी में 'प्रमाण संग्रह" का नाम है वह अकलंक का ही होना चाहिये यद्यपि यादीमें कर्ताका नाम नहीं है। इसके बाद शीघ्र पत्र व्यवहार शुरू हुआ और फलस्वरूप वही ग्रंथ प्राप्त हुआ जिसकी खोज करनी थी। इस प्रमाण संग्रह ग्रंथकी मूल प्रति ताड़ पत्रकी है, इसके ऊपर से एक नकल कराई हुई है जिसे श्रद्धेय मुनि श्री पुण्य विजय जीने—जोकि पुस्तक भंडारोंकी रक्षा व्यवस्था में ही दत्त चित्त हैं और जो जैन साहित्यके विविध प्रकाशनों में प्रवीण तथा पटिष्ठ हैं—मेरे पास भेजा। इस नकल के अन्त में तो अकलंकका नाम नहीं है। पर बीचमें अकलंक का नाम आया है और वह निःसन्देह अकलंककी ही कृति है। इसके प्रस्ताव कारिकाबद्ध हैं और साथ ही स्वोपज्ञ संक्षिप्त विवृति है। कुल श्लोक अनुमानतः हजारसे ज्यादा नहीं। जैसे स्वविवृतियुक्त लघीयस्त्रयी, न्यायविनिश्चय, अष्टशती वैसे ही अकलंक ने यह भी एक छोटा प्रकरण अंदाज उक्त प्रकरणों के बराबर ही लिखा जान पड़ता है। आठ प्रस्तावों के उपरान्त उपसंहारमें थोड़ासा नय विवरण है। इसका विषय नामसे ही स्पष्ट है। इसमें प्रमाणों की जैन दृष्टिसे व्यवस्था, व्याख्या और मीमांसा कीगई है। माणिक्यनंदि, वादिदेव सूरि तथा आचार्य हेमचन्द्र के सूत्र ग्रन्थों का 'प्रमाण संग्रह' वैसाही आधार है जैसी अकलंककी अन्य कृतियां।

यद्यपि सिद्धसेन और समन्तभद्र ने जैन न्यायका बीजारोपण किया है तथापि अभीतकके अवलोकनसे यह जान पड़ता है कि जैन न्यायका विशेष व्यवस्थापक और प्रस्थापक अकलंक ही है। इसमें तो सन्देह ही नहीं कि बौद्ध विद्वान धर्मकीर्ति की न्यायकृतियों को देखकर जैन न्यायकी पूर्ति के वास्ते विविध दृष्टियों से अनेक प्रकरण बनाये। धर्मकीर्ति और अकलंक की कृतियों की जब तुलना करते हैं तब अकलंक को जैन-धर्मकीर्ति कहनेका मन होजाता है प्रमाण संग्रह* छोटा होने पर भी ऐतिहासिक दृष्टि से बड़े महत्वका है। क्योंकि परीक्षामुखमें नहीं, पर वादिदेव सूरि के 'प्रमाणनय तत्वालोक' में विद्यमान

* प्रमाण संग्रह यह नामकरण दिग्नाग के 'प्रमाण समुच्चय और शांत रक्षित के 'तत्वसंग्रह' की याद दिलाता है।

नय और वाद परिच्छेदकी चार्चा प्रमाण संग्रहमें से मिल जाती है।

उपाध्याय यशोविजयजी ने अपनी 'जैनतर्क परिभाषा' लघीयस्त्रयी के आधार पर जिस तरह लिखी है उसी तरहसे अकलंक की 'प्रमाणसग्रह' कृति के आधार पर 'परीक्षामुख', 'प्रमाणनय तत्वालोक' 'प्रमाणमीमांसा' आदि की रचना हुई है। अकलंकके अनुपम और महत्वपूर्ण 'सिद्धिविनिश्चय' का पता भी करीब नौ वर्षके पहले इसी तरह चला था। जैसे सिद्धिविनिश्चय की एक ही प्रति प्राप्त हुई वैसे ही प्रमाणसंग्रह की असली प्रति अभीतक एक ही प्राप्त हुई है पर मेरा खयाल है और कुछ अस्पष्ट स्मरण भी है कि इसकी अन्य प्रतियां गुजरात के ही भण्डारों से मिलेंगी। क्योंकि पिछले श्वेताम्बरीय ग्रन्थों में इसका उपयोग हुआ है। प्राप्त प्रति सिद्धिविनिश्चय जितनी तो अशुद्ध नहीं है फिर भी वह अशुद्ध ही है पर मेरा खयाल है कि ताडपत्र के साथ मिलने तथा अन्यान्य प्रतियों के प्राप्त करने पर यह बिलकुल शुद्ध होसकेगी। इसके वास्ते अकलंक की सब कृतियों का गम्भीर परिशीलन खास अपेक्षित है। जबकि श्वेताम्बरीय भण्डारों में से सिद्धिविनिश्चय 'प्रमाण संग्रह' जैसे ग्रन्थ मिलते हैं तब इसका पूरा सम्भव है कि वे तथा अन्य ग्रन्थ दिगम्बरीय भण्डारोंमें से अवश्य मिल सकेंगे। वादिदेव सूरिके 'रत्नाकर' में विद्यानन्दि के "विद्यानंद महोदय" ग्रंथका उल्लेख है। मेरी धारणा है कि वह ग्रंथ जल्दी ही श्वेताम्बरीय ग्रंथ संग्रह में से प्राप्त होगा।

यह मानने का कोई कारण नहीं है कि दिगम्बर भाई ग्रन्थ रक्षा और संग्रह में उदासीन या प्रमत्त थे फिर भी दसवीं एकादशवीं शताब्दी के बाद का जैन साहित्य विषयक इतिहास देखने से जान पड़ता है कि दिगम्बर विद्वानों ने श्वेताम्बर विद्वानोंकी तरह अपनी जवाबदेही का पालन नहीं किया। इसी से श्वेताम्बर साहित्य उस समय के बाद भी बढ़ा और खूब बढ़ा तब दिगम्बरीय साहित्य उसी स्थान पर रह गया। दिगम्बर परम्परा की एक भारी गल्ती ईसवी सन् के प्रारम्भके आसपास आगमिक साहित्य फेंक देनेमें जैसे हुई थी वैसी ही दूसरी गल्ती ग्यारहवीं शताब्दी से शुरू हुई। जिसमें नव साहित्य सर्जन की तो बात ही क्या पर पूर्ववर्ती हजार वर्ष के भारतीय साहित्य में स्थान पाने योग्य अपनी परम्परा के बहु मूल्य ग्रंथों का रक्षण, संशोधन और पठन-पाठन ही करीब लुप्तप्राय हो गया। यही कारण है कि मध्यकालीन महत्व पूर्ण दिगम्बरीय ग्रंथ जो समग्र जैन साहित्य की दृष्टि से बहुमूल्य हैं वे खुद दिगम्बर भण्डारों में से अदृश्य हो गये। या अशुद्ध एवं विरल रह गये।

जिस दिन पोस्ट में प्रमाणसंग्रह की प्रति आने वाली थी उस दिन मेरी तरह मेरे मित्र कैलाशचन्द्र जी और महेन्द्रकुमार जी दोनों उसीकी ओर टकटकी लगाये हुये थे। प्रति मिलते ही हम लोगों की खुशी का पार न रहा। जैसे एक भक्त यात्री तीर्थ-स्थान में जा कर प्रफुल्ल होता है वैसे ही हम लोग आनन्द मग्न हुए। मैंने मित्रों से कहा जितनी श्रद्धा और शक्ति हो हम पुष्पादि के द्वारा इस प्रति का अर्थात् अकलंक का पूजन करें। पर तुरंत ही बुद्धि ने जवाब दिया कि फूलों से ही नहीं बल्कि चांदी और सोने के सिक्कों से भी जैन लोग आज तक

पुस्तकों की पूजा तो करते ही आये हैं फिर क्या कारण कि ग्रन्थ नष्ट और अलभ्य हो गये। और इसका भी क्या कारण कि जो रहे सो भी बहुधा अशुद्धि के पुंज ही बन गये। बुद्धि का यह जवाब मिलते ही चित्त उदास हो गया और उसी ने एक कर्तव्य प्रेरणा भी की इसे मैं दिगम्बर पण्डित मंडली और शास्त्ररसिक एवं धनिक गृहस्थों के सन्मुख मात्र सूचना रूप से उपस्थित कर देता हूं वह यह है कि—

१—एक दिगम्बरीय साहित्य गवेषक समिति शीघ्र ही कायम की जाय जिसके सदस्य यथासम्भव स्वयं सेवक और खास जरूरत देखकर वैतनिक भी हों जिनका कार्य भिन्न भिन्न भण्डारों को देखना, उनकी यादियां तैयार करना अलभ्य दुर्लभ ग्रन्थ विशेष सुलभ करना इत्यादि हो।

२—एक केन्द्रीय पुस्तक प्रकाशन संस्था हो जिस में प्रकाशित अप्रकाशित सभी ग्रन्थ आवश्यकता और योग्यता के अनुसार प्रकाशित किये जावें। इसकी खास विशेषता दो बातों में हो, एक तो पूर्ण शुद्ध और दूसरी उसका ऐतिहासिक उद्घाटन तथा तुलनात्मक संशोधन।

३—पाठ्य तथा अन्य प्रचलित महत्वपूर्ण ग्रन्थ हिन्दीमें इस तैयारीके साथ अनुवादित तथा प्रकाशित हों कि जिससे जैन जैनेतर सभी जिज्ञासु उस विशेषता के कारण उन्हें देखने को आकर्षित हों।

मेरी समझ में दिगम्बर पण्डित मण्डली साहित्य का द्रोह कर रही है। क्योंकि उसकी आजीविका, प्रतिष्ठा और विद्वत्ता जिन कामदुधाकल्प ग्रन्थों के ऊपर अवलंबित है उन्हीं के परिमार्जन संरक्षण और परिपोषण में वह करीब करीब उदासीन है। राजा और धनिकों के आश्रय में तथा उनकी खुशामद में ब्राह्मणत्व को भूल जाने का ब्राह्मण वर्ग पर जो आरोप जैनों ने भी किया है वह आरोप क्या जैन पण्डितों को लागू नहीं होता क्या वे एक-एक सेठ को या ऐसी ही धनिक संस्था को अपनी आत्मा बेच कर अबला स्थिति में नहीं पहुंच गये हैं। यदि ऐसा न होता तो श्वेताम्बर परम्परा की अपेक्षा अनेक गुणे विद्वान होने पर भी क्या कारण है कि दिगम्बर परम्परा अपने साहित्य क्षेत्र में पिछड़ी रहे।

दिगम्बर परम्परा में कई वर्णी ब्रह्मचारी और त्यागी भी है क्या उनका यह काम नहीं है कि जिन शास्त्रों की दुहाई देकर वे अपना गुजारा करते हैं उन्हीं की उपासना और परिशुद्धि में वे जीवन व्यतीत करें। क्या उनके वास्ते सिर्फ यही मार्ग है कि किसी एक संस्था और आश्रम में बैठ कर अनाथों और बाबों की तरह अकर्मण्य जीवन बितावें और उसी को त्याग मान और मनवा कर समाज के ऊपर निरर्थक बोझ बढ़ाया करें।

मैं अन्त में धनिक गृहस्थों से भी कुछ कह देना चाहता हूं। अगर तीर्थों की लड़ाई और दूसरे वैसे ही काम के वास्ते वे हजारों और लाखों खर्च कर सकते है, पण्डितों और वकीलोंकी ऐसी जमात का पोषण कर सकते हैं, तीर्थ रक्षक कमेटियां नियत करके झगड़े के फलरूप काम को चला सकते हैं तो क्या वे सचेतन जैसे सच्चे शास्त्र तीर्थ के वास्ते कुछ भी नहीं कर सकते। यह याद रहे कि मन्दिरों की अपेक्षा भी धर्मरक्षा में शास्त्रों का हिस्सा भारी और सच्चा है। मन्दिर एक ही जगह स्थिर रहेगा

उसमें आने वाला ही थोड़ी देर के वास्ते भक्ति लाभ करेगा जब कि शास्त्रों की पहुंच देश परदेश और सभी जातियों में चिरकाल तक सम्भवित है। जो धनी सेठ धर्म के वास्ते ही रथ आदि निकालते हैं बाह्य आडम्बर में हजारों या लाखों का पानी कर देते हैं वे ध्यान रक्खें कि मौजूदा और अगली बुद्धिमान पीढ़ी उनके अविचारी उत्साह पर हंसती है और हंसेगी। क्या सर हुकमचन्द जैसे सेठ का यह काम नहीं है कि वे अपनी हीरक जयन्ती के ऊपर शास्त्र संग्रह व्यवस्था और प्रकाशन के निमित्त एक कायमी और व्यवस्थित संस्था के वास्ते हाथ की मात्र एक अंगूठी दान दे देते। ऐसा होता तो उनके दिगम्बर जैन बोर्डिंग और मन्दिर के वास्ते जाहिर किये गये दान से भी यह दान सच्चा, आवश्यक और विशेष कार्य साधक होता।

अन्त में मैं अपने परिचित और अपरिचित सभी दिगम्बर पण्डित मित्रों से यह कह देना आवश्यक समझता हूं कि वे मात्र अपनी अर्थवृत्ति संकुचित मनोदशा और निरर्थक पार्टी बाजी को छोड़ दें और साथ ही यदि पांडित्य जीवन बिताना है तो उपर्युक्त साहित्य कार्य में अपना हाथ बटावें। आप सभी विश्वास रक्खें कि इस कार्य के द्वारा भी संतुष्ट कौटुम्बिक जीवन बिताया जा सकेगा।

—*—

सं० नोट—प्रज्ञाचक्षु पं० सुखलाल जी अत्यन्त विद्याव्यसनी और अध्ययनरत विद्वान हैं, प्रज्ञाचक्षु होने पर भी प्रतिदिन वे जितना अध्ययन और अध्यापन करते हैं चर्मचक्षु के लिये भी उतना दुःशक्य है। आपकी दृष्टि बहुत व्यापक और उदार है। दिगम्बर साहित्यकी दुर्दशा देखकर आपकी उदाराशयताने ही यह लेख लिखनेके लिये आपको विवश किया, ऐसा मालूम होता है। अपने प्राचीन शास्त्रों की ओरसे पंडित त्यागी और धनिकोंकी उपेक्षा दिन पर दिन बढ़ती जाती है। त्यागी और धनिकों की उपेक्षा सह्य हो सकती है क्योंकि वे शास्त्रों के महत्वको नहीं समझते किन्तु शास्त्रज्ञ कहे जाने वाले विद्वान भी जब इस ओरसे मुंह मोड़ लेते है तो आत्मा तिल मिलाकर रह जाती है। पंडित जी के शब्द कडुये जरूर मालूम होंगे और उनका रसास्वादन करके त्यागियों और विद्वानों के मुँह भी शायद कडुवे हो जायें, किन्तु "कषायो भेषजम्" की शास्त्रीय आज्ञा को भुलाना न चाहिये। हमारी अकर्मण्यता इतनी अधिक बढ़ गई है कि मायूको उपचार व्यर्थ सिद्ध होरहे है। अनुपलब्ध साहित्यकी खोज और उपलब्ध साहित्यके संशोधनकी ओर हमारा रंच मात्र भी ध्यान नहीं है। जो ग्रंथ जिस रूप में छप गये उसी रूपमें पठन पाठनमें आरहे हैं। अशुद्ध हैं तो अशुद्ध और शुद्ध हैं तो ठीक है।

आजतक किसी भी विद्वान ने किसी धनिकसे जिनवाणी माता का उद्धार और संरक्षण करने के लिये चर्चा की हो—इसमें भी सन्देह है। हां, स्वर्गीय पं० पन्नालाल जी बाकलीवाल" के परिश्रमसे कुछ ग्रन्थोंका उद्धार अवश्य होगया है। उन्होंने जिस संस्थाकी नींव डाली थी, वह तो पता नहीं कहाँ समागई। वैसी संस्थाकी आवश्यकता आज भी बनी हुई है। जैनसमाज में शिक्षाशालाएं काफी हैं अब नवीन विद्यालय खोलने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है इन शिक्षाशालाओं की शिक्षाके लिये

खोज २ कर नवीन खाद्य सामग्री जुटानेकी और मौजूदा सामग्री को शुद्ध और ग्राह्य बनानेकी। पंडित जी के सत्प्रयत्न और श्वेताम्बर साधुओं की सहायता से अकलंक जैसे महान ग्रन्थकार की दो कृतियां उपलब्ध होगई हैं। प्रयत्न करने पर और भी उपलब्ध होंगी। इनके प्रकाशनकी सुव्यवस्था करना दिगम्बर समाजका कर्तव्य है। धनिकों को यह नहीं सोचना चाहिये कि यह ग्रंथ तो संस्कृतमें हैं इनके छपानेसे हमारा क्या लाभ होगा? जब यह छप जांयगे और पठन-पाठनमें आने लगेंगे तो हिन्दी जानने वाले भाइयों के लिये भी इसकी व्यवस्था हो ही जायगी। जिन ग्रन्थोंकी रचना के लिये निकलंक ने अपने प्राण देकर अकलंकका जीवन बचाया, क्या उनकी सन्तानें उन्हें प्रकाशित करनेका भी कष्ट उठाना नहीं चाहतीं। हम पण्डित जी की योजना की ओर संघके महामन्त्री तथा अन्य शास्त्र प्रेमियों का ध्यान आकर्षित करते हैं। जयन्ती के अवसर पर सर सेठ साहिब ने कोई उल्लेख योग्य स्थायी नया दान नहीं किया। उनकी संस्थाओं के मध्य में एक जिन वाणी माता के उद्धारक और प्रचारक मन्दिर की कमी सब को खटकती है। इस कमीको भी पूर्ण करना चाहिये हम इन्दौर महाविद्यालयके मन्त्री और प्रधानाध्यापक महोदयका ध्यान इधर आकर्षित करते हैं—सेठ जी की ओरसे एक ग्रंथमालाकी व्यवस्था अवश्य होनी चाहिये। मुर्शिदाबाद के सेठने तो समस्त आगम छापकर मुफ्त बांट दिये थे। क्या हमारे सेठ जी उनसे कम हैं?

—*—

उद्बोधन !

जाग !
अभागी—
जाग !!

लेखक—
सुरेनसकलेचा

यह सुषुप्ति क्या अंतहीन है,
यह मूर्च्छा क्या इति हीन है?
ना ऊषा ना री प्रभात क्या?
री रजनी छायी अक्षीन है?
हाय, अरी दुर्भाग !
जाग अभागी जाग !!

इस सुषुप्ति में हुआ क्या २?
इस मूर्च्छा में खोया क्या २?
कितने वज्र हृदय पर, री?
कैसे कैसे हुए हाल क्या?
री कुछ सोच कुभाग !
जाग अभागी जाग !!

"केसरिया" व्रण नहीं मिटा था
'कोलारस' व्रण नया लगा था।
मिटी कपोल अश्रु-रेखा ना
फिर प्रवाह यह नया बहा था।
री अचेत हत् भाग !
जाग अभागी जाग !!

महगांव का रोदन री सुन—
हाय, शास्त्र की राख हुई हन:
देवालय अपवित्र, ध्वजा भंग
हुई विदीर्ण सब चूर २ सुन।
अब री निद्रा त्याग !
जाग अभागी जाग !!

खौल उठे नाड़ी नस रग रग,
फूले वक्षस्थल शौर्य सजग।
निज रक्षा तत्पर होने से-
जग रक्षा को सदा सजग।
निज कायरता त्याग !
जाग अभागी जाग !!

यह जागृति ही स्थिर जीवन हो
चिर मंगल मय नव जीवन हो
सदा सजग हो सदा सुपथ हो
सजग भावना चिर पवित्र हो
खिलें पुष्प पराग !
जाग अभागी जाग !!

—दूध—

(ले०—श्रीमान पं० कपूरचन्द् जी जैन बनारस)

भोजन में दूधका होना जरूरी है। इसको बड़े २ वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर चुके हैं। दूधकी महत्ता केवल योरोपियन जातियां ही नहीं जानती हैं बल्कि भारतवासी भी। भारतवासी तो दूधको अमृतके तुल्य मानते हैं। बच्चा पैदा हो अपनी माता के दूध पर जीवन निर्वाह करने लगता है। और कई मास पर्यंत जबतक कि अन्न खाने योग्य नहीं होजाता केवल दुग्धपान ही करता रहता है। दूधसे ही उस बच्चे के योग्य सारी जरूरी चीजें मिलती रहती हैं। शाकाहारियोंके लिये तो यह अमृतके समान है। इस से उन्हें अच्छी मात्रामें 'प्रोटीन' अर्थात दिमागी ताकत मिल जाती है। इसी कारण कहा गया है—"यथा सुराणां अमृतं हि उक्तं तथा नराणं दुग्धमाहुः"।

दूधमें जीवनोपयोगी सारे पदार्थ जैसे (प्रोटीन) (पोषक पदार्थ) बसा (संचित शक्ति पदार्थ) कारबोहाइड्रेट (शक्तिवर्धक पदार्थ) लवण तथा जल एवं विटेमीन सभी कमोबेश मात्रा में पाये जाते हैं। ये पदार्थ भिन्न २ दूधोंमें भिन्न २ परिमाणोंमें होते हैं।

१- माताके दूधमें प्रोटीन और बसा तो कम परन्तु कारबोहाइड्रेट ज्यादा होते हैं।

२- गायका दूध-इसमें कारबोहाइड्रेट कम तथा प्रोटीन और लवण ज्यादा होता है।

इसी प्रकार और २ दूधों में अगर उनकी मात्रा १०० छटांक लीजाय तो उनमें इतने पदार्थ पाये जांयगे।

दूध	प्रोटीन	बसा	कारबोहाइड्रेट	जल	लवण
स्त्रीका	२˙५	३˙०	५˙८७	८८˙०	˙१६
गौका	४˙८	३˙७	४˙८	८६˙०	˙७
भैंसका	४˙५	१˙०	४˙८	८८˙०	˙८
बकरीका	३˙६	४˙२	४˙०	८७˙५	˙५६
गधीका	१˙८	१˙०२	५˙५०	८७˙५४	˙४२

इस तालिका को देखने से मालूम हो सकता है कि किसका दूध किसको लाभ दायक हो सकता है।

(क) प्रोटीन :—दूध में जो प्रोटीन का हिस्सा रहता है वह केसीन और लैक्टेलब्यूमिन के रूप में पाया जाता है। अन्न की अपेक्षा दूध में पोषक शक्ति कुछ कम रहती है।

(ख) बसा (Fats) :—अगर दूध की एक बूँद किसी चीज पर रख कर सूक्ष्म दर्शक यन्त्र से देखी जाय तो उसमें चमकते हुए छोटे छोटे कण दिखाई पड़ते है ये ही बसा के कण हैं। आज कल जो क्रीम बनायी जाती है, वह इन्हीं कणों को यन्त्र द्वारा निकाल कर बनायी जाती है।

(ग) कारबोहाइड्रेट :—यह दूध में शर्करा के रूप में रहता है। यानी दूधमें जो थोड़ी सी मिठास रहती है वह इसी के कारण है।

(घ) जल :—दूध में सब से अधिक मात्रा इस की होती है।

(ङ) लवण :—दूध में लवण उतनी मात्रा में

नहीं होता जिससे कि नमकीन ज्ञान पड़े। लवण दूध में बहुत कम मात्रा में होता है।

इन सब के अलावे सब प्रकार के दूधों में विटै-मिन भी पाये जाते हैं :—

दूध :—	A	B	C	D	E
	+++	++	+	+	++

यानी 'A' विटामिन ज्यादा उससे कम 'B' उस से कम 'C' तथा 'D' इसी प्रकार 'E' का। दूध के विटामिन उबालने से बहुत कुछ नष्ट हो जाते हैं, परंतु अगर दूध को धारोष्ण पीया जाय तो उसमें जीवनो-पयोगी सारे विटामिन प्रस्तुत रहते हैं।

दूध के 1 Gm याने ।≈) भरी के जलने से 7 Caloric (शक्ति का माप या तौल) उत्पन्न होती हैं। अतएव यह जानने के लिये कि अगर कोई मनुष्य सिर्फ दूध पर निर्वाह करना चाहे तो कितने दूध पर रह सकता है। नीचे तालिका दी जाती है-

१- मुंशीका काम करने वालेको २५०० Caloric की आवश्यकता है।

२ - विचार संबंधी काम करने वालेको २६५० Caloric की आवश्यकता है।

३ - सामान्य शारीरिक परिश्रम करने वाले को ३१०० Caloric की आवश्यकता है।

४- कड़ा शारीरिक परिश्रम करने वालेको ३६०० Caloric की आवश्यकता है।

५ - अत्यन्त कड़ा शारीरिक परिश्रम करने वाले को ५००० Caloric की आवश्यकता है।

3½ छटांक दूध गरम हो चाहे ठंडा करीब १ या २ घण्टे में पच जाता है।

इन बातों को जानकर कि दूध जीवन के अथवा स्वास्थ्य के लिये एक अति उत्तम वस्तु है, हम लोगों को उसे शुद्ध प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। शुद्ध दूध प्राप्त करने के निम्न लिखित उपाय हैं—

१—गायों की अथवा जिन का हम दूध पीते हैं उनके खान पान की तथा कैसे स्थान में बांधी जाती हैं आदि की देख रेख अवश्य करनी चाहिये। गायों को मैला आदि दूषित पदार्थ नहीं खाने देना चाहिये और उन्हें जहां तक हो सके कुत्तर बन्ध झोंपड़ी में पक्के ढलुँये फर्श पर बांधना चाहिये।

२—दूध दुहने के पहले स्थान तो साफ करना ही चाहिये परन्तु गाय का थन, बर्तन जिसमें दुहा जाय, हाथ वगैरह अच्छी तरह पानी से धो लेना चाहिये। यह नहीं कि जहां बछड़े (Calf) ने दूध पिया, कि चट मैले हाथों गंदी बाल्टी मे दूध दुह लिया। ऐसे दूध से तो दूध का नहीं पीना ही अच्छा है।

३—दूध को अगर उसी समय नहीं पिया जाय तो उसे शुद्ध बर्तनों में सावधानी के साथ उत्तम स्थान में बन्द रख देना चाहिये। इससे उसमें रोगोत्पादक जीवाणु प्रवेश नहीं कर पावेंगे।

इनके सिवाय अशुद्धियों के और भी तरीके हैं जिन्हें कि दूध बेचने वाले काम में लाते हैं:—

१—बहुत से ग्वाले दूध में अशुद्ध जल (जैसा कि प्रायः हुआ करता है) मिला देते हैं।

२—दूध से आजकल मलाई या क्रीम (मक्खन) निकाल ली जाती है जिससे उसके पोषक पदार्थ नष्ट हो जाते हैं।

३—कोई कोई तो गाय, बकरी का दूध एक ही में फेंट फांट कर देते हैं।

४—क्रीम निकालने से जब दूध पतला हो जाता है, तब ग्वाले उसमें आटा, अरारोट वगैरह मिला देते हैं।

५—हलवाइयों आदि के यहाँ बहुत सी मक्खियां दूध में पड कर मर जाती हैं।

६—कभी कभी सकरकन्द से बनी चीनी भी दूध में मिला दी जाती है।

दूध के दूषित रहने के कारण, उसके पीने वाले को बड़ी खराबी पहुँचती है। दूध में जो भी रोगोत्पादक जीवाणु मिल जाते हैं, या होते हैं वे पीने वाले के पेट में पहुंच कर रोग को उत्पन्न करते हैं। हमारे देश में विशेष कर कलकत्ता, बम्बई जैसे बड़े २ शहरों में दूध का पीना अमृत के समान नहीं बल्कि विष के समान है। अगर अपने घर में गाय हुई तो और बात है। शहरों में दूध के स्थान पर ताजे फल काम में लाये जा सकते हैं। यह शहरों के दूषित दूध का ही दोष है जिससे कि प्रत्येक वर्ष हजारों बच्चों की मृत्यु होती है। इसी लिये स्तनपोषित शिशु उन भयंकर परिणामों से बचे रहते है जो गाय का दूध पीने वाले बच्चों में पाये जाते हैं। अतएव हम लोगों का कर्तव्य है कि दूध पीने के पहले दूध की परीक्षा कर लें कि शुद्ध है या नहीं आजकल परीक्षा के दो उपाय हैं—(क) वैज्ञानिक पद्धति (ख) देशीय पद्धति।

वैज्ञानिक पद्धति ·— शुद्ध दूधका का रंग पूर्ण श्वेत होता है उसमें किसी विशेष प्रकारकी गन्ध या स्वाद नहीं होता।

२- दूधका घनत्व १०२७ से १०३४ तक होता है और यह लेक्टोमीटर (Lactometer) नामक यंत्र से नापा जाता है।

३- दूध ६०° फर्नहाईट के पश्चात् प्रत्येक १०° तापक्रम के बढ़ने से १ डिगरी घनत्व कम होजाता है इसलिये ६०° फ० पर देखना चाहिये।

४- परन्तु यदि ग्वाले ने क्रीम निकाल कर जल मिला दिया हो तो दूध को औटाकर शुष्क करके देखना चाहिये कि उसका घनत्व १३ से १५ तक है या नहीं। यदि इससे कम हो तो जल मिला हुआ समझना चाहिये।

५- आटा और अरारोट की मिलावट देखने के लिये थोड़ेसे दूधमें 'आयोडियन' को मिलाना चाहिये इससे अशुद्ध दूधका रंग नीला होजायगा।

६- जल मिश्रित दूधको जब किसी श्वेत रंगके बर्तनमें रक्खा जाता है तो उसमें नीले रंगकी झलक दिखाई पड़ती है।

देशीय पद्धति-(१) अगर एक बूंद दूध सोखता पर रक्खा जाये या और किसी कागजपर रक्खा जाय और जल्दी उसमें प्रवेश न करे तो समझना चाहिये कि दूध में जल नहीं मिला है।

२—पानी भरे कांच के गिलास में १ बूँद दूध डालने पर यदि उसमें से रेशे निकलें तो उसे ठीक समझना चाहिये।

अतएव हम लोगों को चाहिये कि दूध पीने के पहले ऊपर लिखी किसी एक या दो विधि से दूध की परीक्षा करके पीवें, न कि जहां कहीं; याने हलवाइयोंकी दुकानका, या कोई खराब दूध 'दूध' समझ कर पीजायें। दूध ही के कारण मोतीझरा, अतिसार इत्यादि अनेक भयंकर रोग होते हैं। रोगोत्पादक कीटाणु दूध के जरिये बहुत जल्दी मनुष्यों तक पहुंच

जाते है। अगर दूधको अधिक समय तक रखना हो तो उसके लिये निम्नलिखित पद्धतियां काम में लाना चाहिये।

१—दूध को १६७° F तक गर्म करके उसे किसी उपाय से जल्दी से ठण्डा करके ६०° F तक तक ले आये। और उसे शुद्ध स्थान में बन्द करके रखदे, ऐसा दूध २४ घण्टे तक शुद्ध रक्खा जा सकता है।

२—दूध के संरक्षण के लिये जीवाणु नाशक वस्तुएं जैसेः—बोरिक अम्ल इत्यादि भी प्रयोग की जाती है।

दूध को उबालने से दूध में जितने भी जीवाणु होते हैं वे सब मर जाते हैं। परन्तु गर्म किया हुआ दूध गरिष्ठ हो जाता है। इसके अलावे दूध में कुछ ऐसे पदार्थ रहते हैं, जिनसे कि दूध के पचने में सहायता मिलती है, वे पदार्थ अगर दूध को 70° F तक गर्म किया जाय तब तक तो नष्टनहीं होते परन्तु १००° F तक पहुंचते २ वे सारे नष्ट होजाते हैं ज्यादा गर्म करने से दूधका 'प्रोटीन' अंश जल जाता है। इस लिये बच्चोंको अथवा जिसकी पाचन शक्ति कमजोर होतो उसे सर्वथा गर्म दूध नहीं पिलाना चाहिये और यदि पिलाना भी पडे तो उसमें ताजे फलों जैसे नारङ्गी आदिका रस मिला देना उत्तम है।

दूध जो पिया जाता है वह पहले आमाशय में पहुंचता है। वहां पहुंचने पर आमाशयिक रसके मिलने से यह फट जाता है और इसके दो भाग एक छैनाके रूपमें और दूसरा कूर्च्चिका के रूप में हो जाता है। छैने में दूध के केसीन तथा बसाके भाग और कूर्चिका में लवण, शर्करा, जल का भाग रहता है। दूध से जो छैना बनता है उसका घनत्व भिन्न भिन्न दूधों के कारण कम या अधिक होता है। गाय के दूध का छैना स्त्री अथवा गधी या घोड़ी के दूध की अपेक्षा अधिक घनत्व वाला होता है। इस छैने पर जब फिर आमाशयिक रस की क्रिया होती है तब इसके छोटे छोटे टुकड़े हो जाते हैं, और इन्हीं टुकड़ों को आंते सोख लेती है। कूर्चिका का कुछ भाग खून साफ करने में काम आता है बाकी मूत्र रूप मे बाहर आ जाता है।

रोगियों अथवा बच्चों की या जिनकी पाचन शक्ति अच्छी न हो भूलकर भी अधिक घनत्व छैना बनने वाला दूध नहीं पीना चाहिये। उन्हें कम घनत्व छैना बनाने वाला दूध सेवन करना चाहिये। अगर कम घनत्व वाला दूध न मिले तो गाय के दूध में थोड़ा सा चूने का पानी मिला कर पीना चाहिये। ऐसा करने से उस दूध का छैना कम घनत्व वाला बनेगा। क्योंकि दूध की पाचन शक्ति उसके घनत्व पर ही निर्भर होता है।

महाशय दाह ने दूध आमाशय में आनेके कितनी देर बाद पचता है। इस विषय में इस तरह लिखा है —

१० छटांक बिना उबला दूध ३॥ घण्टे में पचता है।
१० „ मलाई उतारा „ ३॥ „
१० „ दही ३ „
१० „ उबाला दूध ४ „

याने इतने समय में दूध के कणों का आंतों द्वारा शोषण हो जाता है।

दूध से और भी अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाये जाते हैं। मिठाइयां तो अधिकतर खोया

मिलाकर, याने दूध का जल अंश उड़ा कर बनायी जाती हैं।

१ दही—दूध की अपेक्षा दही अधिक उपयोगी और जल्दी पचने वाला होता है। प्रोफेसर मैचनिकाफ़ ने दही की, विशेष कर खट्टे दही की बहुत प्रशंसा की है। उनका कहना है कि दही से अन्त्रियों के रोगोत्पादक जीवाणुओं का नाश होता है और आयु बढ़ती है। दही बनाने के लिये पहले दूध को गरम किया जाता है, फिर ठंडा करके उसमें थोड़ा सा दही मिला देते हैं। फिर यही दूध पाँच या छह घण्टे में दही बन जाता है। दही ज्यादा ठंड अथवा गर्मी पड़ने पर अच्छी तरह नहीं जमता है। दूध का दही रूप में परिणत होने का कारण एक प्रकार के कीटाणु होते हैं जिनसे लैक्टिक अम्ल उत्पन्न हो जाता है और दूध फट जाता है।

२- मठा— मठे का प्रयोग बहुत किया जाता है। दहीको बिलोने के पश्चात जब उसका मक्खन निकाल लिया जाता है, तब जो कुछ पदार्थ बच जाता है उसे ही मठा कहते हैं। मठा आमाशय में पहुचकर दूधकी तरह जमता नहीं है। अतएव इसका पाचन शीघ्र होजाता है।

३- छैना और कूर्चिचकाः— छैना विशेष कर रसगुल्लोंमें प्रयोग किया जाता है। दूधको गर्म कर के उसमें नीबूका रस मिला देते हैं जिससे दूध फट जाता है। दूध फट जाने पर उसमेंसे छैना पृथक कर लेते हैं। कूर्चिचका जो बच रहती है, उसका प्रयोग रोगियों अथवा दौर्बल्यावस्था में छोटे २ बच्चों को करवाया जाता है।

४- चीज़— यह योरोप में अधिक प्रयोग की जाती है। चीज़ दूध पर आमाशयिक रस जैसे रेनेट क्रिया करके बनाई जाती है। चीज़ एक उत्तम पोषक वस्तु है।

५- मक्खन— दहीको मथ करके उसमेंसे बसा के कण निकाल लिये जाते हैं। यही कण मक्खन कहाता है। घी की अपेक्षा मक्खन जल्दी पचने वाला होता है। मक्खन यन्त्र द्वारा कच्चे दूधसे भी निकाला जाता है और यह मक्खन सबसे अच्छा होता है; क्यों कि इसके विटेमिन नष्ट नहीं हो पाते। मक्खन को अधिक समय तक रखने के लिये उसमें नमक मिलाया जाता है उसमें १६ प्रतिशत से अधिक जल नहीं होना चाहिये। बेचने वाले मक्खन में प्रायः जल, पशुओं की चर्बी और दही मिला देते हैं।

६- घी— भारतवासियों का घी तो प्राण ही है सभी प्रकारकी मिठाइयों से लेकर रोटी चुपड़ने तक में घीका प्रयोग किया जाता है। अमीरसे लेकर गरीब तक घी खाते हैं। घी मक्खन को गरम कर के उसमें से जल और केसीन का अंश उड़ाकर बनाया जाता है। दूध से बढ़ कर आजकल घी में मिलावट होगई है। घी में मूगफली का आटा पिसा आलू, केलेका आटा, पशुओं की चर्बी, नरियलका तेल, अरण्डका तेल इत्यादि वस्तुएं साधारणतया मिलाई जाती हैं। आजकल बाजारमें एक प्रकारका वानस्पतिक घी बहुत बिकता है। यह घी सस्ता होता है इसलिये गरीब ग्रामीण जनता इसी घी को लेकर खाती है। यह घी होलैंड अथवा योरोपीय देशों से बनकर आता है। इसमें शुद्ध घी की अपेक्षा पोषक शक्ति बहुत कम होती है और शरीर के लिये भी यह घी हानिकारक होता है।

भैंस के दूधसे बनाये घी में गायके दूधसे बनाये घीकी अपेक्षा अधिक बसा होती है। भैंसका घी श्वेत और गौ का घी पीला होता है। जाड़ोंका तैयार घी गर्मी में तैयार घीकी अपेक्षा उत्तम माना जाता है।

७- काउमिस और केफीर- ये वस्तुएं हम लोग भारतवासी कभी भी काम में नहीं लाते हैं। काउमिस घोड़ी के दूधमें से बनाया जाता है और तातार लोग इसका विशेष प्रयोग करते हैं। केफीर साधारण दूधसे बनाया जाता है और पहाड़ी लोग ज्यादा खाते हैं। केफीर का पाचन खमीर को अपेक्षा जल्द होता है।

दूध की प्राप्ति— आजकल हम भारतवासियों के लिये दुर्लभ होगई है। यहांपर दूध बहुत मंहगा बिकने लगा है। शहरों में मंहगा तो बिकता ही है परन्तु वहभी शुद्ध नहीं मिलता। इसके विपरीत इङ्गलैंड, फ्रान्स अथवा न्यूयार्क, अमेरिका आदि देशों में वहां की जनता को सस्ता एवं शुद्ध दूध मिले इस बातकी सरकार बहुत कोशीश करती है। कोई भी अशुद्ध दूध नहीं बेच सकता। आजकल भारत में ज्यादातर डैरीफार्म खुल गये हैं। परन्तु वे इतने अल्प संख्यामें हैं कि उनका होना न होना बराबर है तो भी एक जगह अच्छा दूध मिलता है और कुछ बाहर भी बेचने के वास्ते भेजा जाता है जैसे दयाल बाग (आगरा) की दूध बेचने वाली संस्था। यहां पर दूध वैज्ञानिक रीतिसे शुद्ध तैयार करके बोतलों में बन्द करने के पश्चात बेचा जाता है। भाव भी उसका अधिक नहीं रक्खा गया है। अतएव हमें तथा शहर की म्युनिस्पिलिटियों को चाहिये कि जहां तहां इसी प्रकार के डैरी फार्म खुलवायें, ताके लोगों को शुद्ध दूध वा उससे बनने वाली चीजें कम कीमत पर मिलें।*

---

* इस लेख के लिखने में "स्वास्थ्य-विज्ञान" नामक पुस्तक की मदद ली गई है।

आदर्श बलिदान

[ले०—श्रीयुत विनयकुमार जी जैन]

[गतांक आगे]

(८)

दूसरा दिन हुआ सूर्य ने अपनी प्रखर किरणें चारों ओर फैला दीं बौद्ध गुरु अपने कुटियामें निकले उनके मुख पर हर्ष के चिन्ह थे। वे आये और विद्यार्थियों के बीच आ कर खडे हो गये। उन्हों ने विद्यार्थियों से कुशल पूछी और आशीर्वाद दिया। धीरे २ सर्व छात्र आ गये। बौद्ध गुरु ने ऊंचे स्वर मे कहा—देखो तुम्हारे सामने यह प्रतिमा रक्खी है तुम सब को इसे उलंघन करना होगा। सर्व छात्रों ने अपनी २ धोतियां संभाली वे इसे विनोद समझ रहे थे परन्तु एक ओर खड़े हृदय ही हृदय में रोने वाले अकलंक निकलंक से तो कोई पूछे कि इस का क्या कारण है। अकलंक ने अपनी धोती मे एक धागा निकाला और मूर्ति के पास जा कर खडा हो गया। उसने बौद्ध गुरु की ओर देखा और नम्रता पूर्वक बोला—गुरु जी क्या जिन प्रतिमा यही है? हाँ वेटा बौद्ध गुरु ने ला परवाही में कहा।

बौद्ध गुरु का ध्यान अब दूसरी ओर था। उस ने वह धागा चुप चाप मूर्ति पर रख दिया और अपने भाई से आ कर बोला ठीक हो गया।

वह मुस्कराया परन्तु रूखे पन से दोनों ने अपनी धोतियों के पल्ले ऊपर उठाये और अपने इष्ट देव की अपने सामने इस प्रकार आसातना देख कर क्षणिक नेत्र बन्द कर उन्हें भिगो दिया परन्तु शीघ्र ही सचेत हो गये।

कूदने की क्रिया आरम्भ हुई धीरे २ सब कूदने लगे अन्त में ये भी दोनों युवक उलंघन कर कूद गये परन्तु इनके हृदय रो रहे थे।

सब विद्यार्थियों के कूदने पर भी बौद्ध गुरु अपना कार्य सधता न देख कर चिन्ता के साथ ही क्रोध में आ गये 'बड़ा ढीठ है' यह ये वाक्य उनके मुख से अनायास ही निकल गये वे फिर भी उस छात्र का पता लगाने के लिये अपने विचारों को नाना प्रकार की बातों में बांध रहे थे परन्तु अभी तक उन्हें कोई उपाय न सूझा था वे चुप चाप अपनी कुटिया की ओर चल दिए मानों दंगल से पराजित कोई पहलवान चिन्तित मन से जा रहा हो। कुटिया में पहुंचकर उन्हों ने अपने शरीर को बिस्तर पर डाल दिया और चिन्ता की गोद में अपना मस्तक रख दिया। 'यहाँ जैन छात्र है अवश्य परन्तु न मालूम वह क्योंकर मूर्ति पर से कूद गया।' उन्हें कुछ विचार आया वे उठ बैठे और पास पड़ी पुस्तकों पर हाथ पटक कर बोले—अब कहां जायेगा बच्चू अब देखता हूं तेरी चालाकी कहां तक काम करती है। वे उठे और बाहर आये उन्हों ने अपने एक सेवक को बुलाया और कहा जावो महाराजके भंडार में से बर्तनों की जितनी बोरियां हों उठा लाओ। सेवक चला गया।

अर्ध रात्रि का भयंकर समय था। चारों ओर निस्तब्धता का राज्य था। आकाश में आज काली घटा छायी हुई थी रिम झिम २ पानी सन्ध्याकाल से ही बरस रहा था। पवन अपनी चंचलता को

छिपाये एक कोने में पड़े आराम कर रही थी। हां, सर्दी बहुत थी। मगर शान्तिके साथ अपनी लम्बी २ खुर्राटे ले रहा था। परन्तु ऐसे समय में एक मनुष्य जिसके सिरपर एक कम्बल था, एक ओर खड़ा कुछ आदमियों से बातें कर रहा था। मकान के ऊपर इन सब बर्तनों को चढ़ा दो और इनको नीचे गिरा दो। आदमी अपने काममें लगे उसने दूसरे आदमी जो उसके पास खड़े थे कहा तुम प्रत्येक कमरे में जाकर खड़े होजाओ और जिस समय बर्तन गिरे तब देखो कौन विद्यार्थी जिनेश्वर देवका नाम लेता है। उसे फौरन पकड़ कर मेरे पास ले आवो कह कर चला गया। पाठक समझ गये होंगे यह बौद्ध गुरू थे।

अर र र र र धम् की आवाजसे सारा मठ कांप गया शायद बिजली गिरी हो समझ कर सारे विद्यार्थी नींदसे उठ बैठे और इष्ट देवका नाम लेने लगे। परन्तु हमारे वीरों ने ज्यों ही मुंहसे जिनेन्द्र भगवानका नाम निकाला। दुष्टों ने उन्हें जैन समझ उनके हाथों में बेड़ियां डालदीं उन्हें झटका देकर उठाया वे उठकर पीछे २ हो लिये सारे विद्यालयमें खलबलो मच गई थी। विद्यार्थी बाहर निकल आये थे बाहिर पड़े बर्तनों को देखकर वे तरह २ के विचार कर रहे थे परन्तु वे जान न सके कि क्या भेद है।

गुरूजी दरवाजा खोलें आपके चोर पकडे गये।

प प क ड़े ड़े ग ये इन टूटे फूटे शब्दों के साथ किसी के गिरने की आवाज आई द्वार खुल गया सब अन्दर चले गये। बौद्ध गुरु ने दीपक उठाया और हमारे युवकों की सूरत देखते ही जल गया।

क्या तुम ही दोनों जैनी हो ?

हां। बड़े युवक ने निर्भय हो कर उत्तर दिया।

और अर्थ किसने लिखो ?

हमने। उसने फिर उत्तर दिया।

अच्छा जावो प्रातःकाल ५ बजे इनको सूली पर चढ़ा देना कह कर बौद्ध गुरु ने सेवकों को विदा किया वे सब उनको ले गये और ले जा कर उनको एक कमरे में बन्द कर ताला लगा दिया।

बन्धु अब तो मरना ही पड़ेगा निकलंकदेव ने अकलंकदेव से कहा।

फिर क्या हुआ। अकलंक प्रभु मुस्करा दिए।

भ्राता समाज की कुछ सेवा न कर सके बस यही दुःख है।

नहीं समाज सेवा की। हमारे इस बलिदान को क्या समाज भूल जायगी।

शायद नहीं परन्तु।

परन्तु क्या ?

हमारे पिता जी तक को तो हमारा पता नहीं।

नहीं है तो क्या हुआ भगवान हर जगह रक्षा करेंगे।

परन्तु मेरा विचार कुछ और ही है।

वह क्या ?

देखिये यह जो रस्सी बंध रही है इसी पर से लटक कर क्यों न कूद जांय।

अकलंक देव ने अभी तक रस्सी को देखा न था देखते ही वह खुशी से उछले और बोले—यह सब अधिष्ठाता देव की कृपा हुई।

कह कर दोनों भाई उठे और रस्सी पकड़ कर कूद गये। उन्हों ने तेजी से भयानक जंगल का

रास्ता लिया रात अन्धेरी थी परन्तु अधिष्ठाता देवकी कृपा से इन्हें कुछ कष्ट न हुआ बादलों को साफ कर के चन्द्र देवता ने अब चादर में से मुंह को निकाल लिया वे रास्ते पर द्रुत वेग से दौड़ने लगे।

प्रातःकाल हुआ। मुर्गों ने अपनी बोली से जगत भर को जगा दिया, बागों में मोरों ने अपनी कर्कश आवाज से लोगों को उठने का सन्देश दिया, घड़ियाल ने टन टन टन · टन ··टन करके ५ बजाए। पहरे वालों ने फाटक खोल दिए जल्लादों को साथ लेकर वे अन्दर आये। उन्हों ने मकान का कोना २ देख मारा परन्तु कैदी नदारद। पहरे वालों ने भागने की सोची वे भाग खडे हुए। जल्लादों ने यह खबर बौद्ध गुरु को दी वे सुनते ही सुन्न हो गये उनकी दशा बिलकुल ऐसी थी मानो किसी ने उनका सारा धन छीन कर घर से बाहिर कर दिया हो।

उन्होंने गरज कर कहा पहरे वालों को बुलाओ परन्तु वे तो सब पहिले ही प्रस्थान कर गये थे। लाचार होकर बौद्धगुरु ने सैनिक विभाग की ओर प्रस्थान किया। वे अपने मनमें डरा धमका कर बौद्ध बनाने का पूर्ण निश्चय कर चुके थे। सेनामें जाकर उन्होंने सैनिकों से कहा— जाओ तुरन्त दशों दिशाओंमें प्रस्थान कर जाओ और उन दोनों भगोडे लड़कों को पकड लाओ। सैनिकों को कुछ पता न था कि वे भगोड़े लड़के कौन हैं परन्तु फिर भी वे लोग अपने २ घोड़ों को संभालने लगे और उन पर चढ़कर सारी दिशाओं में फैल गये।

५ बज कर धीरे २ आठका समय होगया परन्तु हमारे युवकों की यात्रा पूरी न होसकी वे थक गये थे उनके सारे शरीरसे पसीना गिर रहा था। भ्राता मेरे में दम नहीं रहा आप कुछ देर यहीं विश्राम करलें

जो तुम्हारी इच्छा अकलंक देवने एक चट्टान पर बैठते हुए कहा।

उन्हें बैठे अभी आधा घण्टा भी न हुआ था वे लोग सामने से धूल उड़ती देखकर चौंक गये समझ गये कि अवश्य दालमें काला है। उनके मस्तिष्क में वे सब बातें घूम गईं जो बौद्धगुरु ने कही थी। निकलंकने अकलंकदेवसे कहा (उसकी वाणीमें घबराहट थी) भ्राता जी !

देखो सामने जो धूल उड रही है ये हमें पकडने के लिये घुड़सवार भेजे गये हैं।

तुम जल्दी से अपने बचावकी तरकीब करो मैं इन दुष्टों को आत्मसमर्पण कर दूंगा। अकलंक ने कहा।

क्या मैं अपना बचाव करूं ? नहीं : आप जाइये और उस तालाब में छुप जाइये और मैं अपने बचाव की तरकीब करता हूं। जाइये जल्दी कीजिये।

यह कैसे होगा अकलंक देवने रोते २ कहा।

भ्राता जी ! आप ज्ञानवान हैं, विद्वान हैं मैं समाज की उतनी सेवा नहीं कर सकता जितनी आप। बस इससे अधिक कुछ मत बोलें।

अकलंक देव घबड़ा कर उठे और तालाब की ओर लपके वे तालाब में जाकर छिप गये परन्तु उन की आंखें भीग रही थीं। शत्रु समीप आगये थे उन के द्रुतगामी घोड़े के साथ निकलंक देव कहां तक दौड़ सकते थे वे थक गये अधिक दौड़नेकी शक्ति नहीं थी गिरते पडते वे एक गांवके समीप पहुंच गये एक धोबी ने उनसे पूछा क्यों भाई कहां भाग रहे हो

अभागे ! यह देख फौज आरही है जो आगे आता

स्वागताध्यक्ष का भाषण

शास्त्रार्थसंघ के द्वितीय अधिवेशन के समय श्री० लक्ष्मीचन्द्र जी मोदी ने जो देवगढ़ में भाषण दिया वह पाठकों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया जाता है।

पूज्यवर ब्रह्मचारी गण, स्वागत कारिणी समिति के माननीय महोदय, प्रतिनिधि सज्जन, तथा सजातीय बन्धुओ! जन्मदात्री माताओ और बहिनो! आज मेरे हर्ष का पारावार नहीं है जबकि मैं अपनी इस "नवयुवक" अवस्था में अपने आपको अपने इस सजातीय मंडल में पाता हूं और आप भव्य मूर्तियों के दर्शन करके मैं अपना आज महोभाग्य मानता हूं। हमारी जाति में एक से एक विद्वान् श्रीमान् धीमान् व सुशिक्षित महानुभाव विद्यमान हैं अतएव अच्छा होता कि उन्हें यह सभापतित्व पद प्रदान किया जाता, किन्तु आप सज्जनों ने मुझ जैसे अकिञ्चित्कर व्यक्ति को चुन कर मेरा गौरव बढ़ाया है जिसका मैं अत्यन्त आभारी हूं।

जब कि मैं अपनी शक्ति की ओर दृष्टि डालता हूं तो अपने को इस महान् भार के धारण करने और उसके पूर्ण निर्वाह करने में बिलकुल असमर्थ पाता हूं क्योंकि न तो मैं बुद्धिमान् हूं न विशेषज्ञ हूं, और यह कार्य बड़े उत्तरदायित्व का है। अतएव मुझे सन्देह है कि मैं इस पद के योग्य कर्तव्यों का पालन कर सकूंगा या नहीं! तथापि "अलंघ्यं हि सतां वचः" इस नीति के अनुसार आप का आज्ञापालन करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। मुझे पूरी आशा है कि जब आप सज्जनों ने मुझे इस जातीय सेवा के उच्चासन पर आसीन किया है तो तद्योग्य अमोघ उपायों का बल भी प्रदान करेंगे। मुझे भरोसा है कि पूज्य त्यागी ब्रह्मचारीगण अपने आशीर्वाद से समवयस्क व विद्वान् अपने हस्तावलम्बन और शुभसम्मतियों से व नवयुवक अपने धर्मोत्साह उद्योग व परिश्रम से योग्य सहायता प्रदान कर मुझे कृतार्थ करेंगे। आप सज्जनों ने जिस प्रकार मुझे इस "युवावस्था" में धर्मभार सौंपा है, उसके सानंद निर्विघ्न निभा लेनेमें आप सभी भाई मेरी पूर्ण रूपसे

है मार डालती है। धोबी भी भागा परन्तु कुछ ही दूर गये थे कि शत्रुओं के कठोर चाप से मिले हुये बाण ने उन दोनों को भेद दिया। हा, वह बलिदान का समय कितना भयंकर था। उसका वर्णन करने के लिये चितेरा अपनी ब्रुस उठाने में असमर्थ था। कल्पनाकार उसे अपनी कल्पना में नहीं ला सकता था। कवि अपनी कविता में नहीं ला सकता था। पापियों ने अपने कृत्य पर सिर झुका दिया वे अपने इस कृत्यपर लज्जित होरहे थे। "वाहरे बलिदान! तू सचमुच अमर होगया। तेरे इस बलिदानको संसार गौरवके साथ याद करेगा" उन सबके मुखसे निकल पड़ा। वे चले गये बौद्ध गुरु के पास नहीं बल्कि अपनी जान बचाने क्यों कि बौद्ध गुरु ने पकड़ने की आज्ञा दी थी मारने की नहीं।

अकलंक देव तालाब से निकले अकलंक ने भ्राता को देखा रोये नहीं बल्कि गम्भीरता पूर्वक बोले। निकलंक! मेरी समाजसेवा उतना महत्व नहीं रक्खेगी जितना तुम्हारा आदर्श बलिदान।

सहायता करेंगे इसी आशासे मैं अपनी समर्थताका ध्यान छोड़ कर स्थान को ग्रहण करता हूं।

इस भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला का द्वितीय अधिवेशन देवगढ़ जैसे सुप्रसिद्ध प्राचीन एवं पूज्य स्थान में होना बड़े महत्व की बात है। साथ २ यह क्षेत्र जैन जाति के ख्यात नामा ललितपुर शहर के पास भी है जिनके उपायों से इस भूमि के स्वामी अपन हुए हैं, जो कि बुन्देलखंड प्रांत में अद्वितीय हैं। अतएव यहां की संघ शक्ति प्रशंसनीय है। यहाँ एक से एक बढ़ कर कार्यकुशल समाज के कर्णधार और बड़े २ महारथी विद्यमान होने से जिसको कि चार साल पहले देखगढ़ ऐसा कह सकते थे उसको आज वास्तविक में देवगढ़ कहने लगे। यह कहते हुए बड़ा हर्ष होता है कि देवगढ़ क्षेत्र कमेटी और विशेषतया हमारे कतिपय धर्म प्रेमी सज्जनों के (सिंघई बच्चूलाल जी सि० नाथूराम जी बरया परमानन्द जी देवगढ़ तीर्थ क्षेत्र कमेटी के) प्रयत्न से बहुत कोशिश करने पर अब यह दिव्य क्षेत्र हम लोगों को भारत सरकार से प्राप्त हो गया है। इस क्षेत्र की मनोहरता प्राचीनता और विशालता इसके दर्शन करते ही हमारे हृदय को आत्महित कर हमारे भूत पूर्व सभा के कर्मचारी गणों की उस महत्व सेवा को स्मरण करा देती है। लेकिन यही मन्दिर और मूर्ति की भूत कालीन दशा को देखने पर हृदय टूक २ हो जाता था और नेत्रों से अश्रु पात होने लगता था। यदि वास्तव में हम लोगों को अपने धर्म और धर्म स्थानों से प्रेम है तो अपन सब को चाहिये कि देवगढ़ जैसे खण्डहर प्राचीन स्थानों की मरम्मत करें और करावें।

प्रिय सज्जनो! जिस भारत वर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला के अधिवेशन में आप लोग उपस्थित हुए हैं उसका इतिहास यद्यपि अनेक कठिनाइयों और हमारी अनैक्यता का इतिहास है तो भी हमारी दूसरी समाजों और दूसरी संस्थाओं की अपेक्षा इसके द्वारा धर्म, समाज और तीर्थोंका महान उपकार हुआ है और उसे अपने प्रयत्नों में वास्तविक सफलता प्राप्त हुई है। इसका श्रेय उसके अनुयायी और कुशल कार्य कर्ताओं को है।

धार्मिक सज्जनो! मैं सब से प्रथम कुछ धर्म के विषय पर कह कर अन्य विषयों की ओर आप महानुभावों का ध्यान आकर्षित करूंगा।

प्रातः स्मरणीय पूज्य श्री स्वामी समन्तभद्राचार्य जी ने धर्म का लक्षण निम्नलिखित शब्दों द्वारा बतलाया है।

"संसार दुखतः सत्वान्, यो धरत्युत्तमे सुखे" अर्थात् जो प्राणी मात्र को संसार के दुःखों से निकाल कर उत्तम सुख में पहुंचाये वह धर्म है। जब कि जैनधर्म एक आत्मधर्म है और आत्मा की तथा उसके धर्म की अनादि-निधनता सर्व प्रसिद्ध है तब हमें यह बतलाने की जरूरत नहीं रहती कि जैनधर्म का अस्तित्व संसार में कब से है और कब तक रहेगा। क्योंकि ऐसा नियम है कि "न धर्मो धार्मिकैर्विना" अर्थात् धर्म अपने धर्मी (आत्मा) के सिवा पृथक नहीं पाया जाता। अतएव बाधक प्रमाणों का अभाव होने से जैनधर्म ही सनातनधर्म सिद्ध होता है।

जैनधर्म का सम्बन्ध किसी खास वर्ण या जाति विशेष से नहीं है किन्तु आत्मा या जीव मात्र से है।

इसी लिये श्री तीर्थंकर भगवान की सभा में पशु पक्षी तक धर्म श्रवण करनेके लिये आते थे। विचार-शील धर्मज्ञो! जब कि यह जैनधर्म अनादि स्वतन्त्र सर्व हितकारी एवं आत्मधर्म है तो ऐसे धर्म को प्राप्त कर उसके पवित्र आदेशों से अपना आत्म हित करना हमारा परम कर्तव्य है। धार्मिक उन्नति में मुख्य उद्देश्य चारित्र सुधार और आत्मा का उत्कर्ष है। जैनधर्म इस उद्देश्य की पूर्ति करने के लिये किसी प्रकार कम नहीं है। इस धर्म की नींव शुद्ध तत्वश्रद्धान पर अवस्थित है और चारित्र सुधार इस का प्रधान अंग है, पर खेद के साथ कहना पड़ता है कि आज कल जैनधर्म का असली स्वरूप एक प्रकार से लुप्त ही हुआ जाता है, जैन लोग ऊपरी दिखाव को ही असली धर्म मान बैठे हैं, किन्तु बात ऐसी नहीं है। आचार्यों ने धर्म के मार्ग को प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग इस चार कक्षाओं में बांट दिया है, अत: प्रत्येक कक्षा को तै कर आगे बढ़ने का ही लक्ष्य रखना चाहिये तभी तो इष्ट लाभ कर सकते हैं किन्तु हमें भी अभी जैन धर्म के तत्वज्ञान का भी पता नहीं है, हम लोग पूजा पाठ को ही शुद्धाशुद्ध याद कर व कुछ प्रथमानुयोग की कथाओं को केवल श्रवण कर धार्मिक ज्ञान की इति श्री कर देते हैं।

सज्जनो! उपर्युक्त बातोंका मूल कारण हमारी अज्ञान दशा ही है इस अज्ञान से समाज सन्मार्ग से च्युत हो रही है अतएव अज्ञान को हटा कर समाज को प्रकाश में लाने की अत्यन्त आवश्यकता है और इसका सहज एवं सीधा तरीका सिर्फ़ एक मात्र शिक्षा ही है।

सामाजिक सुधार संसार के सब सम्प्रदाय समाज और राष्ट्र की यही इच्छा बलवती दिखती है कि उसका किस प्रकार सुधार हो, सुख प्राप्त हो। इस उद्देश्य को सामने रख कर हम भी सुधार या उन्नति के प्रयत्न किया करते हैं। जैन जाति में अब भी "सुधार" शब्द की आवाज आती है और कितने सज्जन सुधार के प्रयत्न में संलग्न देखे जाते हैं यद्यपि इसी उद्देश्य से स्थापित अनेक बड़ी २ महा सभा जातीय सभा तथा सोसाइटियाँ भी कई होकर गुजर चुकीं किन्तु जैनियों में कोई विशेष उल्लेखनीय उन्नति के कार्य मेरे देखने में नहीं आये। ऐसा मैं इस लिये कहता हूं कि मैं एक दर्शक की हैसियत से क्या देख रहा हूं कि सुधार व उन्नति तो दूर रहा उलटी दशा दिन ब दिन बिगड़ती जाती है। उसकी जड़ कमजोर होती आती है। तरह २ की त्रुटियां हानि कारक-नवीन बातें और बुराइयां प्रवेश करती जाती हैं।

महानुभावो! हमारी सामाजिक दशा इतनी खराब होती जाती है और उस में अव्यवस्था तथा कुरीतियों ने इतना घर कर लिया है कि उनके वर्णन करने में मैं सर्वथा असमर्थ हूं। वृद्ध विवाह, बाल विवाह; कन्या विक्रय अनमेल विवाह फिजूल खर्ची आदि अनेक कुरीतियों की शिकायतें शायद ही कोई जातीय सभा और उसके सभापति ऐसे हों जिन्होंने न की हो। ये कुरीतियां हमारी इतनी जड़ खोद रही हैं कि सन १९०१ में जो १३ लाख की मर्दुम शुमारी थी वह आज दिन सिर्फ ११ लाख की रह गई है इससे साफ प्रतीत होता है कि कुरीतियां ही मुख्य कारण हैं।

बड़े दुख के साथ लिखना पड़ता है कि जब सब प्रांतों में आप लोग भ्रमण करते हैं और वहां पर आप लोग विधवा श्रम देखते हैं और सहसा प्रफुल्लित हो जाते है तब अपने प्रांत में जहां जैनियों का समुदाय बहुत है प्रांत भर में एक भी संस्था नहीं है अफ़सोस —

उदार महानुभावो ! इस अन्तिम प्रार्थना के साथ अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं कि मेरे और स्वागतकारिणी सभा द्वारा आप सज्जनों की कुछ भी सेवा नहीं बन सकी है व हम लोगों की असावधानी से, भूल से आप को बहुत आराम नहीं मिला और बहुत सी तकलीफें झेलनी पड़ीं सो उसके लिये आप लोग क्षमा कीजिए।

साथ ही साथ उन सज्जनों को धन्यवाद अर्पित करना भी हमारा कर्तव्य है जिन्हों ने कि अपना अमूल्य समय परिश्रम और सेवायें समर्पित करके मेले और अधिवेशन को सफल बनाने का प्रयत्न किया है।

ऐसे सज्जनों में स्वागतकारिणी के सभ्यगण ललितपुर और जाखलौन आदि के सज्जन और स्वयं सेवक भ्रातृमंडल, चन्द्रमण्डल एवं वीर मंडल आदि सर्व सज्जन बन्धु भी हैं। जिन्हों ने यहां पधार कर सभा और मेले की शोभा बढ़ाई है, इसके उपलक्ष्य में मैं उनको कोटिशः धन्यवाद देता हुआ एवं मुझ से कहे गये अप्रिय कटुक-कठोर शब्दों की क्षमा मांगता हुआ अपने स्थान को ग्रहण करता हूं।

बोलो श्री महावीर स्वामी की जय

ॐ शान्ति ! ॐ शान्ति ! ! ॐ शान्ति ! ! !

जापानी सेब।

यह तो सौभाग्य मानना चाहिये कि यूरोपीय देशों की स्पर्द्धा में एशियाका एक देश 'जापान' कला कौशल में अग्रसर हो गया है वह जिस वस्तु को बनाने पर तुल पड़ता है उस वस्तु का मूल्य बहुत सस्ता हो जाता है उतने सस्ते मूल्य पर अमेरिका, जर्मनी, इङ्गलैण्ड आदि कोई भी व्यापार प्रधान देश उस वस्तु को नहीं बेच सकता। जो रेशमी कपड़ा भारतवर्ष में विलायतों से आकर ढाई रुपये गज बिकता था वही कपड़ा अब जापान से आकर ४-५ आने गज बिकता है जापानी मोटरों का भारतवर्ष में आना कठिन बना दिया है अन्यथा मोटरोंका मूल्य यहां बहुत कम हो सकता है। यह हाल उन सब पदार्थों का है जो कि जापान से बन कर आ रहे हैं, किन्तु इस जापानी व्यापारिक आक्रमण से दरिद्र भारत की बहुत हानि होरही।

अब जापान फल, मेवों के व्योपार में पैर आगे बढ़ा रहा है अभी कुछ दिन पहले जापान से भारत वर्ष में ५० हजार बक्स आये थे जिन में ५ लाख जापानी सेब थे उन पर लगा हुआ तटकर (कस्टम ड्यूटी) चुका कर जब उनको मुनाफे के साथ बेचा गया तो वे सेब देशी सेबों की अपेक्षा सस्ते थे और देखने में बड़े तथा सुन्दर थे। यदि जापान ने अपने फलों को इस तरह सस्ते मूल्य पर भारतवर्ष में भेजना प्रारम्भ किया तो इस में सन्देह नहीं कि एक दिन भारतवर्ष फल मेवों के लिये दूसरों का मुहताज बन जावेगा।

मेरी सत्य कामना

(ले०-पं० छोटेलाल जी बरैया आमोल निवासी)

दोष अठारह रहित हुये जे बने सर्वदर्शी जग ईश,
मोक्ष मार्ग का ज्ञान कराते उन्हें नमाते हम नित शीश
चाहे हों वे ब्रह्मा, विष्णू, शंकर, बुद्ध तथा महावीर,
वे ही सच्चे देव हमारे जो पहुंचे भवदधि के तीर।

जगदम्बे अम्बे जग जननी तू जीवन की प्राणाधार,
नय प्रमाण असि तेरे भुजमें करती मिथ्या रिपु संहार
जो आते शरणागत तेरी लेकर उनका रक्षण भार,
वेद, पुराण, अनेक रूप बन तू करती जगका उद्धार।

कंचन कांच बराबर जिनके निन्दक वंदक एक समान
विषयाशा हन करुणा पालें करते पर उपकार महान,
जगकी विषय वासनाओं पर शान्तचित्त हो विजय करें,
परम तपोधन ज्ञानी गुरु वे जग जीवन कल्याण करें।

उनकी संगति सदा रहे अरु मन मन्दिरमें ध्यान धरूं,
उनके जैसे आचरणों को प्रतिदिन हिरदे माहिं धरूं,
जीवमात्र सब मित्र बराबर सत्य वचन नित कहा करूं
चोरी तजूं, तजूं पर रमणी शान्ति सुधारस पिया करूं

क्रोध मान माया को तजकर लोभ अरीका दमन करूं,
पर सम्पत्ति पर विभव देखकर कलुषित हृदयी नहीं बनूं,
ऐसे भाव रहें उर मेरे कुटिल भाव का त्याग करूं,
स्वारथत्यागी बनूं सदा मैं निज आतम कल्याण करूं।

बुरा भला कहने पर भी मन धर्म ओर झुकता आवे,
सन्मारगपर गमन करूं नित सत् परिणत मम हो आवे,
गुणग्राही मैं बनूं निरंतर द्वेष भाव का त्याग करूं,
दीन दुखी जीवों को लखकर उरमें करुणा भाव धरूं।

पाकर सम्पत्ति गर्व करूं नहिं विपदामें शम भाव धरूं,
वैर और अभिमान त्याग कर व्रत संयमको ग्रहण करूं,
सदाचारसे प्रीति धारकर मनुज जनमको सफल करूं,
ज्ञान चरित की उन्नति करके देश जाति उद्धार करूं।

सद्बुद्धी राजागण होवें प्रजा नृपति से प्रीत करे,
धर्म अहिंसा घर घर फैले जग जीवन कल्याण करे,
"छोटे" बड़े परस्पर हिल मिल आपसमें सब प्रेम करें,
यही भावना सच्ची मेरी वीर पाठ मुख पढ़ा करें।

सभापति का भाषण

शास्त्रार्थसंघ के द्वितीय अधिवेशन के समय श्रीमान राय साहिब ला० नेमिदास जी शिमला ने जो देवगढ़ में भाषण दिया वह पाठकों के अवलोकनार्थ प्रकाशित किया जाता है।

पूज्य त्यागी-वर्ग, विद्वन्मंडली व माननीय सज्जनो तथा आदरणीय महिलागण !

आज हम परम पवित्र अतिशय-क्षेत्र पर आप धार्मिक बन्धुओं को एकत्रित देखकर मुझे बड़ा हर्ष होरहा है। इस अतिशय क्षेत्र के मेले के साथ "श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ" का वार्षिक अधिवेशन होना "सोनेमें सुगंध" कहावत को चरितार्थ कर रहा है। सचमुच मेला कमेटी का इस पावन अवसर पर जैन समाजकी विख्यात संस्था 'संघ' के वार्षिक अधिवेशन का विशाल आयोजन कराना उस की उत्कृष्ट धार्मिक लग्न, समाज हितैषिता और दूरदर्शिता का परिचय कराता है। इस अवसर पर आपने ऐसी विशाल संस्था के सभापति पदके लिये मुझे निश्चित किया है। जैन समाजमें उत्कृष्ट विद्वान अनुभवी समाज सेवी बहुतसे योग्य व्यक्ति इस पद के लिये मौजूद हैं। क्या ही अच्छा होता कि आप मेरी अपेक्षा किसी योग्य व्यक्ति को चुनते ? अस्तु ! आपसे मेरा अबतो यही निवेदन है कि इस कार्य में आप मुझे सहयोग और सहायता दें।

यह अतिशयक्षेत्र जैनियोंका छोटा श्रवणबेलगोल है। यह किला, कोट, जिन मंदिरपंक्ति, सहस्रकूट, चैत्यालय, ज्ञानशाला, जैनस्तूप, विशालकाय और मनोज्ञ जैन प्रतिमाएं, प्राचीन समय के जैनियों और जैनधर्म के प्रभाव और उन्नत गौरव को प्रदर्शित कर रही हैं। ये मन्दिर ८०० वर्ष पूर्व इस भव्यस्थान पर निर्माण किये गये थे। यहांकी एक एक वस्तु ऐतिहासिक अनुसंधान के काम की है। अभी ४ या ५ दिनकी बात है कि मेरे मित्र के० एन० दीक्षित—जो कि सरकारी पुरातत्व विभाग के डिप्टी डाइरेक्टर जनरल हैं-से बातचीत हुई। उन्होंने यहाँ के सैकड़ों शिलालेखों, स्तूपों, मन्दिरों आदि के भव्य चित्र तथा यहां के इतिहास के विषय के मोटे२ पोथे दिखाये। मुझे ज्ञात हुआ है कि यह सब कार्य सरकारी पुरातत्व विभाग के डाइरेक्टर स्वनामधन्य राय बहादुर दयाराम साहनी ने यहां स्वयं रहकर किया था। जिसके लिये साहनी साहिब जैन समाज की ओरसे धन्यवाद के पात्र हैं। यह भव्यस्थान पूर्व में अवश्य पहिले जैनधर्म की नगरी रही है। यहाँका एक एक खण्डहर और स्थान इस बातकी साक्षी दे दे रहा है।

सज्जनो ! इस शास्त्रार्थ-संघ का जन्म ६ वर्ष पूर्व हुआ था। इस संस्था का शैशवकाल बड़ा मनोहर और मनोरञ्जक है। यह 'संघ' पूर्वमें अम्बाला की स्थानीय संस्था थी। इसके उद्देश्य और कार्यपद्धति जनता को ऐसी हितकर और रुचिकर प्रतीत हुई कि इसके थोड़ेसे ही जीवनसे भारतवर्षकी जैन समाजका ध्यान इस की ओर आकर्षित हुआ। और इसके शैशवकाल के २ वर्ष में ही इस संस्थाका नाम "श्री अखिल भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थसंघ" हो गया। इस का श्रेय अम्बाले के उत्साही भाइयों

और विशेष कर इसके संरक्षक श्रीमान् लाला शिब्बा मल जी रईस अम्बाला और सुयोग्य मन्त्री पं० राजेन्द्रकुमार जी को है, जिन्हों के शुभ प्रयत्नों व कार्यों से यह संस्था इतनी उन्नत हुई है। मेरी सम्मति में जैन समाज की किसी भी अन्य संस्था ने इतनी शीघ्र उन्नति नहीं की है। जिसका प्रधान कारण यह है कि जैन समाज में ऐसी संस्था की अत्यन्त आवश्यकता थी। प्रातःस्मरणीय स्वर्गीय पं० गोपालदास जी आदि विद्वानों के प्रयत्नों से कुछ धार्मिक संस्थाओं के खुलने से जैन जनता में धार्मिक और सैद्धान्तिक ज्ञान तो हुआ, किन्तु इस विज्ञान युग में अजैनों में जैनधर्म सम्बन्धी ज्ञान कम था। इसी कारण से अन्य समाजों की ओर से जैनधर्म के सिद्धान्तों पर हमले होते आ रहे थे। जैन धर्म के सिद्धान्त; न्याय और साहित्य की कहीं पूछ तक नहीं थी। जैन समाज में जैन सिद्धान्तों को वर्तमान ढङ्ग से प्रचार करने वाली कोई सुसङ्गठित संस्था नहीं थी। इससे जैन समाज की बड़ी क्षति हो रही थी। सर्वज्ञ भाषित, युक्ति विज्ञानसे सत्य प्रमाणित और सब से प्राचीन जैन धर्म के सिद्धान्तों के सर्व साधारण में प्रचारकी त्रुटि प्रत्येक धार्मिक सज्जन के हृदय में खटकती थी। इस कमी की पूर्ति करने के प्रधान उद्देश्य से ही इस संस्था का जन्म हुआ है।

इस संस्था के निम्नलिखित भाग हैं—

(१) अनुसंधान विभाग (२) पुस्तकालय विभाग (३) उपदेशक विभाग (४) शास्त्रार्थ विभाग (५) प्रकाशन विभाग (६) पत्र विभाग (७) अन्य आवश्यक कार्य।

जैनधर्म इतना विशाल और प्राचीन होने पर भी इतिहास की पुस्तकों में इस का बहुत कम वह भी असत्य सा हाल मिलता है। संघ ने इस विषय में अनेक उपयोगी अनुसंधान किये हैं। वैदिक साहित्य के प्रमाणों पर जैन सिद्धान्त की मान्यताओं को सिद्ध किया गया है। यह कैसा महत्वपूर्ण विषय है। वैदिक कालीन भारत का धार्मिक इतिहास आदि आवश्यकीय विषय अब तक अंधेरे में हैं, जैन इतिहास की खोज में इससे बड़ा धक्का लगा है। इसका ठीक ठीक पता न लगने से जैन धर्म के सार्वजनिक सिद्धान्तोंकी महत्ता और सर्वसाधारण जनों में इन के प्रचार में अब तक बड़ी रुकावट रहा है। संघ ने ऐतिहासिक अनुसंधान कार्य अपने हाथ में लिया है। 'संघ' ने पंजाब यूनिवर्सिटी के इतिहास में जैन धर्म सम्बन्धी विषयों में संशोधन कराया है। फिर भी अब तक भारत के प्राचीन इतिहास की एक क्रम काया पलट होनी चाहिये। यह होना तभी साध्य है जब कि इसमें पर्याप्त अनुसन्धान कराया जाय। मेरी राय है कि जैनियों का इतिहास आरकोलॉजिकल म्युजियम विभाग पृथक होना चाहिये। यदि यह कार्य हो सके तो जैन समाज का बड़ा हित होगा।

संघ का प्रधान कार्य प्रचार है। संघ ने इस कार्य को भारत के सभी प्रान्तों में सैकड़ों स्थानों पर किया है। इस विषय में सङ्घ का प्रधान उद्देश्य यह ही रहा है कि जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार जैन तथा खास कर अजैनों में हो, इन्हीं की महत्ता और सत्यता प्रमाणित करते हुए श्री सर्वज्ञ वीर प्रभु के उदार धर्म का विश्व में प्रचार हो। वर्तमान

समय में धार्मिक शास्त्रार्थों की परिपाटी भी प्रचलित हो गई है। कुछ समय पूर्व जनता के कुछ २ ऐसे विचार हो गये थे "शास्त्रार्थों से कोई लाभ नहीं बल्कि क्षति होनेकी सम्भावना है" किन्तु इस विज्ञान युग में उन प्राचीन शास्त्रार्थोंकी पद्धति नहीं रही। जनता एक दूसरे के धार्मिक सिद्धान्तों को सुनना ही पसन्द नहीं करती, किन्तु उन्हें सत्यासत्यकी कसौटी पर परख उन्हें स्वीकार करना भी चाहती है। यह विचार स्वतन्त्रता का युग है। जनता कपोल कल्पित विषयों पर विश्वास नहीं करती। वैतरणी पारके ठेकेदार, स्थिति पालक पण्डितों और मुल्लाओं के डंडे से धर्म विषय में जनता न हांकी जायगी। जनता धर्म के विषय में यह चाहती है "सत्य और उसे भी विचार की कसौटी पर रक्खेगी"। जिस जैन धर्म के उपदेशक श्री भगवान समन्तभद्र स्वामी जी वीर प्रभु की स्तुति में कहते हैं कि हे प्रभु! मैं आपके वचनों को इस लिये प्रमाण मानता हूं क्यों कि वे युक्ति से ठीक हैं" जैन धर्म उसी विषय का प्रमाण मानता है जो युक्ति और तर्क से सिद्ध हो सकता है अतः जैन समाजके लिये शास्त्रार्थ अत्यन्त आवश्यक है। हमारा इतिहास कहता है कि जैन धर्म का अस्तित्व और प्रचार शास्त्रार्थों से अधिक हुआ है। प्रातःस्मरणीय श्री अकलंक और निकलंक ने बौद्धों से शास्त्रार्थ कर इस लुप्तप्राय जैन धर्म का प्रचार किया था। जब से शास्त्रार्थ संघकी स्थापना हुई है तब से समाज में जितने भी शास्त्रार्थ हुए हैं, वे सब शास्त्रार्थ संघ के उत्तरदायित्व पर ही हुए हैं। इन्हीं में आशातीत अभूतपूर्व सफलता मिली है। अम्बाला, केकड़ी, सम्भल, पानीपत, खतौली, मेरठ, झांसी, जबलपुर, देहली, मुलतान आदि के शास्त्रार्थों से जैन धर्म की प्राचीनता, सत्यता और महत्ता खूब फैली है। जहां जहां पर ये शास्त्रार्थ हुए हैं वहां की जैन जनता में अच्छा धार्मिक जोश पैदा हुआ है। इन शास्त्रार्थों से सब से बढ़कर यह लाभ हुआ है कि अजैन विद्वानों की रुचि जैन सिद्धान्तों के अध्ययन की ओर झुकी है। इस विषय में यहां पर एक बात और कहनी उचित है। यद्यपि जैन सिद्धान्तों का वर्णन प्राकृत संस्कृत के बड़े २ ग्रन्थराजों में मौजूद हैं। इस समय बड़ी आवश्यकता है कि नवीन पद्धति से इन्हीं का वर्णन अन्य मतों की तुलनात्मक दृष्टि से किया जाय। सैद्धान्तिक विषयों के छोटे छोटे २ ट्रैक्ट शास्त्रार्थ संघ के प्रकाशन-विभाग से निकाले जांय और जैन अजैन विद्वानों को भेंट किये जांय। यह सङ्घ के शास्त्रार्थों का ही शुभ फल है कि स्वामी कर्मानन्द जी महाराज ने अपना आत्मधर्म पहिचान लिया। स्वामी जी आर्यसमाज के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान थे। आपने जैन शास्त्रों का अध्ययन खण्डन की दृष्टि से किया था। किन्तु श्री जैनधर्म के सिद्धान्तों को सत्य की कसौटी पर कसने के बाद आपने इसी धर्म को केवल वास्तविक आत्म-धर्म समझा और इसमें आप दीक्षित हुए हैं। समस्त जैन समाज आपका हार्दिक स्वागत करता है। आज आप इस धर्म के पालक ही नहीं, किन्तु आदर्श प्रचारक हैं। शायद २० वीं सदी में ऐसे प्रौढ़ अजैन विद्वान को जैनधर्ममें दीक्षित करनेका श्रेय शास्त्रार्थ संघ को ही प्राप्त हुआ है। आज समस्त जैनसमाज शास्त्रार्थ सङ्घ की ओर बड़ी आशाओं से देख रहा है।

संघ अपने को केवल शास्त्रार्थ और प्रचार में ही नहीं लगा रहा किन्तु समय समय पर समाज के आवश्यकीय विषयों पर और विविध समस्याओं के सुलझाने में भी अपनी शक्ति को लगाता रहता है। उदाहरणार्थ यह कहना भी ठीक होगा—इन्दौर गवर्नमेन्टने अपने राज्यमें दिगम्बर जैन मुनियों पर पाबन्दी लगाई थी जिससे समस्त जैन समाज में क्षोभ हुआ था। किन्तु शास्त्रार्थ संघ ने उस पाबन्दी को हटाने में प्रबल प्रयत्न किया और उसमें कृतकार्य हुआ। कुड़ची अत्याचार काण्डकी स्मृति भी आपके चित्त से नहीं गई होगी। उसको ठीक करना भी संघका काम था भिवानी मन्दिर काण्ड, खेखड़ा काण्ड आदिके प्रतिकार के लिये भी संघने प्रयत्न किया था। कर्वीन्स कालेज के पाठ्यकोर्स में जैन पुस्तकों को स्वीकार कराना पंजाब-सरकारी इतिहास विभाग में जैन प्रतिनिधित्व का स्थापित कराना आदि संघ के सराहनीय कार्य हैं। इस संघका प्रमुख पत्र "जैन-दर्शन" है। अभी यहभी २ वर्षका शिशु है यह भी संघ के सिद्धान्तों का प्रचार कर रहा है। पत्रकी नीति रीति उत्तम है। वर्तमान समयमें जैनसमाजकी अवस्था अवनति की ओर प्रतिदिन जारही है। कुप्रथाओं और रूढियों ने सामाजिक सदनको खोखला कर दिया है। जैनसमाज निर्जीवसी होगई है, आत्म बल बिलकुल दब चुका है। इधर वर्तमान फैशन, फिजूलखर्ची ने हमारे गार्हस्थ्य जीवन को भार रूप और दुःखद बनादिया है। समाज सुधारक सुधारों को पुकार २ कर थक गये हैं। जैनसमाज बहरी है। जैन समाजकी अवस्था अवश्य शोचनीय है, किन्तु सुधारक रूपी चिकित्सकों ने भी योग्य चिकित्सा नहीं की। हमारा अब तक कोई योग्य संगठन नहीं हुआ। सुधारकी मशीन सभाओं के प्रस्ताव तक ही रहती है वह भी कुछ दिनों तक। वास्तव में सभाके पास प्रस्तावों को अमली जामा पहनाना और जनता में उन्होंके ऊपर चलने की रुचि करना ये प्रधानतया संगठन और प्रचार पर निर्भर है। वर्तमान में इन विषयों की पूर्ति इस बीसवीं सदी में योग्य प्रचारक या समाचार पत्र ही कर सकते हैं। समाचार पत्र को अपना उद्देश्य केवल अखाड़ेबाजी नहीं रखना चाहिये बल्कि उपर्युक्त विषयों की ओर यदि वे अपना ध्यान दें तो वास्तव में वीर प्रभु के धर्म पर चलने वाली इस जैन समाज का भारी कल्याण कर सकते हैं।

मैं इस अवसर पर आपका ध्यान समाजकी शिक्षा पर भी दिलाना चाहता हूं। जैन समाज में शिक्षाका कोई समुचित प्रबन्ध नहीं। समाजमें धार्मिक शिक्षा के लिये यत्र तत्र कुछ अंगुलियों पर गिनने योग्य पाठशालाएं हैं, जिनमें औद्योगिक शिक्षा का कोई भी प्रबन्ध नहीं। इसके अभावसे जैन विद्वानों को बड़ी आपत्तियें उठानी पड़ रही हैं। यही कारण है कि इन संस्थाओं में छात्रोंकी संख्या घटती जाती है। अतः औद्योगिक शिक्षा का होना इन संस्थाओं में अत्यन्त आवश्यक है। जैन समाज शिक्षा में बहुत पीछे है। केवल ५ या ६ हाई स्कूल हैं। जैन हाई स्कूलों और बोर्डिंग हाउसोंकी देशके मुख्य २ बड़े २ शहरों में आवश्यकता है। जहां पर लौकिक शिक्षाके साथ २ धार्मिक शिक्षाका भी समुचित प्रबन्ध हो। भले प्रकार अनुसन्धान करने से मालुम हुआ है कि

देहली, बनारस कलकत्ता, लाहौर, इलाहबाद, आगरा इन्दौर, बम्बई, अहमदाबाद आदि स्थानों पर कालेजों में पढ़ने वाले जैन छात्रों की संख्या अच्छी है। छात्रोंकी बढ़ती हुई संख्या को देखकर अब जैन कालेज खोलना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा होनेसे जैनसमाज को बड़ा लाभ और गौरव प्राप्त होगा।

प्रिय सज्जनो! मैं अब आपका ध्यान एक अत्यन्त आवश्यक विषय पर दिलाता हूं। हमारे शास्त्रों में सोलह संस्कारोंका विधान कहा है और ये संस्कार प्रत्येक के लिये गर्भाधान से लेकर शरीर त्याग तक के संस्कार हैं। किन्तु जैनसमाज में आज शास्त्रीय पद्धतिसे संस्कार नहीं किये जाते। प्राय वे संस्कार अजैनों के द्वारा कराये जाते हैं। इन्होंका फल भी कुछ ऐसा ही होरहा है। समाज के पण्डितों विद्वानों को कार्यक्षेत्रमें प्रवेश करने के पूर्व Practical training. देनेकी आवश्यकता है जो इस कार्य को भली प्रकार स्वयं सम्पादन करा सकें। हमारे विद्वान विद्यालयों से अध्ययन कर निकलते हैं किन्तु उन्हें शास्त्रार्थ करना, प्रतिष्ठा कराना, व्याख्यान देना, पुस्तकों का सम्पादन करना आदि उपयोगी कार्यों की व्यावहारिक रूपसे ट्रेनिंग नहीं मिलती है। अन्य धर्मी विद्वान आपको इन विषयों में ट्रेन्ड मिलते हैं जिससे वे केवल अपने समाज की ही सेवा नहीं करते, किन्तु सार्वजनिक कार्यको बड़े सुचारु रूपमे कर रहे हैं। इसका प्रधान कारण यह है कि उस विषय की Practical training. वे प्राप्त कर लेते हैं। जैनसमाजके लिये ऐसे जैन शास्त्रार्थ ट्रेनिंग विद्यालय की अत्यन्त आवश्यकता है। इसमें उपर्युक्त कार्यों के करने की ट्रेनिंग मिलने से वे सब कार्य उत्तम रूपसे कर सकेंगे। इसमें जैन भजन मंडली आदि के शिक्षण का भी प्रबन्ध होना आवश्यक है। क्योंकि प्रचार कार्य में इनकी बहुत जरूरत पड़ती है। मुझे आशा है कि आप शास्त्रार्थ संघ के विद्यालयकी स्कीमको समाजके लिये अत्यन्त हितकर समझ अवश्य कार्य रूपमें लावेंगे। इस कार्यको आरम्भ करने के लिये द्रव्यकी आवश्यकता है। मैं जैन समाज के श्रीमानों से इसके लिये निवेदन करूंगा कि वे ऐसे पुण्य कार्य के लिये शीघ्र ही दान दें। दान ही जगमें सार है, इस भव तथा परभवमें सुखदायक है।

जैन समाज के सम्बन्ध में कितनी ही और आवश्यक बातें हैं जिनका कहना और विचार करना आवश्यकीय है। परन्तु उन सबों को इस छोटेसे भाषण में मैं आपके सामने नहीं रख सकता।

मैं इस संघके योग्य महामन्त्री श्रीमान पंडित राजेन्द्रकुमार जी और संरक्षक श्री० ला० शिब्बामल जी जैन रईस अम्बाला की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता। ये दोनों महोदय इस आदर्श संस्थाके जन्मदाता और पालन पोषण करने वाले हैं। मैं तो इन दोनोंको इसका बाह्य और अभ्यन्तर प्राण कहूं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जैन समाज आपकी इन सेवाओं की बड़ी आभारी है। जैन समाज के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान वाणीभूषण पं० तुलसीराम जी काव्यतीर्थ ने इस संस्थाकी कार्य-पद्धति, प्रचार और प्रतिष्ठामें अपना बहुमूल्य समय लगाया है और आप अब भी इसके लिये निरन्तर उद्यमशील रहते हैं। पण्डित जी महोदयकी जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी है। एतदर्थ पण्डितजी के लिये मेरा हार्दिक धन्यवाद

है। इसके सिवाय पण्डित माणिकचन्द्र जी, पं० अजितकुमारजी शास्त्री, पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री, पं० मंगलसेन जी, पं० चैनसुखदास जी शास्त्री आदि विद्वन्मंडली इस संघके कार्य को आदर्श ढंगसे कर रही है। उनको मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूं। मैं इस अवसर पर जैन-कोकिला श्रीमती लेखवती जी एम० एल० सी० को हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इन्होंने शास्त्रार्थ संघको बड़ी सहायता की है। कई एक स्थानों पर, जहां पर कि शास्त्रार्थसंघके व्याख्यानादि हुये, वहां श्रीमती जीने अपने प्रभावशाली व्याख्यानों से जनताको लाभ पहुंचाकर शास्त्रार्थसंघका हाथ बटाया है तथा बा० जयभगवान जी वकील और बा० महावीरप्रसाद एडवोकेट को भी धन्यवाद है। संघ को समाज के जिन श्रीमानों ने सहायता की है मैं उन्हें भी धन्यवाद देता हूं।

सज्जनो! आप भिन्न २ स्थानों से ऐसी शीत ऋतु में दूर २ से पधार कर इस पंडालकी शोभा बढ़ा रहे हैं। इसके लिये मैं आपका अत्यन्त आभारी हूं। मेलेकी स्वागतकारिणी समिति के धर्म प्रेमी और उत्साही कार्यकर्ताओं से मिलकर मुझे अत्यन्त हर्ष हुआ। आप उत्साही भाइयों ने श्री शास्त्रार्थ संघका वार्षिक अधिवेशन इस क्षेत्र पर कराकर बड़ा महत्व-पूर्ण कार्य किया है। आप सज्जनोंके प्रबन्ध, आतिथ्य और सौजन्य ने मेरे हृदय को बड़ा आकर्षित कर लिया है। कमेटी के सुयोग्य अध्यक्ष सेठ लक्ष्मीचंद्र जी मोदी सागर, मन्त्री श्रीमान सेठ नाथूरामजी सिंघई और श्रीमान बा० हरिप्रसादजी बी० ए० एल० एल० बी० वकील आदि सज्जनों के उत्साह धर्म-स्नेह और प्रबन्धकी जितनी भी प्रशंसा कीजाय थोड़ी है। समिति के सभी सदस्योंको मेरा हार्दिक धन्य-वाद है।

श्री देवगढ़ मेला अधिवेशनके माननीय सभापति श्रीमान राय बहादुर ला० नन्द किशोर जी बी० ए० आई० एस० ई० रिटायर्ड सुपरिन्टेन्डिङ्ग इञ्जीनियर, देहली को हार्दिक धन्यवाद है। आपके सभापतित्व में इस अतिशय क्षेत्र का अधिवेशन इतने बड़े आयो-जन और सफलता के साथ होरहा है। आपके द्वारा इस अतिशय क्षेत्रके बड़े २ कार्यों के होनेकी आशा है श्री० दि० जैन अनाथाश्रम देहली के प्रचारक पंडित मक्खनलालजी तथा इसके सुयोग्य मन्त्री ला० महा-वीरप्रसाद जी तथा इस संस्थाकी भजन मंडलीका अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंके पधारनेसे इस अधिवेशन की शोभा बहुत बढ़ गई है। मैं स्थानीय जोइन्ट मजिस्ट्रेट व कलक्टर साहिब आदि अधिकारियों का अत्यन्त आभारी हूं जिनकी कृपासे यह शुभ कार्य सम्पादन होरहा है।

आप सज्जनों ने जो मुझे यह सम्मान दिया है। इसके लिये मैं आपका अनुगृहीत हूं। श्री भा० दि० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ और स्वागतकारिणी समिति की कृपासे मैं इस अतिशय क्षेत्रके दर्शन कर अपना अहोभाग्य समझता हूँ।

मैंने आपका अधिक समय ले लिया है। इसके लिये मैं क्षमार्थी हूं। अन्तमें श्री जिनेन्द्रदेवसे यही प्रार्थना है कि सबका यह अधिवेशन सफल हो।

शांति !　　　शान्ति !!　　　शान्ति !!!

देवगढ़ मेले पर पठित
स्वागत गान

[कल्याण कुमार जैन 'शशि']

स्वागत सादर नित्य निरत हे गुणआगर! आओ आओ।
अन्धकार नभ के प्रकाश हे उजआगर आओ आओ।
प्रेम प्यार एकत्व धारके, रससागर! आओ आओ।
शासनधार जातीय सुधारक, महिमाकर आओ आओ॥

मानतीय श्री नेमिदास लक्ष्मीपति लक्ष्मीचन्द्र आओ।
बाबू नन्दकिशोर शुष्क जग पर किशोरता बरसाओ।
मोदी लक्ष्मीचन्द्र मोदसे, हृदय हमारे सरसाओ।
रायबहादुर साहस भरकर, वीरभाव हम में लाओ।

खड़े बिछाये हृदय खड़े हम सब हरषाने वाले।
हैं अधिकारी आप मेर, श्रद्धाञ्जलियाँ पाने वाले।
बने आप इस जैन जातिमें नवजीवन लाने वाले।
शशि सीकर बन क्षेत्र देवगढ़ जगमें चमकाने वाले।

अभिलाषा है यही आपके द्वारा हो अपूर्व उपकार।
गूंज उठे फिर जैनधर्मकी जय जय से सारा संसार॥

देवगढ़ मेले पर पठित
स्वागत गान

[घासीराम जैन 'चन्द्र']
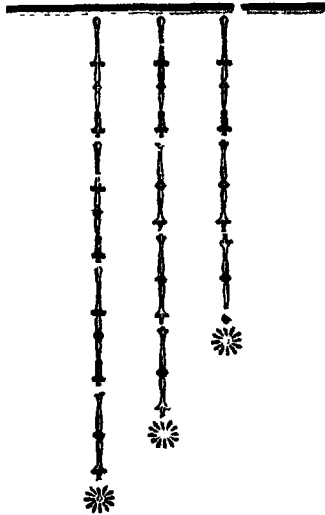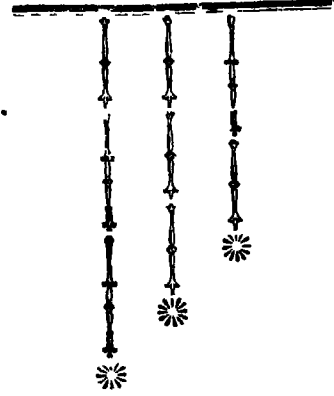
स्वागत स्वागत स्वागत आवो जैन जाति के नन्द किशोर।
देख तुम्हें होरहा हृदय में अति अनुपम सुख शान्ति विभोर॥
करके कृपा पधारे प्रियवर तनिक निहारें है इस ओर।
कष्ट उठाये विविध आपने धर्म कार्य के लिये कठोर॥

स्वागत 'नेमिदास जी' आओ देख रहे जिमि चन्द्र चकोर।
धन्य हुए हैं स्वागत करके आये करो कृपा की कोर,
मन विमुग्ध होरहे हमारे, बन्धु आपको यहां निहोर।
स्वागत स्वागत यही शब्द हैं उठी हृदय में प्रेम हिलोर॥

स्वागत के हित फूल सजायें या लायें मणियोंके हार,
अथवा सुरभित सरस सुमन बरसा कर होजावें बलिहार,
मौक्तिक मालाएं न पास हैं नहीं पास हैं हीरक हार,
पास हमारे हृदय हार हैं डाल रहे जो बारम्बार॥

दूर दूर से आप पधारे धर्म तीर्थ की दशा निहार,
आशा है श्रीमन् निज करकमलों से कर दें उद्धार,
पत्थर और पहाड़ों वासी कर जाने हम क्या सत्कार?
प्रेम-पाश परिबद्ध हुए हैं लेकर प्रेम पूर्ण उपहार॥

देवगढ़ मेला समाचार

देवगढ़ मेला के सभापति महोदय ता० ६ के १२ बजे दिन को कार द्वारा पहुंचे। आपके साथ आप की धर्मपत्नी तथा आपका कनिष्ठ प्रिय पुत्र भी था। देवगढ़ पहुंचते ही आपका स्वागत बड़े गाजे बाजे तथा हार पुष्पादि द्वारा किया गया। और आपको बड़े सन्मान के साथ सभा भवन में पहुंचाया गया फिर शास्त्रार्थ संघके सभापति श्रीमान् राय साहिब ला० नेमिदास जी देहली, स्वामी कर्मानन्द जी, श्रीमती पण्डिता लेखवती जी एम० एल० सी० अम्बाला और श्रीमान् लाला शिब्बामल जी रईस अम्बाला का भी स्वागत बड़े गाजे बाजे और हार पुष्पादि द्वारा किया गया और सभा भवन में पहुंचाया गया। एक बजे दिन से श्री देवगढ़ मैनेजिंग दि० जैन कमेटी के द्वितीयाधिवेशन की कार्यवाही प्रारंभ हुई। इस समय जनता करीब डेढ़ हजार के उपस्थित थी जिन में से मुख्य २ ये हैं—

१ श्री० रायबहादुर बाबू नंदकिशोर जी रिटायर्ड इञ्जीनियर देहली
२ ,, रायसाहब ला० नेमिदास जी देहली
३ ,, ला० शिब्बामल जी अम्बाला
४ श्रीमती पंडिता लेखवती जी एम० एल० सी० अम्बाला
५ श्रीमान् बाबू रघुवरदयाल जी एम० ए० देहली
६ ,, ला० मामचन्दराय जी देहरादून
७ ,, ला० कुंवरराज जी डेरागाजी खां
८ ,, सेठ देवीचन्द जी मंदसौर
९ ,, बाबा ठाकुरदास जी मुरैना
१० ,, पंडित मोतीलाल जी पपौरा
११ ,, न्यायालंकार पं० मक्खनलालजी मुरैना
१२ ,, पं० देवकीनंदन जी शास्त्री कारंजा
१३ ,, पं० कस्तूरचन्द जी नायक जबलपुर
१४ ,, पं० बंशीधर जी बीना
१५ ,, पं० श्यामलाल जी न्यायतीर्थ ललितपुर
१६ ,, पं० रमेशचन्द्र जी न्यायतीर्थ खुरई
१७ ,, पं० नाथूराम जी वैद्य रेवाड़ी
१८ ,, पं० मुन्नालाल जी कम्भड़
१९ ,, पं० मंगलप्रसाद जी शास्त्री ललितपुर
२० ,, पं० राजधर जी शास्त्री ,,
२१ ,, पं० राजेन्द्रकुमार जी शास्त्री अम्बाला
२२ ,, स्वामी कर्मानन्द जी अम्बाला
२३ ,, सेठ राजमल जी झांसी
२४ ,, दानवीर श्रीमंत सेठ लक्ष्मीचंद जी भेलसा
२५ ,, श्रीमंत सेठ बच्चूलाल जी ललितपुर
२६ ,, सिंघई हजारीलाल जी झांसी
२७ ,, पं० कस्तूरचंद जी महोपदेशक भोपाल
२८ ,, ,, मक्खनलाल जी अनाथालय देहली
२९ ,, दौलतराम जी चौधरी खनियाधाना
३० ,, सेठ मोतीलाल जी भोपाल
३१ ,, पं० रामलाल जी पंचरत्न
३२ ,, सिं० खूबचन्द जी जाखलौन
३३ ,, सेठ अभिनन्दनकुमारजी बी. ए. ललितपुर
३४ ,, सिं० भगवानदास जी सर्राफ ,,
३५ ,, चौ० दमरूदास जी ललितपुर
३६ ,, ,, पल्टूराम जी ,,
३७ ,, बाबू हरिप्रसाद जी वकील ललितपुर
३७ ,, ,, रघुनन्दनप्रसाद जी ,, ,,
३९ ,, ,, सिं० रघुनाथदास जी ,, इत्यादि

सर्व प्रथम मंगलाचरण श्रीमान् पं० मक्खनलाल जी देहलीने किया फिर स्वागतगान कस्तूरचन्द छात्र ललितपुर ने गाया बाद को भैयालाल जी भजन-सागर ने और फिर देहली अनाथालय के छात्रों ने एक स्वर में स्वागत गान किया। इसके पश्चात् स्वागताध्यक्ष मोदी लखमीचन्द जी सागर की आज्ञानुसार पं० मुन्नालाल जी कनड ने सबका स्वागत करते हुए उनका बड़ा आभार माना। इसके बाद श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी शास्त्री अम्बाला ने सभापति जी श्री देवगढ क्षेत्र कमेटी के निर्वाचन के लिये सुन्दर भाषा में श्रीमान रायबहादुर बाबू नंदकिशोर जी देहली के लिये प्रस्ताव किया जिसका समर्थन श्रीमान पं० देवकीनंदन जी शास्त्री कारंजा ने किया—दो चार महानुभावों ने उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन भी किया। हमारे बाबू साहब ने सभापति पद पर आसीन होकर उसको सुशोभित किया। आपका भाषण श्रीमती विदुषी बहिन लेखवती जी एम० एल० सी० ने अपने मधुर स्वर द्वारा पढ़ा। भाषण समाप्त होने पर सब्जेक्ट कमेटी का निर्वाचन हुआ जिसमें ६० नाम चुने गये। रात्रि को उसी दिन ७ बजे से ७॥ बजे तक श्रीमान पं० देवकीनंदन जी कारंजा ने शास्त्र पढ़ा। ८ बजे तक सब्जेक्ट कमेटी की बैठक हुई जिसमें पाँच प्रस्ताव पास हुए।

आठ बजे रात्रि से शास्त्रार्थ संघ की बैठक हुई। प्रथम ही मंगलाचरण हुआ फिर भैयालाल जी भजन सागर का स्वागत गान हुआ और इसके पश्चात् देहली अनाथालय के छात्रों ने एक स्वर में स्वागत गान गाया। बाद को स्वागताध्यक्ष श्रीमान मोदी लखमीचंद जी का भाषण हुआ। फिर सभापति श्रीमान राय साहब लाला नेमिदास जी देहली के लिये निर्वाचन का प्रस्ताव श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी शास्त्री अम्बालाने रक्खा जिसका समर्थन श्रीमान पं० देवकीनंदन जी शास्त्री कारंजा ने किया। सभापति का आसन ग्रहण कर लेने के बाद लाला जी ने अपना भाषण पढ़ा फिर सब्जेक्ट कमेटीका निर्वाचन हुआ। इसके बाद सभा विसर्जन हो गई। प्रातःकाल ८ बजे से सब्जेक्ट कमेटी शास्त्रार्थ संघ की बैठक हुई जिसमें पांच प्रस्ताव पेश हुए। जो सब सम्मति से पास हो गए।

ता० १० फर्वरी को १ बजे से श्री देवगढ़ क्षेत्र कमेटी की द्वितीय बैठक हुई। मंगलाचरण के पश्चात स्वागत गान हुआ फिर सब्जेक्ट कमेटी के पास शुदा प्रस्ताव जनरल सभा में रक्खे गए और सर्व सम्मति से पास कि गये। प्रस्ताव पांच थे मैं ने देवगढ़ क्षेत्र की वार्षिक रिपोर्ट तथा उसके वर्ष भर के आय व्यय के चिट्ठे को सुनाया—वह भी सर्व सम्मति से पास हो गया। इसके बाद क्षेत्र के लिये अपील श्रीमान पं० देवकीनंदन जी शास्त्री कारंजा ने बड़े ही प्रभावक शब्दों में की जिससे करीब १२००) रुपये चंदा हुआ।

तदनंतर श्रीमान स्वामी कर्मानंद जी का भाषण हुआ और उसी समय ललितपुर के बहुत से वकील महाशय और अदालत मुन्सफीके बड़े हाकिम श्रीमान बाबू नौरतनकुमार जी मुन्सिफ ललितपुर भी थे, पहुंचे। आप लोगों ने स्वामी जी का व्याख्यान जो कि जैनधर्मपर हो रहा था, सुना। व्याख्यानको सुन कर आप लोगोंने स्वामीजी की बड़ा भारी प्रशंसाकी व्याख्यान समाप्त होने पर ललितपुरके वकील महानु-

भाषों और मुन्सिफ साहब को एक चाय की दावत दी गई जो कि श्रीमान सिं० बब्बूलाल जी सर्राफ ललितपुर की ओर से थी। दावत खानेके पश्चात वकील महाशय मन्दिरों के देखने को गए।

रात्रि को ७ बजे से ८ बजे तक श्रीमान पं० देवकीनंदन जी शास्त्री द्वारा शास्त्र सभा हुई। सभा समाप्त होने पर ८ बजे से शास्त्रार्थ संघ अम्बाला का कार्य आरंभ हुआ—प्रथम ही मंगलाचरण हुआ फिर स्वागत गानके पश्चात श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी ने सब्जेक्ट कमेटी के प्रस्तावों को जनरल सभा के समक्ष पेश किया जो कि सर्व सम्मति से पास किये गए। इसके बाद संघ के उपदेशक विद्यालय के लिये अपील की गई तो बात की बात में ५५०० रुपया बन गया। इसमें कुछ वचन पहले से ही मिले हुए थे और बहुत से वचन सभा मंडप में मिल गये।

इसके बाद श्रीमान राय साहब ला० नेमीदास जी देहली की सेवा में मंत्री कमेटी ने एक मानपत्र समर्पण किया। आपने मानपत्र के उत्तरमें अपनी लघुता दिखाते हुये सबका आभार माना और मेले की सफलता की पूर्ण रूपेण मंगल कामना की। इस के बाद श्रीमती विदुषी बहन लेखवती जी एम० एल सी० का स्त्रियों की वेशभूषा पर बड़ा ही प्रभावशाली तथा सारगर्भित व्याख्यान हुआ। आपके व्याख्यान की शैली तथा योग्यता पर मुग्ध होकर उपस्थित जनता ने आपको 'महिलारत्न' की उपाधि से विभू-षित किया। इसके बाद अनाथालय देहली की अपील श्रीमान पं० देवकी नन्दन जी द्वारा हुई और फिर पं० मक्खनलाल जी ने भी कुछ कार्योंका विवरण दिया। जिस पर ११४) रुपयेका चन्दा हुआ। इसके पश्चात् चांदपुर जी क्षेत्रके लिये अपील हुई जिसमें ५६॥) रु० का चन्दा हुआ। इसके पश्चात अनाथालय के छात्रों ने जल तरंग, बेला, प्यानो आदि बाजे बजाये। फिर श्रीमान पं० राजेन्द्र कुमार जी ने मैजिक लालटेन के दृश्य दिखाये। श्रीमान पं० टोडरमल जी, श्रीमान आचार्य शान्तिसागर जी और श्रीमान पं० गणेश प्रसाद जी वर्णी के चित्र दिखाये जो कि बहुत ही उत्तम तथा साफ थे। आपका यह तरीका जैनधर्म प्रचार के लिये उत्तम तथा आदर्श है। इसके बाद सभा विसर्जन होगई।

ता० ११ फर्वरी के १२ बजेसे जलेब निकली और सारे बाजारमें होती हुई डाक बंगले के बगलमें उच्च मंच पर विराजमान करदी गई। वहाँ पर दो बोली कलश ढारने के लिये हुई जिसमें पहली बोली ७५) रुपये में और १५) रुपय में मुणावली के भाइयों ने बोली और उन्हीं को अभिषेक करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। फूलमालकी बोली ७५) रुपये की श्रीमान दानवीर सेठ लक्ष्मीचन्द्र भेलसा की थी जो उन्हींको पहनाई गई। इसके बाद विमान जी सभा मंडप में वापिस लाये गये और उपस्थित नरनारीगण जाने लगे।

इस मेलेमें ललितपुरकी ४ सेवा समितियों ने बहुत ही अच्छा कार्य किया उनके कार्यसे प्रसन्न होकर हमारे रायसाहब ला० नेमीदास जी देहली ने सहर्ष मेडिल प्रदान किये और २०) रुपये नकद उन्हें मिठाई खाने के वास्ते दिये।

—वीर मंडल—

रतनचन्द्र जी केप्टेन को १ मैडिल

हुकमचन्द टडैया — एक मैडिल
वीरमंडल के लिये — ,,

—चन्द्रमंडल—

उदयचन्द्र छात्र — ,,
कस्तूरचन्द्र — ,,
चन्द्रमंडल — ,,

—भ्रातृमंडल—

मोतीलाल के हैन — ,,
कुन्दनलाल सर्राफ मन्त्री — एक मैडिल
लक्ष्मीचन्द्र कोजिया — ,,
भ्रातृमंडल — ,,

इस प्रकार देवगढ़ उत्सवमें जिन श्रीमान धीमान सज्जनों ने भाग लिया है उनको कोटिशः धन्यवाद दिया जाता है।

—नाथूराम सिंघई मंत्री, देवगढ़ क्षेत्र

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ के देवगढ़ अधिवेशन के पास हुए प्रस्ताव।

१—भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा स्वर्गीय सम्राट पंचम जार्ज के असामयिक देहावसान पर हार्दिक शोक प्रगट करती है तथा जिनेन्द्र भगवान से प्रार्थना करते है कि स्वर्गीय सम्राट की आत्मा को शान्ति एवं उनके कुटुम्बियों को धैर्य प्राप्त हो। इस प्रस्ताव की एक कापी वायसराय महोदय के द्वारा स्वर्गीय सम्राट के कुटुम्बियों के पास भेजी जाय।

प्रस्तावक—सभापति

२-निम्नलिखित सज्जनोंके असामयिक स्वर्गवास से समाज को भारी क्षति हुई है अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा इनके स्वर्गवास पर हार्दिक शोक एवं इनके कुटुम्बियों से सहानुभूति प्रगट करती है।

१-ब्रह्मचारी कुंवर दिग्विजयसिंह जी
२-राय बहादुर साहु जुगमन्दरदास जी
३-सेठ चन्द्रभान जी
४-सेठ पन्नालाल जी टडैया ललितपुर

प्रस्तावक—सभापति

३—क्वीन्स कालेज की परीक्षाओं में जैन दर्शन शास्त्री और जैनदर्शनाचार्य के कोर्स के भर्ती होने में उक्त कालेज के सुयोग्य रजिस्ट्रार डा० मंगलदेव जी शास्त्री M. A. P. H. D. ने संघ को उल्लेख योग्य सहयोग प्रदान किया है अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा इस प्रस्ताव के द्वारा उक्त रजिस्ट्रार महोदय को हार्दिक धन्यवाद देती है।

प्रस्तावक—व्याकरणाचार्य पं० वंशीधर जी
समर्थक—पं० देवकीनन्दन जी शास्त्री

४—संघ का क्षेत्र बहुत व्यापक होगया है। अतः भारत सरकार द्वारा इसका रजिस्टर्ड होना बहुत जरूरी है। संघ की कार्यकारिणी भी ऐसा प्रस्ताव पास कर चुकी है अतः भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा प्रस्ताव करती है कि ६ माह

के भीतर ही इसकी कार्य कारिणी की रजिस्ट्री करा ली जाय।

प्रस्तावक—न्यायालंकार पं० मक्खनलालजी मुरेना
समर्थक—व्याख्यान वाचस्पति पं० देवकीनंदन जी

५—श्रीमती विदुषी लेखवती देवी जैन M.L.C. पंजाब ने अपनी उदार सेवाओं क द्वारा जैनसमाज का गौरव बढ़ाया है अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा प्रस्ताव पास करती है कि आपको आपके अनुरूप ही "महिलारत्न" की उपाधि से विभूषित किया जाय।

प्रस्तावक—पं०राजेन्द्रकुमारजी जैन
समर्थक—पं० मुन्नालाल जी कम्नड
„ —पं० देवकीनंदन जी शास्त्री कारंजा

६—महगांव दि० जैन मन्दिर के अत्याचार कांड से भारत की जैन जनता को हार्दिक दुःख हुआ है अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा प्रस्ताव करती है कि ग्वालियर सरकार से मांग की जाय कि वह इसकी स्वतन्त्र एवं योग्य कमीशन द्वारा जांच कराकर अपराधियों को मुनासिब दंड दे।

प्रस्तावक—पं० देवकीनंदन जी कारंजा
समर्थक—पं० रामलाल जी पंच रत्न

७—सरकारी मनुष्य गणना में जहां तक जैन गणना का सम्बन्ध है अनेक भूलें हो जाती हैं अतः इसके द्वारा जैनियों की ठीक २ जन संख्या का पता नहीं लगता। यू० पी० की जैनियों की जन संख्या सरकारी रिपोर्टमें केवल ६५००० बतलाई है। मेरठ, मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, आगरा और झांसी जिलों की जन संख्या को ही यदि लिया जाय तो वही इससे अधिक बैठती है। तथा इन के अतिरिक्त तो अभी चालीस से ज्यादा जिले यू० पी० में रह जाते हैं, जैनियों की प्रगति का ठीक २ पता लगाने के लिये जन संख्याका ठीक २ पता लगना अनिवार्य है अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा प्रस्ताव करता है कि संघ को ऐसा आन्दोलन करना चाहिये जिस में सन १९४१ में होने वाली सरकारी मनुष्य गणना में सब ही जैन अपनेको जैन लिखावें और जिस में फिर जैनियों की ठीक २ संख्या का निर्णय हो सके।

प्रस्तावक—पं० राजेन्द्रकुमार जी
समर्थक—न्यायालंकार पं० मक्खनलालजी

८—जैनसमाज में योग्य उपदेशकों, योग्य अनुसन्धान विभाग और अनुसन्धान विभागसे प्रकाशित ग्रन्थमाला का अभाव है। समाज के जीवन के लिये इन सब ही बातों का होना अनिवार्य है। ये सब ही कार्य संघ की त्रैवार्षिक आयोजना के रूपसे कार्य रूप में परिणत किए जासकते है। इसही को दूसरे शब्दों में यों कहना चाहिये कि संघ द्वारा पहिले वर्ष में उपदेशकों की तय्यारी का कार्य, दूसरे वर्ष में कार्य योग्य पुस्तकालय और उन में कुछ योग्य स्कालरों द्वारा अनुसन्धान का कार्य और तीसरे वर्ष में अपेक्षित ग्रन्थमाला का प्रारम्भ होना चाहिये। अतः भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ की यह साधारण सभा प्रस्ताव करती है कि संघ से उन के आगे के तीन वर्ष में अर्थात सन ३६ से ३८ तक यह त्रैवार्षिक आयोजना कार्य रूप में परिणत होनी चाहिये। प्र०—पं० राजेन्द्रकुमार जी

समर्थक न्यायालंकार पं० मक्खनलाल जी

६—उपदेशक विद्यालय की अयोजना पर बहुत विचार करनेके बाद संघ की कार्यकारिणी उस की स्थापना का निश्चय कर चुकी है। साधारण सभा के इस ही बैठक के प्रस्ताव नम्बर आठ के अनुसार इस का इसही वर्ष में स्थापित होना आवश्यक है अतः भारतवर्ष दि० जैन शास्त्रार्थ संघकी यह साधारण सभा प्रस्ताव करती है इस कार्य के लिये दस हजार रुपया एकत्रित कर के कार्यकारिणी द्वारा स्वीकृत आयोजना के अनुसार ही अभी कुछ माह बाद आने वाली श्रुतपंचमी के दिन इस की स्थापना की जाय।

प्रस्तावक— पं राजेन्द्रकुमार

समर्थक— न्यायालंकार पं० मक्खनलाल जी

ये सब प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुए।

निवेदक

प्रधान मंत्री

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला

उपदेशक विद्यालय को सहायता

भारतवर्षीय दिगम्बरजैन शास्त्रार्थ संघके उपदेशक विद्यालय को अबतक निम्न लिखित सहायता के वचन मिले हैं इसके लिए इन महानुभावों का हार्दिक धन्यवाद है

१५००) श्रीमान ला० शिब्बामल प्रकाशचंद जैनट्रष्ट-अम्बाला
५०१) श्रीमान साहु चन्डीप्रसाद जी रईस धामपुर
५०१) ,, ,, प्यारेलाल जी रईस धामपुर
५०१) ,, रायसाहब ला० नेमीदास जी शिमला
४०१) श्रीमान सेठ लक्ष्मीचंद जी भेलसा
३६०) साहु नाहरसिंह कस्तूरचन्दजी रईस देहरादून
२४०) ट्रस्ट फन्ड स्व० श्रीमती मनोहरी देवी अम्बाला मा० बा० महावीर प्रसाद जी ठेकेदार
६०२) दि० जैन पंचायत मुलतान शहर
१०१) महावीर प्रसाद जी बिजली वाले देहली
१०१) राजकृष्ण जी जैन देहली।
१५१) मनोहरलाल जम्बूप्रसाद जी देहली
१५१) रायबहादुर बा० नन्दकिशोर जी देहली
१०१) ,, सेठ भगवानदास जी ललितपुर
५१) ,, सिंघई बच्चूलाल जी सर्राफ ,,
५१) ,, कालूराम गनपतलालजी गुर्या खुरई
१५०) परचूरन

५४६३) कुल जोड़

—निवेदक

राजेन्द्रकुमार जैन प्रधान मन्त्री,

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी।

पं० दरबारीलाल जीका उत्तर

करीब २-३ वर्ष का समय हुआ हमने पं० दरबारीलाल जी को कई विषयों पर शास्त्रार्थ का निमन्त्रण दिया था। इस निमन्त्रण के आधार से हमारे और पं० दरबारीलाल जी के बीच कई माह तक पत्रव्यवहार चला था। अन्त में पं० दरबारी लाल जी ने यह लिखा कि वास्तव में शास्त्रार्थ संघ वाले शास्त्रार्थ करने को तयार नहीं हैं अतः शास्त्रार्थ के नियमोपनियम के सम्बन्ध में फिजूल बातें लिख कर शास्त्रार्थ से हटना चाहते हैं।

शास्त्रार्थ का एक निमन्त्रण आपको न्यायालंकार पं० मक्खनलाल जी ने भी दिया था। आपने तथा

आपके सहयोगियों ने इसके सम्बन्ध में भी ऐसी ही ही बातें लिखकर जनता को यह बतलाने की चेष्टा की थी कि इस प्रकार के चैलेन्ज शास्त्रार्थ करने की इच्छा से नहीं दिये जाते आपके सहयोगियों ने तो आपको दिग्विजयी प्रमाणित करने के लिये अनेक बार लिखा है कि कोई भी जैन विद्वान पं० दरबारी लाल जी का मुकाबला नहीं कर सकता।

पं० दरबारीलाल जी तथा आपके सहयोगियों की इस प्रकार की घोषणाओं की सत्यता को जनता पर प्रगट करने के अर्थ ही हमने आपको ता० २२-१-३६ को शास्त्रार्थ के निमन्त्रण स्वरूप एक पत्र लिखा था। इसमें हमने स्पष्ट कर दिया था कि शास्त्रार्थ के सम्बन्ध में जो भी नियमोपनियम आप लिखेंगे हम उनको ही स्वीकार करेंगे। हम अपनी तरफ से इस सम्बन्ध में एक भी नियम नहीं लिखना चाहते। हमारा यह पत्र प्रायः सभी जैन पत्रों में प्रकाशित हो चुका है। इस पत्र के उत्तर स्वरूप मुझे पं० दरबारीलाल जी का एक पत्र मिला है। पाठकों के परिचय के लिये इसको मैं यहां ज्यों का त्यों उद्धृत करता हूं।

"श्रीयुत पं० राजेन्द्रकुमार जी! जय सत्य। निमन्त्रण पत्र मिला। उन दिनों न्यायतीर्थ आदि के विद्यार्थियों की वार्षिक परीक्षा होने से मुझे समय नहीं मिल सकता। दूसरी बात यह है कि मेरे प्रचार की नीति दूसरी है जिसे मैं प्रगट भी कर चुका हूं कि जिस किसी भाई को मेरे विचारों में शंका हो अविश्वास हो वह मेरे स्थान पर आकर अथवा जहां मैं प्रचारार्थ जाऊं वहां पहुंच कर अपने प्रश्न मेरे सामने रक्खे मैं उनका उत्तर दूंगा। मुझे किसी से कुछ पूछने की आवश्यकता नहीं है।

आपका—

दरबारीलाल

३०-१-३६

पं० दरबारीलाल जी का पत्र बिलकुल स्पष्ट है। इससे विचार शील पाठक स्वयं इसका निर्णय कर सकते है कि पहले अवसरों पर कौन शास्त्रार्थ से हटना चाहता था। हमारी तो अभी भी यही धारणा है कि इस चैलेन्ज से भी हमने यदि नियम निर्णय की बात लिखी होती तो पं० दरबारीलाल जी उनके सम्बन्ध में ही वादविवाद चलाते और फिर भी जनता को यही बतलाते कि आप तो शास्त्रार्थ को तयार हैं किन्तु आपके विपक्षी ही शास्त्रार्थ नहीं करना चाहते। अस्तु। अब पाठक स्वयं पं० दरबारीलाल जी एवं उनके सहयोगियों की घोषणाओं की सत्यता का निर्णय करें

निवेदक—

राजेन्द्रकुमार जैन

प्रधान मन्त्री

भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ

विवाह संस्कार और दान

भिवानी निवासी श्रीमान सेठ बालूरामजी पाटनी के सुपुत्र चि० वासुदेवका शुभ विवाह नरायनावासी श्रीमान सेठ राजेन्द्रकुमार जी लुहाड़िया की सुशीला कन्या के साथ जैनधर्मानुसार माह सुदी ५ सम्वत १९९२ को हुआ था जिसमें वरपक्ष ने २५१) रुपया धार्मिक संस्थाओंको प्रदान किये हैं जिनका विवरण निम्नप्रकार है।

२५) जैनस्कूल बधाल जि० जयपुर
१५) जैन शास्त्रार्थसंघ अम्बाला
११) गोपाल जैन सिद्धान्त विद्यालय मोरेना
११) वैश्य औषधालय भिवानी
१०) भारतवर्षीय जैन अनाथाश्रम देहली
१०) दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी बम्बई
१०) जैन महा पाठशाला जयपुर
१०) जैन मन्दिरजी काजिमाबाद
१०) मदगांवकाण्ड मन्त्री देहली
७) स्याद्वाद महा विद्यालय बनारस
७) श्री दि० जैन विद्यालय सोनागिर
७) गोशाला मोरेना
७) सुलक्षणा सभा मोरेना
७) गोशाला भिवानी
५) जैन बाला-विश्राम आरा
५) जैन महिलाश्रम बम्बई
५) पन्नालाल सरस्वती भवन बम्बई
५) पन्नालाल औषधालय बम्बई
५) जैन औषधालय बड़नगर
५) जैन अनाथाश्रम बड़नगर
५) जैन महाविद्यालय ब्यावर
५) ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम मथुरा
५) पार्श्वनाथ जैन विद्यालय उदयपुर
५) जैनगजट सिवनी
५) खंडेलवाल जैन हितेच्छु
५) जैनबन्धु कलकत्ता
५) जैनदर्शन अम्बाला
५) जैनमित्र सूरत
५) शौरीपुर क्षेत्र आगरा
५) वैश्य विद्यालय भिवानी
५) यतीमखाना भिवानी
५) ब्रह्मचर्याश्रम भिवानी
४) विधवा सहायक फंड आगरा
४) व्यायामशाला २ भिवानी
२) रंग पाठशाला भिवानी
२) हिन्दी पाठशाला भिवानी
३) मनीआर्डर खर्च

२५१) कुल जोड

—पं० दुर्गाप्रसाद जैन
ठि० सेठ शोभाराम श्रीराम भिवानी।

उपहार ग्रन्थ छप रहा है।

"सत्तास्वरूप" ग्रन्थ जो कि जैनदर्शन के ग्राहकों को उपहारमें दिया जायगा, छप रहा है। ग्राहक महानुभाव धैर्य रक्खें। होली तक जो सज्जन जैन दर्शन के ग्राहक बन जावेंगे, उपहार उन्हीं भाइयोंको प्राप्त होसकेगा।

द्वितीय वर्षकी फायल

जिसमें कि स्याद्वाद विषय पर आधुनिक ढंगसे लिखे गये सरल, विस्तृत लेख प्रकाशित हुये हैं अतः यह अपने विषयका एक अपूर्व अनूठा ग्रन्थ कहलानेका अधिकारी है, उसमें एक रुपये के मूल्यवाला 'स्याद्वाद अंक' भी सम्मिलित है ऐसी जैनदर्शनकी दूसरे वर्षकी फाइल अपने यहांके पुस्तकालय या शास्त्र भंडार में अथवा अपने पास रखने के लिये जिनको मंगाना हो वे तीन रुपये का मनी आर्डर भेज कर मंगालेवें।

—मैनेजर जैन दर्शन,
अकलंक प्रेस—मुलतान सिटी

—*—

देश विदेश समाचार

गत ८ जनवरीको पन्जाब पुलिस ट्रेनिंग स्कूल फिल्लौर में भारत सरकारके उच्च अधिकारियों और कई प्रान्तों के पुलिस अफसरों के सम्मुख गैसके प्रयोगके प्रथम तजुर्बे किये गये। कुछ पुलिस कांस्टेबलों का एक दल "गैरकानूनी" समूह बना। जब उन्हें तितर बितर होने की आज्ञा दीगई तो भीड़ने इन्कार कर दिया। इस पर सीखे हुये पुलिस के दस्ते ने उस पर, प्रथम ऊंची दिवारों वाली तंग गली में दूसरी बार चौड़ी लम्बी सड़क पर, तीसरी बार गाँवके चौराहे पर और फिर खुले मैदानमें गैस छोड़ी गई। मालूम हुआ कि आदमी के शरीरको इससे कोई स्थायी हानि नहीं पहुँचती। जब कोई व्यक्ति इसके प्रभाव में आता है तो वह इससे दूर भागनेकी इच्छा करता है यदि न भागे तो उसकी आंखों से इतना पानी बहने लगता है कि वह आंख खोल नहीं सकता और उसे आसानी से गिरफ्तार किया जा सकता है।

प्रत्येक मनुष्य रेलगाड़ी रोक सकता है।

रेलगाड़ीके प्रत्येक डब्बेमें स्थान और स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए मुसाफिरों के बैठने की संख्या नियत होता है जो कि प्रत्येक डब्बे में लिखी होती है। आज कल यात्रा करने वाले मुसाफिरों की संख्या अधिक होती है और गाड़ियों में डब्बों की संख्या थोड़ी होती है जिस से नतीजा यह होता है कि अकसर तीसरे दर्जे के डब्बों में लोग पिंजड़े में बंद चूहों की तरह ठसाठस भर जाते हैं। रेलवे कर्मचारी यह सब कुछ जानकर भी इस बेकायदगी को दूर नहीं करते। किन्तु रेलवे एक्ट दफा १०९ के अनुसार प्रत्येक यात्री को यह अधिकार है कि वह अपने डब्बेमें नियत संख्या से अधिक मुसाफिरों को भरा हुआ देख कर जंजीर खींच कर रेलगाड़ी रोकदे और गार्ड को यह बात नोट करा दे ऐसा करनेपर वह कानूनन अपराधी नहीं हो सकता।

अभी हाल ही में इस प्रकार गाड़ी रोकने के अपराध में सजा पाये हुए एक मनुष्य की अपील स्वीकार करते हुए इलाहाबाद हाईकोर्टने उस आदमी को छोड़ दिया है।

—३१ जनवरी को न जाने हापुड़के कौवों पर क्या बला सवार होगई। प्रातःकालसे ही सैकड़ों कौवे उड़ते २ एकदम जमीन पर गिर जाते थे और सिसक कर मर जाते थे। कुछ कौवे तो पेड़ों पर ही पड़े थे और कुछ मकानों की छतों पर।

—गाजियाबादमें एक मुसलमानके घरमें विचित्र बच्चा पैदा हुआ उसके एक हाथ तथा एक कान नहीं था तथा शकल बुल डाग कुत्ते से मिलती हुई थी कुछ मिनिट बाद ही वह मर गया।

—मथुरा में करीब २० डाकू एक चौबे के घर डाका डालने आये किंतु अन्य मुहल्लों के आदमी आ जाने पर सिर्फ ५-६ हजार का माल लूटकर भाग गये। इस भागदौड़ में वे अपना एक सूट केस छोड़ गये जिसमें ५० हजार रुपये का माल मिला है।

—कलकत्ते में एक बंगाली की तीन जवान लड़कियों ने अफीम खाकर आत्महत्या करली क्यों कि उनका पिता दहेज के कारण उनकी शादी करने में असमर्थ था।

देश विदेश समाचार

गत ८ जनवरीको पंजाब पुलिस ट्रेनिंग स्कूल फिल्लौर में भारत सरकारके उच्च अधिकारियों और कई प्रान्तों के पुलिस अफसरों के सम्मुख गैसके प्रयोगके प्रथम तजुर्बे किये गये। कुछ पुलिस कांस्टेबलों का एक दल "गैरकानूनी" समूह बना। जब उन्हें तितर बितर होने की आज्ञा दीगई तो उन्होंने इन्कार कर दिया। इस पर सीखे हुये पुलिस के दस्ते ने उस पर, प्रथम ऊंची दिवारों वाली तंग गली में, दूसरी बार चौड़ी लम्बी सड़क पर, तीसरी बार गांवके चौराहे पर और फिर खुले मैदानमें गैस छोड़ी गई। मालूम हुआ कि आदमी के शरीरको इससे कोई स्थायी हानि नहीं पहुँचती। जब कोई व्यक्ति इसके प्रभाव में आता है तो वह इससे दूर भागनेकी इच्छा करता है यदि न भागे तो उसकी आंखों से इतना पानी बहने लगता है कि वह आंख खोल नहीं सकता और उसे आसानी से गिरफ्तार किया जा सकता है।

प्रत्येक मनुष्य रेलगाड़ी रोक सकता है।

रेलगाड़ीके प्रत्येक डब्बेमें स्थान और स्वास्थ्य का ख्याल रखते हुए मुसाफिरों के बैठने की संख्या नियत होती है जो कि प्रत्येक डब्बे में लिखी होती है। आज कल यात्रा करने वाले मुसाफिरों की संख्या अधिक होती है और गाड़ियों में डब्बों की संख्या थोड़ी होती है जिस से नतीजा यह होता है कि अक्सर तीसरे दर्जे के डब्बों में लोग पिंजड़े में बंद चूहों की तरह ठसाठस भर जाते हैं। रेलवे कर्मचारी यह सब कुछ जानकर भी इस बेकायदगी को दूर नहीं करते। किन्तु रेलवे ऐक्ट दफा १०६ के अनुसार प्रत्येक यात्री को यह अधिकार है कि वह अपने डब्बेमें नियत संख्या से अधिक मुसाफिरों को भरा हुआ देख कर जंजीर खींच कर रेलगाड़ी रोकदे और गार्ड को यह बात नोट करा दे ऐसा करनेपर वह कानूनन अपराधी नहीं हो सकता।

अभी हाल ही में इस प्रकार गाड़ी रोकने के अपराध में सजा पाये हुए एक मनुष्य की अपील स्वीकार करते हुए इलाहाबाद हाईकोर्टने उस आदमी को छोड़ दिया है।

—२२ जनवरी को न जाने हापुड़के कौवों पर क्या बला सवार होगई। प्रातःकालसे ही सैकड़ों कौवे उड़ते २ एकदम जमीन पर गिर जाते थे और सिसक कर मर जाते थे। कुछ कौवे तो पेड़ों पर ही पड़े थे और कुछ मकानों की छतों पर।

—गाजियाबादमें एक मुसलमानके घरमें विचित्र बच्चा पैदा हुआ उसके एक हाथ तथा एक कान नहीं था तथा एक पुंछ डाग पुंछसे मिलती हुई थी कुछ मिनिट बाद ही वह मर गया।

—मथुरा में करीब २० डाकू एक चौबे के घर डाका डालने आये किन्तु अन्य मुहल्लों के आदमी आ जानेपर सिर्फ ५-६ हजार का माल लूटकर भाग गये। इस भागदौड़ में वे अपना एक सूट केस छोड़ गये जिसमें २० हजार रुपये का माल मिला है।

—कलकत्ते में एक बंगाली की तीन जवान लड़कियों ने अफीम खाकर आत्महत्या करली क्यों कि उनका पिता दहेज के कारण उनकी शादी करने में असमर्थ था।

वर्ष ३
अंक १६
श्री भारत वर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
जैनदर्शन
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस
इस अंक के पठनीय लेख
१— धर्मके दश लक्षण
२— वस्त्र
३— बनियेकी बुद्धिमानी
४— पांच पाप
५— दिगम्बर मत समीक्षा पर प्रकाश
६— सैद्धान्तिक निवेदन
७— दहेजका भार
वार्षिक ३) एकप्रति =)

जैन समाचार

जैनदर्शन के विषय में

ज्योतिषवेत्ताओं ने यह वर्ष अनेक अनिष्ट घटनाओं से पूर्ण बतलाया है। उसमें भी ३ मार्चसे १४ तक के समय में अनेक उत्पातों का होना प्रगट किया है। पंजाब में इन ११ दिनों में कई स्थानों पर भयानक भूकम्प होने की बात भी लिखी है। बिहार और क्वेटा भूकम्प की भीषणता देखकर भूकम्प से जनता भयभीत हो जाती है। मुलतान नगर में भी भूकम्प होने की अफवाह है। तदनुसार प्रेसकर्मचारियों ने १० दिन के लिये अकलंक प्रेसका फाटक बन्द करवाया है जो कि १५ मार्चको खुलेगा। इसी शीघ्रता में यह अङ्क अधूरी पृष्ठ संख्या में प्रकाशित हो रहा है। और आगामी अङ्क (१७-१८ वां) संयुक्त रूप में प्रकाशित होगा।

—अजितकुमार

—अहिछेत्र रामनगर (बरेली) में वार्षिक मेला प्रति वर्ष की भांति चैत बदी ८ तारीख १६ मार्च से चैत बदी १२ ता० २० तक होगा। इसमें पं० राजेन्द्रकुमार जी, स्वा० कर्मानन्द जी अम्बाला पण्डित जिनेश्वरदास जी सरधना, पं० चन्द्रकुमारजी बिलसी पधारेंगे। अतः निवेदन है कि सकुटुंब पधार कर धर्मलाभ उठायें।

नोट—पूर्व से आने वाले यात्रियों को आंवला और पश्चिम से आने वाले यात्रियों को अरंगी स्टेशन पर उतरना चाहिये।

—रामनाथ जैन
उपमन्त्री

खबर है कि महगांव में पुलिसने बिहारीलाल, अयाराम, गनपतलाल और महीलाल को जो ६० वर्षसे ऊपरके हैं तथा कई पर्दानशीन स्त्रियोंको बहुत मार पीटा और उनका अपमान किया है। और फिर उन्हें गिरफ्तार करके डिस्ट्रिक्ट हेड क्वोर्टरमें भेज दिया है। ऐसी ही अन्य जैन मूर्तियोंकी चोरी होनेकी रिपोर्ट की जानेके समाचार अभी मिले हैं।

जैन मित्रमण्डल देहली-की ता० २२ की जनरल सभा में सेठ ज्वालाप्रसाद जी के स्वर्गवास पर शोक प्रगट किया गया। और चैत्र सुदी ११, १२, १३ को महावीर जयन्ती मनाना निश्चित हुआ।

फिरोजाबादमें-१५ से १७ मार्चतक सुप्रसिद्ध दि० जैन मेला महोत्सव होगा। ता० १६ १७ को पन्नालाल दि० जैन विद्यालयका द्वितीय वार्षिकोत्सव भी होगा। तथा दि० जैन समितिका उत्सव होगा। इस शुभ अवसरपर अवश्य२ पधारिये।

आवश्यकता है-एक सुयोग्य विद्वानकी, जो शास्त्र सभा कर सके और धार्मिक शिक्षा दे सके। पत्रमें अपनी आयु, संस्कृत, अंगरेजी भाषाका ज्ञान-प्रमाणपत्र संस्कार विधान करानेकी योग्यता और और वेतनादि का खुलासा होना चाहिये। लिखो—गुलाबचंद जैन न० ६ अमीनुद्दौलापार्क-लखनऊ

आवश्यकता—यहां की बोर्डिंग के लिये एक ऐसे पंडित की आवश्यकता है जो धर्मशास्त्र पढ़ा सके। और व्यवहार कुशल हो। वेतन २०) मासिक तक।

लिखो—दशाहमड़ पंच-सागवाड़ा (डूंगरपुर
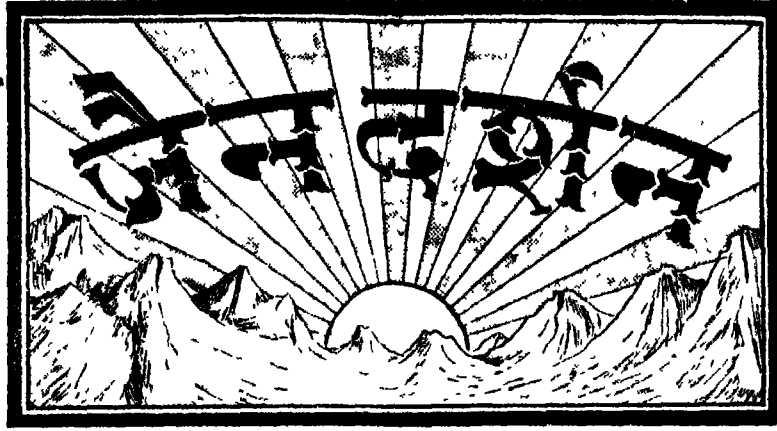
अकलंकदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितांग्ररश्मिर्भव्याभयश्चिखिलदर्शनपक्षदोषः
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री फागुन सुदी ६—रविवार श्री वीर सं० २४६२ | १ मार्च १९३६

आँसू की दो बूँद

[श्री० पं० चांदमल जी जैन "शशि" बी० ए० विशारद]

आगये आँसू उमड़कर आँख में,
याद बस ! जब आगई उसकी मुझे।
झट निकल कर बरुनियों से बूंद दो
उष्ण-सी जाकर कपोलों पर लगीं।

पोंछने ज्यों ही लगा मैं वस्त्र से,
रुष्ट होकर वे धरा पर गिर पड़ीं।
और यों कहने लगीं मुझको सरोष-
"निर्दयी ! तुमने कहो, यह क्या किया ?"

हम हृदयआगारमें सानन्द थीं,
वेदना कुछ भी नहीं थी तब हमें।
पर, वहां तुमने नहीं रहने दिया
दिल जलाकर विरह के उत्ताप से।"

"भाप बनकर तब हमें भगना पड़ा,
छोड़ अपने शान्तिमय हृद्देश को।
कार्य पर, तुम कर रहे यह निंद्य क्या ?
वासना-वश जल स्वयं, पर को जला"

"आर्त-स्वर सुनकर कभी लाते दया,
दीनको तुम देखकर जाते पिघल।
पोंछते आँसू दुखी के तुम कभी,
तो निकलती हम भी मिलने बन्धु से।"

"प्रेम यदि सच्चा तुम्हारा, क्यों दुखी ?
प्रेम तो है नित्य, क्षय होता नहीं।
प्रेम-प्रतिकृति विश्व, उससे प्रेमकर,
प्रेममय आनन्द से हमको बहा॥"

धर्म के दश लक्षण

(ले०—श्रीमान पं० चैनसुखदास जी जैन न्यायतीर्थ)

जैसे जैन शास्त्रों में धर्म के दश लक्षण बतलाये गए हैं वैसे ही वैदिक, बौद्ध और ईसाई धर्मके शास्त्रों में भी धर्म के दश लक्षण माने गए हैं। वैदिक धर्म में मनुस्मृतिकार ने धर्म के दश लक्षण ये कहे हैं—

धृतिः क्षमा दमो स्तेयं, शौचमिन्द्रिय निग्रहः
धी विद्या सत्यमक्रोधो, दशकं धर्मलक्षणम्।

अर्थात—धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य, और अक्रोध ये धर्म के दश लक्षण हैं।

१ धृति—जगत कल्याण के मार्ग में लगे हुए मनुष्य को अनेक बार विपत्ति और विघ्न बाधाओं का सामना करना पड़ता है। पुरुषार्थी बन कर इन विघ्नों की कोई परवाह न करते हुए अपने कार्य की सफलता के लिये धैर्य धारण किये रहना धृति कहलाता है। धृतिमान् पुरुष इसके अतिरिक्त शरीर मानस और आगन्तुक बाधाओं से विचलित न हो कर जीवन के अन्त तक अपने कर्तव्य का पालन करता रहता है।

२ क्षमा—निर्बल और सबल दोनों तरह के अपराधियों को दंड दे सकने की शक्ति होने पर भी मुआफ कर देना, अपराधियों की अपेक्षा अपराध पर अधिक ध्यान देकर उन्हें भविष्य में सचेत रहने की शिक्षा देना धर्म का दूसरा लक्षण क्षमा है।

३ दम—मन में राक्षसी विचार पैदा होने पर उन्हें दैवी विचारों द्वारा दबाना, मनमें कषाय उत्पन्न न होने देना, अपने समाज अथवा देश की बुराइयों का दमन करना दम का पालन करना कहलाता है।

४ अस्तेय—मनसा, वाचा और कर्मणा जिस पर हमारा कुछ भी हक नहीं है, ऐसी दूसरे की वस्तु को बिना दिये हुए ले लेने का त्याग करना अस्तेय है।

५ शौच का अर्थ पवित्रता है। निर्लोभता, सदाचार, तप और विवेक द्वारा आत्मा को पवित्र करना शौच नामा पांचवां धर्म का लक्षण है।

६ इन्द्रिय निग्रह—इन्द्रियों की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से कुमार्ग की ओर होती है। जैसे दुष्ट पशुओं का शासन करने के लिये मनुष्य दण्ड लेकर उन्हें अभीष्ट मार्ग की ओर ले जाता है, वैसे ही इन्द्रिय रूप पशुओं को ज्ञान रूप दण्ड से सुपथ की ओर ले जाना इन्द्रिय निग्रह कहलाता है।

७ धी—किसी विषय में संशय उत्पन्न होने पर उसे दूर करने के लिये अपने निर्दोष ज्ञान के उपयोग करने को धी कहते हैं।

८ विद्या—सामान्य रूप से विद्या दो प्रकार की होती है। परा और दूसरी अपरा। अध्यात्म विद्या को छोड़कर सब विद्याएं अपरा हैं। किन्तु परा विद्या को प्राप्त करने के लिये अपरा विद्याओं के अध्ययन की भी आवश्यकता है। विस्तार से विद्याओं के चौदह भेद भी हैं—

चार वेद (ऋक्, यजुः, साम, और अथर्व) छह वेदाङ्ग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्ति, छन्द और ज्योतिष) मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र और पुराण।

९ जो वस्तु जैसी है उसको वैसी ही समझना या कहना धर्म का नौवां लक्षण सत्य है।

१० अक्रोध—दुष्टों के दुर्व्यवहार द्वारा उत्पन्न क्रोध नामक पिशाच का विवेक से दमन करना अक्रोध कहलाता है।

अब बौद्ध धर्मकी दश पुण्य क्रियाओं को भी सुनिए—

१– अधिकारी मनुष्यों को दान दो।

२– सदाचार की शिक्षाओं के अनुकूल अपना जीवन बिताओ।

३– सद्विचारों की उत्पत्ति तथा वृद्धिमें सदा तत्पर रहो।

४– सेवा को ही अपना उद्देश्य बनाकर दूसरोंकी सेवामें लगो।

५– अपने माता पिता और अपने से बड़े मनुष्यों की रोगादि कष्टों में सेवा शुश्रूषा और सदा उनका आदर सत्कार किया करो।

६– अपने गुणों का लाभ दूसरों को भी दो।

७– दूसरों के दिये हुये गुणों को ग्रहण करो।

८– न्याय पथ पर चलनेवाले सिद्धान्तोंको सुनो।

९– न्याय पथ पर चलने वाले सिद्धान्तों का अन्य लोगों को भी उपदेश दो।

१०–अपने धर्म सम्बन्धी विश्वास को सदा निर्मल और शुद्ध रक्खो।

जैन शास्त्रों में माने गये धर्म के दश लक्षण ये हैं

उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः—

अर्थात–उत्तम क्षमा, (क्रोध न करना) उत्तम मार्दव (मान न करना) उत्तम आर्जव, (माया न करना) उत्तम शौच (लोभ न करना) उत्तम सत्य (सत्य बोलना) उत्तम संयम (इन्द्रियों के विषय में मन की प्रवृत्ति न होने देना और जीवों की दया पालना) उत्तम तप (इच्छाओं को रोकना) उत्तम त्याग (पात्रों को यथाशक्ति दान देना) उत्तम आकिञ्चन्य (बाह्य धनादि और अभ्यंतर क्रोधादि परिग्रह का त्याग करना) और उत्तम ब्रह्मचर्य (स्त्री जाति को मातृत्व रूपमें देखना)।

—वस्त्र—

(ले०—श्रीमान पं० कपूरचन्द जी जैन)

विश्वके असभ्य देशोंमें ज्यों२ सभ्यताका विकाश होता गया, त्यों २ मनुष्य वस्त्र की उपयोगिता महसूस करने लगे। पोशाकें ही आज कल सभ्यता का एक मात्र चिन्ह हो रही हैं। भिन्न भिन्न देशों की अपनी अलग अलग जातीय पोशाकें हैं। परन्तु भारतवर्ष की जातीय पोशाक क्या है, इसका पता लगना मुश्किल ही नहीं वरन असम्भव है। आप भारतवर्ष के किसी भी शहर में जाइये तो वहां कोई पगड़ी बांधे, कोई टोप लगाये, कोई नंगे सिर, कोई धोती, कोई पाजामा, कोई पैंट पहने दृष्टिगोचर होंगे। इसका कारण अगर हमारे देश में राष्ट्रीयता की कमी कही जाय तो कोई हानि नहीं होगी।

हम लोग याने कोई भी मनुष्य वस्त्र तीन कारणों से धारण करता है। १—ऋतु परिवर्तन से अपनी रक्षा के लिये २—अपने शरीर की ताप-रक्षा के लिये तथा ३—शरीर के सौंदर्य वृद्धि के लिये—

१—ऋतु परिवर्तन से अपनी रक्षा के लिये—वस्त्रों का उपयोग जाड़े के दिनों में जाड़े से बचने के लिये करते हैं, क्योंकि हम मनुष्यों की खाल पशुओं की तरह अधिक मोटी नहीं होती और न घने बाल ही होते हैं। जाड़े के दिनों में जब कि गर्मी का ताप-क्रम एकदम कम हो जाता है, और हवा भी ठंडी बहती है, तब वस्त्र बाहरी ठंड से हमारे शरीर की रक्षा करते हैं, क्योंकि हम लोग जो वस्त्र पहनते हैं उसके तथा शरीर के बीच में हवा की तह रह जाती है, और हवा गर्मी के जाने देने के लिये खराब है (Air is a bad condoctor of heat) याने बाहर की सर्दी नहीं आ पाती। इसी प्रकार ग्रीष्म ऋतु में भी गर्मी से हमारे शरीर की रक्षा करते हैं।

२—शरीर के ताप की रक्षा के लिये—इस बात को तो प्रत्येक मनुष्य जानता है कि हमारे शरीर की की गर्मी हवा से ज्यादा है। याने हवाकी बनिस्बत हमारा शरीर अधिक गर्म है। यह प्राकृतिक नियम है कि गर्म चीजों से गर्मी निकल कर ठंडी चीजों की ओर आया करती है, और उनमें मिल जाती है। इसी प्रकार अगर हम लोग वस्त्र न धारण करें तो संभव है कि जाड़े के दिनों में हमारे शरीर की बहुत कुछ गर्मी निकल जाय, और हम को ठंड लग जाय अतएव सब ऋतुओं में हमारे शरीर की गर्मी एक सी रहे; इस बात में वस्त्र हमारी सहायता करते हैं। क्यों कि उसके बीच की हवा तो खराब संचालक (Conductor) होती ही है, वस्त्र भी जो अधिकतर रुई, ऊन आदि के बने होते हैं खराब संचालक होते हैं। इस प्रकार हमारे शरीर की गर्मी (Heat) की भी रक्षा इन वस्त्रों के पहनने से हो जाती है।

३— शरीरके सौंदर्य बढ़ाने में आजकल वस्त्र रूप से भी ज्यादा काम देने लगे हैं। अगर कोई अपढ़ मनुष्य कोट, पैंट, टोप लगाये हुये आपके साथ रेलमें सफर कर रहा है तो आप उसे मूर्ख समझेंगे या पढ़ा लिखा? मेरी समझ से तो अपढ़ समझनेका

साहस नहीं करेंगे। अतएव वस्त्रों की इस विषयमें भी बड़ी उपयोगिता सिद्ध होती है।

वस्त्रोंकी उत्तमता इसी बात पर सिद्ध होती है कि वस्त्र में ऊपर लिखित तीनों गुण हों। अगर इन तीनोंके हिसाबसे वस्त्रोंकी उत्तमता देखी जाय तो विशेष कर रुई; ऊन, रेशम, सन, जूट इत्यादि के कपड़े उत्तम होते हैं। परन्तु इसके अलावा जंगली जातियाँ भी चमड़े का, छालका, पत्तोंका व्यवहार पोशाक या तन ढकने के लिये करती हैं।

(क) ऊन— ऊन के बने वस्त्र अधिकतर शीत देशों में व्यवहार किये जाते हैं। इङ्गलैण्ड, अमेरिका आदि विदेशों में खासकर इसके बने कपड़े इस्तेमाल किये जाते हैं। अंग्रेज लोग इसके बने कपड़े को और कपड़ों से ज्यादा पसंद करते हैं, चाहे वह भारतवर्ष जैसे गर्म देशमें ही क्यों न रहते हों। ऊन खासकर भेड़ों के बालों से निकलता है। भेड़ से इन बालों को निकाल कर उसे साफ़ करके कातकर कपड़े बनाते हैं

ऊन ताप का सबसे बुरा संचालक (bad con ductar of heat) है। याने यह और कपड़ों की अपेक्षा शरीरकी गर्मीको बिल्कुल ही बाहर नहीं जाने देता-- और न बाहरकी सर्दी-गर्मी का शरीर पर कुछ प्रभाव डालने देता है।

अगर एक उनी कपड़े के टुकड़े को अच्छी तरह देखा जाय, तो उसमें छोटे २ छिद्र दिखलाई पड़ते हैं। इन्हीं छिद्रों के रहनेसे ऊनी कपड़ों में विशेषता आती है। एक तो इन छिद्रों में हवा भर जाती है। जिससे संचालन शक्ति नष्ट होजाती है। दूसरे—यदि शरीर में पसीना आता है, तो ये छिद्र उसे सोख लेते हैं। इसी गुण के कारण फुटबाल आदि खेलने के बाद खिलाड़ी लोग ऊनी कपड़े पहिन लेते हैं। या ऊनी जरसी पहिन कर खेलते हैं।

इतने गुण रहने पर भी इसमें कई अवगुण भी हैं ऊनी कपड़े गीले होने पर जल्दी नहीं सूखते। अतएव भारतवर्ष जैसे उष्ण प्रधान देशमें सिवा जाड़ों के कभी भी ऊनी कपड़ों का व्यवहार नहीं करना चाहिये इसके अलावा अधिक मैले होजाने पर भी गंदे नहीं दिखाई देते। इस तरह ऊनी कपड़ों में धूल भर जाने की संभावना रहती है। ये मनुष्य-जिनका कि चर्म अत्यंत कोमल है-उनको गंजी की तौर पर नहीं पहिन सकते।

ऊनी कपड़ों का धोना कठिन है। ये साधारण सूती कपड़ों की तरह नहीं धोये जा सकते। धोने पर इसे कपड़ों का पसीना शोषक गुण भी कम हो जाता है। ऊनसे फलालैन, शाल, अलपका, कम्बल मरीना आदि भी बनाये जाते हैं।

फलालैन— डाक्टर लोग इस कपड़े को इस्तेमाल करनेकी सलाह प्रायः रोगियोंको देते हैं। क्योंकि यह गर्म अधिक होता है।

शाल तथा कम्बल—ये वस्तुएं तो प्रायः हम लोगों के घरों में व्यवहारमें लायी जाती हैं।

अलपका मरीना—इनके कपड़ों में यह विशेषता होती है कि ये पतले बालों से बनाये जाते हैं। इस कपड़े की भड़कदार पोशाकें बनती हैं।

२- रुई— हमारे देशमें रुई के बने कपड़े अधिक तर सारी जनता, क्या अमीर क्या गरीब सभी काममें लाती है। इसके बने हुये कपड़े, ऊनी और रेशमी कपड़ों की अपेक्षा सस्ते और अच्छे होते हैं।

इसके कपड़े गर्मीके "खराब संचालक" उतने

नहीं हैं जितने कि ऊनके होते हैं। रुईसे एक प्रकार का कपड़ा बनता है जिसका नाम सेल्युलार क्लोथ (Cellulor cloth) है। इस कपड़े की बनियान अति उत्तम होती है। गर्मीके दिनों में रुई के वस्त्र हमारी देहको ठण्डा रखता है। यह कपड़ा कई बार धोनेसे भी नहीं बिगड़ता। हमारे यहां के लोग इस कपड़े की धोती, गंजी, कमीज, कोट, टोपी, आदि पोशाक की सभी चीजें बनवाते हैं।

३ सन—सन (Jute) जो कि सिर्फ गंगा के डेल्टा याने बंगाल के पूर्व में होता है, यहां से इङ्गलैंड अधिकतर भेजा जाता है। थोडा सा सन तो बोरा (Bags) आदि बनाने के काम में आता है, परन्तु अधिकांश का टाट, कपड़े आदि तैयार किये जाते हैं। इसके कपड़ों में जो तीन गुण होने चाहिये उनमें से एक भी नहीं है। यद्यपि इससे भी सौंदर्य रक्षा होती है, परन्तु यह न तो बाहरी ताप या जाड़े से हमारी रक्षा करता है; और न हमारे शरीर की गर्मी को बाहर जाने से ही रोकता है। इसकी बनी गंजी कभी भी नहीं पहनना चाहिये।

४ रेशम—रेशम एक प्रकार के कीड़ों द्वारा निकाला जाता है। ये कीड़े शहतूत के पत्तों पर प्रायः पाले जाते हैं, इनकी ज्यादा उत्पत्ति चीन देश में होती है। ऋतु आने पर वे कीड़े अपने चारों ओर एक घर सा बना लेते हैं; जिसे 'कोआ' कहते हैं। जब ये 'कोये' बनकर तैयार हो जाते हैं, उसी समय कीड़ों के काट कर निकलने के पहले, गर्मी द्वारा उन कीड़ों को मार दिया जाता है, और फिर मशीन के द्वारा भीतर ही भीतर उसकी बुकनी बना कर उसे मशीन के द्वारा ही बाहर निकाल देते हैं। बाद में फिर उन 'कोवों' के तागे को औषधि लगा कर ढीला करके उसका सूत बुनते हैं। इसका सूत अत्यन्त मजबूत होता है। इसमें आर्द्र शोषण, खराब गर्मी का संचालक आदि सभी गुण 'ऊन' की तरह हैं। इसमें कपड़ों की बनी गंजी पहनी जा सकती है। इससे चमड़े को नुकसान नहीं पहुंचता, और इसका कपड़ा अगर वर्ष भर भी पहना जाय तो हानि नहीं होती। यद्यपि रेशम के कपड़े में कितने ही गुण ऐसे हैं जिनसे कि वह वस्त्रों में सब से अच्छा वस्त्र माना जाता है, परन्तु प्रथम तो यह कपडा गरीब जनता खरीद कर पहन नहीं सकती क्योंकि सब कपड़ों से इसका मूल्य अधिक होता है दूसरे इसके तैयार करने में बहुत हिंसा होती है। अतएव जिस के मन में इन कीड़ों के प्रति थोड़ी सी भी दया होगी जो भीतर ही भीतर अपने कोशों में मार दिये जाते हैं तो वह रेशम का वस्त्र न पहनने की प्रतिज्ञा ले लेगा यह बात नहीं है कि अगर रेशम का वस्त्र न न पहना जाय तो हमारे सौंदर्य में अन्तर पड़ेगा, क्यों कि रेशम के तुल्य, या बढ़कर ऊनी कपड़े बनते हैं।

५ अरंड—भागलपुर की तरफ इसके बने कपड़े अत्यन्त मशहूर हैं। ये कपड़े भागलपुर के आस पास ही उत्तमता से तैयार किये जाते हैं, और इसी लिये इनका नाम भागलपुरी सिल्क पड़ गया है।

इन सब उत्तम वस्त्रों के अलावा और इस पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्य जिन जिन चीजों के वस्त्र पहनते हैं; उनमें से अधिकांश चमड़े, फर, या, रबड़, पत्ते आदि के मुख्य हैं—

(क) चमड़ा—उत्तरी अथवा दक्षिणी ध्रुव के पास याने टुण्ड्रा (Tundra) नामक प्रदेशमें रहने वाले इस्कीमो लोग (Eskimoes) लोग अत्यन्त भीषण ठंड से बचने के लिये चमड़े के वस्त्र पहनने

हैं। यह वस्त्र गाय भैंस के चमड़े के नहीं होते बल्कि उस प्रांत की 'मूर' नामक एक बड़ी मछली के होते हैं। इस वस्त्र के कारण बाहर की सर्दी थोड़ी सी भी अन्दर नहीं जा पाती। परन्तु हमारे देश में चमड़े का बना जूता अधिकांश क्या सब आदमी पहनते हैं।

(ख) फर—योरोपियन लेडियाँ अपनी सुन्दरता बढ़ाने के लिये इसे व्यवहार करती हैं।

(ग) पर —भारतवर्ष में ही कोई कोई अपने लिहाफ आदि में 'पर' भरते हैं। ऐसे लिहाफों को को 'किल्ट' कहते हैं।

(घ) रबड़—आज कल रबड़ के बरसाती तथा जूते अधिक बनते हैं; जिनको कि संसारके अधिकांश आदमी व्यवहार में लाते हैं।

ये बात तो वस्त्र किन किन चीजों से बनते हैं, इस विषय पर हुयी। परन्तु वस्त्र होने कैसे चाहिये? वस्त्र याने पोशाक जो हम पहनते हैं वह इस प्रकार हो जिससे कि हमारे हाथ पैर चलाने में, या अन्य किसी अङ्गके हिलाने में बाधा न पड़े। याने ज्यादा चुस्त या ज्यादा ढीले न हों। दूसरे हमको सर्दी, गर्मी से बचाये, और हमारे शरीर की गर्मी की रक्षा करे। वस्त्र कुछ न कुछ ढीले अवश्य होने चाहियें जिससे वायु भीतर आ सके। जो पोशाक चुस्त होती है, उससे शरीर अधिक गर्म रहता है।

पोशाक में ऋतुके अनुसार अवश्य परिवर्तन करना चाहिये। गर्मी में रुई के बने वस्त्र पहिनना अच्छा है। क्यों कि ये हलके होते हैं और पसीनेको जल्दी सोख लेते हैं। गीले होजाने पर ये जल्दी सूख भी जाते हैं। गर्मी के दिनों में जब लू चलती हो तो हमको मोटा वस्त्र पहिनना चाहिये, इससे लू से हमारी रक्षा होसकेगी।

वर्षाकालमें हमें बिलकुल हल्के जैसे मलमल तथा छेददार वस्त्र पहिनना चाहिये। जाड़े के दिनों में खासकर उन कपड़ों को पहिनना चाहिये जो गर्मी के बुरे सञ्चालक हों। जैसे ऊन, रेशम, सन आदि के कपड़े। परन्तु सब ऋतुओं में बनियान और छेददार गंजी हो तो उत्तम है। उसके अलावा रंगोंका प्रभाव भी शरीर पर पड़ता है। वे रंग इस प्रकार हैं—

गहरे रंगके रंगे वस्त्र गरमी पैदा करते हैं। काला रंग गर्म और सफेद रंग ठंडा हुआ करता है।

जो गर्मी पैदा करते हैं उसका कारण यह है कि रंगवाली चीजें सूर्य की किरणों या किसी और गर्मी दायक पदार्थों से जल्दी गर्मी सोख लेती हैं। इस लिये ये कपड़े गर्म मालूम पड़ते हैं, परन्तु वास्तव में कपड़े स्वयं गर्म नहीं हैं। इसलिये जाड़े के दिनों में हमारे काले या अन्य किसी गहरे रंगके वस्त्र होने चाहियें जिससे कि हमें अधिक गर्मी मिले।

इसके विपरीत सफेद कपड़े गर्मी को जल्दी नहीं सोख सकते। इसलिये गर्मीके दिनोंमें इन्हींका इस्तेमाल करना चाहिये।

कपड़ों की स्वच्छता पर ध्यान रखना अत्यंत जरूरी है क्यों कि स्वच्छ वस्त्र पहिननेसे स्वास्थ्य तो ठीक रहता ही है, साथ ही मन भी प्रसन्न होता है।

बनिये की बुद्धिमानी

(ले०—श्रीमती सुभद्राकुमारी जैन)

कुछ पुरानी सी बात है। कहते हैं एक बार एक चतुर बनिया अपने गांवमें से कुछ कपड़ा लेकर दूसरे छोटे मोटे गांवों में बिक्री करने चला। जाते २ रास्ते में उसको चार चोर मिले। बनिये ने दूरही से अन्दाजा लगा लिया कि—यह आने वाले जरूर कोई लुटेरे या गठ कटे हैं। निदान उसने जंगलमें ही एक वृक्षके नीचे अपनी दूकान लगाली। बांट तराजू गज वगैरह दूकान का सब सामान सजा लिया। इतने ही में चोर भी उसके पास आ पहुंचे।

आज इतनी सरलता से माल हाथ आता देख चोर मन ही मन बहुत प्रसन्न हुवे और आते ही बनिये से पूछा—

क्यों बे बनिये—यह सब सामान लेकर यहां किस गरजसे बैठा है ?

"महाराज ! यह तो यों ही मैं रोज यहां कुछ देर तक दूकान लगा लिया करता हूं। अपने मां बापसे लुक-छिपकर सामान खरीदने वाले कोई नवविवाहित नादान यहां आकर मुझसे कपड़ा खरीद ले जाया करते हैं।

"अच्छा यह सब कपड़ा हमारे हवाले करो"

बनिये के हाथ पैरों में चोरों से मुकाबला करने की शक्ति नहीं थी न सही पर दिमाग तो था। बनिया खुशी से बोला—"लीजिए साहब यह सब आप ही का कपड़ा है।"

चोर वहां जम कर बैठ गये और बनिया उनको सारा कपड़ा देने लगा। उसने सारे सामान को चार भागों में बांटा और बारी बारी से एक ढेर में से दूसरे ढेर में इधर उधर कपड़ा टटोल टटोल कर रखने लगा। चोर इस पर कुछ तमके और क्रुद्ध होकर बोले—"क्यों, जल्दी से बांध के क्यों नहीं देता है।"

"मेरे पास तो यह सब कपड़ा हाजिर है। मुझे तो आखिर आप को सब का सब देना है। मैं तो आप की ही सुविधा के लिये यह सब कुछ कर रहा हूं। आप जानते है इसमें कोई थान आठ आने गज का है, कोई बारह आने गज का है तो किसी के दाम रुपयों गज के हिसाब से हैं। और इसकी परख व्यापारी ही कर सकता है। आप लोगों को फिर इसमें बड़ी मुश्किल गुजरेगी कि कौन कितना कितना कपड़ा अपने हिस्से का ले। मैं मूल्य के हिसाब से इसके चार भाग किये देता हूं।"

चोर इस बात से बहुत प्रसन्न हुए और बनिया अपनी चालाकी में निष्कण्टक हो कर आगे बढ़ने लगा। वह कभी मलमल के थान को फाड़ता, कभी नरमे के थान को दो टूक करता, कभी एक ढेरी का कपड़ा दूसरी में रखता। इस तरह उसने आध घण्टा व्यतीत कर दिया। समय ज्यादा होता देख चोरों ने बनिये को जल्दी से निपटारा करने को कहा। बनिया आखिर बनिया ही था। उसने जवाब दिया—साहब कई किस्म के कपड़े हैं। अगर इस तरह कांटातोड़ी न करूं तो आप लोगों में कमो-बेशी कपड़ा आ जाने की संभावना है।

इस तरह करते करते उधर से उस गाँव का जागीरदार जो घोड़े पर सवार था आ निकला। घुड़ सवार को देखते ही चोर वहाँ से भाग छूटे और बनिया चोरों के फन्दे में से निकल गया।

जागीरदारने अपने गाँव के बनिये को इस तरह जंगल में दुकान लगाया हुआ देख कर बहुत आश्चर्य प्रकट किया और बनिये से पूछा।

'क्यों देवीसहाय! ये जो अभी तुम्हारे से कपड़ा खरीद रहे थे, कौन थे?"

महाराज ये तो अपने ही गांवके जवान थे। मा बापसे छिपकर कपड़ा खरीद रहे थे। आपको देख कर भाग गये हैं।

कह कर बनिया अपना सब सामान बगलमें दबा जागीरदार के साथ रवाना होगया।

गांवके किनारे पहुंचकर बनियेने अपने गांवके मालिक से जंगलके ग्राहकों का सच्चा हाल बताया गांवका मालिक इस पर क्रोध करके बोला—

"क्यों रे बनिये तैने मुझे यह पहले क्यों नहीं कहा, ताकि मैं उसी दम घोड़ेको दौड़ा कर उनको पकड़ लेता।"

"किन्तु गरीब परवर! आप एक का पीछा करते और तीन फिर मुझे आकर तंग करते।

(२)

चोर दुनियाको ठगते थे, पर आज एक साधारण बनियेके द्वारा स्वयं ठगे गये। बनियेकी चालकी पर उन्होंने बहुत कुछ दांत पीसे और उसका बदला लेनेका इरादा किया।

पन्द्रह बीस रोजका भुलावा देकर चोर एक रात को बारह बजे बनिये के घरमें घुसे। इधर उधर माल ढूंढने की फिक्र करने लगे। चुपके २ एक कमरे को खोला। बनिया किवाड़ों की खटपटाहट से जाग पड़ा और किवाड़ों की दरार में से झांका। उसने देखा—वे ही चार चोर अपनी ख्वाहिश पूरी करने आये हैं।

चोर डालियां २ चल रहे थे तो बनिया पत्तों २ चल रहा था। चोर अपने काममें पूरी तरह मशगूल थे और बनिया भी अपनी चाल चलने में व्यस्त था थोड़ी देर ठहर कर उसने अपनी स्त्री से कोई घर सम्बन्धी बात छेड़ी। उसकी स्त्री को चोरोंका हाल बिलकुल मालूम न था। वह कभी २ नींदमें ही उस की बात का हुङ्कारा भर लेती और फिर झपकी ले लेती थी। चोर उनकी बातसे यह पता न लगा सके कि बनिया वैसे ही अपनी घर सम्बन्धी बातें कर रहा है अथवा कुछ दालमें काला है। बातों ही बातों में बनिये ने अपनी स्त्री से कहा—

"क्यों जी अगर तुम्हारे लड़का पैदा हो हम उस का नाम क्या रक्खें।"

उसकी स्त्री अपनी नींद भंग होते देख मन ही मन झुन्झला रही थी। उसने कुछ यों ही अंट×संट जवाब दिया। आखिर बनियेने ही स्थिर किया कि यदि इस समय तुम्हारे लड़का पैदा होगा तो हम उसका नाम रक्खेंगे 'कादिर खां'। जरा ठहर कर फिर बनिये ने दूसरे लड़के का नाम निश्चित किया 'भादर खां'। इसी तरह तीसरे लड़केका नाम 'चोर' रक्खा गया।

बनिया फिर पूछने लगा—

"क्यों जी अगर हमारे तीनों लड़के बाहर खेलने

को चले जांय तो हम उनको घर बुलाने के लिये आवाज कैसे दें "?

स्त्री बेचारी बनिये की बातों से ऊब गई थी। उसने तमक कर कहा—आप तो शेख चिल्ली की सी बातें करते हैं। तीन लड़के भी हो गये और आपने उनको बुला भी लिया। न जाने कब मरेगी सासू और कब आवेंगे आंसू।

"अच्छा बाबा खैर तुम नहीं बताओ नहीं सही मैं ही बता देता हूँ। हम सब उनको इस तरह जोर से पुकार कर बुलावेंगे—कादिर खां, भादर खां चोर; कादिर खां, भादर खां, चोर; कादिर खां, भादर खां, चोर"

इस तरह बनिये ने तीसरे को जोर से आवाज मारी। कादिर खां और भादर खां नाम के दो चौकीदार उसकी हवेली के बाहर गश्त लगा रहे थे। चोर का नाम सुनते ही वे झट अन्दर घुस आये और कहाँ है, कहां है कहते हुए बनिये की ओर लपके।

बनिये ने झट भागते हुये चोरों की ओर इशारा किया और चौकीदार भी उनके पीछे पीछे थोड़ी दूर तक गये।

बनिये ने लालटेन हाथ में लेकर अपने सब कमरों को संभाला। वहां सब सामान रक्खा हुआ था। एक भी चीज अभागे चोर अपने साथ न ले जा सके।

(३)

इस बार बनिये की बात चोरों के मन में और भी बुरी तरह खटकी और मन मसोस कर अपनी मूर्खता पर पश्चाताप करने लगे। खैर दस पांच दिन गुजर जाने के बाद फिर चोरों ने बनिये के घर में डाका डालने का इरादा किया।

इस बार चोर अच्छी तरह सजधज कर आये थे। उनको पूर्ण विश्वास था कि इस मोरचे में जरूर बनिये से फतह पा कर आवेंगे। खैर चोर अपने काम में बहुत सावधानी से पैर रखने लगे। कहीं किसी तरह की भी आवाज नहीं होने दी। और एक एक कमरे को खोल खोल कर माल निकालने लगे। यह आखिर बनिये का भी भाग्य था। कपड़ों की सन्दूक को उठाते समय इसका कुन्दा खुल गया और एक साथ सब कपड़े निकल कर जमीन पर गिर पड़े। इस गिर पड़नेकी आवाज से बनिये की फौरन जाग होगई और वह धीरेसे उठकर देखने लगा। बस वे ही चोर सरगर्मी से उसका एक २ मालको निकालने में लगे हुये थे। इस बार उनके पास अस्त्र शस्त्र भी मौजूद थे। दो तो क्या अगर चार चौकीदार भी आजायें तो भी उनसे पीछे नहीं हटें। बनिया थोड़ी देर तक अपनी शय्या पर सोता २ सोचता रहा। आखिर उसके दिमागमें एक बात सूझी। उसी तरह उसने अपनी स्त्री को जगाया और पूछने लगा—

क्यों गंगाकी मा तुम्हारी वह पाँचसौ रुपयेवाली साड़ी कहां रक्खी है?

स्त्री भी झुंझलाकर बोल उठी—"हां, तो अभी उसकी क्या जरूरत है, वह नीम पर पड़ी है न।"

एक चोर उनकी बातों को ध्यानसे सुन रहा था उसने अपने साथियों से साड़ीका हाल कहा। चोर तो चोर थे ही—साड़ी और नीम पर, इसका वे क्यों विचार करने लगे। सबके सब एक साथ जल्दी २ नीम पर चढ़ने लगे। बहुत ऊंचे चढ़ने के बाद उनको एक पीली २ सी चीज दिखाई दी। चोरों ने समझा

बस अबतो शिकार हाथ आगई है। जल्दी से पहुच कर उस पर झपट मारी। क्या खूब —वह एक बर्र छत्ता था। चोरों के हाथ लगते ही सबके सब बर्र उड़कर चोरों के चिपक गये और लगे उनको काट खाने। चोर उसी समय एक २कर वृक्षमें लुढ़क २ कर जमीन पर जा पड़े। वृक्षके नीचे एक बनियेका बैल बंधा था जिसका नाम बनियेने "क्यों पड़े" रख रक्खा था। चोर नीचे उसी बैल पर जाकर गिरे थे अपने ऊपर मनुष्यों को गिरता देख बैल चिल्लाया। उधर बनिया यह सब दृश्य देख ही रहा था। उसने बैलको रंभाता देख कर आवाज दी—'अरे क्यों पड़े' चोरों ने समझा कि बनिया हमारी मखोल उड़ा रहा है। कराहते २ चटसे बोल उठे—अरे साले रक्खे कहाँ और बतावे कहां क्यों पड़े ?

चोरों की वृक्ष परसे गिर पड़ने से हालत बहुत खराब होगई थी वे उठकर भाग न सके। बनिया दौड़कर उनके पास पहुँचा और कहने लगा—

'क्यों फिर कभी बनिये से चाल चलोगे।'

चोरों ने अपनी हार मानी और भविष्यमें किसी भी बनियें के यहां चोरी न करने की प्रतिज्ञा की।

पांच पाप

(लेखिका—श्रीमती कुमारी ललिता)

पांच पापोंका नाम व उनका साधारण स्वरूप तो मैं समझती हूं—हर एक स्त्री पुरुषकी जबान पर होंगे इसलिये हरएक का सप्रमाण लक्षण बताना बेढंगा तो नहीं, हां नीरस जरूर होगा। क्योंकि जैनदर्शन के पाठक पांच पापों के लक्षण व शास्त्रोक्त वर्णनको एक बार नहीं अनेकबार नजरके आगे से निकाल गये होंगे।

शायद लोग पढ़कर हसें या नाक भौं सिकोड़ें कि यही बाबा आदम के जमानेका विषय है—वही झूठ चोरीका रोना है। मैं यह लेख लिखते हुये भी डरती हूं। पर हमें हंसो इसकी कोई परवाह नहीं। मुझेतो आखिर कुछ लिखना है—नीरस हो या सरस। जैसे तैसे कोई लेख बनाकर दर्शन में भेजना है। आप जानते हैं कि— लोभ पाप बापका बखाना और फिर वह भी प्रशंसाका, दुनियामें प्रसिद्धिका।

खैर, यह तो अपनी बात हुई। जिसकी बात करने चली थी उसीकी शुरू करना चाहिये—दूसरे की बात कहते २ अपनी भी पचा लेना—यह आजकल का एक सिस्टम है।

कमसे कम लेखको आगे चलाने के लिये पांच पापों के नाम तो मुझे अवश्य गिना देने चाहियें। हिन्सा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह—यह पांच पाप हमारे शास्त्रों में गिनाये गये हैं। प्रायः संसारमें एक भी ऐसा अपराध नहीं है जो इन पांच पापों से बाहर रह सके। आप कहेंगे कि स्कूलके पढ़ने वाले लड़के पाठ याद नहीं करनेका अपराध करते हैं और इस अपराध के बदले उनको मास्टरकी चपेटें भी खानी पड़ती हैं। अपराध है मगर न हिंसा है न

झूठ है न चोरी है, न कुशील है न परिग्रह है। नहीं वह भी पाप है। इस पापको चोरी में शुमार करना चाहिये। क्योंकि वह कर्तव्य शास्त्र की चोरी करता है। इसी तरह कन्याके बेचने वाले भी कहते हैं कि न मालूम हमको लोग किस पापके आधार पर पापी कहते हैं। इस हाथ देते हैं और उस हाथ लेते हैं। यह तो एक दूकानदारी है। अगर लेन देन ही पाप समझा जायगा तो फिर ऐसे पापी तो दुनियां में सेन्ट पर सेन्ट निकलेंगे। हमको ही लोग क्यों घृणा की दृष्टि से देखते हैं। पर नहीं, कन्या-विक्रय पाप है और एक बड़ा पाप है। इतना बड़ा जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं। केवल लिख देने मात्रसे ही नहीं पर सोचने और विचारनेसे भी यह बात सही साबित होती है। कन्या विक्रय दिन दहाडे एक अबोध बालिका के हृदय पुष्पको कुचलता है उसके भव्य भावोंकी हत्या करता है। क्या इसे आप हिंसा न कहेंगे। बिना हाथ पैर हिलाये दस हजार रुपयों की थैली घरमें रख लेता है—क्या इसे आप चोरी न कहेंगे।

मतलब यह है कि छोटे से छोटे अपराध से ले कर हत्या करने का अपराध पांच पापों में शामिल हो जाता है। बल्कि यों कहना चाहिये कि सारे संसार का पिनल-कोड इन पांच पापों के आधार पर ही बना हुआ है। हां पिनल-कोड का क्षेत्र संकुचित हो सकता है पर जैन सिद्धान्त के पांच पापों का क्षेत्र उसको भी उलांघ गया है। जैन सिद्धान्त के अनुसार हजारों ऐसे पाप हैं जिनकी ताजीरात हिन्द व ताजीरात विलायत में कोई सजा नहीं।

सब से पहला पाप हिंसा है। अहिंसावाद जैन सिद्धान्त का आदर्श है पर अफसोस; जैन सिद्धान्तको मानने वाले ही उसके स्वरूप को भूले हुए हैं। मैं सच कहती हूं जैनियोंकी अहिंसा केवल जल छानकर पानी पीने और पंखेसे हवा न लेने ही में रह गई है। नहीं तो क्या आप अपने एक भाई का पेट फोड देने वाले निर्दयी को हिंसक कहते हैं? मुंह में मुँडी भिड़ाकर गंगा की ठंडी धारा में गोता लगाने वाले समाज को कलह की दावाग्नि में सुलगा देने वाले दुष्टों पर हिंसा का दोष मढते है? अबला हृदय को अपने नखों से नोच देने वाले समाज के शैतानों को हत्यारा कहते हैं? पर नहीं ये तो समाज के दिलेर हैं, जीते जागते रत्न हैं, शेर का शिकार करने वाले बहादुर हैं। यह आदर्श अहिंसा वादियों की अहिंसा का एक छोटा सा नमूना है। क्यों, सच है न।

और सुनिये! जो लोग छोटे छोटे जीवों को मारने में हिचकते है वे अपने ही भाइयों का गला घोंटने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं करते। मैं ने ऐसे कई धर्मात्माओं का हाल सुना है जो अष्टमी चतुर्दशी को फलों का सेवन नहीं करते—ककडी काट नहीं खाते पर दीन व अनाथों के लड़को गट गट पी जाते हैं व किसानों की आंतों को टूक-टूक तक नहीं छोडते।

इधर तो हमारी अहिंसा का यह हाल है और उधर व्यक्तित्व, कुटुम्ब, धर्म, समाज व देश रक्षा के लिये फौरन मुंह मोड़ लेते हैं। जीव अहिंसा का डर दिखा कर अपने धर्म व व्यक्तित्व को खो बैठते हैं याद रखिये-जैन धर्म कायरता और बुजदिली कभी नहीं सिखाता। जहां हमारे शास्त्रों में वनस्पति काय तक के जीवों की रक्षा करने का आदेश है वहां धर्म व देश की रक्षा के लिये नंगीतलवार ले कर खड़े होने की भी आज्ञा दी गई है। इस के लिये राम, लक्ष्मण और अर्जुन महापुरुषों का

आचरण काफ़ी है।

पुराणों में कई ऐसी वीराङ्गनाओं का हाल है जिन्हों ने आपत्ति पड़ने पर बलात्कारियों के विरुद्ध अपने कोमल हाथों को कर्कशा और करारी कटारी से सुशोभित किया है और स्त्री समाज की लाज रखी है।

दूसरा पाप झूठ है। यह कौन नहीं जानता कि झूठ बोलना एक बड़ा भारी अवगुण है। पर जितने अधिक रूप से लोगों को इस की बुराइयां मालूम हैं उतने ही अधिक रूप से लोग झूठ बोलने के आदी हैं। और आज कल तो शायद झूठ बोलना हम लोगों में कोई पाप नहीं गिना जाता है। नहीं तो क्या कारण है कि एक व्यभिचारी व हत्या करने वाले मनुष्य को लोग फौरन कह बैठते हैं कि वह बड़ा पापी है। पर आप लोगों ने एक झूठ बोलने वाले आदमी को पापी कहते कभी नहीं सुना होगा मतलब यह है कि झूठ बोलना एक बहुत ही क्षुद्र अपराध माना जाने लगा है। किसी जमाने के लिये तो हम यह सुनते हैं कि झूठ बोलने वालेकी जीभ काटली जाती थी पर इस समय व्यवहार में झूठ बोलने का दावा अदालत में भी नहीं चलता है। कोई ताज्जुब नहीं--थोड़े दिनों में पापों की संख्या चार ही रह जाय।

आजकल हंसी, मज़ाक के बतौर झूठ बोलना तो एक ट्रेंकट समझा जाता है। दो चार हमउम्रके लोग जमा हुए और उनमें अंटसंट गपशप शुरू हो होजाती है। उस मंडलीका सफल नेता वही समझा जाता है जो हंसी-मज़ाकमें झूठ बोल २ कर किसी को शर्मिन्दा करदे।

यह सच है कि बार बार झूठ बोलने का असर हमारी आत्मा पर बहुत बुरा पड़ता है। हमारी आत्मा इतनी पतित हो जाती है कि हम किसी के सामने दृढ़ता पूर्वक बात नहीं कर सकते। इच्छा-शक्ति बिलकुल मारी जाती है। झूठा आदमी दूसरे पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकता है। और तो और झूठे आदमी की सच्ची बातों पर भी लोगों का विश्वास नहीं होता और इसका कई बार भयंकर परिणाम देखने में आता है। व्यवहार में झूठ बोलने की हानियां है उन को सब कोई जानते हैं।

बहुत से मनुष्य केवल इसी लिये सच नहीं बोल सकते कि वे अपनी आदत से लाचार हैं। यह आदत उनको बचपन से ही पड़ जाती है और इसका उत्तरदायित्व उन मूर्ख माता-पिताओं पर है जो अपने अबोध बच्चों को झूठी बातों से बहला कर बचपन से ही उनमें झूठ का बीजारोपण कर देते हैं। मा-बाप का फर्ज़ है कि वे स्वयं भी झूठ न बोलें क्योंकि बच्चों की अनुकरण करने की शक्ति बड़ी प्रबल होती है। वे जैसा अपने मा-बाप को करते हुए देखते हैं वैसा ही करने लगते हैं। अगर माता पिता झूठे होंगे तो उनके बच्चे भी बोलना सीख जायंगे। इसी लिये हमको चाहिये कि सत्य-वादिता का आदर्श अपनी संतान के सामने रखकर उसको भी सच बोलना सिखा दें। बचपन में सच बोलने की पड़ी हुई आदत आगे भी सच बोलने को विवश करती है। यही कारण है कि अधिक लोग मतलब के लिये कम, पर आदत से लाचार होकर अधिक झूठ बोला करते है।

तीसरा नम्बर चोरी का है। इस कलिकालमें चोरीका स्वरूप बतलाने में भी बड़ी अड़चन पैदा हो रही है। बहुतसी ऐसी चोरियाँ हैं जिनको लोग

साहूकारी और बहादुरी का जामा पहिनाते हैं। 'अदत्तादानं स्तेयं' इस सूत्रका दुरुपयोग करके लुटेरे भी साहूकार होनेकी हवस रखने लगे हैं। बडे २ आफीसर और पदाधिकारी क्या रिश्वत लेकर लुटेरे कहलाने के अधिकारी नहीं हैं? पर यह तो आज कल आजीविका का सुन्दर एवं शानदार साधन समझा जाता है

मैंने एक बार एक पदाधिकारी के मुखसे यह कहते हुये सुना था कि—यह क्या चोरी है, चोरी तो दूसरेकी चीजको बिना दिये हुए लेना है; और नहीं मानो तो 'बालबोध' जैनधर्म की पुस्तक खोलकर देखो—'मालिक की आज्ञा बिन कोय, चीज गहे सो चोरी होय' और यह भी क्यों साक्षात उमास्वामी के बचनों को ही विचारो न—'अदत्तादानं स्तेयं' इस का क्या अर्थ होता है? यही न, कि बिना दी हुई चीजका ग्रहण करना चोरी है। अब जरा आप देखिये स्वार्थी लोगोंने 'अदत्तादानं स्तेयं' की दुहाई देकर कैसा दुरुपयोग किया है। इससे डाकू भी साहूकार होनेकी हिम्मत कर सकता है जिसको जंगलमें जाने वाले धनिक राहगीर अपनी जानकी जोखिम के डर से अपनी सारी संपत्ति दोनों हाथों में समर्पण कर देते हैं। सच है आजकल के कई पंडित भी ऐसे हैं जो अपनी स्वार्थ लिप्सा के आगे शास्त्रों के अर्थका अनर्थ करने में जरा भी नहीं हिचकते। मुझे इस समय यह श्लोक बिलकुल सच साबित होता हुआ मालूम होरहा है —

"पंडितैर्भ्रष्टचारित्रैः बठरैश्च तपोधनैः,
शासनं जिन चन्द्रस्य निर्मलं मलिनीकृतं"

जरा इधर ध्यान दीजिये! रेलमें सही सलामत बिना टिकिट सफर करने वाला अपने को एक शेर की शिकार करने वाले बहादुर से कम नहीं समझता है। यदि किसी ने चोरी से बिना टिकिट खरीदे ही सिनेमा देख लिया तो वह अपनी बुद्धिमानी की बात कई दिनों तक मित्रों में बैठ कर सुनाया करेगा व्यापारी की असावधानी से बिना कीमत अथवा कीमत से ज्यादा सौदा ले आने वाले ग्राहक अपने को बहुत चतुर एवं चालाक समझते हैं और घर आकर अपनी उस्तादी की डींग हांकते हैं। सफल व्यापारी होने की हिम्मत वही दूकानदार कर सकता है जो ग्राहकों से रुपये की जगह दो रुपया एंठ सके।

हम चन्द्रगुप्त के जमाने का हाल पढ़ कर बहुत प्रसन्न होते हैं। लोग अपने घरों के ताला नहीं लगाते थे। यह जो सुबह भूली हुई चीज शाम को मिल जाती थी। इस ईमानदारी की चर्चा हम विदेशियों के सामने हम बड़े गौरव के साथ करते हैं। अफसोस वह कैसा समय था और आज कैसा समय है। लोग ईमानदारी और साहूकारी को कुचल डालने के लिये कमर कस कर तैयार है। जिन पाश्चात्य देशों को हम जंगली और असभ्य तथा तथा लुटेरे कहते थे आज वे ही देश हम लोगों की इन करतूतों को देख कर नाक भी सिकोड़ते हैं। ज्यों ज्यों वे देश ऊपर की ओर चढ़ते हैं त्यों त्यों हम नीचे की ओर गिरते है। आप उन देशों के बाजारों का हाल देख कर आश्चर्य करेंगे। छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा दुकानदार अपनी चीजों का निश्चित रेट रखता है। मैं ने अपनी एक बहनसे वहां के अखबारों के बिकने का हाल सुना था। मुझे सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ। अखबारों के लिये एक खास स्थान निश्चित है। वहां सब तरहके अखबार दैनिक, साप्ताहिक पड़े रहते हैं। सब पर मूल्य

लिखा रहता है। पत्र देने व मूल्य वसूल करने के लिए कोई नौकर वा क्लर्क नहीं रहता है। सिर्फ एक पेटी सा पड़ा रहता है। उसमें आप पत्र का मूल्य डाल दीजिए और पत्र ले जाइये। अगर आप ने मूल्य नहीं भी डाला है तो उसकी जांच करने वाला कोई नहीं है। ये सब वहाँ की ईमानदारी के खेल हैं। कहते हैं वहां कोई ही ऐसा बेईमान हो जो पत्र का मूल्य दिये बिना पत्र उठा कर ले जाय। और यह बात आप भारत में भी चालू करके देखिये। एक घंटे में पत्र सब गायब और पेटी खालीकी खाली ही पड़ी रहेगी। हवडे की स्टेशन पर थोड़े दिनों पहले एक प्लेट फार्म—यंत्र लगा हुआ था। जिस को प्लेट-फार्म लेना हो यन्त्र के छेद में से एक अन्नी डाल देता और चट से दूसरे छेद में से एक प्लेट-फार्म टिकिट निकल आता। अफसोस लोगों ने वहां भी बेईमानी शुरू की। अन्नी की वजन जितनी मिट्टीकी अन्नी डालना शुरू किया। खोटी अन्नियों से भी काम लेने लगे। बहुत दिनों तक यह चलता रहा। आखिर रेलवे ने हार खा कर उस तरह टिकिट बांटना बन्द कर दिया।

जयपुर स्टेशन पर एक तोल-मापक यंत्र लगा हुआ है। तुलने का चार्ज प्रति आदमी एक आना होता है। पर लोग क्या करते हैं कि बहुतसे आदमी मिलकर जमा होगये। उनमें से किसीने अन्नी डालदी बारी बारी से सब उसी अन्नीमे तुल जाते हैं। भगवन् हम अपनी आदतों से कब बाज आवेंगे?

क्रमशः

स्वास्थ्य

शरीर, धर्म तथा व्यवहार का मुख्य साधन है। जिस, मनुष्यका शरीर रोगी या निर्बल है वह व्यापार, धर्म परोपकार आदि कोई कार्य नहीं कर सकता। इन समस्त कार्यों से अधिक ध्यान शरीर के स्वस्थ, बलवान बनाने का रखना चाहिये। तन्दुरुस्ती के लिये नीचे लिखी बातों पर अमल करना आवश्यक है

१—प्रति दिन थोड़ा बहुत व्यायाम (कसरत) करना चाहिये।

२—अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य्य पालन करना चाहिये।

३—सांस गहरी लेनी चाहिये।

४—प्रति दिन स्नान करना चाहिये और भोजन के पहिले नाखून और हाथों को खूब साफ कर लेना चाहिये।

५—दातन से दांतों को प्रति दिन अच्छी तरह साफ करना चाहिये। भोजन के बाद मुँह को स्वच्छ जल से अच्छी प्रकार साफ कर लेना चाहिये।

६—प्रति दिन कुछ ताजे फल खाने चाहिये।

७—खुले कमरे में प्रति दिन रात को ८ घण्टे सोना चाहिये। श्वास नाक से ही लेना चाहिये।

८—प्रति दिन सुबह नियमित रूप से टट्टी को जाना चाहिये।

९—नित्य ताजा दूध पीना चाहिये तथा खानेके बीच और अन्त में शुद्ध जल पीना चाहिये।

१०—महीनेमें एकबार अपना वजन करना चाहिये तथा साल में दो बार अपनी नाप लेनी चाहिये।

—*—

दिगम्बरमत समीक्षा पर प्रकाश

गतांक से आगे

(ले०—पं० वीरेन्द्रकुमार जी जैन)

स्त्री मुक्ति

मुनि मिश्रीमल जी ने दिगम्बरमत समीक्षा का पंचम प्रकरण "स्त्रीको अवश्य मुक्ति होती है" ऐसा हैडिंग देकर प्रारंभ किया है। इसमें आपने आगम प्रमाण तथा युक्तियों को एक ओर रखकर केवल महिला महिमा गान किया है। तथा दिगम्बर समाज पर स्त्रियों के अधिकार छीननेका अभियोग लगाया है। मिश्रीमल जी ने 'मुक्ति प्राप्त करना' कौंसिल की मैम्बरी हासिल करना समझ रक्खा है जो कि प्रस्ताव पास कर लेने पर अमल में आजायगा। मुनि जी शायद यह समझते हैं कि 'स्त्री मुक्ति प्राप्त कर सकती है" इतना कह देने से ही स्त्रियां मुक्त हो जावेंगी।

स्त्री मुक्ति सिद्ध करने के लिये पहले स्त्रियों में मुक्त होनेकी योग्यता का विचार कर लेना चाहिये।

शारीरिक शक्ति

मुक्त होनेके लिये शरीर वज्र ऋषभनाराच संहनन वाला होना चाहिये। प्रथम संहननधारी जीव ही कठिन तपस्या कर सकता है। श्वेताम्बरीय कर्म ग्रन्थ भी प्रथम संहननधारक जीवके ही मुक्ति प्राप्त करने की योग्यता स्वीकार करते हैं। किन्तु यह प्रथम संहनन कर्मभूमिज स्त्रियों के होता नहीं है। सिद्धांत ग्रन्थ गोम्मटसार कर्मकाँड में संहननों का वर्णन करते हुए ग्रन्थकार ने लिखा है—

अंतिमतियसंहणणस्सुदओ पुण कम्मभूमि महिलाणं आदिमतिगसंहणणं णत्थित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं।

अर्थात—कर्मभूमिज स्त्रियों के अन्तिम ३ संहनन होते हैं शुरू के तीन संहनन (वज्र ऋषभनाराच, वज्रनाराच, नाराच) नहीं होते।

कर्मभूमिज स्त्री के वज्रऋषभनाराच संहनन नहीं होता है इसके विरुद्ध विधान किसी श्वेताम्बरीय सिद्धान्त ग्रंथ में भी नहीं मिलता है। इस कारण हीन शारीरिक शक्ति होने के कारण स्त्री मुक्ति असंभव है।

श्वेताम्बरीय ग्रन्थोंमें समर्थन

कर्मभूमिज स्त्रियों के वज्रऋषभनाराच संहनन नहीं होता है इस बात का समर्थन निम्नलिखित रीति से श्वेताम्बरीय ग्रन्थ करते हैं।

१—वज्रऋषभनाराच संहननधारक जीव ही सातवें नरक जाने योग्य घोर दुष्कर्म कर सकता है। तदनुसार स्त्रियोंके यदि यह संहनन होता तो सातवें नरक जाने की शक्ति अवश्य होती। किन्तु श्वेताम्बरी कर्मग्रंथ साफ कहते हैं कि स्त्री सातवें नरक नहीं जा सकती। कर्मभूमिज स्त्री के यदि पहला संहनन होता तो उसको सातवें नरक जानेका निषेध कदापि न होता।

श्वेताम्बरीय सिद्धान्तानुसार वज्रऋषभनाराच संहनन धारक जीव ही १२ वें स्वर्ग से ऊपर नवग्रैवेयक आदि विमानों में जा सकता है जिसके यह पहला संहनन नहीं है वह उतनी उत्कट तपस्या नहीं

कर सकता जिससे ग्रैवेयक आदि कल्पातीत विमानों में पहुंच सके।

स्त्री चाहे जितनी कठिन तपश्चर्या करे श्वेताम्बरी कर्मसिद्धान्त के अनुसार वह १२ वे स्वर्ग से आगे के कल्पातीत विमानों में जन्म नहीं ले सकती। स्त्री के यदि वज्रऋषभनाराच संहनन होता तो वह अवश्य ग्रैवेयक आदि कल्पातीत विमानों के योग्य उत्कृष्ट तपस्या कर सकती। बारहवें स्वर्ग में भी वहां की उत्कृष्ट आयु २२ सागर स्त्रियों की नहीं होती श्वेताम्बरी ग्रन्थ वहां देवियों की सिर्फ ५५ पल्य की आयु बतलाते हैं।

श्वेताम्बरी सिद्धान्त ग्रंथों के उक्त दोनों विधान इस बात को साफ सिद्ध करते हैं कि स्त्रियोंके मुक्ति प्राप्त कराने वाला पहला संहनन नहीं होता।

ज्ञानहीनता

श्वेताम्बरी ग्रंथ स्त्रियों के ज्ञानके विषयमें विधान करते हुए लिखते हैं कि स्त्री को १४ पूर्व का ज्ञान नहीं होता है उस में स्वभाव से ही १४ पूर्व धारण करने की योग्यता नहीं होती है।

स्त्रियोंको जब १४ पूर्व का भी श्रुतज्ञान नहीं तब उस से अनंतगुणा निर्मल केवलज्ञान किस प्रकार हो सकता है यह मिश्रीमल जी स्वयं विचारें।

सम्यग्दृष्टि; स्त्रीशरीर नहीं पाता

मिश्रीमल जी के मान्य श्वेताम्बरी कर्म ग्रन्थ यह भी विधान करते हैं कि जिस को सम्यग्दर्शन होता है वह जीव स्त्री शरीर ग्रहण नहीं करता। इसी कारण अनुत्तर विमानों से आये जीव स्त्री शरीर नहीं पाते। तदनुसार स्त्री पर्याय श्वेताम्बरी सिद्धान्तानुसार भी इतनी अयोग्य है कि उस को सम्यग्दृष्टी जीव प्राप्त नहीं करता जिस शरीर को सम्यग्दृष्टी जीव नहीं पाता उसमे मुक्ति प्राप्त हो सके यह अयुक्त है।

सांसारिक अभ्युदय स्त्रियों को प्राप्त नहीं होते

इस के सिवाय स्त्री; श्वेताम्बर जैन सिद्धान्तानुसार इतना प्रचुर पुण्य उपार्जन नहीं कर सकती कि वह चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, गणधर हो सके और न उसको चारण, आहारक, पुलाक, संभिन्नश्रोता ये ऋद्धियां प्राप्त होती हैं।

मिश्रीमल जी स्वयं विचार करें कि जो स्त्रियां सांसारिक अभ्युदय के योग्य भी तपस्या नहीं कर सकतीं वे मुक्ति के योग्य तप किस प्रकार कर सकतीं हैं।

स्त्री तीर्थकर नहीं होती

स्त्रियों को तीर्थकर पद भी श्वेताम्बरी सिद्धान्त ग्रन्थों के कथनानुसार प्राप्त नहीं होता। जिस के लिये श्वेताम्बरी ग्रन्थकी यह निम्नलिखित गाथा प्रसिद्ध है।

अरहंत चक्कि केसव बल संभिन्नेय चारणो पुव्वा।
गणहर पुलाय आहारगं च न हु भविय महिलाणं।

अर्थात भव्य स्त्रियोंको तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, बलभद्र, संभिन्न श्रोता, चारण, १४ पूर्वका ज्ञान गणधर, पुलाक आहारक शरीर ये दश पद और ऋद्धियां नहीं होती हैं।

उन्नीसवें तीर्थंकर श्री मल्लिनाथको स्त्री मल्लिकुमारी के रूपमें कहना श्वेताम्बरी सिद्धान्त के विरुद्ध है। क्योंकि एक तो मल्लिनाथका जीव 'जयंत' नामक अनुत्तर विमानसे आया था। वह श्वेताम्बरी

कर्मसिद्धान्त के अनुसार स्त्री नहीं हो सकता और न तीर्थंकर पद स्त्रीको प्राप्त ही होता है।

स्त्रीको जिनकल्प नहीं होता

वस्त्र त्यागी, पाणिपात्र साधुओं को उत्कृष्ट जिन कल्पी साधु श्वेताम्बर ग्रन्थ बतलाते हैं। अर्थात जिन कल्प सबसे उत्कृष्ट साधुओंके ही होता है। वह जिन कल्प' स्त्रियोंके नहीं होता। अर्थात साधुकी उत्कृष्ट दशाको स्त्री प्राप्त नहीं कर सकती।

ये कुछ एक श्वेताम्बरीय आगमों की युक्तियां हैं जो कि स्त्रियोंको मुक्ति प्राप्त करनेके अयोग्य ठहराती है। मिश्रीमल जी तथा उनके समान अन्य श्वेताम्बरी स्थानकवासी विद्वानों को पक्षपात दूर करके इस विषय पर विचार करना चाहिये। जिस समय हठ-वादको दूर फेंक कर सत्य की खोज करेंगे तो वे अपने ही मान्य सिद्धांत ग्रन्थों में अटल युक्तियों से स्त्री मुक्ति का निषेध पावेंगे।

आगम और युक्तिसे दृष्टि हटाकर निराधार रूपसे मुनि जी भले ही कुछ कहें किन्तु उसका मूल्य सिर्फ उनके यहां ही होसकता है परीक्षा के मैदान में उस का कुछ मूल्य नहीं है।

दिगम्बरीय ग्रन्थों में जो नपुन्सक वेदी, स्त्रीवेदी की मुक्तिका वर्णन आया है वह श्रेणी चढ़नेसे पहले मोहनीय कर्मके उदयसे होने वाले भाव नपुन्सकवेद, भाव स्त्रीवेदकी अपेक्षा से है। क्योंकि द्रव्य नपुन्सक या द्रव्य स्त्रीको साधु दीक्षा नहीं दी जाती है। स्त्री के परिग्रह त्याग महाव्रत नहीं होसकता क्योंकि साड़ी वस्त्ररूप परिग्रह रखना उनके लिये अनिवार्य है। वस्त्रधारण परिग्रह है यह बात मैंने पिछले अंकमें युक्ति और आगमसे सिद्ध की है।

अतः स्त्री मुक्ति निषेध का सिद्धान्त आगम अनुकूल युक्तिपूर्ण है।

छठा प्रकरण

मिश्रीमल जी ने 'दिगम्बर पन्थ में अनुचित बातें' शीर्षक देकर छठा प्रकरण लिखा है उसमें आपने सोमसेन त्रिवर्णाचार तथा चर्चासागर ग्रन्थोंके आधार से दिगम्बर सम्प्रदाय की समालोचना की है।

इस विषय में मिश्रीमल जी को संभवतः यह बात मालूम नहीं है कि इन दोनों ग्रन्थों की प्रामाणिकता का बहिष्कार दिगम्बर जैन समाज में कभी का हो चुका है। दिगम्बर जैन समाज यदि इन ग्रन्थों को प्रामाणिक आर्ष ग्रंथ मानता तब तो आप का छठा प्रकरण कुछ मूल्य रखता किन्तु जब आपके लिखने से पूर्व ही उक्त दोनों ग्रन्थ अप्रामाणिक ठहराये जा चुके हैं तब आपका यह प्रकरण निःसार एवं असफल प्रयास है। इस कारण इसका उत्तर देना व्यर्थ है।

हम तो आपसे नम्रता से निवेदन करते हैं कि अपने समस्त ग्रन्थोंका शुद्ध निष्पक्ष भावसे अवलोकन करें उनमें जहाँ कहीं आपको त्याज्य अनुचित बात दीख पड़े जैनधर्म की पवित्रता कायम रखने के लिये या तो उन ग्रथों में उन अनुचित बातों को निकाल बाहर करें अथवा उस ग्रंथ को अप्रामाणिक घोषित करने का साहस प्रगट करें।

तातस्य कूपोयमिति ब्रुवाणाः
क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति।

अपने बुजुर्गोंका कुआ मानते हुये उसका खारी पानी पीते ही रहना कायर लोगोंका काम है।

आचारांग सूत्र में मांस विधानकी बातको आपके

विद्वान मुनि शतावधानी रत्नचन्द्र जी स्वीकार करते हैं। स्वर्तीवान समालोचना में उन्होंने इस अनुचित विधानको प्रक्षिप्त (किसीका मिलाया हुआ) बतलाया है। यदि आप सरीखे महानुभाव साहसी बन कर शतावधानी जीका अनुकरण करें तो जैनधर्म का निर्मल यश बहुत कुछ सुरक्षित रह सकता है।

उपसंहार में आपने अपने ग्रन्थ की कुछ महिमा लिखी है उस विषयमें लिखना अनावश्यक है।

इस प्रकार मुनि मिश्रीमल जी की लिखी हुई 'दिगम्बर मतसमीक्षा' में जो मोटी त्रुटियाँ दीख पड़ी हैं संक्षेप में उन पर प्रकाश डाला है। आशा है मुनि मिश्रीमल जी इस प्रकाश में अपनी भूलोंको अच्छी तरह देख सकेंगे और भविष्य में ऐसी भूल करने की धृष्टता न करेंगे।

सैद्धान्तिक निवेदन

विद्वानों और साहित्य खोजियों के समक्ष आज मैं एक नूतन खोज का साग्रह आग्रह करता हूँ जिसका उदय सन् १९१९ में श्री. अर्जुन लाल जी सेठी द्वारा इटावा से निकलने वाले "सत्योदय" मासिक पत्र में 'स्त्री मुक्ति' शीर्षक लेख से हुआ था, जो आज भी पुस्तकाकार प्राप्त हो सकता है। सेठी जीका वक्तव्य दिगम्बर जैन समाज के विद्वानों को उत्तेजित करके खोज कराने के लिये था लेकिन सेठी जी के विचारों में यह भाव न था। उनकी चेष्टा चेष्टा रूप नहीं, कटाक्ष रूप दृष्टिगोचर होती है।

उस समय भी जैन विद्वानों ने खोज अवश्य की होगी जिसका वर्णन उस समय के समाचार पत्रों में अवश्य आया होगा। लेकिन, वह समाचार पत्र मेरे सन्मुख नहीं हैं इस लिये कोई धर्म हितैषी सज्जन उस समय के पत्रों का पता प्रकट करे तो मैं उनका पूर्ण आभारी होऊंगा।

मुझे यह तो निश्चय होगया कि जिस विषय की खोज करना आवश्यक था अच्छी लग्न से आगर जैन विद्वान व जैनेतर विद्वान उस विषयकी को खोजकर पूर्ति करते तो वह आज अवश्य पूर्णांश में दृष्टिगोचर होता, लेकिन वह अभी अपूर्ण ही है। इसलिये आज पुनः जैन धर्मावलम्बियों के प्रति यह याद दहानी रूप "निवेदन" प्रकट किया जाता है।

जैन दिगम्बर सम्प्रदाय में गोम्मटसार ग्रंथ तात्विक विषय और कर्म फिलासफी का एक मात्र और अपूर्व ग्रन्थ है। आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ने इस ग्रंथ को दो हिस्सों में जीवकान्ड और कर्मकाण्ड नामसे विभक्त किया है। स्त्री मुक्ति लेखमें इसीग्रंथराजकी गाथाओंकी शरण लेकर स्त्रीको मुक्ति होना सिद्ध किया है जो जैन दिगम्बर संप्रदाय के बिलकुल विरुद्ध है। स्त्री मुक्ति लेख में जो युक्तियां ग्रहण की है वे नितान्त अयुक्त जान पड़ती हैं। जिस का ज्ञान स्त्री मुक्ति लेखकी परीक्षा करने वाले सज्जन

को हो सकेगा। केवल इस समय यही विचारना है कि भविष्य में इन विचारों से जो निष्कर्ष निकले वह स्त्री मुक्ति की परीक्षा करने वालों को भी सुलभ रूप हो जाय

कर्मकाण्ड के प्रकृति समुत्कीर्तन नामक प्रथम अधिकार में कुल २६ गाथायें हैं।

अधिकार की रचना शैलीको देख कर यह सहज में पता लगाया जा सकता है कि इस अध्याय में १५०, २०० गाथाएं अवश्य होंगी। आचार्य महाराज ने विशेष रूप से अन्यान्य विषयों का वर्णन करते हुए कर्मों की मूल और उत्तर प्रकृतियों के उदयादिक का खूब विस्तार से वर्णन किया है, लेकिन, उन्हीं कर्म प्रकृतियों का जो क्रम श्री परम श्रुत प्रभावक मंडल की तरफ से प्रकाशित कर्मकाण्ड में है वह नितान्त शृङ्खला विरुद्ध ज्ञात होता है। जिसका संक्षेप वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में है।

२१ गाथा तक कथन शैली का क्रम वार वर्णन है, क्योंकि इसके ऊपर की गाथाओं में अष्ट मूल प्रकृतियों का उदाहरण सहित स्वरूप व उनमें क्रम का कारण और घातिया अघातिया के भेद प्रकट किये हैं। पाठक! यहाँ तक ग्रंथ को सन्मुख रख कर ग्रन्थ कथनका तार तम्य मिलाइंगे तो कोई विषय असम्बन्ध न मालूम होगा।

२२ वीं गाथा में अष्ट मूल कर्मों की प्रत्येक उत्तर प्रकृतियोंकी संख्या बतलाई है। वह गाथा यह है।

पंचणव दोण्णि अट्ठावीसं चऊरो कमेण तेणउदी।
ते उत्तरं सयं वा दुग पणगं उत्तरा होंति ॥२२॥

अर्थ—ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों में से प्रत्येक के भेद क्रम से ५, ९, २, २८; ४. ९३, अथवा १०३, २ और ५ होते हैं।

२३, २४, २५ गाथाओं में दर्शनावर्णी कर्म की ५ निद्राओं का उदाहरण सहित कथन है। इन गाथाओं के कथन से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि ज्ञानावर्णी कर्म के पांच भेद व दर्शनावर्णी कर्म के ९ भेदों में से पूर्व के चार भेदों को उदाहरण सहित प्रकट करने वाली आवश्यक गाथायें थीं जो अप्राप्त हैं। वेदनीय कर्म की दो और मोहनीय कर्म की २८ प्रकृतियों के भेदों को प्रकट करने वाली गाथायें भी अप्राप्त हैं। लेकिन, मोहनी कर्म में दर्शन मोहनी के तीन भेदोंका उदाहरण २६ वीं गाथा में है। इस गाथा से यह ध्वनि निकलती है कि इसके पूर्व की गाथाएं अदृश्य थीं।

आयु कर्म की ४ नाम कर्म की ९३ अथवा १०३ गोत्र कर्म की २ और अन्तराय कर्म की ५ उत्तर प्रकृतियों को उदाहरण सहित प्रकट करने वाली गाथाएं भी अन्य गाथाओं की तरह अप्राप्त ही हैं। मैं यह एक सुदृढ़ प्रमाण के साथ निवेदन रूपमें प्रकट करता हूं कि ग्रंथ रचयिता ने इन भेद प्रभेदों की गाथाओं को खूब सुदृढ़ और अपूर्व उदाहरणों सहित अन्यान्य कथन के साथ २ रचा होगा जिसका प्रमाण २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२ और ३३ गाथाओं से स्पष्ट होता है। ये २७ से ३३ तक गाथाएं नाम कर्म के सम्बन्ध की अन्य २ कथन शैली को लिये हुए हैं। विज्ञ विद्वान! जरा निम्न गाथाओं के संक्षेप कथन पर दृष्टिपात करें।

२७ वीं गाथा में ५ शरीरों के संयोगी भेदों को प्रकट किया है।

२८ वीं गाथा में कौन कौन से अङ्गोपाङ्ग होते हैं

बतलाया गया है।

२९, ३०, ३१ वीं गाथाओं में छहों संहननधारी जीवों के उच्च और अधोगति में जाने की मर्यादा प्रकट की है।

३२ वीं गाथा में कर्म भूमि की स्त्रियां के कौन २ संहनन होते है बतलाया गया है।

२९, ३०, ३१, ३२ वीं गाथाएं ग्रन्थ कर्ताने उसी स्थान पर रची होंगी जहां की षट् संहननों का कथन क्रम था। लेकिन संहननों को प्रकट करने वाली एक भी गाथा दृष्टि गोचर नहीं होती। दूसरे ३२वीं गाथा के विषय में एक जबरदस्त शङ्का यह उत्पन्न होती है कि जैसा कर्म भूमि की स्त्रियों के लिये संहननोंका क्रम बतलाया वैसा भोग* भूमिकी स्त्रियां व पुरुषों और कर्म भूमि के पुरुषों के लिये संहनन क्रम का बतलाना भी लाजमी था। लेकिन जो वस्तु अप्राप्त है उसके विषय में और क्या कहा जाय ?

३३ वीं गाथा में आताप प्रकृति का लक्षण बतलाया है।

इस प्रकार कर्मों की उत्तर प्रकृतियों का भेद प्रभेदों सहित वर्णन करने वाली गाथायें अप्राप्त होने से पाढम निवासी स्व० पण्डित मनोहरलाल जी ने स्वाध्याय प्रेमियों को कथन की जानकारी कराने के लिये प्रकृत विषय को गद्य में जोड़ कर प्रतिपादन किया है। इससे कथन क्रम की जानकारी तो हुई लेकिन; आचार्य महाराज की स्व कृति का तो अभाव ही रहा। इस लिये इस महान और विशाल ग्रन्थ के ऐसे उत्तम साहित्य भाग की कमी को देख कर जो दुःख उत्पन्न हुआ है उसका वर्णन करने को मेरी लेखनी असमर्थ है।

इसी अपूर्णता पर स्त्री मुक्ति के लेखक ने जो आचार्य कृति पर कटाक्ष किया है वह प्रत्येक जैन समाज के बच्चे बच्चे के हृदय को दुखित करने वाला है।

आचार्य श्रीमान श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती जैन समाज के लिये एक ऐसे अपूर्व और तत्व शैली की विशद व्याख्या वाला, कर्म फिलासफीका गोम्मट सार ग्रन्थ रच कर अपनी प्रतिभा को एक उच्च शिखरपर स्थापित करते और ग्रन्थराज में १६००, १७०० गाथाओं को स्थान देते किंतु १००, २२५ गाथाओं को रचने में इतनी कृपणता करते कि ग्रन्थ के असंबद्ध भाग का रञ्च मात्र भी विचार न कर के अपनी कृति को ओछी बनालेते ऐसा तो आचार्य महाराज की कृति के प्रति जैन क्या जैनेतर विद्वान भी स्वप्न में विचार नहीं ला सकते। इन्हीं भावों के उदयसे यह विचार उत्पन्न हुआ कि कर्णाटक देश से जब यह ग्रंथ प्रथम ही इस देश में लिपि बद्ध होकर आया उस समय या तो पूर्व प्राचीन प्रति के पत्रों के जीर्ण होने से अथवा लेखकों के कथन शैली समझ में न आने से उन लेखकों ने इस कथन को अपूर्णांश में ही रक्खा। और यह ग्रथ इसही प्रकार पठन पाठन के कार्य में आता रहा। लेकिन आज वह स्थिति नहीं है जो भूतकाल में थी। आज हम विद्याध्ययन का प्रचार व अपना मन्तव्य शीघ्र ही समाचार पत्रों द्वारा एक दूर स्थान में पहुंचा कर

* भोगभूमि में पुरुषों और स्त्रियों के पहला संहनन ही होता है यह बात उदय प्रकरण में ज्ञात होती है और कर्म भूमिज मनुष्यों के छहों संहनन होते हैं अतः बतलाने की आवश्यकता नहीं। -सं०

देश विदेश समाचार

शोक—त्याग मूर्ति स्व० पं० मोतीलाल नेहरू की पुत्रवधू और जवाहरलाल जी नेहरू की धर्मपत्नी श्रीमती कमला नेहरू का विलायत में स्वर्गवास हो गया है। उन की दग्धक्रिया वहीं होगी भस्म भारतवर्ष में लाई जावेगी।

जापान में भीषण विद्रोह—युद्धप्रेमी गर्मदल के ३ हजार पैदल सैनिकोंने जापान में विद्रोह कर दिया है। ८० ऊंचे अफसरों अफसरों की हत्या कर डाली है जिससे नया मंत्रीमंडल बनाना पड़ा है किन्तु मंत्रीमंडल के सदस्य भयभीत हैं। महल से बाहर नहीं निकलते। समस्त जापान में इस समय मार्शलला लगा हुआ है। जापानसे समाचार भेजने के समस्त साधन बंद कर दिये हैं।

जर्मनी; महायुद्ध से पहले के अपने प्रान्त सार राइनलेण्ड पर कब्जा करने के लिये आक्रमण करने वाला है ये दोनों प्रदेश इस समय फ्रांस के अधिकार में हैं।

—डा० ताराचन्द्र जी एम० ए० पी० एच० डी० हिन्दी डालन यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर हैं आप लाहौर निवासी एक संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान हैं।

शिक्षितों की संख्या

देश	पुरुष		स्त्री	
इङ्गलैण्ड	९३-४ प्रतिशत		९१-४ प्रतिशत	
अमेरिका	९५.५	”	९३	”
डेनमार्क	१००	”	१०६	”
जर्मनी	१००	”	१००	”
जापान	९८	”	९६	”
फिलीपाइन	७०-५	”	९६	”
फ्रांस	९६.५	”	९४	”
भारत	५-२	”	१-६	”

—वैज्ञानिकों का अनुमान है कि समुद्र के जल में कम-से-कम ७,००,०००,००० छटांक सोना घुला पड़ा है। जल से सोना निकालने का प्रयत्न किया भी गया, पर असफल रहा। क्योंकि लागत बहुत बैठती है। यदि कोई सस्ती युक्ति निकल आये, तो इतना सोना मिल सकता है कि आजकल की मन्दी गायब हो जाय।

—एबेसीनियाको १॥ करोड़ कारतूस, ११ हजार बन्दूकें और आग लगाने वाले बम गए हैं इटली के जहाजों के लिये लीग के बन्दरगाह बन्द कर दिए और तटस्थ शक्तियों के जहाजों को भी इरीटेरिया में समान न पहुंचाने दिया जाय ऐसा लीग कौंसल की मीटिंग में प्रस्ताव पेश हो रहा है।

—शेफील्ड के एक वैज्ञानिक ने एक नई तरह की फौलादका आविष्कार किया है। जिसपर पालिस करने पर धब्बा नहीं लगेगा और न उस पर जंक चढ़ेगा।

देश विदेश समाचार

शोक—त्याग मूर्ति स्व० पं० मोतीलाल नेहरू की पुत्रवधू और जवाहरलाल जी नेहरू की धर्मपत्नी श्रीमती कमला नेहरू का विलायत में स्वर्गवास हो गया है । उन की दग्धक्रिया वहीं होगी भस्म भारतवर्ष में लाई जावेगी ।

जापान में भीषण विद्रोह—युद्धप्रेमी गर्मदल के ३ हजार पैदल सैनिकोंने जापान में विद्रोह कर दिया है । ८० ऊंचे अफसरों अफसरों की हत्या कर डाली है जिससे नया मंत्रीमंडल बनाना पड़ा है किन्तु मंत्रीमंडल के सदस्य भयभीत हैं । महल मे बाहर नहीं निकलते । समस्त जापान में इस समय मार्शलला लगा हुआ है । जापानसे समाचार भेजने के समस्त साधन बंद कर दिये हैं ।

जर्मनी; महायुद्ध से पहले के अपने प्रान्त सार राइनलेण्ड पर कब्जा करने के लिये आक्रमण करने वाला है ये दोनों प्रदेश इस समय फ्रांस के अधिकार में हैं ।

—डा० ताराचन्द जी एम० ए० पी० एच० डी० हिन्दू ढाका यूनीवर्सिटी के प्रोफेसर हैं आप लाहौर निवासी एक संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान हैं ।

शिक्षितों की संख्या

देश	पुरुष		स्त्री	
इङ्गलैण्ड	९३-४	प्रतिशत	९१-५	प्रतिशत
अमेरिका	९५.५	”	९३	”
डेनमार्क	१००	”	१०९	”
जर्मनी	१००	”	१००	”
जापान	९८	”	९६	”
फिलीपाइन	७०-५	”	९६	”
फ्रान्स	९६.५	”	९४	”
भारत	५-२	”	·१-६	”

—वैज्ञानिकों का अनुमान है कि समुद्र के जल में कम-से-कम ७,००,०००,००० छटांक सोना घुला पड़ा है । जल से सोना निकालने का प्रयत्न किया भी गया, पर असफल रहा । क्योंकि लागत बहुत बैठती है । यदि कोई सस्ती युक्ति निकल आये, तो इतना सोना मिल सकता है कि आजकल की मन्दी गायब हो जाय ।

—एबेसीनियाको १॥ करोड़ कारतूस, ११ हजार बन्दूकें और आग लगाने वाले बम गए हैं इटली के जहाजों के लिये लीग के बन्दरगाह बन्द कर दिए और तटस्थ शक्तियों के जहाजों को भी इरीटेरिया में समान न पहुंचाने दिया जाय ऐसा लीग कौंसल की मीटिंग में प्रस्ताव पेश हो रहा है ।

—शेफील्ड के एक वैज्ञानिक ने एक नई तरह की फौलादका आविष्कार किया है । जिसपर पालिस करने पर धब्बा नहीं लगेगा और न उस पर जंक चढ़ेगा ।

REGD No. L.
3459.

—नई योजना के अनुसार गवर्नमेंट इण्डस्ट्रीयल स्कूल फिरोजपुर में ग्रामोफोन, घड़ियां, सीने की मशीनें तथा बाइसिकल बनानेकी पढ़ाई जारी होगी पञ्जाबमें यह पहला स्कूल होगा जहां इन चीजों के बनाने की शिक्षा दी जायगी। यहांकी बनी हुई चीजें बहुत सस्ती होंगी। साईकिल की कीमत ५ रुपये और सिलाई की मशीनकी कीमत २०) रुपये से अधिक न जायेगी।

—वायसराय के कप्युकाब रेस में मेजर मिश्री-चन्द् ने सर्वप्रथम आने के कारण पुरस्कार में ट्राफी और ७०००) प्राप्त किया है।

—यू. पी. के कोषमें दो एक लाख रुपयेकी बचत करने के लिये गवर्नमेंट जिला देहरादून तोड देनेका विचार रखती है। इसके लिये देहरादून निवासियों की एक सार्वजनिक सभा हुई जिसमें इस प्रकारकी तजवीज का विरोध किया गया।

—आगरे में जमना-पुल के पास रामबाग के एक माली के घर लड़का पैदा हुआ, जो पैदा होते ही बोलने लगा। यह देख कर मां बाप भयभीत हुए और उन्हों ने पुलिस में खबर की। फलस्वरूप डाक्टरों ने उसे देखा, मगर उन की समझ में कुछ नहीं आया। सैकड़ों आदमी उसे देखने गये। तीन दिन बाद वह मर गया।

—"वायसराय आफ इण्डिया" नामक जहाज से ३५१२२४२ रु० का सोना और सावरन बम्बई से यूरोप और अमेरिका भेजे गये। अब तक २३२६५७१६४६) रु का सोना भारत से विलायत जा चुका है।

—कराची में एक पांच वर्ष का लड़का विचित्र परस्थितियों में मर गया। कारण यह बताया गया है कि एक कैंची खुली हुई फर्श पर पड़ी थी कि लड़का खेलता हुआ उस पर आ गिरा, कैंची उस के कोख में घुस गई। लड़केके जोरों से खून निकलने लगा, बाप उसे अस्पताल ले जारहा था कि रास्ते में ही लड़का चल बसा।

—काकोरी डकैती केस के राजनैतिक कैदी श्री योगेशचन्द्र चटर्जी को जेलमें भूख हड़ताल किये २१ फरवरी को १०६ दिन हो गये हैं। सरकार उनकी मांग पूरी नहीं करती और वे बिना मांग पूर्ण किये भोजन नहीं करना चाहते उनकी दशा खतरनाक है।

—गत मुहर्रम के समय फीरोजाबाद में जो हिन्दू मुस्लिम दंगा हुआ था उस केस में सेशन जज ने ३३ आदमियों को जन्मभर काले पानी का दण्ड दिया है।

—महात्मा गांधी के बड़े पुत्र हीरालाल गांधी के विषय में यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि वे ईसाई होने वाले हैं उस समाचार का प्रतिवाद करते हुए हीरालाल ने लिखा है धर्म परिवर्तन का मेरा कोई इरादा नहीं।

—जैसलमेर राज्य में कस्टम सुपरिन्टेंडेन्ट के स्वर्गवास हो जाने पर उस पद पाने के अधिकारी को वह पद इस कारण नहीं दिया गया कि दाढ़ी छोटी होने से उसका चेहरा रौबीला नहीं था।

—बहावलपुर रियासती जेल में खराब भोजन मिलने के कारण हिन्दू नेताओं ने २३ फरवरी से भूखहड़ताल कर रक्खी है।

—ब्रिटेन में वायुयानों को मार गिराने के लिये एक ऐसी मशीनगन बनायी है जो एक मिनट में १००० फायर करती है।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

जैन समाचार

उदयपुर की श्री पार्श्वनाथ दि० जैन विद्यालय प्रभृति धार्मिक संस्थाओं से, गत फरवरी मास में निम्न प्रकार लाभ लिया गया।

विद्यालय में ५५ छात्र, बोर्डिंग में ४५, कन्याशाला में ४० कन्याएं, एवं औषधालय से ११०० जैन अजैन सर्वसाधारण स्त्री पुरुषों एवं बच्चों ने स्वास्थ्य लाभ किया। धर्मशाला में १०० यात्री ठहरे।

निरीक्षण सम्मति—श्री पन्नालाल दि० जैन विद्यालय फीरोजाबादका निम्नलिखित महानुभावोंने निरीक्षण करके अपनी अनुकूल शुभ सम्मति प्रगटकी है (स्थानाभाव से वह पूर्णरूप में प्रकाशित नहीं की गई)।

—सन्तलाल जैन हैडमास्टर म्यु० बो० सुदर्शन स्कूल

२—चौधरी श्यामसरूप सिंह, चेअर मन एजूकेशन म्यु० बोर्ड

३—हकीम बाबूराम जैन म्यु० कमिश्नर

—देहली में "महावीर जयन्ती उत्सव" २, ३, ४ अप्रेल सन् १९३६ मिती चैत्र सुदी ११, १२, १३ वार बृहस्पतवार, शुक्र वार तथा शनिवारको बड़े समारोह के साथ मनाया जायगा। साथ ही मित्रमंडल का २१ वां वार्षिकोत्सव, सार्वधर्म सम्मेलन और भगवान पुण्यकीर्तनके उपलक्ष्य में कवि-सम्मेलन आदि भी होंगे।

सार्वधर्म सम्मेलन का विषय—

नास्तिकत्व

कवि-सम्मेलन की समस्याएं—

हिन्दी—दिव्य ज्योति का प्रकाश है।

उर्दू—मुनव्वर आज आलम है

किसी के नूर इरफां से।

नोट १—कविताएं महावीर स्वामी के सम्बन्ध में होनी चाहिएं।

२—सार्वधर्म सम्मेलन २ अप्रैल बृहस्पतवार

३—कवि सम्मेलन हिन्दी ३ अप्रैल शुक्रवार

" उर्दू ४ अप्रैल शनिवार

आपका कृतज्ञ—

मंत्री

जैन मित्र मंडल, देहली।

निवेदन—पूर्व अङ्क में प्रकाशित सूचना के अनुसार अकलंक प्रेस १० दिन के बजाय २-३ दिन बन्द रहा अतः जैनदर्शन का संयुक्त अंक निकालने का अवसर नहीं आया।

जैनसत्यप्रकाश नामक श्वे० पत्र के दिगम्बरीय सिद्धान्तों पर आक्षेपात्मक लेखों का प्रतिवाद स्थानाभाव से इस अंक में नहीं छपा अग्रिम अंक से प्रारम्भ होगा।

जैनदर्शन के विषय में पत्र व्यवहार करते समय ग्राहक महानुभावों को अपना नंबर अवश्य लिखना चाहिये।

व्यवस्थापक—जैनदर्शन

नागौर—एक ओसवाल कन्या जिसकी आयु ९ महीनेकी है औरओसवाल बालक जिस की आयु १५ महीने की है दोनों का विवाह सम्बन्ध होना निश्चित हो गया है और शीघ्र ही रस्म होने वाली है।

अकलंकदेवाय नमः
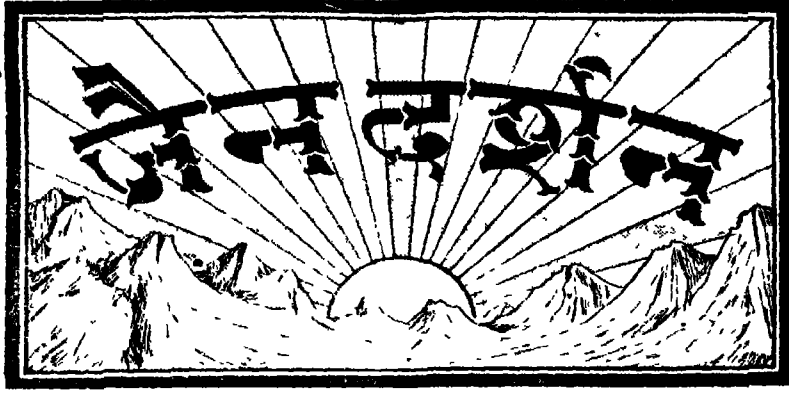
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्ररश्मिर्भव्याब्जसंविकसनपटुर्गोभि:
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यात्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री चैत्र वदी ८—सोमवार श्री वीर सं० २४६२ | १६ मार्च १९३६

आत्म निवेदन

लेखकः—
श्रीमान सुगन सकलेचा

जीवन क्या है व्यथा कहानी !
ये चिर संचित महा पाप की प्रतिछाया मन मानी !!

वह ऊषा थी-एक-स्वप्न-सी,
औ दोपहरी क्षणिक न निखरी।
संध्या थी, अब जग जीवन में,
और अमा की वीरानी ॥

जीवन क्या है व्यथा कहानी !
ये चिर संचित महा पाप की प्रतिछाया मन मानी !!

जीवन में माता सब सोई,
सुख स्मृतियां जाती खोई ।
अंत—राय जागा, जागी,
सारी बाधाएं मन मानी ॥

जीवन क्या है व्यथा कहानी !
ये चिर संचित महा पाप की प्रतिछाया मन मानी !!

टूटी वीणा पीड़ा लय में,
हाय, भाग्य विपरीत उदय में।
हा, निर्धन के रे आटे में,
अधिक पड़ गया पानी ॥

जीवन क्या है व्यथा कहानी !
ये चिर संचित महा पाप की प्रतिछाया मन मानी !!

तप धर्म

(ले०—जैनदर्शन शास्त्री पं० श्रीप्रकाशजी जैन, न्यायतीर्थ)

['तप क्या है, वह क्यों करना चाहिये, कब करना चाहिये और कैसे करना चाहिये' का मार्मिक विवेचन]

संसार के विषयों में प्रवृत्त होती हुई इच्छाओं को रोक कर आत्म-शुद्धि की चेष्टा करना तप है। इन्द्रियों के आत्मवृत्ति से विमुख होकर बाह्य विषयों में प्रवृत्त रहते हुए तपश्चरण नहीं हो सकता। अपनी इच्छाओं को अन्य किसी ओर न जाने देकर एक मात्र आत्म-शुद्धि के लिये सर्वस्व लगा देना तपस्वी के लिये अनिवार्य है। जिन कार्यों से आत्म-शुद्धि, कर्मक्षय नहीं होता, उन्हें तप समझना भ्रम है। बिना अन्तरङ्ग के शुद्ध हुए, किसी तीर्थ में जाने से बड़े बड़े नदी समुद्रादि जलाशयों में नहाने, पर्वत की चोटी से गिरने से या और भी लंघनादि दुष्कर कार्यों के करने से आत्मा पवित्र नहीं हो सकती। व्यर्थ कायक्लेश होने के अतिरिक्त इनसे और कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

जैनाचार्यों ने तप को धर्म का एक अङ्ग माना है। वे इसे अनुपचरित या आत्मिक धर्म मानते हैं। यदि केवल तपना या निरर्थक कायक्लेश पहुंचाना ही तप होता तो जैनाचार्य तप की अव्यवहित धर्ममें कदापि गणना नहीं करते। उन्हों ने लिखा है—"उपार्जित कर्म-क्षयार्थं तप्यत इति तपः।" अर्थात् पूर्वोपार्जित कर्मों के क्षय के लिये जो तपश्चरण किया जाता है, वह तप है।

तप का प्रधान उद्देश्य है आत्म-शुद्धि। जिस प्रकार अग्नि में तपाने से कालिमादि के दूर हो जाने पर सुवर्ण विशुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार तपश्चरण की वह्नि से कर्मपरमाणुओं के निर्जीर्ण हो जाने पर कर्म-मल-रहित हो कर आत्मा भी शुद्ध-बुद्ध परम-पावन बन जाता है। उसमें किसी प्रकार का मैल नहीं रह जाता।

तप का लक्ष्य बहुत ऊंचा है। आज उसका महत्व न समझने से, उसके रहस्य को भूल जाने से, उसका स्वरूप यथार्थ रूप में दिखाई नहीं देता। आज तपश्चरणकी हामी भरने वाले बहुत हैं, पर उस के यथोचित रूप को समझने वाले बहुत कम हैं। तपस्वी बनने वाले को सर्वप्रथम इस ओर ध्यान देना चाहिये कि तप क्या है? वह क्यों करना चाहिये? कब करना चाहिये? और कैसे करना चाहिये? तप के रहस्य और उद्देश्यको समझे बिना तपस्विता का ढोंग धारण करना उसकी हंसी करना है। इस से उसका महत्व नष्ट हो जाता है।

जैनाचार्यों ने तप के दो भेद किये हैं:— बाह्य और अभ्यन्तर। अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशय्यासन और कायक्लेश ये छह बाह्य तप हैं। तथा प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान ये छह अन्तरङ्ग तप गिनाये हैं*। अनशनादि बाह्यद्रव्य-भोजनादि की अपेक्षा रखते हैं बाहर में दूसरों को दिखते हैं तथा

* अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्याग-विविक्तशय्यासनकायक्लेशाः बाह्यं तपः। प्रायश्चित्त-विनय वैयावृत्यस्वाध्याय-व्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम्॥ तत्वार्थसूत्र

इन्हें पाखण्डी भी कर सकते हैं इसलिये बाह्य है। + प्रायश्चित्तादि में किसी बाह्यद्रव्य की अपेक्षा नहीं रहती, न ये दूसरों को दिखाने की इच्छा से ही किये जाते हैं और न पाखण्डी इन को तपरूप में करते हैं इसलिये ये अभ्यन्तर कहलाते हैं। बाह्यतपका प्रभाव शरीर पर पड़ता है और अभ्यन्तर का सम्बन्ध आत्मा से है। अनशनादि बहुत दुष्कर व्रत हैं, इन के करने में जितना शारीरिक कष्ट सहना पड़ता है उतना प्रायश्चित्तादि में नहीं। पर आत्मशुद्धि या निर्जरा के साधन प्रायश्चित्तादि ही हैं अनशनादि नहीं। अनशनादि कष्टसहिष्णुता के अभ्यास को बढ़ाते हैं इस लिये उपचार से इन्हें भी तप कह देते हैं। यदि वास्तव में विचारा जाय तो अनशनादि तप नहीं, मुख्य तप के सहायक मात्र हैं। क्योंकि इन पर उन की सफलता और वृद्धि अवलम्बित है। प्रायश्चित्तादि की सिद्धि के लिये किसी रूप में अनशनादि को भूल जाना और आत्म-शुद्धि की ओर ध्यान न देना मूर्खता और अज्ञान है। आत्म-शुद्धि के लिये कोई कार्य किये बिना अनशनादि करना व्यर्थ है—निष्प्रयोजन और आत्मवञ्चना मात्र है। मुमुक्षुओं को इस बात का पूर्ण विचार होना चाहिये कि अभ्यन्तर तप मुख्य है और बाह्य गौण। जितना बाह्य हो उस से बहुत अधिक अभ्यन्तर के होने की आवश्यकता है। और ऐसा होने पर ही तप की सफलता है।

तप का जैसा स्वरूप धर्मशास्त्रों में समझाया गया है, उस का पूर्णरूप से पालन साधु ही कर सकते हैं। गृहस्थों से ऐसा होना दुष्कर है। इस लिये गृहस्थ और साधुओं के धर्म को दृष्टि में रख कर हम यहां इनकी उपयोगिता पर विचार करेंगे।

अनशन

अशन, स्वाद्य, खाद्य और पेय—इन चारों प्रकार के रसनेन्द्रिय के विषयों का परित्याग कर अन्य सम्पूर्ण इन्द्रियों के विषयों से विरत हो आत्मस्वरूप में लीन होने को अनशन या उपवास कहते हैं *। आज केवल भोजन के त्याग को उपवास समझने लगे हैं, पर केवल भोजन के त्याग से अनशन तप का उद्देश्य सिद्ध नहीं होता। लौकिक ख्याति, पूजा, देवता-आराधन, मन्त्र-साधन आदि की अपेक्षा न करके जो संयम की सिद्धि के लिये, राग के उच्छेद के लिये, कर्मों के विनाश के लिये, ध्यान-स्वाध्याय में निर्विघ्नता के लिये, इन्द्रियों के जय के लिये, कामवासना के नाश के लिये और निद्रा प्रमाद को जीतने के लिये जो भोजन का परित्याग करना है, वही सच्चा अनशन है। और इसी से आत्म-शुद्धि में सहायता मिल सकती है। विषय और कषायों का त्याग किये बिना केवल अन्न का परित्याग कर देना लंघन मात्र है ×। उसकी कोई उपयोगिता नहीं। अनावश्यक—परमार्थ सिद्धि में विघ्न उपस्थित करने वाले—भोजन से विरत होने के लिये अनशन की

+ बाह्यं भोजनादिकमपेक्ष्य प्रवर्तते, परप्रत्यक्षं वा वर्तते, परदर्शने पाषण्डिगृहस्थैश्च क्रियते ततो बाह्यमुच्यते। यतः परतीर्थ्यैरनालीढं स्वसंवेद्यं बाह्यद्रव्यानपेक्षं ततोऽभ्यन्तरं तप उच्यते। —षट्प्राभृतटीका।

* "स्वार्थादुपेत्य शुद्धात्मन्यक्षाणां वसनाल्लयात्।
उपवासोऽशनस्वाद्यखाद्यपेयविवर्जनम् ॥"
—अनगारधर्मामृत।

× "कषायविषयाहारत्यागो यत्र विधीयते।
उपवासः स विज्ञेयः शेषं लङ्घनकं विदुः॥

उपयोगिता सिद्ध की गई है। निष्प्रयोजन निराहार रहकर कायक्लेश सहने का कोई भी शास्त्र उपदेश नहीं देता। भोजन के निमित्त से—अन्न के प्रभाव से—इन्द्रिय और मन की प्रवृत्ति स्वच्छन्द—उच्छृ-ङ्खल—हो जाती है, जिससे परमार्थ साधन नहीं हो सकता। इस लिये तपस्वी को परमार्थ सिद्धि या आत्म-शुद्धि के लिये नियमित काल या यावज्जीवन के लिये भी उपशम करने की शास्त्रों में आज्ञा दी गई है। सकृद्भुक्ति—एक भोजन—से लेकर षाण्मासिक और कहीं कहीं वार्षिक अनशनों की भी चर्चा शास्त्रों में दिखाई देती है।

जिनका शरीर असमर्थ है—आहार किए बिना जिनसे धर्मसाधन नहीं बन सकता, उन्हें अनशन नहीं करना चाहिये। क्योंकि रत्नत्रय रूप धर्म का आद्यसाधन शरीर ही है। शरीर के अपने वशवर्ती न होते हुए रत्नत्रय के मुख्य आधार तपका और ऐसे ही अन्य धर्मों का यथोचित पालन नहीं हो सकता। इस लिये साधुओं को भी भोजन, पान शयन आदि के द्वारा इसके स्थिर रखने का प्रयत्न करना चाहिये। क्योंकि 'शक्तितस्त्यागतपसी' इस नियम से अपनी शक्ति या सामर्थ्य के अनुसार ही त्याग और तप करने का उपदेश दिया गया है, दबाव या भार रूप से नहीं यदि किसी को हठ करके या शक्ति के न रहते हुये भी उपवास कराया जाय तो उसका फल विपरीत ही होता है। श्री पं० आशाधर जी ने लिखा है।

"यन्नाहारमयो जीवस्तदाहारविराधितः।
नार्तरौद्रातुरो ज्ञाने रमते न च संयमे॥"

"प्रसिद्धमन्नं वै प्राणा नृणां तत्याजितो हठात्।
नरो न रमते ज्ञाने दुर्ध्यानार्तो न संयमे॥"

अर्थात्—यह जीव आहारमय है। द्रव्यप्राण अन्न से इस का जीवन-निर्वाह होता है, यह सर्व विदित है। यदि हठ से इसका आहार छुड़ा दिया जाय तो आर्त और रौद्र परिणामों से पीड़ित हुआ यह ज्ञान और संयम में संलग्न नहीं हो सकता।

किन्तु असमर्थ तपस्वी के लिये भी यह अनिवार्य है कि वह कभी गृद्ध, सरस और स्वादु भोजन जो इन्द्रियों को उत्तेजित करने वाला है और तपश्चरण से विचलित कर उन्मार्ग में ले जाने वाला है—न ले। शरीर की स्थिति के लिये, जितना भी साधारण हो सके, भोजन ग्रहण कर परमार्थ साधन में लगा रहे।

जो जितेन्द्रिय है—जिनके इन्द्रियां और मन अपने वश में है—वे उपवास करें या न करें कोई हानि नहीं। वे अन्न-जल ग्रहण करते हुए भी उपवास से समझे गये हैं, क्योंकि इन्द्रिय और मन का स्वाधीन रखना ही तो उपवास है। श्री स्वामी कार्तिकेय मुनि ने लिखा है:—

"उवसमणं अक्खणं उववासो वण्णिदो मुणिंदेहिं।
तह्मा भुंजंता वि य जिदिंदिया होंति उववासा॥"

यह तो हुआ मुनियोंका मार्ग, अब गृहस्थों की सामर्थ्य पर विचार करना चाहिये गृहस्थों को गृह-सम्बन्धी कार्यों की चिन्ता रहती है, इस लिये वे त्यागियों के मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकते। गृहस्थोंको अपनी शक्तिके अनुसार अपना मार्ग निर्धारित करना चाहिये। धर्मसाधन का ध्येय एक होते हुए भी सब को एक ही मार्ग का अवलम्बन करना आवश्यक नहीं है। तप में शक्ति की अपेक्षा

मुख्य है। शक्ति न होते हुए जो सामर्थ्यवान की बराबरी करता है उसे पछताना पड़ता है। इस लिये जिस में सामर्थ्य हो, उपवास करने पर जिसे अपने परिणामोंमें आकुलताकी सम्भावना न हो, उसे उचित है कि वह तपश्चरण के लिये अनशन ग्रहण करके, कषाय और विषय-वासना का परित्याग कर अपना सम्पूर्ण समय पवित्रस्थानों में ध्यान अध्ययन स्वाध्यायादि या धर्मचर्चामें व्यतीत करे। जो उपवास करने में असमर्थ है उसे उचित है कि वह एकाशन करे और अपने परिणामों में आकुलता न होने दे तथा धर्मसाधन में लगा रहे। जो अपने को एकाशन करने में समर्थ नहीं समझता वह यदि दो बार भोजन करके भी अपने अवशिष्ट समय को धर्मानुष्ठान में लगा दे तो अच्छा है। यह शास्त्रकारों का मत है।

शक्ति न रहते हुए भी जो अनशन करते हैं वे धर्मसाधन के रहस्य को भी नहीं समझते। उन्हें इसका भयंकर फल मिलता है। निराहार रहने से गर्मी बढ़ जाती है और स्वास्थ्य को धक्का पहुंचता है। यह धर्म की अपेक्षा आपत्ति का साधन है। तप-साधन करने वाले का इस ओर पूरा ध्यान देना चाहिये कि आकुलता न बढ़ने पावे। क्योंकि आ-कुलता में परिणाम स्थिर नहीं रहते और परिणामों के स्थिर हुए बिना कोई क्रिया फलवती नहीं होती।

आज गृहस्थों ने उपवास की और उसके आश्रय से सफल होने वाले सम्यक तप की खिल्ली उड़ा रक्खी है। वे उपवास करते हैं—भूखे रहते हैं; पर अनशन के सच्चे उद्देश्य को समझे बिना उससे कोई लाभ नहीं उठाते। उनके आत्मा का इससे उत्थान नहीं होता। इस ध्रुव सत्यको व्यक्त कर मैं किसी के धर्माचरण को निष्फल सिद्ध करना नहीं चाहता। इन पंक्तियों के लिखने का इतना ही प्रयोजन है कि धर्माचरण का उचित रूप—सत्यमार्ग, जैसा कि शास्त्र बतलाता है, सब को विदित हो जाय। हमारी माता और बहिनें उपवास करती हैं, बेला करने का साहस करती है, तेला और कभी कभी चौला तक भी कर डालती हैं, पर वे व्यर्थ ही कष्ट सहती हैं। उपवास की उपयोगिता का उन्हें कोई ध्यान नहीं। उपवास के दिन निराहार रह कर भी वे घर में ही अधिकतर रहती हैं। गृह सम्बन्धी आरम्भ-परिग्रह का उनके त्याग नहीं होता। घर का कौनसा ऐसा कार्य है जिसे वे नहीं करतीं। जहां तक मैं ने देखा है अधिकतर अन्न और जल न ग्रहण करने के अति-रिक्त उपवास के दिवस साधारण दिनों से उसमें कोई विशेषता नहीं रहती। अबोध बालिकाओं और प्रारम्भ में उपवास करने वाली बड़ी स्त्रियों की भी अनशन के दिन जो हालत रहती है और इससे वे जितना धर्म साधन कर लेती है (?) यह भी हमारे समाज के किसी भाई को अविदित नहीं है। फिर भी ऐसी हालत में उपवास करने की उपयोगिता क्या है यह वे ही जानें। श्री स्वामि कार्तिकेय महा-राज ने लिखा है—

"उपवासं कुव्वाणो आरंभं जो करेदि मोहादो।
तस्स किलेसो अवरं कम्माणं णेव णिज्जरणं॥"

अर्थात—जो उपवास करता हुआ भी मोह से आरम्भ गृह सम्बन्धी कार्यादिक—करता है, उसके गृहसम्बन्धी कार्योंका क्लेश तो था ही उपवास करने से क्षुधा तृषा का क्लेश और हो गया, इस प्रकार क्लेश-वृद्धि ही हुई कर्मों का निर्जरा नहीं।

हां, वे धर्म-बुद्धि से निराहार रहते हैं, इसमें विवाद नहीं, पर केवल यह मान लेने से ही उनकी आत्मा का कल्याण नहीं हो सकता। आत्म-शुद्धि के लिये भावों की विशुद्धता पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। और निराहार रहने की अपेक्षा क्रोध को जीतने की, मान को त्यागने की, माया को छोड़ने की, लोभ का परित्याग करने की और राग तथा द्वेष समूल उन्मूलन कर डालने की अधिक उपयोगिता है। ज्ञानी जन उपवास करने की इच्छा भी नहीं करते, वे केवल शुद्धोपयोग को ही अपनाना चाहते हैं। उपवास करने से शुद्धोपयोग की बढ़ती में सहायता मिलती है, इस लिये आनुषङ्गिक रूप में उसे भी अपनाते हैं। मुख्य रूप में नहीं।

स्वास्थ्य सुधार की दृष्टि से किया गया उपवास भी तप नहीं, क्योंकि वह शारीरिक रोगों के निराकरण के लिये ही किया जाता है, आत्म-शुद्धि की भावना उसमें नहीं रहती। ऐसे उपवाससे अस्वस्थ होने पर यदि वह उपयोगी हो तो, शरीर सुधर सकता है, आत्मकल्याण नहीं होता। इस लिये शास्त्र विहित तप की श्रेणी में वह नहीं आ सकता।

लेख बहुत बढ़ जाने से पाठकों को अरुचि न हो इस लिये उपवास पर अब अधिक न लिख कर तप के अन्य भेदों पर भी यहां हम संक्षेप में ही प्रकाश डालेंगे।

अपूर्ण

—वायु—

(ले०—श्रीमान पं० कपूरचन्द्रजी जैन बनारस)

हवा को जैन शास्त्र में वायुकायिक स्थावर जीव माना है। हवाको सिर्फ एक स्पर्शन इन्द्रिय ही होती है। हवा का आधार आकाश है, और लोक के चारों तरफ हवा का घेरा है, ये सब बातें तो जैनशास्त्रों के अनुसार हुईं। प्राचीन सिद्धान्त के अनुसार हवा एक महाभूत मानी जाती थी, परन्तु आधुनिक विज्ञान शास्त्र ने हवा को कई गैसों का मिश्रण माना है। परन्तु मिश्रण होने पर भी हवा को भौतिक मिश्रण (Mixture) मानते हैं न कि रासायनिक यौगिक (Chemical Compound)। इस लेख में मैं सिर्फ वायु के वैज्ञानिक इतिहास मिश्रण और उस की परीक्षा, वायु की अशुद्धियां आदि पर प्रकाश डालूंगा।

वैज्ञानिक इतिहास में हवा भौतिक मिश्रण है या महाभूत (Element) इस का आविष्कार भी एक मुख्य घटना है जो कि प्रायः सभी धर्मोंके सिद्धान्तोंके

विरुद्ध है रोबर्ट ब्याल नामक वैज्ञानिक के पहले हवा वैज्ञानिकों द्वारा भी एक महाभूत मानी जाती थी, परन्तु राबर्ट ब्याल तथा उस के शिष्यों ने जिनका नाम होके (Hooke) तथा मायो (Mayow) था, इस बात को साबित किया कि हवा में एक नहीं बल्कि दो गैसों का मिश्रण है। उस के बाद लोभेसिया नामक वैज्ञानिक ने इस बात को सिद्ध कर दिया कि हवा में ⅘ भाग नाईट्रोजन (Nitrogen) नामक गैस का ⅕ भाग और आक्सीजन (Oxygen) नामक गैस है। इस के बाद धीरे धीरे और और गैसों का पता चला जैसे कार्बन-डाई-ऑक्साईड जलवाष्प, धूलि, आदि हवा के अस्थिर घटक हैं :-

१ नाइट्रोजन (Nitrogen – हवा में ⅘ इसका भाग है। इस का मुख्य काम प्राण-वायु (Oxygen) को हलका करना, तथा उस की क्रिया शक्ति को कम करना है। क्योंकि अगर हवामें सिर्फ आक्सिजन ही होता तो मनुष्यों का जीना दुर्लभ होता, और सब का शरीर इस गैस में जलकर भस्म हो हो जाता। नाईट्रोजन का कार्य वनस्पतियों का पोषण करना भी है। जब पानी बरसता है, तब पानीकी बूंदों में इस गैस का कुछ अंश घुल जाता है, और इस प्रकार वृक्षों तक पहुंच जाता है। यह वायु स्वाद, गंध, तथा रंग रहित है। इस गैस में कोई चीज नहीं जल सकती। इस गैस में रह कर कोई मनुष्य या प्राणी जिंदा नहीं रह सकता नाइट्रोजन गैस साधारण हवा से हलकी होती है। यह गैस पानी में आक्सीजन की अपेक्षा कुछ अधिक घुलने वाली होती है।

२—आक्सीजन (Oxygen)— यह गैस रंग, गंध तथा स्वाद रहित होती है। यह गैस किसी भी चीजके जलनेमें सहायक होती है (Supports combustion) यह गैस साधारण हवा से भारी तथा पानी में कम घुलती है। इसी गैस के पानी में घुले रहने के कारण मछलियाँ, जिन में इतनी शक्ति होती है कि पानीसे आक्सीजन ले सकें, जीती हैं, वरना अगर इस गैस का हिस्सा जल में न रहे तो जलमें कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह सकता है। अगर इस गैस को बिना नाईट्रोजन मिले सूंघा जाय, तो कुछ देर तक तो उस आदमीकी गर्मी बढ़ती रहेगी, और उसके बाद उसकी मृत्यु भी संभव है। इस लिये इस गैस का प्रयोग जब आदमी मरने लगता है और उसका टेम्परेचर गिर जाता है, किया जाता है, इससे आदमी कभी कभी तो मृत्यु से बच जाता है।

३—ओझोन— यह एक आक्सीजन का रूपांतर है। इस गैस में गंध होती है। प्रकृति में यह गैस बज्रपात से या जहां पर कि ज्यादा भाप बना करती है वहां पर पैदा होती है। इसका प्रयोग पानी को शुद्ध करने में किया जाता है।

४—अर्गन (Argon) यह नाईट्रोजन का रूपांतर है, और उससे भी ज्यादा निष्क्रिय है। इसका प्रयोग बिजली के लट्टुओं (बल्ब) के भरने में अधिक किया जाता है। यह गैस नाईट्रोजन से अधिक वजनदार होती है।

ये हवा के चार पदार्थ तो स्थिर हैं, परन्तु इनके अलावा कुछ और और वस्तुएं भी हैं जो हवा में मिली रहती हैं। इनकी मात्रा प्रत्येक स्थान पर भिन्न भिन्न हो सकती है, और होती भी है। हवा के अस्थिर मिश्रण योग्य पदार्थ ये हैं—

१—कार्बनडायआक्साइड (Corbon-dioxide) जब कोई चीज आक्सीजन में जलती है, तब उस चीज में से एक गैस निकलती है, इसका नाम कार्बन डाई आक्साइड रक्खा गया है। यह नाम इस लिये रक्खा गया कि जलने पर जो चीज बचती है, वह चीज आक्सीजन के साथ मिल कर ही कार्बन डाई आक्साइड बनाती है। यह निर्गंध, रंग रहित, खट्टे स्वाद की गैस है। वायु में जिन जिन गैसों का मिश्रण है उन सब से यह गैस भारी होती है, इस लिये गंदे, जल-शून्य-कुओं पर अधिक इकट्ठी हो जाती है। इस गैसमें कोई चीज़ नहीं जल पाता (It does not supports combustion) अगर हवामें यह गैस अधिक हो तो वह वायु अशुद्ध मानी जाती है। यह गैस मनुष्यों के लिये प्राण-घातक परन्तु बनस्पतियों के लिये प्राण-दायक है। यानी बनस्पतियां सूर्य के प्रकाश में कार्बोनिक एसीड गैस चूसती और आक्सीजन निकालती हैं, परन्तु रात में इस से विपरीत क्रिया होती है।

२—जलवाष्प-हवाका दूसरा अस्थिर रूप जल-वाष्प है। सूर्यकी गर्मी के कारण समुद्रके एक वर्ग मील पृष्ठभाग से ७०० गेलन पानी भाफ बन कर हवा में मिला करता है। यह भाप की राशि भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न समयों में भिन्न भिन्न हुआ करती है। जलवाष्प मुख्यतया हवा की सर्दी या गर्मी पर आश्रित रहता है। निश्चित ताप क्रम (Temperature) पर हवा में जल वाष्प की राशि भी निश्चित रहती है। जब यह राशि बढ़ जाती है, या ताप-क्रम किसी कारण से कम हो जाता है, तब वाष्प रूप से रहने वाला जल का अंश बिन्दु रूप में परिणत होकर के जमीन पर गिर पड़ता है। यदि हवा में पानी के भाप का भाग न होता तो सूर्य की गरमी से हमारे शरीर झुलस जाते और बनस्पतियां जल कर भस्म हो जातीं। हवा में जलवाष्प के रहने के कारण ही हवा हमें ठंडी मालूम पड़ती है।

३—धूलि-यह हवा का तीसरा अस्थिर रूप है। धूलिके कारण जो बहुधा कार्बन, धुयें कोयला, बाल, त्वचा, पीप, थूक-तथा अन्य रोगोत्पादक कीटाणुओं वा जीवाणुओं के होते हैं वे हवा में धूल कण के रूप में रहते हैं, इस से हवा में अशुद्धियां उत्पन्न हो जाती हैं इस के अलावा धूल के कणों से फायदा भी है। क्यों कि धूलों के न रहने से बादल, ओस या बरसात नहीं हो सकती। हवा में पानी का जो भाग होता है वह धूलि के कण को केंद्र मान कर या बना कर उस के चारों ओर जमा हो जाता है। यदि हवा में धूलि के कण न होते तो पानी का भाग प्राणियों के शरीर, बनस्पतियों, गृह इत्यादि पर जम जाता।

यद्यपि प्रकृतिमें हवा विशुद्ध पायी जाती है तथापि उसमें अशुद्धियां किस प्रकार होती हैं यह बात जानना सबके लिये परमावश्यक है, क्योंकि यह बात तो सभी जानते हैं। कि जल तथा आहार के बिना कोई भी प्राणी थोड़ी देर तक जीवन निर्वाह कर सकता है; परन्तु हवा के बिना कई मिनटों तक जीना भी मुश्किल क्या परन्तु दुश्वार होता है। इस लिये हवा का स्वच्छ होना आवश्यक है। हवा खराब होने के निम्नलिखित कारण हैं—

१—श्वास-निःश्वास क्रिया—मनुष्य या जानवर जब श्वास खींचते हैं, तब वे शुद्ध हवा को अपने अन्दर भरते हैं, परन्तु जब वे निःश्वास करते हैं, उस समय उनके शरीर के भीतर से कार्बोनिक एसिड नामक विषाक्त गैस निकलती है। एक मनुष्य प्रति मिनट में १७ दफे श्वास-निःश्वास की क्रिया करता है और लगभग २५ घन इंच हवा भीतर लेता और उतनी ही बाहर निकालता है, इस प्रकार अन्दाज करिये कि कितनी वायु इस श्वास निःश्वास क्रियासे खराब होती है। और इस प्रकार २५ इंच हवा जब लौट कर आती है, तब उसमें १ घन इंच मात्रा कार्बनडायोक्साइड की होती है। इसके अलावा निःश्वासित वायुमें जीवाणु भी पाये जाते हैं। यदि मनुष्य खांसा, राजयक्ष्मा, इत्यादि फेफड़ोंके रोगोंसे पीड़ित हो तो उसके खांसने, छींकने और बोलने से भी रोगोत्पादक जीवाणु बाहर आते हैं।

२—ज्वलन—हवाकी खराबी करने वाली दूसरी क्रिया जलने की है। किसी चीज के जलने से कोई विषाक्त गैस निकलती है, तो किसी से कार्बन डाई ओक्साइड। परन्तु बिजली के जलने से कोई भी गैस नहीं निकलती, क्योंकि बल्ब में जो उजाला होता है, वह बल्ब के प्लैटिनम (Platinum) के तार के जलने से नहीं बलिक गर्म होने से होता है।

३—सेन्द्रिय चीजों का विघटन—यानी सड़ी गली चीजों से जो गैस निकलती है, उसके कारण भी हवा में अशुद्धियां होती हैं। इसके अलावा धूलि से भी हवा खराब होती है, जिसके बारे में ऊपर लिखा जा चुका है। इन सब बातोंके अलावा चमार, कसाई, रंगरेज आदि अपने खराब रोजगारों के कारण हवा को गंदा कर देते हैं। रासायनिक कारखानों तथा मुर्दा जलाने आदि से भी वायु दूषित हो जाती है। इन्हीं सब कारणों के अधिक होने के कारण शहरी वायु ग्राम्य वायु के सामने बहुत अधिक दूषित हुआ करती है।

ये तो हवा के अशुद्धियों के कारण हुए, परन्तु उस के शुद्धि के क्या क्या उपाय हैं सो नीचे लिखे जाते हैं। क्योंकि मान लीजिये कि हवा निरंतर अशुद्ध होती जाती, और उसके शुद्धिका उपाय न रहता तब तो सारी पृथ्वी के जीव जतुं एक ही दिन में मर जाते। वायु की अशुद्धि प्रायः कुछ तो मनुष्यों द्वारा होती है, और कुछ स्वयं, परन्तु वायुकी शुद्धिमें सारा हाथ प्रकृति का है, ऐसा कहा जाय तो कुछ भी अनुचित न होगा। ये प्राकृतिक शुद्धियां पांच प्रकार से होती हैं :—

१ वनस्पतियां— कार्बन डाई अक्साइड नामक जो गैस हम लोग निःश्वास में छोड़ते हैं, उस गैस को वृक्ष आदि हवा से सूर्य्य के प्रकाश में खींच लेते हैं, और निश्वास में आक्सीजन को छोड़ते हैं। उस बात को संसार प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीशचंद्र बोस ने अपने यांत्रिक क्रियाओं (Experiments) द्वारा सिद्ध कर दिखाया है। इसी लिये शहरों में पार्क (Parks) बनाये जाते हैं।

२ वर्षा— धूल के कण हवा में जो भी होते हैं वर्षा के होते ही वे सब पानी के कणों से चिपट कर पृथ्वी पर आ जाते हैं, और हवा एक दम निर्मल हो जाती है। इसलिये हम लोगोंको पहली जो थोड़े दिनों तक वर्षा हो उस का जल काम में नहीं लाना चाहिये, और फिर वर्षा हो तो उस का जल काम में

लाया जा सकता है, क्योंकि उस समय हवा के धूल के कण जमीन पर आजाते हैं, और हवा शुद्ध हो जाती है।

३ वायु की गति— हवा एक स्थान से दूसरे स्थान पर बहती है इससे अशुद्धियां एक निश्चित स्थान पर नहीं रह पातीं बल्कि चारों ओर फैल जाती हैं। जैसा कि प्रायः जल में हुआ करता है। वायु बहने के प्राय तीन साधन हैं :-

(क) प्रत्येक वायु की घनता (Density) कम ज्यादा, यानी अलग अलग हुआ करती है, और यह प्रमाणित बात है कि भारी हवा धीरे और हलकी हवा ओर से या जल्दी बहती है। इस से कमरे की हवा कमरेमें आते ही चारों तरफ फैल जाती है, यानी सब जगह ताजी हवा पहुँच जाती है।

(ख) गर्म वायु हलकी होती है और सर्द वायु भारी; इस सिद्धांत के अनुसार कमरे की गर्म हवा हलकी होने के कारण ऊपर चढ़ कर छत की खिड़कियों से निकल जाती है, और ताजी भारी हवा दरवाजों आद से कमरे के अंदर आजाती है।

(ग) तीसरी बात मुख्य है वह यह है कि सारा वायु— मंडल सर्वदा एक समय में एक सा गर्म नहीं होता इस कारण से जहां का वायु ज्यादा गर्म हो जाती है, वहां की हवा की घनता कम होने से वह ऊपर उठ जाती है, और वह स्थान कम घनत्व वाला (Low pressure area) हो जाता है, परन्तु और दूसरे स्थानों में जहां ज्यादा गर्मी नहीं पड़ने के कारण वायु की घनता कम नहीं होती यदि वहां पर ज्यादा घनत्व की जगह (High pressure area) होती है तो वायु कम घनत्व स्थान को पूर्ण करने के लिये आती है, क्यों कि यह प्राकृतिक नियम है कि सारे वायु मंडल का घनत्व बराबर होना चाहिये।

४ सूर्य-प्रकाश— वायु को शुद्ध रखने में सूर्य-प्रकाश बहुत भाग लेता है, क्यों कि इसका विशेष प्रभाव विशेष हानि कारक अशुद्धियां यानी कीटाणुओं तथा जीवाणुओं पर होता है। सूर्य-प्रकाश से ये जीव णु मर जाते हैं।

" हवा किसी चीज के जलने में सहायता पहुंचाती है, और श्वास निःश्वास में सहायक भी होती है। यह हम लोगों के शरीर को गर्म रखती तथा हम लोग जो बत्तियां जलाते हैं उस के तेल को सहायता पहुंचा कर रोशनी भी करती है। हवा मौसम को अच्छा या खराब भी बना रखता है यह विचार एक अमेरिकन ने 'साइंटिफिक अमेरिकन' नामक एक विख्यात वैज्ञानिक पत्र में हवा के गुण बतलाते हुये प्रगट किये थे। अतएव हम लोगों को हवा को जहां तक अपने फायदे में ला सके लाना चाहिये, उसके लिये थोड़े से शास्त्रीय नियम नीचे दिये जाते हैं जिन के करने से शरीर की उन्नति के अलावा और भी उपकार हो सकते हैं :—

१ श्वास-निःश्वासके नियम—नासिका द्वारा सदा श्वासोश्वास की क्रिया करना चाहिये, क्यों कि इससे धूल आदिके कणोंके भीतर जाने की संभावना कम रहती है। तथा हवा में कोई दुर्गन्धि तो नहीं है इस बात का पता भी लग जाता है।

२ पूरी और गंभीर श्वास लेना चाहिये इससे शरीर के भीतर प्राण वायु अधिक पहुंचती है, और

चाट वाला

(ले०—श्रीमान कुमरेशजी साहित्य रत्न)

मसाले दार चाट, दहीका बड़ा, पकौड़ा गरम करारा खस्ता" की आवाज लगाता हुआ सिर पर खोमचे का थाल रक्खे हुये एक २४-२५ वर्षके युवा ने 'लाला बद्री राम, नामक कूचेमें प्रवेश किया।

चाट वाले को आता हुआ देख कर कूचे के छोटे २ बच्चे जोकि अभी २ घोड़ा बना कर खेल रहे थे वे सब अपने २ खेल छोड़ पैसा लाने के लिये घर की ओर दौड़ पड़े।

"माँ पैसा दे, पैसा दे, चाट वाला आया है" की बालध्वनि से सारा कूचा गूँज दिया। चाट वाला भी बड़ी आशा से अपना खोमचा उतार कर वहीं बैठ गया, फिर क्या था देखते ही देखते सब बच्चे खोमचा खाने पर जुट गये। वह चाट वाला भी बड़ी तत्परता के साथ बालकों को चाट खिलाने लगा।

बच्चे चाट खा २ कर बडे प्रसन्न हो रहे थे। यह बात औरतों को अच्छी न लगी। भला जरा जरा से बच्चे चाट खालें, और वे बेचारी मुंह ताकती ही रह जायें, यह कैसे हो सकता था। अब उन की बारी थी।

दौने पर दौनों की मांग ने चाट वाले का दिल बांसों उछाल दिया। वह प्रसन्न था। आज उस की चाट खूब बिक रही थी, अब वह पहले इसी कूचे में आवाज लगा कर कहीं अन्यत्र जाया करेगा। चाट वाला यही सोचने में व्यस्त था कि उसे किसी ने पुकारा :— "चाट वाला"

"हाँ सरकार"

"यहां देकर जाना"

"अच्छा हजूर"

यह कह कर वह अपना दूकान का कार्य बहुत शीघ्र समाप्त कर उस बडे से मकान की ओर चल दिया। उस ने आवाज लगाई—

---

०६ पृष्ठ का शेष

वायु कोष अच्छी तरह से फैल जाते हैं गंभीर श्वास लेने से रक्त की अधिक शुद्धि होती है।

३ अच्छी तरह से निश्वास भी करना चाहिये ताकि हवा में जो अशुद्धियां मिली रहती हैं वह सब बाहर आजांये। कुछ दिनों तक अभ्यास करने से ये काम स्वाभाविक हो जाते हैं।

४ सिर सीधा रखकर श्वास निःश्वास की क्रिया करना चाहिये। क्योंकि ऐसा न करने से फेफडा संकुचित रहता है, और हवा खुली तौर से प्रवेश नहीं कर पाती। यही कारण है कि यक्ष्मकीट (Bacillus of Tuberculosis) सर्व प्रथम फुस्फुस के ऊपरी भाग में ही अपना डेरा जमाते हैं।

५ जो व्यक्ति गंदी, संकुचित वायु में रहता हो उसे चाहिये कि वह प्रति दिन कुछ समय तक खुली स्वच्छ वायु में प्राणायाम करे।

" मसाले दार चाट "

" ओ चाट "

" जी "

" यहां आ "

" आया " कह कर चाट वाला मकान के अन्दर आ पहुंचा उसने खोमचा उतार कर "क्या दूं सरकार " पूछा

" क्या है तुम्हारे पास " एक युवती ने बड़े ही भाओ नखरे दिखलाते हुये कहा

चाट वाला यह देखकर मुस्करा पड़ा।

उसने हंसते मन कहा " सब कुछ तो है " खस्ता, पापड़ी, मंगौड़े, बड़े बताशे, बैंगनी, पालक, आलू, भंजिया, और क्या चाहिये साहिब

" ये मंगौड़े कैसे हैं "

" बड़े मजेदार हैं "

" मिर्चें तो नहीं हैं "

" हां ? हैं तो पर बहुत ही थोड़ी "

" अच्छा तो दो; एक पैसे के "

" एक पैसे के हजूर " बड़े आश्चर्य से चाट वाले ने पूछा

हां अभी दो तो सही देखें तुम्हारी चाट कैसी है। युवती ने बड़े गंभीर भाव बनाते हुये कहा शायद अच्छी लगे या न लगे।

आप एक बार लेकर देख तो लीजिये। आप को मेरी ही चाट बहुत पसन्द आयगी, मैं ऐसा वैसा आदमी नहीं हूं। मेरा नाम है दीना चाट वाला। हां, यह लीजिए चटनी कैसी डालूं।

"जैसी तुम्हारी मर्जी"

"नहीं जैसा सरकार हुक्म"

"अच्छा, तो खट्टी डालदो"

"बहुत अच्छा"

दीना ने दौना युवती के हाथ पर रख दिया। युवती चाट खाने लगी।

दीना अपनी मेह भरी दृष्टि युवती पर डाल रहा था। युवती भी अपने किसी आन्तरिक आशय से उसे निहारने लगी। इस प्रकार दोनों की आँखें मिल कर चार होगईं।

भगवान जाने; उन आँखोंमें क्या हुआ? दीना प्रसन्न बदन खोमचा उठाकर चल दिया था। आज उसकी चाटका मूल्य वही जाने कितना था।

(२)

रीमाको बचपन से ही चाट खाने का बड़ा शौक था। यद्यपि उसके माँ बाप अधिक सम्पन्न न थे, परन्तु फिर भी उसे दिन भरमें एक-दो पैसे मिल ही जाते थे। वह उन पैसोंका और कुछ न लेकर केवल चाट ही खाया करती थी। उसे दिन भर रोटी खाने को न मिले कोई चिन्ता नहीं, कोई दुःख नहीं। परन्तु बिना चाटके वह हर्गिज नहीं रह सकती थी। वह चाट खाना क्यों छोड़ती? उसीमें तो उसका आनन्द था, जीवन था, सुख था। और था मधुर स्वाद ....।

धीरे २ बालिका रीमा बचपन छोड़ कर यौवन के उन्मत्त आंगनमें अठखेलियाँ करने लगी थी। उस का रूप लावण्य नवीन कलिका की भांति हंसने लगा था। वह अब युवती थी। उसे अपने इस परिवर्तन पर आश्चर्य न था। परन्तु उसे उसमें था संकोच, मोद, आकांक्षा और अज्ञात अभिलाषा ....।

* * *

लाला बद्रीदास सम्पन्न घराने के तो न थे परंतु हां, उन्होंने अपनी पसीने की कमाई से ही बहुतसा धन एकत्रित कर लिया था। वे इसी धनके उपभोग के लिये अपनी ५० वर्षकी अवस्था होजाने पर भी विवाह के इच्छुक थे। इन्हीं वृद्ध महाशय के साथ उस युवती रीमाका विवाह सानन्द सम्पन्न होगया। बहुत कुछ ले दे कर ·· ········।

(३)

रीमा सुन्दर थी—तो लाला बद्रीदास उलटे तवा थे, वह चंचला थी-तो वे गुम सुम थे, वह नवीना, उन्नत यौवना थी-तो वे जर्जर वृद्ध हाड़ थे। वह क्रीड़ा, आमोद-प्रमोद चाहती थी—तो वे केवल दर्शनाभिलाषी थे। वह इन्हें देखकर हंसती थी और वे सहम जाते थे। भला फिर यह प्राकृतिक विपरीतता कैसे और कब तक मेल खाती। आखिर हुआ वही जो होना चाहिये था। रीमाका मन लाला जी की ओर से फिर गया—वह उनसे चिढ़ने लगी। उनकी प्रत्येक बातका उत्तर टका सा देती। अब लालाजी उसके लिये कुछ न थे। केवल लोक दिखावा के लिये वह उनकी पत्नी थी नहीं तो स्वतन्त्र थी। उसके हृदयकी कोई सुनता तो वह इन्हीं शब्दों में कह सकती थी कि यह मेरे कोई नहीं, न मेरा इनसे कुछ नाता है। यह केवल समाजके वाक्य बाणों से बचाने के लिये मुझे ढाल स्वरूप है और कुछ नहीं।

हां, एक दिन बातों ही बातों में लाला जी और रीमा में परस्पर कुछ अनबन होगई। उसके परिणाम स्वरूप युवती रीमा रात्रिके लगभग ४ बजे कुवे में गिरने के लिये घरसे निकल पड़ी। किन्तु नगर के एक प्रतिष्ठित सज्जन के देख लेने पर अपना कार्य न कर सकी और शीघ्र ही पच्चू बनिये के घर पेट मलवाने के बहाने घुस गई।

इसी प्रकार आये दिन तरह २ की छोटी बड़ी घटनाएं घटित होने लगीं। बेचारे लाला जी भी मारे शर्म के चुप थे। यद्यपि वे सब कुछ जानते थे, परन्तु करते तो क्या करते?

(४)

"लाला जी"

"कौन है"

"मैं हूं चाट वाला"

चाट वाले की आवाज सुनकर लाला जी के बंद किवाड़ धीरे से खुल गये। किवाड़ खोलने वाला अन्य कोई नहीं था। स्वयं रीमा थी। उसने बड़ी उत्सुकता से कहा—

"आज इतनी देर क्यों, तमाम दुपहरी कहां गायब रहे।"

"कुछ नहीं काम करता रहा था"

"क्या काम था"

"यही चाट का"

"क्या अब भी चाट बनाते हो"

"हां"

"किसके लिये"

"तुम्हारे लिये"

"मेरे लिये"

"हाँ तुम्हारे लिये ही प्यारी"

"ऐसे कब तक बनाते रहोगे प्यारे"

"जब तक तुम मना न करोगी"

यह बात है

"हां"

"अच्छा अब से न बनाना"

"फिर क्या करूं"

"कुछ नहीं"

"कुछ कैसे नहीं" फिर मेरा काम कैसे चलेगा।

"मैं कहती हूं कुछ न करो"

"फिर तब"

"तुम तैयार हो जाओ"

"किस लिये"

"जो कुछ मैं कहूं उसके लिये"

युवती ने आंख का इशारा देते हुये कहा—

"हां क्यों नहीं नेकी और पूछे पूछे"

दीना ने सब कुछ समझ कर युवती का हाथ दबा दिया।

"अच्छा तो आज ही रात को हम तुम ·"

"अवश्य; अवश्य" दीना उछल पड़ा।

युवती मुस्करा गई।

"अच्छा अब जाने दो"

"इतनी जल्दी"

"हां प्यारे"

"नहीं प्यारी"

"तब मैं रूठ जाऊंगा"

"मैं मना लूंगी"

"कैसे"

"ऐसे कहते हुये युवती रीमा ने दीना को अपने भुज पाश में गिरफ्तार कर लिया। दीना अपने को छुड़ाने लगा। युवती ने और भी कसके उसे पकड़ लिया। वह झेंप कर बोला छोड़ दो भागवान्।

"अच्छा लो"

युवती ने उसे फिर पाने की आशा से छोड़ दिया अभी घर से बाहर निकला ही था कि लाला जी से उसकी भेंट हो गई।

लाला जी ने पूछा—"क्या है दीना"

"कुछ नहीं"

कुछ तो"

"यहीं बाहू के पैसों का खातिर आया था"

"मिल गये तेरे पैसे या मैं दूं"

"हां वसूल पाये" कहता हुआ दीना नौ दो ग्यारह हुआ।

(४)

आज लाला बद्रीदास का मकान दुःखों और दुःख का केन्द्र था। कुछ लोग कह कहा मार कर हंस रहे थे। और कुछ चिन्ता में खड़े हुये कुछ सोच रहे थे। कोई लाला जी की बात करता था तो कोई रामा की। उस समय वे दोनों ही चर्चा के विषय थे। किसी ने कहा बेचारा बड़ा भला आदमी था। औरत की खातिर आत्म हत्या कर बैठा। वह औरत क्या थी ? पूरी शैतान की नानी थी। बेचारे का सब कुछ लेकर उड़ गई। दूसरा बोला "वाह तुम भी क्या अजब अजब आदमी हो" इस भले आदमी ने बुढ़ापे में शादी की तो क्यों ? सो भी चंचल औरत से। अच्छा हुआ चली गई। यहां क्या रोती इस बूढ़े खूसट को।

इसी प्रकार तरह २ की बातें हो रहीं थीं कि

मइसा लोगों में खल बली मच गई । वह कुछ नहीं—केवल एक लिफाफा के कारण । लोगों ने उसे लाला जी का समझ कर झटपट फाड़ डाला । उसमें लिखा था । सेठ जी !

अपनी विषय वासनाओं को पूर्ण करने के लिये किसी अबला के अरमानों का खून करना महा पाप है । मैं केवल उसी पाप का दण्ड इसे अपने साथ ले जा कर तुम्हें सादर भेंट करता हूं । क्योंकि तुम इसी लायक हो—

तुम्हारा शुभेच्छु

डीना चाट वाला

अब लोग सब कुछ समझ गये । रीमा को भगाने वाला अन्य कोई नहीं, डीना चाट वाला है । कुछ लोगों ने नाक भों सिकोडे । और कुछ लोगों ने कहा—

वाह रे डीना चाट वाला ।

"नालंदा विश्वविद्यालय"

(ले — श्री पं० जगन्मोहनलाल जी जैन शास्त्री)

बख्त्यार पुर जंक्शन ई. आई. आर. से राजगिरि कुण्ड प्राचीन नाम राजगृह नगर को एक छोटी लाइन— बिहार लाइन रेलवे के नाम से गई है । इन स्थानों का मध्यवर्ती स्थान बिहार प्रान्त कहलाता है । यहां पर नालंदा स्टेशन है, यह स्थान किसी समय जैन और बौद्धों के धर्म प्रचार का केन्द्र रहा है । नालंदा के समीप वर्ती कुंडलपुर ग्राम भगवान महावीर स्वामी की जन्म भूमि है । राजगिरि और उस के समीप का उद्यान उन का विहार स्थान रहा है, समीपवर्ती पावापुर उनका मोक्ष स्थान तथा उसी के पास का "गुणावा" स्थान उनके प्रधान गणधर भगवान गौतम स्वामी की निर्वाण भूमि है ।

कुंडल पुर दो हिस्सों में बटा है, एक हिस्सा को कुंडलपुर और दूसरे स्थान को बड़ाग्राम कहते हैं ।

शायद उस समय कुंडलपुर राजधानी होने से बडाग्राम के नाम से प्रसिद्ध था, राजा सिद्धार्थ के पुत्र और माता त्रिशला देवी के लाल भगवान महावीर रवि का यह उदयाचल है । इस समय जो ५-६ फर्लाङ्ग लम्बा और इतना ही चौड़ा स्थान सरकार द्वारा खुदवाया गया है, उक्त स्थान ही नालंदा विश्वविद्यालय के खण्डहर हैं जो कि सरकारी देख रेख में हैं । =) टिकटका देना पड़ता है यह विश्वविद्यालय भारतवर्ष में बौद्ध धर्म का प्रचार करने वाला था, इस की दीवालें २-२॥ गज तक चौड़ी सब जगह पायी जाती हैं अभी तक खुदाई में इसकी तीन तहें पाई गई हैं, ये तहें किसी मकान के

तीन मंजिल रहे होंगे, ऐसा नहीं है। बल्कि ऐसा मालूम होता है कि एक बार किसी भूकम्प आदि के कारण जब भवन धराशायी हो गये जमीन में दब गये तब उस की खुदाई में व्यर्थ खर्च न लगवा कर उन्हीं पर दूसरे भवन तैयार करा लिये गये, इसी तरह दुबारा भी जब विद्यालयके भवन धराशायी हो गये तो तीसरी बार उन्हीं के ऊपर पुनः भवनों का निर्माण कर लिया गया। पहिले पहिल जब टीला खोदा गया और दीवालें निकलते २ फर्श निकल आया तब यह समझा गया कि खुदाई अब समाप्त हो गई परन्तु जब फर्श खोदा गया तो कुछ दूर तक मिट्टी खोदते २ दूसरा फर्श निकला, इसी प्रकार कुछ और मिट्टी खोदने के बाद तीसरा फर्श निकला इसके नीचे कोई स्तर नहीं निकला, पानी बहने के नाले भी तीनों खण्डों में जमीनों पर बड़े २ लम्बे अलग २ पाये जाते हैं, मठ स्थान में एक बड़ा ऊंचा मंदिर बुद्धदेव का पाया गया, जिस पर जाने के लिये कम से कम १२ गज की चौड़ी सीढ़ियां पाई गई हैं, जब उसका कुछ अंश तोड़ागया तो नीचे एक दूसरी ८ गज चौड़ी सीढ़ियां पाई उसे भी आधा तोड़ा गया तो उस के नीचे चार गज चौड़ी और तीसरी सीढ़ियां पाई गई। इसी प्रकार अनेक प्रमाण ऐसे हैं जो यह सूचित करते हैं कि यह विद्यालय तीन मंजिल का न था बल्कि तीन बार क्रम से बनाया गया और गिरा पड़ने का कारण वहां सदा भूकम्प का आना ही प्रतीत होता है।

यहां दो प्रकार की खेती पाई जाती है कुछ तो नीचे भूमि पर। और कुछ ऊंची भूमि पर, ऊंची भूमि पर जो खेती होती है उसे खोदने पर बराबर खण्डहरों के चिन्ह मिलते हैं अभी यदि खुदाई कराई जावे तो मीलों पर्यन्त खण्डहर मिलेंगे परन्तु खुदाई बन्द कर दी है।

विद्यालय भवन की रचनाएं बड़ी सुन्दर हैं चौक के बीच में कूप है चारों ओर छात्रों के रहने की कोठरियां हैं, दरवाजे पर मंदिर या देव मूर्ति का स्थान और दूसरी ओर उनके संरक्षक या सुपरिन्टेन्डेन्ट का स्थान है इस प्रकार के छात्रावास सैकड़ों हैं, सब की भीतें २ गज चौड़ी हैं एक २ कमरे की लम्बाई चौड़ाई १०-१२ फुट से अधिक न होगी, दरवाजे वाली दीवाल को छोड़ कर शेष ३ दीवालों पर भीतर की ओर आलमारी की तरह पर डेढ़ हाथ चौड़ी व ४ हाथ लम्बी पत्थर या चूना की चौकी बनी हैं जिन पर विद्यार्थी सोते थे सिराने पर पत्थर या ईंटों की ऊंची चौकी बनी है जिसपर पुस्तकें रखते थे कमरे के बीच का हिस्सा खाली रहता था, कुवां की मिट्टी अलग करवा दी गई है जिस से अब भी उन में मीठे पानी का झरना बहता है एक स्थान पर तो पानी के झरने पर बड़ा भारी मेला हिन्दुओं का लगता है जिस का माहात्म्य कहा जाता है कि उस से बड़े बड़े चर्म रोग दूर हो जाते हैं।

बड़े २ स्तूप हैं जिन पर केवल मिट्टी व मसाले से बड़ी सुन्दर कारीगरी की गई है जो जैन मूर्तियां भी यहां से निकली हैं। इस विश्वविद्यालय में कहा जाता है ६,००० छात्र थे जो देश विदेश से विद्याध्ययन करने आये थे म्युजियम में जितने पदार्थ रखे हैं उनमें प्राचीन हथियार — हंसिया — छुरी आदि तथा लोहे के ताले जैसे कि अबभी गुजरात प्रान्त में बनते हैं के सिवाय धातु का कोई भी पदार्थ नहीं

मिला है।

विद्यार्थी मिट्टी के पात्रों में ही भोजन बनाते, मिट्टी के पात्रों में ही पानी पीते तथा वृक्षों के पत्तों में ही भोजन करते थे ऐसा मालुम होता है हजारों लोटे मिट्टी के टोंटीदार बड़े मजबूत चिकने पाये जाते हैं। रचना उनकी बड़ी सुन्दर है, एक दो बड़ी २ नांदे पानी भरने की पायी गई जो ५॥-६ फुट ऊंची है मिट्टी की अनेक सुन्दर मूर्तियां छोटी २ सैकड़ों पाई हैं कुछ हड्डियां भी वहां निकली हैं। बुद्धदेव की एक वृहत्काय खण्डित मूर्ति बड़ी विचित्र है मूर्ति बाए ओर झुकी हुई खड़ी है एक पैर के नीचे महादेव जी को और दूसरे पैर के नीचे पार्वती को दाबे हुए है गले में एक बड़ी माला पहिने है जिस में बुद्धदेव की भिन्न २ प्रकार की मूर्तियों के चिन्ह अंकित हैं जिन्हें देखने से यह मालूम हो जाता है कि कितने प्रकार के आसनों की मूर्तियाँ बुद्धदेव की उस जमाने में बनाई जाती थीं। महादेव और पार्वती के वक्षः स्थल पर पैर रख कर खड़े होने की बात संभवतः यह सूचित करती है कि बुद्धदेव ने महादेव जी के संहारक रूप पर पाद प्रहार कर अहिंसाधर्म का प्रचार किया था

पाए जाने वाले चिन्ह वा खण्डहर भारत के अतीत गौरव के सूचक हैं इस स्थान के देखने से एक प्रकार का स्वाभिमान जागृत होता है तथा हृदय में उत्साह पैदा होता है इस मार्ग से निकलने वाले सज्जनों को यह स्थान एक बार अवश्य ही देखना चाहिये।

"मगध देशकी राजधानी"

आर्ष ग्रन्थों में अनेक स्थानों पर मगध प्रान्तकी राजधानी राजगृही नगरीका वर्णन पाया जाता है। इसे वर्तमान समयमें राजगिरी कहते हैं। यह जैनियों का तीर्थ स्थान माना जाता है। यहां की आबहवा बहुत ही अच्छी गिनी जाने लगी है। कुछ समयसे ही लोगों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ है। प्रायः कलकत्ते वा आसपास के शहरों के बंगाली व मारवाड़ी सज्जन यहां पर आब हवा बदलने और स्वास्थ्य सुधारने की गरज से आते हैं। धनी लोगों ने अब कुछ कुछ बंगले बनवाने भी शुरू कर दिये हैं; यहीं पर पर्वत के ऊपर जैनियों के मन्दिर व चरण पादुकाएं हैं जो अति प्राचीन हैं।

यहां अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी का समवशरण आया था। राजगृही नगरी के राजा श्रेणिक जिनका ऐतिहासिक नाम बिम्बसार कहा जाता है भगवान महावीर के समवशरण के मुख्य श्रोता थे। उन्होंने ६०००० प्रश्न भिन्न २ विषय के भगवान महावीर स्वामी से किये थे और उनके उत्तर प्राप्त किये थे। उनके प्रश्नोत्तरों ने ही वर्तमान जैन साहित्य वा सिद्धान्त ग्रन्थों की रचनाओं के लिये सूत्रपात किया है। प्रथमानुयोग ग्रंथों में प्रायः प्रत्येक में इस घटना का उल्लेख पाया जाता है। इस पर्वतके पांच हिस्से पंच पहाड़ी के नामसे प्रसिद्ध हैं।

इनके नाम भी जुदे जुदे हैं। विपुलाचल, रत्नगिरि, उदयाचल, श्रमणगिरि और वैभारगिरि आदि नाम हैं। इनकी चढ़ाई कहीं २ बहुत खड़ी और पत्थरों की अधिकता से बहुत कठिन मालूम होती है। पांचवें पर्वत के किनारे ऊँचाई पर वैष्णव सम्प्रदाय के अनेक मन्दिर हैं। मलमास (अधिकमास) में यहां पर हिन्दुओंका बड़ा भारी मेला लगता है। कुछ ऊपरी हिस्से में मुसलमानोंका एक बड़ा टीला

जिस पर कुछ कबरें बनी हुई हैं, पाया जाता है। पर्वतके नीचेके भाग पर मुसलमानोंकी बड़ी सुन्दर मसजिद बनी हुई है।

बौद्ध मूर्तियां भी यहां पाई गई हैं। बौद्धों की ओर भी एक बड़ी धर्मशाला तथा मन्दिर यहां बनाया गया है। इस तरह हिन्दू, जैन, बौद्ध, और मुसलमान चारों ही इसे पवित्र तीर्थ मानते और हजारों की संख्या में प्रतिवर्ष उसका दर्शन करते हैं। चीन जापान, लंका (सीलोन) आदि के बहुतसे यात्री भी सदा आते रहते हैं।

इस पर्वत के नीचे एक गुफा है जो बडे भारी पाषाण से काटी हुई है। यह एक साधारण गुफा नहीं बल्कि कमसे कम चालीस फुट लम्बी और पच्चीस फुट चौड़ी और १३-१४ फुट ऊँची है। भीतर से एक बड़ा हाल मालूम होता है। इसे राजा श्रेणिक का स्वर्ण भण्डार कहा जाता है। संभवतः ऐसा प्रतीत होता है कि इसके भीतर से कोई सुरङ्ग का मार्ग है। दीवाल स्वरूप पत्थर बडा चिकना कुछ पीले रंगका अच्छा चमकदार है। कई खण्डित जैन मूर्तियां इसमें बाहरसे रक्खी गई हैं। समीप की दूसरी गुफा में दीवाल पर ही पत्थरमें कई जैन मूर्तियां उकेरी गई हैं पर्वत के ऊपर ५२ प्राचीन जैन मन्दिरों के चिन्ह हैं। जोकि भिन्न२ स्थानों पर पाये जाते हैं। पांचवें वैभार गिरि पर एक टीले को खोदने से एक मन्दिर के चिन्ह मिले हैं जिसके बीचमें एक बडी वेदी और वेदी के दोनों तरफ पत्थर के बड़े लम्बे खड़े हैं तथा चारों ओर चौबीस कोठरियाँ हैं। ये संभवतः २४ तीर्थंकरों की मूर्तियों की वेदिका स्वरूप पाई गई हैं दो चार कोठरियों में प्राचीन सुन्दर मूर्तियां भी हैं। कोई २ खण्डित भी होगई हैं। यह स्थान सरकार की रक्षा में है। इस पर्वतकी एक बड़ी विचित्रता है जो कि संभवतः दूसरी जगह नहीं पाई जाती। वह यह है कि इस से गरम पानी के झरने झरते हैं और उस स्थान पर अनेक कुण्ड बना दिये गये हैं जिनमें लगातार वह पानी आता रहता है और निकलता है। एक थोडा गरम है दूसरे में उससे अधिक गरम जल है। तीसरा उससे अधिक गरम है। चाहे जहाँ स्नान कीजिए बडा आनन्द आता है। यात्रियों को तो बड़ा लाभप्रद है। तीर्थ यात्रा करके लौटे हुये थके यात्री इस गरम जलमें स्नान करके अपने शरीर के अवयवों को सेक कर मार्ग जनित परिश्रम के खेद को दूर कर लेते हैं।

पाये जाने वाले प्राचीन स्थानों से बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री मिल सकती है। स्थानकी रमणीकता दर्शकों को अपनी ओर आकर्षित किये बिना नहीं रहती।

दहेज की करुण कहानी

हिन्दू समाज के सिन्धप्रान्तीय आमिल लोग, युक्तप्रान्त के अग्रवाल भाई तथा बंगाल निवासी कायस्थ आदि जातियों में कुछ समय से ऐसी रूढ़ि चल पड़ी है कि वर का पिता कन्या के पिता से अपने पुत्र के विवाह के समय दहेज में भारी रकम मांगा करता है। लड़की का पिता घर, वर देखकर अपनी पुत्री के जीवन को सुखी बनाने के लिये लाचार हो कर वर को मुंहमांगा दहेज दे डालता है जिसके लिये उसको जितनी चाहे आपत्ति क्यों न उठानी पड़े। क्योंकि आखिर लड़की का विवाह तो करना ही हुआ।

जो बेचारे निर्धन होते है उनकी लड़कियां पूर्ण युवती हो जाने पर भी दहेज न दे सकने के कारण कुमारी (अविवाहित) ही बैठी रहती हैं उस दशा में उनके माता पिता की चिन्ता, दुःख और भी अधिक हो जाते है। इसका परिणाम यह होता है कि अनेक लड़कियां चरित्रभ्रष्ट हो जाती हैं और कुछ सयानी कन्यायें समाज को शिक्षा देने तथा अपने माता पिता के कष्ट कम करने के लिये आत्महत्या कर बैठती हैं।

कुछ वर्ष पहले 'स्नेहलता' नामक एक बंगाली लड़की ने ऐसा ही किया था किन्तु उसके बलिदान से बंगाल निवासी जनता ने कुछ क्रियात्मक शिक्षा ग्रहण नहीं की। बल्कि उसने वह बलिदान एक तरह से भुला ही दिया। इस निर्दय प्रथा का अन्त कराने के लिये अभी फरवरी मास में कलकत्ता निवासी किशोरीमोहन मजूमदार की ५ युवती पुत्रियों ने अफीम खाकर प्राण देने की चेष्टा की जिन में से बड़ी लड़की के सिवाय शेष सब हिन्दू जाति को जागृत करने के लिये परलोक यात्रा कर गईं।

बची हुई लड़की पारुलबाला ने कोर्ट में जो हृदय द्रावक बयान दिया वह पाठकों के अवलोकनार्थ यहां प्रकाशित करते हैं।

कलकत्ता कारोनरकी अदालतमें मिस पारुलबाला मजूमदार (२४ वर्ष) ने अपनी तीन अविवाहित बहनों की मृत्यु के कारणों की जाँच के समय बयान देते हुए निम्न लिखित हृदय स्पर्शी वक्तव्य दिया। उसने कहा—"हम चारों बहनों ने इस कारण अपने जीवन का अन्त करने के लिये अफीम खाई कि हमारे वृद्ध पिता को, जो हमारे विवाहों के लिये मांगी जाने वाली बड़ी २ दहेज की रकमों को देने में असमर्थ हैं और जिस पर हमारे क्वांरे रहने के कारण अवर्णनीय ताने कसे जाते थे, छुटकारा प्राप्त हो।" लड़कियों के पिता श्रीयुत किशोरी मोहन मजूमदार ने गवाही देते हुये कहा—"मैं १० लड़कियों का अभागी पिता हूं जिन में ५ का विवाह हो चुका है। हमारा परिवार सम्मानित है। मेरा एक भाई कलकत्ता हाई कोर्ट का जज रह चुका है। हमारे परिवार की यही प्रसिद्धि समस्त गड़बड़ की जड़ है। इसी कारण लड़कियों के बनने वाले दुल्हाओं की ओर से दहेज के रूप में बड़ी बड़ी मांगें की जाती हैं। कारोनरने आत्म हत्याका फैसला सुरक्षित रक्खा है। हमारे दहेज के भूखे जैन नवयुवक इस घटना से कुछ शिक्षा ग्रहण करेंगे?

अथर्ववेद परिचय

(ले :—श्री स्वामी कर्मानन्द जी)

(वाचस्पति)

प्रथम काण्ड

प्रथम काण्ड में सूक्त ३५ तथा मन्त्र १५३ हैं। शौनक शाखा का प्रथम सूक्त ४ मन्त्रों का है तथा "ये त्रिषप्ता" मन्त्रसे आरम्भ होता है। परन्तु पिप्पलाद संहिता जो कि अभी तक प्रत्यक्ष में जनताके सन्मुख नहीं आई है। उसका प्रथम मन्त्र "शन्नो देवी रभिष्टय" इस मन्त्र से आरम्भ होता है। स्वामी दयानन्द जी तथा महा भाष्यकार पतञ्जलि मुनि तथा च गोपथ ब्राह्मण के मत से भी यही शाखा प्रामाणिक प्रतीत होती है। भाष्यकार और गोपथ ब्राह्मण कार इसी शाखा के अनुयायी थे। अस्तु. शौनक शाखा के ४ मन्त्र अर्थात् इसका प्रथम सूक्त मंगलाचरणात्मक है। बुद्धि वृद्धि में इसका विनियोग है तथा अनुष्टुप छन्द है। तथा च अथर्वा ऋषि है। ऋग्वेद मं० १० सू० १६६ मं० ३ भी यहां के तीसरे मन्त्र का पाठ भेद मात्र है वहां इस मन्त्र का ऋषि ऋषभ है। इस सूक्त का दूसरा मन्त्र भी निरुक्त. १०-१२, तथा १०-१८ में भी पाठ भेद से आया है।

युद्ध विजय, अतिसार आदि

सूक्त २ इसमें भी चार ही मन्त्र है। इस सूक्त का विनियोग संग्राम में विजय लाभ के लिये भी है। तथा पुरुषाभिषेक में भी इसका विनियोग है। इसी प्रकार ज्वर, अतिसार, अति मूत्र आदि व्याधियों को दूर करने में भी इस सूक्त का उपयोग बतलाया है। चारों मन्त्रों में बाण अथवा प्रत्यञ्चा की स्तुति है। तथा उससे बचने के लिये इन्द्रदेव से प्रार्थना है, अतः इसका पर्जन्य, अमृतमय चन्द्रमा, इन्द्र देवता है। अथर्वा इसका ऋषि है।

(बाण) मूत्र रोग।

सूक्त ३

तीसरे सूक्त में ६ मन्त्र हैं वास्तव में यह दूसरा और तीसरा सूक्त एक ही है। इस सूक्त में भी 'शर' तथा शलाका का वर्णन है। इस सूक्त के भी ऋषि देवता पूर्ववत है। इस सूक्त के प्रथम ५ मन्त्र एक प्रकार के हैं, यथा—

> विद्मा शरस्य पितरं पर्जन्यं शतवृष्ण्यम्।
> तेना ते तन्वे शंकरं पृथिव्यां ते निषेचनं बहिष्टे
> अस्तु बालिति॥ १

इसी प्रकार अन्य चार मन्त्रों में भी (पर्जन्यं) के स्थान में "मित्रं" "वरुणं" "चन्द्रं" "सूर्यं" आदि शब्दों को छोड़ कर बाकी के सम्पूर्ण शब्द समान हैं।

हमारी सम्मति में तो यह सम्पूर्ण कथन एक ही मन्त्रमें आ सकता था, अतः चार मन्त्र अधिक बनाने की आवश्यकता न थी। एवं पांचों मन्त्रों में एक ही प्रकार के शब्दों द्वारा एक बात को कथन करने से पुनरुक्त दोष तो प्रत्यक्ष ही है। यदि यह कहा जावे कि यहां प्रत्येक मन्त्र में दूसरे अर्थ होते हैं तो भी मन्त्र प्रणेता के पास शब्दों की कमी थी यह तो प्रकट

होता ही है। अनेक भाष्यकारों ने इस सूक्त के भाष्य की संगति लगाने का प्रयत्न किया, परन्तु सब ही असफल हुये हैं, इस में मन्त्रों द्वारा मूत्र आदि रोगों का इलाज है अन्य कुछ भी नहीं है, न तो किसी प्रकार की औषधि ही उपयुक्त प्रतीत होती है और न विधि ही। इस सूक्त के शेष चार मन्त्रों के अन्तिम पद भी समान है।

यथा—'एवा ते मूत्रं मुच्यतां बहिर्वलिति सर्वकम्, चारों मन्त्रों का यही अन्तिम पद है। जिसका अर्थ है वह तेरा सारा मूत्र "बल्" शब्द करता हुआ बाहर निकल आवे।

मालूम नहीं इसी एक बात को चार बार कहने की क्या आवश्यकता थी। यही प्रार्थना प्रथम के पांच मन्त्रों में भी की गई है। यथा - हम इस शर अथवा शलाका के पिता, पर्जन्य, मित्र वरुण, चन्द्र, सूर्य को जानते है ये सब अनेक शक्तियां वाले है हे रोगिन! मैं इस शर से तेरे रोग को दूर करके तेरे शरीर को सुखमय बनाता हूं। तेरे शरीर में से पृथ्वी पर मूत्र" निकले और "बल्" शब्द करता हुआ बाहिर को निकले। हमारी अनुमति में तो ये सब बातें एक मन्त्र में बड़ी सुगमता से कही जा सकती थीं। पुनः ६ मन्त्रों द्वारा उसी बात को कहना अनुपयोगिता का सूचक है।

जल

४, ५, ६—जल सूक्त

सूक्त ४, ५, ६ जल सूक्त हैं, जो कि ऋग्वेद से उठा कर यहां रख दिये हैं। इन सूक्तों में सब प्रकार के जलों का वर्णन बड़ी उत्तमता से आया है। तथा जलोंको अत्युत्तम औषधि कहा है। चौथा सूक्त ऋग्वेद मं० १ सू० २३ में आया है वहां इन मन्त्रों का ऋषि मेधा तिथि काण्व है। तथाच इसका दूसरा मन्त्र यजुर्वेद के अ० ६ मन्त्र २४ का उत्तरार्द्ध है। वहां इसका मधु छन्दा ऋषि है। इस सूक्त का चतुर्थ मन्त्र भी यजुर्वेद अ० ६ का छठा मन्त्र है। वहाँ इस मन्त्र का ऋषि' दधिक्रावा' है और यहां इस का ऋषि अथर्वा है। प्रतीत यह होता है कि जब ये मन्त्र अथर्व वेद में लिये गये तो इनका ऋषि अथर्वा कर दिया गया है। इस सूक्त का अनेक स्थानों में उपयोग होता है। यथा जय, पराजय, हानि, लाभ, गौ रोग निवारण तथा अनेक रोग शान्ति, आदि। तीनों सूक्तों की यही व्यवस्था है।

जल

सूक्त ५—६

ये दोनों सूक्त ऋग्वेद म० १० सू० ६ में आये हैं। ऋग्वेदमें यह सूक्त ६ मन्त्रोंका है, और यहां ये दोनों सूक्त ८ मन्त्रों के है। इन सूक्तों में जो अन्तिम मन्त्र (शं न आपो धन्वन्या) ऋग्वेद में नहीं है, तथा च ऋग्वेद में अन्य दो मन्त्र हैं जो कि आवश्यकीय हैं। अभिप्राय यह है कि अथर्व वेद का उपरोक्त (शं न आपो) मन्त्र ऋग्वेद में रखकर वहाँ यह सूक्त १० मन्त्रों का होना चाहिये। पुन अथर्व वेद में इन तीनों सूक्तोंकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है। ऋग्वेद में इन मन्त्रोंका ऋषि त्रिशिरास्त्वाष्ट्र अथवा सिन्धु द्वीप अम्बरीष ऋषि है।

जलों की निरुक्ति

जलके गुणों का वर्णन अथर्व वेदमें अनेक स्थानों

पर आया है। यथा— कां० १ सू० ३३। कां० ३ सू० १३। कां० ४ सू० ३३। कां० ६ सू० ⌐२ तथा च कां० ६ सू० २४, ५१, ७५, ६१ आदि में।

जिन गुणोंका वर्णन यहां है उसी प्रकारका अन्य स्थानों में भी मिल जाता है। कां० ३ सू० १३ में जलों के नामों की निरुक्ति की है, यथा मेघ के ताड़ित करने पर जलों ने "नदन" शब्द किया था। इसलिये इनका नदी नाम पड़ गया। इन जलों को 'इन्द्र' प्राप्त हुआ इसलिये इनका 'आपः' होगया। इन्द्रने इनको वरण करनेका प्रयत्न किया इसलिये इनका "वार" नाम प्रसिद्ध होगया। इन्द्र ने इनका मान किया तो इनको बड़े होने का अभिमान हुआ इसलिये इनका नाम 'उदक' होगया इत्यादि। इस सूक्त में जलों के अन्य अनेक गुणोंका वर्णन भी अलंकारिक भाषामें किया गया है।

कां० १ सू० ३२ तथा ३३ भी इस विषयका महत्वपूर्ण है। हम उसका एक मन्त्र पाठकोंके सम्मुख रखते हैं।

अन्तरिक्ष आसां स्थाम श्रान्त सदामिव।

आस्थानमस्य भूतस्य विदुष्टद् वेधसो न वा॥

अर्थात जिनका अन्तरिक्ष स्थान है, श्रान्त जीवों का भी वही स्थान है। तथा च यह जल सम्पूर्ण प्राणी मात्रका जीवन है। इसके सम्पूर्ण गुणों को ब्रह्मा भी जानता था या नहीं, यह भी अनिश्चित है। इसी प्रकार अन्य सूक्तों में भी जलों की प्रशंसा है। आज-कल जितनी जल चिकित्सा से लाभ हैं वे सभी इन सूक्तों में आगये हैं।

राक्षसों का नाश

सूक्त ७ तथा ८ में अग्निसे यातुधानों को नष्ट करने की प्रार्थना है। ये यातुधान कौन हैं—इस विषय को भूमिका में विस्तार पूर्वक लिखेंगे क्योंकि इस प्रकार की स्तुतियों से ही वेद भरे पड़े हैं अतः यहां विस्तार उचित नहीं है। इस सूक्तका दूसरा मंत्र विचारणीय है। इस मन्त्रमें अग्नि के इतने विशेषण आये हैं, यथा— परमेष्ठ, जातवेदा, तनूवशी, ये सब विशेषण मनुष्य विशेष को बतलाते हैं, तथा च यहां लिखा है "आज्यस्य तौलस्य प्राशान" अर्थात् हे अग्ने आप परिमित शुद्ध भोजन करें। पाठक वृन्द! इस मन्त्र के भावको स्मरण रक्खें, भूमिका में इसका विस्तार पूर्वक विवेचन किया जायगा। सूक्त ७ में ७ मन्त्र हैं तथा च सूक्त ८ में ४ मन्त्र है। इन मन्त्रोंका चातन ऋषि है और इन्द्राग्नि देवता है। तथा सू० ८ का अग्नि और सोम देवता है।

धन और तेज

सूक्त ९— इसमें चार मन्त्र हैं। राज्याभिषेक में इनका विनियोग है तथा सब देवों से राजा के लिये धन और तेज आदि की प्रार्थना है। इसका अथर्वा ऋषि है और विश्वेदेवा देवता है।

राज नीति

सूक्त१०— इस सूक्तमें ४ मन्त्र है। वरुण राजकी स्तुति है। इसका अथर्वा ऋषि है और वरुण देवता है। इस सूक्तमें वरुणका विशेषण असुर आया है। जिसका अर्थ पापियों को दण्ड देने वाला है।

इससे यह सिद्ध होता है कि प्रथम असुर आदि शब्दों के अर्थ सुन्दर थे पुनः जब उनसे युद्ध होने लगा और उस जाति से द्वेष बढ़ गया तब इन शब्दों के अर्थ भी बुरे हो गया। वेदों में असुर शब्द के अर्थ रक्षक के भी अनेक स्थानों में आये हैं। इस

सूक्त में राजाके कर्तव्य आदि का संकेत है। मिथ्या भाषण के पाप से मुक्ति दिलाने की आशा दिलाई है। तैत्तरीय संहिता में भी झूठ को दुश्चरित्र और सत्य को सच्चरित्र कहा है।

तैत्तरीय ब्राह्मण, ३-३-७-१०

(प्रसव)

सूक्त ११

इसमें ६ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है और पूषा देवता है। प्रसव समय के कर्म में इसका विनियोग है। सुख पूर्वक प्रसव होने की देवों से प्रार्थना की है। ऋग्वेद मंत्र ५ म० ७८ मं० ८ इस सूक्त के ६ मन्त्र पाठ भेद से हैं। वहां अश्विनी कुमारों से प्रार्थना की गई है। ऋग्वेद में आत्रेय ऋषि हैं।

इति द्वितीय अनुवाक

सू० १२ (सूर्य गुण)

इसमें, ४ मन्त्र हैं, भृग्वां ... है, पूषा (सूर्य) देवता है। सूर्य के गुणों से रोग निवृत्ति का उपदेश है। अन्य अनेक स्थानों पर भी ऐसा ही वर्णन है। सूर्य का वर्णन वेदों में अत्यधिक है इस लिये यहां विस्तार की आवश्यकता नहीं है।

सूक्त १३ [विद्युत]

इसमें भी चार मन्त्र हैं, ऋषि पूर्वोक्त है तथा प्रजापति देवता है विद्युत स्तुति है।

(दुर्भगा कन्या)

सू० १४— मन्त्र ४, ऋषि पूर्ववत, वधूवरौ देवते, हैं। इस सूक्तमें दुर्भाग्य वाली कन्याका वर्णन है, जिसको अपने पिताके घरमें ही रहनेका आदेश है। तथा—मन्त्र ४ में असित ऋषि तथा कश्यप और गय ऋषिके मन्त्रोंका वर्णन है। जिससे स्पष्ट सिद्ध होता है। कि यह सूक्त इन ऋषियों के पश्चात की रचना है। इस सूक्त से स्त्री के पुनर्विवाह का निषेध भी सूचित होता है।

(धन प्रार्थना)

सूक्त १५— मन्त्र ४ ऋषि अथर्वा, प्रजापति देवता। अनेक प्रकार से धन कुबेर बनने की प्रार्थना है।

[राक्षसों का नाश]

सूक्त १६

इस सूक्त में भी ४ मन्त्र हैं, तथा सूक्त,७। ८ के समान राक्षसों को मारने की प्रार्थना है। यहां उन को शीशे से मारने का विधान है। यहां इनको अन्धेरी रातों में घूमने वाले तथा गो आदि पशुओं एवं बालकों को मारने वाला बतलाया है। इस सूक्त का भी चात ऋषि है और अग्नि देवता है। इन तीन सूक्तों के १५ मन्त्र हैं, यदि इन मन्त्रों के भावों का संग्रह किया जावे तो दो, तीन छन्दों में आ सकता था।

[नाड़ियां]

सूक्त १७

इस में भी चार मन्त्र हैं, ब्रह्मा ऋषि है, हिरा (नाड़ी) देवता है। इस सूक्त में रक्त वाहक नाड़ियों की स्तुति और प्रार्थना है। तथा च मन्त्र में कहा है कि जिस प्रकार भाई विहीन बहन तेज हीन होकर अपने पिता के ही घर में रहती है, अर्थात पतिके घर नहीं आती, इसी प्रकार इन नाड़ियों का रक्त भी

बाहिर न निकले। इस से सिद्ध यह होता है कि वैदिक युग में भ्राताहीन बहिनें शादी नहीं करवाती थीं। मन्त्रों में स्पष्ट ही (अभ्रातर इव जामयस्तिष्ठन्तु हतवर्चसः) शब्द पड़ा हुआ है। यहां भ्राता को (गुरु कुल के योग्य स्नातक ८० जयदेव ने) भर्ता. (पति बना दिया है। ऐसा करते हुये उन को संकोच क्यों नहीं हुआ। आर्य समाजके भाष्यों की यही गति है, मालूम नहीं यह लोग 'भ्राता जी' के अर्थ 'भर्ता जी, किन कारणों से समझ लेते है। दुर्भाग्य वाली कन्या का वर्णन पूर्व सू० १४ में आचुका है।

[स्त्री दुर्लक्षण]

सूक्त १८

मन्त्र ४ ऋषि, द्रविणोदा ऋषि, सविता देवता. है। इस में स्त्रियों के दुर्लक्षणों को दूर करने की प्रार्थना है। स्त्री के ललाट. केश, पैर, चाल, वाणी, आदि से दुर्लक्षणों की पहचान होती थी।

(शत्रु नाश)

सूत्र १९

मन्त्र ४. ब्रह्मा ऋषि है और इन्द्र देवता है, इस सूक्त में इन्द्र से सजातीय तथा विजातीय शत्रुओं के दमन की प्रार्थना है। इस में आर्य और अनार्यों का जाति भेद था, यह स्पष्ट ही है। इस सूक्त के मन्त्र ३, ४ ऋग्वेद मं० ६ सू० ७५ में पाठ भेद से आये हैं। तथा मंत्र ४ का उत्तरार्ध ६ तो समान ही है।

[शत्रु नाश]

सूत २०

मन्त्र ४ अथर्वा ऋषि, सोम. मरुत देवता। इस में भी शत्रुओं से रक्षा की प्रार्थना है। इसी प्रकार का वर्णन ऋग्वेद, मंत्र० १ सू० ८८ में है। अतः यहां भाव पुनरुक्ति है।

सूक्त २१—(संग्राम में विजय)

मन्त्र ४ अथर्वा ऋषि, इन्द्र देवता, यह सम्पूर्ण सूक्त ऋग्वेद मं० १० सू० १५२ में आता है। वहां इन मन्त्रोंका शासो भारद्वाज है। इसमें वृत्रासुरको मारनेवाले इन्द्रदेव से संग्राम में विजय की प्रार्थना है इस सूक्तका दूसरा मन्त्र यजुर्वेद अध्याय ८ में भी आया है। अतः यह सूक्त पुनरुक्त भी है।

सूक्त २२—पूर्वोक्त

मन्त्र ४—ब्रह्मा ऋषि. सूर्यो देवता, इस सूक्तका चतुर्थ मन्त्र ऋ० मं० १ सूक्त ५० में कुछ पाठ भेदसा आया है। वहां इस मन्त्रका ऋषि प्रस्कण्व है। यहां भी वैसी ही प्रार्थना है। इसमें तोते पत्तोंका तथा शुक आदि का जिक्र आगया है। तथा इनसे रोग निवृत्तिका आदेश है।

सूक्त २३-२४—श्वेत कुष्ठ

मन्त्र ४— ऋषि, अथर्वा, औषधि देवता। दोनों सूक्तों में श्वेत कुष्ठका तथा च श्वेत बालों का इलाज का आदेश है, वह भी विशेषतया मन्त्रों द्वारा। अथर्व वेदमें इस प्रकारका वर्णन अनेक स्थानों में आया है सू० २४ में इस औषधिका आविष्कार करने वाली एक आसुरी, स्त्री को बतलाया है। अतः असुर एक जाति विशेष थी, यह सिद्ध है।

सू० २५—जलसे रोग दूर

मन्त्र ४— भृग्वंगिरा ऋषि, अग्नि देवता। इस में जल सेकसे ज्वरों को दूर करनेका आदेश है, विशेषतया क्षय रोगका। इसका वर्णन भी इसी वेद में अनेक स्थानों पर आया है।

सू० २६—शत्रुओं से बचाव

मन्त्र ४— ब्रह्मा, ऋषि इंद्रआदि अनेकदेवता। इस सू० में शत्रुओं से बचाने की देवों से प्रार्थना है। ऐसी ही प्रार्थना पूर्व में भी आचुकी है। सू० २१ में भी है, अतः यह सू० व्यर्थ ग्रन्थ विस्तार के सिवा कुछ लाभप्रद नहीं है।

सू० २७—सांपकी कैंचुली से

मन्त्र ४— अथर्वा ऋषि, प्रजापति देवता। इसमें २१ प्रकारके सांपों की कंचुली के धूंवेंसे शत्रुओंकी आंखों में विकार करनेका तथा चतुरंग सेना का वर्णन है।

सूक्त २८ राक्षसों का नाश

मन्त्र ४, चातन ऋषि, अग्नि देवता। यहां भी राक्षसों को नष्ट करने की प्रार्थना है, जो कि पहले आ चुकी है, अतः यह सूक्त भी व्यर्थ है। यहां राक्षसों को भस्म करने की तथा वे अपने ही पुत्र आदि को खावें और परस्पर लड़कर मर जायें यह प्रार्थना है।

सूक्त २६ (ब्रह्म स्तुति)

मन्त्र ६ वसिष्ठ ऋषि, ब्राह्मण पति देवता। राज सूय यज्ञ का वर्णन है। इस सूक्त के प्रथम के ३ मन्त्र ऋ० १०–११४ में अत्यन्त थोड़े पाठ भेद से आते हैं। यहां उनका ऋषि अभीवर्त्तः है, देवता राज्ञ स्तुति है। यह सूक्त भी व्यर्थ ही है, क्योंकि यह वर्णन भी अनेक स्थानों में इसी वेद में है। इस सूक्त के पांचवें मन्त्र का पूर्वार्ध भी ऋ० १०–२५६-१ में है वहां 'वचः' के स्थान में 'भगः' है।

सूक्त ३० (आयु प्रार्थना)

मन्त्र ४ अथर्वा ऋषि, विश्वे देवा देवता। संपूर्ण सूक्त में देवों से तथा देवों के पुत्रादि से आयु की प्रार्थना है।

सूक्त ३१ (धन प्रार्थना)

मन्त्र ४ ऋषि ब्रह्मा, प्रजापति देवता। इस सूक्त में इन्द्र, कुबेर तथा दिक पाल देवों से धन की तथा सुख की प्रार्थना है।

सूक्त ३२, ३३ (जल)

इन दोनों में भी ८ मन्त्र हैं, ऋषि ब्रह्मा है तथा प्रजापति देवता है। जलों का वर्णन है। जिसका वर्णन ४, ५ में कर चुके हैं।

सूक्त ३४ (मधु)

मन्त्र ५, अथर्वा ऋषि, औषधि अथवा लता देवता। इसका नाम मधु सूक्त है। मधुमय 'मीठा' बनने की प्रार्थना है। मधुर भार्या बनने की प्रार्थना है सम्पूर्ण सूक्त सुन्दर है; तथा पठनीय है। मन्त्र ३ का पूर्वार्ध ऋ० १०-२४-६ में है तथा च मन्त्र ५ का उत्तरार्ध, कां० २ सू० ३० मन्त्र १ में और कां० ६ सू० ६ में भी है। यह मन्त्र वास्तव में कां, ६ सू० ८ का ही है, यहाँ व्यर्थ है तथा च इस प्रकरण में अखरता भी है।

सू० ३५ (राक्ष मणि)

मन्त्र ४ अथर्वा ऋषि, हिरण्य देवता। इस सूक्त में शतानीक राजा के लिये दाक्षायणों ने जिस (आयु वृद्धि के लिये) मणि को बांधा था उस मणि का वर्णन है। ऐसा ही वर्णन राज्याभिषेक में पूर्व आ चुका है। इस सूक्त के प्रथम दो मन्त्र यजु० अ० ३४ में बहुत थोडे पाठ भेदसे आये हैं। —शेषांश २७ पृष्ठ

कमला नेहरू

स्व० पण्डित मोतीलाल नेहरू भारतीय वकीलों में प्रमुख स्थान रखते थे। वकालतमें उन्होंने जितनी सम्पत्ति पैदा की, संभवतः अन्य किसी वकील ने उतनी सम्पत्ति न कमाई होगी। उनके स्वर्गवास हो जाने पर भी उनकी वकालतका एक केससे २० लाख रुपया आया था। इतनी भारी आमदनी होने पर उन्होंने अपने पहले शौकीनी जीवन पर खर्च भी काफी किया। अपने सुपुत्र भारतके जवाहर, जवाहरलाल नेहरूको पढ़ानेके लिये ४० लाखरु०(तीनलाख रुपये वार्षिक) खर्च किया। वे अपने कपडे पेरिस फ्रांस से धुलवा कर पहनते थे। हवाखोरी के लिये विक्टोरिया गाड़ी में जाते समय उनके पीछे एक नौकर इत्रकी पिचकारी लिये खड़ा रहता था जो किसी नाली आदि दुर्गन्धी स्थानके आजाने से पहले हवामें पिचकारी छोड़कर मोतीलाल नेहरूकी नाक तक दुर्गन्ध न पहुंचने देता था। आदि।

पं० जवाहरलाल नेहरू की प्रेरणा पर जब वे देश-सेवा के मैदान में उतरे तब उन्होंने जेलों के कष्ट भी सहर्ष उठाये। यदि देखा जाय तो उनका स्वर्गवास भी जेलमें बिगडे हुये स्वास्थ्य के द्वारा ही हुआ। जवाहर लाल नेहरू देश सेवा के लिये क्या कुछ कष्ट उठा रहे हैं यह बतलाना व्यर्थ है।

जवाहरलाल नेहरू की धर्मपत्नी श्रीमती कमला नेहरू यदि चाहती तो घरमें रहकर राजसी सुख भोग सकती थी किन्तु उस देवीने भी देशसेवा के लिये अपने पतिका साथ देकर अपना जीवन समाप्त कर दिया। पाठकों की जानकारी के लिये कमला नेहरू का संक्षिप्त जीवन परिचय यहां देते हैं।

श्रीमती कमला का विवाह सन १९१६ में हुआ था। वह पं० जवाहर लाल कौल की सुपुत्री थीं। विवाह के थोड़े दिन बाद ही श्रीमती कमला पूरे तौर पर देश सेवा के कार्यमें संलग्न रहने लगी।

कोई और होता तो इतनी छोटी सी आयु में देश-सेवाकी मुसीबतों में पड़नेका नाम न लेता किन्तु उन्हों ने, नगर कांग्रेस कमेटी के प्रधान पद तथा कांग्रेस-कार्यसमिति की सदस्या और सत्याग्रह के दिनोंमें कुछ समय के लिये डिक्टेटर आदि पदों की जिम्मेदारी को सहर्ष योग्यता पूर्वक निभाया।

सन १९३० में आपको जेल भी जाना पड़ा था आपको केवल राजनीतिक ही नहीं, वरन समाज सुधार के कार्योंमें भी बड़ी दिलचस्पी थी। और आप को एक बार अखिल भारतीय स्त्री-सम्मेलनका सभापति भी बनाया गया था। आपके जीवनका सबसे उज्वल पहलू यह है कि देश-सेवामें कभी भी अपने पति अथवा पारिवारिक जनों के मार्ग में आप रुकावट नहीं बनीं। उन्हें मालूम था कि दुनियां में सुख और भोग मौजूद है तथा उनके पास इन सुखों से लाभ उठाने के सब साधन हैं। यह भी जानती थीं कि जवाहरलाल नेहरू अपने माता-पिताके एक मात्र प्रिय पुत्र हैं। परन्तु अपने पतिके बार २ जेल जाने को एक बहादुर रमणी की तरह सहन किया और इसे दुख मानने के स्थानमें अपना सौभाग्य ही समझा।

इस प्रकार इस वीर रमणी का ३७ वर्षकी छोटी सी आयुमें ही देहान्त होगया। आपकी एक मात्र सन्तान कुमारी इन्दिरा है, जिसकी आयु लगभग १८ वर्ष है।

आधुनिक प्रख्यात नेता

यूरोपीय महा युद्ध के पीछे जर्मनी, रूस, टर्की देश अपने पद से पतित हो कर निम्न श्रेणी के देशों में गिने जाने लगे थे तथा इटली कुछ दिनों पहिले नगण्य देश था किन्तु इस समय ये देश फिर उन्नत मस्तक दीख रहे हैं। जर्मनी अभी डेढ़ दो वर्ष में ही बलवान भयानक देश बन गया है। इस भारी कायापलट के कारण, उन देशों के अदम्य उत्साही महान नेता हैं जिनको 'डिक्टेटर' नाम से पुकारा जाता है। यहां पर उन विश्व विख्यात डिक्टेटरों का पाठकों को संक्षिप्त परिचय कराया जाता है। विश्वमित्र से इसमें सहायता ली गई है। सं०—

मुसोलिनो

परिवर्तन प्रकृति का अटल नियम है। देश और जातियों में प्रायः महान् आत्माएं अवतरित हो कर पुनर्जीवन प्रदान करती हैं, इसे ही युगान्तर या जागृति कहते हैं। इन आत्माओं से ही देश और जातियों का इतिहास बनता है। आधुनिक विश्व का इतिहास बहुत कुछ उसके शासकों से सम्बद्ध है। प्रत्येक शासक और महान् आत्मा के जीवन के दो अङ्ग होते हैं—बाह्य और अन्तरंग। बाह्यअंग से हमारा तात्पर्य उसके सामाजिक, राजनीतिक और राष्ट्रीय जीवन से है। इसके द्वारा ही वह समाज देश और विश्व में ख्याति प्राप्त करता है। आन्तरिक अथवा अन्तरंग जीवन, उसका व्यक्तिगत, घरेलू चरित्र होता है, जो प्रायः प्रकाश में कम आता है। इसके द्वारा उसकी अभिरुचि, रहन-सहन, ज्ञान और साहस आदि सभी गुणों का पता चलता है।

मुसोलिनीका स्थान विशेष है। उसने इटलीको प्रमुख राष्ट्रों की श्रेणी में ला कर खड़ा कर दिया है। मुसोलिनी का राष्ट्र-प्रेम किस दर्जे का है, उसी के मुँह से सुनिये—"सभी बातें राष्ट्र के लिये हों, उसके विरोध में तथा उससे बाहर कुछ भी न हो। सब कुछ, और जो कुछ हो उसके अन्दर ही हो।" मुसोलिनो पार्वतीय निर्झर है, द्रुत वेग से उछलना उसकी गति है—जीवन है। कहना और कर दिखाना, यही उसका व्यक्तित्व है। सन् १९१४ ई० में उसने मजदूरों और सोशलिस्टों को सम्बोधित करते हुए कहा था—"आज तुम मुझे पागल समझ रहे हो, परन्तु कुछ दिनों के बाद, जो कुछ मैं करता हूं वही तुम्हें करना पड़ेगा।" अदम्य उत्साह और दुर्दमनीय साहस उसके रक्त का मिश्रण है। उसी की जबानी सुनिये—"In me the soldier instinct lives always, the call to duty as I alown see it. The rest is with fate."

२५ पृष्ठ से आगे

अथर्ववेदीय बृहत् सर्वानुक्रमणिका में सूक्त के मन्त्रों की जो प्रतीकें दी हैं उनमें से एक ही मन्त्र के प्रारम्भ में वह प्रतीक मिलती है, अन्य प्रतीकें मन्त्रोंके आदि में नहीं है। परन्तु ग्रंथकार मन्त्रों की ही प्रतीकें सब जगह देते हैं, इस लिये प्रतीत होता है कि इस सूक्त के मन्त्रों में गड बड हुई है।

यह प्रथम काण्ड समाप्त हुआ।

क्रमशः

जॉन गन्थर महोदय लिखते हैं—"वह, वृद्धावस्था, कोमल पतली महिलाओं, बिल्लियां और धन को अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखता है। ह० वाट्सन वेल्स बतलाते हैं कि श्रीमती मुसोलिनी का मुसोलिनी के राजनीतिक जीवनपर कुछ भी प्रभाव नहीं। दोनों एक दूसरे से पृथक रहते हैं। एक का निवास रोम है तो दूसरी मिलान में रहती है। वह, रोम, कृषक, वायुयान, पुस्तकें, गति और अपनी लड़की इडा को प्यार करता है। उसका मासिक वेतन १०० पौंड तथा भोजन, फल और शोरबा है। वह नियमित रूप से प्रार्थना करता है। सदैव महल से झोंपड़ी में लौटने के लिये समुद्यत रहता है। वह कभी-कभी कृषकों के नृत्य में सम्मिलित हो कर स्वच्छन्दता के साथ आनन्द करता है। जॉन शार्ड के मतानुसार मुसोलिनी ही एक ऐसा डिक्टेटर है जो अपनी रक्षा की चिन्ता कम करता है। यह स्वयं स्वीकार करता है कि—"मैं अपनी व्यक्तिगत रक्षा का बिलकुल ध्यान नहीं रखता, जिसे समस्त रोम देखता और समस्त इटली जानता है।"

फिर भी खास तौर पर तालीम-पाये तीन सौ पुलिस के जवान हर समय उसकी रक्षा के लिये नियुक्त रहते हैं। इसके अतिरिक्त कितने ही गुप्तचर उसकी रक्षा के लिये प्रतिक्षण सतर्क रहते हैं। वह कभी एक रास्ते से नहीं आता जाता। उसकी मोटर हवा से होड़ लगा कर चलती जाती है। पुलिस वाले सड़क पर सादी लिबास में चौकसी से खड़े रहते हैं। एक दूसरे को गुप्त इशारों से सूचित करते हैं, ये इशारे नित्यप्रति बदला करते हैं। विस्फोटक द्रव्य की आशंका से डाक खोल कर उसके सामने रखी जाती है। मुसोलिनी कहता है—"मैं ने भूलें की हैं, मेरे अन्दर प्रेम, घृणा, पश्चात्ताप और सुख की भावनाएं मौजूद हैं, क्योंकि मैं मनुष्य हूं।"

हिटलर

हिटलर एक प्रकार की आंधी है, वह मिनटों में सोचता, तय करता और सब कुछ कर डालता है। अपने बाहुबल और विशाल बुद्धि से यह जर्मनी का सर्वेसर्वा बन बैठा है। वह डिक्टेटरशिप पर पूर्ण भरोसा रखता है। उसका मत है कि जिस भांति १०० बेवकूफ १ बुद्धिमान को नहीं पा सकते, इसी भांति एक वीरत्वपूर्ण निर्णय सैकड़ों बेवकूफों के मस्तिष्क से नहीं निकल सकता। जौन गन्थर के शब्दों में हिटलरको पुस्तकों, स्त्रियों, भोजन, पोशाक, व्यायाम और धन में बिलकुल दिलचस्पी नहीं। उस का कहना है—"नवयुवकोंके मस्तिष्क को विषयोंके बोझ से लादना अच्छा नहीं।" वह यह भी कहता है कि केवल स्वस्थ मनुष्योंको ही सन्तान उत्पन्न करने का अधिकार होना चाहिये। रोगी निर्बलसंतान पैदा न हो इस विचारसे उसने जर्मनी में लाखों असाध्य रोगी मनुष्योंको डाक्टरी विधिसे नपुंसक बनवा दियाहै

वह शराब, सिगार कुछ भी नहीं पीता, अभिन्न मित्र उसका एक भी नहीं, गान-विद्या से कुछ प्रेम है वह अपने को निरामिष भोजी कहता है। करमकल्ला का शोरबा उसके नित्य के भोजन का एक प्रधान भाग है। मिस्टर वाट्सन का मत है कि "रमणी-प्रेम ओडल्फ हिटलर को छू तक नहीं गया।" असहिष्णुता और धार्मिक जोश उसमें अधिक है।

अधिकांश आधुनिक डिक्टेटरों का आविर्भाव आतङ्कवाद के साथ हुआ है। अस्तु। इनके अस्तित्व

को स्थायी बनाने के लिये आतङ्क और सतर्कता की अतीव आवश्यकता है। ओडल्फ हिटलर इस मामले में बडी सावधानी से काम लेता है। जौन-शार्ड महोदय लिखते हैं कि जब मैं ने बर्लिन में हिटलर के हेडक्वार्टर्स का निरीक्षण किया, उस समय डिक्टेटर के कमरे के द्वार पर मुझे छह सिपाही खड़े हुए दिखाई पड़े। वे सभी ओटोमैटिक पिस्तौलों से सुसज्जित थे और आगन्तुकों पर गहरी दृष्टि डाल रहे थे। हिटलर के पास उसके अपने विशेष १०० रक्षक हैं, जो हाथोंमें रायफल लिये, सिरपर फौलादी टोप पहने बड़ी तत्परता से उसके निवास-स्थान की रक्षा कर रहे थे। हिटलर की मोटर बहुत बढ़िया है; उसकी पिछली सीट पर ५ सिपाही घुटनों में रायफल दबाये, पेटियों में भरी पिस्तौल लटकाये बड़ी चौकसी से आसपास की भीड़ को देखा करते हैं। उसका ड्राइवर भी ओटोमैटिक पिस्तौल से सुसज्जित रहता है। कोई भी अपरिचित व्यक्ति मोटरसे दो गजकी दूरीपर आया नहीं कि सनसनाती गोलियां समा गयीं। एफ० यूडे (Furdiand Ydhay) लिखता है कि हिटलर कब कहां जायगा समस्त जर्मनी में एक-दो व्यक्तियोंके अतिरिक्त किसी को इसका पता नहीं रहता, कभी वह आवश्यक सरकारी कामोंपर भी नहीं जाता और कभी अचानक सामान्य स्थानों पर जा धमकता है। रूस के ज़ार की तरह वह भी अपने साथ हिटलर का द्वितीय सशस्त्र संस्करण रखता है। यह व्यक्ति ठीक हिटलर ही के रूप रंग वाला है। उसे बहुत अधिक वेतन दिया जाता है। कभी कभी जलसे और सभाओं में लोग भ्रमवश इसी की सलामी करते हैं, वास्तविक हिटलर भीड़ में लापता रहता है। राजनीतिक उत्सवों में प्रायः वह अपने वस्त्रों के नीचे एक कवच पहन कर जाता है। कभी कभी विद्रोही वातावरण के गम्भीर होने पर हिटलर हफ्तों घर से बाहर नहीं निकलता।

स्टैलिन

उपरोक्त दोनों डिक्टेटरों के सामने सोवियट रूसके डिक्टेटर स्टैलिनकी तुलना एक स्फटिक-चट्टान से की जा सकती है। वह हंसोड़, नीतिज्ञ और बातचीतमें बड़ा पटु है। सुस्वादु भोजन, रास, नाटक, सिनेमा और पुस्तक का वह बड़ा शौकीन है। सवारीका निरजिस, खाकी रंगका जाकेट, बूट और टोपी—यही उसकी पेटेण्ट पोशाक है। स्टैलिन दो बार विवाह कर चुका है, बच्चोंसे भी बहुत प्रेम करता है। उसका मुखमण्डल ही हृदयका दर्पण है। इसका मासिक वेतन सभी डिक्टेटरों की अपेक्षा कम, अर्थात् ६ पौण्ड १५ शिलिङ्ग मासिक है। मोटर, पुस्तकें और नौकर इसे राज्यकी ओरसे प्राप्त हैं।

रूसके निर्वासितों की राय है कि स्टैलिन विश्व के समस्त व्यक्तियोंसे अधिक सुरक्षित और सतर्क प्राणी है। इसकी यात्राका विवरण प्रायः अज्ञात रहता है। पहुंचनेकी तिथिसे समाचारपत्र पहलेही सूचित कर दें पर प्रस्थान का समय अज्ञात ही रहता है क्रेमलिनके प्रासादसे नीचे एक छोटेसे 'फ्लैट' में वह अपने बच्चों के साथ रहता है। घरसे दफ्तरतक जाते समय गुप्तचर सड़कके कोनेमें लोगोंपर रहस्यमयी दृष्टि डालते हैं। घरपर भी उसका रक्षाका यथेष्ट प्रबन्ध है फिर भी जनताके सामने आनेका साहस बहुत कम करता है।

कमाल पाशा

कमालपाशा— टर्कीका प्रजातन्त्र कमालपाशा का अमर स्मारक है। यूरोपमें कमाल का नाम लोगों की जिह्वा के अग्रभागपर रहता है, किन्तु टर्कीके समाचार पत्रोंसे वह बहिष्कृत-सा है, और वह परिवर्तन और अनुकरणका मूर्तिमान स्वरूप है। उसका जीवन सूना है, पत्नीको तलाक देकर छुटकारा प्राप्त कर चुका है। जीवनमें उसने केवल एक महिलाके साथ वफादारी की है, और वह भी इसकी माता। मज़हबी पागलपन को कमाल घृणाकी दृष्टिसे देखता है।

एक यात्री लिखता है कि खुफिया पुलिस को डिक्टेटर के विरुद्ध कानाफूसी करने वालों तक की खबरगीरी रखने का पाठ पढ़ाया जाता है। एक यात्री इस्तंबोल के होटल में ठहरा था, उन्हीं दिनों कमाल वहाँ पधारने वाले थे। वहांकी पुलिसने शहर का चप्पा-चप्पा बड़ी सतर्कतासे छान डाला, यात्रियों के कागजों का निरीक्षण किया और रोजाना थाने में हाजरी देनेका आदेश देकर पिण्ड छोड़ा।

कमाल पाशाने पहले अपने संरक्षकों में कुछ खूनी और बर्बर व्यक्तियों को नियुक्त किया था किन्तु विवश होकर उन्होंने उनकी हत्या करदी। अब उनके स्थानकी पूर्ति प्रजातन्त्र के सुशिक्षित सैनिकों द्वारा कीगई है। इसके अतिरिक्त ६७ संरक्षक उनकी अपनी मित्र मण्डली के हैं, जिन्हें वे सदैव अपने साथ रखते हैं। गुप्तचरोंका भी एक दल सदैव उनकी रक्षामें नियुक्त रहता है। कहनेका आशय यह है कि हिटलर और मुसोलिनी की भांति टर्की के इस डिक्टेटर को भी अपनी रक्षाके लिये रहस्यमय एवं प्रचण्ड उपायों का अवलम्बन करना पड़ता है।

वास्तव में टर्की, आजसे १५ साल पूर्व वाली टर्की से कहीं विचित्र है। अब वहाँ न वह बुर्का है और न शाम व सुबह की लम्बी २ अजाँ, बल्कि स्वच्छ वायु में नंगे शिर विचरण करने वाली स्त्रियें और विज्ञान के प्रकाश में टर्कीके भावी-भाग्यको चमकाने वाले युवक दिखाई देते हैं। नमाजकी पाबन्दी और कुरान के शासन को ताकमें रखनेके अलावा अन्य बहुत सी बातों के परिवर्तन करनेका श्रेय भी इसी टर्कीके भाग्य विधाता कमाल पाशा को है।

रज़ा खां

साधारण सैनिकों से फारस का सम्राट बनने का परम सौभाग्य रजाखां को प्राप्त है। रजाखांका जीवन ठीक उस बैलून के समान है जो पृथ्वीसे उठ कर, वायु के झकोरों को मोडकर आकाश मण्डल पर अपना आलोक प्रसारित करता है। इनकी भावनाएं सदा तरुण हैं। ये केवल ४ घन्टा निद्रा देवी की गोदमें शयन करते हैं। इनका तकिया घोड़ेका जीन और बिस्तर बहुधा कम्बल होता है। ये २४ घण्टे में केवल एक बार खाते हैं, फिर भी विगत २१ वर्षोंमें एक दिनके लिये भी अस्वस्थ नहीं हुये। इन्होंने चार विवाह कर ६ बच्चे पैदा किये हैं। एम० एच० डबल्यू वेल्स बतलाते हैं कि इनके जीवन पर भी किसी स्त्रीका प्रेम और प्रभाव नहीं! इन्हें भी प्रतिपल जानके लाले ही पड़े रहते हैं जीवन-रक्षाकी पूरी चौकसी रखते हुये भी रात में कभी २ निद्रा भंग होजाती है। यह है करोडों व्यक्तियों पर शासन करने वाले शासकों की अवस्था।

अबतक जितने डिक्टेटरों का चित्रण किया गया

है उनके अपने जीवन अपूर्ण हैं, अशान्त हैं। इनमें क्रूर नीति-भौतिकता-भय, स्वार्थ और किञ्चित वीरता एवं साहस के सिवा कुछ भी नहीं। ये वह आंधी हैं जिन का आदि अन्त एकसा ही है।

महात्मा गान्धी

जौन होम्स कहते हैं— आज महात्मा गांधी सारे संसारके जीवन के मध्य खड़े हैं और कई शताब्दियों का भाग्य अपनी मुट्ठी में बन्द किये हुये हैं।

वे कभी न बन्द होने वाला ज्वालामुखी हैं, जिस की प्रत्येक निःश्वास में युद्धका गीत निकलता है। उस रण गानमें अशान्ति नहीं, शान्ति है; आतप नहीं, शीतलता है। उन निःश्वासों में प्रबल प्रचण्डता भी है। उस सिद्धान्त उस शासन प्रणाली और उस दूषित एवं घृणित मानवीय समाज व्यवस्था के लिये जो मानव आत्मा को कुण्ठित करती है, उसे वासनाओं का क्रीत दास बनाती है और संयम एवं त्याग पथसे भ्रष्ट करती है।

वास्तव में विश्वके शासकों और डिक्टेटरों के लिये महात्माजी एक पहेली हैं—रहस्य हैं। लार्ड इरविन की जबानी सुनिये—

'प्रथम बार मैंने गांधी को देखा और उनकी नैतिक पवित्रता से अत्यधिक प्रभावित हुआ।"

"द्वितीय बार उनकी कानूनी कुशाग्र बुद्धि से अत्यन्त प्रभावित हुआ।"

"तृतीय बार मुझे उसका पूर्ण निश्चय होगया।"

क्या सचमुच कई शताब्दियों के पश्चात आजतक विश्वने कोई ऐसा दूसरा डिक्टेटर देखा है?

—वीर स्तवन—

छोड़के अनङ्ग संग त्याग में हुए जो नङ्ग।
ज्ञान का अमूल्य भङ्ग पीना सिखलाते हैं॥
जग—मृग—जाल पर मृगराज काल सम।
करते कमाल पर शान्त कहलाते हैं॥
रणवीर दानवीर शूरवीर धीरवीर।
जो धर्मवीर जैसे के प्रभु कहलाते हैं॥
महावीर अतिवीर ऐसा है खिताब जिन्हें।
त्रिशला के नन्दन ये "वीर" कहलाते हैं॥

—वि० मथुरालाल जैन
पा० दि० जैन वि० उदयपुर

देश विदेश समाचार

—सन १९२१ में भारत में हिन्दुओंकी २३७८ जातियां थीं, जबकि अब उनकी संख्या ३००० से भी अधिक है।

—ब्रिटिश भारतमें ८७९७६ कारें, ६४२० टेक्सी भाड़ेकी कारें, ३१००२ बसें, ८५०२ लौरी और १०६४८ साइकिलें अर्थात कुलकी संख्या १४४८४८ है।

—देहली का "रियासत" पत्र लिखता है कि जब पं० जवाहरलाल नेहरू लण्डन में थे तो सम्राट के प्राईवेट सैक्रेटरी ने लार्ड लिनलिथगो के इशारे पर आपको एक पत्र लिखा जिसमें उन्हें मिलने और भारतके मामलों पर बातचीत करने का निमन्त्रण दिया ताकि आगामी शासन सुधारों को सफल बनाने के लिये कांग्रेस को तय्यार किया जा सके। पंडित जी ने उत्तरमें मिलने से इन्कार कर दिया और लिखा कि, चूंकि इस मुलाकातसे भारत के राजनीतिक क्षेत्रोंमें गलतफहमी पैदा होनेका भय है इस लिये मिलना ठीक नहीं और आपको इस इन्कारसे बहुत अफसोस है।

—पोस्टकार्ड को दो पैसेका कराने का प्रयत्न असेम्बली में किया जायगा।

—वर्तमान वायसराय ८ अप्रैल को भारतसे विदा होंगे और नये वायसराय १७ को बम्बई आ पहुंचेंगे।

—श्री सुभाष बोस पं० जवाहरलाल को सहयोग देंगे। दोनों के विचारों में पूर्ण समानता है।

—बंगालमें २५७४ नजरबन्द हैं।

—जर्मनी ने राइनलेण्ड में और सेना भेजदी। भारी २ तोपखाने भी मैदानमें पहुंच गये।

—कलकत्ते के एक पुलिस सार्जेंट मि० लौककी एक १५ वर्षीया लड़की मेरी तेरिसा का कद केवल ३ फुट है।

—हैदराबाद रजमेन्टका मेजर डबल्यू० ई० जैक्सन रातको मुंहमें सिगरेट लिये हुये बिस्तर पर लेट गया बिस्तरे में आग लग जाने से वह बुरी तरह झुलस गया। इससे उसकी मृत्यु होगई।

—अप्रेल महीने में वर्तमान नाबालिग ग्वालियर महाराज को वायसराय लार्ड वेलिंगडन आते २ अधिकार देने वाले हैं। राज्यकी व्यवस्था के लिये तीन मेम्बरों की एक केबिनेट होगी उसकी सलाह से आप राज्य चलावेंगे जिसमें एक अंग्रेज मेम्बर भी होगा।

—ईरानकी सरकार मुहर्रम पर जाने वाले भारतीय हज-यात्रियों को ईरान में घुसने की आज्ञा नहीं दे रही।

—रावलपिण्डी की मण्डीमें एक परदेशी व्यापारी गेहूं बेचने आया। उसने अपना माल १५० रुपये में बेचकर पैसे प्राप्त कर लिये। जब नोटों को बटुवमें डालने लगा तो नोट नीचे गिर पड़े और एक गायने उनको निगल लिया।

पिछले पृष्ठ का शेष

कि समन्वयकर्ता ने जो दिगम्बर सूत्र पाठों के साथ समन्वय किया है, वह उनके अपने उदार भावों का संसूचक है। हम मुनिश्री के उन उदार भावों की हृदय से सराहना करते हैं और दिगम्बर विद्वानों का ध्यान इन शब्दों की ओर आकर्षित करते हैं। पुस्तक में जैन दर्शन के २८८ पृष्ठ हैं, सजिल्द का मूल्य २॥) और अजिल्द का मूल्य २) प्रचार की दृष्टि से कुछ अधिक है।

देश विदेश समाचार

—सन १९२१ में भारत में हिन्दुओंकी २३७८ ज्ञातियां थीं, जबकि अब उनकी संख्या ३००० से भी अधिक है।

—ब्रिटिश भारतमें ८७६७६ कारें, ६४२० टैक्सी भाड़ेकी कारें, ३१००२ बसें, ८५०२ लौरी और १०१४८ साइकिलें अर्थात कुलकी संख्या १४३८४८ है।

—देहली का "रियासत" पत्र लिखता है कि जब पं० जवाहरलाल नेहरू लन्दन में थे तो सम्राट के प्राईवेट सैक्रेटरी ने लार्ड लिनलिथगो के इशारे पर आपको एक पत्र लिखा जिसमें उन्हें मिलने और भारतके मामलों पर बातचीत करने का निमन्त्रण दिया ताकि आगामी शासन सुधारों को सफल बनाने के लिये कांग्रेस को तय्यार किया जा सके। पंडित जी ने उत्तरमें मिलने से इन्कार कर दिया और लिखा कि, चूंकि इस मुलाकातसे भारत के राजनीतिक क्षेत्रोंमें गलतफहमी पैदा होनेका भय है इस लिये मिलना ठीक नहीं और आपको इस इन्कारसे बहुत अफसोस है।

—पोस्टकार्ड को दो पैसेका कराने का प्रयत्न असेम्बली में किया जायगा।

—वर्तमान वायसराय ८ अप्रैल को भारतसे विदा होंगे और नये वायसराय १७ को बम्बई आ पहुंचेंगे।

—श्री सुभाष बोस पं० जवाहरलाल को सहयोग देंगे। दोनों के विचारों में पूर्ण समानता है।

—[illegible] नजरबन्द हैं।

—अंग्रेजों ने [illegible] में और सेना भेजदी। भारी २ तोपखाने भी सेवामें भेज गये।

—[illegible] के एक मुस्लिम [illegible] मि० [illegible] एक १५ वर्षीया लड़की मेरी लेरिसा का कद केवल ३ फुट है।

—हैदराबाद रजीमेन्टका मेजर डब्लू० ई० जैक्सन रातको मुंहमें सिगरेट लिये हुये बिस्तर पर लेट गया बिस्तरे में आग लग जाने से वह बुरी तरह झुलस गया। इससे उसकी मृत्यु होगई।

—अगले महीने में वर्तमान नाबालिग ग्वालियर महाराज को वायसराय लार्ड वेलिंगडन जाते २ अधिकार देने वाले हैं। राज्यकी व्यवस्था के लिये तीन मेम्बरों की एक केबिनेट होगी उसकी सलाह से आप राज्य चलावेंगे जिसमें एक अंग्रेज मेम्बर भी होगा।

—ईराककी सरकार मुहर्रम पर आने वाले भारतीय हज-यात्रियों को ईराक में घुसने की आज्ञा नहीं दे रही।

—रावलपिण्डी की मण्डीमें एक परदेशी व्यापारी गेहूं बेचने आयए। उसने अपना माल १५० रुपये में बेचकर पैसे प्राप्त कर लिये। जब नोटों को बटुएमें डालने लगा तो नोट नीचे गिर पड़े और एक गायने उनको निगल लिया।

पिछले पृष्ठ का शेष

कि समन्वयकर्ता ने जो दिगम्बर सूत्र पाठों के साथ समन्वय किया है, वह उनके अपने उदार भावों का संसूचक है। हम मुनिश्री के उन उदार भावों की हृदय से सराहना करते हैं और दिगम्बर विद्वानों का ध्यान इन शब्दों की ओर आकर्षित करते हैं। पुस्तक में जैन दर्शन के २८८ पृष्ठ हैं, सजिल्द का मूल्य २॥) और अजिल्द का मूल्य २) प्रचार की दृष्टि से कुछ अधिक है।

REGD No. L.
3459.

—हिन्दू महासभा के भूतपूर्व प्रधान भिक्षु उत्तमा और मिलाप के संपादक ला० खुशहालचन्द जी खुर्सन्द बहावलपुर के पीड़ित हिन्दुओं तथा नवाब साहिबका मेल कराने बहावलपुर गये थे किन्तु नवाब साहिबने सुलह के लिये उनकी उचित मांगों को भी स्वीकार नहीं किया।

—कलकत्ता कारपोरेशनने पास किया है कि श्री सुभाषचन्द्र बोस का कारपोरेशनकी ओरसे स्वागत किया जायगा। प्रस्ताव में कहा गया है कि वे माने हुए नेता तथा सरगर्म और हृदय से राष्ट्रवादी हैं। उन्हों ने देश के लिये बहुत त्याग किया है। और बड़ी योग्यता पूर्वक उन्हों ने कलकत्ता कारपोरेशन की कौंसलर की हैसियत से, आल्डरमैन की हैसियत से, एग्जैक्टिव अफसर की हैसियत से तथा मेयर की हैसियत से बहुत सेवा की है।

—अमृतसर चौक लोहगढ़ दरवाजे में एक गाय ने एक समय में तीन बछड़ों को जन्म दिया है, जिस में से एक नर तथा दो मादा हैं। और सारे जीवित हैं।

—श्री भाई परमानन्दजी एम० एल० ए० ने वायस राय के प्राइवेट मन्त्री तथा भारत सरकार के अर्थ सदस्य को एक पत्र भेजा है कि रुपया के सिक्का पर हिंदी में भी 'एक रुपया" लिखा होना चाहिये।

—गत सप्ताह में ३१ लाख ४० हजार ४३८ रुपये का सोना बम्बई से यूरोप भेजा गया। स्वर्ण मुद्रा परित्याग के अनन्तर अब तक २६३६२१८३५८ रुपये का सोना बम्बई से विदेश जा चुका है।

—श्री सुभाषचन्द्र बोस १० अप्रेल को बम्बई पहुँचेंगे। उन के भाई श्री शरतचन्द्र बोस को पेरोल सूचना प्राप्त हुई है।

—जम्मू ८ मार्च खिलनमर्ग में बर्फ का पहाड़ ऊपर पड़ने से डिडवाह तहसील जिला मुजफ्फरनगर में २५ आदमी मर गये। १८ लाशें अब तक मिल चुकी हैं। जिन में ३ अंग्रेजी फौजी अफसर हैं।

—एक एम० ए० एल० टी० ने रियासती फौज के एक सिपाही की क्लर्की १३) रु० मासिक पर स्वीकार की है। यह एम० ए० एल० टी० दक्षिणा त्रावणकोर का एक ईसाई है। उसे इस स्थानके लिये २०० उम्मीदवारों में से जो अधिकतर ग्रेजुएट तथा अन्य डिग्रियां प्राप्त थे, चुना गया।

—शहीदगंज के लिये मुसलमानों के सत्याग्रह बंद हो जाने के कारण सरकार उस विषय में जब्त की गई प्रेसों का जमानतोंको वापिस कर रही है।

—श्री मोहनलाल सक्सेना आदि नेताओं के समझाने पर श्री योगेश चटर्जी ने १११ दिन की भूख हड़ताल समाप्त कर दी।

—कानपुर (सब्जी मंडी) में ९० विद्याधरके मकान की छत में १० हजार रुपए के नोट कपड़े में बंधे छुपा कर सुरक्षित रक्खे हुए थे एक बंदर उन्हें किसी तरह निकाल कर भाग गया।

—श्रीमान पं० मदनमोहन मालवीय ने २७ फरवरी को हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस में सैंब से पहले सिनेमा देखा इससे पहले आपने कभी सिनेमा नहीं देखा।

—खुर्जा स्टेशनके गोदामके एक बाबूकी पत्नीके तीन बच्चे हुए जो कि अभी तक जीवित हैं।

अजितकुमार जैन के प्रबन्धसे "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस—मुलतान" से छपकर प्रकाशित हुआ।

वर्ष ३
अंक १८
श्री भारत वर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस
इस अंक के पठनीय लेख
१— तप धर्म
२— देशी-गण पर दो शब्द
३— तानसेन का परिचय
४— राजयक्ष्मा से बालकोंको कैसे बचाना चाहिये।
५— माया-जाल
६— उपदेशक विद्यालय की स्थापना
७— तत्वार्थसूत्र और श्वेताम्बरीय आगम
८— समाचार
वार्षिक ३) एक प्रति =)

जैन समाचार

रेडियो द्वारा महावीर संदेश

सर्व सज्जनोंको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि भारत वर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघने भगवान महावीर के जन्म दिन के उपलक्ष्य में रेडियो द्वारा ब्रोडकास्ट करा कर सम्पूर्ण भारत को महावीर संदेश सुनाने का प्रबन्ध किया है। यह सन्देश महावीर जयन्ती के दिन तारीख ४ अप्रेल को रात्रि के ठीक ७॥ बजे देहली के रेडियो स्टेशन पर सुनाया जायगा और वहां ब्रोडकास्ट होकर सम्पूर्ण भारत में पहुंचाया जायगा। संघ की तरफसे यह सन्देश स्वा० कर्मानन्द जी सुनायेंगे।

देहली के मित्र मण्डल ने जयन्ती पण्डाल में रेडियो और लाऊड स्पीकर लगा कर इसको सुनाने का प्रबन्ध किया है। अन्य सभाओं को भी इसका अनुकरण करना चाहिये।

निवेदक—
प्रधान मन्त्री
भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ

आवश्यक सूचना

पं० चंद्रेश्वरदयाल जी शास्त्री हिसार ने 'जैन मित्र' अङ्क १६ ता० १२-३-३६ ई० में 'पंजाबके जैनो ध्यान दें' शीर्षक एक समाचार प्रगट किया है। आप ने इस से इन्स्पेक्टर औफ स्कूल्स हिसार के ता० १६-२-३६ के सरक्यूलर नं० ७ के सम्बन्ध में शास्त्रार्थ संघ का ध्यान आकर्षित किया है। यह सरक्यूलर अनुचित एवं परिवर्तन योग्य है। अत इसके सम्बन्ध में संघ की तरफ से कार्यवाही प्रारम्भ कर दी गई है। आगे जो कुछ भी होगा, प्रकाशित कर दिया जायगा।

—कोटा नरेश ने अपने राज्यमें महावीर जयन्ती की छुट्टी हमेशा के लिये देना स्वीकार कर लिया है। धन्यवाद।

सूचना—जो छात्र स्या० महाविद्यालय बनारसमें प्रविष्ट होना चाहें वे प्रवेशफार्म भर कर अपनी पाठशाला के अध्यक्ष के प्रमाण पत्र के साथ १ मई तक भेज दें। —हर्षचन्द्र वकील उपअधिष्ठाता

सूचना

श्री पन्नालाल दि० जैन विद्यालय फीरोजाबादसे पं० रघुवंशीलाल धर्माध्यापक अलहदा कर दिये गये हैं। अतः कोई साहिबान उन्हें सहायता वगैरह किसी प्रकार का रुपया न देवें। और दूसरे किसी भी साहिबान को देवें तो रसीद अवश्य ले लिया करें।

आवश्यकता

श्री पन्नालाल दि० जैन विद्यालय फीरोजाबाद में शास्त्री कक्षा तक का कोर्स चालू हो गया है। अतः विद्यार्थियों की शीघ्र आवश्यकता है। बाहर के छात्रों के रहन सहन का उचित प्रबन्ध है और भोजन फीस ३) महीना मात्र है। विशेष हाल जानने के लिये पत्र व्यवहार करें।

भवदीय—
रामशरण स० मन्त्री 'विद्यालय'

धर्म प्रभावना—के लिये श्रीमान स्वामी कर्मानंद जी का सचित्र जीवन चरित्र जैन अजैन जनता में बांटिये। मूल्य केवल दो रुपये सैकड़ा है।

मैनेजर-अकलंक प्रेस
मुलतान सिटी

अकलंकदेवाय नमः
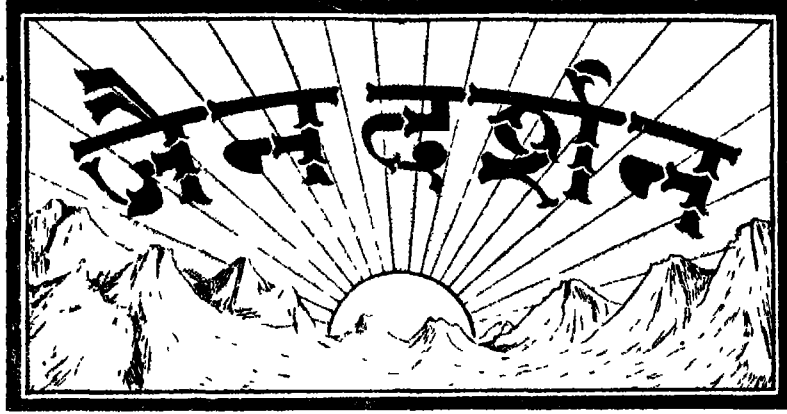
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्धर्माभवन्नखिलदर्शनपक्षदोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री चैत्र सुदी १०—बुधवार श्री वीर सं० २४६२ | १ अप्रैल १९३६

उद्गार

[विद्यार्थी राजकुमार जैन स्या० म० वि० काशी]

प्रभो ! आज संसार-सारता को
दिल भर कर देखा ।
देखा वह निर्भ्रान्त विषय रंग
रंजित स्वार्थ-रूपरेखा ॥

मधुव्रतों का मधुर मृदुल-
गुन्जन पराग पाने तक ।
रञ्जन वह नाकेन्द्रवृन्द
नाकन्द्र-वास बसने तक ॥

देखा कुसुमित कलियों का -
पलमें खिलना मुरझाना ।
निज सुवास-सुरभित दिगन्तको
अविरल करते जाना ॥

क्रन्दन वह शोकाश्रुबिन्दु
माला विलसित हृदयों का ।
भञ्जन परम पवित्र पथ्य
अन्तस्तम के भावों का ॥

क्षया रोग संसार वासना-वासित
निरत रुलाना ।
जीवन सरिता का प्रवाह
दुखमय द्रुतगति से जाना ॥

तप धर्म

(ले०—जैनदर्शन शास्त्री श्रीमान पं० श्रीप्रकाश जी न्यायतीर्थ)

अवमौदर्य

संयम का पालन, निद्रा का विजय, त्रिदोष के उपशमन, आलस्य के अभाव, अनशनजनित बाधा की निवृत्ति, कायोत्सर्ग की दृढ़ता, ध्यान की निश्चलता और सन्तोष तथा स्वाध्याय की सुख पूर्व सिद्धि के लिये अल्प आहार अर्द्ध भोजन, चतुर्थांश भोजन आदि रूप—ग्रहण करना अवमौदर्य तप है। अल्पाहार करने वाले के वात, पित्त कफ रूप दोषों का विषमता नष्ट होकर समता उत्पन्न हो जाती. इन्द्रियां बलिष्ठ होकर द्वेषी नहीं बनतीं और निद्रा पर विजय प्राप्त हो जाती है, जिनका संसार से विरक्त हो कर आत्म कल्याण में लगे हुए साधु के जीवन में होना आवश्यक है। श्री० पं० आशाधर जी ने लिखा है:—

"नाक्षाणि प्रद्विषन्त्यक्षप्रतिक्षयभयाक्ष च।
दर्पात्स्वैरं चरन्त्याज्ञामेवानुयन्ति भृत्यवत्॥"

"परिमित आहार करने वाले व्यक्तिकी इन्द्रियाँ मानो इस भय से कि कहीं उपवास के द्वारा हमारा नाश ही न हो जाये, विरुद्ध नहीं हुआ करतीं। और न मद के वेग में आकर स्वच्छन्द विषयों में विहार ही किया करती है, किन्तु एक नौकर के समान आज्ञा के साथ ही निर्दिष्ट कार्य करने के लिये उद्यत हो जाया करती हैं।"

गृहस्थ के लिये भी अधिक खाना उपयोगी नहीं. अपने पेट के चार भागों में से दो भागों में अन्न तथा एक भाग में जल भरना चाहिये और एक भाग वायु के लिये खाली छोड़ देना चाहिये। यह आयुर्वेद का सिद्धान्त है। इस प्रमाण में कुछ कमी कर आहार ग्रहण करने वाला अवमौदर्य तप का पालन कर सकता है। इस तपश्चरण से लाभ यह है कि शरीर अस्वस्थ नहीं होने पाता—सब इन्द्रियाँ अपना काम यथोचित रूप से करती रहती है. जिस से धर्म-साधन में कोई बाधा उपस्थित नहीं होती। यह तप लाभकारी है, पर भोजन की मात्रा इतनी न्यून कभी नहीं होनी चाहिये, जिस से शरीर अपना साथ न दे सके।

जो कीर्ति के लिये, माया से, अथवा मिष्टान्न मिलने के लिये अल्प भोजन करते है. अवमौदर्य का ढोंग करते हैं उन के यह तप निष्फल है। इसी बात को श्री स्वामिकार्तिकेय मुनि ने लिखा है।

जो पुण कित्तिणिमित्तं मायाए मिट्ठभिक्खलाहट्ठं।
अप्पं भुंजदि भोज्जं तस्स तवं णिप्फलं विदियं॥

इस गाथा के भावार्थ में पं० जयचन्द जी ने स्पष्ट किया है कि "जो ऐसा विचारै अल्प भोजन किये मैं मेरी कीर्ति होयगी, तब कपटकरि लोक को भुलावा दे किछू प्रयोजन साधने के निमित्त, तथा यह विचारै जो थोडा भोजन किये भोजन मिष्ट रस सहित मिलेगा, ऐसे अभिप्रायतैं ऊनोदर तप करै तो ताके निष्फल है। यह तप नाहीं पाखण्ड है।

वृत्ति परिसंख्यान

भिक्षा के लिये दाता, गमन, पात्र अन्न, गृह

आदि के सम्बन्ध में कोई विशेष संकल्प कर के जाना और विचारी हुई विधि के मिलने पर आहार ग्रहण करना तथा संकल्पित विधि के अनुसार योग न मिलने पर वापिस लौट कर उपवास करना वृत्तिपरिसंख्यान तप है। इसे महामुनि ही करते हैं। नैराश्य और इन्द्रिय-संयम की सिद्धि ही तप का फल है। अपना प्रभाव जमाने की इच्छा से अटपटी लेने से या विधि के न मिलने पर पश्चात्ताप करने से तप नहीं रहता।

रस परित्याग

रसनेन्द्रिय के वशीभूत हुआ मनुष्य अच्छे २ रसों का स्वाद लेना चाहता है, इसलिये सरस स्वादिष्ट इच्छित रस के—भोजन के परित्याग को तप बतलाया गया है। मन चाहे भोजन की लालसा के नाश के लिये यह बहुत उपयोगी है। दूध, दही, घृत, तेल, इक्षु (गुड़, खांड आदि) लवण अथवा मधुर, आम्ल, लवण, कटु, कषाय और तिक्त इन छहों रसों के या दाल आदि व्यञ्जन और शाक आदि हरितकाय वनस्पति के सर्वात्मना या एकदेश रूप से छोड़ने को रसपरित्याग कहते हैं। इस तप के पालन करने वाले साधु को बलवीर्य, गृद्धि एवं दर्प बढ़ाने वाली सम्पूर्ण वस्तुओं का परित्याग कर देना चाहिये।

विविक्तशय्यासन

एकान्त में उठने बैठने शयन और मलमूत्रादि निक्षेपण के स्थान का निर्धारण करना विविक्त शय्यासन कहलाता है। एकान्त से मतलब है जिस स्थान में ब्रह्मचर्य पालन स्वाध्याय और ध्यानादि की सिद्धि में कोई बाधा न पहुँचे। राग द्वेष उत्पन्न न हो और वीतरागता बढ़े। जहां किसी का आहार-विहार या संसर्ग न रहे, मन में संकल्प विकल्प रूप विकार उत्पन्न करने वाले शब्द सुनाई न दें और जहां की सुन्दरता देख इन्द्रियां विषयान्तर में प्रवृत्त न हों। इस एकान्त सेवन का उद्देश्य यही है कि तपस्वी शान्त स्थान में रहकर अपने धर्माचरण का विधिवत् पालन करता रहे और असाधुजनों के संसर्ग या सम्भाषण से उत्पन्न हुए दोषों और क्लेशों से बचा रहे। उसके कारण किसी व्यक्ति को कष्ट न पहुंचे और जनसाधारण के अनावश्यक सहवास में न रहने से वह अपने आत्मकल्याण को कर सके।

कायक्लेश

शरीर से ममत्व छोड़कर, पापारम्भ से रहित, मन को निश्चल बनाने वाले शारीरिक कष्ट का सहना कायक्लेश तप है। पीड़ा या दुःखों के आ पड़ने पर साधु प्रशस्त ध्यान से विचलित न हो-यही कायक्लेश सहने की उपयोगिता है। इससे कष्ट सहिष्णुता बढ़ती है। शक्त्यनुसार दुःखों के सहने का अभ्यास रहने पर मनुष्य सहसा उद्विग्न नहीं होता और उस के स्वाध्याय ध्यानादि आवश्यक कर्तव्यों में कोई रुकावट नहीं होती। कायक्लेश या कष्ट सहिष्णुता का प्रत्येक मनुष्य को थोड़ा बहुत अभ्यास होना चाहिये। परन्तु कोई कष्ट सहिष्णुता को ख्यातिलाभ समझ कर अपने कर्तव्य को भूल जाय तो फिर उसका ठिकाना नहीं।

इस प्रकार छह बाह्य तपों का विवेचन होचुका। अब अन्तरङ्ग तपों पर विचार करना चाहिये। हम जितना ही मनुष्य हृदय की ओर ध्यान देते हैं, अनुभव

होता है कि दोषी मनुष्य अपने पापों को छिपाना चाहता है, वह किसीसे अपने पाप प्रकट करते हुये बहुत अधिक शर्माता है। इसके विपरीत उपवासादि या तपते हुये पहाड़ों की चोटीपर चढ़ना आदि शारीरिक कष्ट ख्याति-लाभ या पूजा की दृष्टि से पाखण्डी भी कर लेते हैं। उनसे किसीकी आत्मा की पवित्रता मालूम नहीं होती। जो प्रायश्चित्तादि तप करता है उसका हृदय बहुत विशुद्ध होजाता है। वह पापसे डर कर अपने दोषको प्रकट कर देता है और विवशता से हुए दोष की शुद्धि के लिये दण्डरूप में जो भी कुछ हो ग्रहण करता है। इससे उसके विशुद्धान्तःकरण एवं मुमुक्षुता के भावोंका स्पष्ट परिचय मिल जाता है। उसके यही भाव रहते हैं कि मुझसे अपराध बन पड़ा, बहुत बुरा हुआ, इसलिये इसके प्रतिकारार्थ कुछ दण्ड ग्रहण कर दोषसे मुक्त होजाऊं।

प्रायश्चित्त

कृत्योंका पालन न करने से और वर्जित कृत्यों के न त्यागने से लगे हुए अतिचारों की शुद्धिके लिये दण्ड ग्रहण करना प्रायश्चित्त कहलाता है। प्रायश्चित्त भूलका प्रतिकारमात्र है। अपने पापोंकी आलोचना इसमें मुख्य है। आलोचन' के बिना दण्ड ग्रहण में कोई लाभ नहीं। यह शक्ति और समयको देखकर होना चाहिये। आलोचन, प्रतिक्रमण आदि अनेक इसके भेद है। इनका विस्तार अन्यत्र देखना चाहिये।

विनय

विनय का अर्थ है नम्रता। यह विनय भी एक तप है। इसके चार भेद हैं। ज्ञान विनय, दर्शन विनय चारित्र विनय और उपचार विनय।

वैयावृत्य

वैयावृत्य का अर्थ है सेवा। दश प्रकारके साधुओं की आवश्यकता होने पर—उनमें किसीके उपसर्गादि पीड़ित होने पर या वृद्धावस्था के कारण शरीरसे क्षीण होजाने पर अपनी चेष्टासे, उपदेश से या अन्य किसी प्रकार से सेवा करना वैयावृत्य है

स्वाध्याय

आत्मकल्याणका सच्चा साधन उत्तम शास्त्रोंका अध्ययन और अनुभव ही है। इसलिये स्वाध्याय भी आत्मशुद्धिका कारण होने से तप गिनाया गया है। इसके पांच भेद हैं—वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और धर्मोपदेश।

व्युत्सर्ग

बाह्य और अभ्यन्तर दोनों प्रकारके परिग्रह का छोड़ना व्युत्सर्ग है। परिग्रहमें ममत्व रहते हुये वह नहीं छोड़ा जा सकता। इसलिये व्युत्सर्गको भी तप माना है।

ध्यान

आत्मशुद्धि के लिये ध्यान सबसे अधिक उपयोगी है। 'एकाग्र चिन्तानिरोध'को ध्यान कहते हैं। ध्यानके सम्बन्धमें हम एक स्वतन्त्र विस्तृत लेख लिखेंगे। यहां ध्यानसे धर्म्य और शुक्ल ध्यान लिये गये हैं। इन्हींसे कर्मों की निर्जरा होती है और आत्म तत्वका साक्षात अनुभव होता है। यही मुक्तिका मार्ग है। ध्यानके बिना कभी कर्मबन्ध से छुटकारा नहीं हो सकता।

तप के सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा जा चुका

और अब भी लिखा जा सकता है । गृहस्थों को अपनी भावनायें अधिक से अधिक पवित्र बनाना चाहिये यही उनके लिये आवश्यक एवं उपयोगी तप है। तप के अनेक भेद किये जा सकते हैं, पर शारीरिक, वाचनिक और मानसिक ये तीन तप ही मुख्य हैं और सब के लिये समान लाभकारी है। शरीर की पवित्रता, शारीरिक तप कहलाता है। पवित्रता, सरलता, ब्रह्मचर्य, अहिंसा आदि शरीर से सम्बन्ध रखने वाले सम्पूर्ण कार्य शारीरिक तप की गणना में आते हैं। जिनके सुनने से किसी के मन में उद्वेग न हो, ऐसे हितकर, प्रिय और सत्य वचन बोलना, पढ़ना पढ़ाना आदि वाचनिक तप है और मन की प्रसन्नता, सौम्यभाव, मननशीलता, मन का संयम और विशुद्धता मानसिक तप है। ये तीनों ही तप आत्मा को बहुत ऊंचा उठा देने वाले हैं। शारीरिक तप से शरीर की पवित्रता, वाचनिक तप से वचन शुद्धि और मानसिक तप से अन्तःकरण की शुद्धि होती है। यही आत्मा की शुद्धि है। इसी से आत्मा के परिणाम विशुद्ध होते हैं, और यही निर्जरा का कारण है । उज्वल उपयोग—शुद्ध परिणामों से किया हुआ थोड़ा सा भी तप बहुत फल देता है। जैसे छोटा भी बड़ का बीज बोने पर बहुत बड़े वृक्ष और अनेक शाखाओं के रूप में परिणत हो जाता है। जो मनुष्य इस शरीर वचन और मन के तप को नहीं करते, वे अपने आत्मा को ठगते हैं। उनका कभी उद्धार नहीं हो सकता।

हम शास्त्रों में पढ़ते हैं—साधुओं के दर्शन मात्र से ही प्राणियों का जन्मसिद्ध वैर भी दूर होजाता है, उनके वचन सुनने से हृदयकी ग्रंथियां खुल जाती हैं, ज्ञान जागृत होजाता है और मन पवित्र होकर सुविचारपूर्ण होजाता है। इस का कारण क्या है? हम उनको देखकर प्रभावान्वित क्यों होते हैं? उनकी बढ़ी हुई तपस्या और वीतरागता का ही यह विस्मयोत्पादक माहात्म्य है। जिनमें शारीरिक विशुद्धता नहीं, वचन की सत्यता नहीं, और अन्तःकरणकी निर्मलता नहीं, उन क्रोधके पुञ्ज, राग-द्वेष के सजीव चित्रोंका कभी प्रभाव नहीं पड़ सकता। इस लिये जितना भी होसके आत्म-शुद्धि के लिये और संसार में शान्तिका प्रसार करने के लिये प्रत्येक मनुष्यको यह तप अवश्य करना चाहिये।

देशी-गण पर दो शब्द

(ले.— श्रीयुत एम० गोबिन्द जी पै)

दिगम्बर और श्वेताम्बर सम्प्रदाय में विभाजित होने के पहले जैनधर्म 'आर्हत' 'अनेकान्त आदि नामों से भी प्रसिद्ध था। विक्रम* संवत् १३६ या ई० स० ८०—८१ के लग भग में यह दो भागों में बंट गया; तब से ······ मुख्यतया दक्खन (Deccan) और दक्षिण भारत में, दिगम्बर सम्प्रदाय 'मूलसंघ' के नाम से भी पुकारा जाने लगा। कहा जाता है कि प्रसिद्ध कुन्दकुन्दाचार्य—जिन का दूसरा नाम पद्मनन्दि÷ भी था—अपने समय+ में मूलसंघ के अग्रणी थे। महावीर-निर्वाण से (ई० पू० ५२८-५२७) लगभग सातसौ वर्ष के बाद, १७२-१७३ ई० स० के करीब में, आचार्य अर्हद्बलि ने—जो कि कुन्दकुन्द की ही परम्परा में हुए थे—मूलसंघ को चार उपसंघों में बाँट दिया, उनके नाम देवसंघ, नन्दिसंघ, सिंहसंघ और सेनसंघ थे। और संभवतः उस समय या उस के बाद में पुनः उप-विभाग हुआ, जिसे 'गण' कहते हैं जैसे बलात्कारगण' 'पुन्नाटगण' आदि, तथा आगे भी, जिसे 'गच्छ' कहते है यथा 'सरस्वतीगच्छ, पारिजातगच्छ' आदि, और उस के बाद भी, जिसे बलि× कहते है जैसे 'पनसोगेबलि' आदि। जैसा कि नीचे दिये उद्धरणों से ज्ञात होगा, ये सब विभाग उप-विभाग वगैरह—जैसे संघ, गण, गच्छ और बलि विभागों के अनुयायिओं के आचार विचार या अन्य किसी बात में कोई अन्तर नहीं बतलाते, किन्तु जैसा कहा जाता है संभावित नामसमी के विरोध में प्रचारित किये गये थे या भविष्य में जैनधर्म के विस्तार को लक्ष्य में रख इनकी रचना की गई थी।

अर्हद्बलिः संघचतुर्विधं स श्री कोण्डकुन्दान्वयमूलसंघं
कालस्वभावादिह जायमानद्वेषेतराल्पीकरणाय चक्रे
. . ... तत्सेननन्दि त्रिदिवेशसिंह—
संघेषु यस्तं मनुते कुदृक्सः, ···
संघेषु तत्र गणगच्छबलित्रयेण, लोकस्य चक्षुषि
विधा जुषि नन्दिसंघे
देशीगणे धृतगुणोऽन्वितपुस्तकाख्य गच्छे ... ÷
देवनन्दि सिंहसेन संघ भेद वर्तिनां
देशभेदतः प्रबोध भाजि देवयोगिनां।
वृत्ततः समस्ततोऽविरुद्ध धर्मसेविनां
मध्यतः प्रसिद्ध एष नन्दिसंघ इत्यभूत् ॥

---

* छत्तीसे वरिस सए विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स
सोरट्ठे वलहीए उप्पण्णो सेवडो संघो ॥११॥
(दर्शनसार)

÷ पद्मनन्दि प्रथमाभिधान श्रीकोण्डकुन्दः। (श्रवण० शि० नं० ६४)

\+ श्री कोण्डकुन्दनामाभून्मूल संघगणाग्रणीः
(श्रवण० शि० नं० ६६)

× 'बलि' संस्कृत शब्द नहीं किन्तु कनड़ी शब्द 'बलि' का संस्कृत रूप है, उसका अर्थ 'वंश' होता है यहां पर आध्यात्मिक वंश समझना चाहिये।

÷ श्रवणबेलगोला शि० नं० २५४।

नन्दिसंघे सदेशीयगणे गच्छे च पुस्तके । *
श्री मूलसंघे ततो जाते नन्दिगण प्रभेदविलसद्देशीगणे विश्रुते । +

इस प्रकार बड़े संघ के उप-विभाग देशीगण को को.नन्दिसंघ कहा जाता था। × श्रवणबेलगोला के कई कन्नड़ शिलालेखों में देशीय, देशिय, देशिक, देशिग, देसिय, देसिग, महादेशि-गण आदि नामों से देशी गण का उल्लेख किया गया है। संस्कृत के बाहुबलि चरित्र में—जो कि अभी प्रकाशित नहीं हुआ है—नीचे लिखा श्लोक 'देशी' नाम पढ़ने का कारण बतलाया है—

पूर्वं जैनमतागमाब्धिरविविधुवच्छ्रीनन्दिसंघेऽभवन्
मुज्ञानद्विततपोधनाः कुवलयानन्दा मयूखा इव ।
सत्संघे भुवि देशदेशनिकरे श्रीसुप्रसिद्धे सति
श्रीदेशीयगणो द्वितीयविलसन्नाम्ना मिथः कथ्यते।।†

इस संघ के आचार्य प्रत्येक देशमें प्रसिद्ध थे इस लिये इसका नाम 'देशीगण' था, संभवतः उपदेश देने और जैनधर्म को फैलाने के लिये वे सर्वत्र जाते थे किन्तु यह व्याख्या ऐतिहासिक तथ्य से शून्य मालूम होती है, यह स्पष्ट है कि 'देश' शब्द का ठीक ठीक अर्थ ही इस कल्पना का आधार है। दूसरे शब्दों में यह व्याख्या देश शब्द के अक्षर प्रति अक्षर का तुरत घड़ा हुआ केवल बृहद रूप है। मैं इस व्याख्या को कभी स्वीकार नहीं कर सकता, किन्तु इसके स्थान में मैं अपना मत रखूँगा । पाठक उस पर विचार करें।

दक्खन का वह भाग, जो बालाघाट‡ —प्राचीन और मध्यकाल के समय ॰ का कर्नाटक देश और गोदावरी नदी के बीच में है, साधारणतया 'देश' † कहा जाता था। वहां के निवासी ब्राह्मण अब तक 'देशस्थ' ब्राह्मण कहे जाते हैं। नन्दिसंघ के सदस्य का कोई भाग उस देश में या तो जा बसा था या रहता था, मेरा अनुमान है कि यह भाग 'देशीगण' कहलाया। जैसा कि हम ऊपर कह आये है मूल-संघ में दूसरे विभाग भी है जिन्हे 'पुन्नाटगण' और 'काणूरगण' कहते हैं। प्रथम नाम में आया शब्द 'पुन्नाट' ‡ दक्षिण भारत के किसी हिस्से का नाम है जो अब मैसूर स्टेट के दक्षिण-पश्चिम में वर्तमान है, और इसकी राजधानी कित्तिपुर या कित्तूरु थी जो अब उक्त स्टेट के हेग्गडदेवनकोटे ताल्लुके में सम्मिलित है । ग्रीक भूगोलवेत्ता Ptolmey (१५० ई० सं०) ने बहुमूल्य पत्थर—जो कि वैडूर्य के नाम से प्रसिद्ध है—की खानों के लिये पुन्नाट को प्रसिद्ध लिखा है। दिगम्बर जैनों का पुन्नाट संघ

* श्र० शि० न० २५८

\+ श्र० शि० नं० ६४

× विस्तृत टिप्पण ६४, ७०, ७३, ११३, १२५ से १२८, २६८, ३५१ वगैरह।

† अंग्रेजी द्रव्यसंग्रह की प्रस्तावना में (पृ० ३०) वह श्लोक उद्धृत है।

‡ वर्तमान उत्तर कनाडा जिलेका (बंबई प्रेसिडेन्सी) ऊपरी भाग देखो, बम्बई गजट जिल्द १३, पे० २

॰ देखो, इम्पीरियल गजट बम्बई प्रेसीडेन्सी जिल्द १ पे० १६४—१६६

† महाराष्ट्रीय ज्ञानकोष भाग १५ ('देश')

‡ पुराने समय में मद्रास प्रेसीडेन्सी के वर्तमान कोयम्बटूर जिले को 'पुन्नाट' कहते थे।

तानसेन का परिचय

भारतीय गायनाचार्यों में तानसेन का नाम बहुत प्रसिद्ध है। वास्तव में आप अपनी प्रसिद्धि के अनुसार गायनकला में उतने निपुण भी थे। तानसेन अकबर बादशाह के जमाने में हुये हैं। 'नूम ताना ना ना' का प्रसिद्ध तराना जिसको कि गवैये लोग गायन प्रारम्भ करने के पहले गाया करते हैं, तानसेन का चलाया हुआ ही है। यह तराना उसने 'नूम और ताना' नामक दो संगीतज्ञ गुजरात निवासी हिन्दू महिलाओं के नामको अमर रखने के लिये चलाया था, उसकी कथा भी रोचक तथा मर्मस्पर्शी है, जिसे फिर कभी पाठकों के समक्ष रक्खेंगे। यहां पर स्टेट्समैन में प्रकाशित तानसेनका संक्षिप्त जीवन चरित्र रखते हैं।

—सम्पादक।

तानसेन का जन्म सन् १५३१ में ग्वालियर में हुआ था। आप के पिता का नाम मकरन्द था और आप गौड़ ब्राह्मण थे, पर बाद में आप मुसलमान हो गये थे। ग्वालियर उन दिनों सङ्गीत का महान केन्द्र था और राजा मानसिंह ने वहां सङ्गीत के महान कलाकारों के समुदाय को एकत्र किया था।

बचपन में तानसेन की स्मृति बहुत ही अच्छी थी और वे किसी गानको सुनने पर उसे वैसा ही कह देने में बड़ी पटुता का प्रदर्शन किया करते थे। अभी वे आठ वर्षके भी नहीं हुये थे कि उनके पिताने उन्हें आमों के एक बागमें उनकी रक्षाके लिये रख दिया। बाग के चारों तरफ घना जङ्गल था जिसमें शेर तथा अन्य जंगली जानवर खूब थे। कहा जाता है कि आमों के इस डरावने बाग में तानसेन निडर होकर विचरा करते थे। जब कभी उन्हें शेरका गर्जन सुनाई देता तो वे उससे भी जोरका गर्जन करके उनके दिल दहला दिया करते थे। परन्तु जंगली जानवरों को अपने कण्ठ चातुर्य से डराने वाला बालक अपने देशवासियों को भविष्य में संगीत के द्वारा आनन्दित और चकित कर देगा—यह उस समय कौन कह सकता था।

एक दिन तीर्थयात्रा करते हुये कुछ साधु उस बागके पास से निकले। उनको एकाएक बाग में से शेरकी दहाड़ सुनाई दी और वे भयभीत होगये। पर उनमें एक असाधारण धैर्यवान और दूरदर्शी भी था।

(७ वें पृष्ठ का शेषांश)

किसूर संघ के नाम× से भी प्रसिद्ध था। यद्यपि यह बतलाना संभव नहीं है कि काणूरु प्रदेश किस जगह स्थित था, किन्तु इतना स्पष्ट है कि काणूरु था और केवल इतना ही नहीं, किन्तु किसी निश्चित प्रदेश का नाम था। 'काणूरु' में मिला हुआ 'ऊरु' शब्द कनड़ी है और इसका अर्थ कसबा (Town) गाँव आदि होता है। इसके अतिरिक्त उसका दूसरा अर्थ नहीं होता।

अतः दक्खनका भाग जो 'देश' के नामसे प्रसिद्ध था, उसमें रहने के कारण, या उसके साथ अन्य किसी अज्ञात सम्बन्ध से उसकी 'देशीगण' संज्ञा पड़ी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। *

अनु० कैलाशचन्द्र शास्त्री

× श्रव० शि० नं० ८१

* जैन सिद्धान्त भास्कर, किरण ३ से अनुवादित

वह साहसपूर्वक उस बागमें घुस गया। वहां उसे एक बालक पेड़ों के पीछे छिपा हुआ दिखलाई दिया बालक से जब पूछा गया-तो बतलाया कि सिंह के गर्जन की-सी आवाज उसीकी थी।

यह साधु सुप्रसिद्ध भक्त और सङ्गीतज्ञ हरिदास थे, जिन्हें बालक में अपूर्व प्रतिभा ज्ञात पड़ी। तब स्वामी हरिदास ने उनके पिता से तानसेन को अपने साथ शिक्षा के लिए ले जाने की अनुमति मांग ली। मथुरा ले जाकर तानसेन को स्वामी हरिदासने सङ्गीत विद्या की विधिपूर्वक शिक्षा देना आरंभ कर दिया। तानसेन में सङ्गीत के लिए स्वाभाविक प्रतिभा तो थी ही, कुछ दिनों में वे उसमें पारङ्गत भी होगये। जब कुछ वर्ष बाद वे ग्वालियर पहुंचे तो उनकी ख्याति पहले ही वहां पहुंच चुकी थी। तुरन्त ही आपको उज्जैन के राजा शमशेरसिंह बघेला ने अपने दरबार में रख लिया।

इसके बाद कुछ समय में ही भारत भरमें आप की ख्याति फैल गई। कितने ही नरेशों ने आपको अपने दरबारमें बुलाना चाहा। अकबर ने भी उनकी प्रशंसा सुनी और उसने तुरन्त रीवां के महाराजको लिखा कि तानसेन को शाही दरबारमें भेजदो। राजा साहब को अकबर का यह कार्य बुरा तो अवश्य लगा पर शाही फरमान के आगे उनकी चल ही क्या सकती थी। इस तरह तानसेन दिल्ली आये। ४ साल तक तानसेन अकबर के दरबार में दिल्ली रहे आप 'श्याम कल्याण और कानरा' राग विशेष तौर पर गाया करते थे और अकबर के प्रमुख दरबारियोंमें गिने जाते थे।

एक बार अकबरने तानसेन से पूछा कि देश भर में कोई तुमसे भी श्रेष्ठ गायक है? तानसेनके स्वा० हरिदास का नाम लेने पर, अकबर ने उनसे मिलने और बुलाकर उनका गायन सुनने की इच्छा प्रकट की तानसेन ने कहा कि स्वामी हरिदास तो संसार का त्याग कर चुके हैं, इसलिये वे शाही आज्ञा होने पर भी दिल्ली आना किसी तरह स्वीकार न करेंगे। यह सुनकर अकबर की उनसे मिलनेकी इच्छा और भी बलवती होगई और वे तानसेन के साथ उनका गायन सुनने के लिये मथुरा जानेको तय्यार होगये। तानसेन ने कहा कि यदि स्वामी हरिदासको पता चला कि आप सम्राट अकबर हैं तो वे आपको गाना किसी तरह न सुनावेंगे। तब बहुत कुछ सलाह के बाद अकबर तानसेन का भृत्य-वेश बनाकर उनके साथ चल पड़े। चलते २ ये लोग मथुरा पहुंचे और रात उन्होंने मथुरा की एक सराय में काटी और दूसरे दिन यमुना किनारे उस स्थानको पहुंचे जहां स्वामी हरिदासकी कुटिया थी। स्वामी हरिदास उस समय ब्रह्म मुहूर्त में भजन पूजन कर रहे थे। कुछ देर बाद जब उन्होंने आंखें खोलीं और शिष्यको अपने सामने खड़ा पाया तो हर्षसे गद्गद् होगये। उन्होंने अकबर के सम्बन्धमें पूछा कि यह कौन है। तानसेनने कहा कि यह सारंगी उठानेवाला मेरा नौकर है। तानसेन ने स्वा० हरिदाससे कुछ गानेकी प्रार्थना की किन्तु उन्होंने तबियत ठीक न होने के कारण न गाया। तब तानसेन ने एक बड़ी चतुराई की और उन्होंने खुद ही गाना आरम्भ किया। गाने में वे जान बूझ कर कुछ गल्तियां कर जाते थे जिससे स्वयं स्वामी जी गा-गाकर उनको ठीक कर देते थे। अकबर को स्वामी जी के गायन में ब्रह्मानन्द का-सा सुख हुआ

गायन समाप्त होने पर तानसेन ने सम्राट अकबर का वास्तविक परिचय स्वामी जीसे कराया। स्वामी हरिदासने अकबर से बड़ा प्रेमपूर्ण व्यवहार किया। अकबरने उनसे अपने दरबार में चलनेकी प्रार्थना की। किन्तु स्वामी जी ने उनकी यह बात स्वीकार नहीं की। तबसे जब कभी सम्राट को गायन सुनने की अभिलाषा होती थी तो वे खुद आकर सुन जाया करते थे।

कहा जाता है कि आधुनिक काल में तानसेनके समान संगीतज्ञ भारत में दूसरा नहीं हुआ। कुछ एक लोगों का कहना है कि तानसेन में सङ्गीत की दैवी प्रतिभा थी। भारतीय सङ्गीत में उनकी चलाई कई पद्धतियाँ उनके नामके साथ ही अमर होगई हैं अबुल फजल ने तानसेनके सम्बन्धमें लिखा है—

'गत हजार सालमें तानसेन जैसा सङ्गीतज्ञ भारतमें नहीं हुआ' आपकी लोक-प्रियता का अन्दाजा महाकवि सूर के निम्न कथन से लगाया जा सकता है।

"विधना यह जिय जानिकै, शेषहि दिये न कान।
धरा मेरु सब डोलतीं सुनि तानसेन की तान॥"

तानसेन की कब्र ग्वालियर में है; प्रतिवर्ष वहां एक बड़ा मेला लगता है जिसमें देश भरके संगीतज्ञ एकत्रित होते हैं।

" जन्म लिया महावीर "

उदय हुआ सुषमा दिनकर
जन्म लिया महावीर।

(१)

पाप तिमिर का लेश नहीं है,
शांति कांति है, क्लेश नहीं है,
दम्भादिक अरु द्वेष नहीं है,
अधम यामिनी शेष नहीं है।
सर सिज खिले सहित मधुकर,
उदय हुआ सुषमा दिन कर॥

(२)

सन्मतिसे सन्मति धारण कर
वर्धमान से वर्धित होकर
नष्ट कर्म अरिहन्त कहाकर,
सिद्ध हुये सब आज मनोहर,
विश्व-व्याप्त है येही स्वर
उदय हुआ सुषमा दिनकर॥

(३)

वास यहां है हृदयाङ्गण में,
व्याप्त यहां है आज गगन में
कुण्डलपुर सिद्धार्थ नृपति-गृह
जन्म लिया महावीर॥

—उदयचन्द्र "वत्सल"

जैन सत्य प्रकाश के आक्षेप

(ले०—श्रीमान पं० वीरेन्द्रकुमार जी जैन)

अहमदाबाद से शा० चिम्मनलाल गोकलदास की संपादकी में 'जैन सत्य प्रकाश' नाम का श्वेतांबरीय मासिक पत्र प्रकाशित होने लगा है इसका प्रथम अङ्क गत श्रावण मास में प्रगट हुआ था अभी तक सात अङ्क निकले हैं । इस पत्र में एक लेख के सिवाय अन्य समस्त लेख गुजराती भाषा में प्रगट होते हैं।

पत्र की रीति नीति से प्रगट होता है कि 'श्वेताम्बरमतसमीक्षा' के प्रतिवाद रूप में इस पत्र का जन्म हुआ है और इस पत्र ने अपना मुख्य उद्देश उक्त पुस्तक के उल्लिखित विषयों का प्रतिवाद करना रक्खा है यह उसके रंग ढंगसे स्पष्ट प्रतीत होता है। अस्तु।

यह हर्ष की बात है कि हमारे भाई इस चर्चा के मैदान में उतरे है। एतदर्थ हम उनसे दो निवेदन करेंगे।

एक तो यह कि इस चर्चा के लेखों में कटुता लेशमात्र भी न आने देनी चाहिये। प्रिय सभ्य शब्दों में अपना विषय लिखना चाहिये।

दूसरा यह—कि इस चर्चा के समस्त लेख हिंदी भाषा और नागरी लिपि में प्रकाशित करने चाहिये जिससे मुझ सरीखे व्यक्ति भी उनसे लाभ उठा सकें तथा इतर दिगम्बरीय विद्वान भी आपका भाव समझ सके और आपके लेखकों की सुधारणीय त्रुटि को आपके सामने रख सकें। हिन्दी भाषा में प्रकाशित हुये लेखों को गुजरात, पंजाब, संयुक्त, मध्य आदि सभी प्रान्तनिवासी समझ सकेंगे। यदि ये दोनों निवेदन स्वीकारे हो जावें तो जैनसत्यप्रकाश अपने उद्देश में संभवतः अधिक कामयाब हो सकेगा। अस्तु।

इस पत्र में श्वेताम्बरमत समीक्षापर तीन विद्वान लेखकों द्वारा एक क्रम तीन लेखमालाओं के जरिये तीन ओरसे आक्रमण हुआ है। क्या ही अच्छा होता कि एक ही विद्वान लेखक श्वेताम्बर मत समीक्षा का प्रारंभ से ही क्रमशः उत्तर देना प्रारम्भ करता। उस तरह से एक एक विषय पर अनुकूल प्रतिकूल प्रकाश पडता जाता। अस्तु।

इस पत्र में 'दिगम्बरोनी उत्पत्ति' शीर्षक एक लेख गुजराती लिपि और गुजराती भाषा में प्रकाशित हो रहा है जिसके लेखक श्रीमान मुनि 'सागरानंद सूरि' जी है। संभवतः ये सागरानंद जी वे ही हैं जिन्होंने केशरिया हत्याकांड (जिसमें पं० गिरधारीलाल जी न्यायतीर्थ आदि ५ दिगम्बर जैन बन्धु लकड़ियों की निर्दय मार से मारे गये थे) के समय ऋषभदेव धुलेव (केशरियानाथ) में ध्वजादंड चढ़वाया था। मेरा अनुमान ठीक या गलत हो इस बात की सूचना जैन सत्य प्रकाश के संपादक महोदय अवश्य दें ऐसा निवेदन है।

गुजराती लिपि तो मैं पढ़ सकता हूं किन्तु गुजराती भाषासे अपरिचित होनेके कारण सागरानंद जी

के लेख का भाव अच्छी तरह समझ में नहीं आ सका यदि सम्पादक जी, अथवा स्वयं सागरानंद जी उसको हिन्दी भाषा में प्रतिलिपि करा भेजने की कृपा करें तो मैं आभारी हूंगा अथवा अन्य कोई भाई इस लेख को हिन्दी भाषा में लिख भेजें क्योंकि यह लेख बहुत त्रुटिपूर्ण और निराधार प्रतीत होता है। क्योंकि—

इस पत्र के पांचवें अङ्क मे सागरानंद जी ने दि० संघ को कल्पित सिद्ध करने के लिये तत्वार्थ सूत्र के प्रथम सूत्र का हिन्दी लिपि में दो, तीन तरह से उल्लेख किया है जैसे कि—

"सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि निर्ग्रन्थत्वानि मोक्षमार्गः, सम्यग्दर्शनज्ञानदिगम्बरत्वानि मोक्षमार्गः, सम्यग्दर्शनज्ञाननिर्ग्रन्थत्वानि मोक्षमार्गः।"

संभवतः लेखक महोदय का यह अभिप्राय है कि यदि दिगम्बरत्व मोक्षका कारण होता तो तत्वार्थ सूत्र रचयिता को उपर्युक्त ढंग से पहला सूत्र बनाना चाहिये था। लेखक महानुभाव ने दिगम्बर संघकी नवीनता सिद्ध करने के लिये अपने इस लेख में ऐसी ही अन्य भी लचर दलीलें दी होंगी जिनका निराकरण करना आवश्यक है। मुझे आशा है कि हिन्दी भाषा के जानकार गुजराती भाई इस लेख की प्रतिलिपि करने का कष्ट स्वीकार करेंगे।

दूसरा लेख इस पत्र में 'समीक्षाभ्रमाविष्करण' शीर्षक उपाध्याय लावण्यविजय जी का प्रकाशित हो रहा है जिसकी भाषा तो गुजराती है किन्तु लिपि बदलती रहती है कभी गुजराती टाईप में छपता है तो कभी देवनागरी टाईप में। यह लेख श्वेताम्बर मत समीक्षा के उत्तर में छप रहा है किन्तु यह लेख समीक्षा को प्रारम्भ से ही क्रमशः छूता तो अच्छा और उपयोगी होता। प्रारम्भ के अनेक विषयों को छोड कर बीच की बातों का उत्तर इस लेख में दिया जा रहा है।

श्वेताम्बरमतसमीक्षा में साधु प्रकरण में यह बात लिखी गई है कि "महाव्रती साधु को अपने पास शारीरिक सुख का कारण भूत कोई पदार्थ बिलकुल नहीं रखना चाहिये अतएव श्वेताम्बरीय ग्रन्थों में जो कभी साधु को अपने पास छुतरी तथा चमडा रखने का विधान बतलाया गया है वह उचित नहीं है।" उपाध्याय जी ने अपने लेख में अब तक इन हा दो बातों का उत्तर दिया है। "महाव्रती साधु की व्रत चर्या में अपने पास छतरी, चमड़ा रखने से कुछ बाधा नहीं आती" आपके लेख का यहा कुछ सारांश प्रतीत होता है क्योंकि गुजराती भाषा होने के कारण लेख को अक्षरशः नहीं समझ पाया हूं।

उपाध्याय जी श्वेताम्बर जैन साधुओं को अपने पास छतरी, चमड़ा रखने का विधान उचित सिद्ध करें या इससे भी अधिक किसी पदार्थका ग्रहण साधु के लिये उचित बतला देवें यह उनके अपने विचार तथा इच्छा पर निर्भर है किन्तु इतना अवश्य कहना पड़ेगा कि ऐसे विधानों और समाधानों के कारण ही जैन साधुओं की चर्या बहुत कुछ शिथिल हो चुकी है जिससे कि कहे जाने वाले महाव्रती साधु प्रायः गृहस्थों से भी अधिक आराम करते हैं। जैसे ऊनी चादर, मलमल आदि के नफीस कपडे अभागे गरीब गृहस्थों को प्राप्त नहीं हो पाते धर्मोपकरण के नाम पर वैसे वस्त्र महाव्रती साधुओं को बिना किसी प्रयास के स्वयमेव प्राप्त हो जाते हैं।

आपके ऐसे समाधानों से हमको अपने किसी सिद्धान्त की हानि प्रतीत नहीं होती अतः हम आपके अब तक के लेखों का उत्तर देना व्यर्थ समझते हैं। आगे चलकर आप जब किसी सैद्धान्तिक बात पर आवेंगे उस समय लिखेंगे।

जैन सत्य प्रकाशमें तीसरा लेख "दिगम्बर शास्त्र कैसे बने" शीर्षक प्रकाशित होरहा है। इस लेखके लेखक श्वे० मुनि श्री दर्शन विजय जी हैं। यह लेख हिन्दी लिपि और हिन्दी भाषा में छापा जारहा है। अतः इसका भाव अक्षरशः मालूम होरहा है। शीर्षक के अनुरूप मुनि जी ने इस विषय पर सातवें अंकमें केवल १६ पंक्तियां लिखी है जिनमें दिगम्बरीय ग्रंथ रचना के ५ आधार बतलाये हैं।

१ श्वेताम्बरीय आचार्यों को अपना कर उनके बनाये हुये ग्रन्थों को अपना लेना।

२-श्वेताम्बरीय ग्रन्थों में नाम मात्रकी थोड़ी सी हेर फेर करके उनमें अपना नाम जोड़ देना।

३- नवीन कल्पित ग्रंथ बनाकर उस पर पूर्वाचार्य का नाम लिख देना।

४- दूसरे के ग्रंथों के श्लोक उठा २ कर नया ग्रन्थ बना लेना।

५- अपरिचित अजैन ग्रन्थों के पाठ उठाकर दिगम्बर ग्रन्थों में जोड देना।

आपके लेखका यह अन्तिम भाग है। इस अंशको आपने केवल प्रतिज्ञा रूपमें लिखा है। उस पर अभी कोई युक्ति पेश नहीं की है अतः अभी तो इसका कुछ मूल्य नहीं; संभवतः आगामी अंक में आप उन युक्ति, प्रमाणों को रक्खेंगे उस समय उन पर विचार किया जायगा।

इसी अंक में आपने यह भी लिखा है कि दिगम्बर जैन ग्रन्थों में जिन द्वादशांग ग्रन्थोंका उल्लेख है वह दि० सम्प्रदाय में उपलब्ध नहीं किन्तु गणधरके कहे हुये वे आचारांग आदि ग्रन्थ श्वेताम्बर सम्प्रदाय के पास है। आपके लिखनेका अभिप्राय यह है कि श्वेताम्बरीय आगम् प्राचीन हैं और दि० ग्रन्थ अर्वाचीन हैं।

अच्छा होता कि मुनि जी इस अभिप्रायको प्रगट करने से पहले कुछ जैन ग्रंथ रचना का इतिहास निष्पक्ष दृष्टि से देख लेते। मुनि जी मेरी उन दो बातों को दृष्टिमें रखकर अपनी लेखनी चलावें तब वे किसी उचित परिणाम पर पहुंच सकेंगे।

१- कुन्दकुन्दाचार्य जिनका कि ऐतिहासिक समय वि० सम्वत ४४ यानी प्रथम शताब्दी है से भी पहले षट् खंड आगम की रचना होचुकी थी जिसका समय वि० सं० का प्रारम्भ या उससे पहले का हो सकता है दिगम्बरीय ग्रन्थ रचना का यही समय है।

२- वीर सं० ९८० अर्थात वि० सं० ५१० में श्वेताम्बरीय आगम ग्रंथों की वल्लभीपुर में रचना हुई जैसा कि श्वेताम्बरी ग्रन्थ कल्पसूत्रकी निम्नलिखित गाथा से सिद्ध होता है।

"वल्लहिपुरम्मि नयरे देवड्ढिपमुहसयलसंघेहि
आगम पुत्थे लिहिओ नवसय असीआओ वीराओ

पहले आप इन दो बातोंपर खूब विचार करके फिर निष्पक्ष भावसे लेखनी चलावें, तब आपके लेख द्वारा जैन सत्यप्रकाश सत्य बात पर प्रकाश डाल सकेगा। जिस प्रकार आप श्वेताम्बरीय ग्रंथों को गणधर के कथनानुसार बतलाते हैं। ठीक उसी प्रकार दिगम्बरी

शेष अगले पृष्ठ पर

राजयक्ष्मा से—

बालकों को कैसे बचाना चाहिये

(ले०— पं० कपूरचन्द्र जी जैन बनारस)

यह रोग सारे संसार में फैला हुआ है। कोई भी देश इसके पंजे से नहीं बचा है। उष्ण देशों की अपेक्षा शीत देशों में यह रोग कम फैलता है। हमारे देश में प्रायः प्रत्येक स्थान में यह प्राणघातक रोग फैला हुआ है। भारतवर्षमें: क्या सभ्य क्या असभ्य सभी जातियों के शायद ही कुछ परिवार होवें, जिनमें इस भयानक रोग के कारण एक दो व्यक्ति की मृत्यु प्रति वर्ष न हो जाती हो। दुःख की बात तो यह है कि भारतवर्ष के अधिकांश बच्चों को चाहे उनके माता पिता के कारण कहिये, या 'राजयक्ष्मा' किस रोग को कहते हैं यह नहीं जानने के कारण ही, अपने प्राण खोने पड़ते हैं। हमारे देश में बहुत से ऐसे मनुष्य हैं जो कि इस रोग से ग्रसित होने पर भी यह रोग क्या है? इससे अपने को कैसे बचाना चाहिये? नहीं जानते।

राजयक्ष्मा उन बीमारियों में से एक बीमारी है, जिन्हें कि 'उड़के लगने वाली बीमारी' या सक्रामक बीमारी कहते हैं। (This is a kind of Infecuous disease) यह रोग एक प्रकार के रोगोत्पादक जीवाणुओं के द्वारा पैदा होता है। इन जीवाणुओं को 'राजयक्ष्मा के जीवाणु (The bacillus of Tuberculasis) कहते हैं। राजयक्ष्मा के ये जीवाणु ही 'राजयक्ष्मा' के रोग का कारण है, इस बात को सर्वप्रथम डा० कोक (Prof Kock) ने बतलाया था। उन्हों ने कहा था कि जब ये जीवाणु किसी प्रकार शरीर के अन्दर पहुँच जाते हैं, तब ये फेफड़े से चिपट जाते है, और उसी समय से राजयक्ष्मा की जड़ हम लोगों के शरीर में जम जाती है।

ये राजयक्ष्मा के जीवाणु जब दूध, या माँस के साथ भीतर जाते हैं, तब फुस्फुस के ऊपरी भाग में अधिकतर सर्व प्रथम अपना डेरा डालते हैं, याने

-

(पिछले पृष्ठ का शेष

भाई भी दिगम्बरीय ग्रंथों के विषय में कहते हैं। इस दशामें आपकी बात ही सत्य मानी जावे इसके लिये अकाट्य प्रमाण उपस्थित करना चाहिये। प्राचीन समय ही प्राचीनताका कारण होता है, 'प्राचीनभाषा' में की हुई रचना प्राचीनता की निर्णायक नहीं हो सकती।

आज भी विद्वान कवि प्राकृतभाषा या आपके आगमोंकी भाषामें ग्रंथ रचना कर सकते हैं तो क्या प्राचीन भाषा के कारण ही उस पर प्राचीनता की मुहर लग जायगी?

आपका आगामी लेख देखकर मैं इस विषय पर आपके लेख के उत्तर में लिखूंगा। गुजराती भाषा-भाषियोंसे पुनरपि निवेदन है कि वे सागरानन्द जी के लेखको हिन्दी भाषा में लिख भेजने की कृपा स्वीकार करें।

चिपक जाते हैं। उस का कारण यह है कि हमलोग खासकर, गर्दन झुका कर बैठा करते हैं, और इस प्रकार उस वायु का, जो कि श्वास में लेते है, फेफड़े संकुचित होने के कारण कम असर पड़ता है। जब ये जीवाणु फेफड़े से चिपट जाते है तब इसी समय हमारे शरीर के अंदर जो रोग रक्षक सफेद कीटाणु (White Caspuscle) होते हैं वे इनके चारों ओर एक प्रकार का घेरा डाल देते हैं, जिससे कि यह 'वैसिलिस ओफ ट्यूबर क्लोसिस' सारे शरीर में न फैल पावें और जहाँ के तहाँ नष्ट हो जांय। परन्तु जब मनुष्यकी शारीरिक शक्ति किसी कारण वश जैसे बिमारी आने पर या ब्रह्मचर्य पूर्वक न रहने पर, कमज़ोर हो जाती है तब यह जीवाणू धीरे २ देर फैलाने लगते हैं, और तब आदमी को यह मालूम पड़ने लगता है कि मुझे राजयक्ष्मा हो गया है।

किसी व्यक्ति को जब यह रोग हो जाता है तब उसे योंही अनमना पन (Out of sorts or run down) ऐसा प्रतीत होने लगता है। किसी भी काम को अच्छे प्रकार मन लगा कर करने की तबीयत नहीं होती है। यह पहचान तो मुख्य हुई इस के अलावा और और भी बातें हुआ करती है :—

क) मनुष्य को प्रत्येक दिन थोडा २ ज्वर आने लगता है और पसीना खूब निकलता है।

(ख) शरीर खून की कमी से पीला पड़ जाता हैं और कभी २ सारे शरीर में थरथराहट सी पैदा, हो जाती है।

(ग) बलग़म, जब भी रोगी को अच्छे प्रकार से 'राजयक्ष्मा' हो जाता है, तब निकला करता है। राजयक्ष्मा पीड़ित रोगी को एक प्रकार का पीलापन लिये हुये बलग़म निकलता है।

(घ) शरीर धीरे २ क्षीण होने लगता है, अन्न नहीं पचता और तरह तरहकी शिकायत होने लगती है। ऐसी हालत में रोगी की एक्सरे (Ex-rays) द्वारा जरूर परीक्षा करवानी चाहिये, क्योंकि उससे साफ पता चल जाता है कि रोगीके अन्दर राजयक्ष्मा के जीवाणु हैं या नहीं ?

ये बातें तो 'राजयक्ष्मा' क्या है ? कैसे होता है ? इसके बारे में हुईं। परन्तु 'राजयक्ष्मा' रोग होने के कारण याने जिनके द्वारा 'राजयक्ष्मा' जैसा भयानक रोग उत्पन्न होता है निम्न लिखित हैं—

१ परदा प्रथा—बालकों को राजयक्ष्मा नामक रोग पैदा होने में सर्वप्रथम जो सहायक कारण होता है, वह है उनकी माताओं का परदा के याने सूर्य-प्रकाश से अपने को बचा कर रखने के कारण। सूर्य-प्रकाश के जरिये जितने जल्दी ये जीवाणु नष्ट होते हैं, उतने किसी भी औषधि के सेवन करने से नहीं हो सकते। इस प्रकार जब छोटे बालक का जन्म होता है, तब उसे प्रायः बहुत समय तक सूर्य-प्रकाश से वंचित स्थान में रहना पड़ता है। हालांकि उस समय उस बच्चे को राजयक्ष्मा नहीं हो जाता, परन्तु उसकी शारीरिक शक्ति पर थोड़ा बहुत प्रभाव जरूर पडता है।

२ निवास स्थान—हम भारत वासियों का दुर्भाग्य है कि हम लोग ऐसे संकुचित, खराब दुर्गंध मयी स्थानों में निवास करते हैं, जहां पर कि मनुष्य को कम से कम अपने स्वास्थ्य रक्षा के लिये नहीं रहना चाहिये। हम लोगों का घर अगर भीतर से स्वच्छ हुआ तो बाहर की बात ही क्या है ? चारों

ओर से कूड़े का ढेर लगा हुआ है। कहीं एक स्थान पर मल पड़ा हुआ तो कहीं एक स्थान पर किसी ने झूठा भोजन डाल रक्खा है। लिखने का तात्पर्य यह है कि हम लोगों के मकान, या मकान के आस-पास की जगह इतनी गंदी होती है कि उसमें अगर किसी योरोपियन को ला कर ठहरा दीजिये, तो वह वहां कदापि ठहरने का साहस नहीं करेगा। किन्तु ऐसे ही स्थानों में हम लोग रहते हैं। और बच्चे जो कि अधिकतर घर के बाहर ही खेला करते हैं, मकान के आस पास गलियां आदि की महा गन्दी जगह में रहते हैं। ऐसी हालत में अगर हम भारत वासियों की सन्तान इस रोग से ग्रसित हों तो कोई अधिक आश्चर्य की बात नहीं है।

३ भोजन—ऊपर की दोनों बातें तो अल्ला अल्ला खैर सल्ला' ही है, परन्तु भारतीय बच्चों को किस प्रकार का भोजन दिया जाता है उसके बारे में सुनिये—बालक को पहले पहल कुछ मास तक याने जब तक वह अन्न खाने के योग्य नहीं होता उस को अपनी माता का दूध पीना पड़ता है, अगर अभाग्यवश माता को ही यह रोग हो गया हो, तब तो फिर बात ही क्या है, बालक को उसी समय से इस भयानक रोग की नींव पड़ जाती है। परन्तु आज कल बहुत सी ऐसी भी मातायें हैं, जो कि बच्चों को अपना दूध न पिलाकर बाजारी गायोंका दूध पिलाती है। जो बच्चे माताओं के दूध के बदले उन गायों का दूध पीते हैं, उन्हें कोष्ठ बद्धता का रोग तो हो ही जाता है, परन्तु साथ ही साथ उनकी अवस्था माता का दूध पीने वाले बालकों से अधिक खराब हो जाती है। और वे रोग जो कि गायों को प्रायः हुआ करते हैं उसके दूध पीने वाले बच्चे में हो जाते हैं। इस प्रकार जब बालक बड़ा हो जाता है, उसे धीरे धीरे अन्न देना शुरू करते हैं, और उसे शुद्ध, स्वास्थ्य वर्द्धक, पुष्टिकर भोजन के अलावे बाजार की रोगोत्पादक मिठाइयां, और तरह तरह के पकवान ही अधिक खिलाये जाते हैं। बाजारू मिठाइयां स्वास्थ्य को लाभदायक हैं या नहीं यह तो प्रायः सभी जानते हैं, परन्तु जानकार भी ऐसे कितने हैं जो कि प्रति दिन अपने बच्चों को मिठाई खाने के लिये चार पैसे न देते हों। गरीबों की बात अलग है, उन बेचारों को तो खाने को भी भरपेट नहीं मिलता फिर वे किस प्रकार अपने बच्चों को मिठाई खिला सकते हैं। इसी लिये गरीब बच्चों की मृत्यु अमीरजादों की बनिस्बत कम सुनने में आती है, और है भी।

राजयक्ष्मा से अपने को बचाने के लिये प्रायः जो जो उपाय किये जाते हैं वे मुख्य इस प्रकार के हैं।

- क- व्यक्तिगत प्रतिषेध के उपाय
- ख- सार्वजनिक प्रतिषेध के उपाय
- ग- बाल विवाह
- घ- रोग ग्रस्त बालिका की शादी
- ङ- माता की अनभिज्ञता
- च- भोजन
- छ- दूध

अब इन के बारे में क्या करना उचित है, क्या करना चाहिये और क्या नहीं यह सब नीचे लिखा जाता है—

१ व्यक्तिगत—यह सभी मानते हैं कि 'रोगी से ही रोग' बढ़ता तथा फैलता है। अतएव बालकों

को उस कमरे में जहां कि दूसरा रोगी रक्खा गया हो नहीं जाने देना चाहिये।

ख—बालकों को खुले स्थान में जहां कि दिन में सूर्य की किरणें आती हों, और जो हवादार हो रात में सुलाना चाहिये।

ग—बालकों को अधिक कसरत कराने की अपेक्षा श्वास सम्बन्धी व्यायाम कराना चाहिये। श्वास सम्बन्धी व्यायाम कराने से बालकों की बुद्धि भी अच्छी हो जाती है साथ उनके फेफड़े भी मजबूत तथा शरीर पुष्ट हो जाता है।

२ सार्वजनिक—क-बच्चे जिन स्कूलों में पढ़ने जॉय वहां वालों को इसका प्रबन्ध करना चाहिये। बच्चोंके दिलपर उत्तम स्वास्थ्यकी बातोंकी जड़ मैजिक लालटेन, या स्वास्थ्योपयोगी पुस्तकों द्वारा जमानी चाहिये।

ख—अपने मकान तथा आस पास की जगह में अगर अधिक गंदगी हो तो म्युनिसिपैलिटी को इस बात की सूचना देकर वह गंदगी दूर करवा लेना अपने तथा अपने पड़ोसियों दोनों के लिये हितकर है। म्युनिसिपैलटियां देहातों में तो हैं नहीं, अतएव वहां के रहने वालोंको चाहिये कि वे गांव के रोगोत्पादक कारणों के दूर करने का स्वयं सब मिलकर प्रयत्न करें। आपस में मिल कर इस स्थानमें कूडा डालना चाहिये, इस कुयें का पानी हम लोग पीते हैं, अतएव इसे किसी प्रकार गंदा न करना चाहिये। इत्यादि बातों को ठीक कर लें, और उस नियम को कदापि भंग न करें। फिर देखिये गांव वालों का स्वास्थ्य अच्छा होता है या शहरोंमें म्युनिसिपैलटियों के आधीन रहने वाले मनुष्यों का। भारतवर्ष के प्रायः प्रत्येक नगरों में म्युनिसिपैलिटियां है, परन्तु वे शहरों की सफाई के बारे में क्या क्या करती हैं, उसे मैं अपने इस छोटे से लेख में नहीं बतला सकता। दो एक म्युनिसिपैलटियों को छोड़ कर बाकी का काम यही है कि अगर कोई बड़ा अंग्रेज आये, तो उसके स्वागत में एक दफे सारे शहर की सफाई करवा देना और फिर कभी उस तरफ ख्याल भी न करना।

ग—अस्पताल—प्रायः शहरों में खैराती अस्पताल होते हैं जहां रोगी मुफ्त में अपने रोगोंकी चिकित्सा कराता है। ये अस्पताल अधिकतर स्थानीय म्युनिसिपैलटियों के खर्चे से चलते हैं, कहीं कहीं इन का प्रबन्ध स्थानीय प्रांतीय सरकार द्वारा भी होता है। परन्तु अस्पताल में न तो इतना स्थान ही रहता है और न अधिक रुपया। अतएव जिसे यह रोग हो भी जाय उसे कुछ दिनों तक जंगल में निवासस्थान बनाना ठीक है।

घ—बहुत से बच्चों को तो यह बीमारी उनके ऐसी पाठशाला में पढ़ने से होती है, जो अधिकांश ऐसे बुरे स्थान में होती है जहाँ पर कि अगर बालक को रोग न भी होता हो तो हो जाय। भारत वर्ष गरीब देश है। यहाँ की जनता गरीब है। इस देश में अधिकांश जनता गरीब तथा अशिक्षित है। अतएव यह प्रायः असम्भव सा है कि गरीब जनता अपने बच्चों के पढ़ाने का स्वयं प्रबन्ध करे। सरकार को अथवा स्थानीय म्युनिसिपैलटियों को इस का भार ग्रहण करना चाहिये। अपने शहर की पाठशालाओं का, स्कूलों का निरीक्षण इस दृष्टि से करना चाहिये कि पाठशाला का वह स्थान स्वास्थ्य नाशक

तो नहीं है। यहाँ पर किसी प्रकार के रोग होने की अथवा छात्र को रोग होने की सम्भावना तो नहीं है। हमारे देश में यह देखने में आता है कि कोई भी शिक्षक जो कि एक अपनी स्वतन्त्र पाठशाला खोलता है, ऐसे स्थान में अपने छात्रों को पढ़ाता है जिस स्थान का उसे कम किराया देना पडे। या जो स्थान मुफ्त में मिल जाय। अगर आप अपने ग्राम की या शहर की छोटी छोटी पाठशालाओं का निरीक्षण करेंगे, तो आप को प्रतीत होगा कि वे कैसी दुर्गंधमयी जगह में और कैसे संकुचित स्थान में हैं, जहां पर न तो सूर्य की किरणों का प्रकाश ही पहुंचता है और न ताजी हवा। ऐसी जगह में अगर एक स्वास्थ्य सम्पन्न मनुष्य भी थोडे समय के लिये रहे तो वह भी रोग सम्पन्न हो जाय तो फिर उसमें बारहों महीने पढ़ने वाले छोटे छोटे बालकों की क्या दशा होती होगी या होती है, इस बात को तो भगवान ही जानता है, क्योंकि अगर मनुष्य जानता तो वह कम से कम अपने देश के इन सुकोमल बालकों पर जान बूझ कर वज्र प्रहार न करता। उन्हें ऐसे गंदे, अपवित्र स्थान में विद्याध्ययन के लिये नहीं आने देता। अगर स्वच्छ हवा, और पवित्र जगह की आवश्यकता नहीं होती तो प्राचीन काल में विद्यार्थी गण बनों में जा कर विद्याध्ययन नहीं करते बल्कि अपने घरों में ही विद्या पढ़ या सीख लेते। अतएव हम लोगों को चाहिये कि पाठशालाओं, स्कूलों को अच्छे स्थानोंमें खुलवायें तब अपने बालकों को वहां विद्याध्ययनके लिये भेजें। योरोप के किसी भी देश में इस प्रकार कि कोई भी गुरु बन बैठा और थोड़े से विद्यार्थियों को लेकर एक गन्दे स्थान में पाठशाला खोल बैठा और बालकों को पढ़ाने लगा जैसे कि हमारे देश में अकसर होता है, तो उसे फौरन सजा हो जाती है। और जिस का वह स्थान है, वह नष्ट भ्रष्ट कर दिया जाता है, और वहां पर अच्छा हवादार मकान बनाने की आज्ञा दी जाती है।

(ङ) गाय, भैंस का निरीक्षण — जिनसे हमें अमृतके समान दूध, घी अथवा दूधसे बने और और पदार्थों की प्राप्ति होती है, उनकी परीक्षा करना हमारा परम कर्तव्य है। राजयक्ष्मा रोग केवल मनुष्यों को ही नहीं होता, बल्कि गाय-भैंसों को भी गन्दी जगह में रहने कारण बहुधा होजाता है, अतएव उन की परीक्षा अवश्य करवा लेनी चाहिये।

(च) थूकने की मनाही :— "थूकना" यह शब्द जानने की अपेक्षा इसका न जानना ही अधिक अच्छा है। भारतवासी थूकनेके लिये मशहूर हैं। जहां देखो सड़क पर, सिनेमा घरमें, स्टेशन पर, मकान में, वहीं हम लोग थूक देते हैं। थूकना स्वास्थ्यके लिये कितना भयंकर है। अगर हम भारतवासी इस बात को जान जाते तो शायद इतना अधिक नहीं थूकते। परन्तु बहुतसे ऐसे भी हैं जो जान बूझ कर नहीं बल्कि यह रोगोत्पादक है यह जानते हुये भी केवल आदत से लाचार होकर थूकते हैं। कई बालकों को यह आदत पड़ जाती है कि वे अक्सर थूका करते हैं। जिनको थूक अधिक आता हो, उन्हें चाहिये कि वे लौंग, इलायची खावें। राजयक्ष्मा के रोगी जो थूकते हैं उनके थूकके साथ जीवाणु भी बाहर आजाते हैं। और थूकके सूखनेपर हवामें मिल जाते हैं। फिर जब हम लोग साँस लेते हैं तब हमारे शरीर में हवा के

साथ साथ चले आते हैं ।

(क) सेनेटोरियम— अगर कोई इस रोग से पीड़ित भी होजाय तो रोगसे छुटकारा पाने के लिये अथवा दूसरों में न फैल जाय, रोगियों को सेनेटोरियम में जो कि प्रत्येक प्रान्त में सरकार की तरफसे खुले रहते है, चला जाय। परन्तु सब कोई उसमें भर्ती नहीं हो सकते इसलिये यदि राजयक्ष्मा होजाय तो उससे बचने के लिये थोड़ेसे उपाय लिखे जाते हैं

(i) जहाँतक हो अपना सारा समय खुले स्थान में बितावे और सूर्यकी किरणोंका और ताजी हवाके जो लाभ हैं उनसे फायदा उठावे।

(ii) अच्छे, उत्तम भोजन को, और जिस से दुबले शरीर में बल बढ़े ऐसा भोजन करे, और थोड़ा थोड़ा, शक्ति के अनुसार व्यायाम भी करे। व्यायाम के माने कसरत के नहीं बल्कि टहलना।

(iii) रोगी को अपनी दिनचर्या ठीक रखना चाहिये। नियम पूर्वक मुख प्रक्षालन, शौच, तथा समय पूर्वक टहलना इत्यादि। रोगी को जहां तक हो बीड़ी, सिगरेट, आदि तथा मिर्च तेल आदि खाद्य वस्तुओं का परहेज रखना चाहिये।

३—बाल विवाह— बाल विवाह करना भी बालक के लिये अहितकर है इस मे बालक की मानसिक शक्तियों के विकाश में बाधा पड़ती है। और ब्रह्मचर्य की रक्षा भी ठीक प्रकार से नहीं हो पाती।

४—रोग ग्रस्त बालिकासे विवाहः—बालक की शादी उस बालिका से नहीं करनी चाहिये जिसे 'राजयक्ष्मा' हो गया हो। क्योंकि ऐसा करने से दोनों को राजयक्ष्मा हो जाने का डर है।

अधिक मनुष्यों के मरने के कारण इसका नाम लोगों ने "श्वेत महामारी" भी रख लिया है। इस रोग से यद्यपि शीघ्र मृत्यु नहीं होती परन्तु जिसे यह रोग हो जाता है. उसे इस रोग से छुटकारा बड़ी देर में और अधिक सतर्कता से काम लेने पर होता है। हम लोगों के देश में जो कुछ धनीमानी पुरुष हैं, वे दान तो देते हैं, परन्तु दान किस प्रकार देना चाहिये, यह वे अच्छी प्रकार नहीं जानते। उन की समझ में गरीबों को रुपये बांटना और धर्मशालायें, मन्दिर खुलवाना तथा पुजारियों को रुपये देना ही दान धर्म है। परन्तु उनके ध्यान में यह कभी भी नहीं आता कि दान के उस रुपये से स्कूल खुलवाये जांय, अस्पताल बनवाये जांय या और किसी प्रकार से देश के आदमियों को शिक्षित बनाया जाय, तथा रोगों से उनकी मुक्ति की जाय।

'राजयक्ष्मा' इस रोग के बारे में जितने ही गम्भीर विचार किये जांय, किये जा सकते हैं जिन्हें इस विषय की अधिक जानकारी प्राप्त करने की इच्छा हो वे लैंकिस तथा ब्लैक मैन कृत "ट्रापीकल हाईजीन" तथा "मैनसन्ज़ ट्रापीकल डीज़ीज़" देख सकते हैं।

" माया जाल "

(ले० श्रीमान पं० भवरलाल जी शर्मा)

चाहे जाड़ा हो या गर्मी. ला० साधूराम बड़े सवेरे उठा करते थे। उठकर अपने चबूतरों पर झाड़ू देना उनका पहला काम था। ज्यों ही वे चबूतरों पर झाड़ू लगाते थे वैसे ही मुंहसे भी "राम" "राम" का शब्द निकाल कर रास्ते में लेटे हुए कुत्तों की नींद हराम कर देते थे। झाड़ू देकर चबूतरों पर बोरी बिछाई और हुक्का भ॰ कर बैठ गये। पीते २ जब खांसी आती थी तो मुंह को हाथ लगा कर धीरे २ खांस लिया करते थे ताकि कहीं पं० गो॰धनदास आकर इस प्रातःकालीन धूम्र-यज्ञ में शामिल न हो जावे और कुदाम के तम्बाकू को बरबाद करदे। किन्तु उनकी आवाज सुनकर गोरधनदास को विवश हो चारपाई छोड़नी पड़ती थी। वे पहले से ही इसकी टोहमें आँखें खोल दिया करते थे, और पड़े २ हुक्के की बाट देखा करते।

बस, जब पण्डित जी उसके यज्ञ में आकर सहयोग देते थे तो फिर क्या था—खूब बनती थी। लाला जी दिल ही दिल में कुढ़ जाते थे। किन्तु अपने हृदय के भाव बाहर प्रकट नहीं होने देते थे। थोड़ी देर में मुहल्ले का शांत वातावरण मारे खांसी के कुपित हो उठता था। दूर २ के कुत्ते भौंकने लग पड़ते थे कुछ देर बाद ही औरतें उठ २ कर अपनी चक्कियां चला देती थीं। पण्डित जी तो फिर जाकर सो जाया करते थे किन्तु ला० जी अपना डोर लोटा उठा कर पड़ोस के कुएं पर आ धमकते थे। और "जल का जामा पहन कर हरि का मन्दिर देख" यह कई बार कहते २ अपनी धोती बदल लिया करते थे। फिर उसी चबूतरे पर माला लेकर सूर्य निकलने तक बैठे रहा करते थे।

माला के प्रतापसे अथवा एक आध मृत्यु भोज करने के कारण आपकी और भी प्रतिष्ठा होगई थी। १०-५) रुपयेकी आवश्यकता पड़ने पर गरीब-गर्जमंद इन्हीं के आगे आकर नाक रगड़ते थे। जो भी लाला जी कहते थे, बेचारों को करना पड़ता था। छोटे मोटे सभी पर अपना प्रभाव जमाये हुये थे। लोग बहुधा आपको भगत जी कह कर बोला करते थे। पं० गोरधनदास नित्य नई बातें सोचते और भगत जी उसको अपने माया जालसे कार्य रूप में परिणत कर देते थे।

कई युवक और युवतियों को दाम्पत्य जीवन के एक सूत्र में बांधना इन्हीं पर निर्भर था। घोड़े-गधे तथा ऊंट और बैल की जोड़ी मिलाना इनके बांयें हाथका खेल था। दूसरे लोग जिस कार्य को थैलियों में नहीं कर सकते थे भगत जी उसे बातों में कर दिया करते थे। अपने भविष्य में सुखकी आशा करने वाली सुकोमल बालिकाओं के जीवनको नीरस करने में इन्हें तनिक भी देर नहीं लगती थी। दिन भर इधर उधर की बातें करने के सिवा कुछ काम नहीं था। यही उनकी रोजी थी, बैठे खाते थे। लोग समझते थे कि भजन करने वालेको परमात्मा छप्पर फाड़ कर देता है।

बचपन ही में माया और किशोर दोनों साथ २ खेला करते थे। लगभग दोनों की अवस्था भी एक ही थी। जब कभी दोनों आपस में खेलते २ झगड़ते थे, एक दूसरे को थपन लगा कर भाग जाते थे, रोने लग जाया करते थे, तब एक दूसरे के आंसू पोंछा करते थे। किशोर जब स्कूलमें जाता था तो वह सायंकाल के समय गली के बाहर खड़ी होकर उस के आने की प्रतीक्षा किया करती थी। वह भी पढ़ना चाहती थी किन्तु भगत जी इसके विरुद्ध थे। वे नहीं चाहते थे कि स्त्रियां पढ़ लिखकर पुरुषों की समानता करें, प्राचीन रहन सहन को तिलाञ्जलि दें। उनका ख्याल था कि स्त्रियाँ पढ़ने से स्वच्छन्द होजाया करती हैं, घरकी नहीं रहतीं, जो दिल में आता है करने लगती हैं। स्त्रियां केवल घरका काम करने के लिये हैं, दफ्तरों में जानेके लिये नहीं। पढ़ने लिखने के बिना ही घरका काम करने में कौनसी बाधा उपस्थित होती है जिसके लिये उनका पढ़ाना ही आवश्यक हो।

किन्तु माया को शिक्षा से प्रेम था। जब कभी किशोर को खेलने से फुरसत मिलती थी तो माया उससे लुक छिप कर पढ़ लिया करती थी। यहां तक कि नित्य प्रति के अभ्यास से माया को थोड़ा बहुत बोध हो गया था। वह चंचल थी, उसका हंसोड़ स्वभाव था।

कुछ ही दिनों में माया को अपने बचपन के प्राकृतिक जीवन से हाथ धोना पड़ा। बाहर खेलने के लिये जाने से वह बाध्य की गई। वह उठ करके किशोर के घर चली जाती किन्तु फिर उसको मां आवाज देकर बुलाती और उसे दो-तीन चपत जमाकर घर में ही बिठा देती थी। अब उसका बचपन धीरे २ व्यतीत हो चला था। बचपन के स्थान में यौवन के अंकुर जमने लगे थे। भगत जी ने भी उसका इस प्रकार स्वच्छन्द फिरना उचित न समझा। अब वह घर की चहार दीवारी के अन्दर ही रहने लगी। अब वह समझने लगी थी कि मेरा और किशोर का एक दूसरे की ओर देखना माता पिताको बुरा मालूम होता है। और लोग भी इसको घृणा की दृष्टि से देखते हैं किन्तु यह नहीं प्रतीत होता कि हम दोनों के बीच में यह बन्धन की खाई क्यों खोदी गई है? क्या हमारा दोनों का मिलना जुलना किसी विशेष मन्तव्य से खाली नहीं समझा जाता? अब मैं पहले की तरह उससे बोल भी नहीं सकती? क्या उसका भी हमारे यहां आना जाना मना है?

* * *

भगत जी रोटी खा कर चारपाई पर लेट ही रहे थे कि इतने में पण्डित जी तम्बाकू का दाना हथेली पर रगड़ते हुये आ बैठे और हुक्के पर से चिलम उतार कर नीचे उड़ेल दी; उसके ठंडे होने के प्रतीक्षा कर ही रहे थे कि सामने से रंगीलाल वकील गुजरे। भगत जी उन्हें देख कर हंसते हुये पण्डित जी से बोले— देखा, कैसे सुफेद कपड़े पहने रंगीलाल अपने ही रंग में मस्त है। बस इन्हों ने सुफेद कपड़ों को ही इज्जत समझ रक्खी है, जो कुछ कमाया खाया, उड़ाया।

आज इसे १५ साल हो गये अपने मुहल्ले में रहते हुये-मगर कभी इसके घर कौवे नहीं उड़े। इस की माँ यहां मरी तब भी इसने उसकी खाक नहीं उड़ाई। आज तक हमने तो इसके मकान में पांव

भी नहीं रक्खा है कि किसी दिन जा कर दो पूड़ी तो खाई हों। पण्डित जी ने उसके मकान की तरफ लम्बा हाथ करके कहा।

भगत जी ने हुक्के को अपनी तरफ खेंच कर कहा—कुछ करना धरना तो दूर रहा: वह इसका लड़का, क्या नाम इसका "किशोर" कितना बड़ा हो चला है, न उसकी शादी न ब्याह? मैं ने एक दिन जिक्र किया तो उल्टे गले पड़े। हमें अभी क्या फिक्र है, देखा जायगा, लड़के की अभी उम्र ही क्या है? तुम अपनी लड़की की फिक्र करो।

पण्डित जी कहने लगे-देखना धरा रह जायगा। इस वक्त कहीं तजबीज लड़ गई तो लड़ गई; २० वर्ष के होने पर तो बच्चू जी को लेने के देने पड़ जायेंगे।

भगत जी ने सिर हिलाते हुये कहा—जमाना ही खराब हो चला है नई २ बातें होती जा रही हैं। सुना है। लड़कियां अपने आप देख कर शादी करने लगी हैं। फिर मां बाप तो किस मर्ज की दवा रह गये। हमें भी लड़की के पीले हाथ करने हैं पण्डित जी! कहीं कोई निगाह में अच्छा घर है तो बताइये। कल को पता क्या हो?

पण्डित जी ने उनका अनुमोदन किया और कहा कि माया बड़ी बुद्धिमान लड़की है। इसको कहीं ऐसी जगह देनी चाहिये जहां सर्व प्रकारका आनन्द हो और आपको जीवन भर याद रक्खे।

हां, मुझे इसी लिये बाट देखते २ आज दो साल होगये—रामपुर में सेठ दीनदयाल ने जो अभी ३ साल हुये शादी की है-वह लड़की भी बहुत दिनों से बीमार है; सुना है उसके अच्छे होने की उम्मेद नहीं बस, जहां वह खाली हुआ और अपना काम बना। भगतजी ने पंडितजी की पीठ पर जोर से हाथ मारते हुये कहा।

पंडित जी ने कुछ हंसते हुये कहा—बेशक, सब बातोंका आनन्द है, अच्छा बड़ा भारी मकान है, आज दिन तो किसी बातकी चिन्ता नहीं. मायाका जाल फैला हुआ है। परन्तु अवस्था कुछ अधिक हो चली है।

महाराज! वह दिन आने दो--फिर देखना लोग चील की तरह कैसे मंडराते हैं। यदि अवस्था की तरफ विचार किया जाता तो आज उसकी कभी शादी न होती।

"बहुत अच्छा" कह कर पण्डित जी अपने घर चले गये। इसी प्रकार एक-एक करके कई दिन व्यतीत होगये किन्तु माया के भविष्य की किसीको चिन्ता नहीं थी। वह विचार करती थी कि मैं स्वयं कहदूं पर मा क्या कहेगी? दुनियां किस निगाहसे देखेगी, अपने पराये क्या कहेंगे, पिताजी बेशरम समझेंगे आदि विचारों पर काबू पाने के लिये उसका अन्तःकरण साथ नहीं देता था। वह बार २ बाहर दरवाजे पर आकर खड़ी होजाती थी किन्तु उसका अन्धकार पूर्ण गगन मंडल में छिपा हुआ चन्द्रमा, उसके खिले हुये हृदय की मधुर मुस्कान, उसका चिर-परिचित साथी किशोर नहीं दिखाई पड़ता था उसकी आशा-रूपी लता दिन प्रतिदिन मुरझा रही थी वह उत्साहहीन होचली थी।

* * *

सेठ दीनदयाल अपने शहरमें निराले ही ढंगके

बेढब आदमी थे। काफी पैसा था, अच्छा कुटुम्ब था किन्तु क्या मजाल जो एक पैसा भी घरकी चोखटसे बाहर निकल जाये। बदन पर कुड़ता या कमीज पहनने की तो शुरूसे ही आदत न थी। घरमें कोईभी अपनी २ नहीं चलाता था, सब काम उनकी आँखके इशारे से ही होते थे। आपके एक बुढ़िया माता थी जो बार २ अपने जीते जी एक और पुत्र-वधूका मुंह देखने की इच्छा रखती थी। सेठ जी अपनी वृद्धा माता की इच्छा को पूर्ण करना ही दान-पुण्य से भी कहीं बढ़ कर समझते थे।

नाई ने पहुंचते ही अपना अभिप्राय बतलाया। सेठ जी तो इस सुअवसर की ताकमें थे ही, सब बातें तय कर डालीं और भगत जी को अपनी जोड़ी का समझ उन्हीं की मायाजाल में फसना स्वीकार किया। इन्हे क्या पता था कि दुनिया मुझ पर आवाजें कसेगी तथा भगतजी और पंडित जी की पुरानी चालों के कारण लेने के देने पड़ जांयगे।

कुछ ही दिनों बाद विवाह की तैयारियां होने लगी। धीरे २ वह दिन नजदीक आज रहा था काफी चहल पहल थी, माया खुशी के मारे फूली न समाती थी। सायंकाल का समय था, हजारों रुपये निछावर करती हुई, तातारी सेनाकी तरह गाजे बाजे के साथ बरात चली आरही थी। थोड़ी ही देर में माया का माया पति दरवाजे पर आ खड़ा हुआ। लुक छिप कर मायाने अपने यौवनकी फुलवाड़ी के मुरझाये हुये फूलको देखा। देखकर चकित रह गई, उसके हृदय के भाव पिघल २ कर आंखों द्वारा बाहर आ रहे थे, वह विवश थी-करती तो क्या करती। माँने भी दो आंसू बहा लिये, पिताजी ने भी माया की आड़ में अपने भाग्यको कोस डाला और लोग केवल "भाग्य का लेख" बता कर ही रह गये।

किशोर अपने आपको अकेला समझने लगा था संसार उसे सूना और भयंकर दिखाई देता था। उसके अंग २ से यौवन की झलक दिखाई पड़ती थी उसकी मानव प्रकृति थी, उसमें मानव जीवनका विकाश हो चला था, नवीन उमंग थीं। प्रेम-रूपी गढ़ में छिपी हुई माया को उसकी मतवाली आंखें कुतुहल पूर्ण दृष्टिसे इधर उधर खोज रही थीं। उसका सुकोमल बदन उसकी आंखोंमें घर किये हुये था। चांदनी रात थी, वह छत पर एकान्त में बैठा गा-गाकर अपना दिल बहला रहा था—

हम रोते २ मर गये उनको खबर नहीं,
आहें भी धुल गईं कहीं रंगे असर नहीं।

मायाने हारमोनियम की आवाज सुनी और झट दौड़ कर अपनी छत पर जा खड़ी हुई। उसके मकान के बगल में ही किशोर निमग्न होकर गारहा था। वह टकटकी लगाये उसे देख रही थी—

उसने फिर गाया।

हम आपकी निगाहको पहचानते हैं खूब,
वह चितवन नहीं है, वह पहली नजर नहीं।

किशोर! यह संसार कारागार है: इसमें न मालूम कितने प्रेमके कैदी यों ही छटपटाया करते हैं। मायाने मुस्कराते हुये कहा।

माया! तेरे पास रूप और यौवन का खजाना है और माता पिताने इसकी बड़ी सावधानो से रक्षा की है। हमारे जैसे लोलुपी व्यर्थ इस पर मर मिटते हैं। संसारकी गति ही ऐसी है कि अपरिचित भाग्यशाली

ठग इसको मुफ्त में लूट कर व्यर्थ बरबाद कर देते हैं यह कहते हुये किशोर उसके सामने आ खड़ा हुआ।

किशोर! प्रेम वाटिका के एक साथ खिले हुये ये दो पुष्प समाजकी भयंकर आंधी के झोंकों से उड़कर सदाके लिये अलग होरहे हैं। पता नहीं इनका क्या होगा?

किशोर बोलना चाहता था किन्तु उसका गला काम नहीं करता था। उसके हृदय से जो शब्द निकलते थे, गले में आकर रुक जाते थे। उसका हृदय पत्थर होगया था।

माया ने एक गहरी दृष्टि से उसकी तरफ देखा आंखों में आंसू डबडबा आये। सिर झुका कर कहने लगी— किशोर! क्या इस प्रेम रूपी अथाह समुद्र को हमारी जीवन नौका सांसारिक भयंकर लहरों को विचलित करती हुई पार कर सकेगी?

किशोरने बड़े जोरों से होठों को खोलकर दो शब्द मुंहसे निकाले—माया! लोग व्यभिचारी कहेंगे

माया फूट २ कर रोने लगी, किशोर से वह नहीं देखा गया। उसने धीरे से कहा- "माया जावो"।

"किशोर! भूल जाओगे?"

"नहीं-माया!"

"अच्छा फिर मिलेंगे" कह —कर, एक दूसरेकी आंखों से ओझल होगये।

* * *

भादों का महीना था। आकाश में काले बादल कहीं कहीं बिखरे हुये थे। अभी चन्द्रमा को निकले थोड़ी ही देर हुई थी। प्रकाश पूर्णतया अंधेरे पर विजय पाचुका था। चन्द्रमा की तिरछी किरणें एक दिशासे दूसरी दिशा को पार कर रही थीं। कभी २ चन्द्रमा घने बादलों में अपने मुख-मंडल को छिपा लेता था किन्तु प्रेमकी दबी हुई आगमें सुलगने वाले कई कोमल प्राणियों के व्यथित हृदय को प्रफुल्लित करने के लिये फिर प्रगट होजाता था। बादल पश्चिमसे पूर्व की ओर लपक रहे थे। माया चुपचाप एक कमरे में चारपाई पर लेटी हुई थी। हवाके झोंके कभी २ उसके शरीर को छूने के लिये बेरोक-टोक अन्दर चले जाते थे। उमस बढ़ रहा था; पसीने के कारण उसके मुख-मंडल पर जल-बिन्दु ओस की भाँति बिखरे पड़े थे। कभी वह बाहर निकल आती थी और थोड़ी देर खड़ी रह कर फिर अन्दर चली जाती थी।

रात्रिके शान्त वातावरणको अपनी घनघोर गर्जना से गुञ्जित करते हुये बादल ऊपर की ओर उठते चले आरहे थे। निबिड़ अन्धकार में बिजली छिप २ कर उनसे अठखेलियाँ कर रही थी। प्रकृतिका यह अनुपम सौन्दर्य माया को खाने के लिये दौड़ता था। वह पड़ी २ चारपाई पर करवटें बदल रही थी। रात्रि के ११ बज चुके थे। थोड़ा २ पानी भी गिरने लगा था। इतने ही में किसी के पावों की आहट सुनाई दी। माया उठ कर खड़ी होगई; सेठ जी अन्दर आये और माया के हाथमें एक लिफाफा देकर वापिस चले गये

माया पत्र लेकर पढ़ने लगी। उसमें लिखा था—

प्रिय माया!

अब तुम संसार के नवयुग में अनोखा जीवन व्यतीत कर रही हो और माया जाल में फंसने वाले निर्लज्ज भी शायद चिर सुखका अनुभव करते हुये जीते रहेंगे; किन्तु मैं जिस जाल में तड़फ रहा हूं, वह

है—माया-जाल—जिसमें तड़फ कर जीवन समाप्त कर देना ही मेरे लिये एक खेल है। न मुझे जीनेका मज़ा है और न मरनेका गम। यदि याद करती हो तो सदा के लिये भूल जाओ।

तुम्हारा—किशोर।

पत्र पढ़ते ही माया का सिर चकरा गया और वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो चार पाई पर लेट गई। उस के भाग्यमें चैनकी नींद कहां थी? रात भर उसकी लम्बी २ आहोंमें बार २ यही दो शब्द निकलते रहे—"मायाजाल" हाय! "मायाजाल"।

—अपूर्ण

उपदेशक विद्यालय की स्थापना

धर्म बन्धुओं को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि संघ की साधारण सभा के निश्चयानुसार उपदेशक विद्यालय की स्थापना अम्बाला में तारीख २५ मई सन् १९३६ को पवित्र पर्व श्रुतपंचमी के अवसर पर होगी।

उपदेशक विद्यालय की स्कीम, जिसके अनुसार कार्य प्रारम्भ होगा, इस ही अङ्क में प्रकाशित कर दी गई है। जो विद्वान इसमें भर्ती होना चाहें, वे अपने प्रार्थना पत्र मेरे पास अप्रैलकी ३० तारीख तक भेज दें।

निवेदक—
कैलाशचन्द्र जैन
मन्त्री
उपदेशक विभाग भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ
ठि० स्याद्वाद महा विद्यालय भदैनी घाट
बनारस

उपदेशक विद्यालय की कार्य प्रणाली

उद्देश

समाजके लिये उपयोगी उपदेशक तैयार करना इस विद्यालयका उद्देश होगा। वे उपदेशक दो प्रकार के होंगे—भजनोपदेशक और तत्वोपदेशक।

छात्रों का प्रवेश

वर्ष के प्रारम्भमें, इस विद्यालय में प्रविष्ट होने के इच्छुक छात्रों का चुनाव एक समिति के द्वारा होगा। प्रवेशेच्छुक छात्र को अपने प्रमाण पत्रों के साथ समिति के सामने उपस्थित होना आवश्यक होगा, उपदेशकी विभाग के योग्य प्रमाणित होने पर छात्रों को प्रवेश की अनुमति दी जा सकेगी।

प्रवेशेच्छुक छात्रों की योग्यता

भजनोपदेशकी विभाग में प्रविष्ट होने के इच्छुक छात्रों को किसी जैन परीक्षालयों की कम से कम पूर्ण विशारद परीक्षा अवश्य पास करनी होगी, तथा स्वर

का मधुर और आकर्षक होना आवश्यक है।

तत्वोपदेशक विभाग में प्रविष्ट होनेके इच्छुक छात्र कम से कम पूर्ण शास्त्री परीक्षा पास अवश्य होवें, जैन दर्शन का पूर्ण ज्ञान होने के साथ इतर दर्शनों का ज्ञान रखने वाले अंग्रेज़ी के जान कार छात्रों को प्रथम स्थान दिया जायगा। वाणी का ओजस्वी तथा आकर्षक होना आवश्यक है।

छात्रों के सम्बन्ध की कुछ अन्य बातें

१—जैनधर्म का प्रचार और जैन समाज की सेवा करने के इच्छुक छात्र ही इस विभाग में पदार्पण करने का कष्ट करें। वृत्ति के लोभ से या अध्यापकी न मिलने से इस तरफ चले आना अपने जीवन और समाज के धन का दुरुपयोग करना है।

२—दोनों विभागों के प्रवेशेच्छुक छात्रोंको अपने अध्ययन काल में शास्त्र सभा तथा व्याख्यान सभा का अभ्यास करना चाहिये और लौकिक ज्ञान बढ़ाने के लिये समाचार पत्र तथा उच्च कोटि के हिन्दी साहित्य का अध्ययन बराबर करते रहना चाहिये।

शिक्षण काल

उपदेशक विद्यालय का शिक्षण काल दो वर्ष होगा।

शिक्षण का क्रम

—भजनोपदेशक—

१—जैन दर्शन का विशेष ज्ञान तथा इतर दर्शनों का साधारण परिचय।

२—संगीत के साथ उपदेश देना।

३—विविध विषय

—तत्वोपदेशक—

१—जैनशास्त्रोंका तुलनात्मक अध्ययन

२—जैनेतर दर्शन—विशेषतया वैदिक साहित्य का शिक्षण।

३—शास्त्रार्थ करना तथा उपदेश देना

४—विविध विषय

छात्र वृत्ति

भजनोपदेशकी कक्षा के छात्रों को भोजन के अलावा प्रति मास ८) तक वृत्ति (स्कालर्शिप) दी जायगी; और तत्वोपदेशकी कक्षा के छात्रों को भोजन के अलावा प्रति मास १०) रुपये तक छात्र वृत्ति दी जायगी और उपदेशक बनने पर उन्हें सुयोग्य स्थान दिलाने की गारंटी रहेगी।

विनीत—

कैलाशचन्द्र जैन

मन्त्री-उपदेशक विभाग

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ

—*—

तत्त्वार्थसूत्र और श्वेताम्बरीय आगम

जैन दर्शन के गत अंक में "तत्वार्थ सूत्र जैनागम समन्वय" नामक ग्रंथ की समालोचना प्रकाशित हुई है। सम्पादक जी के कथनानुसार मुझे भी इस ग्रंथ से प्रसन्नता हुई है तथा इस ग्रंथ के संपादक प्रकाशक महानुभाव को धन्यवाद भी देता हूँ क्योंकि उनका यह प्रयास स्थानकवासी सम्प्रदाय में तत्वार्थसूत्र सरीखे सिद्धान्त ग्रंथ का पठन पाठन प्रारम्भ करानेमें सहायक होगा।

किन्तु तत्वार्थसूत्र के सूत्रों का जो इस ग्रंथ में

श्वेताम्बरीय आगमग्रंथों के वाक्यों को उद्धृत करते हुए श्रीमान उपाध्याय आत्माराम जी ने जो यह बात सिद्ध करने की चेष्टा की है " कि तत्वार्थसूत्रकी रचना के आधारभूत ये श्वेताम्बरीय आगम ग्रंथ हैं " इस विषय में मुझे कुछ आपत्ति है जिस को लिखना मुझे आवश्यक प्रतीत होता है। पाठक महानुभाव तथा जैन दर्शन के विद्वान सम्पादक एवं श्रीमान उपाध्याय आत्माराम जी उस पर विचार करें।

तत्वार्थसूत्रके रचयिता आचार्य उमास्वामी या उमास्वाति कुन्दकुन्दाचार्य के पीछे और आचार्य समन्तभद्र के पहले हुए हैं तदनुसार उन का ऐतिहासिक समय विक्रम संवत की प्रथम शताब्दी का अन्तिम भाग सिद्ध होता है। इस बात पर इतिहास वेत्ता श्रीमान बा० जुगलकिशोर जी ने अपनी 'समन्तभद्राचार्य' नामक ऐतिहासिक पुस्तकमें अच्छा प्रकाश डाला है। आपने अकाट्य युक्तियों द्वारा समन्तभद्राचार्य का समय दूसरी शताब्दी का प्रथम भाग सिद्ध किया है। समन्तभद्राचार्य ने तत्वार्थसूत्र पर 'गन्धहस्तिमहाभाष्य' नामक विशाल टीका की है। अत एव तत्वार्थसूत्रकी रचना का समय विक्रम संवत की प्रथम शताब्दी सिद्ध होता है।

किन्तु आचारांगसूत्र, कल्पसूत्र आदि जो श्वेताम्बरीय ग्रंथ इस समय उपलब्ध हैं जिनको कि गणधर उपदिष्ट बतलाया जाता है उन की रचना का समय तत्वार्थसूत्र से बहुत पीछे का है। श्वेताम्बरी आगम वीर सं० ९८० या विक्रम सं० ५१० में रचे गये हैं जैसा कि उनही आगमों का निम्नलिखित ऐतिहासिक श्लोक है।

वल्लहि पुरम्मि नयरे देवड्ढिपमुहसयलसंघेहिं
आगम पुत्थे लिहिओ नवसय असीआओ वीराओ।

अर्थात वीर सं० ९८० में वल्लभीपुर नगर में देवर्द्धि गणि आदि साधुसंघने आगम पुस्तक लिखे।

इस दशामें उपाध्याय जी का उक्त जैनागम समन्वय ठीक नहीं बनता क्योंकि तत्वार्थ सूत्र श्वेताम्बरीय आगमों से लगभग ४०० वर्ष पहिले बन चुका था। फिर वह उन आगम ग्रन्थों के आधारसे रचा हुआ किस प्रकार बतलाया जा सकता है?

हमारे श्वेताम्बरी विद्वान तथा कुछ उनके विद्यालयों के दिगम्बरी अध्यापक इस विषय में यह कह दिया करते हैं कि "श्वेताम्बरी आगम वीर सं० ९८० में पुस्तक रूप लिखे गये थे। वैसे वे गुरु शिष्य परम्परा से मौखिक पठन-पाठन रूपमें भगवान महावीर स्वामीके समयसे चले आरहे थे।" परन्तु दिगम्बरीय ग्रंथों के विषय में भी यही बात है। उनकी मौखिक पठन पाठन की प्रणाली भी भगवान महावीर के समय से है।

हमको तो मौखिक पठन पाठन प्रणाली के इतिहास की बातको थोडी देरके लिये एक ओर रखकर इस बात पर निष्पक्ष भावसे प्रकाश डालना है कि उपलब्ध जैन ग्रन्थों में से किन २ ग्रन्थोंकी रचना प्राचीन है? इस प्रश्नका उत्तर जैन ग्रन्थ रचना का इतिहास स्पष्ट रूपसे यह देता है कि सबसे प्रथम 'षट्खंड आगम' की रचना हुई थी जिस पर जयधवला आदि टीकायें हुई हैं उसके पीछे कुन्दकुन्दाचार्य ने पाहुड ग्रन्थों की रचना की। इत्यादि परंपरा जैन ग्रन्थ रचना की है। ये समस्त ग्रन्थ दिगम्बर सम्प्रदाय में मान्य हैं।

श्वेताम्बर सम्प्रदायके मान्य आगम ग्रन्थ इनसे

लगभग पांचसौ वर्ष पीछे रचे गये जैसा कि उनकी गाथामें प्रगट होता है। अतएव तत्वार्थ सूत्रकी रचना का आधार श्वेताम्बरीय आगम ग्रन्थ समझना भूल है।

—वीरेन्द्रकुमार जैन।

—:०:—

क्या जैन केवल १२॥ लाख हैं?

भारत की सन् ३१ की मनुष्य गणना रिपोर्ट में जैनों की जन संख्या १२॥ लाख के करीब बतलाई गई है। इन अङ्कों को देख कर यह अनायास ही निश्चित कर लिया जाता है कि जैनों की जन संख्या इतनी ही है। किन्तु यह बात मिथ्या है। जैनों की जन संख्या कहीं इससे अधिक है। इसका कारण मनुष्य गणना में अनेक बातों की असावधानी है। इसमें से कुछ का उत्तरदायित्व तो हम पर है और कुछ का इससे सम्बन्धित औफीसरान पर।

अभी तक प्राय हम लोग इसके महत्व को हा ...हीं समझते हैं कि मनुष्य गणना में प्रत्येक जैन को ...न क्यों लिखाना चाहिये या जैनों की संख्या वृद्धि ...ा उनकी नैतिक अवस्था पर क्या प्रभाव हो सकता ? अत. हम मनुष्य गणना के समय अपने को ...न लिखाने का ध्यान भी नहीं रखते। इसमें से ...से लाखों ही निकलेंगे, जिन्हों ने इस बात का ...यान नहीं दिया है और अपने नाम के साथ हिन्दू ...ी लिखा दिया है।

इसमेंसे कुछ ऐसे भी निकलेंगे, जो साम्प्रदायिक-...ा को लाभदायक न समझते हों और इसी लिये ...न्होंने अपने नाम के साथ जैन नहीं लिखाया है।

जहाँ तक मनुष्य गणना से सम्बन्धित कार्य कर्ताओं की बात है, वहां भी जैन जन गणना में अनेक भूलें हुई प्रतीत होती हैं। यदि ऐसा न होता तो सन् ३१ की ही जन संख्या की पहिली सूचना में जैनों की जन संख्या १०॥ लाख न लिखी होती। यह बात तो संघ के ध्यान में आ गई थी। अत उसने इसके सम्बन्ध में आवश्यक ऐतराजों को भारत सरकार के समक्ष रक्खा, जिसके फल-स्वरूप अन्त में १२॥ लाख संख्या प्रकाशित की गई।

यदि इन सब बातों को दूर कर दिया जाय और यदि सन ४१ की मनुष्य गणना में जैनों की ठीक २ गणना की जाय तो हमारा विश्वास है कि हमारी गणना में तब लाखों का ही अन्तर निकलेगा। अपने इस विश्वास के सम्बन्ध में मैं यू० पी० की जैन-जन संख्या के सम्बन्ध में आप का ध्यान आकर्षित करूंगा। सरकारी रिपोर्ट के अनुसार यू० पी० के जैनों की संख्या ६६ हजार है। यू० पी० में ४८ जिले हैं। यदि इन में से आगरा, झांसी, मुजफ्फर नगर, सहारन पुर और मेरठ जिलों की ही जैन संख्या को लिया जाय तो यही ६६ हजार से अधिक बैठेगी। शेष जिलों में भी एटा, अलीगढ़ आदि कई ऐसे जिले हैं, जिन में जैनियों की संख्या आठ २ हजार से कम नहीं है। इस प्रकार हमारे अनुमान से यू० पी० में जैनों की जन संख्या एक लाख से कम नहीं निकलेगी। हम यह चाहते हैं कि सन् ४१ में जैनों की ठीक २ गणना हो जिस से हम अपनी जन संख्या को ठीक २ मालूम कर सकें। भारत के सब ही प्रान्तों में एक साथ इस के सम्बन्ध में किसी भी क्रियात्मक आयोजन को शुरू करना

कठिन है। अतः हम सर्व प्रथम इस को यू० पी० में ही प्रारम्भ करना चाहते हैं। इस के सम्बन्ध में सर्व प्रथम यह आवश्यक है कि यू० पी० के ऐसे सम्पूर्ण स्थानों की सूची तैयार की जाय, जहाँ जैन रहते हैं। इस से दो लाभ होंगे। एक तो यह कि इस प्रान्त की जन संख्या का प्रायः ठीक अनुमान किया जा सकेगा। और दूसरा यह कि सन् ४१ की मनुष्य गणना से पूर्व इन स्थानों के सम्पूर्ण जैनियों को अपने नाम के आगे जैन लिखने को सचेत किया जासकेगा। इस प्रकार सन् ४१ की मनुष्य गणना में इस प्रान्त की ठीक २ संख्या मालूम की जासकेगी।

इस कार्य के लिये हम को प्रत्येक जिले के कुछ उत्साही बन्धुओं के सहयोग की आवश्यकता है। उन से हम निम्न लिखित सहयोग चाहते हैं—

(१) किस २ गांव में जैन निवास करते हैं?

(२) उन स्थानों के डाक खाने का नाम तथा यदि मालूम हो सके तो वहां के किसी प्रतिष्ठित पुरुष का नाम और उन का पता।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारे उत्साही पुरुष शीघ्र अपने शुभ नामों से सूचित करेंगे।

निवेदक—

प्रधान मन्त्री

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ

—*—

श्री राम कृष्ण जन्म शताब्दी में जैन विद्वानों के भाषण।

नई देहली में श्री रामकृष्ण जन्म शताब्दी के अवसर पर 'सार्वधर्म सम्मेलन' ता० २० और २१ मार्च को हुआ। श्री रामकृष्ण जन्म शताब्दी कमेटी ने श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला को भी जैन विद्वानों के व्याख्यान के लिये निमन्त्रित किया था। अन्य धर्मावलम्बियों की ओर से भी भारत के प्रसिद्ध प्रसिद्ध वक्ता पधारे हुए थे। जैसे—भिक्षु उत्तमा, श्री सत्य मूर्ति M. L. A. और सरदार मंगलसिंह M. L. A. आदि थे। इस उत्सव का आयोजन विराट था। लाउड स्पीकर लगाये गये थे। सहस्रों पुरुष सम्मिलित थे, जिनमें अनेक लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान और एसेम्बली के प्रसिद्ध २ सदस्य भी उपस्थित थे। प्रथम दिन के सभा पति डा० भगवानदास जी M. L. A. थे। इस दिन शास्त्रार्थ संघकी ओर से व्याख्याता बा० जयभगवान जी बी० ए० एल० एल० बी० वकील पानीपत का मार्मिक व्याख्यान 'जैन तत्व ज्ञान' विषय पर हुआ जिसका प्रभाव अच्छा हुआ। दूसरे दिन ता० २१ मार्च को सभा के सभापति श्रीमान एम० एस० अणे M. L. A. थे। इस दिन शास्त्रार्थ संघ की ओर से जैन व्याख्याता लब्ध प्रतिष्ठ स्वामी कर्मानन्द जी महाराज थे। व्याख्यान का विषय 'जैनधर्म की विशेषताएं' था। स्वामी जी का व्याख्यान बड़ा मार्मिक, विद्वत्ता पूर्ण और तुलना पूर्ण था। इस व्याख्यान की प्रशंसा सभा में उपस्थित विद्वानों ने खूब की। जैनधर्म की इससे अच्छी प्रभावना और महत्ता हुई।

सम्पादकीय टिप्पणियां

महगांव काण्ड और जैन समाज

अखिल भारतीय जैन समाज के प्रतिनिधि होने का दावा करने वाली संस्थाओं ने महगांव काण्ड का बाड़ा उठाया था और अपने 'पत्रों' तथा चिट्ठियों के द्वारा समाज में सरगर्मी भी पैदा की थी। परिषद् के द्वारा आयोजित 'महगांव काण्ड दिवस' की घोषणा को समस्त जैन समाज ने बड़े जोश खरोश के साथ अपनाया और पारस्परिक मतभेदों को भुलाकर सच्ची लगन से योगदान किया और अपने नेताओं को यह बतला दिया कि धर्मायतनों की रक्षा में प्रयत्नशील संस्था किसी भी पार्टी की क्यों न हो धार्मिक मामलों में यदि वह अग्रसर होती है तो समस्त जैन समाज उसके आह्वान को सादर सुनती है। समाज की सरगर्मियों को देखकर हमें आशा हुई थी कि इस काण्ड का शीघ्र ही प्रतीकार होगा और इसी से हम इस सम्बन्ध में मौन भी थे। किन्तु महगाँव काण्ड दिवस के बाद में दिन पर दिन बनियाई जोश का तूफ़ान ठंडा पड़ता देख हमें अपना मौन भंग करना पड़ा। संभवतः हमारे इस क्षणिक जोश को ग्वालियर स्टेट के अधिकारी भी पहचान गये, इसी से प्रारम्भ में उन की ओर से जो आशा जनक उत्तर मिले थे वे बादमें निस्सार से रहगये और अधिकारियों की ओर से सख्तियां भी होने लगीं, इतना ही नहीं ग्वालियर स्टेट में ही दूसरे स्थान पर जैन मंदिर बनने में बाधा डाली गई। मालूम होता है, हमारी इस नामर्दी को ग्वालियर के पड़ोसी राज्य भूपाल ने भी भांप लिया है तभी तो बकरा ईद की नवाज़ के समय मुसलमानों ने जैन मन्दिर को घेरलिया और मुस्लिम राज्य की पुलिस ने मुसलमानों को कुछ न कह कर उलटे जैनियों को ही गिरफ्तार कर लिया ये अत्याचार हमारे ही पारस्परिक ईर्षा द्वेष के प्रतिफल है, और हैं हमारी अकर्मण्यता और कायरता के जीते जागते उदाहरण। हमारी समस्त शक्ति स्वयं अपने ही संहार में व्यापक की जा रही है हमारे नेता और पत्र अपने ही धार्मिक कर्तव्यों में अपशकुन करने के लिये अपनी नाक कटा रहे हैं एक ही समाज के भिन्न २ दलों के पत्रों में विभिन्न प्रकार की बातें पढ़ने को मिलती हैं। जैन मित्र में महगाँव के अत्याचार पीड़ित पुरुषों और स्त्रियों की करुण कहानी छपती है तो जैन गज़ट में लश्कर जैन ऐसोसिएशन के मंत्री जी महगांव काण्ड का आन्दोलन करने के अपराध में परिषद् को कोसते हैं। इस पारस्परिक खींचातानी से यदि अधिकारी लाभ उठावें और जैन आन्दोलन को ढकोसला समझकर उसकी उपेक्षा करें तो आश्चर्य ही क्या है? जिस समाज के विभिन्न दल जैन मन्दिरों की रक्षा में भी सम्मिलित प्रयत्न नहीं कर सकते और धर्मायतनों की बर्बादी को देख कर भी इस लिये नहीं देखते कि उसकी रक्षा का प्रयत्न दूसरा दल कर रहा है उस समाजका नाश अवश्यंभावी है। समाज में जो दल धर्मध्वंसक के नाम से पुकारा जाता है वह दल यदि इस कार्य में लापरवाही करे तो यह क्षम्य हो सकता है किन्तु जो दल ज़रा २ सी बातों में 'धर्म डूबा' 'धर्म डूबा' चिल्ला कर आकाश पाताल एक कर डालता है पता नहीं अब वह क्यों मूक है। वर्णाश्रम धर्म की रक्षा के लिये समाचार पत्रों के कालम के कालम रंग डालने वाले धर्म भीरु जिन मन्दिरों के संहार पर क्यों कुण्ठित होगये हैं? जैनियों की बढ़ती हुई कायरता को देख

कर नवीन मन्दिर निर्माण का विरोध करने वालों पर सदैव खड्गहस्त शूरवीरों की बोलती आज क्यों बन्द है? क्या नवीन निर्माण का विरोध करने की अपेक्षा संहार का कार्य उनकी दृष्टि में अधिक भयंकर नहीं है? लेखनी के द्वारा दिल के फफोले फोड़ने वाले धर्मात्माओ! आज तुम किस कन्दरामें जा छिपे हो। आज पापियों के द्वारा भ्रष्ट मन्दिर और सताये हुए साधर्मी तुम्हारी धर्मरक्षकता की ध्वजा में चार चांद लगा रहे हैं? अस्तु,

इस अत्याचार के प्रतिकार का क्या उपाय है? पहले डेपुटेशन के द्वारा कार्य करने का मार्ग सोचा गया था, किन्तु सुना है कि डेपुटेशन से मिलने को इन्कार कर दिया गया। अत्याचारका प्रतिकार कराने के लिये समाजमें आत्मनिर्भरता और दृढ अध्यवसाय होना चाहिये और अधिकारियों के हृदय में यह बात जम जानी चाहिये कि यह समाज जिन्दा है, मुर्दा नहीं तभी सफलता मिल सकती है। बनियाई घिस २ से काम नहीं चलेगा। हमारे विचार में जैसे कलकत्ता में सब दलों की कमेटी होकर एक सुरक्षा समिति बनाई गई थी उसी तरह किसी स्थान पर सब दलों की एक समिति बैठाई जाये, उसमें निर्णीत होकर एक कार्यकारिणी समिति बनाई जाये और उसके तत्वावधानमें इस कार्यको जोर शोर से चालू किया जाये।

मन्दिरों की रक्षा की अपेक्षा वर्णाश्रम धर्म की रक्षा को विशेष महत्व देने वाले कुछ महानुभावों की राय है कि सनातनधर्मावलम्बी वर्णाश्रमियों के कुछ उपदेशक भेजे जांय और वे उनमें इस बातका प्रचार करें कि जैन लोग भी वर्णाश्रमी ही हैं अतः उनसे पारस्परिक सद्भाव रखना चाहिये। इस सम्मति के दाताओं से हमारा नम्र निवेदन है कि सनातनियों को जैन मन्दिर और नग्न मूर्तियों से अकारण द्वेष है, केवल वर्णाश्रमी होने के नाते वे उनसे घृणा करने से विरत नहीं किये जा सकते। अभी हाल ही में श्री भोपटकरने अपने एक लेखमें लिखा है कि यदि जैन हिन्दू बनना चाहते हैं तो वे वेदोंको अपौरुषेय मानने लगें। जब तक जैन वेदों को ऐसा मानने को तैयार नहीं तबतक वे हिन्दुओं के मध्यमें नहीं बोल सकते आदि। इन शब्दों से हिन्दुओं की मनोवृत्तिका खासा पता चलता है। वर्णाश्रम, वर्णाश्रम चिल्लाने वालों से हमारा निवेदन है कि केवल वर्णाश्रमी होनेसे सनातनी हिन्दुओं और जैनों की संस्कृति एक नहीं हो सकती। दोनों के मनोभावों और रहन सहन में बहुत अन्तर है। 'देहि पदपल्लवमुदारम्' की नीति जैन समाज और धर्म के लिये घातक सिद्ध होगी। यदि हमें संसारमें जीवित रहना है तो अपने पैरों पर ही खड़ा होना पड़ेगा। इटली-अबसीनिया के युद्धमें संसार भर की सहानुभूति अबसीनिया के साथ होने पर भी अबसीनिया को अपने ही वीरोंका बलिदान करना पड़ रहा है। संसार भी उसी की मदद करता है जो अपनी मदद अपने आप करता है। यदि हम अपनी कमजोरियों को दूर न करके दूसरों के भाई चारे पर अपने को छोड़ दें तो हिन्दुओं को तो वर्णाश्रमी होने के नाते हम रिझा लेंगे। किन्तु मुसलमानों को कैसे रिझायेंगे? हमें केवल हिन्दू ही तो नहीं सताते, अभी बकरा ईद के मौकेपर भोपाल में मुसलमानों ने आफत मचादी थी। वर्णाश्रमियों के सहायक हमें इस प्रश्न का उत्तर दें, क्या वर्णाश्रम की तरह मुसलमानों से भी नाता जोड़ा जा सकता है?

महाभारतसे लेकर ईस्वीसन १२०० तक का इतिहास संक्षेपमें दिया गया है। आर्यकालीन भारत में हिन्दू, बौद्ध, और जैन सम्मिलित है। हिन्दू बौद्ध सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होचुके है किन्तु जैनोंके सम्बन्ध में इस ढंगका साहित्य उपलब्ध नहीं है। इसीलिये सार्वजनिक दृष्टि रखते हुये भी लेखकने जैन प्रसंगका कुछ विशेष उल्लेख कर दिया है जिससे कि बुद्ध अशोक, पुष्यमित्र, विक्रमार्जुन, भोज, हर्षवर्धन की तरह जनता वर्द्धमान खारवेल, कुमारपाल आदि जैन महापुरुषों को भी जान सके। पुस्तक के प्रारम्भ में महाभारतका चित्रण करके बादको नेमिनाथ और श्रीकृष्णके जन्मका उल्लेख किया गया है इससे पाठकों को घटनाक्रमके समझने में धोखा हो सकता है अतः इस क्रमके परिवर्तनकी आवश्यकता है। पुस्तक उपादेय है, जैनशालाओं में इसका पठन पाठन होना चाहिये।

देश विदेश समाचार

—इटली एबीसिनिया के नगरों पर बम बरसा कर आग लगा रहा है। हरार तथा जिजगा नगरमें इसीसे भयानक आग लगी है।

—इलाहाबादमें दहेज न दे सकने के कारण एक ब्राह्मण कन्याने आत्महत्या करली।

—जर्मनी पहलवान क्रेमर ने प्रसिद्ध भारतीय पहलवान गूंगाको लाहोरमें हरा दिया।

—अमेरिका में भयानक पानीकी बाढ़ आई है। जिसमें १६२ आदमी मर गये हैं। लगभग १ लाख आदमी बेघरबार होगये हैं और २२॥ करोड़ रुपयेकी हानि हुई है। अमेरिकाकी सरकारने बाढ़-पीड़ितों को ४ करोड़ ३० लाख डालरकी सहायता दी है।

हैदराबादके एक डाक्टर लक्ष्मीसुंदरी को ५००) रु० की रिश्वत लेकर एक रोगी को औषध रूपमें विष देकर मार डालने के अभियोग में फांसीका दण्ड मिला है।

—फ्रांस के एक इन्जीनियर ने एक ऐसी साइकिल बनाई है जिसे तह करके हैंडबेग में बन्द किया जा सकता है और हैंडबेग को हाथमें लटका कर कहीं भी जा सकते हैं और जरूरत पड़ने पर उतनी ही आसानी से फिट करके सवारी भी कर सकते हैं।

—हाल ही में एक दियासलाई का आविष्कार हुआ है जो दस मिनट तक जलती रहती है। यह किसी भी सख्त चीज पर रगड़ कर जलाई जासकती है। वह नम हवा और वर्षा ऋतु में भी आसानी से जल सकती है।

—अब तक सब से बड़ा परिवार जर्मनी के एक मनुष्य का है जो कि मरते समय अपने १०६१ वंशज छोड़ गया था। उस के पांच लड़के, ६७ पोते, ४४६ पड़पोते और ५५६ लकड़ पोते थे।

—मैडम डी मैंड्रूज़ ने पहले वर्ष एक लड़के को दूसरे वर्ष दो लड़कों को तीसरे वर्ष तीन, चौथे वर्ष चार, पांचवें वर्ष पाँच लड़कों को और छठे वर्ष एक साथ ही ६ लड़कों को जन्म दिया। छः वर्षों में उस को २१ सन्तानें हुईं।

—समाचार पत्र एक पैसा में दस तोला वजन भेज सकेंगे।

महाभारतसे लेकर ईस्वीसन १२०० तक का इतिहास संक्षेपमें दिया गया है। आर्यकालीन भारत में हिन्दू, बौद्ध, और जैन सम्मिलित हैं। हिन्दू बौद्ध सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ प्रकाशित होचुके हैं किन्तु जैनोंके सम्बन्ध में इस ढंगका साहित्य उपलब्ध नहीं है। इसीलिये सार्वजनिक दृष्टि रखते हुये भी लेखकने जैन प्रसंगका कुछ विशेष उल्लेख कर दिया है जिसमें कि बुद्ध अशोक, पुष्यमित्र, विक्रमादित्य, भोज, हर्षवर्धन की तरह अपना वर्द्धमान खारवेल, कुमारपाल आदि जैन महापुरुषों को भी जान सके। पुस्तक के प्रारम्भ में महाभारतका विवरण करके बादको नेमिनाथ और श्रीकृष्णके जन्मका उल्लेख किया गया है इससे पाठकों को घटनाक्रमके समझने में धोखा हो सकता है अतः इस क्रमके परिवर्तनकी आवश्यकता है। पुस्तक उपादेय है, जैनशालाओं में इसका पठन पाठन होना चाहिये।

देश विदेश समाचार

—इटली एबीसिनिया के नगरों पर बम बरसा कर आग लगा रहा है। हरार तथा जिजगा नगरमें इसीसे भयानक आग लगी है।

—इलाहाबादमें दहेज न दे सकने के कारण एक ब्राह्मण कन्याने आत्महत्या करली।

—जर्मनी पहलवान क्रेमर ने प्रसिद्ध भारतीय पहलवान गूँगाको लाहौरमें हरा दिया।

—अमेरिका में भयानक पानीकी बाढ़ आई है। जिसमें १६२ आदमी मर गये हैं। लगभग १ लाख आदमी बेघरबार होगये हैं और २२॥ करोड़ रुपयेकी हानि हुई है। अमेरिकाकी सरकारने बाढ़-पीड़ितों को ४ करोड़ ३० लाख डालरकी सहायता दी है।

हैदराबादके एक डाक्टर लक्ष्मैया को ५०००) रु० की रिश्वत लेकर एक रोगी को औषध रूपमें विष देकर मार डालने के अभियोग में फांसीका दण्ड मिला है।

—फ्रांस के एक इन्जीनियर ने एक ऐसी साइकिल बनाई है जिसे तह करके हैंडबेग में बन्द किया जा सकता है और हैंडबेग को हाथमें लटका कर कहीं भी जा सकते हैं और जरूरत पड़ने पर उतनी ही आसानी से फिट करके सवारी भी कर सकते हैं।

—हाल ही में एक दियासलाई का आविष्कार हुआ है जो दस मिनट तक जलती रहती है। यह किसी भी सख्त चीज पर रगड़ कर जलाई जासकती है। यह नम हवा और वर्षा ऋतु में भी आसानी से जल सकती है।

—अब तक सब से बड़ा परिवार जर्मनी के एक मनुष्य का है जो कि मरते समय अपने १०६१ वंशज छोड़ गया था। उस के पांच लड़के, ६७ पोते, ४४६ पड़पोते और ५५६ लकड़ पोते थे।

—मैडम डी मैलवन्यूर ने पहले वर्ष एक लड़के को-दूसरे वर्ष दो लड़कों को-तीसरे वर्ष तीन, चौथे वर्ष चार, पांचवें वर्ष पाँच लड़कों को और छठे वर्ष एक साथ ही ६ लड़कों को जन्म दिया। छः वर्षों में उस को २१ सन्तानें हुईं।

—समाचार पत्र एक पैसा में दस ताजा खबर भेज सकेंगे।

REGD No. L.
3459.

—जबलपुर में हनुमान तालाबके जैन मन्दिरसे पांच मूर्तियां और कुछ चांदीके बरतन चोरी होगये हैं। —मन्त्री, जैन-नवयुवक मंडल जबलपुर

—हिटलर ने ब्रिटेन को प्राईवेट लिखा है कि जर्मनी राईन लैण्ड से सेना वापस नहीं बुला सकता न वह समभावना की शर्त पर कोई बातचीत करने को तैयार है।

—रूस में सोने की खानें इतनी अधिक मात्रा में सोना दे रही हैं कि सन् १९३७ में ही रूस के समान धनी कोई देश न रहेगा। गत वर्ष वहां की खानों से ७४००१०००० रुपये का सोना निकला था और आगामी मो० स्टालीन का दावा है कि १९३७ में १॥ अरब का सोना पैदा होगा।

—अमेरिका में ऐसे अखबार छपने लगे हैं जिन पर किसी भी प्रसिद्ध वक्ता का भाषण उसी तरह रेखांकित होता है जैसे ग्रामोफोन पर। पाठक उस हिस्से को फाड कर ग्रामोफोन मशीन पर बजाते हैं, तो वक्ताकी ही आवाज में पूरा भाषण ज्यों का त्यों सुन लेते हैं।

—अमेरिका की एक कम्पनी ने फूलोंकी बजाय फलों का इत्र बनाना शुरू कर दिया है। यह इत्र फूलों के इत्र से सस्ता पडेगा।

—भारतमें गतवर्ष २१३ नये डाकखाने खुले।

—तांगेलकी श्रीमती शांति सुधा देवी जो सात बच्चों की माता हैं इस वर्ष तांगेले परीक्षा केन्द्र से मैट्रीक्युलेशन परीक्षामें बैठी हैं। उनका सबसे छोटा पुत्र २ वर्षकी आयुका है।

—उखाला नामके एक गांवमें जोकि बीजापुर अन्तर्गत है, एक स्त्रीने हाल ही में एक साथ ७ बच्चे पैदा किये हैं जो कि अभीतक संसार में किसी स्त्रीने नहीं किये थे।

—प्रसिद्ध योगी हरिदास अपने मस्तकको अपनी जिह्वासे छू सकता था। उसके लिये उसने कई बार आपरेशन करवाया।

—संयुक्त प्रान्तके जो चार जिले टूटने वाले थे अब नहीं टूटेंगे किन्तु कोर्ट फीस और स्टाम्प ड्यूटीमें वृद्धि करके खर्चकी पूर्ति की जायगी।

—भूतपूर्व वाइसराय लार्ड इर्विन महात्मा गांधी से पत्र व्यवहार कर रहे हैं कि आने वाले नवीन वाइसराय लार्ड लिनलिथगो से शिमला भेंट करें। सम्भवतः नये वाइसराय और महात्मा जी की भेंट होगी।

—क्रान्तिकारी विचारों के कारण सुभाषचन्द्र बोसको भारतमें आनेसे सरकार गिरफ्तार करलेगी।

—तक्षशिला के पास गरीबी से तंग आकर एक परिवार ने जिसमें तीन लडकियां और उनका पिता था आत्महत्या करली।

—देहली में रवीन्द्रनाथ टैगोरको ६० हजार रु० का गुप्तदान मिला है।

—(लुधियाना) कनोड और मरा गांवोंके बीचमें एक नामके पेड़से दूध निकलता है लोग कड़ाह भर भर कर ले जारहे हैं।

—एक जर्मन वैज्ञानिक ने शेवाल पर चित्र खींचने की कला का आविष्कार किया है। ये चित्र रंगीन भी हो सकते हैं।

—अल्यूमीनियम पर चित्र खींच कर उसे स्थायी बना देने की विधि में सफलता मिल गई है। अब अल्यूमीनियम पर खिंचे सुन्दर चित्र सैकड़ों वर्ष तक सुरक्षित रखने की विधि वैज्ञानिकों ने कार्यान्वित कर दी है।

अजितकुमार जैन के प्रबन्धसे "अकलंक प्रिंटिङ्ग प्रेस—मुलतान" से छपकर प्रकाशित हुआ।

वर्ष ३
अंक १६
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
जैन दर्शन
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस
इस अंक के पठनीय लेख
१- ध्यानयोग
२- जैन ग्रन्थों के उद्धारकी योजना
३- धर्मात्मा रेवती
४ समीक्षाका प्रतिवाद
५ जैन सत्यप्रकाश के आक्षेप
६ सर्वज्ञ ज्ञान
७ महावीर संदेश
८ कांग्रेसका अधिवेशन
९- सामयिक चर्चा
वार्षिक ३) एकप्रति ≡)

जैन समाचार

निवेदन— गत १८ वे अंक की 'मायाजल' शीर्षक अपूर्ण गल्प आगामी अंक में पूर्ण की जायगी।

—उपहार ग्रन्थ प्राय: तैयार होचुका है। केवल ग्रन्थकर्ता स्व० पं० भागचन्द्र जी का परिचय देना अवशेष है जो महानुभाव उनका जीवन चरित्र जानते हों, संक्षिप्त रूपमें लिख भेजनेकी कृपा करें। संस्मोरक भाई इस कार्यमें हाथ बटावें, क्योंकि पं० भागचन्द्र जी अधिकतर वहीं रहे थे। —मैनेजर जैनदर्शन।

—स्वामी कर्मानन्दजी लिखित 'वैदिक ऋषिवाद' पुस्तक प्रकाशित होगई है। इसमें आर्यसमाजी नेताओं को प्रभावित करने के लिये बहुत कुछ सामग्री है। पृ० संख्या ११६, मू० ।) है।

—मैनेजर दि० जैन शा० संघ अम्बाला छावनी।

मुलतान— श्रीमान बा० ज्ञानचन्द्र जी जैन जूनियर सब जज की अध्यक्षता में सभा करके महावीर जयन्ती समारोहके साथ मनाई गई और जयन्तीकी सरकारी छुट्टी के लिये प्रस्ताव पास किया गया।

रोहतगढ़—जयन्ती मनाने के लिये श्रीमान सेठ इन्द्रचन्द्र जी वैद्य के सभापतित्व में विराट सभा हुई आपने सबको प्रीति भोज दिया। नगर की सड़कों पर अच्छी सजावट की गई। हजारों मनुष्य जुलूस में शामिल हुए।

पन्नालाल मन्त्री—जैनमित्र मंडल रोहतगढ़

देहली— जैनमित्रमंडल की ओर से गतवर्ष के समान इस वर्ष भी विशालमंडप बनवा कर महावीर जयन्ती का उत्सव बड़े समारोह से मनाया गया। रेडियो द्वारा स्वा० कर्मानन्द जी ने इस अंक में प्रकाशित 'महावीर सन्देश' सुनाया और भी कई एक विद्वानों के भाषण हुए।

रघुवीरसिंह जैन मन्त्री—जैनमित्र मंडल

वैशाख सुदी १३ १५ तदनुसार ता० ४ मई से ६ मई तक महावीर जी (पपौरा) में वेदी प्रतिष्ठा बड़े समारोह से होवेगी।

२४ अप्रेल सन १९३६ को—अक्षय तृतीया के दिन वीर सेवा मन्दिरका उद्घाटन किया जायगा। इस शुभ अवसर सादर आमन्त्रण है कि जो आत्म-कल्याण की भावना के साथ साथ जैनशासन की अथवा पीड़ित पतित मार्गच्युत जनता की सच्ची सेवा करने के लिये उत्सुक है। अब ही पधार कर लाभ उठावें। निवेदक— जुगलकिशोर मुख्तार

वीर सेवामन्दिर सरसावा

जि० सहारनपुर

—गत आश्विन के नवरात्र में स्या० म० वि० के छात्रों ने एक अहिंसा प्र० मंडल की स्थापना करके दुर्गा मन्दिर पर हजारों वर्षों से चली आई पशुबली की प्रथा को रोकने का सत्साहस किया था, बहुत कुछ सफलता भी मिली थी। हमारा वही बीज आज अङ्कुरित हुआ और काशीकी पशुबलि-विरोध समिति के वर्णाश्रम युवकसंघने इस कार्यको हस्तगत किया। और अहिंसा प्र० मंडलका पूरा सहयोग प्राप्त किया यहां तक कि स्वयंसेवक दलमें विद्यालय के ही छात्र थे, वर्णाश्रम युवक संघके तो दो-चार ही व्यक्ति थे। जहां काशी के दुर्गा मन्दिरमें नवरात्र के अवसर पर सैकड़ों पशुओं की बलि दी जाती थी, वहां इस वर्ष ५-६ बकरों की ही बली हो पाई थी। लोगोंके अत्य-धिक विरोध करने पर भी इस कार्यमें बड़ी सफलता प्राप्त हुई और जनता पर भाषण आदिका गहरा प्रभाव हुआ।

—दरबारी लाल जैन कोठिया
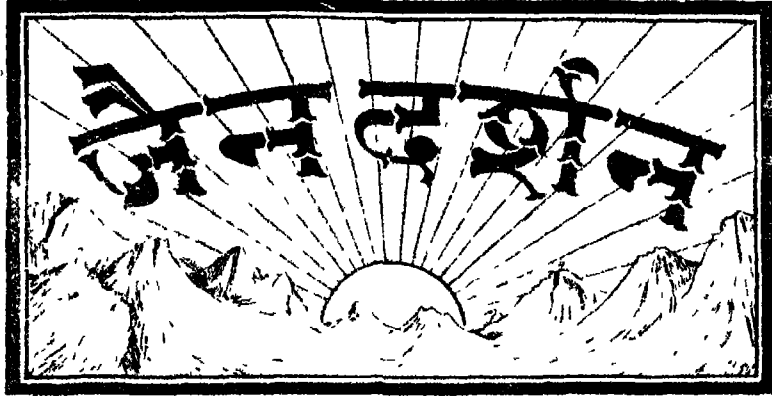
अकलंकदेवायनमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भव्याम्भवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्॥

श्री वैशाख वदी १० —बुधवार श्री वीर सं० २४६२—१६ अप्रैल १९३६

* भगवान महावीर का *

जन्म—काल

छाया था जहान बीच कालिमा अबोधतम
    जब सा जनों ने जड़ कर्म अपनाया था।
ज्वाला जाल जलने लगी थी जगती में जोर,
    भूल भूतवृन्द भवसिन्धु मंडराया था।
सांख्य, बौद्ध, वंचकों में विप्लव होने लगा,
    जाने लगा यश चिरकाल लौं उपाया था।
सत्य-शांति मुक्तिका अमोघ पाठ 'मेरु' तब
    वीर जिनवीर महावीर ने पढ़ाया था॥

—सुमेरुचन्द्र जैन 'मेरु'

ध्यानयोग

(ले० — श्रीमान पं० श्रीप्रकाशचन्द्र जी जैन, न्यायतीर्थ)

[जैन सिद्धान्तानुसार ध्यान, ध्याता, ध्येय और ध्यान के फल का विशद वर्णन ।]

एकाग्र चिन्ता-निरोध को, या चित्तवृत्ति के एकाग्र का अवलम्बन कर स्थिर होने को ध्यान कहते हैं। चित्त-वृत्ति का ही नाम चिन्ता है। उसे अनियत क्रिया से हटा कर नियत क्रिया में लगा देना निरोध कहलाता है *। किसी मुख्य द्रव्य उसकी किसी एक पर्याय या तदुभयात्मक किसी स्थूल या सूक्ष्म पदार्थ की अभिमुखता को एकाग्र कहते हैं। व्यग्रता के अभाव को ही एकाग्र समझना चाहिये। नाना पर्यायों में चित्तवृत्ति के भ्रमण को व्यग्रता कहते हैं। व्यग्रता ज्ञान का कारण है, उसमें ध्यान नहीं होता †। व्यग्रता से उत्पन्न हुआ ज्ञानही जब परिस्पन्दशून्य अग्नि की ज्वाला के समान, अपने आश्रयभूत मुख्य पदार्थके अवलम्बनको नहीं छोड़ता, तब ध्यान कहलाने लगता है ‡।

ध्यान शक्ति पर निर्भर है। जिसका संहनन जितना उत्तम है, वह उतना ही अच्छा और अधिक समय तक ध्यान कर सकता है। संहनन के उत्तम न होने पर, उपयोग के एकाग्र-स्थिर न रहने से ध्यान नहीं होता। जैनाचार्यों ने लिखा है कि उत्तम वज्र ऋषभनाराच, वज्रनाराच और नाराच—संहनन वालों के उत्कृष्ट अन्तमुहूर्त पर्यन्त अधिक से अधिक ध्यान हो सकता है, इससे अधिक नहीं +। क्योंकि चिन्ताएं दुर्धर होती हैं—अति चपल होती हैं, इससे चित्तवृत्ति का अधिक एकाग्र स्थिर रहना अशक्य है ÷। यही कारण है जिससे अर्धनाराच, कीलिक और संप्रासासृपाटिक संहनन वालों के ध्यान नहीं

* "चिन्तान्तःकरणवृत्ति । अनियतक्रियार्थस्य नियतक्रियाकर्तृत्वेनाऽवस्थानं निरोधः ।"— श्लोकवार्तिक ॥ एकमग्रं मुखं अवलम्बनं द्रव्यं पर्यायः तदुभयं स्थूलं सूक्ष्मं वा यस्य स एकाग्रः । एकाग्रस्य चिन्तानिरोधः=आत्मार्थं परित्यज्यापरचिंतानिरोधः ध्यानमुच्यते । नानार्थाऽवलम्बनेन चिन्ता परिस्पन्दवती भवति सा चिन्ता ध्यानं नोच्यते, चिन्ताया अपरसमस्तमुखेभ्यः समग्रावलम्बनेभ्यो व्यावर्त्य एकस्मिन्नग्रे प्रधानवस्तुनि नियमनं निश्चलीकरणमेकाग्रचिन्तानिरोधः स्यात् ॥"

—श्रुतसागरी

† "ज्ञानमेव ध्यानमितिचेन्न, तस्य व्यग्रत्वात् ध्यानस्य पुनरव्यग्रत्वात् ।" —श्लोकवार्तिक

‡ "ज्ञानमेवाऽपरिस्पन्दमानमपरिस्पन्दाऽग्निशिखावदवभासमानं ध्यानमिति ॥" —सर्वार्थसिद्धि

\+ "नह्युत्तमसंहननोऽपि ध्यानमन्तर्मुहूर्तादूर्ध्वमविच्छिन्नं ध्यातुमर्हः" । —श्लोकवार्तिक ।

÷ आऽन्तर्मुहूर्तात् मुहूर्तमध्ये ध्यानं भवति । न चाधिकः कालो ध्यानस्याऽस्ति । कस्मात् ? चिन्तानां दुर्धरत्वात् अतिचपलत्वाच्च । —षट्प्राभृतटीका

होता ×। क्योंकि संहनन के उत्तम न होने से चित्तवृत्ति स्थिर नहीं रहती है। सबसे उत्तम वज्रऋषभनाराच संहनन है और यही एक मुक्ति का कारण है ꩜। इसी संहनन वाला अधिक से अधिक पुण्य और अधिक से अधिक पाप कर सकता है। अन्य दो उत्तम संहनन ध्यानके कारण माने गये हैं, पर उन वाला जीव इतना दुष्कर तपश्चरण और ध्यान नहीं कर सकता, जिससे कि तत्काल ही मुक्ति प्राप्त कर सके।

शास्त्रोंमें ध्यानके चार भेद किये गये हैं। आर्त, रौद्र, धर्म्य और शुक्ल। इनमें आदि के दो- आर्त और रौद्र ये संसार के कारण होने से अप्रशस्त है और अन्तके दो-धर्म्य और शुक्ल मोक्षके कारण होने से प्रशस्त कहे जाते हैं।* आर्त और रौद्र ध्यान-ग्रस्त जीवोंके परिणाम बहुत कलुषित होते हैं। मिथ्यात्व अन्धकारसे उनके सम्यकदर्शन और ज्ञानलुप्त रहते हैं, क्रोध अधिक होता है, मान रहता है। सज्जन पुरुषोंको ठगने में उनकी बुद्धि लगी रहती है, परधनादि के लोभी होते हैं और उनका चित्त कृष्ण, नील, कपोत, इन दुर्लेश्याओंसे घिरा रहता है×। इसी कारण उनके पापकर्मका आस्रव होता है और उसके फलस्वरूप उनको अनन्त संसार में भ्रमण करना पड़ता है। धर्म्य और शुक्ल ध्यानियोंकी भावनाएं कलुषित नहीं होतीं, उनका अन्तःकरण विशुद्ध होता है। इसी कारण उनके अशुभ आस्रव नहीं होता और वे अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षय कर मुक्त होजाते हैं

जैन शास्त्रोंमें ध्यानको मुख्य इसलिये माना है कि वह आत्म-शुद्धिका आवश्यक साधन है। यदि वह आत्म-शुद्धि या कर्मक्षयका कारण नहीं तो उसका कोई महत्व नहीं। इस दृष्टिसे धर्म्य और शुक्ल ये दो ही वास्तविक ध्यान हैं, क्योंकि इन्हीं से ध्यानका सच्चा उद्देश्य सिद्ध होता है। आर्त और रौद्र ध्यानों को हम केवल बाह्य विषयोंका एकाग्र चिन्तनामात्र कह सकते हैं, आत्मशुद्धि से उनका कोई सम्बन्ध नहीं। वे सद्ध्यान नहीं, दुर्ध्यान हैं।

आर्तध्यान

दुःखमें पैदा हुई चिन्ता को आर्तध्यान कहते हैं। अनादि मिथ्यादर्शन और मिथ्याज्ञानकी वासना से उत्पन्न हुये अनेक प्रकार संकल्प-विकल्प ही इसके कारण हैं। यदि हम आर्तध्यानी मनुष्यकी दशाका विचार करें तो उसकी स्थिति बहुत ही दयनीय

× अर्द्धनाराचस्य, कीलिकाया, असंप्राप्तसृपाटिकायाश्च संहननत्रयस्यान्तर्मुहूर्त्तकालं यावच्चिन्तानिरोधधारणायामसमर्थत्वात्। —षट्प्राभृतटीका।

꩜ प्रथमं संहननं मोक्षस्य हेतुः। ध्यानस्य हेतुस्त्रितयमपि भवति। —षट्प्राभृतटीका।

* संसारहेतुत्वादार्तरौद्रयोरप्रशस्तत्वम। परयोस्तु धर्म्यशुक्लयोः प्रशस्तत्व मोक्षहेतुत्वात्। —श्लोक?

× मिथ्यात्वोकतमस्तिरस्कृतसुदृग्ज्ञानोऽधिकक्रोधवान् स्तब्धः सत्स्वपि वंचनोचितमतिर्लुब्धः परार्थेस्वपि दुर्लेश्यावशगाशयश्च भवति ध्याताऽशुभध्यानयोः। ... . ॥ —आचारसार।

मालूम होगी। उसकी बाह्य चेष्टायें और आन्तरङ्गिक विचारों का मनन करने से विदित होता है कि वह आर्तध्यान की अवस्था में बहुत व्याकुल और चिन्तित रहता है तथा अपने अशुभ परिणामों से पापकर्मोंका बन्धकर आगेके लिये भी दुःखकी सामग्री संचित कर लेता है। शास्त्रों में ग्लानि, आंसुओंका निकलना शोक, शोकजड़ता, निश्चेष्टता, मूर्च्छा, अंगोंका कांपना उत्कटता, निःश्वासता, स्वरभंगपना, कृष्णपना, कृशपना मौन रहना, सामने देखते रहना, मरणायत प्रस्वेद हिमकार रहित देखना, स्थिर नहीं रहना, रोगी होना, याचना करना, असत्य वचन बोलना इत्यादि अपने या दूसरे के स्पष्ट आर्तध्यानसे उत्पन्न हुये कार्यके चिन्ह, उसके जनाने वाले बाह्य लक्षण बताये गये हैं*। आर्तध्यानी मनुष्यके प्रत्येक कार्यमें सन्देह पैदा होने लगता है। तदनन्तर शोक, भय, प्रमाद, चित्तभ्रम, उद्भ्रान्ति, उन्माद, विषय सेवन में उत्सुकता, बार बार निद्रा, अंगों में शिथिलता खेद मूर्च्छा, और कलह दिखाई देते हैं×।

* ग्लान्यश्रुद्गमशोकशोचजडतामूर्च्छाङ्गकम्पोत्कता-
निःश्वासस्वरभङ्गकार्ष्ण्यकृशतामौनाऽभिर्वीक्षामृति-
प्रस्वेदाऽनिमिषंगास्थितिरुजायाञ्चामृषोक्त्यादयः
स्पष्टाः स्वस्य परस्य वाऽऽर्तजनितास्तज्ज्ञापकाः कायिकाः।
—आचारसार

× शङ्काशोकभयप्रमादकलहश्चित्तभ्रमोद्भ्रान्तयः।
उन्मादो विषयोत्सुकत्वमसकृन्निद्राङ्गजाड्यश्रमाः।
मूर्च्छादीनि शरीरिणामविरतं लिङ्गानि बाह्यान्यलं-
मार्ताधिष्ठितचेतसां श्रुतधरैर्व्यावर्णितानि स्फुटम्॥
—ज्ञानार्णव

इससे यह नहीं समझना चाहिये कि आर्तध्यानी के ये लक्षण हैं। अभिप्राय इतना ही है कि चिन्तातुर आर्तध्यानी की बहुधा ऐसी बाह्य अवस्था देखी जाती है। इसके अतिरिक्त जिन चिन्ताओंका देखने से पता नहीं चलता वे स्वसंवेद्य होनेसे आर्तध्यानके आन्तरङ्गिक लक्षण हैं। इनकी उत्पत्ति चार कारणों से होती है— इष्टवियोग, अनिष्ट संयोग, वेदना और निदान। इस कारणसे आर्तध्यान के भी चार भेद किये गये हैं।

१ इष्टवियोगज—मनुष्य अपने इच्छित या प्यारे पदार्थोंका कभी वियोग नहीं चाहता। संयोग रहने पर वह उन्हें हमेशा बनाये रखना चाहता है और किसी कारणवश वियोग होजाने पर उसके पुनः समागम के लिये बार २ चिन्ता कर दुःखित होता है आचारसार में श्री वीरनन्दि आचार्य ने लिखा है—

"जीवाजीवकलत्रपुत्रकनकागारादिकाद्वात्मन
प्रेमप्रीतिवशात्ममात्कृतबहिः संगाद्वियोगोदगमे।
क्लेशेनेष्टवियोगजार्तमचलं तच्चिन्तनं मे कथं
न स्याद्विष्टवियोग इत्यपि सदा मन्दस्य दुःकर्मणः"

अर्थात जिनको प्रेम और प्रीतिके वश आत्मस्वरूप बना लिया है— जिनमें प्रबल मोहसे अत्यन्त आसक्ति उत्पन्न करली है। ऐसे जीव और अजीव रूप स्त्री पुत्र, धन, मकान आदि परिग्रहोंसे वियोग होने पर इनका किसी प्रकार मुझसे वियोग न हो तथा ये हमेशा मेरे बने रहें-इस प्रकार संक्लेश परिणामों से चिन्तवन करना इष्टवियोगज आर्तध्यान कहलाता है। और यह अज्ञानी जीवके पाप कर्म के उदयसे हमेशा होता रहता है। ज्ञानार्णव में श्री शुभचन्द्राचार्यने लिखा है-

इष्टश्रुतानुभूतेस्तं पदार्थैश्चित्तरञ्जकैः।
वियोगे यन्मनः खिन्नं स्यादार्तं तद्द्वितीयकम्

अर्थात देखे, सुने और पूर्व में अनुभव में आये हुए मनको अनुरंजित करने वाले ऐसे अपने प्रिय राज्य ऐश्वर्य, स्त्री कुटुम्ब, मित्र, सौभाग्य, भोगादि के वियोग पर चित्त का खिन्न होना इष्टवियोगज आर्तध्यान है। इसी प्रकार अपने प्रिय किसी भी पदार्थ का वियोग होने पर संत्रास पीडा, भ्रम, शोक, मोह आदि के कारण खेदरूप होना, हमेशा चिन्तित रहना, इष्ट वियोगज आर्तध्यान समझना चाहिये।

इस ध्यान वाले के परिणाम बहुत संक्लिष्ट रहते हैं। किसी प्रिय स्त्री या पुत्र से वियुक्त की चित्त-वृत्ति की ओर ध्यान दीजिये वह विकल हो कर यही चाहता है कि "मेरा प्रिय मुझे कैसे मिले, उसे कहां देखूं, किससे कहूँ, उसके बिना कैसे जीवित रहूं, उसके बिना अब मेरा आधार कौन रहा और अब किसकी शरण लूँ जो मुझे इस दुःख से छुडावे, इसी प्रकार की चिन्ताओं में वह अधिक फंसा रहता है। इस ध्यान से बचना साधारण मनुष्यों के लिये बहुत दुष्कर है। अवसर आने पर देखा जाता है कि बड़े बड़े ज्ञानवान शूरवीर और धीरजों का भी इष्टवियोग से हृदय विदीर्ण सा हो जाता है धैर्य छूट जाता है और मोह जाल में फंस कर वे विलाप करने लगते हैं। एक वस्तु-स्थिति को पहचानने वाले सम्यग्दृष्टि या भद्रपरिणामी को ही यह वियोग नहीं सताता। क्योंकि वह संसार की किसी वस्तु को इष्ट और अनिष्ट रूप नहीं समझता। वह जानता है कि मनुष्य अपने राग भाव से वस्तु को इष्ट मान लेता है और द्वेषभाव से अनिष्ट समझने लगता है। वास्तव में कोई भी वस्तु स्वभाव से इष्ट या अनिष्ट रूप नहीं है। इस जीव के जब पुण्य का उदय आता है तब सम्पूर्ण वस्तुएं इष्ट रूप हो जाती हैं और इसके सुख का कारण बनी रहती हैं तथा जब पाप का उदय आता है तब वे अनिष्ट रूप हो जाती हैं और दुःख का कारण बन जाती हैं। संसार में जितने इष्ट वस्तुओं के सम्बन्ध होते हैं, उनका वियोग भी निश्चित है। कोई भी पदार्थ मनुष्य की इच्छा के अनुसार स्थिर नहीं बना रह सकता। फिर उसे स्थायी बनाने की चिन्ता या उसके वियोग होने पर शोक करना व्यग्र होना, छटपटाना, अतिशय दुःख का अनुभव करना और चिन्तित होना व्यर्थ है। यह व्यर्थ और अनावश्यक चिन्ता ही इसके दुर्ध्यान कहलाने का कारण है। सम्यग्दृष्टि के भी इष्टवियोग होता है, किन्तु उसकी यह हालत नहीं होती। इससे यह नहीं समझना चाहिये कि सम्यग्दृष्टि किसी वस्तु को प्राप्त करना नहीं चाहता, या प्राप्त हुई के बिछुड़ जाने पर उसके पुनः समागम के लिये सयत्न नहीं होता। तात्पर्य इतना ही है कि वह किसी इच्छित वस्तु की प्राप्ति के लिये व्यग्र नहीं होता और उसके न मिलने पर दुःखित और व्याकुल नहीं बनता।

२- अनिष्ट संयोगज। अप्रिय वस्तु का संयोग होने पर जो चिन्ता होती है उसे अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान कहते हैं। मनुष्य की पोच मनोवृत्ति और कष्ट असहिष्णुता ही, इसका कारण है। किसी अनिष्ट वस्तु—आपत्ति आदि की सम्भावना होते ही उसके परिणाम बहुत संक्लिष्ट हो जाते हैं। अप्रिय पदार्थ का संयोग होने पर उसके वियोग के लिये,

और पहले से वियोग रहने पर उसके कभी भी संयोग न होने की चिन्तायें बार बार हुआ करती हैं। आचारसार में श्री वीरनन्दि आचार्य ने लिखा है—

"क्रूरैः स्वर्चौरवैरिमनुजैर्व्यालैर्मृगैरापदि
प्राप्तायां गरलादिकैश्च महतां तन्नाशचिन्ताऽऽपदा।
संयोगो न भवेत् सदा कथमिति क्लेशार्तिनुन्नं मन
स्त्वार्तध्यानमनिष्टयोगजनितं जातं दुरन्तैनसः॥"

भावार्थ—दुष्ट व्यंतर, चोर, वैरी, मनुष्य दुष्ट गज, व्याघ्र, सिंहादिक पशु, और विष आदि के कारण घोर आपत्ति के आने पर, उस आपत्ति के नाश की चिन्ता रूपी आपत्ति का मेरे कभी किसी प्रकार संयोग न हो अर्थात कभी मुझे अनिष्ट के संयोग का दुःख न भोगना पड़े—इस प्रकार क्लेश की पीड़ा से दुःखित चित्त वाले मनुष्य के अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान होता है, जिसके कि पाप दुरन्त हैं।

"भुक्तैर्दृष्टैः स्मृतैर्ज्ञातैः प्रत्यासत्तिं च संसृतैः।
योऽनिष्टार्थैर्मनःक्लेशः पूर्वमार्त्तं तदिष्यते॥"

भाव यह है कि अपने स्वजन धन या शरीर को नष्ट करने वाले अग्नि, जल वायु, विष, शस्त्र, क्रूर जन्तु-स्थल के जीव, जल के जीव और बिलों के जीव, दुष्ट शत्रु, राजा आदि संकट देने वाले किसी भी अप्रिय पदार्थ का संयोग होने से या इनके संयोग को देखने, सुनने और मनमें विचारने से जो एकाग्र चिन्ता होती है, निरन्तर उन्हीं का भय लगा रहता है, वह अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान कहलाता है। अभी कुछ दिन पहले सब जगह फैली हुई प्राणघातक भयङ्कर भूकम्प की अफवाह को पाठक न भूले होंगे। भूकम्प चाहे न हुआ हो, पर किंवदन्ती का कितना प्रभाव पड़ा, नगरों में कितनी हलचल मच गई, यह किसी से अविदित नहीं है। अनेक जगह के लोग अपने मकानों को खाली कर जंगल में डेरे तानने लगे और बहुत सों ने क्या क्या किया, यह बताने की आवश्यकता नहीं। जीवन की चिन्ता सभी को थी और इससे भय खाने वालों की संख्या का कुछ पता नहीं। इसी प्रकार के किसी भी अनिष्ट योग के मिलने पर व्याकुल हो उठना—इस वस्तु से बहुत बुरा हुआ, यह मेरे लिये बहुत अहित कर है, अब यह कैसे मुझ से दूर होवे, इसके लिये क्या करूं, किससे कहूं, इत्यादि। अनिष्ट के सम्बन्ध में निरन्तर विचार करना इस आर्तध्यान के स्पष्ट चिन्ह हैं। आपत्ति या किसी अप्रिय पदार्थ के संयोग के समय समता धारण करना ही दुर्ध्यान से मुक्त होने का उपाय है। अनिष्ट संयोग सब के होता है, संसार में छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा कोई एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है, जिसके अनेक बार अप्रिय वस्तुओं का संयोग न हुआ हो। वास्तव में कोई वस्तु अनिष्ट नहीं। अपनी मनोवृत्ति या अभिलाषा के अनुकूल न होने से मनुष्य अनिष्ट की कल्पना कर लेता है, उसे अप्रिय समझ कर द्वेष करने लगता और उसका अपने से संयोग होने पर दुःखित होता है। यह पदार्थों में अनिष्ट का संकल्प करना ही जीव के पापबन्ध का कारण है। और यह पापबन्ध या अशुभकर्म ही पुनः पुनः अनिष्ट संयोगको मिलाता है, जिससे कि जीव को बहुत दुःखी होना पड़ता है। यदि पदार्थों का सत्य स्वरूप समझ लिया जाय, उन के स्वभाव को पहचान लिया जाय और अनिष्ट संयोग में पूर्वोपार्जित कर्मोदय को ही कारण मान

लिया जाय तो फिर दुःख नहीं हो सकता और इस दुर्ध्यान की सन्तति नष्ट हो सकती है।

३- वेदना जनित। वेदना या पीड़ा सब को होती है—महात्माओं और राजा महाराजाओं को रोग सताते हैं और उपसर्ग सहने पड़ते हैं। पर उन पीड़ाओं से दुःखित होना और व्याकुल होकर चिन्ता करने लगना ही पापबन्ध या संसार का कारण है। पीड़ाओं के निवारण के लिये यत्न करना निन्द्य नहीं, पर वेदनाओं के आ सताने पर उनसे कायर हो कर भय खाना और उसी तरह रोना चिल्लाना या शोक कर व्याकुल होना बुरा है। किसी रोग के होते ही मनुष्य बहुत चिन्तित होने लगता है। वह निरन्तर विचारा करता है—मेरा यह रोग कैसे मिटे अब मैं क्या करूं, किस वैद्य से इलाज कराऊं, कौनसा वैद्य मेरा रोग मेटेगा, इस रोग में मेरी कोई देवता सहायता करे तो बहुत अच्छा हो, कोई मन्त्र तन्त्र का प्रयोग कर मेरे रोग को मेट दे तो मैं अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु भी दे दूं कहां तक लिखा जाय ऐसे संकल्प विकल्पों की कुछ गिनती नहीं। न मालूम रोगी अपने मन में किन-किन विचारों को स्थान देता है। हम केवल इतना ही पहचानते हैं कि अमुक व्यक्ति बहुत चिन्तित है और वेदना या दुःख का अनुभव कर रहा है।

आचारसार में लिखा है—

'बाधासंजनितार्त्तमतिनिहितं स्वान्तं नितान्तास्थिरं
तीव्राद्विश्वपरीषहान्मम कदा विश्लेष इत्यंगिन'।
तिनस्यास्तविशिष्टवस्तुविषयज्ञानस्य न स्यात्कथं
क्लेशाल्पे मम ज्ञातु संगम इति क्लिष्टं च तत्स्यान्मनः॥"

भावार्थ—वेदना से पीड़ित होने के कारण जिस का सम्पूर्ण विषयों का विशेष ज्ञान नष्ट हो गया है, ऐसे मुक्ति हीन प्राणी का बाधाओं से उत्पन्न हुई पीड़ाओं से चिन्तित और अत्यन्त चञ्चल चित्त से तथा उग्र अनेक परीषहों से कब छुटकारा होगा—मेरे रोग और दुःख कब नष्ट होंगे, मेरे कभी किसी प्रकार थोड़ा भी क्लेश उत्पन्न न हो—इस प्रकार संक्लिष्ट परिणामों से वेदना के सम्बन्ध में चिन्तवन करना पीड़ाचिन्तवन या वेदनाजनित आर्तध्यान है। इस ध्यान वाले का मन बहुत संक्लिष्ट रहता है।

पीड़ाओं के होने पर शोकाकुल होकर चिन्तित रहना और न होने पर मुझे कभी किसी प्रकारकी शारीरिक और मानसिक पीड़ाओं की उत्पत्ति न हो, इस प्रकार व्याधियों से घबड़ाकर निरन्तर विचार करना ही इस दुर्ध्यान की उत्पत्तिका मूल कारण है। रोगों के कारणोंको पहचान कर उनका यथोचित उपचार करना और अशुभ कर्मोदयको प्रधान कारण समझ कर व्यर्थकी चिन्ता और शोक से कातर न होना ही इससे बचने का उपाय है। धीर प्रकृति वालोंको यह आर्तध्यान नहीं होता।

४- निदान-जनित— भविष्यत् में भोगादिकोंकी अभिलाषा पूर्ण करने के लिये संकल्प करनेको निदान कहते हैं और इससे उत्पन्न हुई चिन्ताका नाम निदान जनित आर्तध्यान है। यह बढ़ी हुई लालसाओं और प्रबलतम इच्छाओं का प्रकट रूप है। मनुष्यों की इच्छाओंका कुछ पता नहीं, उनका क्षेत्र अपरिमित है यदि इन्हें बिना लगामका घोड़ा कहा जाये तो कोई अत्युक्ति न होगी। हम नहीं कह सकते कि कल्पना के साम्राज्य में मनुष्य क्या २ बन जाना, और किस किस वस्तुको प्राप्त कर लेना चाहता है। चाहे उसके

विचार निष्फल जांय और वह शेखचिल्ली ही कहलावे पर वह अपनी अभिलाषाओं और कल्पनाओं का कहीं अवसान नहीं करता। शास्त्रकारों ने इन्हीं कल्पनाओं को, अनावश्यक पंचेन्द्रिय के भोगोंकी अभिलाषाओं को और दूसरे के वैभवको देखकर ईर्षासे कागई इच्छाओं को निदानका रूप दिया है। किसी आवश्यक वस्तु को पानेकी इच्छा करना और सुखके साधनों को चाहना बुरा नहीं है, पर दूसरों की सम्पत्तिको देखकर-ऐसे सुखके साधन मुझे भी मिलें, मेरे यह क्यों नहीं हुये? इत्यादि क्षणिक सुखकी निरन्तर होनेवाली कुत्सित भावनाएं और बुरे विचार ही इसे पापबन्धका कारण बना देते हैं। भोगोंके लिये देव, इन्द्र, चक्रवर्ती आदि की विभूति चाहना, भोग और उपभोगकी सामग्री की इच्छा करना, रूपकी वाञ्छा करना, ऐश्वर्यकी अभिलाषा रखना, जगत में अति कीर्ति चाहना, आदर सत्कार, पूजा चाहना, दूसरों को पीड़ा देने के लिये अपने में बल-वीर्यादिकी इच्छा करना आदि सब निदानके रूप हैं। निदान करनेवाले के इच्छित वस्तुओंकी प्राप्तिके लिये निरन्तर चिन्ता लगी रहती है। और उनके न प्राप्त होने पर उसे कष्टका अनुभव होता है और खिन्न होने लगता है। बस, इसीसे निदान बुरा कहा गया है।

आचारसारमें लिखा है—

मानोपायचयेन नीचचरितैर्भ्रान्त्वा विशालामिला-
माभाले मकराकरं च बहुशो तुच्छेच्छया प्राप्य यत्।
प्राप्यं पुण्यवता जनेन कनकं कान्तं च कान्तादिकं
तत्काङ्क्षाक्षुभिता मतिर्भवेत निदानार्तं महार्तिप्रदम्॥

भावार्थ— जो पुण्यात्मा पुरुषोंको ही प्राप्त हो सकते हैं, ऐसे सुवर्ण आदि बहुमूल्य वस्तुएं और मनोहर रूप लावण्यादि, सम्पन्न स्त्री आदि की प्राप्ति की इच्छासे क्षुब्ध मन होकर, अनेक उपायों से नीच या भ्रष्ट आचरण से, समुद्रों तक इस विस्तृत भूमण्डल पर बहुतसे विषम स्थानों में अभिलाषा और उत्सुकता के साथ भ्रमण करना—इन पदार्थों की निरन्तर वाञ्छा कर क्षुब्ध रहना निदान जनित आर्तध्यान है। और यह अत्यन्त पीड़ा देने वाला है।

यह ध्यान अनावश्यक चिन्ताओंका कारण है और कष्ट देने वाला है। अनावश्यक और क्षणिक सुखोंकी सामग्रीकी निरन्तर चिन्ता न कर कर्तव्य में संलग्न रहना ही इस दुर्ध्यानसे बचनेका उपाय है।

इस प्रकार आर्तध्यान के चार भेदोंका वर्णन किया गया। कितने ही आचार्य इसके दो ही भेद करते हैं और अनिष्ट संयोगके दूर करने में पीड़ा चिन्तवन तथा इष्ट मिलानेकी चिन्ता में निदान को गर्भित कर लेते हैं। यह ध्यान प्रारम्भमें तो रमणीक-सुखकर प्रतीत होता है, क्योंकि राग द्वेष और मोह के वशीभूत जीव आगामी परिणामकी ओर ध्यान नहीं देते। पर अपथ्य भोजन के समान फलकाल में इसका परिणाम बहुत भयंकर होता है। कृष्ण, नील और कापोत ये तीन अशुभ लेश्याएं इसकी उत्पत्ति का कारण हैं। मिथ्यादृष्टिसे छठे गुणस्थान पर्यन्त वाले जीवोंके यह होता है। पांचवें देशसंयत गुणस्थान तक इसकी चारों ही कारणों से उत्पत्ति संभव है। छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान वाले के निदान जनित आर्तध्यान नहीं होता। सम्यग्दृष्टि के कषायोंकी मंदता रहती है, इसलिये उनके कभी ही और बहुत कम होता है। सामान्यरूपसे यह तिर्यग्गति के बन्धका कारण है, पर सम्यग्दृष्टि को मिथ्यादृष्टि के समान फल नहीं देता। यह अनादिकालसे सन्ततिरूपमें चले आये संक्लेश परिणामोंके संस्कार से, स्वभावसे बिना प्रयत्न किये ही उत्पन्न होता रहता है। मुमुक्षुओंको इससे बचना चाहिये। —अपूर्ण

रूस की आदर्श शिक्षा प्रणाली

इसमें कोई सन्देह नहीं, कि दीर्घ कालव्यापी शिक्षित और सभ्य कहाने वाली ब्रिटिश जाति के शासनाधीन रहने पर भारत की निरक्षरता चोटी चूम रही है। आज भी इस अभागे भारतमें कितने ही गांव ऐसे मौजूद है, जहां सम्मन बांचने की कौन कहे, चिट्ठी भी बांचने के लिये लोग मीलों का चक्कर लगाते है। इस निरक्षरता के कारण सिर्फ देश की हानि ही नहीं हो रही है, बल्कि शासकों को भी बड़ी कठिनाई से काम लेना पड़ रहा है। यह भी निर्विवाद है, कि जो जो राष्ट्र स्वतन्त्र है, वह प्रचुर अर्थ व्यय कर अपने देश की साक्षरता बढ़ा रहे हैं। वह इस बातको अनुभव करते हैं, कि जो शिक्षित हैं, वह अपने उत्तरदायित्व, कर्तव्य और धर्म को अच्छी तरह समझते है। उन्हें इस बात का ज्ञान होता है, कि वह दूसरों की मान मर्यादा कैसे रखें, कैसे सद्व्यवहार करें, किस शिष्टाचार से पेश आयें आदि। जिस व्यक्ति में इतना भी ज्ञान नहीं, वह अपने हित की बातों को भी नहीं समझता, फिर वह मनुष्य समाज के लिये और देश के लिये अपने को कैसे उपयोगी बना सकता है, यह बात सहज में ही समझी जा सकती है। हम इस निरक्षरता को देश की सर्वमुखी उन्नति के लिये घोर बाधक मानते हैं, इतना ही नहीं, निरक्षरता अधार्मिकता की जननी और अराष्ट्रीयता की धात्री है। हम संक्षेप में आज अपने पाठकोंके सन्मुख रूसकी व्यवस्था पर थोड़ासा प्रकाश डालना चाहते है, जिसके द्वारा रूस में आगामी सन् १९३७ ई० में पचास वर्ष से कम उम्र वाले निरक्षर नहीं रह जायेंगे। इस सम्बन्ध में अब्दुलअजीज आजाद ने मास्को से पत्र लिखा है, जिसका सारांश इस तरह है।

साम्यवादी रूसकी आशा

सोवियट सरकार ने स्त्री पुरुषों को साक्षर बनाने के लिये एक नई आज्ञा निकाली है। जार-शाही के अन्त होने पर नई सोवियट सरकार रूसियों की निरक्षरता मिटाने के लिये प्राणपण से चेष्टा कर रही है, क्योंकि अखिल यूरोप में रूस ही एक ऐसा देश था, जहां निरक्षरता, मूर्खता, असभ्यता, और बर्बरता का बोल बाला था। फलतः दश वर्ष के अन्दर ही सोवियट सरकार ने चुड़ैल निरक्षरता को देश से मार भगाने के लिये आयोजन किया है। सरकार के सामने जितने थोड़े साधन और धन था, उन्हें देखते हुये दश वर्ष में भी निरक्षरता को मिटाना जरा टेढ़ी खीर थी। सुधारकी पांच वर्षीय योजनामें कोई चार करोड़ बाल-वृद्ध स्त्री-पुरुषों को लिखना-पढ़ना सिखाया गया। इस संख्याके देखने से सरकार और शिक्षा-प्रेमी, समाज-सेवक कार्यकर्त्ताओंकी तन्मयता और कार्यकी धुनका अनुमान किया जा सकता है।

सन ३७ में निरक्षर नहीं रहेंगे

उक्त नये आदेश से पता चलता है, कि रूसमें ९० फी सदी निरक्षरता कम हो गई है, किन्तु फिर भी अभी बहुतसे काम बाकी हैं। जिनसे निरक्षरता का समूल नाश किया सकता है। सरकार और समाज सेवकों की आन्तरिक इच्छा है, कि निरक्षरता और अधूरी शिक्षा बिल्कुल मिटा दी जावे। समाज

सुशिक्षित हो, सभ्य हो और ललित कलाका प्रसार हो। इन विषयोंमें रूसका माथा किसी राष्ट्रसे नीचा न हो। इसी ध्येयकी पूर्तिके लिये स्वतः सरकार ही नहीं, वरन् उसने सभी शिक्षा-सम्बन्धी संस्थाओं, समाजसेवा सङ्घों और मजदूर सङ्घोंको आज्ञा दी है, कि अपढ़ोंको पढ़ाया जाये जिससे आगामी सन १९३७ ई० में ५० वर्षसे कम उम्रवाले निरक्षर न रह जायें।

सोवियट सरकार ने कोरा आदेश निकालकर अपने कर्तव्यकी इतिश्री नहीं समझ ली है। आदेशके साथ २ उत्तरदायी अफसरों को कार्य प्रणाली के साथ इस महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने के लिये निर्देश किया गया है। शिक्षा विभागको आज्ञा दीगई है कि इस चालू वर्ष में वह ४० लाख निरक्षरों को साक्षर और ३० लाख अधूरे पढ़े हुओंको अच्छी तरह शिक्षित बनाया जावे। ट्रेड यूनियनको आदेश दिया गया है कि वह सन १९३६-३७ में १० लाख निरक्षरों को साक्षर और उनके कुटुम्ब के १० लाख बालिगों को भी लिखा पढ़ा दे। इसके साथ वह १५ लाख अर्ध साक्षरों को भी शिक्षित बनाये। सरकार ने एक कदम और आगे बढ़ाया है। उसने सैनिक केन्द्रों के अफसरों को आज्ञा दी है कि (रेड आर्मी) लाल सेना में शामिल होनेवाले १८ वर्षके नवयुवकों में न तो कोई निरक्षर रहे और न अर्ध साक्षर, वरन् सभी साक्षर और शिक्षित हों। शहरी और व्यवसायिक केन्द्रके लोगोंकी अपेक्षा किसान और मजदूर अधिक निरक्षर हैं, किन्तु इस आज्ञासे उन्हें अधिक प्रोत्साहन मिला है, सुतरां जनताको अधिक लाभ हो रहा है।

उक्त पंक्तियोंके पढनेसे स्पष्ट पता चलता है, कि सोवियट रूस अपने देशको साक्षर बनाने के लिये किस तरह तुला हुआ है। यह सच है कि साक्षर व्यक्ति ही समाज और देशके अभ्युदयके लिये कुछ कर सकता है। जो निरक्षर हैं, वह केवल भोजन कर लेने और पशु की तरह बडी सच्चाई से काम करते हैं कभी २ मूर्खता से वह अपनी और पड़ोस की हानि कर बैठते हैं। भारतकी निरक्षरता मिटाने केलिये स्वर्गीय गोखलेने तत्कालीन बड़ी व्यवस्थापक सभामें एक बिल पेश किया था, उस समय अर्थसङ्कट बता कर बिलको बालाये ताक रख दिया गया था। तब से अबतक कोई चौथाई शताब्दी बीत चली, शिक्षा प्रचार में न्यूनाधिक उद्योग होता ही चला आरहा है, फिर भी निरक्षरता देश पर अपना अकण्टक अधिकार जमाये बैठी है। अबतक सरकार स्वयं निरक्षरता को दूर करने के लिये सचेष्ट न होगी और निःशुल्क अनिवार्य शिक्षाके लिये विधान न करेगी, तबतक भारत के उत्कर्षमें तरह २ की बाधायें मूर्तिमती हो कर नाचती रहेंगी।

—वं० समाचार

जैन ग्रन्थों के उद्धार की योजना

या जगमन्दिर में अनिवार अज्ञान,
अन्धेर छयो अतिभारी ।
श्रीजिन की धुनि दीप-शिखा सम,
जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥
तो किस भांति पदारथ पांति,
कहां लहते रहते अविचारी ।
या विधि संत कहैं धनि हैं धनि हैं,
जिन बैन बड़े उपकारी ॥

'जैनदर्शन' के गतांक में पं० सुखलाल जी, प्रोफेसर हिन्दू विश्व विद्यालय काशी का दि० जैन ग्रन्थों के उद्धार के सम्बन्ध में लेख प्रकाशित हुआ है। लेख में की गई चर्चा सामयिक तथा महत्वपूर्ण है। वास्तव में अपने पुरातन ग्रन्थराजों की जो दुर्दशा अब तक हुई है और उस ओर हमारा कितना ध्यान गया है इस बात का चिंतन करने पर हृदय में असह्य पीड़ा होती है। हमारे प्रमाद के कारण कैसे २ महान रत्न नष्ट भ्रष्ट हो गये इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हमारी असावधानी के उदाहरण स्वरूप एक वयोवृद्ध विद्वान कहते थे, कि "विश्वलोचन कोष जैसा सुन्दर ग्रन्थ एक दूकानदार के यहाँसे रद्दीमें से निकालकर नष्ट होने से बचाया गया था।" थोड़ा सा यत्न करके यदि पता लगाया जाय, तो इस प्रकार की अनेक बातों पर प्रकाश पड़ सकता है। लुप्त प्राय शास्त्रों की बड़ी संख्या को देखते हुये अपने यहां की दो एक ग्रन्थ प्रकाशिनी संस्थाएं आटे में नमक के बराबर भी नहीं हैं और समय की आवश्यकतानुसार सुसंपादित ग्रन्थोंका प्रायः अभाव सा है। अतएव जैनधर्म के गौरवभूत एवं प्राणस्वरूप वीर-वाङ्मय का अन्वेषण, जीर्णोद्धार एवं प्रकाशन के लिये जितना अधिक हो सके कार्य करना आवश्यक है। प्रत्येक जैन अपने हृदय में यह समझता है और उचित समझता है कि जैन साहित्य विश्व के ग्रंथ रत्नों का अपूर्व रत्नाकर है * आचार्य श्रीमदकलंक देव ने राजवार्तिक में लिखा है कि अन्य सिद्धान्तों की युक्तियों में जो कोई बातें शोभाको धारण करती हैं यथार्थ में वे जिनेन्द्रदेव के द्वादशांग रूप महा सागर से ली गई हैं। इस पर उठने वाली इस तर्कणा के उत्तर में, कि यह क्यों नहीं कहा जा सकता कि जैन वाङ्मय में स्फुरायमान रत्न अन्य सम्प्रदायों से लिये गये हैं। यह कहा है कि जैसे प्रचुर परिमाण में पाये जाने से सम्पूर्ण रत्नों का कारण रत्नाकर ही कहा जाता है और ग्राम तथा नगरादि में पाये जाने

* सुनिश्चित नः परतंत्रयुक्तिषु स्फुरन्ति याः काश्चन सूक्ति संपदः। तवैव ताः पूर्व महार्णवोत्थिता जगत्प्रमाणं जिन वाक्यविप्रुषः ॥ श्रद्धामात्रमिति चेन्न भूयसामुपलब्धे रत्नाकरवत। स्यादेतत् आर्हतमेव प्रवचनं सर्वेषां अतिशय ज्ञानानां प्रभव इति श्रद्धामात्रमेतत् न युक्तिक्षममिति ? तन्न, किं कारणं ? भूयसामुपलब्धे रत्नाकरवत्। यथा ग्रामनगरपत्तनादिषु दृश्यमानानामपि रत्नानां तत्प्रभवत्वमध्यवसति लोकः, भूयसामुपलब्धे रत्नाकरवत्तेषां प्रभव इति अध्यवसीयते। तथा सर्वातिशयज्ञानविधानत्वात् जैनमेव प्रवचनं आकर इत्यवगम्यते।

—राजवार्तिक पृष्ठ २६५

वाले रत्न समुद्रोत्पन्न ही कहे जाते हैं उसी प्रकार सम्पूर्ण अतिशययुक्त कथनकी प्रचुरतामय जैन परमागम के होने से अन्य सिद्धान्तोंकी विशिष्ट अपूर्वताओं का वह आकर है।

यदि हम आधुनिक विद्वानों की कृतियों की ओर देखते हैं तो जैन ग्रंथोंका अत्यन्त अल्प तथा महत्व हीन वर्णन पाते हैं। इससे हमारे हृदय पर चोट पहुंचे बिना नहीं रहती। मि० मैकडानल्ड आदि अनेक प्रकांड पाश्चात्य विद्वानों ने अपने भारतीय साहित्य के इतिहास सम्बन्धी पुस्तकों में अन्य धर्म के ग्रंथों पर बहुत विस्तृत तथा गंभीर विवेचन किया है, किन्तु उनमें जैनधर्म के ग्रन्थों का नगण्य कोटि का उल्लेख है। भारतीय विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में जब वे ग्रन्थ पठन पाठन के लिये रक्खे जाते हैं और उन के अध्ययन के बल पर उपाधि प्राप्त व्यक्ति जब कभी उच्च पदको प्राप्त करके कोई पुस्तक या समाचार पत्र में लेख लिखते हैं, तो प्रसंग आने पर उनकी रचनाओं में जैनधर्म के सम्बन्ध में प्रायः सहानुभूति शून्य तथा कभी २ निष्ठुरतापूर्ण उद्गार पाए जाते हैं। इसके विपरीत बौद्धादि साहित्य के सम्बन्ध में प्रशंसा (appreciation) को पढ़ कर प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में सम्मान तथा श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रहता। यदि हम शांति के साथ में विचार करें तो हम परिणाम पर पहुंचेंगे कि इस विषय एवं संतापकारी स्थिति को उत्पन्न करने का दोष अधिकतर हमारे ऊपर है। जब हम ने अपने ग्रन्थों को छुपा कर रखा, तब भला अन्य व्यक्ति उनके सम्बन्ध में कहां तक उज्वल भाव प्रगट कर सकते हैं। यह बात अवश्य है कि एक समय था, जब कि धर्मांध मिथ्यात्वियों का महान अत्याचार होता था और परिस्थितिवश ग्रन्थों का छुपाना ही प्रत्येक का धर्म था। किन्तु अब परिस्थिति बिलकुल बदल गई है अतएव हमें अपनी नीति में भी परिवर्तन करके ग्रन्थों को संसार के समक्ष लाना चाहिये।

मितव्ययता के अनन्य भक्त-उपासक कोई कोई बन्धु ऐसा सोचते हैं कि प्रकाशित ग्रंथ ही तो बहुत हैं पहले उन्हें तो पढ़ो, फिर दूसरों की फिक्र करना। क्या उन लोगों से यह प्रश्न नहीं किया जा सकता कि आपके पास जब जीवन निर्वाह के लिये पर्याप्त सम्पत्ति विद्यमान है, तब फिर आप क्यों लक्ष्मी की आराधना करते हैं, जो कर्मबंधका कारण है उच्च कोटिके ग्रंथोंकी विपुलता समाज तथा संसार के कल्याणका कारण है। उनसे समाजका मुख उज्वल रहता है तथा विद्वानों के पारितोष करने के कारण वे अपूर्व आनन्दके कारण होते हैं। धर्म के आयतनों के रक्षण करने में धार्मिक पुरुषों को सतत प्रयत्नशील रहना चाहिये-ऐसी आचार्यों की आज्ञा है। उस ओर दृष्टि रखते हुये लोभके अनुचित आक्रमणों से अपनी रक्षा करनी चाहिये। अपने शास्त्रों में एक कथा है—"गोविन्द नामका एक ग्वाला था, जो बिलकुल अपढ़ था। उसने वृक्षकी खोखल में रखे हुये शास्त्रकी रक्षा की थी और समय पाकर एक पद्मनन्दि नाम के वीतराग मुनिराज को उसने वह ग्रंथ दे दिया। जिसके परिणाम से अन्य भव में वह कौण्डेश नामक श्रुतकेवली हुआ।" इस कारण ग्रन्थों की रक्षा करना परम कर्तव्य है। जन्मान्तरीय अपूर्व

पुण्य के प्रसाद से श्रावक के पुनीत कुल में जन्म धारण करने के कारण हमारा यह उत्तरदायित्व है कि हम प्रातः स्मरणीय अपने आचार्यों की स्फूर्तिदायिनी एवं चमत्कारिणी रचनाओंमें विद्यमान ज्ञानामृत का स्वयं रसास्वादन करते हुए मोह से मूर्छित अन्य प्राणियों के संजीवनार्थ अपना कुछ स्वार्थत्याग करके उस महान निधि को नष्ट होने से बचावें और ऐसी सद् व्यवस्था करें, जिस से संसार का महान कल्याण हो तथा जिस कल्याणकारी विशुद्ध भावनासे प्रकाण्ड प्रतिभा शाली आचार्यों ने तत्वज्ञान के अंतस्तल में प्रवेश करके अपने अनुभव रस से ओत प्रोत गम्भीर एवं शांतिदायी ग्रंथोंका प्रणयन किया था, वह सफल हो।

मिल्टन ने एक स्थान पर लिखा है A good book is the precious life-blood of a master spirit अर्थात—सद्ग्रंथ महान आत्माका जीवन रस है। जिस समय हम कुंदकुंद समंतभद्र, अकलंक आदि वंदनीय विभूतियों की रचनाओं का पाठ करते हैं। उस समय ऐसा प्रतीत होता है, मानो उन पुण्य मूर्तियों का साक्षात उपदेश सुनाई पड़ रहा हो। इस कथन में कोई अत्युक्ति नहीं है, कि जब हम भक्तिरस में निमग्न होकर देवागम, भक्तामर, स्वयंभू आदि स्तोत्रों का पाठ करते है उस समय समन्तभद्र को हम अपने में और स्तोत्रकर्ता में कोई अंतर नहीं पाते। यह ध्यान देने की बात है कि जिन तपोधन ऋषियों की चरण रज तक का अहोभाग्य न पाने वाला व्यक्ति जिसग्रन्थ की महिमा से आचार्यत्व तक का क्षण भर के लिये रसास्वाद कर सकता है, उन ग्रंथों की रक्षा न करना भयंकर से भी भयंकर भूल और अक्षम्य अपराध होगा। अतएव 'बीती ताहि विसार दे आगे की सुधि लेहु'—इस सूक्ति को दृष्टिपथ में रखते हुए कालक्षेप न करके कुछ रचनात्मक कार्य करने के विषयमें विचार करना अत्यन्त आवश्यक है।

सचमुच में 'ग्रंथोद्धार की (स्कीम) योजना-को कार्यान्वित करने निमित्त पहले तो ग्रंथों का अन्वेषण करके उन का संरक्षण करना आवश्यक है। इसके लिये सच्चे धर्मोत्साही एवं कार्यपटु व्यक्तियोंकी ग्रंथ गवेषण समिति का निर्माण करना होगा, जिस की प्रत्येक प्रान्त में शाखाएं हों, जो ग्रन्थ भंडारों में लुप्त शास्त्रों का पता लगायेगी तथा प्रकाशनादिके निमित उन शास्त्रों को प्राप्त भी कर सकेगी। उस समिति के अनेक नियमादि का दिग्दर्शन कराना यहां पर अनुपयुक्त है।

उपलब्ध ग्रंथों के प्रकाशन की समस्याको सुलझाने के लिये बहुत रुपयों की आवश्यक्ता होगी। वर्तमान आर्थिक संकट (financial defression) को देखते हुये एवं समाज की श्रद्धाकी मात्राको भी ध्यानमें रखते हुये इसकी पूर्ति होना कठिन प्रतीत होता है। हां, जैन समाजके सूर्य सर सेठ हुकमचन्द्र जी सरीखे धन कुबेर यदि इस ओर अपनी कृपा-दृष्टि डालें तो इस कार्यका संपन्न होना कोई बडी बात नहीं है। यह भी सच बात है कि सर सेठ साहिबके द्वारा धर्म के सम्पूर्ण अंगोंका पोषण होरहा है किन्तु उनके द्वारा जिनवाणी माताकी रक्षा का कोई उल्लेख योग्य कार्य अब तक ज्ञात नहीं हुआ है। इसी कारण इन्दौरकी हीरक जुबली के शुभावसर पर सबको यह दृढ़ आशा थी कि दानवीर रावराजा अब निश्चय से

जिनवाणी की सेवा करके अपूर्व और चिरस्मरणीय कार्य करेंगे (जैसा कि हालमें बड़ौदा महाराजने एक करोड़ का अपनी जुबली के अवसर पर दान देनेका आदर्श कार्य किया है) किन्तु अब तक वह आशा फल वती न हो पाई। फिरभी शास्त्रों के रहस्य एवं मर्म को समझनेवाले सर सेठ साहब निकट भविष्य में इस समस्या पर अवश्य विचार कर समाज को कृतार्थ करेंगे। सचमुच जिनवाणी की वर्तमान दशा का सुधार दानवीरों की दानशीलता पर ही हो सकता है।

हमारे विचारसे परिस्थितिवश अन्य योजना पर भी विचार करना उचित प्रतीत होता है। जैनाचार्यों ने शास्त्रों के महत्वका वर्णन करते हुये यह कहा है कि श्रुत देवता और जिनेन्द्र देव में कोई अन्तर नहीं है। सूरिकल्प विद्वान आशाधर जी ने लिखा है—

ये यजन्ते श्रुतं भक्त्या ते यजन्तेऽञ्जसा जिनम्।
न किंचिदन्तरं प्राहुराप्ता हि श्रुत-देवयो ॥

अर्थात जो भक्ति पूर्वक श्रुत शास्त्रकी पूजा करते हैं। वे भगवान को पूजते हैं, कारण भगवानने शास्त्र और देवमें कोई भी अन्तर नहीं बताया है।

इस कारण जो दैविक संपत्ति मन्दिरों की व्यवस्था देवार्चना आदिके काममें लाई जाती है। उससे यदि शास्त्रों का जीर्णोद्धार किया जाय तो वह कैसे अनुपयुक्त हो सकता है। देवताके लिये प्रदत्त नैवेद्यका प्रमादवश ग्रहण करना अंतराय कर्मका कारण होने से वर्जनीय कहा गया है।*

इस कारण यदि देवद्रव्यको आवश्यकतानुसार ग्रंथोद्धार में व्यय किया जाय तो हानिकी तो बात ही दूर परमागमके प्रकाशन द्वारा प्रभावनांग का प्रधानपोषक होनेसे परम पुण्यका कारण होगा। यह एक आनन्दकी बात है कि अपने यहांके कई स्थानों के जिनालयों में अच्छी सम्पत्ति विद्यमान है। बड़े शहरों के मन्दिरों के भवन किसा मौके के स्थान पर हैं, वहां किरायेकी अच्छी आय होती है। व्ययके योग्य कोई आवश्यक विशेष काम न देखकर नवीन २ आवश्यकताएं उत्पन्न की जाती है। जैसे यत्र तत्र प्राचीन कामको अलग करके शोभा निमित्त नूतन टाईल संगमरमर, रंगाई (Painting) आदि के द्वारा संचित सम्पत्ति के व्यय करनेका मार्ग अंगीकार किया जाता है। इस प्रकार व्यय किये जाने पर भी मन्दिरों में अच्छी मात्रामें द्रव्य बचता है। इस बातके समर्थनमें सिवनी, जबलपुर, नागपुर आदि नगरों का उल्लेख करना मात्र पर्याप्त होगा।

यदि सम्पन्न एवं समर्थ जिनालयों के व्यवस्थापकों के हृदय में प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा प्रकृत कार्य (ग्रन्थोद्धार) की आवश्यकता, समीचीनता एवं उपादेयता अंकित कर दी जाय तो अनायास अल्पकाल में ही एक अच्छी रकम एकत्रित की जा सकती है और शास्त्रोद्धार की योजना को शीघ्र ही क्रियात्मक रूप दिया जा सकता है।

अतएव यदि समीपवर्ती ग्रीष्मावकाश में या कदाचित इसमें बाधा हो तो अन्य उचित अवसर में कुछ प्रभावशाली विद्वान पर्यटन करके निर्माल्य के यथार्थ स्वरूप सम्बन्धी शल्यका निवारण करते हुये अपने व्यक्तिगत प्रभावका उपयोग करें तो निश्चय से बहुत

* प्रमादाद्देवतादत्तनैवेद्यग्रहणं तथा   ५६ ॥
इत्येवमन्तरायस्य भवन्त्यास्रवहेतवः ॥५८॥
तत्वार्थसारका आस्रव प्रकरण

थोड़े समय में भली भांति कार्य हो सकता है। उदाहरणार्थ यदि पूज्य पं० गणेश प्रसादजी वर्णी, न्यायालंकार पं० मक्खनलाल जी एवं पं० देवकीनन्दन जी शास्त्री सदृश समाज के मान्य विद्वान अपने उत्तरदायित्वको ध्यान में रखते हुये थोड़ा भी श्रम करें तो इनकी सामूहिक शक्ति से कार्य सम्पन्न होजायगा। ऐसा विश्वास है। यह भी विश्वास है कि वे मान्य विद्वान इस पुण्य कार्यके करने में पूर्ण सहमत होंगे। क्या ही अच्छा होगा यदि उपरोक्त विद्वान महानुभाव हमारे निवेदन पर ध्यान देकर इस पवित्र योजना को सफल करने के हेतु अविलम्ब कार्य करने में लग जावें। इस कार्य में भिन्न २ प्रान्तके प्रभावशाली एवं धर्मानुरागी नेताओं का सहयोग भी आवश्यक है। आशा है उपरोक्त योजना प्रत्येक पक्ष वाले व्यक्ति को मान्य होगी। अतएव पार्टी भेद (दलबन्दी) को भुलाकर समाजमात्र के सहयोग से यह कार्य होना चाहिये। किसी पार्टी या सभाके द्वारा इस कार्यका नेतृत्व धारण करना उचित नहीं प्रतीत होता। क्योंकि कदाचित् पारस्परिक विषमता एवं विरोध उत्पन्न होजाय तो रंगमें भंग होते देर न लगेगी।

जब ग्रन्थ और नगद नारायण होजाय तब ग्रन्थ प्रकाशन होना सरल है, तथा आधुनिक पद्धति (Modern Style) से ग्रन्थों को संपादित करने में कोई अड़चन न पड़ेगी। इतनी बात अवश्य स्मरण के योग्य है कि यदि लोलुपी और स्वार्थी व्यक्तियों से बचा करके स्वार्थ त्यागी व्यक्ति द्वारा यह काम किया जाय तो भविष्यमें बिना बाधा के स्थायी कार्य सम्पन्न हो सकेगा और रकम भी सुरक्षित रहेगी। आशा है समाजके विचारशील धीमान एवं श्रीमान इस समस्या पर गहरा विचार करेंगे और अपनी सहानुभूति एवं सहयोगादि के द्वारा इस कार्य को सफल बनाने के हेतु अपनी कोई विशेष स्कीम पेश करेंगे, तो उस पर भी विचार किया जायगा। हमारी रायमें सहमत होने वाले सज्जन, यदि अपना निश्चय हमारे पास भेजेंगे तो बड़ी कृपा होगी, इससे इस योजना पर विशेष विचार किया जा सकेगा।

विनीत—

सुमेरचन्द्र दिवाकर न्यायतीर्थ शास्त्री, B.A.LL.B

सिवनी।

नोट— अन्य पत्र सम्पादकोंसे नम्र निवेदन है कि वे इस लेखको प्रचारकी दृष्टिसे अपने पत्रों में प्रकाशित करके कृतार्थ करें।

स० नोट— श्रीयुत दिवाकर जी की सम्मतिसे हम पूर्ण सहमत हैं। अनावश्यक देवद्रव्यका उपयोग जिनवाणी माता के उद्धार में यदि किया जावे तो धन संग्रह की भी आवश्यकता न पड़ेगी और देवद्रव्यके सदुपयोग के साथ ही साथ जिनवाणी माता का भी उद्धार होजायगा। इस प्रस्तावसे प्रायः सभी पंचायतें सहमत होंगी, ऐसी हमें आशा है। हां, जिन धनिकों के यहां देवद्रव्य जमा है, वे यदि सहमत न हों तो कोई आश्चर्य नहीं है। यदि मुख्य मुख्य मन्दिरोंके अधिकारियों की सेवा में एक डेपुटेशन भेजा जाय तो इस दिशा में बहुत कुछ सफलता मिलने की आशा है। दिवाकर जी को इस प्रयत्नमें संलग्न होजाना चाहिये सहायकों की कमी न रहेगी।

नयन

(ले०—श्री० चांदमल जी जैन शास्त्री बी० ए०)

१

हे नयन ! तुम हो चपल, जाते भगे-
योजनों तक दौड़ते, रुकते नहीं।
नाप डाले गिरि-सरित्-सागर सकल,
दम न लेते हो कभी थकते नहीं॥

२

देखते हो रँग बिरंगे चित्र तुम,
स्वप्न में भी तुम न लेते हो विराम।
मीनवत् चंचल सदा रहते हो तुम,
रोकना तुम को नहीं है सहज काम॥

३

पर, समाकुल, उन्मन, गत-धैर्य-से-
आज क्यों ? किस लग्नमें हो तुम लगे।
किस रूपके तुम हो उपासक सच कहो ?
किस प्रणय की राग में वा हो पगे॥

४

तन तुम्हारा लालिमा से श्याम है,
मुग्ध किस सौंदर्य पर तुम हो रहे ?
किस मधुर उल्लास के माधुर्य में-
आज अविरल शान्ति अपनी खो रहे।

५

हो कभी चिन्तित-से तुम ढूंढते,
मानो कहींपर वस्तु प्रिय है गिर पड़ी !
निस्तेज-से तुम हो रहे, खो स्व-प्रभा,
उन्माद-वश वा तुम किसीसे जा लड़ी॥

६

कपटी ! तुम्हारी चालका कुछ भी पता
मैं सका नहिं पा, बड़ा हैरान था।
'मृग-नयनसे हे नयन ! तुम जा लड़े',
मुझको नहीं अब तक तनिक यह ध्यान था।

७

किन्तु, अब अवगत किया तव सर्व वृत्त,
पापमय तुम पंक में हो फंस रहे।
बांध कर मनको विचार तुम बलात्,
क्रूर ! उसही ओर हा ! ले जा रहे॥

८

पर, समझते रूप तुम जिसको नयन,
याद रक्खो ! वह प्रलोभन है प्रबल।
इस लोभ में फंस कर बली लंकेश ने—
खो दिया था विपल में जीवन सकल॥

९

हे नयन ! सोचो ज़रा पर-वस्तु पर—
मन चलाने का तुम्हें अधिकार क्या ?
भाग्य पर रह कर करो सत्कर्म, तो--
प्राप्त हो नहिं देव-दुर्लभ वस्तु क्या ?

* —

धर्म प्राणा रेवती

(लेखिका श्रीमती सौ० सरदारदेवी जी जैन)

(१)

विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में मेघ कूट नाम का बड़ा सुन्दर नगर है। उन दिनों वहां राजा चन्द्रप्रभ राज्य करते थे। बहुत समय तक राज्य को सुख भोग लेने पर एक दिन उनके मन में तीर्थ-यात्रा का विचार हुआ। अपने पुत्र चन्द्रशेखर को राज्य दे, वे यात्रा के लिये चल दिये और अनेक देश देशान्तरों में भ्रमण करते हुये दक्षिण मथुरा में आ पहुंचे। यहां उन्हें गुप्ताचार्य महाराज के दर्शनों का लाभ हुआ। इन महाराज के धर्मोपदेश से उनके जीवन में विचित्र परिवर्तन हुआ। परिणामों में उदासी आ जाने से वे केवल एक विद्या को अपने पास रख, अन्य सब परिग्रह का त्याग करके क्षुल्लक बन गये। कुछ दिन वहां ही रहने के पश्चात उन्हों ने उत्तर-मथुरा की ओर यात्रा करने का विचार किया। इसके लिये अपने गुरु से आज्ञा चाहते हुये उन्हों ने सविनय कहा—हे स्वामिन ! मेरा उत्तर-मथुरा की ओर यात्रा करने की इच्छा है आप तदर्थ अनुमति दीजिये और यदि वहां किसी से कुछ कहना हो तो वह भी आज्ञा कर दीजिये। यह सुनकर श्री गुप्ताचार्य ने उत्तर दिया—वीतरागी साधुओं को रागद्वेष नहीं होता, हमें किसी को कुछ संदेश भेजने की जरूरत ही नहीं है। हां यदि तुम वहां जाओ तो 'सुव्रत' नाम के मेरा मुनि को हमारा नमस्कार कहना, वे बड़े ज्ञानी और तपस्वी हैं। तथा वहां ही रहने वाली 'रेवती' रानी को धर्मवृद्धि कहना वह सम्यग्दृष्टि है, उसे धर्म का सच्चा श्रद्धान है। इसके अलावा हमें और कुछ नहीं कहना। यदि तुम उस ओर यात्रा की इच्छा करते हो तो इसमें हमारी ओर से कोई प्रतिबन्ध नहीं।

क्षुल्लक-वेष धारी श्री० चन्द्र प्रभ ने उत्तर-मथुरा की ओर प्रस्थान किया और विचारा कि उत्तर-मथुरा के प्रदेश में अनेक सुप्रसिद्ध और अपने को ज्ञानवान सिद्ध करने वाले आचार्यों के रहते हुये श्री गुप्ताचार्य ने इन दो—सुव्रत मुनि और रेवती रानी—ही को नमस्कार और धर्मवृद्धि क्यों कहलाया ? क्या ये ही वहां आचार्य महाराज को सर्वोत्तम जचे हैं ? इस में कुछ कारण अवश्य होना चाहिये। ठीक तो तब हो, वहां चलकर इनकी परीक्षा की जाय और सत्य को पहचाना जाय।

(२)

कुछ दिनोंमें उत्तर मथुरा आ पहुंचने पर ये पहले 'सुव्रत' नामक मुनिराज से मिले और अपने गुरु महाराज गुप्ताचार्य का उन से नमस्कार कहा। सुव्रत महाराज का अपने प्रति विशेष वात्सल्य देख कर क्षुल्लक जी ने उन्हें पहचान लिया और उनकी धर्म बन्धुता की मन ही मन सराहना करने लगे। तदनन्तर ये अन्य आचार्यों की परीक्षा करने के लिये निकले और भव्यसेन आदि बहुतोंसे मिले भव्यसेन ग्यारह अंग के ज्ञानी प्रसिद्ध थे, पर वे अहङ्कार में चूर थे और किसी और किसी को कुछ नहीं समझते थे। उन्हों ने इनसे मीठे शब्दों में दो बातें भी नहीं कीं। उन की प्रवृत्ति निन्द्य थी। जैनागम के विरुद्ध उनकी अनेक क्रियाएं देख कर इन्हें उन

के मिथ्या दृष्टि होने में कुछ भी सन्देह नहीं रहा। इन्होंने निश्चय कर लिया कि सब पाखण्डी हैं, सच्चे धर्मको नहीं पहचानते. अपनी महिमा दिखाने के लिये इन्होंने यह सब ढोंग धारण कर रक्खा है। मेरे गुरु महाराज सत्य को पहचानने वाले हैं, उन्हें इन का यह सब मिथ्या और जैनागम के विरुद्ध निन्द्य आचरण विदित है। क्या इसी लिये मेरे तीन बार पूछने पर भी गुरु जी ने इन से कुछ नहीं कहलाया और धर्मवत्सल श्री सुव्रत महाराजको ही वन्दना कह देने के लिये कहा। इन को मैं अच्छी तरह पहचान चुका. अब मुझे रानी रेवती की परीक्षा करनी चाहिये और उस के दृढ सम्यक्त्वको देखना चाहिये।

(३)

परीक्षा के उपायों का चिन्तन करते हुए इन्होंने अपने विद्याबल का प्रयोग करना उचित समझा क्यों कि सामान्य उपायों से रानी की परीक्षा करना कठिन था। ये दूसरे ही दिन शहर के बाहर पूर्व की ओर जंगल में कमल के आसन पर विराजमान चतुर्मुख ब्रह्मा का रूप धारण कर वेदों का उच्चारण करने लगे। अपनी वन्दना के लिये देव और दान वों की कल्पित मूर्तियां दिखाने में भी इन्होंने भूल नहीं की। यह वैभव और रूप देखकर तथा अन्य लोगों से किम्बदन्ती सुनकर शहर के सभी लोग वहां पहुंचे। अदृष्ट पूर्व मूर्ति देख कर राजा तक भी उस के पाँवों पड़े और उपासना करनेलगे। रेवती कोलोगों ने बहुत कहा और राजाने भी आग्रह किया. किन्तु वह नहीं गई। उसे सच्चा श्रद्धान था। वह मायावियों के माया जाल में फंसने वाली नहीं थी। वह धर्मप्राणा थी, धर्मसेवा में अपने जीवन को लगाने केलिये तयार थी: पर धर्मके नामपर कभी नहीं मरती थी। संसार के अन्य अन्धश्रद्धानियों को उपासना करते देख वह नहीं ललचाई, उसने अन्य लोगोंके उलाहने के भयको छोड दिया था। चाहे संसार के सब मनुष्य मिलकर उसे अधार्मिक क्यों न करार दें, अज्ञानियों के अधार्मिक ठहराने की उसे तनिक भी चिन्ता नहीं थी। मायावियों और मिथ्यादृष्टियों की उपासना करना तो दूर रहा, वह उनके पास जाना भी निष्प्रयोजन और अनावश्यक समझती थी। इस अवसरपर भी उसने ऐसा ही किया और अपने सम्यक् श्रद्धान का परिचय दिया। ब्रह्माके रूपमें अवस्थित मुनिकी उपासनाकी कौन कहे, वह उसका स्वरूप देखने के लिये भी नहीं गई। जो कोई उसे वहां जाने के लिये बाध्य करता, उसे वह समझाने लगती—देखो, ब्रह्मा नामक पदार्थ दुनियांमें स्वतन्त्र नहीं है। सम्यक्दर्शन ज्ञान और चारित्र को धारण करने वाले जिनेन्द्र ही सच्चे ब्रह्मा हैं। वे ही मोक्षका मार्ग बताने में समर्थ हैं। उन्हीं से जीवोंका कल्याण हो सकता है और हित-कर उपदेश मिल सकता है। आज संसार में अज्ञान का अन्धकार छाया हुआ है। अज्ञानी मनुष्य सत्यको नहीं पहचानते। पाखण्डी लोग धर्मकी आड़में अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं और धर्मके नाम पर मोहित होने वाले मनुष्य सत्यकी परीक्षा करना भूल जाते हैं मैं उस मिथ्यादृष्टि के पास कभी न जाऊंगा। यदि कोई सच्चा साधु आवे तो मैं उसकी उपासना और यथाशक्य सेवा करने के लिये सर्वदा उद्यत हूं।

इससे रेवती को अपने जालमें न फँसा देख क्षुल्लक जी ने फिर विष्णुका रूप धारण कर लिया और अपने चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कर गरुड़ पर सवार हो दक्षिण दिशामें अपना

वैभव दिखाया। इस आश्चर्यजनक घटना को देख कर सब लोग चकित होगये और उसकी उपासना के लिये अपने घरके कार्योंको छोड़ छोड़ कर जाने लगे। बाहर के लोगोंने समझा ये साक्षात् विष्णु-भगवान हैं। जिनकी दिव्य मूर्ति और पुण्यातिशयसे लभ्य दर्शनोंका हम शास्त्रोंमें वर्णन सुनते थे, उन्होंने आज यहां अवतार लेकर इस भूमिको पवित्र किया है और हम लोगों को अपना जन्म सफल बनानेका सुअवसर दिया है। हमें इस दिव्य मूर्तिके दर्शनों से अपने को वञ्चित नहीं रखना चाहिये। यही विचार कर नगर-निवासी लोग बड़े भक्ति भावसे वहां जाते और स प्रीत प्रणाम कर—अपना शिर जमीन से रगड़-रगड़ कर—अपने को धन्य मानते—अपना जन्म सफल समझते। उन्हें इस बात का क्या विचार था कि देव कौन हो सकता है? सच्चा देव कौन है? और हम देव के नाम पर किस ढोंगी की सेवा करने चले हैं? अस्तु, लोगों के अनेक प्रकार से समझाने पर भी रेवती विष्णुका रूप धारण करने वाले उस क्षुल्लक की मूर्ति को पूजने के लिये नहीं गई। सुमेरु डिग सकता था, पर उसका अपने श्रद्धानसे विचलित होना अशक्य था। उसे समझाने बुझाने की चेष्टा बिल्कुल निष्फल थी। जो कोई उससे अधिक कहता सुनता, उसे वह समझाती—

क्या तुम परमात्मा के स्वरूपको पहचानते हो? जानते हो? असाधारण गुणवाले मनुष्य को पुरुषोत्तम कहते हैं और वही सच्चा विष्णु है। यदि उत्तम गुणकी ओर ध्यान दें तो राग-द्वेषके परित्याग के अतिरिक्त मनुष्यमें कोई उत्तम और असाधारण गुण नहीं होता। मेरी समझ में वीतराग पुरुष ही यथार्थ विष्णु है और सच्चा देव है। उसीके गुणोंकी मैं आराधना, भक्ति और विनय करूंगी, मुझे पाखण्ड नहीं सुहाता। इस विष्णु की बातें और यथार्थताको न पहचानने वाले लोगों की श्रद्धा देखकर मुझे आश्चर्य होता है। अज्ञानी प्राणी सांसारिक सुख और वैभव की मृगतृष्णा में हितके उपदेशको भी नहीं सुनते। सत्य बात उन्हें बुरी लगती है और झूठी प्रतीत होती है। क्या किया जाय, प्राणियों के दैवकी गति विचित्र है। जिसका जैसा होनहार है, वैसा ही होकर रहेगा। अपनी मूर्खता पर आप पछतावेंगे, —दोष किसको दूं। इस प्रकार अनेक तरहसे संबोधित कर रेवती पुनः अपने कार्यों में संलग्न हो जाती और उस मायावी मूर्तिका विचार भी नहीं करती।

अपनी दोनों चेष्टाओं को निष्फल देखकर तीसरी बार रेवती की परीक्षा के लिये क्षुल्लक जी ने अपनी विचित्र विद्याका प्रयोग किया। अबकी बार वे महेश रूप बने—बैल पर बैठे और बामाङ्ग में पार्वती, जटा-जूट, शिर पर अर्ध चन्द्र आदि धारण कर अपने उपासक गणों सहित पश्चिम दिशामें प्रकट हुआ। दूर २ से दर्शनके लिये यात्री आने लगे। किन्तु उसी शहर में रहने वाली रेवती नहीं गई। इस बार भी जब लोग आग्रह करने लगे तो रेवती बोली—संसार का कल्याण करने वाले, जगत् के जीवों को उनके हित का उपदेश देने वाले, सबके अकारण बन्धु वीतराग सर्वज्ञ देव ही सच्चे शंकर हैं। उनके अतिरिक्त मैं अन्य किसी शंकर के रूपको सच्चा नहीं मानती। यदि मेरा श्रद्धान पक्का है तो आप लोग जिसकी उपासना कर फूले नहीं समाते, वह सब किसी पाखण्डी का मायाजाल है। विचारशील लोगों को

पाखंडों से बचना चाहिये।

अब अन्य किसी उपाय से रेवती को अपने श्रद्धान से विचलित न होता देख क्षुल्लक जी ने अब की बार विशेष रूप से परीक्षा करना चाहा। उन्हों ने सोचा रेवती को जैन सिद्धान्त पर पूरा विश्वास है और वह वीतराग के अतिरिक्त अन्य किसी को सच्चा देव नहीं मानती। यदि वीतराग का रूप धारण किया जाय तो जहां तक सम्भव है वह उसकी अभ्यर्थना के लिये आये बिना न रहेगी और इस से उस के सच्चे झूठे श्रद्धान की सब परीक्षा हो जायगी यह विचार कर उन्हों ने विद्या की माया से उत्तर दिशा में समवशरण की रचना प्रदर्शित की और उस में अष्ट प्रातिहार्य युक्त देव, मनुष्य, विद्याधर, मुनिगण आदि से वन्दना किये जाते हुये अरहन्त के स्वरूप को प्रकट किया। इस अलौकिक विभूति और स्वरूप को देखकर सब लोग मोहित हो गये। कोई ही मनुष्य ऐसा रहा होगा जो तीर्थंकर की इस माया मूर्ति को वंदने न गया होगा। राजा और सिद्धि प्राप्त भव्यसेनाचार्य तक भी विश्वास कर उसकी पूजा करने लगे। अब की बार सबको विश्वास था कि रानी रेवती भी अवश्य ही आवेगी। क्योंकि वह जैनधर्म पर श्रद्धान रखती है। एक तीर्थंकर जैसे महापुरुष—भगवान सर्वज्ञ देव के अपने शहर के पास ही आकर समवशरण में विराजमान होते हुए वह दर्शन के लिये आये बिना नहीं रह सकती। किन्तु लोगों को विदित हुआ कि रानी रेवती तो यहां भी नहीं आई। सब मनुष्यों ने आश्चर्य किया कि बात क्या है? रानी रेवती क्यों नहीं आती है। यहां तो जैन ही नहीं सब ही धर्मानुयायी दर्शनार्थ आये हुए हैं। रेवती को तो बल्कि अपने देव और गुरु की उपासना के लिये सब से पहले आना चाहिये था। कारण क्या है क्या उसे किसी पर विश्वास ही नहीं है क्या वह किसी को सच्चा ही नहीं मानती उसी में शक क्या है जो जहां राजा तक पहुंचते हैं और वहां जाने के लिये उस से बार २ प्रेरणा करते हैं फिर भी वह किसी धर्माचार्य के दर्शनों के लिये नहीं आती। इन की बात में यह निन्द्य किंवदन्ती सब जगह फैल गई और रानी रेवती के कानों तक भी जा पहुंची। इसी अवसर पर दर्शनार्थ जाने के लिये राजा ने पुनः कहा और परिजन के सब लोगों ने भी विशेष प्रेरणा की कि आप को एक बार दर्शनों के लिये तो वहां अवश्य जाना ही चाहिये। आप जैनधर्म पर श्रद्धा रखती है और इस समय जैनों के तीर्थंकर ही आये हुये हैं। आप के न चलने से धर्म की प्रभावना कैसे होगी? क्या आपको धर्मपर श्रद्धा ही नहीं है? इत्यादि। रेवती सहनशील थी, मूर्ख नहीं थी। उस ने शास्त्र पढ़े थे। उन के मर्म को समझा था, धर्म को पहचाना था। उसकी आवश्यकता समझती थी और उस पर दृढ़ श्रद्धा रखती थी। वह किसी से यों ही सुनकर श्रद्धान करने वाली और व्यर्थ की बातों पर ध्यान देने वाली नहीं थी, तो भी अपने सम्बन्धियों और निकट परिजनों के मुंह से अपने सुदृढ़ और सच्चे श्रद्धान के लिये इस प्रकार के अनुचित शब्द सुनकर उस से न रहा गया उस ने कहा:- तुम लोग कुछ नहीं पहचानते सर्वज्ञ देव के सत्यार्थ आगम की आज्ञा को नहीं जानते, इसी लिये ऐसा करते हो। अन्ध श्रद्धानी बने हुए हो, धर्म के लिये नहीं किन्तु धर्म के नाम पर मरते

हो। देखा देखी अच्छी नहीं। तुम लोगों को यह अन्धश्रद्धा अवश्य ही पथभ्रष्ट कर देगी, अपने कर्तव्य मार्ग से गिरा देगी। तुम करते क्या हो, समझ में नहीं आता। जैन शास्त्रोंमें लिखा है—नव नारायण होते हैं, ग्यारह रुद्र होते हैं, और चौबीस तीर्थंकर होते है। ये सब भूतकाल में हो चुके। अब दसवां नारायण, बारहवां रुद्र और पच्चीसवां तीर्थंकर नहीं हो सकता। मुझे जिनेन्द्र के वचनों में दृढ़ श्रद्धान है तुम यह जो कुछ देखते हो किसी मायावीका माया जाल है। मुझे इस में श्रद्धान नहीं कि अब कोई पच्चीसवाँ तीर्थंकर होगा। तुम लोगों से भी मैं कहती हूं कि बाहरी रंगढंग देख कर किसीपर श्रद्धान मत करो सत्य की परीक्षा करो इस संसार में ठग बहुत हैं। लोगों के रिझाने और अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिये वे अनेक रूप बना सकते हैं। बुद्धिमानों को इस पर विश्वास न करना चाहिये। तुम ने क्या कहा कि वह समवशरण की रचना है और साक्षात् अर्हन्त विराजते हैं। फिर कभी ऐसा न कहना। वह सच्चा देव कभी नहीं हो सकता, यह मैं तुम्हें पहले समझा चुकी हूँ। समवशरण की रचना और देवों का आना, छत्र चमर आदि विभूति और प्रातिहार्यों का होना तो माया से इन्द्र जालिये भी बना सकते हैं। उन्हें देखकर ही किसी को सच्चा मत समझ लेना। नहीं तो ठगे जाओगे और अन्त में पछताओगे। इस तरह रेवती की बातें सुन लोग यह तो नहीं समझे कि इसे सत्य धर्म का श्रद्धान है, प्रत्युत वे मन ही मन कहने लगे रेवती का चित्त विकल हो उठा है? यह पागल हो गई है या इस की धर्म पर से श्रद्धा ही उठ गई है।

इस षड्यन्त्र से भी रेवती को विचलित न हुआ देख, उसकी सच्ची सेवा वृत्ति की परीक्षा के लिये क्षुल्लक जी व्याधि से क्षीण विरूप शरीर बना कर और आहार के समय गमन करते हुये रेवतीके महल के पास वाले मार्ग में बनावटी मूर्च्छा से गिर पड़े। रेवती जैन श्रावक की यह दशा सुन दौड़ी-दौड़ी आई और उन्हें भक्ति पूर्वक उठा कर अपने मकान में ले गई और यथोचित उपचार करने लगी। रेवती के हृदय में वात्सल्य था। वह एक साधर्मी भाई की जी जान से सेवा करने के लिये तैयार थी। फिर भला उत्तम श्रावक क्षुल्लक की यह दशा देख वह उसकी सेवा किये बिना कैसे रह सकती थी। यहां यह सन्देह नहीं करना चाहिये कि जब रेवती समवशरण में भगवान की मूर्ति के दर्शनार्थ तक नहीं गई तो फिर इस माया से मूर्छित क्षुल्लक की क्यों कर सेवा करने लग गई। क्या यह मूढ़ता नहीं? नहीं हम इसे रेवती की मूढ़ता नहीं कह सकते। उसे यह पता नहीं था कि यह सब बनावटी स्वांग है, उस ने तो इतना ही समझा था कि कर्मोदय से इसे व्याधि ने सताया है। इस समय यह अचेत अवस्था में है। मुझे यथाशक्य इसकी सेवा कर इसे धर्म-साधन में प्रवृत्त कर देना चाहिये। यदि रेवती को इसकी बनावटी मूर्च्छा का पहले से सत्य प्रकट होता तो वह इसे सम्बोधित कर सकती थी, इस प्रकार उसकी दशा देख दुःखित नहीं होती। रेवती ने इसकी सत्यता में सन्देह नहीं किया और यथोचित उपचार के अनन्तर उसे भक्ति पूर्वक विधिवत प्रासुक आहार दिया। क्षुल्लक जी रेवती के श्रद्धान को पहचान चुके थे। उन्हें इसके सत्य धर्म के श्रद्धान

को अब सन्देह नहीं था। फिर भी उन्हों ने अन्तिम बार रेवती की सच्ची और सुदृढ भक्ति की परीक्षा के लिये इस अवसर को उपयुक्त समझा। रेवती ने जो कुछ भक्ति पूर्वक सात्त्विक आहार कराया था, उसको भी उन्हों ने दुर्गन्धित वमन कर दिया। वमन की दुर्गन्ध से आस पास के लोग नाक-भौं सिकोड़ कर दूर भागने लगे और राज भवन में ऐसा वमन कर देने से क्षुल्लक को घृणित समझने लगे, पर रेवती ने किसी को दोष नहीं दिया। उसने अपने अशुभ कर्मोदय को ही इसमें कारण समझा। अपने दिये हुये आहार से क्षुल्लक की यह दशा देख वह बहुत दुःखी हुई। उसने कहा—यह मेरा ही दोष है जो मैं अनुकूल पथ्य भोजन नहीं दे सकी। इसी कारण महाराज को यह उल्टी हुई है और दुःख सहना पड़ा है। वह उस दुर्गन्ध से अनिष्ट की संभावना होते हुये भी नहीं घबड़ाई। और गर्म जल लेकर क्षुल्लक जी के शरीर तथा आंगन को धोने लगी। वह रानी थी। सब परिजन उसकी आज्ञा में थे। इस पर भी वह अन्य किसी को हुकम न दे स्वयं ही यह घृणोत्पादक कार्य करने लगी, इसमें उसकी बढ़ी हुई भक्ति ही कारण थी।

रेवती की इस प्रकार तत्परता के साथ परिचर्या से प्रसन्न हो क्षुल्लक जी ने अपनी माया समेट ली। और 'धन्य धन्य रेवती!' कह कर उसकी प्रशंसा के साथ साथ सराहना की। अपने गुरु श्री गुप्ताचार्य का धर्मवृद्धि रूप आशीर्वाद कहा और पहले का सब वृत्तान्त प्रकट करते हुये सब लोगों के सामने उसके अमूढ़दृष्टित्व की सराहना कर अपने स्थान चले गये। अब क्या था, माया समेट ली गई थी, सब भेद प्रकट किया जा चुका था। लोग अपनी मूर्खता पर पछताने लगे और रेवती के सत्य श्रद्धान की प्रशंसा करने लगे। राजा वरुण को अपनी मूर्खता अज्ञता और गतानुगतिकता पर बहुत विचार हुआ। रेवती का सम्यक श्रद्धान देखकर उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। और अपने पुत्र शिवकीर्ति को राज देकर उन्हों ने दिगम्बर दीक्षा धारण कर ली और तपश्चरण कर माहेन्द्र स्वर्ग में देव हुये। रेवती ने भी धर्म में मन लगाया और ब्रह्मस्वर्ग में देव हुई।

शास्त्रोंमें वर्णित यह कथा जैनों के अमूढ़दृष्टित्व का आदर्श है। रेवती के चरित्र की ओर ध्यान देने से पता चलता है कि एक सच्चा जैनी सम्पूर्ण संसारकी देखादेखी नहीं करता। चाहे सम्पूर्ण विश्व ही उसके अभिमत के विरुद्ध क्यों न आचरण करने लगे, उसे सर्वज्ञके कथन में सन्देह नहीं होता और वह अपने सुदृढ श्रद्धानसे विचलित नहीं होता। न कोई प्रलोभन ही उसे लुभा सकता है और न पाखण्डियों के आश्चर्य जनक कार्य ही उसे मुग्ध कर सकते हैं। वह अपने कर्तव्य पथ पर डटा रहता है और अन्य किसी अतिशयकी पर्वाह नहीं करता। खेदके साथ लिखना पड़ता है कि आज हमने सच्चे जैनत्व के सूचक इस अमूढ़दृष्टि अंगको भुला दिया है। आज हममें कौन है रेवती जैसा सत्य-श्रद्धानी और परीक्षा-प्रधानी! हमारी हालत तो इस समय बहुत गिर चुकी है। हम जैनी कहलाकर, वीतरागता के उपासक होकर भी धर्मके नाम पर अतिशयों की पूजा करते हैं, पाखण्डियों को पूजते हैं, और मिथ्या मार्गका पोषण करते हैं। हममें कौनसी मूढ़ता नहीं है। देव-मूढ़ता, गुरु-मूढ़ता और लोक मूढ़ताके सभी कार्य आज हम करते

समीक्षा का प्रतिवाद

(ले० – अजितकुमार जैन)

श्रीमान स्वा० कर्मानन्द जी जिस समय आर्यसमाजी थे उस समय उन्होंने जैन समाजसे १०० प्रश्न किये थे जो पुस्तकाकारमें छपे भी गये थे। उन प्रश्नों का उत्तर जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला की ओरसे प्रकाशित हुआ था। उन उत्तरों के प्रतिवाद में स्वा० कर्मानन्द जी ने कुछ भी नहीं लिखा किन्तु स्वामीजी के भक्त प्रियवर श्रीमान महाशय जीयालाल जी आगरा ने 'दिवाकर' पत्रमें उन उत्तरों की समीक्षा प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। वह भी तब, जब कि स्वा० कर्मानन्द जी जैनधर्म स्वीकार कर चुके हैं और अपने उन सौ प्रश्नों को निःसार समझते हैं।

स्वा० कर्मानन्दजी अपने प्रश्नों तथा उनके उत्तरों के विषय में एवं उन पर होने वाली आर्यसमाजकी ओरसे समीक्षा के विषय में स्वयं कुछ पीछे लिखेंगे। अभी सतत भ्रमण करने के कारण उन्हें लेख लिखने का अवसर नहीं मिल पाता। अस्तु।

महाशय जीयालाल जी प्रारम्भ के चार प्रश्नों के उत्तरों की समीक्षा संभवतः दिवाकरमें पहले प्रकाशित कर चुके हैं जो कि हमारे देखने में नहीं आई। यदि दिवाकर के संपादक महोदय उन अंकों को भेजनेकी कृपा करेंगे तो उनका भी प्रतिवाद प्रकट किया जावेगा।

अभी दिवाकर के दूसरे अंकमें आपने ५-६ उत्तर की समीक्षा करवाई है।

स्वामी जी का पांचवां प्रश्न था कि "जब आपके तीर्थंकरों ने इस शरीरका त्याग किया था तो लेटे हुये शरीर में से जीव लेटा हुआ निकला था, या खड़ा हुआ"?

इस प्रश्नके उत्तरका भाव यह था कि तीर्थंकर मुक्ति प्राप्त करने से पहले लेटी हुई अवस्था में नहीं होते अतः उनका मुक्तात्मा लेटे हुये शरीरसे उस आकार में नहीं निकला।

इस पर टिप्पणी करते हुये जीयालाल जी लिखते हैं कि प्रश्नकर्ताका तात्पर्य यह है "क्या जैन जीव मृत्युके समय शरीरके आसन में निकलता है या नहीं आदि"।

स्वामी कर्मानन्दजी के प्रश्नका तो तात्पर्य केवल तीर्थंकरों के लेटे हुये मुक्ति प्राप्त करने के विषय में था जिसका कि उनको उत्तर दे दिया गया। जिस पर उन्होंने लगभग साढ़े चार वर्ष तक आर्यसमाज के गणनीय विद्वान सन्यासी रहते हुये भी कोई ऐतराज नहीं उठाया। अब उनके भूतपूर्व भक्तको यह प्रश्न याद आया है। शायद जीयालाल जी को स्वा० कर्मानन्द जी ने स्वप्न दिया होगा कि "मेरे प्रश्नका तात्पर्य

पिछले पृष्ठ का शेष

दिखाई देते हैं। मिथ्यादृष्टियों के जिन कार्योंको शास्त्रों में पढ़ और सुनकर हम उनकी निन्दा करते हैं, उन्हीं कार्यों को करनेके लिये आज हम उद्यत दिखाई देते हैं। अधिक से क्या, यदि मेरे इस लेखसे पाठकों का दृष्टिकोण बदलो तो इन पंक्तियों का लिखना विफल न रहेगा।

यह था।" जीयालाल जी स्वामी जी के तात्पर्य को उनके लिये छोड़कर स्वयं अपनी ओर से इस प्रश्नको करलें तो क्या हानि है ?

आपने लकड़ी की प्रतिमा का पानी में ऊपर आने का दृष्टान्त देकर यह सिद्ध करना चाहा है कि पद्मासन से मुक्त हुये तीर्थंकर का आत्मा उसी आसन आकार में उर्ध्वगमन नहीं कर सकता, किन्तु पानी से लकड़ी की मूर्तिके समान लेटे हुये पद्मासन से ऊपर गमन कर सकता है।

जीयालाल जी शंका समाधान और समीक्षा करने के लिये जितने उतावले होजाते हैं, उतने उतावले वे दार्शनिक ज्ञान प्राप्त करने के लिये नहीं होते। खेद है कि समीक्षक महानुभावने जैन सिद्धान्तानुसार जीव और पुद्गल द्रव्यकी सामान्य विवरण भी अब तक नहीं जान पाया इसी कारण लकड़ी की मूर्तिका दृष्टान्त देने तुल पड़े।

वर्मा जी ! लकड़ीकी मूर्ति पुद्गलीक है, वजनदार है। पानीमें तैरने वाले पदार्थ वजन और आकार के अनुसार भिन्न २ रूपमें तैरते हैं किन्तु इससे मुक्त जीवका क्या सम्बन्ध ? मुक्त जीव शरीरधारक नहीं, जिससे कि वह वजनदार हो। वजन शरीरका होता है किन्तु मुक्त जीवके शरीरका सम्बन्ध छूट जाता है। वह तो अमूर्तिक पदार्थ होता है उसके लिये मूर्तिक वजनदार पदार्थकी बातें लागू नहीं हो सकतीं। अतएव जीयालाल जी का दृष्टान्त शरीरधारी जीवके लिये कुछ घटित होसकता है, मुक्त जीवके साथ वह नहीं [illegible] सकता।

[illegible]रण अशरीर मुक्त तीर्थंकर पद्मासन आ[illegible]मन करते हैं इस में कोई बाधा नहीं आती।

स्वा० कर्मानन्द जी का छठा प्रश्न यह था कि "साकार जीव शरीर में से किस प्रकार निकलता है क्योंकि उस का रोकने वाला पुद्गल स्कन्ध वर्तमान है।"

इसके उत्तर में जो कुछ लिखा गया था उस का अभिप्राय यह है कि "शरीर में जीव को रोकने वाला आयुकर्म है। सूक्ष्मता के कारण शरीर मेंसे निकलते हुए जीव को अन्य कोई पदार्थ नहीं रोक सकता।"

इस पर जीयालाल जी ने समीक्षा करते हुए जो आपत्तियां उपस्थित की हैं उनका सारांश यह है—

१- आयुकर्म को शरीरमें कौन रखता है।

२- जीव को आयुकर्म रोके, आयुकर्म को जीव रोके तो अन्योन्याश्रय दोष आता है।

३- स्वभाव वश आयुकर्म ठहरता है तो वह जीव से पृथक् ही नहीं होगा।

४- आयुकर्म सूक्ष्म है या जीव ?

५- आयुकर्म के फन्दे से कौन छुड़ाता है ?

इसका समाधान यह है कि आयुकर्म स्वयं कार्माण शरीर (सूक्ष्म शरीर) रूप है जो कि जीव के साथ रहता है वह अपनी कालस्थिति के अनुसार जीव को स्थूल शरीर में रोके रहता है।

२- जीव अपने ज्ञान अज्ञान, शुभ अशुभ कार्य-कलापों से अपने लिये कर्म बन्धन तयार करता है जिस में कि आयुकर्म का बन्धन भी है वह बन्धन अपनी शक्ति के अनुसार जीव के लिये रुकावट पैदा करता है। जिस प्रकार नावमें चढ़ा हुआ मनुष्य नाव को चलाता है और नाव समुद्र में इस मनुष्य

को चलाती है। इसी प्रकार जीव और कर्म या आयु कर्म को समझ लीजिये जीव ने अपने अपराधों से आयुकर्म बान्धा आयुकर्म ने जीव को स्थूल शरीर में कैद कर दिया। यहां अन्योन्याश्रय दोष लागू नहीं होता। हमारे ऊपर लिखे दृष्टान्त पर विचार कीजिये।

(३) आयुकर्म पुद्गलवर्गणा की एक वैभाविक दशा है, स्वाभाविक नहीं है अत एव स्थिति समाप्त होने पर यानी कुछ समय पीछे उस पहले आयुकर्म को जीव से अलग होना पड़ता है।

(४) वास्तव में जीव सूक्ष्म है जैसा कि मुक्त समय होता है किन्तु कर्म बन्धन के कारण संसारिक दशा में आयुकर्म की अपेक्षा जीव स्थूल है क्योंकि उस के अन्य कार्माण स्कन्ध भी हैं। किन्तु फिर भी नो कर्म तथा अन्य स्थूल पदार्थों से बहुत सूक्ष्म है।

(५) जीव राग द्वेषादि रूप प्रतिकूल उद्योग से कर्म बन्धन तयार करता है और वीतराग रूप अनुकूल उद्यम के द्वारा आयुकर्म आदि समस्त कर्म बन्धन से छुटकारा पा लेता है।

अशरीरी निर्विकार ईश्वर कर्मफल स्वयं दे नहीं सकता। यदि चोर, डाकू, कसाई आदि द्वारा चोरी, डकैती, कत्ल आदि कराकर ईश्वर कर्मफल दिलावे तो ईश्वर की प्रेरणानुसार कर्मफल देने वाले चोर, डाकू आदि अपराधी तथा दंडनीय (सजा के योग्य) नहीं होने चाहियें परन्तु यहां चोर, डाकू सरकार से बड़ी सजाएं पाते हैं ईश्वर अपनी पुलिस रूप उन चोर डाकुओं की कुछ भी रक्षा नहीं करता। आप के कहे अनुसार वह चोर आदि से चोरी, डकैती आदि कार्य कराकर ईश्वर जीवों को कर्मों का इधर तो फल दे डालता है उधर अपनी प्रेरणानुसार काम करने वाले चोर डाकू आदि को पकड़वा भी देता है। ईश्वर की मजिस्ट्रेटी अच्छी हुई।

अंतमें आपने जो कर्मबन्ध का स्वरूपदर्शक श्लोक लिखा है उस से यह बात कहां सिद्ध होती है कि जीव को शरीर में रोकने वाले आयुकर्म के सिवाय अन्य पुद्गल भी हैं। अच्छी तरह देख भाल कर आक्षेप लिखा कीजिये।

पांचवें उत्तर की समीक्षा के अन्त में आप ने जो यह लिखा है कि "कहिये आपका कौन सा शास्त्र है जो इन अविद्यापूर्ण बातों से नहीं भरा है" यह आप की सभ्यता का नमूना है। जिस व्यक्ति को जीव और पुद्गल का साधारण परिचय भी ज्ञात न हो यदि वह विद्याको अविद्या समझे इसमें क्या आश्चर्य है। क्या ऐसे अपशब्द आप अपने मान्यग्रंथों के लिये सुनने को तयार हैं?

जैन सत्य प्रकाश के आक्षेप

(ले०— श्रीमान पं० वीरेन्द्रकुमार जी)

जैनसत्यप्रकाशके इस ६ वें अङ्कमें श्वेताम्बर मुनि दर्शन विजय जी ने अपनी पूर्वप्रतिज्ञा के अनुसार दिगम्बरीय ग्रन्थों को अन्य ग्रन्थों के आधार से या उनको कुछ जोड़ तोड़ कर बने हुये सिद्ध करने के लिये कुछ उद्योग किया है। आपने श्रीमान जुगलकिशोर जी मुख्तार रचित ग्रन्थ परीक्षा द्वितीय भाग का आश्रय लेकर 'भद्रबाहु संहिता' ग्रन्थकी समीक्षा कर डाली है।

मुनि जी यह बात अच्छी तरह जानते हैं यदि उन्हें ज्ञात न हो तो मालूम होनी चाहिये कि साहित्य चोर व्यक्ति प्रायः अपने अपने समय में हुआ ही करते हैं जैसे कि इस समय भी बहुत से पाये जाते हैं अन्य गवेषक इतिहास वेत्ता विद्वान की महत्वपूर्ण खोजों को अपने नाम से प्रकाशित कर देना अनेक व्यक्तियोंने अपना काम बना रक्खा है जिससे संसार उन्हें अच्छा अन्वेषक विद्वान समझे यह बात आप अच्छी तरह जानते हैं। इसी प्रकार भद्रबाहु संहिता कार ने भी किया हो तो कुछ आश्चर्य नहीं।

भद्रबाहुसंहिता को दिगम्बर जैनसमाज ने श्रुतकेवली भद्रबाहुप्रणीत कदापि नहीं माना और न इस समय कोई विद्वान मानता है। ग्रन्थ को उच्च कोटि में पहुंचाने के लिये उस पर किसी पीछे के विद्वान ने आचार्य भद्रबाहु का नाम लगा दिया है। अत जब वह प्रामाणिक नहीं है इस बात को दिगम्बर समाज ने आप के लिखने से पहले ही स्वीकार कर लिया है। अतः इस ग्रन्थ पर आपका आक्षेप करना सांप की लकीर ताड़ना है। आपका यह परिश्रम तो तब सफल था जब कि दिगम्बर समाज इस ग्रन्थ को प्रामाणिक मानता।

आप यदि सच्चे समीक्षक हैं तो दिगम्बर जैन समाज का यह आदर्श आपको भी ग्रहण करना चाहिये किन्तु आप में इतनी नैतिक दृढ़ता हो इसकी आशा मुझे बहुत कम है आप केवल दिगम्बरीय ग्रंथों के दोषों की समीक्षा करेंगे उन के मूल ग्रंथों की मौलिकता की न तो प्रशंसा करेंगे और न अपने ग्रंथों की अप्रामाणिकता अथवा त्रुटियों का विचार ही करेंगे। श्वेताम्बरीय श्रावक तो आप लोगों के समक्ष कुछ सत्यासत्य निर्णय कर ही नहीं सकते क्योंकि उन्हें तो आप लोगों ने अपने आगमों में हाथ लगाने के अधिकार से दूर ही रक्खा है। वे आगम ग्रन्थों को पढ़ ही नहीं सकते फिर उन्हें क्या मालूम हो सकता है कि श्वेताम्बर मत समीक्षा का लिखना सत्य है या असत्य। अस्तु

यदि मेरी आशा ठीक नहीं है तदनुसार दिगम्बरीय ग्रन्थों की तरह आप अपने श्वेताम्बरीय ग्रन्थोंको भी कसौटी पर कसने को तयार हैं तो आप सरीखे विद्वान समीक्षक का मैं हृदय से स्वागत करता हूं। इस बात की जांच के लिये मैं आपके सामने आपका वह ग्रन्थ रखता हूं जो कि अपने विषय में वह ग्रन्थ स्वयं यह लिखता है कि—

मुखे जिह्वासहस्रं स्याद् हृदये केवलं यदि।

तथापि कल्पमाहात्म्यं वक्तुं शक्यं न मानवैः।

अर्थात्—हजार जीभ वाला केवलज्ञानी भी कल्प सूत्र की महिमा नहीं कह सकता।

यह कल्पसूत्र ग्रन्थ किस आचार्य का बनाया हुआ है? श्वेताम्बर सम्प्रदाय इस ग्रंथ को श्रुत केवली भद्रबाहु प्रणीत बतलाता है जैसा कि 'सेठ देवचन्द्र लाल भाई जैन पुस्तकोद्धारक मंडली' की ओर से प्रकाशित कल्पसूत्र के मुख पृष्ठ पर भी "श्रुतकेवली भद्रबाहु प्रणीत श्री कल्पसूत्रम्" छपा है।

इस ग्रन्थ का इतिहास इस बात को सूचित करता है कि श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी से लगभग ७०० वर्ष पीछे यह कल्प सूत्र बना है जिसको कि मैं आपका उत्तर प्राप्त होने के बाद प्रकट करूंगा। मैं तो इस प्रश्न द्वारा आपकी सत्य समीक्षा मालूम करना चाहता हूं। आशा है आप नैतिक बल का अवलम्बन लेकर जैन सत्यप्रकाश द्वारा सत्य प्रकाश करेंगे।

जैनसत्यप्रकाश के तंत्री जी ने यह नहीं बतलाया कि 'दिगम्बरोनी उत्पत्ति' शीर्षक लेखमाला के लेखक सागरानंद जी सूरि क्या वे ही महानुभाव हैं जिन्हों ने हत्याकाण्ड हो जाने पर भी केशरियानाथ जी पर ध्वजादण्ड चढ़ाने का विधान कराया था? सम्पादक जी सूचित करें।

गुजराती भाइयों की सेवा में पुनः निवेदन है कि जैनसत्यप्रकाश को 'दिगम्बरोनी उत्पत्ति' शीर्षक गुजराती लेखमाला का हिन्दी अनुवाद करके मेरे पास भेजने की कृपा करें।

सर्वस्व दान

(ले०— अजितकुमार जैन)

देश और जाति की उन्नति के लिये तथा धार्मिक प्रचार के लिये बहुमूल्य त्याग करना पड़ता है। बिना त्याग किये उन्नति का स्रोत नहीं खुला करता। जिन महान आत्माओं में जगत कल्याण की भावना जागृत होती है वे अपनी अमूल्य शक्तियों को जगतके लिये खुले हृदय से भेट कर दिया करते हैं। ऐसे आदर्श त्यागी ही नेता बनकर जनता को अपने पीछे चलाते हैं। संसारमें जितने भी माननीय नेता हुये हैं उन्हीं ने अपने समयमें आदर्श त्याग किया था।

स्व० सी० आर० दास, ला० लाजपतिराय जी आदि अपना सर्वस्व– तन, मन, धन, भारत देशके लिये सहर्ष समर्पण कर गये। आजसे २५ वर्ष पहिले जैन समाज विशेष कर दि० जैन समाज बहुत अधिक अन्धकार एवं अवनत रूप में था। इसके भीतर प्रकाश फैला कर जागृति उत्पन्न करने वाले महा पुरुषों के त्यागका ही यह मधुर परिणाम है कि अब समाज उन्नति की ओर पग बढ़ा रहा है। श्रीमान प्रातः स्मरणीय पंडित गोपाल दास जी

बरैया, श्री० सेठ माणिकचन्द्र जी सरीखे आदर्श व्यक्ति यदि अपनी अमूल्य शक्तियोंका त्याग न करते तो दि० जैन समाज इस प्रगतिशील दशामें कदापि न होता सेठ माणिकचन्द्र जी जिस परिस्थिति में थे उन्हों ने समाज के पोषक अनेक विभागों में दिल खोलकर दान किया दान करते समय उन्हों ने अपनी हैसियत का कभी विचार नहीं किया। उन का उस समयका ८–६ लाख रुपये का दान आजकल के ५० लाख रुपये के दान से बढ़कर है क्यों कि उन्हों ने उस दान से उन्नति के अनेक स्रोत खोले थे।

सेठ माणिकचन्द्र जी यदि आज होते तो पुरातत्व अन्वेषण, लुप्त साहित्य अन्वेषण, ग्रंथ प्रकाशन के लिये कोई अमर, ठोस कार्य अवश्य कर दिखाते। श्रीमान रायराजा राज्यरत्न सर सेठ हुकमचन्द्र जी ने अपने बाहुबल से लक्ष्मी को अपनी दासी बनाया है और उसे अनेक उपयोगी धार्मिक क्षेत्रों में खर्च भी किया है अब तक आप लगभग ४५ लाख रुपया दान कर चुके हैं। किन्तु पुरातत्व अन्वेषण, साहित्य प्रकाशन सरीखे आवश्यक कार्य का बीजारोपण आपने नहीं किया जो कि इस समय बहुत आवश्यक है। आशा है आप इन कार्यों के लिये भी ध्रुवफंड कायम करके अपने अमरयश को अधिक उज्वल बनावेंगे। सेठ जी के समीपवर्ती सम्मतिदाताओंका भी इस उपयोगी कार्य की ओर ध्यान आकर्षित होना चाहिये।

निकट भूतकाल में जैन समाजके कुछ सुपूत ऐसे भी हुये हैं जिन्होंने सी० आर० दासके समान जैन-धर्म के प्रचारार्थ अपनी सब चल-अचल सम्पत्ति दान करदी। इनमें से एक तो कुछ वर्ष पहिले श्रीमान बा० जुगमन्दरलाल जी बैरिस्टर थे जो कि अंग्रेजी भाषामें ललित साहित्य लिखने में सिद्धहस्त थे, जिन्हों ने गोम्मटसार आदि अनेक ग्रन्थोंका अंग्रेजी भाषामें अनुवाद किया था। आप अपनी परलोक यात्रासे पहिले अपनी डेढ़ लाख रुपये के अनुमानकी समस्त सम्पत्ति जैनधर्मके प्रचार के लिये दान कर गये।

दूसरा सर्वस्वदान जसवन्त नगर (इटावा) वासी श्रीमान् बा० शिवचरणलाल जी जैन रईसने अपने शरीर त्यागसे पहले दिसम्बरमें किया। शिवचरण लालजी श्रीमान बा० कामता प्रसाद जी के बहनोई थे। आप शान्त स्वभावी, धर्मात्मा सुधार प्रिय महानुभाव थे। आप बुढ़ेले जातिके नर-रत्न थे, अपने माता पिताके इकलौते पुत्र थे, श्रावण शु० ८ वि० सं १८५० के दिन आपका जन्म हुआ था। आपका शिक्षण रईस लोगों के समान हुआ था। आपके कोई सन्तान नहीं हुई और न आपने दत्तकपुत्र ही लिया। आपकी दान की हुई सम्पत्ति लगभग डेढ़ लाख रुपये की होगी। करीब पचास हजार रुपया लोगों से लेना है आपके विल (Will) की प्रतिलिपि पाठकों की जानकारी के लिये प्रगट करते हैं

"जंगम और स्थावर दोनों प्रकारकी मेरी सम्पत्ति के विषय में मैं निर्देश करता हूँ कि उसके लिये एक 'शिवचरणलाल जैन ट्रस्ट' नामक ट्रस्ट कायम किया जाय, जिसका उद्देश्य जसवंत नगरमें एक 'जैन लिट्रेरी सोसाइटी' (जैन साहित्य समिति) और एक 'जैन छात्रवृत्ति फण्ड' स्थापित करना हो और इन दोनों संस्थाओं द्वारा क्रमशः जैन ग्रंथों को प्रकाशित किया जाय और जैन अन्वेषण कार्यको उन्नत बनाया जाय तथा बालक व कन्या दोनों प्रकार के जैन छात्रों को छात्रवृत्तियां दी जावें जो जैन धर्म की व अन्य

शिक्षा पाते हों। मेरी सम्पूर्ण सम्पत्ति ट्रष्टियों के आधीन होगी और उन्हीं कार्यों में व्यय होगी जिन का उल्लेख कर चुका हूँ।"

उन का स्थावर और जंगम सम्पत्ति के प्रबंध और उन के बताये हुए धर्मकार्य को करने के लिये "शिवचरणलाल जैन ट्रष्ट" की स्थापना हो चुकी है। उनके लिखेअनुसार श्रीमान बा० कामताप्रसादजी जैन ला० राजाराम कुरावली और ला० प्यारेलाल जी जसवंतनगर ये तीन ट्रस्टी हैं उनकी निम्न लिखित जायदाद ट्रष्ट के आधीन हुई है :—

(१) जमीन्दारी—

१- मौजा सिसहाट परगना व जिला इटावा १ मुहाल अजमत अली, २ मुहाल पन्नालाल, ३ मुहाल पर्वतसिंह, ४ मुहाल ब्रजलाल, ५ मुहाल अजुध्याप्रसाद जी।

२- मौजा सिलायता परगना व जिला इटावा मु० भजनलाल।

३- मौजा तमेरी परगना व जिला इटावा मु० अजुध्याप्रसाद व पर्वतसिंह।

४- मौजा तमेरी परगना व जिला इटावा मु० कुला।

(२) मकानात— वाक्या बाजार सरावगियान जसवंतनगर:—

१ हवेली, २- मकान बनारस वालों के पश्चिम में, ३- गोदाम, ला० प्रागदास अलीगंज वालों के मकान से पूर्वमें, ४ कोठी, ५- घर जिसमें अजुद्दी पंडा किरायेदार है, ६- घर जिस में अहमद वगैरह किरायेदार हैं, ७ गौंडावाला घर, ८ मकान रेल स्टेशन की सड़क पर, ९- मकान चक्की कचौरा की सड़क पर।

(३) दुकानात— वाक्या बाजार सरावगियान जसवंत नगर:—

१- दुकान मु० हसन के दक्षिण में, २ डंडावाली दुकान, ३- दुकान बल्देव के मकान से दक्षिण में: ४- दुकान जैन धर्मशाला से उत्तर में, ५- दुकान जिस पर नृपति हलवाई किरायेदार है, ६-७- दो दुकानें रेलमंडी के बाहर रेलसड़कपर, ८-९- दुकानें जो कचौरा की सड़क पर हैं।

(४) बाग— १- मगनकुञ्ज, २- सपरीवाला

सम्पत्ति के लिहाजसे शिवचरण जी का यह दान यद्यपि विशेष अधिक नहीं किन्तु उनकी भावना और सर्वस्व त्यागकी दृष्टिसे इस दान का बहुत भारी महत्व है। श्रीमान बा० कामताप्रसाद जी धैर्य और साहसके साथ इस कार्यको सफलता पूर्वक चलायेंगे ऐसी आशा है।

महावीर सन्देश

सज्जनो !

संसार जब अधर्म और अत्याचार के कारण बेचैन हो चुका था, दीन-हीन बे जुबान पशुओं की आह ने जब दुनिया को व्याकुल कर दिया था और जब प्रत्येक प्राणी किसी महा-पुरुष के आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था, ठीक ऐसे ही समय में धर्म की उन्नति और मनुष्यों को सच्चा रास्ता दिखाने के लिये आज से २५३५ वर्ष पूर्व आज ही के कुंडलपुर में बिहार प्रान्तीय राजा सिद्धार्थ के यहां जैनियों के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर ने जन्म लिया था। आप बाल्यावस्था में ही अनुपम शक्ति, विद्या और बुद्धि के धनी थे। संसार का उपकार करने की भावना से अपनी आत्मशक्तियों को जाग्रत करने के लिये ३० वर्ष की युवावस्था में ही राज-पाट के सुखों को शारीरिक मलों की तरह त्याग कर आपने संन्यास ग्रहण किया। उस अवस्था में आपने १२ वर्ष तक रोमांचकारी आश्चर्यमय घोर तप किया। इसके बाद आपने परमात्मपद को प्राप्त किया। तत्पश्चात आपने धर्मोद्धार के लिये देश देशान्तरों में भ्रमण करके दया धर्म का उपदेश दिया। आपके उपदेश तथा तेज के प्रताप से हिंसक पशुओं ने भी हिंसा के भावों को त्याग कर अहिंसा का आश्रय लिया। संसार में पुनः सत्य-वैज्ञानिक आत्मधर्म की स्थापना हुई। मनुष्यों ने मिथ्या विश्वासों और पाखण्डों से मुक्ति प्राप्त की। विश्व-प्रेम की शंख-ध्वनि से पुनः एक बार दसों दिशाएं गूंज उठीं। स्वनाम धन्य महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर और लोकमान्य तिलक आदि सभी महाविद्वानों ने इसका श्रेय भगवान महावीर को ही दिया है इस ही भगवान महावीर का जन्म दिन आज भारत के कोने २ में मनाया जा रहा है।

संसार के लिये भगवान महावीर स्वामी के ये सन्देश हैं

१—हर एक आत्मा नित्य शुद्ध-बुद्ध मुक्त स्वभाव है। इसमें अनन्त शक्ति और अनन्त ज्ञान विद्यमान है, किन्तु अनादि कर्मबन्धन के कारण यह अशुद्ध हो रहा है! कर्मावरण को दूर करके यह परमात्मा हो सकता है। अतः अपने को निर्बल समझ कर अपने से घृणा मत करो और आत्मा को किसी मूल्य पर मत बेचो।

२—प्रत्येक प्राणी को आदर और प्रेम की दृष्टि से देखकर उसकी निःस्वार्थ सेवा करो और उस को ऊंचा उठाने का प्रयत्न करो।

३—यदि तुम संसार और इन्द्रियों की दासता छोड़ दोगे तो संसार तुम्हारा दास बनने में अपना गौरव समझेगा।

४—सांसारिक वस्तुओं की सीमा है, इस लिये सर्वभक्षी और सर्वग्राही मत बनो! इससे संसार में विषमता फैल कर क्षोभ उत्पन्न होगा। अतः त्याग पूर्वक परिमित चीज़ों से ही अपने जीवन का निर्वाह करो जितना त्याग करोगे उतनी ही शान्ति प्राप्त होगी, यह सब सच्चा साम्यवाद है।

५—तुम अपनी अवस्थाओं के स्वयं ही निर्माता

हो किसी अन्य को इसका उत्तरदाता मत समझो! तुम्हारे सिवाय तुम्हारा कोई अन्य शत्रु नहीं है।

६—यदि तुम इसी जगह, इसी अवस्था में और इसी समय सुखी नहीं हो सकते तो संसार में तुम्हारे लिये सुख का कोई स्थान नहीं है।

७—जो कुछ मेरा है वह ही सत्य है, यही धार्मिक कलह का कारण है। अतः तुम्हें यह मानना चाहिये कि जो सत्य है वह मेरा है।

८—जो व्यवहार तुम्हें अपने लिये प्रतिकूल प्रतीत होता है। उसका प्रयोग दूसरों पर मत करो।

९—वस्तुएं अनन्तधर्मात्मक हैं। स्याद्वाद ही उनके प्रत्येक धर्म का सत्यता से प्रतिपादन करता है

किसी वस्तु का किसी दृष्टिविशेष से वर्णन का नाम ही स्याद्वाद है। यह सर्व धर्मों के साथ उदारता का भाव सिखलाता है। पदार्थ स्वरूप के वर्णन में जहां दूसरे धर्म 'ही' का प्रयोग करते हैं वहां यह 'भी' का प्रयोग करता है। अतः यह सम्पूर्ण धर्मों का का समन्वय करता है। इसको समझने के लिये जैन ग्रन्थों और विश्वविख्यात वैज्ञानिक "आईनस्टाइन" का अपेक्षावाद देखना चाहिये।

निवेदक— स्वामी कर्मानन्द।

कांग्रेस का ४९ वां अधिवेशन—

लखनऊ के बाहर विशाल विस्तृत मैदान में 'मोती नगर' बनाकर कांग्रेस का ४९ वां अधिवेशन १२ से १४ अप्रैल तक बहुत धूमधाम के साथ हुआ।

कांग्रेस के पंडाल में लगभग ५० हज़ार स्त्री पुरुष विद्यमान थे। उपस्थित जनता को काबू में रखने के लिये लाल, हरी, सफेद बिजली की बत्तियों से इशारा किया जाता था। सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू का भाषण ४२ फुलस्केप पृष्ठोंपर हिन्दी भाषामें लिखा हुआ था जिसको कि आपने ढाई घंटे में पढ़ कर समाप्त किया। भाषण में प्रत्येक बात स्पष्ट थी। आपके भाषण का सारांश पाठकों की जानकारी के लिये बहुत संक्षेप में यहां रखते हैं।

"भारतवर्ष की स्वतंत्रता और ब्रिटिश साम्राज्यमें कोई समझौता नहीं हो सकता क्योंकि यह साम्राज्य हमारी गरीबी को नहीं मिटा सकता मेरी राय में कांग्रेस साम्यवादी संस्था बन जानी चाहिये। सरकार जिस नये सुधार को लागू करना चाहती है वह भारतवर्ष को आगे नहीं बढ़ाता गुलामी के इस चार्टर को लेकर हम क्या करें। कौंसलों में हम को अपने मेम्बर भेजने चाहिये किन्तु कौंसिलों के मंत्री पद हमें स्वीकार न करने चाहियें मंत्री पद स्वीकार करने से हम अपने अच्छे कार्य कर्ताओं को खो बैठेंगे, साम्प्रदायिक बंटवारा निन्दनीय है उस का नाश अवश्य होना चाहिये क्योंकि वह भारतवर्ष को मजहबी बुनियाद पर अनेक टुकड़ों में बांटता है। इस को जड़ से नष्ट करना चाहिये सीटों की कमी बेशी पर विरोध करने से कुछ लाभ नहीं। यूरोपमें युद्ध के बादल छाये हुए हैं। युद्ध शीघ्र छिड़ जाने पर हमको साम्राज्य वादियों के हाथ की कठपुतली नहीं बनना चाहिये।" इत्यादि।

जलियां वाला बाग हत्याकांड की स्मृति में १३ अप्रैलको शाम के ५॥ बजे अधिवेशन प्रारम्भ होते ही दो मिनट तक समस्त जनता मौन रही। आगामी वर्ष कांग्रेसका अधिवेशन पूना में होगा।

सामयिक चर्चा

महगांव कांड पर हमारा वक्तव्य

महगांव कांडको लेकर इस समय जैन समाजमें बड़ा आन्दोलन चल रहा है। अनेक व्यक्तियों के प्राइवेट पत्रों तथा समाचार पत्रों के लेखों ने हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित किया है, जिन्हें हम सबने गम्भीरता के साथ पढ़ा है और इसीके बाबत श्री० सेठ लालचन्द जी साहब सेठी उज्जैन व श्रीमान सेठ भागचन्द्र जी साहब सोनी अजमेर ग्वालियर स्टेटके पोलीटिकल मेम्बर सर कर्नल पं० कैलाशनारायण जी साहब हक्सर से मिलकर खूब अच्छी तरह परामर्श भी कर चुके हैं जिससे पूर्ण सन्तोष प्राप्त हुआ है। इसलिये हम लोग समाज से निवेदन करते हैं कि अब वह इस आन्दोलन को उग्र रूप न देवे जिस से विलम्ब बढ़े और न्याय-प्राप्ति में विलम्ब हो।

ग्वालियर राज्य सदासे अपनी न्याय प्रियता धार्मिकता एवं निष्पक्षता के लिये प्रसिद्ध है। उसने मक्सी, कोलारस आदिके मामलों में उचित न्याय देकर जिस धार्मिक वृत्ति एवं न्यायनिष्ठा का जो आदर्श उपस्थित किया है उसे ग्वालियर स्टेटके दि० जैनी ही नहीं, अपितु समस्त भारतवर्षके दि० जैनी कभी भुला नहीं सकते।

ग्वालियर स्टेटके पुलिस विभाग के अध्यक्ष सर पं० कैलाशनारायण जी साहब हक्सर, वास्तवमें बहुत ही योग्य, प्रतिष्ठित जनता के प्रति सच्ची सहानुभूति रखने वाले और न्यायप्रिय व्यक्ति हैं। इसलिये मामले की पूरी छानबीन करके अवश्य ही समुचित निर्णय एवं न्याय प्रदान करेंगे। हमें उनके न्यायमें पूर्ण आशा है, इसी लिये हम समाज को यह परामर्श देते हैं कि मामले को आगे न बढ़ाकर उनके ऊपर ही न्यायका सारा भार छोड़ दिया जाय।

हमारे सुनने में आरहा है कि महगांव के कुछ जैनियों को इस मामले में गिरफ्तार किया गया है और त्रास दिया जारहा है। सो सर पंडित जी साहब से निवेदन है कि वे गिरफ्तार हुये जैनियोंको शीघ्र ही मुक्त करें और मामलेमें शीघ्र समुचित न्याय देकर अपनी सदाकी न्यायप्रियता का परिचय देवें, एवं जैन समाजमें चिरकाल के लिये यश के भागी बनें।

हस्ताक्षर —सर हुकमचन्द सरूपचन्द

„ लालचन्द सेठी

„ भागचन्द सोनी

तीर्थक्षेत्र कमेटी का मीटिंग

२ अप्रेल को भा० दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी की ओर से दिगम्बर समाज के प्रमुख २ नेताओं की एक मीटिंग कलकत्ता में पूज्य शिखरराज पर श्वेताम्बरों की तरफसे बैठाये गये जजमेंट के खिलाफ नये टाइप के चरणों के सम्बन्ध में विचार करने तथा श्री पावापुरी केसमें मिले हुये विलायत अपील फैसले पर विचार करने के लिये बुलाई गई थी, तदनुसार उक्त मीटिंग में रावराजा राज्यरत्न सर सेठ हुकमचन्द जी सा०, बाबू निर्मलकुमार जी सा० रा० ब० सेठ भागचन्द जी सा०, रायसाहब चैनसुखजी छाबड़ा तथा हम शिखर जी के चरणों का निरीक्षण करते हुए पहुँचे थे। इसके अलावा स्थानीय कलकत्ते के सभी प्रमुख महानुभाव जैसे सेठ चैनसुख गंभीरमलजी

देश विदेश समाचार

—एक गाड़ी मुजफ्फरपुर और तुर्की के मध्यसे गुजर रही थी कि एक स्त्री बच्चा लिये हुये गाड़ीके आगे लेट गई। ड्राईवरके गाड़ी रोकनेका प्रयत्न करने पर भी उस स्त्री के टुकड़े २ होगये। बच्चा अचानक बच गया और उसे कहीं चोट नहीं लगी।

—आरा तहसील के मक्खन नामी गांवमें दो बच्चे दियासलाई से एक चौबारे में खेल रहे थे। खेलते २ उन्होंने दियासलाई जलाई जिससे रजाई को आग लगकर मकान में भड़क उठी। लोगों ने लाख प्रयत्न किया किन्तु बच्चे जल कर राख होगये।

—सम्राट ऐबीसीनिया की खाली मोटर इटली वालों के हाथ लगी है। राजकुमार उनको ढूंढने के लिये उत्तर की ओर गये हैं। कहा जाता है कि ग्रेट ब्रिटेन आधेके बराबर एबीसीनिया जीत लिया गया तथा कोरमके दक्षिणका रास्ता एबीसिनीयन लाशों मे पटा पड़ा हैं। सम्राटका अभीतक कोई पता नहीं चला-इनके तख्त छोड़ने की भी जोरदार अफवाह है।

—जापान युद्ध के लिये बिलकुल तैयार बैठा है। वह किसी भी समय २० लाख सैनिकों को रणक्षेत्र में उतार सकता है।

—एन० डब्लू रेलवे में भारी छंटनी की जा रही है। ५० की आयु के ऊपर के और १० वर्ष की नौकरी वाले अलग कर दिए जाएंगे।

—कांग्रेस पण्डाल का बड़ा फाटक १०५ फीट ऊंचा बनाया गया था, तथा ला० लाजपतराय के नाम पर एक फवारा भी लगाया गया था। साथ ही एक हजार किसान कार्यकर्ताओं ने मुफ्त में कांग्रेस देखी है।

१९२७ में तुर्किस्तान में १५३ वर्ष के बूढ़े ने अपनी ग्यारहवीं शादी की। उस की १० स्त्रियां और २७ सन्तानें उसके सामने मर चुकी हैं।

—हरिद्वार १४ अप्रिल बैसाखी के दिन स्वामी कृष्णानन्द जी हरिद्वार पधारे। इन के पास एक शेर और एक कुत्ता है दोनों हिले मिले हुए हैं। उन के शेर और कुत्तों का बाजारों में जलूस निकाला गया। दोनों को इकट्ठे स्नान कराया गया। कहते हैं कि दोनों का भोजन दूध और रोटी है। शेर बड़े जोर से "ओम्" शब्द का उच्चारण करता है।

---

३२ वें पृष्ठ का शेषांश

सा०, बाबू बलदेवदास जी, सेठ कन्हैयालाल जी चिरधीचन्द जी, बाबू छोटेलाल जी, रा० ब० बाबू सखीचन्द जी, सेठ प्रभुलाल जी पांड्या, बाबू माणिक चन्द जी बैताड़ा आदि सभी महानुभाव उपस्थित थे। उक्त मीटिंग का कार्य सर सेठ हुकमचन्द जी सा० के सभापतित्व में चलकर शिखरजी के चरणों के सम्बंध में यह तय हुआ कि यदि श्वेताम्बर लोग चरण, जजमेंटके अनुसार न बिठावें तो डिग्री इजराय कर दी जाय। इस के अलावा पावापुरी जी के मामले को देखते हुए यदि यह मामला भी आपस में निपट सके तो अच्छा है नहीं तो फिर नया मुकद्दमा दायर करने का तय हुवा। पावापुरी के मामले पर निगरानी रखनेके लिये बाबू निर्मलकुमार जी, रा० ब० बाबू सखीचन्द जी तथा रायसाहेब सेठ चैनसुख जी छाबड़ा पर भार डाला गया। इस तरह मीटिंग में विचार विनिमय हुआ है।

REGD No. L.
3459.

—चार दिन के बहुत भारी युद्ध में इटली वालों की विजय के कारण एबीसीनियाके पास अब केवल ४००*० सेना रह गई है और वह भी भगोड़ों का एक ऐसा दल जो नियम का पाबन्द नहीं।

—२८ मार्च को समाप्त होने वाले सप्ताह में बम्बई से ८०८०५८३ रुपये का सोना यूरोप गया है। बम्बई से अब तक २६५३१११२१ रुपये का सोना बाहर जा चुका है।

—मध्य प्रांत के गवर्नर सर हाइड गोवान १६ मई सन १९३६ से चार मास तक के काल के लिये छुट्टी पर जांयगे। सर हाइड गोवान की अनुपस्थिति में माननीय रा० राघवेन्द्र राओ मध्य प्रांत के स्थानापन्न गवर्नर के तौर पर कार्य करेंगे।

—कवि टैगोर को ६० हजार का गुप्त दान सेठ जुगल किशोर बिड़ला ने दिया। कवि के मारे २ फिरने पर पं० जवाहरलाल को खेद हुआ। उन्हीं की प्रेरणा पर म० गांधी ने यह दान दिलाया था।

—(बेलगांव) एक १२ फुट लम्बे तथा ४ फुट ऊंचे शेर को एक भैंसे ने मार डाला।

—जम्मू (तवी) नायब तहसीलदार गुरेज ने तार द्वारा सूचना दी है कि बर्फ पिघलने से एक सौ दस आदमी नष्ट हो गये हैं। इस समेत अब तक बर्फ के कारण दो सौ तीस से भी अधिक आदमी जान खो चुके हैं।

—अजमेर २ अप्रैल—अजमेर से कुछ मीलों की दूरी पर सरधाना गांव में छः टांगों वाला एक बछड़ा पैदा हुआ है। उस की दो टांगें पखाना के स्थान पर है। बछड़ा जीवित है।

—सम्राट का राज्याभिषेक संस्कार मई १९३७ में होगा।

—मद्रास कारपोरेशन ने अपने प्रस्तावकी पुष्टि करदी है कि कारपोरेशन के स्कूलोंमें हिन्दी अनिवार्य करदी जाय। यह प्रस्ताव गवर्नमेन्ट को स्वीकृति के लिये भेजा गया है।

—श्री सुभाषचन्द्र बोस को आर्थर रोड जेल बम्बई से यरवदा जेल पूना में लेजाया गया है।

—जर्मन पहलवान न्यूमैन और प्रो० माधवराव बालाजी उर्फ "दक्षिणी गूंगा" पहलवान की कुश्ती हुई। २५ मिनट तक दोनों पहलवान लड़ते रहे। अन्त में भारतीय पहलवान ने उसे पराजित किया।

—ब्रिटेन जर्मनी की ओर झुक गया। वह हिटलर के प्रस्तावों को महत्वपूर्ण ध्यान देने योग्य समझता है।

—लाला ईश्वरदास जी ने कहा कि सरकार ने क्वेटा की खुदाई के जिस काम को पूरा करने के लिये ११ वर्ष का अनुमान लगाया था: हम ने उसे आप की सहायता और ईश्वर अनुकम्पा से कुछ ही महीनों में समाप्त कर लिया। हम ने ईमानदारी से अपना काम किया है। लोगों का सोना और चांदी तथा अन्य आभूषण व सामान आदि हमने मालिकों को बुला बुला कर उनके सपुर्द किया है।

—गत वर्ष पंजाब में शिक्षा पर (१५९९२८८५) खर्च हुआ

—बन्नू ४ अप्रैल दो तीन दिन से यहां एक नौजवान आया हुआ था। वह लोगोंके बूट पौलिश किया करता था। कुछ म्युनीसीपल सदस्यों से उसने कहा कि मैं बी० ए० पास हूं, मुझे कमेटी में चपरासी की जगह पर लगा दिया जावे मगर वहां कोई स्थान न होने के कारण उसे निराश होना पड़ा।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिन्टिङ्ग प्रेस" मुलतान शहर में छप कर प्रकाशित हुआ।

वर्ष ३
अंक २०
श्री भारत वर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
जैनदर्शन
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस
इस अंक के पठनीय लेख
१ ध्यानयोग
२- स्वास्थ्य संबन्धी कुछ छोटी बातें
३- नवयुवकों से
४- परलोक परिचय
५- मायाजाल
६- अथर्ववेद परिचय
७ धार्मिक सिकन्दर
८- सामयिक चर्चा
वार्षिक ३) एकप्रति =)

जैन समाचार

उपहार ग्रन्थ—सत्तास्वरूप नामक उपहार ग्रन्थ तयार हो गया है। श्रीमान सेठ केसरीमल जी गया का श्लोक बनने गया है जोकि शीघ्र आने वाला है। ग्राहक महानुभावों से निवेदन है कि उपहार के पोष्टेज के लिये पांच पैसे के टिकिट भेज दें।

जेठ सुदी पंचमी तक बनने वाले नवीन ग्राहकों को भी यह ग्रन्थ उपहार में मिले गा। —मैनेजर

—एसेम्बली की बैठक की समाप्ति में देहली से ता० २३ अप्रेल को ९। बजे की फ्रन्टियर मेल में राय-बहादुर श्रीमान सेठ भागचन्द जी सोनी रवाना हुए थे। इस समय आप को पहुंचाने के लिये अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति स्टेशन पर आये थे। इन्हीं में भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ के सभापति राय साहब ला० नेमीदास जी शिमला तथा उस के महामन्त्री भी (प० राजेन्द्र जी) थे। सोनी जी ने चलते समय संघ के उपदेशक विद्यालय को ५०१)देने का वचन दिया है धन्यवाद दाता।

—देहली के तथा देहली में आने वाले बन्धुओं की असुविधा का ख्याल कर के हमने बड़े दरीबे में एक जैन भोजन भवन चालु किया है। इसमें शुद्धता के साथ भोजन तयार किया जाता है। शूद्र जल त्यागियों के भोजन का भी प्रबन्ध किया जाता है। इस के साथ ही साथ बाहर के यात्रियों के ठहरने का भी प्रबन्ध है। बाहर से आने वाले बन्धुओं को इस से लाभ उठाना चाहिये।

निवेदक—व्यवस्थापक

—अत्यंत खेदकी बात है कि शोलापुर नगरमा प्रसिद्ध श्री सेठ गुलाबचन्द हीराचन्द दोशी की सुशील व सद्गुणसंपन्न धर्मपत्नी सौ० नवलबाई जी का ता० १४-४-३६ के दिन उनकी जन्मभूमि (बारामती)में क्षयरोग से देहांत हुआ। मरते समय आप की आयु करीब ३५ बरस की थी। धर्म पर आपकी अटल श्रद्धा थी। आप देवपूजा शास्त्रस्वाध्याय आदि में हमेशा तत्पर रहती थीं। आप एक आदर्श गृह लक्ष्मी थीं। आप के मृतात्माको पूर्ण शांति लाभ प्राप्त हो ऐसी हम वीरप्रभु से प्रार्थना करते हैं।

मोतीचन्द हीराचन्द गांधी
उस्मानाबाद।

—उदयपुर की श्री पार्श्व० दि० जैन विद्यालय प्रभृति धार्मिक संस्थाओं से गत मार्च मास में निम्न प्रकार लाभ लिया गया। विद्यालय में ५५ छात्र, बोर्डिङ्ग में ४५, कन्याशाला में ४० कन्याएं, औषधालय में १७०८ जैन अजैन सर्व साधारण स्त्री, पुरुषों एवं बच्चों ने स्वास्थ्य लाभ किया। एवं धर्मशाला में १७५ यात्री ठहरे। तथा अनुमान ३६१) रु० की आर्थिक सहायता प्राप्त हुई।

श्री स्या० महा० काशी में प्रवेशेच्छु छात्र॰॰ अपनी पढ़ाई आदि का पूर्ण विवरण लिख कर प्रवेश फार्म अभी से मंगवा लेना चाहिये। और फार्म की खानापूरी करके पाठशाला के अध्यक्ष महोदय के सार्टीफिकेट के साथ तारीख ॰ मई तक अवश्य भेज देना चाहिये।

हर्षचन्द्र जैन
बी० ए० एल० एल० बी०
उप-अधिष्ठाता

अकलंकदेवाय नमः
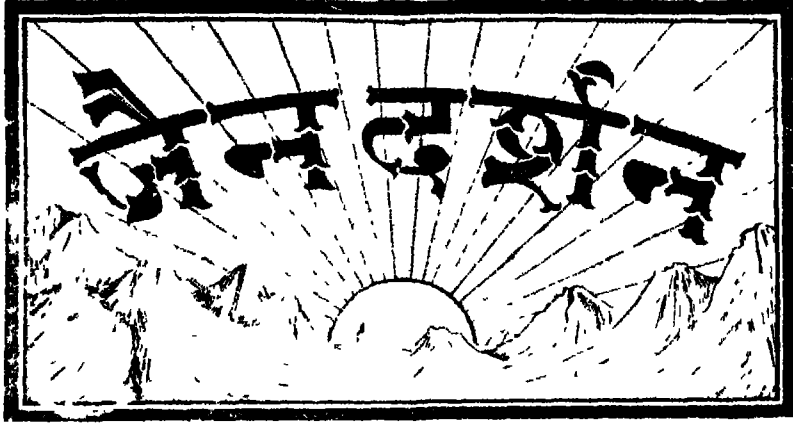
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्रगण्यिमभेष्यो भवतिखिलदर्शनपक्षदोषः
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यन्नमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री वैशाख सुदी १० —शुक्रवार श्री वीर सं० २४६२—१ मई १६३६

हृदय-प्रदर्शन

होता है सकोच खोलकर, कैसे हृदय दिखाऊं ?
कर व्यापार मानसिक निशिदिन, जब मैं पाप बढ़ाऊं।
हृदय-भूमि में नृत्य कर रहीं, विविध विविध आशाएं,
किस विध पाप-वासनायुत हम तेरे सन्मुख आएं ॥

होता है अभिलाष निरन्तर तुमसे मिलने आऊं
हृदय निरीक्षण कर मैं अपना, कैसे पग बढ़ाऊं ?
स्फटिक सदृश निर्मल मन वाले, मिल सकते हैं तुमसे
इधर उधर भटका करते हैं, पापी जग में मुझसे ॥

रोम रोम में भरी हुई है, इस जग भर की माया,
पड़ सकती अपवित्र हृदय में, कैसे तेरी छाया।
लेकर मोह भ्रम की भारी बनता पापाचारी
जग में उन्मत्त हुआ नित, भूला याद तुम्हारी ॥

ले० पं० गुणभद्र जी

ध्यान योग

(ले०—श्रीमान पं० श्रीप्रकाश जी जैन न्यायतीर्थ जयपुर)

गतांक से आगे

रौद्रध्यान

ध्यान का दूसरा भेद रौद्रध्यान है। क्रूर या क्रूर आशय वाले प्राणी को रुद्र कहते हैं और इन परिणामोंसे की गई क्रियाको रौद्र कहते हैं। * अथवा रुद्र अवस्था में जो कुछ होवे इसे रौद्र कहते हैं। रुद्र अवस्था में प्राणी प्रमादी बन जाता है और अपने कर्त्तव्य तथा अकर्त्तव्य को नहीं पहचानता। वह पापों में भी आनन्द मानने लगता है और स्वच्छन्द प्रवृत्ति में ही सुख समझता है। इस धर्म विरुद्ध यथेच्छ प्रभृति पापों में आनन्द मानने से रौद्रध्यानी को उस समय तो कुछ सुख का प्रतिभास होता है या वह स्वयं आनन्द मान लेता है, पर परिणाम में स्वयं उसे भी बहुत दुःखित होना पड़ता है और इससे अन्य लोगोंका भी बहुत अहित होता है। पाप की प्रवृत्ति बढ़ती है, समाज और देश का पतन होता है। अन्य व्यक्तियों को दुःख पहुंचाने की भावना के कारण ही रौद्र ध्यान को सब से बुरा कहा गया है। जहां आर्तध्यान का फल तिर्यञ्च गति बताया गया है, वहां इसका फल नरकगति माना गया है। हिंसा में आनन्द मानना, झूठ बोल कर धोखा देने की भावना रखना, पर द्रव्य के अपहरण करने का विचार करना, कुशील सेवन की अभिलाषा रखना, और परिग्रह बढ़ाने या उसके संरक्षण की निरन्तर चिन्ता करना ये सब रौद्रध्यान के रूप हैं। अज्ञानी पुरुष एक निरपराध जन्तु के प्राणापहरण में बहादुरी, शिकार में कसरत, झूठ बोल कर अपनी बात बनाई रखने में चतुरता, चोरी या दूसरों को ठगने में चालाकी, विषय सेवन या व्यभिचार में पुरुषत्व और सामर्थ्य तथा परिग्रहको बढ़ाने और उसकी रक्षा में ऐश्वर्य समझते हैं। शास्त्रकारों ने कहा है कि वे अवश्य ही सरासर भूल करते हैं, पापों में या पाप बन्ध के कार्यों में, जिन से दूसरों का नुकसान होता है और अपने परिणामों का घात होता है, कभी किसी जीव को सुख नहीं हो सकता। उनका नतीजा अवश्य ही एक दिन बुरा होगा। समझदारों को यह सब कार्य छोड़ देने चाहिये। जैनाचार्यों ने रौद्रध्यान के चार भेद किये हैं—

१—हिंसानन्द। हिंसाकार्य में आनन्द मानना हिंसानन्द रौद्रध्यान कहलाता है। संसार में बहुत प्राणियों की हिंसक वृत्ति होती है वे सदा अपने शत्रुओं के घात का विचार किया करते हैं। चाहे वे उन का बाल भी बांका न कर सकें, पर उनके घात करने के विचारों में नहीं चूकते। मेरे ये शत्रु कब मारे जांय, इन का और वैरी कौन है जिस से मेल कर इन के अनिष्ट का विचार करूं, इन को कौन मार सकता है, कौन अपमान कर सकता है—इत्यादि हिंसा के भावों को धारण कर आनन्द मानना और चिन्तित होना या बिना किसी प्रयोजन के ही दूसरे

---

* "रुद्रः क्रूराशयः प्राणी, रुद्रस्य कर्म रौद्रम्। रुद्रे भवं वा रौद्रम्।" —श्रुत सागरी

की हिंसा कर, उसे पीड़ा पहुँचाकर सुख मानना और दूसरे को ऐसा करता देख आनन्दित होना ये सब हिंसानन्द रौद्रध्यान की गिनती में आते हैं। जैसे कोई किसी पशु पक्षी या मनुष्य को पकड़ कर बांध देता है, बांधा हुआ जीव बहुत चिल्लाता है और अनेक विलाप करता है। उस के इस दुःख को देख कर बहुत से दर्शक आनन्द मानते हैं और उसकी भय से त्रस्त चेष्टाओं को देखकर सुखी होते हैं। कोई किसी जानवर को मार डालता है या शिकार कर लाता है, उसकी प्रशंसा करते है। प्राणियों को बाँध कर उन्हें दुःख देकर या आपस में लड़ा कर सुख मानते हैं। ज्ञानार्णव में लिखा है:—

"हते निष्पीडिते ध्वस्ते जन्तुजाते कदर्थिते।
स्वेन चाऽन्येन यो हर्षस्तद्धिंसारौद्रमुच्यते॥

अर्थात्—अपनेसे या अन्य किसीके द्वारा प्राणियों के मारे जाने पर, पीड़ा पहुँचाये जाने पर, ध्वंस किये जाने पर और मारने के सम्बन्ध मिलाये जाने पर हर्ष मानना हिंसानन्द रौद्रध्यान है।

हिंसा के उपकरण शस्त्र आदि का, दूसरों का बुरा करने की इच्छा से संग्रह करना, दुष्ट जीवों पर अनुग्रह करना, निर्दय भाव प्रकट करना, किसी को बांध रखना, तर्जन ताड़न आदि करना, हिंसानन्द रौद्रध्यान के बाह्य चिन्ह हैं। सब जीवों को समान समझने और किसी के प्रति बुरे हिंसा के या उसको तकलीफ न पहुँचाने से यह ध्यान सहज ही दूर हो सकता है।

२—मृषानन्द—झूठ बोलने में आनन्द मानना मृषानन्द रौद्र ध्यान कहलाता है। जिन बातों पर दूसरों को विश्वास हो सके, ऐसी अनेक कल्पित बातों से दूसरों को ठगने का हर्ष के साथ निरन्तर विचार करते रहना मृषानन्द रौद्रध्यान है। इस ध्यान वाले के विचार हमेशा मलिन रहते हैं, वह दूसरों को धोखा देने और ठगने का बार २ विचार किया करता है। असत्यमार्ग का-धर्म के नाम पर हिंसा और पाखण्ड का प्रचार करना और लोगों को मिथ्या मार्ग में फंसा सत्य-पथ से विचलित कर अपना स्वार्थ-साधना या अपना गौरव समझना ये सब मृषानन्द रौद्रध्यान की गिनती में हैं। ज्ञानार्णव में लिखा है:—

"असत्यकल्पनाजालकश्मलीकृतमानसः।
चेष्टते यज्जनस्तद्धि मृषारौद्रं प्रकीर्तितम्॥

अर्थात् अनेक प्रकार की असत्य कल्पनाओं के पाससे मलिन चित्त वाला जो चेष्टा करता है—निर्दोष को असत्य आरोपसे सदोष सिद्ध करना चाहता है। अपने वचन चातुर्य से स्वार्थ सिद्धिके लिये दूसरों को संकट में डालना चाहता है, अल्पज्ञोंको वचन जालमें फँसाकर ठगना चाहता है, या ऐसे ही मिथ्यावचन कह कर अन्य कोई अनर्थ करना चाहता है—उसे मृषानन्द रौद्र ध्यान कहते हैं।

हंसी मजाक में भी झूठी बातें न बनाकर किसी के अनिष्टकारी झूठ वचन बोलनेका त्याग कर देने वाला इस ध्यानसे सहज ही बच सकता है और अपने परिणामों को निर्मल बना सकता है।

३- चौर्यानन्द— पराई वस्तुको चुराने में आनंद मानना चौर्यानन्द रौद्र ध्यान कहलाता है। चोरी के उपायोंको निरन्तर विचारना, चोरी करनेकी प्रबल इच्छा रखना, चोरीका उपदेश देना और उसके उपाय बताना, किसीका धन चुरालेने पर या चोरी में चले

आने पर हर्ष मानना. ये चौर्यानन्दके लक्षण हैं। इन के अतिरिक्त जितने भी दूसरों की वस्तुओं को चुराने के साधन हैं, जिससे कि अन्य पुरुषोंको कष्ट होता है और उन्हें आकुलता का अनुभव करना पड़ता है. उन में आनन्द मानना और उसके उपायोंका चिन्तवन करते रहना, सब चौर्यानन्दमें गर्भित हैं। ज्ञानार्णवमें लिखा है—

> यच्चौर्याय शरीरिणामहरहश्चिन्ता समुत्पद्यते।
> कृत्वा चौर्यमपि प्रमोदमतुलं कुर्वन्ति यत्सन्ततम्
> चौर्येणाऽपि हृते परैः परधने यज्जायते सम्भ्रम
> स्तच्चौर्यप्रभवं वदन्ति निपुणा रौद्रं सुनिन्द्यास्पदम्

अर्थात जो प्राणियों के चोरीके लिये निरन्तर चिन्ता उत्पन्न होती है. चोरी कर लेने पर निरन्तर अतुल आनन्द होता है और दूसरों के द्वारा किसी अन्य व्यक्तिका धन चुरा लेने पर हर्ष होता है, उसे चोरीसे उत्पन्न हुआ रौद्र ध्यान कहते हैं और यह अत्यन्त निन्दा का कारण है।

दूसरे के धनको मिट्टी के ढेले के समान अनुपादेय समझकर उसके चुराने या विनाशकी चिन्ताको बिलकुल छोड़ देना, इस दुर्ध्यान से बचनेका सीधा उपाय है। ऐसा करने से ही मनुष्य पाप बन्धसे बच सकता है।

४—परिग्रह संरक्षणानन्द—परिग्रह की रक्षा करने में— उसे बढ़ाने या बनाये रखने में आनन्द मानना, इसके लिये निरन्तर चेष्टा करना परिग्रह संरक्षणानन्द रौद्रध्यान है। जो मनुष्य बहुत परिग्रह होने पर अपने को धन्य मानते हैं, अच्छी भोग सामग्रियां मिल जाने पर अपना ऐश्वर्य समझते हैं और प्रतिष्ठित पद मिल जाने पर अपना प्रभुत्व समझते हैं और अपने को कृतकृत्य अनुभव करने लगते हैं, वे सब रौद्रध्यानी हैं। उन्हें जो सामग्रियां प्राप्त हुई हैं वे उनके पुरुषार्थ और पुण्योदय से हुई हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं. पर किसी सामग्री को पा कर फूला न समाना और दूसरों के अतिशय दुःख पाते रहने पर भी अपने पास की निरर्थक वस्तु को पड़ी रखना और उसे बढ़ानेकी निरन्तर इच्छा करना पापबन्ध का कारण है। व्यर्थ परिग्रह की रक्षा में व्याकुल होना और उसे देख देख कर आनन्द मानते रहना भूल है। इससे अन्य प्राणियों को और स्वयं उस रक्षा करने वाले को भी दुःख के अतिरिक्त कुछ फल नहीं मिलता। ज्ञानार्णव में लिखा है—

> "बह्वारम्भपरिग्रहेषु नियतं रक्षार्थमभ्युद्यते।
> यत्संकल्पपरम्परां वितनुते प्राणीह रौद्राशयः॥
> यच्चालम्ब्य महत्त्वमुन्नतमना राजेत्यहं मन्यते।
> तत्तुर्यं प्रवदन्ति निर्मलधियो रौद्रं भवाशंसिनाम्

अर्थात—रौद्र परिणाम वाला जो प्राणी अनेक तरहके आरम्भ और परिग्रहकी रक्षा केलिये नियमसे उद्योग करता है. और उसमें संकल्प परम्परा का —अनेक कल्पनाओं का विस्तार करता है तथा महत्त्व का अवलम्बन कर उन्नतचित्त हो "मैं राजा हूँ" इस प्रकार समझता है अपने ऐश्वर्य के लिये मदोद्धत हो प्रभुत्व का घमण्ड करता है, उस संसार बन्ध की इच्छा करने वाले उस जीव के, आचार्यों ने विषय संरक्षणानन्द आर्तध्यान माना है।

मनुष्य अपने प्राप्त किये हुए परिग्रह में फंसा ही रहना चाहता है, उससे महत्त्व हटाना नहीं चाहता। मृत्यु के समय तक भी उसके परिणाम अपने परिग्रह की रक्षा से विरक्त नहीं होते। इन परिणामों

के संसार बन्ध का कारण होने से आचार्यों ने इस ध्यान को बुरा बताया है। निस्पृह हो कर रहना. परिग्रही हो कर भी जल से भिन्न कमल की भांति उसमें अन्तरङ्ग से मोह न रखना ही इससे बचने का उपाय है।

इस प्रकार रौद्रध्यान के चारों भेदों का स्वरूप समझना चाहिये। यह ध्यान भी आर्तध्यान के समान बुरा है। इन्द्रियों के विषय में अप्रवीणता मुख और नेत्र का रक्त की अधिकता के कारण लाल होना, शरीर में जलन युक्त होना, शस्त्र का प्रहार करना, कठोर वचन कहना, भ्रकुटि युक्त होना, अपनी शक्ति की प्रशंसा करना. प्रस्वेद युक्त होना, अपने ओठों को डसना. पत्थर फैंकना. शरीर का सकम्प होना, भयानक आकृति होना आदि रौद्रध्यान के प्रकट बाह्यचिह्न है। इन के अतिरिक्त क्रूरता. दंड के समान परुषता, वञ्चकता, कठोरता, निर्दयता आदि सब कुटिल परिणाम रौद्रध्यान के परिचायक हैं।*

रौद्रध्यानी के कार्य बहुत खोटे होते हैं, उस के दया का लेश नहीं होता। वह हमेशा क्रोधी रहता है और दूसरों का अहित चाहता है और उन्हें कष्ट पहुंचा कर बहुत खुशी होता है। तीव्रतर अशुभ लेश्याएं इस का कारण हैं। यह मिथ्या दृष्टि से लेकर पाँचवे देशसंयत गुणस्थान तक होता है। इस से आगे के किसी गुणस्थान वर्ती जीव के अशुभ कर्मोदयवश यदि ऐसे परिणाम हो जांय तो वह फिर संयत नहीं रहता। देश संयत के भी अधिक ऐसे परिणाम नहीं होते पर कभी २ वह हिंसारूप आरम्भ से और परिग्रह की रक्षा से नहीं बच पाता, इस कारण वहाँ सत्ता मानी है। हां, इतना विशेष अवश्य है कि उसके परिणाम नरकगति के बन्ध के कारण नहीं होते। क्योंकि वह सम्यक्त्व रत्न से मण्डित है। इस कारण अन्यायमार्ग में प्रवृत्ति नहीं करता और खोटी वस्तुओं पर अधिक ध्यान नहीं देता। अनादिकाल के कुसंस्कारों से जीवों के परिणाम बिना यत्न के ही रुद्ररूप होते रहते हैं। इस लिये मुमुक्षुओं का कर्तव्य है कि ऐसे परिणामों को सतर्क रहकर न होने दें।

अससाम

*"अत्ताऽपात्रवमाननाक्ष्यरुणता दाहश्च देहे महान्,
हेत्युत्क्षेपविरूक्षवाग्भृकुटयः शक्तिप्रशंसात्मनः।
स्वेदस्वाधरनिष्ठुरग्रहकराघातांगकम्पादयः,
कार्यांकाः स्वपरावबोधविषयास्तद्रौद्रभावोद्भवाः" ॥

आचारसार।

"क्रूरता दण्डपारुष्यं वञ्चकत्वं कठोरता।
निस्त्रिंशत्वं च लिङ्गानि रौद्रस्योक्तानि सूरिभिः॥"

ज्ञानार्णव।

"रुद्रः क्रूरतराशयो गतदयो रौद्रं हि रुद्रं भवं,
स्यात्तं चर्म यथोक्तधूलिनिलयं तद्वत्कुकर्मालयम्।
पञ्चस्थानिगुणेषु तीव्रतरतत्कृष्णात्रिलेश्योद्भुतं.
प्रोद्यत्तीव्रतरार्त्तिनारकगतिप्राप्तेर्निमित्तं मतम्॥"

आचारसार।

स्वास्थ्य संबंधी कुछ छोटी बातें

(ले० — श्रीमान प० कपूरचन्द्र जी जैन बनारस)

हम-भारतीय- स्वास्थ्य सम्बन्धी बड़ी २ बातोंका भी पालन बहुत ही कम करते हैं फिर अगर स्वास्थ्य सम्बन्धी छोटी २ बातोंकी उपेक्षा करें तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ? जिन बातोंको आज हम तुच्छ कहकर छोड़ते जारहे है, उन्हीं बातों को योरोपियन लोग स्वास्थ्यकी दृष्टिसे उत्तम समझ कर ग्रहण करते जारहे हैं। मुझे ज्ञात है कि विशाल भारत में किसी लेखक ने उन स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों का जिक्र किया था, जिन्हें कि हम लोग बिलकुल उपेक्षा की दृष्टिसे देखते हैं और देखते जारहे हैं जिनका मैं आगे वर्णन करूंगा। नीचे लिखी बातें यद्यपि और और दृष्टिसे तो तुच्छ हैं परन्तु स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों से खासकर सम्बन्ध रखती हैं।

१- कुल्ला करना-- भोजन करनेके बाद कुल्ला भारतीय अभ्यासतः करते ही हैं परन्तु यह बात उनके धर्मशास्त्र के अंतर्गत भी लिखी हुई पाई जाती है। सोचनेकी बात है और योरोपियन लोगों ने शायद सोच भी लिया है कि भोजन या किसी भी चीजके खाने के बाद मनुष्यको उस अन्न के कणों से छुटकारा पाने के लिये कुल्ला करना अत्यंत जरूरी है। जब हमलोग भोजन करके उठते हैं तो मुंह अन्नके टुकड़ों, लार आदिसे भरा रहता है परन्तु जब हम उसे उंगली डालकर अच्छी प्रकार साफ कर लेते हैं तो उस समय प्रसन्नता मालूम होती है, बादको मुह में दुर्गन्ध नहीं आती। नियमित रूपसे कुल्ला अच्छी तरह करने वाले शायद ही कभी दांत सम्बन्धी छोटी बड़ी बीमारियों से पीड़ित दिखाई पड़ते या सुने जाते है। यह बात और है कि कोई और और उपायों से अपने दांतोंको कमजोर कर डालें। कुल्ला करने का अर्थ मेरे विचारसे यह नहीं है कि मुँह में पानी लिया और थुलक दिया, या योंही पोले २ उंगलियों को दांतों पर घुमा फिरा दिया। कुल्ला करते समय कुल्ला करने वालोंको जरा तकलीफ करके उंगलियों को ओरसे मुंहके प्रत्येक भाग में रगड़ना चाहिये। खासकर दांतों को।

२- भोजन के बाद क्षणिक विश्राम— इसकी आवश्यकता शायद ही कोई पढ़ा लिखा व्यक्ति हो जो न जानता हो या किसीके मुंह से न सुना हो। परन्तु मनुष्योंका स्वभाव ही है। सुनकर, जानकर भी कामोंकी बाहुल्यता के कारण या और किसी कारण कहिये वे अपने को कुछ क्षणों तक विश्राम करने में सर्वथा असमर्थ समझते हैं। भोजन करके आये, अगर और कुछ काम न हुआ तो समाचार पत्र ही पढ़ने लगे। समाचार पत्र पढ़ने के लिये और भी समय निकल सकता है परन्तु भोजन के बाद जो विश्राम करने का समय है वह तो निकल जाता है सो निकल ही जाता है। मनुष्य बड़े २ कामों को जिसको वह विचार लेता है-आसानी से कर डालता है। फिर यह तो छोटी सी बात है जहां पाँच छह दिन किया कि आदत पड़ गई। भोजन के बाद विश्राम करने से जो फायदा होता है वह मेरे तुच्छ अनुभव का ही नहीं बड़े २ डाक्टरों द्वारा सिद्ध की

गई बात है। भूल यह है कि हम लोग जो भोजन कर के उठते हैं, उस के बाद भोजन एकाएक नीचे उतरता है। और कई लगों के बाद पाचन क्रिया आरम्भ होने के साथ ही साथ उस में उछल कूद भी होती है, इसी लिये हमारे यहाँ के शास्त्रकारों ने भोजन के बाद न तो काम करने का आदेश दिया है और न लेटने का; बल्कि कुछ दूर चलने का।

३- सन्ध्या समय घूमना—पाश्चात्य देशों में जहाँ कि अधिकतर काम रात को ही हुआ करता है, वहां के मनुष्य शाम को घूमने का समय निकाल ही लेते हैं। पर हम लोग चाहे सारा दिन थोड़ा काम करें, किन्तु शाम को तो जरूर ही कोई न कोई काम करने लगते हैं। कितना अच्छा हो यदि सन्ध्या का समय खेल खेलने अथवा टहलने में व्यतीत किया जावे। सन्ध्या का टहलना यद्यपि कुछ अंश में प्रातः काल के टहलने से कम है परन्तु उस समय भी टहलना लाभप्रद ही है। देहात वाले अगर सन्ध्या समय न भी टहलें तो उनको उतना नुकसान प्रद नहीं है जितना शहर वालों को। सवेरे टहलने में तो शहर वालोंको कुछ असुविधायें हो भी सकती हैं, परन्तु सन्ध्या को नहीं।

४—प्रात दंतोन करना—रात को सोने के बाद जब सवेरे मनुष्य उठता है, तब उसका मुँह नाना प्रकार के दोषों से पूर्ण रहता है। दंतोन करने के बहाने उसे अपने नाक, आंख साफ करने का भी मौका मिल जाता है। इसमें तो कुछ सन्देह ही नहीं परन्तु स्वयं दंतोन से दांतों को एक प्रकार का आहार मिल जाया करता है। अगर दंतोन उत्तम की हुई हो तो सब को जरूर प्रसन्नता होती है। उन आदमियों को जो स्नान ज्यादा देरमें करते हैं, सुबह दंतोन करने से कभी न चूकना चाहिये। परन्तु यह नहीं कि बिना शौचादि किये ही दंतोन कर लिया। दंतोन की जगह कुछ आदमी आजकल ब्रुस का व्यवहार करते हैं। परन्तु ब्रुश की अपेक्षा तो मुझे सूखी दंतोन अगर कोई दे, तो वह ज्यादा पसंद होगी। ब्रुश को रोज दतोन करके साफ रखना प्रत्येक के लिये साध्य नहीं है। डाक्टरों का यह मत है कि ब्रुश को कारबोलिक एसिड से धो कर ही रखना चाहिये। फिर अकेले ब्रुश से भी तो काम नहीं चलता. उसके साथ दंत मंजन, जीभ खरोचन आदि आदि भी तो चाहिये। इन चीजों के बिना क्या ब्रुश वाला ब्रुश चाटेगा? दंतोन, सिर्फ ही दतोन इस सब कमी को पूरा करती है। उसका रस मसाले का, डंडी ब्रुश का और उसको फाड़ कर जीभ साफ करने का काम भी लिया जाता है। अतएव जहां तक दंतोन पर्याप्त हो वहां तक तो ब्रुस के दर्शन नहीं करना चाहिये, न मिलने की तो कोई बात ही नहीं।

५ नियमित भोजन— यह सब जानते है कि समय पर भोजन करना चाहिये। विद्यालय, बोर्डिङ्ग आदि संस्थाओं में तो ऐसा होता भी है। इसके अलावा बहुतसे व्यक्ति नियमित समय पर भोजन करते है और बहुतसे समय पर भोजन करने को बाध्य रहते है। मैं उन सज्जनोंके लिये नहीं किन्तु उन महा पुरुषोंका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जोकि ठीक समयपर मशीनेमें एक या दो बार ही भोजन करते हों। नियत समय भोजन न करने का खास कारण नहीं होता-होता है केवल आलस्य।

जिसे नियमित समय पर भोजन करने की आदत पड़ गई हो, और अगर वह उस समयपर भोजन न भी करे तो भी उसके पेटमें रस-रचाने वाला निकल आता है अतएव किसी एक खास समय पर भोजन करना अत्यंतावश्यक है। आजकल एक बातमें झगड़ा है कि पानी भोजन के साथ पीना चाहिये या भोजन के आधे घंटे बाद। परन्तु मेरी राय तो दोनों ठीक है भोजन के साथ में भी थोड़ा सा पानी पीना चाहिये परन्तु यह बात नहीं है कि भोजन के समय एक कौर तो अन्न खाते हैं और दो घूंट पानी पी जाते हैं। ऐसा करने से भोजन का रस पतला पड़ जाता है और उस में उत्तम खून अधिक मात्रा में नहीं बनता और उस मनुष्य की शारीरिक शक्ति कमजोर पड़ जाती है। मैंने कई ऐसे मनुष्यों को देखा है कि जो भोजन के साथ एक २ लोटा पानी पी जाते थे, परन्तु मैंने प्रायः ऐसे मनुष्य की शक्ति (Vitality) क्षीण पाई, पानी कम (भोजन भर में करीब पाव डेढ़ पाव) पीना प्राकृतिक है। फिर अपनी २ प्रकृति।

६- दिन चर्या—प्रत्येक अलग २ काम करने वालों की दिनचर्या कदापि एक सी नहीं हो सकती। सभी के लिये एक प्रकार की दिनचर्या नियत कर देना मूर्खता ही नहीं एक प्रकार का अन्याय है। भिन्न २ प्रकृति का मनुष्य भिन्न २ समय में भिन्न २ काम करना चाहता है या उसे उस समय वह काम अच्छा लगता और बनता है। यह बात जरूर है कि कुछ दिन अभ्यास करने से सब की एक प्रकार हो सकती है, परन्तु इससे कोई फायदा नहीं, उससे शायद उस की स्वास्थ्य उन्नति में बाधा पड़े। परन्तु यह जरूर आवश्यक है कि अपनी नित्य क्रिया जरूर बनाई जाय। न केवल मैं ही अच्छी प्रकार इसका पालन करता हूं बल्कि हमारी समाज-विद्यार्थी समाज-के बहुत से ऐसे हैं जो इसका कम पालन करते हैं। नित्य क्रिया का बनाना पांच मिनट का काम है परन्तु पालन करना आजन्म का। एक नित्य क्रिया (Daily routing) बनाकर एक दो दिन पालन करके प्रायः छोड़ देते हैं, क्योंकि आदमी स्वच्छन्द प्रकृति का होता है। वह कदापि नियन्त्रण में बन्दी होना नहीं चाहता, चाहे वह स्वनिर्मित हो चाहे पर। परन्तु अभ्यास बड़ी चीज है धीरे धीरे प्रयत्न करना चाहिये। दूसरों से इसकी शिक्षा लेना अत्यन्त उचित है। नित्य क्रिया या तो बनाना ही उचित नहीं, यों ही अपने मन में समय को विभाजित कर उसी के अनुसार काम करना अच्छा; या फिर बनाकर जहाँ तक हो उसके अनुसार करना उचित है। दिन चर्याका सम्बन्ध सभी प्रकारके कामोंसे है। शारीरिक उन्नति के साथ ही साथ आदमी कर्मठ, उद्योगी, कर्मशील भी बन जाता है। कोई भी महापुरुष आज तक ऐसा नहीं हुआ है जिसकी अपनी नित्य क्रिया न हो।

७—अन्तिम बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि बालकों को शुरू से ही स्वास्थ्य सम्बन्धी बातें सिखाई जायें। उन्हें मानसिक शिक्षा की शिक्षा न दें, शरीर तन्दुरुस्त रखना सिखाया जाय। उन्हें बचपन से ही ऐसा बनाया जाय कि आगे चलने पर उन का बचपन का शरीर उनके कार्यों में साधक हो न कि बाधक। पढ़ाने की तरफ तो सभी ध्यान रखते, उसकी प्रशंसा करते हैं, परन्तु उससे ज्यादा

प्रशंसा उसकी करनी चाहिये जो बालक स्वास्थ्यवान हो चाहे वह मूर्ख ही क्यों न हो। किसी का कथन है।' (Health is best for mortol man; next beauty, thirdly Well gotton Wealth, fourth the pleasures of youth among friends यानी—मरणशील मनुष्यों के लिये स्वास्थ्य सब से बढ़कर है, उसके बाद में सुन्दरता, तीसरी बात है धन जो सचाई से पैदा किया गया है और अंतिम है जवानी का अपने मित्रों के साथ आनन्द।

इसके सिवाय कुछ ऐसे उपाय तथा नियम पाठकों के समक्ष स्वास्थ्य बन्धु से उद्धृत करके रखते हैं। जिससे प्रत्येक मनुष्य प्रकृति पर निर्भर रहकर बिना किसी औषधि सेवनके सर्वदा स्वस्थ रहता हुआ सुख मय तथा दीर्घ जीवन भोग सकता है। उपायों की सरलता को देखकर पाठक इन्हें मामूली समझ कर छोड़ न दें, बल्कि इनका प्रयोग करें। थोड़े ही समय में इनके गुण आपको प्रत्यक्ष दीख पड़ेंगे।

—सम्पादक।

नेत्र रक्षा के नियम

१ सूर्योदय के पहिले उठो। इस से आंखों पर एक दम तेज़ प्रकाश जो सूर्योदय के कारण हो जाता है नहीं पड़ता-इससे दृष्टि बिगड़ने नहीं पाती।

२ प्रातः उठने के पश्चात् आँखों को ठण्डे जल से धो डालें। आँखों की सफाई करने का उत्तम विधि यह है कि साफ निर्मल जल के अन्दर आंखें खोलें और आँखों को इधर उधर घुमावें। इस से आँखों के सब विकार दूर हो जाते हैं।

३ उत्तम तथा हल्का (शीघ्र पचने वाले) खुराक खावें।

४ आवश्यकता के बिना दिन में कभी न सोवें

५ भोजन के पश्चात् आखो में कोई औषधि सुर्मा आदि न डालना चाहिये।

६ तम्बाकू, शराब आदि नशीली वस्तुएं तथा अधिक खटाई और लाल मिर्च आदि सेवन न करने चाहिए।

७ गर्दगुबार (धूल मिट्टी) तथा धूँआ आदि से आँखों को बचावें।

८ अधिक स्त्रीप्रसंग से बचें और ऋतुगामी बनें।

९ बहुत छोटे २ अक्षर जहां तक होसके न पढ़ें।

१० चमकदार वस्तुओं की ओर अधिक न देखें।

११ लेटकर और थोड़े प्रकाश में न पढ़ें।

१२ यदि आँखों में कोई विकार उत्पन्न हो गया हो तो कोई उत्तम औषधि जैसे "काश्मी कमल मधु" सेवन करें। अथवा किसी योग्य वैद्य की सम्मति अनुसार तुरन्त इलाज करें।

जल सम्बन्धी नियम

शरीर स्वस्थ होने की हालत में सदैव ठण्डे पानी से ही स्नान करें। केवल रोगावस्था अथवा निर्बलता में गरम पानी से स्नान करें। ध्यान रहे कि गरम पानी से किसी बन्द स्थान में स्नान किया जाय। अन्यथा निमोनिया खांसी आदि के होने का भय रहता है।

२—स्नान के पश्चात किसी साफ सुथरे तौलिये से शरीर को खूब रगड़ कर साफ करना चाहिये।

३—भोजन के बाद तुरन्त अथवा बीच में अधिक पानी नहीं पीना चाहिये। इससे जठराग्नि मन्द पड़ जाती है। जिससे भोजन ठीक न पच कर कई एक

रोगों का कारण बन जाता है। भोजन के बीच में थोड़ा जल और फिर एक दो घण्टे बाद अधिक जल पीने का अभ्यास रखा जाय तो इससे कोई रोग न होने पायेगा।

४–सर्वदा नलके अथवा साफ कुएं के जल को सेवन करो। जहां तालाब अथवा नदी का ही पानी मिले तो उसे निम्न प्रकार साफ करके सेवन करें। थोड़ी सी फिटकड़ी अथवा पोटासियम परमैंगनेट डाल कर पानी को एक दो घण्टे के लिये किसी बर्तन में रख छोड़ें। इससे सब मल नीचे बैठ जायगा और रोगों के कीटाणु न रहेंगे।

५–हैजे के दिनों में कुएं के जल को बिना औटाये मत पीओ।

६–जुकाम और खांसी में रात को सोते समय औटाये गए गरम गरम जल को पीना जादू का सा असर रखता है।

वायु सम्बन्धी नियम

१–खुली वायु में प्रतिदिन भ्रमण तथा व्यायाम करो। विधि पूर्वक प्राणायाम भी किया करो।

२–गन्दे तथा जहां अधिक जन संख्या हो ऐसे गली कूचों में मत रहो।

३–मकान की खिड़कियां को सर्वदा खुला रक्खो ताकि कमरों के अन्दर ताजी ताजी वायु आती रहे।

४–अधिक सर्दी में सिर आदि सब अङ्ग ढांप लो किन्तु मुंह को नंगा रहने दो।

५–किसी रोगी के कमरे में अधिक देर तक मत ठहरो। विशेष कर जब कि रोगी छूत छात के किसी रोग जैसे—तपेदिक, (राजयक्ष्मा) हैजा, चेचक, (शीतला) प्लेग आदि से ग्रस्त हो।

६–धूप, अगरबत्ती आदि सुगन्धित वस्तुयें घरमें जलाओ। इससे किसी रोग के कीटाणु समीप नहीं आने पाते और वायु शुद्ध रहती है।

७–ठण्डी वायु से डरो नहीं बल्कि इसके सहन करने का शरीर को अभ्यास डालो।

नींद सम्बन्धी नियम

१–भोजन के तीन घण्टे बाद सोना चाहिये।

२–सर्वदा पहलू पर ही सोओ। चित्त मत सोओ। सर्वदा सूर्योदय के पहले उठो। इससे स्वप्नदोष प्रायः नहीं होता।

३–सोने से पहले कोई उत्तम पुस्तक पढ़ो अथवा किसी शुभ वस्तु का मन में स्मरण करो। इससे बुरे स्वप्न नहीं आयेंगे और विचारों के ऊपर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

३–यदि नींद कम आती हो तो (१) सोते समय नींद का ख्याल करो और ऐसा अनुभव करो जैसे नींद आ रही हो। और जब नींद आने लगे तो अपने आपसे कहो कि मुझे खूब लम्बी नींद आयेगी। इससे खूब नींद आयेगी। (२) प्रातः व्यायाम करो तथा पैरों के पंजों (अग्रभाग) पर बोझ डालकर भ्रमण करो। (३) पैरों को घुटनों तक पानी से सोते समय धो डालो। यह साधन भी परीक्षित है।

४–युवावस्थामें ७–८ घण्टे अवश्य सोना चाहिये। इससे अधिक सोना अच्छा नहीं है। दूध पीते बच्चे जितनी नींद लें उतना ही अच्छा है।

भोजन सम्बन्धी नियम

१ भोजन जल्दी २ मत खाओ। बल्कि खूब चबा २ कर आराम से खाओ। मुख में ३२ दान्त

है तदनुसार प्रत्येक ग्रास को ३२ बार चबाना चाहिये।

२-जितनी भूख हो उससे कम खाओ। अधिक खाने से कई प्रकार के रोग उत्पन्न होते है।

३- सप्ताहमें एक बार अवश्य व्रत रक्खो। यदि सप्ताहमें न रख सको तो मासमें एक बार अवश्य रखो। इस व्रतमें कोई वस्तु मत खाओ बल्कि जल जितना पी सको उतना पीओ। इससे पेट बिलकुल स्वच्छ होजायगा।

४- सर्वदा मोटे आटेकी रोटी, फल तथा अनेक प्रकार की सब्जी खूब खाओ, दालें खूब खाओ। इस से कब्ज न होगी। ध्यान रहे कि सब रोग पेट विकार से ही उत्पन्न होते हैं। इसलिये पेटको सर्वदा साफ करना चाहिये।

५- गरम वस्तुको खाकर तुरन्त ठण्डी वस्तु मत खाओ अन्यथा गला और दांत खराब होजायेंगे।

६- सर्वदा सात्विक भोजन करो। राजसिक और तामसिक मत खाओ।

७- खानेसे पहले तथा पीछे अपने हाथ और दांत खूब साफ करो।

८- भोजन के तुरन्त बाद पढ़ना, व्यायाम, मैथुन स्नान, चिन्ता तथा क्रोध करना हानिकारक है।

मानव-मन।

[ले० श्रीमान ब्र० प्रेमसागर जी]

यह मानव मन अति ही दुर्वार
होता है चंचल बार-बार।
क्षणमें जाता स्वर्गों मझार,
लेता नन्दन वन की बहार॥

क्षणमें बन जाता है कुबेर,
क्षणमें बन्दन आता सुमेर।
क्षण में स्थल क्षण नभ विहार-
करता, बन जाता है बयार।

क्षण कृपण और क्षण में उदार,
क्षण मानस कल, क्षण विकल भार-
होता, खोता शुभ धर्म ध्यान;
भावन में भावन सकल ज्ञान।

बिन ज्ञान नहीं पावत सु शांत,
मृगतृष्णावत धावत हो क्लान्त।
इससे इच्छाओं का निरोध-
करके, कीजे उपलब्ध बोध।

अध्यात्म अलौकिक रस-प्रधान-
वह आवे, आवे आत्म-ज्ञान।
तब प्रेम सदन का खुले द्वार,
सुख-शांति-सुधा की बहे धार।

नवयुवकों से-

भारतवर्ष की बढ़ती हुई जनसंख्या, दरिद्रता और मृत्युसंख्या पर विचार करते हुए कुछ लोगों के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुए हैं कि भारत वर्ष में बनावटी उपायों से यदि सन्तान निग्रह (सन्तान उत्पन्न न होने देने,) की प्रणाली चल पड़े तो उपर्युक्त तीनों आफतें टल जावें। क्योंकि थोड़ी सन्तान उत्पन्न होने से जनसंख्या बहुत न बढ़ेगी जिस से कि उसके लिये अधिक खाद्य पदार्थों की आवश्यककता न होगी और भूख से मरने वालों की संख्या में भी कमी होगी।

इस के सिवाय सन्तान निग्रह आन्दोलन का विशेष कारण एक यह भी है कि स्कूल और कालिजों में पश्चिमी ढंग से शिक्षा पाने वाली लड़कियां सन्तान उत्पत्ति और उसके पालन पोषण आदि की झंझट में नहीं पड़ना चाहतीं किन्तु उत्कट विषयवासना में यथेच्छ विहार करने की लालसा उनमें जागृत रहती है। उनकी यह कामना उसी समय सफल हो सकती है जब कि वे सन्तान निरोध के बनावटी साधनों का उपयोग करें।

सन्तान निरोध के कृत्रिम उपाय कितने हानि कारक हैं यह बात किसी दूसरे लेख में प्रगट करेंगे। यहां पर महात्मा गांधी जी का वह लेख प्रगट करते हैं जिस में उन्हों ने उक्त विषय पर अपने विचार प्रगट किये हैं।

—संपादक

आजकल कहीं २ नवयुवकों की यह आदतसी पड़ गयी है कि बड़े बूढ़े जो कुछ कहें वह नहीं मानना चाहिये। मैं यह तो नहीं कहना चाहता कि उन के ऐसा मानने का बिलकुल कोई कारण ही नहीं है लेकिन देश के युवकों को इस बात से आगाह जरूर करना चाहता हूँ कि बड़े बूढ़े स्त्री-पुरुषों द्वारा कही हुई हरएक बातको वे सिर्फ इसी कारण मानने से इनकार न करें कि उसे बड़े-बूढ़ों ने कहा है। अक्सर बुद्धि की बात बच्चों तक के मुंह से जैसे निकल जाती है उसी तरह बहुधा बड़े-बूढ़ों के मुंह से वह निकल जाती है; स्वर्ण नियम तो यही है कि हरएक बात बुद्धि और अनुभव की कसौटी पर कसी जाय फिर वह चाहे किसी की कही या बताई हुई क्यों न हो। कृत्रिम साधनों से सन्तति निग्रह की बात पर मैं अब आता हूं। हमारे अन्दर यह बात जमा दी गई है कि "अपनी विषय वासना की पूर्ति करना भी हमारा वैसा ही कर्तव्य है जैसे वैध रूपमें लिये हुए कर्ज को चुकाना हमारा कर्तव्य है. और अगर हम ऐसा न करें तो उस से हमारी बुद्धि कुण्ठित हो जायगी।" यह विषयेच्छा सन्तानोत्पत्ति की इच्छा से पृथक मानी जाती है और सन्ततिनिग्रह के लिये कृत्रिम साधनों के समर्थकों का कहना है कि जब तक सहवास करने वाले स्त्री-पुरुषों को बच्चे पैदा करने की इच्छा न हो तब तक गर्भ धारण नहीं करना चाहिये। मैं बड़े साहस के साथ यह कहता हूँ कि यह ऐसा सिद्धांत है, जिसका कहीं भी प्रचार करना बहुत खतरनाक है, और हिन्दुस्तान जैसे देश के लिये तो, जहां मध्यमश्रेणी के पुरुष अपनी जननेन्द्रिय

का दुरुपयोग करके अपना पुरुषत्व भी खो बैठे हैं, यह और भी बुरा है। अगर विषयइच्छा की पूर्ति कर्तव्य हो तब तो जिस अप्राकृतिक व्यभिचार के बारे में कुछ समय पहले मैं ने लिखा था वह तथा काम पूर्ति के कुछ अन्य उपायों को भी ग्रहण करना होगा। पाठकों को याद रखना चाहिये कि बड़े २ आदमी भी ऐसे काम पसन्द करते मालूम पड रहे हैं जो आम-तौर पर वैषयिक पतन माने जाते हैं। सम्भव है कि इस बात से पाठकों को कुछ ठेस लगे। लेकिन अगर किसी तरह इसपर प्रतिष्ठा की छाप लग जाय तो बालक बालिकाओं में अप्राकृतिक व्यभिचारका रोग बुरी तरह फैल जायगा। मेरे लिये तो कृत्रिम साधनों के उपयोग से कोई खास फर्क नहीं है जिन्हें लोगों ने अभीतक अपनी विषयेच्छा पूर्ति के लिये अपनाया है, और जिन के ऐसे कुपरिणाम आये हैं कि बहुत कम लोग उनसे परिचित हैं। स्कूली लड़के लड़कियों में गुप्त व्यभिचारने क्या तूफान मचाया है, यह मैं जानता हूं। विज्ञान के नाम पर सन्तति निग्रह के कृत्रिम साधनों के प्रवेश और प्रख्यात सामाजिक नेताओं के नाम से उन के छपने से स्थिति आज और भी पेचीदा हो गई है और सामाजिक जीवन की शुद्धता के लिये सुधारकों का काम बहुत कुछ असम्भवसा हो गया है। पाठकों को यह बताकर मैं अपने पर किये गये किसी विश्वास का भंग नहीं कर रहा हूं, कि स्कूल कालेजों में ऐसी अविवाहिता जवान लड़कियां भी हैं जो अपनी पढ़ाई के साथ २ कृत्रिम सन्तति निग्रह के साहित्य और मासिक पत्रों को भी बड़े चाव से पढ़ती रहती है और कृत्रिम साधनों को अपने साथ रखती है। इन सा-धनों को विवाहिता स्त्रियोंतक ही सीमित रखना असम्भव है। और विवाह की पवित्रता तो तभी लोप हो जाती है जब उस के स्वाभाविक परिणाम सन्तानोत्पत्ति को छोड़ कर महज अपनी अपनी पा-शविक विषय वासना की पूर्ति ही उस का सब से बड़ा उपभोग मान लिया जाता है।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो विद्वान स्त्री पुरुष सन्तति निग्रहके कृत्रिम साधनों के पक्षमें बड़ी लगनके साथ प्रचार कार्य कर रहे है वे इस झूठे विश्वासके साथ कि इससे उन बेचारी स्त्रियोंकी रक्षा होती है जिन्हे अपनी इच्छाके विरुद्ध बच्चोंका भार सम्हालना पडता है, देशके युवकोंकी ऐसी हानि कर रहे हैं जिसकी कभी पूर्ति ही नहीं हो सकती। जिन्हें अपने बच्चोंकी संख्या सीमित करनेकी जरूरत है उनतक तो आसानीसे वे पहुंच भी नहीं सकेंगे क्योंकि हमारे यहाँकी गरीब स्त्रियां को पश्चिमी स्त्रियां की भांति ज्ञान या शिक्षण कहां प्राप्त है। यह भी निश्चय है कि मध्यम श्रेणीकी स्त्रियोंकी ओरसे भी यह प्रचार कार्य नहीं हो रहा है क्योंकि इस ज्ञानकी उन्हें उतनी जरूरत ही नहीं है जितनी कि गरीब लोगोंको है।

इस प्रचार कार्य में सब से बड़ी जो हानि हो रही है वह तो पुराने आदर्श को न अपनाना है, जो अगर अमल में लाया गया तो जाति का नैतिक तथा शारीरिक सर्वनाश निश्चित है। प्राचीन शास्त्रों में व्यर्थ वीर्य-नाश को जो भयावह बताया है वह कुछ अज्ञानजनित अन्धविश्वास नहीं है। कोई किसान अपने पास के सब से बढ़िया बीज को बंजर जमीन में बोवे, या बढ़िया खाद से खूब उपजाऊ बने हुए

किसी खेत के मालिक को इस शर्त पर बढ़िया बीज मिले कि उस के लिये उसको उपज करना ही सम्भव न हो तो उसे हम क्या कहेंगे ? परमेश्वर ने कृपा करके पुरुष को तो बहुत बढ़िया बीज दिया है और स्त्री को ऐसा बढ़िया खेत दिया है कि जिस से बढ़िया इस भूमण्डल में कोई मिल ही नहीं सकता। ऐसी हालत में मनुष्य अपनी बहुमूल्य सम्पत्ति को व्यर्थ जाने दे तो यह उस की दण्डनीय मूर्खता है। उसे तो चाहिये कि अपने पास के बढ़िया से बढ़िया हीरे जवाहरात अथवा अन्य मूल्यवान वस्तुओं की वह जितनी देख भाल रखता हो उस से भी ज्यादा इस की सार सम्भाल करे। इस प्रकार वह स्त्री भी अवश्य मूर्खता की ही दोषी है जो अपने जीवन उत्पादक क्षेत्र में जान बूझ कर व्यर्थ जाने देने के विचार से बीज को ग्रहण कर व्यर्थ करे। दोनों ही उन्हें मिले हुए गुणों का दुरुपयोग करने के दोषी होंगे और उन से उन के ये गुण छिन जायेंगे। विषयेच्छा एक सुन्दर और श्रेष्ठ वस्तु है, इस में शर्म की कोई बात नहीं है किन्तु यह है सन्तानोत्पत्ति के ही लिये। इस के सिवा इस का कोई उपयोग किया जाय तो वह परमेश्वर और मानवता के प्रति पाप होगा। संतति निग्रहके कृत्रिम उपाय किसी २ रूप में पहले भी थे और बाद में भी रहेंगे, परन्तु पहले उसका उपयोग पाप माना जाता था। व्यभिचारको सद्गुण कह कर उसकी प्रशंसा करने का काम हमारे ही युग के लिये सुरक्षित रखा हुआ था। कृत्रिम साधनों के हिमायती हिन्दुस्तान के नौजवानों की सब से बड़ी हानि कर रहे हैं। वह उनके दिमागमें ऐसी विचारधारा भर देते हैं जो मेरे ख्याल में गलत है। भारत के नौजवान स्त्री पुरुषों का भविष्य उनके अपने हाथों में है। उन्हें चाहिये कि इस झूठे प्रचार से सावधान हो जांय और जो बहु मूल्य वस्तु परमेश्वरने उन्हें दी है उसका उपयोग करना चाहे तो सिर्फ उसी उद्देश्यसे करें। जिस के लिये वह उन्हें दिया गया है। —महात्मा गांधी

—*—

द्वितीय वर्षकी फायल

परलोक परिचय

हमारे कुछ अजैन बन्धुओंकी ऐसी धारणा है कि नरक, स्वर्ग आदि कोई भिन्न स्थान नहीं हैं मनुष्य और पशु योनियों में जो सुख दुःख के स्थान हैं वे ही नरक स्वर्ग हैं। इस धारणा के कारण शास्त्रों में वर्णित स्वर्ग नरक को वे असत्य मानते हैं। किन्तु प्रेतविद्या विशारद महानुभावों ने अनेक परलोक गत आत्माओं से वार्तालाप करके इस बात को प्रमाणित किया है कि मनुष्यों से विशेष सुख संपन्न और भी आत्माएं होती हैं जिनके शरीर, सुख साधन सुन्दर होते हैं। उनका विवरण जैन शास्त्रों में बतलाये गये देवों से बहुत कुछ मिलता जुलता है।

अभी एक विलायती पत्र का अनुवाद जै० प्रताप में प्रकाशित हुआ है उसमें इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध लेखक स्वर्गीय डेनिस ब्रेडले का अपने पुत्र के साथ होने वाला प्रश्नोत्तर रूप में वार्तालाप लिखा है पाठकों की जानकारी के लिये उसका सारांश यहां प्रगट किया जाता है। अजितकुमार

मरने के कितने समय पश्चात तुम (मिस्टर ब्रेडले) वहां पहुंच गये जहां तुम अब हो।

मरने से पहले मुझे यहां की झलक दीख पड़ी थी। जब मेरे प्राण निकल रहे थे तो मैं यहां आ गया था। तुम्हें याद होगा जब मैं ने कहा था— यह बड़ा आश्चर्यजनक है और मैं मर गया था। उस समय मुझे इस विचित्र संसार का दृश्य दीख पड़ा था।

इस संसार का दृश्य कैसा है और वह कैसा लगता है? क्या तुम शब्दों में बयान कर सकते हो?

शब्दों में बयान करना तो आसान नहीं किन्तु यहां के अनुभव ऐसे हैं जिनका मुकाबला मानव जीवन नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ समय का तो प्रश्न ही नहीं, जगह बिना सीमा के मालूम होती है।

क्या वहां पर रात और दिन होते हैं?

जिस इरादे से तुम पूछते हो वैसे नहीं होते। यहां सदा दिन अथवा प्रकाश रहता है किन्तु कुछ अन्धेरे हिस्से भी हैं जहां कोई जाना चाहे तो जा सकता है।

जाना चाहे? इससे तुम्हारा क्या आशय है? तुम कितनी तेजी से चल सकते हो?

यहां विचार से चलना होता है। कहीं जाने का विचार करो और तुम वहां पर हो। फासला और समय कोई बाधा नहीं डाल सकते। यदि कोई आत्मा संसार में आकर भारतवर्ष देखना चाहे तो एक मिनट में देख सकता है और मिनट में लन्दन पहुंच सकता है।

क्या आत्माएं चलती फिरती नजर आती हैं? अगर आती हैं तो क्या वह वायु पर चलती हैं या और किसी चीज पर?

मनुष्य और उस आत्मा में यह अन्तर है कि वह आत्मा स्वतन्त्र है और मनुष्य एक स्थूल शरीर के कारावास में बन्द है। विचार करना ही वहां पहुंचना है।

मुझे यह सब बात सुनकर ईर्ष्या होती है। अच्छा.. जब तुम अपने नये संसार में पहुंचे तो क्या किया ?

मैं ने इन्तजार किया। जब कोई संसार में जन्म लेता है, शनैः शनैः वह संसार की गति से परिचित होता जाता है। और उसके गूढ़ रहस्यों को समझने लगता है। किन्तु यहां आकर मनुष्य को संसार से बिलकुल अलग प्रत्येक बात का अनुभव पहले से ही जान पड़ता है। स्फूर्ति और नवीनता उसे स्थान स्थान पर जान पड़ती है।

तब तुम ने क्या किया ?

मुझे मेरे मित्रों ने पहचान लिया। सबसे प्रथम मुझे मेरी बहिन मिली जो मेरी बड़ी सहायक हो गई है।

लेकिन तुम्हारे नये संसार में लाखों आत्मायें होंगी जो कि शताब्दियों में वहां जमा होती होंगी। तब वहां अपने परिचितों को किस प्रकार तुम पहिचान लेते हो ?

जो आत्मायें संसार में एक दूसरे को जानती थीं वह तुरन्त एक दूसरे की ओर आकर्षित हो जाती हैं, यह बड़ी विचित्र बात है जो शब्दों में बताया जा सकता। मैं अपनी माता से मिल चुका हूँ और सर आरथर केनन डायल और कौनफ्यूशश से भी। कौनफ्यूशश जो कि पुराने जमाने के फिलासफर थे एक खाकी रंग का साधुओं का सा वस्त्र धारण किये थे।

क्या वहां पर कुछ राजनीतिक तरीके भी काम में लाये जाते हैं जैसे कि दुनिया में है ?

हां, यहां पर राजनीतिक सभायें हैं जो कि यहां का सारा इन्तजाम करती हैं। यहां पर हमेशा अमन चैन ही रहता है क्योंकि यहां पर कभी लड़ाई झगड़ा नहीं होता। यहां पर किसी को कोई दुःख नहीं है।

क्या आत्मायें दुनिया के आदमियों से वार्तालाप करने में खुश होती हैं और क्या वह हमारी मदद करने की कोशिश करती है ?

जरूर, उन्हें पृथ्वी के आदमियों से बातचीत करने में अच्छा मालूम होता है। और वह उनको मदद भी करती हैं। मनुष्यों ने ही अपने नास्तिक विश्वासों की वजह से आत्माओं से बातचीत करने के रास्ते बन्द कर दिये हैं। एक वक्त ऐसा आवेगा जब कि आत्माओं से बातचीत करना इतना आसान हो जायगा जैसा कि वायरलैस पर बात करना।

क्या वहां पर किसी किस्म का संगीत भी है और अगर है तो कहां से आता हुआ मालूम होता है ?

संगीत जो कि मैं ने अभी तक सुना है मालूम होता है बहुत से किस्म के बाजों से निकलता है।

(यह सब बताने के बाद डाइले की आत्मा ने अपने पुत्र से बातचीत न करने की इच्छा प्रगट की और उन्हों ने अपने पुत्र से बहुत-सी घरू बातों पर वार्तालाप किया और अन्तिम बिदा ली।)

—*—

सं० सम्मति—उपर्युक्त विवरण देवों के वैक्रियिक शरीर, मारणान्तिक समुद्घात, इन्द्रसभा आदि से मिलता जुलता है।

माया-जाल

(ले०—श्रीमान पं० भंवरलाल झा शर्मा)

(गतांक से आगे)

संध्या का समय था। सूर्य देवता दिनभर गगन मडल में बादलों से घनघोर युद्ध करनेके कारण अरुण वर्ण हो द्रुत गति से विश्राम के लिये पश्चिम दिशा की ओर लपके जा रहे थे। बादलों का संगठन छिन्न हो चुका था। सूर्यके चले जाने पर क्रोधके मारे उनका शरीर लाल होरहा था और वे ठहर २ कर अपना रोष पृथ्वी पर प्रकट कर रहे थे। पृथ्वी उनकी पराजितता पर खिलखिला कर हंस रही थी और रात्रि उनके लालिमा के स्थान पर कालिमा पोत रही थी। पक्षि गण नाना प्रकारका कलरव करते हुये उन्मत्त हो इधरसे उधर दरख्तों की टहनियों पर फुदक रहे थे। चर अचर सभी पर यौवनका नशा छाया हुआ था। समस्त जङ्गल हरियाली से लहलहा रहा था। रास्ते चलते हुये पथिकों का श्रम वनकी निराली छटाको देखकर स्वतः दूर होजाता था, उन की लोभी आंखें फल-फूलों की सुन्दरता की ओर गड़ी जारही थीं। प्रत्येक प्राणी के हृदयको प्रकृति अपनी ओर आकर्षित कर रही थी। वन उपवनकी शोभा को देखकर मदान्ध हो, कोयल भी अपने आपे से बाहर होकर प्रसन्न चित्तसे कूक कूक कर संध्या का स्वागत कर रही थी।

उसी समय माया अपने मकान की ऊंची छत पर एक कोने में खड़ी हुई प्रकृति नटी के इस यौवनकी मादकता को टकटकी लगाये चारों तरफ निहार रही थी। उस पर भी यौवन की घटा उमड़ी हुई थी और उस घटा को देख देख कर उसके हृदयमें प्रेम रूपी पपीहा पुकार रहा था, मनमें उन्माद था, आंखों में मस्ती की लालिमा थी और थी छेड़छाड़की इच्छा। उसमें सच्चा प्रेम था और उसकी स्नेहपूर्ण ललचाई हुई दृष्टि अपने ग्रामकी ओर जगल के सघन वन और पहाड़ों को लांघती हुई मीलों को पार कर जाती थी फिर दीवार पर कुहनी के बल सिर रख कर कभी कुछ सोचती थी और कभी कुछ। इतने में एक छोटे लड़के ने आकर कहा— नई भाभी रोटी खा-लो। मायाने एकदम पीछे की ओर देखा और लड़के को उठा कर उसे चूमती हुई नीचे चली गई।

भगत जी की स्त्रीने मायाको बुलाने के लिये कई बार कहा, किन्तु भगत जी यह कह कर कि "सयानी लड़की अपने घरबार ही अच्छी" उसे समझा दिया करते थे। अन्तमें दिन प्रतिदिन के आग्रहने उनको विचारों से ढकेल दिया और लाचार होकर माया को बुलाने पर राजी होगये।

वह घरमें आई और आते ही अपनी मां के गले में लिपट कर फूट फूट कर रोने लगी। एक तरफ उसके हृदय के आभ्यन्तरिक भाव अपने प्रेमी के दर्शनों की उत्कट अभिलाषा पर मचलते हुये साफ प्रकट होरहे थे तो दूसरी तरफ भगत जी के कर्तव्य पर उस का क्रोध हृदय की आहों के साथ भाप बन कर आंखों की पलकों से टकरा कर, कपोलों पर बरस रहा था। वह उनकी तरफ देखना चाहती थी

किन्तु उसकी दुःखी आत्मा उसे पीछे की ओर खींच रही थी। परिचित सहेलियां गलेमें बांहें डालकर अगबीती कह रही थीं और उसके मनकी पूछने को बड़ी उत्सुक थीं किन्तु माया अपनी भोली चितवन से उनको ओर देखकर मारे शर्म के नीचा मुंह कर कर लेती थी. परन्तु अपने मनकी कथा किसी के सम्मुख व्यक्त नहीं कर सकती थी।

अपने चाचा के पास आने के बाद किशोर का स्वास्थ्य कुछ ठीक हो चला था। दिन भर उसके मित्रों से उसकी चारपाई घिरी रहती थी। सुहृद्गोष्ठी से सहज ही में उसका दिल बहल जाता था और पहाड़सा दिन कटने देर नहीं लगती थी। थोड़े दिन बाद उसमें घूमने फिरने की शक्ति होगई थी और वह उनके साथ खुली हवामें सैर करने को जाने लगा। उसके हृदयको माया की याद भूली सी प्रतीत होती थी, स्वप्न में भी न मिलने की आशा उसे विश्वास दिला रही थी. पुनर्मिलन की आकांक्षा को अपने हृदय से निकाल कर उसने एक ओर रख दिया था। अपने समयको व्यर्थ के मानसिक विचारों की झंझटों से बचाकर किसी न किसी काममें लगाये रखना अधिक श्रेयस्कर समझने लगा था। यौवनके शुष्क तूफानी झोकों ने उसके शरीर को लड़खड़ा दिया था जिससे मायाकी गुप्त प्रेम उसे जंजाल मालूम होने लगा, इससे घृणा उत्पन्न होचली और इस पर विजय प्राप्त करने का पूर्ण निश्चय कर लिया। कुछ ही दिनोंमें उसने प्रेमकी धार में प्रवाहित की हुई अपनी आरोग्यता को पुनः प्राप्त कर लिया।

लगभग नौ बजेका समय होगा। किशोर ने स्नान करके कपड़े पहिने और एक पुस्तक लेकर उसे ध्यानसे पढ़ने लगा। इतने में नौकरने आकर उसके सामने मेज पर एक लिफाफा ला पटका। किशोरने उसे जल्दी से खोला और पढ़ने लगा—

प्रिय किशोर !

तुम्हारे दर्शनों की लालसा में मुझे यहां आये करीब १५ दिन होगये। मुझे यह नहीं मालूम था कि इस अभागी को तुम यहां भी न मिलोगे। ऐसा प्रतीत होता है कि तुम्हारे मन से मेरे अल्हड़पन की याद विदा होचुकी है और इस दावानल की ओर पांव बढ़ानेसे पहिले ही तुमने अपने आपको संभाल लिया है। खैर, तुम भूल जाओ, किन्तु मैं तो इस क्षण-भंगुर तनके प्याले में तुम्हारे इस निठुर प्रेमको भरे रहूंगी। यह वह अङ्कुर है जो एक दफा जमने पर नष्ट नहीं हुआ करता। क्या सचमुच तुमने मुझे ठगा है? या वृथा ही मोहनी मूर्ति बनकर मुझे ललचाया था. सच है-पुरुष यों ही मीठा २ बनकर, स्नेह तथा सहानुभूति की आड़में अपनी वासना को तृप्त करने के लिये क्या २ मायाजाल रचा करते हैं। मुझ में तुम्हारे प्रति किसी तरह के कपट का लवलेश भी नहीं है. मैं अब भी तुम्हें उसी भक्तिभावसे याद करती हूं। केवल भूल इतनी है कि मैं तुम्हारे पत्रका जवाब विवशता के कारण न दे सकी। आशा है मेरे तृषित नेत्र तुम्हारा दर्शन करके अपनी प्यास बुझायेंगे।

…… दर्शनाभिलाषिणी

माया।

पत्र पढ़ कर किशोर ने छतकी तरफ देखा और दो मिनट तक कुछ सोचता रहा। पत्र के टुकड़े टुकड़े करके बाहर फेंक दिये और उसी प्रकार स्वस्थ-चित्त हो फिर अपनी पुस्तक पढ़ने लगा।

छोटे-बड़े सभी के मुख से माया की चंचलता की चर्चा सुनकर भगतजी को अत्यन्त वेदना होती थी, वे मन ही मन कुढ़ा करते थे परन्तु दूसरों को तसल्ली पूर्ण उत्तर देनेका कोई बहाना न था। लोग कभी २ थैलियोंका जिक्र करते हुये उनसे व्यङ्ग किया करते थे तो भगत जी इधर उधर की बातें बनाकर टल जाया करते थे।

घरमें बैठकर वे मायाको समझाया करते कि जगत में पतिव्रत धर्म के सिवा स्त्री के लिये अन्य कोई आदर्श वस्तु नहीं। पति चाहे छोटा हो या बड़ा लंगड़ा हो या लूला, अंधा हो या बहरा, सुरूप हो कुरूप किन्तु स्त्री के लिये सदैव पूजनीय है। उसकी सेवा करने से परमात्मा भी प्रसन्न होते हैं और माता पिता भी ऐश्वर्य के भागी बनते हैं। इसलिये तुम्हें यहां और वहां अपने कुलकी मर्यादा को देखकर चलना चाहिये, इसी में दोनों ओर का भला है।

ऐसी शिक्षा पूर्ण बातों को माया चुपचाप बैठी सुने जारही थी। भगत जी को उत्तर देना वह अनुचित समझती थी किन्तु इन बनावटी बातोंसे उसकी आंखें लाल होगईं, मारे क्रोधके शरीर थर थर कांपने लगा और धैर्य रख कर सारस्य पूर्वक बोली— "थैली-प्रेमियोंके "माया-जाल" में ही कुलकी मर्यादा है, इसी में स्त्रियोंका मानापमान भरा हुआ है, और इसी के फन्दों को दृढ़ करनेमें पाखण्डियों का परमात्मा भी प्रसन्न रहता है और इसकी रक्षा करने से ही सबका भला है। तुम्हारा दिखावटी भाव संसार की सीमा को पार कर चुका है और तुम्हारी माला ने भक्तिका चक्कर लगाते हुये कई एक प्राणियों को अपने चक्कर में फंसा लिया है।"

माया के यह तीखे शब्द भगत जी के कलेजे को छेदते हुये पार होगये। माया के क्रोध के सामने वे अधिक ठहर न सके और बड़बड़ाते हुये बाहर चले गये। उन्हें क्या पता था कि अपने हाथसे बोये हुये कांटे अन्त में इस प्रकार चुभेंगे। उनका मुख सूख सा गया था, क्रोधके आवेश में आकर वे कभी इधर उधर फिरने लगे। दिन प्रतिदिन यह चर्चा फैलती गई और सेठजी के कानों तक भी जा पहुंची। कुछ दिन बाद ही एक आदमी, जिसका सांवला सा रंग, कतरी हुई मूछें, सफाचट दाढ़ी, घुटी हुई खोपड़ी जिस पर लाल रंगकी पगड़ी रखे हुये, तन पर सुफेद बाली छाप मलमलका कुड़ता, गले में सोने की जंजीर हाथों में सोने के कड़े और घुटनों तक नागपुरी मिल की बनी हुई धोती बांधे, देशी जूते पहिने माया को लेने के लिये आ बैठा। उम्र होगी दरम्यानी, या यों समझिये कि ४० से अधिक और ५० से कम। इस पर संसारी थपेड़ों से थपका हुआ जर्जरित शरीर और धसी हुई आंखें थीं। जब औरतें उनसे कोई बात पूछती तो नीचा सर करके "हूँ" कह दिया करते थे और सालियों के मजाक करने पर अपनी तराशी हुई आंखों को झपका झपका कर ऊपर से देखते हुए नीचे तक चले आते थे। दिन भर चारपाई पर चौकसी निगाहोंसे छाती आगे निकाल कर तने हुये बैठे रहते थे। भगत जी की आपसे खूब पटती थी। और घण्टों बैठ बातें किया करते थे।

× - -

पिता की बीमारी का हाल सुनते ही किशोर को इसी रात की गाड़ी से सवार होकर आना पड़ा। माया के जाने की भी तैयारियां होने लगी थीं

किशोर को आया देखकर वह मन ही मन प्रसन्न हो रही थी। उसका अंग अंग मारे खुशी के फड़क रहा था, नस नस में प्रेमकी लहरें बहने लगी थीं। वह मनमें छिपी हुई मोहिनी सूरत को देख चुकी थी, केवल इच्छा शेष थी उससे दो बात करने की।

आज रातको जब कि तमाम राजपथ जन शून्य थे-वह घरसे निकली। एक ओर किसी के देख लेने का डर उसके कलेजे में धड़कन पैदा कर रहा था तो दूसरी ओर उसका लोभी हृदय उसे प्रेमके वशीभूत कर, निडर बना रहा था। आधी रात का समय था, प्रकृति निस्तब्ध थी, केवल हवाके झोंकों से थोड़ी सनसनाहट होरही थी। निर्भय होकर उसने पांव अगाड़ी बढ़ाये और उस कमरे के सामने जिस में में किशोर सोया पड़ा था, जाकर खड़ी होगई। कुंडा खड़खड़ाया किन्तु रास्ते की थकावट के कारण वह अचेत सोया पड़ा था, टस से मस नहीं हुआ। माया ने फिर जोर से झड़झड़ी लगाई और धीमी आवाज से 'किशोर' 'किशोर' कह कर पुकार ही रही थी कि कि इतने में एक साधु नंग बदन केवल लंगोटा बांधे हुये उसके सामने आखड़ा हुआ और दोनों हाथ फैला कर जोरसे बोला—"देवी भूखके मारे प्राण व्याकुल होरहे हैं आज दिन भर इस पापी पेट के लिये कुछ नहीं जुटा सका, कुछ होसके तो अन्दर से खाने के लिये ला दो।" माया इस मर्म को समझ न सकी और इस डरसे कि इसकी आवाज से कोई पड़ोसी जाग न उठे—उसने चुपके से अपनी अंगूठी निकाली और उसे देकर विदा किया। 'भला हो' 'भला हो' कहता हुआ वह साधु रात्रिके घोर अन्धकार में एकाएक विलीन होगया।

थोड़ी देर में किशोर की निद्रा भंग हुई, उसने दरवाजा खोला और माया को अकेली खड़ी देखकर चकित होकर पूछा— माया इस समय तुम यहां कैसे ? क्या अब भी तू अपने जीवन में सुखका अनुभव नहीं करती ?

किशोर, आम्र मञ्जरी को देखकर प्रसन्न होने वाली कोयल बबूल के कांटेदार झाड़ियों में रहती हुई भला सुखसे जीवन व्यतीत कर सकती है ! यह कहते २ उसका गला भर आया और उसके गले में हाथ डाल कर रोने लगी।

माया, यह यौवन का संसार में क्षणिक नशा है, जो पलक झपते ही ढल जायगा। मेरे जीवन का अब बिलकुल नया एक और ही युग आरम्भ होगयाहै, तुम्हे भी विधि-इच्छा पर अटल विश्वास रख कर इस मायावी संसार में ममताकी अंधेरगर्दी पर अलौकिक-नीय विजय प्राप्त करना चाहिये।

माया उसके शब्द सुनकर अवाक रह गई और कुछ होठों पर मधुर मुस्कान रखते हुये, उसके हृदय पर हाथ धर के धीरेसे बोली— 'अच्छा हृदयेश मेरा और तुम्हारा यह अन्तिम मिलन है।" कह कर वह चुपके से बाहर निकल गई। किशोर अपलक नेत्रों से उसकी ओर देखता रहा और बरबश उसकी आंखोंसे दो बून्द आंसू निकल पड़े।

*   :   *

दूसरे ही दिन माया विदा होकर जा रही थी, रास्ते में सेठ जी ने ओलेपन से माया को पूछा कि मेरी वह अंगूठी जो तेरे पास थी कहां है ? अंगूठी का नाम सुनते ही माया को काठसा मार गया था, उसके टाल मटोल करने पर सेठ जी झट से जेब में से निकाल कर, भृकुटी चढ़ाते हुये बोले-यह क्या है ? मायाका शरीर पसीने में सराबोर होगया और पुरुषों का "माया-जाल" कह कर वह अचेत सी हो गई। सेठजी उसके सिरहाने बैठ कर अपने कुरते से हवा करने लगे।

—※—

अथर्व वेद परिचय

(ले०—श्री स्वामी कर्मानन्द जी

(काण्ड २)

इस काण्ड में ३६ सूक्त है तथा २०७ मन्त्र है। प्रायः पांच पांच मन्त्रोंके सूक्त हैं, कुछ सूक्त अधिक मन्त्रोंके भी हैं। जो सूक्त अधिक मन्त्रवाले हैं उन्हींकी संख्या लिखी जावेगी।

सूर्य पर्जन्य

सू० १— इसका ब्रह्मात्मा महानात्मा देवता है, 'वेन' ऋषि है। यह सूक्त यजु० अ० ३२ में से तथा ऋग्वेद मंत्र १० सू० ८२ से लेकर यहां रख दिया है इसमें अलंकारिक भाषामें सूर्य और प्रजापति (ब्रह्मा) का वर्णन है। जैसाकि वैदिक शैली है उसी के अनुकूल सूर्य और प्रजापति का मिश्रित वर्णन किया गया है। विशेष विवेचन भूमिका में होगा।

सूर्य

सू० २ — इसमें भी आदित्य सूर्यका ही वर्णन है वास्तव में यह दोनों सूक्त एक ही हैं। यह सूक्त अथर्व वेदका है। इसके प्रथम मन्त्र में कहा है कि— "तं त्वा योमि ब्रह्मणा" अर्थात हे सूर्य मैं आपकी ब्रह्म रूपमें प्रार्थना करता हूं अथवा प्राप्त होता हूं। इसमें पूर्व सूक्तका भाव भी स्पष्ट होगया, जैसा कि हम लिख चुके हैं। इन मन्त्रोंका भाव यजु० अ० १८ मं० ३८ से ४३ तक में आया है। तैतरीय संहिता में कहा है कि गन्धर्व सूर्य है और उसकी किरणें अप्सरायें हैं ३-४-७-१। अथवा पर्जन्य गन्धर्व है और उसकी बिजलियां अप्सरायें हैं— (तैत्तरीय संहिता) शतपथ में 'सूर्यो गन्धर्वः' श० ९, ४, १, ८, गन्धर्व नामसे परमात्मा का वर्णन कहीं नहीं है। अतः दोनों सूक्त सूर्य परक हैं।

मूजवान औषधि

सू० ३—यह सूक्त ६ मन्त्रों का है, इसमें मूजवान औषधि का वर्णन है, इस औषधि का यह नाम मूजवान पर्वतपर उत्पन्न होने के कारण से है। यह औषधि अतिसार, अति मूत्र, नाडीव्रण आदि रोगों को दूर करने वाली होती थी।

जङ्गिड़ामणि

सू० ४—यह सूक्त भी ६ मन्त्रों का ही है, इसका देवता जङ्गिड़ा है। यह एक प्रकारकी औषधि है जोकि बनारस में उत्पन्न होती थी। अथवा वहां यह मणि बनाई जाती थी। इस का सण के साथ प्रयोग होता था। इस सूक्त में इस मणि से बल तेज, आयु, तथा शत्रुओं से बचाने की प्रार्थना है। ठीक ऐसा ही वर्णन कांड १ सू० ३५ में आचुका है। वहां हिरण्य मणि की स्तुति है, सम्भव है वहां भी इसी औषधि का वर्णन हो।

इन्द्र

सू० ५—यह सूक्त ७ मन्त्रों का है इस में इन्द्र स्तुति है। इसके प्रथम तीन मन्त्र साम वेद उत्तरार्चिक, ३।१।२२ में आये हैं। तथा ५-७ तक के तीन मन्त्र ऋग्वेद १।३२। में आये हैं वास्तव में यह सातों मन्त्र किसी समय ऋग्वेद में थे। इस में इन्द्र को पर्वतों में होने वाले वृत्र को मारने का वर्णन है। यह

बढ़ना आज से ३०००० तीस हजार वर्ष पूर्व की बतलाई जाती है।

अग्नि

सू० ६—इसका देवता अग्नि है शौनक ऋषि है। इस सूक्त के ४ मन्त्र यजु० अ० २७ में आये हैं। पांचवां मन्त्र भी संभव है उसमें कमी हो। यहां अग्नि से रक्षा की तथा आयु आदि की प्रार्थना है।

दूब

सू० ७—इस का अथर्वा ऋषि है तथा दूब. देवता है। इस दूब की एक मणि बनाई जाती थी, उसीकी स्तुति है। ब्राह्मण का शाप तथा शत्रु का शाप. और और बहिन का शाप इस से दूर हो यह प्रार्थना है। जिस प्रकार जल शारीरिक मलोंको साफ कर देता है उसी प्रकार यह दूब हमारे पापों को दूर करे। अपनी तथा अपनी सन्तान की तथा धन आदि की इस मे प्रार्थना है। मन्त्र ३ में स्पष्ट पृथ्वी में उगने वाली घास ही इसको लिखा है अत यह ईश्वर नहीं है।

(औषधि) मणि

सू० ८ से १०— इसके देवता और ऋषि दोनों ही अनुक्त हैं। इस सूक्त में मृगी आदि अनेक रोगोंका उपाय कहा है। तथा न इसके लिये उषाकाल उपयुक्त बतलाया है। एवं मन्त्र ३ में अर्जुन काष्ठकी, जौ की और तिलकी भूसी से मणि बनाने का विधान है। इसी मणिका वर्णन सूक्त १० तक चला गया है। तथा च पलाश, गूलर आदि १० वृक्षों से बनी हुई मणिका भी वर्णन है। वास्तवमें मन्त्र. तन्त्र द्वारा रोग शान्तिका विधान है।

तिलक मणि --

सू० ११-१२— इन सूक्तों में भी इस मणिका वर्णन है, इसको कृत्या आदि अभिचारको दूर करने वाली कहा है। तथा भूत प्रेतोंकी व्याधियों को दूर करने वाली है। सू० १२ का छठा मन्त्र ऋग्वेद मं० ६ सू० ५२ में है। इस सूक्त में देवोंसे शत्रुनाश की प्रार्थना है

बालक की पूर्ण आयु

सू० १३— इसका विश्वेदेवा देवता है। तथा बालक को वस्त्र पहनाते समय इसका विनियोग है। है। बालक की दीर्घ आयुके लिये प्रार्थना है। बृहस्पति ने सोमराजाके लिये प्रथम वस्त्र पहिनाये थे।

पिशाचनियाँ

सू० ४— इस सूक्तमें निःसाला आदि अनेक पिशाचनियों को दूर करने की प्रार्थना है। गोशाला, धान्यशाला, घृतशाला, तथा गोष्ठी से इन पिशाचनियोंको निकालनेका आदेश है।

निःशंक होना

सू० १५— इसमें ६ मन्त्र है सब में प्राणको निडर रहनेका उपदेश है। अन्तिम पद सबका एक समान है. तथा अन्य पद भी एकसे ही हैं। केवल प्रथम चरणों में नाम भेद मात्र है। यह वर्णन एक छन्द में सुगमतासे आ सकता है, पुनः विस्तार क्यों किया गया—यह वैदिक कवि ही जाने।

प्रार्थना—

सू० १६-१७— इन दोनों में बल, तेज, चक्षु आदि इन्द्रियोंकी प्रार्थना है जो कि एक मन्त्र में पूरा हो सकती थी। पुनः १२ मन्त्र रखने की क्या आवश्यकता है। सू० १७ यजुर्वेद अ० १९ में आया है, उसीको परिवर्धित करके यहां लिखा है। 'बलमसि बलं मे देहि' से मिलाओ।

शत्रुनाश की प्रार्थना

सू० १८ से २४ तक - इनमें २४ वें सूक्तमें ८ मंत्र हैं बाकी सब में पांच २ मन्त्र हैं। सब सूक्तों में शत्रुओं तथा राक्षसों के नाश की प्रार्थना है। इन राक्षसोंका अधिपति सर्प नामक राक्षस बतलाया है। संभव है यहां नाग जाति से अभिप्राय हो। सातों सूक्त व्यर्थ ग्रन्थ विस्तार कर रहे हैं। ऐसी प्रार्थनायें पूर्व भी आ चुकी हैं। तथा आगे भी आवेंगी। सातों सूक्तों का सम्पूर्ण भाव दो श्लोकों में आसकता है, ३८ मन्त्र रखने की क्या आवश्यकता है।

प्रश्नपर्णी औषधि

सूक्त २५—इस में प्रश्न पर्णी औषधि के सेवनसे कुष्ठ आदि रोग दूर होने का वर्णन है।

पशुआदि की प्रार्थना

सूक्त २६—इस सूक्त में गौ, अश्व, नौकर आदि होने की प्रार्थना है। अर्थात—चीजें हमारे पास हों।

पाठा

सूक्त २७—इस सूक्त में पाठा औषधिसे शास्त्रार्थ में विजय प्राप्ति की प्रार्थना है। परीक्षा करके देख लेना चाहिये।

बालक की आयु वृद्धि

सूक्त२७-२८—पूर्वोक्त सूक्त १३ के अनुसार इस में भी आयु की प्रार्थना है। यह भी यहां व्यर्थ है। इसी प्रकार २९ में भी। बार २ एक ही बात के कहने से क्या लाभ है। अतः जब पूर्व में ऐसी प्रार्थना आचुकी तब यह दोनों सूक्त व्यर्थ ही है।

काम सूक्त

सूक्त ३०—इस सूक्त में स्त्री को वश में करने के लिये अथवा अपने ऊपर आसक्त होने की अश्विनी कुमारों से प्रार्थना है। मन्त्र २ में कहा है कि हे अश्विनी कुमारो! जिस की मैं कामना करता हूं उस स्त्री को मेरे समीप पहुंचा दो और उसको मेरे से मिला दो।

सं चेत्प्रथाथी अश्विना कमिना सं च वक्षथः।

तथा ५ मन्त्र में कहा है कि जिस प्रकार अश्व बहुत हिम हिनाता हुआ घोड़ीसे ·· ··करता है उसी प्रकार मैं भी इस स्त्री से ऐश्वर्य के साथ संयुक्त होता हूं।

इस प्रकारके वर्णन से वेद विस्तृत किया गया है हम नहीं जानते कि यदि इन बातों को वेद में इतने विस्तार से न लिखा जाता तो ईश्वरीय ज्ञान में क्या न्यूनता रह जाती। इस विषय में विशेष वर्णन निम्न पतों पर देखना चाहिये।

कां० ३ सू० २५। कां० ४ सू० ५ में कुत्तों को चौकीदारों को तथा स्त्री के घर के मनुष्यों को सुलाने की देवों से प्रार्थना की है यही प्रार्थना एक व्यभिचारी ऋग्वेद मं० ७ सू० ५५ में करता है। कां० ६ सू० ८ में भी एक कामी का प्रलाप है। इसी प्रकार कां० ६ सू० ८९, १०१, १०२, १३०, १३१, १३२, १३९ तथा कां० ९ सू० २ में भी इसी प्रकार की काम कथा है, तथा कां० २० सू० १३६ मं० ११-१३ में एक कामी किसी स्त्री से कहता है कि तू मेरे साथ भोग कर और भात खा। (यमभामयौदनम्)

हम इस पर विशेष लिखना उचित नहीं समझते परन्तु जनता से सानुरोध प्रार्थना करते हैं कि इस विषय पर विचार करें ऐसे मन्त्रों को वैदिक साहित्य से बाहिर निकाल दें, ताकि सभ्य संसार में कीर्ति बढ़े। यह याद रखना चाहिये कि विवाह संस्कार के और गर्भाधान के अथवा पति पत्नी प्रेम के मन्त्र

इन मन्त्रों से पृथक हैं। जैसे कि काण्ड १४ में आये हैं। तथा अन्य स्थानों में भी हैं।

कीड़ों को मारना

सू० ३१, ३२-प्रथम सूक्त ५ मन्त्रों का है तथा दूसरा ६ मन्त्रों का। दोनों सूक्तों में शरीर के आन्तरिक कीड़ों को मारने का आदेश है। अत्रि, कण्व, जमदग्नि ऋषि के समान कीड़ों को मारने का संकल्प है। तथा सूर्य किरणों से भी ये कीड़े मरते हैं, यह भी संकेत है। एवं अनेक प्रकार के कीड़ों का वर्णन है। तथा इनके नाम रूप भी कहे गये हैं। सूक्त मनन योग्य है, परन्तु सम्पूर्ण वर्णन दो श्लोकों में आ सकता है, अतः ११ मन्त्र खलते हैं।

यक्ष्मा

सू० ३३-यह ७ मन्त्रों का सूक्त है। इसमें मन्त्र प्रभाव से यक्ष्मा (तपेदिक) को दूर करने का विधान है, यह सम्पूर्ण सूक्त, ऋ० १०-१६३ में है, वहां मन्त्र ६ हैं और यहां उन्हीं के सात कर दिये हैं। अर्थात मन्त्र ३ के दो मन्त्र कर दिये हैं। इस लिये यह सूक्त यहाँ व्यर्थ ही है। इसी वेद में ऐसा वर्णन अनेक स्थानों में आया है।

बलि

सूक्त ३४-इस सूक्त का देवता, पशुपति पशु भागकरण देवता है। पशुओं के विभाजक को सम्बोधन करके यह मन्त्र कहे गये हैं। सायण-आचार्य ने इस सूक्त में पशुओं की 'वशा' से यज्ञ करना लिखा है, मन्त्र ३ में मरे हुये पशु का वर्णन है, तथा मन्त्र ४ में, स्पष्ट ग्राम्य पशु लिखा है, अतः यहां पशु के अर्थ इन्द्रिय करना आत्म प्रवंचना है। सामाजिक भाष्यों ने ऊल जलूल करने का प्रयत्न किया परन्तु संगति न लगा सके, तथाच उनका अर्थ देवता के विरुद्ध भी है। अतः अन्य सुसंगत अर्थ किया जावे तो मान्य हो सकता है।

अभिमानी ऋषि

सू० ३५-इस सूक्त का विश्वकर्मा देवता है और अंगिरा ऋषि है। यज्ञ करने का आदेश है, तथा विद्या अभिमानी ऋषियों का भी उल्लेख है। इसका पांचवां मन्त्र, अथर्व १९-५८ में है।

विवाह

सू० ३६ इस सूक्त में ८ मन्त्र हैं तथा अग्नि सोम आदि पृथक देवता हैं। सब देवों से कन्या के लिये मनोज्ञ वर प्राप्ति की प्रार्थना है तथा विवाह के पश्चात सौभाग्य और सुख की प्रार्थना है। सूक्त सुन्दर है तथा अश्लीलता रहित है। इसी भाव के मन्त्र ऋग्वेद में भी आते हैं। यहाँ विवाह में सोना, और गुड़ के बने पदार्थ देने का विधान है।

यह द्वितीय काण्ड समाप्त हुआ।

प्रथम काण्ड में ३२ मन्त्र अन्य वेदों के हैं, द्वितीय काण्ड में २१ मन्त्र अन्य वेदों के तथा १ मन्त्र इसी वेद के १९ वें काण्ड का है। कुल ६१ मन्त्र अन्य स्थानों के हैं।

सत्य समाज या धार्मिक मिक्श्चर

(ले० — अजितकुमार जैन)

भारत भूमि न केवल दार्शनिक लोगों की निवास भूमि रही है किन्तु उस से बढ़ कर वह उन की खानिभूमि भी है सुदूर प्राचीन समय में तो यहां अनेक दार्शनिक विद्वान हुए ही थे जिन्हों ने अपने समय में अपने बुद्धिबल से दर्शन शास्त्रों की रचना की किन्तु निकट भूतकाल में भी छोटे मोटे कारणों को लेकर अनेक व्यक्तियोंने किसी आवश्यकताको पूर्ण करने के लिये अलग पंथ बना डाले जिनमें से अनेक कुछ दिन जीवित रहकर सदा के लिये सो गये।

अधिकांश अब तक विद्यमान हैं। मुसलमानी बादशाहत के समय भारत के हिन्दू मुस्लिम वैमनस्य के अंकुर को नष्ट करने के लिये पंजाब में 'नानक गुरु' हुए उन्होंने हिन्दू मुसलमानों को सम्मिलित रूप में करनेके लिये सिक्ख जाति की नींव डाली। सिक्ख पंथ तो जम गया किन्तु वह उद्देश सफल न हुआ। औरंगजेब के समय में गुरु गोविन्द सिंह ने हिन्दू जाति को मुसलमानों के मुकाबले में बलवान वीर बनाने के लिये हिन्दुओं को सैनिक वेश पहनाया तब से सिक्ख लोग केश, कृपाण आदि रखकर हिन्दुओं में जुदी तरह के नजर आने लगे। गुरु नानक ने जो ग्रंथ साहिब बनाये थे उसी को अपना कर सिक्खों ने अब अपने आप को एक तरह से हिन्दुओं से अलग कर लिया है।

लग भग ५० वर्ष पहले स्वामी दयानन्द जी हुए उन्होंने हिन्दू जाति को मुसलमान ईसाइयों द्वारा हड़प होते हुए देख उसको सचेत करने के लिये 'आर्यसमाज' की स्थापना की।

कुछ वर्ष पहले आयर्लैण्ड निवासिनी एनीबीसेन्ट ने कृष्णमूर्ति को ईश्वरीय अवतार बतलाकर थियोसोफिकल पंथ कायम किया जिसका उद्देश था राम, कृष्ण, महात्मा बुद्ध, हजरत ईसा, मुहम्मद आदि को धार्मिक नेता मानकर एक सम्मिलित पंथ चलाया जावे। इत्यादि।

जैनधर्म यद्यपि असंख्य वर्षों से एक रूप में चलता चला आया तथा भगवान महावीर स्वामी के मुक्त होने के पीछे लगभग २०० वर्ष तक भी एक रूप में रहा किन्तु बारह वर्षी दुष्काल को लेकर पहले पहल जरा से मत भेद से उसके दिगम्बर, श्वेताम्बर दो भेद हुए फिर बीस पंथ, तेरह पंथ, स्थानकवासी, तारन, आदि अनेक विभाग हो गये। जिस किसी महान पुरुष को अपनी समझ के अनुसार कोई सुधारणीय बात जंची उसने उस बात को लेकर अपना अलग पंथ कायम कर दिया।

यह पंथ रचना जैन समाज में अभी तक जारी है स्थानकवासियों में दिगम्बर तथा श्वेताम्बरों में साधु, आचार्य, नेताओं के हठवाद से अब भी अनेक दल उत्पन्न होते जा रहे हैं।

कुछ दिनों से हिन्दुओं को असंगठित होने से निर्बल होते देख हिन्दुओं के भीतर समस्त भेद भाव नष्ट कर देने के लिये 'जाति पांत तोडक मंडल' आदि संस्थाएं कायम हुई हैं।

इधर हमारे पं० दरबारीलाल जी भी एक नवीन

पन्थ के लिये तुल पड़े हैं। आज से १० वर्ष पहले आप इन्दौर में जब अध्यापक थे दिगम्बर सम्प्रदाय के अनुयायी थे क्योंकि आपका जन्म, लालन, पालन शिक्षा, दीक्षा आदि दिगम्बर समाज में ही हुई है। यदि आप इन्दौर ही रहते तो आज भी आप प्रायः उसी दशा में होते।

जब आप का इन्दौर विद्यालय से सम्बन्ध छूट बम्बई में विहार हुआ तब आपके वहां अनेक धर्म मित्र उस प्रकृति के मिले जो स्वयं दिगम्बर सम्प्रदाय के होते हुए भी कतिपय कारणों से श्वेताम्बर मत का समर्थन किया करते थे साथ ही दरबारीलाल जी को श्वे० विद्यालय का अध्यापक पद भी मिला तब से आप के ऊपर श्वे० सम्प्रदाय का वह प्रभाव चढ़ा कि आपने स्त्री मुक्ति आदि सिद्धान्तों का समर्थन अनेक युक्ति जाल से करना प्रारम्भ किया।

कुछ दिन से आपके दिल में जैनधर्म त्रुटि पूर्ण प्रतीत हुआ तथा अन्य धर्मों में भी आंशिक सत्यता मालूम होने लगी तब आपके मस्तिष्क में यह बात समाई कि सब धर्मों को मिला कर एक अलग पन्थ कायम किया जावे। इस उद्दिष्ट पन्थ का नाम संस्कार आपने 'सत्य समाज' शब्द से किया। अब आप सत्य समाज का अंकुरारोपण करने के लिये 'सत्याश्रम' की स्थापना करने चले हैं।

आपके उपास्य देव का नाम 'भगवान सत्य' और देवी का नाम 'भगवती अहिंसा' है आप पत्र व्यवहार के समय जय सत्य लिखा करते हैं। गोया सत्य और अहिंसा अब तक किसी अज्ञात गुफा में छिपे पड़े थे जिनको पं० दरबारी लाल जी ने बड़े उद्योग से ढूंढ निकाला है।

जैनधर्म के अहिंसा तत्त्व तथा स्याद्वाद ऐसे हैं जिनसे बाहर धर्म तथा सत्यता का रंचमात्र अंश भी नहीं रहने पाता यदि दरबारीलाल जी चाहते तो इन दोनों को नवीन आकर्षक रूप में ढाल कर विस्तृत कर अपना उद्देश सफल कर सकते थे। किन्तु वे एक और नवीन समाज स्थापित करना ही किसी कारण से ठीक समझते थे तदनुसार आप ने किया।

सत्यसमाज का क्या कुछ सिद्धान्त है यह तो पूर्णतया उसकी कार्य प्रणाली से प्रतीत होगा। किन्तु विवाह पद्धति जो पं० दरबारीलाल जी ने अपने भक्तों के लिये प्रकाशित की है उससे यह प्रतीत होता है कि सत्यसमाज ईसाई, हिन्दू, जैन मुसलमान आदि सब धर्मों का मिक्स्चर रूप होगा सत्यसमाजी समान भाव से जैन, बौद्ध, शिव, कृष्ण मन्दिरों में मस्जिदों में तथा गिरजों में मस्तक टेकेंगे। सत्यसमाजी विद्वान, पण्डित, मुल्ला, पादरी का मिश्रण रूप एक निराला अद्भुत प्राणी होगा।

आपने अभी उपासना मन्दिर तयार नहीं कराया है वह भी एक निराला अजायब घर होगा उसमें सभी उपास्य देवता एकत्र होंगे! उपास्य भगवान की मिक्स्चर रूप मूर्ति किस ढंग की बननी चाहिये यह बात अभी दरबारीलाल जी की विचार कोटि में है। निश्चित होने पर वह भी एक अद्भुत आविष्कार होगा।

कांग्रेस के आन्दोलन से प्रभावित होकर कुछ लोगों ने हिन्दू सिक्ख मुसलमानों में एकता पैदा करने के लिये अपने नाम तीनों के मिले हुए रूप में 'राममुहम्मदसिंह' आदि रक्खे जो कि लाहौर आदि

में अब तक हैं। ठीक ऐसी ही धुन पं० दरबारी लाल जी को सवार हुई अभी तो उनका ध्यान 'धार्मिक मिक्श्चर' तयार करने की ओर है जब आपका ख्याल नामकरण की ओर झुकेगा तब आप भी ऐसा ही ढंग अपना बैठेंगे क्योंकि नामों के ढंग भी भिन्न २ पन्थानुयायीपन के सूचक या चिन्ह हैं। जब तक आप का नाम 'दरबारीलाल' है तब तक आप हिन्दू संस्कृति के चिन्ह समझे जावेंगे। जबतक आप 'पण्डित, और न्यायतीर्थ' उपाधि से भूषित हैं तब तक आपको 'जैन' समझा जायेगा जब इन नामों में परिवर्तन होकर 'रामकृष्णमहावीरईसा मुहम्मद-मिर्ज़' आदि रूप में आप अपना नाम संस्कार करेंगे तब आपका सत्यसमाजी रूप प्रगट होगा।

इसी प्रकार जिन २ धर्मों का आप मिक्श्चर तयार करना चाहते हैं उन के आंशिक संस्कारों को भी अपना कर एक अद्भुत रूप बनावेंगे जिस प्रकार स्व० पटेल पहले तुर्की टोपी और धोती पहन कर हिन्दू मुस्लिम फैशन का सम्मिलित रूप प्रगट किया करते थे। शायद दरबारीलाल सर्व पंथसमभाव को अपने रहन सहन से उसी प्रकार दिखलाने का प्रयत्न करेंगे क्योंकि जब तक ईसाइयत, मुसल्मानी और हिन्दूपनके चिन्हों को असली रूप न देंगे तब तक ईसाई मुसल्मानों को अपनी ओर आकर्षित न कर सकेंगे। अस्तु। यह तो भविष्य की बात रही सत्य समाज का धार्मिक मिक्श्चर किस रूपमें खड़ा होता है यह बात कुछ दिनों में मालूम हो जायगी।

जैनधर्म किसी समुदाय विशेष का नहीं किन्तु विश्वधर्म या सार्वधर्म है। धार्मिक दृष्टि से अथवा सैद्धान्तिक दृष्टि से ऐसी कोई हितकर बात नहीं जो जैनधर्म में न हो। यदि जैन समाज में कुछ त्रुटियाँ हों तो वे जैनधर्म की नहीं मानी जा सकतीं।

पं० दरबारीलाल जी के शरीर का एक२ परमाणु जैन जाति की अमानत है इस अमानत को मय सूद के उन्हें लौटाना चाहिये तब ही वे उऋण हो सकते हैं। भारतवर्ष में वैसे ही काफी से अधिक समाज हैं। जिसपर आप का एक सत्य समाज और प्रगट हो गया मानो जैन समाज असत्य समाज है। आप की दृष्टि में यदि जैन समाज में कोई सुधारणीय त्रुटि थी तो उस को समाज के समक्ष रखते तथा उद्योग करते कि वे त्रुटियां न रहें। जैन समाज में कार्य करनेके लिये पर्याप्त क्षेत्र है। अस्तु।

सत्य समाज का जो रूप इस समय दिखाया जा रहा है यदि वही उद्देश और रूप रहा तो निश्चय रूप से पं० दरबारीलाल जी अपने उद्योगमें असफल होंगे, असफल होंगे, असफल होंगे। शायद फिर कहीं आप को 'परम सत्य समाज' कायम करना पड़े।

भाषणसार

श्री दि० जैन वीर नवयुवक मंडल जोबनेर के द्वितीय अधिवेशन पर कालाडेरा में सभापति पद से जो श्रीमान सेठ मंगलचन्द्र जी बोहरा फुलेरा ने भाषण दिया था उसका सारभाग निम्नलिखित है।

धर्म

हमारे पूर्वाचार्यों ने धर्म का यही लक्षण निर्धारित किया है, जो सांसारिक प्राणियों को अनेक विपत्तियों से निकाल कर उत्तम सुख स्थान में पहुंचाता है, धर्म वस्तु का स्वभाव है, आत्मा भी वस्तु है, अतः आत्मा का स्वभाव ही धर्म है। जैन धर्म कब से है। इस प्रश्नका स्वतः समाधान हो जाता है जब से आत्मा है तभी से उस का धर्म (जैन धर्म) है आत्मा अनादि है इसलिये उसका स्वभाव जैन धर्म भी अनादि सिद्ध होता है, क्योंकि स्वभाव वाले (धर्मी) को अनादि मान कर, स्वभाव को सादि मानना बुद्धिमत्ता का दिवाला निकालना है। अतएव समर्थ सामग्री से जैन धर्म की सनातनता सिद्ध होती है। इस धर्म का सम्बन्ध किसी खास जाति या वर्ण से नहीं है, किन्तु प्राणी मात्र से है। इसका उपदेश भी समय २ पर इसके प्रणेताओंने जीव मात्र को दिया है जिस की समवशरण सभा साक्षी है।

धर्मज्ञ विचारशीलो! जबकि जैन धर्म सार्वभौमिक, अनादिनिधन, सर्व हितकर्ता, जीवात्माका धर्म है तब उसकी मनोरम कुंजछाया में आ कर स्वहित करना प्राणी मात्र का परम कर्त्तव्य स्वयं सिद्ध होता है।

धार्मिक समुत्थान के प्रधान उद्देश आत्म संयम और तत्त्व ज्ञान हैं इस उद्देश की पूर्ति करने में जैन धर्म सर्वथा समर्थ है इसकी व्यवस्था तत्त्व श्रद्धा पर अवलम्बित है और संयम इसका खास अंग है, मुझे दुःख के साथ प्रगट करना पड़ता है कि अभी हम जैन धर्म के असली महत्त्व को समझे ही नहीं हैं, हम ऊपरी दिखावट को ही धर्म समझ बैठे हैं। धर्मका असली स्वरूप प्रायः लुप्त हो रहा है, हमारा कर्त्तव्य है कि जैसा क्रम आचार्यों ने धर्म प्रतिमा के लिये रखा है यदि हम उसका उसी रूप से अध्ययन एवं अनुमनन करेंगे तो नियम से इष्ट लाभ के साथ २ संसार का उपकार भी कर सकते हैं।

सुशिक्षा की आवश्यकता

समीचीन शिक्षा से ही उत्तम भावों का निर्माण होता है इसे प्रत्येक विचारशील स्वीकार करता है। उत्तम शिक्षा मानव हृदयों का अज्ञानान्धकार दूर कर नवीन युगका प्रचार करती है वही सत्कर्म एवं समाज की उन्नति करने में परम समर्थ है इसका अभाव ही धर्म, देश, समाज एवं व्यापार का घातक बड़ा भारी असाध्य रोग है।

इसका अंकुरारोपण सुकुमार बालकों के सुकोमल हृदय रूपी खेतों में होता है। वे ऐसे सरल एवं मृदु होते हैं कि उन को जिधर चाहो उधर झुकालो

और जो चाहो इच्छानुकूल फल पैदा करलो। अतः इनका लालन पालन और शिक्षण योग्य मातापिताओं और सुशिक्षकों द्वारा होना परमावश्यक है। हाँ कुछ शिक्षालय इसका प्रचार करते अवश्य देखे जा रहे हैं। किन्तु वह अभी अधूरा है, उस में सुधार होने की बड़ी भारी जरूरत है शिक्षालय, शिक्षक और उनके संचालक कैसे होने चाहिये यह विचारणीय विषय है। समाजने इस ओर अभी अपना ध्यान ही नहीं दौड़ाया है। इसकी इस विषय में अभी पूर्ण उदासीनता है और जब तक यह उदासीन भाव बना रहेगा तब तक पूरी सफलता मिलना भी असम्भव है। जिस प्रकार इतर कार्यों में दिल खोल व्यय किया जाता है उससे शतांश भी शिक्षा प्रचार में नहीं किया जा रहा है और जो कुछ खर्च भी किया जाता है उस की सार संभाल नहीं की जाती, यह एक बड़ी भारी भूल है और शिक्षा प्रचार में पूर्ण बाधक है।

समाज का वर्तमान चित्र

समाज का चित्र वर्तमान कालमें विचित्र अवस्था में परिणत हो रहा है। वह इतना विकृत एवं दुःख परिताप युक्त बन चुका है। जिसको देख कर हृदय रो देता है चारों तरफ से सुधार करो, सुधार करो के नारे लगाये जाते हैं, सभाओं में प्रस्ताव भी किये जाते हैं और सर्व मत से पास भी हो जाते हैं, लेकिन असली कार्यवाही न तो उन उपदेशकों और पत्रों के उपदेशों और लेखोंपर होती जाती है और न उन प्रस्तावों पर; ऐसी अवस्था में सुधार होना महा कठिन है, लोग धर्म का नाम लेकर धर्म एवं समाज को धूल में मिलाने का प्रयास कर रहे हैं। अपनी शक्ति को, जिससे धर्म और समाज का समुत्थान किया जा सकता है, व्यर्थ के कार्यों में खो रहे हैं, फूट का कटुआ फल प्राचीन काल में हमारा देश भोग चुका है, इस बात का इतिहास साक्षी है। इसी दुर्गुण ने इस समय जैन समाज को अपना स्थान बना लिया है। इस प्रभाव में आकर हमारा समाज पण्डित बाबू आदि दलों में विभक्त हो गया है। इन दलों का जब से प्रादुर्भाव हुआ है तभी से समाज की शक्ति छिन्न भिन्न हो गई है, आये दिन धर्म एवं समाज पर होने वाले अत्याचार इन्हींके प्रतिफल हैं। अत्याचारियों के इसी लिये हौसले बढ़ते जा रहे हैं कि जैन समाज में फूट है, यह हमारा क्या कर सकता है, यदि हम में एकता होती, अपने भाइयों के दुःखों को अपना समझते तो सहगांव, मोजमाबाद और पाडली जैसे काण्ड कभी नहीं होने पाते। महा सभायें भी अपना कर्तव्य भूल रही है श्री भारत वर्षीय दि० जैन धर्म संरक्षणी महा सभा के गत इन्दौर अधिवेशन में मोजमाबाद, पाडली काण्ड के विषय में एक प्रस्ताव पास होकर एक डेपुटेशन महाराजा जयपुर नरेश से मिल कर यहां के जैनियों की आपत्तियों को शीघ्र दूर किये जाने के बारे में चर्चा चली थी; मगर आज तक भी उस प्रस्ताव को अमल में नहीं लाया गया। किन्तु इस प्रस्ताव के पास होने के समाचार अजैनों को मालूम होने पर उनके द्वारा जैनियों पर और भी अधिक आपत्तियां शुरू हो गई है। डेपुटेशन के मन्त्री जी श्रीमान डा० गुलाबचन्द जी पाटनी से मेरा नम्र निवेदन है कि वे इस कार्य में विलम्ब न कर शीघ्र ही प्रयत्न करें।

कुरीतियां।

इस बातको प्रत्येक विचारशील स्वीकार करता

है और सर्वमान्य भी है कि जिस समाज और देश को कुरीतियों ने अपना अड्डा बनाया है, उस देश और जन समूह को निकट भविष्य में ही अपनी जीवन लीलासे हाथ धोने पड़े हैं, वर्तमान काल में जैन समाज भी इनका स्थान बन चुका है। समाज पर इनका जो विषैला असर पड़ा है या पड़ रहा है उस से यही ज्ञात होता है कि जैन समाज पर विपत्ति काल के बादल छाये आ रहे हैं; अगर इनका शीघ्र उपाय नहीं किया जावेगा तो तेरह लाख से बारह लाख रहे और भविष्य में इस से भी कम होने की सम्भावना है। हमारी समाजमें सबसे बड़ी कुरीति मरे हुये का मौसर (नुकता) करना है। जो वैसे तो कतई बन्द हो जाना ही आवश्यक है; अन्यथा घर की हालत पर विचार करके नुकता (मौसर) की मंजूरी देनी चाहिये, क्योंकि यह आवश्यक नहीं है कि नुक्ता जीमने पर ही पगड़ी बंधने दी जाय, बारहवें के दिन भी पगड़ी का दस्तूर किया जा सकता है। चालीस वर्ष से कम उम्रके पुरुष व स्त्री का नुकता किसी भी हालत में नहीं करना चाहिये। ऐसा नियम प्रत्येक पंचायतों में पास होना आवश्यक है।

इत्यादि

सम्पादकीय टिप्पणियां

जैन गजट के नये सम्पादक

श्रीमान पं० खूबचन्द्र जी शास्त्री के स्थान पर श्री पं० मक्खनलाल जी न्यायालंकार तथा पं० सुमेरचन्द्र जी दिवाकर वकील न्यायतीर्थ जैन गजटके सम्पादक नियत हुए हैं। सम्पादन विभाग में प्रथम पदार्पण करने के उपलक्ष में हम श्री दिवाकर जी का सप्रेम अभिनन्दन करते हैं। जिस तरह सर्व प्रथम आपके लेख ने आगम वाक्य न छापने के नियम को धता बता दिया जाता है उसी तरह भविष्य में भी आपका प्रवेश व्यर्थ की रूढ़ियों को दूर करनेमें अग्रसर होगा, जैन गजट ईर्षा और द्वेष के वातावरण से निकल कर प्रेम और सहयोग की भूमि में प्रवेश करेगा।

सूचना

जैनदर्शन के वर्ष ३ अंक में प्रकाशित "बच्चों की रोग रक्षा से कैसे बचाना चाहिये" शीर्षक लेख पर, मेडिकल एसोसियेशन की ओर से उसके लेखक श्री कपूरचन्द्र जी को प्रथम श्रेणी का पारितोषक मिला है। बधाई

भ्रम संशोधन

'बन्धु' दर्शन' आदि जैन पत्रों में कैलाशचन्द्र जैन शास्त्री के नाम से जो लेख या गल्प प्रकाशित होते हैं, परिचित पाठक उन सब लेखों का लेखक मुझे ही समझते हैं। अतः पाठकों के भ्रम निवारण के लिये यह प्रकट करना आवश्यक है कि इस नाम के एक विद्वान लेखक जयपुर वासी भी हैं। इस लिये प्रेमी पाठक सब लेखों का श्रेय मुझे न दिया करें—ऐसी प्रार्थना है।

इस भ्रम को दूर करने के लिये भविष्य में मेरे नाम के साथ में 'बनारस' छापने की यथा सम्भव व्यवस्था रहेगी।　　　कैलाशचन्द्र (संपादक)

संशोधन हो गया

जिला हिसार के शिक्षा विभाग इन्स्पैक्टर महोदय के कार्यालय से ११ फर्वरी सन् १९३६ को नं० ७ का एक सर्कुलर जारी हुआ था। इसमें उक्त जिले के स्कूलों के संचालकों को हिदायत की गई थी कि जैन विद्यार्थियों को ऊंची जाति के विद्यार्थियों की संख्या में न दिखाया जाय। आदि। इस से जैन समाज में हलचल पैदा हो गई थी। तथा कुछ महानुभावों ने संघ का ध्यान इस तरफ आकर्षित किया था। तब ही से अब तक संघ और उक्त इन्स्पैक्टर महोदय के बीच पत्र व्यवहार चालू रहा है। तथा, अब हमें यहांपर यह प्रकाशिति करते हुए हर्ष होता है कि आप ने हमारी बातों को स्वीकार कर लिया है। तदनुसार ही उक्त सर्कूलर नं० ७ में संशोधन भी कर दिया है। यह पत्र व्यवहार बहुत लम्बा है, अतः उसको पूर्ण रूप से प्रकाशित करना हम आवश्यक नहीं समझते। इन्स्पैक्टर साहब ने अपने अन्तिम पत्र में निम्न लिखित शब्द लिखे हैं :-

"That schools have been asked to show Jains under the heading 'JAINS' I hope, this will satisfy the Jain Community, as there was no intention of slightning the Jain Community, of which some gentlemen are my sincerest friends. Copy of the New C. M. is enclosed. If you are satisfied; kindly informed me, sothat, if necessary, I may take furthur steps in right direction."

अर्थात् "जैन विद्यार्थियोंको जैन हैडिंग में दिखलाने को स्कूलों को लिख दिया गया है। आशा है, इस से जैन समाज को सन्तोष होगा मेरा जैन समाज को चोट पहुंचाने का भाव नहीं था। स्वयं कुछ जैन व्यक्ति मेरे स्नेही मित्र हैं। नये सर्कूलर की कापी साथ है। आप को यदि इस से सन्तोष हो तो कृपया मुझे भी सूचित कर दें। ताकि यदि आवश्यक हो तो और भी मुनासिब कार्यवाही की जा सके।"

इस से प्रगट है कि अब इस सम्बन्ध में कोई विवाद की बात शेष नहीं है। तथा ऐसाही हम ने धन्यवाद पूर्वक उक्त इन्स्पैक्टर महोदय को लिख दिया है।

यहां हम उक्त इन्स्पैक्टर महोदय के, जिन्हों ने हमारी उचित बात को मान कर अपने सर्कूलर में संशोधन किया है, हृदय से आभारी हैं।

निवेदक— राजेन्द्रकुमार
प्रधान मन्त्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ।

उपदेशक विद्यालय के सम्बन्ध में

भारत वर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघ के आधीन उपदेशक विद्यालय की स्थापना अम्बाले में २४ मई को श्रुतपंचमी के दिन होगी। यह तो पूर्व पत्रों में प्रकाशित किया जा चुका है। इस विद्यालय में भर्ती होने के लिये कई विद्वानों के पत्र आ चुके हैं तथा आ रहे हैं। अन्य विद्वानों को भी जो इस में भर्ती होना चाहते हैं अपने पत्र शीघ्र मंत्री उपदेशक विभाग या संघ के अम्बाला कार्यालय को भेज देना चाहिये। जो विद्वान अपना जीवन समाज सेवा में व्यतीत

देश विदेश समाचार

—२६ अप्रेल को कलकत्ता में एक करोड़ रुपए की पूंजी से एक कम्पनी रजिस्टर्ड कराई गई है जो भारत में मोटरें तथा हवाई जहाज तैयार करेगी। मालूम हुआ है कि इस कम्पनी ने पहले ही दमदम के समीप एक सौ बीघा के लगभग भूमि प्राप्त कर रखी है जहां फेक्टरी की स्थापना की जायगी और मैनूफेक्चरिङ्ग प्लाण्ट लगाए जायेंगे। जहां तक उद्योग धन्धे का सवाल है भारत में ऐसे कार्य के लिए काफी क्षेत्र है। कम्पनी की एक मजबूत डायरैक्टर बोर्ड बन चुकी है। कम्पनी की इच्छा है कि वह दिसम्बर १९३६ तक पहली मोटर तैयार कर के उपस्थित कर दे। प्रयत्न किया जा रहा है कि कम्पनी अपने मौलिक ढङ्ग पर मोटरें तैयार कर के सस्ते दामों पर बेचे।

—पूना में २४ अप्रैल को हिन्दू मुसलमानों का भयानक दंगा हो गया जिसमें १६० आदमी घायल हुए। ५० पुलिस कानस्टेबल घायल हुए एक सब इन्सपैक्टर मूर्छित हो गया दो आदमी मर गये। कुछ मस्जिद तथा मन्दिर जला दिये गये। फौज ने पहुंच कर शान्ति स्थापित की।

—मध्यप्रान्त के अस्थायी गवर्नर राइट आनरेबल मि० राघवेन्द्रराव हुए हैं। आप स्वराज्य पार्टी से पृथक् हो जाने के बाद भी अब तक शुद्ध खद्दर और गांधी टोपी धारी ही हैं। इस तरह यह पहला ही अवसर है कि गवर्नरी की गद्दी पर गांधी टोपी धारी गवर्नर विराजमान होते है।

—कराची में १२,५०,००० की लागत से एक पेपर मिल (कागज बनाने का कारखाना) खुलने की व्यवस्था हो रही है।

—कृष्णानगर (बङ्गाल) की जेल में श्रीप्रफुल्ल मल्लिक नामक नजरबन्द १२५ दिन से अनशन कर रहे हैं।

—जर्मनी के दो इञ्जीनियरों ने एक ऐसा वायुयान बनाया है जिसमें इञ्जन नहीं है और वह बाइसिकल की तरह केवल पेडिल से चलाया जाता है। यह वायुयान ७७० फीट की ऊंचाई तक उड़ सकता है।

—चीन में एक आदमी सा मूआ हुआ है—जो कि जन्म से ही पार दर्शक था। उस की हड्डियां और मांस सभी साफ दीखते थे। वह बहुत बड़ा विद्वान था। मृत्यु पर उसकी स्मृति कौनफ्यूशियस मंदिर में रखी गई।

—मि० फ्रेड लैंनबल अपनी आंखों की हवा से—जलती मोमबत्ती को बुझा सकता है।

—अफगानिस्तान में भी अब करेन्सी नोट चलने लगे हैं। २६० लाख रुपये के नोट अब तक जारी हो चुके हैं।

- रोमसागर में अंग्रेजी तथा इटालियन जंगी जहाज तयार खड़े हैं दोनों देश एक दूसरे को धमकी दे रहे हैं।

—आस्ट्रिया के मन्त्री मंडल ने आस्ट्रिया की एक सेना को तोड़ देनेका निश्चय किया था वह सेना जर्मनी के साथ समझौता कर रही है।

—मंगोलिया में एक अद्भुत घास पायी जाती है जिसके बीज सूखी रेतमें भी जमते और बढ़कर लहलहाते हैं। हाल ही में अमेरिका ने अपने मरु प्रदेश में इस घास को बोकर परीक्षण आरम्भ किया है।

देश विदेश समाचार

—२६ अप्रेल को कलकत्ता में एक करोड़ रुपए की पूंजी से एक कम्पनी रजिस्टर्ड कराई गई है जो भारत में मोटरें तथा हवाई जहाज तैयार करेगी। मालूम हुआ है कि इस कम्पनी ने पहले ही दमदम के समीप एक सौ बीघा के लगभग भूमि प्राप्त कर रखी है जहां फैक्टरी की स्थापना की जायगी और मैनूफैक्चरिङ्ग प्लाण्ट लगाए जायेंगे। जहां तक उद्योग धन्धे का सवाल है भारत में ऐसे कार्य के लिए काफी क्षेत्र है। कम्पनी की एक मजबूत डायरेक्टर बोर्ड बन चुकी है। कम्पनी की इच्छा है कि वह दिसम्बर १९३६ तक पहली मोटर तैयार कर के उपस्थित कर दे। प्रयत्न किया जा रहा है कि कम्पनी अपने मौलिक ढङ्ग पर मोटरें तैयार कर के सस्ते दामों पर बेचे।

—पूना में २४ अप्रैल को हिन्दू मुसलमानों का भयानक दंगा हो गया जिसमें १६० आदमी घायल हुए। ५० पुलिस कान्स्टेबल घायल हुए एक सब इन्सपेक्टर मूर्छित हो गया दो आदमी मर गये। कुछ मस्जिद तथा मन्दिर जला दिये गये। फौज ने पहुंच कर शान्ति स्थापित की।

—मध्यप्रान्त के अस्थायी गवर्नर राइट आनरेबल मि० राघवेन्द्रराव हुए हैं। आप स्वराज्य पार्टी से पृथक् हो जाने के बाद भी अब तक शुद्ध खद्दर और गांधी टोपी धारी ही हैं। इस तरह यह पहला ही अवसर है कि गवर्नरी की गद्दी पर गांधी टोपी धारी गवर्नर विराजमान होते हैं।

—करांची में १२,५०,००० की लागत से एक पेपर मिल (कागज बनाने का कारखाना) खुलने की व्यवस्था हो रही है।

—कृष्णनगर (बङ्गाल) की जेल में श्रीयुक्त मल्लिक नामक नजरबन्द १२५ दिन से अनशन कर रहे हैं।

—जर्मनी के दो इञ्जीनियरों ने एक ऐसा वायुयान बनाया है जिसमें इञ्जन नहीं है और वह बाइसिकल की तरह केवल पैडिल से चलाया जाता है। यह वायुयान ७७० फीट की ऊंचाई तक उड़ सकता है।

—चीन में एक आदमी सा मूआ हुआ है—जो कि जन्म से ही पार दर्शक था। उस की हड्डियां और मांस सभी साफ दीखते थे। वह बहुत बड़ा विद्वान था। मृत्यु पर उसकी स्मृति कौनफ्यूशियस मंदिर में रखी गई।

—ए फ्रेड जैनेवल अपनी आंखों की हवा से—जलती मोमबत्ती को बुझा सकता है।

—अफगानिस्तान में भी अब करेन्सी नोट चलने लगे हैं। २६० लाख रुपये के नोट अब तक जारी हो चुके हैं।

—रोमसागर में अंग्रेजी तथा इटालियन जंगी जहाज तयार खड़े हैं दोनों देश एक दूसरे को धमकी दे रहे हैं।

—आस्ट्रिया के मन्त्री मंडल ने आस्ट्रिया की एक सेना को तोड़ देनेका निश्चय किया था वह सेना जर्मनी के साथ समझौता कर रही है।

—मंगोलिया में एक अद्भुत घास पायी जाती है जिसके बीज सूखी रेतमें भी जमते और बढ़कर लहलहाते हैं। हाल ही में अमेरिका ने अपने एक प्रदेश में इस घास को बोकर परीक्षण आरम्भ किया है।

वर्ष २ अंक [illegible]

श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र

इस अंक के पठनीय लेख

श्री … शास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुखपत्र
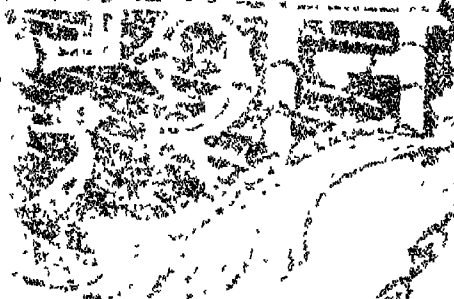
श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोऽग्रगिमर्भर्षीभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः ।
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री ज्येष्ठ वदी १० —शनिवार श्री वीर सं० २४६२—१६ मई १९३६

—आह्वान—

[ले॰ सुगन सकलेचा]

ओ ! करुणामय और उदार !

शाम होगई दीप-हीन है नभ मंडल ये मेरे प्यार ।

थल गृह ना दीपावलिसे जगमग जगमग वातायन द्वार ॥

चिरकालीन सखी अंधियारी में विलीयमान हुआ गृह हो मेरा ।

स्नेह हीन होचुका दीप हो क्योंकर ज्योति किरण अवतार ॥

पथ दर्शक आकाश दीप नहिं तारक गुरु दश दिशि अंधियारी ।

कैसे पथ पावेंगे वे क्या होवे अगवानी शृंगार ॥

*　　*　　*

और नीडतम पथगाही सुतपति सविनय है आह्वान ।

आजाओ, आ तुम लेजाओ मेरे प्राणोंका गुरुभार ॥

जैन समाचार

अम्बाला में उत्सव—श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघकी ओरसे अम्बाला छावनी में २५ मई को श्री उपदेशक विद्यालयका उद्घाटन होगा जिसके उपलक्ष्य में २३-२४-२५ मई को उत्सव होगा। जिसमें गणनीय श्रीमान धीमान पधारेंगे।

बेगू मारवाड) में वहां के ठाकुर ने श्वेताम्बर जैन मन्दिरकी समस्त प्रतिमाएं उठवाकर फिकवा दी है। और महादेव की मूर्ति स्थापित कराकर उसका नाम जैन भंजन महादेव रख दिया है।

—महगांव काण्डका मुकद्दमा भिण्डमें शीघ्र चालू होने वाला है। मुकद्दमे की पैरवी के लिये परिषद की ओरसे सराहनीय प्रयत्न होरहा है। परिषदकी प्रेरणा से श्री० चमनलाल जी इटावा पैरवी करेंगे। जनता को धनसे सहायता करनी चाहिये।

१ लोनारा— सेठ साहब हरसुख जी सुमार्णे ने दि० जैन प्रेम वाचनालय का निरीक्षण कर शुभ सम्मति प्रगट की और जैनदर्शनके लिये दो रुपया प्रदान किये। एतदर्थ धन्यवाद है।

२- भारतवर्षीय दि० जैन पोरवाड सभा का मासिक पत्र ट्रैक्ट रूपमें लोनारा से निकलने वाला है। तीन पैसेका टिकट आने पर पहिला अंक नमूने के तौर पर मुफ्त भेजा जायगा। ग्राहक पत्र द्वारा सूचित करें।

३- बडवाणी में चुन्नी बाई जी लोनारा की तरफ से जेष्ठ सुदी ३ से ५ तक नवीन मन्दिर निर्माण हुआ जिसका उद्यापन होने वाला है।

—श्री पार्श्वनाथ दि० जैन विद्यालय उदयपुरका वार्षिक अधिवेशन गुलाबपुरा (मेवाड़) वेदी प्रतिष्ठाके समय श्री डाक्टर गुलाबचन्दजी पाटनी आ० मजिस्ट्रेट के सभापतित्व में बड़े समारोह के साथ सुसम्पन्न हुआ।

आवश्यकता है— एक जैन अध्यापिका की जो धर्मशिक्षा व मिडिल क्लास तक की लड़कियों को हिन्दी, हिसाब, भूगोल आदि पढ़ा सके, हिन्दीमें विशेष योग्यता रखती हो। वेतन योग्यतानुसार ४० रुपये माहवार तक होगा।

—गेंदनलाल जैन, नई मन्डी मुजफ्फर नगर

—उदयपुर के श्री० सेठ छोगालाल जी गदिया की सुपुत्री नगीना बाईका विवाह संस्कार, इन्दौरके श्री० सेठ लक्ष्मण जी खूबचन्द जी टूग्या के भानजे कुंवर रतनलाल जी के साथ अक्षय तृतीया पर्वके दिन सुसम्पन्न हुआ। जिसमें वरपक्षकी तरफसे ११) और कन्यापक्ष की तरफसे ५) पा० विद्या० को आर्थिक सहायता प्राप्त हुई।

—मन्त्री जैन वि० उदयपुर

—उदयपुरकी श्री० पार्श्व० दि० जैन विद्यालय आदि संस्थाओं ने अप्रैल मासमें इस प्रकार लाभ दिया— विद्यालयमें ५५ छात्र, बोर्डिङ्ग हाउस में ४५ छात्र १२०० अजैन स्त्री पुरुषों ने औषधालय में स्वास्थ्य लाभ लिया। अनुमानतः ५१२) मासिक सहायता प्राप्त हुई।

धन्यवाद— भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघको निम्न लिखित सहायता प्राप्त हुई है—

२) दि० जैन पञ्चायत सिरसागंज मैनपुरी

२) पं० सुखलालजी प्र० अ० दि० जैन स्कूल गोहाना (रोहतक) ला० धर्मीरचन्द जी के सुपुत्र स्वरूप चन्द जी के विवाहोपलक्ष्य में।

१०) ला० हीरालाल विमल प्रसाद जी सरसावा

२) कौण्डिसा रैणझा जैन उदगिर लातूर (हैदराबाद)

दाता महानुभावों को धन्यवाद है।

—महामन्त्री।

धर्षण स्नान

(ले०— श्री पं० कपूरचन्द्र जी जैन बनारस)

मैं बहुत देरसे कुछ लिखने के बारे में सोच रहा था कि क्या लिखूं। मेरे लिखने के लिये कोई विषय ही नहीं मिलता था।

रातको जब मैं सोने लगा तो एक कहानी लिखने की कल्पना मनमें करता हुआ सोगया। मैंने कल्पना की थी कि 'मेरा स्वप्न' नामक कहानी लिखूं। परन्तु ऐसी गाढ़ी नींद आई कि सारा स्वप्न वगैरह भूल गया और खूब सोया। यहां तक कि सवेरे चार बजे नौकरके घंटी ठोकने पर ही उठ सका। उठने पर मुझे बड़ा दुःख हुआ कि मैं अपनी काल्पनिक कहानी न लिख पाऊंगा। थोड़ी देर तक तो मैं अपने मनको इधर उधर दौड़ाता रहा। प्रकृति की तरफ देखता रहा। परन्तु कहींसे भी कुछ लिखने की सामग्री नहीं मिल रही थी। मैंने अपने कोर्सकी पुस्तक पढ़ने की चेष्टा की, परन्तु वह निरर्थक सिद्ध हुई। मैंने उसके बाद आज दिनकी नित्य क्रिया बनाई।

फिर तदनुसार कार्य करता रहा। अभी आठ बजे तब मैं स्नानादि से निवृत्त होकर मन्दिर जाकर आया, तब कहीं मुझे लिखने की सामग्री मिली। जिसे कुछ तो मैं लिख चुका था और शेष अब लिखता हूं।

स्नान करना लाभकारी है। गर्म देश वासियोंको इसकी महत्ता समझनी चाहिये। स्नान किसी हालत में भोजन से कम नहीं। मैं तो स्नानको कुछ अंशोंमें भोजनके समान या बढ़कर ही मानता हूं। यह बात और है कि भोजन भी अति आवश्यक चीज है। पर अच्छी तरह स्नान करना उससे किसी अंशों में कम नहीं। अच्छा, तो फिर जब मैं अपने कपड़े वगैरह धोकर साफ कर चुका तो सोचा कि आज रविवार है और गर्मी भी है, इसलिये धर्षण स्नान करना चाहिये। तदनुसार मैं दो तौलिये लेकर नल पर पहुंचा। उस समय एक महाशय स्नान कर रहे थे। मैं ऐसे समय नल पर गया था कि जिस समय कोई नहीं नहाता।

उसके स्नान कर चले जाने पर मैं नलके समीप आया। सर्व प्रथम शिरको थोड़ा आगे झुका कर धोया, उसके बाद क्रमसे ऊपर से लेकर नीचे तक के शरीर के सारे भाग धोये। इस प्रकार शरीर भिगोने की रीति आधुनिक नहीं है, यह प्राचीन शास्त्रानुसार है। मैंने कई जगह पढ़ा था कि स्नान सदैव शिर से ही शुरु करना चाहिये और पैरोंमें खतम। इस प्रकार धोनेसे शरीर की सारी फजूल गर्मी मस्तक पर नहीं चढ़ती। या तो निकल जाती है या शांत होजाती है।

इसके बाद मैंने एक गीले तौलिये से सारा शरीर अच्छी तरहसे रगड़कर धोया। धोनेका क्रम भी पूर्वोक्त था। इस प्रकार शरीर रगड़ने मे परिश्रम, और व्यायाम तो होता ही है, साथ ही साथ ऐसा मालूम पड़ता है कि सारे शरीर में एक प्रकारका तेज एक प्रकारकी बिजली दौड़ रही है। तत्पश्चात जब मैंने तौलिया को एक किनारे रख कर अपने दोनों हाथों की हथेलियों को अपने शरीर के भिन्न २ भागों पर फेरना शुरू किया तो उस समय शरीर में एक

प्रकार की अद्भुत शक्ति पैदा होती जान पड़ी।

जब घर्षण स्नान के इन नियमों को मैं पूर्ण कर चुका तब थोड़ी देर तक निश्चेष्ट और शांत होकर पानी की धार अपने शरीर के ऊपर गिराता रहा। थोड़ी देरके बाद नलके नीचे से उठकर मैंने सूखे तौलिये से अपना बदन पोंछा और कमरे में आकर कुछ देर टहलने के बाद वस्त्र पहिने।

यद्यपि मेरा यह घर्षण स्नान आध घंटे में ही समाप्त होगया। और न मुझे साबुन की, न तेलकी किसी भी चीज की जरूरत नहीं पड़ी तथा मन इतना प्रसन्न होगया कि जिसे लिखने के लिये एक भी विचार न आते थे, एक भी कल्पना नहीं उठती थी— उसे इस प्रकार उत्सुकता के साथ लिख रहा हूँ।

ये बातें तो मेरे नित्य क्रिया का एक अंश थी जिसे मैंने ऊपर लिखा है। इसके अलावा घर्षण स्नान या स्नान क्यों करना किस प्रकार करना आदि थोड़ी सी बातें स्नान से सम्बन्ध रखने वाली है वे नीचे बताई जाती हैं।

भारतवर्ष में प्रायः प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन स्नान करता है। थोड़ी देर तक अपने शरीर पर पानी डालना, शरीरको अच्छी तरह साफ करना जिससे सारे रोम-कूप साफ होजाँय और जब तक मन शांत न होजाय, तब तक नहाते रहने का नाम ही घर्षण स्नान है। इसका अर्थ यह भी नहीं होता कि सारे स्नान का समय शिर में साबुन लगाते २ ही खतम होजाय और बाकी अंगों को साफ करनेका मौका ही न मिले। स्नान जैसे शिरको आवश्यक है उसी प्रकार और और अंगोंके लिये भी। इस लिये स्नान करते समय हम बातका ध्यान रखना चाहिये कि हम अपने शरीरके प्रत्येक अवयवों को अच्छी तरह से साफ करें।

स्नान करने से फायदे कई होते हैं जिन में मुख्य तथा प्रथम यह है कि गर्मी के दिनों में हम लोगों के शरीर से जो पसीना निकला करता है। और चमड़े के ऊपर अधिकतर सूखा करता है, उसको स्नान के समय हम साफ कर डालते हैं। इसी लिये हम लोगों को गर्मी के दिनों में सन्ध्या को स्नान अवश्य करना चाहिये। नहीं तो दिन भर का मैल, रात्रि को और भी मैल के साथ मिल कर कहीं सुबह ही जा कर साफ हो पाता है। पसीना निकलता रहे, और हम उसी दम उसे अच्छी तरह पोंछ डालें तो स्नान करने की इतनी आवश्यकता नहीं रह जाती है। परन्तु पहले तो पसीना पोंछने लायक सर्वदा निकलता ही नहीं है दूसरे कोई भी मनुष्य सब कामों को छोड़ कर दिनभर-गर्मी में-पसीना ही नहीं पोंछता रहता है।

दूसरी बात जो स्नान करने में हम लोगों को फायदा पहुंचाती है वह यह है कि मन की शांति या शरीर की पवित्रता। दिन भर चलने, फिरने के कारण जो धूल हमारे शरीर पर जम जाती है, वह स्नान के समय अंगोछे से शरीर रगड़ने से साफ हो जाती है। स्नानसे हमारे शरीर की अनावश्यक गर्मी निकल जाती है। शरीर में कहीं पर भी विकार इकट्ठा नहीं होने पाता। अच्छी तरह स्नान करने वाले को फोड़े, फुन्सी आदि चर्म विकार कभी नहीं होते हैं।

स्नान करने का सबसे उत्तम समय सबेरे सूर्योदय के पहले, और शाम को सूर्यास्त के समय है। परन्तु

इसके लिये कोई खास समय फुरसत हो निश्चित होना जरूरी है। कभी सुबह, कभी दोपहर को इस तरह स्नान करना हानि कारक है। नहाने के समय गर्म पानी का सर्वदा व्यवहार किसी भी पढ़े लिखे समझदार आदमी को कभी नहीं करना चाहिये। इससे पुरुषत्व घटता है, बढ़ता नहीं। अतएव सदा ठण्डे पानी से स्नान करना चाहिये। एक दो मिनिट में स्नान करने की अपेक्षा तो स्नान न करना ही लाखों हिस्सों में श्रेष्ठ है। अतएव जल्दी के समय स्नान करना कदापि बुद्धिमत्ता की निशानी नहीं है। अपना कार्य समाप्त करके भी हम स्नान कर सकते हैं।

जैनधर्म के शास्त्रों में भी लिखा है कि श्रावकको प्रतिदिन ठण्डे पानी से स्नान करके ही मन्दिर में दर्शन करने जाना चाहिये। फिर क्या कारण है कि हम लोग बिना स्नान किये, मन्दिर जांय या कोई काम करें। केवल खाने या पढ़नेसे ही कोई बुद्धिमान ज्ञानवान नहीं होता कुछ चारित्र की भी आवश्यकता होती है। खासकर आजकल के जमाने में—एक से रोगों के काल में—और इन गर्मी के दिनों में अच्छी तरह से स्नान करना प्रत्येक का कर्तव्य होना चाहिये। स्नान करने से मनुष्यों में अच्छे उत्तम पवित्र, विचारों की सृष्टि होती है। बिना अच्छी तरह से स्नान करने वाला व्यक्ति शायद ही ब्रह्मचर्य को धारण कर सकता है। 'स्नान करना ही इन दिनों अमृत पान करना है' यह वाक्य हमें सदा अपने सामने रखना चाहिये।

पाश्चात्य देशों में तो आम स्नान के अलावा वाष्प-स्नान, सूर्य्य-स्नान आदि अनेक स्नान प्रचलित हैं, जिन के बारे में फिर कभी लिखूंगा। अब मैं जल स्नान के कुछ आवश्यक नियम लिख कर यह लेख समाप्त करता हूं—

१- महीने में एक बार साबुन लगाकर स्नान करना चाहिये, इससे शरीर में चिकनाई नहीं जमने पाती तथा इस प्रकार महीने में एक बार गर्म पानी और साबुन से नहाना स्वास्थ्यकर भी होता है।

२- यदि कोई बड़ी नदी पासमें हो, या अच्छा तालाब हो तो वहां जाकर आनन्द पूर्वक स्नान करना चाहिये, नहीं तो कुए का पानी तो सब श्रेष्ठ है ही।

३- भोजन स्नानके कमसे कम एक या डेढ़ घंटे पीछे करना अच्छा होता है, इससे गर्मी नहीं बढ़ती।

४- रोगी, दुर्बल मनुष्यों को देरतक ठंडे पानी में नहीं नहाना चाहिये। परन्तु ज्यों ही ये विघ्न बाधाएं दूर हों, फौरन ठण्डे पानीमें स्नान कर लेना चाहिये।

५—स्नान एकान्त पूर्ण स्थान में करने से अत्यंत लाभ होता है। एकान्त में स्नान करने से आप अपनी पूरी क्रियाओं को अच्छी तरह समझ सकेंगे। और जिस प्रकार सामने शीशा रख कर व्यायाम करने से लाभ होता है, इसी प्रकार आपको एकान्त में स्नान करने से होगा।

अन्तमें मैं यह कह देना चाहता हूं कि प्रत्येक व्यक्ति को डाक्टरों से सलाह लेकर कि हम किस प्रकार स्वास्थ्य की दृष्टि से स्नान करें, आज ही से इसके बारे में अच्छी तरह जान कर स्नान-घर्षण स्नान करना शुरू कर देना बड़ा लाभकारी सिद्ध होगा। स्नान करने से ही स्वास्थ्य की वृद्धि होगी न कि 'स्नान' पर लेख पढ़ने से।

स्वास्थ्यपर धूम्रपानका अनर्थकारी प्रभाव

आज कल धूम्रपान करना अर्थात बीड़ी, सिगरेट और चुरुट पीना सभ्यता का अंग हो गया है अथवा यों कहें कि यह भी एक फैशन में दाखिल हो गया है। विदेशों में इसका प्रचार अधिक है, परन्तु हमें उसकी आलोचना करनी नहीं, हमें तो यह दिखाना है कि गरीब भारतवर्ष में धूम्रपान का प्रसार किस गति से बढ़ता जा रहा है और इसका कैसा अनर्थ-कारी प्रभाव हमारे देश के बच्चों, नवजवानों और विद्यार्थियों के स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। आप देश के किसी भाग में चले जाइये, सर्वत्र आप सिगरेट और बीड़ी का व्यापक प्रचार पायेंगे। सिगरेट कुछ कीमती होती है, चुरुट उससे भी अधिक कीमती होती है, इस लिये इन दोनों की जगह कुछ दिनों से बीड़ी ने ले रखी है। बीड़ी बनती है तम्बाकू की पत्तियों को काट-काट कर। इसी से यह जाना जा सकता है कि इस तम्बाकू का स्वास्थ्यपर कितना बुरा असर पड़ता है। यह बीड़ी, सिगरेट तथा व्यापक धूम्रपान का ही परिणाम है कि हमारे युवकों के अधरों की लाली कालिमा में बदल जाती है, उन के कलेजे में दर्द उठा करता है और जलन हुआ करती है और वे अकाल मृत्यु को प्राप्त होते रहते हैं।

वैज्ञानिकों का मत है कि 'पान, तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, चुरुट, चाय, कोको आदि वस्तुयें विषैली होती हैं, इनमें कई प्रकार के भयंकर विष पाये जाते हैं, जिनमें निकोटाइन (Nicotine), एक्रलिन (Acrolin) और पिपराइन (Piperine) मुख्य हैं। पहले प्रकार का विष संखिया (Arsenic) से कहीं ज्यादा भयंकर है। यदि अधिक मात्रा में उसका व्यवहार किया जाय, तो मृत्यु एकदम निकट पहुंच जाता है।'

यह तो वैज्ञानिकों का मत हुआ। डाक्टरों का मत यह है कि ऊपर कही गयी जहरीली वस्तुओं से तमाम रोग पैदा होते हैं। वे इस सिलसिले में कहते हैं कि—"इन वस्तुओं में जो विष पाये जाते हैं, वे अजीर्णता, उदरामय, बालों का असमय में पकना, ज्ञान वस्तुओं (Vital centres) को नष्ट करना, हृदय की गति मन्द करना, स्वरभंग, लकवा, मृगी, अपस्मार, धनुर्वात, नामर्दी, बन्ध्यात्व आदि रोग पैदा करते हैं और अभी तक इनका इस्तेमाल करने से स्मरण शक्ति, योजनात्मक शक्ति तथा व्यक्ति विशेष के लिये स्वाभाविक गुणों का नाश हो जाता है।"

मनोविज्ञान के एक पण्डित ने तो इन जहरीली चीजों से होने वाली हानियां बतलाते हुए कहा है कि "मस्तिष्क तथा स्नायु सम्बन्धी दुर्बलता की सृष्टि भी अधिक धूम्रपान से ही होती है।" यही नहीं, संसार के सभी छोटे बड़े चिकित्सकों का यह निर्विवाद मत है कि 'तम्बाकू अधिक मात्रा में इस्ते-माल करने से अनेक प्रकार के रोग पैदा होते हैं, खासकर हृदय और कलेजे की बीमारियाँ तो इसी के परिणाम स्वरूप पैदा होती हैं। तम्बाकू मानसिक शक्ति भी नष्ट कर देता है।

चूंकि युवावस्था के प्रतिनिधि छात्रों में भी यह बीमारी—हां, यहां बीड़ियाँ पी-पीकर मुंह से 'फक-

फक' धुआं फेंक कर मजा लेने की बीमारी—जबर्दस्त रूप धारण कर चुकी है और धीरे-धीरे उन्हें विनाश के उस कुण्ड में डालती जा रही है; जहाँ से उनके सन्त्राण का कोई मार्ग नहीं, इस लिये यहां यह बताना आवश्यक है कि किस प्रकार धूम्रपान के प्रभाव से तेज से तेज बुद्धि के छात्र को भी जीवन संग्राम में हार खानी पड़ी है। हमारे पास इस सम्बन्ध में जो आंकड़े है, उनसे यह पता चलता है कि बीड़ी-सिगरेट पीने वाला कोई भी छात्र परीक्षाओं में कभी सर्वोच्च स्थान नहीं प्राप्त कर सका है। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी का विगत ५० वर्ष का इतिहास इस बात का साक्षी है कि उक्त यूनिवर्सिटी में इस बीच कोई भी धूम्रपान करने वाला छात्र किसी भी परीक्षा में सर्व-प्रथम स्थान नहीं पा सका है।

इस दुर्व्यसन का मनुष्य, विशेषतया नौजवानों की बुद्धि पर ही घोर घातक प्रभाव ही नहीं पड़ता बल्कि इससे नैतिकता पर भी गहरा आघात होता है। इसके ही प्रभाव का परिणाम होता है कि अच्छे विद्यार्थी भी बिगड़ जाते हैं और कुछ ही दिनों की धूम्रपान की आदत के परिणामस्वरूप विनाशोन्मुख दिखाई पड़ते है। इसकी सच्चाई का प्रमाण इस भारतवर्ष के अगणित स्कूलों और कालेजों में आप पा सकते है। और चाहे जो कोई प्रभाव इस का हो, यह तो प्रकट है कि इसके सेवन से शीघ्र जीर्ण होना कठिन ही नहीं, असम्भव है। जो व्यसन के नाम पर घातक वस्तुओंका उपयोग करता है, वह अधिक दिनों तक कदापि जीवित नहीं रह सकता है।

इस सिलसिलेमेंयह बता देना अनुचित न होगा कि पाश्चात्य देशों में ऐसे अनेक महान पुरुष होगये है और आज भी विद्यमान है, जिन्होंने आजीवन बीड़ी सिगरेट आदि जहरीली चीजों का इस्तेमाल नहीं किया और वे दीर्घ काल तक स्वस्थ रहे और मरे भी सुन्दर स्वास्थ्य लिये हुये। जानकारोंका यह भी कथन है कि जो तम्बाकू खाते या धूम्रपान करते हैं वे ही नहीं वरन् उनकी सन्तान भी दीर्घ जीवन के सुखसे वंचित रहती है।

लत बहुत बुरी चीज है। यह तो सभी जानते है कि बचपनकी लत जीवन भर जारी रहती है और बचपन का अभ्यास आजीवन छूटने वाला नहीं है। इसलिये जो बच्चे अपने बाप दादोंकी देखादेखी तम्बाकू खाना और सिगरेट बीड़ी पीना सीख लेते हैं वे आगे चलकर नष्ट होजाते है। धूम्रपान की प्रथा पश्चिम से हमने सीखी और तम्बाकू खाना या पीना मुगलों के जमाने में भारतवासियों ने जाना। किन्तु हमें यह देखकर हर्ष होता है कि पाश्चात्य देशों ने इसका घातक प्रभाव अनुभव किया है और कहीं २ तो कानून बना कर धूम्रपान निषिद्ध घोषित कर दिया गया है। अभी हालकी बात है, नानकिन (चीन) की सरकारने इस प्रकारका कानून बना दिया है कि २० वर्षसे कम उम्रके बालक धूम्रपान न करें। यदि वे ऐसा करते पाये जांयगे, तो उन्हें सख्त सजा मिलेगी वहां तो सिगरेट पीना या बेचना जुर्म करार दिया गया है। इसी प्रकार कनाडा तथा उत्तर अमरीकाके कई प्रान्तोंकी सरकारों ने भी यह घोषित कर दिया है कि १६ वर्षके बालकों के हाथ सिगरेट बेचना जुर्म है। मैकमनी के शिक्षा विभागने हाल ही में एक

गश्ती चिट्ठी जारी कर स्कूल अधिकारियों को आदेश दिया है कि वे सोलह सालकी उम्रके बालकों को यदि धूम्रपान करते पायें तो उन्हें सख्त सजा दीजाय

जागृति और सुधार के युगमें, जबकि सभी राष्ट्र अपने बच्चों, युवकों के स्वास्थ्य सुधार कर राष्ट्र को सबल बनाने पर आरूढ़ है। भारत अब भी इस प्रश्न पर चुप्पी साधे हुए है। हालांकि वह अच्छी तरह यह देख रहा है कि प्रति वर्ष न जाने कितने ही युवक धूम्रपानकी वेदी पर अपना जीवन बलिदान कर रहे है।

सिगरेट की बात तो जाने दीजिये, इधर जबसे बीड़ी का जमाना आया है तबसे तो इसका प्रचार और भी ज्यादा बढ़ गया है। क्या शहर और क्या देहात, सर्वत्र ही बच्चों और युवकों के मुंह से धुवां निकलते देखते है। विद्यार्थी तो इस दुर्व्यसनको अपनाने के लिये चोरी तक किया करते हैं। इस दशामें सरकार और समाजपतियों का क्या कर्तव्य है, यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है। १९३२ में अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन (All India Educational Conference) ने इस बुराई पर प्रकाश डालते हुये सरकारका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया था, पर सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

किन्तु अब उपेक्षा करने का समय नहीं है, यदि सरकार चुप है तो असेम्बली और कौंसिलों के सदस्योंको इस सार्वजनिक विषय पर मौन रहना कदापि वांछनीय नहीं। जिनका सार्वजनिक जीवनके साथ सम्बन्ध है, वे अच्छी तरह जानते है कि बीड़ी तम्बाकू का स्वास्थ्य पर कितना घातक प्रभाव पड़ता है। उनका यह कर्तव्य है कि वे असेम्बली और कौंसिलों में बिल पेश कर इस व्यापक एवं विघातक बुराईको समूल नष्ट करने का प्रयत्न करें। यदि जनमत इसके लिये जी जानसे कटिबद्ध होजाय तो सरकारको निश्चय अन्य देशों की तरह धूम्रपान निषेधक कानून बनाना ही पड़ेगा। विश्वमित्र

वैवाहिक समस्या

(ले० — अजितकुमार जैन शास्त्री)

संसार के समस्त व्यावहारिक एवं पारमार्थिक कार्य चालू रखने के लिये मनुष्य का गृहस्थ जीवन अनिवार्य आवश्यक है। साधुचर्या गृहस्थ लोगों के ऊपर निर्भर है यदि भोजन दान आदि से गृहस्थ लोग साधुओं की सेवा न करें तो साधुओं का अस्तित्व असंभव हो जावे। यदि भगवान ऋषभदेव गृहस्थ न होते तो धर्म का आदर्श पोषक भरत चक्रवर्ती कहां से आता। जिन मन्दिर, जिन वाणी, जिनधर्म आदि की व्यवस्था गृहस्थों पर ही निर्भर है। जिस तरह इन समस्त धार्मिक कार्यों के संचालन के लिये गृहस्थों का होना आवश्यक है ठीक उसी प्रकार व्यवहार के समस्त छोटे बड़े कार्य गृहस्थों के द्वारा ही चलते है। इस कारण सांसारिक मशीन के प्रत्येक पुर्जे को चलाने वाला यह 'गृहस्थ जीवन' ही है यह बात अत्युक्ति नहीं है।

सबसे अधिक आवश्यकता सन्तान प्रणाली के चालू रखने की है यह प्रणाली गृहस्थ जीवन के सिवाय अन्य किसी प्रकार से स्थिर नहीं रह सकती जगत के यदि समस्त पुरुष स्त्री साधु बन कर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर बैठें तो जगत में मनुष्य प्राणी का कुछ समय पीछे अस्तित्व ही न रहे मनुष्य जाति का सत्ता नाश हो जावे। इस कारण भी मनुष्य जाति का स्रोत कायम रखने के लिये मनुष्य का गृहस्थ होना आवश्यक है।

गृहस्थाश्रम का गाड़ीके दो पहिये है जिनको कि पति, पत्नी या स्त्री, पुरुष इन दो शब्दोंसे कहा जाता है। गृहस्थाश्रम का जिस समय श्री गणेश होता है उस समय भिन्न २ स्थानों के निवासी दो वर, कन्या रूप चक्र एक धुरी में पिरो दिये जाते हैं।

वर कन्या का पति पत्नी रूप में होना ही विवाह कहलाता है। विवाह संसार के लिये बहुत महत्व शाली कार्य है इसी कारण वैवाहिक क्रिया बड़े भारी उत्सव के साथ की जाती है।

विवाह हो जाने पर पति पत्नी को एक बन्धन में बन्ध कर जन्म भर रहना पड़ता है इस कारण विवाह जहां एक भारी हर्ष का काम है वहीं वह एक बड़ी भारी जिम्मेवारी का भी काम है क्योंकि उस समय जरा सी चूक होने पर सारा जीवन दुखमय बन जाता है। आजकल जो प्रत्येक घर में अनेक तरह की विपत्तियां दीख पड़ती है उनका मुख्य कारण यह है कि वर कन्या के माता पिताओं ने विवाह को को गुड्डा गुड्डी का खेल समझ रक्खा है। अस्तु

विवाह का उद्देश

उत्तम, आदर्श सन्तान उत्पन्न करना विवाहका मुख्य उद्देश्य है क्योंकि मनुष्य का जीवन कुछ वर्षो तक रहता है, उसके पीछे उसके कुलाचार, धार्मिक मर्यादा एवं राष्ट्र सेवा के लिये उसके स्थान पर उस सरीखा मनुष्य होना चाहिये। वैसा मनुष्य विवाह प्रणाली से ही तयार किया जा सकता है।

जिस तरह उत्तम फलदार वृक्ष उगाने के लिये अच्छे बीज और अच्छी भूमि का प्रबन्ध करना पड़ता

है उसी तरह आदर्श सन्तान के लिये सुयोग्य वर कन्या का जोड़ मिलाना पड़ता है। वर कन्या में से यदि एक या दोनों अयोग्य हों तो अच्छी सन्तान कदापि उत्पन्न नहीं हो सकती।

परन्तु वर कन्याओं के माता पिता प्रायः अपने इस कर्तव्य में तत्पर नहीं रहते। वरका पिता सुयोग्य कन्या को ढूंढने की ओर उतना ध्यान नहीं देता जितना कि उसका ध्यान दहेज की ओर होता है इसी कारण वरके पिताओं को वही कन्या अधिक सुयोग्य जंचती है जिसका पिता बहुत धनिक हो और बहुत भारी रकम दहेज के रूपमें उसके घर पहुँचादे। अधिकसे अधिक दहेज मिलने की दशा में लड़की की अयोग्यता सुयोग्यता के रूप में उन्हें दीख पड़ती है। ठीक ऐसी ही दशा कन्याओं के पिताओं की होती है। उन्हें भी प्रायः सम्पन्न घरानेका पुत्र अपनी कन्याके लिये सुयोग्य प्रतीत होता है। कन्या का जीवन उनको धनमें ही सुखी जान पड़ता है वरके अवगुण भी उनकी निगाहमें सुगुण दिखाई देते हैं जबकि लड़का धनाढ्य घराने का हो।

इस उलटी समझके सहारे प्रायः अयोग्य वर कन्याओं के विवाह हुआ करते हैं जिनके कुपरिणामों से विज्ञ पाठक महानुभाव परिचित होंगे। अयोग्य सम्बन्धों के कारण विवाह सरीखे उपयोगी कार्यमें बाल विवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, कन्या-विक्रय, आदि अनेक विषैले जन्तु पैदा होगये हैं।

बालविवाह

वर कन्याओं की छोटी आयु में विवाह कर देने का यह फल हुआ है कि भारतवर्ष में एक वर्ष की आयु वाली भी ४० हजार विधवाएं हैं। इतना अधिक आन्दोलन होने पर भी जैनसमाज ने अभी तक बालविवाह से मुख नहीं मोड़ा। अभी गत मास में नागोर में ओसवाल जातीय ८ मास की लड़की और एक वर्ष के लड़के की सगाई होने का समाचार आया है। हमारे अनेक भाई शारदा ऐक्ट से बचने के लिये देशी राज्यों में विवाह कर आते हैं।

जिन छोटे बच्चों को विवाह के उद्देश का ही पता नहीं उनको विवाह बन्धन में जकड़ देना मानो उन्हें मृत्यु के समीप भेजने की तयारी करना है। क्योंकि कच्ची आयु में पति पत्नी सम्बन्ध होना जीवन यात्रा के प्रधान सहायक शरीर को क्षीण बनाना है जो कि साधारण रोगों के भार को भी झेलने लायक नहीं रह सकता। यौवन दशा में जो पुरुष स्त्री बूढ़े सरीखे निस्तेज दीख पड़ते हैं उसमें बहुत कुछ बालविवाह का अपराध है।

छोटी आयु में स्त्री पुरुषों की मृत्यु में भी बाल-विवाह प्रधान कारण है। जिन्हें अपनी सन्तान प्यारी हो उन्हें अपने लड़के लड़कियोंको बालविवाह से सुरक्षित रखना चाहिये। वर की आयु कम से १८ वर्ष की और कन्या की आयु १४ वर्ष की होनी चाहिये इससे कम आयु में विवाह करना ही बाल-विवाह है। बाल पति पत्नियों से उत्पन्न हुई संतान या तो अल्प आयु वाली होती है अथवा रोग, निर्बलता का घर होती है।

वृद्धविवाह

हमारे धनिक लोगों की जब पत्नी का स्वर्गवास हो जाता है तब वे अपनी अधेड़ आयु में धनके बल पर अपना विवाह कर डालते है। विवाह तो वे बड़े हर्ष से कर लेते हैं किन्तु विवाह का उद्देश उनसे

सफल नहीं हो पाता। जिस समय उनकी पत्नी यौवन में पैर रखती है तब वे बुढ़ापे की ओर कदम रखते हैं उस दशा में उन वृद्ध पति महाशय को तथा उनकी पत्नी को जो मानसिक कष्ट होते हैं उनको वे ही जानते हैं। उनका घर नरक रूप बन जाता है और दुराचार उस घर में पैर फैलाने लगता है। नतीजा यह भी होता है कि सन्तान उत्पन्न होना तो दूर की बात रही पति महानुभाव अपनी पत्नी को युवावस्था में ही अनाथ विधवा बनाकर आप परलोक चले जाते हैं। इस कारण बुद्धिमान पुरुष को ३५-३६ वर्ष से अधिक आयु हो जाने पर अपना विवाह कदापि न करना चाहिये। पत्नी वियोग के कारण उत्पन्न हुए कष्ट अन्य उचित उपायों से दूर कर लेने चाहिये। अधेड़ अथवा वृद्ध आयु में विवाह करना अपना जीवन, यश, कुलाचार तथा अपनी पत्नी का जीवन नष्ट पथभ्रष्ट करना है। अभी कुछ वृद्ध विवाह होने वाले हैं यह समाचार पत्रों से ज्ञात हुआ है हितैषी महानुभावों को प्रयत्न करके रोक देना चाहिये।

अनमेल विवाह

अभाग जैनसमाज में अनेक पति पत्नी अनमेल विवाह के भी शिकार होते हैं कहीं तो जाति संख्या संकुचित होने से कन्या का सम्बन्ध अनमेल रूप में करना पड़ता है कहीं पर धनाढ्य वर अथवा कन्या का लोभ ऐसे विवाह करा डालता है।

अभी पत्रों में प्रकाशित हुआ था कि बांसवाड़ाके सेठ विजयचन्द्र जी के तेरहवर्षीय पुत्र का विवाह एक ऐसी कन्या से होने वाला है जो कि आयु में उनके सपुत्र से दो तीन वर्ष बड़ी है। अर्थात कन्या युवती है और वर महाशय बालक है। "विवाह हो जाने पर लड़की का शरीर दिनोंदिन शीघ्र बढ़ता है और लड़के के शरीर की बढ़वारी में रोड़ा अटक जाता है" यह बात सब कोई जानता है। फिर बतलाइये सेठ विजयचन्द्र जी के पुत्र महाशय के विवाह का क्या परिणाम होगा। विवाह क्या धन का होता है? पत्नी को धन की मुख्य आवश्यकता है अथवा सुयोग्य बलवान युवक पति की आवश्यकता है? यह प्रश्न अनमेल विवाह करने कराने वालों के सामने है वे सोच विचार कर उत्तर दें।

वर की आयु कन्या से ५ वर्ष से लेकर १२, १३ वर्ष अधिक होनी चाहिये: कम न होनी चाहिये और न उससे अधिक ही हो। ठीक है। इससे कम, अधिक आयु के विवाह अनमेल विवाह कहलाते हैं। रोगी और निरोग वर कन्या का विवाह भी अनमेल विवाह ही है। इस अनमेल विवाह के भी बड़े घातक परिणाम होते हैं जो कि अनेक रूपों में हमारे सामने आते रहते हैं।

कन्या विक्रय

कुछ लोग जो बिना कुछ परिश्रम किये हरामके मालसे धनवान बन जाना चाहते हैं, गाय भैंस आदि के समान अपनी अनजान कन्या को बेच दिया करते हैं खरीदार प्रायः वृद्ध या अधेड़ उम्र के मनुष्य अथवा अन्य किसी दोषके शिकार व्यक्ति होते हैं। धनके लोभी कन्याके पिता लालच की वेदी पर अपनी कन्या का बलिदान कर देते हैं। वृद्ध विवाहका जो शोचनीय परिणाम होता है, प्रायः वही परिणाम कन्या विक्रय का हुआ करता है। मारवाड़ के कुछ

एक स्थानों के लोग इस व्यापार के लिये प्रसिद्ध हैं वहां के निवासियों की हैसियत लड़कियों के ऊपरसे मापी जाती है। जिसके जितनी कन्याएं हुईं वह उतना ही भविष्य में धनका अधिकारी समझा जाता है। जिसके घर कन्या हुई उसको निःसंकोच उधार मिलना शुरु होजाता है।

ऐसे कन्या विक्रेता लोगोंको लाख धिक्कार है। ऐसे क्षणिक निन्द्य आरामके लिये कन्याओं को अयोग्य पति के हाथ सौंपकर उनका मनोहर जीवन नष्ट कर डालते हैं। उन पुरुषों को भी लानत है जो अपने भीतर अयोग्यता रहते हुये भी धनका लोभ देकर एक निर्दोष लड़की के पति बन कर उसका और अपना जीवन नष्ट करते न तो हिचकिचाते हैं और न लज्जित होते हैं।

वर विक्रय

जैन समाजमें उन सुपुत्रों की संख्या भी बढ़ती जारही है जो अपने आपको कन्याके पिताको लूटने के लिये बेचते हैं। उनको जहांसे अधिक दहेज मिलने का वचन मिलता है वहीं पर अपना विवाह कराते हैं जीवनकी सहचरी पत्नी चाहे अयोग्य हो किन्तु मुंह मांगा दहेज उनको मिल जावे वे विवाह कर लेंगे और जो लड़की सब तरह योग्य हो किन्तु गरीबी के कारण उसका पिता अधिक दहेज न देसके उस सुयोग्य कन्याके साथ दहेजके भूखे नवयुवक विवाह करना पसंद नहीं करते। इस दहेजकी भूखका यह परिणाम भी प्रगट होने लगा है कि कहीं २ बीमार पत्नीका ठीक इलाज नहीं कराया जाता है। जिनकी नीयत यह होती है कि यदि यह मर जायगी तो दूसरे विवाह के साथ फिर भारी दहेज की रकम आवेगी।

इत्यादि अनेक विकार इस विवाह प्रणाली में उत्पन्न होगये हैं; यदि इनको उचित उपायों से शीघ्र दूर न किया जायगा तो सामाजिक दशा का सुधार होना असंभव है। क्योंकि भावी सन्तान ही समाज का रूप धारण करेगी। उपर्युक्त विवाह विकारों के रहते हुये स्वस्थ, बलवान गुणवान सन्तान कदापि जन्म नहीं ले सकती। अयोग्य संतान समाजके लिये केवल भार रूप होती है। समाज हितैषी महानुभावों को सदा यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक कन्या और लड़के में घर बनाने तथा सन्तान उत्पादन एवं गृहस्थाश्रम चलानेकी शक्ति विद्यमान है। अतः योग्य कन्याका विवाह सुयोग्य, गुणी, बलवान नवयुवक के साथ ही करना चाहिये।

---*---

सुकवे !

लेखक—
गुणभद्र जैन

सुकवे * ! कीर्ति तुम्हारी, प्रसरे निर्बाध सतत सौरभ सम ।
अमर हुये तुमहीं, रच कविता भाव रस शाली ॥१॥

जबलों इस धरणीपर, प्रगटित है दिनकर, सुधांशु, ग्रह, तारे ।
तबलों नाम तुम्हारा, लेता है विश्व मान उपकारी ॥२॥

कवियों सा उपकारी, होगा क्या कोई अन्य त्रिभुवन में ।
दे काव्यामृतधारा, जीवित करते अतीतों को ॥३॥

सर्वस्व दान दे कर: सुकवि उपकार न भूप कर सकता, ।
कवि ने धरणी धर को, अमर कर दिया जगती में ॥४॥

श्रीराम आदिकों को, कौन जानता आज पृथ्वी में ।
कवि जो निज वाणी से, करते न व्यक्त गुण उनके ॥५॥

जिनके सुललित पद हैं, तिनकी नहिं कीर्ति माल्य मुरझाती ।
होती सफल समीहा, वे कवि क्या देव नहिं जगके ॥६॥

जैसे वन का रक्षक, दे जल करता पल्लवित तरुओं को,
बन कर विषय सुकवि के, वैसे बनते अपूज्य भी पूज्य ॥७॥

रमणीका आलिङ्गन, रुचिकर अनुपम विविध भांति के भोजन ।
सुख नहि देते किञ्चित सुख देती यथा सुकवि वाणी ॥८॥

वनिता के अधरों में, माने अमृत सदैव ही भ्रम है ।
अनुपम सुधा-पयोनिधि, है कविवर लोक विख्यात ॥९॥

उनकी शुचि रसना में सरस्वती सतत वास निज करती ।
जिनकी कविता सुनके, मिटतीं भव सब पीड़ायें ॥१०॥

कवि की शुभ रचना का, लेते हैं स्वाद विज्ञवर उत्तम ।
चन्दन भारी खर सम, जाने क्या मूर्ख कविता को ॥११॥

रसमय कविता से भी, पाते हैं कब हर्ष हृदय शून्य ।
सुन्दरि विभ्रम चेष्टा, निष्फल है नपुंसक आगे ॥१२॥

वश करती देवों को, प्रसराती विमल कीर्ति सौरभ को ।
कल्पद्रुम, चिन्तामणि, कहलाती है सत्कवि कविता ॥१३॥

है कविता तो वह ही, करे विशिख सम मनुज हृदय रेखा ।
अन्य नहीं है कविता, केवल है वह वृथा ही भ्रम ॥१४॥

---

* इसके कितने ही पद्य "वसन्त विलास महाकाव्य" के अनुरूप हैं ।

परिवर्तन

(ले०—श्रीमान पं० भंवरलाल जी जैन न्यायतीर्थ)

जब से जुगल का जन्म हुआ था ला० शरफचन्द जी के दिन अच्छी तरह से गुजरने लग गए थे। कोई जमाना वह था कि आप को समय पर भोजन भी प्राप्त न होता था: किन्तु जबसे लालाजी ने भाग्यवान पुत्र का मुख देखा है तब से आप को नौकरी भी मिल गई है और साधारण तथा घरकी परिस्थिति भी ठीक हो चली है। जुगल की पढ़ाई का खर्चा भी येनकेन प्रकारेण निकल ही आता है। सम्भवतः इसी लिये जुगल माता पिता दोनों को बहुत प्यारा है। लाला जी ने अपने घरू खर्च में कमी कर के जुगल के लिये एक प्राइवेट ट्यूटर भी रख दिया है।

जुगल एक मेहनती लड़का है इसी लिये इतनी छोटी अवस्था में उस ने मेट्रिक पास कर लिया है और वह भी फर्स्ट डिवीजन विद डिस्टिंगशन इन इंग्लिश (First division with distinction in English)

माता पिता के बार बार मना करने पर भी जुगल ने सेशन शुरू होते ही साइन्स लेकर कालेज ज्वाइन कर लिया। लालाजी की यह इच्छा न थी कि उनका जुगल पढ़ा ही करे वरन् वे चाहते थे कि कहीं धन्धे पर लग जाय और अपनी शादी के लिये कुछ पैसा भी इकट्ठा कर ले। किन्तु अब तो उसकी शादी एवं कालेज के खर्चे के लिये स्वयं लालाजी को ही चिन्ता करनी पड़ी। चिन्ता ही नहीं अपितु कालेज की फीस देते देते लालाजी की अक्ल भी हैरान होगई एकतो पांच आदमियों का घरका खर्च चलाना और इतनी भारी २ कालेजों में फीस देना एक साधारण परिस्थिति वाले व्यक्ति के लिये बहुत कठिन था।

जुगल एक होनहार लड़का होगा, ऐसा सभी लोगों का खयाल था। इसीलिये बिना चेष्टा किये भी इसके वैवाहिक सम्बन्ध के लिये कई जगहसे मांग आने लगीं। मैनपुरी के लाला गेंदमल जी तो इनके पीछे ही होगये और अन्तमें उनकी लड़की मोहिनी के साथ जुगलका विवाह सम्बन्ध होना निश्चित होगया।

*　　*　　*

आज इन्टर की परीक्षा पूर्ण होगई। पेपर इस वर्ष कुछ आसान थे इसलिये प्रायः सभी परीक्षा देने वाले विद्यार्थी खुशियां मना रहे थे कि हम शर्तिया पास होवेंगे। बाबू जुगल भी अपने यार दोस्तों के साथ बागमें सैर कर रहे थे और परीक्षामें पूर्णतः पास होने की सम्भावना में मारे खुशीके फूले नहीं समाते थे। ज्योंही ये लोग सदर गेटसे निकले: एक बाजेकी आवाज ने इन्हें चौंका दिया। फिर कर जो देखा तो एक मोटर में खड़ा हुआ अप टू डेट जेन्टिल मैन कहने लगा—

"आज रात को ८॥ बजे थियेटरहॉल में"
"खेल होगा। मिस मे मिस ·

का तूफानी रूप व चित्ताकर्षक अभिनय देख कर आप लोग दांतों तले अंगुली दबायेंगे। इस के अलावा और क्या क्या होगा? पधारिये और पर्दे पर देखिये।

यह सुन कर जुगल की पार्टी ने भी आज सिनेमा देखने का निश्चय कर लिया और उसी समय अपनी अपनी साइकिलों पर सवार होकर सिनेमा हाल की तरफ रवाना होगए। रास्ते में जहां कहीं इस का (Advertise) एडवरटाइज हो रहा था वहां सभी लोग एक क्षण भर के लिये ठहर कर आगे बढ़ते थे। प्रथम तो आज जुगल की पार्टी परीक्षा से फारिग हो चुकी थी इसलिये इन लोगों के दिल में विशेष प्रकार की खुशी थी। उस समय इन के सामने संसार की सब विभूतियां तुच्छ थीं। न किसी का भय था, न चिंता। जैसे किसी कैदी को वर्षों तक जेलखाने रहने के बाद आजादी मिले तो उसे कितना आनन्द होता है। ठीक उसी प्रकार विद्यार्थियों को परीक्षा से फारिग होजाने पर प्रसन्नता होती है। भविष्य में क्या करना है—यह उस समय खयाल नहीं होता उस समय तो केवल मौज उड़ाने का सूझता है। दिल यही चाहता है कि चौकीमें घूमें यार दोस्तों के साथ घूमा करें। यही हाल आज जुगल की पार्टी का हो रहा था, न उन्हें किसी का भय था न डर। साइकिलों पर चलते समय उन्हें राइट (Right) लेफ्ट (Left) का भी खयाल न था। बेचारा पुलिसवाला विसिल देता और हाथमें रोकता किन्तु वहां कौन सुनता था। द्वितीय यह पार्टी आज सिनेमा देखने जा रही थी इसलिये और भी खुशी थी। अस्तु, ठीक समय पर जुगल वगैरह सिनेमा हाल पर पहुंच गये और सेकिन्ड क्लास का टिकट लेकर अकड़ते हुए अन्दर जा बैठे।

* * *

सिनेमा देखनेको जुगलका यह पहिला मौका था इस दिनके पहिले उसने कभी भी सिनेमा नहीं देखा था। किन्तु पर्दे पर उस दिन ऐक्टर व ऐक्ट्रेस के अभिनय को देखकर उनकी नाज व अदाओंसे मोहित होगया था। उसी दिनसे उसको ऐसा चस्का लगा कि प्रत्येक नये खेलको देखना उसका आवश्यक कार्य बन गया। धीरे २ वह सिनेमा देखने का इतना शौकीन होगया कि जब कभी उसकी जुबान पर सिनेमा सम्बन्धी ही बातें रहती थीं। कालेज में, घर में, यार दोस्तोंके पास सभी जगह सिनेमा की चर्चाएं होने लगीं। कभी किसी मिसेज की तारीफ की जाती तो कभी किसी मिसेजकी, और कभी किसी मिस्टर की। पहले रोज जो सिनेमा देखा जाता दूसरे दिन उसी की समालोचना होती।

इस सिनेमा ने जुगल के जीवन को एक नये ढांचे में ढाल दिया। अब वह धीरे २ ऐश-पसन्द होने लगा। कोई दिन वह था जबकि जुगल खद्दर के कपड़े पहिन कर अपनेको धन्य समझता था, विदेशी वस्तुओं को ठोकर लगाता था, विलासिता से कोसों दूर भगताथा और पसन्द करता था सादा-पन को। किन्तु जबसे आपने चित्र पट पर अभिनेत्रियों और अभिनेताओं का वेश-विन्यास, चाल-ढाल आदि देखे हैं तबसे आपके दिल पर उन्हींका चित्र खिंच गया है। अबतो जैन्टिलमैनी ठाठ-बाठ आप को बहुत प्रिय मालूम होने लगा है। माता एवं स्त्री के मोटे कपड़ों से आपको घृणा होने लग गई है। जुगलके हृदय में धीरे २ यह खयाल उत्पन्न होने लगे कि आनन्द तो वास्तवमें अपटू-डेट जैन्टिलमैन बनने में है। जो स्त्रियां कभी भी पुरुषों की तरह बाहर नहीं घूमतीं, घरकी चहार दिवारी में पड़ी

रहती हैं, जो यह नहीं जानतीं कि जमाने का क्या रफ्तार है जो केवल घरके काम-काजों में ही लगी रहती हैं, जिनको लव (प्रेम) करनेका तरीका मालूम नहीं उनके साथ जीवन व्यतीत करना नरक में पड़े रहना है। सचमुच जीवन तो अप-टू-डेट लेडियों का होता है; वे ही प्रेम के सच्चे ढंग एवं उद्देश्य को समझती हैं। भारतीय स्त्रियां प्रेम करना नहीं जानतीं। जब देखो तब "नाथ ! नाथ !!" चिल्लाया करती हैं, उनके मुख से कभी 'माई डियर' या 'डियर डारलिंग' आदि शब्द तो निकलते ही नहीं कभी भी प्रेम भरी तिरछी चितवनसे वे अपने पति को नहीं देखतीं और न ही यह जानती हैं कि फ्लर्टेशन क्या है ?

जिस दिनसे मोहिनी इस घरमें आई है तभी से उस के ग्रह न मालूम कैसे बैठे हैं कि बेचारी को किसी तरह भी सुख नहीं। जब वह बच्ची थी तो सारे घर का काम काज उसे ही करना पड़ता था। चौबीस घंटों में अठारह घंटे पिलना पड़ता था। इस से वह बहुत घबरा जाती थी। खैर, जबसे उस ने होश संभाला, उस के हृदय में ज्ञान का अंकुर उत्पन्न हुआ उसने इस घरके कार्य को अपना कर्तव्य समझ कर अपनेको अधीर होने से रोका, किन्तु उसे एक दूसरी वेदना दिल ही दिल में मसोसने लगी। उस की सारी आशाओं पर पानी फिर गया। बाल्य काल में विवाह हो जाने से उसे विवाह की उपयोगिता क्या है यह पता नहीं था। किन्तु धीरे धीरे जब उस ने युवावस्था में पदार्पण किया उसे मालूम होने लगा कि विवाह क्यों किया जाता है ? उस ने सोचा कि संसार में अपनी जीवन यात्रा को अच्छी तरह सफल बनाने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति अपना एक साथी ढूंढे और आपसी सुखदुख में हाथ बटाते हुए दुनियांमें कुछ कर जाय। मोहन के लिये यह खुशीकी बात थी उस का साथी भी एक उत्साही और समाज सेवक व्यक्ति था। किन्तु जब से जुगल को सिनेमा देखनेका शौक लगा है तभी से वह मोहनी से नफरत करने लग गया है। इसी चिंता से वह रात दिन सूख सूख कर पिंजर हो रही थी। वह बार बार उस से प्रार्थना करती कि प्राणनाथ ! मुझे आप क्यों मझधार में छोड़ रहे हैं मेरा क्या अपराध है जिससे आपने मुझे यह कड़ी सज़ा देना निश्चित किया है। मेरे जीवनाधार सच बताओ मेरा क्या कसूर है ? किन्तु इन बातोंका जुगल हृदय पर क्या असर होता था। वह तो इस समय एक जोरदार प्रवाह में बह रहा था। न उसे पत्नी की चिंता थी न मात पिता की। बेचारे बुड्ढे मात पिता भी अपने पुत्र की हालत को देख कर दुखित एवं चकित होरहे थे। उन्हें ताज्जुब था कि उन के जुगल के जीवन में एकदम इतना परिवर्तन हो गया जो व्यक्ति सभा सोसाइटियोंमें स्टेज पर खड़ा होकर (Simplicity) सादापन के व्याख्यान झाड़ा करता था आज वही विलासी बन रहा है और एक ऐसे प्रवाह में बहा जा रहा है जिस में बह कर कभी भी सुधरने की आशा नहीं। उस वृद्ध दम्पति एवं स्त्री ने भरसक प्रयत्न किया कि जुगल ठिकाने आजाय किन्तु उस के दिल में और ही तस्वीरें समाई हुई थीं वहां स्थान खाली न था जो इन लोगों की बातों को भी जरा जगह मिलजाय।

* * *

१६ मई का दिन था। शहर भर के शिक्षितोंमें यह अफवाह बड़े जोर से उड़ रही थी कि बी. ए. का रिजल्ट कल निकलने वाला है। शाम से ही लोगों के यहां फोन और तार खड़कने लग गये थे। कई जगह तो लगातार फोन की घंटियां बज रही थीं। पब्लिक काल हाउस (Public Call House) पर तो खचाखच भीड़ जमी हुई थी। केवल बारह ही घंटे बाकी थे जबकि कई व्यक्तियों के भाग्य का पिटारा खुलने वाला था। खैर ज्यों त्यों करके रात्रि समाप्त हुई। लोग अखबार खरीदने के लिए बहुत जल्द स्टेशन पर पहुंचे। जुगल भी अपनी साइकल लेकर जल्दी रवाना हुआ। रास्ते में ही मि. कैलाश Times of India पढ़ते हुए आरहे थे। जुगलने लपक कर कैलाश से कहा ——Please see Number 1738। पहले फर्स्ट फिर सेकिण्ड एवं क्रमशः थर्ड डिवीजन वालों में टटोला गया किन्तु बेकार। जुगल के मुख पर क्षण भर के लिए मुर्दनी सी छागई। होना भी चाहिए बेचारे को तीन साल लगातार फेल होते होचुके थे और यह चौथा साल भी योंही गया। जब वृद्ध पिताने यह खबर सुनी तो उनको बहुत दुःख हुआ।

बेचारा बहुत थक चुका था, उठने बैठने की शक्ति भी न थी उसने उसी समय जुगल से कह दिया—मैं तुम्हारा खर्चा बर्दाश्त करने में अब असमर्थ हूं अब तो मेरे पास इतना भी पैसा नहीं कि बाकी उम्र भी आराम से बसर कर सकूं। अब तुम कमाओ, खाओ और हमें खिलाओ।

जुगल के लिये यह दुखकी बात थी कि वह कमावे। उसे यार-दोस्तों में रहना और सिनेमाओं की समालोचना करने में मजा आता था। उसने इन झंझटों से छूटनेके कई उपाय सोचे किन्तु कोई कारगर नहीं हुआ। एक रोज कैलाश ने जो कि इसका मित्र एवं एक धनी–मानी सेठका लड़का था, इसके सामने यह प्रस्ताव रक्खा कि हम लोगोंको बम्बई चलना चाहिये। वहां स्वतन्त्रता पूर्वक रहेंगे और इन घरेलू झंझटों से भी बच जायगे। जुगल के भी यह बात जंच गई और पिता से जाने की आज्ञा मांगी पिताने बार २ मना किया किन्तु उन्होंने ठान ली सो ठान ली। उधर जब मोहिनी ने यह सुना तो वह और भी दु:खित होगई। यद्यपि जुगल इससे बोला भी न करता थी किन्तु उसके दर्शनमात्रसे मोहिनी अपने को धन्य समझती थी। बम्बई जानेकी खबर ने उसे बहुत विह्वल बना दिया। उसने जुगल से प्रार्थना की कि 'मुझे भी ले चलो'; लेकिन वहां कौन सुनता था? उसे कह दिया गया कि तुम जैसी उजड्ड गवार औरत मेरे साथ नहीं रह सकती। तुम कुछ नहीं जानती, नालायक हो। अस्तु, दिन निश्चित हुआ और कैलाश एवं जुगल चल दिये।

* * *

समयको गुजरते देर नहीं लगती। जुगल को गये चार मास होचुके। अब तक केवल एक पत्र वृद्ध पिताको मिला था। ला० सर्राफचन्द जी बीमार तो पहिले से ही थे अब उन्हे पुत्र वियोग का दुःख हो गया। संभवतः इसीलिये आज वे कराल काल के ग्रास बन गये। अभी कुछ रोज भी न हुए थे कि जुगल की मांको हैजा होगया और वह भी चलती बनी। इस तरह दोनों दम्पत्ति एक हफ्तेके भीतर ही विदा होगये। अब बेचारी मोहिनीके लिये यहां कोई

भी न था। न पीहर में कोई बचा था न ससुराल में; केवल एक जुगल ही उसका सहारा था। मोहिनी अकेली अधीर हो उठी किन्तु वह बुद्धिमती एवं सुशील थी, उसने ढाढस बांधा और पतिदेवको पत्र लिखा कि 'मुझ अभागिनी की रक्षा करो। आपके माता पिता मुझे छोड़ कर चल दिये—अब मेरे सब कुछ तुम हो। मेरा धन, मेरा सौभाग्य और मेरा जीवन आप हैं। इस मंझधार में डूबती हुई नावको पार लगाने को आप ही समर्थ हैं······ । और उत्तर पानेकी प्रतीक्षा करने लगी। रोज डाक सभालती किन्तु अभी तक पत्र नहीं मिला। पत्र दिये दस रोज होगये किन्तु कोई उत्तर नहीं। अबतो मोहनीके हृदयमें नाना प्रकार के विचार पैदा होने लगे। देर देरमें दरवाजे और खिडकी की तरफ जाती और निराश होकर बिस्तरों पर पड़ जाती। वह कभी रोती, कभी हसती और कभी आईने के सामने खड़ी होकर बाल सवारती सोहागकी टीकी लगाती और कभी कपडे ठीक करती कभी कमरे में झाडू लगाती. अच्छे २ पकवान बनाती और फिर रोने लग जाती। उसकी हालत पागल की सी होगई। एक दो. चार दस, पन्द्रह बीस दिन होते २ एक माह खतम हो चुका किन्तु कोई पत्र नहीं मिला। वह दिनों दिन सूखने लगी जैसे थाइसिस होगया हो। वह भोलापन, सुन्दरता और मुस्कराहट सारी जाती रही।

एक रोज बिस्तरों पर पडी २ मोहिनी कुछ अंट-संट बक रही थी कि पोस्टमैन ने लाकर उसे एक पत्र दिया। वह चटसे संभल कर बैठी और पत्र पढ़ने लगी। उसमें लिखा था—

बम्बई १०-५-३०

मोहनलता - —

पत्र मिला, बहुत दुःख हुआ कि पिता एवं माता दोनों का स्वर्गवास हो गया। क्या करें काल बलवान है। उनके क्रिया कर्म वगैरह करना। मुझे आफिसके काम से फुरसत नहीं मिलती। —जुगल

पत्र पढा- एक दफा, दो दफा, तीन दफा, और पढकर रोने लगी। उसकी सारी उम्मेदें खाक में मिलगई। अब वह और भी ज्यादह पागल बनगई और घर छोडकर वहां से निकल भागी।

जुगल और कैलाश दोनों ही कैलाशके पिताकी सिफारिश से एक सरकारी आफिस में अच्छी पोस्ट पर नोकर हैं। अच्छा कमाते हैं और उडाते हैं आफिस टाइम से बचा हुआ समय बम्बई की सडकों पर सुन्दर स्थानों पर घूमने में गुजरता है। कभी रात को किसी सिनेमा की सैर करते हैं और कभी किसीकी। कई सिनेमा एवं फिल्म कंपनियोंके मैनेजर से आपका अच्छा परिचय होगया है प्रत्येक स्यूटिंग में आप जरूर पहुंचते हैं। एक प्रसिद्ध एक्ट्रेस जो कि वेश्या भी है उससे जुगल का प्रेम भी होगया है। रात दिन आप उसी के साथ घूमा करते हैं। यही कारण है कि जुगल को मोहनी की याद नहीं। एक रोज जबकि जुगल और मिस साहिबा आपसमें गलबहियां (गलेमें हाथ) डाले मोटर से उतर कर बाग में घुसे तो एक भिखमंगी ने दो पैसे मांगे। जुगल डेम' कहकर आगे बढ गये। पाठक मोहनी को न भूले होंगे। भिखमंगी मोहनी ही थी। घरको छोड कर जब वह चली तो दो वर्ष में चक्कर लगाते लगाते संयोगवश यहां आ पहुंची।

जुगल और मोहन में बहुत काया पलट होगई थी इस लिए दोनों पहचान न सके किन्तु फिरभी आर्य स्त्रियां अपने आराध्य देव को नहीं भूल सकतीं। मोहनी को चाल ढाल देखकर जुगल की याद आगई। वह वहां से भगी और बागमें घुसी किन्तु माली ने रोक दिया। वह वहीं पड़ रही।

करीब एक घंटे के बाद जब वे दोनों नशे में मस्त होकर वहाँ आये तो फिर मोहनी ने पैसा मांगा। अबकी बार जुगल ने कहा—नहीं हम पैसा नहीं देगा जा और किसी के पास मांग—और यह कहने के साथ मोटर में बैठ कर चलते बने। मोहनाकी बात चीत से थोड़ा निश्चयसा हो गया कि वह जुगल ही था। वह दूसरे दिन तक वहीं पड़ी रही और जब वे आये तो सामने जा कर कहा—

क्या आप का नाम बाबू जुगल किशोर है?

जुगल यह सुनकर चौंक पड़ा और कुछ न बोल सका मिस साहिबा ने बीच हां में कहा—हां.

मोहनी पैरोंपर गिर पड़ी और बोली—

प्राणनाथ मुझे भूल गए!

जुगल यह सुनकर और भी हका बका होगया और लगा उसकी तरफ देखने। मोहनी ने फिर कहा—

क्या आप मुझे नहीं पहचानते। मैं आप की दासी मोहनी हूं।

जुगल यह देख कर खिसिया गया। और कहने लगा होगा कोई मैं नहीं जानता।

क्या आप अपनी पत्नी को भूल गये?

मेरी कोई पत्नी वत्नी नहीं। भला ऐसी (मिस साहिबा की तरफ इशारा करके सुन्दर स्त्रियों के सामने तुम सरीखी मेरी पत्नी। छिः हटो। आने दो।

नाथ! ऐसा क्यों कहते है। मैं ने आप का क्या बिगाड़ा है जो आप नाराज है। क्या मैं सुन्दर नहीं क्या मैं खूबसूरत नहीं हो इन भली मानुषों सरीखी चटक मटक मुझ में नहीं है और नहीं है मुझ में दिखावटीपन। आप ने मेरे असली प्रेम को नहीं पहचाना और बाहरी ठाठ बाट पर मुग्ध होगये।

दुःख है कि एक रोज वह था जब आप भारतीय आर्यललनाओं के लिये बहुत ऊंचे भाव रखते थे। लेकिन आज इस प्रवाह में बहकर यह कह रहे है कि तुम उज्जड हो, गवार हो तुम प्रेम करना नहीं जानती। धिक्कार है आप की बुद्धि को एवं शिक्षा दीक्षा को। आप सरीखे युवकों ने ही इस देशको पराधीनता की शृंखलाओं में बंधवाया है। यह उसी का फल है कि आप लोग भारत की आर्य महिलाओं के लिए भी ऐसे भाव रखते है, उन का कोई मूल्य नहीं समझते. उज्जड और गंवार कहते है और बाहरी ठाठ बाट विलासिता एवं नाज व नखरों पर मरकर अपने आप पैरों में कुल्हाड़ा मारते है। धन्य इस बुद्धिको जो विना सोचे समझे कृत्रिमता को देखकर इतना परिवर्तन करडाला। अस्तुः जोभी कुछ हो मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करती हूँ कि आपको सद् बुद्धि दे और आप दोनों के हृदय में निःस्वार्थ स्थिर और अगाढ प्रेम उत्पन्न हो।

यह कहकर मोहनी वहां से भागी और सामने वाले तालाब में सदा के लिए गोता लगा गई।

* * *

महगांव अत्याचार काण्ड के सम्बंध में

भा० दिगम्बर जैन परिषद् का वक्तव्य

यह लिखते हुए दुःख होता है कि महगांव काण्ड के सम्बंध में अभी तक कोई सफलता प्राप्त नहीं हुई है। इस सम्बंध में पांच बार परिषद् कार्यकारिणी समिति की मीटिंग हुई। कई बार श्री तनसुखराय जी आदि महाशयों ने परिषद् की ओर से कर्नल सर पं० कैलाशनारायन जी हक्सर पोलिटिकल मेम्बर स्टेट से मुलाकात की प्रारम्भ में पोलिटिकल मेम्बर स्टेट की वार्तालाप व उनके पत्र से यह आशा हो गई थी कि जैन समाज के साथ न्याय होगा, उस के दुःखित हृदयको सान्त्वना प्राप्त होगी और अत्याचार करने वाले मनुष्य को उचित दण्ड मिलेगा परन्तु वह आशा अब निराशा में परिणत हो गई है। जनताकी जानकारी के लिये पोलिटिकल मेम्बर साहब का पत्र तथा जो उत्तर परिषद्की ओरसे दिया गया है प्रकाशित किया जाता है।

नकल उस पत्र की—

जो श्री तनसुखराय जी मन्त्री परिषद को २५ फर्वरी के लगभग प्राप्त हुआ।

'आप ने श्री लालचन्द जी के साथ परसों जो मुझ से भेंट की थी उस से यह ज्ञात होता है कि उस कष्ट के अतिरिक्त जो जैन समाज को स्वभावतया महगांव मन्दिर से प्रतिमाओं के गायब हो जाने से हुआ है आप की समाज :—

१—बड़ी क्षुब्ध हुई है और उसने इस बातसे गलत नतीजा निकाला है कि जो दो वक्तव्य प्रकाशित हुये हैं वह राज्य की ओर से नहीं हुये है वरन इन्स्पैक्टर जनरल आफ पुलिस व प्रकाशन विभाग ग्वालियर की ओर से हुये है।

२—उनको इस बातसे दुःख हुआ है कि इन वक्तव्यों में कोई भी शब्द सहानुभूति का नहीं है जिस से भारत की जैन समाज के दुःखित हृदय को शान्ति मिलती।

मुझे खेद है कि इन वक्तव्यों की बाहिरी सूरत से आप की समाज को भ्रम हुआ।

इस खेद जनक घटना के हरएक पक्ष पर बहुत देर तक वार्तालाप होजाने के पश्चात अब आवश्यक यही रहा है कि आपकी समाज के श्रद्धालु व भक्त पुरुषों को इष्टदेव की प्रतिमाओं के अदृष्ट होजाने पर जो दुःख हुआ है उसकी सहानुभूति के लिये अधिक कहा जावे।

मुझे इस बात पर बड़ा सन्तोष हुआ है कि आप लोगों से भेंट करू और आप लोगोंकी बात सुनूं और आपके इस प्रस्तावको स्वीकार करूं कि मैं स्वयं महगांव जाकर वहांके गरीब जैनियों को सान्त्वना दूं और उनको विश्वास दिलाऊं कि वे किसी मनुष्यकी जो किसी कारणसे उनको कष्ट पहुंचाता हो, दया पर बिलकुल निर्भर नहीं हैं। आप जानते है कि विमान के सम्बन्ध में मैं एक विशेष विचार रखता हू, मैं उनको पवित्र अर्पित वस्तु समझता हूं। इन विचारों को मैंने वहां जो जनता इकट्ठी हुई थी उससे गुप्त नहीं रक्खा।

मैं समझता हूं कि आप मेरी उस मनोभावना

की सराहना करेंगे कि जिससे मैं यह समझता हूँ कि इस घटना के सम्बन्ध में जनता के विचारों की अवहेलना कीगई और यदि आप इस तरीके को जो आपने अब किया है पहले करते तो और ही परिस्थिति होती।

अन्त में मैं यह कह देना चाहता हूं कि यद्यपि यह पत्र आपकी भेट के फल स्वरूप आपको निजी हैसियतसे लिखा जाता है तो भी मुझे कोई आपत्ति न होगी। यदि आप अपने साथियों को इसके विषय से इसलिये अभिज्ञ करना उचित समझें कि इस समस्त कार्यवाही का कि जिसने एक विवादग्रस्त दशा धारण करली है सम्मानपूर्ण अन्त हो जावे।

Copy of letter dated Nil received from Motimahal Gwalior addressed to Tansukh Rai Jain Secretary L. I. Co, Ltd. Delhi.

"At the visit you paid me day before yesterday, in company with Mr. Lal Chand, it transpired that apart from the distreas naturally caused to the Jain mind by the disappearance of images from the Mahgoan temple, your community.

(1) Were perpexed and led to draw an inference wide of the mark by the fact that the two published statements were not disignated ' Governement Communeques ' but respectively purported to be issued by the Inspector General of Police and the Publicity Officer, Gwalior.

and

(2) They had felt aggrieved at the absence from those statements of any words of sympathy calculated to soothe the feelings of the Jains of India.

I am sorry if the apparent character of the .... communiques misled your community in any way.

As for the feelings of sympathy with your community in the overhelming grief occasioned by the disappearance of objects of the community' s worship, it is not necessary for me to say much after our long conversations ranging over every aspect of a deplerable occurance which was bound to agonise the reverent and orthodox member of your faith.

To me personally it afforded much gratification to receive and listen to you and, indeed, to respond to your suggestion that if I conveniently could, I might personally visit Mahagaon so as to put some heart into the poor local Jains and to some extent re-assure them that were not after all entirely at the mercy of any people who, for whatever reason, might be led to add to their torment.

You know, too, of the strong view I hold about the Viman which I regard as a dedicated sanctified recepticle a view which I did not conceal from the men

assembled at Mahgaon.

I think that you were able to appreciate with wath pity I regard the mishandling of the public ventilation of this unfortunate incident and the fact that things might have gone entirely diffeient if it had occured to you to resort earlier to the course that you finally adopted

In conclusion, I may say that though this letter in addressed to you personally as the result of the visit you paid me, I should have no objection, if you think fit, to your acquainting your colligues with its contents with the object of bringing to an honourable and proceedings which have unfortunately assumed a controversial turn.

नकल पत्र जो कर्नल कैलाशनरायन जी हक्सर साहब पोलिटिकल मेम्बर ग्वालियर स्टेट को बा० सुमेरचन्द जी सभापति परिषद् ने ७ मार्च को लिखाः—

आप का फर्वरी १९३६ का पत्र जो बा० तनसुखराय जी जैन के नाम भेजा गया था अखिल भारत दिगम्बर जैन परिषद् की कार्य कारिणी समिति के सामने ५ मार्च वाली बैठक में पेश किया गया था।

यह समिति आप की उस मनोभावना की सराहना करती है कि जिस से आप ने श्रीयुत लालचन्द जी व श्रीयुत तनसुखराय जी द्वारा कथित मामले को सुना और आप ने महगांव के अपवित्र किये हुवे मन्दिर के देखने में जो कष्ट उठाया। अपने सामने वार्तालाप से मामलात के समझने में सदा सहूलियत होती है इसलिये परिषद् यह चाहती है कि डेपूटेशन के रूप में प्रेसीडेंट के सामने उपस्थित होकर अपने कष्टों को रक्खें। हम यह समझते हैं कि कभी भी किसी रियासत में जैन मन्दिर अपवित्र नहीं किया गया।

माधव जयन्तीसे शुभ अवसर पर ठीक कार्रवाही के न करने और अफसरों के बेसमझ व्यवहार से व कुल बड़ी व छोटी २७ प्रतिमाओं के नष्ट होने व पूज्य शास्त्रों के जलाये जाने से कोई भी सम्प्रदाय चाहे वह कितना ही शान्ति प्रिय क्यों न हो उत्तेजित हो जावेगी। इस के पश्चात् कुछ जैनियों को मुलजिम बनाने और तहकीकात के दौरान् में स्त्रियों के अपमान करने ने अग्नि में ईंधन का कार्य किया। इस लिये किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि यदि कुछ जोश ले पुरुषों ने तेज प्रोग्राम काम में लाने की प्रेरणा की हो।

आप के पत्र का अन्तिम पेरा जिस में सम्मानपूर्ण समझौते के लिये कहा गया है आशावर्द्धक है इस लिये मैं आप के ध्यान को उस कार्यवाही के लिये आकर्षित करूंगा जिससे कि जनता को संतोष हो और शान्ति के साथ समझने का वातावरण उत्पन्न हो।

मैं निम्न लिखित बातों के लिये रियासत से निवेदन करता हूं:—

क- प्रतिमाओं की कहे जाने वाली चोरी के सम्बन्ध में जैनियों के विरुद्ध जो मुकद्दमे चलाये गये हैं उनको वापिस लिया जावे।

ख- स्थानीय अफसरान को जिन्हों ने तहकीकात के दरम्यान में स्त्रियों का अपमान किया है उचित दण्ड दिया जावे।

ग- अफसरान जो कि इस दुर्घटना से सम्बन्धित कहे जाते हैं जैसे कि नायब तहसीलदार, पुलिस, सब इंसपैक्टर और स्कूल टीचर इस समय किसी दूर स्थान पर भेज दिये जावें ताकि आयंदा मामलात से उनका कोई सम्बन्ध न रहे और न कोई उत्तेजना फैलावें।

घ- उन मनुष्यों के व्यवहार की जो इस दुर्घटना के जिम्मेदार हैं स्वतंत्र जांच की जावे और जो अपराधी प्रमाणित हों उनको उचित दण्ड दिया जावे

ङ- राज्य की ओर से एक वक्तव्य प्रकाशित हो जिस में इस दुर्घटना पर खेद प्रकाशित हो और उस में यह भी घोषित हो कि प्राप्त प्रतिमायें पुनः प्रतिष्ठित की जावेंगी और जैन जनता को साधारणतया और महगाँव की जनता को विशेष तया विश्वास दिलाया जावे कि उन के धर्मायतन (विमान आदि) के प्रयोग में कोई बाधा नहीं डाली जावेगी और न कोई उन को माँग सकेगा।

च- प्राप्त मूर्तियां मन्दिर में प्रतिष्ठा के बाद विराजमान की जावें और सहानुभूति और प्रेम को प्रदर्शित करने के लिये इस कार्य के हेतु विशेष सहायता दी जावे।

अंत में मैं यह निवेदन करूंगा कि इन मामलात को सुलझाने के लिये यह उचित होगा कि श्रीमान यह पसन्द करें कि हमारे कुछ प्रतिनिधि ग्वालियर १५ मार्च या किसी और तारीख पर जिस को कि आप पसन्द करें आप की सेवा में उपस्थित हों।

आपका—

सुमेरचन्द प्रेसीडेंट परिषद।

Copy of letter addressed to Sir Col. Kailash Narain Haksar, Kt, political member, Gwalior state, Gwalior, by B.Sumer Chand Jain, President All India Digamber Jain Parishad-

Your letter dated February 1936 addressed to Mr. Tansukh Rai Jain was placed before the Gworking committee of the All India Digamber Jain Parishad at its sitting of the 5th march 1936

The Committee appreciate the spirit in which you were pleased to listen to the case represented by M/s. Lal Chand and Tansukh Rai and the trouble you took in visiting in the deserated temple at Mahgaon A heart to hearttalk is always conducive to the better understanding of things and the Parishad therefore desired to wait on the president in deputation and respectfully put their grieveness before her. They feel that never before in any state a descration of Jain Temple over took place.

The mishandling of so auspicious an occasion as Madhav Jainti and the indiscreet beheaviour of the officials ending in the disappearance of the entire set of 27 images big and small and the burning of the sacred scripture would act

upon the sentiment of any community howsoever peace loving it might be. To add fuel to the fire accused and the offering of insult to ladies during the so called investigation. Nothing would therefore surprise any one if the drastic programme is being advocated and put forward by some of enthusiasts;

The concluding paragraph of your letter explaining the avenues of an honourable settlement is encouraging and I therefore would invite your attention to the advisability of taking such immediate steps as' would appease the common mind and create an atmosphere for cool deliveration.

I beg leave therefore to propose that the State may be pleased:-

(a) To withdraw all pending cases against the Jains in connection with the so-called theft of the images

(b) That the local officials who offered insults to the ladies during the investigation be suitably dealt with.

(c) That the officials who are supposed to have some concern with the unfortunate incident e. g the then Niab Tehsildar, the Sub-Inspector of Police the Vaidya and the school Teacher be posted for the present the further proceedings, or chance to stimulate or provoke them.

(d) That an independant enquiry be held to look into the conduct of those who are at the bottom of this unfortunate incident, and those found guilty be suitably dealt with

(e) That a communique be issued in the name of the State deploring the unfortunate incident, announcing that the recovered images be installed with due ceremonies and convincing the Jains in general and those of Mahgaon in particular of the unhampered use of their Dharam Avatans (Biman and the like) and that none has a right to demand them.

(f) That the recovered images be forthwith installed in the Temple after pratishtha and that the State be pleased to make a special grant for the purpose as a token of sympathy and regards.

In the end I would suggest that for a further elucidation you may be pleased to discuss the situation with some of our representatives that may go down to Gwalior on the 15th March or some such other date and time as is most convenient to you.

I have the honour to be.
Sir,
Your most obedient servant
Sd. Sumer Chand
President.

इस पत्रका कोई उत्तर पोलिटिकल मेम्बर साहब ने सभापति महोदय को नहीं दिया। श्री तनसुखराय जी सहमन्त्री ने उनको याददहानी कराई और २७ मार्चको कर्नल सर पं० कैलाश नरायन जी हक्सर साहब, पोलिटिकल मेम्बर ग्वालियर स्टेट से देहली में बा० सुमेरचन्द्रजी सभापति, श्री० लालचन्द जी व श्री० तनसुखराय जी ने मुलाकात की। इस मुलाकात में इस बात पर काफी जोर दिया गया कि मिट्ठीलाल आदि जो तीन जैन गिरफ्तार हैं उन्हें तुरन्त छोड़ दिया जाये।

मौके पर तहकीकात करने के लिये सभापति परिषद ने मुझको व बा० तनसुखराय जी सहमन्त्री परिषद् को ग्वालियर महगांव आदि स्थानों में जाने के लिये आदेश किया। इसलिये बा० तनसुखराय जी और मैं पहली अप्रैलको ग्वालियर पहुंचे, वहांके प्रमुख व्यक्तियों से मिले: महगांव के मन्दिर का निरीक्षण किया तथा बहुतसे बयानात कलम बन्द किये। महगांव भिण्ड व ग्वालियर आदि स्थानों में इस काण्ड पर विशेषकर इस बात पर कि ३ निर्दोष जैनियों को गिरफ्तार कर लिया है बहुत असंतोष है

महगांव के मुकामी अफसरान जिनको कि जैन समाज इस काण्ड का उत्तरदायी समझता है। अभी तक महगांव तथा उसके आसपास हैं। पं० सिद्ध-नाथ सब इन्सपेक्टर जिनका कि सबसे बड़ा हाथ इस काण्ड में बतलाया जाता है भिण्डमें तबादला करके असिस्टेन्ट प्रासीक्यूटर नियत कर दिये गये हैं और यह मालूम हुआ है कि मुकद्दमे की सुनाई बहुत जल्दी भिण्ड में हो होने वाली है। इस तबादले से पं० सिद्धनाथकी हैसियत और भी बढ़ गई और उन का असर भिण्ड जिले के समस्त सब इन्सपेक्टरों पर होगया। दूसरे पं० त्रिभुवनाथ चतुर्वेदी नायब तहसीलदार महगांव जिनका कि हाथ इस काण्डमें कहा जाता है, उन को तबदील करके महगांवसे मिले हुये लाहट परगने में भेज दिया गया है जहां रहते हुये महगांवके मामलातमें वे पूरी दिलचस्पी लेते हैं। तीसरे पं० रामनाथ शर्मा अध्यापक महगांव स्कूल जिनका कि इस काण्डमें काफी हाथ बताया जाता है अभी तक वहीं पर हैं। ऐसी दशा में जब तक कि ये अफसरान इन जगहों पर मौजूद हैं, यह आशा नहीं की जा सकती कि वहां आज़ादी के साथ मुक़-द्दमात की तहकीकात व पैरवी की जा सकेगी।

न्यायके नाम पर ग्वालियर दरबारसे, जो अब तक न्यायके लिये प्रसिद्ध रहा है और जिसपर कोला-रस आदि मामलातको ध्यानमें रखते हुये जैन समाज का अब तक विश्वास है, अपील की जाती है कि उन अफसरों को जिनका हाथ इस काण्डमें बताया जाता है तबादला करके दूरके स्थानों में भेज दिया जावे क्योंकि ऐसा किये बिना आज़ादी के साथ तहकीकात न हो सकेगी और न मुकद्दमात की पैरवी ही की जा सकेगी।

कार्यकारिणी समिति ने जैन समाज की प्रतिष्ठा व हित को दृष्टि में रखते हुये यह निश्चय किया है कि महगांव काण्ड के सम्बन्ध में जो तीन जैन मिट्ठालाल बिहारीलाल व जगराय गिरफ्तार किये हैं और जिन पर मुक़द्दमात चलने वाले हैं और जिनको जैन समाज निर्दोष समझती है उन के मुकद्दमात की पैरवी की जावे और पैरवी का कार्य चौ० बसन्तलाल जी इटावे के सुपुर्द किया जावे।

इस सम्बन्ध में बा० दिलीपसिंह जी जैन M. A LL. B. वकील रोहतक २ मई को सुबह ग्वालियर पहुँचे और वहाँ मुकद्दमे के हालात मालूम कर के महगाँव गये और वहाँ के मुखिया भाइयों को लेकर भिण्ड आये जहाँ मुकद्दमे की सुनाई जल्द होने वाली है, भिण्ड के वकीलों से मिले। उसके पश्चात इटावा आये. चौ० बमन्नलाल आदि से परामर्श किया। अभी तक यह मालूम हुआ है कि १५ मई १६३६ से भिण्ड में मुकद्दमे की सुनाई शुरू हो जायगी।

इन मुकद्दमात की पैरवी में कम से कम २ हजार रुपये खर्च होंगे। जैन समाज से अपील की जाती है कि निर्दोष जैनियों के रक्षार्थ व जैन समाज की प्रतिष्ठा के लिये दिल खोल कर सहायता करें और सहायता का रुपया मेरे पास अथवा श्री० तनसुखराय जी मंत्री परिषद, लक्ष्मी इन्श्योरेंस देहली के पास भेज दें।

विनीत—

रतनलाल महामंत्री,

अ० भा० दि० जैन परिषद।

अभागा एबीसीनिया

(ले० अजितकुमार जैन शास्त्री)

इस समय संसार देशों में तीन प्रकार के मनुष्य है गोरे काले और पीले (या सफेद) भारतीय, अफगानिस्तान, ईरान, मिश्र तथा अफ्रिका के हबशी आदि मनुष्य काले रंग के माने जाते है। चीन, जापान पीले रंग के अंतगत हैं शेष सभी यूरोप, अमेरिका. आस्ट्रेलिया निवासी गोरे कहे जाते हैं। आज कल ईसाई धर्म और गोरी जातिका बोलबाला है। गोरे लोग अन्य किसी रंग के लोगों को अपनी बराबरी का अथवा उन्नत नहीं देखना चाहते। इसी कारण जापान का अभ्युदय भी गोरे लोगों को सह्य नहीं।

इसी ईर्ष्या का शिकार बेचारा एबीसीनिया हो गया। एबीसीनिया अफ्रिका में एक हबसी देश है। इस देश की अनेक छोटी मोटी रियासतों का शासक सम्राट शासनकर्ता था। एबीसीनिया में तीस वर्ष की आयु से पहले यदि किसी मनुष्य के सन्तान होती है तो उसे घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। यही कारण है इस देश में बहुत बलवान और वीर होते हैं

इटली का निरंकुश शासक मुसोलिनी गत १८ वर्षों से अपने देश का बल बढ़ा रहा था अपना साम्राज्य स्थापित करने की उसी की लालसा थी। तदनुसार उसने आजसे प्रायः ८ मास पहले निरपराध एबीसीनिया पर आक्रमण कर दिया। समस्या पर विचार किया जाय तो प्रतीत होता है कि आधुनिक वैज्ञानिक अस्त्र शस्त्र, हवाईजहाज. जल जहाज. टैंक, मशीनगन, गैस आदि सामान न होने से आजकल के

कायरता एवं अनीति पूर्ण युद्ध का सामना करने की शक्ति न होना ही एबीसीनिया का अपराध था।

एबीसीनिया की सेना इटली के मुकाबले बहुत वीरता के साथ लड़ी किन्तु हवाई जहाजों से गिरने वाले बमों ने तथा विषैली गैस ने एबीसीनिया के वीर सैनिकों की एक न चलने दी। शारीरिक बल इस युद्ध में सफल न हुआ यदि इटालियन सेना नीति पूर्वक एबीसीनिया के साथ लड़ती तो एबीसी-निया उसे अपने देश में एक पैर भी न रखने देता। इटली की सेना को इटली के हवाई जहाजों ने जिताया। यहाँ तक कि रेगिस्तान पार करते समय इटली के सैनिकों को पानी तथा खाद्य सामग्री, हथियार आदि भी हवाई जहाज पहुंचाते थे। एबीसीनियन सैनिक जब इटली की सेना पर आक्रमण करते थे तो ऊपर से इटली के हवाई जहाज उन पर बम वर्षा कर हटा देते थे। यदि एबीसीनिया के पास हवाई जहाज होते तो इटली बहुत बुरी तरह हारता।

इधर राष्ट्रसंघ इटली की निन्दा तो करता रहा किन्तु उसने इटली के विरुद्ध कोई कड़ी कार्यवाही नहीं की। एबीसीनियाका सम्राट, सम्राज्ञी और उस की लड़की राष्ट्रसंघके सामने न्यायोचित कार्यवाही करने के लिये बार२ प्रार्थना करते रहे, किन्तु किसी ने कुछ न सुना।

इस ढाल-ढालमें एक तो यह कारण था कि प्रत्येक देश युद्धकी भयंकरता और हानिको अच्छी तरह समझता है। इटलीके विरुद्ध पैर उठाकर उस बलवान देशसे कोई युद्ध खरीदने को तयार न था। दूसरे प्रत्येक राष्ट्र अपने मतलबको देखता है, एबी-सीनियाकी सहायता करके इटली को शत्रु बनाने में किसीको कोई निजी लाभ प्रतीत नहीं हुआ। तीसरा मुख्य कारण एबीसीनिया की सहायता न करनेका यह भी हुआ कि वह निर्बल था। सब कोई बलवान की सहायता करता है।

एबीसीनियाके कुछ फौजी अफसरों और सरदारों ने लोभवश अपने देशके साथ नमकहरामी की। इटली की विजयका यह भी एक कारण हुआ। अस्तु

इटली इस युद्धके लिये ५० हजार पौण्ड प्रतिदिन खर्च करता रहा। अब इटली एक बड़े विस्तृत देशका शासक बन बैठा है और मुसोलिनी अब बड़े गर्व के साथ कहता है कि एबीसिनीया में इटलीका एक छत्र शासन होगा। इसके विरुद्ध यदि किसी ने कुछ किया तो इटली उसके साथ लड़ने को सदा तयार है।

एबीसीनिया का सम्राट अब भागकर दूसरे देशों में जा पहुंचा है। अपना खोया हुआ राज्य पुनः प्राप्त करने के लिये वह अब भी राष्ट्रसंघसे प्रार्थना कर रहा है।

सम्राटने जिस समय अपनी राजधानी आदिस अबाबा को छोड़ा और अपने राज महल के फाटक को खोलकर लोगोंको कह दिया कि जिसकी जो इच्छा हो महलमें से वही वस्तु उठाकर लेजा सकता है। उस समय फौजी सिपाहियों ने समस्त नगर में लूट मार मचा दी। अनेक देशोंके राजदूत इस लूट-मारके घेरे में आगये, उनको क्षति भी उठानी पड़ी। किन्तु अंग्रेजी राजदूत के पास सिक्ख सेना की एक टुकड़ी थी। सिक्खोंने वीरतापूर्ण मुकाबलेसे बलवाइयों को अपने पास न फटकने दिया। इसी कारण ब्रिटिश राजदूत गृहमें शरण लेने वाले ३-४हजार मनुष्यों को

अम्बाला पधारिये—

ता० २५ मई को पवित्र पर्व श्री श्रुतपञ्चमी के दिन अम्बाला छावनीमें भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थ संघके आधीन एक उपदेशक विद्यालय की स्थापना होगी । इसके उपलक्ष्य में संघकी कार्यकारिणी ने ता० २३-२४ २५ मई को विद्यालयका उद्घाटन करने का निर्णय किया है । इसमें सम्मिलित होने के लिये भारतवर्षके प्राय सभी प्रसिद्ध २ विद्वानों को निमंत्रण दिया है । तथा आशा है कि इस समय अम्बाले में जैन विद्वानोंका एक उल्लेखनीय समारोह होगा

इसके लिये संघके कार्यालय के सामने ही ला० शिब्बामल जी जैन रईस के अहाते में एक विशाल पण्डाल बनानेका कार्य चालू होगया है । आशा है यह ता० २२ तक तय्यार होजायगा । इसमें जैना-जैन जनता तथा बाहर से आये हुये सज्जनों को बैठनेका यथेष्ट स्थान रहेगा, इसके चारों तरफ अनेक प्रकारके मोटोज़ लगे रहेंगे जिनसे उपस्थित जनता भिन्न २ जैन सिद्धान्तोंको ज्ञान सकेगी ।

उत्सव की कार्यवाही ता० २३ को रात्रि के ७॥ बजे से होगी । सर्व प्रथम प्रसिद्ध २ गायनाचार्यों के मधुर भजन होंगे । इसके बाद विद्वानों के भाषण तथा मैजिक लेन्टर्न द्वारा अनेक जैन स्थानों तथा जैन इतिहासके सम्बन्धमें संसारके प्रसिद्ध२ विद्वानों के अभिमत दिखाये जांयगे ।

ता० २४ को प्रातःकाल उद्घाटन कर्ता महानुभाव को अम्बाले छावनीके स्टेशन से बेण्ड बाजोंके साथ संघके कार्यालय तक जुलूस की शकलमें लाया जायगा । इसके बाद दुपहरको तत्वचर्चा तथा रात्रिको व्याख्यान सभा होगी । ता० २५ को प्रातः काल ६॥ बजेसे विद्यालयोद्घाटन तथा झण्डाभिवन्दन होंगे ।

बाहरसे आने वाले बन्धुओं के ठहरने आदिका समुचित प्रबन्ध किया गया है । आशा है हमारे धर्म प्रेमी सज्जन इस सम्मेलनमें सम्मिलित होकर धर्म लाभके साथ ही साथ उत्सवकी शोभा बढ़ायेंगे ।

इसी समय ता० २२-२३ मई को संघकी कार्यकारिणी की बैठक होगी । इसमें निम्नलिखित बातों पर विचार किया जायगा—

१- संघका भावी कार्य-क्रम ।

२- उपदेशक विद्यालय सम्बन्धी आवश्यक बातें

(पिछले पृष्ठ का शेष)

कोई हानि नहीं हुई । इसी लूट मार, अग्निकांड आदि के समय दो पत्रकारों के विवाह हुए ।

एबीसीनिया के विषय में निम्न लिखित पंजाबी वाक्य सर्वथा ठीक फबते हैं ।

दुनियां मनदी ज़र ज़ोरां नूं
लख लानत है कम ज़ोरां नूं

अर्थात्—संसार बलवान को कुछ मानता है निर्बलों को लाखों लानतें मिला करती हैं ।

३- नियमावली में आवश्यक संशोधन।

४- आगामी बजट।

५- अन्य आवश्यक कार्य।

इसकी सूचना कार्यकारिणी के सदस्यों कोदी जा चुकी है। आशा है, सदस्यगण भी यथासमय अम्बाला पहुँचने की कृपा करेंगे। कार्यकारिणी की बैठक दुपहर को २ बजेसे संघके ही कार्यालय में होगी।

निवेदक—
राजेन्द्रकुमार जैन, महामन्त्री,
भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला छावनी।

गुप्त घोषणा

कार्यालय सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा
देहली।

सेवामें —

श्री मन्त्री जी आर्यसमाज ... ... नमस्ते।

सर्व आर्य समाजों के मन्त्री महाशयों को सूचित किया जाता है कि समाचार पत्रों से विदित हुआ है कि स्वामी कर्मानन्द ने आर्यसमाज का परित्याग करके जैनमत को ग्रहण कर लिया है। इसमें उनका कोई व्यक्तिगत स्वार्थ प्रतीत होता है। संभव है कि जैनियों की ओर से वह कभी आर्यसमाजके पण्डितों को शास्त्रार्थके लिये आह्वान करें। अतः यह आवश्यक है कि कर्मानन्दकी यथासंभव उपेक्षा कीजाय। उपेक्षा द्वारा जहां जैनियोंका उत्साह भंग होजायगा। वहां कर्मानन्दकी नैतिक मृत्यु भी होजायगी। आशा है आप इस निवेदन पर यथोचित ध्यान देंगे। —मन्त्री

[सम्पादकीय— श्रीमान स्वामी कर्मानन्द जी के जैनधर्म स्वीकार कर लेने पर आर्यसमाज में बहुत हलचल मची थी। क्योंकि स्वामी जी गत २५ वर्षों से आर्यसमाज की भारी सेवा करते रहे थे। आर्य-समाज के आदर्श, गणनीय प्रचारक थे। उस हलचल को शांत करने के लिये सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने जो गुप्त पत्र समस्त आर्यसमाजों के पास भेजा था। उसीकी नकल ऊपर प्रकाशित की गई है।]

क्या चूहों का मारना हिंसा नहीं है

सत्य संदेश के गत ६ /० वे अंक में "क्या चूहों का नाश करना हिंसा है" शीर्षक एक छोटा सा लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें अहमदाबाद म्युनिसिपालिटी की ओर से चूहों के मारने न मारनेके विषय में वहां की किसी मीटिंग में चर्चा की गई थी यद्यपि लेखक ने इसी विषय पर अपनी कोई जनताभय से स्पष्ट सम्मति नहीं दी है किन्तु लेखका शीर्षक एवं विषय को इस ढंग से रक्खा गया है कि जिस से यह प्रगट होता है कि सत्य समाज का सत्य संदेश "चूहों के मारने को हिंसा नहीं समझता क्यों कि चूहे प्लेग के कीटाणु फैलाते हैं।" चूहे न मारने के लिये उक्त मीटिंग में जो युक्तियां दी गई होंगी उन का इस लेख में रंचमात्र भी उल्लेख नहीं है।

सत्य संदेश अहिंसा और सत्य का बड़ा भारी ढिंढोरा पीटता है तदनुसार उसके अहिंसा धर्म का आदर्श भी इतना ऊंचा है कि जो जीव मनुष्य जाति के लिये भयावह या खतरनाक हों उन को मार डालने में अहिंसा धर्म का कुछ बिगाड नहीं होता।

चूहे के रक्त से प्लेग के कीटाणु पलते हैं जिन से कि प्लेग फैलती है यह सत्य है अतः चूहों का न

रहना इस बीमारी से बचने का उपाय है यह बात सत्य है किन्तु यह बात भी तो असत्य नहीं कि जीवित चूहों को उबलते हुए पानी में डुबाकर मार देना निर्दयता एवं निन्द्य हिंसा है। चूहों को घरों से निकालने का कोई अन्य अच्छा उपाय खोजना चाहिये न कि इस निर्दय हत्या का समर्थन करना चाहिये। सत्य समाज के संस्थापक पं० दरबारी लाल जी बतलावें कि उन की अहिंसा का सचमुच यह आदेश है ?

इस ढंग से एक चूहे ही क्या मक्खी बर्र मच्छर सर्प, बिच्छू, कुत्ते, बिल्ली कबूतर आदि अनेक जीव ऐसे हैं जो कि अनेक प्रकार के रोग फैलाने में निमित्त कारण होते हैं अथवा मनुष्य जीवन के लिये दुखकर या खतरनाक हैं फिर उन सभी जीवों को मार देने में अहिंसाभाव न बिगड़नेका युक्तिपूर्वक समर्थन करना चाहिये। क्या कमाल है! आशा है पं० दरबारी लाल जी अपनी अहिंसा को और अधिक स्पष्ट रूप से समझावेंगे। —राजेन्द्रकुमार जैन

जैन सत्यप्रकाशके आक्षेप

जैन सत्य प्रकाश नामक श्वे० पत्र में "दिगम्बर शास्त्र कैसे बने" शीर्षक लेखमाला निकल रही है जिस के लेखक श्री दर्शनविजय जी हैं। इस लेखमाला का उत्तर देते हुए मैं ने मुनि जी से पूछा था कि "जिस प्रकार दिगम्बरीय ग्रन्थों पर समालोचना लिख रहे हैं क्या उसी प्रकार सत्य निर्णय की दृष्टि से अपने श्वेताम्बरीय ग्रन्थों पर भी जिनको कि मैं आप के समक्ष रक्खू यथार्थ समालोचना करने को तयार हैं? इस के साथ ही मैं ने उन से कल्पसूत्र के रचयिता का नाम भी पूछा था कि कल्पसूत्र के ऊपर मुद्रित नाम के अनुसार कल्पसूत्र के रचयिता श्रुत केवली श्री भद्रबाहु है अथवा अन्य कोई विद्वान हैं? विद्वान लेखकने अभी उन दोनों बातों का कुछ उत्तर नहीं दिया है आशा है जैन सत्य प्रकाश के ११ वें अंक में इन दोनों प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर आ जावेगा।

प्रकाश के प्रस्तुत १० वें अंक में मुनि दर्शनविजय जी ने इस लेखमाला में केवल 'षट्खंडआगम' नामक ग्रंथ रचना का आंशिक विवरण दिया है जिस में उन्हों ने कोई ऐसी आपत्ति जनक बात नहीं लिखी जिस का उत्तर देना आवश्यक हो।

श्रुत पंचमी का दिन आप ने भाद्र पद शुक्ला पंचमी लिखा है सो गलत है श्रुतपंचमी का दिन ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी है इसी दिन षट्खंड आगम की रचना समाप्त हुई थी।

विबुध श्रीधर कृत श्रुतावतार में भी लिखा है।

"षडङ्गरचनां कृत्वा शास्त्रेषु लिखाप्य लेखकान् सन्तोष्य प्रचुरदानेन ज्येष्ठस्य शुक्लपञ्चम्यां तानि शास्त्राणि संघसहितानि नरवाहनः पूजयिष्यति।

इसी प्रकार अन्य ग्रन्थों में भी ज्येष्ठ सुदी पंचमी को श्रुत पंचमी का दिवस बतलाया है। एवं परम्परा के अनुसार भी श्रुत पंचमी ज्येष्ठ सुदी पंचमी के दिन मनाई जाती है। अतः मुनि जी को अपनी यह मोटी भूल सुधार लेना चाहिये। —वीरेन्द्र

जैन सत्य प्रकाश के तंत्री जी

जैन सत्य प्रकाश नामक श्वे० पत्र के आक्षेपों का उत्तर देते हुए मैं ने उस पत्र के संपादक जी से भी सागरानंद जी सूरि का परिचय पूछा था मेरे निवेदन पर प्रकाश के १० वें अंक में संपादक जी (तंत्री) ने सागरानंद जी सूरि का परिचय देते हुए मेरे लिये ७ बात लिखी हैं उन में से जिन बातों पर मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं है उन बातों को छोड कर शेष बातोंपर पाठक महानुभावों तथा तंत्री जी का ध्यान आकर्षित करता हूँ।

१—दिगम्बरोंकी उत्पत्ति शीर्षक लेखमाला के लेखक वे ही सागरानंद जी सूरि हैं जिन्हों ने अक्षय तृतीया के दिन श्री ऋषभदेव धुलेव (केशरियानाथ) मन्दिर में ५ दिगम्बर भाइयों की हत्या हो जाने पर भी पंचमी के दिन ध्वजादंड चढ़ाने की क्रिया कराई जो ध्वजादंड पीछे राज्य ने उतरवा डाला। इस परिचय प्राप्त करने में मेरा कोई अन्य अभिप्राय नहीं था प्रकरणावश परिचय के लिये पूछा था। उस समय ध्वजादंड का क्रिया उचित थी या अनुचित? इस प्रश्न का उत्तर प्रत्येक सहृदय व्यक्ति दे सकता है इस बात की समालोचना करना यहां प्रकरण विरुद्ध जान कर नहीं करते।

आप ने जो श्री ऋषभदेव धुलेव (केशरियानाथ) मन्दिर को श्वेताम्बरीय लिखा है सो या तो आप जान बूझकर गलत लिख रहे हैं अथवा उस मन्दिर के निर्माण विषय में आप को ऐतिहासिक परिचय नहीं है। परिचय के लिये आप को निम्न लिखित बातों पर ध्यान देना चाहिये।

१- भगवान ऋषभदेव की मूलनायक प्रतिमा (केशरियानाथ) नग्न दिगम्बर है उस पर पैरों नीचे श्वेताम्बर पद्धति अनुसार कपड़े का चिन्ह नहीं है तथा पैरों के नीचे दिगम्बर मतानुसार १६ स्वप्न बनेहुए हैं

२- मूल मंडप, खेलामंडल, नवचौकी, लघुप्रासाद (बावन जिनालय) कोट ये पांच स्थान केशरियानाथ मन्दिर में मुख्य हैं या यों कहिये कि इन पांच इमारतों का समुदाय ही केशरियानाथ मन्दिर है। ये पांचों भाग दिगम्बरीय भट्टारकों के शिष्य दिगम्बरीय सेठों ने भिन्न २ समय अपने द्रव्य से बनवाये थे जिन के शिलालेख यथा स्थान लगे हुए हैं उनकी नकल जैन-दर्शन के द्वितीय वर्ष के कुछ अंकों में प्रकाशित हो चुकी है।

३- दिगम्बरीय भट्टारकों की गद्दी मन्दिर जी में प्रायः सौ वर्ष पहले तक बराबर रही आई।

४- कोटका सिंहद्वार जिस के उपर नक्कारखाना बना है वह भी दिगम्बरीय धनिक ने बनवाया है इस का स्पष्ट प्रमाण यह है कि नक्कारखाने ऊपरले तथा नीचे खम्भों पर नग्न खडगासन मूर्तियां उकेरी हुई है।

५- मूलमंडप के सामने जो हाथी बना हुआ है उसपर प्राचीन लेख दिगम्बरीय है।

इत्यादिक गणनीय प्रमाणों से उक्त मन्दिर दिगम्बरीय सिद्ध होता है।

हत्याकांड के समय श्वेताम्बरीय भाई समस्त दिगम्बरीय प्रतिमाओं पर मुकुट कुंडल पहना कर उन्हें श्वेताम्बरी बना रहे थे जिस को कि नम्रता पूर्वक रोक देने की प्रार्थना की गई जिस पर श्वेताम्बरी

समालोचना

चारुदत्त चरित्र— ले०- पं० परमेष्ठीदास जी प्रकाशक- मूलचन्द किशनदास कापड़िया सूरत।

श्रेष्ठी चारुदत्त की जीवन कथा जितनी शिक्षाप्रद है उतनी ही मनोरम भी है। इसीसे हिन्दू समाज के भी कई ख्यातनामा कवियों ने उसके चित्रणमें अपनी लेखनी का उपयोग किया है। शूद्रक कविका मृच्छकटिक' नाटक तो संस्कृत साहित्य में अपना अनुपम स्थान रखता है। जैन साहित्य में भी हरिवंशपुराण और आराधना कथा कोषमें चारुदत्त चरित्र नामसे एक स्वतंत्र पुस्तिका भी है। उसके रचयिता कोई सोमकीर्ति देव नामके विद्वान हैं। उसके आधार पर कवि भारामल्ल सिंघई ने चौपाई दोहे में चारुदत्त चरित्रकी रचना की थी, उसीके आधार पर प्रस्तुत चरित्र रचा गया है।

चारुदत्त की जीवन कथा के चित्रण में कुछ ग्रन्थों में अन्तर भी पड़ गया है। लेखक ने फुटनोटों में इस अन्तरका उल्लेख करके इस पुस्तक की उपयोगिताको और भी बढ़ा दिया है।

विदेश से लौटते हुये समुद्र में चारुदत्त के जहाज का टूटना, चारुदत्तका विद्याधरों में पहुंचना, वहांसे वीणावादन में प्रवीण गन्धर्वसेना नामकी विद्याधर कन्याको साथ लाना, अपने नगरमें आकर गन्धर्वसेना का स्वयम्बर रचना, ये घटनाएं जीवन्धरचरित के श्रीदत्त सेठकी जीवन कथा का स्मरण कराती है।

पं० परमेष्ठी दासजी ने चारुदत्तका सर्वार्थसिद्धि नामक अनुत्तरमें जन्म होना बतलाया है और वहांका वर्णन करते हुए लिखा है— "चारुदत्त का जीव आज भी सर्वार्थसिद्धिमें सुखके साथ रहता है, अनेक प्रकारके उत्तमोत्तम भोगोंको भोगता है। सुमेरु और कैलाश पर्वत आदि स्थानों के जिन मन्दिरों की यात्रा करता है। विदेह क्षेत्रमें साक्षात तीर्थंकर केवली भगवान की स्तुति पूजा करता है और उनका सुख देने वाला पवित्र उपदेश सुनाता है।"

अहमिन्द्र देव अपने विमान से बाहर नहीं जाते, ऐसा शास्त्रों में वर्णित है। तब सर्वार्थसिद्धिके देव का बाहर जाना कभी भी संभव नहीं हो सकता। इस वर्णन के नीचे आराधना कथा कोश के वे श्लोक दिये गये हैं जिनका अर्थ उपर्युक्त है। सर्वार्थसिद्धि गमन' नामके अध्याय में ऊपर भी कथाकोश का एक श्लोक दिया गया है, उसमें सर्वार्थसिद्धिगमन का कहीं भी उल्लेख नहीं है, किन्तु स्वर्गलोक में महर्द्धिक देव होनेका उल्लेख है। पंडित जी से यह गल्ती कैसे होगई, इसका हमें कुछ अचरज है। आशा है, दूसरे संस्करण में इस गल्तीको सुधार दिया जावे।

महिलादर्शके उपहार में दत्त इस पुस्तक का दाम चौदह आने कुछ अधिक जान पड़ता है। कथा प्रेमियों को अवश्य पढ़ना चाहिये।

—कैलाशचन्द्र जैन, शास्त्री।

द्रव्य संग्रह- मूल द्रव्य संग्रहकी श्री पं० भुवनेन्द्र जी ने संस्कृत छाया, अन्वय सहित नई संक्षिप्त शब्दार्थ रूप भाषा टीका की है जो कि "जिनवाणी प्रचारक कार्यालय १६१।१ हरीसन रोड कलकत्ता" से प्रकाशित

की है मुख पृष्ठ पर कुछ द्रव्यों के दृष्टान्त रूप चित्र हैं। पुस्तक को उपयोगी बनाने के लिये इन्डैक्स के ढंग पर कठिन शब्दार्थ, अर्थ संग्रह, भेद संग्रह आदि अंत में दिये हैं जो कि पढ़ने वाले के लिये बहुत उपयोगी हैं। उपयोग, जीवसमास, द्रव्य, आस्रव, संवर के भेद उपभेद सरलता से समझने के लिये ५ चार्ट भी दिये हैं। इस तरह द्रव्य संग्रह का यह संस्करण नवीन ढंग से उपयोगी एवं अनूठा प्रकाशित हुआ है प्रारंभ में ग्रन्थ कर्ता का बहुत संक्षिप्त परिचय है। छपाई कागज सामान्यरूप से अच्छे हैं। मूल्य जिल्द सहित पांच आने हैं। प्रत्येक गाथा के साथ कुछ विशेष अर्थ रखने की आवश्यकता थी यह त्रुटि दूसरे संस्करण में निकल जानी चाहिये।

अनंतमती यह पुस्तक भी उक्त कार्यालय से कवितामय प्रकाशित हुई है। पहले और चतुर्थ पृष्ठपर सुन्दर चित्र है। चौथे पृष्ठ का चित्र मुनिध्यानकी सरलता का अच्छा परिचायक है। कविता श्रीमान प० गुणभद्र जी ने की है सरल है पुस्तक में अनंतमती का जीवन चरित है। मूल्य दो आने है।

—•—

(३० वें पृष्ठ का शेष)

अधिकारियोंने फौजी सिपाहियों को दिगम्बरियों पर प्रहार करने का हुकम दे दिया जिस से पवित्र मंदिर जी में निर्दय मारके कारण सैंकड़ों मनुष्य घायल हुए एक ब्राह्मण स्त्री भी घायल हुई और पांच दिगम्बरीय युवक मर गये। इस कांड का अपराध आप मार खाने वाले दिगम्बरीय भाइयों पर लगाते हैं मारने का हुकम देने वाले श्वेताम्बरी अफसरों पर नहीं। यह आप की न्यायप्रियता और सहृदयता है।

२—ग्रन्थ लेखक और ग्रन्थ रचयिता का एक ही अर्थ है। अतः 'आगम पुत्थे लिहिओ' का अर्थ 'वीर सं० ९८० में देवर्द्धिगणी जी ने आचारांग आदि आगम ग्रन्थ पुस्तकरूप लिखे' ही है। नकल करने रूप नहीं ०।

वीर सं० ९८० से पहले कोई भी उपलब्ध श्वेताम्बरीय आगम ग्रन्थ नहीं है। अतः सिद्ध है कि ग्रंथ रचना पहले दिगम्बर सम्प्रदाय में हुई थी।

इस बात को मैं 'दिगम्बर शास्त्र कैसे बने' शीर्षक लेखमाला के उत्तर में स्पष्ट बतलाऊंगा।

—चन्द्रकुमार

जिस समय चन्द्रामृत की ऐसी प्रशंसा की जाती है तो सुनने और पढ़ने वाले आश्चर्य करने लगते हैं, बहुत से लोग असम्भव समझते हैं और कोई २ इसको झूंठ बता कर विज्ञापनों को देखते भी नहीं हैं। परन्तु इस भांति एक पक्ष में फैसला करना बुद्धिमानों का काम नहीं है। 'चन्द्रामृत' योगवाही है। यह बहुत ही गुणकारी औषधियों का सम्मेलन है। यह असम्भव बात नहीं है, संसार में सब कुछ है। आप हमारे इस लेख को उस समय ठीक समझेंगे जब कि एक बार स्वयं परीक्षा करेंगे। जिस किसी ने भी इसको एक बार मंगाकर लिया है, वह आयु पर्यन्त इसको सदैव पास रखता है।

हम यह नहीं कहते कि चन्द्रामृत कोई स्वर्गीय अथवा कोई जादू है और न यह कहते हैं कि कोई आबू या हिमालय की जड़ी बूटी है, अथवा महात्मा की प्रसादी है। चन्द्रामृत केवल उन्हीं औषधियों का सम्मेलन है जो देशी, परदेशी वैद्यकशास्त्र सम्मत हैं। उन सम्पूर्ण रोगों में जिनका हम आगे वर्णन करेंगे और साधारण रूप से घरों में बूढ़ों, बच्चों, जवान, स्त्री पुरुषों के होते रहते हैं, उन सब का पूरा इलाज है।

चन्द्रामृत से अजीर्ण दूर होता है।

जरा कमजोरी हुई कि लोग ताकत की दवा लेने को दौड़ते हैं परन्तु यह ख्याल नहीं करते कि मैं कितना भोजन करता हूँ, बिना भोजन पचे क्या कभी ताकत आ सकती है। ऐसी दशा में लोग अपने रुपयों को बर्बाद करते हैं और बिना कारण ताकत की दवा को बदनाम करते हैं। क्या अनाज घी शक्कर दूध ताकत की दवाओं से कम हैं? इस कारण प्रथम भोजन को भली-भांति पचाने का उपाय सोचो, फिर ताकत अपने आप आजायगी। पाचन शक्ति बढ़ाने और अजीर्ण नाश करने का सच्चा उपाय केवल चन्द्रामृत है।

चन्द्रामृत से दस्त कै बन्द होती है।

अतीसार (दस्त) आमातीसार (आमदस्त) रक्तातीसार (खून दस्त) संग्रहणी पेट में दर्द होना, खट्टी डकार, जी मिचलाना, अति प्यास, पेटका फूलना, पेट दर्द, खाना खाते ही दस्त कै का होना, मेदे का भारी रहना इन सब रोगों में चन्द्रामृत जादू सा काम करता है। यात्रा में जहां खानपानादि की सुव्यवस्था नहीं रहती, अधिक परिश्रम, ठण्डा जल से स्नान आदि कारणों से उपर्युक्त रोग होना बहुत सम्भव है। ऐसी दशा में चन्द्रामृत जान बचाने वाली दवा है।

चन्द्रामृत से खांसी, स्वांस मिट जाती है।

खाँसी, स्वांस (दमा) क्षयरोग, छाती में दर्द, कलेजा में पीड़ा इत्यादि रोगों पर चन्द्रामृत बहुत जल्द फायदा करता है। [रोग का घर खांसी] यह कहावत याद रक्खो। खांसी होते ही चन्द्रामृत खाना चाहिये। खांसी तो एक दो दिन में दूर हो जाती है। दमा व क्षय के लिये महीने भर "चन्द्रामृत" सेवन करना चाहिये।

चन्द्रामृत से शिरदर्द जुकाम दूर हो जाता है।

कैसा ही शिरदर्द क्यों न हो पांच मिनट में आराम? लगाते २ ही आराम?? इतनी जल्दी आराम और किसी चीज से नहीं हो सकता है जितना जल्द चन्द्रामृत से होता है, आधाशिर में दर्द होना बहुत

ही खराब है। प्रातःकाल से दर्द शुरू होता है और ज्यों २ सूर्य चढ़ता जाता है त्यों २ दर्द बढ़ता है दोपहर के बाद कुछ आराम होता है ऐसे दर्द से रोगी रो २ कर दिन काटते हैं। परन्तु चन्द्रामृत दो ही बूंद लगाने से आधा या पूरा चाहे जैसा शिर दर्द हो आराम होता है। जुकाम के लिये चन्द्रामृत बहुत अक्सीर दवा है।

चन्द्रामृत से आँख दर्द आराम होता है।

आंख की लाली, गरमी से पानी गिरना, चिपक आना, सूज जाना इत्यादि आंखों के दर्द पर चन्द्रामृत मानो जादूगर का छूमन्तर है, ५ मिनट में आंख की गर्मी पानी होकर निकल जाती है।

चन्द्रामृत से दांत व दाढ़ दर्द नष्ट होता है।

दांत में कीड़ा लगजाना, मसूड़ों का फूलना, दांत व डाढ़ में दर्द होना, दांत से खून व पीब का बहना, मुंह में बदबू का रहना, दांतों का हिलना या किसी प्रकार का दाँतरोग हो और दो चार घण्टे में आराम चाहिये तो आप चन्द्रामृत इस्तैमाल कीजिये जरूर फायदा होगा।

चन्द्रामृत से कर्ण रोग मिट जाता है।

कान से पीब बहना, कम सुनाई देना, घूं २ आवाज देना, बदबूआना, भीतर में दर्द होना इत्यादि सब प्रकार के रोगों पर चन्द्रामृत जादू का काम करता है।

चन्द्रामृत से दाद खाज खुजली नाश हो जाती है

दाद, खाज और खुजली की जगह पर चन्द्रामृत का स्पर्श होते ही आराम होने लगता है दो चार बार लगाने से बिलकुल ही आराम होजाता है।

चन्द्रामृत से हैजा नहीं होता है।

लोग समझते हैं कि हैजे की दवा सिर्फ अर्क कपूर है परन्तु हम दावे के साथ कहते हैं कि चन्द्रामृत से जैसा और जितना जल्द शर्तिया हैजा दूर हो सकता है वैसा अर्क कपूर से नहीं। चन्द्रामृत से हैजे में जो पेट में मरोड़ होता है वह इसके पेट में पहुँचते ही बन्द हो जाता है। प्यास का लगना, कै होना, जी मिचलाना आदि हैजे के विकार फौरन दूर होजाते हैं। हैजे के दिनों में चन्द्रामृत की एक शीशी अपने पास अवश्य रखना चाहिये।

चन्द्रामृत से प्लेग दूर हो जाता है।

प्लेग के दिनों में चन्द्रामृत सेवन करने से प्लेग होने का भय नहीं रहता है। प्लेग के बुखार की हालत में ५ बूंद चन्द्रामृत एक छटांक पानी में मिलाकर दिन में तीन बार पीना चाहिये और गिल्टी पर फुरहरी से चुपड़ देना चाहिये।

चन्द्रामृत से सूजन मिट जाती है।

घाव या चोट लगने से गिर जाने से या किसी विशेष कारण से शरीर के किसी भाग पर सूजन हो जाती है। सूजन पर दिन में दो तीन वक्त एक २ दो २ बूंद चन्द्रामृत मालिश करने से फौरन आराम हो जाता है।

चन्द्रामृत से वात रोग नष्ट हो जाता है।

अर्धाङ्गवायु, गठियाबात, पक्षाघात,(लकवा)हाथ पैरों की सिकुड़न, घुटनों में दर्द हाथ पैरों का अकड़ जाना, हड्डियों का दुखना, कमर का दर्द, पीठ का टांग का दर्द इत्यादि सब प्रकार के बात रोगों पर चन्द्रामृत महासमर्थ दवा है।

चन्द्रामृत से अशक्ति (कमजोरी) दूर होता है।

चाहे जैसा कमजोर शरीर हो चन्द्रामृत उसको मस्त बना देता है दुबला पतला अङ्ग को मोटा बलवान बना देता है। काम काज में सुस्ती, थकावट, आंखों की निस्तेजता चेहरे पर गमगीनी, गालों में गड्ढे आलस्य इत्यादि सब रोग चन्द्रामृत से दूर हो जाते हैं शरीर में रक्त और वीर्य की वृद्धि होकर अपूर्व ताकत प्राप्त होती है धातु का पतलापन, धातु विकार, स्वप्नदोष इत्यादि दूर होकर आदमी को पूरा मर्द होने का उपाय केवल चन्द्रामृत है।

चन्द्रामृत से नामर्दी का नाश होजाता है।

किसी कारण से उत्पन्न हुई नई या पुरानी नामर्दी दूर करने में चन्द्रामृत ने बड़ा भारी नाम पाया है सुस्ती शिथिलता, नसों की कमजोरी, पतलापन इत्यादि रोगों में सिर्फ मालिश करने से फायदा पहुंचता है।

चन्द्रामृत जहरी डङ्क के दुःखों से बचाता है।

बिच्छू, भिड़ मक्खी, मच्छर सर्प इत्यादि जहरीले डङ्क पर एक ही बूंद चन्द्रामृत मिनटों में आराम पहुंचाता है। दवा लगाने की देरी है लगाते ही आराम होजाता है। जहां दर्द होता हो उस पर एक बूंद चन्द्रामृत की डाल कर मालिश करना चाहिये।

चन्द्रामृत से प्लीहा मिट जाती है।

प्लीहा के रोग में खास कर चन्द्रामृत इस्तैमाल करना चाहिये जहां सब उपाय निष्फल हो गए हों, वहां इसी से आराम होगा, कम खर्च और पूरा आराम चाहिये तो मंगाइये।

चन्द्रामृत से अण्डवृद्धि दूर हो जाती है।

एक दो तीन बार लगाते ही फायदा होता है केवल ८ या १० दिन में पूरा आराम हो जाता है।

चन्द्रामृत से प्रदर रोग दूर हो जाता है।

स्त्रियों के श्वेत या रक्त प्रदर ठीक समय पर रजस्वला न होना, पेट में दर्द, पानी टपकना इत्यादि स्त्री रोगों पर चन्द्रामृत बड़ी फायदेमन्द दवा है।

चन्द्रामृत से सरदी भाग जाती है।

ठण्डी खुराक, ठण्डा जल, ठण्डी करने वाली चीजों का खाना पीना व वायु प्रकृति से किसी २ वक्त आदमी का बदन एक दम ठण्डा बरफ जैसा होजाता है अगर ऐसे समय में शरीर में जल्दी गर्मी नहीं लाई जाय तो थोड़ी देर में मृत्यु होना सम्भव है ऐसी दशा में चन्द्रामृत अक्सीर दवा है।

चन्द्रामृत से बवासीर नष्ट हो जाती है।

बवासीर की जड़ ही उड़ा देना चाहो तो चन्द्रामृत इस्तैमाल करना जरूरी है खूनी बवासीर का खून बहना भी पहले ही दिन आराम हो जाता है जलन भी एक दिन में रफा हो जाती है आठ दस दिन में बवासीर कमजोर हो जाती है किसी प्रकार का दर्द नहीं रहने पाता।

चन्द्रामृत से मुंह के छाले मिट जाते हैं।

बादी से गरमी से किसी वक्त मुंह में छाले पड़जाते हैं, जलन होती है कोई चीज खाई नहीं जाती बहुत दर्द होता है। ऐसे समय में चन्द्रामृत बहुत काम करता है।

चन्द्रामृत से प्रमेह (सुजाक) आराम होता है।

ठण्डा हो या गरम हो या नया हो पुराना हो एक सप्ताह के भीतर आराम करने के लिये चन्द्रामृत ताकत रखता है। जलन सूजन पीव बहना कपड़े पर धब्बा पड़ना पेशाब में कष्ट होना इत्यादि सर्व रोग दूर करता है।

चन्द्रामृत से रक्त विकार दूर हो जाता है।

बिगड़े खून को शुद्ध व निरोगी बनाने के लिये चन्द्रामृत तोहफा चीज है खून का बिगड़ना ही सब रोगों का राजा है चाहे जैसा दूषित रक्त हो चन्द्रामृत साफ कर देता है।

चन्द्रमृत से जलन मिट जाती है।

अग्नि से तेजाब इत्यादि किसी दवा से या गरम पानी या रस गिरने से यदि कोई जगह जल जावे तो १० मिनट में आराम करने के लिये चन्द्रामृत अक्सीर इलाज है।

चन्द्रामृत से ताप-बुखार का नाश होता है।

इन्फ्लूएञ्जा रोजाना इकतरा चौथिया या मलेरिया जीर्ण ज्वर कैसा ही ताप आता हो फौरन दूर करने का उपाय केवल चन्द्रामृत है।

चन्द्रामृत से नहारू निकल जाता है।

केवल दो बूंद चन्द्रामृत चार बूंद हींग के अर्क में मिलाकर नहारू पर लगाने से या तो नहारू बाहर निकल आता है या भीतर ही मर जाता है तीन दिनमें नहारू सफाचट होजाता है।

चन्द्रामृत से हिचकी बन्द हो जाती हैं।

हिचकी के रोग में २ बूंद चन्द्रामृत पानी के साथ दो या तीन वक्त पीने से एक ही दिन में आराम होता है।

चन्द्रामृत दुर्गन्धि नाश करता है।

घर में पेशाब पाखाने की जगहों में मुहल्ले में जहां २ दुर्गन्धि हो और साधारण पानी से धोने पर भी दुर्गन्धि नहीं जाती हो तो उस जगह पर एक सेर पानी में २-३ बूंद चन्द्रामृत डालकर उससे धोने से बदबू का नाश होता है।

चन्द्रामृत से खटमल भाग जाते हैं।

अलमारी कुर्सी पलंग मेज की दराजों या दीवालों की फांट में जहां खटमल छिप बैठते हों १ तोला साबुन के पानी में २ बूंद चन्द्रामृत मिलाकर छिड़कने से उस जगह पर खटमल नहीं छिप सकते।

चन्द्रामृत

ऊपर लिखा हुआ सब फायदा चन्द्रामृत पूरा पहुंचाता है इसमें अतिशयोक्ति बिल्कुल नहीं हरएक आदमी के जेबमें इस बे मूल्य औषधि की जरूरत है गरीबों पर उपकार करने के लिये श्रीमानों का फर्ज है कि चन्द्रामृत मुफ्त बांटने का प्रण करलें। कीमत फी शीशी ॥।) तीन शीशी २) छः शीशी ४) १२ शीशी ८) डाकखर्च अलग।

धातु पुष्ट वाटिका।
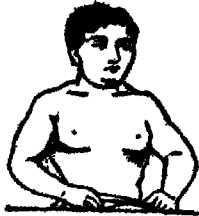
धातु विकार से स्वप्न में वीर्यपात होना पेशाब या दस्त के साथ धातु का आना आंखों कमर और के नीचे स्याही घुटने पीठ शिरमें दर्द खफीफ बुखार रहना, याददस्त न रहना, थोड़ा चलनेसे थकावट आंखों के सामने तिलमिलाहट चेहरेकी खुश्की व जर्दी आलस्य रहना, भूख कम लगना, आदि धातु विकार के लक्षण हैं। हमारी इस दवा से धातु पुष्ट होकर नया वीर्य उत्पन्न होता है। शरीर में फुर्ती दिमाग में ताकत होकर शरीर हृष्ट पुष्ट बलवान होजाता है। की० १) तीन शीशी २॥)

बाल मित्र।

(बच्चों की पुष्टाई की दवा)

इसके समान छोटे बच्चों को ताकत व मजबूती बढ़ाने वाली और कोई भी दवा नहीं है। छोटे बच्चों की खांसी संग्रहणी वगैरह खांसी से होने वाले मर्ज बहुत जल्द आराम होते हैं। बच्चों का बदन भर कर बढ़ना है। हाजमा ठीक होता है बच्चा प्रसन्न रहता है। की० ॥) तीन शीशी २)

नमक सुलेमानी

(हाजमे की अक्सीर दवा)

इसका रोज सेवन करने से बदहजमी खट्टी डकारों का आना, गलेका जलना, भोजन पचने के समय पेट का अफरना, भूख न लगना, पाखाने का खुलासा न होना यह सब शिकायतें इससे बहुत जल्द रफा हो जाती है। हैजे के वास्ते रामबाण है। बवासीर में भी गुणदायक है। खून को साफ करता है। आंखों की रोशनी बढ़ाता है। भूख खुल कर लगती है। दस्त साफ होता है हमने इसे नई रीति से बनाया है एक बार अवश्य परीक्षा कीजिये की० फी शीशी ॥) ३ शीशी का १।=)

अमृत सिन्धु।

यह अमृत सिन्धु हैजा कफ अर्थात् स्वांस खांसी सूखी व तर और क्षयी की कुकर खांसी पेट का दर्द कमरका दर्द जाड़े का ज्वर शूल संग्रहणी अतीसार कै करना, जी मिचलाना, बालकों के हरे पीले दस्त होना दूध डालना, रोना इन सब रोगोंमें जरूर ही फायदा करने वाला साबित हो चुका है। की० फी शी० ॥) तीन का १।=)

चन्द्रकला।

(खूबसूरती की दवा)

चेहरे के दाग मुहांसे छीप झुर्रियां फोड़ा खुजली मुंह का फटना दूर होकर खूबसूरती बढ़ती है। की० ॥)

प्रदरारि वटी।

(स्त्रियों के प्रदर रोग की दवा)

इसके सेवन से शरीर की पीड़ा व दुर्बलता, महीना न होना या ऋतु रुधिर का रंग बिगड़ना पेट की पीड़ा गर्भ न रहना आदि विकार दूर होते हैं और फिर महीना ठीक होता है तथा गर्भ रहता है। की० फी शी० १) तीन का २॥)

नयनामृत सुरमा

इससे आंखों का जाला धुन्ध नेत्रों से पानी बहना नजले का उतरना आंखों की सुर्खी परवर आदि नेत्र के सब रोग दूर होते हैं। चश्मे का लगाना छूट जाता है। आंखों की रोशनी बढ़ती और ठंडक रहती है। की० १) तीन शीशी का २॥)

दवा सुजाक

इस दवा से नई पुरानी सुजाक यानी पेशाब में जलन बूंद २ मूत्र का होना चावल के धोवन समान पेशाब होना पीव, टीस, जलन, कड़क धातु की कमजोरी मूत्रनली का घाव आदि सब दूर होते हैं। की० १) रु० तीन शीशी का २॥)

चन्द्रांजन Pain Balm.

(सब शारीरिक दर्दों का मरहम)

जैसे शिर दर्द पसली दर्द गठिया दर्द सर्दी का दर्द बवासीर का दर्द चोट का दर्द आग से जलने का दर्द सर्दी जुखाम खांसी साधारण चोट से चमड़ा छिल जाना आदि सब तरह के शारीरिक दर्दों की अक्सीर एवं विश्वासनीय दवा है। की० फी शीशी ।।=) तीन शीशी १॥=)

हिमचन्द्र तैल।

इसके लगाने से मस्तक बर्फ के मानिन्द ठण्डा रहता है और सुगंधि की लपटें उठती हैं मस्तक रोग के लिये बड़ा मुफीद है। दिमाग को हर वक्त तर रखता है। बालों की जड़ें मजबूत रखता और लम्बे तथा मुलायम बनाता है दिमागी काम करने वालों को तोहफा है। की० फी शीशी ॥) तीन का १।=)

पक्का काला खिजाब।

इस खिजाब के लगाने से बाल घोर काले चमकीले मुलायम और ठीक असली जैसे हो जाते हैं यह आज कल के खिजाबों में सबसे बढ़िया दर्जे का खिजाब है, यह जिल्द पर धब्बा नहीं लाता है। की० १) तीन का २॥)

नारायण तैल

(बात रोग की अक्सीर दवा)

इससे सब प्रकार का बात का दर्द यानी हाथ पैर पीठ पसली कमर जांघ और घुटने आदि का दर्द फौरन अच्छा होता है। गठिया पक्षाघात आदि से चाहे जैसा शरीर बेकाम हो अच्छा हो जाता है। की० १) रु०

दवा तिजारी।

चौथिया, इकतरा, जाड़े के ज्वर सब तरह के बुखार दूर होते हैं। कीमत ॥) तीन का १।=)

केशकुसुम तैल

इससे बालों का गिर
ना सिर घूमना या
हमेशा दर्द होते रहना
मगज की कमजोरी
सुनने और देखने की
कमी बिना समय
बालों का पकना धातु की कमजोरी उन्माद
तपेदिक दूर होते हैं। बालों की जड़ें मजबूत
करता शिर में ठंडक रखता आँखों की रोशनी
बढ़ाता और दिल के रोगों को फायदा पहुँचाता
है। की० १) तीन का २॥।)

संग्रहणी कपाट

संग्रहणी में हाजमा ठीक नहीं रहता है। अधो वायु खराब होजाती है। दस्त पतला अधिक तादाद में फूला हुआ होता है। कभी २ दो चार दिन दस्त कम होता है फिर इकट्ठा होकर एकदम निकलता है इससे रोगी बहुत कमजोर हो जाता है। पेट में गड़बड़ रहता है मुँह में छाले पड़ जाते हैं खुराक कम हो जाती इससे हाजमा ठीक होता है। दस्त बंधा हुआ, ठीक से होता है। नया खून दौड़ता है और ताकत आजाती है। की० १) रु०

सेन्टों का मुकुट मणि

ओटो कुसुम

यह नाना प्रकारके ताजे पुष्पों का जौहर है। जरा सा कपड़े या फाये में लगा लेने से मन को प्रफुल्लित कर देगा और अपनी मधुर मोहक सुगन्धि से वायु को सुगन्धित कर घंटों महकता रहेगा। की० १) छोटी शी० ॥)

स्वांस कुठार।

इससे सब तरह की स्वाँस छाती में बोझ सा जान पड़ना स्वाँस खींच न सकना मुँह फीका रहना धुँआँसा उठना बदन में पसीना आना हाथ पैर ठन्डे होना कफ के सब विकार दूर होने हैं। दमा दम के साथ जाता है इस बात को गलत साबित करता है। की० १) रु०

दाद का मरहम।

यह दवा २४ घण्टेमें दाद के दादाको भी तगादा कर भगाती है। खुजली और जलन फौरन दूर हो जाती है किसी प्रकारकी तकलीफ नहीं होती है। की० ।) डि० एक दर्जन का २॥)

शिर दर्द हर तैल।

इससे गर्मी सर्दी से उत्पन्न हुआ शिर का दर्द फौरन दूर होजाता है यानी रोता हुआ आदमी आवे और हँसता हुआ जावे। की० फी शीशी ।) एक दर्जन का २॥)

कर्ण रोग नाशक तैल।

इस तैल से कान के सब रोग दूर होते हैं। कानों का बहिरापन सन सना हट पीब का बहना कान में खुद २ होना जलन या दर्द सब दूर होते हैं। की० ।) दर्जन का २।)

देश विदेश समाचार

—मुसलमानोंमें आदर्श राष्ट्रीय नेता डा० मुख्तार अहमद अंसारी का १० मईको रेलगाड़ी में हृदयकी गति रुक जानेके कारण अचानक देहान्त होगया।

—२ मई को अबीसीनिया का सम्राट अपनी राजधानी आदिसअबाबा से अपने परिवार को साथ लेकर भाग गया शायद वह अब इंगलैंड पहुंचेगा। ५ मई को इटली की फौज ने राजधानी पर अधिकार कर लिया इस तरह अभागा अबीसीनिया वीरता से लड़ते हुए भी अंत में हार कर इटली का गुलाम बन गया। अब इटली भी एक बड़ा भारी साम्राज्य बन गया है।

—लंका के एक मुसलमान व्यापारी ने विवेकानन्द मिशन को पांच हजार रुपये दान दिये है।

—जेल में भूख हड़ताल किये बंगाली राजनैतिक कैदी प्रफुल्ल चन्द्र को १५० दिन से भी अधिक हो गये अब भोजन करने लगे है।

—इंगलैंड के दैनिक पत्र

डेली हैरल्ड के ग्राहक	२०२००००
एक्सप्रेस	१८०००००
डेली मेल	१७८००००
न्यूज क्रोनीकल	१३५००००
डेली मिरर	१०७००००
स्केच	१०२००००
डेली ग्राफिक	४०००००
टाइम्स	१८००००
मोर्निङ्ग पोष्ट	१३००००

भारतीय

आनन्दबाजार पत्रिका ५६०००

—जर्मनी के दो इञ्जीनियरों ने एक ऐसा वायुयान बनाया है जिस में इञ्जन नहीं है और वह बाइसिकलकी तरह केवल पेडल से चलाया जाता है। यह वायुयान ७७० फीट की ऊंचाई तक उड़ सकता है।

—जोरदार अफवाह है कि डाक्टर अम्बेदकर ने महात्मा गांधी को वचन दिया है अब दस वर्ष बल्कि इस से भी अधिक समय तक धर्म परिवर्तन नहीं करेंगे।

—मालूम हुआ है कि जर्मनी फिर आस्ट्रियाको अपने अहाते में लानेके लिये चालें चल रहा है। वहां के नाजी इशारा पाकर कुछ कर डालने के लिये प्रयत्नशील है।

—मि० रघुनाथराव जापानमें अपनी तीरन्दाजी की करामातें दिखाकर अमरावती लौट आये। अगस्तमें वे एक दल लेकर अपने करतब दिखाने के लिये जर्मनी जायेंगे।

—केरलके अछूत नेता श्री० के० सी० कुट्टनने सिक्ख धर्ममें दीक्षा ले ली है और अब उनका नाम सरदार जयसिंह रखा गया है।

—इंगलेण्ड के युद्ध सचिव मि० डफ कूपरने मेञ्चेस्टरमें भाषण करते हुए कहा है कि इस समय १९१४ ई० की अपेक्षा और भी भयंकर युद्धकी स्थिति उत्पन्न हो गयी है। अगर हमने किसी दिशामें उन्नति की है तो वह है विध्वंसकारी अस्त्र शस्त्रोंका निर्माण, जिससे पता चलता है कि अपने जीवन कालमें ही हम अपनी सभ्यताका नाश होते देख लेंगे।

—प्रशान्त महासागर स्थित टोंगा द्वीप ही संसारमें एक ऐसी जगह है जहां कोई भी व्यक्ति सम्पत्तिहीन नहीं है; न किसी पर कर है, न कोई गरीब है, न कोई अशिक्षित है। यहांके निवासियोंकी संख्या केवल ३० हजार है।

वर्ष ३
अंक २२
श्री भारत वर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस
इस अंक के पठनीय लेख
१- बौद्धधर्म और मांसाहार
२- तर्क और श्रद्धा
३- सती बाला (गल्प)
४- पंच पाप
५- रा० सा० ला० नेमिदास जी का भाषण
६- जैनध्वजका सभ्य कटाक्ष
७- धार्मिक मिक्श्चर
८- सामयिक चर्चा
९- समाचार
वार्षिक ३) एक प्रति

जैन समाचार

दान

॥ शास्त्रार्थ संघ ॥

२) ला० शम्भू दयाल जी अम्बाला छावनी।
५) पं० मक्खनलालजी जैन अनाथाश्रम देहली।
५ ला० चण्डीलालजी लोहिया खुरजा।
५, पं० फुलझारीलालजी पानीपत (मध्ये २५) में से)
५) बा० जगमोहनलालजी कटनी (सी० पी०)
२) ला० गौरीलाल कस्तूरचंदजी गौंदिया (भंडारा)

उपदेशक विद्यालय

५ बा० सुमेरचंदजी जैन रिवाड़ी।

जैनदर्शन

२) बा० जगमोहनलालजी कटनी (सी० पी०)
२) ला० गौरीलाल कस्तूरचंदजी गौंदिया (भंडारा)
२) सेठ नन्हूलाल देवाराम सागर। —धन्यवाद

वसीयतनामा

पं० बाबूरामजी जैन मंत्री जीवदया प्रचारिणी सभा आगरा ने अपनी ८० हजार रुपये की सम्पत्ति का वसीयतनामा कर दिया है। संपत्ति का कुछ भाग परिवार के लिये रख कर शेष संपत्ति जीवदया प्रचार के लिये ट्रस्टियों को लिखदी है।

—अभी गत मास में जो भोपाल स्टेट में कुछ मुसलमानों ने जैन मन्दिर पर आक्रमण किया था तथा दंगाइयों ने मि० आर्मस्ट्रांग इंसपेक्टर जनरल पुलिस, सबइंसपेक्टर जनरल पुलिस खानबहादुर, को धक्के तथा गालियां देकर अपमानित किया था। इस पर भी इन दोनों अफसरों को टेलीफोन द्वारा सूचना मिली कि उपद्रवियों के साथ सख्ती न की जाय। संभवतः इसी कारण उक्त दोनों अफसरों ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया है। (विश्वमित्र)

श्रु तपंचमी—को अम्बाला छावनी में समारोह के साथ शास्त्र-पूजन हुआ तथा संघ की ओर से उपदेशक विद्यालय का उद्घाटन हुआ।

लोनारा—में श्रु तपंचमी के दिन समस्त शास्त्रों से रेशमी रूमाल उतार कर वे खद्दर के रूमालों में बांधे गये।

—लंदन के विश्वधर्म सम्मेलन में जैनधर्म की ओर से श्रीमान बैरिष्टर चंपतरायजी भाषण देंगे।

उपहार—जैनदर्शन के तीसरे वर्ष का उपहार 'सत्यस्वरूप' ग्राहकों के पास इसी सप्ताह भेज दिया जायगा। जिन सज्जनों ने पोष्टेज अभी तक नहीं भेजा उन्हें पांच पैसे के टिकट शीघ्र भेज देने चाहियें। —मैनेजर जैनदर्शन

परिवर्तन—जैनदर्शन के प्रकाशन में आगामी चतुर्थ वर्ष में कुछ परिवर्तन किया जावेगा जिसकी सूचना आगामी २३वें अंक द्वारा पाठकों को दी जावेगी।

—जैन गजट के लिये सिवनी में महासभा का प्रेस खरीदा गया है। अब कुछ दिनों में जैन गजट सिवनी से निकला करेगा।

—महरौनी काण्डका मुकद्दमा चालू होगया है। इस केसकी पैरवी परिषद् की ओरसे होरही है, जो महानुभाव इस केसकी पैरवी में अपनी शक्तियों को लगाकर सहयोग दे रहे हैं वे जैन समाजके सपूत हैं वे धन्य हैं। दि० जैनसमाज के उत्साही सज्जनोंका कर्तव्य है कि वे आर्थिक शक्तिसे सहायता प्रदान करें। इस केसके लिये दो हजार रुपये का खर्च कूता गया है। इस आवश्यकता के समय समाज हितैषियों को द्रव्य दानसे सहायता करनी चाहिये।
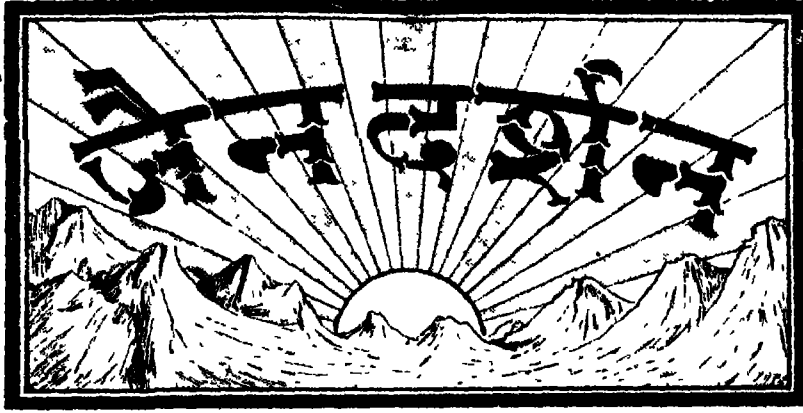
—अजितकुमार

अकलङ्कदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भव्याम्बुजान्यखिलदर्शनपक्षदोष,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्दन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री ज्येष्ठ सुदी १२ —सोमवार श्री वीर सं० २४६२—१ जून १९३६

"असिआउसा"

"असिआउसा" तू रटा कर रटा कर।
महामंत्र है यह, जपा कर जपा कर।

तुरियकालने आके जब पग पसारा,
मिटा कल्प वृक्षों का आनन्द सारा,
'ऋषभ' ने बताया प्रजाको बुलाकर।
असिआउसा तू रटा कर रटा कर।

धर्म नाम पर जबकि हिंसा मचाई,
सभी जीवों ने कीनी हा त्राहि त्राहि।
बचाया उन्हें वीर ने ये सिखा कर,
'असि आउसा' तू रटा कर रटा कर।

बलीने मुनीगणको जब था सताया,
तो विष्णुने आकर उन्हें था बचाया
हुआ पार अञ्जन यही मंत्र पाकर,
'असिआउसा' तू रटा कर रटा कर।

श्री मानतुङ्ग जी को राजाने घेरा
किया जेलके बीच उनका बसेरा।
चमत्कारसे बोले नृपको नवाकर
'असिआउसा' तू रटा कर रटा कर।

लेखक - 'विमल'

बौद्धधर्म और मांसाहार

(ले०— श्री पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री बनारस)

सारनाथ (सिंहपुरी) से प्रतिमास निकलने वाले बौद्ध-पत्र 'धर्मदूत' में 'भिक्षु के पत्र' शीर्षक से भदन्त आनन्द कौशल्यायन ने एक लेखमाला प्रारंभ की है। धर्मदूत के प्रथम वर्ष के नवें अंक में अपनी उक्त लेखमाला में आनन्द जी ने मांसाहार के संबन्ध में भगवान बुद्ध का अभिमत प्रकट किया है।

आप लिखते हैं:- "आज तक जितने भी सज्जनों ने मुझसे बौद्ध धर्म संबन्धी चर्चा की उनमें शायद ही किसी ने यह शंका न की हो कि एक ओर तो बौद्ध लोग 'अहिंसा परमो धर्मः' को मानते हैं और दूसरी ओर सुना जाता है कि वे मछली मांस भक्षण कर लेते हैं। इस शंका के समाधान के लिये हम भिक्षु आनन्द का अविकल उत्तर नीचे उद्धृत करते हैं।

भिक्षु के पत्र

अहिंसा और मांसाहार का विषय अत्यन्त उलझा हुआ है। मांसाहार के पक्षपाती और विरोधी दोनों इस पर दो दृष्टियों से विचार करते हैं। पक्षपातियों का कहना है कि मांसाहार बल वर्द्धक है; विरोधियों का कहना है कि इसकी अपेक्षा कहीं अधिक रोग वर्द्धक है। पक्षपातियोंका कहना है सभी भोजनों में हिंसा अनिवार्य होने से, मांसाहार में हिंसा का दोष नहीं; विरोधियों का कहना है कि मांसाहार जीवहत्या का कारण होने से पापमय भोजन है। इसी मांसाहार के विषय पर अपनी स्थिर सम्मति बनाने के लिये, इन दोनों ही दृष्टियों पर विचार होना आवश्यक है।

इन दोनों दृष्टियों में से किसी के बारे में भी कुछ कहने से पहले एक बात कहना चाहता हूं और वह यह कि अनेक लोगों को एक बात में अब अपनी जिद छोड देनी चाहिये। उन्हें यह मान लेना चाहिये कि जिस प्रकार इस समय संसार के लगभग सभी देशों में मांसाहारी और शाकाहारी दोनों प्रकार के लोग हैं, इस प्रकार सभी समयों में रहते चले आये हैं। जिन लोगों का यह ख्याल है कि प्राचीन वैदिक काल में यहां केवल शाकाहारी ही शाकाहारी बसते थे अथवा प्राचीन वैदिक साहित्य में मांसाहार का उल्लेख नहीं है, मैं समझता हूँ कि वे इतिहास के साथ जबर्दस्ती करते हैं। मैंने तो जो थोड़ा बहुत प्राचीन साहित्य देखा है उसमें-क्या वैदिक साहित्य क्या जैन साहित्य और क्या बौद्ध साहित्य-किसी साहित्य को भी मांसाहार के उल्लेखों से अछूता नहीं पाया। इस लिये यदि किसी की यह सम्मति हो कि उस के पूर्वज मांसाहार के विषय में गलती पर थे, तो यह बात समझ में आ जाती है, लेकिन चरक, सुश्रुत जैसे वैद्यक के ग्रन्थों में लगभग सभी मांसों के गुण दोष लिखे रहने पर भी यदि कोई यही कहने की जिद करे कि उसके पूर्वजों ने बिना इन मांसों को खाये ही, यों ही इनके गुण दोष लिख दिये, तो उसे मालूम होना चाहिए कि वह अपने पूर्वजों पर एक और संगीन इलजाम लगा रहा है।

जहाँ तक शरीर पर मांसाहार के प्रभाव का संबन्ध है, मैं समझता हूं कि मांसाहार और शाकाहारका वर्गीकरण निरर्थक है। आहार आहार है और प्रत्येक आहार का देश, काल और व्यक्ति के भेद से भिन्न भिन्न प्रभाव पड़ता है। हम भारतवासी अपने चौके चूल्हे का जितना विचार करते हैं, कच्चे पक्के भोजन का जितना विचार करते हैं यदि उसका एक अंश भी खाद्य सामग्री के गुण-दोष का विचार करें, और विचार करें ज़रा वैज्ञानिक ढंगसे, तो हमारा बड़ा कल्याण हो। गंगाके विज्ञानांक में प्रो० फूलदेव सहाय वर्मा ने आहार के बारे में एक अत्यन्त उपयोगी लेख लिखा है। उसमें उन्होंने शाकाहार और मांसाहार का भेद न करके यह दिखाया है कि सभी आहारोंका मनुष्यके शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है? लेख मसाहारियों और शाकाहारियों दोनों के लिये समान रूपसे उपयोगी है। हमें चाहिये कि हम उस लेख तथा उस तरहके ग्रन्थोंको पढ़कर अपने आपको इस बातसे अवगत करें कि भिन्न २ आहारों का हमारे शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है, और अपने भोजन के प्रकार तथा मात्राके चुनावमें अपने इस ज्ञानका उपयोग करें।

रही हिंसा-अहिंसा की बात। संसारके कई धर्मों के अनुयायी स्पष्ट रूपसे ऐसा कहते हैं कि परमात्मा ने पशुओं को आदमी के उपयोगके लिये बनाया है। और उसे अधिकार है कि चाहे उनको जीवित रख कर उनका उपयोग करे, चाहे मारकर। बुद्धके धर्म में इस बातकी तनिक भी गुञ्जाइश नहीं कि मनुष्य चाहे अपने लिये चाहे किसी औरके लिये, किसी छोटे से छोटे प्राणी की भी हत्या करे। बुद्धके पांच शीलोंमें प्रथम शील है-पाणातिपाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामी-अर्थात मैं जीव-हिंसा (प्राणातिपात) से दूर रहनेका व्रत ग्रहण करता हूँ।

बुद्ध ने कहा है:—

सब्बे तसन्ति दण्डस्स, सब्बे भायन्ति मच्चुनो।
अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य, न घातये॥

अर्थात्—दण्ड से सभी डरते हैं, मृत्यु से सभी भयभीत होते हैं, औरोंको भी अपने ही जैसा समझ; न उनका हनन करे, न घात करे।

प्राणि-हिंसा करनेवाला उस प्राणी की, जिसकी वह हत्या करता है, उन्नतिमें तो बाधक होता ही है, लेकिन सब से अधिक वह अपनी उन्नति में बाधक होता है। इस लिये बुद्ध की शिक्षा में चाहे आहार के लिये, चाहे शिकार के लिये और चाहे किसी रक्त-पायिनी देवी की प्रसन्नता के लिये प्राणि-हिंसा की गुञ्जाइश नहीं।

तुम पूछोगे तब तो किसी भी बुद्धधर्मावलम्बी को मांस नहीं ग्रहण करना चाहिये और जो भिक्षु ग्रहण करते हैं, वे स्पष्ट रूप से बुद्ध की शिक्षा के विरुद्ध जाते हैं? हां, और नहीं। हां उस हालत में जब की वह जिस मांस को ग्रहण करते हैं वह त्रिकोटि-परिशुद्ध न हो, और नहीं उस हालत में जब कि वह-जिस मांस को ग्रहण करते हों वह-त्रिकोटि-परिशुद्ध हो।

यह त्रिकोटि-परिशुद्ध मांस क्या बला है? इसे समझने के लिये तुम्हें अपने आप को बुद्ध के युग में ले जाना होगा। बुद्ध के समय और उन से पहले भारतीय समाज आज की अपेक्षा कम मांसाहारी न

था, अधिक भले ही हो। ऐसे समाज में भगवान् बुद्ध के भिक्षु अपने शास्ता के उपदेश के अनुसार घर घर से भिक्षा मांग कर खाते थे। अब क्या उन भिक्षुओं के लिये उस दिन—तथा कुछ देशों में आज भी—सम्भव है कि वे भिक्षा मांगकर गुजारा करें और हर समय शाकाहारी ही शाकाहारी रह सकें? भगवान बुद्ध ने सारे समाज को जीव-हिंसा से विरत रहने का उपदेश दिया, लेकिन जब तक और जो समाज किसी भी कारण से उनके उपदेश के अनुसार आचरण नहीं करता, यदि भिक्षु को वैसे समाज में भिक्षाटन के लिये जाना पड़े, तो वैसी हालत में भगवान ने भिक्षु के लिये तीन बातें कही हैं:—

१- यदि भिक्षु किसी ऐसे मांस को ग्रहण कर ले, जो उस ने देखा हो कि उसके लिये तैयार किया गया है तो वह दोषी है।

२- यदि भिक्षु किसी ऐसे मांस को ग्रहण कर ले, जो उस ने सुना हो कि उसके लिये तैयार किया गया है, तो वह दोषी है।

३- यदि भिक्षु किसी ऐसे मांस को ग्रहण कर ले, जिस के बारे में उस के मन में सन्देह हो कि उस के लिये तैयार किया गया है, तो वह दोषी है।

लेकिन यदि वह किसी अपरिचित गांव में भिक्षा के लिये किसी गृहस्थ के दरवाजे पर जा खड़ा हुआ है, और गृहस्थ ने उस के पात्र में मांस डाल दिया है तथा भिक्षु ने उसे खा लिया है, तो जहां तक हिंसा अहिंसा का सम्बन्ध है, वह भिक्षु किसी प्रकार के दोष का भागी नहीं।

आकाश में दो पक्षी लड़ रहे हैं। बड़े पक्षी ने छोटे को मारकर जमीन पर फेंक दिया। किसी ने उसे उठाकर खा लिया। उठाकर खा लेनेवाले व्यक्ति पर पक्षी को मारने का इल्जाम तो न लगेगा। यही बात त्रिकोटि-परिशुद्ध (तीनों ओर से शुद्ध) मछली-मांस के बारे में समझो।

यह तुम जानते ही हो कि मैं मांस के स्वाद अथवा अस्वाद से बिलकुल अपरिचित हूँ। यहां जो कुछ लिखा है वह केवल इस उद्देश्य से कि तुम मांस भक्षण केबारे में भिक्षुओं की दृष्टि समझ जाओ और जब कोई तुम से भगवान् बुद्ध के सूकरमद्दव (सूअर का मांस खा लिये रहने की सम्भावना के बारे में पूछे, तब तुम व्यर्थ इतने लज्जित न हो। यह बात हमें स्वीकार कर लेनी चाहिये कि बुद्ध-धर्म और शाकाहार-वाद (Vegetarianism) पर्यायवाची शब्द नहीं।"

भिक्षु आनन्द शाकाहारी हैं, मांसाहार के सम्बंध में उन्होंने जो कुछ समाधान किया है वह अपनी दृष्टिसे नहीं किन्तु बुद्धकी दृष्टिसे किया है। बुद्धके बाद बौद्ध सम्प्रदायमें दार्शनिक मतभेदोंका तो प्राबल्य रहा ही, धार्मिक मतभेदोंका भी कम जोर नहीं रहा जैनों में श्वेताम्बर दिगम्बर की तरह बौद्धोंमें भी दो पन्थ होगये— हीनयान और महायान। मांसाहार के सम्बन्धमें दोनों यानों की दृष्टिमें कुछ अन्तर है या नहीं? यह हम अधिकार पूर्वक नहीं कह सकते। लंकावतार सूत्रमें मांसाहार के निषेधमें एक प्रकरण में एक प्रकरण हमने अवश्य देखा है। पता नहीं, भिक्षु आनन्दका उसके सम्बन्धमें क्या अभिमत है?

अस्तु, भारतवासियों के पूर्वजों में मांसाहारी भी थे और बुद्धके अनुयायी भिक्षु बिना किसी भेद भाव

के सारे समाजमें भिक्षाटन करते थे। किन्तु मांसाहार के सम्बन्धमें यह दलील पर्याप्त नहीं है। लोक-संग्रही बुद्ध आदि मांसाहारके सम्बन्धमें और भी कठिन नियम बना देते, भिक्षु संघके लिये मांसाहार सर्वथा वर्जित कर देते तो भिक्षु संघकी लोक प्रियता के कारण मांसाहारियों के घरों से भी संघके पात्र में मांस आनेका प्रसंग ही उपस्थित न होता। भक्ति भावसे भिक्षा देने वाला दाता सर्वदा पात्रकी चर्या का ध्यान रखकर भिक्षादान देता है। अतः भिक्षु यदि कष्ट सहिष्णु हो (जोंकि उसे अवश्य होना चाहिये) तो वह दाताको अपने अनुकूल बना सकता है। इसलिये लोक के मांसाहार की दुहाई देकर मांस भक्षण का समर्थन जंचता नहीं है। वास्तवमे बुद्ध संघमें जो क्षत्रिय या इतर वर्ग सम्मिलित होते थे उनमें मांसाहारी भी थे। बौध धर्ममें बौद्ध गृहस्थ का कोई स्थान न होनेसे वे बौद्ध धर्म के आचार विचार के परिपालन में प्रायः अनभ्यस्त रहते थे। ऐसी अपरिपक्व दशा में ही उन्हें दीक्षा देदी जाती थी चिर संचित संस्कारोंको जीतने में वे असमर्थ रहते थे, ऐसे मांस लुब्ध भिक्षा भोजियों के लिये लोक संग्रही बुद्धने त्रिकोटि परिशुद्ध मांसाहारकी अनुज्ञा दे डाली होगी। भिक्षु संघके नियम, उपनियम प्रति दिन बदलते बदलते रहते थे और बुद्ध उनके निर्धारण में भिक्षुसंघ की इच्छाका विशेष ध्यान रखते थे। ऐसी दशामें मेरी संभावना सर्वथा काल्पनिक नहीं है।

मांसाहार और शाकाहार का वर्गीकरण निरर्थक है, ये शब्द यदि राहुल जी की लेखनीसे लिखे जाते तो उचित ही होता। किन्तु भिक्षु आनन्द की लेखनी से विकसित इस वाक्य पर बड़ा अचरज हुआ। प्रत्येक आहार का देश, काल और व्यक्ति के भेदसे भिन्न २ प्रभाव पड़ता है किन्तु क्या भिन्न २ तरहके आहारका एक ही व्यक्ति पर भिन्न २ प्रभाव नहीं पड़ता? क्या सात्विक भोजन फलाहार और तामसिक भोजन मांसाहार व्यक्ति पर एकसा ही प्रभाव डालेंगे? जो अपनेको अहिंसावादी नहीं कहते उन्हों ने भी सन्यासाश्रम में मांस वर्जित कर दिया है। किन्तु जो अहिंसा का अवतार होनेका दावा करते हैं उनके अनुयायी भिक्षु मांस भक्षण करें और जो न करते हों वे उसका समर्थन करें। किमाश्चर्यमतः परम्

"बुद्धके धर्म में इस बात की तनिक भी गुञ्जाइश नहीं कि मनुष्य चाहे अपने लिये चाहे किसी औरके लिये, किसी छोटेसे छोटे प्राणी की भी हत्या करे" एक ओर यह आज्ञा और दूसरी ओर इस आज्ञा का उल्लंघन करके बनाये हुये मांस से भिक्षुको उदरपूर्ण करनेकी सम्मति, दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। यदि गांधी जी विदेशी वस्तु बहिष्कार की आज्ञा प्रचारित करने के बाद अपने और अपने अनुयायियों के लिये त्रिकोटि परिशुद्ध विदेशी वस्तु के व्यवहार की गुञ्जाइश रखलें तो उन्हें विदेशी वस्तु का विरोधी कोई भी न कहेगा और न जनता उनकी इस आज्ञाका पालन ही करती, जैसा कि अहिंसाके अवतार बुद्ध के वर्तमान अनुयायी उनके अहिंसा विषयक मन्तव्यको केवल पोथीकी चीज समझते हैं।

यद्यपि बुद्ध ने मांसाहार के साथ त्रिकोटि परिशुद्ध विशेषण लगा दिया है किन्तु हम उसका कुछ भी मूल्य नहीं आंक सके। जिस धर्म में भिक्षु

निमंत्रण स्वीकार नहीं करते और भ्रामरी वृत्तिके द्वारा चर्या-भोजन करते हैं उस धर्ममें त्रिकोटि परिशुद्ध भोजन मिल सकता है। जैसाकि जैनसाधु भोजन की वेला शहरमें आते हैं और विधि पूर्वक घरके द्वार पर खड़े किसी गृहस्थने तिष्ठ ३ कहा तो ठहर कर भोजन स्वीकार कर लेते हैं अन्यथा बिना याचना किये अपने स्थान पर लौट आते हैं। किन्तु बौद्धसंघ में तो निमंत्रण स्वीकार करनेकी परिपाटी है। बुद्ध अपने विशाल संघके साथ निमंत्रित होकर ही दाता के घर जाते थे, ऐसी दशा में सैकड़ों भिक्षुओं के उद्देशसे ही भोजन बनाया जाता था। जिस भोजन में बुद्धके शूकरमांस खाने की बात सुनी जाती है वह भोजन भी बुद्धने निमंत्रण से ही स्वीकार किया था अतः शूकर के मांस पकाने में दाताने बुद्धका ध्यान अवश्य रखा होगा। जब त्रिकोटि परिशुद्ध में मानसिक सन्देह भी सम्मिलित है और भिक्षु निमंत्रण स्वीकार करके भोजन करता है तब यदि वह इस नियमका कठोरता से पालन करे तो मांस भक्षण का प्रसंग ही उपस्थित नहीं हो सकता, क्योंकि निमंत्रण की दशामें भिक्षुके मनमें अनायास यह सन्देह हो सकता है कि यह मांस मेरे उद्देश्य से तो नहीं बनाया गया। किन्तु भगवान बुद्धने जब स्वय ही इस सन्देहसे लाभ नहीं उठाया तब गतानुगतिकों के विषयमें तो कुछ कहना ही बेकार है।

भगवान महावीरने अपने अनुयायियों के लिये रंचमात्र भी आज्ञा नहीं दी; यही कारण है कि उनके अनुयायियोंमें आज तक भी मांसभोजी नहीं पाये जाते दृढ़ संकल्प और कठोर संयम का ही यह सुफल है। भिक्षु आनन्दने अपने पत्रके अन्तमें कुछ पंक्तियां संभवतः जैनोंको लक्ष्यमें रखकर लिखीं हैं। वे लिखते हैं— "अहिंसा धर्म मनुष्यका उच्चतम धर्म है, लेकिन उसका अर्थ है मन, वाणी और कर्मसे किसीको हिंसा न पहुंचाना। पानी छान कर पीने और शाक-सब्जी खाने मात्रसे अहिंसा धर्मका पालन नहीं होता।" भिक्षु आनन्द के इस मतसे हम सर्वथा सहमत हैं। जो अहिंसा प्रेमी पानी छान कर पीता है, शाक-सब्जी खाता है किन्तु व्यापार में हृदयहीन बन जाता है उसे भिक्षु आनन्द के कठोर परिहास को ध्यानमें रखना चाहिये—

जाणनहारया जाण्या बाणिया तेरी बाण।
अनछाना लोहू पिवे पानी पीवे छान॥

अरे बनिये! जानने वालेने तेरी आदतको जान लिया तू पानी तो छान कर पीता है, लेकिन गरीबोंके रक्त को बिना छाने ही पीजाता है।

—*—

—(::)—

तर्क और श्रद्धा

(ले० श्रीमान बा० रघुवीर शरण जी)

मनुष्य मस्तिष्क (human mind) के दो भाग होते है, एक चेतन या जाग्रत (conscious), दूसरा सुप्त या अव्यक्त (sub conscious)। जाग्रत मस्तिष्क (बुद्धि) का सम्बन्ध तर्क से होता है तर्क से यह बाह्यमन बहुत चैतन्य पूर्ण बलवान व तेज हो जाता है, जब कि अव्यक्त मस्तिष्क (अंतरात्मा) का सम्बन्ध श्रद्धा से है। यह अव्यक्त भाग यद्यपि सुप्त है, लेकिन मनुष्य चारित्र में इस का कार्य (function) इतना महत्व पूर्ण है कि यदि इसे मनुष्य शरीर की आश्चर्य जनक बिजली या शक्ति की बैटरी (battery) कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। मनुष्य जब तक अपनी स्वाभाविक अवस्था प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक वह सदोष व अपूर्ण रहता है, इसलिये उस समय तक उस के मस्तिष्क के दोनों भागों को निर्दोष नहीं कहा जा सकता। यह आवश्यक नहीं है कि जिस समय किसी मनुष्य का जाग्रत मस्तिष्क भूल कर रहा हो, उस समय उस का अव्यक्त मस्तिष्क भी भूल करे या जिस समय उसका अव्यक्त मस्तिष्क भूल कर रहा हो, उसी समय उस के सहायक बाह्य मस्तिष्क से भी भूल हो रही है। जिस समय बाह्य मस्तिष्क भूल करता है, उस समय उस का तर्क वास्तविक सात्विक तर्क नहीं होता, बल्कि वह तर्काभास या कुतर्क होता है। ऐसा बहुधा होता है कि जिस समय किसी मनुष्य का बाह्य मस्तिष्क कुतर्क अथवा तर्काभास द्वारा किसी निर्णय पर पहुंचता है, उस का अव्यक्त मस्तिष्क उस निर्णय को स्वीकार कर लेता है और वह निर्णय उस मनुष्य की श्रद्धा का विषय बन जाता है। इस समय मनुष्य की अंतरात्मा शुद्ध न हो कर विकृत होती है और वह श्रद्धा अंध श्रद्धा कहलाती है। पहिले संकेत किया जा चुका है, कि मनुष्य का अव्यक्त मस्तिष्क जाग्रत मस्तिष्क की अपेक्षा अधिक दृढ़ होता है, अतएव क्रमशः वह अंध श्रद्धा अधिकाधिक दृढ़ होती जाती है, यहां तक कि एक अवस्था ऐसी आती है: जबकि उस का अंतरात्मा विकृत होकर पक्षपात हठ दुराग्रह, तथा कट्टरपन (अनुदारता) का अखाड़ा बन जाता है और बाह्य मस्तिष्क भी उस की विभावमय अवस्था से प्रभावित होकर कलुषित हो जाता है और वह अव्वल दर्जे का कुतर्की या तर्क-हीन, तर्क-विरोधी बन जाता है। उस समय उस का यही लक्ष्य रहता है कि किसी न किसी प्रकार तर्क शक्ति का चमत्कार दिखा कर अपने अंधकार को सात्विक श्रद्धा सिद्ध कर दिया जाय। वह अपने मत (view) को 'सत्य' सिद्ध करने के लिये अपनी युक्तियों को खूब खेंचेगा, उन्हें खूब रंगेगा, वह सदा अपनी युक्तियों को अपनी मति तक पहुंचाने में ही प्रयत्नशील रहेगा। यह अवस्था बड़ी भयंकर होती है, अतः इस का अधिक चित्रण करना व्यर्थ भयंकरता को प्रोत्साहन करना व अपने को डराना है।

अकसर ऐसा भी होता है कि ऊपर से एक व्यक्ति जिस का बाह्य मस्तिष्क तेज व शक्तिसम्पन्न नहीं है, किसी तेज किन्तु कुतर्की बाह्य मस्तिष्क सम्पन्न व्यक्ति के कुतर्क द्वारा परास्त होकर एक बात मानने को बाध्य तो हो जाता है परन्तु उस का भीतरी मन

(अंतरात्मा) उसे स्वीकार नहीं करता। ऐसी अवस्था में मनुष्य की अंतरात्मा शुद्ध होती है और वह उस बात की परीक्षा करने में संलग्न हो जाता है जब तक वह उस कुतर्क की पोल नहीं खोल पाता और सात्विक पक्षपातहीन तर्कका दर्शन कर के अपने बाह्य मस्तिष्क द्वारा 'सत्य' निर्णय पर नहीं पहुंच जाता, उस समय तक उसे संतोष नहीं होता उस की बुद्धि और श्रद्धा में अच्छा खासा युद्ध छिड़ा रहता है।

उपरोक्त दोनों अवस्थाओं में से पहिली अवस्था में जाग्रत मस्तिष्क व अंतरात्मा दोनों सदोष है, जब कि दूसरी अवस्था में एक—बाह्य मस्तिष्क, सदोष है और दूसरा—अंतरात्मा, दोषरहित (सात्विक, शुद्ध) है। उन दोनों अवस्थाओं से विपरीत दो अवस्थाएं और होती हैं। एक वह जिसमें में बाह्य मस्तिष्क व अंतरात्मा दोनों सात्विक और शुद्ध होते हैं, यह अवस्था सर्वोत्तम है। इस अवस्था में मनुष्य के शरीरस्थ इन्द्रिय द्वारों में सत्यमय प्रकाश हो जाता है, उस को आत्मा को वह सच्चा आनन्द और संतोष प्राप्त होता है, जिस को शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जासकता। वह तो अनुभव का ही विषय है। दूसरी वह जिसमें मनुष्य का बाह्य मस्तिष्क दोषरहित व स्वाभाविक होता है, मगर अंतरात्मा विकृत होता है। ऐसी अवस्था में मनुष्य को तर्क बड़ा कठोर मालूम होता है, वह तर्क द्वारा प्रमाणित बात को असत्य तो नहीं कहता लेकिन उस पर विश्वास नहीं लाता, ऐसा व्यक्ति कभी २ अपनी पूर्व श्रद्धा के प्रभाव में आकर तर्क की भी अवहेलना करने लगता है, वह व्यक्ति सच्चाई से वंचित रह जाता है, अंधश्रद्धालु बना रहता है, या उस तर्क को सदोष समझकर उपस्थित प्रश्न पर फिर गंभीर विचार करने में लग जाता है साथ वह अपने अंतरात्मा को शुद्ध बना कर तर्क की सात्विकता की परीक्षा करनेमें प्रयत्नशील होजाता है (ऐसा व्यक्ति आगेचल कर अपने बाह्य मस्तिष्क या अंतरात्माके दोषको जान लेता है और सच्चाई प्राप्त करने में सफल हो जाता है) अस्तु।

श्रद्धा का सात्विक रूप हां, जिसमें मनुष्य को पक्षपात, हठ व दुराग्रह नहीं होता, अंतरात्मा का विषय है। एक श्रद्धा तामसी होती है, जिसका नाम अन्ध-विश्वास या कट्टरपन (orthodox) भी है, यह कुश्रद्धा शुद्ध अन्तरात्मा का विषय नहीं है, विकृत अन्तरात्मा का विषय है। आजकल श्रद्धा-शब्द का यही कुत्सित अर्थ अधिक प्रचलित है, परन्तु उच्च मनोविज्ञान (psychology)में श्रद्धा बहुत ही प्रशंस्य वस्तु है। आज कल अन्ध-श्रद्धा का बहुत दौरदौरा है, इसलिये आवश्यकता है कि मनुष्य अपने बाह्य मस्तिष्क को प्रबल बनाए और उस की सद्वृत्तियों को जन्म देकर अपनी श्रद्धा का (indirectly) सुधार करे, लेकिन उसको यह भी चाहिये कि सीधे (directly) अपनी अन्तरात्मा की सद्वृत्तियों का भी ध्यान रखे। जिस अन्तरात्मा में पक्षपात, व साम्प्रदायिक दुराग्रह, आदि के अन्श विद्यमान हैं, वह अन्तरात्मा विकृत है, मनुष्य को चाहिये उसे शुद्ध बनाए, फिर अपने बाह्य मस्तिष्क व अन्तरात्मा का एक दूसरे से मिलान करे। बाह्य मस्तिष्क के सुधार के लिए बुद्धि की प्रखरता, विद्या और न्यायशास्त्र आदि के ज्ञान की आवश्यकता है, अन्तरात्म के सुधार के लिये हृदय की शुद्धि अर्थात् दृष्टिकोण

व मनोवृत्ति के सुधार की आवश्यकता है। आगम का सदुपयोग दोनों का सहायक व सुधारक, तथा उसका दुरुपयोग दोनों का घातक व बिगाड़क है।

जो व्यक्ति बाह्यमस्तिष्क को ही महत्व देते हैं और अन्तरात्माकी सर्वथा उपेक्षा करते हैं वे तर्क का ही राग अलापते है. ऐसी हालतमें वे कुतर्क को प्रोत्साहन देते हैं और कुतर्की बन कर अन्धश्रद्धालु बन जाते हैं और जो लोग तर्क को बुरा समझ कर धोकेबाज बतलाकर उसकी अवहेलना करते हैं और अन्तरात्मा की ही आरती उतारते हैं, वे अन्धश्रद्धाको प्रोत्साहन देते हैं और अन्ध श्रद्धालु बन कर कुतर्की बन जाते हैं दोनों भूल करते हैं। वास्तवमें हमें बाह्यमस्तिष्क और अन्तरात्मा में से किसी की भी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। हमें दोनों का ध्यान रख कर सत्या सत्य का निर्णय करना चाहिये। जिन लोगों का ऐसा कहना है कि—

"फलसफी को बहसके अन्दर खुदा मिलता नहीं
डोरको सुलझा रहा है और सिरा मिलता नहीं"

वे कुतर्क की ओर ही दृष्टि रखते है और तर्कके वास्तविक महत्वको नहीं समझते। जो लोग यह कहते है कि 'तर्क तो पंगु है, वह चल ही नहीं सकता, तर्क से किसी बातका निर्णय नहीं होता, उससे तो असत्य भी सत्य सिद्ध किया जा सकता है और सत्य भी असत्य सिद्ध किया जा सकता है", वे कुतर्क पर ही अपनी दृष्टि रखकर ऐसी सदोष बात कह देते हैं। इस प्रकारकी तर्क विषयक खेंचातानी का मनुष्य उस समय बहुत उपयोग करता है जब वह ऊपर बतलाई हुई पहिली सदोष अवस्था में होता है। जब कोई अन्ध श्रद्धालु तर्क द्वारा अपनी मान्यताओं का खंडन होता हुआ देखता है उस समय वह ऐसे वाक्योंका उच्चारण करने लगता है और तर्कको कुतर्क की परिभाषा व कुतर्क का रूप देकर उसे बदनाम करनेका प्रयत्न करता है।

मस्तिष्कके बाहरी मस्तिष्क और भीतरी मस्तिष्क (अन्तरात्मा) दोनों का एक दूसरे पर बहुत प्रभाव पड़ा करता है। जो कोई एकको सात्विक व समुन्नत बनाना चाहता है, उसे दूसरेको भी सात्विक व समुन्नत बनाना चाहिये, अन्यथा वह आगे चलकर विकृत हो जायगा। एक दूसरेको उच्छृङ्खल बनने से रोकता है, अतः दोनों ही जरूरी हैं, उपयोगी हैं। किसी एक की भी अवहेलना अनुचित है, हानिकारक है। पहिलेसे सम्यक्ज्ञान और दूसरे से सम्यक्दर्शन की उत्पत्ति होती है। सम्यक्चारित्र के लिये दोनोंकी आवश्यकता है और मोक्षके लिये तीनोंकी आवश्यकता है। अतः हर एक अत्यन्त उपयोगी है।

—*—

सती-बाला

(ले॰ विमल)

(१)

सुशीला— मैं पिता जी की इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं कर सकती।

कामताप्रसाद— देखो सुशीला! तुम यह हट छोड़ दो। कालिज की पढ़ने वाली लड़की यदि अपने भविष्य को एक अन्य पुरुष के निर्णय पर छोड़े यह तुम्हें शोभा नहीं देता।

सुशीला— मिस्टर कामताप्रसाद! आप मुझे ऐसी शिक्षा न दें। मैं ने कालिज ज्वाइन किया है इंगलिश भाषा पढ़ने के लिये; न कि इंगलिश सभ्यता प्राप्त करने के लिये। इस गिरी हुई दशा में भी आज भारत सब देशों की अपेक्षा सभ्यता में बढ़ा हुआ है।

कामता प्रसाद— किन्तु हमारे शास्त्रों में भी तो इस बात का कथन आया है कि पहले समय में स्वयंवर रचा जाता था जिसमें कन्या स्वयं वर पसन्द करती थी। क्या यह असत्य है?

सुशीला— यह बात केवल राजपरिवार के लिये ही थी। साथ ही यह भी है कि पिता स्वयं आज्ञा देते थे।

कामताप्रसाद— यदि तुम्हारे पिता जी ने किसी बूढ़े या गंवार के साथ शादी करदी तो?

सुशीला— पिता जी मुझ से अधिक बुद्धिमान हैं वे जो कुछ मेरे लिये करेंगे सोच विचार कर करेंगे

कामताप्रसाद— किन्तु मैं यह कहता हूँ कि तुम कालिज में से किसी को क्यों न पसन्द कर के पिता जी से कहो।

सुशीला— कालिज में केवल एक को छोड़ शेष कोई भी मुझे युवा और सभ्य दृष्टिगोचर नहीं होता

कामताप्रसाद— तो कालिज में सब बूढ़े और गंवार ही पढ़ते हैं?

सुशीला— हां।

कामताप्रसाद— यह तुम ने कैसे जाना?

सुशीला— जो सीधे बैठ न सकते हों, बिना चश्मे के पढ़ न सकते हों, प्रोफेसर के सामने जो उन का कुछ भी सम्मान न करते हों और पढ़ने समय लड़कियों की तरफ घूरते हों, क्या आप उन्हें युवा सभ्य समझते हैं?

कामताप्रसाद— किन्तु मैं भी उन में से हूं। मुझे तो तुम ने उस एक में गिना है।

सुशीला— नहीं वह एक दूसरा ही है। कुंवारी कन्या से अपने साथ विवाह करने को कहना, क्या यह असभ्यता नहीं है?

इतना सुनकर कामताप्रसाद पानी २ हो गये और उसी समय वहाँ से चले गये। सुशीला भी अपने घर आ गई।

(२)

सुशीला प्रोफेसर शांतिचन्द्र जी की लड़की थी। कामताप्रसाद उसी कालिजके प्रिंसिपल बा॰ रमानाथ का इकलौता पुत्र था। सुशीला भी अपने पिता की मातृहीन और भ्रातृहीन इकलौती पुत्री थी। शांतिचन्द्र जी ने इस की माता के (जब यह २ साल की थी) स्वर्गवास के पश्चात केवल उसकी ममता के

कारण दूसरा विवाह नहीं किया था। जिस प्रकार शांतिचन्द्र जी इसे प्यार करते थे उसी प्रकार यह भी उन की इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य न करती थी। सदा पिता की आज्ञा का पालन करना ही इस का परम धर्म था। यह और कामताप्रसाद एक ही कलास में (बी० ए० के प्रथम वर्ष पढ़ते थे। कामता प्रसाद सुशीला की सुन्दरता, चतुरता और सभ्यता पर मुग्ध था। किन्तु उन मे शरीर की सुन्दरता, सुदृढ़ता और चतुरता होते हुए भी चारित्र का अभाव था। सुशीला इन्हे बिल्कुल भी न चाहती थी। उसी नगर में शीलचन्द्र नाम के एक वणिक के इकलौते पुत्र पढ़ते थे। इन की उस नगर में बिलायतखाने क माल की 'रामचन्द्र भगवानदास' के नाम से प्रसिद्ध फर्म थी। यह सर्वगुण सम्पन्न थे। सुशीला के विद्वान पिता शीलचन्द्र पर मुग्ध थे। वह चाहते थे कि सुशीला का विवाह शीलचन्द्र से किया जाय। यह बात कुछ २ सुशीला को भी मालूम थी। वह भी शीलचन्द्र की ओर खिंचती थी।

शीलचन्द्र सदा सादे वेश में रहते थे। उन्हों ने पतलून माता, नैकटाई देवी और हैट देवता का कभी हाथ से स्पर्श भी न किया था। उनका शरीर पतला होने पर भी सुदृढ़ था। सभ्यता के तो मानो यह अवतार थे। कभी २ क्लास बदलते समय दोनों आमने सामने पड़ जाते थे। एक दूसरे को देखकर आंखें नीची कर लेते थे। कालिज के लड़के शील चन्द्र को साधु जी कह कर पुकारते थे। शीलचन्द्र भी सुशीला की सुशीलता पर मुग्ध था। किन्तु उसे कभी भी इस बात का विचार नहीं हुआ था कि वे दोनों किसी दिन विवाह के सूत्र में जकड़े जायेंगे।

(३)

कामताप्रसाद— सुशीला के प्रेम में बेचैन थे। उन्हें यह भली प्रकार मालूम हो गया था कि सुशीला उन्हें नहीं चाहती है। कामताप्रसाद के पिता भी यह चाहते थे कि सुशीला उनके लड़के को स्वीकार करे किन्तु शांतिचन्द्र जी से कुछ अनबन रहने के कारण वह इस बात को दबाये हुये थे।

कामताप्रसाद को चैन न पड़ी। यदि सीधी तरह से नहीं तो छल से किसी न किसी प्रकार सुशीला को अवश्य अपनाना ठीक समझा।

अच्छे कार्य में भले ही कोई मना करदे किन्तु बुरे कार्य में अनेकों साथी हो जाते हैं। उसी कालिज मे राम और मोहन दो लड़के पढ़ते थे जो इन कामों में अपने को सिद्धहस्त समझते थे।

एक दिन किसी कार्य वश प्रो० शांतिचन्द्र जी बाहर गये उन के साथ ही किसी कार्य वश शीलचन्द्र चले गये। दोनों ट्रेन में अनेक प्रकारकी बातें करते चल दिये। इसी बीच में प्रो० साहब ने शीलचन्द्र की अच्छी प्रकार परीक्षा करली।

सुशीला घर में अकेली थी। उसी दिन कालिज में जलसा था शांतिचन्द्र शहर से बाहर रहते थे। कालिज आने के मार्ग में कुछ सुनसान स्थानथा। सुशीला को उस जलसे में जाना आवश्यक था। मार्ग में कामताप्रसाद ने अपने दोनों साथियोंकी सहायता से सुशीला को पकड़ लिया और नगर से ५, ६ मील दूरी पर रेलवे लाइन के पास एक खंडहर में ले गये।

का०—कहो सुशीला! अब क्या विचार है?

सुशीला—आप कहिये कि मुझे छल पूर्वक यहां लाने का आप का क्या अभिप्राय है?

का०—सुशीला ! मैं तुम से प्रेम करता हूं।

इस आपत्तिके समय में सुशीला ने सोचा कि सीधी तरह से इन दुष्टों से छुटकारा पाना कठिन है इस समय नीति और चाल से काम लेना चाहिये।

सुशीला—आप मुझे प्रेम करते हैं ? यह मैं कैसे मानूं ? जो प्रेमी होते हैं वह तो अपनी प्रेमिका के लिये स्वयं मर मिटते हैं किन्तु प्रेमी को कष्ट नहीं पहुंचाते। आप ने कष्ट पहुंचाया है।

का०—सुशीला ! मुझे क्षमा करो। सच जानो मैं तुम्हें हृदय से प्रेम करता हूं। तुम्हारे लिये मैं अपने प्राण तक अर्पित कर सकता हूं।

सुशीला ने देखा कि मेरा जादू चल रहा है। उस ने उन दोनों को वहां से चले जाने की आज्ञा देने को कामताप्रसाद से कहा कामताप्रसाद ने आज्ञा दी और वे दोनों वहां से चले गये। सुशीला उस खंडहर के बाहर निकल कर आई और बैठ गई। यह पहले ही दर्शा चुके हैं कि खंडहर रेलवे लाइन के पास में था। सुशीला ने देखा कि बहुत दूरी पर धुंआ उठ रहा है। वह समझ गई कि गाड़ी आ रही है इस समय उस ने मौका पाकर कामताप्रसाद से कहा

सुशीला-आप मुझे प्रेम करते हैं ये मैं कैसे जानूं?

कामता०—तुम हर प्रकार से मेरी परीक्षा ले सकती हो।

सुशीला—यदि आप मुझे हृदय से प्रेम करते हैं तो लीजिये पहले मेरा आंचल अपने खून में रंगिये। कामताप्रसाद ने प्रेम के आवेश में अपने हाथ को घायल कर लिया। सुशीला का आंचल रंगा किन्तु कामताप्रसाद उस समय अचेत था। गाड़ी भी उस समय बहुत निकट आगई थी। सुशीला दौड़कर पटरी के पास जाकर खड़ी हो गई और अपना खून में रंगा हुआ आंचल फहराने लगी। गाड़ी खड़ी हो गई। संयोग से उसी गाड़ी से शांतिचन्द्र जी और शीलचन्द्र जी भी लौट कर घर आ रहे थे। उन्हों ने गाड़ी रुकने का कारण देखने के लिये खिड़की से सर निकाला तो शीलचन्द्र तुरन्त ही सुशीला ! सुशीला ! कह कर चिल्ला पड़े। सुशीला उन्हें देखकर और फिर पिता जी को देखकर फूली न समाई। वह उन के साथ गाड़ी में बैठ गई। उन्हीं के साथ गार्ड महोदय भी बैठ गये। बहुत आग्रह करने पर सुशीला ने सब वृतान्त सुनाया। उसे सुनकर सबको अति हर्ष हुआ। शीलचन्द्र इसे सुन कर मन ही मन मुस्करा रहे थे।

अगले स्टेशन पर गार्ड साहिब अपने डब्बे में चले गये। इन्हीं के साथ शांतिचन्द्र जी भी चले गये सुशीला और शीलचन्द्र को कुछ प्रेमालाप करने का अवसर प्राप्त हुआ। कुछ देर तक दोनों शांत बैठे रहे और सोचते रहे कि किस ढंग से वार्तालाप प्रारंभ किया जाय।

कुछ देर बाद शीलचन्द्र ने कहाः—

सुशीला ! तुम भारत की देवी हो। तुम्हारा यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है।

सुशीला— आप मेरी प्रशंसा करके मुझे लज्जित करते हैं—

मैं ने कौन सा बड़ा काम किया है ? केवल अपना बचाव ही तो किया है।

शीलचन्द्र—नहीं सुशीला ! तुम एक चतुर शिकारिन हो। कामताप्रसाद के हाथों ही उस को नीचा दिखा दिया तुमने तो वह कार्य किया कि

" मियां की जूती मियां का शिर "

सुशीला—क्या आप मेरे इस कार्य को पसन्द करते हैं ?

शीलचन्द्र—ऐसा कौन मूर्ख होगा जो ऐसे कार्य के लिये तुम्हें बधाई न देगा ।

सुशीला—तो मुझे इस का पारितोषक क्या मिलेगा ?

शीलचन्द्र—मुझ दीन के पास ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो तुम सरीखी देवी की भेट कर सकूं ।

सुशीला—शीलचन्द्र जी ! पिता जी की इच्छा है कि ....

शीलचन्द्र—कहिये, कहती कहती क्यों रुक गई ।

सुशीला—इसी लिये कि पिता जी की इच्छा पूर्ण होने में सन्देह है ।

शीलचन्द्र—किस बात का ?

सुशीला—यही कि आप धनिक के पुत्र हैं आप के पिता इसे स्वीकार न करेंगे ।

शीलचन्द्र—किन्तु तुम्हारी स्वयं की क्या इच्छा है ?

सुशीला—जो पिता जी की है ।

शीलचन्द्र—मुझे यह स्वप्न में भी आशा न थी कि तुम्हारे पिता जी तुम्हें वणिक के घर देना पसन्द करेंगे । इसी से मैं इच्छा होते हुवे भी अपने को रोक लेता था ।

किन्तु अब ?

शीलचन्द्र—अब मैं इस के लिये भरसक प्रयत्न करूंगा और तुम्हारे किसी को भी ....

सुशीला—मैं भी अपना सब कुछ आप के अर्पण कर चुकी हूं । आप के सिवा ....

इतने में ही स्टेशन आ गया । वहीं उतर पड़े । शांतिचन्द्र भी शीघ्रता से आये और कुलियों से सामान उतरवाया । तीनों एक ही गाड़ी में बैठ कर चले । सुशीला अपने पिता के पास बैठी थी शीलचन्द्र सामने की ओर । दोनों आमने सामने बैठे थे किन्तु दोनों की दृष्टि लज्जापूर्ण थी । शांतिचन्द्र जी इन का इस प्रकार का व्यवहार देख कर हर्षित थे ।

—अपूर्ण

अथर्ववेद परिचय

(ले०—श्रीमान स्वामी कर्मानन्द जी)
(२०वें अंक से आगे)

तृतीय काण्ड

इस काण्ड में ३१ सूक्त हैं तथा २३० मन्त्र हैं, प्रायः पृथक २ मन्त्रोंके सूक्त हैं।

सूक्त १–२ (संग्राम)

अथर्वा ऋषि अग्नि आदि देवता, सेना मोहनम्। इस सूक्त में ६ मन्त्र हैं, चतुर्थ मन्त्र सामवेद, ३०१-३-५ में आया है तथा दो ५-६ वें मन्त्र यजु० अ० १७ में आये हैं। वहां बहुत न्यून पाठ भेद है। ये सूक्त ऋग्वेद १०-१०३-१२ में भी आये हैं। ऐसी ही प्रार्थनायें का० १ सू० १६ से २३ तक—२६ में एवं का० २ सू० १८ से २४ तक में आचुकी हैं, आगे भी आवेंगी, अतः दोनों सूक्त व्यर्थ हैं।

सूक्त ३–४ (राजतिलक)

दोनों में १३ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है नानादेवा देवता हैं। राजतिलक प्रकरण है सूक्त ३ का प्रथम मन्त्र, ऋग्वेद, ६-११-४ में आया है। यह भाव भी का० १ सू० २१-३०-३१ में आ चुका है अतः यहां पुनरुक्त है।

सूक्त ५-६ (पर्णमणि)

इन में १६ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि, सोम वनस्पति देवता है। सू० ५ में पर्णमणिसे बल धन और राज्यकी प्रार्थना है तथा ६ में अश्वत्थ मणि से शत्रु-के नाश की प्रार्थना है। ऐसी ही प्रार्थनाओं से ग्रन्थ पूरा किया गया है। देखो का० १

सूक्त ७ (हरिण मणि)

इस सूक्त में ७ मन्त्र हैं, हरिण देवता है। हरिण के सींग से अथवा चन्द्र किरणों से रोग दूर करने की प्रार्थना है। दो श्लोकों में सम्पूर्णभाव आसकता है पुनः ७ मन्त्र व्यर्थ हैं। का० १-२ में भी अनेक मणियें आ चुकी हैं, उन से इस में कुछ विशेषता है परन्तु गुणोंमें विशेषता नहीं है।

सूक्त ८ (मित्रता)

इस में ६ मन्त्र है, प्रजापति देवता है, सब से मित्रता रखने का सुन्दर उपदेश है। इस के अन्तिम दो मन्त्र का० ६ सू० ६४ में आये हैं।

सूक्त ९ (अरलुमणि)

इसमें भी ६ मन्त्र हैं, विश्वेदेवा देवता है, इसमें संसार में १०१ प्रकार के विघ्न बतलायें हैं, इन में 'कावव' को प्रधान बतलाया है। इन सब को दूर करने की इस मणि (तावीज) से प्रार्थना है।

सू० १० (रात्रि पूजन)

इसमें १३ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि, अष्टका देवता है। इसके प्रथम मन्त्रका उत्तरार्ध ऋ० ४-५७-७ में है। तथा मन्त्र ७ वां कुछ भेद से यजु० अ० ३-४६ में है। मन्त्र ४ का० ८-९ में है,। मन्त्र, ९ का० ११-६ में है मन्त्र १० का० १९-३७ में है। इस प्रकार यह सूक्त भानमती के कुनबेकी कहावत को चरितार्थ करताहै। इसमें रात्रि और, उषा, की स्तुति है तथा उससे

धन, धान्य पशु, सन्तान आदि की प्रार्थना है। तथा च मांस, सत्तू, आदिसे यज्ञ करनेका विधानहै। सात प्रकारके ग्राम्य पशु मेरे हों, इस प्रकार की प्रार्थना है।

सूक्त ११ (यक्ष्मा)

इसमें ८ मन्त्र हैं, अंगिरा ऋषि, यक्ष्म नाशन देवता है। इसके प्रथम ४ मन्त्र ऋग्वेद मं० १ सू० १६१ में हैं तथाच पांचवां मन्त्र कां० ८-११ में है। च० कां० पूर्वके चार मन्त्र कां० २०-९६ में भी है। पहले भी अनेक बार यही वर्णन आचुका है। देखो सूक्त ७।

सूक्त १२ (शाला)

इसमें ९ मन्त्र हैं, ब्रह्मा ऋषि, शालादेवता है। इस का अन्तिम मन्त्र काँ० ९ सू० ३ में आया है। वास्तव में शाला बनाने का विधान नहीं है, यहां यह सूक्त व्यर्थ है। ये घर बांस और तिनकों के बनते थे ऐसा ही कां० १९ में लिखा है।

सूक्त १३ (जल,)

भृगु ऋषि, वरुण देवता है। इसमें ७ मन्त्र हैं, जलोंका वर्णन है। प्रथम काण्डमें वर्णन कर चुके हैं।

सूक्त १४ (गौ)

इसमें ६ मन्त्र हैं, ब्रह्मा ऋषि है तथा गावः देवता है। इसमें गौवों की चोर, व्याघ्र आदिसे रक्षा करने का आदेश है, तथा उनकी सेवा करनेका आदेश है, और उनके लिये साफ स्थान बनाने चाहिये इत्यादि बातों का वर्णन है। दूध, घृत, दही, उपलोंका भी जिक्र है।

सूक्त १५ (व्यापार)

इसमें ८ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है, विश्वेदेवा देवता हैं इस के मन्त्र, का पूर्वार्द्ध, २ कां० ६ सू० ५५-१ में आया है। मन्त्र, ३ ऋग्वेद, ३-१८ में आया है तथा मन्त्र, ४ का पूर्वार्ध ऋ० १-३१-१६ में आयाहै। मन्त्र ८ वां यजु० अ० ११ तथा अथर्व० १९-५५ में आयाहै इस प्रकार यह सूक्त इधर उधरसे एकत्रित किया है। इसमें व्यापारमें लाभ के लिये प्रार्थना है।

सूक्त १६ (प्रार्थना)

इस में ७ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है, तथा अनेक देवता हैं। इस में प्रातः काल करने की प्रार्थना है। यह सूक्त ऋ० मं० ७ सू० ३४ में भी आया है। अतः यह सूक्त भी यहां निरर्थक है।

सूक्त १७ (कृषि)

इस में ९ मन्त्र हैं, विश्वामित्र ऋषि है, सीता देवता है। इस में खेती का वर्णन है। यह सूक्त भी यजु० अ० १२ तथा ऋग्वेद से संग्रह किया गया है। इसके पांच मन्त्र तो यजु० अ० १२ में आये हैं, तथाच सम्पूर्ण सूक्त ऋग्वेद में यत्र तत्र आया है। अतः यह भी यहां ग्रन्थ विस्तार के सिवा कुछ लाभ प्रद नहीं है।

सूक्त १८ (पाठा औषधि) सौत।

अथर्वा ऋषि वनस्पति देवता है। ६ मन्त्र हैं, पाठा औषधि से सौत को दूर भगाने की प्रार्थना है। यह सम्पूर्ण ऋ० १०-१४५ में आया है। तथा पांचवा मन्त्र अथर्व० कां० ११-३२ में भी आया है। ऐसी बातों से यह वेद परिपूर्ण है। यह सूक्त भी यहाँ व्यर्थ है।

सूक्त १९ (पुरोहित की प्रार्थना)

इस में ८ मन्त्र हैं, वसिष्ठ ऋषि, विविध देवता, इस में पुरोहित की राजा के लिये यश और राज

वृद्धि तथा शत्रु नाश की प्रार्थना है। यह भी सम्पूर्ण सूक्त, तीनों वेदों में से संगृहीत किया गया है। येभी प्रार्थनायें पहले भी आ चुकी हैं, अतः यहां यह व्यर्थ है।

सूक्त २० (ऐश्वर्य)

इस में १० मन्त्र हैं, वसिष्ठ ऋषि, अग्नि देवता है। इस के आठ मन्त्र ऋग्वेद तथा यजुर्वेद में आये हैं। ऐश्वर्य की देवों से प्रार्थना है।

सूक्त २१ (अग्नि स्तुति)

मन्त्र १० हैं, वसिष्ठ ऋषि अग्नि देवता है सम्पूर्ण सूक्त में अग्नि की स्तुति है। इस के चतुर्थ मन्त्र का पूर्वार्ध ऋ० ८-४३-११ में आया है।

सूक्त २२ (तेज की प्रार्थना)

मन्त्र ६, वसिष्ठ ऋषि वर्चोदेवता। देवोंमें सम्पूर्ण तेजस्वी पदार्थों के तेज मुझ में हों यह प्रार्थना है। इस का दूसरा मन्त्र साम० पू० २-६-१० में आया है।

सूक्त २३ (वन्ध्या)

इसमें ६ मन्त्र हैं। ब्रह्मा ऋषि तथा चन्द्रमा व योनि देवता। इस के छठे मन्त्र का पूर्वार्ध कां० ८-३-२ में आया है। वन्ध्यापन को दूर करने की प्रार्थना है।

सूक्त २४ (धान्य प्रार्थना)

मन्त्र ७ हैं भृगु ऋषि है, वनस्पति, व प्रजापति देवता है। प्रथम मन्त्र कां० १८-३ में तथा पूर्वार्ध, १०-१७ में आया है। सारवाली वाणी तथा धान्यों की प्रार्थना है।

सूक्त २५ (काम सूक्त)

मन्त्र ६ हैं, भृगु ऋषि कामेषु देवता है। कामातुर का प्रलाप है। विशेष वर्णन कां० २ सू० ३० में कर चुके हैं।

२६-२७ (गन्धर्व देवों से प्रार्थना)

दोनों में १२ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है, अनेक देवता हैं। सन्ध्या में जो मनसा परिक्रमा के मन्त्र दिये हैं वे मन्त्र हैं। दोनों सूक्तोंमें दिक्पाल देवों से विषवाले जन्तुओं तथा शत्रुओं से बचने की प्रार्थना है। दोनों सूक्तों में प्रायः समान ही मन्त्र हैं। तथा ४ श्लोकों में सम्पूर्ण भाव आ सकता है।

सूक्त २८ (यमिनी गौ)

इसका ब्रह्मा ऋषि तथा यमिनी देवता है। जिस गौ के यमज बच्चे उत्पन्न हुये हैं उस के अशकुन को हटाने की प्रार्थना है तथा मंत्र एक में लिखा है कि सृष्टि की आदि में एक एक ही जोड़ा उत्पन्न हुआ था सायण ने ऐसा ही अर्थ किया है, सूक्त नवीन काल की रचना है।

सूक्त २९ (श्वेत भेड़)

इस में ८ मन्त्र हैं, उद्दालक ऋषि है. शितिपाद् अवि देवता है। इसका सातवां मन्त्र यजु० अ० ७-४८ में आया है। सफेद रंगकी भेड़, ब्राह्मण को दान देने से स्वर्ग का द्वार खुल जाता है, यह आदेश है। सूक्त की भाषा अत्यन्त अर्वाचीन काल की है। सातवां मन्त्र प्रकरण विरुद्ध स्पष्ट अलग प्रतीत होता है सम्पूर्ण सूक्त का भाव २ श्लोकों में आसकता है।

सूक्त ३० (परस्पर प्रेम)

मन्त्र ७ हैं, अथर्वा ऋषि, सामनस्य देवता है। सम्पूर्ण सूक्त सुन्दर है नित्य पठनीय है मित्रता प्रेम का उपदेश देता है।

सूक्त ३१ (आयु वृद्धि)

मन्त्र ११ हैं, तथा ब्रह्मा ऋषि है, पाप देवता है। बालक के लिये पापसे पृथक रहने तथा दीर्घ आयुकी

प्रार्थना है। सूक्त शिक्षा प्रद है परन्तु विस्तार व्यर्थ है।

इस प्रकार इस काण्ड में अनुमान ६४ मन्त्र अन्य वेदों के हैं। कुल २३० मन्त्र है।

चतुर्थ काण्ड

इस काण्डमें ४० सूक्त हैं तथा ३४० मन्त्र हैं।

सूक्त १-२ (सूर्य)

पहले सूक्त में ७ मन्त्र हैं, 'वेन' ऋषि है तथा बृहस्पति व आदित्य देवता हैं। प्रथम मन्त्र का० ५-६ में तथा यजु० अ० २३ में आया है। सम्पूर्ण सूक्तमें सूर्य और बृहस्पति की स्तुति आ चुकी है। श्रद्धालु गण इसको ईश्वरपरक लगाते हैं। का० २ सू० १-२ में भी ऐसी स्तुति आ चुकी है।

सूक्त २ में आठ मन्त्र है, पूर्वोक्त देवता तथा ऋषि है।

यह सूक्त ऋ० मं० १० सू० १२१ में तथा यजु० अ० २७ में से संग्रह किया है, बड़ी बुद्धिमानी से इस सूक्त का निर्माण किया गया है, किसी मन्त्र का पूर्वार्द्ध लियागया है तो किसी का उत्तरार्द्ध, किसी मन्त्र के एक दो शब्दों को पलट दिया है। अस्तु, आठवां मन्त्र ऋ० १०-१२, में है। ऋ० में इसका ऋषि हिरण्य गर्भ प्रजापति है: तथा देवता 'क' है। अस्तु: इसमें भी सूर्य का ही वर्णन है। सृष्टि उत्पत्ति का भी वर्णन है।

सूक्त ३ (हिंसक पशु)

इस में ७ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है तथा व्याघ्र देवता है। व्याघ्र, चोर, भेड़िया जंगली कुत्ता, सांप शत्रु, राक्षस, गोधा, सिंह, इन से बचने की प्रार्थना है। इस के मन्त्र २ का उत्तरार्द्ध तथा मन्त्र ५ का पूर्वार्द्ध का० १६ सू० ४७ तथा सू० ४६ में आया है। पहले भी ऐसी प्रार्थनायें आचुकी हैं।

सूक्त ४ (काम)

इस में ८ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि है तथा वनस्पति देवता है। कैथ की जड़ से तथा मन्त्र प्रभाव से, वाजीकरणका वर्णन है। छठा मन्त्र का० ६ सू० १०१ में आया है, वहां भी ऐसा ही वर्णन है। २ श्लोकों में सारा वर्णन आ सकता है।

सूक्त ५

इस में ७ मन्त्र है, ब्रह्मा ऋषि तथा ऋषभ देवता है। इस के मन्त्र २-४-७ को छोड़ कर चार मन्त्र ऋ० मं० ७ सू० ५५ में आये हैं। वहां वसिष्ठ ऋषि है तथा इन्द्र देवता है। विशेष का० २ सू० ३ में लिख चुके है।

सूक्त ६-७ (सांप)

इन दोनों में १५ मन्त्र है, गरुत्मान ऋषि तथा तक्षक और वनस्पति देवता है। सू० ७ का० सातवां मन्त्र का० ५-६-२ में आया है तथा सू० ६ के दूसरे मन्त्र का पूर्वार्द्ध यजु० ३८-२६ में आया है। सांपों तथा उस से बचने का कथन है, एवं मन्त्र आदि से सांप विष को दूर करने का आदेश है। अथर्व वेद के का० १० सू० ४ में सर्पों के अनेक नाम गिनाये हैं। तथा का० ७ सू० ५६ में इन के विषों को दूर करने का विशेष कथन है। तथाच सामान्यतया, का० ११-२-२४, २०-१२६-१७, ३-२७, ५-१३, २-२४ ५-१८, १०-१, ४-३, १६-४७, २-२४, ७-५ ८-१४ १२-१, १८-३, का० ५-१३ में भी विस्तार पूर्वक कथन है। इस विषय में पं० सातवलेकर जी ने एक सुन्दर पुस्तक वैदिक सर्पविद्या नामक लिखा है। पाठक

उसे देखें, इस में जादू को सत्य माना है। अथर्व वेद में इस विषयक जिस जादू का कथन है उसको लोकमान्य तिलक महोदय ने "ईरानी" सिद्ध किया है तथा यहां के शब्द भी उसी भाषा के बतलाये हैं

सूक्त ८ (राजाभिषेक)

मन्त्र ७, अथर्वाङ्गिरा ऋषि, चन्द्रमा आपो वा देवता। इस का ३ रा मन्त्र ऋ० ३-३८ में आया है। राजाभिषेक का कथन है, कां० १-२-३, में भी पूर्व आ चुका है। अतः यहां यह व्यर्थ है।

सूक्त ९ (अञ्जन औषधि)

मन्त्र १०, भृगु ऋषि, त्रैककुद अञ्जन देवता। इस का चतुर्थ मन्त्र तथा सातवां मन्त्र ऋ० १०-९७ में आया है यहां अञ्जन औषधि की स्तुति है तथा उससे रोग, भूत, प्रेत विष को दूर करने की प्रार्थना है। यह त्रिककुद (मूञ्जवान) पर्वतपर होती है ऐसा इसमें लिखा है।

सूक्त १० (शंखमणि)

मन्त्र ७, अथर्वा ऋषि तथा शंखमणि देवता। इस में शंखकी स्तुति है तथा उस से पूर्वोक्त सब प्रार्थनायें हैं।

सू० ११ (ऋषभ देव)

मन्त्र ११, अंगिरा ऋषि अनड्वान देवता। इस में आदि ब्रह्मा प्रजापति का अनड्वान नाम से वर्णन है यह कथन श्री ऋषभदेव भगवान का ही है इस में किसी प्रकार का सन्देह नहीं है। इस का विवेचन हम स्वतन्त्र पुस्तक में करेंगे।

सूक्त १२ (लाक्षा)

इस में ७ मन्त्र हैं, भृगु ऋषि है, वनस्पति देवता है। लाक्षा औषधि की स्तुति है, इसे शस्त्रादि से कटे अंग को जोड़ने वाली कहा है।

सूक्त १३ (आयु रक्षा)

मन्त्र ७, शंतातिऋषि, विश्वेदेवा देवता है। इस के प्रथम के चार मन्त्र ऋ० १०-१३७ में है तथा छठा ऋ० १०-६० में आया है देवों से बालक की आयु-रक्षा की प्रार्थना है। ऐसी प्रार्थनायें पहले भी आ चुकी है।

सूक्त १४ (अग्नि)

मन्त्र ७, भृगु ऋषि है। आज्य अग्नि देवता है। प्रथम के पांच मन्त्र यजुर्वेद के हैं, ४ मन्त्र अ० २७ के तथा प्रथम मन्त्र अ० १३ का है। अग्निकी स्तुति है। प्रकरण गोलमाल कर दिया है क्योंकि इधर उधर के मन्त्रों का संग्रह सुचारु रूप से नहीं हुआ। सायणने इस में अजयाग का वर्णन किया है।

सूक्त १५ (वर्षा)

मन्त्र १५, अथर्वा ऋषि मरुत, व पर्जन्य देवता। इस का १३ वां मन्त्र ऋ० ७-१०३ में आया है वर्षा ऋतु का अच्छा कथन किया है, इस में भी असुर शब्द प्राणदाता के अर्थ में आया है। तथा सम्वत्सर के अन्त में यह ऋतु आती थी ऐसा संकेत है। इससे ज्ञात होता है कि पहले शायद आश्विन मास में वर्ष आरम्भ होता था। अथवा वर्षा ही किन्हीं और मासों में होती थी। इस पर विद्वानों को विचार करना चाहिये।

सूक्त १६ (वरुण)

मन्त्र ९, ब्रह्मा ऋषि, वरुण देवता। वरुण देवों के पाशों का वर्णन है। शत्रु नाश की प्रार्थना है। यह जल का देवता था आज भी सक्खर (सिन्ध) में वारणा पीर का स्थान है जो नदी के किनारे है, उस

में जल जन्तुओं की मूर्तियां हैं जब यह मन्दिर मुसलमानों के हाथ में चला गया तब वरुण से 'बारया पीर' होगया।

सूक्त १७ से २० तक (मणि ओषधि)

सू० १७ से १९ तक में २४ मन्त्र हैं तथा शुक्र ऋषि है और अपामार्ग ओषधि देवता है, तथा सू० २० में ९ मन्त्र हैं, तथा मात्री नामा ऋषि, ओषधि देवता है। इनके कई मन्त्र कां० ४ व ७ में आये हैं। अपामार्ग मणि (तावीज) कण्व ब्राह्मण को प्रचलित किया हुआ है ऐसा सू० १९ में लिखा है। उससे सब पिशाची रोग दूर होने की प्रार्थना है। यह ओषधि, सह देई है। तथा सू० २० में सद् पुष्पा ओषधि की मणि से वैसी ही प्रार्थना है। इन बातों को इतने विस्तारसे लिखनेकी क्या आवश्यक्ता थी? इसको मन्त्रकर्ता ही जाने।

सूक्त २१ (गो)

मन्त्र ७ ब्रह्मा ऋषि, 'गो' देवता है। मन्त्र २-३-४वें ऋ० ७-५८ में तथा मन्त्र, २रा ऋ० ६-२८में मन्त्र ५वां ऋ० ७-५८ में आया है। गौवें प्राप्त होने की प्रार्थना है। ऐसी ही प्रार्थना पूर्व आचुकी है।

सू० २२ (राज्याभिषेक)

मन्त्र ७ वसिष्ठ ऋषि, इन्द्र देवता। इन्द्र से राजा होने के लिये प्रार्थना है। अनेक बार आचुकी है, अतः यह व्यर्थ है।

सूक्त २३ से २९ तक (विश्वेदेवा स्तुति)

सब सूक्त सात २ मन्त्रों के हैं। मृगार ऋषि तथा विविध (नाना) देवता। सातों सूक्तों में अग्नि इन्द्र, सूर्य, वायु, मरुत, आदि देवों की स्तुति है। तथा सू० २९ में अनेक प्रसिद्ध ऋषियों के नाम आये है जिनका अर्थ इतिहास परक ही होसकता है। (मुञ्चतमंहसः) यह समस्या थी जिसको कि अनेक कवियोंने अपने २ आराध्य देवों की स्तुति से पूरा किया है। सम्पूर्ण वर्णन १० श्लोकों में आसकता है। तथाच पूर्व भी ऐसी प्रार्थनायें आचुकी हैं।

सूक्त, ३० (आत्मज्ञान)

मन्त्र, ८ अथर्वा ऋषि, वाक देवता। गीता अध्याय १४ में जो आत्म ज्ञान का वर्णन है उसी प्रकार का तद्रूप यहां भी है। यह सम्पूर्ण सूक्त ऋ० १०-१२५ से यहां लिया गया है।

सूक्त ३१-३२ (क्रोध)

मन्त्र १४, ब्रह्मा ऋषि, मन्यु देवता। इसके प्रथम के पांच मन्त्र ऋ० १०-८४ में आये हैं। मन्यु देवता की स्तुति है। तथा सूक्त ३२ के ७ मन्त्र, ऋ० १०-८३ में आये हैं। विषय वही है।

सूक्त ३३ (अग्नि)

मन्त्र ८, ब्रह्मा ऋषि, पाप नाशक अग्नि देवता। सम्पूर्ण सूक्त ऋ० १-९७ में से लिया गया है। अग्नि से पाप नाशकी प्रार्थना है। यहां भी (अपनः शोशुचदघम्) यह समस्या पूर्ति है।

सूक्त ३४-३५ (स्वर्ग)

दोनों में १५ मन्त्र है, अथर्वा ऋषि है तथा विष्टारी ओदन देवता है। स्वर्ग (बहिश्त) का वर्णन है जैसा कुरान आदि में वर्णन है तद्रूप ही यहां भी है, सू० ३४ के मन्त्र, ५ में, मुलाली शब्द आया है, यह शब्द तेलंग भाषा में अभी भी उद्यान (बाग) का वाचक है। जब हम हैदराबाद रियासत में प्रचार करने गये थे उस समय हम को इस का पता लगा था। महाराष्ट्र भाषा में इस को, मल्ला कहते हैं।

यह ओदन क्या है यह विषय विचारणीय है। अनेकों ने इस को गृहस्थ प्रकरण में लगाने का प्रयत्न किया है परन्तु उनको सफलता प्राप्त नहीं हो सकी क्योंकि सम्पूर्ण सूक्त की संगति नहीं लग सकी।

सू० ३६-३७ (शत्रुनाश)

दोनों में २२ मन्त्र हैं, चातन ऋषि है तथा अग्नि देवता है। दोनों सूक्तों में शत्रुओं, राक्षसों को भस्म करने की अग्नि से प्रार्थना है। सू० ३७ में प्रसिद्ध ऋषियों के नाम आते हैं। तथा गन्धर्वों का स्थान नदी बतलाया है, तथा उनको कामी बतलाया है। तथा अनेक जानवरों का भी जिक्र आगया है, तथा कुत्ता सिंह से डर कर छुप जाता है, यह भी कहा है। पहले भी ऐसा वर्णन कई बार आ चुका है अतः व्यर्थ है।

सूक्त ३८ (जुआ) द्यूत।

मन्त्र ७ बादरायणि ऋषि, अप्सराग्लहाश्च देवता।

इस सूक्तमें जुवका वर्णन है। गन्धर्वों की स्त्रियां (अप्सरायें) इस विषय में दक्ष होती थीं। जुआरी लोग उनको जुआ खिलाने पर अपने पास रखते थे, तथा बहेड़े की लकड़ी के बने हुये ५३ पासों से यह जुआ खेला जाता था। एक से पांच तक के पासे 'अय' कहलाते हैं, उन में पांचों की 'कलि' संज्ञा है तथा चार पासे 'कृत' कहलाते हैं, अथवा चार का 'कृत' और पांच का कलि कहलाता है।

तैत्तिरी ब्रा० १।५।११।१

जिसके, कृत, पासा आता था उसी की विजय होती थी। इसी लिये ऋग्वेद, १।४१।६ में, कृत का अयन पाने वाले कितव से डरने की सलाह दी है। तथा निरुक्तकार ने भी '३।१६' में यही आदेश किया है। इन जूवों में 'अक्ष' नाम का जूवा सब से भयानक होता था। तथाच यजुर्वेद अ० ३० मंत्र १८में लिखा है, "अक्षराजाय कितवम्, कृतायादिनवदर्शनम्, त्रेतायै कल्पिनं, द्वापरायाधि कल्पिनं आस्कन्दाय सभास्थाणुम्।" यहां भी इन्ही पासों का वर्णन है। जो सज्जन यहां से सतयुग आदि निकालते है वे लोग हठधर्मी करते हैं, क्यों कि इन युगों की कल्पना का भाव किसी भी प्राचीन आर्ष ग्रन्थ में नहीं है, अपितु यह अत्यन्त नवीन कल्पना है। इसी बात को पं० शिवशंकरजी काव्यतीर्थ आर्यसमाज के सब से बड़े वैदिक विद्वान ने भी अपनी पुस्तक वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है में स्वीकार ही नहीं किया है अपितु बलपूर्वक कहा है कि यह युगों की कल्पना अवैदिक और अत्यन्त अर्वाचीन है। आज भारतवर्ष के सभी ऐतिहासिक विद्वानों का भी यही मत है अतः यहां सतयुग आदि का वर्णन नहीं है। इस का विशेष कथन आगे यथास्थान करेंगे। आर्यसमाज के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान पं० सातवलेकरजी ने भी यहां इन युगों का अर्थ नहीं किया है। अस्तु, इस जूवे का विशेष वर्णन का०७ सू० ५२ तथा सू० १४४ में है, तथा ऋग्वेद में भी है जब इसने भयानक रूप धारण किया तो इसके नियम बनाये गये तथा अधिक खेलने वालों को दण्ड का विधान भी किया गया; जब उससे भी काम न चला तब इसको धर्म विरुद्ध घोषित किया गया तथा इसको पाप करार दे दिया गया। निरुक्त कार ने ५ २२ में कितव (जुआरी) शब्द की व्याख्या इस प्रकार की है — कि तवास्तीति

शब्दानुकृति तेरा क्या है 'किं तव' इस शब्दकी अनुकृति करके कितव शब्द कहा जाता है। जुआरी जब हार जाता है तो उससे सब कहने लगते हैं कि 'किं तव' अर्थात् तेरा क्या है। अथवा खेलते समय कहते हैं कि इस दाव पर तेरा क्या है।

सूक्त ३९ (सम्पत्ति)

मन्त्र-१० अथर्वा ऋषि सम्पत्ति देवता। अग्नि से सम्पत्ति की प्रार्थना है।

सूक्त ४० (राक्षस, शत्रु)

मन्त्र ८ शुक्र ऋषि, कृत्या हरणाय वरुणो देवता अग्नि से शत्रुओं के नाश की प्रार्थना है।

इस प्रकार यह चतुर्थ काण्ड समाप्त हुआ। इस काण्ड में प्रायः ७० मन्त्र अन्य वेदों के हैं कुल ३२४ मन्त्र हैं।

पांच पाप

(लेखिका—कुमारी ललिता)

(पूर्व प्रकाशित से आगे)

चौथा पाप कुशील है। कुशील नाम अब्रह्म अर्थात् अब्रह्मचर्य का है। इस पापका उल्टा चौथा व्रत ब्रह्मचर्य व्रत है। दूसरे शब्दों में यों कहना चाहिये कि ब्रह्मचर्य का पालन नहीं करना ही कुशील सेवन करना है। शील शब्दसे आचरणका भाव होता है वैसे आचरण शब्द से हर एक प्रकार का आचरण लिया जा सकता है पर यहां शील शब्द से ब्रह्मचर्य ही लेना चाहिये। इसी लिये हम लोग कुशील से उन्हीं स्त्री-पुरुषों को कहते हैं जो अपने ब्रह्मचर्य व्रतसे डिग मगा जाते है। ऊपर कहा जा चुका है कि कुशीलका दूसरा नाम अब्रह्म भी है। उमास्वामी ने 'मैथुनमब्रह्म' इस सूत्र से मैथुन अर्थात् ब्रह्मचर्य के अभाव को ही कुशील ठहराया है। इस लिये कुशील को समझाने के लिये पहले ब्रह्मचर्य का स्वरूप बतलाना ठीक होगा।

ब्रह्मचर्य का पालन दो प्रकार से किया जाता है। एक स्वदार या स्वपति संतोष रूप से और दूसरा स्त्री या पति का सर्वथा त्याग रूप में। दूसरा रूप आदर्श है और वह कम से कम ब्रह्मचर्य प्रतिमा से निम्न श्रेणी वाले मनुष्यों में पालन नहीं किया जाता है। प्रथम रूप वह है जिसे हर एक स्त्री पुरुष पालन कर सकते हैं और कर्त्तव्य दृष्टि से पालन करना चाहिये। चूंकि ब्रह्मचर्य के दो भेद हैं, कुशील का त्याग भी एक देश और सर्वथा दो प्रकार से किया जाता है।

जो पुरुष अपनी स्त्री को छोड़ कर अन्य सब स्त्रियों को मा बहन के समान समझता है वह कुशील पाप का एक देश त्यागी है, इसी तरह जो स्त्री अपने विवाहित पुरुष को छोड़ कर अन्य सब पुरुषों को पिता या भाई के समान समझती है वह स्त्री इस

पाप को एक देश रूप से छोड़े हुए हैं। तथा जो स्त्री-पुरुष अब्रह्म मैथुन को सर्वथा छोड़े हुए हैं वे कुशील सेवन के सर्वथा त्यागी हैं।

कुशील सेवन आजकल की दुनियां में पाप की कोटि में नहीं गिना जाता है यह कितने लज्जा की बात है। ज्यों २ विज्ञान की तरक्की होती जाती है त्यों २ लोग इसे पाप समझना तो दूर रहा पर एक सभ्यता और शिष्टता समझने लगे हैं। यह सब हम लोगों की कामुकता का परिचायक है। हमारा हिन्दुस्तान तो फिर भी जरा इस पाप से परहेज रखता है। और उन स्त्री पुरुषों के लिये जो कुशील सेवी हैं शासन दण्ड हाथ में रखता है। यद्यपि पश्चिमी विलायतों की कृपा से भारत में भी उसी तरह का रंग ढंग दिनों दिन अधिकाधिक रूप में दिखने लगा है। इस विषय में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक उच्छृंखल और स्वच्छंद हैं। जो कुछ मन में आता है बिना किसी रुकावट के कर डालते हैं सच तो यह है कि पुरुष समाज में शायद कुशील सेवन अथवा परस्त्री सेवन कोई पाप की श्रेणी में शुमार नहीं है। बल्कि यह तो उन की मर्दमी और कोकशास्त्र कुशलता का बोलता चालता प्रमाण है।

मैं ने जो पहले शासन दण्ड की बात कही तो वह स्त्रियोंके लिये है, न कि पुरुषोंके लिये। समाज का शासन-चक्र चूड़ीवाली स्त्रियां पर चलता है न कि कृपाण धारी पुरुषों पर। आखिर वह शासन चक्र भी तो मर्दमी की डींग हांकने वाले पुरुषों ही का रह गया न। यह बात मनगढ़न्त और कल्पित नहीं है। आये दिन होने वाली ऐसी दर्दनाक घटनायें ही इस को खरी साबित कर देती हैं। छोटे बड़े सभी शहरों में जैनियों की संख्या के अनुसार ऐसी बहुत सी विधवा या सधवा बहनें हैं जिन को समाज ने बहिष्कृत कर रक्खा है। उसका कारण बतलाया जाता है व्यभिचार भ्रूणहत्या आदि। यह ठीक है कि अपराधी को अपराध का दण्ड अवश्य मिलना चाहिये परन्तु जहां इस तरह के अपराध होते हैं वहां पापी पुरुषों का अपराध अधिक रहता है और भोली स्त्रियों का बहुत कम परन्तु पंचों की न्याय की बलि-वेदी पर एक अबला का जीवन हंसी खुशी चढ़ा दिया जाता है और अत्याचारी पुरुष का बाल भी बांका नहीं होता। यह बात हम और आप सब जानते हैं कि ऐसे अमलों में पुरुषों का दोष मी रुपया जुर्माना योग्य है तो स्त्रियों का एक रुपया जुर्माना योग्य है। थोड़े दिनों की घटना है। मैं ने एक मेरी बहन के मुंह से सुनी थी। एक स्त्री १४ वर्ष की अवस्था में विधवा हो गई। उस ने दस वर्ष अपने ससुराल में संयम से व्यतीत कर दिये आखिर ससुराल में उसका कोई भी कुटुम्बी न रहा। लाचार होकर उसको अपने ननद के घर आश्रय लेना पड़ा। ननद के करीब एक ३० वर्ष का जवान लड़का था। जिस स्त्री ने दस वर्ष भरी जवानी के संयम और सदाचार से बिता दिये उस के लिये आगे की अवस्था उसी तरह बिताना कठिन न था परन्तु ननद के लड़के की कामान्धता के कारण उसे अपने सतीत्व से हाथ धोना पड़ा। वैसे यह उस दुष्ट पुरुष की मा समान होती थी पर कामी पुरुष तो काम से अन्धे होकर अपनी सगी मा के सम्बन्ध को भी भूल जाते हैं। निदान उस स्त्री के गर्भ रहगया बस अब क्या था! लोग एक पाप को छिपाने के

लिये उस से भी भयंकर पाप कर बैठते हैं। उस दुष्ट को अब भ्रूण हत्या करने की सूझी। यात्रा के बहाने वह अपनी मामी को बड़े २ शहरों में लेगया पर जहां कहीं वह गया डाक्टरों ने भ्रूण हत्या करने से इन्कार कर दिया। आखिर बच्चा पैदा होने के दिन सन्निकट आगये और उसको जंगलमें बच्चा पैदा करना पड़ा। बच्चा उसी समय गढ़वादिया गया और जच्चे को जाडे की ठंडी ठंडी रात्रि के समय बर्फ समान ठंडे पानी से स्नान कराया गया। पापी पुरुष का उद्देश पूरा हुआ। अभागी अबला उसी दम मूर्छित होकर अपनी जान गवा बैठी। यदि वह स्त्री जीवित रहती तो केवल पराधीनता और जीविका के चक्र में फंसकर किये गये पाप से समाजबहिष्कृत तो होती ही पर साथ में न मालूम स्वयं उसके सगे सम्बन्धी क्या क्या अत्याचार करते पर पापी पुरुष एक अबला स्त्री का सतीत्व भंग कर के और दो निरपराध व्यक्तियों की हत्या करके आज भी समाजमें अग्रगण्य बना बैठा है।

एक ताजी घटना को सुनिये. एक स्त्री को बनोर एक रसोई करने वाली के अपने घर में रख ली, और करीब दो वर्ष तक उससे अनुचित लाभ उठाता रहा जिससे उस स्त्री के गर्भ रह गया। गर्भ के बढ़ जाने पर पुरुष की सलाह से उस स्त्री को इच्छा न रहते हुवे भी गर्भपात करना पड़ा। यह बात आसपास के सब लोगों में फैल गई। उसका सारा कमरा लोहूं लुहान हो रहा था और भ्रूण के टुकड़े इधर उधर बिखरे हुवे थे। वह पुरुष बड़े असमंजसमें पड़ गया और इस बदनामी से बचने का उपाय सोचने लगा। कोतवाली में इस समाचार के पहुंचते ही पुलिस ने मौके पर पहुंच कर उस स्त्री को गिरफ्तार कर लिया। इसके बाद क्या हुआ सो निश्चय नहीं पर इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि ऐसे मामलों में पुरुष ऐसे अपराधों के लिये कितने जिम्मेवार हैं और स्त्रियां कितनी हैं। खैर क्या कहना चाहती थी और क्या कह गई। कुछ भी हो चाहे स्त्रियां इस विषय में अधिक भाग लेती हों या पुरुष, पर यह तो निर्विवाद है कि ऐसे पापों का आजकल दौरदौरा बहुत अधिक है।

आजकल ऐसे स्त्री पुरुषों की संख्या भी कम नहीं है जो व्यभिचार को कोई पाप नहीं समझते। कोई आश्चर्य नहीं कि पाश्चात्य विलासिता में रंगे हुए नवयुवक ही ऐसे विचारों में ग्रस्त हों। पाप वही है जो हमारे लिये दुःख का कारण हो और अनिष्ट कर हो। व्यभिचार एक ऐसा पाप है जो एक के लिये ही नहीं वरन् कभी २ मनुष्य समुदाय के लिये आकुलता और संक्लेश परिणामों का कारण हो जाता है। स उदाहरण से आप सब परिचित हैं। जिन्होंने रामायण पढ़ी है वे कभी व्यभिचार को पाप स्वीकार करने से नहीं हिचक सकते। व्यभिचार की बात तो दूर रही पर आचार्यों ने कुशील एक देश त्याग करने वाले अर्थात ब्रह्मचर्याणुव्रत धारियों को किसी दूसरे का विवाह कराना भी अतिचार बताया है। इस प्रकार कुशील का संक्षिप्त वर्णन हुआ।

पांचवा पाप परिग्रह है॥

परिग्रह का लक्षण उमास्वामि ने 'मूर्छा परिग्रहः' इस प्रकार किया है। मूर्छा का अर्थ ममत्व है।

१० बाह्य, १४ अंतरंग, ऐसे परिग्रह २४ प्रकार का है, जो इनमें जितना अधिक ममत्व रखता है वह उतना ही परिग्रह पाप अधिकाधिक बढ़ाता है।

लोग समझते है जिस के पास जितना अधिक परिग्रह है वह उतना ही सुखी है पर बात वास्तव में यह नहीं है। सुख का सम्बन्ध बाहरी कपडे लत्तों से व महल मकानों तथा जेवर जवाहरातों मे नहीं है। सुख का सम्बन्ध आत्मा से है। महल मकान तथा जेवर जवाहरात ये पौद्गलिक पदार्थ हैं और आत्मा एक चेतन पदार्थ है। पौद्गलिक चीजों से आत्मा सुखी हो जाय यह कैसे हो सकता है। इसलिये परिग्रह शाली मनुष्य सुखी है यह बात मिथ्या है बल्कि यों कहना चाहिये जिस आत्मा में शांति एवं संतोष की ठंडी लहरें बह रही हैं वही आत्मा सुखी है। जो आकुलता रहित है वही सुखी है। 'आकुलता बिन है सुख' यह पंडित दौलतराम जी का कथन बहुत यथार्थ है।

रात दिन धन की हाय हाय में सुलगने वाले तथा महल में रहने वाले मनुष्य की अपेक्षा झोंपड़ी में रहने वाला वह किसान बहुत अधिक सुखी है जो संतोष से अपनी आजीविका चलाता है। जिस के पास अधिक परिग्रह होगा वह वह हमेशा चिन्ता रूपी अग्नि में सुलगता रहेगा। जो परिग्रह अग्नि में सुलगाने वाली है वही सुख का कारण है यह समझ में नहीं आता। सादगी और संतोष में जो आनन्द है वह विलासिता मे कभी नहीं होसकता। विलासिता में जो हम लोगों को आनन्द का अनुभव होता वह उसी तरह का है जो कुत्ते को हड्डी चबाते हुए अपने ही रक्त आस्वादन में होता है। यह प्रश्न हो सकता है कि जब परिग्रह में दुःख ही दुःख है तो दुनिया उसके पीछे क्यों इतनी हाथ धोकर पड़ी हुई है? उत्तर-भ्रमर समझता हुआ भी कमलको अपनाता है और उसमें पड़ कर अपने प्राण खो देता है उसी प्रकार सांसारिक प्राणी भी परिग्रह को दुःख का कारण जानते हुए भी उसमें ममता रखते हैं।

यदि जीवन में सुख प्राप्त करना चाहते हो तो सदा सादगी, संतोष और त्याग को अपनाओ। इसी में आत्मा का आनन्द कूट २ कर भरा हुआ है परिग्रह और विलासिता से कोसों दूर रहो जो हम को सुखाभास के प्रलोभन में फंसा कर जन्म जन्मान्तरों के सुख से वंचित कर देते हैं।

समाप्त
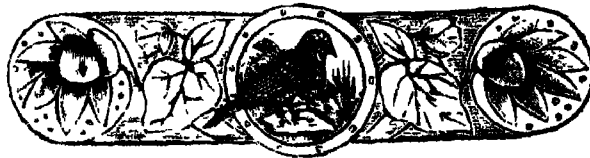
श्रीमान रा० सा० ला० नेमिदास जी का

भाषण

श्री भारतवर्षीय दि० जैन शास्त्रार्थसंघ के उपदेशक विद्यालय के उद्घाटन के समय जेठ सुदी पंचमी ता० २५-५-३६ के दिन उद्घाटन कर्ता श्रीमान रायसाहिब ला० नेमिदास जी ने जो भाषण दिया था। वह प्रकाशित किया जाता है।

—संपादक

मोह महातम दलन दिन- तप लक्ष्मी भरतार।
ते पारश परमेश मुझ-होउ सुमति दातार॥

पूज्य त्यागी वर्ग, विद्वन्मंडली वा माननीय सज्जनो तथा आदरणीय महिलागण!

आज श्रुतपंचमी का परम पावन दिवस है। प्राचीन काल में आज ही की शुभ तिथि में श्री जिनवाणी की रक्षा का कार्य प्रारम्भ हुआ था। आज देश के कोने कोने में जैन-शास्त्रों की पूजन और भक्ति हो रही है। इस समय आप सर्व धार्मिक बन्धुओं को इस स्थान पर देखकर मेरा हृदय हर्ष से फूला नहीं समाता! आज इस मंगलमय सुवर्ण अवसर पर आप सज्जन इस जैन उपदेशक विद्यालय के उद्घाटन-कार्य के लिये एकत्रित हुए हैं। जैन समाज में बड़े २ प्रसिद्ध अनुभवी और योग्य विद्वान उपस्थित हैं। क्या ही अच्छा होता कि आप मेरे से योग्य व्यक्ति को उन में से किसी एक को निर्वाचित करते? अब तो आप से मेरा यही निवेदन है कि आप मुझे अपना सहयोग और सहायता दें।

यह स्थान (अम्बाला) पंजाब प्रांत में जैन जनता की अपेक्षा मुख्य नगरों में से है। यहाँ के जैन मन्दिर, जैन-संस्थाएं और धार्मिक शैली प्राचीन, प्रशंसनीय और अनुकरणीय है। यहाँ के धार्मिक उत्साही बन्धुओं ने आज से ६ वर्ष पूर्व श्री जैन शास्त्रार्थ संघ का अङ्कुरारोपण किया था पहिले यह यहां की स्थानीय संस्था थी। किन्तु इसके विचार-शील संचालकों के उद्देश्य और कार्य प्रारम्भ से ही उदार एवं विशाल थे। अतः इस का कार्य क्षेत्र समस्त जैन समाज होगया। यही कारण था कि इस के शैशव-काल की २ वर्ष की आयु में ही इस संस्था का नाम "श्री अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रार्थ संघ" हो गया। और २ यह संस्था पल्लवित पुष्पित और फलित होती गई, इस के मधुर फलों का आस्वादन जैन समाज ने लिया। इस संस्था की उन्नति का प्रधान श्रेय यहां के साधर्मी भाइयों व इसके संरक्षक श्रीमान लाला शिब्बामलजी और इसके सुयोग्य महा- मंत्री पं० राजेन्द्रकुमार जी जैन न्यायतीर्थ को है; जिनके शुभ प्रयत्नों व कार्यों से यह प्रति दिन बढ़ती जा रही है, ऐसी संस्था की समाज में बड़ी आवश्यकता थी। Necessity is the mother of invention. अर्थात् आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।

२० वीं सदी विकास-युग है। इस के प्रारंभ होते ही संसार में उथल पुथल मच गई थी। भारत वर्ष में भी राजनैतिक धार्मिक सामाजिक आध्यात्मिक

आन्दोलन करने वाली संस्थायें कायम होने लगीं। लेकिन जैन जनता सोई हुई थी। समाज के सेवकों के व्याख्यान उस पर असर न कर सके। देश में सामाजिक व धार्मिक आन्दोलन होने लगे जैन समाज भी इसके प्रभावसे बचा नहीं। जैन सभायें स्थापित होने लगीं, जिनसे जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार तथा सामाजिक सुधारों की आशा थी। किन्तु असंगठन, अज्ञानता, कुरीतियों और अन्ध विश्वास ने जैन समाज की भीतरी अवस्था को अर्जरित कर दिया। समाज के नेताओं ने इन दोषों को हटाने का ज्यों ही प्रयत्न किया उसी समय मतभेद और "पंडितपार्टी बाबूपार्टी" के कलह रूपी भयंकर अजगर ने समाज रूपी भोली हिरणी को घेर लिया। जैन समाज की यह अवस्था लग भग १७ वर्ष से है। संसार का इतिहास बताता है कि विचार विभिन्नता हर देश और प्रत्येक जातियों में हुई है, किन्तु जैन समाज की सी विषमयी विचार विभिन्नता कभी भी और कहीं भी नहीं हुई होगी! जैन समाज की अवस्था को इसने बिलकुल निश्चेष्ट सा बना दिया है। एक नेता यदि पूर्व को ले जाना को चाहता है तो दूसरा उस से बिलकुल विरुद्ध पश्चिम को ले जाना चाहता है। शास्त्र की आज्ञा, संसार का गति, जाति की उन्नति और अवनति आदि को देखने और विचारने तक की इन्हें इच्छा नहीं होती। भोली समाज जाल में फसी हुई हिरणी के समान कातर दृष्टि से अश्रुधारा बहा रही है। इस समय एक कवि का वचन याद आता है:—

यह घोर क्रन्दन नाद कैसा, निकट है या दूर है।
धरती से आकाश तक, दुख दर्द से भर पूर है॥

जैन समाजकी इस अवस्था पर अजैनोंको तरस आता है। किन्तु इस समाज के नेताओं के हृदय नहीं पसीजते! इस मतविभिन्नता को दूर करने के लिये स्याद्वाद के सप्त-भंगों को हम क्यों नहीं विचारते? भगवान समन्तभद्र ने स्पष्ट कहा है। भगवन! आप के वचन युक्ति और तर्क से अविरुद्ध हैं और सत्य की कसौटी पर कसे हुए है। अतः मैं उनको प्रमाण मानता हूँ। यदि वे युक्ति और सत्य के विरुद्ध होते तो मैं कदापि नहीं मानता"। इस से यह ही ज्ञात होता है कि जैन धर्म सचाई को ही प्रमाण मानता है। जो सत्य है वह ही जैन धर्म है। "बाबा वाक्यं प्रमाणं" अन्धविश्वास, निरपेक्षता, कूटस्थता, आदि विषय जैनधर्म के विरुद्ध है। मुझे तो बाबू पार्टी या पंडित पार्टी की दलदल की कीच में फसे हुए नेता या विद्वान को देख कर हार्दिक दुःख होता है।

मत विभिन्नता, विचार स्वतंत्रता यदि विचार और ज्ञान पूर्वक हैं तो जैनधर्म से विरुद्ध नहीं हैं। क्योंकि जैनधर्म वैज्ञानिक बातों को ही स्वीकार करता है। हमें कवि का यह वचन याद आता है:-

अब भी संभल जावें कहीं हम है सुलभ सब साज भी
बनना बिगड़ना है हमारे, हाथ अपना आज भी॥

हे वीर देव! हम आपके उपासक हैं और आपके ही निर्णीत सन्-मार्ग पर विचरते हैं। हमारी अवस्था हीन हो रही है। दशा शोचनीय है। प्रभु! हमें आपकी जैसी धीरता और वीरता प्राप्त हो जाय। हम सभी पुनः आपके पुनीत मार्ग को ग्रहण करके एकता व पवित्र भ्रातृ प्रेम के एक ही

सूत्र में सुसंगठित होकर भेद-भाव को भूल जायें। आपस के भेद-भाव को और कलह के भूत को दूर कर सभी गले मिल जावें और आपके सच्चे मन को प्राप्त करके एक ही मंत्र से संसार में पवित्र जैनधर्म का डंका निनादित करें। संसार में शान्ति की लहर फैला दो। सभी प्राणी धर्म के स्वरूप को जान कर आत्म शान्ति प्राप्त करें।

प्यारे जैन बन्धो ! अब समय सचेत होने का है यह युग वैज्ञानिक युग है। युक्तिवाद का युग है। सावधान हूजिये आप को अपनी सामाजिक शैली को समुन्नत बनाना होगा। कुरीतियों को निर्मूल करना होगा। आपस की पार्टी बाजी के पड्यन्त्र को निकाल फैंकना होगा। तभी शुद्ध जैन धर्म का प्रचार हो सकेगा।

वर्तमान में सब से बड़ी आवश्यकता है कि जिन वाणी को संसार के प्रत्येक कोने में फैलाया जाय। हर एक देश के वासियों के लिये जैन धर्म के आदर्श सिद्धान्तों को ज्ञान के निमित्त उन्हें सरल बनाया जाय और विश्व की विख्यात भाषाओं में उन का अनुवाद किया जाय। वेदों तथा बौद्ध ग्रन्थों का अनुवाद यूरुप की प्रायः सभी भाषाओं में हो चुका है। किन्तु जैन धर्म के सैद्धान्तिक ग्रन्थोंका अनुवाद नहीं हुआ कुछ कार्य स्वर्गीय जे० एल० जैनी व बैरिस्टर चम्पत राय जी तथा बाबू अजितप्रसाद जी एम० ए० भूतपूर्व जज लखनऊ ने किया है। अभी यह कार्य बहुत थोड़े रूप में है। हमें उचित है कि हम इस विषय में अपने अन्य मतवाले भाइयों से शिक्षा लें जो केवल भारत वर्ष में ही करोड़ों रुपयों की प्रतिवर्ष पुस्तकें वितरण करते हैं। जैन समाज का धन व्यर्थ व्यय और कुरीतियों में अधिक जाता है। यदि यह धन जैन शास्त्रों के भिन्न भाषाओं में ट्रैक्ट प्रकाशित तथा प्रचार में लगाया जाय तो क्या ही उत्तम हो। इस समय देश में भी सरल भाषामें स्याद्वाद कर्मसिद्धान्त आदि जैन सिद्धान्तों को प्रदर्शित करने वाले नवीन ढंग से ट्रैक्ट पुस्तिकाओं को प्रकाशित कर अजैन विद्वानों में वितरण कराया जाय। जैन साहित्य सागर व्याकरण, न्याय, काव्य, सिद्धान्त आदि तरल तरंगों से भरपूर है। किन्तु मुझे दुःख होता है कि कि हम ने वर्तमान नवीन ढंग से कोई भी ऐसी पुस्तक प्रकाशित नहीं की जिस में जैन सिद्धान्तों या सभी साधारण विषयों का जैन शास्त्र की अपेक्षा से वर्णन हो। ईसाइयों की 'बाइबल' है। आर्य्य समाजियों का 'सत्यार्थ प्रकाश' है उसी प्रकार जैन सिद्धान्तों का एक पुस्तक विद्वानों की सम्मति से प्रकाशित होनी चाहिये। ऐसा होने से अजैन जनता में जैन धर्म के विषय में फैले हुये भ्रम दूर हो जायेंगे। मेरा समाज के विद्वानों से निवेदन है कि वे इस ओर अवश्य ध्यान दें।

किसी भी जाति के इतिहास पर उस के प्राचीन चिन्ह विशेष प्रकाश डालते हैं। उन्नत-जातियों के विद्वान् इसी लिये प्राचीन चिन्होंकी खोज में लगे रह कर अपनी जाति और संसार की महत्व-पूर्ण सेवा किया करते हैं। बौद्धों आदि के पुरातत्व-विभागों से जैन पुरातत्व विभाग किसी भी कदर कम नहीं है। Notes on Jain Art नामक पुस्तक में श्रीमान् आनन्द के कुमार स्वामी D. S. C. ने लिखा है, "The Jain Paintings are not only very

important for the student of Jain iconography and archaeology, and as illustrating customs, manners and costumes, but are of equal interest as being the oldest known Indian Paintings on paper' भावार्थ जैन चित्र केवल जैन-शिल्प व उन के पहनाव; रीति-रिवाज के बतलाने के लिये ही उपयोगी नहीं है। किन्तु अबतक जितने कागज पर खिचे हुये चित्र भारत में मिलते है उन सब से पुराने हैं।' भारतमें सब से प्राचीन धर्म जैन धर्म है। जैनियों के अनेक ऐतिहासिक भग्नावशेष, शिलालेख, स्मारक, स्तूप आदि अमूल्य उपयोगी प्राचीनगौरव-चिन्ह अब तक अन्धकार के गर्त में पड़े हुये है। जैन जाति ने इस क्षेत्र में अब तक अधिक उन्नति नहीं की है।

साधारण समाज अभी इस गुरुतर कार्य्य की उपयोगिता नहीं समझती, और कुछ समझदार भाई समाज की कार्य्य-पद्धति वा अधोगति देखकर इस कार्य्य में योग देने को उत्साहित नहीं होते। यही कारण है कि जैन जाति का ध्यान इस ओर नहीं गया है, किन्तु इस विषय की बड़ी आवश्यकता है। भारत वर्ष में बौद्धों की संख्या जैनियों के समान नहीं है और उन का साहित्य जैन साहित्य का दशवां अंश भी नहीं है। किन्तु सांची के स्तूपों, अलोरा की कन्दराओं, तक्षशिला, गया आदि प्राचीन स्मारकों के ही कारण आज देशी तथा विदेशी विद्वानों मे बौद्ध धर्म की महत्ता तथा प्रतिष्ठा है। किन्तु जैनियों का भग्नावशेष साहित्य अब भी भारतीय साहित्य में ऊंचे पद पर है। जैन धर्म सार्वधर्म है इस के सिद्धान्त सत्य और वैज्ञानिक हैं। इस के श्री गिरनार, देवगढ़, मथुरा आदि में अनेक प्राचीन स्तूप, स्मारक, शिलालेख, चित्र और प्राचीनतम प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। किन्तु इस धर्म की देश विदेश में इतनी प्रतिष्ठा क्यों नहीं है? मेरी सम्मति में इस का कारण यह है कि हमारी समाज ने इस विषय में कोई भी कार्य्य नहीं किया है। जैन समाज का करोड़ों रुपया प्रति वर्ष व्यर्थ व्यय और बहु व्यय के रूप में पानी के समान व्यय हो रहा है। किन्तु समाज की यह इच्छा नहीं होती कि खोज Research के लिये व्यय करें। इस पर यह ही याद आता है।

" क्या कहें कुछ कहा जाता नहीं
चुप रहें पर चुप रहा जाता नहीं ॥"

जैन समाज को उचित है कि वह शीघ्र ही अच्छी रकम जैनपुरातत्व विभाग के लिये निकाले। और एक या दो संस्कृत ज्ञाता जैनग्रेजुएटों को ३ या ४ वर्ष तक अपने व्यय से पुरातत्व विभाग आरकिलोजिकल डिपार्टमेंट) के अध्यक्ष के आधीन रख कर उन्हें दक्ष बनाया जाय जिस से वे जैन स्मारक खोजने में चतुर हो जांय। फिर वह सरकार की सलाह और जैन समाज के द्रव्य से बहुत लाभदायक खोज कर सकते हैं।

जैन समाज में धर्म प्रचार के समुचित साधन नहीं। या यों कहा जाय कि धर्म प्रचारकों का अभाव है तो कोई अधिक कहना नहीं है। कुछ सभाएं एक या दो धर्म प्रचारकों को रखती हैं वे प्रधानतया सभाकी आमदनी करानेके इरादे से रक्खे जाते हैं। जिस समाज में धर्म प्रचारक जैसे विद्वान विचारशील व योग्य होंगे उसी के अनुसार उस धर्म

का प्रचार होगा। जिन सज्जनों ने अन्य समाज के इतिहास को पढ़ा होगा उन्हें भली भांति मालूम होगा कि उन के सिद्धान्तोंके प्रचार का कारण उनके आदर्श प्रचारक रहे है। अन्य समाजों में प्रचारकों को ट्रेनिंग देने की अनेक संस्थाएं हैं जिनमें प्रचारकों को अनेक प्रकार की ट्रेनिंग दी जारही है। जिस से उन के सिद्धान्तों का प्रचार अच्छा होता है। जैन समाज में भी जैनशास्त्रीय ट्रेनिंग विद्यालय की बड़ी आवश्यकता थी। श्री देवगढ़ के अधिवेशन में इस विद्यालय को स्थापित करने के मुहूर्त का निर्णय हो चुका था। तथा समाज के उदार हृदय जिनवाणी भक्तों ने उदार-चित्त से योग्य धन प्रदान किया है।

मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि जैन जनता को इस विद्यालय से बड़ा प्रेम है और इस से बड़ी आशाएं हैं। जिस जिस महोदयसे इस विद्यालय की सहायतार्थ अथवा चन्दा के लिये कहा गया। उन्हों ने बड़े प्रेम और उत्साह के साथ देना स्वीकार किया है। आप महानुभाव इस के उद्घाटनके लिये बहुत दूर से अनेक कष्टों को सहन कर ग्रीष्म ऋतु में यहां पधारे हैं। आप का यह अदम्य-उत्साह और कार्य-तत्परता भविष्यमें भी बनी रही तो इस कार्य्य में सफलता निश्चित है।

विद्यालय में जैन पण्डितों और विद्वानोंको कार्य्य क्षेत्रमें प्रवेश करने से पहिले व्यावहारिक-शिक्षा (Practical Training) दी जायगी। व्याख्यान देना, शास्त्रार्थ करना, गवेषणापूर्वक जैन सिद्धान्तों के ट्रैक्ट लिखना, ऐतिहासिक अनुसंधान करना जैन भजनोपदेशकी सिखाना आदि इसका ध्येय होगा अत इससे जैन समाज का बड़ा कार्य्य होने की आशा है।

मुझे निश्चय है कि आप महानुभाव इस विद्यालय को आदर्श संस्था बनाने में अपना कर्तव्य समझेंगे। मुझे यह कहते हुये बड़ा हर्ष होता है कि आज श्रुत-पञ्चमी के पवित्र दिन और महानुभावों के समक्ष इस जैन उपदेशक विद्यालय के उद्घाटन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। मेरी श्री जिनेन्द्र से यही प्रार्थना है कि यह जैन उपदेशक विद्यालय समाज को आदर्श संस्था बने। जैन समाज की इस संस्था के द्वारा जैन समाज का कल्याण हो। यह होना तभी साध्य है यदि आप सर्व महानुभावों का इस संस्था के लिये इसी प्रकार उत्साह व प्रेम बना रहे।

जो २ उदार हृदय दानी महोदय इस विद्यालय के लिये दान देकर इस कल्पवृक्ष के अङ्कुरारोपण करने में सहायक हुये हैं मैं उन का अत्यन्त आभारी हूं। ऐसी गर्मी में दूर दूर से आप सज्जन अनेक कष्टों को सहन कर यहां पधारे हुये हैं अतः इस के लिये मैं तथा कार्यकारिणी समिति आप महानुभावों की आभारी है।

प्रिय सज्जनो! आप महानुभावों ने जो मुझे यह पद देकर सम्मानित किया है, उस के लिये मैं आप का बड़ा कृतज्ञ हूं। इस उत्सव में पधारे हुए सज्जनों के उत्साह ने मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव डाला है। मुझे पूर्णाशा है कि इस संस्था के प्रति आप का यह धर्म प्रेम सदा बढ़ता ही रहेगा। मैं यहां के स्थानीय तथा बाहर से पधारे हुए धार्मिक-बन्धुओं का अत्यन्त-अनुगृहीत हूं जो इस गर्मी में इतना कष्ट सहकर इस मंडप की शोभा को बढ़ा रहे हैं। यहां मैं उन सज्जनों का भी आभारी हूं जिन्होंने अपना अमूल्य समय इस उत्सवकी आयोजना में लगाया है। अन्त में श्री जिनेन्द्रदेव से यही प्रार्थना है कि यह विद्यालय सफल और समुन्नत बने और उस के विद्यार्थी ऐसे बनें।

जग में रह कर धीर बनो,
धीर बनो बरवीर बनो।
बर वीर बनो अति वीर बनो,
अति वीर बनो महावीर बनो॥

॥ शुभमस्तु सर्व जगतः॥

जैनध्वज का सभ्य कटाक्ष
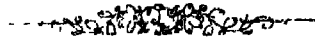
जैन ध्वज नामक श्वेताम्बर पत्र में अभी किन्हीं सेठ भगवान दास जी का "पं० वीरेन्द्र कुमार जी की पाण्डित्यता का सेम्पल" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ जिसमें:— "अपनी बुद्धि की प्रदर्शिनी खोल दो, उनके पाण्डित्यता के सेम्पल की खूबी है, दिगम्बरों की पोल खुल रही है" इत्यादि सभ्य वाक्यों से मुझे याद किया है। मैं सेठ साहब तथा संपादक जी का आभारी हूँ आप के पास यदि इससे अधिक और भी सभ्य शब्द हों तो लिखें मैं स्वागत करूंगा। सभ्य जनता आप सरीखे हमारे श्वेताम्बर भाइयों की धीरता गंभीरता और सभ्यता का अवलोकन करेगी।

आपने मुझे "जैनसत्यप्रकाश" पत्र के 'दिगम्बरो की उत्पत्ती' तथा 'समीक्षाभ्रमाविष्करण' शीर्षक गुजराती लेखमाला का उत्तर न देने के विषय में चिढ़ाना चाहा है सो भी आपकी कृपा है संभवतः आपकी यह कृपा ही किसी गुजराती भाई के सहयोग से उक्त लेखमालाओं का उत्तर देने के लिये तैयार कर देगी। आप अधीर न हों।

इस चर्चा को यहीं छोड़ सेठ भगवान दास जी के उन कतिपय आक्षेपों का संक्षिप्त प्रतिवाद करना उचित है जिससे पाठक महानुभाव कुछ लाभ उठा सकें। अस्तु।

१—विन्ध्यगिरि के किसी शिलालेख के आधार पर आप षटखंडआगमके रचयिता आचार्य पुष्पदन्त भूतबलिको कुन्दकुन्दाचार्यकी शिष्य परम्परामें १० वें नम्बर पर बतलाते हैं। हमारे विचार से सेठ सा० का यह इतिहास इतिहासवेत्ताओंके इतिहासों से अपूर्व एवं अद्भुत होगा। पुष्पदन्त भूतबलि रचित षट्खण्ड आगम पर कुंदकुंदाचार्य ने टीका की है फिर कुंदकुंदाचार्य पहले हुए या षटखंड आगम के रचयिता पुष्पदन्त भूतबलि पहले हुए? इस साधारण मोटे प्रश्न पर पाठक स्वयं विचार कर देखें।

२—"पाण्डित्यता" शब्द का प्रयोग करके अपनी विद्वत्ता एवं व्याकरण ज्ञान का प्रदर्शन करा कर सेठ जी ने "आगम पुत्थे लिहिओ" का अर्थ किया है कि 'कंठस्थ आगम को पुस्तक पर लिखा' यहां पर श्रीमान सेठ भगवान दास जी महोदय तथा संपादक जी यह बतलाने की कृपा करें कि "आगम पुत्थे लिहिओ" में कंठस्थ किस शब्द का अर्थ है? जिस समय आप इस प्रश्नका उत्तर प्रदान करेंगे उस समय बतलाया जायगा कि आप कितने गलत मार्ग पर हैं।

'लेखक' शब्द 'रचयिता' का वाच्य है इसमें भगवानदास जी को अभी तक संदेह बना हुआ है। पत्र पत्रिकाओं में मौलिक रचना करने वालों के नामोंके साथ 'लेखक' शब्द ही प्रयुक्त होता है। पुस्तकों के मूल रचयिता विद्वानों का नाम भी मुखपृष्ठ पर 'लेखक' शब्द से प्रकाशित किया जाता है। अपने लेख की रचना करने वाले आपके नाम को भी 'लेखक' शब्द से भूषित किया गया है, फिर भी 'लिखितः' का अर्थ 'रचितः' आपकी समझ में नहीं आता यह एक अद्भुत आश्चर्य है। अतः कल्पसूत्र की निम्नलिखित गाथा :—

वल्लहिपुरम्मि नयरे देवड्ढिपमुहसयलसंघेहिं।
आगमपुत्थे लिहिओ नवसय असिआओ वीराओ॥

का अर्थ यही होगा कि "देवर्द्धिगणी जी ने वीर सं० ९८० में श्वेताम्बरीय आगम पुस्तक रूप बनाये।

मानसिक भाव जब लिपि रूप में प्रकट किये जाते हैं तभी पुस्तक लिखना कहा जाता है।

३— 'भद्रबाहु संहिता की पोल खुली' आप इस से बहुत प्रसन्न हुए हैं किन्तु वास्तव में आपको इस बात से इस कारण दुखी होना चाहिये कि जिस प्रकार दिगम्बर सम्प्रदाय में सत्य असत्य की जांच पड़ताल होकर सारासार विवेक किया जाता है उस ही प्रकार का साहस आपके श्वेताम्बर समाज में नहीं है। यही कारण है जिनको गणधर प्रणीत आगम कहा जाता है उनमें आपके विद्वानों के लिखे अनुसार भी अनुचित बातों का विधान अभी तक ज्यों का त्यों विद्यमान है।

कल्पसूत्र को भद्रबाहु प्रणीत श्वेताम्बर समाज मानता है किन्तु उसमें भद्रबाहु आचार्य से बहुत पीछे होने वाले साधुओं की नामावली विद्यमान है। इस दशा में भद्रबाहु संहिता पर जो सत्य आक्षेप किया जाता है ठीक वैसा ही आक्षेप रचयिता के नाम की दृष्टि से कल्पसूत्र पर नहीं आता है? इस प्रश्न का उत्तर सेठ जी दें।

मैं सेठ भगवान दास जी को इस चर्चा के लिये निमन्त्रण देता हूं। इस चर्चा से उभय सम्प्रदायों को बहुत कुछ लाभ होगा॥

—वीरेन्द्र

सत्यसमाजका धार्मिक मिक्श्चर

जैन दर्शन के गत २०वें अंक में "सत्यसमाज या धार्मिक मिक्श्चर" शीर्षक लेख प्रकाशित हुआ था। उस लेख में श्री पं० दरबारी लाल जी के स्थापित सत्यसमाज की कुछ रूप रेखा दिखा कर उस विषय में कुछ प्रश्न किये गये थे। उस लेख का उत्तर प० दरबारीलालजी ने न देकर सत्यसंदेश के १८वें अंक में बा० रघुवीर शरण जी ने दिया है।

रघुवीर शरण जी ने अपना लेख मिक्श्चर और कम्पाउंड शब्दों के वादविवाद में समाप्त कर दिया है। उसमें उन प्रश्नों का कुछ भी समाधान नहीं आया जो पं० जी से किये गए थे। 'सवाल गन्दम जवाब चीना' के तौर पर बा० साहब कहीं का कहीं ले गए हैं। उस लेख के उत्तर की आवश्यकता की पूर्ति पं० जी के उत्तर से ही होगी। अतएव बा० सा० चुप रह कर पं० जी को उत्तर लिखने दें।

अजितकुमार—

जैन विद्वानों से निवेदन

रा० सरसेठ स्व० हु० दि० जैन बोर्डिंग हाउस इन्दौर में इंगलिश विभाग के छात्रों के लिये धर्म शिक्षा अनिवार्य है कालिज में पढ़ने वाले छात्र जो बाहर से आकर भर्ती होते हैं वे धार्मिक ज्ञान से प्रायः शून्य रहते हैं। बालबोध आदि प्रचलित पुस्तकें उन को थोड़े समय में पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त कराने में समर्थ नहीं हैं।

अतः जैन विद्वानों से निवेदन है कि वे ऐसी पुस्तकें लिखें और हमें सूचना दें, जो संक्षिप्त और रुचिकर होने के साथ पूर्णतया धर्म का ज्ञान करा सकें।

निवेदक—
हजारीलाल जैन मंत्री

सामयिक चर्चा

उपदेशकविद्यालय का उद्घाटन

भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघके उपदेशक विद्यालय का उद्घाटन समारोह सानन्द सम्पन्न होगया। इस में मुलतान, सहारनपुर, मुजफ्फर नगर, खतौली देहली, सरसावा, शिवहारा, पानीपत, शिमला और बड़ौत आदिसे धर्मबन्धु सम्मिलित हुये थे। आगन्तुक सज्जनों में बा० सुमेरचन्द्र जी जैन एडवोकेट, रा० सा० ला० नेमिदास जी तथा पं० तुलसीराम जी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। बाहरसे सेठ भागचन्द्र जी एम० एल० ए० और बा० लाल चन्द्र जी एडवोकेट के तार तथा बहुतसे सज्जनो के सहानुभूति सूचक पत्र प्राप्त हुये थे।

इस समय संघ के कार्यालय के सामने एक पिण्डाल तैयार किया गया था तथा भवन एवं पिंडाल को मोटोज आदिसे सुसज्जित किया गया था।

सर्व प्रथम ता० २३ की रातको एक आम सभा हुई, जिसके सभापति ला० महावीर प्रसादजी ठेकेदार थे। नगरके अनेक प्रतिष्ठित भाई तथा आर्य समाजी भी उपस्थित थे। भजनों के अनन्तर स्वा० कर्मानन्दजी का "मैंने आर्यसमाज क्यों छोड़ा" विषय पर एक प्रभावशाली व्याख्यान हुआ।

ता० २४ के सवेरे उपदेशक विद्यालयके उद्घाटनकर्ता बा० सुमेरचन्द्र जी एडवोकेट तथा संघके सभापति ला० नेमिदास जी का स्टेशन से जुलूसके द्वारा स्वागत किया गया। दुपहरको १ बजेसे ३ बजे तक कार्यकारिणीकी बैठक हुई। इसके बाद कई विद्वानोंके भाषण तथा भजन हुये। रातको पं० अजितकुमारजी के सभापतित्व में एक आम सभा हुई जिसमें मा० रामानन्द जी आदि के मनोहर भजन तथा पं० मक्खनलाल जी, स्वामी जी के मनोहर व्याख्यान हुये। सभामें उपस्थिति बहुत अधिक थी।

ता० २५ को सवेरे उद्घाटन का मुहूर्त हुआ। कार्यालय के आंगन में हवन तथा पूजन हुआ। बाहर पण्डाल में भजन आदि हुए, उद्घाटन कर्ता महोदय ने प्रथम हवन तथा पूजन किया, बाद को आप बाहर पण्डाल में पधारे। उद्घाटनकर्ता एक विशेष कार्यवश सहारनपुर चले गये। अतः यह सर्व कार्य संघके सभापति रा० सा० ला० नेमिदासजी ने ही किया। आज संघ के पण्डाल में स्थानीय अनेक अजैन म्यु-निसिपल कमश्निर, वायसचेयरमैन तथा अनेक डाक्टर आदि प्रतिष्ठित बन्धु उपस्थित थे। पिण्डाल का एक भाग स्त्रियों से खचाखच भरा था तो दूसरा भाग मनुष्यों से। सर्व प्रथम भजनीकों के भजन हुए, इस के बाद उपदेशकविद्यालय के उद्देश्य पर वाणीभूषण पं तुलसीराम जी का प्रभावशाली भाषण हुआ बाद को संघ के प्रधान मंत्री ने संघ की कार्य-कारिणी की तरफ से रा० सा० ला० नेमिदास जी से उद्घाटन करने की प्रार्थना की। आप महावीर भगवान की जय ध्वनि पूर्वक उठे और आपने अपना भाषण पढ़ कर संघके कार्यालय पर केशरिया झंडा फहराया तथा उद्घाटन का कार्य किया।

विद्यालय के आचार्य का कार्य करने में वाणी भूषण पं० तुलसीराम जी ने स्नातकों को उन के आदर्श तथा कर्तव्य का उपदेश दिया। पं० कैलाशचंद्र जी द्वारा सब का आभार प्रदर्शन किया गया। अन्त में महावीर भगवान की जय ध्वनि के साथ यह महोत्सव सम्पन्न हुआ। उत्सव का व्यय संघ के संरक्षक ला० शिब्बामलजी जैन रईसने किया है।

देश विदेश समाचार

—लाहौर के जिस शहीदगंज मस्जिद के कारण पिछले दिनों में अनेक भयंकर उपद्रव हुए थे। उस का दीवानी फैसला लाहौर डिस्ट्रिक जज लाहौर ने २५ मई को सुना दिया। अनेक युक्तियों से शहीद गंज की मस्जिद पर सिक्खों का अधिकार स्वीकार किया है।

—हिन्दी लिपि को प्रोत्साहन देने के लिये डी० ए० वी० कालेज लाहौर ने अपने यहां से उर्दू लिपि का पढ़ाना बिलकुल हटा दिया है।

—यहूदियों को फिलस्तीन में लाकर बसाने और उनके हाथों जमीन बेचने पर अरबों ने आन्दोलन किया है। जगह २ हड़ताल होरही है और झुन्ड के झुन्ड अरबों और पुलिस तथा सेनामें कभी २ गोला-बारी होजाती है। बमों का बाजार भी गर्म है। करीब ४० आन्दोलनकर्ता निर्वासित कर दिये गये हैं बरहम नामी एक जंगी जहाज तथा बड़ी २ तोपें भी वहाँ पहुँचा दी गई हैं। सिवाय इक्के दुक्के हमले और गोलियों के स्थिति अब शान्त बतलाई जाती है।

—स्व० सर सुलतान अहमदखांने अपनी सम्पति में से एक लाख पचास हजारका दान किया है। जिस मेंसे ५००००) अलीगढ़ मुस्लिम युनिवर्सीटी, २००००) हिन्दू यूनिवर्सिटी बनारस, २००००) दिल्ली यूनि० को, १००००) हाली मुस्लिम हाई स्कूल पानीपतको, और ५००००) रुपया ग्वालियरमें अन्धोंके आश्रमको दिया है।

—सम्राट अष्टम एडवर्ड की ताजपोशी के लिये सन १९३७ की १२ वीं मई तारीख निश्चित हुई है। किन्तु यह फैसला अभी नहीं हुआ कि वे भारत कब आवेंगे।

—बरेली ३० मई मि० रामनारायण मुन्शी के घर सोमवार को प्रातःकाल एक बालक पैदा हुआ जिस के ३२ दांत हैं बच्चा अभी तक जीवित है।

—कैलीफोर्नियाके लोडी नामक शहर में मिकीने एक नीबू बोया। पैदा होने के बाद उस का भार ४ पौंड तथा गोलाई २२ इन्च थी।

—मुलय इस्माईल ८८८ बच्चों का बाप था। शरीफियाम खानदान से सम्बन्ध रखने वाले मुलये ने मोरक्को पर ५७ साल तक राज्य किया। उस की अनन्त स्त्रियां थीं। जब वह १७२७ में मरा तो ५४८ लड़के और ३४० लड़कियां अपने पीछे छोड़ गया।

—न्यूजीलैण्ड में किवी नाम का पक्षी होता है इस के पर नहीं होते। पहले यह पक्षी न्यूजीलैण्ड में आमतौर से पाया जाता था। यह एक प्रकार के खास पौदों के पास रहता है और दिन में किसी को दिखाई नहीं देता।

—परलोक विद्या के जानकार भारतवर्ष में ये ३ विद्वान हैं— १- श्रीमान वी० डा० ऋषि बी० ए० एल० एल० बी०, नं० ५१ गोवरधनदास बिल्डिंग, गिरगांव, बम्बई। २- डाक्टर जोसफ जे० घोष, एम० ए० डी० लिट० (प्रिंसिपल, मोडर्न हाईस्कूल इलाहाबाद। ३- मि० जे० मैथ्यूज, स्टेशन सुपरिन्टेन्डेन्ट रावलपिण्डी।

—कराची के जुडीसल कमिश्नर ने एक पैसेकी मूल्यवाली तीन सिगरेट चुराने पर एक ६८ वर्षके पुराने चोरको ७ वर्षकी सख्त सजा दी है। यह चोर इससे पहले १८ बार जेल जा चुका है।

—*—

REGD'L No
3459.

—सात साहसी अंग्रेजों ने एक डेढ़ मील लम्बी मलायाकी गुफामें मशालों की रोशनी से घुस कर १८ फीट लम्बे भयानक अजगरको पकड़ा है।

—औसतनसे हरएक आदमी अपने जीवन के २३ वर्ष निद्रा में व्यतीत करता है।

—मालूम हुआ है कि करीब २॥ लाख किसानों को इटली से लाकर एबीसीनिया में बसाया जायगा और उनकी शादियाँ भी एबीसिनियनों के साथ होनी शुरू हो जायेंगी। परिणामतः दोनों देशों के आदमी एक दूसरे से आसानी से हिल-मिल जायेंगे और आपसमें एक गहरा सम्बन्ध स्थापित हो जायगा।

—इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के एक सदस्य ने ५० हजार की लागतसे स्व० सम्राट जार्ज पंचम का स्मारक बनवाने का प्रस्ताव पेश करनेका नोटिस दिया है। आपने सुझाया है कि इसमें १० हजार तो बोर्ड दे और शेष रुपया चन्देके रूपमें वसूल करनेको एक कमेटी बनाई जाय।

—सोनामुखी गांवमें एक ६८ वर्षीया हिन्दू देवी गत ५६ वर्षोंसे उपवास कर रही है और आज तक भोजन नहीं किया। वह अब भी किसी साधारण महिलासे कमजोर नहीं है और घर गृहस्थीके काम करने में बड़ी स्फूर्ति रखती है। सुना है कि संसार भरमें उपवास करनेमें उसका एक रेकार्ड है।

—श्री सुभाष बोस गत बुधवारको पुलिस के कड़े पहरे में कुर्सियांग पहुंचा दिये गये हैं, जहां वे अपने भाईके मकानमें नजरबन्द रहेंगे।

—लायलपुर जिलेमें १२२ वर्षका एक बाजीगर है। कहते हैं कि इसने महाराजा रणजीतसिंहको अपने खेल कई बार दिखलाये हैं।

—मलेशियाके प्रान्तमें इस प्रकारकी एक मछली है जो पेड़ पर चढ़ती है। वैसे तो यह समुद्र में रहती है परन्तु जब जब ज्वार भाटा आता है तो यह किनारे पर आ लगती है और आस पासके पेड़ों पर चढ़ जाती है।

—मध्यवर्ती कोल प्रदेश में एक पक्षी मिलता है जो कुत्ते की तरह भौंकता है। वहां के निवासी उसे "गिड़ गिड़" कहते हैं। जंगल में जहां जहां भी होता है लोग उस की तलाश करके इसे शहर में पकड़ लाते हैं और पालतू जानवर की तरह अपने पास रखते हैं।

—रेलवे कम्पनियां बिना टिकिट यात्रा करने वालों से बड़ी हैरान हैं, पर अब तक कोई उपाय इन से जान बचाने का नहीं निकल सका है। नीचे की संख्याओं से यह बढ़ती हुई बीमारी समझ में आ जाती है।

१९२५…१७,३४, ३५४.
१९२६…१७,७१, ३८४.
१९२७…२३,१८, ४७५.
१९२८…२४,२६ ४०५.
१९२९…२७,८३, ०२६.
१९३०…२७,७८, ५८८.
१९३१…२३,६७, ६६५.
१९३२…२३,७६, ६२७.
१९३३ २६,११, ६८७.
१९३४…२६,९४, १६४.

—मध्य प्रान्तीय सरकार ने ६ स्त्रियों को कान्स-टेबिलोंमें भर्ती किया है। कुछ औरतें गांजा-चर्स आदि को गुप्त रूप से बेचती हैं, उन्हीं के लिये महिला पुलिस की नियुक्ति की गई है।

—कुमिल्ला में दो सिर, चार पैर और चार हाथ वाला एक विचित्र बालक पैदा हुआ है।

अजितकुमार जैन के प्रबन्ध से "अकलंक प्रिंटिंग प्रेस" मुलतान में छपकर प्रकाशित हुआ।

वर्ष ३
अंक २१-२४
श्री भारत वर्षीय दिगम्बर जैनशास्त्रार्थ संघ का पाक्षिक मुख पत्र
सम्पादक
पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ जयपुर
पं० अजितकुमार शास्त्री
पं० कैलाशचन्द्र शास्त्री
इस अंक के पठनीय लेख
१– भगवान महावीर उपरान्त सुप्रसिद्ध जैनाचार्य
२– धर्म परिवर्तन
३– वेदों में असम्भव बातें
४– कलहका परिणाम
५– अथर्ववेद परिचय
६– मन्दिर और प्रतिमा निर्माण
७– सत्यसमाज या खिचड़ी समाज
८– स्वा० दयानन्द जी का पत्र
९– धार्मिक मिक्श्चर
वार्षिक ३) एक प्रति ≡)

जैन समाचार

आवश्यक सूचना

संघ के उपदेशक विद्यालय में अब तक निम्न-लिखित विद्वानों के भर्ती करने की स्वीकारता दी है-

१-पं० बनवारीलालजी न्यायतीर्थ, प्राचीन न्याय-शास्त्री, (हिंदूविश्वविद्यालय तथा क्वीन्सकालेजबनारस)

२-पं० इन्द्रचन्द्र जी शास्त्री (बम्बई) मैट्रिक

३-पं० लालबहादुर जी न्यायतीर्थ, सिद्धान्त शास्त्री (बम्बई) मैट्रिक।

४-पं० पद्मचन्द्र जी व्याकरणतीर्थ

इनके अतिरिक्त अभी भी चार विद्वानोंको स्थान है अतः समाज सेवार्थ तैयार होने वाले विद्वानों को अपने प्रार्थना पत्र शीघ्र भेजने चाहिये।

मंत्री--कैलाशचन्द्र शास्त्री
उपदेशक विभाग भा० दिगम्बर जैन
शास्त्रार्थसंघ अम्बाला छावनी

जैनधर्म के प्रचारार्थ हमने फोनोग्राफ के कुछ रिकार्ड तैयार कराने का प्रबन्ध किया है। इसके लिये हम को जैन समाज के सुयोग्य कवियों के सहयोग की आवश्यकता है। भजन या ड्रामे निम्न लिखित विषयों पर होने चाहिये।

१ भगवान महावीर का जीवन, उसका अंश विशेष या उनके साधारण जनतोपयोगी उपदेश।

२ किसी भी जैन महापुरुष की जीवन घटना

३ उपदेश या भक्ति प्रधान

भजन बहुत बड़े नहीं होने चाहिये—

आशा है कविगण हमारे निवेदन पर अपनी २ योग्य रचनायें शीघ्र भेजेंगे।

निवेदक—राजेन्द्रकुमार जैन अम्बाला छावनी।

"श्री पन्नालाल दि० जैन विद्यालय" फीरोजाबाद को १५ छात्रोंकी शीघ्र आवश्यकता है जो आना चाहें ता० १५-७-३६ तक अपने प्रार्थनापत्र भेजें। पठनक्रम शास्त्री कक्षा तक का हो गया है तथा मुनीमी सर्राफी अङ्गरेजी भी पढ़ाई जाती है।

रामशरण जैन स० मन्त्री
फीरोजाबाद (आगरा)

आवश्यकता

दि० जैन पञ्चायत अम्बाला छावनी के लिये एक सुयोग्य, अनुभवी विद्वान की आवश्यकता है; जो शास्त्रसभा का कार्य भली भांति चला सके, सुबह श्रावकों को स्वाध्याय करा सके तथा आवश्यकता पड़ने पर विवाहादि संस्कार करा सके। वेतन योग्यतानुसार मकान के अतिरिक्त २५) मासिक तक दे सकेंगे। पत्र व्यवहार निम्नलिखित पते पर करें

मन्त्री दिगम्बर जैन पञ्चायत
अम्बाला छावनी

बाहुबलि—प्रतिमा—श्री वीरबालाविश्राम आरा में २०० मन बजन की १३॥ फीट ऊंची संगमर्मर की मनोहर विशाल प्रतिमा बन कर आई है जिसको कि जयपुर के एक चतुर शिल्पकार ने श्रवणबेलगुल के गोम्मट स्वामी के प्रतिबिम्ब को देख समझ कर बनाया है। यह दर्शनीय मूर्ति श्रीमान बा० निर्मल-कुमार जी की बुआ श्री जयनेम सुन्दर देवी जी ने अपने व्यय से तयार करायी है।

विद्वान ब्रह्मचारी—श्रीमान पं० महेन्द्रसिंह जी जैन न्यायतीर्थ ने सप्तम प्रतिमा (ब्रह्मचर्य) धारण की है। आपकी आयु केवल २८ वर्ष की है।
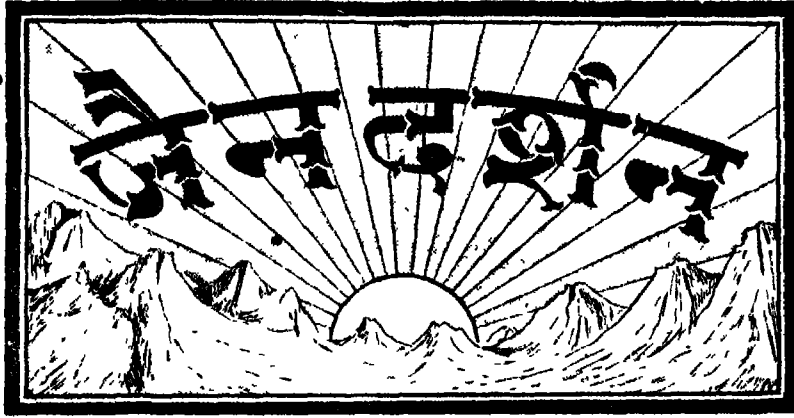
अकलंकदेवाय नमः

श्री जैनदर्शनमिति प्रथितोग्ररश्मिर्भूयोभवन्निखिलदर्शनपक्षदोषः,
स्याद्वादभानुकलितो बुधचक्रवन्द्यो भिन्द्यन्तमो विमतिजं विजयाय भूयात्

श्री आषाढ़ सुदी १२—बुधवार श्री वीर सं० २४६२—१ जुलाई १९३६ अंक २३-२४

इच्छा—

धांय धांय सी धधक रही है, अन्तस्तल को ज्वाला।
उसमें इच्छाओं की निधियां, जला रहा मतवाला ॥ *

आशाएं सब खाक हो चुकीं, सिहर उठीं चिन्ताएं।
साहस रिक्त वेदनाओं की, गावें का गाथाएं? *

नहीं सान्त्वना सलिल किसीने, आकरके बरसाया?
जिस से अन्तरताप और भी बढ़ता गया सताया ॥ *

अब चाहूं समता को शय्या चाहूं अन्तर- विपन विहार।
रहूं छोड़ता अखिल विश्वपर, अपने "प्रेम सुधाको धार ॥ *

रचयिता—
ब्र० प्रेम 'पञ्चरत्न'

भगवान महावीर उपरान्त सुप्रसिद्ध जैनाचार्य

(ले०— श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी जैन शास्त्री-बनारस)

वीरके 'जयंती अंकमें' उक्त शीर्षक से श्री शान्ति कुमार जी का एक लेख प्रकाशित हुआ है। लेखकने वीर निर्वाण सं० ४८० से १५०० तक होने वाले १२ सुप्रसिद्ध जैनाचार्यों का संक्षिप्त इतिवृत्त संकलित किया है। प्रमादवश इस लेखमें अनेक ऐतिहासिक भूलें रह गई हैं। इतिहास-प्रेमी पाठकों के भ्रम निवारण के लिये मुझे उनका परिशोधन आवश्यक जान पड़ा।

जैनाचार्यों के इतिवृत्त के सम्बन्ध में अबतक जो कुछ खोज हुई है--उसका अधिक श्रेय सर्व श्री० नाथूराम जी प्रेमी और पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार को प्राप्त है। इस दिशा में यदि इन दोनों विद्वानों ने प्रयत्न न किया होता तो संभवत जैनाचार्यों की वंशपरम्परा सर्वदा के लिये अन्धकार में विलीन होजाती। उपलब्ध जैनाचार्यों को दो भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम, जिनकी रचनाएं उपलब्ध है। दूसरे, जिनकी रचनाएं तो उपलब्ध नहीं है किन्तु अन्य आचार्यों की रचनाओं में उनका उल्लेख मिलता है। प्रथम श्रेणी के आचार्यों से द्वितीय श्रेणी के आचार्यों की संख्या बहुत अधिक है। पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार के पास उभय श्रेणी के आचार्यों की एक लम्बी तालिका मौजूद है। एक नामके अनेक आचार्य भी होगये हैं। जैनाचार्य और जैन साहित्य का इतिवृत्त बहुत विशाल है और इस दिशामें कार्य करने वालों के लिये विशाल क्षेत्र पड़ा हुआ है। कारणवश सामाजिक क्षेत्रसे दूर रहने वाले विद्वानों को साहित्यिक क्षेत्रमें अपनी शक्तिका उपयोग करना चाहिये। इससे समाज साहित्य और स्वयं उनका कल्याण होगा। अस्तु.

इतिहासमें आजकल चार सम्वतों का उल्लेख होता है। वीरनिर्वाण सम्वत्, विक्रम सम्वत्, शक सम्वत् और ईस्वी सन। प्रचलित मान्यता के अनुसार वीर निर्वाण से ४७० वर्ष बाद विक्रम सम्वत्, ६०५ वर्ष बाद शक सम्वत् और ५२७ वर्ष बाद ईस्वी सन प्रचलित हुआ। महीनों का हिसाब मैंने छोड़ दिया है। लेखकने अपने लेखमें वीर नि० सं० का ही उपयोग किया है और यतः आजकल इतिहासज्ञों की जिह्वा पर ईस्वी सन नाचता है अतः मैं ईस्वी सन का भी उल्लेख करूंगा। पाठक दोनों के अन्तर को याद रक्खें।

१- कुन्दकुन्द— यद्यपि कुन्दकुन्द से पहले भूतबलि, पुष्पदन्त गुणधर आदि कई प्रकाण्ड आचार्य होगये हैं जिन्होंने षट्खण्डागम की रचना में योगदान किया था तथापि जैन दिगम्बर समाज में, आचार्य कुन्दकुन्द का बहुत महत्व माना जाता है शास्त्र के प्रारम्भ में 'मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो' से भी यह महत्व ध्वनित होता है। प्रचलित मान्यता के अनुसार-जैसा कि लेखक ने बतलाया है ईस्वी सनसे पहले इनका जन्म हुआ था नन्दिसंघ की गुर्वावली में लिखा है कि भगवत्कुन्दकुन्द को वि. सं० ४९ में

(ई. पू० ८) में आचार्य पद मिला और १०१ (ई. स. ४४ के लगभग) उनका स्वर्गवास हुआ। इन्होंने समयसार, पञ्चास्तिकाय, प्रवचनसार आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। इन ग्रन्थों की भाषा प्राकृत है न कि संस्कृत जैसा कि लेखक ने भ्रम से लिख दिया है।

२– श्री उमास्वामी—ईसा का प्रथम शताब्दी में हुए बताये जाते हैं इनका बनाया तत्त्वार्थसूत्र समाज में बहुत प्रसिद्ध है।

३ श्री समन्तभद्र-का समय मुख्तार सा० ने ईसा की दूसरी शताब्दी निश्चित किया है जैन तीर्थंकरों के महान आविष्कार स्याद्वाद को दार्शनिक क्षेत्रमें सुसम्बद्ध करने का श्रेय इसी महान तार्किक को प्राप्त है। आप्तमीमांसा स्वयंभूस्तोत्र युक्त्यनुशासन जिनशतक रत्नकरंड आदि अनेक ग्रन्थ इनके रचेहुए आज उपलब्ध हैं। इस नाम के अन्य आचार्य भी होगये हैं।

४ पूज्यपाद तत्त्वार्थसूत्र के आद्य टीकाकार और जैनेन्द्र व्याकरण के रचयिता पूज्यपाद श्री देवनन्दि का समय पांचवी शताब्दी के लगभग माना जाता है। लेखक ने किस आधार से उनका सुनिश्चित समय वी० नि० ८७० (ई० स० ३४३) लिख दिया है, पता नहीं। सर्वार्थ सिद्धि, जैनेन्द्रव्याकरण, आदि अनेक ग्रन्थ इनके बनाये हुए उपलब्ध हैं।

यहां तक तो लेखक ने जैनाचार्यो के समय के सम्बन्ध में विशेष गड़बड़ी नहीं की है किन्तु इसके बादका लेख बिल्कुल इतिहासविरुद्ध होगया है। लेखक का क्रम निम्न प्रकार है। ५– वीरनन्दि वीर सं० १२०६। ६– नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती वीर सं० १२०५। ७– मानतुंग वीर सं० १२२६ ८०। अकलंक वीर सं० १३२६। ९– जिनसेन वीर सं० १३४२। १०– विद्यानन्दि वी० सं० १३५१। ११– वादिराज वी० सं० १४१८। १२– अमितगति वीर सं० १४६५। जैन इतिवृत्त का मामूली जानकार भी इस क्रम की असारता को जान सकता है। नीचे यथासंभव क्रम के अनुसार इन आचार्यों का निर्देश किया जाता है।

१० श्री अकलंक— तार्किक विद्वानों की श्रेणी में समन्तभद्र के बाद इन्हीं का नाम लिया जाता है. जैन न्याय को सुसम्बद्ध और परिष्कृत करने में इन का मुख्य हाथ था। हिमशीतल राजा की सभा में इनका बौद्ध विद्वानों के साथ बड़ा जबर्दस्त वाद हुआ था। अष्टशती, राजवार्तिक, लघीयस्त्रय, न्यायविनिश्चय, प्रमाणसंग्रह आदि ग्रन्थ इनके रचे हुए उपलब्ध हो चुके हैं। सिद्धिविनिश्चय की अनन्तवीर्य रचित टीका मिल गई है. किन्तु अकलंक रचित मूल सिद्धिविनिश्चय का अभी तक उद्धार नहीं हो सका है। इन्होंने अपने ग्रन्थों में प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान धर्मकीर्ति के मत का विस्तृत खण्डन किया है। इत्सिंग नामक चीनी यात्री ने ई० सन् ६७१ से ६९५ के मध्यवर्ती समय में भारत की यात्रा की है. उसने लिखा है कि दिग्नाग के बाद धर्मकीर्ति ने तर्कशास्त्र में अच्छी उन्नति की है। अतः अकलंक देव का समय उसके बाद में अर्थात ईसा की आठवीं शताब्दी का पूर्वार्ध अन्दाजा जाता है।

१३ श्री जिनसेन (प्रथम)—ये आगम ग्रंथ के टीकाकार श्री वीरसेन के शिष्य थे। इनका बनाया हुआ आदिपुराण आर्षग्रन्थ समझा जाता है। इन

के नाम के प्रथम भगवत् शब्द का प्रयोग इनके महत्व को सूचित करता है। कालिदास के मेघदूत के एक एक चरण को लेकर इन्होंने पार्श्वाभ्युदय काव्य की अनुपम रचना की है, और शृंगार की सरिता में शान्त रस की धारा बहा कर अपने अलौकिक कला चातुर्य का परिचय दिया है।

११ श्री जिनसेन (द्वितीय) — ये हरिवंश पुराण के रचयिता हैं, इन्हों ने अपने पुराण के प्रारंभ में पार्श्वाभ्युदय के रचयिता जिनसेन प्रथम का स्मरण किया है, हरिवंशपुराण शक सं० ७०५ (ई० सन् ७८३) में समाप्त हुआ है। प्रथम जिनसेन उस के बहुत बाद तक जीवित थे ऐसा मालूम होता है। क्योंकि अपने गुरु वीरसेन के द्वारा प्रारंभ की गई सिद्धान्त ग्रंथ की टीका को उन्होंने इस समय के बाद पूर्ण किया था। तथा इनके साक्षात शिष्य गुणभद्राचार्य ने अपने गुरु द्वारा रचे गये आदिपुराण को समाप्त करके उसके उत्तरार्ध उत्तरपुराण को शक सं० ८२० (ई० सन् ८९८) में समाप्त किया था। अतः इन दोनों आचार्यों का समय ईसा की आठवीं शताब्दी के मध्य से लेकर लगभग नवीं शताब्दी के मध्य तक समझना चाहिये।

१२- श्री विद्यानन्द— प्रारम्भमें ये मीमांसक मतानुयायी प्रकाण्ड वैदिक विद्वान थे। समन्तभद्र के आप्तमीमांसा प्रकरण को सुनकर ये जैनधर्मके अनुयायी होगये थे। इन्होंने अकलंक देवकी अष्टशती पर अष्ट सहस्री और तत्वार्थ सूत्र पर श्लोकवार्तिक ग्रन्थ लिखकर जैनदर्शनकी महती सेवा की है। इन की लेखनी अत्यन्त प्रौढ, विषय प्रतिपादनशैली गम्भीर और वाग्धारा श्रवणसुखदायिनी है। इनके बाद जैन दार्शनिक क्षेत्र में इनकी टक्करका विद्वान पैदा नहीं हुआ। इन्होंने अपने ग्रन्थों में कुमारिल भट्टके प्रसिद्ध ग्रन्थ मीमांसा श्लोकवार्तिक से कुछ कारिकाएं उद्धृत की हैं। कुमारिलका समय ई० सन् ७०० से ७६० तक माना जाता है अतः विद्यानन्दका समय आठवीं शताब्दी का उत्तरार्ध समझना चाहिये।

१४- श्री प्रभाचन्द्र— लेखकने अपनी नामावली में इन्हें स्थान नहीं दिया है और इनके स्थान पर भक्तामर स्तोत्र के रचयिता श्री मानतुङ्ग को विराजमान करके प्रभाचन्द्र विरचित न्यायकुमुदचन्द्र और प्रमेयकमल मार्तंड जैसे ग्रन्थराजोंका सेहरा मानतुङ्ग के सिर पर बांध दिया है। मालूम होता है यह लेख 'वीर' के इतिहासज्ञ और विद्वान सम्पादकद्वय में से किसी की भी दृष्टि से नहीं निकला है। वरना ऐसी भद्दी उसमें न रहती। अस्तु, प्रभाचन्द्र नामके अनेक लेखक होगये हैं: माणिकचन्द्र ग्रंथमाला से प्रकाशित रत्नकरंड श्रावकाचारकी प्रस्तावनामें पं० जुगलकिशोरजी मुख्तारने उनकी एक लम्बी तालिका दी है। इन प्रभाचन्द्र ने न्याय कुमुदचन्द्र में विद्यानन्द का स्मरण किया है, अतः यह विद्यानन्दके बादके या समसामयिक विद्वान हैं। हरिवंश पुराण और आदि पुराण में से प्रथम हरिवंश पुराण (ई० स० ७८३) में रचा गया है और बादको आदि पुराण (ईसाकी नवीं शताब्दी के मध्यके लगभग) रचा गया है। हरिवंश पुराणकार ने कुमारसेन के शिष्य प्रभाचन्द्र का स्मरण किया है और आदि पुराणकार ने चन्द्रोदयके कर्ता का। इन दोनों ग्रन्थकारों में से किसीने भी विद्यानन्दका स्मरण नहीं किया–यह एक अचरजकी

बात है। आदिपुराणकारने पात्रकेसरी का स्मरण किया है किन्तु पात्रकेसरी विद्यानन्दसे पृथक विद्वान थे और अकलंक के भी पूर्ववर्ती थे। मुख्तार सा० ने अपने अनेकान्त पत्र में इसके सम्बन्ध में एक छोटा सा लेख लिखा है।

हरिवंश पुराणकार ने जिन प्रभाचन्द्र का स्मरण किया है वे तो न्यायकुमुद और प्रमेयकमल के कर्ता नहीं जान पड़ते क्योंकि यह समय विद्यानन्द का है। हां, आदिपुराण में स्मृत चन्द्रोदयः प्रभाचन्द्र का न्यायकुमुद माना जा सकता है क्योंकि यह पुराण हरिवंश पुराण से अर्धशताब्दी के लगभग बाद का बना हुआ है और उस अवस्था में आदिपुराणकार प्रभाचन्द्र, विद्यानन्द का स्मरण कर सकते हैं, अतः प्रभाचन्द्र को ई० स० की नवीं शताब्दीके तरुणकाल का विद्वान मानना चाहिये।

१७ - श्री वीरनन्दि—लेखक ने आचारसार और चन्द्रप्रभचरित के कर्ता को एक ही बतलाया है किन्तु दोनों के कर्ता वीरनन्दि दो जुदे २ व्यक्ति हैं। दोनों ग्रन्थों के अन्तिम प्रशस्तिश्लोकों को देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। चन्द्रप्रभ के कर्ता अभयनन्दि के शिष्य और गुणनन्दि के प्रशिष्य थे। गोमट्टसार के कर्ता नेमिचन्द्राचार्य ने भी कर्मकाण्ड की १३६ वीं गाथा में इन्हें अभयनन्दि का शिष्य बतलाया है। कवि वादिराज ने अपने पार्श्वनाथ काव्य में वीरनन्दि और उनके चन्द्रप्रभ का स्मरण किया है और पार्श्वनाथ काव्य शक सं० ९४७ (ई०स० १०२५) में समाप्त हुआ है तथा अभयनन्दि के शिष्य और वीरनन्दि के गुरु भाई आचार्य नेमिचन्द्र चामुण्डरायके गुरु थे, और चामुण्डरायने कनड़ी भाषाके चामुण्डराय पुराण या त्रिषष्ठिलक्षणमहापुराण चरित को शक सं० ९०० (ई० स० ९७८) में समाप्त किया है अत. श्री चन्द्रप्रभ के कर्ता वीरनन्दि का समय ईसा की दसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध समझना चाहिये।

२२ श्री वीरनन्दि-आचारसार के कर्ता वीरनन्दि मेघचन्द्र के शिष्य हैं। आचारसार की भूमिका में प्रेमी जी ने इनका समय ईसा की बारहवीं शताब्दी का पूर्व भाग निर्धारित किया है। लेखक दोनों वीरनन्दियों को एक मान कर उनका समय वीर सं० १२०६ अर्थात ई० स० ६७९ बतलाते हैं। यह समय प्रथम वीरनन्दि से ३०० वर्ष और द्वितीय वीरनन्दि से लगभग ५०० वर्ष पहले ठहरता है।

१८- श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती —यह वीरनन्दि के सामयिक विद्वान थे। लेखक ने भी इन्हें उनका समकालीन ही बतलाया है और इसलिये उनका समय वीरनन्दि से एक वर्ष पहले अर्थात वीर सं० १२०५ बतलाया है इसमें भी ३०० वर्ष की भूल है। इनके बनाये जीवकाण्ड कर्मकाण्ड लब्धिसार क्षपणासार और त्रिलोकसार ग्रन्थ अतिप्रसिद्ध हैं। इनकी भाषा विद्वानों ने जैन शौरसेनी निर्धारित की है, न कि मागधी।

१९ श्री वादिराज — ऊपर इनका समय बतला आये हैं, इन्होंने पार्श्वनाथ चरित्र को शक स ९४७ (ई० सन् १०२५) में समाप्त किया था। अतः इनका काल ईसाकी ११वीं शताब्दी गिनना चाहिये। लेखक ने इनका समय वीर सं १४१८ अर्थात ई० सन् ८९१, बतलाया है जो निर्धारित समय से सवासौ वर्ष के

लगभग पहले ठहरता है। इनके बनाये न्यायविनिश्चय विवरण को देखने से इनकी अध्ययन शीलता का पता चलता है, ये सचमुच बहुश्रुत थे। इनके 'विवरण' में उद्धृत पद्यों की व्याख्या देखते ही बनती है। एकीभाव के अन्त में मुद्रित श्लोक—

वादिराजमनु शाब्दिक लोको,
वादिराजमनु तार्किकसिंहः।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते,
वादिराजमनु भव्यसहायः॥

इनके सार्वविषयक पांडित्य को प्रकट करता है। कहा जाता है कि इनके शरीर में कुष्ठ रोग होगया था और उसे दूर करने के लिये एकीभाव स्तोत्र की रचना की गई थी; एकीभाव के पढ़ने से भी यह बात पुष्ट होती है।

२० श्री अमितगति— यह माथुर संघ के आचार्य थे, इनके गुरु का नाम माधवसेन था। इन्होंने अपने सुभाषितरत्नसंदोह को वि० सं० १०५० (ई० सन् ९९३) में समाप्त किया था अतः इनका समय ईसा की दशवीं शताब्दी का उत्तर भाग और ११वीं का पूर्व भाग जानना चाहिये। इनके बनाये श्रावकाचार, पंचसंग्रह आदि अनेक ग्रंथ हैं। इनकी रचना बड़ी सरस और हृदयग्राही हुई है, इनका सामायिक पाठ बहुत लोकप्रिय है।

यह तो हुई लेखक की तालिका, इसके अतिरिक्त भी बहुत से जैनाचार्य और ग्रंथकार हो गये हैं, उन में से कुछ का परिचय हम यहां देते हैं।

४- श्री सिद्धसेन— यह समन्तभद्राचार्य के समकालीन और उन्हीं की कोटि के विद्वान थे। दोनों जिनसेन ने अपने अपने पुराण के प्रारंभ में उन्हें स्मरण किया है। इनकी बनाई हुई द्वात्रिंशतिकायें तथा सम्मतितर्क अति प्रसिद्ध हैं। सम्मतितर्क पर आजकल अभयदेव सूरि कृत वृत्ति उपलब्ध है, यह टीकाकार श्वेताम्बर थे। श्वेताम्बर लोग इन्हें श्वेताम्बर समझते हैं, किन्तु वास्तव में यह दिगंबर ही जान पड़ते हैं। इनके सम्मतितर्क पर दिगम्बर विद्वान सुमतिदेव ने एक वृत्तिग्रंथ लिखा था जो अनुपलब्ध है किन्तु पार्श्वनाथ चरित्र के प्रारंभ में वादिराज ने इनका स्मरण किया है। अस्तु, जो कुछ हो इनकी मान्यता दोनों सम्प्रदायों में होती पाई गई है।

६ श्री रविषेण — ये आद्यपुराणकार कहे जाते हैं। इनका रचित पद्मपुराण दि० जैन आम्नाय का आद्य पुराण ग्रन्थ है। इसमें लिखे उसके रचना काल पर से इनका समय ईसा की पांचवीं शताब्दी का अन्त निश्चित होता है।

७ श्री जटासिंहनन्दि — हरिवंश पुराणकार ने रविषेण के स्मरण के बाद ही 'वरांग चरित' नामक काव्य का स्मरण किया है। उस पर से यह भ्रम हो गया था कि 'वरांगचरित' भी रविषेणाचार्य की ही रचना है, किन्तु प्रो० ए० एन० उपाध्याय ने बहुत खोज के बाद इस भ्रम का निवारण कर दिया और बतलाया है कि 'वरांगचरित' जटासिंहनन्दि उपनाम जटिल कवि की रचना है। इनके सम्बन्ध में उनका एक लेख दर्शन के किसी आगामी अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

६ सुमतिदेव — इनके बारे में अभी तक विशेष कुछ नहीं जाना जा सका है। सातवीं आठवीं शताब्दी के विद्वान नालन्दा बौद्ध विद्यापीठ के आचार्य शान्त रक्षित ने अपने तत्त्वसंग्रह नामक ग्रंथ में इनका

बनाई कुछ कारिकायें लिखी हैं और 'सुमतेर्द्दिगम्बरस्य' करके इनका उल्लेख किया है। अतः ये सातवीं शताब्दी के लगभग के विद्वान कहे जा सकते हैं।

८ पात्रकेशरी— पूर्वोक्त तत्वसंग्रहकार ने सुमतिदेव की तरह पात्रकेशरी के मत की आलोचना की है। और अन्य कारिकाओं के साथ उनका सुप्रसिद्ध श्लोक— "अन्यथानुपपन्नत्वं यत्र तत्र त्रयेण किम्" इत्यादि भी दिया है। अकलंक देव ने स्वरचित न्यायविनिश्चय में भी इस श्लोक को ज्यों का त्यों मूल में सम्मिलित कर लिया है। न्यायविनिश्चय के विवरणकार श्री वादिराज इस कारिका की उत्थानिका में इसे लिखते हैं कि सीमन्धर स्वामी के समवशरण में गणधर देव के प्रसाद से प्राप्त इस श्लोक को पद्मावती देवी ने लाकर पात्रकेशरी को समर्पित किया था। एक दूसरी कारिका की उत्थानिका में लिखा है कि पात्रकेशरी के वचनों को कहते हैं। अतः पात्रकेशरी अकलंकदेव के पूर्ववर्ती हैं। यदि न्यायविनिश्चय पर अकलंक देव की स्वोपज्ञवृत्ति मिल जाय तो इस संबन्ध में अकलंक देव के शब्दों से भी इसकी तथ्यता पर अच्छा प्रकाश डाला जा सकता है। यहां यह बतला देना आवश्यक है कि न्यायविनिश्चय के जिस प्रकरण में पात्रकेशरी के मत को दर्शाया कहा जाता है वह प्रकरण बौद्धों के त्रिलक्षण हेतुवाद के खण्डन से संबन्ध रखता है और श्लोकवार्तिककार विद्यानन्द तथा वादिराज दोनों ही पात्रकेशरी के विलक्षण-कदर्थन नामक ग्रंथ का उल्लेख करते हैं। अतः अकलंक के पूर्ववर्ती पात्रकेशरी सातवीं शताब्दी के विद्वान नहीं कहे जा सकते।

११ अनन्तवीर्य — इस नाम के दो आचार्य हो गए हैं। प्रथम, अकलंकदेव के सिद्धिविनिश्चय आदि के टीकाकार, और दूसरे परीक्षामुख की लघुवृत्ति प्रमेयरत्नमाला के रचयिता। ये दोनों ग्रंथकार एक ही व्यक्ति है ऐसा तो नहीं कहा जा सकता कारण, अपने न्यायकुमुद के मंगलाचरण में प्रभाचन्द्र ने जिनेन्द्रदेव के विशेषण रूप से अकलंकदेव और अनन्तवीर्य का उल्लेख किया है तथा उसी ग्रन्थ में अन्यत्र दुःप्राप्य अकलंकदेव की सरणि को अनंतवीर्य की उक्ति से व्यक्त' और विवेचित बतलाया है। जब कि दूसरे अनन्तवीर्य अपनी लघुवृत्ति में प्रभाचन्द्र का स्मरण करते हुए कहते हैं कि- प्रभाचन्द्र की उदार वचन चन्द्रिका (प्रमेयकमल) का प्रसार रहते हम सरीखे खद्योतों को कौन पूछता है। अतः दोनों अनन्तवीर्य दो जुदे २ व्यक्ति हैं।

प्रथम अनन्तवीर्य तो अकलंक के कुछ ही समय बाद हुए जान पड़ते हैं। क्यों कि अकलंक के प्रकरणों के आद्य टीकाकार ये ही सिद्ध होते हैं। अतः उन्हें ईसा की आठवीं शताब्दी के मध्य काल का विद्वान मानना अनुपयुक्त न होगा।

२१—दूसरे अनन्तवीर्य प्रभाचन्द्र के बाद के हैं, कुछ ऐतिहासिकों का मत है कि ये ११ वीं शताब्दी के अन्त में हुए हैं। इनके सम्बन्ध में दर्शन में एक गवेषणापूर्ण लेख प्रकाशित किया जायेगा।

१६ श्री देवसेन—इनके बनाये हुए नयचक्र आलापपद्धति आराधनासार और दर्शनसार नामक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। दर्शनसार की समाप्ति वि० सं० ९९० (ई० स० ९३३) में हुई है अतः ये ईसा की दशवीं शताब्दीके पूर्वार्द्ध के विद्वान है।

इस प्रकार २२ आचार्यों का परिचय पाठकों की

धर्म-परिवर्तन

ले०— श्रीमान पं० कैलाशचन्द्र जी शास्त्री, बनारस।

भारतवर्ष में पुरातनकाल से ही धर्म और उसके प्रचारकों का बोलबाला रहा है। उस समय भी प्रत्येक धर्म के प्रचारक सर्वत्र घूमते फिरते थे और अभ्युदय तथा निःश्रेयस का मार्ग बतलाकर अपने २ धर्म की विशेषतायें श्रोताओं के सामने रखते थे। कभी २ विभिन्न धर्मावलम्बियों में अखाड़ेबाजी भी हो जाती थी। किन्तु उसका स्थान प्रायः राजसभा में ही नियत था क्यों कि उस समय का राजन्यवर्ग भारतीय और भारतीयधर्म का ही अनुयायी होता था। नरेश लोग धर्मचर्चा और धर्मगुरुओं के आश्रयदाता होते थे और 'यथा राजा तथा प्रजा' की नीति का बोलबाला था। अत धर्मगुरु भी राजसभाओं पर ही छापा मार कर राजा को अपने धर्म में लाने का प्रयत्न करते थे। राजा के स्वधर्मी होने पर उनके आश्रित लोग देखा देखी राजा के धर्म को स्वयं

(पिछले पृष्ठका शेष)

भेट कराया जाता है। समयक्रम के अनुसार नम्बर देने का प्रयत्न मैंने किया है किन्तु इसमें भी कई कारणों से सुव्यवस्थितता नहीं आने पाई है। सुनिश्चित समय निर्णीत न होनेसे पद पद पर भूल होने की संभावना बनी रहती है। अन्त में मैं 'वीर' के उक्त लेखक को धन्यवाद देता हूं जिनके कारण मुझे इस विषयपर लेख लिखने का अवसर मिल सका।

अपना लेते थे, प्रजा भी उससे बाहिर न रहती थी। ये सब कुछ होता था किन्तु इस सब का कारण आध्यात्मिक ही था, सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक नहीं। धर्म के मूल में जो दृष्टि काम करती है उस समय के निरीह धर्मप्रचारकों की अन्तरात्मा से यह दृष्टि लुप्त नहीं हुई थी। सब की रगों में भारतीय रक्त, शरीर पर भारतीय वेष-भूषा और मस्तिष्क में भारतीय आचार-विचार का एकाधिपत्य होने के कारण धर्म-प्रचार में आज कल के दूषित ही नहीं किन्तु विषाक्त (जहरीले) वातावरण की गन्ध भी न आने पाई थी। किन्तु राजनैतिक परिस्थितियों ने पुराने धर्मगुरु भारत को आज कुछ का कुछ बना डाला, जहां पहले धर्म राजनीति पर शासन करता था आज वहां राजनीति धर्म पर शासन कर रही है। आप कहेंगे— सन् १८५७ के गदर के बाद महारानी विक्टोरिया ने धर्म में हस्तक्षेप न करने की घोषणा की थी और तब से उनके उत्तराधिकारी उनकी घोषणा का बराबर पालन करते आते हैं ऐसी दशा में धर्म पर राजनीति के शासन करने की बात सत्य नहीं है। भोले धर्मात्माओ! यदि विक्टोरिया की घोषणा ने तुम्हें तो अन्ध न बनाया होता और तुम इस राजनैतिक दृष्टि को समझ सकते तो शासकों की नीति के कारण धर्म-कर्म का नाश होजाने के बाद भी महारानी विक्टोरिया की घोषणा की दुहाई दे दे कर शिमलाशैल वासी प्रभुओं की सुखनिद्रा में

बाधा पहुंचाने की मूर्खता कभी न करते। उन्होंने धर्म की भावना पर प्रहार नहीं किया अर्थात् मुसलमानों की तरह मन्दिर और मूर्तियां तोड़कर मस्जिद और मकबरे नहीं बनवाये, स्वयं किसी धर्मके जुलूसों को नहीं रोका जबरदस्ती ईसाई बनाने के लिये किसी को तलवार के घाट नहीं उतारा स्त्री जातिके सतीत्व को भ्रष्ट करने की दुश्चेष्टा नहीं की किन्तु धर्मकी भावना जिस वस्तु से उत्पन्न होती है उस पर प्रहार किया है, उनकी शिक्षा और दीक्षा ने मन्दिरों को वीरान बना दिया है, उस समय एक मन्दिर टूटने पर दस बन जाते थे किन्तु आज सब ज्यों के त्यों रहने पर भी किसी को उस राह से चलने का उत्साह नहीं होता, लोग खुदबखुद उन्हें बेकार चीजों में गिनने लगे हैं। जबरदस्ती धर्म भ्रष्ट नहीं किया गया किन्तु रेलयात्रा ने सबकी ग्लानि दूर भगा दी है। छूत और अछूत एक ही स्थान पर डटकर बैठते हैं, फैशन के तौर तरीके ने छूत अछूत की पहचानको ही धता बता दिया है। रेल पर लगे नल से पानी लेनेमें और टिकट खरीदनेमें बची खुची कमी पूरी हो जाती है। यह तो हुआ बाह्य छूआ-छूत का हाल। अब आन्तरिक का सुनिये—बाजार का घी विदेशी या नाम की चीज ने पवित्र कर रक्खा है, एक ही कांच के वर्तनसे सब लोग सोडावाटर गटक जाते हैं, डाक्टरी दवाईका तो कहना ही क्या है, उस में तो सब मकारों ने अपना अधिकार कर रक्खा है फिर भी सब लोग खुशी २ इन सब का सेवन करते हैं और उस समय महारानी विक्टोरिया की घोषणा का किसी को स्मरण नहीं होता। यद्यपि जबरदस्ती सतीत्व भ्रष्ट करने वाले पुरुष से शराब और तिरछी-चितवन का निशाना बनाकर पुरुषों का सर्वस्व लूटने वाली वेश्या कम भयानक नहीं है किन्तु दर्शक पहली घटना को अधिक तूल देते हैं, दूसरी को न कुछ। यही दशा सर्वत्र है।

अतः धर्म की भावना के उद्गम स्थानपर प्रहार होनेसे अधर्मात्माओंका तो कहना ही क्या, धर्मात्माओं के भी अन्तःकरणमें धर्मका मूल तत्व लुप्त होचला है। और उसका स्थान समाज अर्थ और राजनीति ने ले लिया है। आध्यात्मिक सिंह के शरीर की धर्मरूपी खाल उससे जुदा करके अब समाज अर्थ और राजनीति से बने उसके पुतले को उढा दी गई है लोग समझते हैं धर्म जीवित है किन्तु उस आवरण को उठाकर देखने की ओर किसी का ध्यान नहीं है। पर ध्यान जाय भी तो कैसे जाय; सामाजिक विषमता से त्रस्त मानव संसार के सामने राजनीति विशारदों ने एक नया प्रलोभन फेंक दिया है, वह प्रलोभन है "धार्मिक अनुपात के आधार पर होने वाला राजनैतिक बटवारा।" इस बटवारे ने अशिक्षित समाज के शिक्षित लोगों में खलबली डालदी है, धर्म के नाम पर होने वाले इस सौदे से वे अधिक से अधिक लाभ उठाया चाहते है। वे ऐसी समाज की एसमें हैं जिसमें पहुँच कर उनकी सामाजिक और राजनैतिक महत्वाकांक्षाएं पूर्ण होसकें। उधर दूसरी ओर कौंसिलों में अधिक सीट प्राप्त करनेकी आकांक्षा से अल्प संख्यक समुदाय अपनी संख्या बढ़ाने की धुनमें दीवाना होरहा है। फलतः हरिजनों के कथित नेता डाक्टर आंबेडकर ने इस परिस्थिति से लाभ उठाने के लिये धर्म के बाजार में अनुयायियों सहित अपनेको लाकर खड़ा कर दिया और 'जो लगावे सो पावे' की डुग्गी पिटवादी। तबसे धर्म-दूतोंकी नींद हराम हो

गई है और वे हिन्दू समाजकी संख्याके आधे भागको अपने में मिलाकर भावी राजनैतिक क्षेत्रका नकशा तैयार करने में लग गये है। जबसे डाक्टर अम्बेड-करने यह घोषणा की है—उनके बंगले पर अनेक ग्राहक भाव-ताव करने के लिये पहुंच चुके है; किन्तु अभी तक सौदा तय नहीं हो सका है। इधर यह होरहा है और उधर हिन्दू समाजके धर्मप्राण लोग अछूतों पर अत्याचार करके अपने पैरमें कुल्हाड़ी मारने का श्रेय लूटनेकी धुन में मस्त है।

एक गांव के सवर्णों ने अछूतों पर इसलिये अत्याचार किया कि वे लोग ताम्बे पीतलके बर्तन काममें लाते थे। दूसरे गांवमें अछूतोंपर इसलिये मार पड़ी कि उन्होंने अपनी बरातको चांवल में घी परस दिया था। ताम्बे पीतलके बर्तनों और घी भक्षण के साथ हिन्दू धर्मका खास नाता कबसे हुआ है यह मालूम नहीं। इस दशामें मुसलमान धर्म स्वीकार कर लेने पर कायर हिन्दुओंसे वे अपना बदला ब्याज सहित वसूल करनेकी कोशिश जरूर करेंगे। हिन्दुओं के ऐसे ही कार्यों से शिक्षित हरिजन युवकों में विद्वेषकी आग फैलने लगी है। अस्तु, धर्म परिवर्तनका व्यापार करने के लिये डाक्टर अम्बेदकर की सलाह से लखनऊ में एक 'धर्मकी हाट' लगी थी। बहुत से ग्राहक और माल उसमें आये थे किन्तु इस हाट के खेल के खास मदारी डाक्टर अम्बेडकर किसी कारणसे इसमें न आसके, इसलिये इसबार सौदा न पट सका। इस 'धर्मकी हाट' पर 'हिन्दुस्थान' पत्रमें एक सम्पादकीय टिप्पणी प्रकाशित हुई है उसे हम यहां उद्धृत करते हैं।

धर्म की हाट—

"धार्मिक विषयों के सम्बन्ध में पैदा होने वाले भ्रम अथवा सन्देह को दूर करने के लिये होने वाले धर्म-सम्मेलनों का महत्व अब केवल धर्म की हाट के बराबर रह गया है। डाक्टर अम्बेडकर की अध्यक्षता में होने वाले लखनऊ के सर्व-धर्म-सम्मेलन पर भिन्न भिन्न धर्म वालों की सजाई हुई धर्म की दुकानें देख कर किस को दुःख न हुआ होगा? जब से हरिजनों में धर्म परिवर्तन करने की भावना को जगा दिया गया है, तब से इस दुकानदारी को सजाने में और भी अधिक तन-मन-धन लगा कर मेहनत की जाने लगी है। हरिजनों को मनुष्य बनाने की अपेक्षा अधिक कोशिश उनको लावारिस समझ अपने-अपने में मिलानेकी की जा रही है। उस के लिये अपने धर्म की विशेषता बताने की अपेक्षा दूसरों पर कटाक्ष कर सांसारिक सुख-सुभीते का प्रलोभन अधिक दिया जाता है। लखनऊ से प्राप्त हुए समाचारों से मालूम हुआ है कि वहां पर्चेबाजी खूब हुई है और बाहर से आने वाले हरिजनों के लिये आगत-स्वागत की भी खूब तय्यारियां की गई हैं। मुसल-मानों; सिखों, ईसाइयों आदि की ओर से शामियाने, लंगर, बिजली के पंखों और बिजली की बत्तियां आदि का प्रबन्ध किया गया है। धर्म या धर्मान्तर का इन चीजों के साथ क्या सम्बन्ध है, यह समझने में हम सर्वथा असमर्थ हैं। डा० अम्बेडकर ने हरि-जनों में धर्म-परिवर्तन की भावना पैदा करके जो पाप किया है, उसका यह स्वाभाविक परिणाम है कि धर्म अब केवल दिखावे और दुकानदारीकी चीज रह गया है इससेहरिजनोंका कुछ भी लाभ नहीं हो सकता। यदि इन में से किसी को पारसमणि मान कर हरिजन उसको अपनायेंगे, तो पीछे वे वैसे ही पछतायेंगे जैसे दुगने तिगुने नोट बनाने वाले साधुओं के चक्कर में

फंसने वाले गृहस्थ पछताया करते हैं। हरिजनों में धर्म के परित्याग या परिवर्तन की भावना का पैदा होना ही हमारी दृष्टि में अनिष्टकर है और उस से भी अधिक अनिष्टकर है धर्म-सम्मेलनों के नाम से लगने वाली हाट में जाकर धर्म की पिपासा पूरी करने की आशा रखना।"

हिन्दू समाजमें धर्म परिवर्तनकी दियासलाई दिखा कर डा० अम्बेडकर अभी दूर खड़े तमाशा देख रहे हैं किन्तु इस दियासलाई ने अपना काम करना शुरू कर दिया है। किसी कारण से हिन्दू समाज छोड़ने के लिए उत्सुक लोग इस अवसर से लाभ उठाने की की ताक में हैं। एक ने तो अपनी सुन्नत भी करवा डाली। गांधीजी के कथनानुसार शराबी और दुराचारी हीरालाल गांधी ने मुसलमान पंजाबियों के करजे से जान छुड़ाने के लिए इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लिया और वह अब्दुल्ला गाँधी बन गये, अब मुसलमान उन्हें कौंसिल में भेजना चाहते हैं। कर्ज देने वालों के भय से जान छुड़ाने वाले व्यक्ति अब मोटर में बैठ कर बम्बई की सड़कों पर शान से घूमता है और उसे देख कर हजारों कण्ठों से निकली हुई 'अल्लाहो-अकबर' की बुलन्द आवाज़ आसमान को कंपा देती है। उसने हिन्दू समाज को क्यों छोड़ा, इसे जानने वाले अच्छी तरह जानते हैं किन्तु जुम्मेकी नमाज़ में इस्लाम के बन्दों की जबरदस्त भीड़ के सामने बम्बई की जामामस्जिद में अब्दुल्ला गाँधी बन कर उसने जो वाज़ (उपदेश) दिया उसमें बतलाया कि इस्लाम ही संसार का सबसे सच्चा धर्म है और इसलिये मैं उसकी शरण में आया हूँ। बेशक हीरालाल गाँधी जैसे व्यक्तियों के लिये सच्चे-धर्म की जो परिभाषा आवश्यक हो सकती है वह आजकल के इस्लाम में अवश्य है। किन्तु वे इतना स्मरण रखें कि नवमुस्लिम और मुगलों के अन्तःपुर में पदार्पण करने वाली षोडशी, दोनों का आदि और अन्त एक सा होता है, अस्तुः।

डाक्टर अम्बेडकर की छोड़ी हुई फुलझड़ी से उड़कर एक आध चिनगारी जैन समाज में भी आगई जान पड़ती है। जैनमित्र वर्ष ३७, अंक ३१ के समाचारों से मालूम हुआ कि उसके पास सिलवानी के पचास कुमारों के हस्ताक्षर से एक अल्टीमेटम आया है उसमें लिखा है कि या तो समाज उनके विवाह की व्यवस्था करे अन्यथा वे धर्म-परिवर्तन कर डालेंगे। यह सिलवानी किधर है यह हमें मालूम नहीं है और इसीलिये हम उन युवकों के देश तथा जाति की परिस्थिति से भी अनभिज्ञ हैं। हम इस सम्बन्ध में समाज से क्या कहें, समाज के पास स्त्रियों का कोई स्टोर तो है नहीं जहां से वह स्त्रियां सप्लाई कर सके। जिन के कन्यायें हैं उन पर यह ज़ोर नहीं डाला जा सकता कि वह अमुक युवक से अपनी कन्या ब्याहो। और यदि जातिमें कुमारों से कुमारियों की संख्या कम हुई तब तो इस प्रतिबन्ध से भी काम न चलेगा। अच्छा किसी तरह से समाजने कन्याओं की व्यवस्था कर भी दी और युवकों ने इस बेकारी के जमाने में उनके भरण-पोषण की व्यवस्था न कर सकने के कारण धनकी मांग उपस्थित की और जैनमित्रको लिख दिया कि— "धनकी व्यवस्था करो अन्यथा हम दोनों स्त्री-पुरुष विधर्मी बन जायेंगे"। तब धनकी भी पहले व्यवस्था करनी होगी। अन्यथा स्त्री न मिलने से एक ही विधर्मी होता, किन्तु स्त्री मिलने पर युगल विधर्मी होजायेगा। अतः यदि समाज पंडित और उपदेशक

तैयार न करके उसके स्थान में कन्याएं तैयार करने का कारखाना खोलदे और विद्यार्थियों को वृत्ति देने के स्थानमें कुमारों को कन्यादान करके उनके भरण पोषण की मासिक व्यवस्था करदे तो इस युगमें जैनधर्मका अच्छा प्रचार होगा, और स्त्री तथा धन पाकर हजारों युवक "जैनधर्म ही संसारका सच्चा धर्म है" के तुमुल नादसे संसारको थर्रा देंगे। धर्म प्रचार के पुराने नुस्खे को बन्द करके इस नवीन उपचार की भी परीक्षा अवश्य कर देखनी चाहिये, अवश्य लाभ होगा, समाज की संख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जायेगी।

समाज से स्त्री-धन की व्यवस्था करनेकी अपील करके अब हम अपने विधर्मी होने के लिये उद्यत भाइयों से दो बातें कहना चाहते हैं। भाइयो! अल्टीमेटम देने से पहले क्या आपने स्त्री सप्लाई करने वाली धर्मकी दूकानसे बात-चीत पक्की करली है? यदि न की हो तो कुछ समय तक और भी प्रतीक्षा कीजिये। शायद समाज हमारी अपील पर ध्यान देकर आपके लिये स्त्री और धन दोनों की व्यवस्था का प्रबन्ध कर सके। किन्तु यह स्मरण रखिये कि मनुष्य जीवनमें अभावों की कमी नहीं है। सांसारिक प्रलोभनों के द्वारा मनुष्यों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले धर्म वेश्या से अधिक मूल्य नहीं रखते। उनकी दूकानों पर एक दो अभावों की पूर्ति हो सकती है, किन्तु जहां पहुंच कर समस्त अभावों का अभाव होजाता है, वहां पहुंचाने वाली वस्तु ही जीवनकी सच्ची संगिनी है। २०-२५ वर्ष जीवन बिताने के बाद इतने ही समयके लिये भौतिक संगिनी (स्त्री) के लिये लालायित होकर अपने जीवन को बर्बाद करनेका संकल्प करना बुद्धिमानी नहीं है। इसलिये चिकनी चुपड़ी बातें करके कुपथ पर लेजाने वाले मित्रों से सावधान रहो। केवल एक स्त्री की प्राप्तिके लिये अपने को कष्टों के गहरे गड्ढेमें न डालो। आज तुम्हारे पास केवल एक ही अभाव है कलको विधर्मी बनकर किसी स्त्रीका हाथ पकड़ लेने पर अभावों की दीवार खड़ी हो जायगी जिसे लांघना इस जमाने में संभव नहीं है।

भूल सुधार

उपरोक्त लेख के शीर्षक में धर्म-परिवर्तन के स्थान में असावधानी से धर्म-परिवतर्न छप गया है अतः पाठक उसे शुद्ध करके "धर्म-परिवर्तन" पढ़ें।

—(:*:)—

वेदों में असंभव बातें

(ले०—श्रीमान पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ)

यदि अभ्युपगम सिद्धान्त से आर्य समाज के ईश्वर के स्वरूप को मान भी लिया जाय तब भी यह नहीं कह सकते कि वेद ईश्वरकृत हैं, क्योंकि इन में असंभव बातों का भी वर्णन मिलता है। कहने का तात्पर्य यह है कि कथन में अन्यथापन; अज्ञान, प्रमाद और द्वेष से आता है। एक विद्वान व्याख्यान दे रहा है— यदि कोई व्यक्ति उससे ऐसा प्रश्न करता है जिस का उस को ठीक उत्तर मालूम, नहीं तथापि वह उस का कुछ न कुछ उत्तर दे देता है जिस से कि उस की अवज्ञा न हो कि विद्वान महाशय अज्ञानी है। या यदि कोई व्यक्ति किसी के तात्पर्य को उल्टा समझता है अपनी समझ के अनुसार ही वह उसका उपदेश देता है। उपर्युक्त प्रकार के कथन अज्ञान कृत कथन हैं। यदि कोई शिष्य आकर गुरु जी से प्रश्न करता है साथ ही साथ यह भी कहता है कि क्या गुरु जी ! इस का उत्तर अमुक है ? गुरु जी महाराज आराम कर रहे हैं यदि वह वास्तविक उत्तर देंगे तो उन को पुस्तक देखनी होगी तथा पुस्तक के देखने से आराम में बाधा आवेगी। अतः वे कह देते हैं कि ठीक है, यह प्रमादकृत उपदेश है। एक गुरु जी कुछ शिष्यों को पढ़ाया करते थे अचानक गुरु जी एक शिष्य से नाराज हो गये तब उन को चिन्ता हुई कि यदि इसको पढ़ाया जायगा तो यह मेरा मुकाबिला करेगा। अतः उस को कुछ का कुछ पढ़ा देना चाहिये उन्हों ने ऐसा ही किया यह द्वेषवश उपदेश है। जहां अज्ञान, प्रमाद, और द्वेष आदि दोष हैं वहाँ ही उपदेश में अन्यथापन की संभावना है न कि वहाँ, जहां कि सर्वज्ञता प्रमाद रहित और वीतरागता है, क्यों कि जो सर्वज्ञ है वह संसार के संपूर्ण पदार्थों को जानता है कोई ऐसी बात नहीं, चाहे वह किसी भी काल की क्यों न हो या चाहे कितनी भी सूक्ष्म क्यों न हो जिस को सर्वज्ञ यथावत नहीं जानता। सर्वज्ञ को पदार्थ की प्रत्येक शक्ति का परिज्ञान है, वह स्पष्टतया जानता है कि अमुक २ पदार्थ अमुक २ कार्य के लिये उपयोगी हैं।

ज्ञानके साथ २ ईश्वरमें प्रमादरहितत्व और वीतरागतादिक अन्य गुण भी माने गये हैं अतः ईश्वर के कथन में अन्यथापन नहीं आसकता और जब अन्यथापन नहीं आसकता तो उस के कथन में असम्भव दोष याने असम्भव बातों का सम्भव रीति से कथन भी नहीं हो सकता, क्यों कि व्यापक के अभाव में व्याप्य नहीं रहता, यह न्याय का सर्वतन्त्र सिद्धान्त है। यदि वेद ईश्वर के उपदेश होते तो इन में असभव बातों का वर्णन न मिलता। अतः स्पष्ट है— कि वेद ईश्वर कृत नहीं। यह बात कि " वेद में असंभव बातों का वर्णन है " असिद्ध नहीं क्यों कि निम्न लिखित वेद मन्त्र इस बात का समर्थन करते हैं—

यजुर्वेद अध्याय ४ मंत्र ६—

पदार्थः— जिस लिये हे (अग्ने) व्रतपते जगदीश्वर आप वा बिजली सत्य धर्मादि नियमोंके (व्रतपाः) पालन करने वाले है इस लिये (त्वे) उस आप व बिजली में मैं (व्रतपाः) पूर्वोक्त व्रतों के पालन करने

वाली क्रिया वाला होता हूँ (या) जो (इमम्) यह (नव) आप और उस की (तनुः) विस्तृत व्याप्ति है (सा) वह (मयि) मुझ में (यो) जो (वा) यह (मम) मेरा (तनूः) शरीर है (सा) सो (त्वयि आप व उस में है (व्रतानि) जो ब्रह्मचर्यादि व्रत है वे मुझ में हों और जो (मे) मुझ में हैं वे (त्वयि)तुम्हारे में हैं जो जो आप वा वह (तपस्पतिः) जितेन्द्रियत्वादि पूर्वक धर्मानुष्ठान के पालक नियत हैं सो (मे) मेरे लिये (तपः) पूर्वोक्त तप को (अनुमन्यताम् विज्ञापित कीजिये वा करती है और जो आप वा वह — (दीक्षापतिः) व्रतोपदेशों के रक्षा करने वाले हैं सो (मे) मेरे लिये (दीक्षा) व्रतोपदेश को (अनुमन्यताम्) आज्ञा कीजिये वा करती है सो इस लिये भी (नौ) मैं और आप पढ़ने हारे दोनों प्रीति के साथ वर्तकर विद्वान धार्मिक हों कि जिससे दोनों की विद्यावृद्धि सदा होवे ॥ ६ ॥

यजुर्वेद अध्याय ५ मन्त्र ३२—

पदार्थ — हे जगदीश्वर ! जिस कारण आप (उशिक्) कान्तिमान (असि) हैं- (अंघारिः) खोटे चलन वाले जीवों के शत्रु वा (कविः) क्रान्तप्रज्ञ (असि) है (बम्भारिः बन्धन के शत्रु वा तारादि तन्तुओं के विस्तार करने वाले (असि) हैं (दुवस्वान्) प्रशंसनीय सेवा युक्त स्वयं (शुन्ध्यूः) शुद्ध असि हैं (कृशानुः) पदार्थोंको अति सूक्ष्म (पवमानः) पवित्र और (परिषद्य) सभा में कल्याण करने वाले (असि) हैं जैसे (प्रतक्वा) हर्षित और (नभः)दूसरे के पदार्थ हर लेने वालों को मारने वाले (असि) है (हव्यसूदन) जैसे होम के यज्ञ को यथायोग्य व्यवहारमें लाने वाले और (सम्राट्) सुख दुःख को सहन करने और कराने वाले (असि) है, जैसे (स्वर्ज्योतिः) अन्तरिक्ष को प्रकाश करने वाले (ऋतधामा) सत्यधाम युक्त (असि) है वैसे ही उक्त गुणों से प्रसिद्ध आप सब मनुष्यों को उपासना करने योग्य है, ऐसा हमलोग जानते हैं ॥ ३२ ॥

यजुर्वेद अध्याय ७ मन्त्र ३७—

पदार्थः— ईश्वर कहता है कि हे (इन्द्र) सब सुखों के धारण करने हारे (शूर) शत्रुओं के नाश करनेमें निर्भय ! जिस से तू (उपयामगृहीतः) सेना के अच्छे २ नियमों से स्वीकार किया हुआ (असि) है इस से (मरुत्वते) जिस में प्रशंसनीय वायु की अस्त्र विद्या है उस (इन्द्राय) परमैश्वर्य पहुचाने वाले युद्ध के लिये (त्वा) तुझको उपदेश करता हूं कि (ते) तेरा (एष) यह समानाधिकार (योनिः) इष्ट सुखदायक है। इसमें (मरुत्वते) (इन्द्राय) उक्त युद्धके लिये यत्न करते हुये तुझको मैं अंगीकार करता हूँ और (सजोषाः) सबसे समान प्रीति करने वाला (सगणः) अपने मित्र जनों के सहित तू (मरुद्भिः) जैसे पवन के साथ (वृत्रहा) मेघके जलको छिन्न भिन्न करने वाला सूर्य (सोमम्) समस्त पदार्थों के रसको खींचता है। वैसे सब पदार्थों के रसको (पिब) सेवन कर और इससे (विद्वान) ज्ञानयुक्त हुआ तू (शत्रून्) सत्य न्यायके विरोधमें प्रवृत्त हुए दुष्ट जनों का (जहि) विनाश कर (अथ) इसके अनन्तर (मृधः) जहां दुष्टजन दूसरे के सुखसे अपने मनको प्रसन्न करते हैं उन संग्रामों को (अपनुदस्व) दूरकर और (नः) हम लोगों को (विश्वः) सब जगह से (अभयम्) भय रहित (कृणुहि) कर।

यजु० अध्याय १३ मन्त्र ५१—

पदार्थः— हे राजन् तू जो (हि) निश्चित (अजः) बकरा (अजनिष्ट) उत्पन्न होता है (सः) वह (अग्रे) प्रथम (जनितारं) उत्पादक को (अपश्यत्) देखता है

जिनसे (मेध्यासः पवित्र हुए (देवाः) विद्वान (अग्रम्) उत्तम सुख और (देवताम् दिव्य गुणों के (उपासन) उपायको प्राप्त होते हैं और जिमसे (गोहम्) वृद्धियुक्त प्रसिद्धि को (आपन्) प्राप्त होवें (तेन) उससे उत्तम गुणां उत्तम सुख तथा (तेन) उससे वृद्धिको प्राप्त हो जो (आरण्यम्) बनेली (शरभम्) शेही (ते) तेरी प्रजाको हानि देने वाली है उसको (अनुदिशामि) बतलाता हूँ (तेन) उससे बचाये हुये पदार्थ से (चिन्वानः) बढ़ता हुआ (तन्वः) शरीर में (निषीद) निवास कर और (तम्) उस (शरभम्) शल्यकी को (ते) तेरे (यम्) जिस शत्रु से हम लोग (द्विष्मः) द्वेष करें उसको (शोकान्) शोकरूप (अग्नेः) अग्नि से (शुक) शोक अर्थात शोकसे बढ़ कर शोक अत्यन्त शोक (ऋच्छतु) प्राप्त होवे ॥४१॥

यजु० अध्याय २१ मंत्र ४३—

पदार्थः— हे (होतः) देने हारे जैसे (होता) लेने वाला (अश्विना) पढ़ाने और उपदेश करने वालों को (यक्षत) संगत करे और वे (अद्य) आज (छागस्य) बकरा आदि पशुओं के (मध्यतः) बीचमें (हविषः) लेने योग्य पदार्थका (मेदः) चिकना भाग अर्थात घी दूध आदि (उद्भृतम्) उद्धार किया हुआ (आत्ताम्) लेवें वा जैसे (द्वेषोभ्यः) दुष्टों से (पुरा) प्रथम (गृभः) ग्रहण करने योग्य (पौरुषेय्याः) पुरुषों के समूह में उत्तम स्त्री के (पुरा) पहले (नूनम्) निश्चय करके घस्ताम्) खावें वा जैसे (यवसप्रथमानाम्) जो जिनका पहला अन्न (घासे अज्राणाम्) जो खाने में आगे पहुंचने योग्य (सुमत्क्षराणाम्) जिनके उत्तम २ आनन्दोंका कम्पन आगमन (शतरुद्रियाणाम्) दुष्टोंको रुलाने हारे सैकड़ों रुद्र जिनके देवता (पीवोपवसनानाम्) वा जिन के मोटे २ कपड़ों के ओढ़ने पहिरने (अग्निष्वात्तानाम्) वा जिन्हों ने भली भाँति अग्नि विद्या का ग्रहण किया हो इन सब प्राणियों के (पार्श्वतः) पार्श्वभाग (श्रोणितः) कटि प्रदेश (शितामतः) तीक्ष्ण जिस में कच्चा अन्न उस प्रदेश (उत्सादत) उपाड़ते हुए अङ्ग और (अंगादङ्गात्) प्रत्येक अंग से व्यवहार वा (अवत्तानाम्) नमे हुए उत्तम अंगों (एव) ही के व्यवहार को (अश्विना) अच्छे वैद्य (करतः) करें और (हविः) उक्त पदार्थों से खाने योग्य पदार्थ का (जुषेताम्) सेवन करें वैसे (यज) सब पदार्थों वा व्यवहारों की संगति किया कर ॥ ४३ ॥

यजुर्वेद अध्याय २१ मन्त्र ५९—

पदार्थः— हे मनुष्यो जैसे (अयम्) यह (पक्ती) पचाने के प्रकारों को (पचन्) पचाता अर्थात् सिद्ध करता और (पुरोडाशान्) यज्ञ आदि कर्म में प्रसिद्ध पाकों को (पचन् पचाता हुआ (यजमानः) यज्ञ करने हारा (होतारम्) सुखों के देने वाले (अग्निम्) आग को (अवृणीत्) स्वीकार वा जैसे (अश्विभ्याम्) प्राण और अपान के लिये (छागम्) छेरी (सरस्वत्यै) विशेष ज्ञानयुक्त वाणी के लिये (मेषम्) मेढ़ और (इन्द्राय) परम ऐश्वर्य के लिये (ऋषभम्) बैलको (बध्नन्) बाँधते हुए वा (अश्विभ्याम्) प्राण, अपान (सरस्वत्यै) विशेष ज्ञानयुक्त वाणी और (सुत्राम्णे) भली भांति रक्षा करने हारे (इन्द्राय) राजाके लिये (सुरासोमान्) उत्तम रस युक्त पदार्थों का (सुन्वन्) सार निकालते हैं वैसे तुम (अद्य) आज करो।

यजु० अ० २१ मंत्र ६०—

पदार्थः— हे मनुष्यो! जैसे आज (रूपस्थाः) भली भाँति समीप स्थिर होने वाले और (देवः) दिव्य

गुण वाला पुरुष (वनस्पतिः) वट वृक्ष आदि के समान जिस २ प्राण और अपान के लिये (छागेन) दुःख विनाश करने वाली छेरी आदि पशु से (सरस्वत्यै) वाणी के लिये (मेषेण मेंढ़ा से (इन्द्राय) परम ऐश्वर्य के लिये (वृषभेण) बैलसे (अक्षन्) भोग करें (उपयोग लें) (तान्) उन (मेदस्वतः) सुन्दर चिकने पशुओं के प्रति (पचता) पचाने योग्य वस्तुओं का (अगृभीषत) गृहण करें (पुरोडाशैः) प्रथम उत्तम संस्कार किये हुए विशेष अन्नों से (अवीवृधन्त) वृद्धि को प्राप्त हो (अश्विना) प्राण अपान (सरस्वती) प्रशंसित वाणी (सुत्रामा) भली भांति रक्षा करने हारा (इन्द्र) परम ऐश्वर्यवान राजा (सुरासोमान्) जो अरक खींचने से उत्पन्न हो उन औषधि रसों को (अपुः) पीवें वैसे आप (अभवन्) होओ।

यजु० अ० ३७ म० ६

पदार्थः— हे मनुष्य! जैसे मैं (पृथिव्याः) अन्तरिक्ष के (देवयजने) विद्वानों के वक्षस्थल में (वृष्णः) बलवान् (अश्वस्य) अग्नि आदि के (शक्ना) दुर्गन्ध के निवारण में समर्थ धूम आदि से (त्वा) तुझको (मखाय) वायु को शुद्ध करने के लिये (त्वा) तुझको (मखस्य) शोधक पुरुष के रोग की निवृत्ति के अर्थ (त्वा) तुझको (धूपयामि) सम्यक् तपाता हूँ (पृथिव्याः) पृथिवी के बीच विद्वानों के (देवयजने) यज्ञस्थल में (वृष्णः) वेगवान (अश्वस्य) घोडे की (शक्ना) लेंडी लीद से (त्वा) तुझको (मखाय) पृथिव्यादि के ज्ञान लिये (त्वा) तुझको (मखस्य) तत्वबोध के (शीर्ष्णे) उत्तम अवयव के लिये (त्वा) तुझको (धूपयामि) सम्यक् तपाता हूँ। (पृथिव्याः) भूमि के बीच (देवयजने) विद्वानों की पूजास्थल में (वृष्णः) बलवान् (अश्वस्य) शीघ्रगामी अग्नि के (शक्ना) तेज आदि से (त्वा) तुझको यज्ञ के (शीर्ष्णे) उत्तम अवयवों के लिये (त्वा) तुझको (मखाय) यश के लिये (त्वा) तुझको (मखस्य) यज्ञ के (शीर्ष्णे) उत्तम अवयव के लिये (त्वा) तुझको (मखाय) यज्ञ के लिये (त्वा) आपको और (मखस्य) यज्ञ के (शीर्ष्णे) उत्तम अवयव के लिये (त्वा) तुझको (धूपयामि) सम्यक् तपाता हूँ॥ ६॥

ऋग्वेद अष्टक ४ अ० ७ वर्ग ४ सू० ३२ म० २–

पदार्थः— हे मनुष्यो! जैसे (सूर्येण) सूर्य के सहित बिजली रूप अग्नि (अद्रिम) मेघको (रुजत) स्थिर करता और (कवीनाम्) विद्वानों के (मातरा) माता पिताको (अवासयन्) बसाता है वैसे ही जो राजा [स्वाधीभिः) सुन्दर स्थान जिनके उन नीतियों और (ऋक्वभिः) प्रशंसा के योग्य व्यवहारों के साथ (गृणानः) स्तुति करता और [वावशानः) कामना करता हुआ जैसे सूर्य (उस्रियाणाम्] किरणों के (निदानम्) निश्चयको वैसे निश्चयको (उत् असृजत्) उत्पन्न करता है (सः) वह राजा सबसे सत्कार करने योग्य है। ॥२॥

उपर्युक्त वेद मन्त्रों में से पहले मंत्रमें "मैं और आप पढ़ने पढ़ाने हारे दोनों प्रीति के साथ वर्त कर विद्वान धार्मिक हों कि जिससे दोनों की विद्या-वृद्धि सदा होवे" ऐसा बतलाया गया है। दूसरे में "जैसे होम के द्रव्य को यथायोग्य व्यवहार में लाने वाले और सुख दुःख को सहन करने और कराने वाले हैं, जैसे अन्तरिक्ष को प्रकाश करने वाले और सत्यधाम युक्त हैं वैसे ही उक्त गुणों से प्रसिद्ध आप सब गुणों से युक्त मनुष्यों को प्रार्थना करने योग्य हैं, ऐसा हम लोग जानते हैं" बतलाया गया है।

तीसरे में "ईश्वर कहता है कि .... उन संग्रामों को दूर कर हम लोगों को सब जगह से भय रहित कर" बतलाया गया है। चौथे में "हे राजन्! तू जो निश्चित बकरा उत्पन्न होता है वह प्रथम उत्पादक को देखता है जिस से पवित्र हुए विद्वान उत्तम सुख और दिव्यगुणों के उपायों को प्राप्त होते हैं" बतलाया गया है। पाचवें मंत्र में "बकरा आदि पशुओं के बीच से लेने योग्य पदार्थ का चिकना भाग अर्थात घी दूध आदि बतलाया गया है। छठे में "प्राण और अपान के लिये छेरी, विशेष ज्ञान युक्तवाणी के लिये भेड और परमेश्वर के लिये बैल को बांधते हुए" बतलाया गया है। सातवे में "प्राण और अपान के लिये दुःख विनाश करने वाले छेरी आदि पशुसे, वाणी के लिये मेंढ़ासे, परमेश्वर के लिये बैल से भोग करे" बतलाया गया है। आठवें में 'पृथ्वी के बीच विद्वानों के यज्ञ स्थल में वेगवान घोडे की लीद से तुझ को पृथिव्यादिक के ज्ञान के लिये, तुझ को तत्व बोध के उत्तम अवयव के लिये, तुझ को यज्ञ सिद्धि के लिये, तुझ को सम्यक् तपाता हूँ" बतलाया है। नौवें में "हे मनुष्य जैसे सूर्य के सहित बिजली रूप अग्नि मेघ को स्थिर करता है" बतलाया है। यह सब बातें असम्भव हैं। क्यों कि ईश्वर को सर्वज्ञ सदा सुखी, निर्भय आदि गुणों से सहित माना है उस में ज्ञान वृद्धि, दुःख का सद्भाव, और निर्भीकत्व की भावना का वर्णन असम्भव बात का वर्णन है, राजा का निश्चित बकरा होना और उस का अपने उत्पादक को देखना, तथा उस को पवित्रता का कारण मानना असम्भव कथन नहीं तो क्या है ? जिस को यही नहीं मालूम कि उत्पादक कौन है उस के लिये यह बतलाना कि "वह प्रथम अपने उत्पादक को देखता है" हास्यजनक गप्प नहीं तो क्या है। बकरी से दूध और घी होता है, बकरे का घी दूध नहीं होता यह तो साधारण से साधारण जानता है। जहां वैद्यक शास्त्र में घी दूध की उत्पत्ति के कारण बतलाये हैं वहां यह भी बतलाया है कि ये बातें बकरियों वगैरह स्त्री पर्याय धारियों में ही हो सकती है अतः यह कथन असम्भव है।

न बैलादि के बांधने से ही और न उनके साथ भोग करने से ही परमश्वर्यादिक हो सकते है ये बातें तो प्रकृति के नियम के भी विरुद्ध है, अतः इनका कथन भी असम्भव है। इसी प्रकार घोडे की लीद को पृथिव्यादिक के तत्व-ज्ञान में कारण मानना असम्भव बात का वर्णन है क्यों कि तत्व-ज्ञान से इसका कोई संबन्ध नहीं। तत्व-ज्ञान के अन्दर कारण तो धर्म विशेष को माना है जैसा कि वैशेषिक दर्शन के सूत्र २ अ० १ से स्पष्ट है। यदि वादी के इस कथन को सत्य मान लिया जाय तो न तो यज्ञकी जरूरत है और न विद्यालय और पाठशालाओं की, क्यों कि ये सब ज्ञान के लिये ही किये जाते हैं तथा ज्ञान की प्राप्ति लीद के तपाने से होती है अतः लीद को ही स्थान २ पर तपाना चाहिये। हमारे आर्य समाजी भाई भी इस कथन की असारता स्वयं समझते हैं, अन्यथा उनके गुरुकुलों और यज्ञशालाओं के स्थानों में लीद तपाने के स्थान प्रतीत होते। किन्तु ऐसा है नहीं, अतः स्पष्ट है कि यह कथन भी असम्भव कथन है! दो मेघों के संयोग से ही बिजली उत्पन्न होती है फिर वह उनकी स्थिरता का कारण कैसे हो सकती है, उसके साथ सूर्य-संयोग विशेषका वर्णन व्यर्थ है, क्यों कि सूर्य-संयोग से यहां किसी विशेषता की संभावना नहीं, अतः ऐसा कथन कि सूर्यके संयोग से बिजली मेघों की स्थिरताका कारण है असंभव कथन है जब कि उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि वेदों में असंभव बातों का वर्णन है तो ये सर्वज्ञ के उपदेश किस प्रकार हो सकते है अतः स्पष्ट है कि "प्रचलित वेद ईश्वर कृत नहीं"।

कलह का परिणाम

(ले०—श्रीमान पं० भंवरलाल जी न्यायतीर्थ)

कहानी

मालती कालेज से पढ़कर घर आरही थी तो सड़क पर उसे एक औरत पड़ी हुई दिखाई दी। मालतीने हाथ दिया लेकिन वह न उठी। निदान मालती ने मोटर रोकी और उतर कर उस के पास गई तो भौचक्की सी रह गई। उसके शिरसे खून बह रहा था। मालूम होता था कि किसीने जोर से पत्थर मारा है। मालती ने उसे उठाया और अपनी कार पर रखकर सीधे हास्पिटलका रास्ता लिया। यद्यपि मालती का ध्यान मोटर चलाने में था किन्तु उसके हृदयमें कई शंकाएं उत्पन्न होरहीं थीं। यह कौन है? किसने शहरसे तीन मील दूर लाकर इसको पत्थरों से मारा: और क्यों? आदि कई विचार उसके दिमाग में घूम रहे थे।

यहांसे शहर तीन मील था और हास्पिटल शहर से दो मील पर था। इसलिये मालती जल्दी २ मोटर चला रही थी किन्तु बीचमें शहर को क्रास करना था इसलिये मोटर धीमी करते हुये जितना जल्द होसका वह हास्पिटल पहुंची।

हास्पिटल का समय खतम हो चुका था मालती फौरन ड्यूटी वाले डाक्टर के पास पहुंची लेकिन वहां कोई न था तलाश करने पर एक कम्पाउन्डर मिला। मालती ने पूछा:—

डाक्टर साहब कहां हैं?

"क्यों क्या है?"

"एक जरूरी बीमार को दिखाना है"।

"अच्छा थोड़ी देर में आते है"।

"क्या कर रहे हैं"।

"सो रहे हैं"।

"तो क्या इसी समय न आवेंगे?"

"हां जरा ठहर कर"।

"क्या वे आन ड्यूटी नहीं हैं?"

"हैं, मगर सो रहे हैं"।

यह सुन कर मालती को दुःख हुआ और साथ ही में क्रोध भी चढ़ आया। वह तुरत वहां से लपकी और फोन का चोंगा उठाकर साहब को काल (call) किया। यह देख कर कम्पाउन्डर ने डाक्टर को फौरन जगाया। डाक्टर मालती के पास आ कर बोला:—

मरीज कहां है? साहब को क्यों काल call करते हैं।

"क्या आप डाक्टर हैं?"

"हां"

आप ने मेरी न सुनी इस लिये साहब को फोन देने की आवश्यता हुई। दुःख है कि आप ड्यूटी के समय भी सोते हैं और मरीजों को नहीं देखते। क्या यही ड्यूटी है। हाय बेचारे गरीबों की तो यहां कोई सभाल भी नहीं लेता। खैर पहले मरीज को देखिये।

डाक्टर ने उस औरत को देखा और दवा लगा ड्रेसिंग करके उसे होश में लाया। मालती ने उसे घबराई हुई जान कर सांत्वना दी और कहा:—

बहन चिंता न करो मैं आप की सेवा में हाजिर हूं।

मालती के इन शब्दों से उसे शांति मिली और वह चुपचाप लेटी रही।

मालती ने जब देखा कि उस की अवस्था ठीक है तो वह घर को रवाना हुई और एक नर्स के सुपुर्द उसे करती गई। इस कार्य में मालती के चार घंटे खर्च हो गए थे। घर वाले उस की बाट जोह रहे थे और घबरा रहे थे कि मालती अब तक क्यों न आई। मोटर का हार्न सुनते ही मालती का पिता नीचे उतर आया और घबराते हुए पूछा:— तू कहां गई थी इतनी देर तक कहां रही।

मालती ने अपना सारा हाल उन से कह सुनाया अब तो यह बात सुन कर उस के पिता जी को बहुत खुशी हुई कि हमारी लडकी असहायों के साथ कितनी हमदर्दी दिखाने वाली है और कितना सेवा भाव उस के हृदय में भरा पडा है।

पिता ने उसे भोजन वगैरह के लिये कहा और आप जल्दी से कपड़े पहन मोटर में बैठ हास्पिटल के लिए रवाना हो गए।

× × × ×

उस घटना को हुवे आज सात दिन हो गए। केवल शिर की चोट से उस स्त्री का यह हाल हो गया था कि न वह बोल सकती थी न चल फिर ही; लेकिन मालती की कृपा से अब वह ठीक है, वह चल भी सकती है और अच्छी तरह बातचीत भी कर सकती है। उसने मालती से पूछा— आप कौन हैं और मुझे यहां पर कौन लाया?

"बहन! मैं बा० गोविन्द सिंह जी जौहरी की लड़की हूं, एक दिन कालिज से आते समय मैंने तुम को मूर्छितावस्था में सड़क पर पड़े हुए पाया और वहां से उठा कर इलाज के लिए यहां ले आई।"

"बहन! मुझ दीन के लिए आपने बहुत कष्ट सहा।"

"इसमें कष्ट की क्या बात है मनुष्य की सहायता उसके दुःख सुख में मनुष्य ही तो करता है, मैंने इस में कौनसा बड़ा काम किया केवल अपना कर्तव्य पालन किया है।"

"वाह तुम ने मेरे वास्ते इतना दुःख सहा और कहती हो कि मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ ओहो तुम कितनी उदार हो। तुम्हारे वर्ताव से मैं बहुत प्रसन्न हूं यह तुम्हारे परिश्रम का ही फल है कि मैं जीवित हूं। मैं नहीं जानती कि मैं किसी तरह आप से ऋणमुक्त हो सकती हूँ।"

"बहन यह सब भगवान की महिमा है मैं किस लायक हूं जो कुछ कर सकं। खैर; अब यह तो बताओ कि तुम कौन हो और उस दिन किस ने तुम्हें चोट पहुँचाई थी।"

(एक दीर्घश्वास ले कर बहन "कुछ न पूछो"।

"क्यों"

"योहीं"

"आखिर"

"पूछ कर क्या करोगी"

"जो कुछ कर सकूं। यदि तुम्हारे ऊपर आक्रमण करने वालेका नाम मालूम हो जाय तो मैं उसे उचित दण्ड दिलाने की कोशिश करूंगी।"

"इससे क्या फायदा?"

"यही कि अपराधी को भविष्य के लिए नसीहत मिल जाय और वह सुधर जाय।"

"मेरा किसी ने कुछ भी नहीं बिगाड़ा है और

न कोई अपराधी ही है।"

"तो फिर तुम्हें किसने वहाँ पत्थर से मारा था?"

"किसी ने नहीं, भाग्य ने"

"समझ में नहीं आता तुम क्या कहती हो, कृपया अपना पूरा २ हाल कहो! सर्व प्रथम यह बताओ कि तुम कहां की रहने वाली हो और तुम्हारे पिता आदि कौन हैं?"

"अच्छा सुनो लेकिन वादा करो कि किसी से न कहोगी"

"ठीक है, मैं प्रतिज्ञा करती हूँ कि तुम्हारा हाल मेरे द्वारा किसी के कानमें न पहुंचेगा, हां यदि किसी को कहने की सख्त जरूरत होगी तो तुम्हारी आज्ञा प्राप्त कर पीछे कहूंगी।

मालती के वादा कर लेने पर भी किशोरी कुछ न कह सकी। वह नीचे मुंह किये सोचने लगी "क्या करूं कहूं, अथवा नहीं? यदि मैं कह दूंगी तो यह मुझ से घृणा तो न करेगी? नहीं नहीं जब इस ने मेरी इतनी सहायता की है और इस के विचार इतने उदार हैं तो यह कभी घृणा न करेगी। मैं जरूर अपनी दर्द भरी कहानी इससे कहूंगी और अपने दुःख को हलका करूंगी। अच्छा बहन सुनो लेकिन

— — —

पहले यह बताओ कि तुम सुन्दर शहर के मशहूर जौहरी जसवन्त सेठ को जानती हो या नहीं।

"हां हां जरूर, वे पिता जी के पास आया करते हैं।"

'तो तुम को यह भी मालूम होगा कि उन के एक पुत्र था और वह चार साल बाद हो—"

"हां हां बेचारे को चेचक हो गया था और सुना था कि दिवाली के रोज उन की मृत्यु भी हो गई थी।"

"हाय वह दिवाली मेरी ही दुश्मन थी उस ने मेरे ही साथ शत्रुता की और मेरे ही सरताज और सोहाग को छीन लिया। वास्तव में वह दिन मेरे लिये प्रलय का दिन था। औरतें शृंगार कर रही थीं; दीपक जला रही थीं और अपनी अपनी सहेलियों के साथ बैठ कर खुशियां मना रही थीं किन्तु मैं घर के कोने में बैठी २ रो रही थी। हाय पुरुष अपनी प्रियतमाओं से हंसी दिल्लगी कर रहे थे किन्तु मेरे प्रियतम उस धधकती हुई चिता का आलिंगन कर रहे थे। अहो! वह कितना भयंकर दिन था। चौराहों में, घरों में, कमरों में, छतों पर और अट्टालिकाओं पर जिधर देखो उधर चिताएं ही चिताएं जल रही थीं किन्तु इतनी चिताओं के होने पर भी मैं अभागिनी न जल सकी और अपने प्रियतम ...."

यह कहते कहते किशोरी का गला रुंध गया उस के मुंह से एक भी शब्द आगे न निकला। मालती ने उसे बहुत ढाढ़स बन्धाया और कहाः—

"हाय क्या तुम्हीं वह अभागिनी हो?"

"हां वह पापिनी मैं ही हूं।"

"बहन, सब्र करो, यह सब बातें कर्माधीन हैं। इस में तुम्हारा हमारा किसी का कुछ बश नहीं चलता।"

"हां बहन, यही समझ कर किसी तरह धैर्य धारण करना पड़ता है। मेरे पाप कर्मों का उदय यहीं से प्रारम्भ होता है। खैर .... सुनोः—

उन की परलोक यात्रा के पश्चात कई दिन तक तो सभी घर वालों ने मेरे साथ पहले का सा बर्ताव रक्खा लेकिन ज्यों ही औरतों का आना जाना कम हुआ मेरे ऊपर आपत्ति के पहाड़ टूट पड़े। उन

घर वालों की सहानुभूतियों के रूप में प्रकट होने लगी। चुड़ैल और रांड तो मैं घर भर में मशहूर थी। उन के प्यारे पुत्र की घातक मैं ही ठहरी मुझे डाकिन बताया गया और मेरा मुंह देखना तक लोग पाप समझने लगे। हाय इस दशा में मेरा यहां कोई नहीं था। माता पिता के यहां जाना मेरे लिए असंभव था क्यों कि सारे घर का काम मेरे ही सुपुर्द था। हां, उस समय मुझे यदि कोई तसल्ली देने वाला था तो बूढ़ा नौकर याकूब, लेकिन हाय, वह भी दगाबाज़ निकला और मुझे गारत कर दिया बहन! तुम जानती हो कि दुख में सहारा देने वाले की बातें कौन नहीं मानता, मैं भी उस बूढ़ेकी चिकनी चुपड़ी बातों में फंस गई। कई महीनों तक तो मैं सास वगैरह की सब बातें सहती रही लेकिन एक दिन की घटना से तो मेरा दिल ऊब गया और मैंने इरादा कर लिया कि किसी तरह मांके घर चले जाना चाहिये। लेकिन जाती कैसे, वहां से कोई बुलाने वाला आता तो उसे बाहर से ही मना कर दिया जाता था मेरे तक तो वह पहुँच भी नहीं पाता था। बेचारे गरीब मां बाप दिल मसोस कर रह जाते थे। खैर, याकूब से मैंने इस बारे में सलाह की उसने मुझे तसल्ली देकर कहा— बे फिकर रहो, मैं पहुंचा दूंगा लेकिन किसी से कहना नहीं।

मैंने उसका कहना माना और एक रोज़ रात्रि के तीन बजे अपने कमरे से उठी और याकूबको लेकर चलती बनी। मेरे पिता का घर वहांसे करीब चालीस मील था। सूर्य निकलने से पहले हम ६ मील रास्ता तय कर चुके थे। इसके बाद एक छोटेसे स्टेशन पर आनेको तांगा किया। न मालूम किन २ रास्ते में होता हुआ तांगा एक तंग गली में पहुंचा। तांगा ठहरा और याकूब अपने भाईसे मिल आने के बहाने चला गया। करीब पांच मिनट बाद तीन-चार आदमी वहां आये और मुझे जबर्दस्ती उठाकर सामने वाले मकानमें लेगये। हाय! मुझे अब मालूम हुआ कि उस नालायक नौकरने मेरे साथ कितना दगा किया। मैं घबराई और रोने लगी। लेकिन वहाँ मेरा सुनने वाला कौन था? उन बदमाशों ने मुझे बहुत सताया और परेशान किया लेकिन मैं आश्चर्य करती हूं कि उस समय मेरी आत्मा में न मालूम कहांसे बल आगया। उन की सख्तियाँ मुझे कुछ भी मालूम न हुईं, बल्कि इस समय मेरे सामने जो आता मैं उसकी बुरी तरह खबर लेती। याकूब तो मेरे द्वारा जूतों से भी पिट चुका था। खैर, मेरे सामने उनकी कुछ हिम्मत न चली। वे चार थे और मैं अकेली। दो रोज तो मैंने भूखे प्यासे निकाले। तीसरे दिन दर्वाजा खुला देख मैं साहस करके उठी और बाहर निकलने लगी। उन्होंने रोका मैं न रुकी। वे लोग शरीर में खूब हृष्ट-पुष्ट थे। लेकिन मेरे सामने न मालूम उनकी ताकत कहां चली गई। मुझे रोकने की उनकी हिम्मत न पड़ी। उन्होंने दूर दूरसे मेरे ऊपर पत्थर फेंके लेकिन कोई पर्वाह नहीं, मैं गिरती पड़ती वहां से भागी। आखिर सड़क पर आते २ मेरे शिर पर जोरसे पत्थर लगा और मैं बेहोश होकर गिर पड़ी।"

* * *

किशोरी की कहानी सुन कर मालती बहुत दुखी हुई और साथ में क्रोधित भी हुई; उसकी आंखों में कुछ आंसू झलक पड़े उसके गुस्से का पार न रहा। वह फौरन कह उठी " अभी उस याकूब को तलाश करातो हूं वह नालायक कहां छिपता है?

किशोरी ने कहा "नहीं बहन इससे क्या फायदा"

" फायदा क्या, पापी को पाप का फल भुगतना पड़ेगा।"

" उसने क्या अपराध किया मैंने ही तो उसे मां के घर चलने को कहा था।"

" तुमने ही कहा था लेकिन उसने वफादारी क्यों न दिखलाई; क्यों विश्वासघात किया?"

" ठीक है लेकिन उसका कसूर नहीं "

" तो किसका है?"

" मेरी सास वगैरह का "

" कैसे?"

" उन्होंने मेरे ऊपर अत्याचार किया इसी से इस दुष्ट को फंसानेका मौका मिला। मैं अब सोचती हूं तो यही मालूम होता है कि उस फंसाने वाले का कोई अपराध नहीं। जब हमारी सास वगैरह हम पर कठोर व्यवहार करती है हमें काठकी पुतली, चुडैल और डाकिन समझती है, और मन माना अत्याचार करती है तब हम लोग भागने का या आत्म हत्या का इरादा न करें तो क्या करें? यह बात ठीक है कि नौकर मालिक के और बहू सास के अधीन होती है लेकिन वे जब अपने अधिकारों का दुरुपयोग करें तो अधीनस्थ व्यक्ति ऊब जाता है और वह उसी मार्ग में उतर पड़ता है जिस में कि उसे शान्ति प्राप्ति की संभावना हो। दुःख है कि इस जमाने में जब कि शिक्षा का बहुत कुछ प्रचार हो चुका है, स्थान स्थान पर सुधारकों के अड्डे नजर आते हैं, प्रत्येक सभा सोसाइटी में सुधारवाद के प्रस्ताव पास किये जाते हैं और लम्बी २ स्पीचें झाड़ी जाती हैं—हमारा सुधार प्रेमी मनुष्य समाज हमारी तरफ कोई ध्यान नहीं देता और न कोशिश करता है कि सर्व प्रथम इन घरेलू बातों को नष्ट किया जाय।

बहन! सच कहती हूं कि पहले जब मैं औरतों को उड़ाने की खबरें सुना करती थी तो मुझे उन उड़ाने वालों पर बहुत गुस्सा आता था। लेकिन जब से मेरे ऊपर यह आफत गुजरी है तभी से मुझे यह अच्छी तरह अनुभव हो गया है कि हम में उड़ाने वालों का कोई अपराध नहीं है। यदि अपराध है तो हमारा और हमारे समाज का। जब तक समाज में ऐसे मनमाने अत्याचार चलते रहेंगे तब तक हमारा भला नहीं हो सकता। मैं दावे के साथ कहती हूं कि अकेला पुरुष कुछ नहीं कर सकता। हां यदि स्त्री समाज को शिक्षित होने का मौका दिया जायगा उन्हें उचित न्याय और प्रेम का पाठ पढ़ाया जायगा तो अवश्य एकदिन हमारा भारत सर्व शिरोमणि फिर बन जायगा।"

यह कहते २ किशोरी का मुख मण्डल क्षण भर के लिये खुशी से दमक उठा किन्तु फिर वही म्लान।

— — —

उस दिन की किशोरी की स्पीच का मालती के हृदय पर बहुत असर हुआ। आज तक उस ने कई जोरदार भाषण सुने थे लेकिन इतनी शिक्षा कहीं न मिली। फलस्वरूप आज एक महिला सभा का आयोजन किया जा रहा है। मोहल्ले भर की स्त्रियां यहां उपस्थित हैं। संयोगवश किशोरी की सास भी वहीं आई हुई है।

सभाका काम शुरू हुआ। सर्व प्रथम मालती ने ईश्वरोपासना करने के पश्चात 'स्त्रियों का सुधार' इस विषय पर भाषण दिया।

इसके पश्चात मालती की माता उठी और उसने 'पारस्परिक प्रेम' इस विषय पर व्याख्यान देते हुए

उपस्थित स्त्री समाजसे प्रार्थना की—"प्रत्येक सास को अपनी पुत्रवधू को स्वपुत्री समझना चाहिये और पुत्रीके समान ही व्यवहार करना चाहिये। युवतियों और बालिकाओंको भी चाहिये कि वे अपनी सास वगैरहको माता समझ कर उनकी सेवा सुश्रूषा किया करें। यदि प्रत्येक घर में सभी व्यक्ति प्रेम पूर्वक रहेंगे तो वह घर नहीं, स्वर्ग बन जायगा अन्यथा नरक तो है ही।"

इसके पश्चात कई महिलाओं के भाषण हुये। तदनन्तर मालती ने एक सभा चालू करनेका प्रस्ताव पास किया जिसका कि कार्य स्त्री समाजको सुशिक्षित बनाना हो। इसका समर्थन करने के लिये किशोरी खड़ी हुई और प्रस्तावका समर्थन करते हुये उसने बतलाया कि अवश्य ही हमारी समाज में एक ऐसी सभाकी आवश्यकता है जिससे कि स्त्रियां शिक्षित हों और परस्पर में प्रेम पूर्वक जीवनको बितावें। इसी में हमारा और देशका कल्याण है।"

इसके पश्चात बहुमतसे सभाकी स्थापना हुई और उसका कार्य भार किशोरी पर रक्खा गया।

जबसे किशोरी को किशोरी की सासने देखा है उसे आश्चर्य हो रहा है। वह एक टकटकी लगाये इसे देख रही है और साथमें गुस्सा भी होरही है। खैर, कुछ भी हो, सब स्त्रियां अपने २ घर चली गईं लेकिन किशोरी, मालती और किशोरी की सास अब भी उस कमरे में न मालूम किस लिये बैठी हुई हैं।

नीबू के गुण

स्फूर्ति—प्रतिदिन एक नीबूका रस प्यालेमें भरकर नमक या शक्कर मिला कर सेवन करने से दिन भर शरीर में स्फूर्ति रहती है।

मुटापा— गरम पानी के साथ खाली नीबू का रस लेने से मुटापा दूर होता है।

दांत का दर्द—दांतों को स्वच्छ रखने के लिए एक चम्मच नीबू का रस गिलास भर पानी में डाल कर कुल्ला करना चाहिए, इससे दांतोंका मैल तथा दर्द दूर होता है।

सौन्दर्य-वृद्धि— नीबूका रस नमक के साथ पानी में मिला कर स्नान करने से त्वचा का रंग निखरता है और सौन्दर्य बढ़ता है।

अजीर्ण— नीबू और सेंधा नमक भोजन के पहले खाना चाहिये। इससे अजीर्ण नष्ट होकर अग्नि दीप्त होती है।

हैजा— नीबू के रसमें चीनी डाल कर शर्बत बना ले, और रोगीको थोड़ा २ देता रहे।

आरोग्य वृद्धि— भोजन के समय दाल या सागमें नीबूरस डाल दे. इससे पाचन शक्ति बढ़ेगी और मन्दाग्नि या कोष्ठबद्धता भी नहीं होगी।

गर्भाशय की शुद्धि— नीबूका बीज और मोच रस की जड़ दूध में पीस, छान कर रजस्वला होने से चार दिन तक सेवन करे।

नोटः—नीबू के कई भेद हैं। उनमें कागजी नीबू उत्तम है। ऊपर इसीके गुणोंका वर्णन किया है।

—'हिन्दी मिलाप'

सन्तोष

(रचयिता पं० चाँदमल जी जैन "शशि" बी० ए०, विशारद)

(१)

कहा किसीने सत्य "विश्व में-
सन्तोषी है सदा सुखी"।
बिना तोष धन-पति, भू-पति भी,
देखे जाते बड़े दुखी॥

(२)

'और-और' की इच्छा कर नित,
समुद्योग नर करता है।
किन्तु भाग्यमें लिखा हुआ ही,
उसको बस! मिल सकता है॥

(३)

जो भाग्योलंघन कर सकता,
ऐसा बिरला कोई एक।
पर अलभ्य की अभिलाषा कर,
व्याकुल फिरते मूर्ख अनेक॥

(४)

पर, सन्तोषी ही जगमें निज-
जीवन का फल पाता है।
बड़े बड़े संकट आने पर-
भी नहिं वह घबराता है॥

(५)

तृष्णा उसको नहीं सताती,
लोभ न आता उसके पास।
जो न वस्तु हो प्राप्य, व्यर्थ वह-
उसकी करता कभी न आस॥

(६)

जो कुछ प्राप्त नियति से उसको,
करता उस पर ही सन्तोष।
अधिक वांछना करता नहिं वह,
और न देता विधि को दोष॥

(७)

आवश्यकताएं उतनी ही—
रखता, जितना पाता है।
कभी दूसरे के सन्मुख वह
नहीं याचने आता है॥

(८)

रूखी - सूखी रोटी ही है,
उसके लिये महा पकवान।
यदि वह भी नहिं मिले कभी तो।
खेद न करता वह मतिमान॥

(९)

कोसों दूर परिग्रह से वह,
तोष - वृत्ति में रहता लीन।
सरल साधु-सा जीवन रखता,
नियमित और नित्य स्वाधीन॥

(१०)

वह ही, यदि सच पूछो तो, है
सदा स्वतंत्र सफल निर्भय।
और उसीने स्वेच्छाओं पर,
पाई जग में पूर्ण विजय॥

अथर्ववेद परिचय

(ले०--श्रीमान स्वामी क्रमानन्द जी)

काण्ड ५

सूक्त १ (ब्रह्म)

मंत्र ६, अथर्वा ऋ०, वरुण देवता—इसमें आदि ब्रह्म हिरण्यगर्भ प्रजापति का वर्णन है। इसमें उस ब्रह्म को तत्त्विय रूप से कहा है। इस काण्ड पर सायन भाष्य प्राप्त नहीं है। सूक्त विचारणीय है।

सू० २-३ (संग्राम)

सू० २ में ८ तथा ३ में ११ मंत्र हैं, वरुण और अग्नि देवता है। दोनों सूक्त ऋ० मण्डल १० से संग्रह किये गये हैं। सू० २ में राजा का वर्णन है। तथा, ३, में युद्ध में विजय की प्रार्थना है।

सू० ४ (कुष्ठ औषधि)

मंत्र १० हैं अंगिरा ऋषि, यक्ष्मनाशन कुष्ठ देवता। यह औषधि हिमालय पर होती थी और 'क्षय' के लिये लाभप्रद थी। इसका तीसरा और चौथा मंत्र अ० कां० ६। ९५ तथा कां० । १९ । ३९ में आये हैं। इस पर विशेष प्रकाश नहीं डालेंगे।

सू० ५ (लाख)

मंत्र ६ हैं अथर्वा ऋषि लाक्षा देवता है। लाखका वर्णन है पूर्व आचुका है। इस लाख को कदम, पाकर, पीपल, खैर, धव, न्यग्रोध, (बड) पर्ण, से निकलने वाली कहा है।

सू० ६ (राजा)

मंत्र १४, अथर्वा ऋषि नाना देवता। प्रथम के मंत्र २, कां० १४ में आ चुके है, तथा मंत्र ३ ऋ० ६।७३ में, मंत्र ४ ऋ० ७।११० में तथा मंत्र ५ का उत्तरार्द्ध ऋ० ७।७४ में आया है. राजा और युद्ध का वर्णन है।

सू० ७-८ (राजा)

मंत्र १६, अथर्वा बहवो देवता, राजा युद्ध सेना आदि का वर्णन है।

सू० ९ १० (संग्राम)

मन्त्र दोनोंमें १६, ब्रह्मा ऋषि, वास्तोष्पति देवता, देवों से रक्षा की प्रार्थना तथा उनको आहुति देने का वर्णन है; सू० १० में अश्मवर्म (कवच) से रक्षा की प्रार्थना है।

सूक्त ११ (राजा)

इसमें ११ मन्त्र हैं, अथर्वा ऋषि, वरुणदेवता है। इसमें वरुण देव की स्तुति है जो कि एक राजा है। इसके मन्त्र ६ में कहा है कि मेरे सामने पणि लोग निकृष्ट वाणी बोलें तथा दास लोग भूमि में नीचे हो कर चलें। यह एक पुरोहित की प्रार्थना है। पणि एक व्यापारी जाति प्रतीत होती है, संभव है इसी से वणिक शब्द बना हो।

सू० १२ (अग्नि)

मन्त्र ११, अंगिरा ऋषि, जातवेदा देवता। अग्नि की स्तुति है। यह सम्पूर्ण सूक्त ऋ० १०-११० से लिया गया है।

१३ (सर्प विष दूर)

मन्त्र ११, गरुत्मानऋषि, तक्षक देवता है, सांपोंका वर्णन है; पूर्व कह चुके हैं।

१४-१५ (मणि)

मन्त्र १३, शुक्र ऋषि है, वनस्पति देवता है। सू०

१५ का विश्वामित्र ऋषि है मन्त्र ११ हैं । मणि की स्तुति तथा उसमे प्रार्थना है। पहले अनेक वार आ चुकी है।

१६ (वृष ओषधि)

मन्त्र ११, विश्वामित्र ऋषि, मन्त्रोक्त देवता। वृष ओषधि का वर्णन है।

सू० १७-१८-१९ (ब्राह्मण)

इन तीनों में ४८ मन्त्र हैं; मयोभू ऋषि, तथा ब्रह्मजाया व ब्रह्मगवि देवता हैं। इनमें ब्राह्मण का महत्व दर्शाया गया है। इस विषय में ब्राह्मण की गौ नामक एक पुस्तक गुरुकुल कांगड़ी से निकली है· यह बड़ी सुन्दर है, जो विशेष देखना चाहें वहां देख सकते हैं। इनमें से कुछ के मन्त्र ऋग्वेद १०-१०९ में आये हैं।

सूक्त २०-२१ (युद्ध)

मन्त्र २४ हैं ब्रह्मा ऋषि, दुन्दुभी देवता। युद्ध में विजय की प्रार्थना है।

सूक्त २२-२३ (रोग)

मन्त्र १४, कण्व ऋषि, इन्द्र देवता। कृमि नाशके लिये देवों से प्रार्थना है। अनेक प्रकार के कृमियों का वर्णन है तथा रोग दूर करने की प्रार्थना है। सू० २३ में मन्त्र १३ हैं।

सूक्त २४ (रक्षा की प्रार्थना)

मन्त्र १७ हैं अथर्वा ऋषि, अनेक देवता है। देवों से रक्षा की प्रार्थना है।

सूक्त २५ (गर्भाधान)

मन्त्र १३, ब्रह्मा ऋषि; योनि, गर्भ, देवता हैं; गर्भाधान प्रकरण है। इस के तीन मन्त्र ऋ० १०-१८४ में आये हैं तथा मन्त्र सातवां यजु० अ० ८ १२ में आया है।

सूक्त २६-२७ (यज्ञ)

सू० २६ में १२ मन्त्र, ब्रह्मा ऋषि, वास्तोष्पति देवता, तथा २७ में १२ मन्त्र ब्रह्मा ऋषि अग्नि देवता है। दोनों में यज्ञों द्वारा देवों की स्तुति है। सू० २७ का तीसरा मन्त्र छोड़ कर सब यजु० अ० २७ में हैं। केवल मन्त्र १२ वां अ० ११ में है।

सूक्त २८ (आयु)

मन्त्र १४, अथर्वा ऋषि, त्रिवृत् देवता, इस में बालक के लिए आयु और धन आदि की प्रार्थना है। मन्त्र एक में रजत शब्द आया है। संभव है यह चान्दी वाचक ही हो। इस का सातवां मन्त्र, यजु० अ० ३ में आया है त्र्यायुषं जमदग्ने कश्यपस्य त्र्यायुषम्, यह प्रसिद्ध मन्त्र है। मन्त्र १३ और १४ अ० वेद के कां० १९ सू० ३७ और ३३ में क्रमश: आये हैं। तथा मन्त्र १४ ऋ० १०-१२ में भी आया है।

सूक्त २९ (रोग नाश) भूत आदि

मन्त्र १५ हैं चातन ऋषि, मन्त्रोक्त अग्नि देवता। सम्पूर्ण सूक्त में अग्नि से पिशाच के रोगों को दूर करने की तथा भूत पिशाचों को भस्म करने की प्रार्थना है। यह चातन ऋषि बड़े ही क्रोधी प्रतीत होते हैं। इन के जितने सूक्त हैं सभी इस का प्रमाण हैं। इस का ११ वां मन्त्र कां० ८-३ में आया है।

सू० ३० (रोग दूर आयु वृद्धि)

मन्त्र १७ तथा आयुष्क णाम् ऋषि, आयु देवता है। समस्त सूक्त में ज्वर आदि दूर करने का आदेश है तथा आयु वृद्धि की मनुष्य को आशा वैद्य दिलाता है।

सू० ३१ (कृत्या) जादू टोना।

मन्त्र १२ हैं शुक्र ऋषि, कृत्या देवता। यह एक प्रकार का जादू है जिस का वर्णन कां० ४ में भी आ चुका

है। यह जादू, अभिचारक (जादूगर) धान, जौ, गेहूं तिल, कंगनी, (ये मिश्र धान्य कहलाते हैं) इन पर जादू करता था, अथवा, मुर्गेपर, केश वाले बकरेपर अथवा भेड़ पर करता था। खेतों में अथवा अन्य पदार्थों में भी यह कृत्या की जाती थी। जूवे के पाशों में भी यह की जाती थी। यह पञ्चम काण्ड समाप्त हुआ।

इस में ३१ सूक्त तथा ३७६ मन्त्र हैं, जिन में से अनुमान ६५ मन्त्र अन्य स्थानों के हैं। हमारी सम्मति में सम्पूर्ण काण्ड का भाव १०० श्लोकों में बड़ी अच्छी तरह आ सकता है। पुनः ग्रन्थ विस्तार व्यर्थ किया गया है। तथा नई बात इस काण्ड में कुछ भी नहीं है। सबही विषय पूर्व में आ चुके हैं।

काण्ड ६

इसमें १४२ सूक्त तथा ४५४ मन्त्र हैं। प्रायः तीन २ मन्त्रों के सूक्त हैं, कोई २-४ मन्त्र तथा ५ मन्त्रके भी हैं। इसमें निम्नलिखित विषय हैं। तथा इसमें प्रायः ८० मन्त्र अन्य वेदों के है।

(१) ओषधि, सू० १४-१५-१६-२१-४४-४६-५६-६५-६६-१०६-१२७-१२६-१३६-१३७। अर्थात इन १४ सूक्तों में ओषधियों का वर्णन है। कोई नवीन ओषधि नहीं है अपितु जिनका वर्णन पूर्व में कई बार आ चुका है उन्हीं का वर्णन है। इनमें ओषधियों से रोग दूर करने की प्रार्थना मात्र है।

(२) रोग दूर। सू० ८३-८४-८५-६०-१०५, अर्थात इन पांच सूक्तों में देवों से रोग दूर की प्रार्थना है।

(३) दुःस्वप्न। सू० ४५-४६। इन दो सूक्तोंमें दुःस्वप्न का वर्णन और उससे रक्षा की प्रार्थना है।

(४) काम सूक्त। सू० ८-६-१०-११-१७-६०-७२-७७-७८-८१-८२-८६-१०१-१०२-१३०- १३१-१३२ १३६ अर्थात इन १८ सूक्तों में काम वासनाओं की वृद्धिका संकेत है। कई सूक्त तो इसमें अत्यन्त अश्लील भी हैं।

(५) प्रार्थना। १-२-३-४-५-६-७-१६-४१-५३-५४-५५-६३-६४-१०८-११४-११५-११६-११७-११८-११६-१२०-१२१ तथाच सू० ४०-५८-६६-१८ इन सूक्तों में देवों से सद्गुणों की प्रार्थना है। इन में यश, तेज, रक्षा, प्रेम, बुद्धि, अभय आदि अनेक बातों की प्रार्थना की गई है। यद्यपि ऐसी प्रार्थनायें पहले भी आ चुकी हैं तदपि यह भाग इस काण्ड में सुन्दर है।

(६) राजा युद्ध। सू० २०-३२-८७-८८-६२-६७ ६८-६६ १०३-१०४-१२६। इन ११ सूक्तों में राज तिलक तथा युद्धों में राजा की विजयकी प्रार्थना है।

जल

(७) जल। सू० २३-२४-५१-५७। इन चार सूक्तों में जलों का वर्णन है।

(८) सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, इन्द्र, सूक्त। २२-३१-५२-८०-१२८-३४-३५-३६-४७-४८-४६-६२-३३-३७ ३८-३६ इन १६ सूक्तों में क्रमशः सूर्य; चन्द्र, अग्नि, इन्द्र आदि देवों की स्तुति है। ज्योतिष का वर्णन भी है।

(६) आत्मा। सूक्त ६१ में आत्मा का वर्णन है। उसी को ब्रह्म माना है।

(१०) यज्ञ। सूक्त १२२ तथा १२३ में यज्ञों का विधान है।

(११) जादू टोना। सूक्त २५-२६-२७-२८-२६-

४३। इन ६ सूक्तों में जादू टोना (माया) का विधान है।

(२) सर्प विष। सूक्त १२-५६ में सर्प विष को उतारने का कथन है।

(१३) सूक्त १४१ में गौ का वर्णन है।

(१४) सूक्त १४० में दांतों से प्रार्थना है कि वे माता पिता को न मारें।

(१५) क्रोध । सूक्त ४२ में मन्यु (क्रोध) का का उल्लेख है।

(१६) (धान्य) सूक्त १४२ में धान्यों से बढ़ने की प्रार्थना है।

(१७) धन, बल। सूक्त ७१-१०६ धन तथा सूक्त ८६ में बल की प्रार्थना है।

(१८) मृत्यु। सू० १३ में मृत्युको नमस्कार है।

(१९) शत्रु दमन । सू० ६५-६६-६७-७५-७६-१११-१३३-१३८ अर्थात इन ८ सूक्तों में शत्रु तथा राक्षसों के नाश की प्रार्थना है। सू० १११ में भूत प्रेत आदि के रोगों का कथन है।

(२०) पाप नाश। सू० ७१ तथा ११४से १२१ तक अर्थात ९ सूक्तों में पाप नाश की प्रार्थना है। यहाँ पर अनेक प्रकार पाप गिनाये हैं। यह वर्णन भी देखने योग्य है।

(२१) मुण्डन। सू० ६८ में मुण्डन संस्कार का वर्णन है।

(२२) मांस आदि। सू० ७० में मांस, शराब जुवे का विधान है।

(२३) मिट्टी से प्रार्थना। सू० १०० में वमई की मिट्टी से रोग दूर की प्रार्थना हैं।

(२४) अशुभ बालक । स० १० में ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हुए बालक को अत्यन्त अशुभ माना है।

(२५) परिवित्त। सू० ११२-११३ में परिवित्त और परिवेत्ता; अर्थात जो बड़े भाई से पहले विवाह करता है उसकी निन्दा है।

(२६) सू० १२५ में रथ की स्तुति है।

(२७) शमी वृक्ष। सू० ३० में शमी वृक्ष की स्तुति , प्रार्थना है।

(२८) सू० ५० में चूहे मारने का विधान है।

मंदिर तथा प्रतिमा निर्माण

(ले०— अजितकुमार जैन शास्त्री)

आत्मशुद्धि के लिये भक्ति मार्ग और त्याग मार्ग बतलाये गये हैं। इनमें से भक्ति मार्ग की मुख्यता गृहस्थआश्रम में तथा त्यागमार्ग की मुख्यता साधु आश्रम में है। तदनुसार भक्तिमार्गको सफल बनाने के लिये जिनप्रतिमा और जिनमन्दिर का निर्माण होना आवश्यक है। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिये प्रतिमा और मन्दिरों का निर्माण सदासे होता चला आरहा है।

चतुर्थकालकी आदि में भरत चक्रवर्ती ने अमूल्य मन्दिर और प्रतिमाओं का निर्माण कराया था यह तो एक बहुत प्राचीन बात हुई—किन्तु भगवान महावीरसे पहले के बने हुये कुछ ऐतिहासिक मन्दिर और प्रतिमाएं इस समय भी विद्यमान हैं। जैसे कि भगवान पार्श्वनाथ के समय में राजा करकुण्ड ने तेरपुर (उस्मानाबाद) की पहाडी पर गुफायें और उन गुफाओं में मन्दिर एवं भगवान पार्श्वनाथ की अनेक प्रतिमाएं बनवाई थीं जो कि अभी तक विद्यमान हैं। इसका विशेष स्पष्ट विवरण श्रीमान प्रोफैसर हीरालाल जी एम० ए० लिखित "तेरपुर की गुफाएं" नामक पुस्तक में देखना चाहिये।

बड़वानी क्षेत्र पर विराजमान ऋषभ देव जी की विशाल मूर्ति (बावन गजा) भी अन्वेषकों की दृष्टि में कमसे कम तीन हजार वर्ष पुरानी कूती गई है।

भगवान महावीर स्वामी के पीछे के बने हुये दो दो हजार वर्ष पुराने तो अनेक मन्दिर प्रतिमाएं उपलब्ध हुये हैं। भगवान महावीरकी जन्मभूमि बिहार प्रान्तमें (जिसका कि कुछ भाग इस समय बंगाल प्रान्तमें सम्मिलित है) अनेक प्राचीन भग्न मन्दिर एवं प्रतिमाएं विद्यमान हैं। भगवान महावीर के नाम पर, उनके चिन्हके नाम पर वीर भूमि अपभ्रंश नाम "वीरभूम" मानभूमि (मानभूम) तथा सिंहभूमि (सिंहभूम) आदि अनेक नगर हैं। इसी प्रकार दक्षिण महाराष्ट्र प्रान्त, मैसूर राज्य एवं मद्रास प्रान्त में तथा बुन्देल खण्ड, ग्वालियर, मालवा आदि प्रान्तों में भी सैकड़ों हजारों प्राचीन मन्दिर और मनोहर प्रतिमाएं विद्यमान हैं।

इन में से कुछ विशाल ऐतिहासिक मंदिर अजैन लोगों के अधिकार में भी है जैसे कोल्हापुर का पद्मावती मंदिर। और हजारों मंदिर एवं अगणित प्रतिबिम्ब अरक्षितरूप में पड़े हुये हैं जिन को कि संभालने की बात तो दूर रही दर्शन करने वाला भी कोई नहीं है।

प्राचीन समय में जैन लोग अपने शुभ आचरण के प्रभाव से अधिक सम्पन्न थे अनेक राजा, मंत्री सेनापति आदि जैन धर्म के सेवक थे, जैन धर्मानुयायियों की संख्या आज कलकी अपेक्षा अनेक गुणी थी तथा उन में धार्मिक प्रेम एवं धर्म साधन में तत्परता भी आधुनिक जैनियों से बढ़कर थी। यही कारण है कि स्थान स्थान पर उन्हों ने असीम धन खर्च कर के मजबूत मंदिर बनवाये और प्रतिमाओं का निर्माण कराया। जैन राजाओं में धार्मिक प्रेम उस समय कैसा कुछ था इस बात की साक्षी ग्वालियर का किला, बेलगाम का किला, श्रवण बेल गोला में

विराजमान श्री बाहुबली का प्रतिबिम्ब आदि दे रहे हैं उस समय सम्पन्न गृहस्थ अपने अपने घरों में चैत्यालय बनवा कर अपना धार्मिक नित्य नियम साधन किया करते थे। अतः उस समय प्रत्येक मंदिर एवं प्रतिमा के पूजन अभिषेक आदि भक्ति कार्य अच्छी तरह होते थे।

किन्तु इस समय की परिस्थिति कुछ और ही है श्री देवी जैन लोगों से रूठ चली है इसी कारण जैन समाज में प्रतिवर्ष श्रीमानों की संख्या घटती जा रही है, दरिद्र संख्या बढ़ रही है। राजा, मंत्री आदि तो कोई जैन है ही नहीं, साथ ही जैन धर्मानुयायियोंकी संख्या भी दिन पर दिन कम हो रही है। कलाल लिंगायत, सराक आदि अनेक जातियां की जातियां जैन धर्म छोड़ चुकी हैः अग्रवाल, पोरवाल, ओसवाल आदि जातियों के हजारों घर अजैन हो गये हैं और बराबर अजैन होते जारहे हैं। जो कुछ थोड़े से विद्यमान हैं उन में अनेक भेद, उपभेद, दल, फूट बल मौजूद है इस कारण उनकी संगठन शक्ति छिन्न भिन्न हो गई है, दिगम्बर, श्वेताम्बर सम्प्रदाय के तीर्थ क्षेत्र सम्बन्धी मुकदमे बाजी ने जैन समाज की धर्मादा सम्पत्ति को खोखला बना दिया है, तथा पश्चिमी वायु प्रवाह ने दर्शन, पूजन, आदि भक्ति भाव ढीला कर दिया है। इस प्रकार जैन समाज की शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक शक्तियां न केवल क्षीण होचुकी है किन्तु शोचनीय होचुकी हैं। फिर इस दशामें जैन समाज अपने प्राचीन रूप पुरातन भव्य मन्दिरों का एवं मनोहर प्रतिमाओं की सम्हाल और रक्षा किस तरह कर सकता है।

इस पर भी हमारी पुरानी रफ्तार में अन्तर नहीं आता। आजकल भी हमारे भाई ऐसे स्थानों पर नवीन मन्दिर बनवाया करते हैं जहाँ पर कि कोई विशेष आवश्यकता नहीं होती। समीप में ही अन्य जैन मन्दिर विद्यमान होता है जिसके कि पूजन प्रक्षाल, रक्षण आदिका कार्य कठिनता से चलता है उस दशा में भी एक नवीन मन्दिर वहां बनवा दिया जाता है।

धर्म साधनकी दृष्टि से तो घर घरमें चैत्यालय होना लाभदायक है किन्तु इस समयकी परिस्थिति विलक्षण है यदि पिता पूजन करना जानता है और बड़े भक्ति भाव से प्रति दिन करता भी है तो उसका पुत्र न तो उस ओर अपना मन लगाता है और न इस धार्मिक नित्य नियम को सीखता ही है। पाठक महानुभावों को याद होगा कि हमारे एक प्रसिद्ध सुधारक महानुभाव अपने पिता के बनाये हुए कुण्डल गिरि के मन्दिर को बेचने के लिये तयार थे। अनेक स्थानों पर ऐसे मन्दिर हैं जिनको पूर्वजों ने भारी द्रव्य व्यय करके बड़े दिल से बनवाया था किन्तु आज उनकी सन्तान उन मन्दिरों में पूजा प्रक्षाल का प्रेम भी प्रगट नहीं करती। अधःपतन के इस जमाने में आगे क्या दशा होगी इस प्रश्न पर पाठक महानुभाव ही विचार करें।

व्यापार दिनों दिन गिरता जा रहा है इस कारण लोगों को अपनी जन्म भूमि छोड़ कर परदेश को अपना स्थायी निवास बनाना पड़ता है इस दशा में भी मन्दिरों की दशा शोचनीय हो जाती है। पटना सांगानेर आदि अनेक स्थान ऐसे हैं जहां पर जैन भाइयों के घर न कुछ के बराबर हैं किन्तु लाखों रुपयों की लागत के सुन्दर मन्दिर एवं उनमें हजारों प्रतिमायें विद्यमान हैं जिनका कि यथेष्ट पूजन प्रक्षाल नहीं हो पाता। ऐसी विकट परिस्थिति में नवीन

मन्दिर बनाने के लिये विवेक से काम लेने की आवश्यकता है।

नवीन मन्दिर वहीं पर बनने चाहिये जहां पर कि पहले मन्दिर मौजूद न हो लोगों को धर्म साधन में विघ्न पड़ता हो। जैसे अनेक स्थानों पर नवीन व्यापारिक मन्डी खुलने से जैनियों के घर बस गये हैं किन्तु वहां पर कोई मन्दिर नहीं है। अथवा जहां के दिगम्बरी भाई मन्दिर न होने के कारण ढूंढिया हो गये थे या जैनधर्म से विमुख हो गये थे किन्तु पुनः उपदेश मिल जाने पर धर्म पर श्रद्धा करने लगे हैं। ऐसे स्थानों पर नवीन मन्दिर बनवाना बहुत लाभदायक है। ऐसे आवश्यक स्थानों के भाई यदि धनिक न होने के कारण स्वयं मन्दिर न बनवा सकते हों तो दूसरे स्थानों के धनिक भाइयों को वह मन्दिर बनवा देने चाहिये।

इस समय भी अनेक ऐसे स्थान हैं जहां मन्दिर बनने की नितान्त आवश्यकता है किन्तु वहां पर मन्दिर बनाने की किसी की शक्ति नहीं है। फलतः वहां मन्दिर बनवाने के लिये या तो दूसरे स्थानों से थोड़ा थोड़ा चन्दा करना पड़ता है अथवा वहां के भाइयों को मन मसोस कर रह जाना पड़ता है। खण्डगिरि उदयगिरि सरीखे ऐतिहासिक तीर्थक्षेत्रों पर सुदृढ़ मन्दिर तथा धर्मशाला बनने की आवश्यकता होने पर भी द्रव्य के अभाव से कार्य अधूरा पड़ा हुआ है। देवगढ़, पावागिरि सरीखे क्षेत्रों के जीर्णोद्धार की महान आवश्यकता है। यदि कोई भाग्यशाली सोनागिर पर नवीन मन्दिर न बनवा कर उक्त क्षेत्रों के उद्धार में अपना द्रव्य व्यय करदें तो वे बहुत भारी हितसम्पादन कर सकते हैं।

इसी प्रकार जहां कहीं नवीन मन्दिर में प्रतिमा विराजमान करने की आवश्यकता है उसके लिये सांगानेर सरीखे स्थानों के भाई अपने यहां से सहर्ष प्रतिमायें दे देने की उदारता प्रगट करें। अथवा नवीन मन्दिर बनवाने वाले महानुभाव नवीन प्रतिमा विराजमान करने के बजाय अन्य स्थानों की अरक्षित मनोहर प्रतिमाओं को लाकर अपने यहां विराजमान कर लेवें तो एक पन्थ दो काज सहज में हो सकते हैं।

इन सब बातों पर विचार करते हुए हम को निम्न लिखित बातों पर अमल करना चाहिये—

१—पुरातन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक मंदिरोंका जीर्णोद्धार किया जावे। जीर्ण मन्दिरों के उद्धार करने का फल भी नवीन मंदिर तयार करानेके बराबर है।

२—अरक्षित मंदिर के खंडहरों में पड़ी अखंडित प्रतिमाओं को विनयपूर्वक लाकर नवीन बने हुए मंदिरों में विराजमान करके पूजन प्रक्षाल करना चाहिये।

३—सांगानेर आदि स्थानों के मंदिरों के अधिकारियों को चाहिये कि अन्य भाइयोंके साथ उदारता प्रगट करके जहां प्रतिमाओं की आवश्यकता हो वहां के भाइयों को प्रतिमाएं देने में संकोच न किया करें।

४—पावागिरि (ऊन) देवगढ़, खडगिरि, उदयगिरि आदि तीर्थक्षेत्रों का जीर्णोद्धार करने में प्रमाद न करना चाहिये।

५—जिन स्थानों पर पहले मंदिर मौजूद है वहां पर और नवीन मन्दिर न तयार कराये जांय ऐसे

स्थानों पर जो भाई मन्दिर बनवाने की प्रबल इच्छा रखते हों उन्हें ऐसे स्थानों पर मन्दिर बनवा देने चाहिये जहां पर जैन भाई तो हैं किन्तु उन के भक्ति पूजन के लिये वहां पर मन्दिर मौजूद नहीं है। तथा जिन स्थानों के मन्दिर जीर्ण शीर्ण हो कर गिर पड़े हैं अथवा गिरने के सम्मुख है ऐसे स्थानों के मन्दिरों का जीर्णोद्धार करा देना चाहिये।

६—जिन स्थानों के मन्दिरों की स्थायी आमदनी उनके खर्च से अधिक होती है उन मन्दिरों के अधिकारियों को वह बचत का द्रव्य अन्य स्थानों के जीर्ण मन्दिर के उद्धार करने में अथवा जिनवाणी के उद्धार में व्यय करना चाहिये।

इस प्रकार वर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए हमारे दूरदर्शी महानुभाव उपर्युक्त योजना का आदर करके उसका क्रियात्मक अमल करेंगे तो धर्मायतनों के लिये बहुत कुछ कार्य कर सकेंगे।

सत्यसमाज या खिचड़ी समाज

[ले०—"मौजी"]

आविष्कार का युग है, तरह २ के आविष्कार होते जा रहे हैं। धर्म और समाजों के आविष्कार भी दिन दूने रात चौगुने होरहे हैं। हमारे पं० दरबारीलाल जी भी कब चूकने वाले थे उन्होंने भी 'सत्य समाज' का आविष्कार कर दिया। उनका पूज्य 'भगवान सत्य' और भगवती अहिंसा अभी तक किसी गुफामें छिपे हुये थे जिन्हें पकड़ कर दरबारी लाल जी ने अभागे भारतवर्ष में ला खड़ा किया है।

भगवान सत्य रूप रंगमें कैसे हैं और उनकी दार्शनिक शक्ल कैसी है- यह अभी ठीक निश्चय नहीं हो पाया है। इसीलिये सत्य समाजी महाशय सत्य भगवान को अधूरा मानते हैं। कोई उनकी टांगें नहीं मानता तो कोई उनके शिरको भद्दा और गलत बतलाता है, कोई दरबारीलाल जी की किसी बातको गलत कहता है तो कोई किसीको। मतलब यह है कि सत्यसमाज उस खिचड़ी समाज का नाम है जिसमें अनेक तरह के प्राणी अपने २ जुदे कोठे में पाये जाते है। चूंकि उनका नाम मनुष्य है इसलिये वे सत्यसमाजी हैं। एक मत या एक सिद्धान्त मान्यता अथवा एक पंथके अनुयायी होनेसे उनका कोई सरोकार नहीं। कुरान पाठी भी सत्यसमाजी और कुरान न मानकर वेद पाठी भी सत्यसमाजी। दरबारीलाल जी क्या पाठी है-सो स्वयं उनको भी पता नहीं।

मेरे खयालसे अगर पं०दरबारीलाल जी सत्य भगवानकी छाया में जीवमात्र को बिठाकर सबको सत्य समाजी बना देते तो बेचारे ऊंट, बकरी, कुत्ते, बिल्ली आदिका भी कुछ उपकार होजाता और सत्य समाजियों की तादाद भी खासी होजाती।

सत्य समाजी लोग सत्यसमाज में आकर भी पं० दरबारीलालके सिद्धान्तों से किस तरह कतराते है। इसके दो-एक उदाहरणों से पाठक अच्छी तरह

समझ जावेंगे। दो प्रसिद्ध सत्यसमाजी क्या कुछ लिखते हैं—देखिये,

"रही मुक्ति विषयक मान्यता। सो उसके विरोध में पं० दरबारीलाल जी की जो गणित संबंधी बाधा है, अभी तक उसका परिहार नहीं हो पाया है। मगर मेरी यह धारणा है कि उसका कोई न कोई परिहार अवश्य होना चाहिये। जब बन्धन है तो मुक्ति क्यों न हो? जब अपूर्णता है तब पूर्णता क्यों न हो? जब व्याकुलता है तब निराकुलता क्यों न हो? ज्ञान की पूर्णता मानना ही मुक्ति को मानना है।"

सत्य समाजी—रघुनन्दन प्रसाद ता० १६-१-३६

"मैं विश्राम करने के लिये द्वीप चाहता हूं। ह्वेल मछली की द्वीपाकार पीठ नहीं। × × मैं मुक्ति में अविश्वास करने लगूं तो जीवन का अर्थ मेरी दृष्टि में कुछ नहीं रह पायगा। मुझे आत्मा ही एक कल्पित द्रव्य दिखाई देने लगेगा मेरा आत्मा में दृढ़ विश्वास है। मैं उसकी उत्कृष्टता का हामी हूं। फिर मुक्ति मानने में मैं क्यों संकोच करूं। × × उत्कृष्ट आत्मा फिर जघन्य बनकर दुःख उठावे, फिर नीचे गिरे, यह बात हृदय को चोट करने वाली है।"

सत्यसमाजी—रघुवीरशरण ता० १-१०-३४

देखा, कैसा जादू है! असल बात यह है कि—

१—भाई रघुनन्दन प्रसाद जी सत्य समाजी तो बन गये परन्तु पं० दरबारीलाल जी के मुक्ति विषयक मन्तव्य उनके गले नहीं उतरते हैं। अतएव वे अब इस फिक्र में हैं कि पं० दरबारीलाल जी कब मुक्ति विषयक जैन मान्यता को स्वीकार करें और कब पिंड छूटे।

२—और—रघुवीरशरण जी भी सत्य समाजी तो बनगये परन्तु पं० दरबारीलाल जी के दार्शनिक मंतव्यों की चोटों से कराह रहे हैं। और पं० दरबारी लाल जी के दार्शनिक मंतव्योंसे सत्य समाजका कोई अनिवार्य संबंध नहीं है, यह बतलाकर उस पीड़ाको कम करने की चेष्टा कर रहे हैं। जैसा कि उन्हों ने लिखा है।

"सत्य समाज संबंधी यह भ्रम कि पंडित दरबारीलाल जी के दार्शनिक मंतव्य सत्य समाजके मंतव्य हैं, आज कल साधारणतः कुछ जोर पकड़े हुए दिखाई देता है। विशेषतः जैन समाज में तो इस भ्रम के आधारपर सत्य समाजका अच्छा खासा हौआ बनाया जा रहा है। × × स्पष्ट है कि पंडित दरबारीलाल जी के दार्शनिक विचार सत्यसमाज के विचार नहीं हैः होसकते हैं, यह दूसरी बात है।"

ता० १-१०-३४

परन्तु मजा यह है कि पं० दरबारीलाल जी इस का विरोध कर रहे हैं--कि—

"पिछले दस बारह वर्षों में मेरे विचारों का तथा इसी लिये मेरे व्यक्तित्व का विरोध कुछ कम नहीं हुआ है। इतना होने पर भी विचारों का प्रभाव रुका नहीं किन्तु वह समाज के मन पर छाप मारता ही गया, तथा अपना क्षेत्र भी बढ़ाता ही गया। आज जब कि उन विचारों ने सत्य समाज के नाम से एक मूर्तिमंत रूप धारण किया तब विरोध का अनेक दृष्टियों से बढ़ना स्वाभाविक था।"

ता० १-१०-३४

सारांश यह है कि सत्य असत्य, वैज्ञानिक अवैज्ञानिक सभी बातोंके मानने वाले जब सत्य समाजी हो सकते हैं, जैसा कि लिखा है—

"जिस प्रकार वैदिक धर्म का अनुयायी ईश्वर

को सृष्टि कर्ता, कर्मफल दाता, भाग्य निर्माता मानते हुए भी सत्य समाजी हो सकता है, उसी प्रकार सर्वज्ञता मुक्ति आदि जैन मान्यताओं का पुजारी भी सत्य समाजी बन सकता है।"

—रघुवीरशरण ता० ८-१०-३५

तो फिर सत्य समाज में विशेषता क्या रही? रहा यही रोटी बेटी व्यवहार का रगड़ा! बस हो गई इति श्री। फिर भी भोले लोग पं० दरबारीलाल जी के पीछे चल रहे हैं—सत्यसमाजी बन रहे हैं। इसी से तो यह प्रश्न होता है कि यह सत्यसमाज है या खिचड़ी समाज?

स्वामी दयानन्द जी का पत्र

[यह पत्र श्री स्वामी दयानन्द जी के हाथका लिखा हुआ है और अभी तक प्रकाशक महोदय (एस० डी० शर्मा शास्त्री रिसर्च स्कालर लाहौर) के पास ज्यों का त्यों सुरक्षित रक्खा हुआ है। उसी पत्रकी नकल हम पाठकों के अवलोकनार्थ नीचे उद्धृत करते हैं। आशा है पाठक इसे पढ़कर वर्तमान आर्यसमाज पर एक दृष्टि डालेंगे।]

श्रीयुत कल्याणानन्द जी आनन्दित रहो!

आपका पत्र मिला प्रश्नोंके उत्तर इस प्रकार हैं:-

१- वेद मैं ने जर्मनी से मंगाये थे। वेदों का भाष्य कई व्यक्तियों ने किया है किन्तु सर्वमान्य कोई नहीं है, किन्तु यह तो विचारिये कि क्या ईश्वर की व्याख्या सर्वमान्य है। कोई सातवें आसमान पर कोई चौथे, कोई कैलाश, गोलोक, विष्णुलोक ब्रह्मलोक आदि में मानते है। इसके तीन भेद हैं, किरानी, कुरानी, और पुरानी, वैसे ही कोई प्रेम को ईश्वर मानता है और अमरीका वाले डालर में ईश्वर निवास समझते हैं।

२- युग सम्बन्धी भिन्न २ मान्यता हैं। एक कलियुग दूसरा जजमेन्ट, तीसरा कयामत, चौथा विज्ञानयुग पांचवां राष्ट्रीययुग मानकर अपनी अपनी किस्मत का फैसला करानेके लिये एक एक युग नाम रख लिया है। ऐसी दशा में जब कि ईश्वर तथा युग सम्बन्धी मत-भेद हैं तब वेद भाष्य कैसे सर्वमान्य हो सकता है, जैसे धोबी वस्त्र धोकर मैल साफ करता है किन्तु दाग फिर भी रह ही जाते हैं, एवं वेद के सम्बन्ध में जो भ्रम फैले थे उन्हें दूर करने का यथा शक्ति प्रयत्न किया है।

३- वेद नाम कागज पर अंकित स्याही या कपडे की मढ़ी जिल्द का नहीं है किन्तु विश्व का ज्ञान है। देखो-"स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः" विश्ववेद 'संसार' का ज्ञान ही शान्ति का मूल है। ज्ञान का समुद्र अनन्त, अपार, अथाह है। उसे किसी कागज के कूज़े में बन्द नहीं किया जा सकता। वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक का अर्थ यही है कि ऋषियों के संचित अनुभव से लाभ तथा सत्य का अन्वेषण करना। किसी व्यक्ति विशेष या पुस्तक विशेष की दासता ने ही मानव-समाज में गुलामी का भाव

घुसा दिया है और यह गुलामी मजहबी रूढ़ि वाद है। जब रूढ़िवाद बैठ जाता है तब आदर्श उठ जाता है। 'विश्ववेदं अखिलं ज्ञानमूलम्' विश्व-परिचय (ज्ञान) और समस्त संसार का इतिहास सच्चा वेद भाष्य है। ईश्वर अजन्मा, अनादि, सब का पालन पोषण करता है इस हीकी उपासना करनी योग्य है। संसार सबसे बड़ा शास्त्र है मेरा विचार है कि कुछ इतिहासके विद्वान आमन्त्रित करके प्राचीन काल से अर्वाचीन विकास काल तक मानव-समाज के विकास का इतिहास लिखाऊं फिर देखिये कैसा सुन्दर मान्य वेदभाष्य बनता है और कैसा सर्वप्रिय होता है। विश्व वेद में समस्त संसार के देश, जन संख्या, आधुनिक सुधार, माल का निकास; आय-व्यय, भौगोलिक स्थिति, राज नैतिक उलट फेर का सविस्तार वर्णन होगा, इतिहास पूर्वकाल का स्मरण पत्र और भाग्य के लिये पथ-दर्शक दीपक है।

४— बम्बईमें एक थियोसोफिकल मतके विद्वानने कहा था कि-यूरोपके वैज्ञानिक ईश्वरका बहिष्कार कर रहे हैं। मैंने कहा जिसकी सर्वमान्य व्याख्या ही नहीं उसका बहिष्कार स्वयं ही होजाता है और उसके कलाम आप ही मिट जाते हैं। वे दूसरी बात यह कहते थे कि समस्त संसारकी जन संख्या में आधे बौद्ध और आधे कल्पित अल्लाह के भक्त किरानी कुरानी हैं। यवन मत ईसाई धर्मका पुत्र और ईसाई धर्म बौद्ध-धर्मका पुत्र है, और बौद्ध धर्म वेदके उस क्रूरता "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" का जो वेद तथा यज्ञ के नामसे निरपराध पशुओं पर की जाती थी. आदर्श विरोध है, क्योंकि बुद्धने धम्मपद में (एसः धम्म सनातना) अर्थात यह प्राचीन आदर्श बतलाया है। संख्या की दृष्टि से पुत्र और पितामह विजयी है। एक बात स्पष्ट होजाती है कि किसी पुस्तक या कल्पित आत्माको मानने मात्रसे ही कोई न तो त्रिकालदर्शी, न विद्वान ही बन जाते हैं न मानने मात्रसे काने या अन्धे, इसमें—बुद्धयः निरः स: प्रमाणः—जो बात बुद्धिकी कसौटी पर उतरे वही प्रमाण, यह बुद्धका विचार सत्य है। उसे समाज सत्यका ग्रहण और असत्य का त्याग कहता है। एक बात और भी अजीब है कि अनीश्वरवादी बौद्ध आपसमें इतनी मारकाट नहीं करते हैं जितनी कि कल्पित अल्लाहके भक्त। अल्लाह क्या है तास्सुब की चिड़िया और झगड़े का घर है। अल्लाह भले ही अपने को मनवाने का इतना भूखा न हो जितने उसके एजेन्ट एक शब्द अल्लाह मनवाने के भूखे और मारकाट के लिये उत्सुक रहते हैं। इससे तो अल्लाहका बहिष्कार ही होजावे तो अच्छा है। धर्म कहते हैं व्रतको; व्रत धारण किया जाता है, व्रत १० हैं— धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध ये धर्म के व्रत हैं। शेष रूढ़ियां, ढोंग आडम्बर हैं; धर्ममें उनका कोई सम्बंध नहीं। यही प्राचीन वेद बौद्ध, राम कृष्णादि आप्त पुरुषों तथा मनुस्मृतिका सार है। आम छोड़ कर पेड़ गिनते रहने से ही भारतवर्ष की यह दुर्दशा हुई है। रूढ़ियों की दासता पराधीनता का प्रथम पाठ है मुखमें राम बगल में छुरा मुखसे उच्चारण मात्र ईश्वर धर्म्म कहते हैं किन्तु कृति में सदा नकार रहता है। सात्विक राजसी बुद्धियुक्त पुरुष सत्य शीघ्र मान लेते हैं किन्तु तामसी बुद्धि वाले बेवकूफों को 'सनातन देव" मान बैठे हैं।

५—समाजके निर्माणके समय मैं ने मुख्य उद्देश (साध्य) संसारका उपकार करना समझाया था,

शेष ६—नियम आर्य पुरुषों ने मेरे परामर्श से बनाये थे वे साधन हैं, साधनों में समयानुसार परिवर्तन होता रहता है, साध्य अटल है। किसी सिद्धान्त को मानना न मानना व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का प्रश्न है। किन्तु सर्वहितकारी नियम उपकार है। उसे सब को मानना ही चाहिये। किसी सिद्धान्त या साधन के सम्बन्ध में कोरा बकवाद (वितण्डावाद) करना या किसी खास रस्म रिवाज (रूढ़ि) के सम्बन्धमें लड़ाई झगड़ा करना मजहब और सम्प्रदाय कहलाता है। यही सारे झगडे की जड़ है। यदि आर्य समाज भी साध्य छोड़ कर सिद्धान्तों पर लड़ता रहेगा तो वह भी एक सम्प्रदाय बन बैठेगा। यह माना कि सिद्धान्तों के बगैर साध्य सिद्ध नहीं होता किन्तु सिद्धान्त परिवर्तित होते रहते हैं और झगड़े से उस की पूर्ति के बजाय हानि होती है। इस लिये जब मुझ से समाजका सरक्षक बनने के लिये कहा गया तो मैं ने यह समझ कर अस्वीकार कर दिया कि कहीं ऐसा करना साम्प्रदाय-काचार्यत्व उर्फ गुरुडम न साबित होजावे, क्योंकि भारत "बाबावाक्यं प्रमाणं" मानने का आदी हो गया है। रूढ़ियां सम्प्रदायों की जननी है। भारत-वासी लकीर के फकीर होजाने से सत्य की अन्वेषणा बुद्धि गंवा चुके है। सत्यार्थप्रकाश इस ही की जागृति के लिये लिखा है। अब की बार अच्छी तरह संशोधन करके छपवाया है यदि कोई त्रुटि देखो तो लिख भेजना।

६—आप का यह कहना कि संस्कार-विधि में भी रूढ़ियां घुस पड़ेंगी जो पहले से भी भयंकर होंगी, यदि ऐसी बात साबित हुई तो भावी संस्करण का प्रकाशन बन्द करवा दूंगा। इस समय सारा कार्यक्रम तथा शक्ति कुरीतियां निवारण के प्रचार में लगाती है। यदि शासन की बागडोर हाथ में होती तो एक दिन में मिटाई जा सकती थी सामाजिक कुरीतियों के कारण ही औरों को मौका मिल कर स्वराज्य छीना गया था। राजा लोग अंग्रेजी प्रजा से भी गये गुजरे है, क्या करे बिचारे उन्हें दारु-दारा द्रव्य से फुरसत मिले तो अच्छे काम करने म लगे।

हस्ताक्षर:—

दयानन्द सरस्वती, जोधपुर।

हिन्दी मिलाप लाहौर के ता० १७ नवम्बर सन् १६३३ पृष्ठ ५-मे अक्षरशः उद्धृत।

नोट:—इस पत्रमे स्वामी जीके उद्देश्यका भली भांति स्पष्ट ज्ञान होजाता है, स्वा० जीके साथ विश्वास घात करने वाले आर्य समाजको एक सम्प्रदाय बनाने वाले वर्तमान आर्य नेताओं को इस पर विचार करना चाहिये।

—कर्मानन्द

❋ ❋ ❋

धार्मिक मिक्श्चर

भारत देश चाहे धनराशि से खाली है लेकिन वह धर्मराशि से ठसाठस भरा है। क्योंकि यहां पर नित्य नये धर्मोंकी पैदाइश बर्षाती मेंढकों के समान सदा हुआ करती है। उन पैदा होने वाले नये धर्मों के सौभाग्य या दुर्भाग्यसे कुछ न कुछ अनुयायी भी हो जाते हैं जो कि 'समाज' नाम धर कर बाहर आते हैं। अभी बंगालमें एक समाज कायम हुआ है जो 'स्त्री को पवित्र मानकर उसके मूत्र, रज आदि मलों को भी ग्राह्य समझ कर खाता पीता है' इस समाज के भी काफी अनुयायी होगये है।

* * *

इधर हमारे पं० दरबारीलाल जी ने हिन्दू, बौद्ध, जैन, इस्लाम, ईसाई आदि दुनिया भरके मजहबोंका अर्क निचोड कर 'सत्य समाज' निकाला है जिसके अनुयायी २६७ होगये हैं। प्रधान शिष्य संभवतः रघुवीरशरण जी है। कोई व्यक्ति यदि दरबारीलाल जी से कुछ पूछे तो वे झट बीचमें कूद कर बोल उठते है—"अजी ! तुम्हारी बात उथली है, तुम अनभिज्ञ हो, तुममें सद्बुद्धि नहीं, हमारे पंडित जी को फुर्सत नहीं, उनसे कुछ न पूछो।" आपका यह बात कुछ ऐसी निराली हैं जिसको निराले बुद्धि भंडार ही समझें। क्योंकि जिन पं० दरबारीलाल जी को अपनी धर्मपत्नी की अनुभूत प्रेमकथा तो लिखने सुनाने की फुर्सत है उन्हें पं० अजितकुमार जी के प्रश्नोंका उत्तर लिखने की फुर्सत नहीं है। यह एक अजब बात है, रघुवीर जी की इस चालका भी कोई रहस्य अवश्य होगा। अस्तु,

* * *

रघुवीर जी लिखते हैं कि 'सत्यसमाज को गर्व पूर्वक सार्वभौम बनने का दावा है।' ठीक है, 'गर्व' सत्यसमाज की नींव है। सत्यसंदेश के लेखों में पं० दरबारी लालजी भी अपनी गर्वभरी तेरह हाथ लम्बी "मैं" लिख दिया करते है। मैं यूं हूं, मैं त्यूं हूं, मैं ने आकाश फाड डाला, पाताल में छेद कर दिया आदि, जहां देखिये आत्मप्रशंसा से ही शायद कोई अभागा लेख खाली रहता हो। आपका भी लगभग वही हाल है, सत्य भगवान सारा ज्ञान भंडार और सद्बुद्धि आपके हवाले कर बैठे है। ऐसा आपके सभ्य गंभीर लेख प्रगट किया ही करते है। फिर भला सत्य समाज गर्वपूर्वक सार्वभौम बनने का दावा क्यों न करे।

* * *

आपने सत्यसमाज के ३२६ वें सफे पर लिखा है कि 'सत्यसमाज किसी संस्कृति या सभ्यता अथवा किसी धर्म व सम्प्रदाय का विरोधी नहीं ? तदनुसार रघुवीर जी बतलाइये कि पंच मकार सेवी वाममार्ग, स्त्री के रज को पवित्र बतला कर रजपान करने वाला बंगाल का प्रचलित सम्प्रदाय; मांस भक्षी सम्प्रदाय सत्यभगवान की कृपा से सत्य समाजी हैं या नहीं ? पशुहवन करने वाला वैदिक सम्प्रदाय; मांसपार्टी आर्यसमाज और गोभक्षक इस्लामसमाज, जल तोरई कहकर मछली भक्षक बंगाली भी सत्यसमाज की सार्वभौमिकता में हैं नहीं ?

'नहीं तो आप कर नहीं सकते क्योंकि आपके सत्य भगवान किसी को झूठा बना कर विरोधी बनते नहीं। आपके सत्यभगवान हिंसक अहिंसक

सभी के गुरू हैं। यदि हां कहेंगे तो जरा यह बत-लावें कि आपकी भगवती अहिंसा किस गुफा की देवी है।

* * *

आपको ईसाइयों का गिरजा तो पसंद है ही क्यों कि जैनजगत में आपने जैनमन्दिर की निन्दा करते हुए "गिरजा की भारी तारीफ की थी (सुधारक की तो यह खास निशानी है कि पराई पत्तल का भात मीठा बतला कर अपने अच्छेपन की भी निन्दा करता जावे क्योंकि यह निष्पक्ष भाव का लक्षण है और सपूतों का चिन्ह है) तदनुसार मस्जिद भी आपको पसंद है या नहीं? अगर कोई सत्यसमाजी इस्लाम का बन्दा आपको मस्जिद में नमाज का निमन्त्रण दे तो आप पधार कर रश्म अदा करेंगे या नहीं।

तदनुसार लगे हाथ यह भी बतला दें कि जैन सिद्धान्त तो आपकी तथा पं० दरबारी लाल जी की निगाह से त्रुटिपूर्ण है, क्योंकि आपका तथा पं० दरबारीलाल जी का जन्म जैनकुल में हुआ है तब उसकी त्रुटियां निकालना पहला फर्ज है। अब आप सत्यसमाजी हैं तदनुसार आपके सत्य भगवान कुरान, बाइबिल में भी खोट कसर बतलाते हैं या नहीं? और क्या आप सत्यसमाजी की हैसियत से उनमें त्रुटियां निकालने की तकलीफ उठावेंगे या आपका सत्य जैनधर्म की त्रुटियां निकाल कर ही समाप्त हो गया।

* * *

नाथूराम जी प्रेमी ने सत्य संदेश के ३३२ वें पृष्ठ पर महात्मा गांधी के पुत्र हीरालाल गांधी के इस्लाम स्वीकार कर लेने पर बुराई प्रगट की है सो सत्य समाज की दृष्टि से तो यह बात ठीक नहीं, क्योंकि सत्यसमाजी की दृष्टि से हिन्दू मुसलमान दोनों बराबर है। अगर हीरालाल गांधी को मुसलमान बन जाने पर सुख मिलता है तो सत्य समाजी उसकी निन्दा क्यों करता है?

इन कुछ बातों का उत्तर कृपा करके आप ही दीजिये पीछे अन्य प्रश्न रक्खूंगा। सम्भवतः इसी प्रकार सत्य भगवान के दर्शन हो जावें। —धीरेन्द्र

मस्तराम की मस्ती

सब से पहिले अपने राम साहित्य रत्न पं० दरबारीलाल जी को दनादन सलामी दागते हुये उनका शुक्रिया अदा करते हैं, जिन्होंने कि जैन जगतमें जैन धर्म का मर्म लिखा था अभागे जैन समाज की सदियों की बेवकूफी को थोड़े से समय में ही तहस नहसकर डालने का बीड़ा उठाया है। जो बातें स्वामी समन्त भद्र और आचार्य अकलंक देव जैसे धुरन्धर विद्वान भी अपने दिमाग में न ला सके, जो है सो उनका मिन्टोंमें आविष्कार करके रखदेना इन्हीं साहित्य शूर का काम है। जैन समाज को आप को आप की इस भयंकर कृपा का कृतज्ञ रहना चाहिये।

* * *

सुनते हैं कि कुछ दिनों पहिले पं० दरबारीलाल जी ने अपनी सर्वज्ञता द्वारा यह घोषणा करदी है कि भगवान महावीरादि जैन तीर्थ कर सर्वज्ञ नहीं थे क्यों कि हमारा उपयोग (पं० दरबारीलालका उपयोग जो कि स्वयं सर्वज्ञ बने हैं) एक साथ सब बातों और पदार्थों को नहीं जान सकता। बेशक अपने राम की भी यही राय है, जब कि पं० जी का उपयोग सर्वज्ञ होते हुए भी एक साथ एक ही बात को जान देख सकता है तो फिर भला महावीर जी का उपयोग एक साथ अनंत पदार्थों को कैसे जान देख

सकता था ? आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत वाली कहावत को अक्षरशः चरितार्थ करने वाले उक्त सम दृष्टि पं० जी का फौरन से पेशतर ही क्षीर सागर उर्फ बंगाल की खाड़ी के पवित्र जल में अभिषेक करके जैन समाजको अपनी निष्पक्ष भक्तिका परिचय दे डालना चाहिये।

अपने राम की समझ में स्वर्ग के देवताओं को भी यदि वे विद्यमान हों तो, साक्षात कलि सर्वज्ञ उक्त पं० जी को विपुलाचल, उत्तुंक हिमालय की एवरेष्ट चोटी पर ले जा कर समवशरण की रचना कर अपने भक्ति भावों का परिचय देना चाहिये।

* * *

जैनधर्म की प्राचीनता का दम भरने वाले जैन समाज के भ्रम निवारणार्थ अभी कुछ दिन पूर्व पं० दरबारीलाल जी ने अपने दिव्य ज्ञान द्वारा तमाम भूतकाल का दूर तक अवलोकन कर फरमाया था कि भगवान पार्श्वनाथ के पूर्व जैनधर्म था ही नहीं बेशक २ अपने राम भी पं० जी की उक्त बात की दिलो जान से ताईद करते हैं। तथा पुराणादिकों में जो २४ तीर्थंकरों का होना लिखा है वह यदि ठीक हो तो अपनी तुच्छ समझ में पहिले तीर्थंकर भ० पार्श्वनाथ और दूसरे महावीर जी के बाद तीसरा नम्बर इन्हीं साहित्य रत्न जी का है। यदि इस भांति अभी और भी कोई तीर्थंकर कलि काल में जन्म लेने की कोशिश करें तो ताज्जुब की कोई बात नहीं।

* * *

हालांकि वेदों ने पुराणों ने शास्त्रों और शिला लेखों ने मोहन जो दाड़ो में प्राप्त हुए पांच हजार वर्ष पूर्व के सिक्कों ने बौद्ध शास्त्रों ने, मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त भ० ऋषभदेव की मूर्ति ने जैनधर्म का अस्तित्व उपलब्ध इतिहास से अत्यन्त प्राचीन सिद्ध कर दिया है, किन्तु उन को धक्का देकर उक्त पं० जी उन्हें मानने को हरगिज तयार नहीं हैं। अतः पंडित जी के किसी भक्त को सर पर पैर रख कर इन सब प्रमाणों को हिमालयकी किसी अंधेरी कन्दरा में छिपा देना चाहिये ताकि इस बेलगामकी घुड़ दौड़ में, रास्ते में पड़ी हुई चट्टानों से टकरा कर, पंडित जी के वचन उलटे न गिर सकें।

* * *

ब्र० शीतल प्रसाद् जी ने पहले पहल जब विधवा विवाह की तान छेड़ कर जैन नर-नारियों को स्वर्ग लोक की अनुपम सैर करा देनेका बीड़ा उठाया था तथा 'सनातन जैन' समाज को अलग से स्थापना कर अपना महत्त्व प्रगट किया था तब उन्हें कई लोगों ने कलियुगी अवतार होनेका अनुमान लगाया था, किन्तु अब दरबारी जी ने और भी नये २ आविष्कार करके अपना ज्ञानोत्कर्ष दिखाना शुरू कर दिया और सत्यसमाज की अलगसे स्थापना कर डाली तो कई लोग इन पर आंखें गाड़ने लगे एक साथ इन दो अवतारों को देख कर अपने राम दुपट में फंसे हुये महाराज त्रिशंकु की तरह उल्टे लटक रहे थे कि किसको क्या कहें। किंतु जब दोनों दिग्गजोंकी आपस में मुठ-भेड़ होने लगी और एक दूसरे को बुद्ध बनाने लगे तो अपने राम दांत निपोर कर रह गए। आगे खुदा हाफिज है।

* * *

अभी तक किसी भी जैनशास्त्र में मुक्त जीवों को लौट कर पुनः संसार में आने की बात देखने में नहीं

आई थी, यहां तक कि स्वयं भगवान महावीर स्वामी ने भी मुक्तिको नित्य समझ कर ही प्राप्त करने का प्रयत्न किया था, किन्तु भला हो पं० दरबारी जी का, जिन्होंने कि इस बात को गलत बता कर मुमुक्षुओं को इस मोक्ष रुपी धोके की टट्टी से सावधान कर दिया। यदि अब किसी शास्त्री में दम हो तो मुक्त जीवोंको पं० दरबारी० जी से मुलाकात करा कर प्रत्यक्ष से सिद्ध करे कि दर असलमें मुक्त जीव कभी भी संसारमें लौटकर नहीं आते। वरना पं० दरबारी लाल जी वीगर सूखे प्रमाणों से मानने वाले जीव नहीं है।

* * *

इस विषय में यदि कोई वैज्ञानिक महाशय वायर लैस द्वारा मुक्त जीवों के साथ उक्त पं० जी की यहीं से बात चीत करा सकें तो पेन बेहतर, अन्यथा मुमुक्षुओ! धर्म कर्म छोड पं० दरबारीलाल जी की पवित्र शरणमें तुम्हें आ डटना चाहिये। क्या ही अच्छा हो यदि स्वयं महावीर स्वामी की आत्मा पं० दरबारी लाल जी की बातें सुन कर कुछ और मुक्त जीवों के डेपुटेशन के साथ हवाई जहाज से बम्बई आकर उक्त पण्डित जी से अपनी सर्वज्ञता और मुक्ति की नित्यता के विषयमें शास्त्रार्थ करनेका विचार करें। यदि ऐसा हुआ तो अपनेराम भी तमाशा देखने के लिये बोरिया बसना बाँध कर तूफान मेल से बम्बई रवाना हो जांयगे पर एक चिन्ता कलेजे में कांटेकी तरह चुभ २ कर चैन नहीं लेने देती, वह यह कि इन दो सर्वज्ञों की मुठभेड़ में यदि एक की भी हार हुई तो जैन दुनिया को क्या कह कर मुंह दिखावेगा।

* * *

एक अजीब बात और सुनिये कुछ दिन पूर्व शीतलप्रसाद जी जैन समाज के तमाम शास्त्रियों न्यायालंकारों और न्यायाचार्यो को पं० दरबारीलाल जी के साथ युद्ध करनेको तैयार कर रहे थे किन्तु कई विद्वानों को पं० दरबारीलाल जी से शास्त्रार्थ करने में शर्म आ गई और वह इस लिये कि इनने पं० दरबारी लाल जी को वर्षों पढ़ाया था। अपने राम की राय में इस वक्त गुरु गुड़ और चेला शक्कर बन गया है: अत: इन विद्वानों को अब शर्म और घमंड करना बिलकुल वाहियात बात है। तिस पर भी यदि इन्हें अपने मान की शान रखना ही अभीष्ट हो तो पंडित जी के किसी भक्त को चाहिये कि वह गौतम की भांति चालाकी से इन सब न्यायाचार्य न्यायालंकार, और शास्त्रियों को पं० दरबारीलाल जी के सामने खींच ले जाय. बस, फिर क्या है, पं० दरबारीलालजी के मानस्तंभ उर्फ लम्बी नाक को देख कर इन लोगोंका स्वयं दर्प दलन हो जायगा और शर्म तो रफूचक्कर होने का ही ठहरा! खुदा, खुदा, शास्त्रार्थ करने में शर्म ?? और वह भी अपने शिष्य से ???

* * *

एक पुस्तक में दृतकथा लिखी है कि—एक बार एक राज हंस एक कुएं पर गया। कुए के मेंढक ने राज हंस का स्वागत किया और उच्चासन देकर प्रसंग वश पूछा कि आप का मान सरोवर कितना बड़ा है। राज हंस बोला- भाई! मान सरोवर तो बहुत बड़ा है। तब मेंढक ने एक हाथ लम्बा करके कहा—क्या इतना बड़ा है। तो राजहंस बोला—इससे बहुत बड़ा है। मेंढक दोनों हाथ लम्बे कर के बोला—तो इतना बड़ा होगा। हंस बोला—

इससे भी बहुत बड़ा है। हंस की बात सुनकर मेंढक ने कुए के एक किनारे से सामने के दूसरे किनारे पर छलांग मारकर हंस से कहा तो क्या इससे भी बड़ा है। तब हंस ने हंसकर कहा—हां इससे भी बड़ा है। मेंढक झुंझला कर बोला—"बस। तुम बड़े झूठे हो। इससे बड़ा हो ही नहीं सकता। राज हंस कूप मंडूक की इस मूर्खता पर मन ही मन बहुत हंसा और और कुछ उत्तर न देकर चुपचाप चला गया" इस हंस कथाको पढ़ कर अपने राम भविष्य में होनहार इस गुरु शिष्य शास्त्रार्थ में बहुत दिल चस्पी ले रहे थे, पर साथ ही इस बात से कुछ शंकित भी हो रहे थे कि कूप मंडूकताका सेहरा कहीं श्रीमान जीके माथे न बन्ध जाय। पर ऐसा होना मुमकिन नहीं जँचता था क्योंकि पं० जी पहिले से ही होशियार बन कर सर्वज्ञता का पार्ट अदा कर रहे थे।

* * *

खैर, इसी बीच सुनने में आया कि पं० वंशीधर जी शोलापुर से अमरोहा में उक्त साहित्य रत्न जीकी मुठभेड़ हो गई। हार जीत के सम्बन्ध में दोनों महाशयों ने एक दूसरे को पछाड़ देने का समाचार छपवाया था, किन्तु अपने राम की राय में पं० वंशीधर जी का कलि सर्वज्ञ से जीतना शशोपञ्ज में डाल रहा है। जो हो इसके कुछ दिन बाद ही न्यायालंकार पं० मक्खनलाल साहब को भी शौक चर्राया और पण्डित, उहुँक, सत्यावतार जी को शास्त्रार्थ का चेलेंज दे डाला। किन्तु सत्यावतार जी ऐसे वैसे पण्डितों से बात करने वाले जीव नहीं हैं।

* * *

पं० राजेन्द्रकुमार अम्बाला ने यद्यपि पहिले कई बार शास्त्रार्थ के लिये जैनधर्म के मर्मी को ललकारा था, किन्तु मर्मी जी नियमोपनियमों के निश्चित न हो सकने के कारण शास्त्रार्थ को बड़ी सफाई के साथ टाल गये थे, पर अब सबसे पीछे की खबर यह है कि देवगढ़ के मेले पर पं० राजेन्द्रकुमार ने मर्मी जी को अपनी सत्यसमाज और सर्वज्ञता के मर्म को सिद्ध करनेके लिये पुनः निमंत्रण दिया और हर तरहसे मर्मी जी के इच्छानुसार शास्त्रार्थ करने की इच्छा प्रगट की, पर पंडित जी ने परीक्षाओं के सहारे को साथ लेते हुए शास्त्रार्थ करने में इस खूबी से इन्कार किया कि 'सांप मरे न लाठी टूटे।'

* * *

सत्यावतार पं० दरबारीलाल जी फरमाते हैं कि अगर तुम्हें मुझ से शंका समाधान या बात चीत करना हो तो मेरे स्थान पर हाजिर होओ या फिर जहां मैं प्रचार करने के लिये विहार करूं वहाँ आकर पूछ पाछ लो, मुझे शास्त्रार्थ मास्त्रार्थ करने की कोई जरूरत नहीं। बेशक २, अपने राम की राय में सत्यावतार जी का उत्तर उनके पोजीशन को देखते हुए 'राइट राइट' है। कहीं सर्वज्ञ भी बुलाये २ फिर कर शास्त्रार्थ करते है। मुमुक्षुओं को ही उन की शरण लेनी पड़ती है। आशा है कि पं० राजेन्द्र कुमार जी भविष्य में 'छोटे मुंह बड़ी बात' करने से बाज आएंगे।

* * *

—मस्तराम
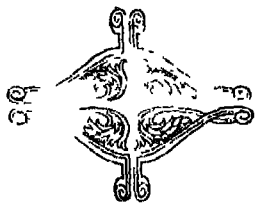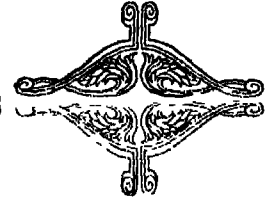
वीर सेवा मन्दिर

प्रसिद्ध साहित्यसेवी पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार ने अपने निवासस्थान सरसावा में वीर सेवा मन्दिर की स्थापना की है। सरसावा सहारनपुर जिले में ऐन० डबल्यू० रेलवे का एक छोटासा स्टेशन है। सहारनपुरसे रेलवे किराया केवल चार आने लगता है। ग्रैंड टंक रोड के किनारे सरसावा बसा हुआ है। दो मन्दिर हैं। जैनों के ६०-७० घर हैं, बस्ती पुरानी है।

उक्त रोडके किनारे पर ही करीब पन्द्रह हजार रुपया खर्च करके सेवा मन्दिर की एकमंजली आलीशान इमारत बनवाई गई है। इस इमारत में दो विशाल द्वार हैं—एक पूरब की ओर, दूसरा उत्तर की ओर। पूर्व द्वारके ऊपर मोटी पीतल के कटे हुये बड़े २ अक्षरों में 'णमो लोए सव्वसाहूणं' जड़ा हुआ है। दोनों द्वार तथा अट्टालिकाके ऊपर जैन झण्डे फहरा रहे हैं। अट्टालिका पर एक बड़ा स्वस्तिक तथा 'जैनं जयतु शासनम्' अंकित है। इमारत के अन्दर पूरब और उत्तर दिशाकी ओर कई बड़े बड़े कमरे हैं। पश्चिम में सेवा मन्दिरका प्रधान अंग और इस इमारत का दर्शनीय भाग एक विशाल भवन है। उसके आगे बरामदा और दोनों ओर ऊपर-नीचे दो दो कमरे हैं। भवन में पुस्तकालय रहेगा और दोनों ओर के कमरोंमें साहित्यिक अनुसंधान के प्रेमी विद्वानों के लिये अनुसंधान का कार्य करने की व्यवस्था की जायेगी। स्थान अत्यंत रमणीक और जलवायु स्वास्थ्यप्रद है। ज्ञानार्जन, धर्माराधन और साहित्यिक अन्वेषण के प्रेमी विद्वानों और त्यागियों के लिये बहुत ही उपयुक्त है। विशाल इमारत, स्वच्छ हवादार सुन्दर भवन, अति विस्तृत आंगन और इन सबके साथ मुख्तार साहबका प्रशांत उत्साह देख कर आगन्तुक का मन प्रसन्न होजाता है। किन्तु जब उनके हृदय में यह प्रश्न उठता है कि क्या मुख्तार साहब का लगाया हुआ यह पौधा भविष्यमें इस स्थान पर फूले फलेगा? तब उसका हृदय खेदखिन्न हुये बिना नहीं रहता। साहित्यसेवा से विमुख जैन समाज के साहित्य प्रेमी महानुभावों को साहित्य सेवामें सर्वस्व लगा देने वाले एक साहित्य सेवक के सेवा मन्दिर को एक बार देखनेका हम सप्रेम अनुरोध करते हैं। गार्हस्थिक जंजाल से मुक्त अध्ययनशील व्यक्तियों को इस सेवा मन्दिरसे लाभ उठाना चाहिये।

—कैलाशचन्द्र शास्त्री बनारस

वर्ष समाप्ति

इस युग्म अंक के साथ जैनदर्शन का तीसरा वर्ष समाप्त हो रहा है। आगामी अंक चतुर्थ वर्ष का प्रथम अंक होगा। इस तीन वर्ष के स्वल्प जीवन में जैनदर्शन ने जो कुछ जैनधर्म का प्रचार एवं जैनसमाज की सेवा की है उससे हमारे पाठक महानुभाव सुपरिचित होंगे। जैन सिद्धान्त पर जैन अजैन भाइयों द्वारा होने वाले आक्षेपों का समाधान यथाशक्ति जो

कुछ किया है वह प्रेमी पाठकों से छिपा नहीं है।

शास्त्रार्थ संघ ने इस वर्ष उपदेशक विद्यालय के उद्घाटन का निश्चय किया था उसके लिये संघ के प्रधान मंत्री श्रीमान प० राजेन्द्रकुमार जी को अपना ८-६ मासका समय प्रायः दौरे पर लगाना पड़ा (सच तो यह है कि उनके अदम्य उत्साह और अथक परिश्रम से उपदेशक विद्यालय का पौदा उग खड़ा हुआ है) अतः पं० दरबारीलाल जी के आक्षेपों की निराकरणरूप आपकी लेख माला प्रकाशित होने के लिये न आ सकी।

इसके सिवाय कुछ एक लेखमालाएं अन्य लेखक महानुभावों का भी अपूर्ण रह गई हैं जो कि चतुर्थ वर्ष में पूर्ण होंगी।

जैनसमाज में अच्छे लेखकों की कमी है थो थोड़े हैं भी उन महानुभावों को लिखने के लिये यथेष्ट समय नहीं मिलता किन्तु इस कठिनाई का सामना करते हुए जैन दर्शन में कूड़ा करकट नहीं भरा जाता उपयोगी अच्छे लेखों को ही स्थान दिया जाता है। अच्छे लेख प्राप्त करने में कभी कुछ देर भी हो जाती है। कभी कभी प्रकाशित होने में देरीका यही मुख्य कारण है।

विद्वान लेखकों ने अपने अमूल्य लेख निःस्वार्थरूप में भेज कर जो जैनदर्शन को सहायता प्रदान की है जैन दर्शन का सम्पादक मण्डल उनका बहुत आभारी है।

जैनदर्शन और अधिक उन्नत बनाने के लिये शास्त्रार्थ संघ की प्रबन्ध कारिणी कमेटी ने जैनदर्शन को पाक्षिक न रख कर 'मासिक' कर दिया है अतः जैन दर्शन अपने नवीन ढंग से चतुर्थ वर्ष के प्रथम अंकसे मासिक रूप में प्रकाशित होगा।

विश्व तत्व प्रकाशक ज्ञान से विभूषित, अनन्त शक्ति सम्पन्न परमात्माकी श्रद्धा शक्तिसे जैनदर्शन का तृतीय वर्ष सानन्द समाप्त हुआ है।

—अजितकुमार जैन

सूचनायें

१—अनेक अनिवार्य कार्यों की वजह से यह अङ्क युग्म रूप में प्रकाशित हो रहा है।

२—जैनदर्शन अब नवीनरूपमें पाक्षिक रूप छोड़ कर मासिक रूप में प्रकाशित हुआ करेगा। पृ० सं० अधिक होगी और लेख मार्मिक, अधिक आकर्षक एवं उपयोगी रहा करेंगे।

३—उपहार के लिये जिन भाइयों ने पाँच पैसे के टिकिट हमारे पास भेज दिये थे उपहार ग्रंथ "सत्तास्वरूप" उनकी सेवा में भेज दिया गया है शेष ग्राहकों को टिकिट भेज कर ग्रन्थ मंगा लेना चाहिये।

४—चतुर्थ वर्ष के लिये उपहार ग्रंथ की योजना हो रही है निश्चित हो जाने पर पाठकों को सूचित किया जावेगा।

५—दर्शनको चाहे जैसे निःसार लेखोंसे भरकर प्रकाशित करने का खयाल नहीं रक्खा जाता तथा उपयोगी लेख प्राप्त करने में समय व्यय होता है अतः कभी कभी प्रकाशन में कुछ देर भी हो जाती है। पाठक महानुभाव उस देरी का खयाल न करके उपयोगी लेखोंका खयाल रक्खा करें।

६—जैनदर्शन यहां से अच्छी तरह जांच कर रवाना किया जाता है फिरभी कभी २ किन्हीं ग्राहकों को न पहुंचने की शिकायत आती है (जिनको कि

पुनः दर्शन भेज दिया जाता है) उन्हें अपने यहां के पोष्टआफिस से छान बीन करनी चाहिये।

६—जैनदर्शन का प्रत्येक अंक संग्रह करने योग्य है अतः प्रत्येक साहित्य प्रेमी के पास, पुस्तकालय एवं संस्थाओं में जैनदर्शन की पूरी फाइल रहना आवश्यक है। जैनदर्शन की प्रथम वर्ष की फाइल प्रथम अंक के बिना दो रुपये पांच आने में, द्वितीय वर्षकी फाइल स्याद्वाद अंक सहित तीन रुपएमें तथा तीसरे वर्ष की फाइल उपहार ग्रंथ सत्यस्वरूप सहित तीन रुपये एक आने में मिल सकती है। संस्थाओं से आठ आने कम लिये जायंगे।

७—जैनदर्शन के संपादक, प्रकाशक आनरेरी सेवा करते हैं अतः दर्शन का संपादन प्रकाशन व्यय वेतनिक रूपसे कुछ नहीं होता तथा अच्छे कागज के बजाय घटिया लगा कर बचत करना शा० संघ उचित नहीं समझता। इस परिस्थितिमें ग्राहकों की पर्याप्त संख्या न होने के कारण जैनदर्शन घाटे का असह्य भार अपने शिर पर लादे हुए है उस भार को हलका करने के लिये प्रत्येक प्रेमी पाठक का कर्तव्य है कि जैनदर्शन की आर्थिक सहायता करे तथा नवीन ग्राहक बनाने का कष्ट स्वीकार करे। आपकी इस समयोचित सहायता को पा कर जैनदर्शन जैनधर्म का प्रचार और जैनसमाज की सेवा और भी अधिक रूप में कर सकेगा।

निवेदक—मेनेजर जैनदर्शन
अकलंक प्रेस-मुलतान सिटी

पुनः निवेदन

जैन दर्शन के २० वे अंक में सत्यसमाज के विषयों में मैं ने पं० दरबारीलाल जी से कतिपय बातें पूछीं थीं, उनका उत्तर देनेके लिये 'तुम कौन, कि मैं खाम खा' के अनुसार बा० रघुवीरशरण जी बीच में आ कूदे, कारण ज्ञात नहीं हुआ कि मेरे लेखके उत्तर से पं० दरबारीलाल जी को ऐसा क्या कष्ट होना था या ऐसा कौन सा भारी समयका व्यय होता था और जब कि मैं ने उत्तर पाने के लिये समय की कुछ सीमा नहीं बांधी थी। खैर। मैं ने दूसरी बार पुनः दरबारीलाल जीसे प्रेरणा की कि आप ही मुझे उत्तर दें। किन्तु रघुवीरशरण जी का उतावला मन फिर न माना फिर वे आ कूदे। अब की बार उन्हों ने 'दयनीय बुद्धिमत्ता, दयनीय अनभिज्ञता, भूले भटके, सद्बुद्धि प्राप्त हो' आदि सभ्य शब्दों से मुझे याद किया है जिस के लिये आप को धन्यवाद है आपका इस में कुछ अपराध नहीं आप अपनी पुरानी आदत से लाचार हैं इसी कारण हर किसीके लिये आपके ऐसे मनोहर शब्द प्रगट होते रहते हैं।

पं० दरबारीलाल जी से पुनः निवेदन है कि आप की हमारी हमेशासे घुटती रही है तथा आप ने हमने एक ही वृक्षके नीचे एक ही कूप का पानी पिया है कृपया मेरे प्रश्नोंका उत्तर अपने सभ्यशिष्यों से न दिला कर स्वयं ही देने का कष्ट उठावें। इस का कारण यह भी है कि सचमुच रघुवीरशरणजी दूसरों को सद्बुद्धि प्रदान करते २ अपना पात्र खाली कर चुके हैं अतः उन्हों ने प्रश्नों का भाव अवगत नहीं कर पाया। रघुवीरशरण जी क्षमा करें वे हमारे और पं० दरबारीलालजी के बीच 'खा म खा' बनने का उद्योग न करें।

—अजितकुमार जैन

समालोचना

छहढाला—स्व० पं० दौलतराम जी कृत "तत्वोपदेश" ग्रंथ जोकि अपनी छह ढालों (छन्दों की चालों) के कारण 'छहढाला' के नामसे प्रसिद्ध है। जिनवाणी कार्यालय कलकत्ता से नवीन रूप में प्रकाशित हुआ है। मुख पृष्ठ पर ध्यानस्थ मुनि का आकर्षक चित्र है। ग्रंथ की नवीन ढंग से टीका और संपादन श्रीमान पं० भुवनेन्द्र जी 'विश्व' ने किया है। उन्हों ने छहढाला का प्रत्येक शब्द सरलता से विद्यार्थियों को समझानेका प्रयत्न अपनी टीका द्वारा किया है। इसके लिये आत्मा, अजीव, सम्यग्दर्शन के दोष, सम्यग्ज्ञान, चारित्र और शील के १८ हजार भेदों के अलग अलग ६ चार्ट भी दिये हैं। जहां जिस पद्यमें जो विषय प्रारम्भ होता है। उसका शीर्षक वहां दे दिया है यह भी विद्यार्थियों के लिये बहुत उपयोगी रहेगा इस तरह विद्यार्थियों के लिये यह अच्छी उपयोगी पुस्तक है।

इस टीकामें त्रुटि एक यह रही है कि प्रत्येक पद्य एवं ढालका भावार्थ इसमें नहीं दिया है जो कि देना चाहिये। दूसरे संस्करण में यह त्रुटि अवश्य निकल जानी चाहिये। प्रकाशकीय वक्तव्य में २-१ बात उचित नहीं लिखी गई उन बातों से जहां कृतज्ञता को धक्का पहुंचता है वहां टीकाकारका उत्साह भी घट सकता है। पृ० ८२ हैं, मूल्य ४ आने हैं। कागज छपाई सफाई अच्छी है।

भोला समाज— ले० बा० चन्द्रसेन जी वैद्य इटावा। पृ० ४० मूल्य दो आना।

इस पुस्तक में अनमेल विवाह (छोटे वर बड़ी बहू) वृद्ध विवाह, मृत्यु जीमन के दुष्परिणाम पर प्रहसन के ढंगसे प्रकाश डाला गया है। स्वार्थान्ध नालायक लोग पंचायत की आड में, तथा स्वार्थी ब्राह्मण पुरोहिती के ढोंगसे एवं स्त्रियां अशिक्षा और अज्ञानता के कारण क्या कुछ बिगाड़ करते हैं इन बातों पर पुस्तक में प्रकाश डाला गया है।

पुस्तक साधारण रूपसे उपयोगी है यदि लेखनी अच्छे ढंगसे चलाई जाती तो विशेष उपयोगी होती पुस्तकमें स्वाभाविक रूप नहीं आया है। यह त्रुटि बहुत खटकती है अतः सुधारने की आवश्यकता है।

जांच कमीशन की रिपोर्ट—

ईदके दिन भोपाल में जो उपद्रवी मुसलमानों ने दिगम्बर जैन मन्दिर पर आक्रमण किया था उस घटना की जांचके लिये भोपाल हिन्दूसभाने श्री० डा० अमृता प्रसादजी एवं पं० चतुरनारायण जी मालवीय वकीलका कमीशन नियत किया था। इस कमीशन ने निष्पक्ष जांच करके यह रिपोर्ट बड़ी साइज के २८ पृष्ठों में प्रकाशित की है,

मुसलमानों की धर्मान्धता एवं उपद्रवीपन तो प्रसिद्ध है ही। शान्त वातावरण को अशान्त कर देना निम्न श्रेणी के मुसलमानों का बांये हाथका खेल है। किन्तु यह उपद्रव बलहीन जन समुदाय पर ही हुआ करते हैं। मुकाबले में डट सकने वाले बलवान समुदाय के सामने इनकी जुर्रत नहीं होती जैन समाज संख्यामें अल्प, बलमें हीन एवं शान्ति क्षमा का पुजारी है। साथ ही ईद की नमाज पढ़ने के लिये मुसलमानों की भीड भी बहुत बड़ी होती है इन सब कारणों के अनुसार ईदके दिन भोपाल में

(शेष मैटर पेज ४७ पर देखें)

श्री भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ के आश्रित

उपदेशक विद्यालयका

पठनक्रम

अध्ययन के लिये

वर्ष १ वैदिक—(१) आर्यसमाज के १० नियम

(२) स्वमन्तव्यामन्तव्य

(३) सत्यार्थप्रकाश ७, ८, ९, १२ समुल्लास

(४) निरुक्त अर्ध

दार्शनिक—(१) न्याय बिन्दु धर्मोत्तर टीका सहित

(२) सांख्यतत्व कौमुदी

(३) योग सूत्र व्यास भाष्य

(४) सोपस्कार वैशेषिक सूत्र

(५) सर्व दर्शन संग्रह (भंडार रिसर्च इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित

(६) तत्वार्थ सूत्र की टीकाओं का तुलनात्मक अध्ययन

प्रायोगिक—(१) व्याख्यान देना

(२) शंका समाधान

वर्ष २ वैदिक—(१) निरुक्त अवशिष्ट

(२) ऋग्वेद प्रथम मण्डल

(३) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (स्वामी दयानन्द)

(४) संस्कार विधि (स्वामी दयानन्द)

(५) नीति मञ्जरी

दार्शनिक—(१) न्याय दर्शन वात्स्यायन भाष्य

(२) वेदान्त सूत्र शांकर भाष्य (तर्कपादान्त)

(३) शाबर भाष्य (१-३ अध्याय)

(४) सूत्र कृतांग प्रथम श्रुतस्कन्ध

(५) भगवती सूत्र के कुछ शतक

प्रायोगिक—(१) व्याख्यान देना

(२) शंका समाधान तथा शास्त्रार्थ करना

नोट—जो छात्र ऊपर लिखे दार्शनिक ग्रन्थों का अध्ययन कर चुके होंगे वे उनके स्थान में नीचे लिखे ग्रन्थों का अध्ययन करेंगे।

१ प्रशस्तपाद भाष्य। २ न्याय मंजरी। ३ न्याय वार्तिक तात्पर्य टीका (प्रमेय पर्यन्त) ४ सांख्य प्रवचन भाष्य। ५ उपनिषदों का आवश्यक अंश। ६ भामती चतुस्सूत्र्यन्त। ७ भगवद्गीता मधुसूदनी टीका और शांकर भाष्य सहित। ७ मीमांसा श्लोक वार्तिक। ९ तत्व-संग्रह। १० उत्तराध्ययन २४ अध्ययनान्त। ११ आचारांग प्रथम श्रुत स्कन्ध। १२ नन्दी सूत्र चूर्णीसहित। १३ सन्मति तर्क ज्ञान काण्ड।

वर्ष १ स्वाध्याय के लिये

(१) समन्तभद्र

(२) आर्यसमाज के खंडन मण्डन के ट्रैक्ट

(३) बाइबिल
(४) वक्तृत्वकला
(५) दर्शन और अनेकान्त
(६) पुराणों में जैन धर्म
(७) जैनाचार्यों का शासनभेद
(८) ग्रन्थ परीक्षा
(९) भारत भूमि और उसके निवासी (जयचन्द)
(१०) मनोविज्ञान
(११) भौतिक विज्ञान (निहालकरण सेठी)

वर्ष २ (१) महापुराण
(२) बुद्धचर्या
(३ कुरान कुछ प्रकरण
(४) भारतीय सभ्यता—रमेशचन्द्रदत्त
(५) विनय पिटक
(६) मज्झिम निकाय
(७) दर्शनकी लेखमाला—जैन धर्म का मर्म और प० दरबारीलाल जी

नोट—विद्यालय के भवन में प्रति सप्ताह व्याख्यान सभा होगी। और प्रति दिन कम से कम १ घण्टे शास्त्र सभा होगी। व्याख्यान सभा में उच्च कोटिके सैद्धान्तिक दार्शनिक और सामाजिक विषयों पर छात्रों के व्याख्यान हुआ करेंगे। और शास्त्र सभा में गोमट्टसार जीव काण्ड की बड़ी टीका जैसे ग्रन्थ विराजमान करके तत्वचर्चा हुआ करेगी। प्रत्येक छात्र को अपने अध्ययन के आधार पर प्रति मास एक लेख लिखना होगा।

विशेष—'जैन मित्र' वगैरह में प्रकाशित पाठ्य-क्रम में कुछ परिवर्तन करके उसे प्रकाशित किया जाता है।

—कैलाशचन्द्र- मन्त्री उपदेशक विद्यालय

धर्मान्ध मुसलमानों ने दिगम्बर मन्दिर पर मन्दिरमें पत्थर बरसाने एवं मन्दिर में बाजा बजने के कारण नमाजमें विघ्न पड़ने का निराधार झूठा बहाना बनाकर आक्रमण किया तथा मन्दिर में जाकर ३ जैनियों को पीटकर अपमानित किया। ३-४ घंटे पीछे (दिन के १ बजे) भूखे, शिर पैर नंगे मन्दिर में छिप रहे जैन भाइयों को पुलिस अपराधियों के समान संगीनों के पहरे में कोतवाली ले गई जहांसे वे रातके ६ बजे छोड़े गये। इत्यादि घटना पर तथा समझौते के प्रस्ताव पर एवं इससे सम्बन्ध रखने वाली अन्य घटनाओं पर कमीशन ने अच्छा प्रकाश डाला है। साथमें भोपाल सरकारके वक्तव्य की भी नाप-तोल की है। ३३ प्रतिष्ठित सज्जनों की साक्षी लेकर जो सार सत्य अंश निकाला है वह सब इस रिपोर्टमें विद्यमान है।

इस रिपोर्टकी एक नकल भोपाल नवाब की सेवा में भेजी गई है। नवाब महोदय क्या निर्णय देंगे यह तो भविष्यके गर्भमें है किन्तु इतना अवश्य है कि भोपालराज्यमें ऐसी साम्प्रदायिक घटना संभवतः पहली है। इसका यदि नीरक्षीर रूपसे अच्छा न्याय करके अपराधियों को समुचित दंड दे दिया गया तो भोपाल राज्यमें आगामी ऐसी घटनाएं न घटने पावेंगी।

हिन्दूसभा भोपाल तथा उसके नियुक्त कमीशन के सदस्यों ने जांच करके रिपोर्ट प्रकाशित की है तदर्थ जैन समाजको कृतज्ञ होना चाहिये किन्तु हिन्दूसभा को इस उपद्रव के न्याय प्राप्त होने से पहले चुप न होना चाहिये। जैन समाजको हिन्दूसभा भोपाल की तन-मन-धन से सहायता करनी चाहिये।

—अजितकुमार

तृतीय वर्ष की लेख-सूची

जैनदर्शन में इस वर्ष (तीसरे वर्ष) निम्नलिखित लेख प्रकाशित हुए हैं।

५२- भूतपूर्व वायसराय का पत्र। (उद्धृत) अङ्क ११ पृ० २६।

५३- भोजन। ले०—पं० कपूरचन्द जी। अङ्क १२ पृ० २।

५४- अन्तिम सन्देश। (गल्प) ले०—बा० ज्ञानचन्द्र जी बी० ए०। अङ्क १२ पृ० १०।

५५- जैनधर्म का मर्म और पं० दरबारीलाल जी। ले०—पं० राजेन्द्रकुमार जी न्यायतीर्थ। अङ्क १२ पृ० १४।

५६- कांग्रेस की सुवर्ण जयन्ती। ले०—अजित कुमार जैन। अङ्क १२ पृ० १८।

५७- सत्यदर्शन और साम्प्रदायिकता। लेखक—पण्डित नाथूराम जी डोंगरीय न्यायतीर्थ। अङ्क १२ पृष्ठ २१।

५८- कांग्रेस और मुसल्मान। (उद्धृत) लेखक—मुहम्मद जैनुलाबदीन। अङ्क १२ पृष्ठ २५।

५९- क्रान्ति और शान्ति। लेखक—पण्डित कैलाशचन्द्र जी न्यायतीर्थ जयपुर। अङ्क १३ पृष्ठ २

६०- जैनतिथि और व्रततिथि। लेखक—पण्डित मिलापचन्द जी कटारिया। अङ्क १३ पृष्ठ ५।

६१- चांदी की दुअन्नी। (गल्प) लेखक—पं० कैलाशचन्द्र जी न्यायतीर्थ जयपुर। अङ्क १३ पृष्ठ ११।

६२- वेद निर्माता। लेखक—स्वामी कर्मानन्द जी। अङ्क १३ पृष्ठ १६।

६३- जैन बनाम हिन्दू। लेखक—पण्डित कैलाश चन्द्र जी शास्त्री बनारस। अङ्क १३ पृष्ठ २२।

६४- दहेज। ले०—अनुपमकुमारी जैन अङ्क १४ पृष्ठ २।

६५- सम्राट जार्ज का संक्षिप्त जीवन। अङ्क १४ पृष्ठ ५।

६६- आदर्श बलिदान। लेखक—विनयकुमारजी। अंक १४ पृष्ठ ८ तथा अङ्क १५।

६७- वेदों का ईश्वर कर्तृत्व और पण्डित भगवत दत्त जी। लेखक स्वामी कर्मानन्दजी अङ्क १४ पृष्ठ १३

६८- नये सम्राट का संक्षिप्त इतिहास-अङ्क १४ पृष्ठ २२।

६९- स्याद्वाद मंजरी। ले० पण्डित कैलाशचन्द्र जी शास्त्री बनारस-अङ्क १४ पृष्ठ २४।

७०- भट्टाकलंक के एक और अलभ्य ग्रन्थ की प्राप्ति। लेखक—प्रज्ञाचक्षु पण्डित सुखलाल जी जैन बनारस-अङ्क १५ पृष्ठ २।

७१- दूध। लेखक—पण्डित कपूरचन्द जी-पृष्ठ ७

७२- स्वागताध्यक्ष का भाषण (देवगढ़ अधिवेशन) लेखक—सेठ लखमीचन्द जी मोदी पृष्ठ १६।

७३- सभापति का भाषण (देवगढ़ अधिवेशन के सभापति रा० सा० ला० नेमिदास जी का व्याख्यान) पृष्ठ २१।

७४- देवगढ़ अधिवेशन समाचार। अङ्क १५ पृ० २८।

७५- धर्म के दश लक्षण। ले०-पं० चैनसुखदास जी न्यायतीर्थ। अङ्क १६ पृ० २।

७६- वस्त्र। ले०-पं० कपूरचन्द जी। अङ्क १६ पृ० ४।

७७- बनिये की बुद्धिमानी (गल्प) ले०-श्री सुभद्राकुमारी जी। अङ्क १६ पृष्ठ ८।

७८-पांच पाप। ले०-श्री कुमारी ललिता। अङ्क १६ पृष्ठ ११ तथा अङ्क २२ पृ० २१।

देश-विदेश समाचार

—दरभंगा ३ जुलाई—आज बाद दोपहर दरभंगा के महाराजा की संरक्षा में कुश्तियां हुईं। उपस्थिति बहुत भारी थी। चांदराज ने रोम के पहलवान अलेक्ज कोसिस को तीन मिनटों में गिरा दिया पूर्ण सिंह (दरभंगा का राज पहलवान) ने जर्मन पहलवान क्रेमर को ४० मिनट बाद पराजित किया।

—इटावा-के एक पुराने दुर्ग के बारेमें कहा जाता है कि वह महाराज जयचन्द्र का है, इस लिए १००० वर्षसे वह कम पुराना नहीं है, श्रीकृष्णकुमार परवार नाम के एक सज्जन उस दुर्गके खंडहरमें एकदिन घूम रहे थे, उन्हें वहां एक पुस्तक के कुछ पृष्ठ मिले जो अवश्य उतने ही पुराने होंगे जितना कि वह दुर्ग है।

—नई देहलीमें टांगे वालों तथा छकड़ेवालों की हड़तालसे शहर के व्यापारियों को पचास हजार रुपये की हानि पहुँच चुकी है। एक निजी लारी पर पिकेटिंग करने के अभियोगमें तीन छकड़े वाले गिरफ्तार किये गये हैं।

—जर्मनी के इन्जीनियरों ने एक ऐसी रेलगाड़ी बनायी है जिस के पहियों के अतिरिक्त सारे ऊपरी डब्बे शीशे के बने हुए हैं। यात्री बिना रुकावट दोनों ओर का दृश्य देख देखते हुए सफर कर सकता है।

—बम्बई १३ जून—शनिवार १३ जूनको समाप्त होने वाले सप्ताह में बम्बई से ६८७२१७६ रु० का सोना योरोप और अमरीका को गया जब से ग्रेट ब्रिटेन ने स्वर्णमुद्रा परित्याग आरम्भ किया है तब से निर्यात स्वर्ण का मूल्य २७३१२४८३६४ रुपये तक आ पहुंचा है।

—लीथियम नामक एक नयी धातु का पता लगा है जो संसार की सभी धातुओंसे वजनमें हलका है।

—साधारण प्याजके बाहरी छिलके की मोटाई देखकर फ्रांस की लेना नाम स्त्री यह भविष्यवाणी कर देती है कि महीनों तक कब कैसा मौसम रहेगा। जांच करने पर मालूम हुआ है कि उसकी भविष्य-वाणी हमेशा ठीक निकलती है।

—उमर खय्याम की रुबाइयात सिर्फ $\frac{1}{4}$ इन्च लम्बी है। यह किताब रुबाइयात उमर खय्याम का तरजुमा है। इसका भार एक ग्रेन से कुछ ज्यादा है। खूबी यह है कि यह किताब केवल फ़ोटोग्राफी से तय्यार नहीं की गई बल्कि स्याही से कागज पर लिखी गई है। तमाम पृष्ठों को सिलाई हाथ से की गई है। उस पर चमड़े की जिल्द बन्धी हुई है। रुबाइयात ऐसी मालूम होती है जैसे कि स्याही के धब्बे।

आवश्यक सूचना

दर्शनके पाक्षिक निकलने में स्थान कम रहता है अतः संघकी कार्यकारिणी ने निर्णय किया है कि इसे पाक्षिक के स्थान पर मासिक रूपमें निकाला जाय। अतः अब दर्शन मासिक रूपमें प्रकाशित हुआ करेगा।

मासिक दर्शन ४२ पेजका होगा तथा इसका प्रथम अंक १ सितम्बर सन १९३६ को अकलंक प्रेस मुलतान से प्रकाशित होगा।

निवेदक— प्रधान मन्त्री-
भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला।

देश-विदेश समाचार

—दरभंगा ३ जुलाई—आज बाद दोपहर दरभंगा के महाराजा की संरक्षा में कुश्तियां हुईं। उपस्थिति बहुत भारी थी। चांदराज ने रोम के पहलवान अर्चे कौसिस को तीन मिनटों में गिरा दिया पूर्ण सिंह (दरभंगा का राज पहलवान) ने जर्मन पहलवान क्रमर को ४० मिनट बाद पराजित किया।

—इटावा—के एक पुराने दुर्ग के बारेमें कहा जाता है कि यह महाराज जयचन्द का है, इस लिए १००० वर्षसे यह कम पुराना नहीं है, श्रीकृष्णकुमार परवार नाम के एक सज्जन उस दुर्गके खंडहरमें एकदिन घूम रहे थे, उन्हें वहां एक पुस्तक के कुछ पृष्ठ मिले जो अवश्य उतने ही पुराने होंगे जितना कि यह दुर्ग है।

—नई देहलीमें तांगे वालों तथा इक्केवालों की हड़तालसे शहर के व्यापारियों को पचास हजार रुपये की हानि पहुंच चुकी है। एक निजी लारी पर पिकेटिंग करने के अभियोगमें तीन इक्के वाले गिरफ्तार किये गये हैं।

—जर्मनी के इन्जीनियरों ने एक ऐसी रेलगाड़ी बनायी है जिस के पहियों के अतिरिक्त सारे ऊपरी हिस्से शीशे के बने हुए हैं। यात्री बिना रुकावट दोनों ओर का दृश्य देख-देखते हुए सफर कर सकता है।

—बम्बई १३ जून—शनिवार १३ जूनको समाप्त होने वाले सप्ताह में बम्बई से १८७२९७६ रु० का सोना योरोप और अमरीका को गया जब से ग्रेट ब्रिटेन ने स्वर्णमुद्रा परित्याग आरम्भ किया है तब से निर्यात स्वर्ण का मूल्य २७३१२४८३६४ रुपये तक आ पहुंचा है।

—लीथियम नामक एक नयी धातु का पता लगा है जो संसार की सभी धातुओंसे वजनमें हलकी है।

—साधारण प्याजके बाहरी छिलके की मोटाई देखकर फ्रांस की सेना नाम की यह भविष्यवाणी कर देती है कि महीनों तक कब कैसा मौसम रहेगा। जांच करने पर मालूम हुआ है कि इसकी भविष्य-वाणी हमेशा ठीक निकलती है।

—उमर खय्याम की रुबाइयात सिर्फ ½ इन्च लम्बी है। यह किताब रुबाइयात उमर खय्याम का तर्जुमा है। इसका भार एक ग्रेन से कुछ ज्यादा है। खूबी यह है कि यह किताब केवल फोटोग्राफी के जरिए तैयार नहीं की गई बल्कि स्याही से कागज पर लिखी गई है। तमाम पृष्ठों को सिलाई हाथ से की गई है। उस पर चमड़े की जिल्द चढ़ी हुई है। रुबाइयात ऐसी मालूम होती है जैसे कि स्याही के धब्बे।

आवश्यक सूचना

दर्शनके पाक्षिक निकलने में स्थान कम रहता है अतः संघकी कार्यकारिणी ने निर्णय किया है कि इसे पाक्षिक के स्थान पर मासिक रूपमें निकाला जाय। अतः अब दर्शन मासिक रूपमें प्रकाशित हुआ करेगा।

मासिक दर्शन ४२ पेजका होगा तथा इसका प्रथम अंक १ सितम्बर सन १९३६ को अकलंक प्रेस मुलतान से प्रकाशित होगा।

निवेदक— प्रधान मन्त्री-
भा० दि० जैन शास्त्रार्थ संघ अम्बाला।

REGD. L. No. 3459

अजितकुमार जैन ने "अकलंक प्रेस— मुलतान" में छाप कर प्रकाशित किया।